Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

131495

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
ISSN - 090678 X

# सचित्र आयुर्वेद

# SACHITRA AYURVED

## A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

वर्ष - 59 अंक - 1-7 जुलाई - 2006

हृद्या संतर्पणी वृष्या बृंहणी बलवर्धनी ।। 343।।
शाकमांसफलैर्युक्ता विलेप्यम्ला च दुर्जरा ।
सिक्थैर्विरहितो मण्डः पेया सिक्थसमन्विता ।। 344।।
विलेपी बहुसिक्था स्याद्यवागूर्विरलद्रवा ।
विष्टम्भी पायसो बल्यो भेदः कफकरो गुरुः ।। 345।।

सु०सू० 46/343-345

**यवागू** - हृदय के लिये प्रिय, सन्तर्पण (तृप्तिकारक) वृष्य (शुक्रल), बलवर्धक, शाक-मांस या फल के साथ मिलने से यवागू दुर्जर हो जाती है ।

यवागू के भेद -

**मण्ड** - सिक्थ से रहित होता है, पेया-सिक्थ के साथ होती है । विलेपी - बहुत सिक्थ वाली है, यवागू- विरल द्रव होती है ।

**पायस** - विष्टम्भी, बलकारक, भेद-कफ को बढ़ाती है, और गुरू है ।

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar-249404 (U.A.)
131495

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


# अब भूल जाईये महीने की चिन्ता

बैद्यनाथ

## सुन्दरी कल्प फोर्ट

रक्त की कमी, घबराहट, थकावट, हाथ पाँव के तलवे की जलन आदि परेशानियों में फौरन आराम देता है ।

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

बैद्यनाथ

## सुरक्ता

आयुर्वेदिक स्किन टोनर
कील मुहाँसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# खेद- प्रकाशन

'सचित्र आयुर्वेद' के शानदार इतिहास में सम्भवतः कम ही ऐसा अवसर आया है जब यह नियमित समय पर प्रकाशित नहीं हुआ हो। नियमित एवं समय पर प्रकाशन हमारी अनेक विशेषताओं में से एक है। खेद है कि विगत दो-तीन माह से अनेक कारणों से समय पर इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो पा रहा है। नियमित प्रकाशन में तो कोई व्यवधान नहीं हुआ है, किन्तु निरन्तर विद्युत की भारी कमी से इसका प्रकाशन समय पर नहीं हो पा रहा है। हम इस समस्या का समाधान खोजने के लिए कृत संकल्प हैं और हमें आशा है कि हम एक मास के भीतर इसका समाधान खोज भी लेंगे। प्रेस जहां 'सचित्र आयुर्वेद' का प्रकाशन होता है, उनसे भी अनुरोध किया गया है कि शीघ्र ही इसका समाधान खोजें।

फिर भी नियमित एवं समय पर 'सचित्र आयुर्वेद' का प्रकाशन करना हमारी जिम्मेवारी है। हम अपने कृपालु पाठकों को विश्वास दिलाते हैं कि भविष्य में उन्हें ज्यादा प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी। फिर भी, उन्हें जो विगत दो-तीन माह में कष्ट हुआ है, उसके लिए हम खेद प्रकट करते हैं।

हमें आशा है कि कृपालु पाठक हमें अवश्य क्षमा करेंगे।

व्यवस्थापक

**सचित्र आयुर्वेद**

**श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800 001**

## हिन्दी भाषी विद्वान लेखकों से निवेदन

यद्यपि सचित्र आयुर्वेद में हिन्दी, अंग्रेजी एवं संस्कृत भाषा में लिखे गये लेखों का प्रकाशन होता है, किन्तु ज्यादातर पाठक हिन्दी भाषी होने के कारण हिन्दी भाषा में ज्यादा से ज्यादा लेखों का प्रकाशन करना हमारी विवशता है। दुर्भाग्यवश हिन्दी भाषी विद्वान लेखक भी अंग्रेजी में लिखना पसन्द करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि अंग्रेजी भाषा के लेखों का अम्बार लग जाता है जिसके कारण प्रकाशन में विलम्ब होता है। वस्तुतः अंग्रेजी भाषा में लेखों का प्रकाशन दक्षिण भारतीय पाठकों के लिए किया जाता है।

अतः हिन्दी भाषा के विद्वान लेखक हमारी विवशता को समझेंगे और वे हिन्दी भाषा में लेख भेजने का प्रयास करेंगे। इससे हमें सुविधा होगी और विद्वान लेखकों को लेख-प्रकाशन के लिए ज्यादा प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar-249404 (U.A.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची

वर्ष - 59 अंक - 1 जुलाई - 2006

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मूल्य - 10 रुपये प्रति

वार्षिक मूल्य - 100 रुपये प्रति

आजीवन शुल्क - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुल्क - 2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 3

2. आयुर्वेद का इतिहास - 80 4
पं० बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा

3. मानस रोगों की निदान पद्धति 6
प्रो० लोकनाथ शर्मा, डा० रचना भारती

4. आयुर्वेद में लवण - एक समीक्षा 11
डा० संग्राम मिश्रा, डा० श्याम लाल शर्मा
रमनजोत कौर

5. बांस : गुणधर्म और लाभ 15
स्मिता गुप्ता, एडवीन जेराल्ड, शीजा

6. "इन्द्रियाणां देहेऽवरोधः" जीर्णज्वर एवं 20
उपक्रम- एक आयुर्वेदीय अध्ययन
प्रो० हरिभाई के० त्रिवेदी

7. रक्त कृमि एवं स्वास्थ्य 24
पी०रा०सरोदे

8. आयुर्वेद में पर्यावरण का सामाजिक दर्शन 26
डा० निधि मिश्रा, डा० कमलनयन द्विवेदी

9. अनिद्रा : कारण व निवारण 30
डा० राम विलास शुक्ला

10. ओजक्षय 32
वैद्य अम्बालाल जोशी

11. बालकों में पारिगर्भिक रोग 34
डा० दिनेश कुमार राय

12. पौराणिक वृक्ष : पारिजात 38
डा० अशोक कुमार श्रीवास्तव

13. अजीर्ण और आयुर्वेद 39
डॉ० बालकृष्ण पंवार, प्रो० महेन्द्र सिंह धोनी

14. मन को लुभाती है लीची 41
राजकुमार जैन

15. हल्दी : सामान्य परिचय एवं औषधीय उपयोग 42
डा० राजकुमार द्विवेदी

16. विश्राम 43
डा० रमेश कु०सिंह, डा०प्रमोद दीपक चतुर्वेदी

17. ऋतुओं की रानी वर्षा और हमारा खान-पान 45
कविराज डा० दिवाकर ठाकुर

18. Local and Systemic effect of basti 47
w.s.r. to its mordern Perspective
Dr. Rajesh Sachadevani, Dr. N.N. Bhatt
Dr. Sudhaben Vyas.

19. Aetiopathological and therapeutic 49
study on shleshmaja yonivyapada
w.s.r. to infective vaginitis
Prof. Loknath Sharma, Dr. Shipra Agrawal

20. A pharamaceutical standardization of 56
somanathi tamra bhasma and tamra
bhasma w.s.r. to temperature pattern
Dr. Suhas V. Nayak, Dr. P.K. Prajapti
Dr. B.J. Patgiri

21. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 63

22. आपके अनुभूत प्रयोग 66

23. आपके पत्र 67

24. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 68

25. आरोग्य समाचार 69

26. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 71

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## सम्पादकीय प्रस्तावित नालन्दा अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में आयुर्वेद की उपेक्षा

विश्वस्त सूत्र से ज्ञात हुआ है कि केन्द्र सरकार नालन्दा में अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना करने जा रही है । संसद में पेश होने वाले विधेयक का प्रारूप सम्भवत: अन्तिम अवस्था में है । विश्वस्त सूत्र से यह भी ज्ञात हुआ है कि राज्य सरकार विश्वविद्यालय की देखरेख करेगी । इसका अर्थ स्पष्ट है कि केन्द्र सरकार पूर्णरूपेण प्रस्तावित विश्वविद्यालय को केन्द्रीय स्तर का दर्जा नहीं देगी । अनुदान के रूप में भले ही अच्छी राशि क्यों नहीं दे । परिणाम इसका सकारात्मक नहीं होगा । बिहार सरकार का जो इतिहास विगत 15-20 वर्षों से रहा है वह कोई उत्साहजनक नहीं है । हमारे राज्य में प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा एवं उच्च शिक्षा की स्थिति जब दयनीय है, तो क्या गारंटी है कि प्रस्तावित अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थिति दयनीय नहीं होगी ? हमारी दृष्टि में कोई गारंटी नहीं है । यदि वर्त्तमान सत्तारूढ़ सरकार शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति करती है, तो लोगों का विश्वास बढ़ेगा । अभी स्थिति तो यह है कि मैट्रिक और इण्टरमीडियेट को छोड़कर बिहार के किसी भी विश्वविद्यालय में स्नातक एवं स्नातकोत्तर की परीक्षा समय पर नहीं होती है । किसी-किसी तकनीकी विषय में तो तीन-चार वर्ष पीछे पाठ्यक्रम चल रहा है । अत: सरकार को पहले शैक्षणिक वातावरण को स्वस्थ करना पड़ेगा । परीक्षा एवं पाठ्यक्रम का कैलेण्डर दुरूस्त करना पड़ेगा, तभी परीक्षा की स्थिति में सुधार होगा ।

अत: केन्द्रीय सरकार से अनुरोध है कि बिहार राज्य की विशेष स्थिति को ध्यान में रखकर प्रस्तावित विश्वविद्यालय के प्रारूप में सुधार करें ।

एक बात और दयनीय है । विश्वस्त सूत्रों के अनुसार प्रारम्भ में विश्वविद्यालय में चार विषयों की पढ़ाई होगी जिसमें आयुर्वेद का स्थान नहीं होगा । सम्भवत: आयुर्वेद की पढ़ाई सहित अनुसंधान कार्य का प्रारम्भ द्वितीय या तृतीय चरण में से होगा । इस पर भी हमें आपत्ति है । यह सत्य है कि तत्कालीन नालन्दा विश्वविद्यालय में बौद्ध अध्ययन-अध्यापन को प्राथमिकता दी जाती थी, लेकिन यह भी सत्य कि बौद्ध काल में आयुर्वेद का काफी उत्थान हुआ था । प्रसिद्ध बौद्ध चिकित्सक, जीवक इसी क्षेत्र से आते थे । कुछ इतिहासकारों के अनुसार प्रसिद्ध बौद्ध आयुर्वेदज्ञ, नागार्जुन भी इसी विश्वविद्यालय के कुलपति रह चुके थे । इसका आशय स्पष्ट है कि आयुर्वेद का गहरा सम्बन्ध तत्कालीन नालन्दा विश्वविद्यालय से था । ऐसी स्थिति में आयुर्वेद के अध्ययन-अध्यापन एवं अनुसंधान कार्य को प्रथम चरण में ही प्राथमिकता मिलनी चाहिए । अखबारी रिपोर्ट से यह भी ज्ञात हुआ है कि जापान सरकार प्रस्तावित विश्वविद्यालय को 500 करोड़ रुपये का अनुदान दे रही है । यदि केन्द्र सरकार इस विश्वविद्यालय को व्यवस्थित एवं योजनाबद्ध ढंग से चलावे, तो हमें विश्वास है कि जापान के साथ-साथ अन्य राष्ट्र भी इस विश्वविद्यालय को भरपूर अनुदान देंगे । केवल जरूरत है विश्वास एवं व्यवस्था की ।

हमें आशा ही नहीं, वरन् विश्वास है कि हमारे मन में जो आशंकायें जन्म ले रही हैं, उनका निकारण प्रस्तावित विधेयक में अवश्य होगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

# आयुर्वेद का इतिहास-80

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

## दृढ़बल

आचार्य प्रियव्रत शर्मा[1] ने दृढ़बल के सम्बन्ध में जो विचार व्यक्त किये हैं, उन्हें यहां शब्दशः प्रस्तुत किये जा रहे हैं -

वर्तमान चरक संहिता के अन्त में यह उल्लेख मिलता है कि चरकसंहिता का एक तिहाई भाग उस समय प्राप्त नहीं था जिसे दृढ़बल ने अन्य तंत्रों के आधार पर पूरा किया । ये अंश हैं चिकित्सास्थान के 17 अध्याय, पूरा कल्पस्थान (12 अध्याय) तथा सिद्धिस्थान (12 अध्याय); इस प्रकार कुल 120 अध्यायों में 41 अध्याय दृढ़बल के लिखे हैं । कुछ लोग इसका अर्थ यह करते हैं कि चरक का कार्य अपूर्ण रह गया था उसे दृढ़बल ने पूरा किया किन्तु अधिक सम्भावना इस बात की है कि चरक ने पूर्ण संहिता का प्रतिसंस्कार किया था जो कालक्रम से राजनीतिक या अन्य कारणों से खण्डित हो गया था जिसकी पूर्ति दृढ़बल ने की । इसका प्रबल प्रमाण यह है कि स्वयं दृढ़बल ने अपने द्वारा प्रतिसंस्कृत स्थानों के अन्त में 'अग्निवेशकृते तंत्रे चरकसंस्कृते' ऐसा दिया है । यदि यह अंश चरक द्वारा प्रतिसंस्कृत न होता तो चरक का नाम न देकर दृढ़बल अपना नाम देता ।

**अस्मिन् सप्तदशाध्यायाः कल्पाः सिद्धय एव च।**
**नासाद्यन्तेऽग्निवेशस्य तंत्रे चरकसंस्कृते ।।**
**तानेतान् कापिलबलिः शेषान् दृढ़बलोऽकरोत् ।**
**तंत्रस्यास्य महार्थस्य पूरणार्थे यथातथम् ।।**

(च०चि० 30/289-291)

इसके अतिरिक्त, चरक संस्कृत अंश में ही कल्पस्थान तथा सिद्धिस्थान का निर्देश है :-

**विस्तरेण कल्पोपनिषदि व्याख्यास्यामः ।**

(च०सू० 4/4)

**व्यापन्नानां च व्यापत्साधनानि सिद्धिपूत्तरंकालम् ।**

(च०सू० 15/5)

इन स्थानों तथा चिकित्सास्थान के परवर्ती अंश की पूरी योजना का विवरण भी चरककृत अंश में दी है। (च०सू० 30/34, 60-69)

कल्पस्थान तथा सिद्धिस्थान में तो कोई संदेह नहीं है किन्तु चिकित्सास्थान के कौन 17 अध्याय दृढ़बल के द्वारा निर्मित हैं इस विषय पर विद्वानों में मतभेद है क्योंकि उपलब्ध चरकसंहिता के विभिन्न संस्करणों में अध्यायक्रम में अन्तर मिलता है । वंगीय संस्करण तथा बम्बई संस्करणों में क्रम भिन्न-भिन्न है । अधिकांश टीकाकारों के उद्धरण के अनुसार कलकत्ता संस्करण का क्रम मान्य होना चाहिए और इसी के अनुसार पिछले सत्रह अध्याय दृढ़बल के द्वारा प्रतिसंस्कृत हैं । यह क्रम निम्नांकित है[1] :-

| चरककृत | | दृढ़बल | |
|---|---|---|---|
| अ० 1. | रसायन | अ० 14. | उन्माद |
| '' 2. | वाजीकरण | '' 15. | अपस्मार |
| '' 3. | ज्वर | '' 16. | क्षत |
| '' 4. | रक्तपित्त | '' 17. | शोथ |
| '' 5. | गुल्म | '' 18. | उदर |
| '' 6. | प्रमेह | '' 19. | ग्रहणी |
| '' 7. | कुष्ठ | '' 20. | पाण्डु |
| '' 8. | राजयक्ष्मा | '' 21. | श्वास |
| '' 9. | अर्श | '' 22. | कास |
| '' 10. | अतिसार | '' 23. | छर्दि |
| '' 11. | विसर्प | '' 24. | तृष्णा |
| '' 12. | मदास्यय | '' 25. | विष |
| '' 13. | द्विव्रणीय | '' 26. | त्रिमर्मीय |
| | | '' 27. | ऊरूस्तम्भ |
| | | '' 28. | वातव्याधि |
| | | '' 29. | वातशोणित |
| | | '' 30. | योनिव्यापत् |

ऐसा प्रतीत होता है कि इन अंशों के अतिरिक्त सारे ग्रन्थ का परिमार्जन भी उसके द्वारा हुआ है जो स्वाभाविक है ।

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, 2 सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



दृढ़बल ने जो अपना परिचय दिया है उसके अनुसार उसका निवासस्थान पंचनदपुर है । कुछ लोग इसे काश्मीर, कुछ लोग पंजाब तथा कुछ लोग काशी का पंचगंगा घाट बतलाते हैं । काश्मीर में इनका निवास स्थान मानने में अधिकांश विद्वानों का झुकाव है । इसके पिता का नाम कपिलबल था । अष्टांगसंग्रह में कपिलबल का नाम आया है । दृढ़बल शिवभक्त थे और अनेक तंत्रों की सहायता से इन्होंने चरक के खण्डित अंश को पूर्ण किया ।

## दृढ़बल का काल

अष्टांगसंग्रह में कपिलबल का निर्देश है जो दृढ़बल के पिता थे । अष्टांगसंग्रह छठी शती की रचना है अत: प्रसिद्धिकाल को देखते हुए दृढ़बल चौथी शती में रखे जा सकते हैं । यह गुप्त साम्राज्य का काल था । इस साम्राज्य का विस्तार काश्मीर तथा काबुल तक था । गुप्तकाल भारतीय वाङ्मय के पुनरुत्थान का युग था । इस काल में पुराणों को अन्तिम रूप दिया गया । नवीन स्मृतियों के द्वारा आचारपद्धति व्यवस्थित की गई, प्राचीन संहिताओं को प्रतिसंस्कृत कर उन्हें युगानुरूप बनाया गया । अत्यधिक सम्भावना है कि गुप्तकाल में ही आयुर्वेदीय संहिताओं को आधुनिक रूप मिला जो अद्यावधि चला आ रहा है । अत: चरकसंहिता में गुप्तकालीन जो तथ्य उपलब्ध होते हैं वे दृढ़बल के द्वारा ही नियोजित माने जाने चाहिये । इनमें निम्नांकित मुख्य हैं -

1. **शैली** - मांगलिक द्रव्यों में वर्धमान का प्रयोग गुप्तकाल में प्रचलित था । चरकसंहिता में मांगलिक द्रव्यों में इसका उल्लेख है । जलयंत्र तथा वातयंत्रयुक्त धारागृहों का वर्णन है जो गुप्तकालीन समृद्धि का द्योतक है । गद्य की शैली में प्रौढ़ता है ।

मेरी ऐसी धारणा है कि वातकलाकलीय अध्याय (च.सू. 12) का गद्य भी दृढ़बल द्वारा स्पृष्ट है । इससे बाणभट्ट की रचनाओं का सहज स्मरण हो जाता है ।

2. **मद्यपान** - गुप्तकाल में मद्यपान की परम्परा प्रचलित थी और उसके विधान भी निर्धारित थे । जहाँ मद्यपान किया जाता था । वह स्थान 'आपान' कहलाता था । इन सबका वर्णन चरकसंहिता में मिलता है ।

3. **विष्णुसहस्रनाम** - विषज्वर से मुक्ति के लिए विष्णुसहसत्रनाम के पाठ का विधान है । ज्वर रुद्रकोप से उत्पन्न बतलाया गया है । भेलसंहिता में ज्वररागि के लिए रूद्रपूजा का बहुश: विधान है । चरक में रुद्रपूजा का उल्लेख है किन्तु उपर्युक्त प्रकरण में विष्णुसहस्रनाम का निर्देश विशेष महत्वपूर्ण है ।

कुछ ऐतिहासिकों का मत है कि विष्णुसहस्रनाम गुप्तकाल की रचना है । यदि यह सत्य है तब यह अंश भी गुप्तकालीन तथा दृढ़बल द्वारा सन्निविष्ट मानना होगा । भागवत में ज्वर के सम्बन्ध में एक बड़ी रोचक कथा है जिसमें माहेश्वर ज्वर तथा वैष्णव ज्वर में युद्ध का वर्णन है और अन्त में वैष्णव ज्वर की विजय बतलाई गई है यह वैष्णव धर्म की तत्कालीन प्रमुखता का द्योतक है । गुप्त सम्राट स्वत: परमभागवत कहे जाते थे । अत: दृढ़बल स्वयं शैव होते हुए भी संभवत: लोकप्रचलित परम्परा का उल्लेख करने में पीछे नहीं रहे ।

**धार्मिक स्थिति** :- वायु भगवान के रूप में वर्णित हैं इससे प्रतीत होता है कि संभवत: वायुपुराण की रचना तबतक हो चुकी हो और उसका लोक में प्रचार हो । एक प्रसंग में चैत्य, यज्ञाश्रम, सुरालय तथा पाषण्डायतन का एकत्र उल्लेख है । इससे संकेत मिलता है कि भागवतधर्म के साथ-साथ बौद्ध तथा जैन धर्म भी लोक में प्रतिष्ठित थे । वशीकरण आदि तांत्रिक क्रियाओं का उल्लेख होने से तंत्र की प्रारंभिक स्थिति की भी सूचना मिलती है ।

5. देश - देश विभाग के प्रसंग (च.चि. 30/315-319) में दृढ़बल ने निम्नांकित देशवासियों का उल्लेख किया है :-

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. वाह्लीक | 2. पह्लव | 3. चीन | 4. शूलीक |
| 5. यवन | 6. शक | 7. प्राच्य | 8. सैन्धव |
| 9. अश्मक | 10. आवन्तिक | 11. मलय | 12. दक्षिण |
| 13. उत्तर पश्चिम | | 14. मध्यप्रदेश | |

(निरन्तर जारी)

**सन्दर्भ** :-

1. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास - आचार्य प्रियव्रत शर्मा, चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# मानस रोगों की निदान पद्धति

* प्रो० लोकनाथ शर्मा

** डॉ० रचना भारती

मानस विज्ञान जटिल और गूढ़ शास्त्र है । दूसरे व्यक्ति के मन का अध्ययन करना अत्यन्त दुरुह कार्य है । शारीरिक रोगों का निदान करना मानस रोगों की अपेक्षा सरल होता है, क्योंकि शारीरिक अवयवों की परीक्षा के लिए अनेक उपकरण उपलब्ध हैं, परन्तु मन के संदर्भ में ऐसा नहीं होता । मन की स्वयं एक अतीन्द्रिय सत्ता है, जिसका ज्ञान इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष नहीं है ।

एक मानसिक चिकित्सक में मानस रोगों के निदान हेतु निम्न गुण तो अनिवार्यत: होने ही चाहिए, जैसा की चरक ने कहा है -

**मैत्रीकारूण्यमार्तेषु शक्ये प्रीतिरूपेक्षणम् ।**
**प्रकृतिस्थेषु भूतेषु वैद्यबुद्धिश्चतुर्विधा ।।**

(च०सू० 9/26)

**ज्ञानबुद्धि प्रदीपेन, यो नाविशति तत्ववित् ।**
**आतुरस्यान्तरात्मानं न स रोगांश्चिकित्सति ।।**

(च. वि. 4/19)

आर्त व्यक्तियों के प्रति मैत्री और करुणा, धन धान्य से सम्पन्न व्यक्तियों के प्रति प्रेमभाव, ईर्ष्या न करना तथा असाध्य और मरणोन्मुख रोगियों के प्रति उपेक्षा, उनसे मोह को हटाना, ये चार प्रकार की वृत्ति किसी भी वैद्य की होनी चाहिए ।

ऐसा चिकित्सक जो अपने समदर्शित्व ज्ञान से तथा राग द्वेष रहित बुद्धि द्वारा रोगी के अन्त:स्थल में प्रवेश नहीं कर पाता वह रोगों की ओर विशेषकर मानसरोगों की चिकित्सा करने का अधिकारी नहीं हो सकता है ।

मन की विकृतियों को जानने का सर्वसुलभ साधन है, चिकित्सक का अपना मन । चिकित्सक का मन जितना ही राग, द्वेष आदि विकारों से रहित और हीनता, श्रेष्ठता आदि मानसिक भावों से रहित होगा, उतना ही वह चिकित्सक रोगी के कष्ट और विकारों को समझने में सफल होगा । 'सहानुभूति' व धैर्य मानस चिकित्सक के ऐसे गुण हैं जिनके द्वारा रोगी के विकार ग्रस्त से मन को समझा जा सकता है । जब तक रोगी चिकित्सक के व्यवहार से आकृष्ट व आश्वस्त नहीं होता तब तक वह अपने मन की तहों को नहीं खोलता, जिसके कारण रोगों के मूल में स्थित निदान का ज्ञान नहीं किया जा सकता क्योंकि मानस रोग निदान के लिए रोगी का सहयोग अत्यन्त आवश्यक है ।

**नार्थार्थं नापि कामार्थमथ भूतदयां प्रति ।**
**वर्तते यश्चिकित्सायां सा सर्वमतिवर्तते ।।**

चरक का यह आदेश मानस रोग चिकित्सा पर पूर्णतया अक्षरक्ष: लागू होता है । भूतदया और सहानुभूति का आधार लेकर चिकित्सक को रोग के निदान में प्रवृत्त होना चाहिए ।

अन्य रोगों के समान ही मानस रोग में भी, रोग के निदान हेतु, निदान पंचक की आवश्यकता स्वत: ही होती है, जिसका निम्नलिखित प्रकार से वर्णन प्रस्तुत है

**निदान -**

मानसरोगों के निदान जानने हेतु निम्नांकित परीक्षा लाभदायक होती है ।

1. पारिवारिक इतिवृत्त
2. वैयक्तिक इतिवृत्त
3. वर्तमान व्याधि
4. सत्व परीक्षा
5. शारीरिक परीक्षा

**1. पारिवारिक इतिवृत्त**

कुछ मानस व्याधियाँ कुलानुसारिणी होती हैं मातृकुल तथा पितृकुल दोनों का ही इतिवृत्त लेना चाहिए मानस व्याधियाँ कभी-कभी माँ-बाप तथा दादा-नाना अस्पष्ट लक्षणों वाली होती हैं । कुल के अन्य पुरु कभी-कभी बीमारी को जानबूझकर छिपाते हैं । मातृपक्ष लोगों में यह प्रवृत्ति अधिक देखी जाती है और कभी-क

*डीन एकेडेमिक, विभागाध्यक्ष ** एम.डी. अध्येत्री (अन्तिम वर्ष)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वे लोग वास्तव में रोग के लक्षणों से अनभिज्ञ होते हैं । इसलिए जहाँ उनमें अपस्मार, अपतंत्रक, मद्यसेवन, उन्माद आदि रोगों के बारे में पूछा जाए साथ ही साथ पूर्वजों के स्वभाव, भक्ति, शील, शौच, आचार, द्वेष, चिन्ता, दैन्य, आत्मग्लानि आदि के बारे में भी पूछना चाहिए । रोग के क्रमिक विकार के कारण माता-पिता में अत्यन्त क्षीण लक्षण ही प्राय: दृष्टिगोचर होते हैं, माता-पिता की शारीरिक प्रकृतियों के बारे में भी पूछना चाहिए ।

2. वैयक्तिक इतिवृत -

बच्चे के गर्भाधान से लेकर वर्तमान व्याधि की उत्पत्ति तक का विस्तृत इतिहास जान लेना आवश्यक है । गर्भाधान के समय माँ-बाप की आर्थिक और मानसिक स्थिति कैसी थी ? बच्चे का जन्म, पालनपोषण, किस प्रकार के वातावरण में हुआ? आदि । मानसिक विकार तथा सामंजस्य को जानने के लिए बच्चे की स्कूल की शैक्षणिक तथा आचार सम्बन्धी रिपोर्ट को जानना चाहिए । कौमार्य अवस्था में होने वाली समलैंगिक और विषमलैंगिक प्रवृत्तियों तो नहीं रही । युवावस्था में किसी रतिज रोग से पीड़ित तो नहीं रहा ।

शारीरिक व्याधियों के बारे में विशेषकर अभिघात के बारे में अवश्य जानना चाहिए, मदिरा सेवन, परदाराभिमर्श, घूस, रेसकोर्स, आर्थिक क्षति, प्रियविप्रयोग, प्रतिष्ठा की क्षति आदि उन सभी बातों को जानना आवश्यक है जो पहले मानस रोगों के कारणों में गिने गए हैं ।

3. वर्तमान व्याधि -

यह जानना चाहिए कि रोगी पूर्णतया स्वस्थ था और कब से उसको शारीरिक या मानसिक अस्वस्थता का अनुभव होना शुरू हुआ । अनिद्रा, अरुचि, विबन्ध, अतिसार, बलक्षय, मांसक्षय आदि लक्षणों की निश्चित तिथि और अवधि का जानना अधिक उपयोगी है ।

4. सत्व परीक्षा

हीन, मध्य, उत्तम सत्व में से किस प्रकार का उसका मन है, सात्विक, राजस, तामस में से किसकी प्रधानता है ।

5. शारीरिक परीक्षा

विस्तृत और सम्पूर्ण शारीरिक परीक्षा करनी चाहिए रोगी मानसिक विकारों से ग्रस्त है इसलिए शारीरिक परीक्ष की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए ।

पूर्वरूप -

मानस रोगों की पूर्ण अभिव्यक्ति से पहले कुछ लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस व्यक्ति को मानसिक रोग होने वाला है इनमें से कुछ तो रोग की पूर्णाभिव्यक्ति के समय भी जार रहते हैं । इनका जानना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इनक आधार पर रोग का निदान और चिकित्सा की जाती है

**हृत्कम्प: शून्यता स्वेदो, ध्यानं मूर्च्छा प्रमूढ़ता ।**
**निद्रानाशश्च तस्मिंस्तु भविष्यति भवन्त्यथ: ।।**

(सु०उ० 61

**धी विभ्रम: सत्वपरिप्लवश्च पर्याकुलादृष्टिधीरता च ।**
**अबद्धवाक्त्वं हृदयं च शून्यं भविष्यत: तस्य पुरस्सराणि**
**मोहोद्वेगौ स्वन: क्षोत्रे गात्रणामपकर्षणम् ।**
**अत्युत्साहो रुचिश्चान्ने, स्वप्ने कलुषभोजनम् ।।**
**वायुन्नोन्मथनं चापि, भ्रमश्चक्रगतस्य च ।**

(सु०उ० 62

पूर्वरूपों को हम दो भागों में बाँट सकते हैं -

(1) शारीरिक पूर्व लक्षण व
(2) मानसिक पूर्व लक्षण

शारीरिक पूर्वरूप -

क) शारीरिक गतिविधियों का कम हो जाना (decreasing body movements)

1. शून्यता - इस वातक्षय के लक्षणों की भाँति समझन चाहिए । इसमें शरीर की गतिविधियाँ कम हो जाती हैं ।
2. ध्यान - रोगी की आकृति, भाव रहित होती है, तथ उसकी दृष्टि एकाग्र होती है । व्यक्ति ध्यान करता स मालूम पड़ता है, परन्तु वास्तव में ऐसा होता नहीं है



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



. आयास - रोगी थका-सा मालूम पड़ता है, उसके सभी अवयव शिथिल हो जाते हैं ।

ब) शारीरिक गतिविधियों का बढ़ जाना (increasing body movements)

. हृत्कम्प - शरीर की गतिविधि का बढ़ जाना । इसमें हृदय की धड़कन बढ़ जाती है, रोगी को एक प्रकार का भय-सा हर समय बना रहता है । जिसके कारण रोगी प्रतिक्षण चौकन्ना रहता है । धड़कन के अधिक बढ़ने से रोगी की कार्य क्षमता कम हो जाती है ।

. उद्वेग - शरीर की अनैच्छिक गतिविधियों (Involuntary movements) का बढ़ जाना ।

. चक्षु आकुलता ।

. भ्रू व्यादास ।

. श्रोत्र शब्द - कानों में अनेक प्रकार के अनाहत शब्द जैसे वंशी आदि की ध्वनि का अनुभव होना ।

उच्छ्वासाधिक्य - हृदय कम्पन के साथ श्वास गति का भी तीव्र हो जाना ।

0. आस्यस्रवण - मुख से राल (saliva) गिरने लगना, यह रोगी की संयम (Control) शक्ति की कमी का द्योतक है ।

इसके अतिरिक्त - अरोचक और अविपाक, ोमहर्ष, अत्युत्साह, उन्मंथन, अबद्धवाक, मिन्मिन, कलकल, स्त, अव्यक्त, गदगद, क्षमता और हीनता, अप्रचलित शब्दों का प्रयोग ।

ानसिक पूर्वरूप -

1) अनिद्रा, 2) अर्धनिद्रा, 3) मूर्च्छास्वप्न

रूप -

पूर्वोक्त पूर्वरूपों के कुछ काल पश्चात् रोग की भिव्यक्ति हो जाती है । उन्माद, अपस्मार, अतत्वाभिनिवेश ादि में यद्यपि परस्पर कुछ भेद ही रहता है परन्तु फिर भी कुछ सामान्य लक्षण ऐसे हैं, जो इन सभी व्याधियों में रहते । जैसे -

. भाववैपरीत्य (Mood Swing) - प्रत्येक व्यक्ति स्वस्थ अवस्था में कुछ विशिष्ट भावों का आलम्बन करता है, मानसिक व्याधियों में ये बदल जाते हैं ।

2. अहम्मन्यता (Igoistic)-ऐसी अवस्था में रोगी पहले से अधिक अहंकारी और जिद्दी हो जाता है। रोगी अपनी स्थिति से पूर्णतया सुखी और सन्तुष्ट प्रतीत होता है ।

3. प्रहर्ष (Euphoria) - रोगी अकारण हर्षित और प्रसन्न प्रतीत होता है । वह अपने को रोगी भी नहीं समझता और इसलिए चिकित्सा कराने में भी उसकी रुचि नहीं होती ।

4. चिन्ता (Tension) - चिन्ताग्रस्त रोगी अपनी अभिष्ट शंका से सर्वदा आतंकित रहता है वह बाह्य वस्तुओं से भी डरता है । परन्तु मुख्य रूप से उसे अपनी मृत्यु, शारीरिक व्याधि, आर्थिक नाश, इष्ट वियोग आदि की आशंका बनी रहती है ।

5. दैन्य (Depression) - चिन्ता से मिलता-जुलता लक्षण दैन्य है । दैन्य या नैराश्य का भाव रोगी के चेहरे पर भी झलकता है ।

6. अरुचि - यहाँ अरुचि से अभिप्राय: सभी विषयों में रूचि का अभाव है । रोगी अपने साज श्रृंगार में परिवार और पड़ोस के व्यक्तियों की कल्याण कामना में तथा स्वयं की उन्नति के विषय में भी उदासीन हो जाता है ।

7. चिड़चिड़ापन (irritation) - रोगी का मिजाज छोटी-छोटी बातों पर भी गर्म हो जाता है ।

8. अमर्ष - इस अवस्था में रोगी में सहिष्णुता कम हो जाती है ।

9. स्मृति विपर्यय - स्मृति तीन प्रकार से प्रभावित हो सकती है - विस्मृति, मिथ्यास्मृति या अतिस्मृति ।

10. विपर्यय ज्ञान - यह दो प्रकार से बताया गया है । सालम्ब विपर्यय और निरालम्ब विपर्यय । मानस विभ्रम (Hallucination) को निरालम्ब विपर्यय ज्ञान कहा जाता है ।

इसके अतिरिक्त श्रवण, विभ्रम, दृष्टि विभ्रम,


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



गन्ध विभ्रम, स्वाद विभ्रम, स्पर्श विभ्रम आदि स्थितियाँ भी मानस विभ्रम के अन्तर्गत आती हैं ।

11. पूर्वाग्रह
12. झक (obsession)
13. मिथ्याविश्वास (Delusion)
14. अविवेक
15. प्रकृति विपर्यय - साधारण स्वभाव से यदि स्वभाव बदल जाए, रोगी का शील, शौच बदल जाए तो समझना चाहिए कुछ मानस विकार आ गया है ।

**सम्प्राप्ति**

**मनस्युपहते .....जनयन्त्युन्मादम् ।**

(च.नि. 7)

**तैरल्पसत्वस्य मलाः प्रदुष्टाः बुद्धैर्निवासं हृदयं प्रदूष्य ।**
**..... चिन्तोद्वेगादिभीः सहसाभिपूरयन्ति ।**

(च.नि. 8)

उपरोक्त उद्धरणों में एक बात सर्व सामान्य है कि हृदय के पीड़ित होने पर ही मानस रोग होते हैं । हृदय ही चेतना का स्थान है, वहीं पर सुख-दुख की अनुभूति संचित रहती है । चेतन और अवचेतन मन दो प्रकार के माने गए हैं । चेतन और अवचेतन मन में जब सामंजस्य नहीं रहता, एक का दूसरे से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है तब विभिन्न प्रकार के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं । काम, क्रोध, लोभ, मोह, हर्ष, शोक, चिन्ता के उद्वेग मानसिक अस्वास्थ्य द्योतक हैं ।

आयुर्वेद में चेतन और अवचेतन दो मन नहीं माने गये हैं, फिर भी **'उपहत चेतसाम् अन्तरात्मनः श्रेष्ठतममायतनं हृदयं उपसृत्य'** अर्थात् जिसका मन पीड़ित है उसकी अन्तरात्मा के श्रेष्ठतम स्थान हृदय में दोष पहुँच जाते है और मानस रोगों को पैदा कर देते हैं । इन वाक्यों से मन और हृदय दो पृथक् स्थान बताए गए हैं । मन वह स्तर है जहाँ पर होने वाली क्रिया और प्रतिक्रिया से मनुष्य अवगत होता रहता है, हृदय वह स्तर है जहाँ पर होने वाली क्रिया प्रक्रिया का मनुष्य को बोध नहीं होता । **"मनस्युपहते बुद्धौ प्रचलितायां अभ्युदीर्णाः दोषाः प्रकुपिता हृदयमुपसृत्य"** इ वाक्यों से स्पष्ट है कि जब तक मनुष्य का हृदय अन्तस्तल दोषों से व्याप्त नहीं होता तब तक मानस रोग नह होते । मन और हृदय में एक और भी मुख्य भेद है । म या बुद्धि से ज्ञान व्यापार तथा हृदय से भाव व्यापारों क बोध होता है । जब तक भावात्मक व्यापारों पर प्रभाव नह पड़ता, तब तक मनुष्य का व्यक्तित्व नहीं बदलता । भा व्यापार मनुष्य के व्यक्तित्व को आमूलचूल परिवर्तित कर हैं । हृदय में अन्य बात हो और बुद्धि से ज्ञानपूर्वक दूस व्यवहार किया जाए अर्थात् हृदय और बुद्धि, अन्तस्तल क आवाज और कार्य बुद्धि (subconscious mind an ego) इन दोनों में जब सामंजस्य नहीं रह जाता, तब मान व्याधियाँ उत्पन्न हो जाती हैं ।

उपरोक्त वर्णित रोग परीक्षा पद्धति के साथ-सा **रोगी परीक्षा** निम्नलिखित तथ्यों के आधार पर करनी चाहि जैसे -

1. **बुद्धि विकास** - ज्ञानोपार्जन में तथा अपने चारों ओर वातावरण के जानने की अभिरुचि है या नहीं, पिछल बातों की स्मृति रहती है या नहीं, पूर्व स्मृति के त पूर्व अनुभव के आधार पर वर्तमान व्यवहार में क संशोधन या परिवर्तन करता है अथवा नहीं । सामाजि और आर्थिक समस्याओं का समाधान रचनात्मक हो है या नहीं ?
2. **क्रियाशीलता** - रोगी महत्वाकांक्षी तथा सकाम प्रवृ वाला रहा है या नहीं । संतोष या तृप्ति के नाम पर रो निष्क्रिय और आलसी जीवन तो नहीं बिता रहा है पद, प्रतिष्ठा, धन, वैभव की आकांक्षा तथा उसक पूर्ति में जी-जान परिश्रम करना तथा इतर विविध प्रस में उसे रुचि है या नहीं । विषमलिंगी साथियों उसकी प्रवृत्ति कैसी रही ?
3. **आत्म निरीक्षण** - यह जानने का प्रयास करना चाहि कि रोगी की अपने बारे में क्या राय है ? वह हीन या श्रेष्ठता की भावना से तो पीड़ित नहीं है । संक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



में मित्रों से परामर्श लेता है या नहीं । संकट में कितनी आत्मनिर्भरता उसमें रहती है या वह दूसरों पर ही निर्भर करता है ।

4. **सामंजस्य** - इससे अभिप्राय यह है कि रोगी में परिस्थिति के अनुकूल अपने को बदलने की क्षमता है या नहीं ।

5. **भावुकता** - मानसिक क्षमता की परीक्षा के बाद रोगी के भावात्मक व्यक्तित्व की परीक्षा करनी चाहिए । रोगी अपने मानसिक भावों को छिपाने में प्राय: असमर्थ होते हैं । चेहरे के भावों का अनुमान उसके पीलेपन, तमतमाना, स्वेद, श्वास-प्रश्वास की गति और नाड़ी की गति, हृदय कम्पन तथा पुतलियों की अवस्था से भी लगाया जा सकता है ।

**संशय और श्रद्धा** - रोगी की निष्ठा सात्विक है, राजस है या तामस है यह बात जानने का प्रयास करना चाहिए । वस्तुस्थिति के प्रति उसका दृष्टिकोण संशयात्मक रहता है या निश्चयात्मक यह जानना भी जरूरी है । रोगी को कभी-कभी अन्य व्यक्तियों पर अकारण संशय हो जाता है । वह हर व्यक्ति को अपने प्रति षडयंत्र करता हुआ, संदेहात्मक दृष्टि से देखता हुआ तथा उसका विरोध करता हुआ प्रतीत होता है । रोगी को कभी-कभी दृष्टि, श्रुति और स्वाद आदि का विभ्रम हो जाता है और वह अवास्तविक दृश्य (Hallucination) देखता है, सुनता है और स्वाद में विकार का अनुभव करता है ।

7. **स्मृति** - स्मृति के परीक्षण के लिए रोगी से उसके अतीत जीवन के बारे में प्रश्न करना चाहिए और पता लगना चाहिए की उसे सही-सही बात याद है या नहीं। विवाह तिथि, बच्चों के जन्म या मृत्यु की तिथि, अपनी नौकरी लगने या छूटने की तिथि के बारे में पूछने से उसकी स्मृति का पता लगाया जा सकता है। सद्य: स्मृति के लिए रोगी को कोई वाक्य, अप्रचलित शब्द, कथा-कहानी सुनाकर उसका पुनरावृत्ति करनी चाहिए ।

इस प्रकार उपरोक्त वर्णित रोग व रोगी परीक्षा पद्धति मानस रोगों के निदान व चिकित्सा के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद में लवण - एक समीक्षा

*डा० संग्राम मिश्रा **डा० श्याम लाल शर्मा *** रमनजोत कौर

आयुर्वेद में प्राचीन काल से लवण के बारे में वर्णन किया जाता आ रहा है । वो फिर चाहे औषध के रूप में हो या आहार के रूप में, लवण का वर्णन तो विभिन्न व्याधियों के निदान के रूप में प्रमुख अंग माना गया है जिसे एक स्वस्थ व्यक्ति को नियम से निरन्तर सेवनीय आहार द्रव्यों में डालकर प्रयुक्त करना चाहिए । चरक संहिता में विशेषत: हेमन्त ऋतु में तो लवण रस युक्त आहार का ही सेवन करने को कहा है तथा ग्रीष्म ऋतु में लवण का उपयोग अपथ्य बताया है । इस प्रकार प्रमुखत: सभी संहिताओं में लवण का वर्णन किया गया है । इसी प्रकार सुश्रुत व चरक संहिता के चिकित्सा स्थान में चाहे फिर तृष्णा की चिकित्सा हो या विसूचिका आदि किसी भी व्याधि की, अधिकतर व्याधि की चिकित्सा के योगों में लवण प्रयुक्त होता है । प्रमुखत: पांच प्रकार के लवण कहे गये हैं । 1. सौवर्चल लवण 2. सैंधव लवण 3. विड् लवण 4. औद्भिद लवण 5. समुद्र लवण । इन पांचों में से अधिकतर सैंधव लवण का, उसके पश्चात् सौवर्चल लवण का प्रयोग हुआ है । आयुर्वेद में जहां कहीं भी लवण शब्द लिखा गया है, वहां उसका अर्थ अधिकतर सैंधव लवण किया जाता है ।

2. **लवण के प्रकार :-** चरक संहिता के विभिन्न स्थान में लवण का वर्णन है जिसे रासायनिक भाषा में Nacl-sodium chloride कहते हैं । व अंग्रेजी में Nacl को Common Salt कहते हैं । कहा गया है कि लवण पांच प्रकार के हैं :-

1. सौवर्चल लवण
2. सैंधव लवण
3. विड् लवण
4. औद्भिद लवण
5. सामुद्र

चरक संहिता में 12 प्रकार के लवण बताए गये हैं :- (च.वि. 8/141, च.क. 7/14)

1. सैंधव लवण 2. काला लवण
3. विड लवण 4. आनूप लवण
5. कूप्य लवण 6. ऐल लवण
7. सामुद्र लवण 8. रामक लवण
9. सोंचर लवण 10. पाक्य लवण
11. बालुका लवण 12. मौलिक लवण

1. इन लवणों में सैंधव लवण को उसी प्रकार श्रेष्ठ व है, जिस प्रकार जलों में वर्षा का जल व शमीधान्य मूंग श्रेष्ठ कहा है (च०सू० 25/38)
2. कई स्थानों पर अन्य लवण-रोमक लवण का भी व किया गया है ।
3. चरक संहिता में सात लवणों का वर्णन कर पांगा ल को सातवां लवण कहा है ।

3. **लवण के गुण कर्म :-** लवण रूक्ष, पा गीला करने वाला, स्राव करने वाला, वातहर, स्तब्धता, विबन्ध, दोषों का संचय, इन्हें शिथिल करने वाला सभी रोगों का विरोधी है, मुख से लालास्राव कराता स्रोतों एवं मलमार्गों को शुद्ध करता है । यह अधिक नहीं है, यह स्निग्ध व उष्ण है । भोजन को रुचिकर ब है, यथा "भोजनं लवणं बिना"

पांचों प्रकार के लवण स्निग्ध उष्ण, तीक्ष्ण अत्यन्त अग्नि दीपन होते हैं । इन पांचों लवणों का उप लेप लगाने, शरीर के नीचे तथा ऊपर के भाग का स्ने और स्वेदन करने, निरूह और अनुवासन वस्ति देने, मा करने, भोजन करने, नस्य करने, शस्त्र कर्म, वर्ती ब अंजन बनाने और उबटन लगाने में किया जाता है अजीर्ण, आनाह, वातविकार, गुल्म, शूल और उदर रोग पांच लवणों का प्रयोग किया जाता है ।

**विभिन्न लवणों के गुण :-**

मुख्यत: सभी लवणों में सैंधव, सामुद्र, वि सौवर्चल, रोमक, औद्भिद आते हैं ।

यह यजोत्तर उष्ण, वात नाशक, कफ पित्तक

* प्रवक्ता मौलिक सिद्धान्त ** प्रवक्ता शारीर क्रिया *** अध्येत्री
गुरु नानक आयुर्वेदिक मेडिकल कालेज एवं अनुसंधान संस्थान, मलेरकोटला रोड, गोपालपुर, लुधियाना (पंजाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ते हैं, अर्थात् औद्भिद सबसे अधिक उष्ण, वातनाशक व कफपित्तकारक है व सैंधव सबसे कम ।

यह यथापूर्ण, स्निग्ध, स्वादु, मल व मूत्र के पादक तथा प्रवर्तक होते हैं । (अर्थात् सैंधव लवण सबसे धिक स्निग्ध, स्वादु व मलमूत्र का उत्पादक तथा प्रवर्तक व औद्भिद सबसे कम) ।

**सैंधव लवण :-** सभी लवणों में सबसे उत्तम है । (सैंधव लवणानाम् ।।) यह नेत्रों के लिए हितकारी, हृदय, रुचिवर्धक, पचने में लघु, पाचकाग्नि का दीपन, स्निग्ध, (अविदाही) मधुर, वृष्य, शीत और त्रिदोषनाशक है ।

**सौवर्चल लवण (काला लवण) :-** यह विपाक में लघु, सूक्ष्म, उष्णवीर्य, विशद, कटु, गुल्म, शूल और विबन्ध का नाशक, हृदय, उदगारनाशक सुगन्ध प्रकट तथा वर्धक है ।

**विड् लवण :-** यह क्षार युक्त, व्यवायि गुण युक्त होने से अग्निदीपक, तीक्ष्ण, उष्ण, रूक्ष, शूल तथा हृदय रोग का नाशक, रुचिजनक तथा वात का अनुलोमन करता है ।

**सामुद्र लवण :-** यह विपाक में मधुर, अधिक उष्ण नहीं, दाह नहीं करने वाला, दस्तावर, कुछ स्निग्ध, शूलनाशक तथा विशेष पित्त वर्धक नहीं होता है ।

**औद्भिद लवण / रेह नमक :-** यह लघु, तीक्ष्ण, उष्ण, क्लेदकारक, सूक्ष्म, वातानुलोमक, तिक्त, कटु और क्षार युक्त होता है ।

**रोमक लवण :-** यह तीक्ष्ण, अधिक गर्म, प्रथम शरीर में फैल कर, पश्चात् पाक में परिणत करने वाला, विपाक में कटु वातनाशक, लघु विष्यन्दनशील सूक्ष्म, दस्त लाने वाला तथा मूत्रजनक होता है ।

7. **गुटिका लवण :-** कफवातनाशक, कृमिहर, शोधन, पित्तजनक, अग्निदीपक पाचक, दस्तावर होता है ।
8. **समुद्री (लवण):-** यह कुछ मधुर होता है तथा धारी मिट्टी से बनाया गया लवण रेगिस्तान के बालुका (बालू कैल) पर्वतों की जड़ की छानों से बनाया हुआ लवण (शैलमुकरोद्रव) ये लवण कटु, छेदक तथा विदाह में भी कटु होते हैं ।

प्राय: सभी नमक रुचिकारक, अन्न को पचाने वाले, स्त्रंसी (विरेचक) और वात नाशक होते हैं ।

**लवण की प्राप्ति :-**

1. **सैंधव लवण:-** सिंधु देश की खानों से सैंधव लवण निकलता है इसे Rock Salt भी कहते हैं ।
2. **सामुद्र या विड् लवण:-** समुद्र में पानी को सूर्य की किरणों से सुखाकर सामुद्र या विड् लवण प्राप्त होता है, इसे कृत्रिम तौर से बनाते हैं ।
3. **सौवर्चल या कालालोन :-** खाने का नमक 8 भाग, आंवला । भाग, बहेड़ा । भाग, सज्जीक्षार । भाग लेकर सबको एकत्र डाल कर बनाते हैं ।
4. **रोमक लवण :-** यह राजस्थान की संकर झील से बनाया जाता है ।
5. औद्भिद को सज्जीमिट्टी रेहानमक भी कहते हैं ।

लवण इस के रूप में जो भोजन में रुचि करता है, कफ को स्रवित करता है एवं शरीर में मृदुता उत्पन्न करता है वह लवण रस है ।

**ण रस :-**

| व्य | प्रभाव | पंचभौतिक संगठन | गुण | दोषप्रभाव | कर्म | विपाक |
|---|---|---|---|---|---|---|
| धव मकादि | आग्नेय | अग्नि, जल | स्निग्ध उष्ण गुरू | कफ प्रकोपक पित्तप्रकोपक वात शामक | दीपन, पाचन छेदन, भेदन क्लेदन | मधुर |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अतः लवण रस में जल व अग्नि की अधिकता होने से तथा वात के शीत व चल गुणों के विपरीत होने से यह वात शामक तथा जल गुण के कारण कफ प्रकोपक व अग्नि गुण के कारण पित्त प्रकोपक है ।

**ऋतु अनुसार**

| ऋतु | महाभूताधिक्य | रसोत्पत्ति |
|---|---|---|
| शरद | जल + अग्नि | लवण |

**6. लवण रस के लक्षण :-** लवण रस खाते ही मुख में घुल जाता है तथा क्लेद, लालस्राव, मृदुता उत्पन्न करता है । मुख में विदाह, अन्न में रुचि, कफ का स्राव, कण्ठ तथा कपोल में जलन करता है । सारे मुख में शीघ्र फैल जाता है और उष्णता उत्पन्न करता है । इन लक्षणों से लवण रस पहचाना जाता है ।

**7. लवण रस के कर्म :-**

| धातु कर्म | मूल कर्म |
|---|---|
| अवृष्य, शैथिल्यकर | सुष्ट विण्मूत्रमरूत |
| धातुनाशक, दौर्बल्यकर आदि | |

लवण रस - स्निग्ध होने के कारण वात (अधोवायु) मूत्र और पूरीष को निकालने से प्रायः शुभकर होता है । लवण पिप्पली, क्षार द्रव्यों की अधिक मात्रा में प्रयोग नहीं करना चाहिए ।

**8. निदान हेतु कारण के रूप में लवण का वर्णन**

आयुर्वेद के विभिन्न संहिताओं में लवण का निदान के रूप में वर्णन कई जगह किया गया है जैसे चरक में लवण पदार्थों का अधिक सेवन करने से शिर में दूषित हुआ, पित्त शिरः शूल उत्पन्न करता है । लवण रस वाले पदार्थों के सेवन से दूष्य में जाकर पित्त अधिक कुपित होकर पित्तज हृदय रोग को उत्पन्न करता है । लवण आदि पदार्थों के अत्यधिक खाने से कफ, पित्त तथा मांस अत्यधिक बढ़ जाते हैं । उनके बढ़ने से वायु की गति रुक जाती है और कुपित वायु ओज को लेकर मूत्राशय में प्रवेश कर मधुमेह रोग की उत्पत्ति करती है । लवण से बने पदार्थों के अत्यधिक सेवन से या लवण अधिक खाने से अनेक प्रकार के शोथ उत्पन्न हो जाते हैं । विशेषतः लवण पदार्थों के अधिक सेवन से पित्तज शोथ की उत्पत्ति होती है ।

अतिलवण (नमकीन) के (अधिक) सेवन मनुष्य का रक्त दूषित हो जाता हैं । लवण पदार्थों अधिक सेवन से पित्त का प्रकोप होकर पितज्वर उत्प होता है । नमकीन (लवण) पदार्थों का अधिक सेवन क से दिन में सोने से कफ प्रकुपित होकर कफज्वर उत्प होता है । कृश व्यक्ति जब लवण आदि का सेवन क है तब उसके शरीर में वायु के साथ-साथ पित्त प्रकु होकर पित्तज गुल्म उत्पन्न करता है ।

लवण पदार्थों के अधिक सेवन से पित्तप्रकृ वाले व्यक्ति का पित अतिशीघ्र दूषित होकर पित्त प्रमेह कारण बनता है ।

- कुष्ठ, उदररोग निदान, पित्तज व कफज व निद अर्श, ध्वजभंग, पितला योनि (पित्त दोष से दू योनि), पाण्डु रोग, वातज कफ, तृष्णा, पित्तअतिस कफज विसर्प, हृदय रोग, स्तन्य रोग, परिस्राव, प प्रकोप, इन व्याधियों के निदान में भी लवण पदा का अधिक सेवन का कारण बताया गया है ।
- अत्यधिक लवण युक्त रूक्ष बस्ति का प्रयोग परिकर्ति रोग उत्पन्न करता है ।
- जो व्यक्ति स्वप्न में लवण रस प्राप्त करता है या खा है तो मृत्यु को प्राप्त होता है ।

**9. आहार के रूप में लवण का प्रयोग :-**

आहार के रूप में लवण का कई जगह प्रयोग हु है । सैंधव लवण निरन्तर सेवनीय आहार के रूप में अधि प्रयोग होता है । आयुर्वेद ने लवण को भोजन का ए विशिष्ट अंग माना है जिसे प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति क विषयपूर्वक भाग में सेवन करना चाहिए । हेमन्त ऋतु विशेषतः लवण रस युक्त आहार का करने को कहा है वर्षा ऋतु में भी वातजन्य विकार की शान्ति के लिए प्र न रूप में लवण रस प्रधान घृत पक्व या तैल पक्व स्नि भोजन करने को कहा है । पक्वाशयगत वात में भी लव रस प्रधान आहार देना चाहिए । प्रमेह चि० दौरान भी सै व लवण का प्रयोग भोजन के साथ करने को कहा है

सर्वप्राणियों के आहार के लिए वक्ष्यमाण वर्ग सैंधव लवण का वर्णन किया है । साथ में कहा गया है कि



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



छ पदार्थ ऐसे होते हैं, जो अन्य पदार्थों के साथ संयोग ने से विषतुल्य हो जाते हैं । अत: लवण को दूध के थ मिलाकर सेवन नहीं करने को कहा है । स्वस्थ मनुष्य अग्निवृद्धि के लिये सेंधानमक + पिप्पली चूर्ण मिलाकर हपान करने को कहा है । लवण को दीपन पाचन ग्राही नकफहर द्रव्य कहा गया है । जैसे आश्वासन प्रदान करने ले पदार्थों में सर्वश्रेष्ठ है । अत: जीवन निर्वाह कारक ार्थों में सर्वश्रेष्ठ है वैसे ही लवण भोज्य पदार्थों में रुचि ान करने वाले द्रव्यों में श्रेष्ठतम है । इसलिए आहार में वण का प्रयोग अवश्य करना चाहिए । जैसे सैन्धवादि र्ग, जो आहार में रुचि तो पैदा करता ही है, साथ ही साथ ग्नि भी प्रदीप्त करता है । शिरोविरेचन द्रव्यों (इन्द्रियों को देने वाले द्रव्यों) में लवण का निर्देश किया गया है।

**कालानुसार लवण व इसका प्रयोग :-**

कालानुसार (ऋतु के अनुसार) लवण का प्रयोग भिन्न-भिन्न है । जैसे हेमन्त ऋतु में तो विशेषत: लवण रस युक्त आहार का सेवन करने को कहा है । वैसे ही वर्षा ऋतु में भी वातजन्य विकार की शान्ति के लिए प्रधान रूप से लवण रस प्रधान घृत या तैल पक्व स्निग्ध भोजन करने को कहा है । वहीं दूसरी और ग्रीष्म ऋतु में लवण का प्रयोग अपथ्य बताया है ।

1. कालानुसार लवण की उत्पत्ति इस प्रकार कही है :-

| | | |
|---|---|---|
| ऋतु | महाभूताधिक्य | रसोत्पत्ति |
| शरद् | जल अग्नि | लवण |

**लवण रस** जल अग्नि महाभूत की **अधिक्ता** से बना जो शरद ऋतु में प्रधान होता है । अत: शरद ऋतु में लवण की उत्पत्ति हुई ।

**11. लवण रस के अतिसेवन से हानि** :- अधिक मात्रा में सेवन करने पर लवण रस पित्त को प्रकुपित करता है । रक्त में तीव्र गति उत्पन्न करता है । तृष्णा उत्पन्न करता है । मूर्च्छा लाता है । चर्म आदि में विदीर्णता ला देता है । मांस में सड़न पैदा करता है । विष के वेग को बढ़ाता है । शक्ति क्षीण करता है । दातों को गिराता है । इन्द्रियों की शक्ति क्षीण करता है । शिर के बालों को श्वेत बनाता है और बालों को गिराकर गंजापन लाता है । वातरक्त, अम्लपित्त इत्यादि त्वचा तथा रक्त के विकारों को उत्पन्न करता है ।

इस प्रकार मात्रा में सेवन करने पर जहां लवण अनेक रोगों का नाश करता है, वहीं यदि लवण का अतिसेवन किया जाये तो वही बताये गये विभिन्न रोगों की उत्पत्ति भी करता है, अत: कालनुसार, रोगानुसार व अवस्थानुसार पूर्णत: विचार करके ही लवण का प्रयोग करना चाहिए ।


स्त्रियों के लिए कांतिवर्द्धक एवं बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

अशोकारिष्ट

मासिक-धर्म की अनियमितता, कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, भूख न लगना तथा मासिक-धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# बांस : गुणधर्म एवं लाभ

स्मिता गुप्ता* एडवीन जेराल्ड, शीजा एडवीन जेराल्ड

कुल नाम : Gramineae.
लैटिन नाम : Bambura Arundinacea Wild.
अंग्रेजी नाम : Bamboo
संस्कृत : वंश, वेणु, त्वक्सार
हिन्दी : बांस
गुजराती : बांस
मराठी : बांबू
बंगाली : बांश, केटुआ
तेलगू : बोंगुवेदरन
अरबी : कसब
फारसी : तवाशीर

परिचय : स्कूली कक्षाओं में प्राय: एक दोहा-'लाठी में गुण बहुत हैं, सदा राखिये संग, जहां नदी नाला बहत है तहां बचावे अंग पढ़ाया जाता है ।' यह लाठी कुछ और नहीं, बांस का ही पर्याय है, साधारणत: लाठी के घरेलू उपयोगों से सब परिचित हैं, उसके औषध्यार्थ व्यवहार से प्राय: अपरिचित हैं । बांस वैसे तो भारत में सर्वत्र उपलब्ध है परन्तु दक्षिणी भारत, उड़ीसा, आसाम, हिमालय की तराई वाला भाग, गंगा व सिंध के कछार इसके प्रमुख क्षेत्र हैं । जंगलों में यह स्वयं उत्पन्न हो जाता है, परन्तु देहातों में यह लगाया जाता है । बांस की 550 जातियां पायी जाती हैं । इनमें 2-3 प्रमुख जातियों का विवरण प्रस्तुत है ।

1. Dendro Calamus Artictmus बेंत सदृश, एकदम सीधा संकरा, ठोस नर जाति का बांस होता है ।
2. Dendrocalamus Giganteous यह भी नर बांस की ही जाति है । यह 20 से 120 फुट तक ऊँचा होता है । पुराना होने पर इसका रंग हल्का हरा या पीला हो जाता है । इसकी लाठियां बहुत मजबूत बनती हैं ।

**प्रयोज्य अंग :** मूल, पत्र, पत्रांकुर, फल, वंशलोशन ।

**मात्रा :** 50-100 मिली. वंशलोचन 1-3 ग्राम

**औषधीय प्रयोग :**

1. सिरगंज :
   1. बांस की जड़ और छाल को जलाकर सिरके में मिलाकर इसका लेप सिर पर लगाने से बाल फिर उगने लगते हैं ।
   2. बांस की जड़ की राख को चमेली के तेल में मिलाकर लगाने से भी लाभ होता है ।
   3. बांस की जड़ और छाल को जलाकर इसकी राख में बराबर की मात्रा में हल्दी मिलाकर पीसकर बालों की जड़ों में लगाने से बालों की जड़ें मजबूत हो जाती हैं और गिरे हुए बाल फिर उत्पन्न हो जाते हैं ।

बांस की जड़ को पीसकर मुख पर तथा चेचक के दागों पर लेप करने से चेहरे की सुन्दरता बढ़ती है ।

**व्रणस्राव :**

1. बांस के कोपलों को पीसकर घाव पर डालने से घाव से बहता हुआ रक्त बंद हो जाता है और जख्म भर जाता है । इससे सूजन भी मिट जाती है ।
2. जख्म और घावों से उत्पन्न कीड़ों को नष्ट करने के लिए घाव पर बांस के ताजा कोमल अंकुरों का रस टपकायें और फिर उन पर अंकुरों की पुल्टिस बनाकर बांधने से जख्म बहुत जल्दी अच्छे हो जाते हैं ।

**नेत्र रोग :-**

1. वंशलोचन 1.250 मिग्रा. इलायची के बीज 10 ग्राम, आंवला 750 मिग्रा. काली मिर्च 500 मिग्रा. छोटी पिप्पली 250 मिग्रा. इन सबकी मात्रा में बराबर आधा भाग शुद्ध सुरमा लेकर महीन पीसकर कपड़ छानकर इस सुरमे को प्रतिदिन नेत्रों में लगाने से नेत्रों के सब तरह के विकार दूर होते हैं ।
2. कांड और पत्रों पर जमी हुई चिकनाई को नेत्रों में डालने से नेत्रों का जाला कट जाता है ।

**दंत रोग :-**

1. बांस मूल को जलाकर राख को दांतों पर मलने से दांत स्वच्छ व चमकदार हो जाते हैं ।
2. वंशलोचन, छोटी इलायची के बीच व समामस्तंगी,



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



समभाग महीन पीसकर रख लें । नित्य प्राय: सायं इसे दांतों पर मलने से दांतों का जमा मैल दूर होकर मोती के समान चमकने लगते हैं । **नारू रोग:** बांस के अंकुरों का रस तथा पुल्टिस नारू पर बांधने से नारू निकल जाता है ।

3. Bamboo Manma बंशलोचन मादा जाति के पर्वतीय मोटे पोले और नजला बांस के नाम से प्रसिद्ध बांसों के अंदर का श्वेत रस सूखकर कंकड़ जैसा ठोस हो जाता है, यही वंशलोचन कहलाता है । असली बंशलोचन के श्वेत वर्ण के अथवा नीली झांई लिए अपारदर्शी, श्वेत रंग के पारमासी एवं रूपरेखा में अनियमित छोटे बड़े टुकड़े होते हैं । यह कड़े हाथ की अंगुलियों से दबाने पर शीघ्रता से न टूटने वाला होता है तथा पानी में देरी से घुलता है, यह जल का अवशोषक है तथा इस पर जल डालने से यह पारदर्शक हो जाता है । असली वंशलोचन महंगा होने की वजह से इसका निर्माण रासायनिक विधि से भी किया जाता है ।

**बाह्य स्वरूप :-** तृण्कुल में उत्पन्न बांस के एकदम सीधे समूह बद्ध कंटक युक्त, बीस से पचास फुट तक ऊँचे गुल्म पाये जाते हैं । कांड संयुक्त गोल मोटाई में 5-7 व्यास के लगभग 20 इंच की दूरी पर अनेक पोले या ठोस चर्म सदृश भिन्न-भिन्न आकार के स्पष्ट पर्व होते हैं । शाखाएं बहुत कम, पत्र गुच्छों में 7 इंच लम्बे, अग्र पर नोकीले तथा वृत्त की और प्राय: गोल होते हैं ।

**पुष्प :-** लम्बे बहुशाखीय दंड पर श्वेत लाल वर्ण के फल 1/3 इंच, जौ की आकृति में जौ जैसे जोने के कारण वंश यव कहे जाते हैं इसमें से चावल जैसे दाने निकलते हैं, जिन्हें बांस के चावल कहते हैं ।

**रासायनिक संघटन :-** वंशलोचन में सिलिका, मंडूर, पोटाश, चूना, एल्युमिनिया तथा कुछ वानस्पतिक पदार्थ जैसे कोलिन कार्बोहाइड्रेट तथा अनेक किण्वतत्व पाये जाते हैं ।

**गुणधर्म :-** गुण-रूक्ष, लघुतीक्ष्णा, रस मधुर, कषाय, विपाक, मधुर, पिच्छिल पत्रांकुर और वंसयव, उष्ण-वीर्य है ।

**बंशलोचन :-** कषाय मधुर-मधुर विपाक तथा शीतवीर्य है । यह शरीर की धातुओं को बढ़ाने वाला, वीर्यवर्धक, स्वादिष्ट, शीतल, तृष्णा, खांसी, ज्वर, श्वास, क्षय, पित, रुधिर विकार, कामला, कोढ़ व्रण, पांडुरोग, वायु के रोग तथा मूत्रकृच्छ्र नाशक है ।

**बांस के अंकुर :-** चरपरे, खट्टे, कसैले, कड़वे, हल्के शीतल तथा रक्तपित्त, दाह और सुजाक में लाभदायक होते हैं ।

**चावल :-** बांस के चावल कसैले मधुर, बल्य, पौष्टिक तथा कफ-पित्त, विष और प्रमेह को दूर करते हैं ।

**कर्म :-** बांस और रंध्र बांस, मूत्रस्नच्छ, प्रमेह बवासीर, पित्त दाह को हरने वाला है । रन्ध्र बांस अग्निवर्धक, अजीर्णनाद्धाक, रोचक, पाचक, हृद्य तथा शूल और गुल्महर है ।

**दाह :-** बांस की जड़ को जलाकर उसकी राख को पानी में घिसकर या पीसकर कमर व कूल्हे में लगाने से शूल शांत होता है ।

**कटिशूल :-** बांस के अंकुरों को सिरके में चंदन की तरह घिसकर या पीसकर कमर व कुल्हे में लगाने से शूल शांत होता है ।

**गर्भाशय शुद्धि :-** प्रसूति के बाद गर्भाशय की शुद्धि के लिए इसकी 10 पत्तियों को 200 ग्राम जल में क्वाथ करें, जब 50 ग्राम जल शेष रह जाये तो छानकर उसमें 10 ग्राम गुड़ मिलाकर गरम-गरम (सुविधानुसार) पिला देने से जेर झिल्ली निकल कर गर्भाशय की पीड़ा दूर हो जाती है ।

**रजोरोध :-**

1. रजोरोध में इसके कोमल पत्रों का क्वाथ पिलाने से मासिक धर्म खुलकर आने लगता है ।
2. इसके पत्रों का क्वाथ कर पिलाने से भी गर्भाशय शुद्ध होता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



3. गर्भाशय का छोड़ जम गया हो या शुष्क गर्भ चिपक गया हो तो इसकी गांठ की जौ कूटकर एक सेर जल में क्वाथ कर, चौथाई जल शेष रहने पर उसमें एक ग्राम कच्ची फिटकरी, गुड़ 200 ग्राम मिलाकर प्रतिदिन प्रातः दस दिन तक पिलाने से गर्भाशय में चिपका हुआ सूखा गर्भ छोड़ निकल जाता है ।

**विशेष :-** गर्भाशय पर तेल की मालिश कर सेंक करते रहें ।

**पथ्य :-** गेहूँ के आटे का हलुआ गुड़ की चाशनी डालकर खिलायें । छोड़ निकल जाने पर शुंठी और सोया 6-6 ग्राम या 10 ग्राम तक लेकर क्वाथ कर उसमें 20 ग्राम गुड़ मिलाकर एक सप्ताह तक पिलाने से गर्भाशय विकार शेष नहीं रहने पाता एवं गर्भाशय अपनी पूर्व अवस्था में आ जाता है ।

**कष्टार्त्तव, नष्टार्त्तव :**

इसकी गांठ का मोटा चूर्ण 20 ग्राम और 40 ग्राम सोये की बीज, दोनों को 1 किलो जल में पकावें, आठवां भाग जल शेष रहने पर उसमें 25 ग्राम गुड़ मिलाकर पिला दें, इससे रुका हुआ मासिक धर्म फिर शुरू हो जाता है तथा उस समय होने वाली वेदना कम हो जाती है ।

1. इसके कोमल पत्रों का फांट दिन में जल के स्थान पर पिलाते रहने से मूत्रसंस्थान एवं आमाशय में आई उग्रता, दाह तथा तृषा शांत होकर यह रोग दूर हो जाता है ।
2. बांस के 25 ग्राम पत्तों को 200 मिली. जल में उबालें, 40 मिली. शेष रहने पर 5 ग्राम शहद मिलाकर पिलाने से लाभ होता है ।

**सुजाक :** बांस के छाया शुष्क पत्र छह ग्राम, अनन्तमूल चूर्ण छह ग्राम दोनों को 400 मिली. जल में क्वाथ करें । 100 मिली शेष रहने पर 3-4 ग्राम मिसरी मिलाकर एक से दो सप्ताह तक पिलाने से सुजाक रोग दूर होता है ।

**प्रमेह - अर्शबहुमूत्र :-**

1. शीत प्रमेह में बांस के छाया शुष्क पत्र छह ग्राम अ अनन्तमूल की जड़ 10 ग्राम दोनों का मोटा मा कूटकर 300 मिली. जल में क्वाथ कर बीच में । ग्राम मिश्री मिला दें । अष्टमांश शेष रहने पर छानक सुबह-शाम सेवन करने से लाभ होता है ।
2. पत्तों के क्वाथ के अर्श के रोगी को बैठने से अर्श क वेदना शांत होती है ।

**अग्निवर्धक :-** इसके कोमल पत्तों को या अंकु को अच्छी प्रकार उबालकर उनका अचार, साग या क बनाकर खाने से अजीर्णजन्य क्षुधा तथा पाचन क्रिया वृद्धि होती है ।

**विष :-** बांस के पत्तों के रस में शक्कर मिलाक पिलाने से पारे के विष से उत्पन्न उपद्रव शांत हो जाते हैं

**श्वान विष:**

1. बांस की जड़ को दूध में पीसकर देने से कुत्ते का वि उतर जाता है ।
2. बांस की जड़ और अंकोल को गौदुग्ध में पीसक प्रतिदिन प्रातः 15 दिन पिलाने से वमन होकर वि निकल जाता है ।
3. शुष्क कासः बालकों को सूखी खांसी पर इसकी गां को जल में घिसकर चंदन की तरह थोड़ा गरम क थोड़ा-थोड़ा पिलाने से खांसी दूर हो जाती है ।

**संधिवात :** बालकों को सूखी खांसी पर इसक गांठों को पीसकर गरम कर पुल्टिस बनाकर बांधना चाहिए

**चोट :** चोट लग जाने पर शरीर में कहीं भी पीड़ हो तो इसकी छाल को खूब महीन पीसकर, शक्कर क साथ लेने से लाभ होता है ।

2. चोट जन्य पीड़ा पर तथा त्वचा व रक्त की दाह पर बांस की छाल को क्वाथ कर ठंडा हो जाने पर उसम शहद मिलाकर दिन में दो बार तीन दिन पिलावें, इससे शराब जन्य दाह एवं विष प्रकोपज दाह में भी लाभ होता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**ालोचन प्रयोग**

**ूखी खांसी :-**

वंशलोचन 1.250 मिग्रा. से 2.500 मिग्रा तक शहद के साथ चटाने से सूखी खांसी मिटती है ।

वंशलोचन चूर्ण एक ग्राम, पिप्पली चूर्ण 395 मिग्रा. दोनों को शहद में मिलाकर दिन में 3-4 बार चाटने से श्वास व कास में लाभ होता है ।

**जीर्णज्वर :** वंशलोचन 500 मिग्रा. गिलोय सत्व )0 मिग्रा. पिप्पली चूर्ण 250 मिग्रा. मिलाकर मधु के साथ न में 3 बार देते रहने से अग्निमांद्य एवं दाहयुक्त र्ण-ज्वर दूर हो जाता है, उर:क्षत - 500 मिग्रा. वंशलोचन ो दिन में तीन बार घी या मधु के साथ सेवन करने से त शुद्ध होकर भर जाते हैं ।

**सर्व प्रमेह :-** स्वरस के साथ सेवन वंशलोचन ाव चीनी, असली नागकेशर और इलायची के बीज, मान भाग लेकर, पीसकर कपड़े में छानकर चंदन के तेल तर कर झाड़ी के बेर के प्रमाण की गोलियां बनाकर, में से 1-1 गोली सुबह-शाम 50 मिली. पानी में 6 ग्राम क्कर डालकर अच्छी तरह घोलकर सुबह-शाम पीयें । स प्रयोग से सुजाक की जलन एक दिन में ही शांत हो ाती है । सात दिन में पूर्ण लाभ होता है । यह गोली सब कार के प्रमेह में लाभकारी है ।

**पथ्य :-** गेहूँ की रोटी, घी और शक्कर ही देना ाहिए ।

**ूत्रदाह :**

मूत्रदाह में सुजाक नाशक गोली में चंदन का तेल न मिलाकर केवल चूर्ण को ही डेढ़ से तीन ग्राम की मात्रा में मिसरी मिले दूध के साथ सेवन करने से लाभ होता है ।

केवल वंशलोचन को गोखरू अर्क के साथ, गोखरू पत्र स्वरस के साथ सेवन करने से भी मूत्रदाह कम हो जाता है ।

3. वंशलोचन के चूर्ण को गोखरू व मिसरी मिलाकर कच्चे दूध की लस्सी के साथ लेने से लाभ होता है।

**रक्तपित :** वंशलोचन के दो ग्राम चूर्ण को बासा के 10 ग्राम स्वरस में मिलाकर सेवन करने से अथवा इसके चूर्ण को शहद और मिसरी के साथ सेवन करने से लाभ होता है ।

**मुखपाक :** वंशलोचन, छोटी इलायची, श्वेत कत्था व गेरू समभाग महीन चूर्ण कर थोड़ा-थोड़ा मुख में डालते रहें तथा 40 ग्राम गुलाब के फूलों के गुलकंद में 2-3 ग्राम वंशलोचन मिलाकर प्रात: व रात्रि में सेवन करें।

**मुँह के छाले :-** वंशलोचन को शहद में मिलाकर लेप करें ।

**वीर्य वृद्धि :** एक ग्राम वंशलोचन प्रतिदिन सेवन करें, अथवा इसे प्रवाल पिष्टी, अभ्रक भस्म, शिलाजीत आदि औषधियों में मिलाकर सेवन करें ।

**गर्भपात :** यदि गर्भपात की आशंका हो तो वंशलोचन एक ग्राम और असली पत्थर का जीव (कल्बुल हज) 125 मिग्रा दोनों को अलग पीसकर मिला लें । ऐसी मात्राएं दिन में 2-3 बार आवश्यकतानुसार लेने से गर्भपात नहीं होता ।

**अच्छी सन्तति की प्राप्ति :-**

1. कमल गट्टे की गिरी के बीच का हरा भाग निकाल दें तथा इसके बराबर वंशलोचन लेकर दोनों का महीन चूर्ण बनाकर दो गुनी मिश्री मिलाकर दो से तीन ग्राम तक गौदुग्ध के साथ दिन में दो बार सेवन करने से सुखपूर्वक प्रसव होकर अच्छी सन्तति की प्राप्ति होती है ।
2. बच्चे के हाथ में वंशलोचन की कंकड़ देने से उसकी मिट्टी खाने की आदत जाती रहती है ।
3. वंशलोचन के सेवन से गर्भवती स्त्रियों की भी मिट्टी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



खाने की आदत छूट जाती है तथा उनके स्वास्थ्य में सुधार होता है ।

**सितोपलादि चूर्ण :-** दाल चीनी 10 ग्राम, छोटी इलायची के बीज 20 ग्राम, छोटी पीपल 40 ग्राम, वंशलोचन 80 ग्राम तथा मिश्री 160 ग्राम, इन सबको अलग-अलग पीसकर कपड़ा छान कर फिर मिलाकर शीशी में रख लेवें ।

1. इस चूर्ण को दो से चार ग्राम तक शहद के साथ देने से कफ विकार दूर होते हैं ।
2. वात पित्त प्रधान विकारों में पहले घी मिलाकर, फिर घी से आधा मधु मिलाकर सेवन करें ।
3. यह चूर्ण कास, श्वास, क्षय, हाथ पांवों की जलन, मुख से रक्त पड़ना, अरुचि, पसली का दर्द, जीर्ण ज्वर, धातुगत ज्वर बालकों की कमजोरी, नेत्रों की उष्णता, कंठ की जलन आदि में विशेष लाभकारी है ।
4. गर्भवती स्त्री को 4-6 मास तक सितोपलादि चूर्ण का सेवन कराने से बालक पुष्ट व तेजस्वी होकर जन्म लेता है ।
5. सितोपलादि चूर्ण 10 ग्राम, भैंस का शुद्ध घृत 10 ग्राम, दोनों को कांच या मिट्टी के पात्र में रखकर उस पर गाय या भैंस का एकदम निकला दूध डालकर सुबह-सुबह लगभग दो मास तक सेवन करने से अपार शक्ति प्राप्त होती है ।

**हानि :** वंशलोचन का अधिक सेवन काम शक्ति तथा फेफड़ों के लिए हानिकारक है ।

**हानि निवारक :** शहद, मस्तंगी, उन्नाव, एलुवा, केसर आदि है ।

**प्रतिनिधि द्रव्य :** कलफा और रायतुंग इसके प्रतिनिधि द्रव्य हैं ।


प्रसूता के लिए बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध
प्रसव के बाद इसके सेवन से माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती है।




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# "इन्द्रियाणां देहेऽवरोधः" जीर्णज्वर एवं उपक्रम-एक आयुर्वेदीय अध्ययन

*प्रो० हरिभाई के० त्रिवेदी

स्तावना :-

आयुर्वेद में ज्वर का वर्णन, भेद, प्रभेद इत्यादि नशांश कल्पना से किया गया है और पुराण-शास्त्रों में भी ज्वर का प्रादुर्भाव भगवान शंकर के कोप से कहा है । महर्षि चरक ने ज्वर की स्थिति 'जन्मादौनिधने च महत्तम्' (च०चि० 1) और शान्तोऽग्नौम्रियते' भी कहा है, ज्वर की उष्मा ज्वर के साथ आती है और जब मनुष्य की मृत्यु हों जाती है तब ज्वर की उष्मा समाप्त हो जाती है, इस बात की पुष्टि देते हुए महर्षि वाग्भट ने कहा है कि - उष्मा पित्तादृते नास्ति ज्वरो नास्त्यूष्मणा विना (अ०ह्य०चि० 1/16) अर्थात् पित्त के अलावा शरीर में उष्मा होती ही नहीं और उष्मा के बिना ज्वर होता ही नहीं है । शरीर में पित्त अग्नि स्वरूप में रहता है । यह अग्नि (जठराग्नि एवं कायाग्नि) की दुष्टि से ही शरीर में सर्व व्याधियों का निर्माण होता है - कहा है कि 'रोगाः सर्वेऽपि मंदेऽग्नौ ।'

आयुर्वेद में व्याधि की उत्पत्ति (1) शारीरिक और (2) मानसिक कहा है । अतिसार, ग्रहणी, पांडु इत्यादि शरीर (वातादि दोषों से) की दुष्टि से होता है और उन्माद, अपस्मार एवं अतत्वाभिनिवेष इत्यादि का उद्भव मानसिक ? विकारों (रज-तम) से अर्थात् मन इत्यादि विभ्रम-इन्द्रियों की विकृति से होता है फिर भी यहाँ ज्वर का अधिष्ठान शारीर और मानस कहा है, अतः महर्षि चरक ने चि०अ० 3 में ज्वर को 'देहेन्द्रिय मन स्वापी सर्वरोगप्रजोबली ।' अर्थात् ज्वर देह, इन्द्रियाँ एवं मन को संताप अर्थात् पीड़ा देने वाला और ज्वर की चिकित्सा करना भी कठिन होता है, उसमें चिकित्सक का धैर्य और ज्ञान महत्व के निर्णायक बनते हैं ।

*** इन्द्रियों का अवरोध ज्वर में कैसे होता है ?**

**(अ) मानसिक प्रकृति** = ज्वर की प्रकृति शारीरिक वात, पित्त, कफ दोष और मानसिक रज-तम दोष है, क्योंकि इन शारीरिक और दोषों से रहित प्राणियों को ज्वर नहीं होता । यहाँ मानसिक दोष (रज-तम) को स्वयं मन को ही दूषित बताया गया है, मन पंच ज्ञानेन्द्रिय एवं पंच कर्मेन्द्रिय यह दोनों का संचालन (नियमन) करता है । अतः मन को उभयात्मक इन्द्रिय कहा है, जो शरीर एवं इन्द्रियों (पंचज्ञानेन्द्रिय + पंचकर्मेन्द्रिय) को मार्गदर्शन बनता है । अतः मन प्रथम दूषित होता है ।

**(ब) ज्वर की उत्पत्ति में** = ज्वर की उत्पत्ति हेतु सन्निकृष्ट (नजदीक का) कारण वातादि दोष है और विप्रकृष्ट (दूर का हेतु) मिथ्या आहार-विहार असात्म्येन्द्रियार्थ संयोग, प्रज्ञापराध और परिणाम है । यहाँ इन्द्रियों का असात्म्य अन्न एवं प्रज्ञापराध से लिया अन्न दूषित करता है ।

**(क) इन्द्रियों को व्यथित करने वाला** = शारीरिक ज्वर पहले शरीर में होता है और मानसिक ज्वर पहले मन में होता है - जैसे चित्त का न लगना, बेचैनी होना, मन में ग्लानि होना - ये मन के सन्ताप के लक्षण हैं और इन्द्रियों में विकृति होना अर्थात् अपने-अपने विषयों (जैसे-आँख से देखना, कर्ण से सुनना, घ्राण से पदार्थ ज्ञान करना, दुष्कर-मुश्किल होता है) का ग्रहण न करना । तात्पर्य यह है कि शारीरिक एवं मानसिक ये दोनों दोषों की विकृति से शरीर में ज्वर प्रबल होकर इन्द्रियों में (विशेष ज्ञानेन्द्रियाँ में) व्यथा-दुःख-पीड़ा एवं अपने-अपने कार्य में रुकावट-बाधा उत्पन्न करने वाला होता है ।

**(इ) जीर्ण ज्वर में मन की विकृति की भूमिका** = इन्द्रियाभिग्रहः कर्म मनसः स्वरूप निग्रहः ।। (च०शा० 1/21) अर्थात् इन्द्रियों में अधिष्ठित होकर उसका संचालन करना कहा है । जीर्ण ज्वर में मन की दुष्टि विशेष रूप से होती है, क्योंकि जीर्णज्वर में वात दोष अधिक बढ़ जाता है "वायु" मन एवं इन्द्रियों का सर्वोपरि है हठयोग दीपिका में वायु को इन्द्रियार्थ मनोनाथ मनोनाथस्तु मारुतः अर्थात् इन्द्रियों का अधिपति मन है, जब मन का अधिपति 'वायु' है । अतः जीर्ण ज्वर में "वात" ज्यादा बढ़ जाने से मन को भी बिगाड़ता हैं वह मन इन्द्रियों के अपने-अपने कार्य में विकृति लाते हैं तात्पर्य यह है कि जब मन की विकृति होती है तो उसकी अधिष्ठित ज्ञानेन्द्रियां भी दूषित होती है ।

**(ई) ज्वर में देह, इन्द्रिय एवं मन की दुषितता का - विकृति का शास्त्र में प्रमाण** = ज्वर शब्देन च देह मनः संतापकरत्वरम् (च०नि० 1/5- चक्रपाणि) सर्वकाल

सेवानिवृत्त प्राध्यापक, सरकारी आयुर्वेद महाविद्यालय, बड़ौदा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मनः संताप करत्वास ज्वरस्याहु । (अ०स०नि० 1/1 - अरुणदत्त)

जो शरीर एवं मन में संताप उत्पन्न करता है उसे ज्वर कहते हैं । यहाँ इह इन्द्रियाणां देहेऽवरोधः (यो) देह शब्द में इन्द्रियों का भी समाविष्ट हो जाता है जिससे ज्वर की संक्षेप में और स्पष्ट निरूक्ति बनती है, ज्वरयति संतापयति दह इन्द्रिय - मनासि इति ज्वरः ।

* जीर्ण ज्वर की पूर्वभूमिका एवं परिभाषा :-

मूल (प्रथम) ज्वर (नवीन) की उत्पत्ति में मिथ्या आहार एवं मिथ्या विहार का उल्लेख किया है, मिथ्या आहार का अर्थ मनुष्य अकाले, अतिमात्रा में एवं असात्म्य भोजन लेता है तो उसका जठराग्नि तत्काल मंद हो जाने से अपक्व अन्न रस की उत्पत्ति होती है जिसे शास्त्र में आमरस कहते हैं, यह आमरस शरीर की जठराग्नि की ज्वालाओं को शरीर में व्याप्त कर उष्मा (ज्वर) को उत्पन्न करता है । दूसरा कारण मिथ्या विहार का अर्थ जो शक्तिमान लोग कार्य करते हैं, वह यदि अशक्त कार्य करें अर्थात् अपनी शक्ति से ज्यादा भार वहन करें, रात्रि जागरण, दिन में सोना इत्यादि मिथ्या विहार से भी जठराग्नि विकृत होकर आमदोष को उत्पन्न कर ज्वर का निर्माण करते हैं, यह ज्वर वातादि दोषों से उसकी समय मर्यादा से ज्यादा दिन तक ज्वर आना तथा सम्यक् चिकित्सा न हो तो वह ज्वर (उष्मा) रस-रक्तादि धातुओं में जाकर धातुओं को अपनी उष्मा से क्षीण कर देने से मनुष्य दुर्बल हो जाते हैं और मानसिक अल्प सत्ववाले बन जाते हैं । हलन, चलन में कष्ट एवं शरीर में म्लानता तथा कृष्ण वर्ण युक्त हो जाता है ऐसे ज्वर वाले रोगी को जीर्ण ज्वर कहा जाता है ।

जीर्ण ज्वर मनुष्य को शरीर में दो रूप से आता है (1) स्वतंत्र रूप से - प्लीहा की वृद्धि और अग्निसाद होता है और परतंत्र जैसे - पांडु, यक्ष्मा, कृमि, आमवात, अतिसार एवं शोथ में लक्षण के रूप में भी होता है । तो यह ऐसी परिस्थिति में ज्वर स्वतंत्र रोग रूप में है या परतंत्र लक्षण रूप में है यह चिकित्सक को निदान करते समय देखना अति आवश्यक है ।

* जीर्ण ज्वर का लक्षण =

तत्रान्तर में कहा है कि - 'आसप्त्य रात्रं तरुण ज्वरमाहुर्मनीषिणः । मध्यं द्वादशरात्रस्तु पुराणमत उत्तरम् अर्थात् सप्ताह पर्यन्त तरुण, बारह दिन तक मध्य ज्वर तथा बारह दिन के पश्चात् पुराण ज्वर माना गया है । महर्षि जतूकर्ण भी कहते हैं कि तेरह दिन का ज्वर जीर्ण माना गया है इससे अतिरिक्त मधुकोष कार ने कहा है कि -

**त्रिसप्ताहे व्यतीते तु ज्वरो यस्तुनुतांगतः ।**
**प्लीहाग्निसादं कुरुते स जीर्णज्वर उच्यते ॥**

(मधुकोष)

अर्थात् तीन सप्ताह व्यतीत होने पर भी जो ज्वर अन्दर सूक्ष्म रूप से विद्यमान रहता है और अन्दर रहकर प्लीहा वृद्धि और अग्निसाद (यहाँ अग्निसाद का अर्थ स्वयं पाचक पित्त की उष्मा का ह्रास होता है) इत्यादि उपद्रव कर देता है यह जीर्ण ज्वर कहा जाता है ।

यहाँ प्लीहा वृद्धि मेद धातु के क्षय से होता है महर्षि वाग्भट ने कहा है कि -

**मेदसि स्वपनं कटयाः प्लीहो वृद्धिः कृशाङ्गता ॥**

(अ०ह०सू० 11/18)

अर्थात् मेदस् धातु का क्षय होने पर-कटि में स्वाप (शून्यता की प्रतीति) प्लीहा की वृद्धि तथा शरीर में कृशता दिखाई पड़ती है । जीर्ण ज्वर का तन्त्रान्तरोक्त यह लक्षण अति पुराण (बहुत पुराने) ज्वर का अभिप्रायः से लिखा गया है अथवा त्रिसप्ताहे व्यतीते तु इत्यादि पद्य में अतिपुराण ज्वर का लक्षण दिया गया है एवं साधारण पुराना ज्वर बारह दिन के पश्चात् का समझना चाहिये ।

पंडित् भावमिश्र बारह दिवस से ज्यादा (ऊपर) और तीन दोषों से जो द्विगुणी अवधि है, उससे भी अधिक मनुष्य के शरीर में जो क्रमशः वेग से होते रहता है उसे जीर्ण ज्वर कहा है । महर्षि चरक ने देह धात्व बलत्वाच्च ज्वरो जीर्णोऽनुवर्तते (च०चि० 3/242) ।

आचार्य विजय रक्षित जी और अरुणदत्त ने जीर्णज्वर को पुराण ज्वर को पक्व ज्वर कहा है अर्थात् सामान्यतः पक्व, जीर्ण और पुराण ज्वर पर्याय रूप में भी कहा जाता है (अ०ह्य०नि० 1/56 - अ०द्०)।

131495



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कई आचार्य का मत है कि सात दिन तक तरुण ज्वर, बारह दिन तक मध्यम ज्वर और बाद में उसे पुराण - जीर्ण ज्वर कहा जाता है (यो०र०)

*** जीर्ण ज्वर दीर्घकाल तक क्यों चलता है ?**

देह की धातुओं में दुर्बलता होने से जीर्ण ज्वर का वेग चालू ही रहता है, जब तक शरीर में रोग प्रतिकार शक्ति उत्पन्न न हो तब तक ज्वर की उष्मा दिखाई - (स्पर्श करने से मालूम होता है) पड़ती है, अत: शरीर का स्नेहांश नष्ट होता है । यह स्नेहांश की पूर्त्ति के लिए भी नवीन धातु उत्पन्न होती ही नहीं, क्योंकि अग्निमांद्य होने से रोगी आहार नहीं ले सकता इसलिये आहार का अभाव से नई धातुओं का निर्माण अशक्य है, इस कारण से देह-धातुओं में दुर्बलता उत्पन्न होती है और व्याधि बलवान होने से धातुओं को छोड़ता नहीं है (जीर्ण ज्वर की उष्मा-गरमी धातुओं में लीन-चिप की हुई होने से धातुओं में से बाहर अलग होती ही नहीं अत: (तस्मात्) ज्वर जीर्णता को याप्त होकर दीर्घकाल तक चालू ही रहती है । ज्वर की उष्णता का वेग धातुओं में स्थित होने से, धातुओं का द्रव्यत:, गुणत: और कर्मत: नष्ट होना दिखाई पड़ता है । अत: धातुओं में वर्धन, प्रीणन और यापन हो ऐसे बल्य, बृंहण और व्याधि बल विपरीत चिकित्सा-औषध एवं आहार देना हितावह है । अत: हमें (1) दोष शामक (2) धातु बल वर्धक (3) व्याधि बल विपरीत इन तीन बाबतों को लक्ष्य में रखकर चिकित्सा करनी चाहिए ।

*** (1) दोषशामक (अशांश कल्पना कर) चिकित्सा**

जीर्ण ज्वर में वात की अति वृद्धि रहती है । अत: ज्वर का वेग (अवस्था) शरीर में लम्बे समय तक रहने की वजह से शरीर में स्नेहांश का नाश होने से शरीर में रूक्ष गुण की वृद्धि होने से रूक्षता आ जाती है, उसकी वजह से अति बोलने का स्वभाव, हाथ-पाव में कंपन, मन की अशांति, मन खिन्नता का अनुभव करता है, यह सब चल गुण की वृद्धि से होता है । अत: स्निग्ध और स्थिर गुणवाला औषध और आहार देना चाहिए तथा ज्वर में पित्त तो रहता ही है और उष्ण गुण बढ़ने से शरीर में दाह, जलन इत्यादि दिखाई पड़ता है । अत: पित्त को शांत करने के लिये शीत गुण वाला द्रव्य हितावह होता है ।

दोषों के अनुसार औषध से पकाये घृत का प्रयोग सभी जीर्ण ज्वर में करना चाहिए, क्योंकि घृत स्नेह होने के कारण वातदोष को, संस्कार से कफ़ को शीत होने के कारण, पित्त एवं उष्मा को शान्त करता है । इसलिये जैसे अग्नि से जले हुए द्रव्यों को जल सेवन से लाभ होता है वैसे सभी जीर्ण ज्वर में घृत से लाभ होता है । (च० नि० 1/39) महर्षि चरक घृत के गुण-कर्म के बारे में आगे बताते हुए कहते हैं कि घृतं-स्नेहार्द्रातं शमयति, शैत्यात् पित्त नियच्छति । घृतं तुल्य गुणं दोषं संस्कारान्त, जयेत् कफम् अर्थात् घृत स्नेह होने कारण वात की शान्ति करता है, शीत वीर्य होने से पित्त को नष्ट करता है । घृत जैसा संस्कार का अनुवर्तन करता है वैसा कोई भी स्नेह संस्कार का अनुवर्तन नहीं करता है । अत: सभी स्नेहों में घृत को उत्तम माना गया है । इस तरह घृत व्याधि विपरीत भी है ।

यथा दोष हरेक कषायों के साथ घृत को साथ मिलाकर सिद्ध बनाकर संस्कार युक्त देने का विधान है जैसा कि - (अ) जीवन्त्यादि घृत (ब) बलाद्यघृत (क) अश्वगंधा घृत तथा गिलोय का स्वरस और कल्क से सिद्ध घृत (2) त्रिफला का स्वरस और कल्क से सिद्ध घृत अडूसी का स्वरस और कल्क से सिद्ध घृत (ड) द्राक्षा का स्वरस और कल्क से सिद्ध घृत (5) बला का स्वरस और कल्क से सिद्ध घृत (बलाघृत) ।

शमन चिकित्सा में ज्वरघ्न औषध और वात शामक घृत इत्यादि देना परन्तु बल्य और रसायन को नहीं देना चाहिये ।

*** धातुबलवर्धन चिकित्सा**

जीर्ण ज्वर में रस, रक्त, मांस और मेद धातु तथा क्षय होने से शरीर में धातु की अति वृद्धि से - यकृत-प्लीहा की स्थिति स्थापकता रक्त क्षय से बढ़ जाती है । यकृत-प्लीहा रक्त का स्थान है । अत: चिकित्सा में रक्त क्षय होने से - रक्त धातु पुष्टिकर भी औषध देना आवश्यक बनता है दूसरी बात आहार के पोषणा भाव से ही प्रथम रस धातु को पोषण मिलना बन्द हो जाता है । अत: रस-रक्तादि धातुओं का क्षय के भी लक्षण मिलता है । अत: जीर्ण ज्वर में प्रथम कौन-सा औषध की योजना करना है वह चिकित्सक की तर्क-शक्ति, दोषों-धातुओं की अशांश कल्पना एवं


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



देश-काल पर निर्भर करता है अथवा अग्निसाद् (पाचक पित्त का आग्नेय अंश का ह्रास हुआ है) धातुओं की पुष्टि और बल की शरीर में वृद्धि करने के लिए प्रथम अग्निवध क एवं धातुवर्धक औषधों की योजना करनी चाहिए क्योंकि प्रथम रस धातु को प्रदिप्त करना साथ में धातु पुष्टिकर औषध देना जिससे रक्तादि अन्य धातुओं की पुष्टि होती है और धातुओं को पुष्टि मिलने धातुक्षय से उत्पन्न हुई विकृति भी शांत होती है और शरीर बल (शक्ति) की वृद्धि होने से व्याधि की प्रतिकारक शक्ति भी बढ़ती है ।

शरीर में धातुक्षय होने से 'मन' की स्थिति चंचल-विकल और विगुण गतिवाली होती है अत: मन को प्राकृत अवस्था में लाने की पुष्टकर गुण-धर्म वाले औषध की योजना करना ।

(अ) सुवर्ण वसंत मालती-1 गोली सुबह में दुग्ध के साथ देना क्योंकि सुवर्ण का योग देने से मन को पुष्टि मिलता है ।

(ब) च्यवनप्राश 1 चम्मच दुग्ध के साथ । यह औषध जीवनीय - शरीर को आनंद एवं उत्साह देने वाला रस-रक्तादि धातु जो क्षीण हुई है उसकी वृद्धि करने वाला और रसायन अर्थात् दीर्घकालीन व्याधि को मिटानेवाला, एवं वृद्धावस्था में भी शक्ति-स्फूर्ति देनेवाला है ।

(क) प्रवाल भस्म - 2 रत्ती, सितोपलादि - 2 रति और अश्वगंधाचूर्ण 2 माशा का मिश्रण खाना खाने से पहले दूध के साथ सुबह-शाम । मिश्रण जीर्णज्वर की उष्मा को शांत करते और अश्वगंधा = नाड़ी संस्थान पर विशेष रूप से कार्य करने सी होने से नाड़ी को बल देने वाली और विशेष रूप से मधुर-स्निग्ध होने से मस्तिष्क (मन की विगुणता को) शामक है । अश्वगंधा उष्ण वीर्यवाली होने से जो अग्निसाद में पाचक पित्त का उष्ण अंश का ह्रास हुआ है उसको बढ़ाने वाली होती है और जीर्णज्वर को अनिद्रा रहती है उसको भी मिटानेवाली होती है ।

**(3) व्याधिबल विरोधी चिकित्सा ।**

व्याधि की चिकित्सा में, दोष की गणना हो जाती है । अत्रे ज्वर विरोधी चिकित्सा में 'तिक्त' रस का प्रयोग विशेष रूप से करना पड़ता है क्योंकि ज्वर में प्रधान दोष 'पित्त' है उसको शान्त करने में दोष एवं व्याधि विपर 'तिक्त' रस है अर्थात् पित्त का शीतवीर्य होने से शांत क है । अग्निमांद्य, अजीर्ण, तृष्णा, यकृत-प्लीहा विक दीपन, आमपाचन सर होने से पित्त सारक एवं अनुलो करता है । धन्वन्तरि निघन्टु में किरात को ज्वरपह: कहा और भावप्रकाश में किरात को 'पित्तास्त्रदाहनुत्' कहा निम्नोक्त औषधियों को देना चाहिए (अ) सुदर्शन क्व (ब) गुडूच्यादि क्वाथ (क) सप्तपर्ण घनवटी (ड) संशम वटी ।

जीर्ण ज्वर में हम निम्नोक्त चिकित्सा करते है

(अ) सुदर्शन फांट (दोष विपरीत एवं व्या विपरीत होने से) (ब) संशमन वटी (गिलोय, त्रिद शामक, स्निग्ध होने से वात शामक, तिक्त-कषाय होने - कफ शामक, कफ और तिक्त-मधुर होने से पित्त शाम और ज्वरघ्न, दाहप्रशमन और रसायन है, उष्ण वीर्य होने जीर्ण ज्वर में अग्निसाद को मिटाते हैं ) यकृत-प्ली विकार में जो मेद का क्षय हुआ है गुरू, स्निग्ध गुण से मधुर विपाक होने से मेद की वृद्धि करते हैं ।

(क) अश्वगंधा + बलाचूर्ण का मिश्रण = अश्वग = रसायन बला ।

बृंहण से धातुओं का पुष्टि करते हैं विशेष रूप नाड़ी दौर्बल्य होने से मस्तिष्क दौर्बल्य को दूर करते हैं बलाचूर्ण, गुरू, स्निग्ध एवं पिच्छिल होने से, वातह बल-ओज को बढ़ानेवाली है । धन्वन्तरि निघन्टु में बला "बलौजो वर्धयन्ति" कहा है अत: हम दोनों औषधि मिश्रण दुग्ध में देते हैं ।

(ड) लघु मालिनी बसंत रस - (योग रत्नाकर ज्वर चिकित्सा) यह घटक में खर्पर भस्म + मरिच आते उसको नवनीत + निम्बू रस की भावना देते हैं ।

यह जीर्ण ज्वर में अति उपयोगी है अत: दूर्व साथ 1+1 गोली सुबह-शाम देते हैं ।

**पथ्य** = पुराने शाली, मुद्ग यूष घृत के साथ, गे द्राक्षा, अनार, दूध (लौंगी) घृत एवं गोदुग्ध ।

**अपथ्य** = दही, केले, रात्रि जागरण, मैथुन लवण, उष्ण एवं अम्ल पदार्थों का त्याग ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# रक्त कृमि एवं स्वास्थ्य

*पी०रा०सरोदे

जल ही जीवन है, इसके बिना हमारा मानव वन कैसा होगा ? इस कल्पना मात्र से हमें हमारा जीवन कटग्रस्त-सा दिखाई देने लगता है । जल के विभिन्न स्रोत जैसे नदी, तालाब, कुएं, झरने, वर्षा आदि । गांवों में जल मुख्य स्रोत हैं कुएं एवं तालाब । प्राय: प्रत्येक ग्रामीण ग में हमें तालाब देखने को मिलता है । इस तालाब का मीणवासी सब तरह से उपयोग करते नजर आते हैं, शहरण के तौर पर-कपड़े धोना; बर्तन मांजना, जानवरों को नी पिलाना और छोटे बच्चों एवं बड़े लोगों का उसमें ना-नहाना इत्यादि जिससे इस तालाब का पानी अत्यधिक दूषित होता रहता है । यह देखने में आया है कि इस प्रकार पानी में विभिन्न प्रकार की वनस्पतियां एवं एक विशिष्ट कार के घोंगे (शंख) रहते हैं । इस गोलाकार रूपी शंख ा जो रक्त होता है, उसमें लोहे की मात्रा पायी जाती है । स कारण इस शंख का रंग लाल होता है और वह दूषित नी, जिसमें प्राणवायु की कमतरता होती है, उसमें जिन्दा ता है तथा इसमें सूक्ष्म जन्तु पाए जाते हैं ।

यह देखने में आया है कि इस प्रकार के तालाब पानी के संपर्क में आने पर एक असहनीय चर्म व्याधि ा प्रकोप लोगों में होता है । इस प्रकार की शिकायत भिन्न नगरपालिकाओं/ग्राम पंचायतों द्वारा नीरी संस्था को प्त होने पर इसका विशेष अध्ययन किया गया और हुत-सी जानकारी एकत्र की गयी जिसका संक्षिप्त विवरण स लेख में दिया गया है ।

महाराष्ट्र प्रान्त में रत्नागिरी जिले में (तालुका - हागर, ग्राम - गिमवी) से इस प्रकार की शिकायतें हमेशा प्त होती रहती हैं । इस गिमवी ग्रामवासियों में पेशाब का ग-खून साथ होने से लाल होना, मूत्रपिंड में विकृति त्पन्न होना और साथ में बुखार का होना इस प्रकार के क्षण पाये जाते हैं ।

ऊपर निर्दिष्ट कारणों का पता लगाने के लिए ागपुर शहर और नागपुर के पास में गावों का निरन्तर दौरा कया गया । दौरे में तालाब में मिलने वाली वनस्पतियां, घोंगे, पानी और कीचड़ तथा उल्लिखित राग के शिकार लोगों की चमड़ी के नमूने लिये गये, साथ में तालाब के पास की बस्तियों के लोगों से पूछताछ भी की गयी ।

परीक्षण से यह पता चला कि उन गांवों के तालाब पर जो पशु पानी पीने आते थे, उनमें से कुछ पशु के मुख और नाक से एक फेसनुमा पदार्थ निकलता था । जो पशु थके हुए होते हैं, उनके मुख और नाक से जो फेसनुमा पदार्थ निकलता है; उससे वह भिन्न था । ग्रामवासियों से चर्चा करने पर यह पता चला कि इन जानवरों को पिन्नस नाम का रोग हुआ है जिसकी वजह से इनके नाक के अंदर का यह भाग काफी लाल होता है तथा इनके मुख और नाक से झाग निकलती रहती है ।

यह देखा गया है कि जब यह व्याधिग्रस्त पशु तालाब का पानी पीते हैं तो उनके मुंह और नाक से निकली हुई झाग तालाब के पानी में घुलती रहती है तथा पानी को प्रदूषित करती है जिससे कई प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं।

इस हेतु प्रयोगशाला में एक प्रयोग किया गया, जिसमें एक छोटे गहरे कांच के पात्र में यह दूषित जल, जिसमें कि सूक्ष्म जन्तु (रोग के) उपलब्ध थे डाला गया। इस पानी में एक छोटा सफेद स्वस्थ चूहा डाला गया । छह घंटे के बाद में, इस सफेद चूहे को जो कि काफी त्रस्त महसूस होता था, निकाला गया और इस चूहे की चमड़ी से एक छोटे टुकड़े को लेकर उसे 10 प्रतिशत रसायन में सुरक्षित रखा गया । इस कांच के पात्र के पानी को एक अलग कांच के स्तंभ नुमा पात्र में स्थिर होने के लिये रखा गया ।

चूहे की चमड़ी के उस टुकड़े को बारीक हिस्सों में बांटकर उसके गरम मोम में छोटे टुकड़े बनाये गये । इन टुकड़ों से झिल्लियां बनाकर उन्हें रंगा गया और सूक्ष्मदर्शक यंत्र में देखा गया । अभ्यास करने पर यह पाया गया कि पूर्व में जो रोगी व्यक्तियों की दूषित चमड़ियों की झिल्लियों में जो सूक्ष्म जन्तु पाये गये थे, उसी प्रकार के सुक्ष्म जन्तु इन चूहों में भी पाये गये ।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



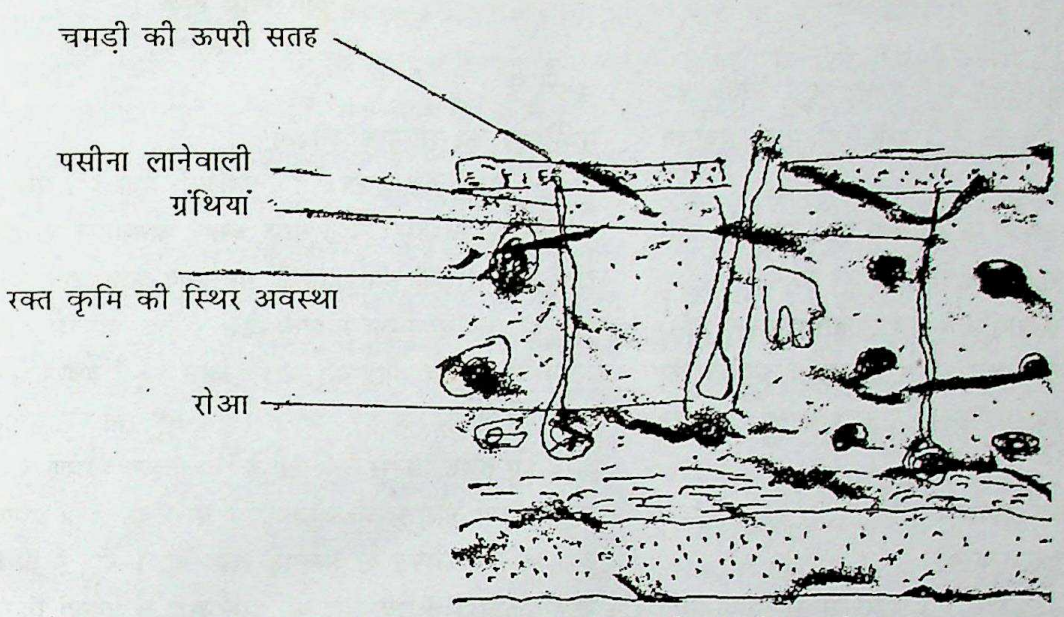


मनुष्य की चमड़ी का छेद

आगे यह देखा गया है कि तालाब में जो स्वस्थ जानवर पानी पीने के लिये आते रहते हैं वे भी कुछ काल के उपरांत व्याधिग्रस्त पाये गये जैसे कि उनके नाक और मुख से झाग निकलना, नाक के अन्दर का हिस्सा लाल होना इत्यादि ।

गांव के तालाब का पानी जो व्याधिग्रस्त जानवरों के द्वारा दूषित होता रहता है (जैसा कि पहले बताया गया है) यह दूषित पानी के सूक्ष्म जन्तु शंखों के द्वारा विभिन्न अवस्थाओं में से गुजर कर अंत में दूषित सूक्ष्म जन्तु पानी में छोड़ते हैं, जिसके लिये जानवर वास्तविक शिकार हैं और इस कारण स्वस्थ पशु बाद में बीमार होते नजर आते हैं । सूक्ष्म जन्तु मनुष्य के शरीर में चर्म के द्वारा प्रवेश कर जाते हैं और आगे नहीं जा सकने के कारण वहीं चर्म में स्थिर हो कर गंभीर प्रकृति का विकार (एलर्जिक प्रतिक्रिया) उत्पन्न करते हैं ।

बहुत बार गांव के तालाब के पास में रहने वाली बस्तियों में इस प्रकार का रोग बड़े पैमाने पर पाया गया । इस बारे में पास के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र उचित जानकारी के अभा में असहा (उपचार के बा में) पाये गये ।

यह देख गया कि गांव लोग तालाब पानी में जाने पहले और किस भी प्रकार के रो से बचने के लि शरीर के खुले हिस्स में सरसों का तेल लगाते हैं । कुछ गांवों में तालाब काम करने के बाद बाहर आने के बाद कुएँ के साफ पान से स्नान करते हैं । इन उपायों से थोड़ी बहुत मात्रा में इ रोगों पर अंकुश लगाया जा सकता है ।

आगे यह देखा गया कि तालाब के दूषित पानी बाहर आने के बाद यदि व्यक्ति साबुन या सोडा से हाथ-पै धोता है और यदि वह हाथ-पैरों को सूखे कपड़े से नह पोछता है तो भी वह उपद्रव का शिकार होता है और अग वह हाथ-पैर सिर्फ साफ पानी से धोता है और उसे सूख कपड़े से पोंछता है तो वह उपद्रव का शिकार नहीं होगा इसलिए इस विषय में दूषित पानी के बाहर आने के बा सूखे कपड़े से शरीर को पोंछना अत्यंत महत्वपूर्ण ए आवश्यक है ।

इसके अतिरिक्त इस प्रकार के रोग से बचने क लिए जो जानवर पिन्नस रोग से ग्रस्त हैं । उन्हें अलग पानी पिलाने की व्यवस्था करनी चाहिये, जिससे तालाब का पानी दूषित नहीं होगा और मनुष्यों को भी रक्तकृमिय की भयानकता का सामना नहीं करना पड़ेगा ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद में पर्यावरण का सामाजिक दर्शन

* डा० निधि मिश्रा
** डा० कमलनयन द्विवेदी

आयुर्वेद अथर्ववेद का उपवेद एवं विश्व का प्राचीनतम चिकित्सा विज्ञान है । इसके दो मुख्य प्रयोजन कहे गये हैं :

1. स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना तथा
2. रुग्ण व्यक्ति के रोग को दूर करना ।

**'स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम् आतुरस्य विकारप्रशमनम् च' ।**

आयुर्वेद का प्रथम लक्ष्य है स्वस्थ व्यक्ति को रुग्ण न होने देना । स्वास्थ्य-रक्षा हेतु दो पहलुओं पर ध्यान देना आवश्यक है -

1. वैयक्तिक स्वास्थ्य एवं
2. सामाजिक स्वास्थ्य

सामाजिक स्वास्थ्य की दृष्टि से संक्रामक रोगों का प्रतिषेध, स्वच्छता, वायु, जल एवं देश का विशोधन करने का उल्लेख आयुर्वेद में अनेक जगह मिलता है । यज्ञ, हवन आदि की प्रक्रिया, धार्मिक अनुष्ठान तथा आसपास किया गया वनौषधियों का रोपण स्वस्थवृत्त से सम्बद्ध है और सारी प्रक्रियाओं का विशिष्ट महत्व है ।

आयुर्वेद के शाश्वत सिद्धान्तों के अनुसार शरीर प्रकृति के द्वारा अथवा काल के अनुसार अवश्यमेव क्षय को प्राप्त होता है, प्रकृति के नियमों के विपरीत किया गया प्रत्येक क्रिया-कलाप एवं कुछ भी प्राकृतिक अनुसरण न करने में शिथिलता ही मुख्य कारण है । परिणामस्वरूप हम स्वयं अपनी आयु का ह्रास कर रहे हैं ।

शाश्वत सिद्धान्तों के अनुपालन के अतिरिक्त आयुर्वेद वाङ्मय में विभिन्न प्रकार के औषधीय पेड़ पौधों के विशालतम् भण्डार का वर्णन है जिनके प्रयोग एवं संवर्धन से अवश्यमेव प्राकृतिक एवं सामाजिक जीवन शैली विकसित की जा सकती है एवं प्रदूषण रहित शरीर एवं पर्यावरण का साम्य स्थापित कर आयु में वृद्धि की जा सकती है । आयुर्वेद भारतीय प्रकृति के अनुकूल होने के कारण पर्यावरण की सुरक्षा में अतीव महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है ।

**पर्यावरण का सामान्य स्वरूप**

प्रश्न यह उठता है कि पर्यावरण क्या है ? परि, आवरण अर्थात् हमारे चारों तरफ व्याप्त वायुमंडल जो हमें चारों ओर से ढके हुये रहता है, पर्यावरण कहा जाता है ।

पर्यावरण का सामान्य अर्थ भौतिक परिवेश से है जो पृथ्वी के जैव जगत को आवृत्त किये हुए है तथा उसके प्रभाव से जीवन स्पन्दित होता है । पर्यावरण को परिभाषित करते हुए हर्सकोविट्स ने लिखा है "पर्यावरण सम्पूर्ण बाह्य परिस्थितियों और उसका जीवधारियों पर पड़ने वाला प्रभाव है । जो जैव जगत के विकास चक्र का नियामक है ।[1] जीवविज्ञानियों ने पर्यावरण को इसी अर्थ में प्रयुक्त किया है । अत: पर्यावरण भौतिक तत्वों, दशाओं और प्रभावों का दृश्य और अदृश्य समुच्चय है जो जीवधारियों को परिवृत कर उनकी अनुक्रियाओं को प्रभावित करता है और स्वयं भी उनसे प्रभावित होता रहता है ।

सी०सी० पार्क के अनुसार "पर्यावरण का अर्थ उन दशाओं के समूह में है जो मनुष्य को निश्चित समय और स्थान पर आवृत्त करता है ।[3]

पर्यावरण के संघटकों को तीन प्रमुख कारकों में विभक्त किया जाता है ।

1. भौतिक या अजैविक संघटक
2. जैविक संघटक तथा
3. ऊर्जा संघटक

भौतिक संघटक के अन्तर्गत स्थल, वायु तथा जल एवं उनके उपसंघटकों को सम्मिलित किया जाता है जबकि जैविक संघटक के अन्तर्गत तीन प्रमुख उपसंघटक आते हैं - पादप संघटक, मनुष्य समेत जन्तु संघटक तथा सूक्ष्म जीव संघटक । ऊर्जा संघटक के अन्तर्गत सौर्यिक ऊर्जा एवं भूतापीय ऊर्जा को सम्मिलित करते हैं ।

सर्वमान्य तथ्य है कि भारतीय संस्कृति की

*प्रवक्ता, महिला महाविद्यालय पी०जी० कालेज, किदवईनगर, कानपुर
** रीडर, द्रव्यगुण विभाग, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रादुर्भाव उत्तुंग पर्वत श्रेणियों के वन, प्रान्तों, हरित, द्रुमाच्छादित घाटियों, सुरम्य नदियों के स्वच्छ तटों एवं विशाल सागर के वनाच्छादित प्रदेशों में हुआ । यह काल वैदिक काल का आरम्भ था । मंत्र द्रष्टा ऋषि जीवनोत्कर्ष एवं जन-कल्याण की कामना से नगरों को छोड़ वनों की शरण में पहुँचे और सतत चिन्तन एवं मनन करके दिव्य ज्ञान से मानव कल्याण बनाते तथा उनके अनुसार ही जनसाधारण को अनुसरण करने, को प्रेरित करते जिससे पर्यावरण का सन्तुलन बना रहे । अत: उन्होंने 'प्रकृति' को ईश्वर के समकक्ष स्थापित कर उसकी पूजा अर्चना एवं स्तुति का विधान बनाया ''ओऽम् शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्तिर्वनस्पतय:'' प्रभृति वैदिक वचनों का पाठ प्रत्येक शुभकार्य के प्रारम्भ में अब भी अनिवार्य है ।

कतिपय वृक्षों यथा अश्वत्थ, वट, विल्वादि को 'देव' संज्ञा प्रदान करके उनको भी पूज्यों की पंक्ति में लाया गया । वृन्दा (तुलसी) को देव संज्ञा प्रदान की गई । इसी प्रकार गंगा, यमुना, कावेरी, नर्मदा, गण्डक, प्रभृति नदियों को, हिमालय, सुमेरू जैसे पर्वतों, मानसरोवर जैसी झीलों तथा नैमिषारण्य जैसे वनों को भी देव संज्ञा प्रदान करके उनको पूज्यत्व प्रदान किया गया । इससे भी अधिक जन-जीवन और वन-जीवन का सन्तुलन बनाये रखने में सहायक सर्प-गोधा प्रभृति विषाक्त प्राणियों, सिंह-व्याघ्र, प्रभृति हिंसक प्राणियों गौ-वाराह प्रभृति गृह-प्राणियों, मत्स्य-कच्छप प्रभृति जलचरों और गरूड़ प्रभृति नभचरों को भी 'देव' संज्ञा प्रदान करके उनके पालन, रक्षा एवं पूजन का विधान किया गया ।

मनुष्य के लिए ऐसे नियम बनाये गये कि प्रकृति के अति निकट रहें एवं पर्यावरण को शुद्ध रखते हुए वह स्वयं भी स्वास्थ्य लाभ करें । मनुष्य, धूल-धूलों, दुर्गन्ध से वायु को प्रदूषित न करें एवं प्रदूषण रहित वायु-प्राण द्वारा मानव शरीर में संचार करके उसे सुखायु एवं दीर्घायु प्रदान करे । मनुष्य मल, मूत्र एवं अन्य कृत्रिम प्रकोपों से जल की रक्षा करें एवं शुद्ध 'हंसोदक' मनुष्य के शारीरिक-मानसिक मल को धोकर उसे सद्बुद्धि, भौतिक एवं आध्यात्मि शांति प्रदान करें । वृक्षों के कटाव, नदियों की बाढ़ दावानल प्रभृति प्रकोपों से मनुष्य पृथ्वी की रक्षा करें पृथ्वी अपने शस्य-श्यामलत्व, रत्न गर्भत्व एवं प्रभूत तेजोत्प से मनुष्यों को भौतिक एवं मानसिक तुष्टि-पुष्टि प्र करें । मनुष्य शुष्क समिधाओं, सस्नेह आहुतियों से अ की रक्षा करें एवं अग्नि के देव प्रतिनिधि भगवान भास्क मनुष्यों की जठराग्नि एवं अन्य बारह अग्नियों को समुचि प्रज्ज्वलित करके मनुष्यों को दीर्घायु प्रदान करें । इसी प्र मनुष्य उच्च शब्द, अपशब्द, घृणित विचारों का परित्य करके आकाश को प्रदूषण से बचाये, तो आकाश मानव विचारों को मंगलमय संकल्प प्रदान करें 'तन्मे म शिवसंकल्पमस्तु' तथा 'शिव संकल्पित मन' वन्य प्राणि कीट-पतंगों, सरिसृप, पशु-पक्षी, जलचर, नभचर एवं मनु के प्रति हिंसा की भावना त्याग दे, तथा प्रत्युपकार में सभी प्राणी एवं मनुष्य को रोग, शोक और मानसिक अश पहुँचाने वाले रोगाणुओं, कीटाणुओं तथा विषाणुओं का न कर पर्यावरण को सन्तुलित बना कर मनुष्य का कल्य करें ।

वास्तव में यह समय आयुर्वेद के प्रादुर्भाव का था । पंचमहाभूतों की रक्षा और प्रत्युपकार में पंचमहाभ द्वारा मानव के स्वास्थ्य की रक्षा का सिद्धान्त आयुर्वेद श का प्रथम सोपान था । ऋषियों ने मनुष्य के कल्याण लिए नई योजनाओं भी बनाईं जिनमें प्रत्येक परिवार प्रतिदिन होमयज्ञ करने का विधान था । प्रत्येक परिवार से सूखी समिधायें, पुष्प, पत्र, फल, कन्द, मूल, लता विधानुसार उसमें अन्न, दुग्ध, घृत, शर्करा प्रभृति पुष्टिक द्रव्यो, सुगन्धित वनौषधियों को मिलाकर होम करता थ फलस्वरूप मनुष्य, पशु-पक्षी एवं वन सम्प परिवर्द्धित-प्रफुल्लित रहती एवं भय, दु:ख, शोक का न करती थी ।

आयुर्वेदीय महर्षियों ने मनुष्य के निवास के लि भी उपयुक्त पर्यावरण का सर्वेक्षण किया तथा इस आ



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



र तीन प्रकार के देशों को रेखांकित किया - जांगल, ानूप एवं सामान्य ।

शभेद -

देशोऽपवारिद्रुनगो जाङ्गलः स्वल्परोगदः ।
आनूपो विपरीतोऽस्मात्समः साधारणः स्मृतः ।।[4]
ज्ञेयः स जांगलोदेशः स्वल्परोगतमोऽपिच ।
प्रचुरोदकवृक्षो यो निर्वातो दुर्लभातपः ।
आनूपो बहुदोषश्च, समः साधारणोमतः ।।[5]

जिस देश में छोटे-छोटे वृक्ष हों, वनस्पतियों का चुर्य हो, छोटी-छोटी पहाड़ियाँ हों, जल थोड़ा परन्तु च्छ निर्बाध रूप से बहने वाली नदियों का हो, सूर्य की ा प्रचुर मात्रा में पड़ती हो, तथा स्वच्छ सुगन्धित वायु र्बाध गति से बहती हो, उसे देश को जांगल कहते हैं । कृति के ऐसे देश में वातावरण शुद्ध रहता है, मनुष्यों को विकोपार्जन हेतु कठिन परिश्रम करना पड़ता है, क्योंकि ा देश की भूमि जल की कमी के कारण असिंचित रह ती है । परन्तु कठिन श्रम एवं शुद्ध पर्यावरण के लस्वरूप उनका स्वास्थ्य उत्तम बना रहता है ।

जल की प्रचुरता के कारण भूमि के जलमग्न रहने ा बड़े-बड़े वृक्षों की घनी छाया के कारण शुद्ध वायु एवं ा का संचार न होने के कारण आनूप देश में रोगों की ुलता होती है । भूमि जल युक्त होने से यहाँ धान्य की ुरता होती है, परन्तु देश के निवासी होने के कारण एवं ों के पत्तों के प्रकोप से जल में उठी अशुद्धियों द्वारा ूषित पर्यावरण के कारण निवासी प्रायः रोगी रहते हैं ।

समदेश-समतल भूमि पर बसा हुआ प्रदेश होता । इसमें जल सामान्य होता है, न थोड़ा न बहुत । धूप और ु का संचार भी सामान्य होता है । यहाँ के निवासी ान्य श्रम करते हैं और उनका स्वास्थ्य भी सामान्य ही ा है ।

गृह-निर्माण के लिये भी आयुर्वेदीय संहिताओं में ष्ट निर्देश है । गृह-निर्माण के लिए प्रशस्त भूमि वह है, ाँ नीम, खादिर, पलाश, वरुण, जामुन, बेल प्रभृति वृक्ष हों, जो स्थान अपने चारों ओर की भूमि से ऊँचा हो तथा उसमें चैत्य, वृक्ष, मन्दिर, श्मशान न हो, मिट्टी में राख, अस्थियाँ बालू न हो ऐसे उत्तम स्थान में पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख गृह का निर्माण करें, तथा उसमें देवदारु, बिल्व, बदर, खदिर प्रभृति वृक्षों के काष्ठ का प्रयोग करें। गृह वाटिका में तुलसी, बेला, चम्पा, चमेली, गुलाब, गंदा नीबू, केला, आम, सन्तरा, अश्वगंधा, शतवीर्या प्रभृति वनौषधि वृक्षों का भी रोपण करें ।

पंच महाभूतों के सिद्धान्त के आधार पर मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने निष्कर्ष निकाला कि वास्तव में 'जन-जीवन' और 'वन-जीवन' मूलतः पाँच महाभूतों के तारतम्य द्वारा उत्पन्न होते हैं, अतः मनुष्यों का वृक्षों के साथ अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है । इन पाँच महाभूतों के समुचित संयोग का नाम आरोग्य है और इनके असन्तुलित महाभूतों को सन्तुलित बनाने के लिए उनकी तुल्य योनि वनस्पतियों का व्यवहार करना चाहिए । अतः उन्होंने इस सिद्धान्त को और सरल करने का उपाय सोचा । उन्होंने पृथ्वी और जल महाभूत के युग्म को 'कफ' संज्ञा दी, वायु और आकाश महाभूतों के समास को 'वायु' एवं तेज महाभूत को 'पित्त' संज्ञा देकर 'त्रिदोष सिद्धान्त' का निरूपण किया । इसी सिद्धान्त के आधार पर आयुर्वेद का भवन खड़ा है । इस सिद्धान्त के निरूपण के उपरान्त मर्मज्ञ महर्षियों ने समस्त वन सम्पदा का प्रभूत अनवेषण करके प्रत्येक वनस्पति का रस, गुण, वीर्य, विपाक, प्रभाव निरूपित किया । उन्होंने वनस्पतियों को सम्मान सूचक उपाधियाँ प्रदान करके तथा हरीतकी को 'माता', आमला को 'धात्री', बिल्व को 'श्रीफल', गिलोय को 'अमृता' प्रभृति सम्बोधन करके मानव द्वारा उनके उपकार के प्रति कृतज्ञता स्थापित की । वनौषधियों को एकत्रित करने से पूर्व उनका धूप, दीप, चन्दन द्वारा पूजन, संग्रह करते समय उनसे मानव कल्याण की प्रार्थना, पवित्र एवं सुगन्धित स्थान पर आरक्षण, प्रयोग करते समय स्तुति, प्रार्थना, यह सब आयुर्वेदज्ञों द्वारा वन सम्पदा के प्रति कृतज्ञता नहीं तो और क्या है ? आयुर्वेद मनुष्य और वृक्ष को


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



एक दूसरे का पूरक और सहायक मानता है और मनुष्य के जन्म से लेकर उसकी आयु पर्यन्त उसके स्वास्थ्य की रक्षा एवं रोगों की चिकित्सा काष्ठौषधियों से करता आ रहा है। प्राचीन भारत में आयुर्वेद के ऋषि-महर्षियों ने अपने आश्रमों के माध्यम से अरण्य संस्कृति को विकसित किया। ऋषिगण अपने आश्रम में पेड़-पौधों के संरक्षण का विशेष ध्यान रखते थे और उन्हें किसी भी पेड़-पौधों को काटना सहन नहीं था। किसी भी पेड़-पौधों को काटना उन्हें अपना अंग-भंग के समान पीड़ा दायक लगता था। उनके प्रति आत्मवत व्यवहार करते थे। यह पेड़ों के प्रति उनके अपनत्व को दर्शाता है। आयुर्वेद के ग्रन्थों में तो संसार में जितने भी वृक्ष और वनस्पतियाँ उगती हैं उनको औषधि स्वरूप माना गया है। इस रूप में छोटे-बड़े सभी पेड़-पौधे मानव जाति की किसी न किसी रूप में सेवा करते हैं, भले ही वे नीम, पीपल, वट या फिर तुलसी हो या गुग्गुलु, सर्पगन्धा आदि जड़ी-बूटियाँ ही हों।

वनौषधियों को घर के आस-पास उगाने से पर्यावरण की शुद्धि सम्भव है। सदा हरियाली देने वाले आम, बकुल, पीपल के वृक्ष वातावरण को शुद्ध करने में सहायता करते हैं। यह वृक्ष प्राणवायु (आक्सीजन) को प्रभूत मात्रा में उत्सर्जित करते हैं, जो जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक घटक है। देवदारू, नीम और सरसों के निर्यास धूपन से घरों में मच्छर और अन्य कीटों को नाश करने सहायता मिलती है। जल के शुद्धिकरण के लिए निर्मली और शिरीष बीज का उपयोग किया जाता है।

उपरोक्त वर्णन आयुर्वेद में सन्निहित उस सामाजिक दर्शन का वैज्ञानिक चित्रण करना है जो पर्यावरण को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से तथा मानव समाज पर पर्यावरण के प्रभाव को आयुर्वेद ने किन प्रक्रियाओं से व्यक्त किया इस भी दर्शाता है।

**सन्दर्भ सूची**


1. अग्निवेश, चरक संहिता, सूत्रस्थान 30/26, चौखम्भा विद्या भवन, वाराणसी, 1962.
2. श्रीवास्तव वी०के० एवं राव बी०पी०, पर्यावरण और पारिस्थैतिकी, पृष्ठ सं० 4, वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर 1995.
3. सिंह रवीन्द्र, पर्यावरण भूगोल, पृष्ठ सं० 19, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 1999.
4. वाग्भट अष्टाङ्गहृदय, शारीर स्थान 3/79, मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी, 1963.
5. अग्निवेश, चरकसंहिता, विमान स्थान 3/47-48, चौखम्भा विद्या भवन, वाराणसी, 1962.



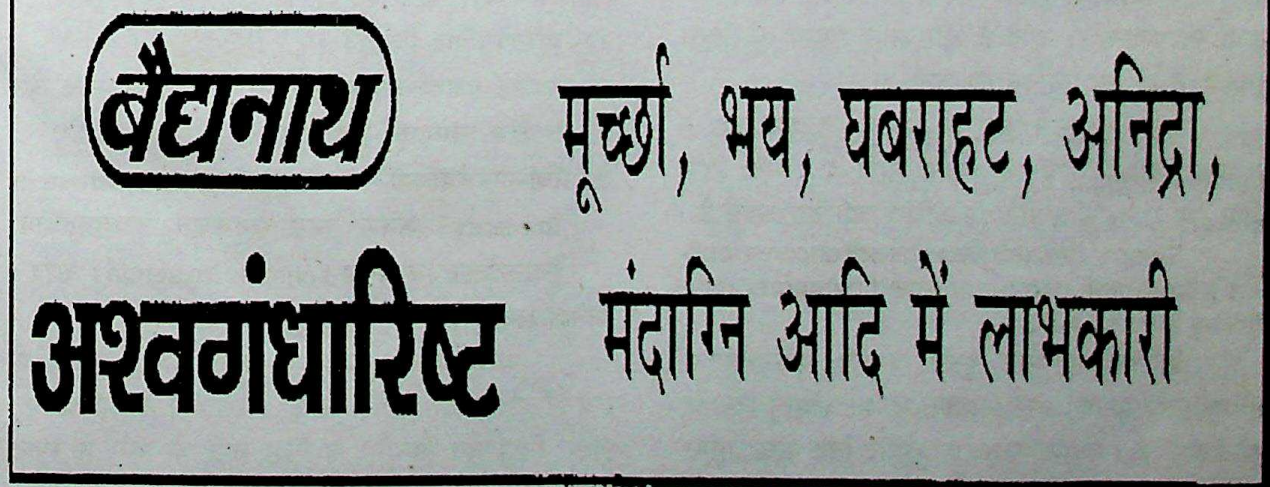





CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अनिद्रा: कारण व निवारण

* डा० राम विलास शुक्ला

विज्ञान एवं तकनीकी की प्रगति ने जहां एक ओर यावह रोगों के निदान एवं चिकित्सा के क्षेत्र में उन्नति की वहीं दूसरी ओर इसका मानव शरीर पर बुरा प्रभाव पड़ा । नैसर्गिक रूप से प्राप्त उपादानों जैसे, जल, वायु, प्रकाश दि का जनसंख्या वृद्धि, कल कारखानों की अधिकता व नों की अंधाधुध कटाई के कारण दूषित हो जाने से आज मानव समाज निरन्तर नये-नये रोगों से ग्रसित होता जा है । साथ ही प्राचीन वैज्ञानिक नियमों जैसे दिनचर्या, तुचर्या, सद्वृत्त व आचार रसायन आदि की अवहेलना पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण के नैतिक मूल्यों के रन्तर पतन होने से प्राणियों में क्षोभ व अवसाद जन्य कृतियों की इन दशकों में थोक के भाव से वृद्धि होती रही है जिसमें अनिद्रा, अवसाद, उच्च रक्तचाप, मधुमेह दि प्रमुख हैं ।

आयुर्वेद में आहार, निद्रा एवं ब्रह्मचर्य ये जीवन के न उपस्तम्भ कहे गये हैं । जिस प्रकार प्राणियों को जीवित ने के लिए आहार की आवश्यकता पड़ती है ठीक उसी कार निद्रा की भी अपेक्षा होती है । अत: निद्रा का संक्षिप्त रुपण समीचीन प्रतीत होता है ।

**यदा तु मनसि क्लान्ते कर्मात्मापि: क्लमान्विता: ।**
**विषयेभ्यो निवर्तन्ते सदा स्वति मानव: ।।**

च०सू० 21/35

अर्थात् जब मन के क्लान्त हो जाने से क्रियाशील न्द्रियां भी क्लान्त हो जाती हैं और अपने विषयों से निवृत्त जाती हैं तो वह व्यक्ति सो जाता है ।

महर्षि सुश्रुत ने निद्रा का वर्णन करते हुए कहा है हृदय देहधारी जीवों का चेतना स्थल है । अत: हृदय तम गुण से आवरित होने पर प्राणियों को निद्रा आती है ।

Sleep is defined as a state of unconsciousness from which can be aroused by appropriate sensory after stimuli.

प्राणियों का सुख, दु:ख, कृशता, पुष्टि, वृषता, लीवता (नपुंसकता) ज्ञान, अज्ञान, जीवन व मृत्यु निद्रा के धीन होती है । अर्थात् यथाकाल सेवित निद्रा सुख, पुष्टि, ल, वर्ण, उत्साह अग्निदीप्ति, चैतन्य तथा धातु साम्य प्रदान करती है । इसके विपरीत अकाल सेवित निद्रा दु:ख, कृशता (दुर्बलता) क्लीवता अज्ञान व मृत्यु को देने वाली होती है ।

सामान्यत: एक शिशु को 16 से 20 घंटे, स्वस्थ युवा को 6 से 8 घंटे एवं वृद्ध व्यक्तियों को 4 से 6 घंटे निद्रा आना प्राकृत निद्रा की श्रेणी में आती है । इस सामान्य अवधि से कम निद्रा का आना अनिद्रा (Insomnia) कहलाती है ।

Insomnia is a condition of inadequate quantity and quality of sleep.

**अनिद्रा का कारण :-**

1. चिन्ता, शोक, क्रोध, ईर्ष्या, मनस्ताप (Increased life stress)
2. असात्म्येन्द्रियार्थ संयोग - इन्द्रियों का अपने विषयों से सतत् अतियोग, हीनयोग या मिथ्या योग होना । जैसे टेलीविजन अधिक देखना, चक्षुरेन्द्रिय का अतियोग ।
3. अकाल निद्रा का सेवन । जैसे संध्या काल में सोना ।
4. रात्रि जागरण ।
5. शारीरिक श्रम का अभाव ।
6. धातु क्षय जैसे रसादिधातुओं का अपने प्रमाण से कम हो जाना ।
7. वात व पित्त दोष की वृद्धि ।
8. अभिघात (चोट लगना) ।
9. मस्तिष्क गत विकृति ।
10. नशीले पदार्थों का बहुत लम्बे काल तक सेवन जैसे अफीम, तम्बाकू, मद्य आदि ।
11. विभिन्न व्याधियों - जैसे शूल (Pain any where in the body) श्वास, कास, आमवात, उच्चरक्तचाप, चिरकालिक विषमयता (chronic toxaemia) आदि ।

**अनिद्रा लक्षण :-**

यद्यपि प्राचीन ग्रन्थों में अनिद्रा स्वतंत्र व्याधि के रूप में उल्लिखित नहीं मिलती । आचार्यों ने अनिद्रा का लक्षण निद्रा वेग अवरोध व निद्रा नाश के रूप में स्पष्ट किया है ।

वक्ता - रचना शारीर विभाग, ऋषिकुल राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय एवं चिकित्सालय, हरिद्वार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



निद्रा अंगमर्द तन्द्रा च शिरोरोगोऽक्षि गौरवं ॥

च०सू० 7/23

**निद्रानाशात् अंगमर्द शिरो गौरव जृम्भिकाः । जाड्यं ग्लानि भ्रम अपक्तिः तन्द्रा रोगा च वातजा : ॥**

वा०सू० 7

अर्थात् अनिद्रा में जंभाई आना, अंगमर्द, शिर एवं आंखों में गुरुता, ग्लानि (हर्षक्षय) चक्कर आना, भोजन का ठीक से न पचना, तन्द्रा (इन्द्रियार्थों का उचित ज्ञान न होना) आदि लक्षण मिलते हैं ।

**निद्रा जनक उपाय :-**

निद्रा जनक सभी उपायों को आहार-विहार औषधि के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है ।

**आहार -**

1. भैंस या गाय का दूध रात्रि को सोते समय नित्य सेवन करें । (निद्राधाते पिवेत् क्षीरं) सु०उ० 55
2. दधि के साथ शालि चावल का सेवन ।
3. जल में रहने वाले प्राणियों के मांस रस का सेवन जैसे मछली ।
4. आनूप (नमी प्रधान क्षेत्र) प्राणी के मांस रस का सेवन ।
5. घृत, तेल, वसा, मज्जा चारों प्रकार के स्नेह का उचित मात्रा में पान ।
6. मद्य का मात्रावत् सेवन (मद्य सौमनस्य जनानां श्रेष्ठः) च०सू० 25
7. मांस, गुड़ विकार का सेवन निद्राकर होता है ।

**विहार :-**

1. काम, क्रोध, लोभ, मोह से दूर रहें ।
2. रात्रि जागरण न करें । यदि विशेष परिस्थिति में रात्रि जागरण करना भी पड़े तो दूसरे दिन जागरण के आधे समय तक बिना भोजन सोयें ।
3. अभ्यंग-तिल तैल या सरसों के तेल से सम्पूर्ण शरीर की मालिश करने से सुख-पूर्वक निद्रा आती है ।

**अभ्यगं आचरे नित्यं.....पुष्ट आयु स्वप्नत्वक तुढाढर्यकृत ।**

अ०हृ०सू० 2/8

4. स्नान-कोष्ण जल से स्नान करने से श्रम का नाश होता है जिससे सुखपूर्वक निद्रा का प्रवर्तन होता है ।
5. संवाहन-सम्पूर्ण शरीर का मर्दन करने से ।
6. संगीत-मधुर शब्द जैसे गजल, फिल्म संगीत सुनने से निद्रा का प्रवर्तन होता है ।
7. सुगन्धित द्रव्य - जैसे चन्दन, इत्र या सुगन्धित तैल का प्रयोग ।
8. लेप-शरीर सहित शिर पर शीतल द्रव्य का लेप जैसे चन्दन का लेप ।
9. मनोनुकूल शयन कक्ष में सुखकर शय्या पर सोना ।
10. सोते समय हाथ पैर को ठण्डे जल से धोकर सोना ।
11. प्रवर्तनीय वेग का त्याग कर सोना जैसे - मूत्रादि ।

**औषधि :-**

1. शिरोबस्ति/शिरोधारा/शिरोपिचु का चिकित्सकीय परामर्श के अनुसार प्रयोग ।
2. निद्रोदय रस 250 मिग्रा०
   महावात विध्वंस रस 250 मिग्रा०
   सर्पगंधा चूर्ण 250 मिग्रा०
   पारसीक यवानी चूर्ण 500 मिग्रा०
   जटामांसी चूर्ण 500 मिग्रा०
   एक मात्रा रात को सोते समय जटामांसी फाण्ट से लेवें ।
3. अश्वगंधा पाउडर 2 ग्राम, घी और शक्कर मिला कर सेवन करने से अनिद्रा व मानसिक विकार में लाभ मिला है ।
4. पिप्पली मूल चूर्ण की 3 ग्राम मात्रा पुराने गुड़ में मिलाकर सेवन करना ।
5. इसके अतिरिक्त अनिद्रा में निम्न योग उचित मात्रा में प्रयोग किये जा सकते हैं । सुधानिधि रस, ब्राह्मी स्वरस, मांसादि क्वाथ, अमर सुन्दरी वटी, मुक्तापिष्टी, वचा, शतावरी, अश्वगंधारिष्ट सारस्वतारिष्ट, सर्पगंधा घनवटी ।
6. अनिद्रा में नित्य प्राणायाम व ध्यान करने से लाभ मिलता है ।
7. व्याधियों के कारण उत्पन्न अनिद्रा में मूल व्याधि की चिकित्सा करनी चाहिए ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# ओजक्षय

वैद्य अम्बालाल जोशी

मानव देह में ओज अपना विशेष स्थान रखता है या कहें कि ओज ही देह धारक है तो भी अन्यथा न होगा। जहां तक देह धारक है वहां इसका क्षय होना आगे बढ़कर देह नाशक भी हो जाता है। उदाहरण के तौर पर जैसे दूध में घृत मिश्रित रहता है, उसी प्रकार देह में ओज अंग प्रत्यंग को संचालित होने का सामर्थ्य प्रदान करता है। हम इसी दृष्टि से इस पर विचार करेंगे।

**ओज क्या है ?**

फलों में जिस प्रकार छः प्रकार के रस रहते हैं और वे अपने परिवर्तित रूप में प्रकट होते रहते हैं उसी प्रकार देह की सातों धातुओं का सार (सत्व) इसमें व्यवस्थित रूप से रहता है। रस रक्त अस्थि मांस मेद मज्जा और शुक्र इन सातों धातुओं के सत्व को तेज कहा गया है यह सत्व वहां रहता है और बल देता रहता है। (सुश्रुत सूत्र अ 15-21) यह सत्व देह में जब तक उचित मात्रा में तथा शुद्ध रूप में रहता है तब तक व्यक्ति श्रम योग्य रहता है। उठना, दौड़ना, बोलना आदि दैनिक कार्यों में उसे थकावट महसूस नहीं होती न वास्तविक रूप से आती ही है। देह वर्ण स्वच्छता आभा बल तथा देह के सभी कार्य रक्त संचालन, पाचन श्वास प्रश्वास वायुचलन पित कार्य, श्लेष्म कार्य (पांचों प्रकार के) व्यवस्थित रहता है। ज्ञानेन्द्रियों तथा स्पर्शेन्द्रियो में चक्षु श्रोत त्वचा घ्राणशक्ति आदि अपने-अपने ढंग से कार्य करते रहते हैं। (सुश्रुत सूत्र 15-22)

**ओज का स्वरूप :-**

शास्त्रों ने ओज का स्वरूप इस प्रकार वर्णित किया है :-

**"ओजो सोमात्मकं स्निग्धं शुक्लं शीतं स्थिरं सरम्। विविक्त मृदु।"** उपरोक्त गुणों से संयोजित ओज का रूप है। (सु०सू० 15-23-24)

**ओज क्षय के कारण :-**

सभी धातुओं का क्षय या उनके विकार युक्त हो जाने पर ओज क्षय होता है क्योंकि वह सभी धातुओं में सार रूप में रहता है। अपने आधार में ही विकृति आ जाने के कारण ओज भी हीन तेजवान होकर क्षय का कारण बनता है।

**दोषादि क्षय :-**

शरीर में तीन धातु हैं और वे मानव देह को धारण किये रहते हैं जब तक वे निर्विकार रहते हैं वे ही विकृत होकर त्रिदोष कहलाते हैं और रोग कारक बन जाते हैं। इन दोषों की वृद्धि क्षय तथा तिर्यग गति अपने ही खान-पान व्यवहार से होती रहती है। इनका सम्पोषण भी इसी प्रकार होता है। रोग कारक कारणों से त्रिदोष ही आगे बढ़कर ओज क्षय कर देते हैं। यह कार्यक्रम तदनुसार ही मात्रा भेद से होते हैं। (सु०सू०अ० 15-22)

**ओजक्षय की तीन स्थितियां:- ओजक्षय की तीन स्थितियां होती हैं।**

(1) आरम्भिक स्थिति - इसमें रोग के पूर्व रूप की तरह आने वाली अवस्था का आभास तो होता है, परन्तु प्रमादवश व्यक्ति इस ओर ध्यान नहीं देता और कालान्तर में,

(2) मध्य स्थिति बन जाती है जो पूर्व स्थिति से कष्टदायक तथा स्पष्ट होती जाती है।

(3) तृतीय स्थिति जिसे उत्तर पूर्ण ओजक्षय कह सकते हैं वह मृत्यु कारण बनती हैं।

(अष्टांगहृदय 37-38)

**ओज दो प्रकार का :-**

ओज दो प्रकार का बताया गया है - जिनके नाम हैं (1) पर (2) अपर - इसका स्पष्टीकरण आगे दिया जायेगा। (दोषादि विज्ञानीय) ओज प्रकार - (1) ओज वृद्धि (2) ओजक्षय। इन वृद्धि क्षय के अपने-अपने कारण होते हैं उन्हीं के अनुसार वृद्धि तथा ह्रास होता रहता है और इसके परिणाम ही भोगने पड़ते हैं अच्छे या बुरे।

अब हम आगे ओज से सम्बन्धित कुछ उदाहरण प्रसंगित कर रहे हैं। वाल्मीकीय रामायण का यह प्रसंग है:- बाल्मीकीय रामायण - (युद्ध 45 सर्ग)

इन्द्रजित के सामने युद्ध करते हुए श्रीराम तथा लक्ष्मण के मर्म स्थलों को इन्द्रजित ने विद्ध कर दिया और वे अचेत होकर भूमि पर गिर पड़े। (15-18) इससे सर्वत्र संकट तथा सन्ताप छा गया - लक्षण- (चिन्ह) चेष्टा बन्द हो गई धीरे-धीरे श्वास भी अवरूद्ध होने लगी (6/4) इन्द्रजित ने उन्हें मृतक समझ कर छोड़ दिया निश्चेष्ट श्वास रुक गया था (46-27)। सुग्रीव शोकाकुल मूर्छित हो गये। विभीषण ने मंत्र युक्त जल छिड़क कर उसे चेतन किया। फिर विभीषण ने सान्त्वना देते हुए कहा (36-40) हयेन हास्यते लक्ष्मी दुर्लभः या गतायु षाम।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अर्थात् दुर्लभ लक्ष्मी ने इनका त्याग नहीं किया है।

ओज बल से श्रीराम जीवित हुए फिर औषधि के प्रयोग से लक्ष्मण भी स्वस्थ हो गये। वे (40) औषधियों थीं (1) विशल्य करणी (2) सवर्ण करणी (3) सन्धानी (4) संजीवनी - सभी औषधियों के गुण कर्म प्रभाव रामायण में स्पष्ट लिखे हैं यों भी नाम से अर्थ स्पष्ट है।

श्रीराम लक्ष्मण के गरुड़ के स्पर्श से तेज वीर्य बल ओज उत्साह दृष्टि बुद्धि स्मरण शक्ति गुण पहले से द्विगुण हो गये, उनके सभी व्रण भर गये। निर्विष हो गये। (50-40) फिर गुरुड़ ने राम से कहा - मैं आपका बाहर संचरण या विचरण करने वाला प्राण हूँ। (101-1-25-28)

**ओज वर्णन की स्पष्टता :-**

सुषेण ने कहा आपके भाई शोभा वर्धक लक्ष्मण मरे नही हैं देखिये इनकी मुख की आकृति अभी बिगड़ी नहीं है और न इनके मुखमण्डल पर कालापन ही आया है, इनका मुख प्रसन्न है एवं कान्तिमान दिखाई दे रहा है। इनके हाथों की हथेली कमल से भी कोमल है, आँखें भी बहुत साफ है। प्रजानाथ ! मरे हुए प्राणियों में ऐसा रूप नहीं देखा जाता ..... आप विषाद न करें इनके शरीर में प्राण है। वीर ! ये सो गये हैं इनका शरीर शिथिल होकर भूमि पर पड़ा है। श्वास चल रही है। हृदय बार-बार कम्पित हो रहा है। हृदय की गति बन्द नहीं हुई है। ये लक्षण उनके जीवित होने के हैं।

इस प्रकार सुषेण ने अप्रत्यक्ष रूप से ओज के विश्लेषण में कुछ वाक्य कहे। ओज के पर्याय नाम है:- तेज, वीर्य, बल, ओज ऐसा शास्त्रों में बताया गया है। आयुर्वेद शास्त्रों ने ओज की व्याख्या करते हुए ओज के प्रकार इस प्रकार बताये हैं :-

(1) अष्ट बिन्दु ओज जो सम्पूर्ण देह में व्याप्त है इसमें से एक बिन्दु का क्षय भी मारक बन सकता है - यह अष्ट बिन्दु के रूप में ही शरीर को धारण करता है।

(2) अधान्जिली ओज चरक के मतानुसार मांस और त्वचा के बीच में संचित द्रव्य के रूप में जिसे लसीका भी कहते हैं।

(3) पाचन क्रिया में अन्न का रस में रूपान्तरण भी ओज बताया गया है। परन्तु वास्तविक रूप में ऐसा नहीं है यह दूष्य है।

आधुनिक विज्ञान ने ओजक्षय के समान ही एक व्याधि का परिचय प्रस्तुत किया है जिसे एड्स (एक्वायर्ड इम्यूनो डेफिसिऐन्सी सिण्ड्रोम) नाम दिया गया है। यह नामकरण आज से 20-25 वर्ष पूर्व किया गया और भयावह रोग के नाम से पाश्चात्य जगत से आया है। इसके वायरस एच.आई.वी. बताया गया और इसे भयावह छूत की बीमारी का रूप में माना गया। यहां तक कि डाक्टर ऐसे रोगियों का स्पर्श भी करने से डरते थे, रक्त कार्य स्पर्श से भी परहेज करते थे।

**कार्य :-** देहिका सुरक्षा प्रणाली को निष्क्रिय करना इसका कार्य क्षेत्र बताया गया।

**कारण :-** सम लैंगिक सम्बन्ध, अप्राकृतिक आचार, सूचि बेंध (अपरिष्कृत) अनैतिक आचार, मादक द्रव्य सेवन, रक्त मोक्षण आदि इसके कारण हैं।

सुश्रुत सूत्र स्थान में ओजक्षय प्रकरण इससे कुछ भिन्न है।

यहां ओज क्षय तथा एड्स के विभेदक चिन्ह अंकित कर रहे हैं।

| एड्स | | ओजक्षय |
|---|---|---|
| वायरस से उत्पत्ति | : | आयुर्वेद इसे नहीं मानता |
| संक्रमणशील | : | आयुर्वेद इसे नहीं स्वीकारता |
| मृत्यु कारणता | : | आयुर्वेद नहीं मानता |
| अनाचार जन्य | : | कारणात्व |
| वीर्य वक्ष जन्य | : | सम्पूर्ण धातुओं का सार हीनता |
| पाश्चात्य अनाचार व्यवहार : | | भारतीय नहीं |

इस प्रकार ओज आयुर्वेदीय शरीर विज्ञान एक विशेष अवधारणा है, जो मानव देह के निर्माण तथा विनाश में अपनी विशेष कारणता रखता है। इसका संरक्षण तथा पोषण अतिमहत्वपूर्ण है। सन्तुलित ओज ही मानव देह में तेज वीर्य बल और उत्साह, दृष्टि - बुद्धि स्मरण शक्ति का पोषण करता है। इसके क्षीण होने पर या असन्तुलित होने पर देह वर्ण स्वच्छता आभा बल देह के सभी कार्य रक्त का संचालन, पाचन संस्थान, श्वास प्रश्वास वायु चलन, पित्तकार्य तथा श्लेष्म (पांचों प्रकार के) व्यवस्थित रहते है। ज्ञानेन्द्रीय तथा स्पर्शेन्द्रियों में चक्षु स्रोत त्वचा घ्राण शक्ति आदि अपने ढंग से कार्य करते हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# बालकों में पारिगर्भिक रोग

डा० दिनेश कुमार राय, एम.डी. (आयु.)

आयुर्वेद में कुपोषणजन्य व्याधियों में मुख्यत: तीन व्याधियों का वर्णन किया गया है - फक्क, पारिगर्भिक एवं बालशोष । शिशु के लिए मातृस्तन्य श्रेष्ठ आहार होता है जिसका प्रभाव शारीरिक एवं मानसिक विकास पर पूर्णत: पड़ता है । इसलिए मातृस्तन्य का शुद्ध होना आवश्यक है । यहां शुद्ध स्तन्य का तात्पर्य दुग्ध का शरीर के पोषण के लिए आवश्यक तत्वों से परिपूर्ण होना है । आचार्य काश्यप के शब्दों में -

**अव्याहतबलाङ्गायुररोगो बधते सुखम् ।**
**शिशुधात्र्योरनापत्ति: शुद्धक्षीरस्य लक्षणम् ।।**

अर्थात् वही क्षीर शुद्ध होता है जिसके पीने से बल एवं आयु निर्वाध गति से बढ़े, शिशु किसी प्रकार की व्याधि से ग्रसित नहीं होवे तथा वह शिशु एवं धात्री के लिए हितकर होवे । यह आचार्य द्वारा दुग्ध का शारीरिक परीक्षण (Physiological Exam.) का वर्णन किया गया है । प्रयोगशालीय परीक्षण (Laboratory Exam.) के अन्तर्गत दुग्ध का परीक्षण प्रत्यक्ष प्रमाण के आधार पर किया जाता था । यदि दुग्ध को जल में डाला जाय तो उसमें पूर्णरूप से मिश्रित हो जाय तथा जल का वर्ण पाण्डु वर्ण या श्वेत वर्ण का हो जाय, स्वाद में मधुर होवे तथा गन्धरहित होवे उसे शुद्ध स्तन्य कहा जाता है -

**-यत् क्षीरमुदके क्षिप्तमेकीभवति पाण्डुरम् ।**
**मधुरं चाविवर्णं च प्रसन्नं तद्विनिर्दिशेत् ।।**
**- प्रवृत्तवर्णं गन्धरसस्पर्शमुदपात्रे**
**दुह्यमानमुदकं व्येति, प्रकृतिभूतत्वात् ।**

(च०शा० 8/83)

अत: शारीरिक एवं मानसिक वृद्धि एवं विकास के लिए (Growth & Development) स्तन्य का शुद्ध या आवश्यक तत्वों से परिपूर्ण होना आवश्यक है इसलिए आयुर्वेद में क्षीरदोषों का वर्णन किया गया है । वर्ण एवं गुणानुसार क्षीर के वैवर्ण्य, वैगन्ध्य, पैच्छिल्य, फेनसंघात, रौक्ष्य, गौरव, अतिस्नेह ये अष्टविध दोष पाये जाते हैं जिन्हें दोषानुसार तीन वर्गों में बाँटा गया है - वैरस्य, फेन-संघात व रौक्ष्य ये वातजन्य स्तन्यदुष्टि हैं, विवर्णता, दौर्गन्ध्य यह पित्तजन्य स्तन्यदुष्टि है, तथा अतिस्निग्ध, पिच्छिलता, गुरुता यह कफजन्य स्तन्यदुष्टि है । दोषों का स्तन्य पर पूर्णत: प्रभाव पड़ता हैं जिसके कारण शिशुओं में व्याधियाँ हो जाती हैं ।

गर्भिणी माता का स्तन्यपान करने से बालकों में होने वाली व्याधि पारिगर्भिक है । गर्भावस्था में पोषण की दृष्टि से माता का आहार रस तीन भागों में विभक्त हो जाता है - प्रथम भाग गर्भाशय में गर्भस्थ शिशु का पोषण करता है, द्वितीय भाग गर्भिणी माता के स्वयं का पोषण करता है तथा तृतीय भाग स्तन्य का निर्माण करता है । स्तन्य को रस धातु का उपधातु माना गया है - "रसात् स्तन्यम् ।" बालक के दुग्धपान की अवस्था या क्षीरप अवस्था में यदि संयोगवश माता गर्भिणी हो जाती है तो जो आहार रस दो भागों - प्रथम माता के शरीर के पोषण के लिए, द्वितीय स्तन्य निर्माण में प्रयुक्त होता है वही उपर्युक्त तीन भागों में विभक्त हो जाता है । जहाँ आहार रस का अधिकांश भाग स्तन्य निर्माण में लगता है वहीं यह रस गर्भस्थ शिशु के पोषण में सहायता करता है जिससे दुग्धपायी शिशु को शुद्ध एवं पूर्ण स्तन्य की प्राप्ति न होकर स्तन्याभाव या दुष्टस्तन्य की प्राप्ति होती है जिसके कारण उसकी शारीरिक एवं मानसिक वृद्धि एवं विकास सम्यक् प्रकार से नहीं हो पाता है । गर्भावस्था के कारण दुग्ध का स्रवण कम मात्रा में हो पाता है तथा जो दुग्ध स्रवित होता है वह दूषित एवं हीन आवश्यक तत्वों से युक्त होता है । गर्भिणी माता के स्तन्य में वातज स्तन्यदुष्टि मिलती है जिससे वह दुग्ध वैरस्य, फेनसंघात व रौक्ष्य गुणयुक्त होता है । ऐसा दुग्धपान करने से आमरस की उत्पत्ति होकर पाचन संस्थानगत (Digestive System) व्याधिजन्य लक्षण-अग्निमांद्य, छर्दि, कास, कास, तन्द्रा आदि का प्रादुर्भाव होकर पारिगर्भिक रोग उत्पन्न हो जाता है । आचार्य वाग्भट्ट ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है ।

**मातु: कुमारी गर्भिण्या: स्तन्यं प्राय: पिबन्नपि ।**
**कासाग्निसादवमथुतन्द्राकार्श्यारुचिर्भ्रमै: ।।**
**युज्यते कोष्ठवृद्धया च तमाहु: पारिगर्भिकम् ।**

लेक्चरार, बाल रोग विभाग, राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



रोगं परिभवाख्यं च युञ्जातत्राग्निदीपनम् ॥

(अ०सं०उ० 2)

अर्थात् गर्भिणी माता का स्तन्यपान करने से बालक को कास, अग्निमांद्य, छर्दि, तन्द्रा, काश्र्य, अरुचि, ज्वर एवं कोष्ठवृद्धि हो जाती है । इस व्याधि को पारिगर्भिक कहते हैं ।

गर्भावस्था में माता का स्तन्यवान करने से होने वाली व्याधि को काश्यप ने फक्क व्याधि का भेद गर्भिणी फक्क माना है यद्यपि फक्क रोग के प्रत्यात्म लक्षण में "बाल: संवरापन्नं पादाभ्यां यो न गच्छति स फक्क इति विज्ञेय: ।" अर्थात् पैरों से नहीं चल पाना है फिर भी फक्क के त्रिविध भेद में गर्भिणी फक्क का वर्णन कर उसका प्रत्यात्म लक्षण काश्र्य का उल्लेख किया है -

गर्भिणी मातृक: क्षिप्रं स्तन्यस्य विनिवर्तनात् ।
क्षीयते म्रियते वाऽपि स फक्को गर्भ पीडित: ॥

(का०सं०)

अर्थात् जिस बालक की माता गर्भिणी हो जाती है बहुधा स्तन्य आना बन्द हो जाता है या स्तन्य कम मात्रा में स्रवित होता है जिसके कारण बालक का शरीर क्षीण हो जाता है तदनन्तर वह बालक मर भी सकता है । इस व्याधि को गर्भज फक्क कहते हैं । स्तन्याभाव के कारण बालक को सम्यक् पोषण नहीं मिल पाता है जिससे उसे धातुक्षय होकर काश्र्य हो जाता है ।

आधुनिक दृष्टि से शिशु के शारीरिक एवं बौद्धिक वृद्धि एवं विकास के लिए सन्तुलित मात्रा में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, खनिज लवण व विटामिनों की आवश्यकता होती है । मातृ स्तन्य में ये सभी तत्व पूर्ण रूप में पाये जाते हैं । 100 मिली मातृस्तन्य में ये घटक निम्नलिखित अनुपात में उपलब्ध होते हैं -

जल - 87.1%

प्रोटीन - 1.1%

वसा - 4.5%

शर्करा - 6.0%

गर्भावस्था के कारण स्तनग्रन्थियों से स्रवित दु में इनकी मात्रा सामान्य से कम हो जाती है जिससे क्षीर शिशु को शरीर के लिए आवश्यक सन्तुलित आह (Essential Balance Diet) नहीं मिल पाता । सन्तुलि आहार के अभाव में शारीरिक क्रियाओं पर प्रत्यक्ष प्रभा पड़ता है जिससे चयापचय क्रियाएँ (Metabolic function निर्बाध रूप से संचालित नहीं हो पाती हैं जिसके फलस्वरू वह अरुचि (Anorexia), छर्दि (Vomiting) कोष्ठवृद्धि (Hepatomegaly & Splenomegaly) आदि लक्षण यु व्याधि से ग्रसित हो जाता है ।

आचार्य वाग्भट्ट ने जहां स्तन्यदृष्टि से होने वाल व्याधि में पारिगर्भिक रोग का वर्णन किया है वहीं आचा काश्यप ने फक्क रोग के त्रिविध भेद में गर्भिणी फक्करो का वर्णन किया है । चूंकि दोनों व्याधियां गर्भावस्था में ही मात्रा में स्तन्य से या स्तन्यदुष्टि से कारण होती हैं त काश्र्य इनका प्रत्यात्मलक्षण है इसलिए सम्भवत: दो व्याधियां एक ही हैं तथा दोनों आचार्यों ने इन्हें अलग-अल नामों से निर्दिष्ट किया है ।

**निदान एवं सम्प्राप्ति (Etiopathogenesis)**

गर्भिणी माता का स्तन्य जो वातदुष्टि जन्य आहार होता उसको पीने से आम रस की उत्पत्ति होती है । वह साम र रसायनियों द्वारा सम्पूर्ण शरीर में परिभ्रमण करते हुए ज स्रोतोवैगुण्य मिलता है वहाँ संग उत्पन्न कर देता है जिस अग्निमांद्य, अरूचि, छर्दि, तन्द्रा, भ्रम आदि लक्षण उत्प होते हैं । स्रोतोसंग के कारण रक्तादि उत्तरोत्तर धातुओं क निर्माण यथोचित मात्रा में नहीं हो पाता है जिससे धातुक्ष होकर काश्र्यता आ जाती है ।

गर्भिणी मातृस्तन्य ⟶ आमरस की उत्पत्ति ⟶ सामरस का रसायनियों द्वारा सम्पूर्ण शरीर में भ्रमण करन
↓
पारिगर्भिक या परिभव रोग ⟵ अग्निमांद्य अरुचि, छर्दि, ज्वर काश्र्य होना ⟵ स्रोतोवैगुण्य के कारण संग उत्पन्न हो



CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सम्प्राप्ति संघटन -

निदान - गर्भिणी मातृस्तन्य
उद्भव स्थान - आमाशय
अधिष्ठान - रसायनियाँ
दोष - वात, श्लैष्मा
दूष्य - रस
स्रोतस् - रसवह, अन्नवह
स्रोतोदुष्टि - संग
प्रत्यात्म लक्षण - कार्श्य
व्याधि स्वभाव - आशुकारी

नैदानिक चिन्ह (Clinical Feature)-

(1) कास (Cough) होना ।
(2) अग्निमांद्य (Loss of Appetite) का होना ।
(3) अरुचि (Anorexia) होना ।
(4) कोष्ठवृद्धि - उदावर्त होना (Distention of Abdomen)
यकृदाल्युदर (Hepatomegaly)
प्लीहोदर (Splenomegaly)
(5) छर्दि (Vomiting) होना ।
(6) कार्श्य (Loss of Muscles) होना ।
(7) ज्वर (Pyrexia) होना ।

चिकित्सीय परीक्षण (Clinical Examination) -

(1) Anthropometry -
(i) शिर विन्यास (Head Circumference) - सामान्य से कम ।
(ii) बाहु विन्यास (Fore Arm Circumference) - सामान्य से कम ।
(iii) उर विन्यास (Chest Circumference) - सामान्य से कम ।
(iv) ऊँचाई (Height) - सामान्य से कम ।
(v) भार (Weight) - सामान्य से कम ।
(2) प्रयोगशालीय परीक्षण (Lab Investigations) -
(i) रक्त (Blood) -
(A) Total Leucocyte Count (T.L.C.) - सामान्य से कम ।
(B) Differencial Leucocyte Count (D.L.C.) - सामान्य से कम ।
(C) Haemoglobin Percentage (Hb%) - सामान्य से कम ।
(D) Erythrocyte Sedimentation Rate (E.S.R.) - सामान्य से अधिक ।
(ii) Montoux Test – Negative -
(3) तापक्रम (Temperature) - सामान्य से अधिक।
(4) X-rays - सामान्य ।

चिकित्सा सिद्धान्त व व्यवस्था -

(1) 'युञ्जान् तत्राग्निदीपनम्'- अर्थात् बालक की अग्निदीपन चिकित्सा करनी चाहिए । उन-उन औषध द्रव्यों का प्रयोग करना चाहिए जो अग्निवर्द्धक हैं । दीपन व पाचन चिकित्सा से आम रस का पाचन होकर सम्यक् प्रकार से धातुओं का पोषण होगा । ये योग निम्नलिखित हैं -
(i) कुटकी का मधु के साथ प्रयोग ।
(ii) त्रिकटु - सोंठ, मरिच, पिप्पली का प्रयोग ।
(iii) पंचकोल - सोंठ, मरिच, पिप्पली, अग्निसंदीपन चूर्ण-चित्रकादि वटी आदि का प्रयोग ।
(iv) लवणभास्कर, हिंग्वष्टक, अग्निसंदीपक चूर्ण-चित्रकादि वटी आदि का प्रयोग ।
(2) 'संक्षेपतः क्रियायोगे निदान परिवर्जनम्' अर्थात् रोगप्रकोपक कारणों का परिवर्जन करना चाहिए। गर्भिणी माता अपना स्तन्यपान शिशु को कराती है जिसके कारण यह व्याधि होती है अतः मातृस्तन्य बन्दकराकर गोदुग्ध या अजादुग्ध का प्रयोग करना चाहिए ।

**स्तन्याभावे पयश्छागं गव्यं वा तद्गुणं पिबेत् ।**



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मूलैः सिद्धं बृहत्याद्यैः स्थिराभ्यां वासितायुतम् ॥

(अ०स०सू० 1/44)

(3) पारिगर्भिक व्याधि दुष्टस्तन्यजन्य या हीन स्तन्यजन्य व्याधि है । अतः स्तन्यवर्द्धक व स्तन्यशोधक द्रव्यों का प्रयोग करना चाहिए -

- स्तन्यवर्द्धकशोधक द्रव्य - पाठा, मधुयष्टि, त्रिफला, वचा, देवदारु, सारिवा, पटोलपत्र, मूर्वा, मुस्तक, कुटज, सारिवा आदि हैं ।
- स्तन्यशोधक द्रव्य है ।
- स्तन्यवर्द्धक द्रव्य - उशीरमूल, शालिमूल, षष्टिकमूल, इक्षुमूल, इक्षुबालिकामूल, दर्भमूल, कुशमूल, काशमूल, गुद्रामूल, शरमूल शतावरी, विदारीकन्द आदि ।

(4) पोषक एवं बलवर्द्धक चिकित्सा - दीपन-पाचन चिकित्सा के पश्चात् मधुर, लघु, सुपाच्य, पोषक एवं बलवर्धक चिकित्सा करनी चाहिए । इसमें अश्वगन्धा, शतावरी, श्वेतमूसली, आँवला, बला, अतिबला, कर्पासबीज, मधुयष्टि, गम्भारी आदि द्रव्यों का प्रयोग करें ।

**बल्य योगों में** - मधुमालिनीबसन्त, कुमारकल्याण रस, अश्वगन्धादि चूर्ण आदि ।

**लौह योगों में** - पुनर्नवादि मण्डूर, शिलाजत्वादि लौह, मण्डूर भस्म, धात्री लौह, ताप्यादि लौह ।

**सुधा योगों में** - कुक्कुराण्डत्वक् भस्म, प्रवाल भस्म, शम्बूक भस्म, सुधाषट्क योग, प्रवाल पंचामृत आदि ।

**अभ्यंग हेतु** - लाल तैल, बला तैल, लाक्षादि तैल आदि

**वस्ति प्रयोग** - कुक्कुराण्ड की बस्ति गुद मार्ग से देनी चाहिए ।


बैद्यनाथ

मधुमेहारि

योग दाने

मधुमेह ( डायबिटीज )
व उससे उत्पन्न
विकारों में
लाभदायक

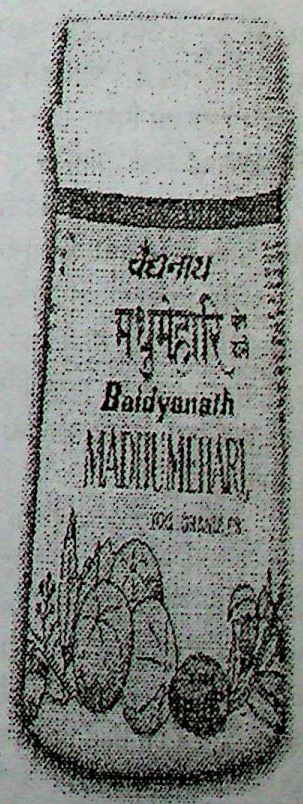





CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# पौराणिक वृक्ष : पारिजात

डॉ० अशोक कुमार श्रीवास्तव

पुष्पीय कुल में ओलिएसी कुल का विशेष महत्व । इस कुल में अन्तर्गत विशेष प्रकार के शोभाकारी क्षुप था वृक्ष आते हैं । इस कुल में 21 जेनेरा तथा 500 से धिक स्पशीज पाई जाती हैं । इसी कुल में पारिजात हरसिंगार) का नाम प्रमुखता से लिया जाता है । पारिजात का वानस्पतिक नाम **निक्टेन्थस अर्बोट्रिस्टिस** (Nyctanthes rbortrirtis L.) है । यह भारत मूल का वृक्ष है जो सामान्यत: 1500 मीटर की ऊँचाई तक तराई तथा हिमालय के भागों में पाये जाते हैं । वृक्ष लगभग 10 मीटर ऊँचे, शाखायें नीचे झुकी हुईं तथा चतुष्कोणीय होती हैं । पत्तियां 7-12 सेमी० लम्बी, 5-7 सेमी० चौड़ी, लट्वाकार होती हैं । पुष्प सुगंधित 3-7 की संख्या में 1-2 ½ सेमी. व्यास युक्त होते हैं । सम्पूर्ण भारत में इसकी खेती बगीचों में की जाती है । वृक्ष में शरद ऋतु में पुष्प तथा हेमन्त ऋतु में फल उगते हैं । पुष्प की मनमोहक सुगंध मानव सुलभ मन को अनायास ही अपनी ओर आकर्षित करती है । इसकी सुगंध बहुत दूर तक फैलती है । पारिजात पुष्प शाम को खिलते तथा सुर्योदय से पूर्व ही ऐसे बिखर जाते हैं, मानो प्रकृति ने पृथ्वी को अलंकृत करने के किये रंगीन साड़ी पहना दी हो ।

पुष्पों से बनी माला को हिन्दू लोग, मंदिरों में पूजा में अर्पित करते हैं । पुष्प अत्यधिक सुन्दर तथा मनभावन होते हैं । प्राचीन ग्रन्थों में पारिजात वृक्ष श्रीकृष्ण द्वारा अपनी पत्नी सत्यभामा को भेंट किये जाने का वर्णन है । एक अन्य दृष्टांत में समुद्र मंथन के समय निकले रत्नों में पारिजात भी था जिसे इन्द्र द्वारा अपनी वाटिका में रोपित किये जाने का वर्णन मिलता है ।

पुष्पों से प्राप्त सुगंधित तेल चमेली के तेल के समतुल्य है । आसवन विधि द्वारा प्राप्त पुष्पीय तेल में एल्फा-पाइनिन, पैरा-साइमिन, 1-हेक्सानाल, मेथाइल हेप्टेनोन, फिनाइल एसिटेलडिहाइड, 1-डेकानाल तथा एनिसलडिहाइड उपस्थित पाये गये । पुष्प में चटकीले नारंगी रंग के दल नलिका (Corolla tube) में रंगीन पदार्थ निक्टेन्थिन विद्यमान हैं, जो केसर से प्राप्त एल्फा-क्रोसिटिन के समान है । पुष्प से प्राप्त अन्य अवयवों में क्रोसिन 1, क्रोसिन 3, डी-मैनिटाल, एस्ट्रामैलिन तथा निकोटिफ्लोरिन आदि प्रमुख हैं ।

पारिजात के बीजों से पीले-भूरे रंग का स्थाई तेल प्राप्त होता है, जिसमें ट्राईसचुरेटेड (0.2%), डाईसचुरेटेड - मोनोअनसचुरेटेड (8.4%), मोनोसचुरेटेड-डाईअनसचुरेटेड (40.1%) तथा ट्राईअनसचुरेटेड (51.3%) ट्राइग्लिसराइड्स उपस्थित होते हैं । बीजों से दो नये एरिड्वाइड ग्लुकोसाइड्स अर्बोट्रिस्टोसाइड्स-ए तथा बी प्राप्त किये गये । इसके अतिरिक्त बीज में फ्राइडेलिन, 6 बीटा-हाइड्राक्सीलोगेनिन, निक्टेन्थिक एसिड, ओलिएनोलिक एसिड तथा बीटा-साइटोस्टराल ग्लुकोसाइड पाये गये ।

पारिजात की पत्तियों में लुपियाल, ओलिक एसिड, बीटा-साइटोस्टराल, फ्राइडेलिन तथा निक्टेन्थिक एसिड आदि विद्यमान हैं ।

अर्बोट्रिस्टोसाइडस ए, बी, सी तथा 6-हाइड्राक्सी लोगेनिन में प्रति-लैश्मेनिया क्रियाशीलता पाई गई । इसके अतिरिक्त अर्बोट्रिस्टोसाइड्स डी तथा ई में प्रति विषाणु क्रियाशीलता उपस्थित है ।

पारिजात के फूल, बीज, छाल तथा पत्तियों में औषधीय गुण निहित हैं । फूलों में प्रति-शोथ गुण होने के कारण आयुर्वेदिक पद्धति में इनका प्रयोग गठिया तथा साइटिका के उपचार में किया जाता है । फूलों का प्रयोग सभी प्रकार के ज्वर तथा अर्बुद के उपचार में किया जाता है । पत्तियों में मूत्रल (diuretic), पित्तोसारी, स्वेदनकारी तथा रेचक गुण विद्यमान हैं । पत्तियों का प्रयोग कफ, वातविकार, जोड़ों के दर्द आदि में किया जाता है । पत्तियों का रस गोलकृमि तथा फीताकृमि को बाहर निकालने तथा सरीसृप वर्ग के विषों में प्रतिविष (antidote) का काम करता है । वृक्ष के तने में कफोत्सारक गुण पाये जाते हैं । इसके अतिरिक्त तने से प्राप्त टैनिन चर्म-संस्करण में प्रयुक्त होता है । पुष्प के चटकीले नारंगी रंग के दल नलिका का प्रयोग प्राचीन काल में रेशम की रंगाई में किया जाता था । पारिजात की पत्तियां लकड़ी तथा हाथी दांत की वस्तुओं को पालिश करने में प्रयुक्त की जाती है ।

प्लांट फिजियोलाजी एवं बायोकेमेस्ट्री विभाग
केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान (सीमैप) पोस्ट ऑफिस - सीमैप, लखनऊ - 226015

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अजीर्ण (Indigestion) और आयुर्वेद

*डॉ० बालकृष्ण पंवार

**प्रो० महेन्द्र सिंह मीना

**रोग परिचय** – अजीर्ण रोग आम तौर पर साधारण-सा रोग समझा जाता है; किन्तु इसके परिणाम गम्भीर हो सकते हैं। यदि यह कहा जाये कि अजीर्ण रोग रोगी को धीरे-धीरे मृत्यु की ओर धकेलने वाला भयानक रोग है तो अतिशयोक्ति न होगी।

अजीर्ण का सीधा-सा अर्थ है पावन-विकार अर्थात् खाया-पिया हजम नहीं होना। अजीर्ण का प्रमुख कारण अग्निमांद्य है। अग्निमांद्य से भोजन का परिपाक ठीक नहीं होता एवं भोजन की अपरिपक्वावस्था का ही दूसरा नाम अजीर्ण है या यह कहें कि सुखपूर्वक अन्न का पाचन न होना अजीर्ण है।

**भेद** – आयुर्वेद शास्त्र में कुछ छः प्रकार के अजीर्ण बताये गये हैं।

1. आमाजीर्ण
2. विदग्धाजीर्ण
3. विष्टब्धाजीर्ण
4. रसशेषाजीर्ण
5. दिनपाकी अजीर्ण
6. प्राकृत अजीर्ण

आधुनिक विज्ञान में यह दो प्रकार का है –

(1) Functional

(2) Organic

**कारण** – अत्यन्त स्निग्ध (चिकने) पदार्थों के सेवन से अजीर्ण उसी प्रकार उत्पन्न होता है जैसे बहुत अधिक घृत को अग्नि पर उड़ेल देने पर वह बुझ जाती है। अत्यधिक जल पीने से, दिन में सोने से तथा रात्रि में जागरण से समय पर ग्रहण किया हुआ सात्म्य एवं लघु अन्न भी नहीं पचता है। समय कुसमय बहुत-सा गरिष्ठ भोजन करना, खाद्य पदार्थों को बिना अच्छी तरह चबाये ही निगल जाना, तम्बाकू का अत्यधिक सेवन, चाय एवं शराब का अत्यधिक सेवन, ईर्ष्या, भय, क्रोध, लोभी, दीनता या मनोग्लानि से युक्त एवं अन्न से द्वेष करने वाले व्यक्ति द्वारा सेवित आहार का सम्यक परिपाक नहीं होता है। ऐसे व्यक्ति अजीर्ण के रोगी बन जाते हैं।

लक्षण :-

1. आमाजीर्ण – शरीर में गौरव, उत्क्लेश, कपोल अ अक्षिकूटों में शोथ तथा आहार के अनुसार अविद डकारें आती हैं।
   - श्लेष्म वृद्धि होने के कारण का स्राव एवं का स्रा अल्प मात्रा में होता है जिससे खाद्य पदार्थ का पाच ठीक नहीं होता, साथ ही आहार अधिक Dilute जाता है।
2. विदग्धाजीर्ण – भ्रम, प्यास, मूर्च्छा, ओष, चोष, खट्ट डकारे के साथ मुंह से धुआँ निकलना, स्वेद, द आदि लक्षण होते हैं।
   - इनमें Hcl अधिक निकलता है तथा Gastric juic कम निकलता है। इसमें भी आहार का पूर्ण पाक होकर अर्धपक्वता रहती है।
3. विष्टब्धाजीर्ण – शूल, आध्मान, तोद, भेद, मल, मू और अधोवात की अप्रवृत्ति, स्तब्धता, मूर्च्छा, अंगों पीड़ा आदि लक्षण होते हैं।
   - वात की वृद्धि होने से Hcl तथा Gastric juic अनियमित रूप से निकलते है। अत: आहार कुछ ठहर कर पचता है। इसके परिणाम स्वरूप विभिन गैसों की उत्पत्ति एवं आध्मान, आटोप आदि हो जा हैं।
4. रसशेषाजीर्ण – हृदय में गौरव एवं अशुद्धि तथा भोज में अरूचि, आहार भाग के पाचन हो जाने पर भी कु आहार का अपाचित रह जाना ही रसशेषाजीर्ण है।
5. दिनपाकी अजीर्ण – स्वस्थावस्था में आहार का पाच लगभग 24 घण्टे में पूर्ण हो जाता है किन्तु अतिमात्र भोजन, असात्म्य भोजन, अकाल भोजन से आहार क पाक 24 घण्टे में न होकर दूसरे दिन होता है तो उ दिनपाकी अजीर्ण कहते हैं।
6. प्राकृत अजीर्ण – यह कोई व्याधि नही है क्योंकि प्रतिदिन और हर व्यक्ति को रहता है। विकारोत्पाद

*पी.एच.डी. (स्कोलर) ** विभागाध्यक्ष

स्नातकोत्तर शारीर क्रिया विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



न होने के कारण ही इसे प्राकृत अजीर्ण कहते हैं ।

**चिकित्सा सिद्धान्त :-**

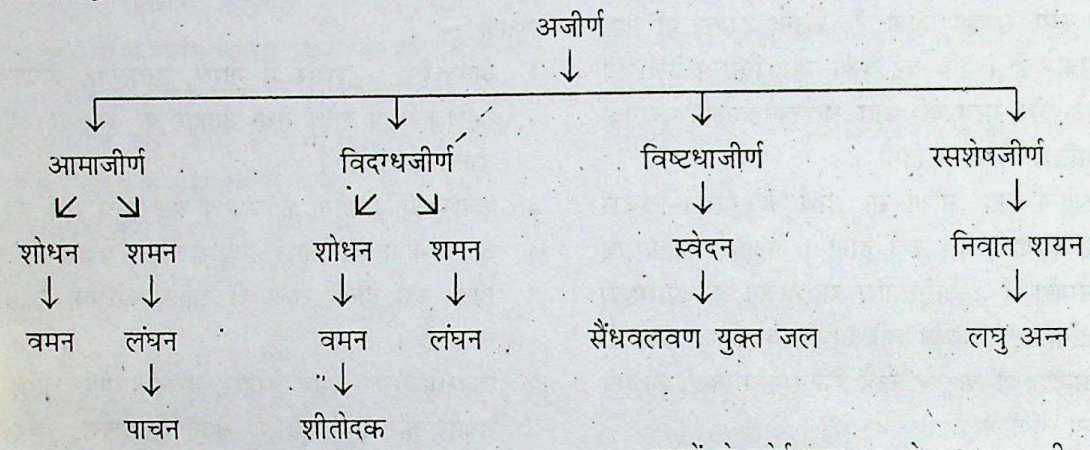


**पथ्य** – खाने से पूर्व सिरके की चटनी, अदरक का मुरब्बा या पुदीना की चटनी खिलायें, कच्चे नारियल का जल, कच्ची गिरी, लघु पाकी आहार, कच्चे पपीते की सब्जी दें ।

**अपथ्य** – अत्यधिक मैथुन, दिन में शयन, रात्रि में जागरण, अपथ्या आहार-विहार, कुसमय का भोजन, बासी अन्न, तेज मिर्च मसाला आदि का सेवन न करें । यह सब अपथ्य है ।

**चिकित्सा – प्रमुख शास्त्रीय योग –**

अग्नि कुमार रस, क्रव्याद रस, रामबाण रस, अजीर्ण कंटक रस (आमाजीर्ण में विशेष) । लोकनाथ रस इसमें से कोई एक 250 मिलीग्राम की मात्रा में दिन में दो बार अदरक के रस, जल, मधु अथवा लवण युक्त तक्र के साथ व्यस्क व्यक्ति को दें ।

संजीवनी वटी, लशुनादि वटी, चित्रकादि वटी, हिंग्वादि वटी, अग्नि तुण्डी वटी, शंखवटी, पानीय भक्त वटी, सोवर्चल वटी, अर्क वटी, गंधक वटी इसमें से कोई एक 250 ग्राम की मात्रा में दिन में दो बार भोजनोत्तर दें ।

हिंग्वाष्टक चूर्ण, लवण भास्कर चूर्ण, अग्निमुख चूर्ण, अजमोदादि चूर्ण, नारायण चूर्ण, सैंधवादि चूर्ण, इसमें से कोई एक 3 से 5 ग्राम की मात्रा में दिन में दो बार जल के साथ दें ।

कर्पूरासव, लोहासव, द्राक्षासव, पिप्पल्यासव, जीरकाद्यारिष्ट, मुस्तकारिष्ट, 20 मि.ली. समभाग जल के साथ दिन में दो बार लें ।

अग्निकर घृत, दशमूल घृत, आर्द्रकावलेह, बहुशाल गुड़ इसमें से कोई एक 10 से 15 ग्राम की मात्रा में दिन में दो बार लें ।

**अजीर्ण नाशक प्रमुख आयुर्वेदिक पेटेण्ट योग –**

(1) कुछ दवा कम्पनियों ने पेटेन्ट योग भी बनायें हैं ।

**अजीर्ण नाशक कुछ घरेलू नुस्खे –**

(1) नींबू के रस में जायफल पीसकर चटाने से दस्त साफ होकर अफारा मिट जाता है ।

(2) दाल चीनी, सौंठ, इलायची सम मात्रा में लेकर पीसकर चूर्ण बनालें । भोजन से पहले एक ग्राम जल से लें । अरूचि मंदाग्नि दूर हो जाती है ।

(3) धनिये का चूर्ण 3 ग्राम सौंठ का चूर्ण 3 ग्राम लेकर 100 मि.ली. गरम पानी के साथ सेवन करने से अजीर्ण में लाभ होता है ।

(4) छोटी हरड़ को भूनकर काले नमक के साथ फांकी लगाने से अजीर्ण आदि नष्ट हो जाते हैं ।

(5) पीपल (पिप्पली) का चूर्ण शहद के साथ सेवन करने से पाचन शक्ति बढ़ती है तथा अजीर्ण नष्ट हो जाता है ।

(6) तुलसी के पत्तों का रस प्रतिदिन 10 मिलीग्राम लेने से कुछ ही दिनों में अजीर्ण का विकार दूर हो जाता है ।

सामान्य व्यवस्था पत्र

| भोजन से पूर्व | प्रातः | सायं: |
|---|---|---|
| (1) अग्नितुण्डीवटी 500 मिलीग्राम<br>प्रवाल पंचामृत 500 मिलीग्राम<br>महाशंख वटी 500 मिलीग्राम | 1 x 2 | जल से |
| (2) चित्रकादि वटी 2-2-2 गोली | भोजनोत्तर | |
| (3) पंचकोलासव 20 मि.ली./1 x 2 | समभाग जल से | |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# मन को लुभाती है लीची

राजकुमार जै

लीची गर्मियों के मौसम का सबसे मनमोहक और खूबसूरत फल है । सूरत और सीरत-दोनों में ही लीची लाजवाब है । अन्य फलों के बीच लीची लाल जोड़ा पहने नवेली दुल्हन की तरह नजर आती है और जब स्वाद की बात आती है, तो लीचियां मुंह में रसगुल्लों-सी मिठास घोलने लगती हैं ।

लीची मूलत: एक चीनी फल है । चीन के 'लोचू' नामक द्वीप में इसका बहुतायत से उत्पादन होता है और यहीं से यह शनै:-शनै: सारी दुनिया में फैली । संभवत: लीची एकमात्र ऐसा फल है, जिसे हिन्दी और अंग्रेजी दोनो ही भाषाओं में एक ही नाम 'लीची' से पुकारा जाता है । इसका वैज्ञानिक नाम 'लास्ची' है तथा वानस्पति-जगत में लीची के पौधे को 'सेमिण्डेसी' समूह का माना जाता है । लैटिन भाषा में इसे 'पाइनेन्सिस' नाम से जाना जाता है ।

रासायनिक दृष्टि से लीची एक पोषक रस से भरपूर है । फल में लगभग साठ प्रतिशत तक तरल रस होता है, ग्यारह प्रतिशत बीज, आठ प्रतिशत रेशा तथा तेरह प्रतिशत छिलका होता है । लीची में विटामिन-सी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है । इसके अतिरिक्त, इसमें प्राकृतिक शर्करा, जैविक अम्ल, प्रोटीन, विटामिन आदि पोषक तत्व भी पाए जाते हैं ।

लीची की तासीर ठंडी, बलवर्द्धक तथा यौन-क्षमता में वृद्धि करने वाली बताई गई है । ज्वर में प्यास शांत करने के लिए लीचीं के रस का उपयोग किया जाता है । लीची हृदय, मस्तिष्क और यकृत के लिए शक्तिदायक फल है । उदर तथा आंतों से संबंधी रोगों में लीची के बीजों का औषधीय उपयोग होता है । इसके बीजों को तंत्रिका शूल जैसे रोगों के उपचार हेतु काम में लिया जाता है ।

लीची के एक वयस्क वृक्ष की ऊंचाई 15 से 40 फीट के बीच होती है । पूरे वर्ष इस वृक्ष पर गहरे हरे रंग की करीब 6 इंच लम्बी पत्तियां लगी रहती हैं, जो घनी और चमकदार होती हैं । इसमें फूल गुच्छों के रूप में लगते हैं, जो प्रारंभिक अवस्था में हरे रंग के होते हैं । एक गुच्छे में दो से लेकर बीस तक फल होते हैं । परिपक्व होने पर ये फल क्रमश: गुलाबी और सूर्ख लाल हो जाते हैं । फल का ऊपरी छिलका दानेदार और भीतर से चिकना और सफे होता है । छिलके के नीचे दूधिया रंग का रसदार गुदा होत है, जो खाने के काम आता है । गूदे के अंदर मूंगफली व आकार का भूरे रंग का बीज निकलता है ।

लीची का पेड़ पांच से सात वर्ष की आयु में फल देने लगता है । मार्च-अप्रैल के महीनों में लीची के वृक्षों प फूल आने शुरू हो जाते हैं तथा मई से जुलाई के मध्य लीची में भरपूर फल लगने लगते हैं । एक वृक्ष में औसत 75 से 120 किलोग्राम तक फल प्राप्त हो जाता है । लीच का वृक्ष 25 वर्ष की आयु तक भरपूर फल देता है । इसक बाद फलों की मात्रा क्रमश: कम होती जाती है । लीची व फलों को एक-एक करके नहीं तोड़ा जाता, अपितु इ गुच्छों के रूप में तोड़ा जाता है ।

भारत में लीची का उत्पादन मुख्य रूप से उत्त बिहार, उत्तर प्रदेश, बंगाल के हुगली क्षेत्र में होता है । इसक अतिरिक्त पंजाब, त्रिपुरा, कर्नाटक, मध्यप्रदेश के कुछ भाग में लीची के बगीचे लगाए जाते हैं । भारत में लीची के बाग का कुल रकबा मात्र ढाई हजार हैक्टेयर है, जो देश व फल-उत्पादन क्षेत्रफल का मात्र एक प्रतिशत है । एक अनुमान के अनुसार, देश में लीची का वार्षिक उत्पादन व लाख तीन हजार टन है ।

वैसे तो देश में लीची की पचासों किस्में प्रचलि हैं, किन्तु मुख्यत: नेफेलियन, चीनी लीची, क्लकतिय लीची, बेदाना लीची और देशी लीची उल्लेखनीय है । इन बेदाना लीची सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है । यह सुर्ख लाल रं की पतले छिलके वाली होती है तथा इसके बीज क आकार बहुत छोटा होता है ।

लीची की इन किस्मों के अतिरिक्त, 'अल सीडलेस, 'रोज सेन्टेड,' 'देहरादूनी', 'प्याजी', 'पिंकलिंग 'कस्बा', 'इलायची अर्ली', 'चाइना' आदि प्रजातियों क लीचियां भी अपने-अपने क्षेत्रों में काफी लोकप्रिय हैं ।

लीची की उन्नत किस्में विकसित करने हे व्यापक अनुसंधान जारी है और आशा की जानी चाहिए कि निकट भविष्य में लीची का उत्पादन देश के अधिकांश भागों में संभव हो सकेगा और हम अद्भुत मिठास-भरे इ खूबसूरत फल को सहजता से पा सकेंगे ।

राज स्टेशनर्स, पचपहाड़ रोड, भवानीमण्डी, (राज०) 326502

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# हल्दी : सामान्य परिचय एवं औषधीय उपयोग

डा० राजकुमार द्विवेदी

ल्दी (करक्यूमा डोमैस्टिका)

गरीब आदमी का केसर कहा जाने वाला मसाला । अँगेजी में टर्मरिक (Turmeric), तमिल में 'मंजल' हा जाता है ।

ख्य रासायनिक संघटन :-

प्रकन्द से विलगित किये गये वर्णक युक्त अंश में इंसिनामॉयल-मीथेन समूह का करक्यूमिन बोलेटाइल ॉयल होता है । $C_{21}H_{20}O_6$ करक्यूमिन जल में अविलेप किन इथेनॉल व एसीटोन में विलेय होता है ।

ल्दी का पौधा :-

वानस्पतिक रूप से अदरक की सम्बन्धी कही ने वाली हल्दी या करक्यूमा लौंगा की 100 से अधिक स्में और वेलनाकार नारंगी रंग की कंद की 30 से धिक किस्में पायी जाती हैं ।

हल्दी के छोटे तनें व गुच्छेदार पत्तियाँ होती हैं एवं ल्दी एक बारहमासी पौधा है ।

यह पौधा 3 से 5 फुट तक बढ़ता है और इसमें ड़ी आयताकार पत्तियां होती हैं । इसमें चुंगी के आकार के ले फूल खिलते हैं । वसन्त ऋतु में ये फूल 10 से 15 ०मी० लम्बे होते हैं । भारत दुनिया के बाजारों में हल्दी ा मुख्य आपूर्त्तिकर्ता है ।

ौषधीय गुण :-

कुष्ठघ्न, वेदनास्थापक, शोथहर, वर्ण्य, व्रण शोधन, पण, हिक्का श्वास हर, कृमिघ्न, मूत्रसंग्रहणीय मूत्र विरजनीय, धुमेह में लाभकर, स्तन्य, शुक्रशोधक, ज्वरघ्न ।

योज्य अंग एवं मात्रा :- कंद

स्वरस - 10- 20 मिली लीटर ।

चूर्ण - 1 से 3 ग्राम ।

यावहारिक उपयोग :-

1980 में आधुनिक अनुसंधान कर्ताओ ने परम्परागत चकित्सीय जानकारी पर अपनी मुहर लगायी जो निम्न कार है -

1. इस जड़ का ताजा रस चोट से होने वाली सूजन को कम करता है ।
2. घाव व कीड़ों के काटने पर लगाने से लाभकारी होता है ।
3. सूखा पाउडर परजीवियों को नष्ट करता है ।
4. सर्दी से राहत पहुँचाता है ।
5. गठिया से होने वाले दर्द को कम करता है ।
6. प्रायोगिक अध्ययनों से पता चला है कि हल्दी उतना ही प्रभावी होती है जितना कि काटीसोन, फिनाइल ब्यूटेन, आईब्रूफेन । चिकित्सीय परीक्षणों ने हल्दी के जीवाणुनाशक गुणों की पुष्टि की है ।

   करक्यूमिन और अन्य करक्यूमिनायड 20,000 में एक और 6,40,000 में एक सान्द्रता में विभिन्न जीवाणुओं जैसे एस-ऑरियस, एस-पैराटाइफी, ट्राइकोफाइटान जिप्सियम और माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस के विकास को सीमित करते हैं ।
7. हल्दी में उपस्थित 3 से 5% करक्यूमिनाइड एक महत्वपूर्ण सक्रिय संघटक होता है जो करक्यूआ लोंगा की जैविक सक्रियता के लिये जिम्मेवार होता है जो एण्टी ऑक्सीडेन्ट, एण्टी एलर्जिक घावों के भरने, जीवाणुरोधी, कवकरोधी, ट्यूमर रोधी, ऐंठनरोधी के रूप में कार्य करता है ।
8. हल्दी के साथ उबाला हुआ मीठा दूध सर्दी एवं गलशोथ के लिये लोकप्रिय उपचार है ।
9. ताजे घावों पर चोट लगने या जोंक के काटने पर ताजे प्रकंद का रस या हल्दी पाउडर लगाया जाता है ।
10. चेचक या छोटी चेचक में स्कैबिंग की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने के लिये हल्दी के पाउडर या पतली लेई का लेपन किया जाता है ।
11. बिना प्राकृतिक तेल के सूखे हुये प्रकंद से बनाया गया इसका पेस्ट त्वचा को साफ व असंक्रमित करने तथा त्वचा केन्सर में उपयोगी होता है ।
12. करक्यूमा तेल करक्यूमिन और उसके क्षारीय लवणः हिस्टामिन प्रेरित आमाशयी अल्सर (Gastric Ulcer) से बचाते हैं ।

प्रभारी चिकित्साधिकारी, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, हाथरुवन्त (फिरोजाबाद) उ०प्र०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विश्राम

* डा० रमेश कुमार सिंह (एम.डी.)

** डा० प्रमोद दीपक चतुर्वेदी

वर्तमान समय में निरन्तर व्यक्ति आकांक्षाओं को लिए हुए प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हो रहा है । इसी व्यस्तता में अपनी शारीरिक व मानसिक क्षमताओं का ध्यान नहीं रखता न ही कभी इस विषय में सोचता है । दूसरे आज के विभिन्न प्रकार के वातावरण के प्रदूषणों से भिन्न-भिन्न प्रकार के रोगों से घिरा जा रहा है । इसका सबसे महत्वपूर्ण कारण है शारीरिक एवं मानसिक क्रियाओं की अधिकता के कारण दोनों ही प्रकार की शक्तियों का ह्रास होना । इस ह्रास को स्वाभाविक रूप से विश्राम द्वारा ही पूर्ण कर सकते है ।

व्युपत्ति :-

1. विश्रम: (पुं०) वि+श्रम+धन=विश्राम: (शब्द कल्पद्रुम)
2. विश्र (श्रा) म, पुं (वि+श्रम+धन् वावृद्धि:) विरामे प्र अर्थात विपूर्वक श्रम धातु में धन् प्रत्यय लगने से विश्राम या विश्रम बना (वाचस्पत्यम) ।
3. विश्राम: पु०स विराम; आराम, विश्रान्ति, चैन थकावट या श्रम से दूर करने की क्रिया (हिन्दी शब्द कोष)
4. विश्राम (क) Rest, Repose
   (ख) Pause, Stoke, Cessation
   (ग) Tranquility, Composure
   (Sanskrit, English Dictionary)

विश्राम 2 प्रकार का होता हैं -

i. शारीरिक विश्राम ।
2. मानसिक विश्राम ।

1. **शारीरिक विश्राम :-** शारीरिक विश्राम यह है कि शरीर के अंग-प्रत्यंगों की क्रियाओं को न करना शारीरिक विश्राम हुआ जिससे उत्पन्न क्लेश आदि दूर होते हैं । इससे पंच ज्ञानेन्द्रिय व पंच कर्मेन्द्रियां आती हैं इन्हें इनके विषयों से हटाकर विश्राम दिलाना शारीरिक विश्राम कहलाता है, जैसे :-

| इन्द्रियां | कर्म |
|---|---|
| हाथ | वस्तु ग्रहण करना |
| पाद | गमन करना |
| गुद | (मलमूत्र) |
| उपस्थ | (शुक्र निष्कासन) |
| वाक् | (बोलना) |
| चक्षु | देखना |
| श्रवण | सुनना |
| घ्राण | सुगन्ध |
| स्पर्श | महसूस करना |

इन सबको कुछ समय हेतु उनके कर्मों में विश्रा करना शारीरिक विश्राम हुआ ।

2. **मानसिक विश्राम :-** मन को उपयात्मक माना गया है यह सभी ज्ञानेन्द्रियों व कर्मेन्द्रियों का प्रणेता, नियन्त एवं अणुत्व व एकत्व वाला जाना जाता है । जब म का इन्द्रियों के साथ सम्बन्ध नहीं होगा तब तक विष का ग्रहण नहीं किया जा सकता । इन्द्रियों में श्रम हो से मन से आभास पैदा होता है । आचार्यों ने मन में पै होने वाले काम को कल्प कहा है ।

**मन के कर्म :-** चिन्तन, विचार करना, ऊहापोह करन ध्यान करना इन कर्मों में मानसिक थकान होती है, इ कुछ समय के लिए न करे वह मानसिक विश्राम मा जायेगा । आयुर्वेद में उपस्तम्भों में निद्रा भी है । नि इन्द्रियों को थकाकर विषय को ग्रहण न करने व अवस्था है अर्थात् स्पष्ट है कि मन एवं इन्द्रियों विश्राम हेतु निद्रा की स्थिति उत्पन्न हो जाती है

**यदा तु मना ते क्लान्ते कर्मात्मान: कल्पान्विता विषयेभ्यो विवर्तन्ते तदा स्वपिति भावन:** (च०सू विश्राम जागृत अवस्था में भी किया जा सकता किन्तु सबसे अधिक विश्राम नींद से ही मिलता है

सात प्रकार की निद्राओं में मन व शरीर थकने से उत्पन्न निद्रा भी आती है, शारीरिक आकसित परिश्रम से जो निद्रा आती है उसे - म शरीरश्रम सम्यवा निद्रा कहा है ।

**निद्रा का महत्व :-**

**निद्रायतं सुख दुख पुष्टि: कार्श्य क्वालम् ।**

* लेक्चरर एवं विभागाध्यक्ष (शरीर रचना विभाग) ** बी.ए.एम.एस. (तृतीय व्यावसायिक अध्येता)
श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेद महाविद्यालय अस्थल बोहर (रोहतक)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वृषता क्लीवता ज्ञानमज्ञान जीवित न च् ।।

(च०चि० 21/36)

निद्रा अर्थात् विश्राम के अभाव में वलक्षय कृशता पुसंकता इन्द्रियों को सब विषयों में अच्छी प्रकार से प्रवृत्ति होने की स्थिति उत्पन्न होती है इसके विपरीत सम्यक ष्टि होती है ।

शरीर के आयास या थकावट को उत्पन्न करने ाले कर्म को व्यायाम कहते हैं । इसके विपरीत विश्राम हलाता है ।

जबल्लभानुसार विश्राम के गुण :-

विश्रामो बलकृत स्वेदश्रमजित स्वास्थ्यप्रदः शुभः

(शब्दकल्पद्रुम)

अर्थात् विश्राम देने वाला स्वेद (पसीने) को ातने वाला श्रम का नाश करनेवाला स्वास्थ्य वर्धक शरीर मन हेतु हितकर है ।

अतः उपरोक्त विवरण से विश्राम शरीर व मन हेतु त्यन्त आवश्यक है जिसके बिना मानव अपने शरीर व मन ो समय से पूर्व ही बुढ़ापे की ओर धकेलते हैं वैसे मन ढ़ा नहीं होता, यहां मेरा अभिप्राय यह है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन का निवास होता है, शरीर तो अति परिश्रम अर्थात् विश्रामाभाव में बूढ़ा होगा ही मन का भी सोचने का तरीका बदलता जायेगा । इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं, मन को विश्राम न मिलने पर मानसिक रोगों की सम्भावनाएं अधिक हो जायेगीं क्योंकि मन के विश्राम हेतु निद्रा की आवश्यकता है, निद्रा न आने से मानसिक रोगों की प्रबल सम्भावनाएं हो जाती है । मैं इतना ही कहूंगा कि स्वस्थ रहने के लिए मानसिक व शारीरिक विश्राम एवं श्रम का भी तालमेल बैठना आवश्यक है तभी हम स्वस्थ रह पायेंगें क्योंकि लिखा है कि शारीरिक दोषों से मानसिक दोषों से शारीरिक व्याधियां प्रारम्भ हो जाती है ।

किसी हिन्दी कवि की कल्पना -

आराम सुधा की एक बूंद तन का दुबलापन खोती है । आराम शब्द से राम छिपा जो भव बन्धन को खोती है। आराम शब्द का ज्ञाता हो विरला ही योगी होता है ।

विश्राम की हानियां :-

आज व प्राचीन काल से अतिविश्राम (अत्यधिक) से स्थूलता प्रमेह, अजीर्ण आदि रोगों की सम्भावना रहती है । इसलिए अति विश्राम भी सर्वथा अनुचित है ।

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# ऋतुओं की रानी वर्षा और हमारा खान-पान

कविराज डा० दिवाकर ठाकुर, जी.ए.एम.एस. औनर्स (पटना) डी.एस.सी.ए. आयुर्वेद बृहस्पति

वर्षा संजीवनी है । कहा है - जल ही जीवन है । जल के अभाव में न अन्न, न जीवन । एक बार अकबर बादशाह ने अपने दरबारियों से पूछा- यदि वर्ष के बारह महीनों में दो महीने निकाल दिए जायँ तो कितने महीने शेष रहेंगे ? सबों ने एक मत से कहा - दस महीने । तत्क्षण बीरबल भी पहुँच गया । अकबर ने बीरबल से भी यही दुहराया । बीरबल ने मुस्कुराते हुए कहा - हुजूर, वर्ष में यदि सावन और दो महीने निकाल दिए जाएँ तो शून्य के अलावे कुछ नहीं बचेगा । सवाल का सही जवाब मिल जाने से बादशाह अकबर खुशी से उछल पड़े । दरअसल वर्षा नहीं हुई तो नदी, नाले, तालाब सूख जायेंगे, अकाल पड़ेगा, लोगों का शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य में गिरावट आयेगी । इसलिए वर्षा ऋतु ही धरती का धन और प्राणियों का जीवन है । यही कारण है कि लोगों ने यदि बसन्त को ऋतुओं का राजा कहा है तो वर्षा ऋतुओं की रानी कहलाती है । - "राजा वसन्त वर्षा ऋतुओं की रानी ।"

जेठ-वैशाख की चिलचिलाती धूप, कड़ाके की गरमी, जोरदार ऊमस और बदबूदार पसीना से जन-जीवन को अस्त-व्यस्त करने के बाद वर्षा रानी का आगमन होता है । ग्रीष्म के उत्ताप से जलती धरती को शीतल करने के लिए वर्षा अपनी ठंडी फुहारें और हरियाली लेकर आती है । आषाढ़ आते ही फुहियाँ शुरू हो जाती हैं और लोग आनन्दित हो जाते हैं । किसान अपने-अपने हल बैल लेकर खेतों की ओर चल पड़ते हैं । ग्रीष्म की ताप से मूर्च्छित व शुष्क वनौषधियाँ सजीव एवं हरी-भरी हो जाती हैं ।

वर्षा ऋतु में जब सूर्य दक्षिण दिशा की ओर विदा होता है तो उस समय मेघ, हवा और वर्षा से सूर्य का ताप मन्द व क्षीण पड़ जाता है । आकाश में बादलों का मडराना व गरजना, छाँहदार वातावरण, ठंडी बयार और वर्षा की पहली फुहारें सब के मन को आकर्षिक कर लेती है । मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षी, मूर्च्छित पेड़-पौधे भी मस्ती में झूमने लगते हैं । सम्प्रति चन्द्रमा बलशाली रहता है । ग्रीष्म कालीन ताप से तप्त जमीन पर आकाशीय जल के गिरने से सम्पूर्ण प्राणी ताप उत्पीड़न से राहत महसूस करते हैं । इस मौसम में मधुर, अम्ल और लवण रस की प्रधानता रहती तथा प्राणियों के शरीर में बल की अभिवृद्धि दिनानुदि होती है । पानी का विपाक (जठराग्नि के संयोग के परिणा में दूसरे रस का उदय होना) अम्ल होता है । इस अम्ल से जठराग्नि अत्यन्त क्षीण हो जाती है । अतएव वाता अत्यन्त प्रकुपित होकर नानाविध रोगों को उत्पन्न करता । वर्षा ऋतु में वायु प्रबल रहती है । वायु को प्रकृतिस्थ रखने के लिए अम्ल, लवण और स्नेह द्रव्य (घृत, तैल वसादि) युक्त आहार लेना युक्ति संगत होता है । इ बरसाती मौसम में शरीर आर्द्र रहता है । आर्द्रता की शांति या आर्द्रता अधिक न बढ़े इसके लिए तीक्ष्ण, कटुवा औ कसैले रस युक्त जैसे - सोंठ, पीपल, मरीच, सरसों, चव्य चित्रक आदि द्रव्यों का सेवन हितकर है । भोज्य पदार्थ पुराने जौ, गेहूँ और चावल का प्रयोग करने से जठराग्नि नियंत्रित रहती है । भोजन बनाने की हर सामग्री में मधु क व्यवहार अवश्य करना चाहिए । इस ऋतु में शरीरस्थ जलीयांश की अधिकता रहती है । इससे पाचकाग्नि क कमजोरी से अधिकांश पेट खराब रहता है । अतः हल्क एवं रूक्ष पदार्थ लेना श्रेयस्कर है । प्याज और लहसुन पाच क्रिया को ठीक रखने में मदद करते हैं । कागजी नींबू क प्रयोग हितकर होता है । नींबू की दो फाँके बनाकर उस मरीच का चूर्ण, काला या सैंधा नमक डालकर आग प गरम करके चूसना बहुत ही फायदेमन्द होता है । दाल नींबू का रस और मीठी शिकंजी भी पीना उपयोगी होता है शाकाहारी के लिए मूंग यूष का व्यवहार ठीक रहता है मडुवे के शराब में शहद मिलाकर पीना लाभप्रद है ।

इस ऋतु में नदी, तालाब और कुएं का जल नह पीना चाहिए । कुएं के जल को कपड़े से छान कर पी या पीने के जल को फिटकिरी डालकर साफ होने पर पी से पानी के साथ पेट में जाने वाले कीटाणु क्रियाशील नह रहेंगे । शाक-भाजी छिलने के बाद उसे नमक युक्त पान से धोने से आक्रामक कीटाणु नष्ट हो जायेंगे । इस मौसम में मक्खी, मच्छड़, चींटी आदि असंख्य जीव-जन्तुओं क प्रादुर्भाव हो जाता है, इससे बचने के लिए फेनाइल, डेटॉल

इंडियन इन्स्टीच्यूट ऑफ आयुर्वेद, रिसर्च एवं हॉस्पीटल, सर्किट हाउस के सामने, पकड़ी, आरा (भोजपुर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मस्टीन पाउडर या नमक का घोल का व्यवहार करना चाहिए । इससे मच्छड़ आदि विषैले कीटाणु के प्रकोप से बचे रहेंगे । इस काल में तापमान गिर जाता है । अधिक देर तक कूलर का व्यवहार या जल से भींगा वस्त्र पहने रहने से इनफ्लूएंजा, खाँसी, बदन खुजलाना आदि उपद्रव होने लगते हैं । इसके निदानार्थ तुलसी पत्र, मरीच का व्यवहार शुभकारक होता है ।

इस ऋतु में वर्षा से घास-पात, कूड़े-कचरे सड़कर बदबू पैदा कर वातावरण को दूषित कर देते हैं, जिसके कारण पेट-दर्द, जुकाम, खाँसी, दस्त व आँव, पीलिया, फोड़े-फुन्सी आदि रोग होने का खतरा रहता है ।

मूली, गाजर, अदरक, प्याज, हरी-मिर्च, खीरा, पपीता आदि काटकर नींबू रस के साथ प्रतिदिन भोजन के साथ सलाद के रूप में लें । यह योग सुस्वादु और उत्तम पाचक है । शरीर पर शुद्ध सरसों का तेल मालिश कर स्नान करने से बाहरी जीवाणुओं का संक्रमण नहीं हो पाता और वात प्रकोप जन्य दर्द व सूजन आदि की संभावना नहीं रहती है । जहाँ तक सम्भव हो आलू, अरबी, सूरन, कन्दा, कच्चू तथा तेल से बने पदार्थ न लें । इस मौसम में दिन में सोना अत्यन्त हानिकारक है, क्योंकि दिन में सोने से वायु प्रकुपित होकर, ज्वर, खाँसी, सर्दी आदि शारीरिक कष्ट हो जाते हैं ।

इस मौसम का धूप भी घातक होता है, इसलिए धूप में बाहर न निकलें । अधिक धूप के लगने से वात-पित्त जन्य ज्वर हो जाता है ।

बरसाती मौसम में बाहर से आने पर पहने हुए जूते-चप्पल को साफ कर निश्चित स्थान पर रख दें । नंगे पैर आने पर पैर धो पोंछकर कमरे के अन्दर प्रवेश करें । आकाश से गिरने वाले वर्षा के जल को यदि ऊपर ही ऊपर किसी पात्र में जमा किया जाय तो वह इन दिनों पीने के लिए सर्वोत्तम होता है ।

इस काल में खान-पान के सम्बन्ध में सावधानी रखें, थोड़ा खाना अच्छा है लेकिन मात्रा से अधिक भोजन कर पाचन शक्ति को नहीं बिगड़ने देना चाहिए ।

अत: उपरोक्त तथ्यों को अमल में लाकर बरसात में आनन्द से रह सकते हैं ।

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
यह चूर्ण पेट साफ करता है तथा
पाचन शक्ति और भूख बढ़ाता है।
इससे पेट के कृमि भी दूर होते हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# LOCAL AND SYSTEMIC EFFECT OF BASTI w.s.r. TO ITS MORDEN PERSPECTIVE

[1]Dr. Rajesh Sachadevani [2]Dr. N.N. Bhatt [3]Dr. Sudhaben Vyas

## INTRODUCTION

1. Basti chikitsa is considered as one of the most effective therapy amongst all the therapeutic measures specially in the vitiation of Vata Dosa and Apana Sthanashrita Vyadhi.
2. Basti is the only therapy having dual purpose Shodhana (purificative) as well as Shamana (Curative).
3. Basti is not only effective in the Vata disorders but also in the diseases of whole body where Vata is one of the important factor in pathogenesis.
4. Basti therapy is effective because of the following factors.
   (a) स्रोतः शुद्धिकरत्वात : It purifies all the systems and makes a clear passage upto microchannel level.
   (b) भेषजविशेषयोगात : It acts on various disorders because of the selection of the drug according to disease.
   (c) संशमनकर्म : (Curative)
   (d) निरत्ययत्वात : Uncomplicated
   (e) सर्वावस्थानउपयोगी : Basti can be given at any age and at any stage of disorder after proper examination. It also can be given in normal persons too.

ACTION OF BASTI :-

(1) आपादतमुर्धस्थान दोषान पक्वाशये स्थितः ।
वीर्येण बस्तिरादत्ते स्वस्थोऽर्को भुरसानिव ॥

च०सि० 7/64

Basti introduced in the colon acts upon the whole body and on every system of the body from head up to feet and draws out the impurities by its potency like sun draws out or evaporates the juices / liquid from the earth by its heat (Niruha action)

(2) यद्वत कुसुम्भसंमिश्रातोयाद्रांग हरेत पटः ।
तव्द्रवीकृतादेहान्निरुहो निंहरेन्मलान ॥

च०सि० 7/65

As cloth takes away the dye from the water mixed with Kusumbha (plant.) Like wis nonunctous enema (Basti) eliminates excrement from the liquefied body materials. (Niruha action

(3) If Basti is given by due consideration strength, Dosa, time (period), disease ar Prakrti (constitution) and prepared wit respective drugs. It alleviates the concerne disorders. (Ca. Si. 10/4,5).
   1. There is no therapy equivalent to Bas becuase it evacuates the impuritie quickly and easily.
   2. It does Apatarpana / Santarpana quick according to the purpose, based upon th drugs used in it.
   3. It is free from untoward effect.

(4) Basti is more important than Virecana ar Vamana because,
   a. Inspite of doing proper eliminatio Virecana may produce uneasines belching, nausea and abdominal pain du to use of or ingestion of Pungent, shar and Ushna drugs.
   b. Regarding contra indications, Vamana ar Virecana cannot be used in old perso children and in weak patients, because the have not gained sufficient strength of Dha or their strength diminished respectively In such a condition Asthapana Basti alon is the best therapy. Because it quickly provid (facilitate), strength, complexion, exhilaratio softness and unctuousness in the body.

(5) Acharya says - This body is controlled b Vayu. Vayu removes the retention or morbidi (संघविघातात). It alone or in combination wi other Dosa get vitiated in its own locatio (स्वाशय) Basti by the way of evacuation elimination Carminates (अनुलोमयाति) Vayu wi Pitta, Kapha and fecal matter. Thus b pacification of the diseases and by th elimination of the impurities the entire bod get pacified.

(6) Basti pacifies all disorders by eliminatin accumulation or impurities situated all over th body. (Ca.Si. 1/28)

(7) Vayu is responsible in the various diseas pathogenesis (Samprapti). So there is n remedy other than Basti for pacification whe

1 Final Year M.D. Scholar, Dept. of Kayachikitsa (Panchakarma) I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar
2 Panchakarma Asst., Dept. of Kayachikitsa, I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar – 361 008
3 Professor, Dept. of Kayachikitsa, I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar – 361 008

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



the diseases mainly aggravated by Vata severely. That's why Basti utility is equal as per medicine.

8) हृदिन्द्रियशिरःकोष्ठे संशुद्धे वमनादिभिः ।
मनःप्रसादमाप्नोति स्मृतिसंज्ञा च विदन्ति ।।

च०सि० 9/27, 28

Purification of the whole body with the help of Panckarma is indirectly proved to be effective on Mana (mind) and its function i.e. after Vamanadi. Mind stability restores and memory power improves.

9) तत्र स्नेहादिना कर्मणां बस्तिकर्म प्रधानतममाहुराचार्य (अनेककर्मकरत्त्वाद)

सु०चि० 35/1.2, 3

Susruta says that among the all Karma's, Basti is the prime one because having various functions.

10) स चापि सहसा बस्तिः केवलः समलोऽपि वा ।
प्रत्येति त्वनिलैवीर्यमपानाद्यैर्विनियते ।। सु०चि० 35/26

अपानाद्यै - आद्यपदेन उदानादयो बोधव्या

Basti can come out alone or along with Mala or morbid matter and acts over Apana as well as Udana, Vyana, Samana and Pranvayu too.

PROBABLE MODE OF ACTION OF BASTI :-

(A) Action of Basti dravya on the intestinal mucosa :-

Once the Basti administered then first the action of Basti dravya is started on intestinal mucosa.

(I) Saindhava :

Because of Suksma and Visyandi properties it helps to pass the drug molecules in the systemic circulation through mucosa. It is also helpful for the elimination of Basti due to its irritant property.

The presence of Na+ (Saindhava) in Basti Dravya may play important role for the absorption of the drug, as the Na+ channels the most commonly used channels for the absorption of the substances.

If a membrance is interposed between the two solution (i.e. Salt + Sugar) of such character that it is freely and equally permeable to water, salts and sugar.

The cells or the intestinal mucous membrane are so easily permeable by sodium chloride that hypotonic / isotonic solution are absorbed almost as rapidly as pure water.

The concentrated dose of salt causes irritant action on the bowel producing peristalsis. When the strong solution of salt administred into the rectum it destroys thread worms.

(II) Madhu (Honey) :

Honey along with salts makes homogenous mixture to form a solution having properties to permeable the water easily.

The retention of irritative substances may be favored by making its solution as nearly isotonic as possible by using colloidal fluid such as starch water as diluent.

(III) Sneha (Oil)

Oil is mainly help fuel to protect the intestinal mucosa from the irritating substances.

By using Sneha the fat soluble portion of the drug easily absorbed from the colon. Lipids and Lipid soluble substance can easily enter the cell. In this way Sneha helps the basti dravya to reach at cellular level.

(IV) Kalka and Kwath :

The action of these two components is mainly depends upon the drugs used in it most of having medicinal value.

(B) Action of the Basti dravya on the whole body :-

(I) Saindhava :

Saindhava due to its Suksma and Tiksna properties help Basti dravya to reach upto molecular level. It also capable of liquefying the viscid matter and breaking it into minute particles. Thus helps for the both curative well as purificative purpose.

(II) Madhu :

Considered best among the vehicles contains various substances in it, which emphasizes its drug carrying capacity. Owing to Sukshma, it reaches upto microchannels inturn carries the drug at microcellular level.

(IV) Kalka and Kwath :

Both act according to their medicinal value, helps for the purpose i.e. Curative, purificative and preventive too.

Thus in regard to above description Basti Dravya when administered reaches upto the micro and macocellular level due to its Veerya (potency) and helps first to distrupts the pathogenic process and carries out the morbid matter towards Pakvasaya for the elimination. Thus it works as a curative as well as purificative measure.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# AETIOPATHOLOGICAL AND THERAPEUTIC STUDY ON SHLESHMAJA YONIVYAPADA W.S.R. TO INFECTIVE VAGINITIS

[1]Prof. Loknath Sharma [2]Dr. Shipra Agrawal

## INTRODUCTION

Shleshmaja Yonivyapada is a very common disease of females though the women do not know what it is, but they come with complaints of excessive white discharge. They do not understand its clinical importance and so live with it for years but when itching, dysuria, burning or irritation in vulvovaginal region etc., symptoms bother their day to day life then only they come to the consult the doctor. The epidemiology of Shleshmaja Yonivyapda is not computed any where but the incidence of infective vaginitis are given very clearly and it is also characterised by the same signs and symptoms. Though our Acharyas have not clearly mentioned the presence of krimi as the causative factor but when these patients are investigated with the help of modern tools of laboratory it was found that almost all the patients of Shleshmaja Yonivyapada were suffering from infections. With this new the present study was undertaken so that it could be found out if there is any aetiopathological similarity between Shleshmaja Yonivyapada and infective vaginitis and also to study the efficacy of the Dhatakyadi Kwatha and Taila in the treatment of the disease.

## MATERIALS AND METHODS

### Aims and Objective

1. To study infective vaginitis in Ayurveda perspective.
2. To develop an Ayurvedic aetiopathoenesis of infective vaginitis in terms of Sleshmaja Yonivyapada.
3. To study the therapeuctic effects of "Dhatkyadi Taila" & "Dhatkyadi Kwatha" in the treatment of Shleshmaja Yonivyapada w.s.r. to infective vaginitis.
4. To study the antimicrobial sensitivity of the drug.

## SELECTION OF PATIENTS

The patients for the present study were selected from the O.P.D./I.P.D. of Arogyashala, Madhav Vilas Hospital, National Institute of Ayurveda, Jaipur. Any patient coming as a new case except pregnant, diabetic and chronically ill patients were included in the study. They belonged to all socio-economic groups, illiterate and literate rural and urban people. The study was carried out in all on 46 patients.

### Inclusion Criteria

1. Patients with signs and symptoms of Shleshmaja Yonivyapada (w.s.r. to infective vaginitis) will be included in the study.
2. Diagnosis will be done by relevant laboratory investigation.
3. Age 20-40 years i.e., child bearing age.
4. Married women.

### Exclusion Criteria.

1. Pregnancy
2. Diabetes mellitus
3. Menopausal women
4. Unmarried women
5. Other systemic illness.
6. Other sexually transmitted disease (e.g., syphilis, gonorrhoea).

### Criteria for selecting patients

**All types of patients suffering from -**

1. Excessive discharge per vaginum
2. Pruritis vulva or irritation or burning sensation
3. Burning micturition
4. Dyspareunia
5. Others - Any associated complaints like backache, pain in lower abdomen, general weakness, menstrual irregularities, fever, constipation etc. was noted.

### Various Examination and Laboratory Investigations-

The various examination and laboratory investigations were done as under -

1. Wet smear examination

Discharge from the posterior fornix were collected and examined under microscope for - Trichomonas, vaginalis, mycelium or yeast cells,

1 Professor and Head, P.G. Department of Rog Vikriti Vigyam, N.I.A., Jaipur.
2 M.D. (Ay.) Scholar, P.G. Department of Rog Vikriti Vigyan, N.I.A., Jaipur.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



pithelial cells, clue cells.

. KOH preparation and Whift's test

This is useful in detecting candidal yphae, mycelial tangles and spores. The test is positive in 50 - 70% of women with candidal fection. A positive Whiff test is suggestive of acterial vaginitis Whiff test is positive if a fishy or mine odour is detected when KOH is added to ne Vaginal discharge.

. Gram's Staining

The stained smear was studied for the following -

a) Epithelial cells and clue cells.
b) Pus cells
c) Doderlin's bacilli
d) Gonococcus
e) Mycelia and/or yeast cell

Various diagnosis criteria for diagnosing bacterial vaginosis

a) Nugent's diagnosic criteria
b) Spiegel's diagnosic criteria
c) Schnor's method of grading bacterial flora in gram smear of vaginal fluid.

. Culture

Only aerobic cultures were done as the naerobic culture was not possible.

. Laboratory investigation

■ Haematological investigations

a) Haemoglobin (Hb%)
b) Total leucocyte count (TLC)
c) Differential leucocyte count (DLC)
d) Erythrocyte Sedimentation Rate (ESR)
e) V.D.R.L. (Veneral Disease Research Laboratory test)

■ Examination of Urine

a) Physiochemical examination
b) Microscopic examination

The Study

The study was divided into two parts -

1) Nidanatamaka Study
2) Clinical Study / Therapeutic study

1) **Nidanatamaka Study** - Aetiological study was done on 46 cases of Shleshmaja Yonivyapada (w.s.r. to infective vaginitis)

2) **Clinical Study** - was done on 31 patients. The patients were divided into two groups:- Group A and Group B.

Group A - Trial group

16 patients of Shleshmaja Yonivyapada (infective vaginitis) were given Dhatakyadi Kwatha douche followed by Dhatakyadi Taila picchu dharana for 15 days. Dosage of Kwatha for douching was about one and half litres and the picchu was soaked in 10 ml of dhatakyadi oil and kept high in vagina for at least 12 hours.

Group B - Control Group

15 patients of Shleshmaja Yonivyapada (infective vaginitis) were given allopathic treatment as control group. Patients were asked to use clotrimonazole vaginal tablets for first 6 days along with betadine vaginal tablets for 14 consecutive nights.

In both the groups -

1) Treatment was given for 15 days
2) Treatment was started from 6th day of menstrual cycle.
3) During trial period, abstinence from husband was advised.
4) All the investigations were done both before and after treatment.

Criteria For Assessment

During the trial the patients were assessed on the following parameters -

1) Subjective imporvement.
2) Clinical improvement.
3) Microscopic examination of Vaginal discharges

Clinical Improvement -

by assessing the following symptoms by grading method -

1) Vaginal discharge (Yonipaicchilya)
2) Pruitis Vulvae - Frequency
   - Intensity
3) Odour
4) Yoni Sheetalta or Daha


CC-0. JM Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



5) Yoni shotha
6) Cervical erosion
7) Pain in lower abdomen
8) Burning sensation
9) Fatigue
10) Backache

DRUG

Dhatakyadi Taila and Dhatakyadi kwath

The preparation used for study has been described in Charaka Chikitsa Sthana "Yoni Vyapada Chikitsa Adhyaya - 30". Contents are

| | |
|---|---|
| 1. Dhataki flowers | 2. Amalaki leaves |
| 3. Rasanjana | 4. Madhuka - roots |
| 5. Utapala-seeds | 6. Tambu - seeds |
| 7. Amra - seeds | 8. Lodhra - bark |
| 9. Katphala - bark | 10. Dadima - bark |
| 11. Udumbara - bark | 12. Kasisa |
| 13. Saurashtrika | 14. Aja mutra |
| 15. Aja Dugdha | 16. Tila Taila |

Dhatakyadi kwatha also consists of the same ingredients except Taila, Aja mutra and Aja Dugdha.

The pH of the Kwatha was mesaured by the pH indicator strip -

pH = 3

Sensitivity Study

Preparation of water soluble extract and discs for Dhatakyadi kwatha and Dhatakyadi oil were prepared.

Nutrient agar plates were used for study.

A 24 hours nutrient broth culture of the test organism was used as a source of bacteria.

OBSERVATION AND RESULTS

Showed by graphic presentation -

Subjective Improvement

There was marked improvement in the feeling of well being, physical and mental fitness. The incidence of improvement was higher in group A while group B showed moderate improvement.

Clinical Improvement

Showed by graphic presentation -

Showing distribution of pateints according to Incidence of Nidana in 46 cases of Shleshmaja Yonivyapada

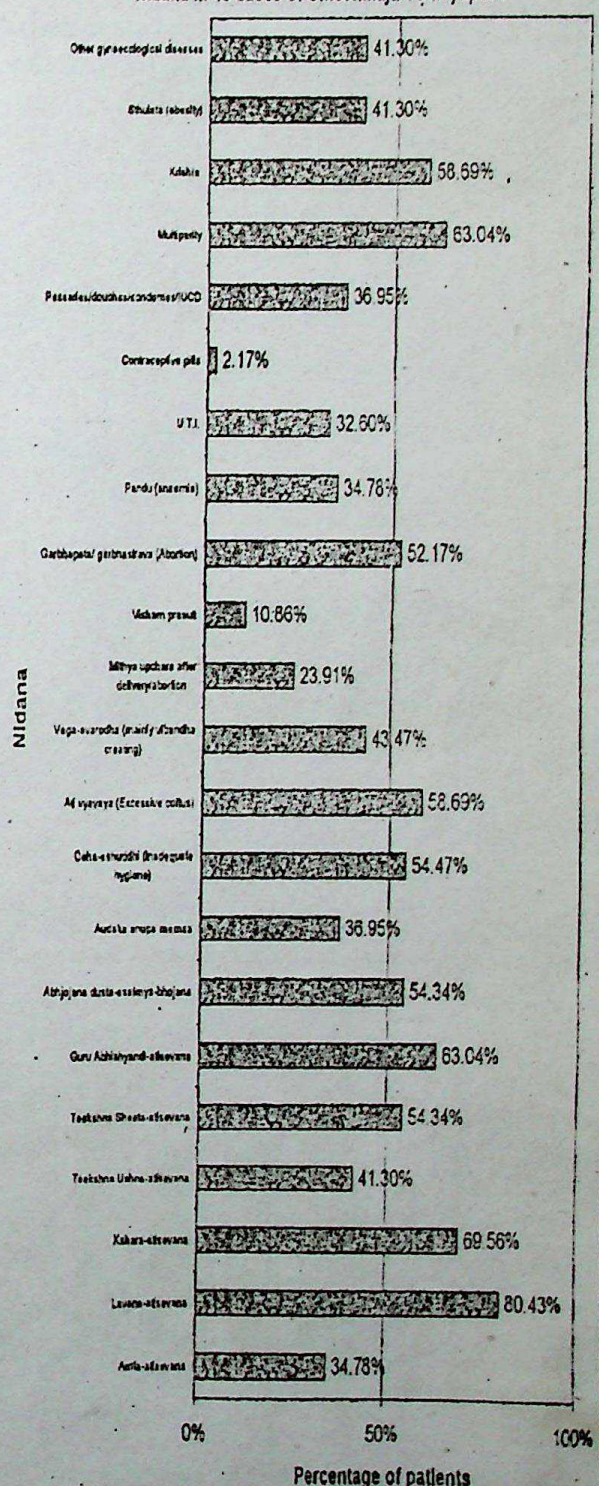




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Graph Showing associated symptoms observed in 46 cases of Shleshmaja Yonivyapada

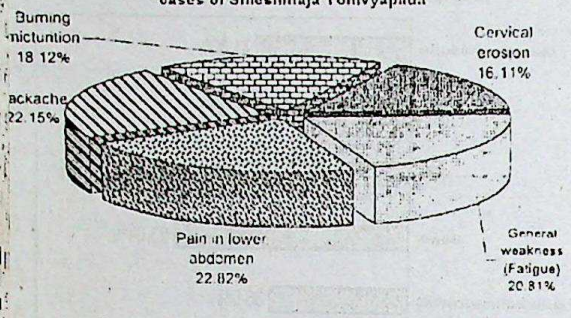


Graph Showing incidence of Artava Vaha Srotas Lakshana observed in 46 cases of Shleshmaja Yonivyapada

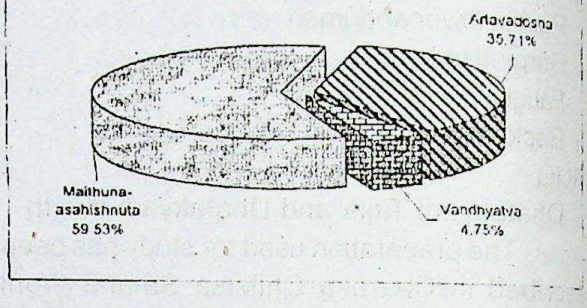


Graph Showing specific organisms in 46 cases of Shleshmaja Yonivyapada

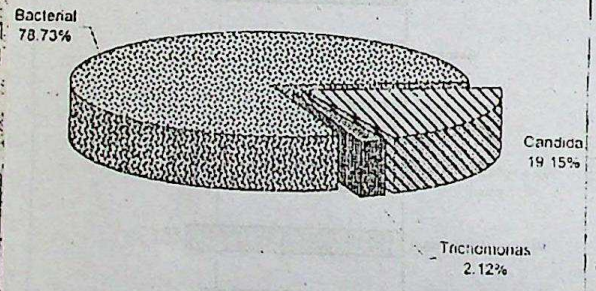


Graph showing the cardinal symptoms found in 46 cases of Shleshmaja Yonivyapada

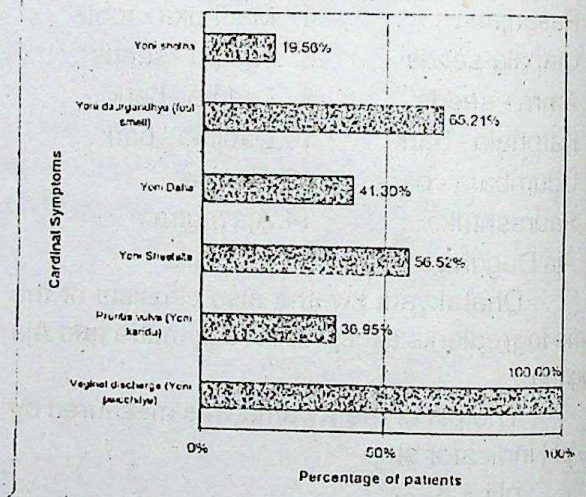


Comparing the Clinical recovery of Symptoms in all patients of Group A & Group B

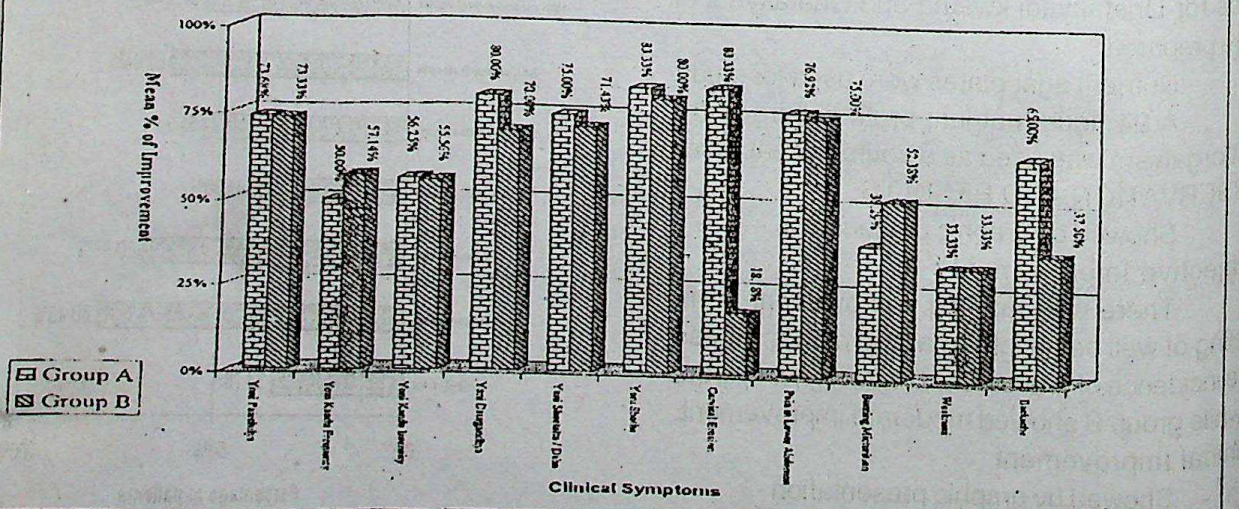




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



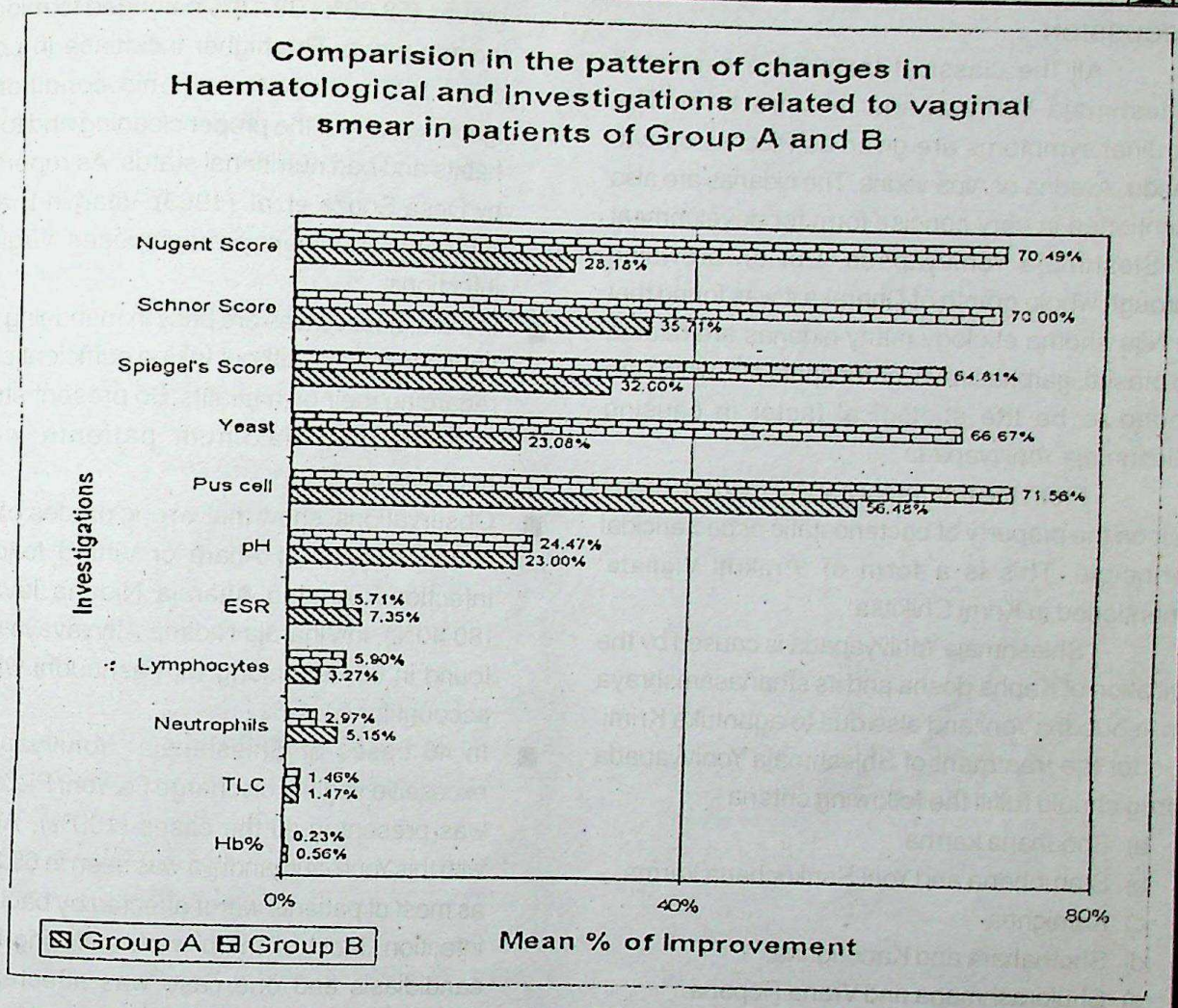


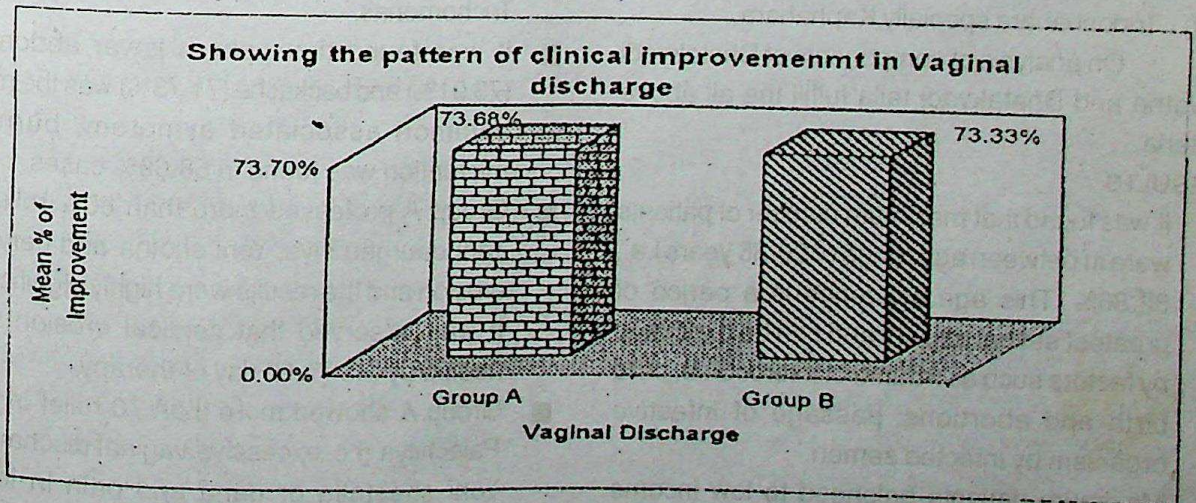




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



DISCUSSION

All the classical texts have explained Shleshmaja Yonivyapada in sutra form. The cardinal symptoms are given as Picchila strava, Kandu, Avedna or Alpa vedna. The nidanas are also mentioned in very concise form for development of Sleshmaja Yonivyapada. But on browsing through whole granth of Charaka it was found that in Nija shotha etiology many nidanas are related to prasuti, garbhastrava, garbhapata etc. which are found to be the etiological factor in causing Sleshmaja Yonivyapada.

From the treatment aspect modern drugs act on the property of bacteriostatic or bactericidal principle. This is a form of 'Prakriti Vighata' mentioned in Krimi Chikitsa.

Shleshmaja Yonivyapada is caused by the vitiation of Kapha dosha and its sthanasamshraya in kshubdha Yoni and also due to agantuka Krimi. So for the treatment of Shleshmaja Yonivyapada drug should fulfill the following criteria -

a) Shodhana karma
b) Stambhana and Yoni Sankochana karma.
c) Krimighna
d) Shothahara and Kandughna.
e) Shulprashmana and Vrana Ropana.
f) Tridoshahara specially Kaphahara.

On analysis of components of Dhatakyadi Kwatha and Dhatakyadi taila fulfill the all above criteria.

RESULTS

- It was found that maximum number of patients were in between age range of 20-35 years i.e., 82.86%. This age incidence is a period of greatest sexual activity and can be explained by factors such as trauma of intercourse, child birth and abortions; passage of infective organism by infected semen.
- Maximum patients belonged to low income groups (58.69%) 39.13% belonged to middle income group. The higher incidence in poor class is due to poor hygienic conditions, ignorance about the proper cleaning and toilet habits and bad nutritional status. As reported by Desa Souza et. al. (1963). Vitamin B and Vitamin A deficiency predisposes vaginal infections.
- In India, housewives are busy in managing the household work without taking sufficient care regarding their own health. So present study showed that maximum patients were housewives 78.26%
- Observations show that wrong modes of life either in terms of Ahara or Vihara lead to infections. Among Aharaja Nidana lavana (80.40%), in Viharaja Nidana Ativyavaya was found in 58.69% along with ashuddhi which account for 54.47%
- In 46 cases of Shleshmaja Yonivyapada excessive vaginal discharge i.e. Yoni Picchilta was present in all the cases (100%). Along with this Yoni daurgandhya was seen in 65.21% as most of patients were affected by bacteria infection. Most of them were suffering from candidiasis and one case was affected by Trichomonas.
- It was found that pain in lower abdomen (73.91%) and backache (71.73%) was the most common associated symptom, burning micturition was found in 58.69% cases.
- Group A professed more than 80% relief in Yoni daurgandhya, Yoni shotha and cervical erosion and the results were highly significant. It was observed that cervical erosion was healed by the 7th-8th day of therapy.
- Group A showed more than 70 relief in Yoni Paicchilya (i.e. excessive vaginal discharge) Yoni sheetalta or daha and pain in lower



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



abdomen and these results were also highly significant.

- Group A had 65% relief in backache and the results was significant.
- Overall relief in symptoms of Group A was 65.10% and in group B was 56.71%.
- In Group A the pH reverted back to normal acidic pH. It may be due to the douching as the pH of Dhatakyadi kwatha was highly acidic (pH=3).
- Overall relief in the investigation related to vaginal smear in Group A was 35.22% and in Group B it was 60%.
- The in-vitro antimicrobial sensitivity study shows that E.coli, staphylococcus and streptococcus are resistant or insensitive to the concentrations used of Dhatakyadi kwatha and Dhatakyadi Taila.

However, the in-vitro antimicrobial study showed that the water extract of Dhatakyadi kwatha exhibited sentivity to pseudomonas aeruginosa and salmonella typhimureum.

CONCLUSION

1. The disease Shleshmaja Yonivyapada described in Ayurvedic texts in comparable to infective vaginitis which may be either due to bacteria, Candida or Trichomonas.
2. Shleshma is the predominant vitiated dosha along with Vata as it is said that all the yonivyapada are Caused by vata.
3. Etiology of Shleshmaja Yonivyapada involves mithya-achara, Kapha Prakopaka Ahara Vihara, Krimin Deha-ashuddhi and other nidanas described for Nija Shotha.
4. Excessive vaginal discharges, pruritus vulva or irritation in vulvo-vaginal region, foul smell, Yoni sheetalta or daha are main cardinal symptoms and backache, pain in lower abdomen, Yoni shotha, cervical erosion et are other associated symptoms.
5. Wet smear examination, pH and gram sta are the methods which at least must be us to diagnose the infective condition and possible culture should also be employed. B sometimes these infection causing organisr are normal inhabitants hence culture is not t main tool for diagnosis of infection.
6. Per vaginum, Per speculum and bi-manu examination of pelvic region are compulso as one may overlook the presence of oth pathologies responsible for causing excessi vaginal discharges, for example cervic erosion, fibroid, etc.
7. Sthanika Chikitsa is more applicable for t treatment of Shleshmaja Yonivyapada.
8. Dhatakyadi Taila picchu-dharana a Dhatakyadi kwatha douche is a simple, sa least expensive approach and has no si effects. It not only cures Shleshma Yonivyapada but also cures cervical erosic
9. The drug does not destroy or affect the healt epithelial cells of vagina. It is antimicrobial a selectively coagulates necrotic a pathologically altered tissues.
10. The treatment has got following advantage
    i) Can be used as OPD procedure.
    ii) Can be used by the patient herself witho any assistance.
    iii) No side effects.
    iv) No Special training is required.
    v) Can be used at periphery subcentres.
    vi) Has a broad application.
11. The drug has also improved menstru irregularities in few patients.

Hence this method helps in improving t health of a female and prevents her from unwant complications as outlined before.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# A PHARAMACEUTICAL STANDARDIZATION OF SOMANATHI TAMRA BHASMA AND TAMRA BHASMA W.S.R. TO TEMPERATURE PATTERN

[1]Dr. Suhas V. Nayak [2]Dr. P.K. Prajapati [3]Dr. B. J. Patgiri

Keywords :
1) Somanathi Tamra Bhasma,
2) Tamra Bhasma,
3) Temperature Pattern

ABSTRACT

With the origin of Rasashastra, majority of metals and minerals were properly detoxified and made more valuable with proper processing which were earlier used in Churna form (as Ayaskriti) for therapeutic purpose.

At present, those having scientific knowledge but not acquainted with Ayurvedic processing as mentioned in Ayurvedic Rasa Granthas might be of opinion with doubt of their toxic effects. But after proper processing like Shodhana and Marana as mentioned in Rasa Granthas, present work could not satisfy their opinion as the toxic effect was not observed among the patients.

Keeping the above view in context, the Somanathi Tamra Bhasma and Tamra Bhasma preparations have been carried out for pharmaceutical study. Among of them, Somanathi Tamra Bhasma found easy to prepare in comparison to Tamra Bhasma.

INTRODUCTION

Rasashastra, an important branch of Ayurveda, an immortal science of life practised in Asian subcontinent since Vedic period includes use of drugs originated mainly from metals and minerals substances after going through systemic procedure of Shodhana and Marana.

It deals with minerals and metals, popular source of drugs in the medieval period due to their higher efficacious values. Tamra is one of them. If is properly processed and detoxified, it could be beneficial in a wide array of disease. The incineration of Tamra can be accomplished in different ways according to different classical references.

Looking to the odds facing by many of Ayurvedist in preparing the Tamra Bhasma and by the time in getting its CDC (Chief Desired Character) as mentioned in classical text, a pharmaceutical study of Somanathi Tamra Bhasma and Tamra Bhasma has been the topic of research planned hereby.

AIMS AND OBJECTIVES

* To prepare the standard operative procedure for Somanathi Tamra Bhasma and Tamra Bhasma.
* To analyze the sample of Somanathi Tamra Bhasma and Tamra Bhasma.

MATERIALS AND METHODS

SOMANATHI TAMRA BHASMA

In 12th century, there was a physician named Somadeva, he discovered some new formulations. Somanathi Tamra Bhasma is one of them. (Ra. Chu. 14/65-68)

Ingredients : Shuddha Tamra, Shuddha Parada, Shuddha Gandhaka, Shuddha Haratala and Shuddha Manashila.

Going through different literatures quantity of ingredients depends upon the quantity of Gandhaka. The Somanathi Tamra Bhasma was prepared according to the original reference of Rasendra Chudamani quoted in Rasayogasagar-2338 by Kupipakva method.

Procedure : The equal parts of Shuddha Parada and Shuddha Tamra taken in mortar are triturated well till their conversion to Pishti. Then Shuddha Gandhaka, Manashil and haratala are added one after one and triturated well. The bottle is placed in Valuka Yantra for 12 hours by giving Kramagni till the formation of fine powder (Kajjali) in a glass bottle (having 7 layers of mud smeared cloth). After self-cooling, the drug is collected from lower portion of the bottle.

TAMRA BHASMA

Ingredients : Shuddha Tamra Churna (10 g), Shuddha Hingula (Q.S.), Shuddha Gandhaka (Q.S. g), Nimbu Swarasa (Q.S.)

Procedure :

Shuddha Tamra Churna and Shuddha Hingula are triturated in equal quantity in Bijora

| Sr. |
|---|
| 1. |
| 2. |
| 3. |
| 4. |
| 5. |
| 6. |

M.D. Scholar (Ayu.), Final Year, Department. of R.S. & B.K. I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar – 361 008
H.O.D. – Dept. of R.S.& B.K.,I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar – 361 008
Lecturer – Dept. of R.S.& B.K.I.P.G.T. & R.A. G.A.U., Jamnagar – 361 008

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Nimbu Swarasa till they get paste like form then this paste is allowed to get dried in sunlight and to convert it into powder form. The powder is kept in Urdhvapatana Yantra for the procedure of Urdhvapatan. After this process, Hingulottha Parada is obtained from the brim of upper pot and Tamra Churna is obtained from the lower pot of the Urdhvapatan Yantra. This procedure is repeated thrice. Thereafter, Shuddha Gandhaka is added in Tamra Churna in equal quantity and mixture is kept in Sarava Samputa and it is given with Puta. This procedure is repeated twice or thrice. After these all processes the Tamra Bhasma for Amrutikrana purpose is obtained.

AMRUTIKARANA

Ingredients :

Tamra Bhasma (1 part), Shuddha Gandhaka (½ part), Nimbu Swarasa (Q.S.), Surana Kanda (1 unit)

Procedure :

Properly prepared Tamra Bhasma should be triturated with half part of Gandhaka with lemon juice. Its bolus is prepared and it is dried in a hole made inside the Surana Kanda. It is closed with Surana piece and wrapped with mud of two inches thickness. Now it is dried in Gajaputa. On self cooling, Tamra Bhasma from Surana Kanda is taken out.

Tests for checking the quality of final product :

Ancient classical texts of Rasashastra have described various parameters for checking the final product which is obtained in the form of Bhasma.

1) Rekhapurna : The final product should fine enough to occupy the space in between the lines of finger tips.
2) Nischandra : The final product should be lusterless.
3) Varitar Pariksha : The final product should be floating on the surface of water.
4) Nihswada : The final product should be tasteless.
5) Avami : The final product should not produce emesis.
6) Apunarbhava : The final product should not be able to revert to its basic form.

## PHARMACEUTICAL STUDY

Shodhana of raw materials :

| Sr. | Drug | Media | Procedure | Initial wt. | Final wt. | Loss/ gain (gm) | Duration |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | Tamra Samanya Shodhana | Tila taila Takra, gomutra, Kanji, Kulattha Kwatha | Nirvapa 7 times in each | 1000gm | 767 | 233 ↓ | 5 days |
| 2. | Tamra Vishesha Shodhana | Gomutra | Swedana | 767gm | 762gm | 5gm ↓ | 3 hours |
| 3. | Haratala | Kanji, Kushmanda Swarasa, Tila Taila, Triphala Kwatha | Swedana | 500gm | 490gm | 10gm ↓ | 4 days |
| 4. | Manashila | Adraka Swarasa | Bhavana | 250gm | 271gm | 21gm ↑ | 10 days |
| 5. | Hingula | Nimbu Swarasa | Bhavana | 1000gm | 1020gm | 20gm ↑ | 12 days |
| 6. | Gandhaka | Bhringaraja Swarasa | Heating & pouring | 500gm | 480gm | 20gm ↑ | 1 day |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



PRACTICAL : Extraction of Parada from Hingula (Si. Bh. M. M.)

Material : 1) Ashuddha Hingula - 500 gm
2) Cotton cloth - 500 gm

**Procedure :** 250 gm cotton cloth was taken and the Hingula powder was sprinkled over it. After that cotton cloth was rolled from both opposite directions to make a bolus like structure and it was tied up by a cotton string. That cotton cloth's bolus was kept in Sharava properly and fire was given. After that, a huge Nada was over turned on the Sharava. On the basis of four small pieces of tiles which was put around the Sharava. Till the whole cotton bolus was burnt and Nada Yantra was self-cooled, it was placed in open air. After self-cooling of Nada Yantra, the Nada was carefully taken and mercury was procured from the brim of Nada with the use of small piece of cotton cloth.

**Observations :** A little amount of fumes was coming out from the space between the outer border of Sharava and lower border of Nada.

**Results :** Average 72.7% Parada was procured from Hingula. This Parada was used to prepare Somanathi Tamra Bhasma.

PRACTICAL : Preparation of Somanathi Tamra Bhasma Kajjali - (Ra. Chu.)

**Material :** Shuddha Tamra (50 gm), Shuddha Parada (50 gm), Shuddha Gandhaka (100 gm), Shuddha Haratala (50 gm), Shuddha Manashila (25 gm), Nimbu Swarasa (215 ml)

**Apparatus :** Mortar and pestle, steel vessel, cloth, measure glass, holder, weighing balance etc.

**Procedure :** Shuddha Tamra and shuddha Parada were weighed accurately and triturated with Nimbu Swarasa in mortar till the complete formation of Pishti (amalgamation). On complete amalgamation Shuddha Gandhaka was added in it and triturated well till Kajjali formation. After proper mixing, it was triturated with Shuddha Haratala and then with Shuddha Manashila. Thus prepared Kajjali collected, weighed.

Results :

- Time taken for practical - 6 days
- Total time taken of trituration - 21 hours
- Initial quantity of drugs taken - 275 gm
- Quantity of Kajjali obtained - 287gm
- Weight gain - 12 gm

PRACTICAL : Preparation of Somanathi Tamra Bhasma (Ra. Chu.–14/65-68)

**Material :** Previously prepared Somanathi Tamra bhasma kajjali - 287 gm

**Method:** Kupipakva

**Procedure :** Previously prepared 28 gm of Somanathi Tamra bhasma Kajjali was taken triturated well in Khalvayantra and filled in Kachakupi. The Kupi was placed exactly at the center of the electric muffle furnace and fixed in proper position with help of firebrick blocks. Heating process was carried out in Kramagni pattern in increasing order but intermediate heating. Heat was gradually increased over a period of hours as per the time schedule i.e. 4 hours Mandagni (room temperature to 250°C), 4 hours Madhyamagni (250°C – 450°C), 4 hours Tivragni (450°C – 630°C). The temperature of furnace was recorded after intervals of 30 minutes. During the course of heating, the hot shalaka was repeatedly inserted into the mouth of Kupi to burn the accumulated sulphur, at the neck of the bottle to prevent blocking.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Table showing specific observations during preparation of STB samples

| Sr | Various Stages | Batch I | | Batch II | | Batch III | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | Time (hour) | Temp. °C | Time (hour) | Temp. °C | Time (hour) | Temp. °C |
| 1. | Initial | 00:00 | 028 | 00:00 | 022 | 00:00 | 022 |
| 2. | Fumes start | 00:23 | 249 | 00:30 | 220 | 00:30 | 200 |
| 3. | Yellow fumes start | 03:00 | 249 | 03:30 | 300 | 04:00 | 249 |
| 4. | Profuse yellow fumes start | 04:30 | 300 | 04:30 | 298 | 04:30 | 249 |
| 5. | Blue flame appears | 10:30 | 550 | 09:15 | 549 | 12:00 | 502 |
| 6. | Flame stopped | 13:00 | 600 | 13:30 | 602 | 14:00 | 602 |
| 7. | Corking | 13:00 | 600 | 14:00 | 602 | 14:00 | 600 |
| 8. | Swanga Sheeta | 30:30 | 048 | 30:00 | 056 | 30:00 | 061 |

Result :

- Total time taken averagely -2 days
- Total duration of heating averagely - 14.15 hrs
- Wt. of Kajjali taken averagely - 283.33 gm
- Total wt. of STB obtained averagely- 127.66 gm (bottom residue)
- Kanthastha material obtained avg. - 09 gm

PRACTICAL : Preparation of Tamra Bhasma (R.T. 17/19-22)

Materials : Shuddha Tamra Churna (100 gm), Shuddha Hingula (324 gm), Shuddha Gandhaka (667 gm), Nimbu Swarasa (1 ltr).

Apparatus : Mortar and pestle, pastula, Sharava Samputa, horizontal muffle furnace, Damaru Yantra, charcoal burner.

Procedure of Damaru Yantra : 10 gm of Shuddha Tamra was triturated with equa quantity of Shuddha Hingula with Nimbu Swarasa for 3 hours it got the form of paste. After that, th paste was smeared in the bottom of the lower po of Damaru Yantra and let the paste to dry. Then th lower and upper pot of the Damaru Yantra wa sealed with cloth & clay and left it till dried. Damar Yantra was placed on charcoal burner and heate for 1 hour. After that, Damaru Yantra was opene and Parada was procured from the brim of uppe pot and Tamra Churna was procured from lowe pot. Again that powder of Tamra and equal quantit of Hingula was triturated with Nimbu Swarasa an subjected to Damaru Yantra. This process wa repeated more twice times.

Observation of Damaru Yantra Procedure

| Batch | No. | Qty. of Tamra (in gm) | Qty. of Hingula (in gm) | Qty. of Nimbu Swarasa (in ml) | Temp. of charcoal burner | Time taken (in hr.) | Parada obtained | Tamra Churna obtained |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| I | 1 | 100 | 100 | 100 | 840 | 1 | 67 | 110 |
| II | 1 | 100 | 100 | 100 | 850 | 1 | 70 | 114 |
| I | 2 | 110 | 110 | 100 | 850 | 1 | 63 | 112 |
| II | 2 | 114 | 114 | 100 | 846 | 1 | 66 | 115 |
| I | 3 | 114 | 114 | 100 | 830 | 1 | 65 | 114 |
| II | 3 | 115 | 115 | 100 | 834 | 1 | 65 | 115 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Thereafter, the procured Tamra Churna was triturated with equal quantity of Gandhaka in Nimbu Swarasa till it got the form of paste. Small pellets were made and kept in Sharava Samputa and were subjected to horizontal muffle furnace and heat was given. After self-cooling, the Sharava Samputa was taken out and opened and procured the material. This procedure was repeated 5 times again.

Table showing the observation of the procedure of electric muffle furnace

| Batch | Puta | Tamra Churna (in gm) | Shuddha Gandhaka (in gm) | Nimbu Swarasa (in ml) | Temp. °c | Procured Material | Colour |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| I | 1 | 114 | 114 | 100 | 900 | 130 | Red |
| II | 1 | 115 | 115 | 100 | 900 | 132 | Red |
| I | 2 | 130 | 130 | 110 | 750 | 115 | Red |
| II | 2 | 132 | 132 | 110 | 750 | 116 | Red |
| I | 3 | 113 | 113 | 100 | 550 | 107 | Reddish black |
| II | 3 | 116 | 116 | 100 | 550 | 110 | Red |
| I | 4 | 107 | 107 | 95 | 550 | 105 | Blackish brown |
| II | 4 | 110 | 110 | 98 | 550 | 106 | Reddish brown |
| I | 5 | 105 | 105 | 95 | 550 | 98 | Blackish brown |
| II | 5 | 106 | 106 | 95 | 550 | 99 | Blackish brown |
| I | 6 | 98 | 98 | 95 | 550 | 95 | Black |
| II | 6 | 99 | 99 | 95 | 550 | 97 | Black |

Results :

- Wt. of Tamra Bhasma obtained avg. : 96 gm
- Colour : Black
- Curd test : no discoloration found till 24 hours
- Tamra Bhasma was subjected to Amrutikarana.

AMRITIKARANA

Materials : Tamra Bhasma (96 gm), Shuddha Gandhaka (48 gm), Nimbu Swarasa (Q.S)

Procedure : Tamra Bhasma was triturated with Shuddha Gandhaka and Nimbu Swarasa to make a round ball. Ball was dried in sunlight and was kept in the prepared cavity of the half part of tuber of Surana. It was covered with rest of the half part of the tuber of Surana. The total tuber of Surana was wrapped with cloth and clay and subjected to horizontal electric muffle furnace at the temperature 550°c. After being heated the tuber was taken out and the Bhasma was procured very carefully.

Observations : Tuber of Surana was completely converted into black color. Its weight was found very much reduced.

Results :

- Weight averagely - 98.35 gm
- Color - Black

ANALYTICAL STUDY

Materials And Methods :

- Tamra Bhasma and Somanathi Tamra Bhasma samples used for the present study were analyzed by employing various possible organoleptic, physical and chemical parameters including the parameters mentioned in the Ayurvedic texts.
- Parameters employed were colour, odour, taste, touch, Sukshmatva, Rekhapurnatva, Varitaratva, Unama, Apunarbhava, Nishchandratva, Curd test, ash value, acid insoluble ash, content for copper (Cu), mercury (Hg) and arsenic (As).

Observations & Results

Samples of Tamra Bhasma and Somanathi Tamra Bhasma (labeled TB1 and STB



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



were prepared as described earlier and were used for the present study. The analysis of both the samples were carried out, both the samples passes all the Bhasma Pariksha i.e. colour, odour, taste, rekhapurnatva, varitaratva, unam, dadhi pariksha, apunarbhavatva and nischandrata.

Analytical data of TB and STB samples

| Test | TB | STB |
|---|---|---|
| Ash value | 69.00% w/w | 46.22% w/w |
| Acid insoluble ash | 04.69% w/w | 02.63% w/w |
| Total Cu content | 28.30% w/w | 23.31% w/w |
| Total 'Hg' content | Trace | Nil |
| Total 'As' content | - | 21.37% w/w |

Data indicates that both the samples comply with all the tests and characters as mentioned in Ayurvedic texts indicating that the Bhasma preparation has been completed

DISCUSSION

Acharya Somdeva mentions Somanathi Tamra Bhasma first time. Kupipakva Rasayana is a process in which the Rasayana product is prepared in a glass bottle by applying a heat in a serial manner. The utmost important thing during such process is control over heating process and regulation of temperature. For this some efforts have been carried out regarding the heating pattern and interpretation of Mrudu, Madhya and Tivra Agni in terms of temperature etc. One such efforts has been done by Prof. D. Joshi. He has given the temperature range for the particulars of Agni, such as –

- Mrudu Agni → 120°c. to 250°c (4 hours)
- Madhyama Agni → 250°c to 450°c (4 hours)
- Tivra Agni → 450°c to 630°c (4 hours)

This standardization was done in electric furnace.

Tamra Bhasma mentioned in Rasatarangini is a procedure to make the Tamra Bhasma by easy way. In this regard an attempt has been done as per the reference of Rasamrita that for incineration of Tamra first higher temperature should be given thereafter, temperature should be tempered Puta by Puta.

1st Puta → 900°c 2nd Puta → 750°c
3rd Puta → 550°c 4th Puta → 550°c
5th Puta → 550°c 6th Puta → 550°c

This standardization was done in electric muffle furnace.

The pharmaceutical standardization was divided into five parts.

Shodhana of constituent drugs

After Shodhana of Tamra it was converted in powder form. It is mentioned in Ayurved Prakasha that if one want to use the Gandhaka for further procedure like incineration of Tamra only one time melting and dipping in Bhringaraja Swarasa should be done. After Shodhana weight increase found in Haratala or Manashila is due to the remaining solid contents of Bhavana Dravya.

Preparation of Somanathi Tamra Kajjali

Weight of Kajjali found increased than the total ingredient taken due to remaining solid contents of Nimbu Swarasa.

Preparation of Somanathi Tamra Bhasma

Table showing mean temperature of Mrudu, Madhya and Tivra Agni for the samples of Somanathi Tamra Bhasma 1.

| Agni | Batch I °C | Batch II °C | Batch III °C | Mean °C |
|---|---|---|---|---|
| Mrudu | 178.78 | 243.66 | 216.88 | 213.10 |
| Madhya | 375.00 | 336.85 | 411.92 | 374.54 |
| Tivra | 545.52 | 559.72 | 551.14 | 552.13 |

It reveals that in these three practicals, average temperature at Mrudu, Madhya and Tivra Agni stages were 213.10°c, 374.54°c and 552.13°c respectively. The data pertaining to the results of these three practicals is as shown in the table.

In all the three practicals Somanathi Tamra Bhasma was obtained 127.66 gm averagely, while Kanthastha material was obtained averagely 9 gm.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Preparation of Tamra Bhasma

Showing mean of the procedure of Damaru Yantra

| No. | Qty. of Tamra (in gm) | Qty. of Hingula (in gm) | Qty. of Nimbu Swarasa (in ml) | Temp. of charcoal burner | Time taken (in hr.) | Parada obtained | Tamara Churna Obtained |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 100 | 100 | 100 | 845 | 1 | 68.5 | 112 |
| 2 | 112 | 112 | 100 | 848 | 1 | 64.5 | 113.5 |
| 3 | 114.5 | 114.5 | 100 | 832 | 1 | 65 | 114.5 |
| Avg | 108.8 | 108.8 | 100 | 841.6 | 1 | 66 | 113.3 |

Showing the mean of the procedure of electric muffle furnace

| Puta | Tamra Churna (in gm) | Shuddha Gandhaka (in gm) | Nimbu Swarasa (in ml) | Temp. °c | Procured Material | Colour |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 114.5 | 114.5 | 100 | 900 | 131 | Red |
| 2 | 131 | 131 | 110 | 750 | 114.5 | Red |
| 3 | 114.5 | 114.5 | 100 | 550 | 108.5 | Red |
| 4 | 108.5 | 108.5 | 96.5 | 550 | 105.5 | Reddish brown |
| 5 | 108.5 | 108.5 | 95 | 550 | 98.5 | Reddish black |
| 6 | 98.5 | 98.5 | 95 | 550 | 96 | black |

Amritikarana : Showing procedure of Amrutikarana

| No. | Tamra Bhasma (in gm) | Shuddha Gandhaka (in gm) | Nimbu Swarasa (in ml) | Tamra Bhasma obtained (in gm) | Colour |
|---|---|---|---|---|---|
| I | 95 | 47.5 | 50 | 97.20 | Black |
| II | 97 | 48.5 | 50 | 102 | Black |
| Avg. | 96 | 48.75 | 50 | 98.35 | Black |

The ash value of Tamra Bhasma is significantly higher (69.00% w/w) in comparison to Somanathi Tamra Bhasma. Acid insoluble ash and Cu content were respectively 04.69% w/w and 28.30% w/w which were higher to that of Somanathi Tamra Bhasma. Trace Hg content found in Tamra Bhasma whereas no Hg content was found in Somanathi Tamra Bhasma.

## CONCLUSION

According to conceptual study Somanathi Tamra Bhasma is first time described in Rasendra Chudamani by Acharya Somadeva.

In Pharmaceutical study, preparation of Somanathi Tamra Bhasma was found quiet easier than the preparation of Tamra Bhasma.

Somanathi Tamra Bhasma has been standardized in terms of time and temperature i.e.

Mrudu Agni : 178°c to 216°c (4 hours)
Madhyamagni : 375°c to 411°c (4 hours)
Tivragni : 545°c to 551°c (4 hours)

- Tamra Bahsma has been standardized in term of temperature after 3 repeated Urdhvapatana procedure of Damaru Yantra. Temperature given in horizontal muffle furnace –

1st Puta → 900°c 2nd Puta → 750°c
3rd Puta → 550°c 4th Puta → 550°c
5th Puta → 550°c 6th Puta → 550°c

- Analytically in Tamra Bhasma ash value is 69.00%w/w, acid insoluble ash 4.69%w/w copper content 28.30%w/w, mercury as trace element, whereas in Somanathi Tamra Bhasma ash value is 46.22%w/w, acid insoluble ash 2.63%w/w, copper content 23.31%w/w and arsenic content 21.37%w/w.

References


- RasendraCudamani14/65-68, Commentary by Dr. Siddhinandan Mishra, 3rd edition, Chaukhamba Orientalia, Varanasi.
- Rasa Tarangini 17/19-22, commentary by sh Haridútta Shastri, Edited by Kashinath Shastri, with IIth edition published by Motilal Banarasidas, Delhi.




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridw

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## परीक्षोपयोग प्रश्नोत्तरी

1. प्र०:- उपनिषद् कितने हैं ?
   (a) 100 (b) 108
   (c) 111 (d) 121
2. प्र०:- मेद धातु के भौतिक गुण कौन से हैं ?
   (a) द्रव व श्लक्षण (b) द्रव व मृदु
   (c) मृदु व श्लक्षण (d) स्थूल व श्लक्षण
3. प्र०:- सुश्रुत ने सर्वप्रथम कौन-सी तंत्र युक्ति बतलायी है ?
   (a) पदार्थ (b) अपवर्ग
   (c) अतिदेश (d) अधिकरण
4. प्र०:- पांचभौतिक दृष्टि से आहार के पांच विपाक का संकेत किस ग्रन्थ में मिलता है ?
   (a) भानुमती टीका (b) चरक
   (c) अष्टाङ्ग (d) भावप्रकाश
5. प्र०:- इक्षुरस मधुर होते हुए भी किस कारण से वात का प्रकोप करता है ?
   (a) गुण (b) वीर्य
   (c) विपाक (d) प्रभाव
6. प्र०:- चरक ने उपमान का उल्लेख किस के अन्तर्गत किया है ?
   (a) प्रमाण (b) तन्त्रयुक्ति
   (c) वादमार्ग (d) तंत्रदोष
7. प्र०:- गुड़ किस आहार वर्ग का द्रव्य है ?
   (a) कृतान्न (b) आहारोपयोगी
   (c) मद्य (d) इक्षु
8. प्र०:- वेपथु किस ज्वर का लक्षण है ?
   (a) वातज (b) पित्तज
   (c) कफज (d) मानसिक
9. प्र०:- एक मुहूर्त में कितनी काष्ठा होती है ?
   (a) 1 (b) 2 (c) 3 (d) 4
10. प्र०:- महाभारत में दिवोदास का उल्लेख कितने स्थलों पर मिलता है ?
    (a) 2 (b) 4 (c) 10 (d) 12
11. प्र०:- आशुगुण में किस महाभूत की अधिकता होती है ?
    (a) वायु (b) जल
    (c) अग्नि (d) आकाश
12. प्र०:- छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार जठराग्नि पाक के पककर भोजन कितने भागों में विभक्त हो जाता है ?
    (a) एक (b) दो (c) तीन (d) चार
13. प्र०:- चिकित्साकलिका के लेखक किसके पुत्र थे ?
    (a) तीसट (b) चन्द्रतट
    (c) नरदत्त (d) चक्रपाणि
14. प्र०:- न्यायसूत्र में छल के कितने भेद बताए हैं ?
    (a) 2 (b) 3 (c) 4 (d) 5
15. प्र०:- किस बौद्धग्रन्थ में चरक ने युक्ति नामक प्रमाण को चरक के मत के रूप में प्रस्तुत किया है ?
    (a) विनय पटक (b) तत्वसंग्रह
    (c) सुत्त पिटक (d) उक्त सभी
16. प्र०:- सीधु किस गुण से वात का प्रकोप करता है ?
    (a) रूक्ष (b) लघु
    (c) शीत (d) विशद
17. प्र०:- कौन-सा लवण उष्ण नहीं होता ?
    (a) सौवर्चल (b) विड्
    (c) सामुद्र (d) सैन्धव
18. प्र०:- आनन्द कन्द के लेखक कौन थे ?
    (a) सोमदेव (b) मन्थान भैरव
    (c) नागार्जुन (d) प्रताप
19. प्र०:- हठयोग प्रदीपिका ग्रन्थ में नाथसिद्धों की गणना प्रसङ्ग में कितने नाथों का उल्लेख किया ?
    (a) 4 (b) 5. (c) 6 (d) 7
20. प्र०:- परापरभेदतः रस तंत्रम् ग्रंथ में कुल कितने श्लोक हैं ?
    (a) 10000 (b) 20000
    (c) 25000 (d) 30000
21. प्र०:- 'अवामि' किस परीक्षा के लिए प्रयुक्त हुआ है?
    (a) भस्म (b) अवलेह
    (c) चूर्ण (d) कल्क
22. प्र०:- करहाटिका किस का पर्याय है ?
    (a) कपर्द (b) मूषा
    (c) शंख (d) चित्रा
23. प्र०:- समीर पन्नग रस की मात्रा क्या है ?
    (a) ½ – 2 रत्ती (b) 2-3 रत्ती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(c) 3 रत्ती (d) 4 रत्ती

4. प्र०:- क्रिया हीन बन्ध क्या है ?
(a) शुद्ध पारद को अशुद्ध धातुओं से बांधना
(b) शंख भस्म के साथ पारद प्रयोग
(c) शुक्ति का पारद के साथ प्रयोग
(d) जलौका सेवन के बाद पारद का प्रयोग

5. प्र०:- चरक संहिता में कैलाश को किस वन के समान कहा है ?
(a) नंदन (b) चैत्ररथ
(c) हिमवत् (d) हिमवन

6. प्र०:- कंटकारी घृत किस रोगाधिकार का है ?
(a) रक्तपित्त (b) कास
(c) योनिव्यापद (d) अम्लपित्त

7. प्र०:- शतावरी घृत किस रोगाधिकार का है ?
(a) अम्लपित्त (b) ज्वर
(c) कास (d) श्वास

8. प्र०:- मदनफल की उत्कारिका योग की संख्या कितनी है ?
(a) 10 (b) 20 (c) 30 (d) 40

9. प्र०:- किस रोग में चरक ने वमन निर्दिष्ट किया है मगर सुश्रुत ने नहीं ?
(a) पाण्डु (b) अधोगत रक्त पित्त
(c) मुख प्रसेक (d) गलशुण्डिका

10. प्र०:- पित्त प्रधान ज्वर में कौन-सा उपक्रम उचित है ?
(a) वमन (b) विरेचन
(c) शिरोविरेचन (d) नस्य

11. प्र०:- नित्य विरेचन किसमें करवाने का निर्देश है ?
(a) अर्श (b) भगन्दर
(c) उदररोग (d) कुष्ठ

12. प्र०:- लिकुच किस स्कन्ध का द्रव्य है ?
(a) अम्ल (b) मधुर
(c) तिक्त (d) कषाय

13. प्र०:- फलघृत किस रोग अधिकार का है ?
(a) योनिशूल (b) योनिव्यापद
(c) अनातर्व (d) श्वेत प्रदर

34. प्र०:- किस आभूषण का उल्लेख चरक में हुआ है ?
(a) मुक्तावली (b) कंगन
(c) अंगुठी (d) पायल

35. प्र०:- उरभ्र के मांस का प्रयोग किस ऋतु में बताया ?
(a) वर्षा (b) शरद
(c) हेमन्त (d) शिशिर

36. प्र०:- नकुल के मांस का प्रयोग किस ऋतु में करना चाहिए ?
(a) विसर्प (b) प्रमेह
(c) कुष्ठ (d) यक्ष्मा

37. प्र०:- कफप्रसेक किस पाण्डु का लक्षण है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) रक्तज

38. प्र०:- कण्ठधूमायन किस रोग का पूर्वरूप है ?
(a) अम्लपित्त (b) अजीर्ण
(c) आनाह (d) रक्तपित्त

39. प्र०:- विषम वेग किस ज्वर का लक्षण है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) सन्निपातज

40. प्र०:- मांस धावन समान मल किस अतिसार का लक्षण है ?
(a) साध्य (b) याप्य
(c) कृच्छसाध्य (d) असाध्य

41. प्र०:- तृष्णा, आलस्य व बलक्षय किसका पूर्वरूप है ?
(a) अतिसार (b) ग्रहणी
(c) पाण्डु (d) कामला

42. प्र०:- विरसता किस अरोयक का लक्षण है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) सन्निपातज

43. प्र०:- तमोगुण बहुल द्रव्य कौन-सा है ?
(a) पृथिवी (b) आकाश
(c) वायु (d) अग्नि

44. प्र०:- किसके कारण उत्पन्न होने वाला अपतानक असाध्य होता है ?
(a) गर्भपात (b) रक्त का अधिक स्राव
(c) अभिघात (d) उक्त सभी


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



45. प्र०:- अङ्गमर्द किसका लक्षण है ?
(a) आमवात (b) वातरक्त
(c) सन्धिवात (d) पर्वशूल

46. प्र०:- कृशरा अतिसेवन किस शूल का निदान है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) सन्निपातज

47. प्र०:- किस प्रकार के सत्त्व वाले व्यक्ति को उन्माद होता है ?
(a) अल्प (b) मध्य
(c) उत्तम (d) उक्त कोई नहीं

48. प्र०:- चरक को किसका राजवैद्य भी कहा जाता है ?
(a) कनिष्क (b) पातञ्जलि
(c) पाणिनि (d) बौद्ध

49. प्र०:- गर्भाधारण से पूर्व मंत्रोच्चारण का विधान चरक के किस स्थान में बताया गया है ?
(a) सूत्र (b) निदान
(c) विमान (d) शारीर

50. प्र०:- चरक ने किष्कु का उल्लेख किस संदर्भ में किया है ?
(a) जेन्ताक स्वेद (b) संकर स्वेद
(c) पिण्ड स्वेद (d) अवगाह स्वेद

## Answer-Keys

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| (1) | B | (2) | A | (3) | D |
| (4) | A | (5) | B | (6) | C |
| (7) | D | (8) | A | (9) | C |
| (10) | B | (11) | A | (12) | C |
| (13) | A | (14) | B | (15) | B |
| (16) | A | (17) | D | (18) | B |
| (19) | D | (20) | C | (21) | A |
| (22) | B | (23) | A | (24) | A |
| (25) | A | (26) | B | (27) | A |
| (28) | B | (29) | A | (30) | B |
| (31) | C | (32) | A | (33) | B |
| (34) | A | (35) | B | (36) | D |
| (37) | C | (38) | D | (39) | A |
| (40) | D | (41) | B | (42) | B |
| (43) | A | (44) | D | (45) | A |
| (46) | C | (47) | A | (48) | A |
| (49) | D | (50) | A | | |

द्वारा डा० अनूप कु० गक्खड़
व
डा० मांका रयात
दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज,
जालन्धर शहर - 144008

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आपके अनुभूत प्रयोग

## रक्ताल्पता का सस्ता व सफल आयुर्वेदीय प्रयोग

भारत में आज रक्ताल्पता के 80 प्रतिशत रोगी लते हैं इसका मुख्य कारण पोषक तत्वों की कमी ही है, नको आयुर्वेदीय चिकित्सा मिले तो ये अधिकतर ठीक हो कते हैं । रक्ताल्पता के आधुनिक चिकित्सा प्रयोग अस्थाई प्रतिकूल सिद्ध हो रहे हैं क्योंकि उनका आंतों में वशोषण सही नहीं होता हैं । मेरे जीवन का यह अमूल्य योग जो शाश्वत आशुफलदायी है । निम्नोक्त योग बनवाकर ायुर्वेद औषधालयों में निःशुल्क वितरण करें तो जन ाधारण को अधिक लाभ प्राप्त होगा ।

म्न लाभ और मिलेंगे -

आयुर्वेद विभाग को कार्य प्रसिद्धि मिलेगी ।

आयुर्वेद का प्रचार होगा ।

. राज्य सरकारों व केन्द्र सरकार को फायदा होगा क्योंकि इन गोलियों की एलोपैथिक की तरह एक्सपायर डेट नहीं होगी ।

ूल्य भी स्वल्प होगा

. एलोपेथिक आयरन की गोलियों से अधिकतर रोगियों को उल्टी हो जाती है जो इस प्रयोग से नहीं होगी ।

. रोगियों को अधिक तथा स्थाई लाभ होगा ।

. यह प्रयोग गर्भवती महिलाओं व शिशुओं के लिए भी निरापद रहेगा ।

योग - स्त्री पुरुषों के लिए -

| | | |
|---|---|---|
| 1. हल्दी | 2. दारू हल्दी | 3. हरड |
| 4. बहेडा | 5. कुटकी | 6. गिलोय |
| 7. गिलोय | 8. लौह भस्म | 9. कासिस भस्म |
| 10. पुनर्नवास म० | 11. एलवा । | |

(काष्ठ औषधियों का कपड़ छान चूर्ण) सभी समान भाग लेकर चीनी की चासनी में मिलाकर 1-1 ग्राम की मशीन की गोलियां बनावायें तथा 20-20 ग्राम व 50-50 ग्राम की पैंकिग बनवायें ।

बच्चों के लिए

1. उपरोक्त योग में लौह भस्म की जगह पर मण्डूर भस्म मिलवायें तथा आधा-आधा ग्राम की गोलियां बनवायें ।

**नोट** - ये गोलियां आयुर्वेदिक व एलोपेथिक दोनों ही चिकित्सालयों में निःशुल्क वितरण करवायें । यह आयुर्वेदिक प्रचार के साथ-साथ अधिक उपयोगी होगी ।

**प्रयोग विधि** - 1-1 गोली सुबह रात्रि दूध या पानी से तीन माह तक ।

**पथ्य** - पालक गाजर मीठे फल हरी सब्जी अधिक लेवें ।

**अपथ्य** - हरी मिर्च, कैरी, अमचूर, इमली, काचरी नहीं लेवें ।

**लाभ** - रक्ताल्पता, मंदाग्नि, निर्बलता, ज्वर, यकृत, वृद्धि इत्यादि में अति उपयोगी ।

नोट -

1. इस निरापद प्रयोग को जन साधारण के लिए निःशुल्क देने की राज्य सरकार को योजना बनानी चाहिए ।
2. डॉक्टर की रिपोर्ट के अनुसार पोषाहार के साथ ही 1-2 गोली स्कूलों में ही बच्चों को प्रतिदिन देवें । 2-3 माह तक ।
3. नर्सिंग स्टॉफ, ए.एन.एम. महिला स्वास्थ्य विजिटर आदि प्रत्येक गर्भवती महिलाओं का पता लगाकर 7-7 दिनों की गोलियां देवें । 2-3 माह तक तथा नाम पता आदि रिकार्ड रखें ।

ऐलोपेथिक में रक्ताल्पता के मुख्य दो भेद -

1. Macrocytic Anemia (वृहत लोहित कोशिका) जन्य रक्ताल्पता - यह रक्ताल्पता का समूह है जिसमें रक्त कण (Abnormally large) असामान्य रूप से बढ़ जाते हैं अर्थात् बड़े हो जाते हैं । इसमें जीभ (Tongue) मोटी हो जाती है । यह अवस्था तब उत्पन्न होती है जब विटामीन $B_{12}$ व Folic Acid की कमी हो जाती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आपके पत्र

सेवा में,

श्रीमान राज्यपाल महोदया जी
राजस्थान सरकार जयपुर, राजस्थान
श्रीमान सचिव, जन निराकरण विभाग, राजस्थान सरकार
श्रीमान शासन सचिव चिकित्सा विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर राजस्थान

द्वारा

श्रीमान् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०,
पटना-800 001

सन्दर्भ :- Right to Information Act, 2005

श्रीमान् जी, डा० सुनील राज व डा० (श्रीमती) गीता गुप्ता का आयुर्वेद रत्न परीक्षा के आधार पर पंजीयन शुल्क जमा करने के उपरान्त पंजीयन संख्या आवंटित न करने के ऐवज में हरजाना व अविलम्ब पंजीयन संख्या आवंटित करने हेतु

राज्यपाल राजस्थान सरकार के द्वारा जन निराकरण विभाग राजस्थान सरकार जयपुर के डायरी संख्या 86 दिनांक 4.3.02 को शासन सचिव चिकित्सा विभाग राजस्थान सरकार, जयपुर के अन्तर्गत मामला लम्बित है ।

प्रार्थी ने डिग्री की मान्यता चिकित्सीय अधिनियम के तहत पुष्टि हेतु दस्तावेज प्रस्तुत की है ।

Right to Information Act, 2005 के तहत प्रार्थी को नये पते पर की गई कार्यवाही की सूचना दे । अगर सूचना के प्राप्त करने के लिए कोई रकम निर्धारित है तो अविलम्ब सूचित करें ताकि प्रार्थी जमा कराकर सूचना प्राप्त कर सके ।

नया पता :-

**डा० सुनील राज, डा० (श्रीमती) गीता गुप्ता**
मुख्य डाकघर के पास
अर्चना कलर लैब के बगल में
बीकानेर राजस्थान - 334001

---

## आपके अनुभूत प्रयोग का शेषांश

इसमें यकृत चिकित्सा तथा Liver Exctract व पालक पत्ती का अधिक प्रयोग किया जाता है । इसमें रक्त की Figures 94 cubic microns से ऊपर (अधिक) होता है ।

2. Macroyctic Anemia (लघु लोहित कोशिका) रक्ताल्पता - यह एक रक्ताल्पता का समूह है जिसमें रक्त कण (Abnormally Small) असामान्य रूप से छोटे होकर संख्या में बढ़ जाते हैं । इस Hypochronic Anaemia कहते हैं । इसमें स्वास्थ्य दुर्बल हो जाता है तथा उठते बैठते समय आंखों के आगे अंधेरा आता है Loss of Appetite indigestion भूख की कमी, अपचन, Chronic Abdominal Pain - उदर शूल, Constipation - विबन्ध (कब्ज), Headache - शिर दर्द, menstrual Disorder - स्त्रियों में ऋतु श्राव, (M.C.) विकार Heamic muramur on Heart - हृदय में मर्मर आवाज Splean Enlarge - प्लीहा वृद्धि, Pollar - सफेद चेहरा, Weakness - कमजोरी, Tongue sored - जीभ पर वर्ण व जीभ का सफेद होना Difficulty in swallowing - निगीरण में कठिनाई, Spoon Shaped nails - चम्मच के आकार के नख (उपर से उठे हुए) यह रोग स्त्रियों में आर्तवाधिक्य तथा गर्भावस्था में बढ़ जाता है । मुख द्वारा अधिक लौह (Iron) देने पर घट जाता है ।

वैद्य विजय शर्मा
पो० - बीदासर
जि० चुरू (राज०)

CC-0: In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# आयुर्वेद वैज्ञानिक चिकित्सा प्रद्धति

*जुलाई, 1966*

देश के औषधि-विज्ञान में आयुर्वेद का मुख्य योगदान रहा है । यह चिकित्सा और औषधि का एक वैज्ञानिक तरीका है । आयुर्वेद अपने में एक प्राणवान शक्ति है, जो सदियों से अनेक घात-प्रतिशत के बावजूद उसे जीवित रखे हुए है । हजारों वर्षों से यह राज्याश्रय से वंचित रहा है सही, किन्तु आज भी देश की जनता लाक्षाधिक संख्या में इस चिकित्सा पद्धति से लाभान्वित हो रही है । यह इसकी जीवनीशक्ति का प्रमाण है ।

श्री जगजीवन राम
श्रम मंत्री एवं उसके बाद
उप प्रधानमंत्री
भारत सरकार

## प्राणाचार्य पं० दुर्गा प्रसाद शर्मा, आयुर्वेदाचार्य की काव्य शुभकामना

### नेपाल-नरेश श्री 5 महेन्द्र की वर्ष गांठ पर समर्पित काठमांडू में श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० का आयोजन

**विशेष प्रतिनिधि द्वार)**

काठमांडू (नेपाल) । श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के निदेशक, वैद्यराज प्राणाचार्य पं० दुर्गा प्रसाद शर्मा, आयुर्वेदाचार्य, अध्यक्ष, बिहार राज्य आयुर्वेदिक-यूनानी अधिकाय तथा कार्यकारी अध्यक्ष, भारतीय चिकित्सा-प्रोन्नति-परिषद् ने नेपाल के महाराजाधिराज श्री महेन्द्र वीर विक्रम शाहदेव के 47 वें जन्मदिवस (11जून 1966) के अवसर पर जो भावमयी काव्य-शुभकामना सर्वोत्तम सुलभ-कागज पर सुमुद्रित करायी थी और जिसके साथ महाराजाधिराज तथा महारानी अधिरानी के भव्य चित्र भी मुद्रित थे, उसका समर्पण-समारोह काठमांडू में गत 11 जून 1966 को सम्पन्न हुआ । पं० शर्मा की ओर से महाराजाधिराज के करकमलों में काव्य-शुभकामना का समर्पण श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के पटना-निर्माण केन्द्र के एजेन्सी मैनेजर श्री दयाशंकर श्रीवास्तव ने किया ।

आरम्भ में श्री श्रीवास्तव ने महाराजाधिराज को माल्यार्पण किया और तदुपरान्त महाराजाधिराज एवं महारानी अधिरानी का भव्य एवं विशालतम बहुरंगा सहचित्र श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० की ओर से समर्पित किया, जिसे रजत मंडित किया गया था । तदन्तर आपने पं० शर्मा की ओर से सुलिखित, सुमुद्रित एवं सुमंडित काव्य-शुभकामना समर्पित की ।

दूसरे दिन, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० की ओर से इन सामग्रियों की प्रतियों का समर्पण नेपाल-मंत्रिपरिषद् के सदस्यों तथा मुख्य न्यायाधीश माननीय श्री भगवती प्रसाद सिंह एवं राष्ट्रीय पंचायत के अध्यक्ष माननीय श्री राजेश्वर देवकोटा के करकमलों में किया गया ।

नेपाल-मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष माननीय श्री सूर्य बहादुर थापा ने इन सामग्रियों को देखकर श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के नेपाल-प्रेम की प्रशंसा की । मंत्रिपरिषद् के उपाध्यक्ष एवं परराष्ट्र मंत्री माननीय श्री कीर्तिनिधि विष्ट, भूमि सुधार-मंत्री माननीय श्री खड्ग बहादुर सिंह, उद्योग मंत्री माननीय श्री नागेन्द्र प्रसाद रिजाल, स्वास्थ्यमंत्री माननीय श्री शैलेन्द्र कुमार, उपाध्यक्ष यातायात-मंत्री माननीय श्री केदारमान व्यथित, सिंचाई-मंत्री माननीय श्री भुवन लाल प्रधान, शिक्षा-मंत्री माननीय श्री पुष्करनाथ उप्रती, रक्षामंत्री माननीय श्री गिरी प्रसाद बुढ़ा की, वनमंत्री माननीय श्री शमशेर बहादुर सिंह और प्रचार-मंत्री माननीय श्री वेदानन्द झा ने भी श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के इस समर्पण पर हर्ष प्रकट किया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आरोग्य समाचार
## अखबार की कतरनों से

### बर्ड फ्लू से मानव को खतरा नहीं

नेचर (Vol. 440, No. 7085 मार्च, 2006) एवं सायन्स (23 मार्च, 2006) में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार H5 N1 नामक वायरस मानव-शरीर में श्वास नली के निचले भाग में प्रभावित करता है । परिणामत: संक्रमण या कफ के द्वारा फैलने की सम्भावना कम होती है । इसके विपरीत मानव फ्लू नाक एवं गले के द्वारा अपना वायरस फैलाता है जिससे मानव से मानव में संक्रमण का खतरा फैलता है । अबतक आंकड़ों के अनुसार सम्पूर्ण विश्व में 200 मनुष्य बर्ड फ्लू से पीड़ित माने जाते हैं, किन्तु मनुष्य से मनुष्य में संक्रमण फैलने का खतरा अबतक सामने नहीं आया है ।

### नींद की गोलियां जानलेवा फिर भी खपत ज्यादा

दैनिक जनसत्ता में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार पिछले पांच साल के दौरान पूरी दुनिया में नींद की गोलियां लेने वालों ने इस पर अरबों डालर से ज्यादा की राशि खर्च की है । मगर ये गोलियां अनिद्रा की समस्या दूर करने में कम और बाकी बीमारियों को न्यौता देने में ज्यादा मददगार साबित होती हैं ।

यह बात कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डेनियल कृप्के ने अपने अध्ययन के निष्कर्ष 'द डार्क साइड आफ स्लीपिंग पिल्स' में कही है । छह साल तक चले इस अध्ययन में कृप्के के नेतृत्व में अनुसंधानकर्ता ने नींद की गोलियों का सेवन करने वाले दस लाख से ज्यादा लोगों की जांच की ।

अध्ययन में जैव तकनीक रिसर्च कंपनी बायोमार्केट के हवाले से कहा गया है कि 2004 में ऐंबियन (जोल्पिडेम) नामक नींद की गोली खरीदने पर दुनिया भर के लोगों ने दो अरब डालर से अधिक की राशि खर्च की । 2005 में इस राशि में मामूली इजाफा हुआ ।

बायोमार्केट ने इस महीने के शुरू में अपनी एक रिपोर्ट में कहा है कि ऐंबियन का इस्तेमाल करने वाले लोग को अनिद्रा और नींद में चलने की बीमारी होने का खत अधिक होता है ।

स्त्री रोग विशेषज्ञ रजनी दत्त कहती हैं कि नीं की गोलियां सीधे स्नायु तंत्र को शिथिल करती है इसलि अगर लम्बे समय तक इन गोलियों का सेवन किया जाए त स्नायु तंत्र संबंधी बीमारियां होने का खतरा बढ़ जाता है इसके अलावा इनमें जो तत्व होते हैं, उनके कई बार गह दुष्प्रभाव भी पड़ते हैं । रजनी यह भी कहती हैं कि नीं की गोलियां लेना आज आम बात हो गई है । आधुनिव जीवन शैली व्यक्ति को इतना तनाव और थकान देती है कि लोगों को नींद की गोलियों में राहत नजर आती है । लेकि अपनी दिनचर्या में मामूली फेरबदल कर नींद की गोलिय से बचाव किया जा सकता है ।

इसका इस्तेमाल करने वाले 20 से 44 साल क उम्र के लोगों की संख्या 2000 की तुलना में 2005 में बढ़ कर दुगुनी हो गई । आम तौरपर अनिद्रा को बड़ों की बीमारी माना जाता है । लेकिन 10 साल से 19 साल के युवा भी इसके शिकार हो रहे हैं और वे नींद की गोलियां लेते हैं 30 साल से 102 साल की उम्र के दस लाख से भी ज्याद लोगों पर अध्ययन किया गया । नींद की गोलियों के सेवन को अध्ययन में धूम्रपान की तरह ही खरतनाक बताया गय है । नींद के लिए खाई जाने वाली स्लीपिंग पिल्स सुखद नींद तो देती है लेकिन साथ ही रक्तचाप, हृदयाघात, सिरदर्द के साथ-साथ तंत्रिकाओं की समस्या भी दे जाती हैं ।

प्रोफेसर कृप्के ने कहा है कि अगर नींद की गोलियां गर्भावस्था में ली जाएं तो गर्भस्थ शिशु पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और कई बार तो वह गंभीर विकृतियों का शिकार भी हो सकता है ।

कई बार डाक्टर कुछ समय तक ही नींद की गोलियां लेने का सुझाव देते हैं लेकिन कई लोग इसके बाद भी इनका सेवन करते हैं और इनके आदी बन जाते हैं । लम्बे समय तक नींद की गोलियां लेने के कारण रक्त नलिकाओं में थक्के बन जाते हैं । याददाश्त कमजोर हो जाती है । आलस दूर नहीं होता और बेचैनी व सिरदर्द की शिकायत आत हो जाती है जिससे दिनचर्या प्रभावित होती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## 6 Book of life' opened up Last chromosome in human genome is sequenced

Scientists have reached a landmark point n one of the most important scientitic projects by sequencing the last chromosome in the Human Genome, the so called "book of life".

Chromosome 1 contains nearly twice as many genes as the average chromosome and makes up 8 percent of the human genetic code. It is packed with 3,141 genes and linked to 350 illnesses including cancer, Alzheimer's and Parkinson's disease.

"This achievement effectively closes the book on an important volume of the Human Genome Project", said Dr. Simon Gregory who headed the sequencing project at the Sanger Institute in England. The project was started in 1990 to identify the genes and DNA sequences that provide a blueprint for human beings. Chromosome 1 is the biggest and contains, per chromosome, the greatest number of genes.

"Therefore it is the region of the genome to which the greatest number of diseases have been localised," added Dr. Gregory, from Duke University in the U.S.

The sequence of chromosome 1, which is published online by the journal Nature, took a team of 150 British and American scientists 1 years to complete.

Researchers around the world will be abl to mine the data to improve diagnostics an treatments for cancers, autism, mental disorder and other illnesses.

Chromosomes, which are found in th nucleus of a cell, are thread-like structures tha contain genes, which determine the characteristic of an individual. The human genome has a estimated 20,000 to 25,000 genes. The sequencin of chromosome 1 has led to the identification more than 1,000 new genes. "We are moving int the next phase which will be working out what th genes do and how they interact," Dr. Gregory sai

The genetic map of chromosome 1 ha already been used to identify a gene for a commo form of cleft lip and palate. It will also improv understanding of what processes lead to genet diversity in populations, according to Dr. Gregor

Each chromosome is made up of molecule of DNA the shape of double helix whi is composed of fo chemical base represented by th letters A (adenine T (thymine), (guanine) and (cytosine). Th arrangement, sequence, of t letters determin the cell's gene code- Reuters

( W

courtesy from T Hin

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

## New Delhi

## All India Ayurvedic Congress

Dhanwantari Bhawan, Rd. No. 66, Punjabi Bagh (West),
New Delhi 0 110026 (India)

## REQUEST FOR ADVERTISEMENT &/ OR STALL BOOKING

The All India Ayurvedic Congress, established in 1907, is celebrating its 'Centenary Celebrations' in the year 2007 at Delhi (India). The All India Ayurvedic Congress has been working for the protection, propagation and promotion of the eternal science of Ayurved since the very beginning of 20th Century. This organisation is spread almost all over India having branches in every state of Indian Union. It is the sole representative body of the Vaidyas of the country.

History bears testimony to the fact that the foreign countries of the East as well of the West, also accepted Ayurved in course of time.

Plants have been drawn up to celebrate the remarkably eventful 100 th year as "CENTENARY CELEBRATIONS" of its existence, in a befitting manner by holding various functions at DELHI (India) and in foreign countries viz. - Sri-Lanka, Nepal, Thailand, Myanmar, Mauritius, Japan, U.S.A., Russia, Canada, Switzerland, Australia, Britain, Germany, Italy, Brazil, Netherland etc. As a part of these programmes :-

(i) Scientific historical review of various aspects of Ayurved in past & present shall form the main theme of the Literary Session & for this achievement we plan to publish a "CENTENARY CELEBRATIONS MEMORIAL EPIC" in volumes, carrying contributions from eminent academicians and scholars, on various aspects of Ayurved and allied subjects. The " CENTENARY CELEBRATIONS MEMORIAL EPIC" in volume shall be circulated among the millions of Vaidya and lovers of Ayurved. In addition, it shall fir its way in foreign countries viz., - Sri-Lanka Nepal, Bangladesh, Mauritius, Thailand Myanmar, Japan, U.S.A., Russia, Canada Switzerland, Australia, Britain, Germany, Ita Brazil and Netherland etc. <u>You are requeste to send an advertisement for publication in th " CENTENARY CELEBRATIONS MEMORIA EPIC" volumes by 30 July 2006.</u>

(ii) We also plan to "exhibit a "GRAN AYURVED-EXHIBITION". In this exhibition, w intend to exhibit articles on various aspects AYURVED and allied subjects viz., (i) Herb plants alongwith medicinal articles, includin their derivatives, Aromatic oils. Gels & Lotion Herbal beauty & health care product Kayakalp Slimming and Body care, Person care through acupressure, Pranayam healing, Reflexology, Energy & vitalit enhancers shall form, one of the segments the exhibition, (ii) Manufactured medicines wit Machinery & equipments & accessory, (ii Research-work-Progress, (iv) Education Books & manuscripts, (v) Ayurved in Foreig Countries (vi) Utility of Computer in Ayurve (vii) Ayurved & its Utility applied to Tourism (vi Panch-Karma Appliances & Equipments et The visual affect of the exhibition shall be effectiv and it shall be extensive among the millions Vaidyas and lovers of Ayurved. For this, we ar inviting also foreign countries viz., - Sri- Lanka Nepal, Bangladesh, Mauritius, Thailand Myanmar, Japan, U.S.A., Russia, Canada Switzerland, Australia, Britain, Germany, Italy Brazil and Netherland etc. to participate <u>Booking is open upto 30 July 2006.</u>

Your Manufacturing/Medicinal plants Hospital cum Research/Publications/Panch Karma / Educational unit, is one of the pioneer

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



nd you & your country-men are well-wishers f AYURVED. Hence for the cause of Health-cience and for the propagation and promotion of our unit, You are requested to send an dvertisement for publication in the CENTENARY CELEBRATIONS MEMORIAL EPIC" volumes and/or book a Stall of your unit n the Exhibition, alongwith a proposal of articipation of atleast one Representative of our unit, by 30 July 2006.

All Advertisement-Fees and/or Stall-Booking-Fees, should be sent forth by Bank Draft/Cheque (Payable at Delhi) in name of "All India Ayurvedic Congress, Delhi." Amounts paid, are exempted from Income-Tax, under Section U/s 80G of Income Tax Act.

The Advertisement should be clearly written or typed, if possible to send Design, it shall be appropriate and in case of the Stall-Booking please mention the names of the articles to be exhibited.

Your Sincerely.
(Vaidya Ram Prasad Mishra)
General Secretary

Advertisement Rates for publications in the "CENTENARY CELEBRATION MEMORIAL EPIC" volumes are as follows :- (Last date is 30 July 2006).

| S.No. | Page | Rate | | |
|---|---|---|---|---|
| 1. | 4th Cover Page (Coloured) | Rs. | 51,000.00 | |
| 2. | 2nd & 3rd Cover Page (") | Rs. | 35,000.00 | (each) |
| 3. | Full Page Colour | Rs. | 25,000.00 | |
| 4. | Half Page Colour | Rs. | 13,000.00 | |
| 5. | Full Page B&W | Rs. | 10,000.00 | |
| 6. | Half Page B&W | Rs. | 6,000.00 | |
| 7. | Quarter Page B&W | Rs. | 4,000.00 | |
| 8. | Multi colured Full Page advertisement | As per negotiations | | |

Stall-Booking Fees for exhibition in the "Grand Ayurved Exhibition" are as follows :- (Last date in 30 July 2006)

| S.No. | Place | Size | Rate | |
|---|---|---|---|---|
| 1. | Central Main Stall | 6 x 4½ Meter | Rs. | 35,000.00 |
| 2. | Central Stall | 6 x 3 Meter | Rs. | 25,000.00 |
| 3. | Entrance First Stall (in Row) | 3 x 3 Meter | Rs. | 30,000.00 |
| 4. | Central Stall in Row A,B,C,D | 6 x 3 Meter | Rs. | 20,000.00 |
| 5. | Stall in Row A,B,C,D | 3 x 3 Meter | Rs. | 15,000.00 |
| 6. | Open Stall in Pavallion | 3 x 3 Meter | Rs. | 5,000.00 |

S.No. 1 to 5 stalls (Fabricated by aluminium an odise Octonorm system with white laminated panels with three sides covered) shall be provided with Electric light connection, 2 Tables, 2 Chairs & (one) name plate on facial side.

N.B. : Exhibition of Company's Banner

1. Inside Auditorium Exhibition Rs. 500/- per sq. feet
2. Campus but outside auditorium Rs. 200/- per sq. feet



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# APPROVAL LETTER FOR ADVERTISEMENT &/OR STALL BOOKING IN GRAND AYURVED EXHIBITION OF

## Centenary Celebrations of All India Ayurvedic Congress, Delhi

Ref. No.:..... Date .....

General Secretary
All India Ayurvedic Congress,
Dhanwantari Bhawan
Road No. 66, Punjabi Bagh (West),
New Delhi - 110026 (India)

Sir,

Thanks for your letter for publication of an advertisement in "CENTENARYCELEBRATIONS MEMORIAL EPIC" Volumes &/or for stall booking in the "AYURVEDIC EXHIBTION" of the Centenary Celebrations of All India Ayurvedic Congress, Delhi.

(i) We are sending the Advertisement-Fee and the matter for publication of the advertisement of our unit/company. Please, publish the advertisement in the above mentioned "CENTENARY CELEBRATIONS MEMORIAL EPIC" Volume. Advertisement Matter, in the form of CD/....., & Advertisement-Fee amounting Rs.....is sent herewith by *Bank Draft/Cheque No.....dated ..... of Bank (name)..... in favour of "All India Ayurvedic Congress, Delhi".

(ii) We are interested in booking a stall in the "GRAND AYURVED EXHIBITON" for exhibition of the ...

..... of our unit/company. Please, book a stall of size
(Nature of article to be exhibited)

.....in the above mentioned " GRAND AYURVED-EXHIBITION" Stall Booking
(Type & Size of Stall)

Fee amounting Rs. ..... is sent herewith by *Bank Draft/Cheque No.....

dated .....of Bank (name)..... in favour of "All India Ayurvedic Congress, Delhi."

Thanks,

Name & Address of Unit / Company :-

.....
.....
.....

Yours,

Signature .....
Name .....
Date .....

Note :

* Bank Draft/Cheque (payable at Delhi) is to be issued in the name of "All India Ayurvedic Congress, Delhi".



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



गुजरात

NATIONAL WORKSHOP
ON
SCOPE AND EMERGING TRENDS IN AYURVEDIC PHARMACY
ON
1ST AUGUST 2006
Second Circular
VENUE
GUJARAT AYURVED UNIVERSITY, JAMNAGAR
Organized by :
Institute of Ayurvedic Pharmaceutical Sciences
(on the eve of 7th Foundation Day)
A.K.Jamal Building, GUJARAT AYURVED UNIVERSITY,
JAMNAGAR, 361 008
Phone :- 0288-2555746, Fax : 0288-2555966
E-mail : iaps@ayurveduniversity.com;
www.iaps.ac.in

Dear Colleagues,

On behalf of the organizing committee of the National Workshop on Scope and Emerging trends in Ayurvedic pharmacy, we have the honour and privilege to invite you to attend this one day workshop on 1st August 2006, on the eve of the 7th Foundation Day of Institute of Ayurvedic Pharmaceutical Sciences (IAPS), the first Ayurved Pharmacy College of its kind in India. The IAPS has been established by Gujarat Ayurved University as a self finance Institute after obtaining NOC from the Gujarat state Government.

National Workshop :

The workshop will be held in three sessions and will have plenary lectures and guest lecturers by eminent scientists working in the field of Ayurvedic Pharmacy. The ensuing workshop mainly concentrates on discussing different issues required for strengthening Ayurvedic formulations for its better acceptance. It will also focus on establishing research methodology for evaluation of Ayurvedic drugs for ultimate achievement of quality products.

Paper presentation :

Since the workshop is of one day only, a few selected papers will be accepted for ora presentation. Therefore, original scientific papers based on Ayurvedic pharmacy are invited from workers in this field. Some papers may b accepted for poster presentation. Last date o receiving abstract is 15th July 2006. Authors o selected papers will be informed accordingly.

Pre-workshop Industrial meet :

Pre-workshop Industrial meet has als been organized on 31st July 2006 afternoon wit an aim to establish link between students an academicians with industrialists and understan requirements of industries. Those interested i participating in this meet should inform according

Phone : (0288) - 2555746
Dr. Rajesh Barvaliya
Mr. Mukesh Nariya
Organizing Secretaries

About Jamnagar :

Jamnagar is a coastal city situated i western part of Gujarat and is well connected wit road and rail to all parts of India. It is also connecte by air to Mumbai. Weather will be pleasant wit temperature quite tolerable during month of Augus This area has many tourists cum religious place in and near to city.

Accommodation :

Modest hostel accommodation will b provided to the delegates on nominal paymen However, those interested in getting hot accommodation, the same will be arranged o actual payment basis, if request is received befor 20th July 2006.

Registration Fee

| | Up to 15th July, 06 | After 15th July 0 |
|---|---|---|
| Delegates | Rs. 200/- | Rs. 250/- |
| Students* | Rs. 150/- | Rs. 200/- |

(*B. Pharm (Ayu) 4th Year students of IAP Internees of G.A.U., PG and Ph.D. Scholars)

NB: Rs. 50/- extra for participating in the Industr meet.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## REGISTRATION FORM

Name : Dr./Mr./Ms. .....

Qualification ..... Designation .....

Address for correspondence .....

.....

.....

.....

Phone Nos. with STD/ISD Code .....

(Office)..... (Residence) .....

(Mob.)..... E-mail .....

Paper Submission for presentation : Yes / No

Title of Paper .....

Accommodation required : Yes / No

Participation in Industrial meet ..... (Yes / No)

**Registration fees details :**

Delegate/Student Rs. .....

Demand Draft No..... Date .....

Bank .....

Branch .....

Details of Journey .....

.....

Signature

1. Payments should be made only by Demand Draft in favour of The Dean, Institute of Ayurvedic Pharmaceutical Sciences, Gujarat Ayurved University, payable at Jamnagar.
2. Only vegetarian food will be served during the Workshop.
3. Student Delegates should attach bonafied certificate from the Head of the Institute.

### WORKSHOP ORGANIZING COMMITTEE

**Patron**

Dr. S.S. Savrikar, Vice-Chanceller
Gujarat Ayurved University, Jamnagar

**Chairman**

Dr. M.N. Gohil, Dean- IAPS

**Organizing Secretaries**

Dr. Rajesh Barvaliya
Mr. Mukesh Nariya

**Members**

Dr. P.P. Sharma - Dean, IPGT & RA
Dr. M.G. Chauhan - Dean, IAMPS
Dr. P.K. Prajapati - Director, Pharmacy
Dr. M.N. Gohil - Principal, GAM
Dr. M.S. Baghel - Director, ICAS
Dr. Arpan Bhatt - Director, MPIYNER
Dr. Bhupesh Patel - Director, Botanical Garde

**Advisory Committee**

Dr. A.J. Baxi - Visiting Professor
Dr. B. Ravishanker - HOD, Pharmacolo
Dr. Hitesh Vyas - Lecturer, Basic Princip

**Consultative Committee**

Shri. R.M. Jhala - Registrar, GAU



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Smt. Vasuben Trivedi - Syndicate Member
Dr. A.R. Trivedi - Senate Member
Dr. Prakash Upadhyay - SFI G.B. Member
Dr. K.L.Koradia - SFI G.B. Member
Shri Nilesh Chandegra - SFI Adm. Officer
Dr. G.L. Atara - Head, Agad Tantra, GAM

**Programme of Workshop**

| | |
|---|---|
| 08.00 - 09.00 AM | Breakfast & Registration |
| 09.00 - 11.00 AM | Inaugural Session with Key note address |
| 11.00 - 11.15 AM | Tea Break |
| 11.15 - 01.00 PM | 1st Scientific Session [Two Guest Speakers] |
| 01.00 - 02.00 PM | Lunch Break |
| 02.15 - 04.00 PM | 2nd Scientific Session [Two Guest Speakers] |
| 04.00 - 04.15 PM | Tea Break |
| 04.15 - 06.00 PM | Paper Presentation |
| 06.00 PM on wards | Valedictory Function |

**IAPS offering following courses**

Diploma in Pharmacy (Ayu.) - D. Pharm. (Ayu.)
Eligibility : 10th Std. Pass
Duration : Two years
Bechelor of Pharmacy (Ayu) - B. Pharm. (Ayu.)
Eligibility : 12th Std pass with science subject
Duration : Four years
Master of Pharmacy (Ayu.) M-Pharm. (Ayu.)
Eligibility : B. Pharm. (Ayu.)/B.Pharm
Duration : Two year

**Highlights of IAPS**

st college of its kind * Pioneer in Ayurved harmacy education * Dedicated faculties * Girls ostel * On campus interview/placement * nternational University campus.

## गुजरात

### न्तर्राष्ट्रीय सेमीनार में वैद्य डी.पी. मेहता सम्मानित

द्वारका निवासी तथा वर्तमान में जामनगर, गुजरात ायुर्वेद विश्वविद्यालय में कार्यरत वैद्य डी.पी. मेहता का न्तराष्ट्रीय सेमिनार में सम्मान किया गया । डी.पी. मेहता 2 वर्षों से जामनगर से द्वारका आकर गायत्री मंदिर के ोषधालय में सेवा प्रदान करते हैं । उनकी इस सेवा की कद्र के रूप में उन्हें मोमेन्टो तथा प्रमाणपत्र देकर गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय के प्रथम वा.चा. विद्वान प्रो० बी.के. ठाकर द्वारा सम्मान्ति किया गया । इस अवसर पर उपस्थित वर्तमान कुलपति डा०एस.एस. आपरीकरण एवं जामनगर के सांसद श्री विक्रम भाई माडम ने बधाई दी । वैद्य डी.पी. मेहता को आयुर्वेद क्षेत्र में विशेष योगदान के बदले राज्यपाल एवं मुख्यमंत्री द्वारा तीन बार सम्मान अवार्ड दिया जा चुका है । उन्हें द्वारका सेवा रत्न की पदवी से भी विभूषित किया गया है ।

### बोराद (जिला - अहमदाबाद में नि:शुल्क आयु० निदान चिकित्सा शिविर

महिला विकास मंडल ट्रस्ट द्वारा आयोजित बोराद में जनता सोसा, में आयुर्वेदीय निदान चिकित्सा शिविर का आयोजन दिनांक 18-05 से 20-05 तक किया गया ।

इस शिविर में सभी प्रकार के रोगियों को आयुर्वेदीय निदान-चिकित्सा नि:शुल्क प्रदान की गई । इस शिविर में स्थानीय वैद्यों एवं अन्य सेवाभावी चिकित्सकों का भारी सहयोग रहा । इस शिविर का आयोजन महिला-विकास मंडल ट्रस्ट के अध्यक्ष श्रीमती रोशनबहेन द्वारा गुजरात प्रांत के आयुर्वेद सम्मेलन के माध्यम से किया गया ।

### ओरोमाँ आयुर्वेदिक पंचकर्म चिकित्सालय एवं संशोधन केन्द्र का उद्घाटन

दिनांक 04-06-06 रविवार के शुभ दिवस पर प०पू० बालयोगी श्री अखिलेश्वर दास जी महाराज के कर कमलों द्वारा वैद्य अरविन्द आर. उपाध्याय एवं वैद्य पारूल वी. पटेल तथा वैद्य चिंतन उपाध्याय के नूतन चिकित्सालय का उद्घाटन किया गया । शुभ स्थल 11-12 सायोना आकेड दिनेश चेम्बर के सामने, नवा बापूनगर अहमदाबाद - 24 ।

## महाराष्ट्र

### पद्मश्री वैद्य सुरेश चतुर्वेदी

पद्मश्री वैद्य सुरेश चतुर्वेदी जी का "राजीव गांधी युनिवसिटी ऑफ हेल्थ सांइसेज", कनार्टक के सिनेट में सदस्य के रूप में मनोनयन महामहिम श्री टी०एन० चतुर्वेदी जी, राज्यपाल, कर्नाटक ने किया है ।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वैद्य जी, राज्यपाल महाराष्ट्र एवं बम्बई अस्पताल के मानद चिकित्सक हैं साथ ही आरोग्य संस्थान ट्रस्ट एवं आयुर्वेद अनुसंस्थान केन्द्र के संचालक एवं संस्थापक हैं, राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ के चिकित्सक गुरू, लुपिन एवं इमामी जैसे कंपनियों के परामर्शदाता एवं धन्वन्तरि मेडिकल फाउंडेशन के उपाध्यक्ष के रूप में कार्य करते हुए पिछले 55 वर्ष से अनवरत कुलाबा से कल्याण एवं विरार तक के 21 से भी अधिक विभिन्न सार्वजनिक दवाखानों के माध्यम से 11 लाख से भी अधिक रुग्णों को अपनी सेवा प्रदान कर चुके हैं ।

ऐसे कर्मठ, बुद्धिमान एवं ज्ञानी व्यक्तित्व के इस मनोनयन हेतु अनेकानेक शुभेच्छा ।

– सम्पादक

## उत्तर प्रदेश

### शोक संवेदना

डा० अश्वनी कुमार पाण्डेय, चिकित्साधिकारी, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, बरसै, हाथरस तथा डा० राकेश कुमार गुप्ता चिकित्साधिकारी, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, द्वयोरख, बुलंदशहर एवं डा० श्रीपाल सिंह सौंलकी चिकित्साधिकारी । सचिव-राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय मैनपुरीनगर को पुनः पुत्री के आकस्मिक निधन पर जनपद शाखा हाथरस शोक व्यक्त करती है, इस कष्टदायी क्षण में हम सब आपके शोक के सहभागी हैं ।

ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह दिवगंत को मोक्ष एवं शान्ति प्रदान करें एवं आपको एवं परिवार को धैर्य प्रदान करें । सुख-दुख, धूप-छांव, यश-अपयश, जीवन-मरण, यह जीवन के अटूट सत्य हैं ।

**(डा० राकेश मोहन शर्मा)**
चिकित्साधिकारी/ सचिव)
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, बरईशाहपुर, हाथरस

## उत्तरांचल

### द्विवार्षिक चुनाव सम्पन्न

आज दिनांक 13 जून 2006 को उत्तरांचल राज्य चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवायें आयुर्वेदिक शाखा-जनपद टिहरी गढ़वाल का द्विवार्षिक चुनाव सभाध्यक्ष श्री राम प्रसाद गौड़ जी की अध्यक्षता में नगरपालिका हाल नरेन्द्रनगर में विधिवत आयोजित किया गया ।

आज के इस अधिवेशन को वैधानिक प्रक्रिया के तहत सम्पन्न कराने हेतु निम्न व्यक्ति मुख्य चुनाव अधिकारी व पर्यवेक्षक बनाये गये ।

1. श्री वाचस्पति रयाल – प्रदेश मंत्री, उत्तरांचल प्रा०शि०सं०
2. श्री रामचन्द्र सिंह गुंसाई – महामंत्री, राजकीय आयुर्वेदिक फार्मेसिस्ट एसोसिएशन उत्तरांचल
3. श्री रविबाबू, अध्यक्ष, उत्तरांचल चतुर्थ वर्गीय राज्य कर्मचारी महासंघ, ब्लॉक शाखा नरेन्द्रनगर, टि०ग०
4. श्री शिवराम थपलियाल, पर्यवेक्षक, जिलामंत्री, उत्तरांचल चतुर्थ वर्गीय राज्य कर्मचारी महासंघ, टि०ग०

उपरोक्त अधिकारियों की देख-रेख में चुनाव सम्पन्न हुआ । चुनाव में निम्न पदाधिकारी चुने गये ।

1. संरक्षक-श्री प्रेम सिंह पुण्डीर रा०आ०चि०. कुँजापुरी, हिण्डोलाखाल, टि०ग०
2. अध्यक्ष-श्री देवेन्द्र दत्त जोशी, रा०आ०चि०भांगला, टि०ग०
3. वरिष्ठ उपाध्यक्ष – श्री पूरण सिंह नेगी कार्यालय जिला आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी टि०ग०
4. उपाध्यक्ष – 1. श्रीमती आशा देवी रा.आ.चि. ढालवाला, टि.ग.
   2. श्री पूरण सिंह कण्डारी, रा.आ.चि. सैंजी काण्डीखाल, टि.ग.
5. मंत्री – श्री कमल किशोर थपलियाल रा.आ.चि., ढालवाला, टि.ग.
6. कोषाध्यक्ष – श्री बालम सिंह नेगी कार्यालय जिला आ. एवं यू.अ. टि.ग.
7. संयुक्त मंत्री – श्री श्याम सिंह रावत रा.आ.चि., मुनिकीरेती, टि.ग.
8. लेखानिरीक्षक-श्री महादेव प्रसाद, बिजल्वाण, रा.आ.चि. मुनिकीरेती, टि.ग.
9. मुख्य सलाहकार – श्री बलवीर लाल, रा.आ.चि. जाजल, टि.ग.
10. सलाहकार – 1. श्री द्वारिका प्रसाद जोशी, रा.आ.चि.,



CC-0, In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



नरेन्द्रनगर, टि.ग.

2. श्री राम कृष्ण बिजल्वाण, रा.आ.चि., पोखरी, टि.ग.

कार्यकारिणी द्वारा मनोनित पदाधिकारी

1. प्रचारमंत्री - 1. श्री पद्म सिंह पुण्डीर, रा.आ.चि., भांगला, टि.ग.
2. कार्यालय अध्यक्ष - श्री हिम सिंह, कैन्तुरा, कार्यालय जिला आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी, टि.ग.
3. संगठन मंत्री - 1 श्री धिरेन्द्र बिष्ट कार्यालय जिला आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी, टि.ग.

   2. श्री मुसद्दी सिंह कैन्तुरा, रा.आ.चि., जाजल, टि.ग.

   3. श्री दिनेश प्रसाद पैन्यूली, रा.आ.चि., शुक्रि, कुड़ियालगांव, टि.ग.
4. 1. श्री श्यामलाल थपलियाल, रा.आ.चि., नरेन्द्रनगर, टि.ग.

   2. श्री हीरालाल बिजल्वाण, रा.आ.चि., धौलधार, टि.ग.

**इसके अतिरिक्त कार्यकारिणी समिति के 5 सदस्य चुने गये ।**

## जिला आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी स्तर की मांगें

**प्रस्ताव सं०-1 चिकित्सालयों में औषधियों एवं साज सज्जा पहुँचाने की व्यवस्था कार्यालय द्वारा किये जाने के सम्बन्ध में ।**

महोदय, संघ माग करता है कि औषधी साज-सज्ज का ढुलान कार्यालय से चिकित्सालयों तक कार्यालय द्वारा करवाया जाये ताकि चिकित्सालों में समय पर सम्मान की प्राप्ति हो सके व बार-बार ढुलान बिलों के भुगतान में जो विलम्ब हो रहे हैं उसके कारण चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों को आर्थिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है जिससे उनका परिवार भी प्रभावित होता है । कार्यालय द्वारा ढुलान कराने पर उपरोक्त समस्या से नहीं जूझना पड़ेगा ।

**प्रस्ताव सं०-2 एक ही कर्मचारी को बार-बार अस्थाई व्यवस्था पर भेजने के सम्बन्ध में ।**

संघ माग करता है कि अस्थाई व्यवस्था पर बार-बार एक ही कर्मचारी को न भेजा जाये प्राय: देखा गया है कि अस्थाई व्यवस्था पर लगातार एक ही कर्मचारी को भेजा जाता है किन्तु उसके देयकों का भुगतान लम्बे समय तक नहीं होने के कारण कर्मचारी के परिवार की आर्थिक स्थिति दयनीय हो जाती है ।

अत: महोदय से निवेदन है कि अस्थाई व्यवस्था पर लगातार एक ही व्यक्ति को न भेजते हुए अलग-अलग कार्यो के लिए अलग-अगल कर्मचारी की व्यवस्था करने की कृपा करें साथ ही उनके देयकों का समय पर वरीयता के अनुसार भुगतान करने की कृपा करेंगे ।

**प्रस्ताव सं० 3- स्वर्ण जाति के कर्मचारियों का स्वच्छक/चौकीदार का पद परिवर्तन करने के सम्बन्ध में ।**

महोदय, संघ बार-बार मांग करता आ रहा है कि स्वर्ण जाति के जो कर्मचारी स्वच्छक/चौकीदार के पद पर कार्यरत हैं उन कर्मचारियों का विभाग में सेवक के पद पर प्राथमिकता के आधार पर पद नाम परिवर्तित किये जाये जिससे चिकित्सालयों की कार्य व्यवस्था प्रभावित न हो व जनहित के कार्य सुचारू रूप से होते रहें ।

**प्रस्ताव सं० 4- चौकीदारों को टार्च, कम्बल एवं भाला उपलब्ध कराने के सम्बन्ध में ।**

संघ लम्बे समय से मांग करता आ रहा है कि चिकित्सालयों एवं कार्यालय में कार्यरत चौकीदार को रात्रि चौकादारी हेतु सुरक्षा के लिए भाला व टार्च उपलब्ध करायी जाये ताकि कर्मचारी ड्यूटी पर अपने को सुरक्षित महसूस कर सकें तथा सर्दी से बचाव के लिए कम्बल उपलब्ध करवाया जाये जैसा कि शासनादेशों में वर्णित है

**प्रस्ताव सं० 5- चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों की सेवा पुस्तिका बनाये जाने के सम्बन्ध में ।**

महोदय, संघ बार-बार मांग करता आ रहा है कि चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों की सेवा पुस्तिका अभी तक नहीं बनी है उनकी तत्काल सेवा पुस्तिका बनवायी जाये ताकि किसी कर्मचारी की आकस्तिक दुर्घटना होने पर उसके परिजनों को किसी भी प्रकार की कठिनाई उत्पन्न न हो

**प्रस्ताव सं० 6 - आर०डी० पास बुक समयावधी पूर्ण होने के सम्बन्ध में ।**

महोदय, संघ के संज्ञान में आया है कि जि



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कर्मचारियों की आर०डी० पासबुक कार्यालय में खोली गयी है उनका समयावधि पूर्ण हो रही हो उन कर्मचारियों को उसकी देय तिथि की सूचना एक माह पूर्व कर्मचारी को कार्यालय से भेजी जाये ताकि वह भुगतान की तिथि को कार्यालय में आकर अपना भुगतान प्राप्त कर सके ।

## निदेशालय एवं शासन स्तर की मांगें

**प्रस्ताव सं० 1- संघ शासन व निदेशालय से मांग करता है कि राजकीय आयुर्वेदिक चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों को एक माह का अतिरिक्त वेतन दिया जाये :-**

महोदय, पुलिस विभाग में कार्यरत कर्मचारियों को एक माह का अतिरिक्त वेतन मिलता है, चिकित्सालयों में कार्यरत कर्मचारी भी राजपत्रित अवकाश व आकस्मिक सेवाओं में अतिरिक्त कार्य करते हैं जिसके लिए उन्हें न तो कोई भत्ता दिया जाता है ना ही कोई अवकाश सुविधा दी जाती है ।

अत: संघ मांग करता है कि चिकित्सालयों में कार्यरत समस्त कर्मचारियों को एक माह का अतिरिक्त वेतन या एक माह का अतिरिक्त उपार्जित अवकाश प्रदान किया जाय जो शासन या निदेशालय उचित समझे ।

**प्रस्ताव सं० 2- जनपद टिहरी गढ़वाल में कार्यरत चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के माह दिसम्बर 1997 के वेतन भुगतान के सम्बन्ध में**

संघ शासन व निदेशक महोदय से मांग करता है कि वर्ष 1997 के माह दिसम्बर के वेतन का गबन होने से कुछ चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों का वेतन आज दिन तक भुगतान नहीं हो पाया है, संघ बार-बार मांग करता आ रहा है ।

अत: पुन मांग करता है कि माह दिसम्बर 1997 के वेतन के सम्बन्ध में प्रशासनिक अधिकारी द्वारा जाँच करवाकर जो अधिकारी व कर्मचारी दोषी पाया जाये उसे दण्डित कर उन कर्मचारियों का तत्काल वेतन भुगतान करवाया जाये जितना वेतन गबन हुआ है ।

**प्रस्ताव सं० 3 - राजकीय आयुर्वेदिक चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों को 25 प्रतिशत पदोन्नति के सम्बन्ध में**

संघ शासन व निदेशालय से मांग करता है कि शासनादेशों के अनुरूप आयुर्वेदिक विभाग में भी चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों की 25 प्रतिशत पदोन्नति वरिष्ठता के आधार पर की जाय जिससे चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों का कार्य करने का मनोबल बढ़ा रहे ।

**प्रस्ताव सं० 4 - चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के पाल्यों को फार्मेसिस्ट प्रशिक्षण व बी.ए.एम.एस. प्रशिक्षण में 20 प्रतिशत आरक्षण देने के सम्बन्ध में ।**

संघ शासन व निदेशक महोदय से मांग करता है कि शिक्षा विभाग की भाँति आयुर्वेदिक विभाग में कार्यरत कर्मचारियों के पाल्यों को फार्मेसिस्ट प्रशिक्षण व बी.ए.एम.एस. प्रशिक्षण में 20 प्रतिशत आरक्षण दिया जाये ।

**प्रस्ताव सं० 5 - नगदीकरण सुविधा बहाल किये जाने के सम्बन्ध में -**

संघ शासन निदेशालय से मांग करता है कि आयुर्वेदिक चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों को पूर्व की भाँति नगदीकरण सुविधा बहाल करे ताकि अल्पवेतन भागी कर्मचारियों को आर्थिक सुविधा उपलब्ध हो सके ।

**प्रस्ताव सं० 6 - 24 वर्ष की सेवा पूर्ण करने वाले चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों को 4000 - 6000 का वेतनमान दिया जाने के सम्बन्ध में -**

संघ शासन एवं निदेशालय से मांग करता है कि जिन कर्मचारियों के विभाग में 24 वर्ष की संतोषजनक सेवा पूर्ण कर ली है उन कर्मचारियों को द्वितीय पदोन्नति वेतनमान 4000 - 6000 का वेतनमान दिया जाये ।

## हिमाचल प्रदेश

### आयुर्वेदिक महासम्मेलन का शताब्दी समारोह हिमाचल में

कांगड़ा-आयुर्वेदिक महासम्मेलन की शताब्दी समारोह के अवसर पर आयुर्वेद के महान विद्वान् आयुर्वेदिक हितचिंतक आयुर्वेदिक चिकित्सक परम्परांगत आयुर्वेदिक चिकित्सा करने वाले और प्रचार माध्यम द्वारा आयुर्वेद को प्रोत्साहन देने वाले को सम्मानित किया गया । आयोजनकर्ता : गोपाल चड्डा निर्माणाध्यक्ष :- चड्डा ट्रैडर्ज (रजि०) 176047 फोन न० - 01892 -252319 मो० 9816375445



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



इस शताब्दी समारोह में भिन्न-भिन्न विषयों पर विशेष चर्चा हुई और डा० वालयान, एम.डी., काय चिकित्सा व्यवस्थापक गवर्नमेन्ट आयुर्वेदिक फार्मेसी जोगिन्द्र नगर को विशेष रूप से सम्मानित किया गया और आयुर्वेदिक ऋषि की उपाधि दी गई । डा० रामेश्वर शर्मा, भूतपूर्व सदस्य सेवा आयोग हिमाचल प्रदेश को विशेष रूप से सम्मानित किया गया । मैनेजिंग पार्टनर कांगड़ा हिल एण्ड क्योर नगरी को उच्च औषध निर्माण के लिए सम्मानित किया गया । इस अवसर पर आयुर्वेदिक चिकित्सक राजिन्द्र शर्मा मैन बाजार जोगिन्द्रनगर जिला मण्डी को भी विशेष रूप से अलंकृत किया गया इस अवसर पर आयुर्वेदिक औषधियों की गुणवत्ता के लिए विशेष रूप से विचार विनिमय हुआ ।

चाहड़ी आयुर्वेदिक स्वास्थ्य केन्द्र के इन्चार्ज डा० महाजन को उनकी आयुर्वेदिक सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया और इस अवसर पर निर्णय लिया गया कि अगले वर्ष भी प्रदेश आयुर्वेदिक महासम्मेलन का महोत्सव मनाया जायेगा। बहुत बड़ी संख्या में हिमाचल से देहली में होने वाले आयुर्वेदिक महासम्मेलन के शताब्दी सम्मेलन में चिकित्सक भाग लेंगे ।

## गोमूत्र एवं कैंसर

अमेरिका के डॉक्टर क्राकोड हेमिल्टन एवं मेकिन्तोशने ने अनुसंधान द्वारा यह स्पष्ट किया है कि गोमूत्र के प्रयोग से हृदय रोग शान्त होते हैं तथा गोमूत्र औषध है । बेल फास्ट के प्रो० सिमर्स तथा अल्कटर प्रो० कर्कन्दे ने गोमूत्र के महत्व के विषय में अनेक प्रयोग किये हैं और उनका कहना है कि गोमूत्र रक्त में रहने वाले दूषित कीटाणुओं का नाशक है । सजीव मांसपेशी के लिए यह हानि नहीं पहुँचाता, घावों की विषाक्ता को दूर करता है और पुराने दोष से रक्त द्वारा संक्रान्त घाव में बढ़ते हुए पीव को रोकता है ।

2005 में गाऊ सेवा सदन में गऊ अनुसंधान केन्द्र नागपुर को कैंसर की औषधि के रूप में पेटेन्ट मिला है । गोमूत्र विश्व की पहली ऐसी कैन्सर रोधी औषधि है जो कैन्सर कोशिकाओं के बनने की प्रक्रिया को रोक देती है ।


बैद्यनाथ

च्यवनप्राश स्पेशल

विटामिन-सी और कैल्सियम युक्त एक संपूर्ण स्वास्थ्य टॉनिक

"माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है । इसीलिए हर माँ अपने नन्हे मुने के लिए स्वास्थ्यवर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है। परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामिन व पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता । उनके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक । जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल । जिसमें हैं ५२ (पचास हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर । अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं । विश्व में आयुर्वेदिक औषधियों के सबसे विशाल निर्माता-वैद्यनाथ द्वारा निर्मित बैद्यनाथ च्यवनप्राश में आपको मिलेगी विश्वस्तरीय उत्तमता, जिसे आज करोड़ों का विश्वास प्राप्त है । अब कोई अन्य टॉनिक भला क्यों करे प्रयोग ? जब विश्व श्रेष्ठतम टॉनिक है आपके साथ, आपके बच्चों के श्रेष्ठतम विकास के लिए ।"

स्वस्थ जीवन का मस्त स्वाद


Central Library
Gurukul Kangri (Deemed University)
Haridwar-249404 (U.A.)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ISSN - 090678 X

# सचित्र आयुर्वेद

# SACHITRA AYURVED

## A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

वर्ष - 59 अंक - 2 अगस्त - 2006

कफपित्तकरी बल्या कृशराऽनिलनाशनी ।
धौतस्तु विमलः शुद्धो मनोज्ञः सुरभिः समः ।। 346।।
स्विन्नः सुप्रस्त्रुतस्तूष्णो विशदस्त्वोदनो लघुः ।
अधौतोऽप्रस्त्रुतोऽस्विन्नः शीतश्चाप्योदनो गुरुः ।। 347।।

सु०सू० 46/346-347

**कृशरा** - (तिलों के चावल और माष से बनाई) कफपित्त कारक, बलकारक और वायुनाशक है ।

**धौत** - (धुले हुए) निर्मल, शुद्ध, मनोहर सुगंधित और अच्छी तरह पके हुए और मांड निकाले हुए उष्ण चावल विगद और लघु होते हैं ।

**अधौत** - (न धोये), अप्रस्त्रुत (बिना साफ किये) - अस्विन्न (बिना उबाले, जोश दिये), शीतल ओदन गुरू होते हैं ।

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar-249404 (U.A.)
19/12/06

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अब भूल जाईये महीने की चिन्ता

## बैद्यनाथ सुन्दरी कल्प फोर्ट

रक्त की कमी, घबराहट, थकावट, हाथ पाँव के तलवे की जलन आदि परेशानियों में फौरन आराम देता है ।

''अब आप भी अपना ख्याल रखिए''

## बैद्यनाथ सुरक्ता

आयुर्वेदिक स्किन टोनर
कील मुहाँसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# खेद- प्रकाशन

'सचित्र आयुर्वेद' के शानदार इतिहास में सम्भवतः कम ही ऐसा अवसर आया है जब यह नियमित समय पर प्रकाशित नहीं हुआ हो। नियमित एवं समय पर प्रकाशन हमारी अनेक विशेषताओं में से एक है। खेद है कि विगत दो-तीन माह से अनेक कारणों से समय पर इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो पा रहा है। नियमित प्रकाशन में तो कोई व्यवधान नहीं हुआ है, किन्तु निरन्तर विद्युत की भारी कमी से इसका प्रकाशन समय पर नहीं हो पा रहा है। हम इस समस्या का समाधान खोजने के लिए कृत संकल्प हैं और हमें आशा है कि हम एक मास के भीतर इसका समाधान खोज भी लेंगे। प्रेस जहां 'सचित्र आयुर्वेद' का प्रकाशन होता है, उनसे भी अनुरोध किया गया है कि शीघ्र ही इसका समाधान खोजें।

फिर भी नियमित एवं समय पर 'सचित्र आयुर्वेद' का प्रकाशन करना हमारी जिम्मेवारी है हम अपने कृपालु पाठकों को विश्वास दिलाते हैं कि भविष्य में उन्हें ज्यादा प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी फिर भी, उन्हें जो विगत दो-तीन माह में कष्ट हुआ है, उसके लिए हम खेद प्रकट करते हैं।

हमें आशा है कि कृपालु पाठक हमें अवश्य क्षमा करेंगे।

व्यवस्थापक

**सचित्र आयुर्वेद**

**श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800 001**

## हिन्दी भाषी विद्वान लेखकों से निवेदन

यद्यपि सचित्र आयुर्वेद में हिन्दी, अंग्रेजी एवं संस्कृत भाषा में लिखे गये लेखों का प्रकाशन होता है, किन्तु ज्यादातर पाठक हिन्दी भाषी होने के कारण हिन्दी भाषा में ज्यादा से ज्यादा लेखों का प्रकाशन करना हमारी विवशता है। दुर्भाग्यवश हिन्दी भाषी विद्वान लेखक भी अंग्रेजी में लिखना पसन्द करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि अंग्रेजी भाषा के लेखों का अम्बार लग जाता है जिसके कारण प्रकाशन में विलम्ब होता है। वस्तुतः अंग्रेजी भाषा में लेखों का प्रकाशन दक्षिण भारतीय पाठकों के लिए किया जाता है।

Gurukul Kangri University Central Library Haridwar (U.A.)

अतः हिन्दी भाषा के विद्वान लेखक हमारी विवशता को समझेंगे और वे हिन्दी भाषा में लेख भेजने का प्रयास करेंगे। इससे हमें सुविधा होगी और विद्वान लेखकों को लेख-प्रकाशन के लिए ज्यादा प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची

वर्ष - 59 अंक - 2 अगस्त - 2006

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मूल्य - 10 रुपये प्रति

वार्षिक मूल्य - 100 रुपये प्रति

आजीवन शुल्क - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुल्क - 2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 83

2. आयुर्वेद का इतिहास - 81 85
पं० बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा

3. तीक्ष्णाग्नि एवं अत्याग्नि-रोग रूप में 88
वैद्य पी.एस. अंशुमान

4. हिमाचल प्रदेश के लोकप्रचलित परम्परागत 94
सुगन्धित एवं औषधीय पौधे
डा० मायाराम उनियाल

5. अभ्यंग आचरेन्नित्यम् 101
वैद्य ह० श्री कस्तूरे

6. राजयक्ष्मा का प्रतिबन्धक चिकित्सा-सिद्धान्त 103
डा० राकेश कुमार वर्मा,
डा० राकेश कुमार श्रीवास्तव
डा० बृजकुमार द्विवेदी

7. हृदयरोग में उपयोगी वनस्पतियाँ 106
वैद्य सुरेश चतुर्वेदी

8. दीपनीय महाकषाय एक गुणाकर्मात्मक 108
अध्ययन: बृहत्त्रयी के प्रकाश में
आयुर्वेदाचार्य राजेश अरोड़ा

9. सरस्वती पंचक - शतावरी
लायक राम भट्ट

10. मधुमेह 113
डा० अंकुश जाधव

11. अफीम विषाक्त प्रभाव और औषध उपयोग 115
डा० विनोद कुमार गोठेचा

12. रसायन चिकित्सा-आयुर्वेद की मौलिक देन 117
डा० रामानन्द

13. कैसे करें आँखों की देखभाल 118
डा० हरमोहन महारणा
डा० व्यासदेव महन्त

14. शिशुओं का अन्नप्राशन विधि 119
डा० महेश नारायण गुप्त
डा० बी०एम० सिंह

15. फलों का राजा : आम 121
राजकुमार जैन

16. Effect of Medicinal Plants on wound 123
Healing in Diabetics
K.N. Dwivedi, V.K. Shukla, J.K. Ojha

17. Nidanatamaka study of Hypertension 129
Prof. Loknath Sharma, Dr. Devendra Kr. Singh

18. Coral (Pravala)—Zoological Aspect 131
Himanshu S. Tiwari, B. Patgiri, P.K. Prajapati

19. Bed-Wetting : A Problem & Its Solution 135
Dr. Ashvin B. Bagde, Dr. Nisha Gupta
Prof. O.P. Upadhyay

20. Kostha Pareeksha - A Critical study 137
Dr. Vasant C. Patil, Dr. M.S. Baghel
Dr. A.B. Thakar

21. ACHIEVEMENT 140

22. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 142

23. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 145

24. आरोग्य समाचार 148

25. आपके अनुभूत प्रयोग 152

26. आपके पत्र 154

27. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 155

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**सम्पादकीय**

# भारत, चीन और कुपोषणजन्य व्याधियां

ऐसा कहा जाता है कि किसी भी देश के विकास में बढ़ती हुयी जनसंख्या भयंकर बाधा है, किन्तु चीन के मामले में यह कथन सत्य प्रतीत नहीं होता है। अमेरिका एवं यूरोपीय संघ के पश्चात् चीन ही सबसे बड़ा खाद्य पदार्थों का दाता है। विश्व खाद्य कार्यक्रम के एक प्रतिवेदन के अनुसार वर्ष 2005 में चीन ने पड़ोसी देश उत्तरी कोरिया को 5,77,000 टन अनाज की आपूर्त्ति की। हमारा आशय यह नहीं है कि भारत अनाज के उत्पादन के मामले में आत्म निर्भर नहीं है। इसने चीन से पहले ही सत्तर के दशक में हरित क्रान्ति के माध्यम से अनाज के उत्पादन के मामले में आत्म निर्भरता प्राप्त की थी, फिर क्या कारण है कि हमारे देश के बच्चे कुपोषण के शिकार हैं ? यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार सम्पूर्ण विश्व में जितने बच्चे कुपोषण के शिकार हैं, उनमें से 35% केवल हमारे देश में है। आंकड़ों के अनुसार हमारे देश में 57 मिलीयन बच्चे कुपोषण के शिकार हैं जबकि चीन में इसकी संख्या केवल 7 मिलीयन है। चीन में यूनिसेफ के प्रधान, कियोन वेनोरमेलिनजेन ने स्वीकार किया है कि भूख और कुपोषण पर विजय पाने में चीन ने 'अद्‌भुत्' प्रगति हासिल की है।

आंकड़ों के अनुसार 1990 में चीन में पांच वर्ष से कम की आयु के बच्चे जो कुपोषण के शिकार थे, उसका प्रतिशत 19 था जो 2005 में घटकर 7% हो गया। इसी तरह पांच वर्ष से कम उम्र के शिशु में 1990 में मृत्यु दर प्रति एक हजार में उनचास थी जो 2004 में घटकर 31 हो गयी।

विदित है कि कुपोषण के शिकार बच्चे आम तौर पर कम वजन वाले होते हैं। पर्याप्त भोजन एवं पौष्टिक पदार्थ नहीं मिलने के कारण बच्चे कुपोषण के शिकार होते हैं। परिणामत: कुपोषण के शिकार बच्चों में व्याधियों के उत्पन्न होने की सम्भावना प्रबल होती है।

एक प्रश्न उपस्थित होता है। जब हम अनाज के उत्पादन के मामले में आत्म निर्भर हैं, तब हमारे बच्चे कुपोषण के शिकार क्यों हैं ? इस प्रश्न का उत्तर देश की राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था से जुड़ा हुआ है, इसलिए इस स्तम्भ में इसका जिक्र करना उचित नहीं है। फिर भी, स्वास्थ्य विज्ञानी तो यह सोच सकते हैं कि ऐसा क्यों होता है ? हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि बच्चों को खाने के लिए पर्याप्त भोजन नहीं मिलता है। कारण जो भी हो, वस्तुस्थिति तो यही है।

हमारा आयुर्वेद-शास्त्र भी चिकित्सा के मामले में एकरूप सिद्धान्तों का पालन नहीं करता है। उदाहरण के लिए अष्टांग संग्रह में जिक्र है कि धनवानों के लिए औषध एवं चिकित्सा की विशिष्ट व्यवस्था होती थी और निर्धनों के लिए भिन्न व्यवस्था होती थी -

**अधनस्तु छत्रपादत्रविरहित: गच्छेत्।**

(सं०चि० 14/20)

यह व्यवस्था आज भी हमारे देश में कम या ज्यादा प्रचलित है। हम आयुर्वेद का सहारा लें या एलोपैथ का: चिकित्सा कराने के क्रम में जो व्यय आता है, उसे सहन करना निर्धन लोगों के लिए सम्भव नहीं है एक-एक जांच कराने में हजारों रुपये लगते हैं जिसे सहन करना आम लोगों की आर्थिक ताकत के बाहर की बात है। यही कारण बच्चों या उसके माता-पिता के साथ है अनाज के मामले में आत्म-निर्भर रहते हुए भी अनेक माता-पिता अपने बच्चों के लिए पर्याप्त अनाज नहीं खरीद पाते हैं। परिणाम यह होता है कि बाजार में अनाज उपलब्ध रहने के बावजूद क्रय-शक्ति के अभाव में बच्चों को पर्याप्त भोजन नहीं मिल पाता है जिसके चलते वे कुपोषण के शिकार होते हैं। फलत: वे शीघ्र ही व्याधियों के जाल में फंस जाते हैं। चीन ने आमदनी-वितरण या अनाज-वितरण के मामले में वैज्ञानिक पद्धति अपनायी है जिसका लाभ वहां के बच्चों को मिल रहा है।

यद्यपि आज माननीय सर्वोच्च न्यायालय के हस्तक्षेप से प्राय: सभी शासकीय विद्यालयों में भोजन नि:शुल्क दिया जाता है, फिर भी वे बच्चे इस लाभ से वंचित हो जाते हैं जो विद्यालय जाते ही नहीं हैं। यह एक गम्भीर आर्थिक एवं राजनीतिक समस्या है जिसका हल केवल सरकार के पास है।

हमारा सरकार से सविनय अनुरोध है कि वे इस समस्या की ओर ध्यान दें और इस बात का संकल्प करें कि भारतवर्ष में एक शिशु भी कुपोषणजन्य व्याधियों का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिकार नहीं होगा ।

## मलेरिया में हल्दी की महत्वपूर्ण भूमिका

भारतीय विज्ञान संस्थान (इण्डियन इन्स्टीच्यूट ऑफ सायन्स), बंगलौर के शोधकर्मियों ने हरिद्रा में मलेरिया नाशक गुण पाया है । शोधकर्मियों के अनुसार हरिद्रा से प्राप्त करक्यूमिन को आर्टिमिसिया एनुआ (एक चीनी जड़ी-बूटी) से प्राप्त आर्टेमिसिनिन से मिला दिया जाय तो एक प्रभावकारी औषधि तैयार हो सकती है । विदित है कि इन दिनों आधुनिक औषधियों में से अनेक औषधि प्लासमोडियम फाल्सीपेरूम के चलते उत्पन्न मलेरिया की चिकित्सा में सफलतापूर्वक कार्य नहीं करती है । इसके विपरीत यह मलेरिया में औषधि प्रतिरोधक का कार्य करती है ।

सम्प्रति औषधि प्रतिरोधक मलेरिया में आर्टेमिसिनिन ही एक मात्र विकल्प है । विश्व स्वास्थ्य संगठन ने शोध कर्मियों को सलाह ही है कि आर्टेमिसिनिन के साथ यदि कोई मलेरियारोधी द्रव्य मिला दिया जाय तो यह मलेरिया को नाश करने में ज्यादा प्रभावकारी हो सकती है । शोधकर्मी एलोपैथी औषधि जैसे सल्फाडोक्सीन-पायरिमेथामाइन, एमोडिया क्वीन और मेफलोक्वीन के साथ प्रयोग कर रहे हैं, किन्तु इस प्रयोग से स्वयं शोध कर्मियों को संतोष नहीं है । वे जानते हैं कि इन औषधियों से साइड इफेक्ट्स होने की सम्भावना ज्यादा हो सकती है । इसके विपरीत यदि जड़ी-बूटी के मिश्रण से कोई औषधि तैयार की जाय तो इसकी सम्भावना नगण्य है । औषधि के प्रभाव को साबित करने के लिए वैज्ञानिकों ने पी.बर्गी (जिससे कुतरने वाले प्राणियों में जैसे मूसा में मलेरिया उत्पन्न होता है) संक्रमित मूसा को आर्टेमिसिनिन से प्राप्त आर्टीथर की सुई दी । उसके पश्चात् करक्यूमिनिन की एक मात्रा मुख से दी गयी । यह प्रक्रिया दो दिनों तक जारी रही । शोधकर्मियों के अनुसार उन्हें इस प्रयोग में 100% सफलता मिली । वैज्ञानिकों की यह सफलता एण्टीमायक्रोवियल एजेन्ट्स एण्ड कोमोथेरापी ( Vol. 50, No. 5, May, 2006 ) में प्रकाशित हुयी है । ज्ञात हुआ है कि शोधकर्मियों ने इस औषधि को पेटेण्ट कराने के लिए अमेरिका एवं भारत में आवेदन भी कर दिया है ।

अब हरिद्रा के सम्बन्ध में आयुर्वेदिक ग्रन्थों में एक दृष्टिपात करें । भाव प्रकाश में इसे 'कृमिघ्नी हल्दी' से विभूषित किया गया है । यह कटु तथा तिक्तरस युक्त, रूक्ष, उष्णवीर्य, कफपित्त नाशक, शरीर में वर्ण को उज्जवल करने वाली एवं चर्मदोष, प्रमेह, रक्तविकार, शोथ, पाण्डु तथा व्रण को दूर करने वाली होती है । साथ ही इसका उपयोग प्रतिश्याय, यकृत् विकार, पार्यायिक ज्वर, अतिसार, संग्रहणी तथा नेत्राभिष्यन्द में किया जाता है ।

आमतौर पर भारतीय जनता चिकित्सकों की बिना मदद के भी मोच, ऐंठन, चोट, व्रण और पुराने घाव में चूना या सज्जीखार के साथ प्रयोग करते हैं । ग्रन्थों एवं व्यावहारिक प्रयोग से यह शत प्रतिशत प्रमाणित है कि हल्दी में कृमिघ्न गुण के साथ-साथ वेदना शान्ति के भी गुण पाये जाते हैं । दुर्भाग्यवश हमारे आयुर्वेदज्ञ पुराने प्रयोगों के आधार पर ही अपने अनुसंधान क्रम को जारी रखते हैं । हमें इससे असहमति नहीं है कि पुराने प्रयोगों को आधार नहीं बनाया जाय, बल्कि जड़ तो यही है, किन्तु यदि हम एलोपैथी के साथ प्रतिस्पर्धा करेंगे, तो निश्चय ही हमें आधुनिक तकनीक एवं उपकरणों की मदद लेनी पड़ेगी । हम सभी जानते हैं कि आयुर्वेदिक ग्रन्थों में रोग उत्पन्न होने के कारण, निदान, चिकित्सा द्रव्यों के गुण आदि श्लोकों में सूत्रवत् हैं । यह है कि विशद् व्याख्या महर्षियों ने नहीं की है । इसका कारण कि उन दिनों कागज और मुद्रण की तकनीक विकसित नहीं थी । उनके साथ विवशता थी कि वे प्रत्येक रोग का वर्णन व्याख्या के साथ कई पृष्ठों में नहीं कर सकते थे, किन्तु सूत्र रूप में ही उन्होंने अपने ज्ञान के निचोड़ को जो हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है, उससे हम आज भी आश्चर्यचकित हैं । साथ ही हमें गौरव है कि हमारे महर्षियों ने ज्ञान का खजाना विरासत में हमारे लिए छोड़ा है जिसके प्रकाश से आज भी हम आलोकित हो रहे हैं । यह तो हमारा कर्त्तव्य है कि सूत्ररूपी ज्ञान के खजाने में छिपे हुए मोतियों को हम विश्व के समक्ष लावें । इस दृष्टिकोण से भारतीय विज्ञान संस्थान् के शोधकर्मी निश्चय ही साधुवाद के पात्र हैं कि आयुर्वेद का स्नातक नहीं होते हुए भी आयुर्वेद में दिये खजाने को मानव-कल्याणार्थ विश्व के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

# आयुर्वेद का इतिहास-81

[1]पं० बनवारी लाल शर्म
[2]विमल चन्द्र झा

## दृढ़बल

हिन्दी विश्वकोष[1] के अनुसार इनका दूसरा नाम कापिलबलि था (चरक चि०अ० 30) । इनके पिता का नाम कपिलबल था । ये आयुर्वेद के विद्वान् तथा शिवभक्त थे । वाग्भट्ट ने अष्टांग संग्रह में इनके मत का उल्लेख किया है (सू०अ० 20) ।

दृढ़बल पंचनदपुर के रहने वाले थे । पंचनदपुर कश्मीर में पंजपनोर स्थान है । यहां पर त्रिगाम्य, वितस्ता, सिंध, क्षीरभवानी और आंचार इन पांच नदियों का संगम होता है (आ०वृ०इ० पृष्ठ 154) । दृढ़बल का समय वाग्भट्ट से पूर्व का है । यह संभवत: तीसरी शती का उत्तरार्ध या चौथी शती का प्रारम्भ का समय था, क्योंकि वाग्भट्ट और जैज्जट ने इनके वचन उद्घृत किये हैं ।

जैज्जटं को वाग्भट का शिष्य कहा जाता है । दृढ़बल ने चरक संहिता के चिकित्सा स्थान में 17 अध्याय, कल्पस्थान और सिद्धिस्थान पूर्ण किये हैं । चिकित्सास्थान के अध्यायों के क्रम में नौ से 25 तक के अध्यायों में क्रमभेद है । विष चिकित्सा (23 वें अध्याय) में जया विष्णु वासुदेव, कृष्ण का नाम आता है । इन शब्दों से ये गुप्तकालीन प्रतीत होते हैं । इसमें 'हिलिमिलि' शब्द भी आता है, जो बौद्धों की मातंगी विद्या में विशेषत: आता है । दृढ़बल द्वारा किया मद्यपान का वर्णन अष्टांग संग्रह एवं अष्टांग हृदय के मद्यपान से बहुत मिलता है (आ०वृ०इ० पृष्ठ 115) । इससे भी दृढ़बल का समय गुप्तकालीन प्रमाणित होता है ।

दृढ़बल ने चरक संहिता के त्रुटित भाग को उंछ और शिलवृत्ति द्वारा पूरा किया । इससे पता चलता है कि इन्होंने दूसरे ग्रन्थों से थोड़ा-थोड़ा अंश लिया और कहीं पर पूरा संदर्भ लिया । उपलब्ध चरकसंहिता में उत्तरतंत्र नहीं मिलता, परन्तु दृढ़बल के पूर्ण भाग से सिद्ध होता है कि इसमें उत्तरतंत्र था ।

श्री मुखोपाध्याय[2] ने दृढ़बल के सम्बन्ध में जो राय प्रकट की है, इसे क्रमबद्ध ढंग से नीचे प्रस्तुत की रही हैं :-

1. चरक ने सम्पूर्ण अग्निवेश तंत्र को परिष्
नहीं किया । उन्होंने अन्तिम 41 अध्यायों अर्थात् चिकि
स्थान के 17, कल्प स्थान के 12 और सिद्धि स्थान के
अध्यायों को पूरा किया ।

2. दृढ़बल पंचनदपुर के निवासी थे । पंचनद
अर्थ होता है पांच नदियों का देश । शब्द कल्प द्रुम
अनुसार पांच नदियों का अर्थ है - शतद्रु, विपाशा, इरावा
चन्द्रभाग और वितस्ता । किन्तु हार्नले का इससे मतभेद
उनके अनुसार 'पंजाब के साथ पंचनद का सामान्य परि
मान्य नहीं है, क्योंकि दृढ़बल से स्पष्टत: 'पुर' शब्द
प्रयोग अपने घर के लिए किया है, न कि देश
(Hoernle's osteology Intro, P.3) गंगाधर ने अ
जल्प-कल्पतरू में पंचनदपुर का सम्बन्ध बनारस से बता
है । बनारस या काशी के नगर के लिए पंचनद तीर्थ
भी प्रयोग किया गया है अर्थात् पंचगंगा जहां मिलती हैं
ये नदियां हैं - किरण, धूतपाप, सरस्वती, गंगा और यमुन

**किरणा धूतपापा च पुण्यतीता सरस्वती ।**
**गङ्गा च यमुना चैव पञ्च नद्योऽव कीर्त्तिता: ।।**
**अत पञ्चनदं नाम तीर्थं त्रैलोक्य विश्रुतम् ।**

काशी खण्ड, IX ,114-15

हार्नले का मत है कि भारतवर्ष में आमतौर
नदियों की धाराओं के मिलन-स्थल को तीर्थ कहा जा
है । पंचनद की तरह कई स्थान हो सकते हैं । प्राचीनका
में एक स्थान काश्मीर में झेलम (वितस्तता) और सिन्धु
पास था । उनका निष्कर्ष है कि कश्मीरी पंचनद ही दृढ़ब
का आवास था :

3. यद्यपि सभी विद्वान् सहमत हैं कि चिकित्स
स्थान के अन्तिम 17 अध्याय दृढ़बल के द्वारा प्रतिसंस्कृ
थे, किन्तु यह कहना दुष्कर है कि चिकित्सा स्थान के 3
अध्यायों में से 17 अध्याय कौन-से थे । उदाहरण के लि

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० 2. सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



र्णय सागर प्रेस द्वारा मुद्रित चरक संहिता और गंगाधर के हामपुर संस्करण में निम्न अन्तर हैं :-

| चरक (निर्णय सिन्धु प्रेस) X | गंगाधर (बेरहमपुर संस्करण) Y |
|---|---|
| 1. रसायन | 1. रसायन |
| 2. वाजीकरण | 2. वाजीकरण |
| 3. ज्वर चिकित्सा | 3. ज्वर चिकित्सा |
| 4. रक्तपित्त | 4. रक्तपित्त |
| 5. गुल्म | 5. गुल्म |
| 6. मेह | 6. मेह |
| 7. कुष्ठ | 7. कुष्ठ |
| 8. शोष | 8. शोष |
| 9. अर्श | 9. उन्माद |
| 10. अतिसार | 10. अपस्मार |
| 11. विसर्प | 11. क्षत |
| 12. मदात्यय | 12. शोथ |
| 13. द्विवर्णीय | 13. उदर |
| 14. उन्माद | 14. अर्श |
| 15. अपस्मार | 15. ग्रहणी |
| 16. क्षत | 16. पांडु |
| 17. शोथ | 17. श्वास |
| 18. उदर | 18. कास |
| 19. ग्रहणी | 19. अतिसार |
| 20. पाण्डु | 20. छर्दी |
| 21. हिक्का श्वास | 21. विसर्प |
| 22. कास | 22. तृष्णा |
| 23. छर्दी | 23. विष |
| 24. तृष्णा | 24. मदात्यय |
| 25. विष | 25. द्विवर्णीय |
| 26. त्रिमर्मीय | 26. त्रिमर्मीय |
| 27. उरूस्तम्भ | 27. उरूस्तम्भ |
| 28. वात-व्याधि | 28. वात-व्याधि |
| 29. वातरक्त | 29. वातरक्त |
| 30. योनि व्यापत् | 30. योनि व्यापत् |

इसका अर्थ हुआ (1) अध्याय 1 से 8 तक चरक ने लिखा है। (2) अध्याय 26 से 30 तक दृढ़बल ने लिखा है। (3) X का अध्याय 19 से 25 दृढ़बल द्वारा प्रतिसंस्कृत Y के अध्याय 15 से 18, 20, 22 और 23

वे असहमत हैं :-

| | X | Y |
|---|---|---|
| 9. अर्श चिकित्सा | X का चरक | दृढ़बल |
| 10. अतिसार चिकित्सा | ,, | ,, |
| 11. विसर्प चिकित्सा | ,, | ,, |
| 12. मदात्यय चिकित्सा | ,, | ,, |
| 13. द्विवर्णीय चिकित्सा | Y का दृढ़बल | चरक |
| 9. उन्माद चिकित्सा | ,, | ,, |
| 10. अपस्मार चिकित्सा | ,, | ,, |
| 11. क्षत चिकित्सा | ,, | ,, |
| 12. शोथ चिकित्सा | ,, | ,, |
| 13. उदर चिकित्सा | ,, | ,, |

इससे यह भी प्रमाणित होता है कि दोनों संस्करण में मतभेद केवल 10 अध्यायों तक सीमित है। इसके बावजूद किस अध्याय को चरक ने और किस अध्याय को दृढ़बल ने प्रतिसंस्कृत किया है - इस पर विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वानों के मत यहां प्रस्तुत किये जा रहे हैं :

**बी.सी. सेनगुप्ता**

इनका कहना है कि चरक और दृढ़बल के भाष्यकारों ने जो उद्घरण दिये हैं, उनसे अध्यायों के लेखकों का पता चल सकता है। चरक से अर्थ चरकाचार्य था उनकी पुस्तक चरक संहिता। लगभग सभी इस बात पर सहमत हैं कि वात व्याधि चिकित्सा (अध्याय 28) को दृढ़बल ने लिखा है। विजयरक्षित ने निम्नलिखित आधार पर सत्य पाया है -



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



"गुदेस्थित इति दृढ़बलस्य लक्षण,"

"दृढ़बलेन यद्यपि आक्षेपकात् पूर्वम् ।

"अन्तराम - बहिरायामी पठितौ," "यदाह दृढ़बलः अङ्गे तस्मिन् मुरवाङ्चे वा केवलं स्यात् तदर्हितम्)

विजय रक्षित ने हिक्का श्वास को दृढ़बल लिखित माना है -

"यदाहः दृढ़बलः कफ वातात्मकावेतौ पित्तस्थान समुङ्भवौ ।"

विद्वानों ने रचनाओं में Nominative, Instrumental, genitive और locative के आधार पर विश्लेषण किया है।

**काल**

दृढ़बल के काल के सम्बन्ध में विद्वानों में निम्न मतभेद है :-

i. क्रम इस प्रकार है - दृढ़बल, वाग्भट प्रथम, वाग्भट द्वितीय और माधव ।

ii. हार्नले के मत में माधव दृढ़बल के पूर्व का है । जैसे -

सुश्रुत ii ने 76 नेत्र-रोग का वर्णन किया है ।
वाग्भट i ने 94 नेत्र-रोग का वर्णन किया है ।
माधव ने 78 नेत्र-रोग का वर्णन किया है ।
वाग्भट ii ने 94 नेत्र-रोग का वर्णन किया है ।
दृढ़बल ने 96 नेत्र-रोग का वर्णन किया है ।
इस तरह दृढ़बल ने 94 (वाग्भट की सूची) + 2 ( माधव द्वारा वर्णित नेत्र रोग)

iii. विजय रक्षित के अनुसार माधव दृढ़बल के बाद का है । उन्होंने भी इस सम्बन्ध में कुछ प्रमाण दिये हैं ।

श्री दासगुप्ता[3] ने दृढ़बल के सम्बन्ध में निम्न मत व्यक्त किये हैं -

i. चरक संहिता का उत्तर बस्ति, सिद्धिस्थान, XII, दृढ़-बल द्वारा प्रतिसंस्कृत था ।

ii. दृढ़बल कश्मीर या पंजाब के थे ।

iii. ये आठवीं या नवीं शती के थे ।

iv. रत्नप्रभा के रचयिता, निश्चलकर के दृढ़बल चर परिशिष्ट के रचयिता थे ।

v. डा० यू०सी० दत्त ने मटेरिया मेडिका में लिखा है पंचनद नगर पंजाब में था । डा० कोर्डियर ने उनकी इस मान्यता से सहमति प्रकट की है । पंजाब में एटाक के उत्तर में पंजपुर में स्थित है ।

vi. गंगाधर ने पंचनद को बनारस के साथ माना है ।

vii. हार्नले के अनुसार पंचनद पंतजिनोर (कश्मीर के पा नहर) का आधुनिक गांव है और दृढ़बल इसी न का वासी था ।

viii. चरक के भाष्यकार, विजयरक्षित, चक्रपाणि दत्त आ विद्वानों ने इसे कश्मीर आवृत्ति के रूप में स्वीक किया है ।

ix. हार्नले के अनुसार 1877 के जीवानन्द संस्करण कश्मीर आवृत्ति का बोध होता है । चूंकि माधव कश्मीर का जिक्र नहीं किया है, इसलिए ऐसा सकता है कि माधव के समय दृढ़बल का अस्ति नहीं हो ।

x. माधव, दृढ़बल और वाग्भट द्वितीय सभी वाग्भट प्रथ को जानते थे ।

xi. हार्नले सम्भवतः सही हैं कि दृढ़बल वाग्भट के पू के हैं ।

(निरन्तर जारी

**संदर्भ**

1. हिन्दी विश्वकोश - नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
2. History of Indian Medicine - Girindranat Mukhopadhyaya, Vol.III - University o Calcutta.
3. A history of Indian Philosophy - S.N Dasgupta, Vol. II - Oxford University Press.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# तीक्ष्णाग्नि एवं अत्याग्नि - रोग रूप में

वैद्य पी.एस. अंशुमान, एच.पी.ए. (निवृत्त प्रोफ./प्राचार्य)

रिचय'

आयुर्वेद साहित्य में अग्निबल के आधार पर अग्नि के चार प्रकार वर्णित किये गये हैं यथा - मंदाग्नि, तीक्ष्णाग्नि, विषमाग्नि एवं समाग्नि । इनमें से समाग्नि प्राकृत जबकि शेष तीन विकृत अग्नियां मानी गई हैं । मंद, तीक्ष्ण अग्नियों को क्रमशः कफ, पित्त एवं वात जन्य या इनसे सम्बद्ध माना गया है । अतः तदानुसार विषमाग्नि वात रोग, तीक्ष्णाग्नि पित्त रोग तथा मंदाग्नि कफ के रोगों की कारक मानी गई है ।

अग्नि के अन्य प्रकारों में जठराग्नि को शेष पंचभूताग्नि (भौतिक अग्नियां) तथा सप्त धात्वाग्नि का आधार माना गया है और तदानुसार इनके भी अपने-अपने मंद-तीक्ष्ण-विषम विकृत प्रकार तथा सम स्वरूपों की भी कल्पना की जाती है ।

इनमें से यहां तीक्ष्णाग्नि एवं अत्याग्नि पर संक्षिप्त विचार किया गया है । यह विचार आज के कई विकारों की चिकित्सा में उपयोगी भी है ।

संज्ञा

अग्निबल की अधिकता या उसकी तीक्ष्णता बोधक जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है वे निम्नानुसार हैं :-

(क) प्रबलता
- उत्तमाग्नि या प्रवर (प्रबल) अग्नि (त.)
- तीक्ष्णाग्नि (च)(सु)(अ)
- प्रवृद्धाग्नि (अ).

(ख) विकार
- अत्याग्नि (च)
- अति प्रवृद्धाग्नि (अ)
- भस्मक (मधु)

(ग) स्वरूप
- पित्ताभूत अग्नि अधिष्ठान जन्य तीक्ष्णाग्नि (च)
- पिण्डिभूत (तीक्ष्ण) अग्नि (सु)
- पवनानुगमित एवं प्रेरणज तीक्ष्णाग्नि (च) (आवृत वात जन्य)
- कफ क्षीणता, पित्तवृद्धि, वायु कोप संयुक्त तीक्ष्णाग्नि (च)

परिभाषा :-

जिस व्यक्ति की भोजन की मात्रा, सम हो व अतिमात्रा भी सुखपूर्वक पच जाती है उसे तीक्ष्ण अग्नि कहते हैं । वह अतिमात्रा में खाये अन्न को शीघ्र पचा देता है । ऐसा तीक्ष्णाग्नि व्यक्ति के द्वारा किया या लिया गया मात्राधिक, कच्चा या पका हुआ, लघु या गुरू, हर प्रकार का आहार शीघ्र एवं सुखपूर्वक पच जाता है । बार-बार खाने पर भी भोजन पच जाता है । अतः अजीर्ण (पूर्व खाये अन्न के न पचने पर) भी अतिमात्रा, में आहार लेने पर भी दिन रात में सुखपूर्वक पच जाता है । अतः इसको सर्वोपचा सहा (सब कुछ पचा जानेवाला) कहा है ।

प्राकृत तीक्ष्णाग्नि

पित्तला प्रकृति के लोगों में अग्नि के आश्रय व अधिष्ठान के पित्ताक्रान्त रहने से उसकी अग्नियां स्वभावतः तीक्ष्ण होती हैं ।

इसी से इन लोगों में पैत्तिक भावों की अधिकता के साथ-साथ तीक्ष्णाग्नि, सम्बद्ध भावों की भी अधिकता देखने को मिलती है ।

इनकी अग्नि तीक्ष्ण होती है । अतः उस पर आधारित बल को भी इनमें उत्कर्षता होती है । परिणाम स्वरूप यह तीक्ष्ण परक्रम युक्त होते हैं (तथा तीक्ष्ण वृद्धि होते हैं) ।

अग्नि तीक्ष्णता के कारण हो प्रभूत अशन (खाना) एवं पान करनेवाले होते हैं और बार-बार खाना खाया करते हैं तथा क्षुधा-तृषा युक्त होते हैं ।

अग्नि की तीक्ष्णता के कारण ही इन को मध्यम आयु होना भी माना गया हैं, मध्यम विज्ञान, बल एवं विर्य कारण युक्त होते हैं ।

इनमें यह लक्षण प्रकृति प्रदत्त एवं संलग्न होने स्वाभाविक लक्षणों के रूप में लिया जाता है ।

अतः इनको मधुर, शीत, गुरु, आहार का सेवन बार-बार करते रहना आवश्यक होता है । अतः इनके लि

1497, ए 2/1, कृष्णनगर, रूपाणि सर्कल, भावनगर (गुज.) 364001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



शरद एवं शीत चर्या अनुकरणीय होती है ।

**ऋतुस्वभाव जन्य प्रबलाग्नि[4]**

शीतकाल (हेमन्त) में शीतल वायु स्पर्श के कारण रुकी हुई, बलशाली पुरुषों की जठराग्नि प्रबल हो जाती है तथा वह (प्रबल अग्नि) मात्रा-गुरू तथा द्रव्य गुरू (स्वभाव से गुरू द्रव्य) आहार को पचाने में समर्थ होता है । (सुश्रुत ने अग्नि को कोष्ठ में पिण्डित होना कहा है जो रस को सुखाती है ।)

यदि इन बलों (प्रबल-बलवान) जठराग्नि को जन उपयुक्त अन्नरूप इंधन नहीं मिलता है तो वह शरीर स्थित धातु रूप रसादि को सुखाना आरंभ कर देती है । अत: शरीर में रूक्षता के कारण तथा वायु के शीत गुण वैशिष्ट्य के कारण शीत काल की वायु का प्रकोप हो जाता है ।

अत: हेमन्त ऋतु में स्निग्ध, अम्ल एवं लवण रस युक्त भोज्य पदार्थों का, औदक एवं आनूप प्राणि तथा मेदस्वी पशुपक्षी के मांस का सेवन करें । इसी प्रकार विलेशय एवं प्रसह प्राणियों का मृत (कबाब, शूलपक्वमांस) भी सेवनीय है । सीधू एवं मधु का अनुपान पथ्य माना गया है ।

इसी प्रकार दूध एवं इक्षु विकार, वसा, तैल एवं नये चावल कृत भात प्रतिदिन सेवनीय है । शीतऋतु में ऊष्ण जल भी नित्य सेवनीय है ।

हेमन्त की तरह शिशिर में भी विधान कहा गया है ।

**आवृत्तवात जन्य तीक्ष्णाग्नि[5]**

चरकादि ने 'अतिस्थूल' के संदर्भ में आवृत्तवात जन्य अत्याग्नि अवस्था का उल्लेख किया है । तदानुसार अतिस्थूला जन्य अष्ट दोषों में क्षुधा एवं तृषा आधिक्य को गिना गया है । यहां यह भी स्पष्ट किया गया है कि अग्नि के तीक्ष्ण होने से तथा कोष्ठगत वायु के अत्यधिक होने से क्षुधा एवं तृषा आधिक्य रूप लक्षण होते हैं ।

इसी परिकल्पना के समर्थन में कहा गया है कि मेद द्वारा मार्ग के रुके होने से वायु विशेषत: कोष्ठ में संचार करता हुआ अग्नि को तीव्र बना देता है तथा आहार को भी सुखा (शीघ्र पचाकर) देता है । अतएव वह भोजन को शी पचा देता है और परिणामत: रोगी आहार की ओर अधिक आकांक्षा करता है (उसे बार-बार भूख लगती है ऐसा लम्बे समय तक चलते रहने से कुछ समय के वा वह कई घोर विकारों से पीड़ित होने लगता है । (या भोज काल के उल्लंघन से घोर विकार होते हैं) (चक्र) । अथा यदि भूख लगने पर भोजन न दिया जाये तो वायु एवं अग्नि के अत्यंत प्रवृद्ध होने से अन्य धातुओं को जलाना आर कर देता है जिससे धातु दग्धता या क्षय जन्य अनेक गंभी रोग होने लगते हैं ।

इस प्रकार प्रवृद्ध हुए अग्नि एवं वायु विशेषत (वायु के) उपद्रवों को करता है और (तीव्राग्नि) रोगी व ऐसी ही नष्ट कर देता है जैसे दावानल वन को जला दे है ।

**अत्याग्नि[6]**

तीक्ष्णाग्नि ही और भी अधिक बढ़ने पर अत्याग्नि कहाती है । अत: बार-बार खाये आहार को शीघ्र ही प देती है । शीघ्र ही खाये आहार के पच जाने से (तथा सो धातु क्षीण होने से) ओष्ठ, तालु, गल शोथ, दाह एवं संत जैसे लक्षण रहते हैं ।

**भस्मक[7]**

अत्याग्नि रूप विकृति को ही उत्तरकालीन आयुर्वेद साहित्य में भस्मक के रूप में वर्णित किया मिलता है यथा-अत्यन्ततीक्ष्णाग्निरेव भस्मकं: इत्युच्यते (मा.नि. 6 पर मधु) ।

**हेतु**

(1) विभिन्न निदान सेवन के कारण -
- पित्त प्रकोपक आहारादि का सेवन से पित्त को होना ।
- वायु का आवृत्त या प्रकुपित होना ।
- कफ का क्षीण होना ।

(2) मिथ्या एवं अनुचित रूप से अग्निदीपन चिकित करने से ।

(3) रोग विशेष की अनुवर्द्धता ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



विकृति

- वायु से अनुगत पित्त (कुपित) का अपनी ऊष्मा से अग्निस्थान (ग्रहणीआदि) में स्थित अग्नि को बलवान बना देना ।
- वायु युक्त इस अग्नि (वायु द्वारा संधुक्षित) द्वारा स्व रूक्ष-तीक्ष्णता द्वारा अन्न का शीघ्र पराभव करना (शीघ्र पचा देना) ।
- पुन: भोजन करने पर पुन: और पराभव करना ।
- इस प्रकार बार-बार भोजन को शीघ्र पचा देना ।
- परिणामत: रोगी को बार-बार भूख लगना और किये भोजन से तृप्ति नहीं होना ।
- ना ही शरीर की पुष्टि हो पाना ।
- और निरन्तर क्षुधा से बेचैन रहना ।
- (दुर्भाग्य या अज्ञानवश) ऐसी स्थिति में यदि रोगी भोजन न करे तो उसकी अति तीक्ष्ण हुई अग्नि धातुओं को पचाने लगते हैं ।
- अत: रोगी कृश्य एवं दुर्बल होता जाता है ।
- और अन्तत: मृत्यु दुख में चला जाता है ।

लक्ष्य

(क) - तृषा निरन्तरता (च)
- क्षुधा अनुबद्धता (च)
- गलशोष, तालु शोष, ओष्ठ शोष (सु)
- दाह, संताप (सु)

(ख) - तृषा (च) (अ)
- कास (अ)
- श्वास (च)
- दाह (च) (अ), संताप (सु)
- मूर्च्छा (च) (अ)

(ग) - अपुष्टि (च) (कार्श्य)
- ओजक्षय (अ) (बलक्षय)
- मृत्यु (च) (अ)

(घ) - वात-पित्त जन्यरोग एवं उपद्रव करना ।

स्मरणीय है अग्नितीक्ष्णता की दृष्टि से इस रोगावस्था की तुलना एसिड डिस्पेप्सीया (ACID Dispepsia) से की जाती है तथा क्षुधा आधिक्य के कारण इसे व्युलीमीया (Bulimia) से तुलना की जाती है तथा भाजन बार-बार करने पर भी निरन्तर भार हानि होने से इस की तुल अवटुकाग्रन्थि विकृति - थायरोटॉक्सीकोसिस (Thyrotoxicosis) के साथ की जाती है । इसमें धात्वग्नि तीक्ष्ण के कारण देह धातु क्षीणता विशेष रूप से देखने को मिल है ।

भस्मक/अत्याग्नि का चिकित्सा सूत्र[8]

- जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि को जल से शांत कि जाता है उसी प्रकार इस अत्याग्नि रूप विकार गुरू-स्निग्ध, शीत-मधुर तथा विज्जल (पिच्छिल अन्नपान द्वारा शांत करें (च.चि. 15/221) इन अतिरिक्त मंद, सांद्र, स्थिर अन्नपान के द्वारा उपचार करें (अ) ।
- रोगी को बार-बार खाने को देवें । कदाचित पूर्व दिया अन्न न पचा हो तो भी पुन: पुन: आहार दि जाना अभीष्ट है । (च.चि. 15/223)
- क्योंकि भोजन न दिये जाने या देर से दिये जाने रोगी की मृत्यु होना भी संभव है । अत: 'निरन्त भोजन देते रहना चाहिए । (च.चि. 15/223)
- तीक्ष्णाग्नि पीड़ितों के लिये सभी मधुर, मेदुर (स्निग्ध भक्ष्य प्रयुक्त एवं पथ्य है (च)। इसी प्रकार स कफवर्धक एवं गुरु द्रव्य भी पथ्य होने से प्रयु है (च) ।
- भोजन कर सोना या दिवास्वप्न भी हितकर है ।
- बार-बार भूख लगने पर मेदुर अन्न-पान सेवन हित है क्योंकि वह पुष्टिकर है (पूर्व अन्न के पचने से ही अन्नादि देवें)
- ऐसा करने से कफ बढ़ने तथा पित्त एवं वायु के जा जाने पर सम हुई अग्नि सम धातु पुरुष के सेवित अ द्वारा पुष्टि प्रदान करती है । बल बढ़ाती है ।
- तीक्ष्णाग्नि की चिकित्सा स्निग्ध, अम्ल और लव क्रियाओं से चिकित्सा करें (सु) तथा तीक्ष्णाग्नि अत्याग्नि की चिकित्सा मधुर, स्निग्ध, शीतवीर्य द्र एवं विरेचन चिकित्सा करें (सु)।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



भस्मक चिकित्सा उपद्रव

(क) आहारादि की कल्पनायें[9]

- कफ कारक अन्नपान (भै.)(च) तथा पित्त-वात शामक आहार द्वारा चिकित्सा करें (च) ।
- तीक्ष्णाग्नि में स्निग्ध, अम्ल, लवण, द्रव्यों द्वारा उपचार करें तथा अत्याग्नि में स्निग्ध, मधुर, शीत (वीर्य) द्रव्यों के द्वारा चिकित्सा करें (सु)
- पुनः पुनः पूर्व किये भोजन के पचने से पूर्व ही आहार देवें (च) (सू)
- पित्तशामक एवं अग्नि की तीक्ष्णता कम करने हेतु गुरु/दुर्जर भोजन द्वारा चिकित्सा करें (भै.) ।
- मेदस्वी मेदवर्धक अन्नपान सेवन (भै.) ।
- घृत (जीवनीय), शर्करा एवं दूध पान (च) ।
- महीष का दूध, दही, घृत का सेवन करायें (सु) ।
- महीष के दूध को गुड़ के साथ पीना (भै.) शीतजल अनुपान (च) देवें ।
- घृत, वसा, मज्जा पान या सेवन तथा शीतानुपान (च)।
- सिक्थ (मोम) युक्त दूध या सिक्थ युक्त यवागू देवें (च) ।
- कृशरा देवें (प्रभूत स्नेहयुक्त एवं मांसादिकृत) (च) खीर खिलायें (भै.) ।
- स्निग्ध, पौष्टिक (पिष्टीकृत) गुड़ विकृतियां देवें (च)।
- प्रभूत घृत भ्रष्ट गोधूम चूर्ण, दूध कृत लेह (हलुवा) सेवन (च) ।
- प्रभूत स्नेह युक्त मांस भक्षण (च) आनूप, औदक पिशित (च) ।
- प्रभूतघृत युक्त मेषी मांस भक्षण (च) ।
- तैलयुक्त फल (बदामादि) कृत कल्प (च)।

(ख) विहार एवं उपक्रम

- दिवा स्वप्न ।
- सिरावेध पूर्वक गोधूम मेथ पान (च) ।
- विरेचक क्षीर कल्पना (त्रिवृत क्षीर) सेवन (च)
- (पित्तघ्न, अम्लपित्तघ्न, रक्तपित्तघ्न औषधोपक्रम प्रयोग)।

(ग) कुछ औषध कल्पनायें -

| | |
|---|---|
| स्वरस/रस | - लाक्षा । |
| कल्क | - उदुम्बर कल्क (उदुम्बरत्वक चूर्ण स्त्रीस्तन्य (च) या चावल का पानी (भै. |
| घृत | - जीवनीयगण सिद्ध घृत (च बदामपाकादि (च) |
| मृतिका | - मृत्कुञ्च (जलालोडित मिट्टी) को शर्क साथ पान (च) । |
| लौह | - त्रिफला, लौह (भै.)। |

अत्याग्नि - कुछ रोगी

| क्र० | घटक | 1 | 2 | 3 |
|---|---|---|---|---|
| (क) | आतुर | 1 | 2 | 3 |
| | आ.क. | 45 | 6799 | 2884 |
| | लिङ्ग | स्त्री | पुरुष | पुरुष |
| | वयवर्ष | 34 | 34 | 30 |
| | रोग | स्थौल्य (मेदोरोग) | कृश्य (100)(मधुमेह) | गलगण्ड (कृश्य) (द.ग.पा.) |
| | लक्षण | क्षुधाधिक्य | + | |
| | | क्षय | दाह | हृद्रव |
| | | भ्रम | तृषा | + |
| | | | विबंध | क्रोधाधिक्य |
| | | | | शकासहत्व |
| | | | | अनिद्रा |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| (ख) | औषध | | | |
| | | 1. संशमनी, दशमूल घनवटी 1-1 गोली प्रात: | 1. गुडुच्यादि सुदर्शन क्वाथ 2 तोला प्रात: | 1. दशमूल/गुडुच्यादि क्वाथ 2 तोला प्रात: |
| | | 2. आरोग्यवर्धिनी पुर्ननपवामण्डूर 1-1 गोली दो बार | 2. सप्तरंगी वटी सप्तपर्णवटी मामज्जक वटी 1-1 गोली दो बार | 2. आरोग्यवर्धिनी कांचनार गुग्गुल 1-1 गोली दो बार |
| | | 3. धात्रिलौह मण्डूर प्रवाल रसायन शुराल, पुननर्वा मिश्रण 1 मा. दो बार | 3. नवायस लौह अर्जुन, शतावर मधुमेहारि, प्रवाल, मि० 1 मा. दो बार | 3. सितोपलादि यष्टि, श्रृंग प्रवाल, अभ्रक कामदुधा, अर्जुन (लवण भास्क 1 मा. दो बार |
| | | 4. शंखवटी 1 गोली भोजनोत्तर | 4. हरड़े टिकडी 2 गोली रात्रि में | 4. हिंगुकर्पूर 1 गोली भोजनोत्तर |
| | | 5. लाक्षादिगुगुल | | |
| | | ब्राह्मीवटी | | |
| | | 1-1 गोली रात्रि में | | |
| (ग) | परिणाम | - क्षुधा में कमी | - | लक्षणशमन |
| | | - देह लाघववृद्धि<br>- स्वास्थ्य सुधार | -<br>- | -<br>यापन |

संदर्भ/आधार

1. च.वि. 6/10-12.
मंदस्तीक्ष्णोऽथ विषमः समश्चेति चतुर्विधः ।
कफपित्तानिलाधिक्यात्तत्साम्याज्जाठरोऽनल ।
विषमो वातजान् रोगांस्तीक्ष्णः पित्तनिमित्तजान् ।
करोत्यग्निस्तथा मेदो विकारान् कफसम्भवान् ।
सु०सू० 35/25, मा०नि० 6/1-2

2. मात्राऽतिमात्राऽप्यशिता सुखंयस्य विपच्यते ।
तीक्ष्णाग्निरिति तं विद्यातं XX (मा.नि. 6/3)
अतिमात्रमजीर्णेऽपि गुरूचान्नमयाश्नतः ।
दिवाऽपि स्वपतोयस्य पच्यते सोऽग्निरूत्तमः । (तंत्रान्त
तत्र तीक्ष्णोऽग्निः सर्वोपचार सहः (च.वि. 6/10)

3. पित्तला XX च.वि. 8/108
पित्तला तु पित्ताभिभूतेऽऽन्यधिष्ठाने तीक्ष्णभन्त्यन्न

4. च०सू० 6/8-15, सु०सू० 64/21-22 ।

5. च०सू० 21/3, 4-6 ।

6. यः प्रभूतमप्युपयुक्तमन्नमाशुचति स तीक्ष्ण,
स एवाभिवर्धमानोऽत्यग्निऽत्यग्निरि त्याभाष्यते
स मुहुर्मुहुः प्रभूतमत्युपमुक्तमन्नमाशुतर पचति,
पाकान्ते च गलताल्वोष्ठशोषदाहसंतापज्वनयति ।
सु०सू० 35/



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



7. वाच्यं मंदस्यतत्रोक्तमतिवृद्धस्य वक्ष्यते,
नरेक्षीणकफे पित्तं कुपितं मारूतानुगम् ।
स्वोष्मणः पावकस्थाने बलमग्नेः प्रयच्छति,
तथा लब्धबलो देहे विरूक्षं सानिलोऽनलः ।
परिभूयपचत्यन्नं तक्ष्ण्यादाशु मुर्हुमुर्हु,
पक्वाऽन्नं स ततो धातूञ्छोणितादीन् पचत्यपि ।
ततो दौबर्ल्यमातङ्कात्मृत्यु चोपनमेन्नरम्,
भुक्तेऽन्ने लभते शान्ति जीर्णमात्रे प्रताभ्यति ।
तृद्श्वासदाह मूर्च्छाद्या व्याधयोऽत्यग्नि संभवा ।
(च०चि० 15/211-21)

तीक्ष्णो मन्देन्ध नो धातून्विशोषयति पावकः
(च०चि० 15/49)

यदाक्षीणे कफे पित्तं स्वे स्थाने पवनानुगम्,
प्रवृद्ध वर्धयाव्याग्नि तदासौ सानिलोनलः ।
पक्वान्नमाशु धातूंञ्य सर्वानोजाश्च सक्षिपन्,
मारयेत् स्यात्स ना स्वस्थो भुक्ते जीर्णे तु ताम्यति ।
तृट् कासदाहमूर्च्छाया व्याधयोऽव्यग्नि संभवाः ।
(अ०सं०चि० 13/-)

8. XX
तीक्ष्णे मधुरस्निग्ध शीतविरेकैच,
एवमेवात्याग्नौ, विशेषेण माहिषैश्च क्षीरदधि सर्पिभिः ।
सु०सू० 35/26

तमत्यग्नि गुरू स्निग्ध शीतैर्मधुररविज्जलैः
अन्नपानैर्नयेच्छत्ति दीप्तमग्निमिवाम्बुभिः ।
च०चि० 15/222

9. च०चि० 15/223 - 234
सु०सू० 35/36-1
भै०र० 10/14 -

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
यह चूर्ण पेट साफ करता है तथा
पाचन शक्ति और भूख बढ़ाता है।
इससे पेट के कृमि भी दूर होते हैं।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# हिमाचल प्रदेश के लोकप्रचलित परम्परागत सुगन्धित एवं औषधीय पौधे

*डा० मायाराम उनियाल, वनौषधि विद्यापति (श्रीलंक

हिमालय के आँचल में स्थित हिमाचल प्रदेश पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य में उसी प्रकार स्थित है जैसे शरीर में हृदय होता है । प्राकृतिक सौन्दर्य शान्ति और सद्भावना का प्रतीक यह नैसर्गिक सुषमा से भरपूर राज्य भारत में 33°,22'' से 30°,12'' उत्तरी अक्षांश तथा 75°,47'' से 79°, 4'' पूर्वी देशान्तर पर बसा हुआ है । इसका क्षेत्रफल 55658 वर्ग कि०मी० पहाड़ी प्रदेश, उत्तर में सौन्दर्य समृद्ध काश्मीर, पूर्व में तिब्बत के उजाड़ और बियावान पठार, दक्षिण में उत्तराञ्चल, हरियाणा, पश्चिम में पंजाब के धनधान्य से परिपूर्ण प्रदेश से घिरा हुआ है । लगभग पूरा हिमाचल प्रदेश छोटी-छोटी पहाड़ियों एवं ऊँची-ऊँची पर्वत चोटियों से भरपूर है । इन पर्वत श्रृंखलाओं की समुद्रतल से ऊँचाई 400 मीटर से लेकर 5500 मीटर से भी अधिक के बीच पाई जाती है । यही कारण है कि विश्व में हिमालय जैसा पहाड़ दूसरा नहीं है । शायद इसलिए कृष्ण भगवान् ने स्वयं को हिमालय जैसा कहा है ।

यथा :-**महर्षिणां भृगुरहं गिरामस्म्येक मक्षरम् ।**
**यज्ञानां जप यज्ञोऽस्मि स्थावराणा हिमालय: ।।**

अर्थात् महर्षियों में मैं भृगु हूँ, वाणी में ऊँ, यज्ञों में जपयज्ञ, स्थावरों में साक्षात् हिमालय हूँ । इसीलिये हिमालय को देवलोक, या देवभूमि कहा है । हिमाचल के हिम शिखर एवं पहाड़ियाँ विविध ऊँचाई होने के कारण नानाविध प्राकृतिक दृश्य एवं ज़लवायु इस प्रदेश की है जिसके कारण इस प्रदेश की वन सम्पदा में काफी विविधता पाई जाती है । प्रकृति ने इस प्रदेश को भिन्न-भिन्न प्रकार की सुगन्धित एवं औषधीय प्रजातियों से सुशोभित किया है । प्रदेश में पाई जाने वाली लगभग 3500 प्रजातियों में से 250 किस्म की प्रजातियाँ औषधीय व्यावसायीकरण की हैं । वनों में पाई जाने वाली इन प्रजातियों के औषधीय महत्व को देखते हुए इनके संरक्षण, सम्बर्धन के प्रति हम सबका उत्तरदायित्व बन जाता है ताकि अनैतिक विदोहन के कारण इनके विलुप्त होने के खतरे से बचा जा सके । इसके लिये हिमाचल को भी हर्बल राज्य का दर्जा मिलना जरूरी है । इस प्रदेश की जलवायु के आधार पर जहाँ ऊँचे-ऊँचे पहाड़ बर्फ से ढके रहते हैं । वहाँ सिरमौर के पौंटा, माह विलासपुर, ऊना, हमीरपुर, तलहटी वाले इलाके मैदानों तरह गर्मी का अनुभव कराते हैं । बर्फीली चोटियों बुग्यालों (एलपाईन मेड़ोज) में हरी घास से भरे मखम ढलान, रंग-बिरंगे सुगन्धित पुष्पों की नैसर्गिक सुग सदाहरित कतार में देवदार के वृक्ष सैलानियों को मंत्र करते हैं । इन्हीं हिम शिखरों के मध्य में कई प्राकृतिक स्रोत विद्यमान हैं । इसमें मनीकर्ण, कसोल, खीर तातापानी, वशिष्ठ तथा अन्नुनाला आदि सुप्रसिद्ध धार्मिक एवं पौराणिक महत्व के हैं । इसी प्रकार इस से बहने वाली नदियाँ और झीलें इस क्षेत्र के सौन्दर्य में चाँद लगाती हैं । वर्तमान में चिनाव (अरिकरी), (पुरूषणी), रावी (इरावती) तथा सतलुज (शतदुई) नदियाँ हिमालय की हिमशैलों से निकलकर पंजाब जम्मू-कश्मीर चली जाती हैं । इन नदियों का उल्ल ऋग्वेद में वर्णित है । रेणुका झील हिमाचल में सबसे प्राकृतिक झील है । इस झील का नामकरण भग परशुराम की माता देवी रेणुका के नाम से किया गया अन्य प्रमुख झीलें जिला-चम्बा में घड़ासरू, खजि लामा, मनिमहेश, महाकाली झील काँगड़ा में पौंग डल तथा-करेरी झील, रिवालसर झील, लाहुलस्पीत सूरज ताल, चन्द्रताल आदि कतिपय झीलें हैं । इसी प्र किन्नौर में नाको, सौरांग झील हैं । मानव निर्मित व्यास नदी में पंड़ोहबाँध तथा विलासपुर में गोविन्द झील है । पर्यटन स्थलों में शिमला, धर्मशाला, डलहौ खजियार, कुफरी, चम्बा, कुल्लू-मनाली, रोटाँगपास, आदि कतिपय पर्यटन स्थल है ।

**हिमाचल की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं वनौषधियों लोक प्रचलन:-**

हिमाचल की प्राचीनता तथा ऐतिहासिकता निर्देशन वैदिक काल तथा पौराणिक साहित्य के प्राप्त माना जाता है । ऋग्वेद एवं पुराणों में हिमाचल जल खण्ड से प्रसिद्ध है ।

यथा :-**खण्डा पञ्च हिमालस्य कथिता नैपाल कुर्माच**

* निदेशक, महर्षि आयुर्वेद प्रोडक्टस् लि०, एन०ई०पी०जेड, नोएडा, उ०प्र०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



केदारोऽथ जलन्धरोऽथ रूचिरः कश्मीर संज्ञोत्तियः ॥
(केदारखण्ड)

कालान्तर में जालन्धर का नाम दोआब के मैदानी क्षेत्रों के लिये भी पड़ गया । ऐसी मान्यता है कि देवासुर संग्राम में दैत्य वध के समय इनके अंगों के गिरने के अनुसार उन स्थानों के नाम उसी आधार पर पड़ गये । जैसे कान गिरने से कानगढ़ तथा कालान्तर में काँगड़ा नामकरण हो गया । वैदिक प्रमाणों के आधार पर हिमाचलीय भू-भागों में कतिपय अनार्य जातियाँ किन्नर, कोल, किरात, यक्ष, नाग आदि का निवास हिमायल बताया जाता है । विष्णुपुराण में कुल्लु को कुल्लूत नाम दिया है । महाभारत में भी हिमाचलीय भू-भागों के कतिपय उदाहरण मिलते हैं । काँगड़ा दुर्ग को भीमकोट भीम के नाम पर कहा जाता है । भीम ने मनाली में हिडम्बा नामक राक्षसी से विवाह किया । विदुर ने हिडम्बा के भाई ताण्डी की कन्या से विवाह किया । इसके अतिरिक्त पाणिनि अण्टाध्यायी में हिमाचल के कई स्थानों के नामों का उल्लेख मिलता है । कुलिन्द (जगाधरी और सिरमौर) युगाँधर (विलासपुर-नालागढ़), त्रिगर्त (काँगड़ा), औदुम्बर (पठानकोट) गोब्दिका (चम्बा), कुल्लुत (कुल्लु) आदि नाम पौराणिक स्थान सूचक हैं । सिरमौर की प्राचीनता के साथ जमदग्नी ऋषि तथा उनके पुत्र परशुराम का सम्बन्ध (रेणुका झील) तथा मण्डी का माण्डव्य ऋषि से पुरातन सम्बन्ध है । महाकवि कालिदास ने भी अपने काव्यों में हिमालय स्थित अलकापुरी किन्नर प्रदेश के समीप माना है । इसी प्रकार संस्कृत साहित्य में कतिपय सन्दर्भ स्थल हिमाचल प्रदेश के स्थानों से सम्बन्धित हैं । पारम्परिक स्थानिक, जड़ी-बूटियों के सर्वेक्षण एवं अनुसंधान तथा शोध कार्यों में इन धार्मिक स्थलों एवं भू-भाग के ऐतिहासिक महत्व की जानकारी गवेषकों के लिये अनिवार्य है ।

हिमाचल प्रदेश वन बहुल क्षेत्र होने के कारण इस प्रदेश का जन-जीवन प्रकृति के साथ अत्यन्त निकट का सम्बन्ध है । यह समीपता, साहचर्य एवं उसका सूत्रपात मानव के आदि विकास से ही हिमालय की पुरातन संस्कृति एवं धार्मिकता का अभिन्न अंग बना हुआ है । ग्रामीण और पर्वतीय क्षेत्रों में प्राकृतिक साधनों, उत्पादनों एवं उपलब्धियों का जीवन यापन के प्रत्येक पक्ष के रूप में अधिक से अधिक उपयोग किया जाता है तथा स्थानिक वनों में उत्पन्न वनौषधि सम्पदा का शारीरिक मानसिक व्यवस्था की रक्षा तथा रोगों की चिकित्सा हेतु दैनिक रूप में उपयोग महत्वपूर्ण है । इस क्षेत्र में कतिपय लोकप्रचलित (किम्वदन्ती) जड़ी-बूटियाँ उपलब्ध हैं जिनसे भोटिया, गद्दी, लाहुली, मंडियाली, डोमरा, काँगड़ी आदि जन-जातियाँ परिचित हैं और अपने लोक व्यवहार एवं उपचार में इनका प्रयोग करते हैं । इस प्रकार हिमाचल के ग्रामीण एवं आदिवासी घरेलू उपचार में पुरानी परम्परा से जुड़ी हुई इन स्थानिक जड़ी-बूटियों का उपयोग करते आ रहे हैं । इन उपचारों में स्थानिक लोकोक्तियों का विशेष महत्व है । यहाँ के लोकगीतों में स्वदेशी या पारम्परिक रोगों के उपचार की झलक देखने को मिलती है । लोक साहित्य में कई उपयोगी सामग्री उपलब्ध हैं इन पर्वतीय लोक भाषाओं में रचित एवं प्रदेश में प्रचलित लोकगीत, कथायें, नाटक, लोकनृत्य यहाँ की संस्कृति की पहचान एवं अभिन्न अंग हैं । इनका धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कलात्मक महत्व के साथ-साथ तत्कालीन ऐतिहासिक ज्ञान के स्रोत भी हैं । इनमें वन सम्पदा की उपादेयता, रोगों का इलाज, स्वास्थ्य रक्षण के साथ-साथ जड़ी-बूटियों का स्थानिक नाम हिमाचली भाषा में उपलब्ध है । सामाजिक रीति-रिवाज, धार्मिक-विश्वास, मान्यतायें एवं परम्परायें जादू-टोना, तंत्र-मंत्र प्रयोग, देवता पूजन, तीज त्योहार, मिंजर मेले, नाटक, पूजा-अर्चना एवं ऋषियों की पूजा आदि प्रमुख विषय है जिनमें ग्रामीणों में प्रचलित जड़ी-बूटियों के विषय में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से लाभकारी प्राप्त होती है । स्थानिक लोक जान कहावतों में अनेक महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध होती हैं । उदाहरण के लिये "जियु वणहा बसूटी बरे, तिथु माहण किया मरे ।" अर्थात् जहाँ पर निंगुण्डी, वासा तथा वचा जैसी वनौषधियाँ विद्यमान हों वहाँ मनुष्य कैसे मर सकता है । इस प्रकार ग्रामीण दुर्गम क्षेत्रों में घरेलू देशी चिकित्सा का पुरातन परम्परागत लोकोचार आज भी प्रचलित है । इस क्षेत्र के सीमान्त एवं सुदूर स्थानों में बसने वाली आदिवासी जनजातियों


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



में लाहुली, किन्नौरी, जौनसारी, भोटिया, गद्दी आदि प्रमुख हैं । इनके वास्तविक साहचर्य के साथ वनों एवं बुग्यालों में भ्रमण कर अनेक किस्म की दिव्यौषधियों की पहिचान, लोकप्रचलित नाम एवं स्थानिक गुणधर्मों का पता लगाया जा सकता है जो विशेष कर ऊँची पहाड़ियों एवं जोतों पर अगस्त-सितम्बर में पुष्पित होती हैं । इन ऊँचाई वाली जोतों पर सुगन्धित बूटियाँ एक नशा-सा पैदा करती हैं । जो व्यक्ति पहली बार इन बुग्यालों (जोतों) पर जाता है । उसको कई बार सिर चकराना, उल्टी हो जाने की शिकायत हो जाती है । शिमला जिला की चांसिल घाटी, मुरालडांग मण्डी की शिकारी देवी, कुल्लु का मुभन जोत मानतलाई, काँगड़ा में बड़ा भंगाल, कीथाम, सरजात, पाँ भरमौर, चम्बा का साजपास तथा सिरमौर का चूड़-चाँ आदि चोटियाँ इस प्रदेश की विशेषता है ।

शीर्षक लेख में इस प्रदेश की लोकप्रचलि परम्परागत सुगन्धित (एरोमैटिक) एवं औषधीय जड़ी-बू की तालिका पाठकों की जानकारी के लिये देने का प्र किया गया है जोकि इस प्रकार से है ।

तालिका न०-1

स्थानिक ग्रामीण परम्परागत उपयोग सुगन्धित औषधीय पौधे

| क्र०सं० | संस्कृत/स्थानिक नाम | वानस्पतिक नाम | प्रयोज्य अंग | स्थानिक प्रयोग |
|---|---|---|---|---|
| 1. | कपूर मिन्जर | Strabilanthes auriculatus | पुष्प मंजरी से संग्रहित सुगन्धित तैल | नेत्र विकार, रतौंधी एवं मोतियाबिन्द में उपयोगी |
| 2. | चोरक, चोरा | Angelica glauca | सुगन्धित मूल | दीपन, पाचन, उदर विकार, मसालों के रूप में प्रयोग |
| 3. | चण्डा/कठचोरा | Angelica archanglica | सुगंन्धित मूल | चोरा के समान गुणधर्म |
| 4. | गन्ध्रायण, धत्र्या | (i) Heracleum candicans<br>(ii) Heracleum pinnatum | सुगन्धित मूल | मूल एवं बीजों का प्रयोग ग्रामीण मसालों में करते हैं । |
| 5. | भूतकेशी, मठोसल | (i) Selinum vaginatum<br>(ii) Selinum tenuifolium | सुगन्धित मूल (रोमिल) | भूतबाधा हर, धूपन ए मूल का प्रयोग स्थानि छंग (मद्य) बनाने के लिये करते हैं । |
| 6. | जटामाँसी/माँसी | Nardostachys jatamansi | सुगन्धित मूल (रोमिल) | हवन सामग्री, धूपन ए मानसिक रोगों में उपयोगी |
| 7. | छत्र्या / जंगली अजवायन | Trachyspermum falconeri | बीज, मूल | सुगन्धित बीजों का प्र मसालों में करते हैं। |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र०सं० | संस्कृत/स्थानिक नाम | वानस्पतिक नाम | प्रयोज्य अंग | स्थानिक प्रयोग |
|---|---|---|---|---|
| 8. | लेसर, घुग्गी | Pterospermum candallii | पंचांग (उग्रसुन्धित) | पंचांग का उपयोग धूपन सामग्री, मानसिक विकारों में करते हैं । |
| 9. | वन्य यवानी | Thymus serpyllum. | पंचाँग (सुगन्धित) | पंचांग का प्रयोग, मूत्रल उदरशूल, वमन, अतिसार में ग्रामीण करते हैं । |
| 10. | गंगा तुलसी, सपरा | Origanum vulgare | सुगन्धित पत्र एवं पंचांग | पत्र का फोड़े-फुन्सी में लेप करते हैं, पंचांगक्वाथ उदर कृमि, ज्वरघ्न में प्रयोग । |
| (इसके अतिरिक्त Pimpinella एवं Bupleurum शतपुष्पा कुल की कतिपय सुगन्धित किस्में हिमाचल के बुग्यालों (एलपाईन मेडोज) में पायी जाती हैं । | | | | |
| 11. | काली जड़ी, लफरा कूठहर | (i) Salvia moorcroftiana (ii) Salvia lanata | मूल, पत्र (सुगन्धित) | प्रतिश्याय, कास एवं उदर शूल में उपयोगी । |
| 12. | नैर, केदारपाती | Skimmia laureola | सुगन्धित पत्र | धूपन सामग्री में एवं मच्छरों को भगाने हेतु धुआँ देने में पर्यावरण प्रदूषण दूर करने में उपयोगी है । |
| 13. | टिमुर, तेजबल | Zanthoxylum alatum | बीज, पत्र, छाल | दन्तकृमिनाशक, मुख-शोधक, उदर रोगों में उपयोगी |
| 14. | कड़ी पत्ता, गन्धेलो | Murraya Koenigii | पत्र (सुगन्धित) | पत्र पाचक एवं मधुमेह में उपयोगी |
| 15. | पिस्सूमार बूटी | Boenninghausenia albiflora | पंचांग (दुर्गन्ध युक्त गन्ध) | मच्छरों को भगाने के लिये ग्रामीण इसके धुआँ का प्रयोग करते हैं |
| 16. | ड़ियाँकु, तस्क्या | Nepeta longibracteata | सुगन्धित पंचांग | कास-श्वास, फुफ्फुस विकार में उपयोगी |
| (हिमाचल प्रदेश के वारालाचा पास में Nepeta की कतिपय सुगन्धित जातियाँ पायी जाती है जिनका उपयोग स्थानिक लामा एवं आमची मकलोड़गंज धर्मशाला में करते हैं) | | | | |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र०सं० | संस्कृत/स्थानिक नाम | वानस्पतिक नाम | प्रयोज्य अंग | स्थानिक प्रयोग |
|---|---|---|---|---|
| 17. | विषकंडार | Morina longifolia | मूल (सुगन्धित) | मूल का उपयोग व्रणशोथ में बाह्य लेप के रूप में करते हैं । बराबर सुगन्ध लेने से मूर्च्छा आती है। स्थानिक संज्ञाहर के रूप में । |
| 18. | ढ़ेलु<br>हाउबेर | (i) Juniperus communis<br>(ii) Juniperus recurva | फल, पत्र (सुगन्धित) | पत्र का उपयोग धूपन, रक्षोघ्न के रूप में एवं फल स्थानिक छंग (मद्य) बनाने में प्रयोग करते हैं । |
| 19. | ब्रह्मकमल, फेनकमल | (i) Saussurea obvallata<br>(ii) Saussurea gossypiphora | पुष्प (सुगन्धित) | भूत बाधा हर, ग्रह बाधा हर मानसिक विकार में उपयोगी |
| (Saussurea की अन्य सुगन्धित जातियाँ भी मिलती हैं जिनका लोकपरम्परा में विशेष रूप से उपयोग होता है।) | | | | |
| 20. | जातुकन्द, गुगलधूप | Jurienea macrocephala | मूल (सुगन्धित) | मूल का उपयोग धूपन एवं यज्ञ सामग्री में होता है । |
| 21. | गोगल | Tanacetum longifolium | पंचांग (सुगन्धित) | पंचांग का प्रयोग मानसिक रोगों में एवं धूपन के रूप में उपयो |
| 22. | शेषकी, कीटमारी | Artemisia maritima<br>Artemisia sacrorum | पंचांग (सुगन्धित) | कृमिहर, देवपूजन में सुगन्धित तुलसी के रू में उपयोग करते हैं। |
| 23. | जंगली गुलाब | Rosa moschata<br>Rosa macrophylla | पुष्प (सुगन्धित) | गुलकन्द एवं गुलाब जल के रूप में प्रयोग करते हैं । |

इसके अतिरिक्त अन्य सुगन्धित औषधीय पादप एवं स्थानिक जड़ी-बूटियों से ग्रामीण उपचार करते हैं। तुलसी, बर्बरी (जंगली तुलसी), मरूबक (मरवा), गन्धमूला (कोलियस), पुदीना (मैन्था), मुश्कबला (तगर), कपूरकचरी (शटी), नरकचूर आदि पादप प्रमुख हैं ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तालिका न० - 2

व्यावसायिक रूप से संग्रह किये जाने वाले औषधीय पादप

| क्र०सं० | आयुर्वेदिक / स्थानिक नाम | वानस्पतिक नाम | प्रयोज्य अंग |
|---|---|---|---|
| 1. | अतीस / पतीस | Aconitum heterophyllum | मूलकन्द |
| 2. | वत्सनाभ / विख | Aconitum chasmanthum | मूलकन्द |
| 3. | किरमाला, शेषकी | Artemisia maritima | पत्र, पुष्प |
| 4. | रतनजोत,<br>लालजड़ी | (i) Arnebia benthamij<br>(ii) Onosma echioides | मूल<br>मूल |
| 5. | जातुकन्द / धूप | Jurienea macrocephela | मूल |
| 6. | हाऊबेर, ढ़ेलु | Juriperus communis | फल |
| 7. | पुष्कर मूल | Inula racemosa | मूल |
| 8. | कालाजीरा | Carum carvi | बीज |
| 9. | सोम / टुटगंडा | Ephedra gerardiana | काण्ड |
| 10. | खुरसानी अजवायन | Hyoscyamus niger | बीज |
| 11. | जटामाँसी, माँसी | Nardostachys jatamansi | मूल, (राइजोम) |
| 12. | सालमपंजा | Orchis latifolia | कन्द |
| 13. | कुटकी, कौड़ | Picrorhiza kurroa | मूल |
| 14. | वन ककड़ी | Podophyllum hexandrum | मूल, (राईजोम) |
| 15. | मेदा-महामेदा | Polygonatum verticellatum | राइजोम |
| 16. | रेवन्दचीनी/आर्चा | Rheum emodi | मूलकन्द |
| 17. | भूतकेशी / मठोसल | Selinum Vaginatum | राइजोम (मूल) |
| 18. | चिरायता | Swertia chirata | पंचांग |
| 19. | रखाल, थुनैर | Taxus baccata | पत्र |
| 20. | सुगन्धवाला/तगर | Valeriana wallichii | मूल |
| 21. | वन्पशा, गुलवन्पशा | (i) Viola, odorata<br>(ii) Viola serpens | पुष्प, पंचांग |
| 22. | काकोली | Roscoea procera | मूल |
| 23. | पाषाण भेद | Bergenia liqulata | मूल |
| 24. | कूठ | Saussurea lapa | मूल |
| 25. | बचा | Acorus calamus | राइजोम |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र०सं० | आयुर्वेदिक / स्थानिक नाम | वानस्पतिक नाम | प्रयोज्य अंग |
|---|---|---|---|
| 26. | शटी/कपूरकचरी | Hedychium spicatum | राइजोम |
| 27. | ब्राह्मी (मण्डूकपर्णी) | Centella asiatica | पत्र |
| 28. | दारुहरिद्रा | Berberis aristata | काण्ड, मूल |
| 29. | ऋद्धि | Habenaria intermedia | कन्द |
| 30. | हृत्पत्री, तिलपुष्पी | Digitalis lanata | पत्र |
| 31. | दुग्धफेनी, दुधी | Taraxacum officinale | मूल |

उपरोक्त औषधीय पादपों का व्यापारिक रूप से हिमाचल प्रदेश से संग्रह किया जाता है। अनैतिक विदोहन प
ज्य सरकार का नियंत्रण होना अनिवार्य है। इन प्रजातियों के संरक्षण-सम्वर्धन पर विशेष कार्य करने की आवश्यकता हैं
विक कृषि द्वारा उत्पाद बढ़ाना इन लुप्तप्राय किस्मों का अनिवार्य है।

परीक्षा के समय आपके लाड़ले को जरूरत है
एकाग्रता और अधिक कार्यक्षमता की

आपके लाड़ले का उज्ज्वल भविष्य आपका सपना है। पर आज की तीव्र प्रतिस्पर्धा व पढ़ाई का बोझ आपके लिए चिंता का विषय भी है। ऐसे माहौल में आपके बच्चे को जरूरत है एकाग्रता व समझने की क्षमता की, उसे जरूरत है

बैद्यनाथ शंखपुष्पी की,
तो आज ही से
अपने लाड़ले को दीजिए...

बैद्यनाथ
शंखपुष्पी
शरबत
एकाग्रता लाए, समझ जगाए
आज, हरसोज और वर्षभर




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अभ्यंग आचरेन्नित्यम्

वैद्य ह० श्री० कर्म

वैसे देखा जाए तो अभ्यंग एक अत्यंत सामान्य उपक्रम है । पंचकर्म के पूर्व कर्म के प्रारंभ में स्नेहन-स्वेदन एवं बाह्य स्नेहन में इसका निर्देश किया गया है । तथापि मात्र पूर्व कर्म ही नहीं अपितु एक चिकित्सा उपक्रम की तरह भी इसका निर्देश किया गया है और वह अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ दृगोचर होता है । अनेक रोगों में खासकर वातव्याधि में यह अत्यंत उपयोगी चिकित्सा होती है ।

वातव्याधि में प्रमुख चिकित्सा सूत्र इस प्रकार है ।

असकृत्तं पुनः स्नेहैः स्वेदैश्चाप्युपादयेत् ।
तथा स्नेहमृदौ कोष्ठे न तिष्ठंत्यनिलामयाः ॥

च०चि० 28-72

अर्थात् वात व्याधि से पीड़ित आतुरों के बार-बार स्नेहन और स्वेदन करना चाहिये । क्योंकि स्नेहन से मृदुकोष्ठ होने पर कोई वात व्याधि वहां टिक नहीं सकती । इसका मतलब वात व्याधि वालों को नित्य अभ्यंग करना चाहिये ।

वैसे भी - **अभ्यंग माचरेन्नित्यं स जराश्रमवातहा ।**

ऐसा वाग्भट कहते हैं । नित्य यानि प्रतिदिन अभ्यंग करनेवाले को वृद्धत्व जल्दी नहीं आता । काम करने से थकावट नहीं सताती और वह त्वचा को दृढ़ बनाता है, चमकीला बनाता है । भारतीय परंपरा में प्राचीन काल से अभ्यंग का संस्कार में ही प्रसार-प्रचार हुआ मिलता है । प्रसूति के बाद बच्चे की माता या दाई अपने दुलारे को बहुत प्यार से मालिश कर नहलाती है । एक अमेरिकन महिला ने 'अभ्यंग' पर एक छोटी पुस्तक लिखी हुयी मैंने 1983 में अमेरिका में देखा था । यह महिला 1980 के आस-पास भारत के दौरे पर आई और घर-घर में घूमकर भारतीय महिलाओं से अपने बातचीत की और देखा कि कितने प्यार से वे अपने बच्चें को मालिश करती हैं । तब उसने एक पुस्तक लिखी - उसका नाम है 'Loving Hands' - यानि की 'वात्सल्य हाथ' ? क्या समझदार पूर्वक नाम रखा है । इस नाम से दो प्रकार के निर्देश मिलता है । एक तो यह अभ्यंग मात्र एक यांत्रिक प्रक्रिया नहीं है । अपितु अभ्यं करनेवाले का मानसिक संस्कार ही बच्चे को 'ठीक' क के लिये उपचार है । हमने देखा कि अनेक जगह पर अभ्य के लिये मशीनें बनाई गई हैं । आज के युग में मशीन अभ्यंग काम लेना बहुत सामान्य हुआ है । हमने (डॉ कुरूप और मैं) 1965-1970 में जामनगर में एक यांत्रि टेबल बनवाया था - जिसमें यांत्रिक हाथ अभ्यंग त पिड़िचित्रि (स्नेहांश स्वेद) किया जाता था । यह यंत्र च आदमियों का काम अकेले कर सकता था । तथापि प्रयोग यशस्वी नहीं हुआ । रोगी को जो एक मानसि अश्वासन, मानवीय हाथ से मिलता है उसमें रोग प्रशस्त अद्‌भुत लाभ मिलता है । अतः यद्यपि यांत्रिक कर्म नियमि युक्ति पूर्वक और बिना व्यापक के अभ्यंग, पिंड़स्व पिपिंचिचि इत्यादि कार्य करता है तथा उसका पूर्णतः प्रभ नहीं देखा जाता ।

एक बार मैं अमेरिका में पंचकर्म पर व्याख्यान रहा था, इसमें अभ्यंगादि अनेक विषयों का विस्तारपूर्व चर्चा हुआ करती थी । मेरे व्याख्यान के बाद एक अमेरिक श्रोता ने मुझे बड़ा चमत्कारिक प्रश्न पूछा ।

उसने पूछा - जब एक व्यक्ति अपने हाथ से दू के शरीर पर मालिश करता है तो क्या करने वाले से अ (Energy) उसमें प्रविष्ट होकर उसका ओजक्षय न होता ?

प्रश्न मार्मिक था । हम मालिश करते हैं तो हम संबंधी, रिश्तेदार अच्छा हो इस भावना से ओत-प्रोत हाव करते हैं । किन्तु अस्पताल में जब कर्मचारी करते हैं तो उ मेहनताना (पगार) मिलता है इस भावना से करते ह तथापि मैंने अपने मणिबेन हॉस्पीटल के पंचकर्म प्रमुख प से कार्यकाल में अनुभव किया कि भारतीय कर्मचारियों रोगियों के साथ मात्र रोगी और प्रभारी कर्मचारी इतना संबंध नहीं रहता, अपितु मानवीय संस्कार स्वभाव ज दया, प्रेमभाव से नित्य संपर्क से उसे निकटतम संम्बन्ध जाता है । इस प्रबल भावना से वे काम करते हैं और इ भावना का प्रवाह वास्तविक कार्यक्रम प्रदान में महत्वपू

वैद्य एच.एस. कस्तूरे, 22, स्वर एपार्टमेन्ट, 5 कीर्ति कालोनी, उस्मानपुरा रेलवे क्रासिंग के पास, एरोमा स्कुल रोड, उस्मानपुरा, अहमदाबाद -

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



व पैदा करता है ।

आचार्य रजनीश कहा करते थे कि मनुष्य के मन जो भावना की लहरें उत्पन्न होती हैं वे हवा में फैल कर सका प्रभाव दूसरों पर भी उत्पन्न करती हैं । इसी लिये म बाहर जाते समय यदि दुःखद प्रसंग से कोई रोता-गिड़गिड़ता ल रहा हो, तो मन उदास हो जाता है, आनंद मंगल प्रसन्न ल रहा हो तो मन प्रसन्न होता है ।

यही प्रक्रिया अभ्यंग प्रक्रिया में कर्मचारी की ावना के प्रभाव से रोग प्रथम प्रभाव में हो सकती है ।

कभी-कभी हॉस्पीटल में देखा जाता है कि त-बात पर क्षुब्ध होनेवाले आतुर के साथ कर्मचारी यदि सा ही क्षुब्ध व्यवहार करता है तो औषधि, अभ्यंगादि क्रिया गुणकारी होते हुए भी उस प्रकार से असरकारक हीं होती जो प्रसन्न चित्त व्यक्ति में होती है ।

मतलब अभ्यंग करते समय कर्मचारी की यह ावना कि मैं तुम्हें अच्छा आरोग्य प्राप्त हो इसलिये यह र्म कर रहा हूँ - हो तो वह कर्म शीघ्र प्रभावकारी होता । अन्यथा अपच प्रभावी होता है ।

अभ्यंग के लिये कुछ विशिष्ट तैल विशेष प्रभावकारी ते हैं । जो इस प्रकार हैं ।

1. चंदनबला लक्षादि तैल - दुर्बलता, काश्र्य, क्षतक्षीण अभ्यंग से शक्ति आती है ।
2. क्षीर बला तैल यह बृंहण कार्य करता है । आभ्यंत प्रकोप में भी श्रेष्ठ तैल है ।
3. दशमूल तैल - वातहर है । कटिशूल, गृध्रसी अवबाहु आदि में अभ्यंगार्थ उत्तम है ।
4. महानारायण तैल - खंज, पांडु, पक्षाघात, जिन रोगों इंद्रियों का कर्मक्षय प्रधान हो उनमें बहुत अच्छा लाभ करता है ।
5. पंचगुण तैल - शूल प्रधान व्याधि में उपयोगी होता है
6. विषगर्भ या महाविषमगर्भ तैल - यह भी शूल प्रधा व्याधि में उपयुक्त होता है ।
7. सहचर या सहचरादि तैल - यह पक्षाघात तथा पेशं दौर्बल्य में कार्य कर होता है ।
8. मांस्यादि तैल - (जटामांसी) यह शिरोधारा से निद्र रोगों में कार्य करता है ।
9. ब्राह्मी तैल - मानस रोग, मेंटल रिट्रार्डेशन में धरा तथ अभ्यंग के लिये उत्तम कार्य करता है ।
10. अश्वगंध तैल - मांसवह बढ़ाने के लिये तथा शक्ति भार (बृंहण) बढ़ाने के लिये उत्तम होता है ।

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# राजयक्ष्मा का प्रतिबन्धक चिकित्सा सिद्धान्त

* डा० राकेश कुमार वर्मा ** डा० राकेश कुमार श्रीवास्तव *** डा० बृजकुमार द्विवेदी

आयुर्वेद जीवन का विज्ञान है । जीवन के चार प्रमुख उद्देश्य - (1) धर्म अर्थात् धार्मिक कृत्यों को करना (2) अर्थ अर्थात् धनोपार्जन करना (3) काम अर्थात् सांसारिक कामनाओं की पूर्ति करना (4) मोक्ष अर्थात् मुक्ति करना । इन उद्देश्यों की प्राप्ति तभी सम्भव हो जबकि मनुष्य का स्वास्थ्य उत्तम रहे । इन उद्देश्यों की पूर्ति में विश्व की समस्त चिकित्सा पद्धतियों में आयुर्वेद अग्रणी है । आचार्य चरक के अनुसार आयुर्वेद की परिभाषा इस प्रकार है :-

हितहितं सुखं दुखमायुस्तस्य हिताहितम् ।
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते ॥

(च०सू० 1/40)

अर्थात् आयुर्वेद वह विज्ञान है जिसके द्वारा जीवन के हित, अहित, सुख, दुख, पथ्य, अपथ्य, आयुर्वेद के प्रमाण का ज्ञान होता है । इस परिभाषा से यह स्पष्ट है कि आयुर्वेद मनुष्य के वैयक्तिक दृष्टिकोण तक ही सीमित नहीं है । यह समाज को भी उतना ही महत्व प्रदान करती है जितना एक व्यक्ति को ।

**प्रतिबन्धक चिकित्सा का अर्थ** - रोग के उत्पन्न होने के पूर्व उसे रोकने के उपाय । आयुर्वेद का उद्देश्य - स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणं आतुरस्य विकार प्रशमनं च । इसी से स्पष्ट हो जाता है कि स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना आयुर्वेद में सर्वोपरि है ।

आयुर्वेद में एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए बहुत से निर्देशों जैसे सद्वृत पालन, आचार रसायन सेवन, धारणीय वेग धारण करना, अधारणीय वेग धारण न करना इत्यादि तथा साथ ही साथ निषेधों का भी विस्तार से वर्णन किया गया है । अतः यह कहा जा सकता है कि Prevention in Better than cure जिसके महत्व के बारे में शास्त्रों में कहा भी गया है कि - प्रक्षालनाद्धि पंकस्य दूरास्पर्शनम् नरम् अर्थात् कीचड़ में पैर डालकर धोने से तो यही अच्छा है कि पैर कीचड़ में डाला ही न जाय । परन्तु दुख की बात है कि आज आयुर्वेद के लोग आयुर्वेद को मात्र रोगों की चिकित्सा के लिए ही उपयोग कर रहे हैं । लेकिन इसके PREVENTIVE ASPECTS को महत्व नहीं दे रहे जबकि आयुर्वेद में एक स्वस्थ व्यक्ति के स्वस्थ रहने के साथ-साथ अन्य विभिन्न रोगों जैसे - राजयक्ष्मा, हृदरोग प्रमेह आदि के प्रतिबन्धक चिकित्सा का स्पष्ट वर्ण मिलता है, परन्तु आजतक इन विभिन्न जटिल रोगों की प्रतिबन्धक चिकित्सा पर किसी का ध्यान गया ही नहीं यह एक चिन्ता का विषय है ।

राजयक्ष्मा को आयुर्वेद में कोई व्याधि विशेष रूप में स्वीकार न कर उसे रोगों का समूह कहा गया है राजयक्ष्मा रोग समूहाणां । इस व्याधि को शोष व क्षय कहा गया है । इसमें धातुओं का शोषण होता है । अतः इ शोष कहा जाता है तथा बल हीनता के कारण क्रियाक्षय हो से धातुक्षय (क्षय) कहा जाता है ।

आचार्य चरक ने राजयक्ष्मा के चार कारण बतला है -

अयथाबलारम्भं वेग संधारणम् क्षयम् ।
यक्ष्मणः कारणं विद्याच्चतुर्थं विषमाशनम् ॥

(च०चि० 8/12-13

1. अयथाबलारम्भ अर्थात् अपने शारीरिक बल अधिक बलयुक्त कार्य करना ।
2. मलमूत्र के आगत वेग को रोकना ।
3. शारीरिक धातुओं का क्षीण हो जाना ।
4. विषमाशन अर्थात् विषम रूप से भोजन करना

इन चार कारणों का सेवन करने से अग्नियाँ विष हो जाती हैं जिससे आहार तथा धातुओं का पाचन सम्य रूप से नहीं हो पाता है जिसके परिणामस्वरूप कफोत्प

* रेजिडेन्ट ** सीनियर रेजीडेन्ट *** रीडर
मौलिक सिद्धान्त विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, बी०एच०यू०, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ाती है । बढ़े हुए कफ के कारण स्रोतावरोध हो जाता है । रिणामत: रक्तादि धातुओं का क्षय हो जाता है, जिससे जयक्ष्मा रोग की उत्पति होती है ।

आचार्य चरक ने पूर्वरूप में प्रथमत: बलक्षय एवं तिश्याय का उल्लेख किया है । राजयक्ष्मा के लक्षण में भी तिश्याय का उल्लेख है । जब शरीर में बलक्षय प्रारम्भ हो ाता है तो व्यक्ति विशेषत: शीत, आतप, वायु, भूख, प्यास ादि को सहन नहीं कर पाता है । इन स्थितियों में व्यक्ति तिश्याय से ग्रसित हो जाता है । दैनिक जीवन व्यवहार में स तरह के रोगी प्राय: मिलते रहते हैं । इस प्रकार यहाँ वरूप में उत्पन्न प्रतिश्याय को बलक्षय का सांकेतिक क्षण समझना चाहिए । बलक्षय का व्यक्ति के मन पर ौधा प्रभाव पड़ता है । बल को ओज का पर्याय कहा गया । ओजक्षय की स्थिति में रोगी में भय व दुर्मना की स्थिति बतलाई गयी है । आचार्य चरक ने दुर्मना का अर्थ नोबल हीनता कहा है । इस प्रकार राजयक्ष्मा की प्रारम्भिक वस्था में ही व्यक्ति में मनोबल कम हो जाता है अर्थात् तिश्याय होने से यह ज्ञात होता है कि बलक्षय की क्रिया ारम्भ है । अत: आचार्य चरक ने पूर्वरूप व एकादश रूपों प्रतिश्याय का उल्लेख प्रथमत: किया है । प्रतिश्याय के म्न लक्षण होते हैं - शिर:शूल, शिरोगौरव गन्धज्ञान का ष्ट होना, ज्वर, कास, कफोल्क्लेश, स्वरभेद, अरूचि, लम, इन्द्रियदौर्बल्य । आचार्य चरक ने "यक्ष्माचार्त: जायते" ऐसा कहकर यह स्पष्ट कर दिया है कि जब तिश्याय रोग अपने उपर्युक्त लक्षणों के साथ उत्पन्न होता । यदि इस प्रतिश्याय की सम्यक् व्यवस्था कर दी जाय । राजयक्ष्मा का प्रतिबन्धन किया जा सकता है ।

**तिबन्धक चिकित्सा -**

राजयक्ष्मा चिकित्सा में यह निर्देश दिया गया है क किन-किन वस्तुओं के सेवन करने से राजयक्ष्मा रोग हीं होता है । इसका उल्लेख करते हुए कहा गया है कि -

**वारूणी मण्ड नित्यस्य बहिर्माजनं सेविन: ।**
**अविधारित वेगस्य यक्ष्मा न लभतेऽन्तरसा: ॥**

(च०चि० ४/१६

अर्थात् जो स्वस्थ व्यक्ति वारूणी नामक मद्य क सेवन प्रतिदिन करता है, अभ्यंग, उबटन, स्नान, अवगाहनी बहिर्माजन का प्रयोग करता है, मलमूत्रों के वेग को धारण कभी नहीं करता है, ऐसे व्यक्ति को राजयक्ष्मा रोग कभ आक्रान्त नहीं करता है । मद्य के गुणों को बतलाते हु आचार्य चरक कहते हैं कि - मद्य, तीक्ष्ण, उष्ण, विशद सूक्ष्म गुणवाला होता है इसलिए स्रोतों के मुख को मद्य शीघ्र खोल देता है, जिससे कफ द्वारा अवरूद्ध स्रोतों मुख के खुल जाने से धातुएं पुष्ट होने लगती हैं तथा धातु की पुष्टि से राजयक्ष्मा शीघ्र शान्त हो जाता है ।

इसके अतिरिक्त जो बहिमार्जन सेवन के लि बताया गया है, उसके अन्तर्गत निम्न विधियों का उल्ले आचार्य चरक ने किया है -

**अवगाह** - बलातैल या पुष्टिकर तैलों की मालिश करने क बाद स्नेह व गोदुग्ध से भरे कोष्ठ में अवगा करना चाहिए जिससे अवरोधित कोष्ठ खु जाता है, जिससे शरीर में बल व पुष्टि होती है

**मर्दन** - अवगाहन के पश्चात् हाथ में मिश्रक स लगाकर शरीर पर सुखपूर्वक धीरे-धीरे मर्द करना चाहिए ।

**उबटन** - मर्दन के बाद जीवन्ती, शीतवीर्या आदि औषधि से बने उबटन का प्रयोग करना चाहिए । इस व्यक्ति में बल, वर्ण की वृद्धि व शरीर क पुष्टि होती है । ज्वर व दाह की अवस्था में इसका प्रयोग लाभकारी है ।

**स्नान** - उबटन के बाद जीवनीय गण के द्रव्यों क्वाथ में पीत सरसों का कल्क मिलाक सुगन्धित द्रव्यों से जल को सुगन्धित कर उ जल या ऋतु के अनुसार सुखकर जल से स्न करना चाहिए ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



इसके अतिरिक्त इस प्रकरण में सत्वावजय चिकित्सा बतलाई गई है । उसका भी मेरे विचार से प्रतिबन्धन चिकित्सा में उपयोगी हो सकता है ।

सामान्यतः राजयक्ष्मा की सर्वोत्तम प्रतिबन्धक चिकित्सा निदान परिवर्जन है; जिसका कि आचार्य चरक ने कारणों के अनुसार उल्लेख किया है -

साहसजन्य प्रतिबन्धन -

साहसं वर्जयेत रक्षञ्जीवितमात्मनः ।
जीवनं हि पुरुर्जास्त्वतं कर्मणः फलमश्नुते ।।

अर्थात् जीवन की रक्षा करते हुए व्यक्ति को चाहिए कि वह साहसजन्य कर्मों में प्रवृत्तन हो क्योंकि जीवित रहता हुआ व्यक्ति अपने कर्मों का मनोभिलाषित फल का भोग करता है ।

वेग विधारण जन्य प्रतिबन्धन :- के लिए कहा गया है कि

सर्वमन्यत् परित्यज्य शरीरमानुपालयेत ।
तद्भावे हि भावानां सर्वाभावः शरीरिणाम् ।।

अर्थात् अन्य सभी कर्मों को छोड़कर सर्वप्रथम अपने शरीर की रक्षा करनी चाहिए क्योंकि शरीर के अभाव में प्राणधारियों के समस्त भावों का अभाव हो जाता है ।

क्षयजन्य यक्ष्मा के प्रतिबन्धन हेतु कहा गया है कि :-

"आहारस्य परं धाम शुक्रं तद्रक्ष्यमात्मनः ।
क्षयोहस्य बहून रोगान्मरणं वा नियच्छति ।।"

अर्थात् आहार की चरम उपलब्धि शुक्र धातु होती है । अतः शुक्र की रक्षा करनी चाहिए क्योंकि उसके क्षय से विविध प्रकार के रोग तथा मृत्यु तक हो जाती हैं ।

विषमाशन जन्य यक्ष्मा के प्रतिबन्धन हेतु कहा गया है -

"हिताशी स्थान्मिताशी स्यात कालभोजी जितेन्द्रियः
पश्यन् रोगान् बहुन् कष्टानबुद्धिमान विषमाशनात् ।।"

अर्थात् भोजन के द्वारा अनेक प्रकार के रोगों एवं कष्टों की उत्पत्ति होते देखकर बतलाया गया है कि हितकर आहार सेवन करना चाहिए । परिणाम के अनुकुल भोजन करना चाहिए तथा समय पर भोजन करना चाहिए । इसके अतिरिक्त सदैव जितेन्द्रिय रहने के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए ।

उपरोक्त सभी तथ्यों से स्पष्ट होता है कि यदि राजयक्ष्मा रोगों में बतलाये हुए प्रतिबन्धक चिकित्साओं एवं पथ्य, अपथ्य तथा सत्वावजय चिकित्सा आदि पर गम्भीरता से विचार किया जाय तो राजयक्ष्मा से बचा जा सकता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# हृदयरोग में उपयोगी वनस्पतियाँ

वैद्य सुरेश चतुर्वेदी, आयुर्वेदाचा

हृदय हमारे शरीर का महत्वपूर्ण अंग है । आजकल हृदयरोगियों की बढ़ती हुई संख्या एक विकट स्वास्थ्य समस्या का रूप धारण कर चुकी है । विश्व में सबसे अधिक मृत्यु हृदय रोग के कारण होती है ।

हृदय अनैच्छिक मांसपेशियों से बना हुआ एक संस्थान है जोकि हमारे शरीर में रक्त प्रसरण का कार्य करता है । यह चार कोठरियों में विभाजित होता है । इनके दरवाजे रक्त ग्रहण करने या त्यागने की क्रिया को एक विशेष ध्वनि में परिणत करते हैं । साधारणत: स्वस्थ युवा नर - नारी में यह ध्वनि एक मिनट में 62 बार होती है, यही ध्वनि बालकों में अधिक एवं वृद्धों में कम होती है । हृदय रोग ग्रस्त होने पर उसकी ध्वनि में परिवर्तन आ जाता है जैसे गति वृद्धि, गति मंद, खंडित गति, ध्वनि मंद, मिश्रित ध्वनि, ध्वनि लोप आदि ।

निदान

रोगा सर्वतो जायन्ते । मिथ्या आहार विहारता ।।

अपनी प्रकृति के विरुद्ध आहार का सेवन करने से एवं दिनचर्या, ऋतुचर्या के विपरीत आचरण करने से हृदयरोग की उत्पत्ति होती है । आधारणीय वेगों का धारण भी इस रोग की उत्पत्ति का कारण बन जाता है । मानसिक चिंता, काम, क्रोध, शोक, भय, मानसिक संताप एवं मनोद्वेग को बढ़ाने वाली विभिन्न घटनाएं भी इस रोग को पैदा करने में सहायक होती है । वायु वाले पदार्थ, तले हुए पदार्थ, गरम पदार्थ, चाय, धूमपान, मदिरापान, आदि का अधिक सेवन भी इस रोगोत्पत्ति का हेतु सिद्ध होता है ।

लक्षण

हृदय रोगों के दो रूप होते हैं । पहली स्थिति में हृदय के विभिन्न रोगों का समावेश होता है जिसमें हृदय में सूजन, हृदय मार्गावरोध, हृदयपेशी शैथिल्य, हृदय में जड़ता, हृदयजन्य श्वास, हृदय आघात आदि का समावेश है ।

दूसरी अवस्था आत्ययिक अवस्था है जिसमें हृदय अचानक ही कार्य करना बंद कर देता है और शीघ्र ही रोगी की मृत्यु हो जाती है ।

## हृदयरोगी में उपयोगी वनस्पतियां

### 1. अर्जुन

यह आयुर्वेद में निर्दिष्ट हृदय रोग की महौषधि जो कि अनेक परीक्षण द्वारा भी सिद्ध किया जा चुका इसकी अन्तर छाल का उपयोग होता है । यह हृदय की गति को नियमित करता है और हृदय को विश्राम एवं शक्ति देता है ।

हृदयशोथ, हृदयदुर्बलता, धमनियों में रक्तभार का होने पर, हृदयकपाट के रोगों में इसका प्रयोग लाभकारी होता है ।

छाल का चूर्ण । ग्राम की मात्रा में दिन में दो बार दूध के साथ अथवा अर्जुन छाल का काढ़ा । तोला की मात्रा में दिन में दो बार लेना हितकर होता है ।

### 2. करवीर

सफेद करवीर के मूल का सेवन करने से हृदय का संकोचन बल पूर्वक होकर रक्त प्रवाह ठीक प्रकार होता है जिससे हृदय का विकास काल बढ़ जाने से हृदय को आराम मिलता है एवं नाड़ी की गति धीमी हो जाती है ।

### 3. केशर

केशर हृदय की निर्बलता को नष्ट करता है इसका सेवन दूध के साथ या शहद के साथ करने से यह प्रभावकारी होता है । लो ब्लड प्रेशर की स्थिति में इसका नियमित सेवन लाभकारी होता है ।

### 4. केतकी (केवड़ा) का अर्क

हृदय के लिये बलदायक होता है और तात्कालिक प्रभावकारी होता है ।

### 5. कोलकन्द (वनपलांडु)

यह हृदय के लिए हितकारी है । मूत्रल होने के कारण हृदय रोग के परिणाम स्वरूप उत्पन्न शोथ जलोदर में लाभकारी होता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



6. हृतपत्री (Digitalis)

यह हृदय की गति को नियमित सशक्त तथा धीमी करने में सहायक होता है । इससे हृदय का संकोच बलपूर्वक होता है, जिससे क्षेपक कोष्ठ से सारा रक्त धमनियों में चला जाता है एवं हृदय का विश्राम काल बढ़ जाता है ।

7. सुरन्जान

सुरन्जान के कन्द का प्रयोग हृदय रोग में हितकारी होता है ।

8. मूलहठी

हृदय के लिए बल्य का कार्य करती है ।

9. छोटी इलायची

छोटी इलायची घबराहट को दूर करती है एवं हृदय के लिए हितकारी है । इसका सेवन दूध या मधु के साथ करना चाहिए ।

10. कटेली

कटेली कफज अवरोध के कारण हृद श्वास में लाभकारी होता है । इसका चूर्ण उष्ण जल से अथवा काढ़ा का सेवन प्रभावकारी होता है ।

11. गंगेरन

गंगेरन हृदय की दुर्बलता में हितकारी होता है ।

12. कायपुटी

कायापुटी हृदशूल को दूर करता है ।

13. पुनर्नवा

पुनर्नवा हृदय शोथ, हृदयावरण शोथ, वृक्कजन्य हृदयरोग में लाभकारी होती है ।

14. अदरक/सोंठ

अदरक या सोंठ हृदयशूल को कम करने में सहायक सिद्ध होते हैं ।

15. गिलोय

गिलोय पित्तज हृदयरोग एवं हृदय दाह में लाभकारी होती है ।

16. पीपल

पीपल घबराहट को दूर कर हृदय की गति को सामान्य करता है । इसके छाल का चूर्ण बना कर । ग्राम की मात्रा में दिन में दो बार सेवन करना चाहिए ।

17. विडंग

विडंग कृमिजन्य हृदयशूल में लाभकारी होती है ।

18. अश्वगंधा

अश्वगंधा हृदय की पेशियों को बल प्रदान करता है ।

19. पुष्करमूल

पुष्करमूल हृदयशूल एवं श्वास संस्थानजन्य हृदयरोग में लाभकारी सिद्ध होता है ।

20. मकोय

मकोय वृक्कजन्य हृदयशोथ में लाभकारी होता है ।


बैद्यनाथ

प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं । इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है । हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है । इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, बरबट और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं । मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है । बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# दीपनीय महाकषाय एक गुणकर्मात्मक अध्ययन : बृहत्त्रयी के प्रकाश में

* आयुर्वेदाचार्य राजेश अरोड़ा

आयुर्वेद के स्वर्णिम इतिहास में चरक संहिता सबसे पुरानी व सबसे उत्तम कृति मानी जाती है । इस ग्रन्थ का मुख्य उद्देश्य है :- धातुओं को साम्यावस्था में रखना- धातु साम्यक्रिया चोक्ता तंत्रस्यास्य प्रयोजनम् ।। (च०सू० /53) समाग्नि इन धातुओं को साम्यावस्था में रखने में सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखती है । आज की भागदौड़ भरी जिन्दगी में जहाँ व्यक्ति के लिए फास्ट फूड, जंक फूड, तनाव, डर एक कड़वे सच की तरह जुड़ चुके हैं, अग्नि दूषित हो कई रोगों का प्रधान कारण बनती जा रही है । इसी संदर्भ को ध्यान में रखते हुए 'दीपनीय महाकषाय' की परिकल्पना चरक संहिता सूत्रस्थान के अध्याय - 4 महाविरेचनशताश्रितीयाध्याय में मिलती है । इस महाकषाय में 10 औषधियों का वर्णन है जो क्रमानुसार इस प्रकार है (1) पिप्पली (2) पिप्पलीमूल (3) चव्य (4) चित्रक (5) श्रृङ्गवेर (6) अम्लवेतस (7) मरिच (8) अजमोदा (9) भल्लातक अस्थि (भिलावे की गुठली) (10) हिङ्गुनिर्यास ।

दीपन शब्द इस प्रकार निर्धारित होता है अर्थात् जठराग्नि की कार्य क्षमता में वृद्धि करना । आयुर्वेदिक परिभाषानुसार दीपनाय बह्वेरूद्दीपनाय हितम् ।। जिन द्रव्यों से अग्नि (जठराग्नि) दीप्त होती है उसे दीपन कहते हैं । द्रव्यों के रस आयुर्वेद में छः माने गये हैं । मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त एवं कषाय, जिसमें से अम्ल लवण तिक्त एवं कटु रस अग्निवर्धक व मधुर, कषाय रस अग्नि सादक माने गये हैं ।

ईश्वर की असीम कृपा से मुझे शोध हेतु यहां विषय प्रदान किया गया है जिसके कुछ मुख्य तथ्य मैं आपके सामने रखने का प्रयास कर रहा हूँ । बृहत्त्रयी में चरक संहिता, सुश्रुत संहिता एवं अष्टाङ्ग हृदय मुख्यतः ये तीन आयुर्वेद ग्रंथ माने जाते हैं । मैंने इन 3 ग्रंथों में दीपनीय महाकषाय के दसों द्रव्यों का एक गुणकर्मात्मक अध्ययन किया है । इसके निम्न परिणाम तथ्य अवलोकित योग्य हैं । सर्वप्रथम यहाँ संख्या के बारे में मैं निर्देशित करना चाहता हूँ कि प्रत्येक द्रव्य किस संहिता में कितनी बार आया ।

| | चरक संहिता | सुश्रुत संहिता | अष्टाङ्ग हृदय |
|---|---|---|---|
| पिप्पली | 422 | 232 | 293 |
| पिप्पलीमूल | 78 | 23 | 23 |
| चव्य | 68 | 30 | 28 |
| चित्रक | 190 | 86 | 78 |
| श्रृंगवेर | 34 | 35 | 9 |
| अम्लवेतस | 24 | 10 | 21 |
| मरिच | 201 | 60 | 62 |
| अजमोदा | 17 | 9 | 8 |
| भल्लातक | 34 | 40 | 25 |
| हिङ्गु | 89 | 72 | 74 |

इन द्रव्यों के गुणकर्मात्मक अध्ययन में एक बहुत आश्चर्यचकित करने वाली यह रही कि आयुर्वेद कल्पनाओं, अनुपान व व्याधि के हर क्षेत्र में प्रत्येक द्र पूर्ण-पूर्ण रूप से सम्मिलित है । अर्थात् कल्पना जैसे अव अवलेह, आसव-अरिष्ट, अंजन, अपस्कृति, भस्म, चू भूपन, घृत, तैल, पाक गुटिका, कल्क, क्वाथ, क्षीर, क कषाय, कवल, खंड, लेप, लोह; मंथ, मंड, मोदक, प्रम रसक्रिया, सक्तू, उत्कारिका, वर्ति, बस्ति, वहक, वेस यवागू यूष स्वरस, फाण्ट हिम आदि और भी अ कल्पनाएं सम्मिलित हैं । अनुपान जैसे अम्ल द्रव्य क इत्यादि, दही, घृत, गुड़, गोपित्त, शहद क्षारादका खाण्ड, मदिरा, मज्जा, दूध, मूत्र, मांसरस, स्नेह शर्करा, सक्तू, नमक, तेल, तक्र, यवक्षार इत्यादि और अनुपान इन द्रव्यों को लेते समय लेने का विधान है

व्याधि के क्षेत्र में अध्ययन पर ज्ञात हुआ आयुर्वेदिक व्याधियों के हर क्षेत्र में इन 10 द्रव्यों का मिलता है । यहाँ हर व्याधि का वर्णन करना सम्भव है फिर भी मुख्यतः किन-किन रोगों में वर्णित है यह पर एक सारिणी के माध्यम से देने का प्रयास कर रहा

एम.डी. अध्येता, ललित हरि स्टेट आयुर्वेदिक स्नात्कोतकर विभाग, द्रव्यगुण, पीलीभीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुख्य व्याधि क्षेत्र

**पिप्पली** :- रसायन, ज्वर मुख्यत: जीर्ण एवं विषम, गुल्म, कुष्ठ, राजयक्ष्मा, अपस्मार, श्वयथु, उदर रोग, अर्श, ग्रहणी, हिक्का, श्वास, कास, अतिसार, वातव्याधि, विवर्चिका ।

**पिप्पलीमूल** :- ज्वर, गुल्म, प्रमेह, मन्दाग्नि, अर्श (सर्वाधिक स्थानों पर प्रयोग), ग्रहणी व कास (बहुत स्थानों पर प्रयोग), पाण्डु, अतिसार, शूल आदि ।

**चव्य** :- ज्वर, गुल्म, आनाह, प्रमेह, उन्माद, अर्श ग्रहणी शोक, पाण्डु काण्ड श्वास कास, हृदयरोग, शिरो रोग, वातज विकार आदि ।

**चित्रक** :- गुल्म (सर्वाधिक स्थानों पर प्रयुक्त), अर्श, शोथ, (बहुत स्थानों पर प्रयुक्त), ग्रहणी (काफी स्थानों पर) उदर (बहुत स्थानों पर उपयुक्त) पाण्डु, प्रमेह, कुष्ठ ।

**श्रृंगबेर एवं अम्लवेतस** :- गुल्म (मुख्यत:), ज्वर, राजयक्ष्मा, अर्श, उदररोग, मदात्यय, वातरक्त, हिक्का, श्वताय, उन्माद आदि ।

**मरिच** :- वाजीकरण, कुष्ठ (मुख्यत:), अर्श व ग्रहणी (बहुत स्थानों पर प्रयुक्त) कास (बहुत स्थानो पर), मदात्यय, योनि विकार, क्षत-क्षीण, श्वास, हिक्का, प्रमेह-पाण्डु आदि ।

**अजमोदा भल्लातक गुठली एवं हिङ्गु** :- ज्वर (शीत) गुल्म, क्षत-क्षीण, शोथ, अर्श, ग्रहणी, तृष्णा शिरोरोग, विसर्प, वातज विकार, शिरोविरेचन, विसूचिका आदि ।

दसों द्रव्यों के गुणकर्म देखें तो

रस दृष्टि से नौ द्रव्यों का रस कटु है, एक द्रव्य अम्लवेतस (रस-अम्ल) छोड़कर कटु रस का पाँच भौतिक संगठन वायु+अग्नि है । (वायु की सहायता से अग्नि को बढ़ाना) ।

वीर्य दृष्टि से नौ द्रव्यों का वीर्य उष्ण है, एक द्रव्य मरिच (वीर्य-अनुष्ण) छोड़कर उष्ण वीर्य :- अग्निवर्धक है ।

कुछ पिप्पली को भी अनुष्ण वीर्य मानते हैं किन्तु च०चि० 3/267 में उष्णवीर्य है ।

**विपाक दृष्टि में** :- छ: द्रव्यों का कटु विपाक है (अग्निवर्धक), पिप्पली, पिप्पलीमूल, श्रृंगबेर (मधुर) एवं अम्लवेतस (अम्ल विपाक) (अग्नि वर्धक) ।

**देहाग्नि की महत्ता** :- मनुष्य के शरीर की आयु, वर्ण, बल, स्वस्थता, उत्साह शरीर की बुद्धि, कान्ति ओज, तेज, अग्नियां और प्राण ये सभी देह की अग्नि होने पर ही स्थिर रहते हैं । यदि जठराग्नि शान्त हो जाए तो मनुष्य की मृत्यु हो जाती है और यदि जठराग्नि में विकृति आ जाए तो मनुष्य रोगी हो जाता है ।

सारांशत: दीपन द्रव्य क्षुधारस (Appetite Juice) को बढ़ाती हैं, कटु अम्ल रस एवं विपाक उष्णवीर्य द्रव्य वेगस नर्व को उत्तेजित कर क्षुधा रस को बढ़ाते हैं । इस प्रकार दीपन द्रव्य शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर शरीर का रक्षात्मक कवच बनकर व्याधियों से शरीर की रक्षा करते हैं ।

बैद्यनाथ

सितोपलादि चूर्ण

पुराना बुखार, यक्ष्मा एवं खांसी की उत्तम दवा



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# सरस्वती पंचक - शतावरी

* लायक राम भट्ट

शतावरी सरस्वती पंचक (वच, ब्राह्मी, शतावरी, जटामांसी, गोरखमुण्डी) का घटक द्रव्य है । सरस्वती पंचक द्रव्य सेवन से शरीर व मस्तिष्क के सारे विकार दूर हो जाते हैं, व मनुष्य तन-मन से स्वस्थ स्फूर्तिवाला बुद्धिमान मेधा शक्ति से परिपूर्ण होता है ।

मानव शरीर से अनेकों प्रकार की दुर्बलताओं को मिटानेवाली शतावरी प्रकृति की मनुष्य को अद्‌भुत देन है । शरीर में जहां कहीं किसी तरह की कमी होती है शतावरी के रसायन वहां पहुंचकर कमी को पूरा कर देते हैं । श्री नादकर्णी ने शतावरी को एक टानिक रूपी औषध कहा है । यह एक पौष्टिक द्रव्य है । यह आंतरिक चयापचय जन्य गर्मी को शांत करके शरीर को बल प्रदान करती है । यह क्षय जैसे रोग से जीर्ण-शीर्ण शरीर को बल देती है व रोग से लड़ने की शक्ति उत्पन्न करती है । यह वात संस्थान व वात धातु को बल देती है व शरीर में बल बुद्धि मेधा शक्ति उत्पन्न करके शरीर के सभी अंग उपांगों को बलशाली बनाती है । शतावरी वात व्याधि, शिरोशूल, अनिद्रा की यह सफल औषधि है । यह रक्तचाप को कम करती है । अग्निदीपक है व अम्लपित निवारक है । मिर्गी हिस्टीरिया की यह अचूक औषधि है । यह दृष्टि मंदता को मिटाती है । यह चरकोक्त बल्य वय: स्थापन महाकषाय मधुर स्कन्ध है । सुश्रुत के अनुसार शतावरी बलदायक है व दूषित शुक्र का शोधन करती है ।

वाग्भट्ट ने लिखा है कि "शतावरी कल्क या स्वरस से सिद्ध घृत मिश्री के साथ नित्य सेवन करने वाले मनुष्य को व्याधिरूपी डाकू कभी लूट नहीं सकते" चरक ने कहा है कि सामान्य द्रव्य बलकारक होते हैं जबकि शतावरी औषध द्रव्य मांस शुक्र व स्तन्य को विशेष रूप से बलदायक है । वनौषधि निर्देशिका के अनुसार शतावर में म्यूसिलेज शर्करा आदि घटक द्रव्य पाये जाते हैं ।

शतावरी तनाव जनित हानि से सुरक्षा करने वाली औषध में मुख्य औषध है । इससे हृदय की गति बढ़ती है तथा शरीर के अन्दर रक्तशोधन तथा में सहायता पहुंचती है । शतावरी में मौजूद अनेक सैपोनिन्स गर्भाशय संकोचन का कार्य करते हैं । यह वात नाड़ी संस्थान का वात को पुष्ट करती है । यह गर्भाशय की सारी विधि व्यव को ठीक करती है, यह गुल्म वात-पित रस विकार, सूजन नाशक है । यह वीर्य वर्धक है । ऐसे वि ब्रह्मवर्चस के हैं ।

शतावरी के दो भेद हैं, शतावरी या शतवीर्या के लिए हितकर गुल्म अतिसार शोथ नाशक होती महाशतावरी या सहस्रवीर्य हृदय को ताकत देनेवाली यक संग्रहणी नाशक विशेष रूप से होती है । महाशतावरी लता अपेक्षाकृत अधिक लम्बी होती है व इस पर कंद अधिक निकलते हैं । बिना कांटे वाली शतावरी शतावरी कही जा रही है ।

वैद्यक दृष्टि से शतावरी, गुण, गुरु स्निग्ध, मधुर तिक्त विपाक मधुर वीर्य शीत। प्रधान कर्म वात-पि नाशक, बल्य, मूत्रल शुक्रल, नाड़ीबल्य, गर्भपोषक, चक्षु हृद्य, रक्तपित्तशामक, स्तन्यजन्न रसायन है । यूनानी म शतावरी पहले दर्जे का शीत एवं स्निग्ध द्रव्य है ।

शास्त्रों में शतावरी के गुणधर्म विस्तृत रूप वर्णित है । "शतावरी गुरु:शीता, तिक्ता स्वादी रसा मेधाग्नि पुष्टि स्निग्ध नेत्र्या गुल्मातिसारजित् । शुक्रस्तन्य बल्या वात पित्ता स्रशोथजित, शतावरी बहुसुता, भीरूरिं वटी, नारायणी शतपदी शतवीर्या च पीवरी "महाश मेधा हृद्या वृष्या रसायनी, महाशतावरी चान्या शतमूल्य कण्टिका । सहश्रवीर्या हेतुश्च श्रृष्य प्रोक्ता महोदरी (आ०प्र०) वैद्य जीवन में शतावरी के गुणकर्म बहुत तरीके से लिखे मिलते हैं "भुक्त्वा वरी क्षीरयुक्तां बिलासी शत सुन्दरि, सुन्दरीणाम् ।"

शतावरी ताजी सुखाई जड़ में प्रोटीन एन्जाइमस प्रचुर मात्रा में होते हैं । शतावरी जीवक ऋ काकोली क्षीरकाकोल, अष्टवर्ग सदस्य द्रव्यों का प्रति द्रव्य है, इससे इसकी महत्ता स्वयं सिद्ध है ।

शुक्र दुर्बलता, स्तन्यक्षय, रक्तप्रदर, गर्भास्राव,

* सरांस गांव केमर पो० पिलखी, टिहरी गढ़वाल, उत्तरांचल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



में शतावरी चूर्ण कांबीस गुने जल में उबालना या जल में क्वाथ बनाना या दूध में उबालना व पिलाना हितकर होता है । स्वप्न दोष में दूध में उबाली हुई जड़ देना अथवा चूर्ण को मिश्री के साथ 3-6 ग्राम रोज देते हैं । रक्त पित्त में शतावरी क्षीरपाक प्रयोग करना हितकर है, रतौंधी में ताजी पत्ती भात के साथ पकाते हैं । रक्तातिसार में शतावरी कल्क या स्वरस को दूध के साथ सेवन करना व सिर्फ दूध ही भोजन के रूप में सेवन करना, दुग्धवृद्धि हेतु शतावरी का सेवन जच्चा को दूध के साथ कराना, नपुंसकता में असगंध कौंच व मूसली के साथ शतावरी सेवन लाभदायक होता है । जहां तक हो सके शतावरी का सेवन ताजी गीली अवस्था में किया जाय नहीं तो सुखाया हुआ चूर्ण सेवन करना ज्यादा उपयुक्त होता है । शतावरी घृत नारायण तैल, फल घृत आदि शतावरी के योग बाजार में मिलते हैं । शतावरी सेवन मात्रा मूल स्वरस 10 से 20 ग्राम चूर्ण 3 ग्राम से 6 ग्राम ।

शतावरी के कांटेदार एवं कुछ बिना कांटेदार भी आरोहणशील, झाड़ीनुमा क्षुप भारत के सभी उष्ण एवं समशीतोष्ण प्रान्तों एवं हिमालय के 4000 फुट ऊंचाई तक के उष्ण जांगल देशों में प्राकृतिक रूप से उगते हैं । शतावरी (ऐस्पेरेगस रेसिमोसस) की एक कांटे रहित प्रजाति ऐस्पेरेगस फिलिसिनस है, यह हिमालय प्रदेश में चार हजार फुट से नौ हजार फुट तक स्वयंजात उगती है । हिमालय क्षेत्र व मध्यप्रदेश के साल जंगलों में शतावरी काफी उगती है । इसकी तीन चार किस्में हैं । सफेद मूसली की तरह ही शतावरी के तने व जड़ (कंद) को संधि स्थल होता है, इसे डिस्क कह सकते हैं । डिस्क पर से ऊपर की ओर सुई जैसी 8-10 फुट लम्बी हरी बारीक पत्तियों शाखाओं वाली व मुड़े हुए कांटों वाली शाखायें निकलती है, इसी डिस्क पर से नीचे मूल जिन्हें कंद कहते हैं गुच्छों में अनेक निकलते हैं और जमीन में 3-4 फुट तक के घेरे में फैले मिलते हैं । ये कंद अंगुल के करीब मोटे होते हैं, इन पर बहुत कम छोटी-छोटी जड़ें होती हैं । यही कंद औषध में प्रयोग होते हैं । डिस्क पर से निकली पुरानी शाखायें व कं हर वर्ष सड़ गल जाते हैं, वर्षा के आरम्भ में नये कंद नई शाखायें निकलकर फैलने आरम्भ होते हैं । नम ह्यूमस वाली गुनगुनी मिट्टी में कंद बहुत अच्छे बनते हैं, शतावर के पत्र अत्यन्त छोटे सोये के पत्तों जैसे होते हैं, पुष्प सफे व गुलाबी रंग के छोटे-छोटे होते हैं । वर्षा ऋतु में बेल फूलों से लद जाती है । ये फूल सुगन्धयुक्त होते हैं महाशतावरी के मूल ज्यादा गहराई तक जाते हैं । हिमाल प्रदेश में नवम्बर माह में बेल सफेद फूलों से ढक जाती है शीतकाल के अंत में कमीला फलों की शक्ल में द्विदल त्रिदल हरे फल निकलते हैं ये फल पकने पर लाल हो जा हैं, फलों के अन्दर बायविडंग के बीजों जैसे काले रंग के गोल कड़े बीज बने होते हैं । शतावरी की शाखायें प्रशाखा जो हल्के हरे रंग की छोटे-छोटे बारीक पत्तों से ढकी होत हैं पौधे को झाड़ीनुमा बना देती हैं, लतानुमा यह झाड़ सहारा वृक्षों पर चढ़ी होती है ।

दुनिया में औषध द्रव्यों की दिन व दिन एक त मांग बढ़ती जा रही है दूसरी तरफ हिमालयी जंगलों जै महत्वपूर्ण क्षेत्रों से शतावरी जैसा सर्वाधिक महत्वपूर्ण औष पादप अपने प्राकृतिक वासों से विलुप्त होता जा रहा है बलकारक औषध द्रव्य के रूप में शतावरी को कृषिकर के लिए केन्द्रीय औषध एवं सगंध पादप बोर्ड ने वित्तीय सहायता हेतु चुने हुए औषध पादपों की सूची के महत्वपू स्थान दिया है । जरूरत के अनुकूल इस औषध पादप क पूर्ति हेतु इनसीटू स्वस्थान संरक्षण प्रसारीकरण एवं एक्स-सी कृषिकरण दोनों तरह के कार्यक्रम संचालित करने के निर्दे हैं ।

शतावरी का प्रसारीकरण कंद व बीज दोनों तरी से हो जाता है । कंदों की अपेक्षा बीजों से प्रसारीकर आसान व सुविधाजनक है, सफेद शतावर की अपेक्षा पीत शतावर की मांग अच्छी है व कीमतें भी तीन चार गुनी है उष्ण आर्द्र ह्यूमस वाला क्षेत्र जहां का तापमान 10-1 डिग्री सेन्टीग्रेड हो व वार्षिक वर्षा दो ढाई सौ सेमी करी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ो बलुई दोमट मिट्टी अच्छी जल निकासी वाली गुनगुनी मट्टी शतावरी की खेती के लिए अच्छी होती है । यदि संचाई व्यवस्था है तो मार्च अप्रैल में अन्यथा मई जून में बेतों की दो-तीन जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बना देते ैं व करीब 6 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति एकड़ खेत में डाल देते हैं । पौध रोपित करने से पूर्व एक जुताई अतिरिक्त भी कर देते हैं ।

शतावरी की पौध नर्सरियों में बीज व कंद दोनों रीके से तैयार हो जाती है, 3 फुट x 30 फुट की क्यारियां बनाकर तीन भाग मिट्टी व एक भाग गोबर करके क्यारी यार कर देते हैं, बीजों से पौध तैयार करना सुविधाजनक ोता है । 5-6 किलो बीज प्रति एकड़ आवश्यकता होती , मई में बीज बोने पर अगस्त में पौध रोपने के लिए तैयार ो जाती है । नर्सरी में पंक्ति 4 इंच पर बीज 1 इंच फासले र रोपते हैं । कंदों से पौध तभी तैयार हो पाती है जब डिल्क का कुछ भाग जिस पर अंकुर आ सके, जिससे बेल व कंद निकल सके ऐसा भाग कंद से अवश्य लगा हो । जिस समय फसल निकाली जाती है, उस समय बड़े-बड़े कंद उपयोग के लिए किन्तु छोटे-छोटे कंद डिस्क से लगे हुए रहने देते हैं, यदि डिस्क पर कई अंकुर हों तो कंदों को न अंकुरों सहित अलग-अलग करके एक डिस्क से कई एक से अधिक पौधे भी प्राप्त कर सकते हैं, सफेद मूसली फिंगर्स की तरह ये कंद ही प्लान्टिग मैटीरिपल हैं । इन कंदों को क्यारियों में या थैलियों में रोप देते हैं । करीब एक माह में पौध तैयार हो जाती है । पौध को खेतों में दो-दो फुट दूरी की लाइनों में डेढ़-डेढ़ फुट दूरी पर रोपने हैं । रोपते के बाद जमीन में नमी रखने के लिए सिंचाई करते रहते हैं । जमीन में नमी को देखते हुए हफ्ते पन्द्रह दिन में सिंचाई करते रहना चाहिए । महीने-महीने में निराई-गुड़ाई भी करनी चाहिए ।

12 से 15 माह में जब पौधे पीले पड़ने लगें तो कंदों की खुदाई की जाती है, यदि रेजडबेडस बनाकर रोपण कर रखा हो तो खुदाई आसान होती है । बड़े कंदों को पौधे से अलग हटाकर छोटे कंदों को पौधे पर लगा रहने देते हैं इन पौधे का प्रयोग पुनः रोपण सामग्री के रूप में करते हैं कंदों को धोकर, छीलकर या चीरा देकर सुखाया जाता दो-तीन मिनट खौलते पानी में डालकर फिर अलग का छीलने में सुविधा होती है ।

शतावरी की खेती से प्रति एकड़ 300 क्विन्ट के करीब ताजी जड़ें प्राप्त हो जाती हैं, तीन-तीन, चार-च इंच के टुकड़े करके सुखाने पर दशमांश तीस क्विंटल करीब शेष रहती है, शतावरी सुखाये हुए कंदों को अ खुश्क शीतल स्थानों पर छाया में मुख बंद डिब्बों सुरक्षित करते हैं ।

सफेद शतावरी जहां चालीस रुपये किलो से ऊ बिकती है । वहीं पीली शतावरी 160 रुपये किलो त बिक जाती है, इस तरह प्रति एकड़ एक डेढ़ लाख रु व्यय घटाने पर ढाई तीन लाख रुपये प्रति एकड़ शता की खेती से शुद्ध आय हो सकती है ।

उत्तरांचल में इस समय भद्रकाली ऋषिकेश फारेस्ट की नर्सरियों में पीले शतावर का प्रमाणिक राजस्थान से मंगाया हुआ बताया गया है । नंगी जड़ पौध एक रुपया एवं थैली पौध तीन रुपये लेकर हमने तीन हजार फुट से साढ़े तीन हजार फुट ऊंचाई की छि जोत के एक डेढ़ एकड़ जमीन पर जड़ी-बूटी के गिल असगंध, सर्पगंधा, सफेदमूसली पत्थर चूर, जैट्रोफा, पीली जड़ी शतावरी इत्यादि एकस-सीटू पौध मिश्रित से रोपे हैं, जिनमें शतावर मुख्य है । औषध द्रव्यों की करने के इच्छुक व्यक्तियों को जिले के भेषज संघों से पंजीकरण, क्रय-विक्रय, बीज-पौध आदि के संपर्क करने चाहिए ।

इस तरह हम देखते हैं कि शतावरी देह के उपांग को सबल बनाने वाली टॉनिक औषध व रोजगार साधन भी है । इस उपयोगी औषध पादप का इन-सीटू स्थान खेतों के अलग-बगल, ऊसर बंजर भूमि, वाड़ों पर संरक्षण व प्रसारीकरण हो सकता है एवं बीच खेत हलबैल जोतकर कृषिकरण भी ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# मधुमेह

* डा० अंकुश जाधव

जिस बीमारी में शहद की तरह मीठा पेशाब होता है इसे व्यावहारिक भाषा में मधुमेह, आयुर्वेद के अनुसार प्रमेह (एक प्रकार का मधुमेह) और आधुनिक वैद्यकीय शास्त्र के अनुसार डायबिटीज मेलिटस कहते है ।

इस बीमारी में खून में शक्कर की मात्रा बढ़ जाती हैं और खून में शक्कर की मात्रा लगभग 180 मि.ग्रा./100 मि.ली. से अधिक हो जाने पर पेशाब में शक्कर आती है ।

**कारण :-** बार-बार खाना, दोपहर में भोजन के बाद सोना, अधिक मात्रा में दही खाना, भेड़, मछली, सूअर का मांस लगातार खाना, उड़द, गेहूं, पोहा, नया अनाज, केले, खजूर, नारियल, कच्चा दूध, मिठाई, खरबस, पनीर, आइसक्रीम, इडली आदि पदार्थ बार-बार खाना, अधिक मात्रा में शक्कर खाना, वंगानुगत, स्थूलता, शरीर में इंसुलिन कम मात्रा में या निर्माण न होना, स्वादुपिंड का विकार/रोग, स्टिरॉइड्स, फेनिलब्युटाजोन जैसी दवाइयों का अत्यधिक और दीर्घकाल सेवन करना, हमेशा बैठे रहना, शारीरिक श्रम के काम न करना आदि कुछ मधुमेह होने के सामान्य कारण हैं ।

**लक्षण :-**

1) अचानक और आकस्मिक रूप से वजन घटना ।
2) बार-बार पेशाब आना ।
3) बार-बार प्यास लगना ।
4) भूख लगना ।
5) कमजोरी लगना ।
6) चक्कर आना ।
7) मुंह सुखना ।
8) हाथ पैर सुन्न हो जाना ।
9) पैर कांपना ।
10) पैरो में दर्द ।
11) त्वचा पर फुन्सी आना ।
12) कोई जख्म ठीक न होना ।
13) नपुसंकता ।
14) जुलाब होना ।
15) पेशाब संबंधी शिकायत ।
16) दिखने संबंधी शिकायत ।
17) **अन्य** - शिश्नमणी की त्वचा पीछे न हो शिश्नमणी के पास ही चिकना स्राव जमा हो जाना, तल में जलन होना, शरीर सूखा हो जाना, बहुत पसीना आ शरीर में दुर्गंध आना, उत्साह न रहना, धुन में रहना, दा कान, सिर पर अधिक मैल जम जाना, बार-बार त्वचा रोग होना,. त्वचा की संवेदना कम होना, महिलाओं योनिमार्ग में तीव्र खुजली होना, श्वेतस्राव होना आदि लक्ष पाए जाते हैं ।

**प्रकार :-**

1) उम्र के अनुसार : अ) बालमधुमेही
ब) प्रौढमधुमेही

2) **इलाज के अनुसार -**

अ) इन्सुलिन पर निर्भर रहनेवाला (टाईप वन I.D.D.M. सामान्यत: बालमधुमेही

ब) इन्सुलिन पर निर्भर ना रहनेवाला- मुंह से लेनेवाल दवाइयां उपयुक्त होनेवाला (टाईप टू N.I.D.D.M. प्रौढ़मधुमेही

**इलाज :**

1) मधुमेही के इलाज चार प्रकार के हैं ।
अ) आहार नियंत्रण
ब) नियमित रूप से दवाई खाना ।
क) व्यायाम
ड) मधुमेह संबंधी शिक्षा

2) मधुमेह की जो दवाइयां खा रहे हैं उन्हें जारी रखते हु साथ में निम्नलिखित आयुर्वेदीय इलाज करें । 15 दिनों क बाद शक्कर के लिए पेशाब और खून की जांच करवा लें इससे शक्कर कम हुई है या नहीं, देखें । शक्कर कम ह रही हो तो मधुमेह की दवाइयों की मात्रा कम करते जाएं

आयुर्वेदीय इलाज शुरू करने के लिए मधुमेह क

* अनुसंधान अधिकारी (आयु.), रा.रा.आ. पोदार केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान (आयु.)
पोदार मेडिकल परिसर, वरली, मुम्बई - 400 018

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



गइयां बंद न करें । दोनों इलाज साथ में शुरु रखने से ई दुष्परिणाम नहीं होते, बल्कि फायदा होता है । सिर्फ न में शक्कर की जांच करना महत्वपूर्ण है ।

) शिलाजीत, असनशिला, बेल के पत्ते, बरगद, वनकुलथी, कड़वी नीम, हल्दी, चिरायता, जामुनबीज चूर्ण, प्रमेहान्तक चूर्ण, हरसिंगार के पत्तों का रस, करेले का रस, मधुनाशिनी इन आयुर्वेदिक दवाइयों से खून में शक्कर की मात्रा 15% से घट जाती है ।

) जामुन बीज चूर्ण : 1-1 या 2-2 ग्राम दिन में 3 बार विशेष रूप से भोजन के बाद लें । फल का चूर्ण या फल नहीं ।

) मधुनाशिनी चूर्ण : 2-2 ग्राम की मात्रा में दिन में 2-3 बार भोजन के बाद या पहले लें ।

) विजयसार की कांडी (लकड़ी) पानी में रखकर वह पानी पिएं ।

) हरीतकी, जायफल, मोथा, लोध्र ।

) दारुहल्दी, एरणमूल, हरड, आंवला, पहाड़मूल ।

) खस, लोध्र, रसांजन, चंदन

0) नीलकमल, मुस्ता ।

7), 8), 9), 10), इनमें से कोई भी एक काढ़ा बनाकर उसे सुबह 1/2 कप और रात में 1/2 कप लें ।

1) नीम, अर्जुन, नीलकमल, हल्दी

2) दारुहल्दी, देवदारु, हरड, बहेड़ा, आंवला, मोथा का काढा बनाकर उसे सुबह 1/2 कप और रात में 1/2 कप जहाँ तक हो सके भोजन से पूर्व या बाद में लें ।

3) हल्दी का चूर्ण : 1 ग्राम 3 चम्मच आंवला के रस में मिलाकर उसमें 1 चम्मच शहद डाल कर लें ।

4) बेल के पत्तों का रस 2-2 चम्मच लें ।

5) करेले का रस 2-2 या 3-3 चम्मच लें ।

6) चंद्रप्रभावटी : 2-2 गोलियां दिन में 2-3 बार लें ।

7) गोक्षुरादि गुग्गुल : 2-2 या 3-3 गोलियां दिन में 3 बार लें ।

8) वसंतकुसुमाकर रस : 250 मि.ग्रा. की मात्रा में दिन में 2-3 बार लें ।

19) मधुमेहान्तक रस : 250 मि.ग्रा. की मात्रा में दिन 2-3 बार लें ।

20) जम्बवासव : 4-4 चम्मच सुबह और रात में लें ।

21) शिलाजत्वादि वटी : 2-2 गोलियां दिन में 2-3 ब लें ।

22) देवदाव्यारिष्ट : 4-4 चम्मच सुबह और रात में लें

23) असनादी क्वाथ : 4-4 चम्मच सुबह और रात में लें

24) असनादी योग : 500 मि.ग्रा. की मात्रा में सुबह औ रात में लें ।

25) मध्वासव : 4-4 चम्मच सुबह और रात में लें ।

इनमें से कोई भी एक या दो औषधियाँ एक सा ले सकते हैं ।

**शक्कर युक्त पदार्थ :** शरीर में शक्कर बनानेवा पदार्थ-कितने खाएं यह मरीज़ तय करें ।

अ) 20% शक्कर उत्पन्न करनेवाले - पके हुए केले मुनक्का, अंजीर, आलू, दाल, पापड़ी की सेम ।

ब) 15% शक्कर उत्पन्न करनेवाले - सेब, जर्दालू, आंवू हरे मटर, मुसंबी, संतरे, चेरी, शक्कर के मुरब्बे, ज्व की रोटी ।

क) 10% शक्कर उत्पन्न करनेवाले - तरबूज, अनन्ना कलिंगढ, स्ट्रॉबेरी, पीच, नींबू ।

ड) 5% शक्कर उत्पन्न करनेवाले - गाजर, गोभी, प गोभी, ककड़ी, कद्दू, मूली, टमाटर, चवली की से बीट, प्याज ।

**व्यायाम :**

1) समय के अनुसार लगभग 2 मील चलें ।

2) हर रोज लगभग 20 सूर्यनमस्कार लगाएं ।

3) रस्सीकूद करें ।

4) बागवानी, खुदाई का काम करें ।

5) योगासन : नौकासन, भुजंगासान, हलासान, धनुरास वज्रासन, अर्धमच्छेंद्रासन, यह आसन जरूर करें

मधुमेह यह इकलौती बीमारी ऐसी है, जि मरीज की भूमिका महत्वपूर्ण होती है ।


CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अफीम विषाक्त प्रभाव एवं औषध उपयोग

डॉ० विनोद कुमार गोद

लैटिन नाम - Papaver somniferum
विष वर्गीकरण - प्राचीन निर्यास विष
आधुनिक - मस्तिष्क प्रभावी निद्रालु विष

**परिचय -**

इसकी खेती संसार के अनेक देशों में होती है । इसके क्षुप करीब पौन मीटर लम्बे शाखा रहित होते हैं । पत्र लम्बे अण्डाकार कुछ फटे हुए से दन्तुर, पुष्प बड़े आकार के प्राय: सफेद किन्तु लाल और बैंगनी भी होते हैं । अफीम की अपरिपक्व डोडियों (फलियों) को रात्रि में नीचे से ऊपर चीर दिया जाता है, उसमें से श्वेत रंग का तरल पदार्थ बहकर बाहर निकलता है, इस तरल को सुखाकर गाढ़ा कर लेते हैं । यह भूरा काले रंग का हो जाता है यह अफीम है । इसकी तीव्र गंध होती है । स्वाद में तिक्त होती है । गरम पानी में घुलनशील है, स्पर्श में कोमल होती है । अफीम की फलियों में पकने पर अफीम का कुछ अंश रहता है और इनका सेक वेदना का शमन करता है । डोडियों में श्वेत रंग के बारीक दाने होते हैं, इनको खाद्य के रूप में काम में लाते हैं । इनको शामक और पोषक समझा जाता है । इन दानों से तैल भी निकाला जाता है । चिकित्सा में अफीम का प्रयोग मुख्य रूप से वेदना की अनुभूति को शान्त करने के लिए किया जाता है । नींद लाने के लिये, त्वचा की शोथ को कम करने के लिये, अतिसार रोकने के लिये, खाँसी के प्रवेग को शान्त करने के लिये भी इसका प्रयोग किया जाता है ।

**रासायनिक संगठन -**

इसमें लगभग 25 एल्केलाइड होते हैं । सबसे प्रमुख एल्केलाइड मार्फीन (Morphine) है ।

**घातक मात्रा -**

जो अफीम के व्यसनी नहीं हैं उन्हें 2 ग्राम अफीम अथवा 200 ग्राम मार्फीन की मात्रा घातक सिद्ध हो सकती है ।

**घातक अवधि -**

8 से 12 घंटे, अल्पतम घातक अवधि 45 मि यदि 24 घंटे तक रोगी न मरे तो उसके बचने की संभा रहती है ।

**चिकित्सा -**

अफीम के विष का निदान होते ही एट्रोपिन Inject करना चाहिये । आवश्यकता होने पर दोहर चाहिये । वमन करवाना चाहिये । इसके लिए एपोमाप हाइड्रोक्लोराइड को Inject (सूचीवेध) करें ।

आमाशय का प्रक्षालन करके विष को ब निकालना चाहिये । पहले सादे जल से आमाशय को धो प्रक्षालन से निकले जल को रासायनिक परीक्षा के लि सुरक्षित रखते हैं । इसके बाद पोटेशियम परमेगनेट के द्र से धावन करना चाहिये । तब तक प्रक्षालन करें, जब त मटमैला भूरा जल निकलता रहें । पोटेशियम परमेग्नेट प्राप्त न होने पर आमाशय को टैनिक अम्ल से युक्त कि पदार्थ से यथा चाय के काढ़े से प्रक्षालित किया जा सक है । प्रक्षालन के पश्चात् मेग्नीशियम सल्फेट द्वारा विरे करवाकर आन्त्र से विष को बाहर निकालना चाहिए । के बंद हो जाने पर केथेटर द्वारा मूत्राशय खाली करावें

रोगी को सोने नहीं देना चाहिये । किसी भी त जगाये रखें, इससे रोगी संत्रास की अवस्था में नहीं जात शरीर को गर्म पानी की बोतलों तथा कम्बलों से गर्म रख चाहिये । श्वसन केन्द्रों को उत्तेजित रखने के लिये च काफी पीने को देना चाहिये । रोगी की प्रारम्भिक अवस में आने पर खुली हवा में टहलाना चाहिये ।

**आयुर्वेद ग्रन्थों में -**

गाय का ताजा दूध, घी, कड़वी नीम, मकोय इमली की पत्तियों का रस, एरण्ड की मूल अथवा कोप की कल्क और हींग को अफीम के विष का नाशक मा गया है । आवश्यकतानुसार जहरमोहरा पिष्टी, चन्द्रोद कस्तूरी आदि का भी उपयोग किया जा सकता है ।

प्रतिविष - एट्रोपिन, हींग ।

एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, अगद तंत्र विभाग, राजकीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



युत्तर रूप

श्वासावरोध के चिन्ह दिखाई देते हैं । चेहरा, ठ, कान, अंगुलियों के छोर और नाखून नीले होते हैं । व और नासारन्ध्रों में झाग होता है । आमाशय को खोलने अफीम की गंध आती है और उसके अंश मिल सकते । श्लेमिक कला में रक्ताधिक्य हो सकता है । यदि रोगी मरे अधिक समय नहीं हुआ तो वक्ष को खोलने पर फीम की गंध आती है । स्वरयंत्र और श्वास प्रणाली में ताधिक्य होता है ।

कित्सा विधिक महत्व –

पहले आत्महत्या करने के लिये अफीम का प्रयोग र्वाधिक होता था । हत्या करने के उद्देश्य से इसका प्रयोग म ही होता है । बच्चों की हत्या करने के लिये इसका ोग होते अधिक देखा गया है । अफीम की विषाक्तता कस्मिक रूप से भी हो सकती हैं । जिन घरों में अफीम व्यसनी होते हैं उनके बच्चों के हाथ में गलती से गोली जाने पर उसको खा लेते हैं या जो स्त्रियाँ अफीम खाने आदि हो जाती हैं उनका दूध बच्चा पीता है तो षाक्तता हो सकती है । अफीम का विशेष रूप से प्रयोग ोरंजनार्थ, आत्महत्यार्थ, शिशुहत्यार्थ, पशुहत्यार्थ किया ता है ।

अफीम का आयुर्वेदीय औषध उपयोग –

| योग | रोगाधिकार |
|---|---|
| जातीफलादिवटी | अतिसार |
| कर्पूररस | ज्वरातिसार |
| अहिफेनासव | अतिसार |
| ग्रहणी शार्दूल | ग्रहणी |
| वज्रकपाट | सभी ग्रहणी |
| दुग्धवटी | अतिसार एवं जीर्णज्वर |
| बहुमूत्रान्तक रस | मधुमेह, सोमरोग |
| आमवातादिवज्र | आमवात, वातजनकवेदना |
| निद्रोदय रस | अनिद्रा |
| मंगलोदय वटी | प्रलाप |
| कफहरिहर रस | खांसी, दमा, कफ, शीत, ज्व |
| वेदनान्तक रस | सभी प्रकार की वेदनाओं में |
| अर्कादि चूर्ण | खाँसी, अतिसार |

संदर्भ ग्रन्थ सूची –


1. अगद तंत्र – डा० अयोध्या प्रसाद अचल
2. Modis medical jurisprudence and toxicolog lexis nexis butter worths.
3. द्रव्यगुण विज्ञान, द्वितीय भाग – आचार्य प्रियव्रत शम
4. अगद तंत्र द्वितीय भाग – श्री जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल

मूर्च्छा, भय, घबराहट, अनिद्रा,

अश्वगंधारिष्ट

मंदाग्नि आदि में लाभकारी




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# रसायन चिकित्सा - आयुर्वेद की मौलिक देन

डा० रामानन्द, एम.डी. (द्रव्यगु

आयुर्वेद का मुख्य उद्देश्य है - "स्वस्थस्य-स्वास्थ्य रक्षणम् आतुरस्य विकार प्रशमनम् च ।" इस परिप्रेक्ष्य में रसायन चिकित्सा का उद्देश्य भी स्वास्थ्य का परिरक्षण एवं संवर्धन है । सामान्य दृष्टि से अगर देखा जाय कि किसी रोग से आक्रान्त होकर औषध सेवन से रोगमुक्ति पाने की अपेक्षा सद्वृत एवं आचार रसायनों का पालन कर रोगमुक्त रहना अधिक उत्तम है । रसायन चिकित्सा का सम्बन्ध सामान्य रूप से शारीरिक स्वास्थ्य के संवर्धन से है लेकिन अगर सूक्ष्म अवलोकन किया जाय तो स्पष्ट होता है कि इसका सम्बन्ध मानस स्वास्थ्य से अधिक है । इसकी पुष्टि मेध्य रसायन एवं आचार रसायनों के प्रभाव से होती है ।

आचार्य चरक ने रसायन सेवन से प्राप्त निम्न गुणों का उल्लेख किया है -

"दीर्घमायुः स्मृतिं मेधामारोग्यं तरुणं वयः ।
प्रभावर्ण स्वरौदार्यं देहिन्द्रियबलं परम् ॥
वाक्सिद्धिं प्रणतिं कान्ति लभते न रसायनात् ।
लाभोपायो हि शस्तानां रसादीनां रसायनम् ॥"

(च०चि० 1/7-8)

अर्थात् रसायन सेवन से दीर्घआयु, स्मृति, मेधा, आरोग्य, तरुणवय, प्रभा, वर्ण, स्वरऔदार्य, देहिन्द्रियबल, वाक्सिद्धि, प्रणति एवं कान्ति ये सभी गुण रसायन के सेवन से प्राप्त होते हैं तथा जिन द्रव्यों तथा आचार-विचार से रस रक्त आदि प्रशस्त धातुओं की प्राप्ति हो उसे रसायन कहते हैं ।

रस रक्त आदि धातुएं अपने उचित गुण एवं परिणाम में बनी रहें, इसके लिए रसायन चिकित्सा की व्यवस्था की जाती है । वस्तुतः रसायन चिकित्सा का सं सम्बन्ध इस संवहन एवं धातु पोषण से है ।

शरीर में उत्तम धातुओं के निर्माण से दीर्घ स्मृति, व्याधिक्षमत्व, मेधाशक्ति तथा स्वास्थ्य को अक्षु बनाये रखने की शक्ति प्राप्त होती है ।

रसायन द्रव्य विशिष्ट रूप से एक धातु पोषण प्रक्रिया है । आचार्य चरक के अनुसार लाभोपायो शस्तानां रसादीनां रसायनम् - का भी यही अर्थ है । रसा द्वारा जरानाश, व्याधिक्षमत्व तथा मेधावर्धन सम्बन्धी प्रभ (Immunological and Psychopharmocologic effects) का मूल हेतु भी एक विशिष्ट पोषण की प्रक्रि है ।

**कुछ महत्वपूर्ण योग -**

1. ब्रह्म रसायन ।
2. च्यवनप्राश रसायन ।
3. आमलकावलेह ।
4. हरीतकी रसायन ।
5. त्रिफला रसायन ।
6. शंखपुष्पी, मण्डूकपर्णी, गुडूची, मुलेठी मेध्य रसायन ।
7. शिलाजीत रसायन ।
8. इन्द्रोक्त रसायन ।
9. अश्वगंधा चूर्ण ।
10. अगस्त्य हरीतक्यावलेह इत्यादि कुछ रसायन यो हैं जिनके निरन्तर सेवन से मनुष्य दीर्घायु, मेध आरोग्य की प्राप्ति कर सकता है ।

बहरामघाट, बाराबंकी (उ०प्र०) पिन - 225201

बैद्यनाथ
दाद मलहम
बिना तकलीफ के दाद को जड़मूल से नष्ट करने वाली दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# कैसे करें आँखों की देखभाल

डा० हरमोहन महारणा, एम.एस. (शालाक्य), (बी.एच.यू.) ** डा० व्यासदेव महन्त, एम.एस. (आयु.) (गु.आ.यू.)

नेत्र ज्योति प्रकृति का अमूल्य वरदान है । मनुष्य सभी संवेदी अंगों में नेत्र सबसे महत्वपूर्ण होता है । हम स्सर आँखों की लापरवाही बरतते हैं । इस कारण लगातार ारी दृष्टि कमजोर होती है । आँखों की सही देखभाल र पोषण द्वारा इसको स्वस्थ बनाए रखा जा सकता है ।

ा करना चाहिए -

शिशु के पैदा होने पर :-

- एक बार उसकी आँखों को खोलकर देखें, और किसी प्रकार की सामान्य आँखों से भिन्नता होने पर तुरन्त नेत्र विशेषज्ञ से सम्पर्क करें ।
- अगर शिशु की आँखों में लगातार पानी, कीचड़, लालिमा हो तो एण्टीबायोटिक ड्राप्स का प्रयोग नेत्र विशेषज्ञ को दिखाने के बाद करें ।

बचपन में ध्यान रखने वाली बातें :-

- खाने पीने का पूरा ध्यान रखें, खासकर "विटामिन ए" की पूरी मात्रा जो कि हरी सब्जियों एवं फलों से प्राप्त होती है, पूरी मात्रा में बच्चे को मिले अन्यथा इसकी कमी से शुरू में बच्चे को रात को देखने में परेशानी होगी और आगे चलकर आँखें पूरी तरह खराब हो सकती है । दस्त या पेट में कीड़ा होना रतौंधी का प्रमुख कारण है । इससे बचने के लिए अपने नेत्र विशेषज्ञ से संपर्क करें ।
- अगर बच्चे की आँखों में तिरछापन आता है, तो तुरन्त नेत्र विशेषज्ञ को दिखाना चाहिए ।
- कभी-कभी बच्चों की आँखें बिल्ली की आँखों की तरह चमकती है । यह आँखों का कैंसर हो सकता है । जिसे रेटिनोब्लास्टोमा (Retinoblastoma) कहते हैं । ऐसा होने पर तुरन्त नेत्र विशेषज्ञ से संपर्क करें ।
- तेज रोशनी एवं सूर्यग्रहण से बचें एवं तीर-धनुष जैसे खेलों को न खेलने दें ।

च्चों में दृष्टि परीक्षण :-

विद्यालयों में पढ़ने वाले बालकों में लगभग 25% मायोपिया, हाइपरमेट्रोमिया एवं एस्टिग्मेटिज्म जैसे दृष्टिदोष हते हैं । बच्चों में यदि निम्न लक्षण दिखाई दें तो किसी ग्य नेत्र चिकित्सक से सलाह लेनी चाहिए ।

- अक्सर सिर में दर्द बना रहना ।
- ब्लैक बोर्ड पर लिखा ठीक से न पढ़ पाना ।
- पुस्तक को आँख के पास लाकर पढ़ना ।
- कुछ समय पढ़ने के बाद किताब के अक्षर धुंधल दिखाई देना ।
- बार-बार पलक मारना या तिरछी दृष्टि से देखना ।
- आँखों को सिकोड़कर दूर की चीज देखना ।

3. बड़ी उम्र में ध्यान रखने वाली बातें :-

- **जरादृष्टि (Presbyopia) :-** यह विकार चालीस वर्ष की आयु के पश्चात् होता है । इससे नजदीक क कार्य जैसे किताब पढ़ना, सूई में धागा डालना आदि कार्य में कठिनाई आती है । इसके साथ-साथ शि एवं आँख में दर्द तथा भारीपन महसूस होता है । ऐ लक्षण मिलने पर चश्मों की जाँच करवायें ए नजदीक कार्य के समय हमेशा चश्मों का प्रयोग कर
- **काला मोतिया (Glaucoma) :-** चालीस वर्ष क आयु के बाद व्यक्ति को समय-समय पर विशेष त पर काला मोतिया की जांच करवानी चाहिए कालामोतिया, नेत्र में अत्यधिक दबाव के कारण हो है । इसमें शिर में दर्द, उलटी, आंख में लालिमा जाना एवं कम दिखाई देना आदि लक्षण मिलते हैं इसलिए नेत्र विशेषज्ञ से अपने नेत्रों का पूर्ण परीक्ष करवायें एवं नेत्र के टेन्शन की जाँच करवायें ।
- **मोतियाबिन्द (Cataract) :-** यह प्राय: वृद्धावस्था में होता है । इससमें धीरे-धीरे दूर की दृष्टि कम जाती है । मोतियाबिन्द में नेत्र का पारदर्श (Transparent) लेन्स अपारदर्शी (Opaque) जाता है । मोतियाबिन्द होने पर उसका आपरेश अस्पताल में लेन्स लगवाकर किया जाता है ।
- **मधुमेह (Diabetes) :-** मधुमेह रोग में रक्त शर्करा की मात्रा अधिक होने के कारण नेत्र में मधुमे जनित मोतियाबिन्द (Diabetic Cataract) एवं के रेटिना (पर्दा) में डायबेटिक रेटिनोपैथी होने कारण दृष्टि में आश्चर्यजनक कमी आती है । इसलि अगर कोई शूगर के साथ-साथ ब्लड प्रेशर के भी हो तो नियमित रूप से नेत्र की जांच करवानी चाहि मधुमेह के मरीज 6 महीने में एक बार नेत्र चिकित्स से अवश्य जांच करायें ।

इसके अतिरिक्त अगर कभी भी नेत्र में दर्द लाली हो, अचानक दिखना बन्द हो जाए या और प परेशानी हो तो तुरन्त नेत्र चिकित्सक से संपर्क करें ।

*व्याख्याता, शालाक्य तंत्र ** व्याख्याता
शल्य तंत्र, गौड़ ब्राह्मण आयुर्वेद महाविद्यालय एवं अस्पताल, ब्राह्मणवास, रोहतक (हरियाणा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**शिशु स्वास्थ्य**

# शिशुओं की अन्नप्राशन विधि

*डा० महेश नारायण गुप्त, ** डॉ०बी०एम० सिंह

आयुर्वेद में बाल्यावस्था को मुख्य तीन भागों में विभाजित किया गया है ।

1. क्षीरप 2. क्षीरान्नाद 3. अन्नाद

यह विभाजन विशेष रूप से प्रयुक्त किये जाने वाले आहार के आधार पर है । आचार्य सुश्रुत ने जन्म के प्रथम 6 माह तक की अवस्था को क्षीरपावस्था कहा है क्योंकि इस उम्र तक शिशु केवल माँ के दूध पर ही निर्भर करता है । इस उम्र तक शिशु की शारीरिक, मानसिक विकास हेतु जिन पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है वह सब मातृदुग्ध से पूर्णरूपेण प्राप्त होती रहती है । आचार्य कश्यप ने क्षीरपावस्था 1 वर्ष तक अथवा जब तक बालक दूध पीता है तब तक मानी है । इसके पश्चात् 16 वर्ष की उम्र तक बालक "कुमार" कहलाता है तथा यह अन्नाद अवस्था माना है । जबकि आचार्य सुश्रुत ने 2 वर्ष की उम्र तक क्षीरान्नाद अवस्था माना है क्योंकि इस अवधि में बालक क्षीर और अन्न दोनों ही प्रधानतया ग्रहण करता है । तत्पश्चात् 2-16 वर्ष की अवस्था को अन्नाद कहा जाता है और इस अवस्था में अन्न ही प्रधान रूप से आहार में शामिल होता है ।

आचार्य सुश्रुत एवं वाग्भट् ने 6 मास की उम्र व्यतीत हो जाने पर शिशु को अन्नप्राशन कराने का निर्देश किया है ।

**षण्मासात् चैनमन्नं प्राशयेल्लघु हितं च ।**

(सु०शा० 10/49)

आचार्य काश्यप ने अन्नप्राशन संस्कार का वर्णन विस्तार से किया है । 6 मास में शिशु को विविध प्रकार के फलों का रस चटाना चाहिए । इसके पश्चात् 10 मास में दाँत निकल आने पर शुभ दिन में मंत्रोच्चार के साथ अग्नि में आहुति देकर शेष अन्न में से अच्छी प्रकार नरम करके बालक के मुँह में 3 या 5 बार देवें । इसके बाद 12 मास का होने पर निम्न अन्न को थोड़ा-थोड़ा खाने को देवें।

पुराना, छिलका रहित, भुने हुए शालि एवं साठी चावलों को धोकर द्रव में स्नेह तथा लवण मिलाकर गलाकर अवलेह बनायें तथा दें । गेहूँ तथा जौ के चूर्ण भी अवलेह देवें । ये बालकों के लिए पुष्टिवर्धक होते हैं (का० खिलस्थान)

आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार भी बालक प्रथम 6 मास तक केवल स्तनपान कराना चाहिये तत्पश्च धीरे-धीरे फल-रस एवं अन्न पतला करके अन्नपान क का निर्देश है ।

उपरोक्त शास्त्रीय निर्देशों से हम समझ सकते कि शिशु को प्रथम 6 मास तक स्तनपान के बाद धीरे-ध फलों का रस, दाल का पानी, चावल का माण्ड, टमा पालक आदि सब्जियों का सूप थोड़ी-थोड़ी मात्रा में शि को दिन में तीन-चार बार देना चाहिये तथा यह सब सात हो जाने पर धीरे-धीरे तरलता कम करते हुए कुछ अधि सान्द्र भोज्य पदार्थ जैसे साबूदाना, दलिया, सूजी का हल पतली खिचड़ी, केला, आलू आदि को दूध में फेंटकर, गे जौ, मसूर, चना आदि अन्न को भूनकर, पीसकर, अच्छ तरह छानकर दूध में घोलकर अवलेह (Paste) बनाक बच्चे को चटाना चाहिये । वर्तमान में अनेक प्रकार के शि -आहार बाजार में उपलब्ध है जैसे सेरेलक First foo Farex, Easum, Nestum इत्यादि । इन सब शिशु आह में गेहूँ, जौ, चावल, दाल, फलों (सेव, केला, संतरा आदि सब्जियों (पालक, गाजर आदि) को ही सुखाकर, पीसक दुग्ध पाउडर के साथ मिलाकर पैक कर दिया जाता है टेलीविजन पर मनलुभावन विज्ञापन देखकर हमारी माता बहनें इन आहारों को अपने शिशुओं को खिलाती हैं जबकि ऐसे डिब्बाबंद आहार बासी तथा महंगे होते हैं साथ ही उन्हें अधिक दिन तक सुरक्षित रखने हेतु अने रसायनों (Chemicals, preservatives) का भी प्रयो होता है जिनका बालकों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ है । अतः माताओं को चाहिये कि हमेशा ऐसा आहार स्व ही घर पर ताजा एवं कम खर्च में बनाकर शिशु को सेव करायें तथा चिकित्सकों को भी इन डिब्बाबंद आहारों प्रयोग से माताओं को सावधान करना चाहिये ।

* जूनियर रेजीडेन्ट, एम०डी० (आयुर्वेद), फाइनल, बाल रोग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी ।
** रीडर, बाल रोग, प्रसूति तंत्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



उपरोक्त शिशु आहार यदि घर पर बना। जायं तो में विटामिन एवं अमीनो एसिड की प्रचुरता होती है ोंकि ताजे फलों एवं सब्जियों में विटामिन पर्याप्त होता है, आहारों से बालक को शारीरिक, मानसिक ोषण हेतु ाप्त मात्रा में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन, मिनरल लता है तथा ऊपर से देशी घी मिला देने पर वसा की पूर्ति हो जाती है । इसके अलावा मूंगफली, सोयाबीन भूनकर पीसकर गेहूँ, चावल या जौ के भुने हुए आटे साथ नमक या चीनी मिलाकर बालक को ेवन करा कते हैं । कभी-कभी नींबू या संतरे का रस मिला देने से ाद परिवर्तन भी कर सकते हैं । गर्मियों के दि ों में पके म का रस मिला कर देने से बच्चे बड़े चाव से खाते हैं । न बच्चों को मांस का सेवन कराना है उन्हें ांसरस या ण्डे के आमलेट को पीसकर पतला करके नाज के ऊडर या सत्तू के साथ फेंटकर चटा सकते हैं । मांस रस, चिकन सूप, अण्डे का सेवन करते समय यह ध्यान रख जरूरी है कि ये मांस या अण्डे (बर्ड फ्लू आदि) रोगकार जीवाणु/विषाणु से रहित हों ! इस प्रकार तैयार किये आहार से शिशु को गेहूँ, जौ, चावल से कार्बोहाइड्रेट, दाल मूंगफली, सोयाबीन से प्रोटीन एवं वसा, नीबू, संतरे से विटामिन 'सी', आम से विटामिन 'ए', 'बी', पाल आदि सब्जियों के सूप से लौह तत्व तथा अन्य खनि लवण, घी से विटामिन 'ए' 'डी' 'इ' इत्यादि पर्याप्त मा में मिलते रहते हैं ।

जैसे-जैसे बालक आहार को ग्रहण करने ल वैसे-वैसे दूध की मात्रा कम करते हुए आहार की मा बढ़ाते जाते हैं ।

उपरोक्त विधि से यदि माताएं अपने शिशुओं विविध प्रकार के अनाज, दाल, फल एवं सब्जियों से आह बनाकर सेवन कराती हैं, तो ऐसे बच्चों को अलग से को भी टॉनिक या सीरप की आवश्यकता नहीं होती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# फलों का राजा : आम

राजकुमार जैन

'आम' नाम से भले ही आम हो, मगर इसकी गिनती दुनिया के खास फलों में की जाती है । अपने तृप्तिदायक और स्वादिष्ट स्वरूप के कारण इसे 'फलों का राजा' कहा जाता है । दुनिया की कुल पैदावार का तकरीबन 80 प्रतिशत आम हमारे देश में पैदा होता है । हमारे देश में वर्तमान में एक हजार से अधिक किस्मों के आमों की पैदावार होती है । भारत में 849710 हैक्टर भूमि पर सालाना 7585000 टन से अधिक आम की उपज होती है । भारत में हर साल आम विदेशों को निर्यात किया जाता है, जिससे हमें अच्छी मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित होती है ।

प्राचीन भारतीय संस्कृति में आम का बड़ा महत्व था । संस्कृत के आदि काव्य 'वाल्मीकीय रामायण" और 'महाभारत' तक में आमों का जिक्र आया है । पुराणों के अनुसार, आम विष्णु का प्रिय फल था । बौद्धकालीन ग्रंथों में महात्मा बुद्ध को आमों के गुच्छे भेंट करने का वर्णन मिलता है । 16 वीं शताब्दी में पुर्तगालियों के भारत आने से आम का परिचय पश्चिमी जगत से हुआ । गोवा से आम ले जाकर पुर्तगालियों ने दक्षिण अफ्रीका में लगाया । मिस्र ने भी 1825 में भारत से आम की पौध मंगाई थी । मुगल बादशाह अकबर भी आम का खास शौकीन था । इस तरह आम आदि-काल से हमारी जीवन-शैली और संस्कृति का एक अभिन्न अंग रहा है ।

हमारे देश में आमतौर पर अप्रैल से आमों की उपज शुरू हो जाती है, जो अगस्त तक जारी रहती है । वैसे तो आम की एक हजार से भी अधिक किस्में हैं, मगर इसकी दशहरी, लंगड़ा, मलिका, तोतापुरी, नीलम, हापुस, फजली समर बहिश्त, चौंसा, अल्फांजो आदि किस्में ही ज्यादा लोकप्रिय हैं । इलाहाबाद के दशहरी आम सारे संसार में प्रसिद्ध हैं । आम की हर किस्म अपने कुछ अलग गुण व तासीर के कारण दूसरी किस्मों से विशिष्ट होती हैं ।

अच्छी किस्म का पका हुआ आम एक संपूर्ण संतुलित आहार माना जाता है । आयुर्वेद के अनुसार आम स्निग्ध, पौष्टिक, बल एवं वीर्यवर्द्धक, भारी तथा अग्निवर्द्धक गुण धर्म वाला फल है । आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान के विशेषज्ञ आम को अन्य फलों के मुकाबले अधिक पौष्टिक व गुणकारी मानते हैं । पके हुए आम के रासायनिक विश्लेषण से हमें ज्ञात होता है कि इसमें निम्नांकित तत्व उपलब्ध हैं :-

नमी : 86.1 प्रतिशत, प्रोटीन : 6.6 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट : 11.8 प्रतिशत, रेशा 1.1 प्रतिशत, चिकनाई : 0.10 प्रतिशत, खनिज लवण 0.03 प्रतिशत, चूना : 0.01 प्रतिशत ।

इसके अलावा पके हुए प्रति आम 100 ग्राम में 50 से 80 कैलोरी ऊर्जा तथा 4500 आई०यू० विटामिन ए पाया जाता है । सोडियम, पोटेसियम, तांबा, गंधक, क्लोरीन, अलकली, नियासीन तथा मैलिक ऐसिड भी पके हुए आम में मौजूद रहते हैं । आम में उपलब्ध प्राकृतिक शर्करा को पचाने के वास्ते जीवन-शक्ति का अपव्यय नहीं करना पड़ता है, यह स्वयं सहजता से पच जाती है ।

प्रख्यात अमेरिकी चिकित्सक डा०विल्सन के अनुसार, आम में मक्खन की तुलना में सौ गुना अधिक पोषक तत्व होते हैं, जो रक्त को शुद्ध करने और नए रक्त के निर्माण में सहायक होते हैं । तपेदिक के मरीजों के वास्ते तो आम अमृतफल है । आम के सेवन से नसों और नाड़ियों को शक्ति प्राप्त होती है ।

आम के विविध पोषक तत्व उसे एक गुणकारी फल बनाते हैं । अनुसंधानों से पता चला है कि आम के उपयोग से शरीर का स्नायु-संस्थान शक्तिशाली बनता है, जो रक्त-निर्माण के साथ वीर्य-विकारों को भी दूर करता है । आम का मृदुरेचक गुण उसे कब्ज के रोगियों के वास्ते उपयोगी पथ्य बनाता है । आमाशय की बीमारियों में आम का प्रयोग लाभकारी है । संग्रहणी, श्वास, अरुचि, अम्ल-पित्त, यकृत-वृद्धि आदि रोगों में आम का सेवन अतिशय लाभ पहुंचाता है ।

गर्मी में 'लू' लग जाने पर कच्चे आमों को पानी में उबालकर उसकी गुठली निकालकर उस पानी को रोगी को थोड़ा-थोड़ा कर पिलाना लाभदायक रहता है । रक्ताल्पता और दुबलेपन को दूर करने के लिए दूध के साथ आम का

राज स्टेशनर्स, पचपहाड़ रोड, भवानीमण्डी (राजस्थान)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



रस लें । यह कब्ज भी दूर करेगा । कब्ज की शिकायत वालों को अधिक रेशेदार आमों का सेवन करना चाहिए ।

खाद्य पदार्थ के रूप में भी आम का अपना महत्व है । इसमें विटामिनों की प्रचुरता के साथ प्रोटीन, कार्बोज तथा वसा भी पर्याप्त मात्रा में मिलती है । इस तरह आम को गर्मी का कवच कहा जाता है । आम का रस निकालकर उसे चावल के साथ खाया जाता है । कच्चे आम के उपयोग से स्कर्वी नामक रोग दूर होता है । मधुमेह रोग में समान मात्रा में आम और जामुन के फलों का रस मिलाकर लगातार कुछ दिनों तक सेवन करने से फायदा होता है । इसके नियमित सेवन से त्वचा के वर्ण में भी निखार आता है ।

आम की तरह इसकी गुठली भी उपयोगी है । संभवत: इसी वजह से 'आम के आम, गुठलियों के दाम' कहावत का चलन हुआ । गुठलियों के भीतर से प्राप्त गिरी को सुखाकर अनेक तरीकों से खाने में प्रयोग किया जाता है । गिरी में चर्बी और कार्बोहाइड्रेट अच्छी मात्रा में उपल होता है, इसलिए यह पौष्टिक भी होती है । गिरी की स काफी स्वादिष्ट होती है । इससे आटा बनाकर इस रोटियां भी बनाई जाती हैं । गठिया रोग में आम की के तेल की मालिश करने से लाभ होता है । गुठली के को छाछ (मट्ठे) के साथ फांकने से पेट के कीड़े हो जाते हैं । यदि आपको नकसीर (नाक से खून ब की शिकायत है तो आम की गुठली का रस नाक टपकाना फायदा करेगा ।

आम के बहुत से लाभ हैं । मगर यह फल अधिक औषधि है । अतएव इसके सही इस्तेमाल का मालूम होना बेहद जरूरी है । आमों को खाने या चूस पहले लगभग दो घंटों तक पानी में भिगोयें रखें । खा पूर्व आम का थोड़ा-सा रस निकालकर फेंक देना चाहि सड़े-गले और अधिक पके आम न खाएं । इन्हें खा लाभ के स्थान पर हानि हो सकती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# EFFECT OF MEDICINAL PLANTS ON WOUND HEALING IN DIABETICS

*K.N. Dwivedi, **V.K. Shukla *J.K. Ojha

Key Words :

Wound healing, Diabetic foot ulcer, Medicinal plant therapy.

Introduction :

Diabetes mellitus is associated with microvasuclar changes, deranged immunity, neurologic and macrovascular complications. These factors play a vital role to delay the wound healing process in diabetics. Sushruta - one of the ancient scholar of Ayurveda (the Indian system of Medicine), a great surgeon and the author of Sushruta Samhita (1000 B.C.) has very scientifically pointed out that the vessels of a diabetic become weak to perform normal functions which ultimately lead to cause non-healing/delayed healing nature of wounds in a diabetic.

In the context of present era we can say that microvascular changes and deranged immunity are two major factors related to delayed wound healing in diabetics even after a good control over blood sugar levels. Infection is another important factor to make the situation worse and all these factors often lead to development of gangrene. Finally this situation ends either in the form of amputation of the part of death of the patient due to toxaemia, gas gangrene/pulmonary embolism. Today the problem of diabetic wound is a challenge to clinicians because amputation is not a desirable answer and the healing is not in its normal process in diabetics. Amputation causes irrepairable physical, mental and social damage and death causes incompensable loss of life. It is the need of era to provide a safe treatment to diabetic wounds for proper healing, to save the body part and to restore normal functions.

The paucity of literature and the beneficial effect of this medicinal plant therapy prompted us to conduct this study on this dreaded complication of diabetes. Available data has shown that present therapy by medicinal plants has great potential for accelerated healing, reduction in number of amputation, reduction in duration of hospital stay and control of infection of the wounds in the diabetics.

Materials and Methods :

This study was conducted in age-matched groups during a period of 5 years. A total of 100 patients of non-healing diabetic foot ulcer having 6-12 months duration were selected from diabetic clinic (Ayurveda), University Hospital, Banaras Hindu University, Varanasi (India). The study was conducted by a combined team of Deptt. of Dravyaguna and Deptt. of Surgery, Institute of Medical Sciences, Banaras Hindu University. The study was done among 100 patients consisting of 70 males and 30 females. The patients were divided into two groups A and B consisting of 50 cases in each group. Both the groups were age-matched and divided in a randomised fashion. All the patients were thoroughly examined as per our research protocol which included detailed clinical examination, roentgenogram of the affected part, blood glucose profile, lipid profile, blood urea, serum creatinine, wound swab culture, antibiotic sensitivity testing of the micro-organism, ultrasound Doppler recording of arterial circulation of affected part and Ankle-Brachial blood pressure ratio (AB Index).

Methods :

The patients of group 'A' received regular treatment consisting of suitable systemic antibiotics according to the antibiotic sensitivity pattern along with metronidazole, local antiseptics, and peripheral vascular dilator (Pentoxifylline). The patients of group 'B' were treated with water-soluble solid extract of Manjishtha (Rubia cordifolia) and Ashvagandha (Withania somnifera) each 500 mg orally thrice daily. The patients were also required to keep the affected part dipped in luke warm decoction of roots of both the plants mixed together

* Deptt. of Dravyaguna & ** Deptt. of Surgery
Institute of Medical Sciences, Banaras Hindu University, Varanasi (INDIA)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



for 30 mintues daily. Then their wounds were dressed without using any conventional local antiseptic.

The patients of both the groups received regular surgical treatment consisting of incision, drainage of abscesses and wound debridement (as and when required).

Diabetic control in both the groups was achieved by suitable oral hypoglycaemic agents or insulin, All the patients were kept on diet yielding 1500-2000 calories per day.

For the study of immunoglobulins (IgG, IgA, IgM) and total proteines, standard readings (of age-matched non-diabetics) of immuno-pathology laboratory of Institute of Medical Sciences, Banaras Hindu University, were taken as values of control group.

The quantitative estimation of serum immunoglobulins was done in the immunopathology laboratory of Institute of Medical Sciences, Banaras Hindu University, by single radial diffusion technique of Fahey (1986).

Drug formulations of medicinal plant therapy and their standardising parameters

On the basis of descriptions available in ancient Ayurvedic texts, we selected two plants - Manjishtha (Rubia Cordifolia Linn.) and Ashvagandha (Withania somnifera (Linn) Dunal) as our test drug. For the purpose of oral administration water soluble solid extracts of both the plants were prepared by classical Ayurvedic method by using their roots, The roots of the curde drug were takne in a sterilized container and water amounting four times than that of crude drug was added to it. Then it was heated until 3/4th of the water is evaporised. Then it was filitered. This filtrate is called as Kvatha (Decoction). Thus obtained decoction was further gently heated until in became semisolid. Then it was cooled at room temperature. We obtained water soluble solid extracts of both the plants by this method of oral use.

For external use (dipping purpose) the Kvatha (decoction) was prepared as descri above. The standardising parameters of decocti of both the plants were as follows :

| | | |
|---|---|---|
| Decoction of Rubia cordifolia | | |
| pH | = | 6.2 |
| Specific gravity | = | 1.013 to 1.015 |
| Solid contents | = | 27.20 mg% |
| Temperature | = | 37-40°C |
| Decoction of Withania somnifera | | |
| pH | = | 6.4 |
| Specific gravity | = | 1.014 to 1.017 |
| Solid contents | = | 20.20 mg% |
| Temperature | = | 37-40°C |

Parameters of Assessment

The patients of both the groups w assessed periodically at the interval of one mo The subjective parameters included improvem in general condition and sense of well being, b temperature and body weight.

The objective parameters of assessm included naked eye examination (measuremen ulcer margins by centimetre tape by Smel device, presence of healthy granulation tiss absence of purulent discharge), tissue biopsies histological changes, roentgenogram of affec part, improvement in arterial circulation ultrasound Doppler recording and AB inde immunological changes (in the levels of IgG, and IgM) and estimation of total proteins.

Criteria for grading of results :

Only objective parameters were taken grading the results. These parameters include

(i) improvement in arterial circulation ultrasound Doppler recording and AB inde
(ii) Favourable histological changes
(iii) Naked eye examination of the wou (measurement) of ulcer margins by centim tape by Smelo's device, presence of heal granulation tissue and absence of puru discharge).
(iv) Improvement in immunological status.

We categorised the results as :



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(a) Mild recovery – if any two of the above parameters were found improved.
(b) Moderate recovery – if any three of the above parameters were found improved.
(c) Good recovery - if all the four parameters were found improved.

Observation and Results :

There were a total of 100 patients equally divided in both the groups - A & B. The age and sex group distribution has been shown in Table 1 and 2. Sixty patients belonged to rural area and fourty to urban area (Table 3). 40% patients had diabetes for 5 to 10 years and the same percentage of patients were recorded having diabetes for more than 10 years. (Table 4)

Table 1 : Pattern of Age-group in present study

| Age Group (Yrs) | No. of Cases | Percentage |
|---|---|---|
| 31 - 40 | 10 | 10% |
| 41 - 50 | 20 | 20% |
| 51 - 60 | 30 | 30% |
| 61 - 70 | 30 | 30% |
| > 70 | 10 | 10% |

Table 2 : Pattern of Sex in present study

| Sex | No. of Cases | Percentage |
|---|---|---|
| Male | 70 | 70% |
| Female | 30 | 30% |

Table 3 : Social status of the patients

| Sex | No. of Cases | Percentage |
|---|---|---|
| Rural | 60 | 60% |
| Urban | 40 | 40% |

Table 4 : Duration of diabetes in patients studied

| Duration of Diabetes (Yrs) | No. of Cases | Percentage |
|---|---|---|
| 0 - 5 | 30 | 30% |
| 6 - 10 | 40 | 40% |
| > 10 | 40 | 40% |

Quantitative estimation of immunoglobulins and total protein in patients of group 'A' and its statistical analysis is shown in Table 5 and 6.

Table 5 : Quantitative estimation of immunoglobulins and total protein in patients of group 'A'

| Immunoglobulin/ Total Protein | Lab. Control values for age-matched non-diabetics (mg%) Mean/±SD | Group B | |
|---|---|---|---|
| | | ($B_1$) Before treatment (mg%) Mean/±SD | ($B_2$) After treatment (mg%) Mean/±SD |
| IgG | 1145 ± 208.20 | 1680 ± 111.64 | 1768 ± 190.26 |
| IgA | 295.50 ± 40.90 | 282 ± 46.51 | 320 ± 44.42 |
| IgM | 148.70 ± 40.90 | 94 ± 19.916 | 122 ± 49.923 |
| Total Protein | 7.54 ± 0.66 | 6.1 ± 0.31 | 7.02 ± 2.811 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Table 6 : Statistical analysis of group 'A' findings

| Groups compared | IgG<br>T Value<br>P Value | IgA<br>T Value<br>P Value | IgM<br>T Value<br>P Value | Total Protein<br>T Value<br>P Value |
|---|---|---|---|---|
| Control Vs. $A_1$ | 7.1056<br><0.001 | 0.5842<br><0.05 | 3.137<br>>0.01 | 3.817<br><0.01 |
| Control Vs. $A_2$ | 7.32<br><0.001 | 1.2076<br>>0.05 | 0.5386<br>>0.05 | 0.4185<br>>0.05 |
| $A_1$ Vs. $A_2$ | 0.160<br><0.05 | 1.804<br>>0.05 | 1.374<br>>0.05 | 0.675<br>>0.05 |

Above observations prove that only IgG level has been elevated upto statistically signific extent in the patients of group 'A' being treated with convential antibiotics, antiseptics etc. IgA, IgM, total proteins did not show any significant change in their status in these patients.

Apart from this the patients of group 'A' showed mild to moderate recovery and 30% ca underwent either total or partial amputation.

Table 7 and 8 show the quantitative estimation of immunoglobulins and total protein and t statistical analysis in the patients of group 'B' treated by medicinal plant therapy-

Table 7 : Quantitative estimation of immunoglobulins and total protein in patients of group

| Immunoglobulin/ Total Protein | Lab. Control values for age-matched non-diabetics (mg%) Mean/±SD | Group B | |
|---|---|---|---|
| | | ($B_1$) Before treatment (mg%) Mean/±SD | ($B_2$) After treatment (mg%) Mean/±SD |
| IgG | 1145<br>±208.20 | 1720<br>±143.44 | 1828<br>±201.26 |
| IgA | 295.50<br>±40.90 | 291<br>±47.53 | 349<br>±47.72 |
| IgM | 148.70<br>±40.90 | 104<br>±20.659 | 152<br>±82.603 |
| Total Protein | 7.54<br>±0.66 | 6.3<br>±0.39 | 8.07<br>±2.811 |


CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Table 8 : Statistical analysis of group 'B' findings

| Groups compared | IgG T Value P Value | IgA T Value P Value | IgM T Value P Value | Total Protein T Value P Value |
|---|---|---|---|---|
| Controls Vs. $B_1$ | 7.1856 <0.001 | 1.5855 >0.05 | 3.637 <0.01 | 3.877 <0.01 |
| Controls Vs. $B_2$ | 7.44 <0.001 | 1.4988 <0.05 | 1.5386 >0.05 | 0.8785 <0.05 |
| $B_1$ Vs. $B_2$ | 0.163 <0.05 | 1.985 <0.05 | 1.734 <0.01 | 0.979 <0.01 |

In patients of group 'B' being treated with medicinal plants it is evident from table 7 and 8 that statistically significant changes have been noticed in IgG, IgA, IgM and total protein levels when compared before and after treatment but when we compared the findings of after treatment with that of control values, it was observed that only IgG, IgA and total protein levels showed significant improvement and IgM level did not show any significant change.

Table 6 : Statistical data showing change in AB index (for arterial circulation) in patients studied

| Groups | Mean | SD | 't' value | 'P' value |
|---|---|---|---|---|
| Group A Before treatment | 0.739 | ± 0.318 | | |
| After 1st Month | 0.788 | ± 0.264 | 2.77 | P > 0.01 |
| After 2nd Month | 0.794 | ± 0.254 | 3.00 | P < 0.01 |
| After 3rd Month | 0.809 | ± 0.233 | 3.06 | P < 0.01 |
| Group B Before treatment | | | | |
| After 1st Month | 0.796 | ± 0.206 | 3.00 | P < 0.01 |
| After 2nd Month | 0.800 | ± 0.175 | 3.05 | P < 0.01 |
| After 3rd Month | 0.842 | ± 0.184 | 3.62 | P < 0.01 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



After three months therapy, statistically significant changes in the ratio of Brachial and Ankle Blood pressure (AB index) was noticed in the patients of both the groups.

Apart from these changes, patients of group 'B' showed moderate to good recovery and domonstrable histological changes in terms of reduced subepithelial oedema, reduced exudates, vascular channel proliferation and appearance of healthy granulation tissue. A very good improvement in arterial circulation was also recorded by ultrasound doppler in the arteries and capilliaries supplying to the affected part.

Most significant fact noticed was that only 16% cases underwent partial amputation in the patients of group 'B' receiving medicinal plant therapy.

## DISCUSSION AND CONCLUSION

The overall outcome was significantly better in the patients of group 'B' receiving medicinal plant therapy. 84% cases of group 'B' showed moderate to good recovery i.e. three or all four parameters of assessment were found improved in three months. These patients presented appreciable growth of healthy granulation tissue, marked improvement in the arterial circulation of the affected part (as recored by doppler and AB index) as well as improved immunological status. It is to be noticed that only 16% cases of this group underwent partial amputation.

The patients of group 'A' who received conventional treatment of antibiotics showed mild to moderate recovery i.e. only two or three, out of four parameters were found improved in these patients after three months therapy. The patie of this group showed a lesser improvement in arterial circulation when compared to group 'B'.( IgG level was found statistically improved in group. Overall, more number of patients (3 required total or partial amputation.

The most striking effect of the medic plant therapy was seen in control of puru discharge and if present, the maggots came spontaneously only after 4-6 dippings.

The plant Majishtha (Rubia cordifolia Ayurvedic texts has been claimed for its wonde VISHAGHNA (Detoxicating / Antimicrobial) SROTOSHO DHAKA (Channel Clearing) actio Most probably it showed its effect by remo the microangiopathic and atherosclerotic chan inside the arteries and capillaries supplying area of non healing wound and thus facilita proper blood supply and nutrition to the area. O to its VISHAGHNA PRABHAVA (detoxicat antimicrobial action) it has proved itself effic enough to remove the microbes causing infect

The next plant Ashvagandha (Withe Somnifera) in Ayurvedic texts is well known fo Rasaya (Rejuvinative/ Restorative) actions. I probably this drug improved the immunolo status of the patients and thus potentiated bodily defence mechanism to combat aga infections and also erected a barrier to pre superimposed infections.

Present study has proved that both th medicinal plants are of potential value to treat healing diabetic wounds. These plants deser be further explored for their possible beneficial in other diabetic complications.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# NIDANATAMAKA STUDY OF HYPERTENSION

[1] Prof. Loknath Sharma

[2] Dr. Devendra Kr. Singh

There is no any definite etiology claimed to produce the hypertension in modern medicine, only risk factors & predisposing factors are explanied to some extent.

a. Beeja dosha (Adibala pravritta i.e. Hereditary predisposition) – Regarding beeja dosha, number of references are found in *Ayurvedic* classics.

The part of beeja (sperm & ova), which is responsible for the formation of a particular organ, is vitiated; this will result in the vitiation of the respective organ. (Ch.sha. 3/17)

Further these beeja dosha janit roga comes under adibala pravritta vyadhi, which is either matrija or pitrija.

It is also described that patients who are diabetic by birth (congenital) & those who are born of diabetlic parent (hereditary) are not curable because of the morbidity in their genes. Similarly other hereditary (kulaja) ailments are to be considered as incurable (Ch.Chi. 6/57). Some arsha are also described to have hereditary predisposition.

If the parents indulge in excessive intake of dosha vitiating regime the beeja (sperm & ova) or beeja bhage (chromosomes) or beejabhagavayava (gene) or beejabhagaana-maekdesh (DNA) get afflected. The progeny produced of afflicted beeja shows congenital anomalies.

Above description is given in detail with reference to congenital sexual anomalies (Ch.sha. 4/30).

Modern science also gives one probable cause that genetic heterogenicity involving effect in renal excretion of sodium, or heighten sympathetic response to the stress or defect in renal in transport of sodium across the membranes may be possibilities in hypertension.

Genetic factors have long assumed to be important in the genesis of disease. Data supporting this view can found in animal studies as well as in population studies in human. Primary hypertension cluster in families. Person with two or more first degree relatives with hypertension before age of 55 years have a 3.8 times great risk of developing hypertension before age 50 yea (William et.al. 1991).

The search for possible biochemical physiological marker to identify those people w a genetic predisposition continues in hope proceeding backward to find DNA markers & the by proves the existence of major ge hypertension interaction.

b. *Dosa* environment - A number environmental factors have been implicated in t development of hypertension, in intrauterine as w as in extra uterine life.

1. Fetal environmental (*Janma bala pravritta* In many text of *Ayurveda* it is stated that so physical disorders are constructed during t early fetal life, either due to *daubri avamanana & or matrija rasa vikriti.* L.B.W. as a consequence of fetal und nutrition is followed by increased inciden of high blood pressure later in life (Brenn B.M. & Chertow G. et.al 1993).
2. Geographical environment - The pattern *ahara-vihara* of some particular geograph regions, are most vulnerable for examp American black i.e. blacks are more prone hypertension. Being in lower socioeconom groups. having a less importance towar their health care system, which leads to definite development of the diseas hypothetical reason could be low nutritio status (*dhatu kshaya)* leads to *vata prako* leading to *vataja vyadhi.*
3. *Kala* (Seasons) – Hypertension predominantly a disease of winter season, m be due to follwing reasons.
   - To conserve the energy there is periphe vasoconstriction, who elevates t peripheral resistance.
   - There is minimum sweating in wint season, which raises the salt & water loa although this load is cleared up filteration through kidney.
   - As far as the diurnal variations a

1 Professor and Head, P.G. Department of Rog Vikriti Vigyam, N.I.A., Jaipur.
2 P.G. Department of Rog Vikriti Vigyan, N.I.A., Jaipur.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



concerned, the crises of the disease occures in the early morning, mostly after awakening from sleep, may be due to raised catecholamine level at this period.

*Atilavana sevana* (Increased salt intake) - In *Astang sangraha* lavan is said to increase *sharira kleda (kledana)*, *Charaka* explained that *lavana rasa* when consumed excessively leads to *rakta vridhi (Ch.su. 26/43)*. Here *rakta vriddhi* should be taken as *rakta prakopaka;* again in *vimana sthana Charaka* has explained that *lavana rasa* when taken for long duration leads to *dosha sanchaya (Ch.vi. 1/18)*. *Lavana* is said to be *pitta prakopaka rasa*, by above reference we have the inference that

1. Excessive of *lavana rasa sevana* leading to increase *sharira kleda* i.e. fluid volume, leading to increase cardiac out put, one of the component which maintains the blood pressure. 2 – *Ati lavana rasa sevana* directly affects *rakta dhatu*, which is one of the important *dushya* in the etiopathogenesis of hypertension. So probably *Charaka* has recognized that the salt can raise the blood volume.

*Vayu* (Age) – Essential hypertension is the disease of middle & old age.

*Avyayama & Ativyayama* (physical activity) – Isotonic exercise (walking & jogging) is very much essential for maintenance of positive health. *Avayayama* leads to *sthoulya (kapha prakopa)* which is also a risk factor for developing hypertension due to *dhamani pratichaya*.

On the other hand, *ativyayama*, excessive x etc. in relation to its own strength may lead to iation of *vata*, followed by emaciation.

*Manas hetu* (Psychological factors) – Any kind of mental stress like *chinta, shoka, bhaya,* leads to over activity of C.N.S. i.e. *prana vayu.*

The nervous system is supposed to be erlinked with distinctive qualities of *vatu. Bhela* s told that *sthana* of *mana* is said to be in between *ira & talu* i.e. *mastishka (Be.sa.chi. 8). Sthana prana vata* is also *shira* i.e. *mastishka (As.bri.su /47) Chinta* is the function of *mana*, but excessive *inta* leads to aggravation of *raja guna* of *mana.* *Raja guna* & *vata* are interlinked, aggravated *ra guna* influence the *prana vata* & this prana va has function over other *vata* in maintaining th blood pressure. So aggravated *prana* will initia the process of hypertension.

8. *Premeha* (Diabetes)- *Bahudravasleshma* i the main *dosha* in *prameha samprapti*. Thi *bahudravasleshma* affecting other *dhatu* produces more *kleda* in the body, which ma lead to hypervolumic hypertension, "*dhama pratichaya*" is a *kaphaja nanatmaja vyady* simulating hypertension with increase atherosclerosis.
9. Other *Vata* aggravating factors - *Vata g* vitiated by the following - (*Ch.chi. 28/15-18*
   - Excessive intake of cold, scanty ligh foods.
   - Remaining awake at night in excess.
   - In appropriate therapeutic measures.
   - Excessive elimination of *dosha* & blood
   - Keeping fast in excess.
   - Swimming in excess.
   - Sleeping & sitting over uncomfortab beds.
   - Suppration of natural urges.
   - Formation of *ama* suffering from traum
   - Injuries to *marma*.
   - Riding over fast moving vehichles etc.
10. *Sthaulya* (Obesity) - *Susruta* believes tha *medoroga* leads to '*vatja vikara' (Su.su. 15/32*

Commentationg on above verse *Dulhan* explained that "*vata vikara*" is produced due t *medavrita marga.*

11. *Dhruma pana* (Smoking) - It is anothe important *vata prakopaka nidana*, leads t constriction of vessels leading to increase peripheral resistance.
12. In *madatyaya* chapter *Charaka* explained tha when *madya* is taken in large quantity, it sm affects channel of *rasa, vata* i.e. (*rasavah srotas*) & by entering *hridaya* it affects th *dhatu* situated in *hridaya (rasa, oja, rakta* beside that it also affects *mana, buddh indriya, atma (Ch.chi. 24/334-36)*. Similar *madya* affects *dosha dhatu, srotas, srotom* of *rasavaha srotas* (circulation system) leadi to hypertension.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# CORAL (PRAVALA) — ZOOLOGICAL ASPECT

[1]Himanshu S. Tiwari [2]B. Patgiri [3]P.K. Prajapati

## INTRODUCTION

The ocean and its inhabitat's fascination lead to a quest of knowledge and deeper understanding. The term coral is applied to different coelenterates (Cnidaria) types, which are producing substantial calcareous skeletons. It is a calcium carbonate deposited formed by coelenterates. Various species of corals are found in all oceans of the world. E.g. red coral, blue coral, black coral and organ pipe coral etc. Most coral forming polyps belong to the class Anthozoa, comprising about 2500 living and 5000 fossil species.

Although the coral is often mistaken for a rock or a plant, it is actually composed of tiny, fragile animals called coral polyps. When we say 'coral' we are actually referring to these animals and the skeletons they leave behind after they die. Although, they are hundreds of different species of corals, they are generally classified as either hard coral or soft coral.

Hard corals grow in colonies and are the architects of coral reefs. They include such species as brain coral and elkhorn coral. Their skeletons are made out of calcium carbonate while is hard and eventually becomes rock. Hard corals are hermatyps or reef building corals and need tiny algae called zooxanthelle to survive. Generally when we talk about corals, we are referring to hard corals.

Soft corals such as sea fingers and sea whips, are soft and bandable and often resembles plants or trees. These coral do not have stony skeletons, but instead grow wood - like cores for support and fleshy rinds for protection. They are referred to as ahermatypes or non-reef building corals and they do not always have zooxanthelle.

## MATERIALS AND METHODS

## HISTORICAL REVIEW

The true nature of coelenterate was long debated in the case of sponges. Aristotle was aware of the stinging qualities of coelenterate, considering them intermediate between plants and animals termed the Acalephae (nettle) or cindae (Cnidos - thread). They were regarded as either plants or plants like animals and included in zoophyte (Zoon - animals, phyton - plants) to gather with sponges, ascidians etc. but, they were true animals established in 8th century. by Peyssonnel (1723), John Ellis and Trembly (1774) under the group Radiata along with echinoderms because of their radial symmetry. Leuckart (1847) created the phylum coelenterate but it also includes sponges and ctenophores. Hatschek (1888) splitted leuckarts coelenterata into three distinct phyla : spongiaria (Porifera), cnidaria and cetnophora Cnidaria before from sponges being tissue animals and having a distinct digestive cavity and from cetnophores in repossessing radial symmetry, nematocysts, and polyp stage and in reproducing both sexually and asexual.

## COELENTERATA MORPHOLOGY

All the coelenterates possess a single large central cavity the coelenterons are gastro-vascular cavity, serving both digestion and circulation of food and one opening to outside. The phylum coelenterata (Koilos - Hollow, Enteron - Intestine) means hollow intestine. They are colourful group of water dwelling, acoelomate radially symmetrical and lower invertebrate animals.

A coelenterate resembles a gastrula. a two layered hollow ball or tube of cells, with an opening at one end (mouth). The two layers represent the primary germ layers, ectoderm and endoderm. The inner layer of cells, endoderm, forms the gastrodermis, which lines the central gastro-vascular cavity or coelenteron. The mouth opening represents the blastopore of the gastrula.

Polyp. The polyp or hydroid type is sessile, having elongated tubular or cylindrical body, attached to the aboral end, while the oral end bears

1 Lecturer, Department. of R.S. & B.K., Smt. Urmila Devi Ayur. College, Hoshiarpur, Punjab.
2 Lecturer, Department. of R.S. & B.K., 3 H.O.D. Department. of R.S. & B.K.
Dept. of R.S. & B.K., including drug research, I.P.G.T. and R.A., Gujarat Ayurveda University, Jamnagar

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



he central mouth usually surrounded by a ring of soft tentacles.

Medusa . The medusa or jellyfish type is free swimming, having umbrella or ball shaped body, bearing a ring of marginal tentacles and the mouth of the central tubular projection (manubrium) of the lower concave surface.

Nematocysts : Nematocysta are a small sac filled with a poison fluid (hypnotoxin) and containing a coiled thread tube. It is contained in a specialized interstitial epidermal cell, called a cnidoblast, projecting on its free surface in to a sharp, trigger- like sensory process, the cnidocil.

CLASSIFICATION

Phylum coelenterata which is then subdivided into sub-phylum cnidaria for the coelenterates proper and the sub-phylum Acnidaria for the ctenophores. The phylum includes about 10,000 known species. About half of them are known only as fossils. They are grouped in to three main classes as follows -

1) Class I - Hydrozoa
2) Class II - Scyphozoa
3) Class III - Anthazoa

Out of these classes, the corals come under the class Anthazoa.

CLASS - ANTHOZOA

Anthozoans include corals, sea anemones, sea pens, and sea pansies. These animals are either solitary or colonial polyps that live attached to a substrate (surface). Of the 6000 known anthozoan species, corals comprise about 2500 species.

Class anthozoa is further divided into three subclasses : Octocorallia, Zontharia and Tabulata.

SUBCLASS OCTOCORALLIA.

Polyps are characterized by having eight pinnate (side-branching) tentacles. Octocorallia included gorgonian corals, sea pens, sea pansies, organ pipe corals and soft corals (order Alcyonacea). Most are colonial.

- Order stolonifera (organ pipe coral and tree fern coral)
- Order Telestacea (Telesto)
- Order Alcyonacea (soft corals such as leat corals and tree corals).
- Order Coenothecalia (Indo-Pacific blue cor
- Order Gorgonacea (gorgonian corals includ sea fans, red coral, sea whips and sea feathe
- Other Pennatulacea (Sea pens and s pansies)
- Subclass Zoantharia. Polyps are characteriz by having tentacles in multiples of s Zoantharian tentacles are rarely pinnate. Ba corals and reef-building corals (orc Scleractinia) are members of the subcla Reef-building corals are also known as "ha corals" or "stony corals" Zoantharians may either solitary or colonial.
- Order Zoanthidea (anemonelike anthozoar
- Order Actiniaria (sea anemones)
- Order Actiniaria (sea anemones)
- Order Scleractinia or Madreporaria (h building corals such as star corals, bra corals, staghorn corals, mushroom corals a buttle corals).
- Order Rugosa or Tetracoralla (extinct soli corals)
- Order Corallimorpharia (resemble true co but lack skeletons)
- Order Ceriantharia (anemonelike anthozoa
- Order Antipatharia (black corals)

CORAL HABITAT :

Although various types of corals can found from the water surface to depth of 600 m reef building corals are generally found at dep less than 46 meter, where sunlight penetra Because reef-building corals have a symbi relationship with a type of microscopic alg sunlight in necessary for these corals to thrive grow. Reefs tend to grow faster in clear water. water allows light to reach the symbiotic a living within the coral polyp's tissue. M scientists believe that the algae, ca



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwa

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



*zooxanthellae*, promote polyp calcification. Light-absorbing adaptations enable some reef building corals to live in dim blue light. Reef-building corals require warm ocean tempertures (68 to 82° F, or 20 to 28° C).

PHYSICAL CHARACTERISTIC :

A coral polyp is a tubular sac like animal with the central mouth surrounded by a ring of tentalces. The end opposite to tentacles, called the base. is attached to the substrate. On coral branch or mound is covered by thousands of these animals. When thousands of these animals are grouped together, they are referred to as coral colonies. Each coral tree or mound is one colony of coral polyps. Coral polyps are usually nocturnal i.e. they stay inside their skeletons during day and at night, polyps extends their tentacles out to feed.

Depending on the species, coral polyps may be measured less than or inch to several inches in diameter. The variety of shapes and sizes of coral colonies largely depend on their species and location of the coral.

COLOURS :

Most coral polyps have clear bodies. Their skeletons are white, like hurnan bones. Natural pigments in coral tissue produce a range of colours ncluding white, red, orange, yellow, green, blue and purple. They generally get the colour from the zooxenthellae that live inside their tissue. Several million zooxenthellae live in just one square inch of coral and produce pigments.

CORAL REEF

Coral reefs are massive structures made of limestone that is deposited by living things. Although thousands of species inhabit coral reefs, only a fraction produces the limestone that builds the reef. The most important reef building organisms are corals.

The geological record indicates that the ancestors of modern coral reef ecosystems were formed at least 240 million years ago. The coral reefs existing today began growing as early as 50 million years ago.

The actual architects of coral reefs are hard or stony corals, which are referred to as hermatypic or reef-building corals. As the polyps of stony corals, grow, they produce limestone for their skeletons. When they die, their skeletons are left behind and are used as foundations for new polyps, which build new skeletons over the old ones. An actual coral mound or tree is composed of layer upon layer of skeletons covered by a thin layer of living polyps. Other types of animals and plants also contribute to the structure of the reef.

Coral reefs are divided into four classes. Viz. Fringing reefs, barrier reefs, atolls and patch reefs.

CORALLIUM RUBRUM (RED CORAL OR PRECIOUS CORAL)

- Kingdom - Animalia
- Class - Anthozoa
- Order - Gorgonaceae
- Family - Corallidae
- Species - Rubrum
- Phylum - Cnidaria
- Subclass - Octocorallia
- Sub-order - Scleraxonia
- Genous - Corallium

In Ayurvedic classics. it is better known as Pravala Shakha.

TUBIPORA MUSICA (PIPE ORGAN OR ORGAN PIPE CORAL)

Kingdom - Animalia eumetazoa radiate
Phylum - Cnidaria
Class - Anthozoa
Subclass - Octocorallia
Order - Alcyonacea
Family - Tubiporidae
Genus - Tubipora
Species - Musica

This variety is better known as Pravala Mula in the Ayurvedic literature.

DISCUSSION AND CONCLUSION

All the coelenterates posses a single large



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



central cavity the coelenterous are gastro vascular cavity serving both digestion and circulation of food and one opening outside. The phylum coelenterates means hollow intestine. It is subdivided into sub-phylum cnidaria for the coelenterates proper and subphylum acnidoria for the ctenophores. The phylum includes about 10,000 known species. About half of them are known only as fossils.

Coral reproductive methods vary depending on the species. Some species such as brain and star corals are hermaphrodites, meaning they produce sperm and eggs at the same time. Often polyp produce by sexual reproduction initiates growth of a colony asexually by body.

Four coral conditions have been identified as disease — white band disease (WBD), bla band disease (BBD), bacterial infection and s down reaction.

Collarium rubrum (red coral) and tubip musica are used in the preparation of medic Both of them are of red colour due to the dep of iron salts in the calcium structures.

Tubipora musica is having multi-poro dull red, weight less, vertical pyramid shap structure. Corallium rubrum is having hard den deep red coloured and cylindrical shaped lustur structure.

By analyzing the classical literature a zoological advancement one can say that Prav Mula is having much similarity to tubipora mus and Shakha Pravala of Ayurved having much similarity to collar rubrum.

Calcium carbonate can found in three basic forms in nat They are aragonite, calcite and n crystalline form. Corals a containing the majority of cal forms, which are having trigo crystals of calcium carbonate.

REFERENCE BIBLIOGRAPHY

1. Bentley's Textbook Pharmaceutics : Baillere, Tin and Cox, 6th ed., London, 1954
2. Cousteau Society Corals, Sea's Great Builders, Newy Simon and Schuster, 1992.
3. Muzik Katy, At Home in the C Reet, Water Town, Massachus Charles Bridge, 1992.
4. Wells Susan M., Coral Ree The World, Vol. 103, Cambri U.K., International Union conservation of Natural Resou (I.U.C.M.) 1998.

प्रसूता के लिए बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध प्रसव के बाद इसके सेवन से माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती है।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Bed-Wetting : A Problem & Its Solution

[1]Dr. Ashvin B. Bagde [2]Dr. Nisha Gupta [3]Prof. O.P. Upadhyay

Bed Wetting is involuntary urination at night. Children after the age of 3 to 4 years usually developed urinary sphincteric control. They can pass urine only whenever they desire to micturate like adults do. But because of certain causes, this control does not manifest because of which they continue to pass urine in the bed at night.

In medical language it is known as Nocturnal Enursis. Researches show that about 15 percent of children between the age of 5 to 15 years are known to be enuretic. About 1 percent of normal children may contiune to wet the bed till the age of 15 years. It is often found that the brothers and sisters of the patient use to pass urine involuntarily at night and it is also recorded that parents in their young age had also the same problem.

Bed wetting is more common in boys than girls. Bed-wettes may pass urine at night even more that once. Since the condition is generally harmless and self limiting. So the parents should always try to reassure themselves as well as to kid.

## What Causes Bed- Wetting ?

Still no one knows the excact cause of bed-wetting. But some of the causes of Bed-wetting include the following.

- Genetic factors
- Difficulties in awaking from the sound sleep.
- Urinary tract infection.
- Abnormalities in spinal cord
- Slower development of central nervous system (This reduces the child's ability to stop the bladder from emptying at night)
- Inability to hold urine for a long time because of small bladder
- Juvenile disbetes mellitus
- Constipation and fecal incontinence

Sometimes thread worms are also responsible for bed-wetting. At night they come out of the anus to lay the eggs outside. While doing so, they cause a certain amount of irritation a as a reflex action the child passes urine.

Other Factors are :

- Shyness
- Fear of school going
- Insufficient attention from parents
- Emotional insecurity feeling due to separati from the mother.
- Jealousy among brother and sister
- Quarrels between parents.

For treatment the cause of the disea should be properly examined. If it is physical emotional it should be treated correctly.

Investigations :

- Stool examination
- Urine Examination
- intravenous urogram

Treatment for Bed - Wetting :

In Ayurveda, the child is given medicin to strengthen his nervous system and the musc of urinary system. The medicines commonly use for this purpose are –

- Chandra Prabha Vati –

1. Child below 5 years - 125 mg - two times on empty stomach wi the half cup of milk.
2. Child above 5 years - 250 mg - two times on empty stomach wi the half a cup of milk.

- Vanga bhasma or Praval Pisthi 30 mg two tim with honey.
- Trivangbhasma, Tarkeshwar Ras, Gagana Lauha are also useful in this condition.
- Krimikuthar Ras for worms infestations.

In Allopathy :

Imipramine hydrochloride — This drug tricyclic antidepressant

It is given in dose of 25 to 50 mg orally a night before going to bed and continues for months. It is contraindicated below the age of years.

1 M.D. (Ayu.) Scholar, 2 Lecturer, 3 H.O.D. Department of Samhita, N.I.A., Jaipu

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



esmpressin acetate — It is also used in Bed-
/etting.

oisture alarm —

Moisture alarms consider a useful and
uccssful way to treat bed-wetting. This treatment
quires a supportive and helpful family and may
ke many weeks or even several months to work.

Moisture alarms could have long term
uccess and fewer relapses than medications.

ypnosis —

Hypnosis has been found to be a very
fective form of treatment for bed-wetting. By
peated listening to a hypnosis tape, than brain
reprogrammed so that the child will be able to
spond to a full bladder while asleep the same
ay he or she does while awake.

upprotive Treatment :-

The patients should stop taking water after
O'Clock in the afternoon.

Spicy food, pulses are strictly
ohibited because they cause constipation and
ind formation in the stomach.

Soft drinks like (Coca-cola, Pepsi etc)
hould be avoided due to their diuretic
roperties.

Patients should take potato, bitter
ourd, pumpkin, tomato, radish, cabbage,
inach, cauli-flower and other leafy vegetables.

The patients bladder should be trained
retain urine for a longer time. This may be
one by making the child drink large quantity
f water during day and persuading him to delay
mptying of the bladder as long as possible.

Fera complex which is one of the
nportant emotional factor for bed-wetting,
herefore parents should take the child for a
alk every evening. This helps the child to
vercome the defect both physically and
motionally. Atmosphere of friendship should
e created among his brothers and sisters. He
hould not be made to sleep on rubber bed
heet.

The bed sheet should be quietly change
next morning, without making the child conscious
of it. It is important for your child to know that bed-
wetting isn't his or her "fault". Bed-Wetting is not
the result of laziness or stupidity.

The parents are advised not to criticize or
punish the child for bed-wetting because this is
not a solution of the problem. Give him support
love and reward for staying dry, and tell his success
to people who are important to him such as brother
and sister.

Remember your child also wants to get
rid of this problem.

References :


- Ayurvedic cures for common diseases - Dr
  Dash
- Essential Pediatrics – Dr. O.P. Ghai
- Book of Pediatrics – Dr. Devendranath Mishra
- Book of Pediatrics – Dr. Achal



स्त्रियों के लिए कांतिवर्द्धक एवं बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

अशोकारिष्ट

मासिक-धर्म की अनियमितता, कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, भूख न लगना तथा मासिक-धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# KOSTHA PAREEKSHA - A CRITICAL STUDY

[1] Dr. Vasant C. Patil [2] Dr. M.S. Baghel [3] Dr. A.B. Thakar

Kostha Pariksa is an important tool in Cikitsa especially Sodhana Karma. Even though, the Kostha Pariksa is not mentioned in Sodhana Purva Pariksa i.e. Ekadasa Pariksa told by Maharsi Caraka Ca.Su. 15/5. But, immense important has been given to Kostha Pariksa which will be evidenced in the following literature.

## Kostha Sabda Vyakhya

Dictionary meanings –

अमरकोष - अन्तरजठर अन्तरर्गृह

आप्टेकोष - स्रोतस उदर, आगर ।

मेदिनीकोष - मध्यकुक्षि, मध्यर्गृह

Monnier Williams - उदर, जठर, कुक्षि

वाचस्पत्यम् - गृहमध्य, उदरमध्य, कुसूल

शब्दकल्पद्रुम - कोष, उदर, महास्रोतम

आम - अग्निपक्वस्थान

In Ayurvedic classics,

कोष्ठं - शरीर मध्यम्, महास्रोतस, महानिम्नम (च०सू०11)

कोष्ठ - कण्ठ, (चक्रपाणी - च०ई० 6/17)

कोष्ठ - बस्ति प्रदेश, पुरिसाशय (सु०चि० 2/12)

कोष्ठ - अन्तः शरीर (चक्र - च०सू० 17/103)

कोष्ठ - आमपम्वाशयाश्रय (डल्हण - सु०सू० 1/40)

कोष्ठ - आमाशय (सु०शा० 4/9)

कोष्ठ - आमाशय, पच्यमानाशय, पक्वाशय (डल्हण - सु०क० 5/40)

कोष्ठ - आहारपाकाधार (डल्हण - सु०नि० 7/6)

So, from the above mentioned references it is very difficult to say Kostha as an organ. The following conclusion can be drawn that Mahasrotasa, Ama-Pacyamana-Pakvasayasraya is regarded as Kostha.

## Sarira Kriya Point of View :

Kostha is the Asraya of the many organs from Mukha to Guda including Pittadharakala and Purisadharakala.

Kostha word applies for both physiological and anatomical entities. The physiological entity is the nature of bowel habit from birth and the anatomical entity includes all the organs of abdominal and thoracic cavities. Here an effort is made to critically study about the concepts, realities regarding Kostha of physiological entity and also to clear the mis - concepts about the same matter.

## MISCONCEPTS

Generally a patient with complaints of constipation considered as Krura Kostha. But it is not always correct, because it is the pathology that causes dysfunctioning of Apana Vayu, leading to the constipation. So physican should have to consider प्रकृतितः कोष्ठः first i.e. प्रकृति ज्ञानान्तरं विकृति ज्ञानम् । प्रकृतितः means the nature of bowel habit from birth.

Kostha is the nature of bowel habit, which originates as an entity of Prakriti ( प्रकृति ) at the time of conception.

## Concepts :

Kostha is of four types according to Acarya Vagbhata i.e.

**कोष्ठः क्रूरो मृदुः मध्योः स्योत्तैः समैरपी ।**

(A.H.Su. 1/8)

But Acarya Caraka has told only three types i.e. Mridu, Madhya and Krura. Some Acaryas have made further divisions of three Kostha i.e.

**मृदुः मृदुतर मृदुतम और मध्यम मध्यमतर मध्यमततम और क्रुर क्रूरतर, क्रूरतम ।**

(Dalhana on Su.Ci. 31/36)

1 M.D. (Ayu.) Scholar, 3. Lecturer Dept. of Kayachikitsa, I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar
2. Reader, Dept. of Kayachikitsa, I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar &
Director - I.C.A.S., G.A.U., Jamnagar

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Dosika predominance in different Kostha :

| | चरक (च०सू० 13/68, 69) | सुश्रुत (सु०चि० 31/36) | वाग्भट (अ०ह०सू० 1/8) |
|---|---|---|---|
| मृदु | पित्तोल्वण, अल्पकफ मन्द मारूत | बहुपित्त | पित्तोल्वण |
| मध्यम | कफोल्वण | समदोष | कफोल्वण |
| क्रूर | वातोल्वण | बहुवातश्लेष्मा | वातोल्वण |
| सम | - | - | समदोष |

Commonly everyone considers the Kostha Pariksa for only Snehana Karma and Virecana Karma but in classics, it is also used in Vamana and Basti Karmas. Acayra Vagbhata while explaining the Vamana Vidhi says,

कोष्ठं विभज्य भैषज्यमात्रां मन्त्राभीममन्त्रिताम् ॥

(A.H.Su. 18/15)

Arundatta commenting on above mentioned Sloka as :

"कोष्ठं मृदुमध्यक्रूर लक्षणं, विभज्य - विचार्यं ।
श्लेष्माधिक्येण मृदुत्वं श्लेष्मध्यत्वेन मध्यत्वं
श्लेष्महीनत्वेन क्रूरत्वं वमने कोष्ठस्य बोध्यम् ॥"

Maharsi Caraka also told "श्लेष्मोत्तरच्छर्दयते अदुःखम्"

So in the same way in Basti Karma also Acaryas used the Kostha Pariksa as told in Virecana Karma.

Assessment Criteria for Kostha :

Varsha Badve et al, 2000 (Jamnagar) in their research work on standardization of Sodhanartha Snehapana formulated assessment criteria for Kostha which is as follows :

Mridu

- Passes stools daily once or twice regularly
- Semi-formed or formed stools
- Easy defecation
- Less time required for defecation
- Krta Sanjna after defecation
- Previous history shows often Drava Mala Pravatti due to Ksira, Usna Jala, Mamsa Rasa, Kanji, Guda, Iksu Rasa etc.
- Minor laxatives often causes diarrhea

Madhyama

- Passes stools daily once
- Formed stools (Susamhata Mala)
- Requires minimum stress
- Requires little long time compared to Mrid Kostha
- Krta Sanjna after defecation doesn't ofte encounters diarrhoea.
- Requires medium dose of purgatives and doe not purgate by minor laxatives or milk etc.

Krura

- Does not passes stools regularly
- Kathina or Suska Mala Pravrtti
- Requires enormous straining
- Requires long time for defecation
- Krte Api Akrta Sanjna, means incomplete unsatisfactory motion
- Seldom encounters diarrhoea and mor frequently constipation.
- Requires drastic purgatives

Applications of Kostha Pariksha :

1) Snehana Karma :

- Mridu, Madhya and Krura Kostha requires 3, and 7 days respectively.
- Some authors further divided the Kostha an the duration for Snehana as follows :
- Mridu

| | | |
|---|---|---|
| Mridu | → | 3 days |
| Mrdutara | → | 2 days |
| Mrdutama | → | 1 day |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



- Madhayama
  - Madhyama → 4 days
  - Madhyamatara → 5 days
  - Madhyamatama → 6 days
- Krura
  - Krura → 4 days
  - Krratara → 5 days
  - Krratama → 6 days

In Krura Kostha person, Snehan does not occur by Accasnehapaa, so Saksara-lavana-ghrtapana is told by Acarya Susruta. (Su.Ci. 31/36)

2) Vamana Karma :

As explained earlier the Mridu, Madhyama and Krura Koshta require Mridu, Madhyama and Tiksna Dravya respectively.

3) Virecana Karma :

For Virecana also the Mridu, Madhya and Tiksna Dravyas are given for Mridu, Madhya and Krura Kostha Rogi respectively. In Krura Kostha person, the Virecana drug undergoes digestio without causing purgation. In such condition Bas should be given first to win over the Vata and the Virecana should be given. (Ca.Ka. 12/79, 80)

4) Basti Karma :

Same as Virecana.

Conclusion -

So, from the above discussion, it can b concluded that, Kostha Pareeksa is an importa tool, which has been misunderstood an misinterpreted and not used properly. For th administration of drugs and also in the every stag of Pancakarma Kostha Pariksa plays a key role. any one administers Purva Karma and Pradhan Karma of Pancakarma without considering th Kostha, it leads to severe complications or eve death may occur. So, it is the time to include Kosth Pariksa in the Pancakarama practice compulso for better results.


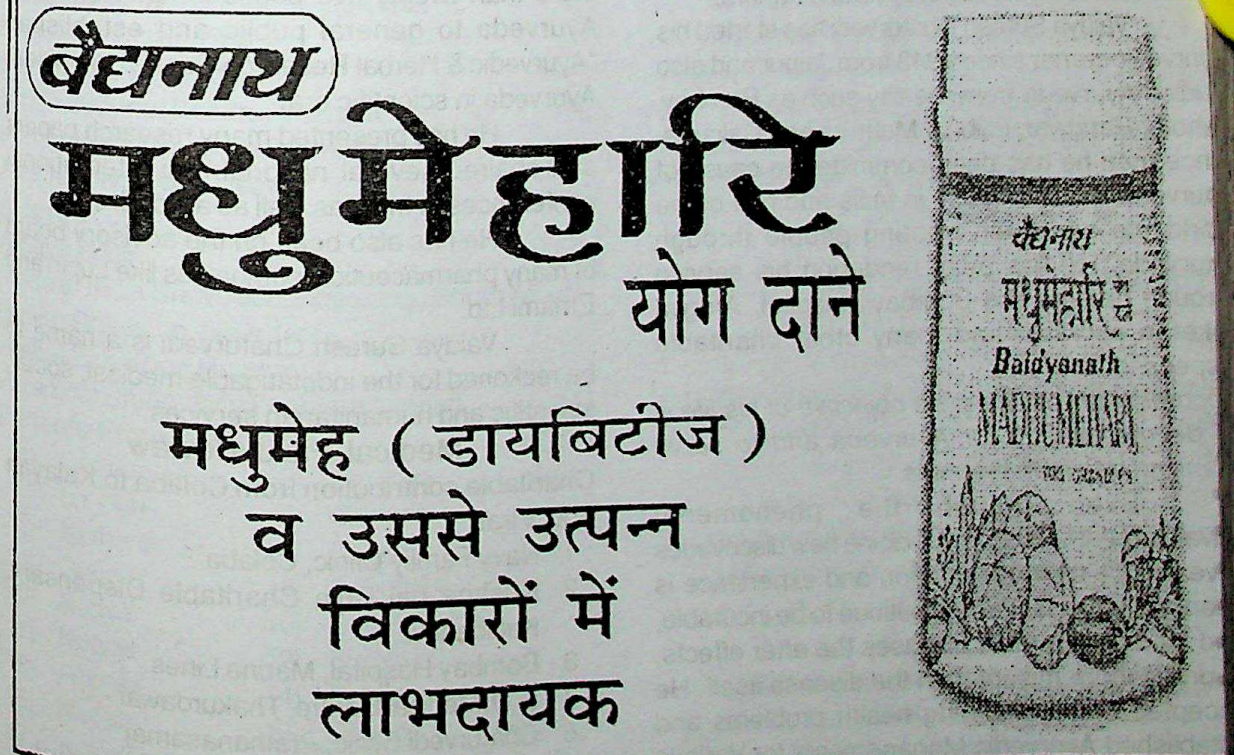





CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**ACHIEVEMENT**

# 55 Years of Professional Glimpses of Vaidya Suresh Chaturvedi

## Highlight

Medical Practice - Since 1951 : Total Number of Patients approx. more than 21 Lacs.
Teaching life - Since 1954 (51 Years): Total Number of Shishyas 2100
National Seminars/Conferences : 55
International Seminars / Conferences : 21
Health Questions - Answer (Navabharat Times) : 26 years

Awarded PADMASHREE by the Government of India on the occasion of India Republic - 26th Jan 2000.

Professor Vaidya Suresh Chaturvedi, the honorary physician to Governor of Maharastra and honorary consultant to Bombay Hospital, ex-principal of KGMP Ayurvedic College, Vice-President of Dhanvantari Medical foundation, Shikistak Guru Rastriya Ayurveda Vidyapeeth and managing Trustee of Arogya Sansthan trust, has contributed to Ayurveda in several manners.

Vaidya Suresh Chaturvedi has started his Ayurvedic carrier since 1943 from Jaipur and also studied Ayurveda from the city such as Bombay, Lahore, Haridwar, Pilibhit, Muthura and Calcutta. Since then he has been committed to cause of Ayurveda and from 1951 in India and rest of the world, he has been treating people through Ayurveda. He has been rendering his service through centers like Bombay Hospital, Arogya Niketan at Vasai and many other charitable dispensaries.

*According to him the main objective of his life is to devote himself for Ayurveda and to serve mankind free from illnesses.*

Even though the phenomenal advancement of modern medicine new discoveries unrevealed by their observation and experience is seen, yet many diseases coutinue to be incurable, and for some curable diseases the after effects, of drugs more misery than the disease itself. He accepted these changing health problems and established Ayurvedic Managements for Various critical illnesses.

Unfortunately, the lack of compilation, documentation and hiding tendency of traditional Ayurvedic Scholars has caused serious erosion of the ancient knowledge.

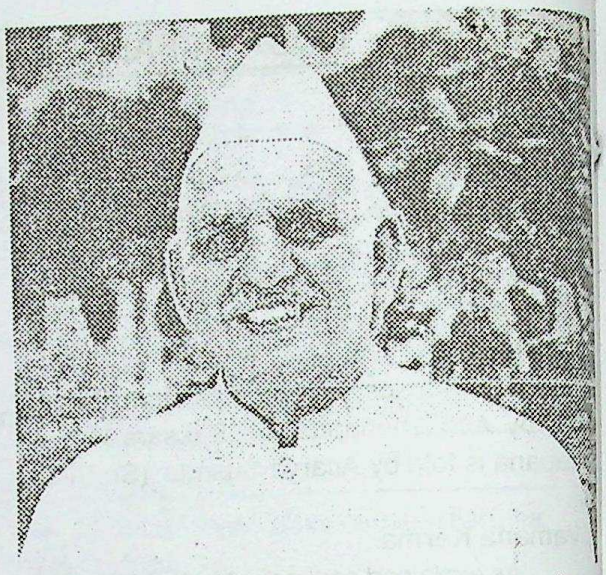

Vaidya Suresh Chaturvedi

But Vaidya ji has taken step and trained more than two thousands Ayurvedic scholar, wrote more than twenty five books for awareness of Ayurveda to general public and established "Ayurvedic & Herbal Research Centre" to present Ayurveda in scientific era.

He has presented many research papers and chaired several national and international conferences in India as well as abroad.

He has also been on the advisory board of many pharmaceutical companies like Lupin and Emami Ltd.

Vaidya Suresh Chaturvedi is a name to be reckoned for the indefatigable medical, social, scientific and humanitarian services.

## Medical Field Review

Charitable contribution from Colaba to Kalayan and Virar

1. Navy Family Clinic, Colaba
2. Krishna bai Ruia Charitable Dispensary Kalabadevi.
3. Bombay Hospital, Marine Lines.
4. G.D. Medical Centre, Thakurdawar
5. Chaturvedi Clinic, Prathanasamaj
6. Polyclinic, Saraswati Niwas, Thakurdawar
7. K.G. Mittal College Hospital

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



8. Bhartiya Vidhyabhavan Dispensary, Chawpatty
9. J.J. Hospital (Jaundice Clinic)
10. Bhartiya Tranun Sangh Dispensary, Kalachawky.
11. Vithoba Dawakhana, Wadala
12. Air India clinic, Kalina, Santacruz
13. Lotus Hospital, Juhu
14. Iskcon Ayurvedic Dispensary, Juhu
15. Balaji Sarawajanik Dawakhana, Vileparle
16. Mahendra Aushadhalaya, Vileparle
17. Premdei Sarawajanic Dawakhana, Jogeshwari
18. S.K. Patil Hospital, Malad
19. Nirmal Charitable Dispensary, Bhyander
20. Arogya Niketan Aushadhalaya, Vasai
21. Century Reyan Hospital, Kalayan

Medical Camp

Arogya Niketan, Vasai.
Government Ayurvedic Hospital, Bharatpur
Marawari Hospital, Culcutta
Aamari Hospital, Culcutta
Vishudhyananda Hospital, Culcutta
Swasthya Shivir, Bhilai
Medical Shivir, Wada
Giridhar Murari Kendra, Mathura
Primary Health Centre, Bamaila
Ayush Shivir, New Delhi
Arogya 2000
Arogya 2005
Made in India Show, Johannesburg, South Africa.
Health Check up, New Jersey
Herbal Exhibition Huston
Paramhansh Adwaitya Ashram Landon

Patients From The Globe

| | |
|---|---|
| 1) Canada | 2) America |
| 3) London | 4) Germany |
| 5) Netherland | 6) Italy |
| 7) Dubai | 8) Aabudabi |
| 9) Kenya | 10) South Africa |
| 11) Kuwait | 12) Sudan |
| 13) Russia | 14) Pakistan |
| 15) Nepal | 16) Toyland |
| 17) Indonesia | 18) Australia |
| 19) Singapore | 20) Mauritius |
| 21) Oman | 22) Saudi |
| 23) Uganda | 24) Muscat |

Examiner

1) Board of Indian Medicine, Mumbai
2) Bombay University
3) Indore University
4) Raipur University
5) Rajasthan University
6) Kanpoor University
7) Luknow University
8) Calcutta Universtiy
9) Kerala University
10) Nikhil Bhartiya Vidhyapeeth
11) Hindi Sahitya Samelan

Association with Various Organization

Bombay Vaidya Sabha, Mumbai
Maharastra Ayured Sammelan, Mumbai
Rastriya Ayurved Mandal, Mumbai
Danvantri Medical Foundation, Mumbai
Neem Foundation, Mumbai
Update Ayurved, Mumbai
ASTAM, (International Association of Study o
Traditional Asian Medicines)
Antar Rashtriya Sahayog Parishad
All India Ayurved Congress, New Delhi
Arogya Sansthan Trust, Mumbai.

## Contancts

Clinic :
48, Mahant Road, Vile parle (E), Mumbai 400 057, Tel : 022-26132865
Consulting Room :
Bombay Hospital, New Marine Lines, Bombay 400 020 Tel: 022-2032780, 22067676 (Ext. 364)
Fax : 022 - 22080871
Resident :
Shakti Charat Sing Colony, M.V. Road, Andheri (E) Mumbai 400 093 Tel : 022 - 28353709, 28204861
E-mail :
drsureshchaturvedi@rediffmail.com
Website :
www.drchaturvedi.com



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## परीक्षोपयोग प्रश्नोत्तरी

. प्र०:- भावप्रकाश के अनुसार चरक किस का अवतार था ?
(a) शेषनाग (b) कपिल
(c) सांख्य (d) आत्रेय

. प्र०:- चरक में प्रयुक्त अवक्रांति शब्द किस साहित्य का है ?
(a) पालि (b) हिन्दी
(c) फारसी (d) अरबी

. प्र०:- चरक संहिता का अरबी भाषा में अनुवाद कब हुआ ?
(a) 6 वीं शताब्दी (b) 8 वीं शताब्दी
(c) 9 वीं शताब्दी (d) 11 वीं शताब्दी

. प्र०:- गोनर्द किसका प्राचीन नाम था ?
(a) पंजाब (b) काश्मीर
(c) हिमाचल (d) हरिद्वार

. प्र०:- चरक में प्रयुक्त कौन-सा शब्द बौद्ध दर्शन का है ?
(a) भूतधात्री (b) जेंताक
(c) भंगोदन (d) उक्त सभी

. प्र०:- कौन-सा योग गौतम ऋषि द्वारा कहा गया है ?
(a) च्यवनप्राश (b) प्रताप लकेश्वर रस
(c) वैलोचन रस (d) इच्छाभेदी रस

. प्र०:- किसका प्रयोग लगातार नहीं करना चाहिए ?
(a) कूर्चिका (b) किलाट
(c) मत्स्य (d) उक्त सभी

. प्र०:- गोमांस द्वारा निर्मित यवागू किसका नाश करती है ?
(a) शूल (b) विषम ज्वर
(c) श्रम (d) श्वास

. प्र०:- किस औषधि के एक प्रस्थ प्रमाण में प्रयोग करने पर बुढ़ापा दूर होता है ?
(a) शतावरी (b) अश्वगंधा
(c) हरीतकी (d) खदिर

0. प्र०:- काश्यप संहिता अनुसार उदर रोग कितने हैं ?
(a) 4 (b) 6 (c) 8 (d) 9

11. प्र०:- काश्यप संहिता में नख वक्रता के लक्षण किसमें बताया है ?
(a) कामला (b) पाण्डु
(c) विसूचिका (d) छर्दि

12. प्र०:- बिना स्नान के भी स्नान किए हुए की अनुभूति - यह लक्षण काश्यप संहिता में किस रोग का बताया है ?
(a) उदर शूल (b) आमदोष
(c) पाण्डु (d) कामला

13. प्र०:- उत्पलपत्र शस्त्र कितने अंगुल प्रमाण का होता है ?
(a) 2 (b) 3 (c) 4 (d) 6

14. प्र०:- श्री कण्ठदत्त का काल कौन-सा था ?
(a) 13 वीं शताब्दी (b) 12 वीं शताब्दी
(c) 5 वीं शताब्दी (d) 8 वीं शताब्दी

15. प्र०:- माधव निदान पर कितनी टीकाएं सर्वाधिक प्रसिद्ध हुई ?
(a) 4 (b) 2 (c) 5 (d) 6

16. प्र०:- चांगेरी घृत किस रोगाधिकार का है ?
(a) अतिसार (b) प्रवाहिका
(c) कास (d) श्वास

17. प्र०:- शूकपूर्ण गलास्यता किसका पूर्व रूप है ?
(a) कास (b) श्वास
(c) अतिसार (d) प्रतिश्याय

18. प्र०:- प्रवात सेवन किस रोग में अपथ्य है ?
(a) अतिसार (b) प्रवाहिका
(c) ग्रहणी (d) विसर्प

19. प्र०:- शतावरी घृत का प्रयोग किस अतिसार में करना चाहिए ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) रक्तज

20. प्र०:- सन्तापेदेहमानसः किसका प्रत्यात्मक लक्षण है
(a) राजयक्ष्मा (b) आमवात
(c) प्रतिश्याय (d) ज्वर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



21. प्र०:- कौन-सा ज्वर प्राकृत होते हुए भी प्राकृत नहीं माना जाता है ?
(a) वर्षा में वातज ज्वर
(b) शरद में पित्तज ज्वर
(c) वसन्त में कफज ज्वर

22. प्र०:- ज्वर के उपद्रव कितने हैं ?
(a) 4 (b) 6 (c) 8 (d) 10

23. प्र०:- विषम ज्वर नाशक कितने कषायों का वर्णन किया है ?
(a) 4 (b) 5 (c) 6 (d) 8

24. प्र०:- भारत का सर्वप्रथम आयुर्वेदिक कालेज कौन-सा है, जिसकी स्थापना 1898 ई० में लाहौर में हुई ?
(a) तिब्बिया कालेज, दिल्ली
(b) ऋषिकुल आयुर्वेदिक कालेज, हरिद्वार
(c) दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज, जालन्धर

25. प्र०:- चिड़ाचूड़ि रस (द्वितीय), अनुपान भेद से ज्वर सहित कितने प्रकार की व्याधियों को नष्ट करता है ?
(a) 18 (b) 12 (c) 64 (d) 70

26. प्र०:- भावप्रकाश के अनुसार चरक किस का पुत्र था ?
(a) नावनीतकार (b) विशुद्धमुनि
(c) पतंजलि (d) कपिलबल

27. प्र०:- अंजन निदान के रचयिता कौन थे ?
(a) आत्रेय (b) सुश्रुत
(c) चरक (d) अग्निवेश

28. प्र०:- गो का मांस किस रोग में हितकर है ?
(a) ज्वर (b) पीनस
(c) शुष्क कास (d) उक्त सभी

29. प्र०:- न्याय मंजरी में चरक को क्या कहा गया है ?
(a) चिकित्सक
(b) द्रव्यों का ज्ञाता
(c) चिकित्सा का सेवक
(d) सुचिकित्सक

30. प्र०:- दारायस किसका राजा था ?
(a) भारत (b) अफगानिस्तान
(c) पर्शिया (d) काबुल

31. प्र०:- किस औषधि का एक प्रस्थ प्रमाण में सेवन करने से आयु में सौ वर्ष की वृद्धि होती है ?
(a) आमला (b) हरितकी
(c) विभीतक (d) खदिर

32. प्र०:- श्वेताक्षि लक्षण, काश्यप अनुसार किस रोग का है ?
(a) पाण्डु (b) कामला
(c) उदर (d) आमदोष

33. प्र०:- कर्करादि क्वाथ किस ग्रन्थ का योग है ?
(a) चरक (b) काश्यप
(c) सुश्रुत (d) भैषज्य रत्नावली

34. प्र०:- काश्यप ने देह विवर्णता लक्षण किस रोग का माना है ?
(a) अतिसार (b) अलसक
(c) आमदोष (d) उदरशूल

35. प्र०:- भञ्जन क्या है ?
(a) यंत्रकर्म (b) शस्त्रकर्म
(c) नेत्र उपक्रम (d) आमदोष

36. प्र०:- माधव ने किन आचार्यों के वचनों का संग्रह किया ?
(a) चरक, सुश्रुत, भावप्रकाश
(b) चरक, सुश्रुत, वंगसेन
(c) चरक, सुश्रुत, वाग्भट
(d) चरक, शार्ङ्गधर व सुश्रुत


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



37. प्र०:- किस रोग का विस्तृत विवेचन सर्वप्रथम माधव निदान में मिलता है ?
(a) वातरक्त (b) वात आवरण
(c) शूल (d) उन्माद

38. प्र०:- एकादश रूप किस व्याधि के बताए हैं ?
(a) उदर (b) यक्ष्मा
(c) ज्वर (d) गुल्म

39. प्र०:- कौन-सा कुष्ठ असाध्य होता है ?
(a) काकणक (b) सिध्म
(c) ऋष्यजिव (d) पुण्डरीक

40. प्र०:- शौचद्वेष किस प्रकार के उन्माद में पाया जाता है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) सन्निपातज

41. प्र०:- कफ वात की अधिकता से कौन-सा कुष्ठ होता है ?
(a) मण्डल (b) सिघ्म
(c) पुण्डरीक (d) केपालक

42. प्र०:- व्याधि के गूढ़ लिंग का किससे किया जाता है ?
(a) उपशय (b) पूर्वरूप
(c) रूप (d) सम्प्राप्ति

43. प्र०:- चमक से क्या अभिप्राय है ?
(a) मौत का दूत (b) घृत व तैल
(c) घृत व दधि (d) दधि व क्षीर

44. प्र०: पूर्वपेष्य से क्या अभिप्राय है ?
(a) बलादि तैल में प्रयुक्त कल्क
(b) क्षीर (c) दधि (d) बला कषाय

45. प्र०:- किस पक्ष में बस्ति प्रयोग का निर्देश है ?
(a) कृष्ण पक्ष
(b) शुक्ल पक्ष

46. प्र०:- मात्रा बस्ति की कितनी मात्रा बतायी है ?
(a) 1½ पल (b) 3 पल
(c) 4 पल (d) 5 पल

47. प्र०:- 20 वर्ष की आयु वाले के लिए बस्ति नेत्र क्या प्रमाण है ?
(a) स्थिरादि निरूहबस्ति
(b) त्रिफला क्वाथ
(c) स्नेह बस्ति
(d) तैल बस्ति

## Answer-Keys

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| (1) | A | (2) | A | (3) | B |
| (4) | B | (5) | B | (6) | C |
| (7) | D | (8) | B | (9) | D |
| (10) | D | (11) | B | (12) | B |
| (13) | B | (14) | A | (15) | B |
| (16) | A | (17) | A | (18) | D |
| (19) | D | (20) | D | (21) | A |
| (22) | D | (23) | B | (24) | C |
| (25) | B | (26) | B | (27) | D |
| (28) | B | (29) | C | (30) | D |
| (31) | A | (32) | D | (33) | A |
| (34) | A | (35) | C | (36) | C |
| (37) | C | (38) | B | (39) | A |
| (40) | C | (41) | B | (42) | A |
| (43) | B | (44) | A | (45) | B |
| (46) | B | (47) | A | | |

डा० अनूप कु० गक्खड़
दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज,
जालन्धर शहर - 144008
व
डा० अनिल गक्खड़
श्रीमती उर्मिला देवी आयुर्वेदिक कालेज
होशियारपुर



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व

# नात्मार्थं नापि कामार्थमयभूतदयां प्रति

*अगस्त, 1966*

आयुर्वेद इतना विस्तृत है कि वह मात्र मनुष्य के साथ ही नहीं, अपितु सभी चेतन प्राणियों के साथ सम्बन्ध रखता है । आयुर्वेद के मूलभूत सिद्धान्तों का अनुसंधान करना आवश्यक है । आयुर्वेद के पञ्चमहाभूत का मूलभूत सिद्धान्त इस सृष्टि की उत्पत्ति के साथ सम्बन्ध रखता है । आयुर्वेद का मूलभूत सिद्धान्त पुरुष, प्रकृति और पञ्चमहाभूत है और पञ्चमहाभूत में से समग्र सृष्टि बनी है, उसमें से त्रिदोष का सिद्धान्त प्रकट हुआ है, त्रिदोष सिद्धान्त बहुत व्यापक है और आजतक कोई भी उसका विरोध करके वह सच्चा नहीं है, ऐसा प्रमाणित नहीं कर सका है । आयुर्वेद के इन महत्वपूर्ण मूलभूत सिद्धान्तों को समझना सम्प्रति अत्यावश्यक है ।

श्री मनमोहन लाल व्यास
स्वास्थ्य-मंत्री, गुजरात सरकार

## रुद्रवंती का विवरण

ग्रंथों में रुद्रवंती का विवरण इस प्रकार मिलता है - नाम - संस्कृत- रुदंती, रुदंतिका, रोमांचिका, संजीवनी, अमृतस्रवा, महामांसी, त्रणपत्री, द्रवंती इत्यादि । हिन्दी - रुद्रवंती, लूणांबूटी । गुजराती - पलिया । मराठी - रदंती, चवाला, खारड़ी, रानहरभरा । बंगला - रूदंती । बम्बई - खारड़ी । लैटीन - Cressa Cretica (क्रेसा क्रेटिका) ।

लेकिन आजकल जिस वनस्पति को रुद्रवंती मानकर वैद्य लोग उसका व्यवहार करते हैं वह वनस्पति तो इस देश के अनेक गर्म भागों में, समुद्र के किनारे पर तथा सिंध, गुजरात, महाराष्ट्र के अंदर काफी तादाद में मिलती है । इस रुद्रवंती का पौधा चने के पौधे के समान छः इंच से एक फुट तक ऊँचा होता है । कहीं-कहीं यह जमीन पर छत्ते की तरह फैली हुई रहती है । इसकी जड़ पृथ्वी के अन्दर एक फुट तक गहरी जाती है । यह कुछ ललाई लिए हुए पीले रंग की होती है । इसके पत्ते चने के पत्तों के सम होते हैं । लेकिन, चने के पत्तों पर बारीक कांगरे रहते और रुद्रवन्ती के पत्ते बिना कांगरे वाले होते हैं । इनके प और डालियों पर बहुत महीन और रशम के समान मुलाय सफेद रंग का रोयाँ होता है जिससे यह सारा पौधा चमक हुआ मालूम होता है । यह वनस्पति विशेष करके खारवा जमीनों में अधिक पैदा होती है । इस वनस्पति की पत्ति और डालियाँ हमेशा ओस के बिन्दुओं से भरी हुई रहती है इस पर के ओस के बिन्दु धीरे-धीरे जमीन पर टपकते रह हैं, जिससे इस पौधे के नीचे वाली जमीन हमेशा गीली अ ठण्डी रहती है और उसके नीचे चीटियाँ वास करती हैं इस वनस्पति की डालियों के सिरों पर फूलों के गुच्छे आ हैं । ये फूल लाल, काले, पीले और सफेद रंग के होते हैं इसके फल गोलाई लिए हुए छोटे-छोटे होते हैं और इन बारीक दानों के समान दो-दो, चार-चार बीज होते हैं ।

प्राचीन शास्त्रकारों ने रूद्रवंती को पहचानने के लिए कुछ विशेष चिन्ह बतला रखे हैं । पहला निशान है कि इसके पत्ते चने के पत्तों के समान होते हैं । दूसरा निशान कि ओस के बिन्दुओं की तरह पानी की बूँदें इसके पौध में से टपकती रहती है । तीसरा निशान है कि अगर इसक जड़ के पास सफेद कौड़ी रख दिया जाय तो वह पीली पड़ जाती है और चौथा निशान है कि इसका पौधा रात चमकता है । परन्तु, यह चौथा निशान सर्वसम्मत नहीं है

आजकल रुद्रवन्ती के नाम से जो वनस्पति प्रसिद्ध है उसमें भी उपर्युक्त चार निशानों में से प्रारम्भ के तीन निशान मिलते हैं । फिर भी यही रुद्रवन्ती वास्तविक रुद्रवन्ती है, यह मानना कठिन है, क्योंकि शास्त्रकारों के मतानुसार रुद्रवंती सर्वसुलभ वस्तु नहीं होती । वह बड़ी कठिनाई से मिलती है ।

कुछ संत-महात्माओं का कथन है कि वास्तविक रुद्रवंती यू.पी. के फतेहपुर जिले में हँसवा नामक ग्राम में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तालाब के निकट मिलती है । यह रात्रि के समय में चकती है । इसलिए रात को जाकर जिस जगह चमक नूम पड़े वहाँ निशान कर देना चाहिए और फिर दिन को ी जगह पर जाकर तालाब का पानी सूखने की वजह से मीन में जो दरार पड़ी हुई रहती है उस दरार के अन्दर से वंती को पहिचान कर निकाल लेना चाहिए । जमीन की र के बाहर समतल भूमि पर भी रुद्रवन्ती के समान ही क पौधा दिखलाई देता है मगर उसको ग्रहंण नहीं करना हिए, क्योंकि वह नर जाति की रूद्रवन्ती होती है और समें इतना गुण नहीं होता । इसके असली गुण मादा जाति ी रुद्रवन्ती में ही रहते हैं ।

धातु सिद्धि अथवा कीमियागिरी की रसायन-क्रिया सफेद फूल वाली और काले फूलवाली रुद्रवंती विशेष प्रयोगी समझी जाती है ।

फतेहपुर जिले के खागा स्टेशन के समीप मझले मक ग्राम के तालाब के ऊपर सर्दी के दिनों में असली द्रवंती मिला करती थी, मगर, कई साधु-सन्तों ने उसके धों को उखाड़-उखाड़ कर उसकी पैदाइश को नष्ट कर या है । फिर भी सर्दी के दिनों में कोई साधु आकर अगर ोई पौधा वहाँ दृष्टि में पड़ता है तो उसको खोदकर ले ाता है ।

सुप्रसिद्ध वनस्पति शास्त्री पं० भागीरथ स्वामी लखते हैं कि इसके पत्ते को चबाने से इसका नमकीन रस ाफ अनुभव होता है । इसी से इसका नाम लाणा बूटी रखा या है । इस वनस्पति के पौधे के नीचे की जमीन हमेशा सी तर रहती है मानो वह जल या तेल में भिंगोई हुई हो । सके नीचे के भाग में शीतलता रहने से गर्मी के दिनों में मेशा इसके नीचे चीटियाँ रहती हैं । इसके पौधे को कपड़े में बाँधकर दो-तीन दिन तक पड़ा रहने दिया जाय तो उसके पश्चात् खोलने पर पौधा ऐसा मालूम होता है मानों उसे पानी में डूबोकर निकाला गया हो । इसके पौधे पर यदि बरसात बरस जाय तो उसका खारापन धुल जाता है । मगर दस-पन्द्रह दिन में वह खारापन फिर पैदा हो जाता है ।

इस प्रकार इस वनस्पति के सम्बन्ध में भी मनुष्य अभी तक बहुत संदिग्ध अवस्था में है । यह दिव्य वनस्पति अभी तक मनुष्य के लिए रहस्यपूर्ण बनी हुई है ।

## गुणदोष और प्रभाव

आयुर्वेद के मत से यह वनस्पति तीक्ष्ण, कड़वी और गरम होती है और क्षय, कृमि, रक्तपित्त, खाँसी-श्वास और प्रमेह को नष्ट करने वाली तथा वृद्धावस्था और रोग के कारणों को नष्ट करने वाली होती है ।

इसका पौधा कड़वा, चरपरा, गरम, धातु परिवर्तक कृमिनाशक, अग्निवर्द्धक, पौष्टिक, कामोद्दीपक, रक्तवर्धक और क्षय, कुष्ठ, दमा, पित्त-विकार और अनैच्छिक वीर्यस्राव को रोकने वाला होता है ।

**यूनानी मत** – यूनानी मत से इसका पौधा खट्टा और खराब स्वाद वाला होता है और इसके पत्ते पौष्टिक कामोद्दीपक और भूख बढ़ाने वाले होते हैं ।

इसके पौधे को जड़ समेत उखाड़कर छाया में सुखाकर चूर्ण कर लेना चाहिए । इस चूर्ण को आधे से लेकर एक तोले की मात्रा में शहद के साथ चाटने से कफ की खाँसी और दमा दूर हो जाता है । इसी चूर्ण को दूध में डालकर पीने से स्त्रियों के स्तनों में दूध बढ़ता है । इस चूर्ण में समान भाग बायबिडिंग का चूर्ण मिलाकर खाने से सूंघने से और डंक के ऊपर लगाने से जहरीले जानवर का विष दूर होता है ।

रुद्रवंती एक तोला और काली मिर्च छः रत्ती मिलाकर पीने से बिगड़ा हुआ रक्त साफ हो जाता है । आधा सेर दूध, आधा सेर पानी, ढाई तोला घी और दो तोले को मिलाकर आग पर औटाकर जब पानी का भाग सब जल जाय तक उसमें एक तोला रुद्रवन्ती का चूर्ण डालकर



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Kanoni Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



से 42 (बयालीस) दिनों में सब प्रकार का प्रमेह शान्त हो जाते हैं।

शुक्ल पक्ष के दिनों में रुद्रवन्ती को लाकर छाया में सुखाकर उसका चूर्ण करना चाहिए। उस चूर्ण में रुद्रवन्ती के रस की ही 7 (सात) भावनाऐं देनी चाहिए। फिर उसकी आठ-आठ रत्ती की गोलियाँ बनाकर कड़वी तुम्बी में भरकर रख देना चाहिए। फिर इसमें से प्रति दिन एक गोली तीन माशे घी और छः माशे शहद के साथ मिलाकर चाट लेना चाहिए और उसके एक घंटा के पश्चात् गाय का दूध पी लेना चाहिए। जब यह प्रयोग चलता हो तब नमक बिल्कुल छोड़ देना चाहिए और दूधभात के समान सात्विक आहार ग्रहण करना चाहिए। यह एक परम रसायन योग है। इसके लगातार सेवन करने से मनुष्य की बल-बुद्धि, वीर्य, तेज, स्मृति तथा आयुवृद्धि होती है। नेत्रों की ज्योति बढ़ती है और देह दिव्य होती है तथा जीवनी शक्ति और रोग निवारक शक्ति का विकास होता है।

## बनावट

**पारद भस्म**-रुद्रवन्ती के रस में पारे को तीन दि तक घोंटकर गोली बना लेनी चाहिए। फिर रूद्रवन्ती पौधों को पीसकर उनकी लुग्दी बनाकर उस लुग्दी में उ गोली को रखकर सराव सम्पुट में बन्द करके कपड़-मि कर देना चाहिए। फिर उस सराव सम्पुट को एक ह लम्बे एक हाथ-चौड़े और एक हाथ गहरे गड्ढे को आ उपले कंडों से भरकर उन कंडों पर सराव सम्पुट रखकर फिर शेषभाग भी उपले कंडों से भर देना चाहिए उसके पश्चात आग सुलगा देनी चाहिए। जब अग्नि शीतल जाय तब उस सराव सम्पुट को निकालकर खोलने पर उसमें प की कठिन गोली बनी हुई मिलेगी। इस गोली को फिर तोलकर रुद्रवन्ती के रस में घोंटकर तीन बार इसी प्रकार आ देने से पारे की उत्तम भस्म तैयार हो जाती है।

ऐसा कहा जाता है कि उचित अनुपानों के सा प्रयोग करने पर यह भस्म अनेकानेक रोगों का नाश कर है और परम रसायन है।

प्राणाचार्य पं० दुर्गा प्रसाद शर्मा, आयुर्वेदाचार्य
**संयुक्त प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि**


झटपट आराम फुर्ती से चले काम...

बैद्यनाथ

गैसोल पाचक

गैस तथा हाजमा के लिए लाभदायक व कब्जियत नाशक




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आरोग्य समाचार
## अखबार की कतरनों से

## Attack on the brain

*How does a stroke occur ?*
*What can you do to prevent it ?*

Stroke, also called "brain attack", is as angerous as "heart attack". It can make a person mobile, sometimes for life, and also reduce the uality of one's life.

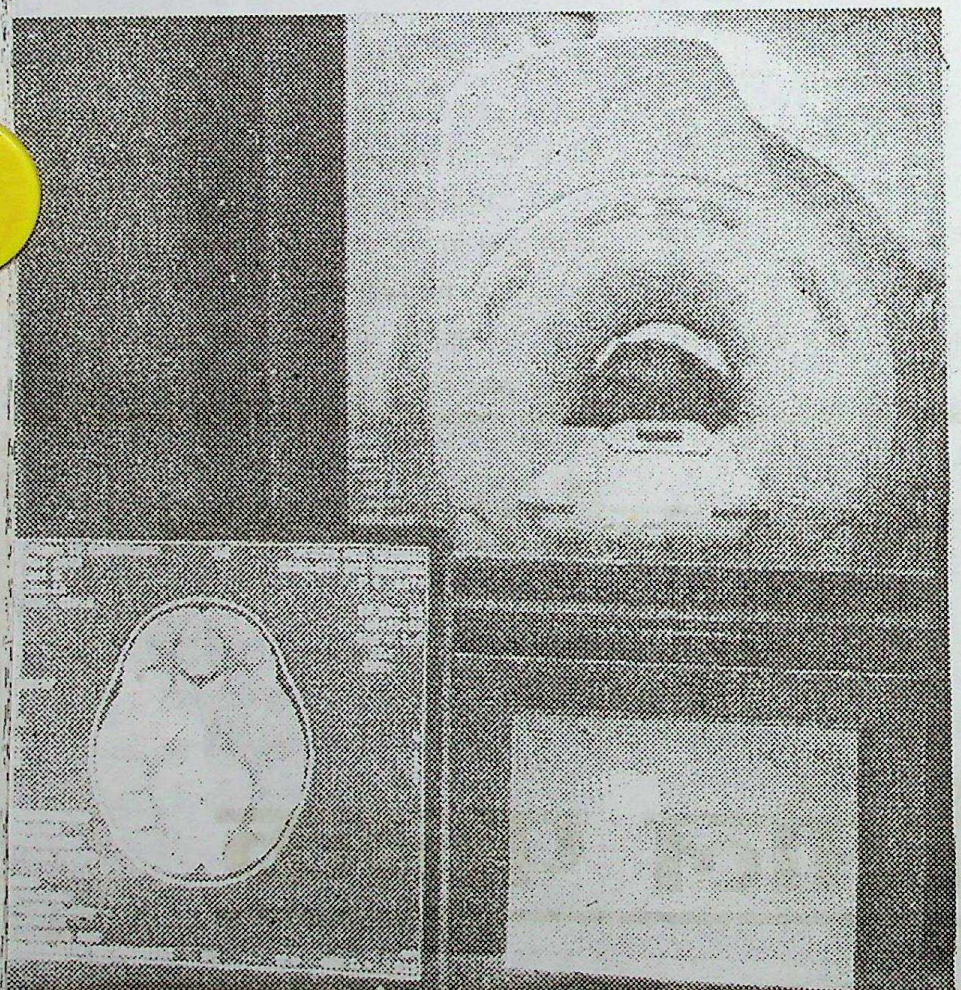

**UNDERGOING AN MRI :** Imaging of the brain is essential for diagnosis.

A stroke occurs because of lack or terruption of blood supply to any part of the brain due to narrowed, blocked or ruptured arteries. This deprives the brain and its cells of the require oxygen and nutrition. The brain cells die thereb damaging the brain.

Normally a stroke occurs sudden resulting in paralysis of the limbs, loss of sensatio and vision, aphasia (a communication disorde including disorders in speech or dysarthria) memory and difficulty in swallowing (dysphagia) A stroke can sometimes be completely painless

Types

There are three types of stroke: embolism thrombosis and haemorrhage. In embolism, a wandering blood clo (embolus) blocks th blood flow in a smalle artery in the brain.

In thrombosis the most common type an artery is complete blocked by blood clots Blood clots occur due t age or with hig cholesterol. Cerebra thrombosis occur because arteriosclerosis in whic the inner walls of th arteries are damaged b deposition of fat and h high blood cholester levels.

Haemorrhage caused by hypertens and bursting aneurysms. Aneurysm are blood-filled pouch or dilations in arter walls, which are wea In haemorrhage, th blood released damages the surrounding br tissue by pushing and pressing. In addition,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



brain cells do not get the required oxygen and nutrition and are therefore unable to perform their functions.

## Causes

Common causes are abnormally formed blood vessels, hypertension, and high levels of blood cholesterol. Coronary heart disease, smoking and excessive drinking increase the risk of stroke. It can affect anyone regardless of age, sex, or socio-economic status.

The warning signs are; abrupt onset of weakness or loss of sensation on one side of the body or face; sudden loss of vision in one eye or double vision; sudden loss of the ability to speak, find words, and understand others; and sudden onset of unsteadiness, dizziness, or falling without any apparent cause.

These are symptoms of a transient ischemic attack (TIA) or mini stroke, which usually disappear within 24 hours. TIA results from insufficient supply of blood to the brain and should be considered a warning or precursor of an actual stroke.

## Diagnosis

To diagnose and classify stroke, imaging of brain is necessary, which includes CT or MRI scan of the brain.

Depending on the type of stroke, a lumbar puncture (a spinal tap to get cerebrospinal fluid) or Doppler ultrasonography or MR angiography (MRA) to evaluate blood flow will be necessary. If a stroke is indicated, then evaluation include tests that check for the cause like whether it is due to atherosclersis or blood clotting in the heart or lung arteries.

CT is the preferred method of evaluation for suspected acute stroke. CT will not show dramatic changes it it is an ischemic stroke (due to blood vessel blockage) but will show evidence of bleeding in and around the brain if it is due to haemorrhage (due to ruptured blood vessel).

The main purpose is to find whether bleeding is present or not. If bleeding has occurred then drugs like heparin, warfarin and thrombolytic (clot-dissolving) therapy are not appropriate. Treatment with these medicines increases bleeding and makes symptoms worse.

Since it is harmless, non-invasive and does not use ionising radiation like X-rays (as in CT). MRI is preferred in the evaluation of stroke. However, persons with ferromagnetic foreign body or a metallic implant (like surgical prostheses, pacemakers, etc) cannot be subjected to MRI.

Conventional MRI often does not show evidence of stroke in acute phase (one to seven days). However, it may show signs of intravascular thrombus-like absence of flow void.

For stroke evaluation, diffusion MRI (DWI) is useful. It detects ischemic changes in the hyper acute phase within minutes of the onset of stroke. Normally early ischemic changes in stroke are seen as a bright white area in the first few hours. Previous intracerebal haemorrhage is seen as a low signal (black) ring or dot.

Thus physicians can distinguish between old and new infarcts. However, MRI may not identify hyper acute intra-cerebral haemorrhage correctly.

In addition to diffusion MRI, perfusion MRI can also be carried out. If diffusion and perfusion MRI match and correlate with the region of infarction then it indicates permanent neuronal death.

Mismatched diffusion and perfusion abnormalities with the perfusion abnormality longer than diffusion abnormality may be indicative of a region of reversible ischemic penumbra.

Normally 30 to 50 percent of the patients with TIA show lesions on diffusion MRI. Perfusion MRI may be more sensitive but has bot been



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



dequately tested in patients with TIA.

In haemorrhagic stroke gradient-echo MRI an detect microbleeds that are clinically silent nd not seen in CT or routine MRI.

revention

There is no medication to cure strokes; revention is the only way. Change of lifestyle is equired to lower risk factors like hypertension, lood cholesterol and coronary heart disease.

Cutting down on dietary fat and holesterol, maintaining proper body-weight, xercising regularly, cutting down on smoking and xcessive drinking, minimising stress are other reventive measures.

Once a person suffers stroke, after initial are and hospitalisation, rehabilitation is essential.

Physical therapy is important to refrain the aralysed muscles and also to prevant atrophy and urther weakness. This is followed by occupational herapy to improve a patient's self-reliance in daily ctivities. Speech therapy and other necessary herapies may be given as needed.

Importantly, educating the effects on the patient's physical ability and communication skills can help to support his/her efforts to become ndependent. Support of the family and treating patients with respect and refraining from criticism promotes self-confidence.

It is essential that the medical community, health professionals and the various Government agencies create awareness about the truths and myths of this dreadful disease.

Failing which, we may see more number of people falling victim, especially because of the stressful lifestyle that is being practised now, especially among the younger generation.

Dr. N.R. Jagannathan

The writer is Professor and Head Department of Nuclear Magnetic Resonance, All India Institute of Medical Sciences, New Delhi

(with courtesy from THE HINDU

## कैंसर से बचाएंगे तुलसी व पुदीना

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाच के अनुसार आमतौर पर हर घर में पाये जाने वाले पुदी और तुलसी कैंसर रोग के लिए रामबाण साबित हो सक हैं । एक शोध के बाद यह बात सामने आई है कि हम द वनस्पतियों में कैंसर-रोधी तत्व पाए जाते है ।

राजस्थान विवि के 10 छात्रों ने तुलसी पुदीना के कैंसर-रोधी गुणों पर शोध किया । शोधार्थियों नेतृत्व कर रहे अशोक शर्मा ने कहा कि चूहों पर 6 महं के शोध के बाद यह निष्कर्ष निकला कि तुलसी पुदीना में कैंसर-रोधी गुणों का खजाना है । उन्होंने कहा उम्मीद नहीं थी कि चूहों पर इन दोनों का सकारात्म असर दिखाई देगा । अशोक शर्मा ने बताया कि चूहों को समूहों में विभाजित किया गया । एक समूह पर रासायनि लैप लगाया गया, जबकि दूसरे समूह पर तुलसी और पुद का लेप लगाया गया । जिन चूहों पर तुलसी और पुदीना लेप नहीं लगाया गया था एक महीने बाद उनके शरीर कई गहरे जख्म बन गए । पुदीना और तुलसी का लगाये गए चूहों पर ऐसे जख्म 11 महीने बाद हुए । दूसरे समूह के चूहों की प्रतिरोधी क्षमता बढ़ गई । शर्म बताया कि टीम ने सबसे पहले त्वचा कैंसर पर पुदीना तुलसी के असर का अध्ययन किया । इसके बाद चूहे फेफड़े और आंत पर इन दोनों उत्पादों के असर अध्ययन किया गया । शर्मा के मुताबिक कैंसर तब होत जब शरीर में पाए जाने वाले फ्री रेडिकल किसी कोशि की आनुवंशिक बनावट को असंतुलित बना देते हैं । इ कोशिका विभाजन की प्रक्रिया काफी तेज हो जाती पुदीना और तुलसी में कई तरह के पाचक तत्व भी पाए हैं जो फ्री रेडिकल्स को नष्ट कर सकता है । इ मुताबिक बबूल और गोखरू के पौधों में भी कैंसर-निरो एंजाएम पाए जाते हैं ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## मस्तिष्क के विकास को रोक सकता है शैम्पू

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समचार के अनुसार 'डैंड्रफ फ्री, रेशम जैसे मुलायम, लेकिन मजबूत व काले घने बाल' हर किसी की पसंद हो सकते हैं लेकिन शायद ही कोई जानता हो कि यही शैम्पू मस्तिष्क के विकास को अवरूद्ध भी कर सकता है। उत्तरी कैलीफोर्निया विवि के शोधकर्मियों ने चूहे पर किये एक अध्ययन के बाद बताया कि शैम्पू में जो तत्व मिलाये जाते हैं, वे मस्तिष्क की प्रक्रिया में हस्तक्षेप कर नुकसान पहुंचा सकते हैं। प्रमुख शोधकर्ता डा० स्टीवेन जेसेल ने बताया कि हमने एक गर्भवती चुहिया की त्वचा पर शैम्पू लगाने के बाद उसका अध्ययन किया तो पता चला कि इसके तत्वों ने उसके गर्भ में पल रहे बच्चे पर असर करना शुरू कर दिया है। उन्होंने बताया, हमने चुहिया की त्वचा पर शैम्पू में डाला जाने वाला एक तत्व 'डिथेनोलामाइन' लगाने के बाद अध्ययन किया तो गर्भस्थ बच्चे के मस्तिष्क में कुछ कोशिकाएं मृत पायी गयीं।

## मछली खाइए, मोटापे से बचिए

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समा के अनुसार एक अध्ययन में बताया गया है कि नियं रूप से तैलीय मछली खाने से मोटापे से लड़ने में म मिलती है। पहले के अध्ययनों में बताया गया था तैलीय मछली में पाया जाने वाला ओमेगा-3 फैटी एसि स्वस्थ लोगों के लिए दिल के लिए फायदेमंद होता है दिल की बीमारी के खतरे से बचाता है। अब आस्ट्रेलि वैज्ञानिकों के दल ने बताया है कि वजनी लोगों को मछली का तेल फायदा पहुंचा सकता है बशर्ते वे ह फुल्के व्यायाम करते रहें। संबंधित अध्ययन डेली मेल आनलाइन पर जारी किया गया है। शोधकर्ताओं ने पाय कि ओमेगा-3 फैटी एसिड से युक्त तैल के थोड़े से और लगभग 45 मिनट तक टहलने के बराबर के ह व्यायाम से वजन घटाने में अप्रत्याशित ढंग से कामय मिलती है। लेकिन अगर बिना व्यायाम के तेल का से किया जाय या बिना तेल के सिर्फ व्यायाम किया जाय कोई फायदा नहीं मिलता है।

बैद्यनाथ

जीवनकल्प

दुर्बलता, कब्जियत, अग्निमांद्य, कैल्सियम

एवं खून की कमी में लाभदायक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## आपके अनुभूत प्रयोग

# गुणों से भरपूर मेथी

आज के आधुनिक युग में छोटी-मोटी बीमारियां ा एक आम बात हो गई है । एलोपैथी में ही आज न आदमी का भरोसा है । मगर एलोपैथी आज अत्यंत गी चिकित्सा-पद्धति है और दूसरी तरफ इनके ातवर्गीय दुष्प्रभाव भी अत्यंग घातक होते हैं । ऐसी त में उचित यही होगा कि रोजमर्रा की तकलीफों के ते हम प्राकृतिक और घरेलू उपचार के तरीके ही नाएं । नींबू, अदरक, शहद, तुलसी आदि ऐसी वस्तुएं जिन्हें हम साधारण समझते हैं । मगर यदि उनका वस्थित औषधीय उपयोग किया जाए, तो हम कई ारियों से आसानी से मुक्ति पा सकते हैं ।

ऐसी ही वस्तुओं में से एक है - मेथी, जो प्राय: घर में सहजता से सुलभ हो जाती है । वैसे मेथी की यों का इस्तेमाल सब्जी के रूप में तथा इसके दानों का योग भोजन की सुगंध व स्वाद बढ़ाने वाले एक मसाले रूप में किया जाता है । किन्तु ये दोनों ही औषधि णों से सम्पन्न हैं । इसकी पत्तियों व दानों में प्रोटीन, ा, खनिज, विटामिन, कैल्शियम, फास्फोरस, आयरन, टीन, थायमिन और रिबोफ्लेबिन जैसे स्वास्थ्यवर्द्धक ा भरपूर मात्रा में उपलब्ध होते हैं ।

मेथी की सब्जी तथा दाने मुख्य रूप से र-सम्बन्धी रोगों एसिडिटी, अपच, कब्ज, गैस, दस्त -दर्द आदि में बहुत ही मुफीद साबित होते हैं । ान-तंत्र की गड़बड़ियों को दूर करने के लिए मेथी का न बहुत फायदेमंद है । मेथी के दानों के सेवन से -दर्द, बदहजमी और दस्त में तत्काल आराम मिलता दो चम्मच मेथी के दानों को एक कफ पानी में ालकर इसे छानकर चाय बनाकर पीने से आंतों की गई होती है । एसिडिटी के इलाज में मेथी के दानों का अत्यधिक महत्व है । पेट के छालों को दूर करने के लिए नियमित रूप से मेथी के काढ़े का उपयोग करना चाहिए । यह काढ़ा एपेन्डिक्स में एकत्रित हुई गंदगी को भी दूर करता है ।

मेथी प्रजनन तथा प्रसव से होने वाले रोगों को भी दूर करता है । प्रसव के बाद शिथिल हुए अंगों को सामान्य आकार प्रदान करने के लिए किसी भी रूप में मेथी का सेवन करना चाहिए । स्तनपान कराने वाली महिलाओं को मेथी के लडडू खाने चाहिए । इससे शरीर में दुग्ध-उत्पादन करने की क्षमता में अभिवृद्धि होती है ।

स्त्रियों में यौनांगों पर सूजन आने अथवा प्रदर की शिकायत होने पर मेथी के दानों से बने काढ़े का सेवन करना चाहिए तथा उसे सूजे हुए यौन-अंगों पर मरहम की तरह लगाना आयुर्वेद द्वारा प्रमाणित उपचार है ।

मेथी में लौह तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं इस कारण रक्त-संबंधी रोगों में भी यह बहुत लाभकारी है । रक्ताल्पता में मेथी का सेवन नियमित रूप से किया जाना बहुत ही फायदेमंद माना गया है । इसी प्रकार मेथी की सब्जी में रक्त-शुद्धिकरण का खास गुण होता है मेथी की तरकारी और दाने दोनों ही रक्त-विकारों को दूर करने की अद्‌भुत क्षमता रखते हैं ।

मधुमेह के रोगियों को रोजाना दो चम्मच मेथी-दान का चूर्ण दूध के साथ मिलाकर लेना चाहिए । यदि संभव हो तो मधुमेह के मरीच दो चम्मच दानों को पानी के साथ निगल लें । मेथी में पाया जाने वाला लैसीथीन तत्व दिमागी कमजोरी को दूर करता है ।

बालों की रूसी तथा खुश्की को दूर करने के लिए मेथी के दानों को रात-भर पानी में भिगोकर पेस्ट बना लें, फिर इस पेस्ट को सिर में कम-से-कम आधा घंटे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तक लगा रहने दें । बाद में आंवला, शिकाकाई से सिर धो लें । इससे रूसी समाप्त हो जाएगी ।

सांस व मुंह में दुर्गन्ध की शिकायत होने पर मेथी के दानों में पानी में उबालकर उस पानी से गरारे करें । अवश्य ही लाभ होगा । मेथी के पानी को दांतों पर रगड़ने से दांत मजबूत होते हैं और दंत-क्षय रोग नष्ट होता है ।

मेथी के पत्तों के अर्क से गरारे करने से मुंह में हो रहे छाले ठीक हो जाते हैं । मेथी के दानों को पीसकर पेस्ट की तरह बनाकर आंखों के नीचे लेप करने से आंखों के आसपास का कालापन दूर होता है ।

मछली के तेल में पाया जाने वाला तत्व 'ट्रूस्मेथाइलिमिन' मेथी में भी प्रचुर मात्रा में होता है । अतः मेथी शाकाहारियों के वास्ते मछली के तेल के विकल्प का कार्य करती है ।

मेथी के चूर्ण तथा काढ़े से स्नायु-रोग, सूखा-रोग, मूत्र, अतिसार, पथरी, बुखार, पेचिश, टांसिल्स, रक्तचाप, मानसिक तनाव आदि विभिन्न रोगों में आश्चर्यजनक रूप से लाभ होता है ।

मेथी का काढ़ा बनाने के लिए मेथी के दानों को रात-भर पानी में गलाना चाहिए । सवेरे उन गले हुए दानों को मसल लें तथा धीमी आंच पर पकाकर छान लें । निश्चय ही, इसकी कड़वाहट बहुत अधिक होगी । किन्तु आप इसे उपयोग में लेने से पूर्व इसमें थोड़ा दूध व गुड़ मिला सकते हैं ।

वस्तुतः घरेलू उपचार के तरीकों में मेथी का अत्यधिक महत्व है । साधारण रोगों में इसका इस्तेमाल अवश्य करना चाहिए । मगर किसी गंभीर बीमारी में इसका उपयोग करने से पूर्व अपने चिकित्सक से अवश्य परामर्श कर लें ।

अनिता जैन

पा, श्री कैलाश जैन, एडवोकेट, मनोज मार्ग, भवानीमंडी (राजस्थान)


बैद्यनाथ

च्यवनप्राश स्पेशल

विटामिन-सी और कैल्सियम युक्त एक संपूर्ण स्वास्थ्य टॉनिक

"माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है । इसीलिए हर माँ अपने नन्हे मुने के लिए स्वास्थ्यवर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है। परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामिन व पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता । उनके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक । जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल । जिसमें हैं ५२ (परखी हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर । अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं । विश्व में आयुर्वेदिक औषधियों के सबसे विशाल निर्माता-वैद्यनाथ द्वारा निर्मित बैद्यनाथ च्यवनप्राश में आपको मिलेगी विश्वस्तरीय उत्तमता, जिसे आज करोड़ों का विश्वास प्राप्त है । अब कोई अन्य टॉनिक चला क्यों करे प्रयोग ? जब विश्व श्रेष्ठतम टॉनिक है आपके साथ, आपके बच्चों के श्रेष्ठतम विकास के लिए ।"

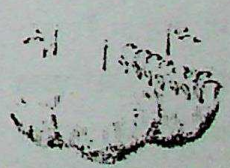

स्वस्थ जीवन का मस्त स्वाद




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आपके पत्र

सेवा में

श्रीयुत् सम्पादक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०

पटना

महाशय,

हम आपके प्रतिष्ठित पत्र के माध्यम से सुश्री सुनीता नारायण, निदेशक, सीएसई को धन्यवाद देना चाहते हैं कि वे विगत् पांच वर्षों से शीतल पेय में पाये जाने वाले कीटनाशकों के खिलाफ एकतरफा युद्ध कर रही हैं । वे महाशक्तिशाली बहुराष्ट्रीय कम्पनी, अपनी सरकार, भारतीय उद्योग जगत एवं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के समर्थकों के खिलाफ आम जनता के हित के लिए निरन्तर संघर्ष कर रही हैं । राजग की सरकार के समय जब उन्होंने दावा किया कि कोका-कोला, पेप्सी, थम्पस अप, लिम्का जैसे शीतल पेय में मान्य प्रामाणिक स्तर से ज्यादा कीटनाशक पाये गये हैं, तो तत्कालीन सरकार ने संसद में इसका खण्डन किया था । काफी हंगामे के बाद जांच के लिए संयुक्त संसदीय दल का गठन हुआ । सुश्री नारायण की जांच-रिपोर्ट को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने बकवास करार दिया था । उनका तर्क था कि सीएसई की प्रयोगशाला में विश्वस्तरीय मशीन नहीं है । सुश्री नारायण का तर्क था कि यही कम्पनी अपने उत्पाद को अमेरिका एवं यूरोप में बेचती है, तो कीटनाशक की मात्रा मान्य स्तर से कम होती है । लोग उस समय सहमत नहीं थे । न्यायपालिका ने भी हस्तक्षेप किया । राजस्थान उच्च न्यायायल ने पेप्सी कम्पनी और कोका-कोला को निर्देश दिया किया कि वे शीतल पेय में जो द्रव्य मिलाये जाते हैं, भले ही वे कीटनाशक या रसायन हों, बोतल, पैकेट या डिब्बों पर द्रव्यों के नाम एवं मात्रा का उल्लेख करें किन्तु आजतक माननीय न्यायालय के आदेश का पालन नहीं हुआ ।

पुनः विगत एक मास से सुश्री नारायण चर्चा में हैं । उन्होंने 25 लाख रुपये के लागत की एक नयी प्रयोगशाला मंगायी, 12 राज्यों से शीतल पेय के 11 ब्राण्डों में से नमूने हासिल किये गये । नमूनों के जांचोपरान्त चौंकाने वाले परिणाम हमारे सामने आये । स्वयं बीआईएस (भारतीय मानक ब्यूरो) ने जो मानक तय किये हैं उससे 23 गुना ज्यादा कीटनाशक एवं अन्य पदार्थ पाये गये जो मानव स्वास्थ्य के लिए नुकसानदेह है । इस परिणाम के फलस्वरूप कई राज्यों ने शीतल पेय की बिक्री के खिलाफ प्रतिबन्ध लगा दिये हैं । इस प्रतिबन्ध का विरोध भारतीय उद्योग जगत कर रहा है । यह विरोध समझ में आने वाली बात नहीं है । क्या कम्पनी को भारतीयों के स्वास्थ्य से खिलवाड़ करने की इजाजत दे दी जाय ? उद्योग जगत् या बहुराष्ट्रीय कम्पनी वैज्ञानिक तथ्यों पर सुश्री नारायण की जांच को गलत प्रमाणित करें, तो बात समझ में आ सकती है । कम्पनी का तर्क भी हास्यास्पद है । उसका कहना है कि चीनी एवं जल में कीटनाशक मिले होते हैं । यदि यह सच भी है, तो यह कम्पनी का कार्य है कि वे इन कीटनाशकों को रासायनिक प्रक्रिया के जरिये अपने उत्पाद से अलग करें ।

आपका पत्र एक स्वास्थ्य पत्र है । क्या हम आशा करें कि आप भारत सरकार के साथ-साथ आम जनता को भी स्वास्थ्य के प्रति जागृत करेंगे तथा कीटनाशक युक्त शीतल पेय का उपयोग करने से मना करेंगे ।

आशा है, आपका उत्तर सकारात्मक होगा

भवदीय

**निशान्त कुमार झा**

द्वारा - श्रीमती एस.सी. लिंगायत, E 4/11, सूर्यप्रभा

जी.एम. केंजले मार्ग, बिबवेवाडी, पूना-37

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

## उत्तर प्रदेश

### उ०प्र० प्रान्तीय आयुर्वेदिक सम्मेलन का 47वाँ अधिवेशन नैमिषारण्य में सम्पन्न

उ०प्र० प्रान्तीय आयुर्वेद सम्मेलन का दो दिवसीय 47वाँ अधिवेशन नैमिषारण्य (नीमसार) तीर्थ में डॉ० बाल शास्त्री मिश्र प्रभारी चिकित्साधिकारी राजकीय आयुर्वेद चिकित्सालय, नैमिषारण्य (सीतापुर) के संयोजकत्व में सम्पन्न हुआ, जिसमें 9 जून, 2006 दिन शुक्रवार को प्रात: ९ बजे नि:शुल्क रोगी निदान का उद्घाटन मा० ओमप्रकाश जी गुप्त विधायक सीतापुर द्वारा स्वामी नारदानन्द आश्रम देवपुरी में किया गया । निदान शिविर का लाभ उठाने के लिए रोगियों का सैलाब उमड़ गया ।

10 जून 2006 को प्रान्तीय आयुर्वेद सम्मेलन उ०प्र० कार्यकारिणी की बैठक हुयी । कार्यकारिणी बैठक की अध्यक्षता वैद्य श्री निवास शर्मा द्वारा की गयी । 47 वाँ अधिवेशन का उद्घाटन मा० डॉ० अशोक बाजपेई, कृषि एवं धर्मार्थ कार्य मंत्री, उ०प्र० शासन द्वारा किया गया । अपने उद्घाटन भाषण में मा०मंत्री जी ने कहा कि आज भी 'आयुर्वेद विज्ञान' की कोई बराबरी नहीं कर सकता पर दुर्भाग्य है कि आधुनिक समय में निकले हुए आयुर्वेद के चिकित्सक अपने मूल स्वरूप को खोते जा रहे हैं । औषधि निर्माण, आयुर्वेदिक निदान चिकित्सा से वे पराङ्मुख होते हुए एलोपैथ की धाराप्रवाह में बहते जा रहे हैं । उन्होंने आयुर्वेद, यूनानी चिकित्सकों को सुझाव दिया कि आधुनिक विज्ञान का सहारा लेते हुए प्राचीन परम्परा का निर्वाहन करें तभी आयुर्वेद एवं आयुर्वेद चिकित्सकों का अस्तित्व रह सकता है । उन्होंने आयुर्वेद चिकित्सकों की आवाज को शासन तक पहुँचाने और हर सम्भव सहयोग का आश्वासन दिया । अधिवेशन में उपस्थित वैद्य श्री मंगल देव त्रिवेदी, मण्डलाध्यक्ष लखनऊ ने आयुर्वेद के चिकित्सकों को एकजुटता का आह्वान किया । उन्होंने अपने भाषण में कहा कि एकजुटता और बिना अपने अधिकारों के माँगे कुछ भी मिलने वाला नहीं है । डा० बाल शास्त्री मिश्र ने कहा कि वे सरकारी चिकित्साधिकारी हैं अतएव सरकारी नीतियों के खिलाफ तो मुँह नहीं खोल सकते पर आयुर्वेद महासम्मेलन जो देश का सर्वप्राचीन आयुर्वेद संगठन है, की माँग न्यायोचित है । आयुर्वेद चिकित्सकों की एकमात्र यही संगठन जिसका आयुर्वेद के विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।

अब आयुर्वेद चिकित्सकों में भी जागृति आ रही है, उन्हें बहुत दिनों तक सरकार गुमराह नहीं कर सकती सम्मेलन के निवर्तमान अध्यक्ष वैद्य श्री निवास शर्मा अपने धन्यवाद भाषण में कहा कि विगत 5 वर्षों तक संगठन के वैद्यों से जो सहयोग मिला उसका मैं आभा व्यक्त करता हूँ । मुझे विश्वास है कि वैद्य ब्रजबिहारी मिश्र जी की अध्यक्षता में सम्मेलन प्रगति पथ पर अग्रसर होगा उ०प्र० भारतीय चिकित्सक परिषद् के स्टैण्डिंग कौंसिल जी जीवन प्रकाश शर्मा एडवोकेट ने वैद्यों को संगठित और जागरूक रहने की सलाह दी । उन्होंने आशा व्यक्त की श्री ब्रज बिहारी मिश्र की अध्यक्षता में यह 'सम्मेलन' अपना आदर्श स्वरूप प्रस्तुत कर सकेगा । श्री मिश्र जी केवल नेता ही नहीं बल्कि विद्वान और आयुर्वेद समर्पित नेता हैं । अन्त में अपने अध्यक्षीय भाषण में वैद्य श्री ब्र बिहारी मिश्र ने कहा कि मैं आयुर्वेद के सेवक के रूप कार्य करने को तैयार हूँ । प्रदेश में आयुर्वेद और आयुर्वे चिकित्सकों की न्यायालय और शासन स्तर से बड़ी उपेक्ष हो रही है, उसे अपना महत्व दिलाने के लिए मैं अहर्नि समर्पित हूँ । इस अवसर पर अध्यक्ष श्री मिश्र जी ने प्रान्ती महामंत्री के रूप में वैद्य दशरथ सिंह एवं वरिष्ठोपाध्यक्ष वै देवदत्त द्विवेदी तथा 4 उपाध्यक्षों की घोषणा की जिन नाम सर्वश्री मंगल देव त्रिवेदी, श्री रामजी लाल पाण्डेय, श्र वैद्य रामदुलारे शर्मा एवं श्री वैद्य रूप सिंह त्यागी हैं ।

अद्योपरान्त 11 वैद्यों को सम्मान किया गया ए दीनदयाल औषधि प्रा०लि०, ग्वालियर के सौजन्य अंगवस्त्र देकर 80 वैद्यों का सम्मान किया तथा 160 वै को मुद (खस) शर्बत की बोतलें उपहार स्वरूप भेंट क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ायी, अंत में सहस्वागताध्यक्ष श्री बाल शास्त्री ने सबका आभार व्यक्त किया ।

इस अवसर पर वैद्य ब्रज बिहारी मिश्र ने जो अध्यक्षीय भाषण दिया वे सँक्षिप्त में निम्न प्रकार हैं :-

माता ललिताम्बा की असीम अनुकम्पा से पावन भूमि तीर्थ नैमिष में आयोजित प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मेलन उ०प्र० के 47 वें वार्षिक अधिवेशन के मुख्य अतिथि उ०प्र० शासन के कृषि एवं धर्मार्थ कार्य मंत्री, भारतीय संस्कृति एवं संस्कृत के प्रबल पक्षधर, वरेण्य विद्वान डॉ० अशोक वाजपेई जी, सीतापुर के लोकप्रिय विधायक आदरणीय श्री ओम प्रकाश गुप्ता जी, नूतन वाग्भटाचार्य उपाधि अलंकृत आयुर्वेद महर्षि वैद्यराज पं० दयाराम अवस्थी जी, महासम्मेलन के प्रधानमंत्री माननीय पं० रामप्रसाद मिश्र जी, अखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ के मंत्री एवं केन्द्रीय भारतीय चिकित्सा परिषद के सछसय श्री निरंजन सिंह यागी, महासम्मेलन पत्रिका के प्रधान सम्पादक वैद्यराज ीराचन्द्र शर्मा जी, म.प्र. आयुर्वेद सम्मेलन के अध्यक्ष वैद्य जय कुमार सावेरकर जी, उत्तराचंल सम्मेलन के अध्यक्ष ा० गगन भूषण जोशी जी, निवर्तमान प्रदेशाध्यक्ष वैद्य पं० ीनिवास शर्मा जी, सहायक औषधि नियंत्रक माननीय गलदेव त्रिवेदी जी, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक यूनानी अधिकारी ा.जे.पी. पाण्डेय जी, वरिष्ठोपाध्यक्ष वैद्य दशरथ सिंह, मृतिशेप वैद्यराज पं० योगीन्द्रदत्त त्रिपाठी के सुपुत्र श्री ालेन्दुदत्त त्रिपाठी जी, वैद्य रामदुलारे शर्मा जी, वैद्य देवदत्त द्विवेदी जी, वैद्य राम लाल पाण्डेय जी, वैद्य मदन गोपाल ाजपेई जी, वैद्य हरप्रसाद द्विवेजी जी, सभा संचालक वैद्य गेन्द्रनाथ दीक्षित जी, संयोजक वैद्य बाल शास्त्री जी, हस्वागत मंत्री वैद्य भगवती प्रसाद दीक्षित, डॉ० शिवशंकर पाठी, वैद्य व्रजपाल जी, औषधि निर्माता कम्पनियों के म्माननीय प्रतिनिधिगण, सभागार में उपस्थित वैद्य महानुभाव, धिकारीगण, पत्रकार बन्धुओं, देवियों एवं सज्जनो ।

ज्येष्ठमास की इस भीषण गर्मी में घर की समस्त सुख सुविधाओं को त्यागकर इस 47 वें अधिवेशन सफल बनाने के लिये आप लोग उपस्थित हुये हैं उ लिये मैं आप सब महानुभावों का हृदय से स्वागत अभिनन्दन करता हूँ ।

ग्रामीण वैद्यों से लेकर शहरों तक के उच्च शि चिकित्साधिकारी, आयुर्वेदिक कालेजों के प्राध्यापक, प्रो एवं प्रधानाचार्य तक जिस संगठन के सक्रिय सदस्य हों, वैद्यों के विशालतम संगठन प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मेल गरिमामय अध्यक्ष पद पर मुझ जैसे अल्पज्ञ, साधा चिकित्सक का तीसरी बार निर्विरोध निर्वाचन करके लोगों ने जो अपनी उदारता एवं सहृदयता का परिचय है उसके लिये मैं आपका हृदय से आभारी हूँ । मैं आप विश्वास दिलाता हूँ कि आपके आर्शीवाद एवं सहयोग बल पर जिस प्रकार 1991 से 1994 तक एवं 1995 1999 तक दो बार अध्यक्ष के रूप में संगठन की सेवा है उसी प्रकार पुन: इस सम्मेलन में अधिकाधिक गौरवर बनाने का प्रयत्न करूँगा । मेरे कार्यकाल में लखनऊ धन्वन्तरि विश्वविद्यालय की स्थापना, धन्वन्तरि चौराहा चरक पार्क की घोषणा हुई थी । मेरे अनुरोध पर कानपु गोरखपुर, अलीगढ़, बुलन्दशहर, काशीपुर के माननीय महा एवं नगरपालिका अध्यक्षों द्वारा अपने-अपने नगर में धन्व पार्क एवं धन्वन्तरि मार्ग बनाने की घोषणा की थी । इच्छा है कि प्रदेश के प्रत्येक जनपद मुख्यालय में धन्वन्तरि पार्क की अवश्य स्थापना हो ।

उ०प्र० में आयुर्वेद के सम्बन्ध में जो विक हुआ है उसमें सर्वश्री पद्म विभूषण राजवैद्य बृहस्पतिदेव त्रिगुणा, महासम्मेलनाध्यक्ष श्री देवेन्द्र जी त्रिगुणा, विद्यापीठ श्री शिव कुमार जी मिश्र, केन्द्रीय भारतीय चिकि परिषद् के अध्यक्ष पं० श्रीराम शर्मा, आयुर्वेद महर्षि दयाराम अवस्थी के साथ-साथ प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मे के सदस्यों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है । इसमें प्रादेशिक सरकार का सहयोग भी सुलभ रहा है । आयु



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



की समस्याओं के निराकरण हेतु उ०प्र० शासन ने आयुर्वेद विकास सलाहकार समिति एवं आयुर्वेद नीति निर्धारण प्रकोष्ठ का गठन किया था । यह अलग बात है कि नौकरशाही की उपेक्षा एवं निष्क्रियता के कारण समिति के उपयोगी सुझावों को कार्यान्वित नहीं किया जा सका और नीति निर्धारण प्रकोष्ठ की एक भी बैठक आयोजित किये बिना ही उसका कार्यकाल समाप्त हो गया । इस समय उ. प्र. में हाईकोर्ट के आदेशानुसार सी.एम.ओ. कार्यालय में प्राइवेट चिकित्सकों को पंजीकरण कराना तथा प्रतिवर्ष उसका नवीनीकरण आवश्यक कर दिया गया है । कोर्ट ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की आयुर्वेदरत्न उपाधि को सन् 1967 तक मान्य माना है । उसके बाद के आयुर्वेदरत्न उपाधिधारी तथा धारा 50 के अनुभव के आधार पर रजिस्टर्ड चिकित्सक जो पिछले 30-40 वर्षों से प्रदेश में चिकित्सा कार्य के द्वारा अपने परिवार का भरण पोषण कर रहे थे उन्हें अमान्य घोषित कर दिये जाने से उनका पंजीकरण सी.एम.ओ. के यहाँ नहीं हो रहा तथा उन्हें प्रताड़ित किया जा रहा है तथा चिकित्सा कार्य अवरूद्ध हो जाने से उनका परिवार भुखमरी की कगार पर खड़ा है ।

मेरा शासन से विनम्र अनुरोध है कि वह ऐसा कोई मार्ग निकाले जिससे कोर्ट के आदेश की अवहेलना भी न हो और जो लोग भारतीय चिकित्सा परिषद उ०प्र० में पंजीकृत हैं उन्हें प्रवेश में निर्बाध रूप से चिकित्सा करने की सुविधा प्रदान कराई जा सके । वैद्यों का हित साधन ही हमारे संगठन का मुख्य लक्ष्य है । आयुर्वेद के उन्नयन एवं वैद्यों के हित के लिए हम निम्नलिखित बातों की ओर शासन का ध्यान आकर्षित करते हैं :

आयुर्वेद के सर्वांगीण विकास के लिये प्रदेश में आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना की जाय ।

सी.पी.एम.टी. के द्वारा चयनित विद्यार्थियों की निष्ठा आयुर्वेद के प्रति नहीं होती । आयुर्वेद में निष्ठा रखने वाले विद्यार्थियों का चयन अलग से आयुर्वेद प्रवेश परीक्षा के द्वारा किया जाय जिसमें विज्ञान के साथ संस्कृत विषय अनिवार्य हो ।

3. परम्परागत चिकित्सा ज्ञान को लुप्त होने से बचाने के लिये यह आवश्यक है कि आयुर्वेदिक कालेजों में वैद्यों के बच्चों का कम से कम 25 प्रतिशत आरक्षण किया जाय ।
4. प्रदेश में एक औषधीय निगम की स्थापना कर वैद्यों को शुद्ध व सस्ती औषधियाँ उपलब्ध कराई जाय ।
5. उ.प्र. में 1988 के उपरान्त आयुर्वेदिक चिकित्सकों की नियुक्ति नहीं की गई । इससे आयुर्वेद स्नातक पिछले 18 वर्षों से बेरोजगार हैं । इस वर्ष लगभग 300 आयुर्वेद चिकित्सकों की संविदा पर भर्ती की गई है । शासन इन्हें संविदा से मुक्त कर तदर्थ चिकित्साधिकारी के स्थायी पद पर नियुक्त करे ताकि पुनः बेरोजगार न हो सकें ।
6. भारतीय चिकित्सा परिषद् उ.प्र. के चुनाव पिछले लगभग 33 वर्षों से नहीं हुये जिससे वैद्यों में कड़ा असंतोष है । शासन को चाहिए वह परिषद के चुनाव यथाशीघ्र कराये ।
7. शासन और संगठन में सामंजस्य बनाए रखने के लिये यह आवश्यक है कि प्रदेश में पुनः आयुर्वेद सलाहकार समिति का गठन किया जाय ।

उपर्युक्त बातों के क्रियान्वयन हेतु प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मेलन का सुदृढ़ होना परम आवश्यक है । इसके लिये असंगठित जनपदों को संगठित करना, युवाशक्ति का रचनात्मक कार्यों में उपयोग करना, महिलाओं को संगठन में वरीयता देना तथा संगठित जनपदों को गतिशील बनाना हमारा लक्ष्य है ।

इस सम्मेलन को सफल बनाने में हमें जिन लोगों ने तन-मन-धन से सहयोग किया है उन सबके प्रति आभार प्रकट करना मैं अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ । आप सब समागत महानुभावों का पुनः स्वागत एवं अभिनन्दन करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हुए आपके सुख, समृद्धि, सुयश एवं उत्तम स्वास्थ्य की भगवान धन्वन्तरि से कामना करता हूँ ।

## शोक संवेदना

प्रतिष्ठा में

डा० वीरेन्द्र पाल सिंह
क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी
अलीगढ़

महोदय

आपकी माताश्री के दिनांक 10.6.2006 के आकस्मिक निधन पर जनपद शाखा हाथरस शोक व्यक्त करती है, इस कष्टदायी घड़ी में हम सब आपके शोक के सहभागी हैं ।

ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह दिवंगत आत्मा को मोक्ष एवं शान्ति प्रदान करें एवं आपकों धैर्य प्रदान करें । यश अपयश, जीवन मरण, सुख दुख यह जीवन के अटूट सत्य हैं ।

भवदीय

**डा० राकेश मोहन शर्मा**
सचिव, राजकीय आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा सेवा संघ जनपद शाखा-हाथरस
चिकित्साधिकारी-राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
बरई शाहपुर-हाथरस (उ०प्र०)

# उत्तरांचल

## राजकीय आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा सेवासंघ, उत्तरांचल जनपदीय शाखा - टिहरी गढ़वाल

राजकीय आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा सेवासंघ जपनद टि०ग० का चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन दिनांक 9 जून 2006 को तहसील नरेन्द्रनगर सभागार में मुख्य अतिथि माननीय श्री विक्रम सिंह नेगी, सलाहकार पेयजल माननीय मुख्यमंत्री उत्तरांचल की अध्यक्षता एवं विशिष्ट अतिथि डा० पूजा भारद्वाज, निदेशक आयुर्वेद एवं यूनानी उत्तरांचल देहरादून एवं डा० यतेन्द्र सिंह मलिक प्रान्तीय अध्यक्ष व डॉ० ए०एन० बहुगुणा, जिला आयुर्वेद यूनानी अधिकारी, टि०ग० की सानिध्यता में सम्पन्न हुआ । उक्त अवसर पर कार्यालय सचिव डा०के०एस०असवाल, प्रान्तीय उपाध्य डॉ० जे०एन० नौटियाल विशेष रूप से उपस्थित थे ।

इस अवसर पर प्रान्तीय अध्यक्ष डॉ०वाई०एस० मलिक की अध्यक्षता में जनपदीय संघ टि०ग० की न कार्यकारिणी का सर्वसम्मत चुनाव निम्नवत् हुआ -

**अध्यक्ष:-** डॉ० देवेन्द्र चमोली, चिकित्साधिक राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय मदननेगी, टि०ग०

**उपाध्यक्ष:-** डॉ० गंगा प्र० गैरोला, चिकित्साधिक राजकीय आयुर्वेदिक चिकत्साल, पौखाल, टि०ग० ।

**सचिव:-** डॉ०बी०एस० भण्डारी, चिकित्साधिक राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, बौराड़ी, नई टि टि०ग० ।

**सह सचिव :-** डॉ० सम्पूर्णानन्द चिकित्साधिकारी, राजकीय आयुर्वेद चिकित्सालय भैं टि०ग० ।

**आय-व्यय निरीक्षक :-** डॉ० आर०पी० चिकित्साधिकारी, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय श्री टि०ग० ।

**आयुर्वेद विज्ञान गोष्ठी सचिव :-** डॉ० गि शर्मा, चिकित्साधिकारी, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्स म्याणीलालूर, टि०ग० ।

**कार्यकारिणी सदस्य :-**

डा० जयवीर सिंह, चि.अ.रा.आयु.चि. रानी चौरी टि०

डा० श्रीमती कृष्णा शर्मा, चि.अ.रा.आयु.चि., मुनीक टि०ग० ।

डा० जितार सिंह रावत, चि.अ.रा.आयु.चि. गूलर, टि०

डा० दिवाकर शर्मा, चि.अ.रा.आयु.चि., बॉसकाटल, टि

डा० सत्येन्द्र सिंह नेगी, चि.अ.रा.आयु.चि., बगवान्, टि

**विशेष आमन्त्रित सदस्य :-**

डा० दिनेश कुमार शर्मा, प्रभारी चि.अ., नगर चिकित्स नरेन्द्रनगर, टि.ग. ।

डा० डी०डी० उप्रेती, चि.अ.रा.आयु.चि. जाजल, टि

डा० एस०एस० कैन्तुरा, (प्रान्तीय कोषाध्यक्ष) चि



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



आयु.चि. पांखरी, टि.ग. ।

राजकीय आयुर्वेद / यूनानी चिकित्सा सेवा संघ जनपदीय शाखा - टि०ग० की वार्षिक बैठक में सर्वसम्मति से निम्न प्रस्ताव पारित किये गये -

1. स्थानान्तरण में पारिदर्शिता हो, वरिष्ठ व अधिक आयु के चि०अ० को सुगम व मुख्य मार्गीय चिकित्सालयों में तैनात किया जाये ।
2. महिला चिकित्साधिकारियों को सुगम व मुख्यायल के आसपास के चिकित्सालयों में तैनात किया जाये ।
3. जिला मुख्यालय में स्थित रा.आयु.चि. व नगर चिकित्सालयों में वरिष्ठ चि.अ. की ही तैनाती की जायें ।
4. कार्यवाहक जिला आयुर्वेदिक यूनानी अधिकारियों की तैनाती में वरिष्ठता का विशेष ध्यान रखा जाये । जिन कनिष्ठ चिकित्सा अधिकारियों को कार्यवाहक जिला आयुर्वेदिक यूनानी अधिकारी के पद पर तैनात किया हुआ है उन्हें हटाकर प्रान्तीय वरिष्ठता के अनुसार ही कार्यभार दिलाया जाय व इसका कड़ाई से पालन किया जाना परम आवश्यक है ।
5. एक व्यक्ति एक पद के सिद्धान्त को अपनाते हुये एक चि०अ० को एक ही पद की जिम्मेदारी दी जाये ।
6. दम्पति चि०अ० को एक ही जनपद में निकटवर्ती चि० में तैनात किया जाये ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

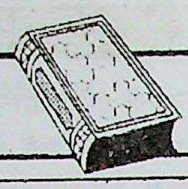

# ॥ बैद्यनाथ आयुर्वेदीय प्रकाशन ॥

| P.Cd. | भाषा | | P.Cd. | भाषा | |
|---|---|---|---|---|---|
| 9801 | अभिनव शरीर | हिन्दी पं. दामोदर शर्मा गौड़ | 9888 | किशोर रक्षा और ब्रह्मचर्य | हिन्दी वैद्य रवीन्द्र शास्त्री |
| 9804 | अभिनव शारीरम् | संस्कृत पं. दामोदर शर्मा गौड़ | 9891 | मानव रोग विज्ञान | हिन्दी श्री बालकृष्णाजी अमरजी पाटव |
| 9807 | अग्न्यतिसार संग्रहणी-कोष्ठवात प्रकरणानि | हिन्दी | 9894 | MEDICINAL FLORA OF GARHWAL HIMALAYAS | ENG. DR. MAYARAM UNIYAL |
| 9810 | अम्लपित्त प्रकरण | हिन्दी आचार्य रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी | 9897 | मोटापन कम करने के उपाय | हिन्दी श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी |
| 9813 | AROGYA PRAKASH | ENG | 9901 | नेत्र चिकित्सा | संस्कृत डा. बालकृष्णा शिवराम मुंजे |
| 9816 | आरोग्य प्रकाश | हिन्दी पं. रामनारायण शर्मा वैद्य | 9904 | नेत्र रोग विज्ञान | हिन्दी |
| 9819 | अष्टांग संग्रह की वनौषधियाँ एवं वर्गीकरण | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल | 9907 | निदान चिकित्सा हस्तामलक (प्रथम खंड) | हिन्दी वैद्य रणजित राय देसाई |
| 9820 | अष्टांग संग्रह | हिन्दी पं. वागभट्ट | 9910 | निदान चिकित्सा हस्तामलक (द्वितीय खंड) | हिन्दी वैद्य रणजित राय देसाई |
| 9821 | बिहार की वनस्पतियाँ | हिन्दी | 9913 | निदान चिकित्सा हस्तामलक (तृतीय खंड) | हिन्दी वैद्य रणजित राय देसाई |
| 9822 | अष्टांग संग्रह (शरीर, निदान चिकित्साकल्पसिद्ध स्थान) | हिन्दी पं. वागभट्ट | 9916 | निदान चिकित्सा हस्तामलक (चतुर्थ खंड) | हिन्दी वैद्य रणजीत राय देसाई |
| 9825 | अष्टांग संग्रह सूत्र स्थान | हिन्दी पं. लालचन्द्र शास्त्री | 9919 | पदार्थ विज्ञान | हिन्दी पं. रामरक्ष पाठक |
| 9828 | अष्टांग सग्रह उत्तरस्थान | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल | 9922 | पारद विज्ञानयम | हिन्दी वैद्य वासुदेव मूलशंकर द्विवेदी |
| 9831 | आत्ययिक चिकित्सा | हिन्दी | 9925 | परिषद शब्दार्थ शारीरम् | संस्कृत पं. दामोदर शर्मा गौड़ |
| 9834 | औषधि विज्ञान शास्त्र | हिन्दी पं. विश्वनाथ द्विवेदी | 9928 | PROBLEMS OF AYURVEDIC RESEARCH | ENG. SRI S.K. SHASTRI 9931 |
| 9835 | आयुर्वेद अनुसंधान दर्शिका | हिन्दी | | प्रयोगात्मक अभिनव द्रव्य गुण विज्ञाणम् (पुस्तकालय संस्करण) | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल |
| 9837 | आयुर्वेदीय पंचकर्म विज्ञान | हिन्दी वैद्य हरीदास श्रीधर करतुरे | 9934 | प्रयोगात्मक अभिनव द्रव्य गुण विज्ञाणम् (छात्र संस्करण) | |
| 9840 | आयुर्वेद सार संग्रह | हिन्दी संकलित | 9937 | पंडित रामदयाल जोशी स्मृति ग्रंथ | हिन्दी दिनकर पाण्डेय |
| 9843 | आयुर्वेदीय औषध सेवन विधि | हिन्दी संकलित | 9940 | रस-भस्म सेवन विधि | हिन्दी पं. देनी प्रसाद वैद्य |
| 9846 | आयुर्वेदीय हितोपदेश | हिन्दी वैद्य रणजित राय देसाई | 9943 | संक्रामक रोग विज्ञान | हिन्दी कविराज बालकराम शुक्ल |
| 9849 | आयुर्वेदीय क्रिया शरीर | हिन्दी वैद्य रणजित राय देसाई | 9946 | SCIENCE AND PHILOSOPHY OF INDIAN MEDICINES | ENG. SRI K.K. UDUPPA |
| 9852 | आयुर्वेदीय पदार्थ विज्ञान | हिन्दी वैद्य रणजित राय देसाई | 9949 | शारंगधर संहिता | हिन्दी आचार्य राधाकृष्ण पराशर |
| 9855 | आयुर्वेदीय व्याधि विज्ञान (पूर्वार्द्ध) | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | 9952 | सिद्धयोग संग्रह | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य |
| 9858 | आयुर्वेदीय व्याधि विज्ञान (उत्तरार्द्ध) | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | 9953 | शरीर क्रिया विज्ञान | हिन्दी |
| 9861 | BAIDYANATH BOOK OF AYURVED KNOWLEDGE | ENG. | 9956 | THERAPEUTIC GUIDE TO AYURVEDIC MEDICINES | ENG. PT. RAMRAKSHA PATHAK |
| 9864 | BAIDYANATH THERAPEUTIC GUIDE | ENG. PT. DURGA PD. SHARMA | 9958 | TREATISE ON 30 BAID. AYUR. PRODUCTS | ENG. PT. DURGA PD. SHARMA |
| 9867 | BASIC PRINCIPLE OF AYURVEDA RESEARCH | ENG. SRI D.P. SHARMA AND R.P. SHAH | 9961 | त्रिदोश तत्व-विमर्श | हिन्दी पं. रामरक्ष पाठक |
| 9868 | बिहारी के आदिवासी एवं जड़ी बूटियाँ | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल | 9964 | यूनानी चिकित्सा सार | हिन्दी हकीम दलजीत सिंह |
| 9869 | उत्तराखंड हिमालय की वनौषधियाँ एवं खनिज | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल | 9967 | यूनानी सिद्धयोग संग्रह | हिन्दी हकीम दलजीत सिंह |
| 9870 | भारतीय रस शास्त्र | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | 9970 | उपचार पद्धति और पथ्य | हिन्दी वैद्य रवीन्द्र शास्त्री |
| 9871 | बेदी वनस्पति कोष | हिन्दी रामेश बेदी | 9973 | वैद्य सहसर | हिन्दी पं. विश्वनाथ द्विवेदी |
| 9873 | चरक एवं सुश्रुत के दार्शनिक विषय का अध्ययन | हिन्दी डा. ज्योतिमित्र आचार्य | 9976 | वनौषधि शतक | हिन्दी पं. दुर्गा प्रसाद शर्मा |
| 9876 | चर्मरोग निर्देशिका | हिन्दी आचार्य रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी | 9979 | यादव स्मृति ग्रंथ | हिन्दी पं. रामनारायण शर्मा वैद्य |
| 9879 | DIGESATION & METABOLISM IN AYURVED | ENG. DR. C. DWARKANATH | 9982 | यौवन विज्ञान पर नया प्रकाश | हिन्दी डा. लक्ष्मीनारायण शर्मा |
| 9882 | द्रव्यगुण विज्ञानम् (पूर्वार्द्ध) | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | | | |
| 9885 | द्रव्यगुण विज्ञानम् (उत्तरार्द्ध) | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | | | |

Central Library Gurukul Kangri University Hardwar-249404 (U.A.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ISSN - 090678 X

# सचित्र आयुर्वेद

# SACHITRA AYURVED

## A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

वर्ष - 59 अंक - 3 सितम्बर - 2006

प्रीणनः प्राणजननः श्वासकासक्षयापहः ।
वातपित्त श्रमहरो हृद्यो मांसरसः स्मृतः ।।
स्मृत्योजः स्वरहीनानां स्वरक्षीणक्षतोरसाम् ।
भग्नविश्लिष्ट सन्धीनां स्वर क्षीणक्षतोरसाम् ।।
भग्न विश्लिष्ट सन्धीनां कृशानामल्परेतसाम् ।
आप्यायनः संहननः शुक्रदो बलवर्धनः ।।

सु०सू० 46/359-360

अर्थात् मांस रस - प्रीणन (पुष्टिकारक) प्राणदायक, श्वास-कासक्षय-नाशक; वायु-पित्त-श्रमहर, हृदय के लिए प्रिय है । स्मृति, ओज तथा स्वर से हीन पुरुषों के लिए हितकारी; ज्वर से क्षीण, क्षत (उरःक्षत) रोगियों के लिए उत्तम है । भग्न एवं सन्धिभ्रंश में हितकारी है; कृश एवं अल्पवीर्य वालों को स्वास्थ्यदायक है । आप्यायन (देह को बढ़ानेवाला), संहनन (संधानकारक), शुक्र, ओज और बल बढ़ाता है ।

Gurukul Kangri University Central Library Haridwar-249404 (U.A.)
Dpant 19/12/06

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना—800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अब भूल जाईये महीने की चिन्ता

## बैद्यनाथ सुन्दरी कल्प फोर्ट

रक्त की कमी, घबराहट, थकावट, हाथ पाँव के तलवे की जलन आदि परेशानियों में फौरन आराम देता है ।

"अब आप भी अपना ख़्याल रखिए"

## बैद्यनाथ सुरक्ता

आयुर्वेदिक स्किन टोनर
कील मुहाँसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# 'सचित्र आयुर्वेद' के भूतपूर्वक सम्पादक, वैद्यरत्न डा० नागेश द्विवेदी नहीं रहे ।

8 जून, 2006 की रात्रि लगभग 11.45 बजे आयुर्वेद जगत् के लिए अशुभ घड़ी थी जब वैद्यरत्न डा० नागेश द्विवेदी इस मायावी संसार से महाप्रयाण कर गये । सौम्य प्रकृति, मधुर स्वभाव, करूणा एवं दया से भरपूर हृदय एवं विशाल व्यक्तित्व के स्वामी श्री नागेश जी थे ।

माता पंझरी देवी की कुक्षि से तृतीय पुत्र के रूप में वैद्य नागेश द्विवेदी का जन्म अरवल जिले (भूतपूर्व गया/जहानाबाद) के कुबरी ग्राम में हुआ था । इनके पिता का नाम पं० रामचन्द्र द्विवेदी था ।

ग्रामीण विद्यालय में प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने के बाद - सेठ श्री रामनिरंजन दास मुरारका संस्कृत महाविद्यालय में अध्ययन करते हुए - प्रथमा, मध्यमा, शास्त्री, व्याकरणाचार्य की परीक्षायें प्रथम श्रेणी में कामेश्वर सिंह संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा से उत्तीर्ण ।

मैट्रिक, आई०ए०, बी०ए०, एम०ए०, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया से उत्तीर्ण की ।

पी०एच०डी० की डिग्री (पतंजलि की आयुर्वेदीय देन) नामक शोध प्रबन्ध पर पटना विश्वविद्यालय से उन्होंने प्राप्त की ।

राजकीय आयुर्वेदिक कालेज, कदमकुआँ, पटना से बी०ए०एम०एस० (आनर्स) डिग्री बिहार स्टेट फेकल्टी ऑफ आयुर्वेदिक यूनानी मेडिसिन, पटना से बिहार में द्वितीय स्थान उन्होंने प्राप्त किया ।

एच०पी०ए० (एम०डी०आयुर्वेद) केन्द्रीय आयुर्वेदीय स्नातकोत्तर प्रशिक्षण केन्द्र/गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जामनगर से आयुर्वेद में स्नातकोत्तर उपाधि से वे विभूषित हुए ।

वैद्यरत्न डा० नागेश द्विवेदी

शोधपत्र संस्कृत में "आक्षीक धातुविज्ञानीयम" शीर्षक शोध प्रबन्ध पर उन्हें डिग्री मिली ।

राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ, नई दिल्ली की रत्न सदस्यता से सम्मानित भी हुए ।

**कार्यानुभव**

Central Library Gurukul Kangri (Deemed University) Haridwar-249404 (U.A.)

सहायक वैद्य - राजकीय आयुर्वेदिक कालेज, पटना में ।

आवासीय चिकित्सक पदाधिकारी - स्नातकोत्तर अस्पताल, जामनगर में ।

प्रबन्धक - राजकीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी औषध निर्माणशाला, बिहार में ।

(शेष पृष्ठ सं० 240 पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची

वर्ष - 59 अंक - 3 सितम्बर - 2006

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मूल्य - 10 रुपये प्रति

वार्षिक मूल्य - 100 रुपये प्रति

आजीवन शुल्क - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुल्क - 2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 163

2. शिशु पक्षाघात की आयुर्वेदिक दृष्टि से गवेषणा
प्रो० हरिभाई के. द्विवेदी 165

3. अर्कवटी योग निर्माण विधि का प्रायोगिक अध्ययन
डा० रजनी बाला, डा०के०शंकर राव
डा० एल०के० द्विवेदी 173

4. स्त्री रोगों में उत्तर बस्ति - एक वरदान
डॉ० माण्डवी गौतम, डा० विनोद कु०गौतम
प्रो० ओम् प्रकाश उपाध्याय 176

5. द्रव्य परिचय की एक विशेष विधा : इतराह्वा
डॉ० गोपेश कुमार न. शर्मा
डॉ० दिनेश कुमार न. शर्मा 178

6. वनौषधियों का तुलनात्मक अध्ययन : शोध का एक नया पहलू
डा० सुधांशु कुमार जैन 183

7. बर्डफ्लू एवं बर्ड ब्रिडर लंग्स के सन्दर्भ में आयुर्वेदीय रोगी परीक्षा एवं चिकित्सा
वैद्य राम किशोर जोशी 186

8. चन्द्रहास रस का शीघ्रपतन एवं स्वपनदोष पर एक सफल आतुरीय परीक्षण
वैद्य (डा०) ओमवीर सिंह "वीर"
डा० मीना आहूजा, सुरेन्द्र सिंह 190

9. सुख शांति कल्याणमय जीवन का व्यवहारोपयोगी मार्ग
डा० बी.एम. निर्मल 192

10. रोगा: सर्वेऽपि मन्देग्नौ: के नैदानिक महत्व का वैज्ञानिक विवेचन
डा० संजय कुमार सिंह 194

11. घृत कुमारी
डॉ० गोपेचा उपाध्याय, प्रो०पी०पी०शर्मा 197

12. स्वास्थ्यरक्षक मेथी
स्मिता गुप्ता 199

13. सन्तत ज्वर विवेचन
राजवैद्य धर्मवीर 200

14. अम्लपित्त
प्रो०बी०एन०सिंह, डॉ०विनोद कु०सिंह 204

15. दही औषधि भी है
परिधि जैन 208

16. सोरीयासिस रोग की आयुर्वेद में अवधारणा
डा० विजय कुमार राय, डा० राधे श्याम शर्मा 209

17. बरसाती बहार में आरोग्यदाता आहार-विहार
कविराज दिवाकर ठाकुर 210

18. Patho physiology and management of allergic disorder in Ayurveda
Dr. N.S. Shukla 212

19. Evaluation of Lauha Bhasma on classical analytical parameters - A pilot stu
Dr. Prasanta Kr. Sarkar
Dr. Anand kr. Choudhary, Dr.P.K. Prajapa 21

20. Treatment of amlapitta (Hyperacidity)
Dr. J.P. Singh, Dr. S.K. Tiwari 22

21. Kshara Basti in Amavata (Rheumatoid Arthritis)
Dr. Deepshikha Aggarwal, Dr. Harbans Sing 22

22. Market survey on medicinal plant of uttaranchal state-1
G.C. Joshi, R.N. Tiwari, J.C. Arya 22

23. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 23

24. आपके अनुभूत प्रयोग 23

25. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 23

26. आपके पत्र 23

27. आरोग्य समाचार 23

28. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

# बिहार में शुद्ध पेय जल भी उपलब्ध नहीं

कोलकाता के विशेषज्ञों ने बिहार प्रान्त के 12 जिलों में 152 गांवों के पेय जल की जांच की । जांचोपरान्त पाया गया कि पेय जल में आर्सेनिक की मात्रा काफी अधिक है । सर्वाधिक प्रभावित जिलों में प्रमुख है - भोजपुर, बक्सर, पटना, समस्तीपुर, भागलपुर, कटिहार, मुंगेर, वैशाली, खगड़िया, बेगूसराय, छपरा और लखीसराय । चापाकल से प्राप्त जल में 42% में आर्सेनिक की मात्रा 10 माइक्रोग्राम से ज्यादा, 24% में 50 माइक्रोग्राम और 56% में 300 माइक्रोग्राम से ज्यादा पायी जाती । यादवपुर विश्वविद्यालय के पर्यावरण विभाग के अध्यक्ष एवं प्रोफेसर, श्री दीपंकर चक्रवर्त्ती के अनुसार बिहार के भोजपुर के समरिया ओझा पट्टी गांव के पानी में आर्सेनिक की मात्रा 814 माइक्रोग्राम प्रति लीटर पायी गयी । विदित है कि पेयजल में इसकी अधिकतम हानि रहित मात्रा 50 माइक्रोग्राम प्रति लीटर है । पेय जल के पश्चात् जब लोगों के स्वास्थ्य की जाचं की गयी, तो परिणाम भयंकर निकले । 5000 आबादी वाले गांव के 550 लोगों के स्वास्थ्य जांच की गयी । जांच में 60 लोग आर्सेनिक जनित चर्म रोगों के शिकार पाये गये, 40 लोग आर्सेनिक जनित न्यूरो रोग के शिकार थे । 12 गर्भवती महिलाओं में से 5 आर्सेनिक जनित चर्मरोगों की चपेट में थीं । 98% लोगों के मूत्र में आर्सेनिक की मात्रा खतरनाक सीमा 3000 माइक्रोग्राम प्रति लीटर तक पायी गयी । बाल के 57.6 और नाखून के 76.3% मामलों में भी सामान्य से ज्यादा इसकी मात्रा पायी गयी ।

विशेषज्ञों के अनुसार पेय जल में आर्सेनिक की मात्रा ज्यादा रहने से चर्म रोग एवं लीवर से सम्बन्धित रोग ज्यादा होते हैं । आयुर्वेद में भी दूषित जल सेवन नहीं करने की सलाह दी गयी है । सुश्रुत संहिता में स्पष्ट निर्देश है कि दूषित जल दोषों को उत्पन्न करता है और अहितकारी है । जो आदमी दूषित पानी को बिना स्वच्छ किये पीता है, उनको श्वयथु, पाण्डुरोग, त्वचा के रोग, अजीर्ण, श्वास, कास, प्रतिश्याय, शूल, गुल्म, उदररोग एवं अन्य विषम (कठिन) रोग शीघ्र ही उत्पन्न हो जाते हैं ।

हमारे महर्षियों को आधुनिक विज्ञान के शब्द जैसे आर्सेनिक, पेस्टीसाइड आदि भले ही ज्ञात नहीं हों, किन्तु वे इन शब्दों के मूल अर्थों से भलिभांति परिचित थे । आशय यह है कि दूषित जल में जो हानिकारक द्रव्य पाये जाते हैं, उनकी अवधारणा से वे परिचित थे । यही कारण है कि दूषित जल के सेवन से जो रोग हो सकते हैं, उनका वर्णन उन्होंने अपने ग्रन्थों में किया है । आधुनिक विज्ञानी तो जल में उपलब्ध हानिकारक द्रव्यों से होने वाले कम रोगों का ही पता लगा पाये हैं, जबकि आयुर्वेद में तुलनात्मक दृष्टि से रोगों की संख्या ज्यादा बतायी गयी है ।

आश्चर्य है कि हमारी सरकार आजादी के 59 वें वर्ष में भी शुद्ध जल की आम जनता को उपलब्ध नहीं करा पायी है । जनतांत्रिक तरीके से चुनी गयी सरकार के लिए इससे ज्यादा शर्म की बात कुछ और नहीं हो सकती है । सरकार को अविलम्ब ही इस समस्या की ओर ध्यान देना चाहिए ।

## एलोपैथी औषधियों में खतरनाक औषधि मिश्रण।

विशेषज्ञों के अनुसार जब दो औषधियों को मिलाया जाता है, तो एक नयी औषधि का निर्माण हो जाता है । अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान्, नयी दिल्ली के फार्माकोलोजी विभाग के अध्यक्ष, प्रोफेसर वाई.के. गुप्ता के अनुसार आमतौर पर दवा कम्पनी एक औषधि का लाइसेन्स लेती है, किन्तु बाद में वह दूसरी औषधि को मिला देती है । इस तरह दो औषधियों के संयोग से एक नयी औषधि का निर्माण होता है । होना यह चाहिए कि इस तरह से तैयार नयी औषधि का भी अनुमोदन औषधि नियंत्रक से लेना चाहिए, किन्तु कम्पनी ऐसा नहीं करती है । कम्पनियों में निर्धारित मात्रा-संयोग (एफडीसी) की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है । डा० गुप्ता के अनुसार कम्पनी औषधि की क्रिया और प्रतिक्रिया, साइड एफेक्ट्स आदि तथ्यों की ओर ध्यान नहीं देती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदाहरण के लिए दर्दनाशक और स्नायु तंत्रिका को प्रभावित करने वाली औषधि-दोनों को मिलाकर दर्दनाशक औषधि के रूप में बेची जाती है । यदि कोई व्यक्ति जिसे केवल सरदर्द है और वह दर्दनाशक औषधि लेता है और इसमें स्नायु तंत्र को प्रभावित करने वाली औषधि भी है, तो स्नायु तंत्र को प्रभावित करने वाली औषधि की कोई भूमिका सरदर्द में नहीं है । इसके विपरीत यह नुकसान भी पहुंचा सकती है । दुर्भाग्यवश हमारे चिकित्सक भी इस ओर ध्यान नहीं देते हैं और धड़ल्ले से इस प्रकार की औषधि अपने रोगियों को देते हैं । निमूस्लाइड एक दर्द निवारक औषधि है । इस औषधि पर पूरे विश्व में प्रतिबन्ध है, किन्तु हमारे देश में नहीं है । इन खामियों की ओर सरकार को अविलम्ब ध्यान देना । निर्धारित-मात्रा-संयोग की औषधि की पूरी जांच के पश्चात् ही उसके उत्पादन एवं करने की अनुमति देनी चाहिए ।

## उत्तम निर्माण प्रक्रिया को नहीं अपनाने के लिए 'आयुष' की ओर से नोटिस

भारत सरकार के आयुर्वेद, योग, यूनानी, सिद्ध एवं होम्योपैथी (आयुष) विभाग ने 1372 औषधि निर्माता कम्पनियों को नोटिस जारी की है कि इन कम्पनियों ने वर्ष 2003 में अधिसूचित जीएमपी का पालन नहीं किया है । औषधि एवं अंगराग अधिनियम की धारा 33 (सी) के अन्तर्गत अक्टूबर, 2005 में सभी राज्य सचिवों को निर्देश दिया गया था कि जो कम्पनी जीएमपी (उत्तम निर्माण प्रक्रिया) को नहीं अपनाती है, उसकी अनुज्ञप्ति रद्द कर दी जाय । विदित है कि पहली बार जून, 2000 में आयुर्वेद, सिद्ध एवं यूनानी औषधि निर्मात्री कम्पनियों को कहा गया था कि दो वर्षों के भीतर उत्तम कच्चे द्रव्यों एवं उत्पादित औषधियों की गुणवत्ता पर नियंत्रण रखें । इसके पश्चात् वर्ष 2003 में अधिसूचना जारी की गयी । 'आयुष' विभाग के अनुसार सम्पूर्ण देश में 3,980 आयुर्वेदिक, सिद्ध एवं यूनानी औषधि निर्मात्री कम्पनी है जिनमें से 1,590 ने उस समय तक जीएमपी का पालन नहीं किया था । इनमें से 1372 कम्पनियों पर इस के जनवरी माह तक नोटिस जारी की गयी । ये कम्प मुख्यत: आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, उत्तरप्रदेश, उड़ीसा, कर्नाट दिल्ली, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल, प्रदेश, केरल, महाराष्ट्र, पंजाब और हरियाणा में अवस्थि हैं ।

विदित है कि जीएमपी के नियमों के अनु कम से कम 1200 वर्गफीट की जगह होनी चाहिए इसके अतिरिक्त 200 वर्गफीट भट्ठी घर के लिए हो चाहिए । कच्चे द्रव्यों को प्राप्त करने एवं स्टोर करने लिए, निर्माण करने का पर्याप्त स्थान, गुण नियंत्र विभाग, उत्पादित औषधियों को स्टोर करने की जगह खराब समान को रखने की जगह का भी प्रावध जीएमपी के नियमों में है ।

कुछ कम्पनी सरकारी नियमों को ज्यादती म रही है, किन्तु हमारी दृष्टि में यह सही नहीं है । कम्प औषधि का निर्माण करती है जो मनुष्य के स्वास्थ्य रक्षा में सहायक है । यदि उत्पादित औषधियों में रोग समाप्त करने के गुण नहीं रहेंगे, तो औषधि-व्यर्थ इससे आयुर्वेद की भी बदनामी होती है । सरकार को अधिकार है कि आम जनता के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए पर्याप्त कदम उठावे । इस दृष्टि से हम सम है कि जीएमपी की कठोरता से पालन किया जाय । भी देखा जाता है कि भ्रष्ट सरकारी अधिकारियों मिलाकर जाली प्रमाण-पत्र ले लेते हैं । इस प्रवृत्ति रोकने के लिए कम्पनी को स्वयं पहल करनी चाहि यदि कोई सरकारी अधिकारी जानबूझकर कम्पनी तंग करता है, तो उसे उचित माध्यम से प्रतिवाद करना चाहिए ।

यह भी सत्य है कि भ्रष्टाचार के युग कम्पनी यह सोचती है कि प्रतिवाद करने से उ अहित नहीं हो जाय । इस बात की भी सम्भावना है कि अधिकारी औषधियों के उत्पादन को बन्द का कहीं आदेश जारी नहीं कर दें । यह किसी अधिकारी के लिए साधारण बात है । जो भी मानव-स्वास्थ्य-रक्षा एक पुनीत कार्य है । हमें इस पालन करना चाहिए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# शिशु पक्षाघात की आयुर्वेदिक दृष्टि से गवेषणा

प्रो० हरिभाई के. त्रिवेदी

**प्रास्ताविक'**

आयुर्वेद जीवन संबंधित ज्ञान-विज्ञान युक्त शास्त्र है जिसका प्राथमिक प्रयोजन स्वस्थ व्यक्ति के आरोग्य की रक्षा करना एवं उसको प्रसन्न रखना है । यदि प्रज्ञापराध आदि कारणों से आहार-विहारादि का 'सम्यक् पालन न किया जाय तो स्व कारणों से दोषों का प्रकोप होता है, अग्निमांद्य, दोष वैषम्य, धातु दुष्टि, स्रोतोरोध, बलहानि होने से अनेक रोग का जन्म होता है ।

आयुर्वेद के आचार्यों ने रोगों के प्रकरण में ज्वर को प्रथम स्थान दिया है, उसके वर्णन में उसके प्रकार और उनकी विशेषताओं का सविस्तार वर्णन किया है । इनमें सन्निपात (त्रिदोष) जन्य ज्वरों में विषम ज्वर प्रकार का वात बलासक ज्वर अति संक्षेप में वर्णित है ।

संप्रति समाज में बाल पक्षाघात (Polio Myelitis) 1 से 4 वर्ष के आयु वाले बालकों में एक समस्या रूप में चुनौती देता है । प्रायः यह रोग असाध्य-सा माना गया है । इनके निवारण (रोकथाम) के लिये भारत एवं राज्य सरकार अभियान चलाती है । स्वस्थ बालकों की व्याधि क्षमता बढ़ाने हेतु तीन साल के सार्वजनिक अभियान चलाया जाता है । अतः इस रोग के रोगियों की संख्या किंचित घटी है परन्तु अब भी यह प्रश्न यथावत् है कि इसका समूल निवारण या विकारोपशम के लिये कोई विश्वस्थ उपचार या औषध निश्चित नहीं हो पाया है । अतः वैद्यों में एवं समाज में इस विषय का चिंतन किया जाता है कि इस रोग की उत्पत्ति हेतु एवं निदान चिकित्सा के ज्ञान में आयुर्वेद का क्या योगदान हो सकता है ? ऐसा देखा जाता है कि प्रायः 1 से 5 वर्ष के बालक में प्रथम ज्वर आता है, बाद में वात दोष की वृद्धि, कफ दोष से स्रोतोरोध हो जाता है, विशेषतः बालक की मस्तिष्क तक ज्वर का संताप बढ़ जाता है तथा मस्थि तथा मांस धातु दोष अधिष्ठान पाकर उसकी गति में अवरोध करता है, जिससे विकलांगता होती है ।

**आधुनिक चिकित्साशास्त्र की दृष्टि से पोलियो माईलाइटीस की उत्पत्ति एवं परिचय**

यह एक अति सूक्ष्म विषाणु (वायरस) के संक्रमण से होने वाला विकार है । यह नासा ग्रंथि के द्वारा प्रविष्ट होता है । मस्तिष्क के ग्रे मोटर को विकृत करता है और विशेषतः सिग्मेन में अग्रश्रृंग कोषों को नुकसान करता है । विशेषतः मेरुदंड स्थित सुषम्ना कांड की विकृति से हाथ-पाँव में कमे हानि एवं शुष्कता आती है । यह रोग विशेषतः दस वर्ष की उम्र तक पाया जाता है । वैज्ञानिकों का अवलोकन है कि अस्वच्छ (गंदे) हाथ मुँह में, नाक में डालने की आदत वाले बच्चों में इस रोग की ज्यादा संभावना रहती है । उपसर्ग अथवा संक्रमण के बाद 7 से 12 दिन में लक्षणों का आविर्भाव होता है, विशेषतः चेष्टा संबंधित कोषों में विकृति होने से क्रिया हानि मिलती है ।

**परिचय :-**

रोग के लक्षणों का समुच्चय परिचायक है, यथा प्रारंभ में मंद ज्वर आता है, साथ में शिरःशूल होता है और अपने आप शांत हो जाने के बाद पुनः दूसरे सप्ताह में ज्वर, शिरःशूल, ग्रीवा की स्तब्धता होती है । मस्तिष्क दुष्टि होने से चेष्टावाही ज्ञान तंतुओं की निष्क्रियता बढ़ती है । विशेषतः वक्ष (छाती) में पर्शुका के अंतराल से स्नायु में संग आता है । अतः श्वास संख्या घटती है । प्रयोगशालीय परीक्षणों में मस्तिष्क का प्रवाही सुषुम्ना कांड से प्राप्त करके परीक्षण करने में इसमें लिम्फोसाइट श्वेतकण (Lymphocytes) पाये जाते हैं, जो निदान हेतु उपयोगी है ।

**वातबलासक ज्वर का आयुर्वेदीय अभिमत**

आयुर्वेद के विद्वानों में तीन प्रश्न चर्चित है कि वात बलासक ज्वर क्यों होता है, कैसे होता है और उसका प्रभाव बालकों में क्या होता है ?

महर्षि सुश्रुत एवं वाग्भट्ट ने वातबलासक ज्वर को कफादिक एवं वात प्रकोपक जन्य बतलाया है । सामान्यतः ज्वर की उत्पत्ति मंदाग्नि से होती है और अग्नि का स्थान कोष्ठ है तथा नाभि के ऊपर के भाग में वक्ष एवं शिर कफ के स्थान हैं, वय की दृष्टि से बाल्यावस्था में कफ प्रधान रहती है । इन हेतु से बालक को अल्प व्यायाम की आदतों से वात-श्लेष्म प्रकोपजन्य वातबलासक ज्वर होता है, यह

78, अजीत नगर सोसायटी, उर्मि सोसायटी के पास, बड़ोदरा (गुजरात)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



न्निपातज व्याधि है एवं चिरकाल तक पीड़ा करता है एवं षमज्वर के समान बार-बार आता है इसलिए बलहानि, ोथ, अकर्मण्यता एवं स्तब्धता बढ़ाता है । आयुर्वेद का पष्ट अभिमत है कि ओज बल का कारण है एवं बल ारोग्य का अधिष्ठान है । अत: वातबलासक ज्वर की लगामी चिकित्सा में आंशिक लंघन, दीपन-पाचन, मृदु रेचन, वातानुलोमन, आमपाचन रसायन एवं स्रोतोरोध के पचार की नितांत आवश्यकता है । यही उपचार अन्त में ाकर Polio बाल पक्षाघात में कार्यकारी अमोघ फलदायक सद्ध होता है ।

### ातबलासक ज्वर की विशेषता एवं सम्प्राप्ति

शास्त्र में मल स्वरूप कफ को बलास नाम दिया या है । यह रसधातु का मल है । प्राय: जठराग्नि मंद होने र अपक्व कफ द्रवरूप में बर्हिमुख स्रोतस् के द्वारा नासिका ा मुख से बहार निकलता है । यदि उसका प्रमाण अधिक ुआ तो मल के रूप में स्रोतस् का अवरोध करता है एवं ोष्ठ से उन्मुख हो मध्यम मार्ग में संधि और अस्थि में धिष्ठित होता है, उसकी प्राकृतिक क्रम में व्यवधान ालता है, पाँव के प्राकृत कर्म गमन में विकृति होने से ंज या पङ्गुता लाता है, उसी प्रकार दीर्घकाल तक नित्य ंद ज्वर की स्थिति बनी रहने से विमार्गगामी वायु उत्तरोत्तर ंभीर धातुओं में आम एवं बलास को विक्षेपित करता है । त: जिस धातु में बलास का स्थान संश्रय करता है वहाँ ोष-दूष्य सम्मूच्छर्ना से विविध लक्षण उत्पन्न होते हैं । त: धातुएं शिथिल एवं सारहीन बन जाती हैं जो वात लासक के रूप में अभिव्यक्त होती है :-

**नित्यंमंद ज्वरो रूक्षशीत: कृच्छ्रेण सित्ध्यति ।**
**स्तब्धांग: श्लेष्म भूयिष्ठो नरोवात बलासकी ।।**

(अ०सं०नि० 2/88)

### ातबलासक ज्वर की सम्प्राप्ति

अपथ्य आहार-विहार एवं विष उपसर्ग के दुष्परिणाम े वात-पित्त-कफ विकृत होने पर जब जठराग्नि को दूषित करते हैं तब आहार की प्रथम रस धातु के मल रूप कफ का आधिक्य बढ़ता है, जो स्रोतसों को अवरूद्ध करके ोषक अंशों की प्राकृत गति को विकृत करता है अथवा पोषण अभाव से धातुक्षय-ओजक्षय होता है । विशेष अस्थि और मज्जा में कुपित होकर स्तब्धता करता है, इ मांसपेशी और कंडरा की आकुंचन-प्रचारण शक्ति ह होती है, जो खंज या पङ्गुता करती है ।

### वातबलासक ज्वर की चिकित्सा से Polio Myeli (बाल पक्षाघात) का निर्मूलन ।

आयुर्वेद में पंचमहाभूत और चेतना समुदाय पड् पुरुष किंवा चिकित्साधिकृत पुरुष कहा है कि हित सेवन, आरोग्य का मूल और अहित का सेवन विकार का जनक है । अत: हिताहित का विचार मूलगामी है, जो दोष प्राकृत अवस्था में हितकर या आरोग्यप्रद वे ही विषम होने पर हानिकर एवं मृत्युकर हैं. इसी प्र जो अग्नि सम अवस्था में है वह आयु और बल बढ़ा और आरोग्य का पालन करता है, परन्तु वह विषम - ती - मंद हुआ तो क्रमश: वायु-पित्त-कफ रोग का ज बनता है, आहार का अपक्व अंश आम संज्ञक है वह भी उत्पादक है तथा स्रोतस् की दुष्टि भी रोग उत्पादक है। विचार श्रृंखला के परिप्रेक्ष्य में विशेषत: जामनगर स्नातकोत्तर शिक्षण केन्द्र के काय चिकित्सा विभाग अ प्रशिक्षणार्थ श्री के. सदाशिव शर्माजी ने सम्प्राप्ति लक्ष संबंध: नाम से महानिबंध की रचना की है ।

आयुर्वेदीय चिकित्सा का सिद्धान्त यह है कि की उत्पत्ति को रोके अर्थात् अपथ्य का त्याग और पथ्य सेवन दोषों की विषमता को दूर करने के लिए बढ़े हुए को कम करने के लिए दोष प्रत्यनिक औषध और उ का आयोजन करे । मंद, अग्नि के दीपन औषध आंशिक लंघन से प्रदीप्त करे, आम का पाचन करे, की शुद्धि करे. रसादि धातुओं का निर्माण पुन: स्थापित ओज बढ़ावे एवं व्याधि प्रत्यनिक विशेष उपचार करे व्यायाम या आसन-योग इत्यादि का आयोजन करे ।

**व्यवहार उपयुक्त औषध एवं आहार तथा उपक्रम**
**अपथ्य**

दही, केले, आलू, भिंडी, नमकीन, मटर, चॉ


CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



फ्रिज का पानी, बेकरी आइटम का सेवन नहीं करना चाहिए।

**औषध**

(1) संशमनी वटी 2-2 गोली दो वक्त पानी के साथ दीर्घकाल तक दें, जो दीपन पाचन ज्वरघ्न और रसायन है, विशेषकर त्रिदोषकर है ।

(2) लघुवसंत मालती - 250 मि.ग्राम की गोली अर्थात् 8 बजे 1, सायं 5, बजे और रात्रि में 10 बजे मधु के साथ दें. यदि गाय या बकरी का दूध सुलभ हो तो दिन भर में पिलावें, पुनर्नवा के पान का रस या मूल का रस सुबह-शाम दो बार दें जो मूत्रल एवं शोथघ्न है, वात संशमन के उद्देश्य से योगराज गुग्गलु को पीसकर एक-एक गोली तीन बार गुनगुने जल के साथ दे ।

यदि दीर्घकाल से पीड़ित बालक में ओजक्षय विषाद-अवसाद एवं भय हो तो कुमार कल्याण रस 125 मिलीग्राम 5 एम.एल. ब्राह्मीघृत के साथ दें, कोष्ठशुद्धि के लिये मृदु विरेचन करने वाला आरग्वध का फांट पिलावें। विशेष उपक्रम, आयुर्वेद आतुरालयों में पंचकर्म विभाग में षष्टीशाली पिंड स्वेद दिये जाते हैं, जिसमें चावल और दूध को गरम करके उनकी पोटली बनाकर स्वेदन किया जाता है । स्वेदन करने के पूर्व सर्वाङ्ग अभ्यंग में पृष्ठ, कटि एवं दोनों पांव में क्षीरबला तैल, चंदन बला लाक्षादि तैल को थोड़ा गरम करके उससे अभ्यंग करना चाहिये क्योंकि तैल वात शामक है, वायु गति का संचालक है, स्तब्धता कम होने से शक्ति बढ़ती है ।

**कार्यानुभव एवं अवलोकन ?**

वातबलासक की चिकित्सा करने से पोलियो माइलोटीस पर क्या परिणाम होता है उसका 60 (साठ) रोगियों में अध्ययन प्रारंभ किया । इनमें से 10 रोगी प्राय असाध्य होने से उनका समावेश नहीं किया । अध्ययन में संशमनी वटी और लघुवसंत मालती - 23 दिन तक दिये गये, पथ्यापथ्य भी सभी में दिया । 7-7 दिनों के अन्तराल में अवलोकन किया गया जिसमें ज्वर निवृत्ति शोथ अल्पता क्षुधा दीप्ति और स्तब्धाङ्गता में न्यूनता पायी गई प्राय: 50% में आशातीत परिणाम मिला । जिन रुग्णों में अभ्यंग और स्वेदन की व्यवस्था हो सकी उसमें अधिक परिणाम देखे गये, चलने की क्षमता बढ़ी ।

**विमर्श एवं निष्कर्ष :-**

त्रिदोष जन्य मन्द विषमज्वर कफ प्रधान होने से स्रोतोरोध दुष्टि होने से वातबलासक की ज्वरघ्न चिकित्सा एवं वायु की एवं स्नेहन-स्वेदन चिकित्सा से पर्याप्त लाभ हुआ । परन्तु मार्गावरोध से उत्सेध तथा मांसशोथ होने के कारण क्रिया हानि नामक प्रधान लक्षण नियंत्रित नहीं हो पाया । अत: हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वात-बलासक ज्वर के बाद में दीर्घकाल तक रोगी को आतुरालय में प्रवेश देकर, अभ्यंग, स्वेदन, मृदु विरेचन, कटि बस्ति एवं आवश्यक व्यायाम तथा रसायन औषध, सुवर्णयुक्त औषध एवं पथ्य पालन का प्रबंध करना चाहिये क्योंकि याप्य अवस्था से असाध्यता में परिणत न हो एवं बल का संरक्षण समुचित हो ।

| बाल पक्षाघात (Polio Myelitis) | वातबलासक एवं | बेरी-बेरी का व्यवच्छेदक निदान |
|---|---|---|
| 1. बालक में कोई एक अंग की कर्म हानि दिखाई पड़ती है । | ---- | --- |
| 2. ज्वर का मस्तिष्क पर असर होने से स्मृति चली जाती है । | ---- | --- |
| 3. शरीर (त्वचा) रूक्ष होती है । | 3. त्वचा में रूक्षता आती है । | |
| 4. शरीर में मंद ज्वर रहता है । | 4. नित्य मंद ज्वर होता है । | 4. ज्वर होता नहीं है । |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | |
|---|---|---|
| . शरीर में विवर्णता (फीकापन) दिखाई पड़ती है । | ---- | ---- |
| . मल-मूत्रादि अल्प आते हैं । | | |
| . ----- | 7. परिसरीय नाड़ियों पर प्रभाव होता नहीं है । | 7. परिसरीय नाड़ियों पर प्रभाव होता है |
| . ----- | 8. ग्लोकोमां (अधिमंथ) होता है | 8. ग्लोकोमां (अधिमंथ) नहीं होता है |
| . ----- | 9. गर्भस्थ शिशु में यह संक्रान्त नहीं होता । | 9. गर्भस्थ शिशु में यह संक्रान्त होता है |
| ----- | 10. नित्य मंद ज्वरोरूक्षः शुनकस्तेन सिध्यति । स्तब्धांग श्लेष्म भूयिष्ठो नरोवातबलासकी ।। (अ०सं०नि०अ० 2/87) | |

(बीजा अध्याय के पहले

## वात बलासक ज्वर के बहुमुखी विवेचन में तात्विक विमर्श

### प्रास्ताविक

ब्रह्माजी ने आरोग्य और रोग विषयक तत्वचिंतन ग ज्ञान प्राप्त किया. उसको गुरू-शिष्य परंपरा में प्रचारित रुया । इसमें तीन प्रमुख तत्व थे । (1) हेतु अर्थात् कारण 2) लिङ्ग अर्थात् लक्षण और (3) औषध । तीन अभिगमां स्वास्थ्य रक्षा का प्रथम प्रयोजन एवं उसके परिणाम के रूप में प्रसन्नता पूर्वक दीर्घजीवन का लाभ प्राप्त करना जसमें रसायन और वाजीकरण प्रयोगों का समावेश होता है । तीय योजना आतुर के रोग का प्रशमन करना और उसके रिणाम स्वरूप की अनुभूति और बल की वृद्धि होना भीष्ट है, इन दोनों उद्देश्यों को सिद्ध करने के लिये अग्नि, ायु और उदक पर गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया गया है जसको स्पष्ट करने के लिए दृष्टान्त दिया है कि बाह्य गत के पवन, सूर्य और चन्द्र जीवन सृष्टि पर उपकारक भाव होता है इस तरह शरीर में वायु, पित्त (अग्नि) और ल (कफ) का प्रभाव बल, वर्ण, आयुष्य, आरोग्य के ापन में निर्विवाद होता है । शरीर की उष्मा का नियमन ायु का कार्य है और शरीर में चेष्टा का एवं शरीर की गति का संचालन करना भी वायु का कार्य है । अतः उस वहन मार्ग में अवरोध नहीं होना चाहिए तथा शरीर में स्वभाव वाले उदक का परिमाण अपने अनुपान में नि होना चाहिये । शरीर के शास्त्र की तरह मन का भी स्वा भी सत्वगुण के द्वारा सुरक्षित रहता हैं और रज और तम को मानस दोष कहे जाते हैं । ये मानस विकारों के मनोदैहिक रोगों के जनक हैं । आत्मा निर्विकार है उस प्रसन्न रखना चाहिए ।

### चिकित्स्य पुरुष एवं व्याधि के तत्व ।

श्रीमद्भगवत गीता में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते समय एक सिद्धान्त दिया है कि कार्य की सिद्धि में पांच कारण आवश्यक होते हैं ।

(1) अधिष्ठान (2) कर्ता (3) क्रिया करण और (5) दैव । यह सिद्धान्त । चिकित्सा में उपजित्य है रोग और आरोग्य का अधिष्ठान । जीवित है, जिसको चिकित्सा अधिककृत पुरुष कहा है, दर्शन के मतानुसार यह चौबीस तत्वों का समुदाय है । पांच महाभूत और चेतना (आत्मा) का समवाय यह पुरुष व्यवहार में कर्म पुरुष की संज्ञा से स्वीकृत


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जिसको चिकित्सक का ।

### पंचमहाभूत सिद्धान्त एवं त्रिदोष

अग्नि महाभूत जल के अनुबंध वाला विशेषत: नाभि और आमाशय में रहता है । चक्षु इन्द्रिय से धार रूप ग्रहण करता है, त्वचा को वर्ण देता है, और स्वेद के द्वारा बाहर निकलता है और रक्त में आश्रित रहकर जीवन के बहुमुख्य व्यापार चलाता है ।

पृथ्वी, जल के महाभूत की प्रधानता वाला, आमाशय उर:कण्ठ, शिर: और क्लैम अधिष्ठित और जिह्वा स्थित रसना इन्द्रिय से रस ग्रहण और नासा गंध ग्रहण करता है । यह रसधातु, मांस, मेद, मज्जा, शुक्र, स्तन्य, आर्तव, लसिका और लाला में अधिष्ठित है । ओज भी कफ के गुणों में सौम्य रहता है ।

### व्याधि के घटक

दोष, दूष्य, स्रोतस, आम, अग्नि तथा व्याधि उत्पादक कारण एवं दोष-दूष्य सम्मूर्च्छना की प्रक्रियाएं व्याधि के प्रमुख घटक हैं, व्याधि का प्रसार शरीर में होता है उसके लिये तीन मार्ग हैं । यह पूरी प्राकृतिक क्रिया अध्ययन विकारों स्वभाव-प्रभाव, निवारण एवं चिकित्सा के लिये नैदानिक दृष्टि कोण से जानना यह चिकित्सक की दक्षता को बढ़ाने वाली आधारशिला है, आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में इसको Physiological Basis of Medical Practice कहते हैं, इसके समर्थन में यह कहा जाता है कि Study of normal is essential to understand the abnormal चक्रपाणी जी ने लिखा है कि 'प्रकृति ज्ञानाधिनं ही विकृति ज्ञानं भवति' अर्थात् Normal Values are Indicator for the study of a disease.

### व्याधि उत्पत्ति में प्रक्रिया

आयुर्वेद का स्पष्ट सिद्धान्त है कि रोगोत्पत्ति में दोष वैषम्य अनिवार्य भूमिका है, परन्तु दोषों की विकृति कारणों पर आधारित है । श्रीमान त्रिसटाचार्य ने वात-पित्त-कफ के कारणों का संकलन तीन सुख स्मरणीत श्लोक में दिये है, जो माधव निदान के मधुकोष टीका में दर्शनीय है । महर्षि आत्रेय ने रोगोत्पत्ति का अति उपबृंहित किया है कि "रोग: कृत: संशमनम् किमेश्याम् । अर्थात् व्यास मुनि की नष्ट हेतु स्कंध दिया है कि (1) प्रज्ञापराध (2) असात्म्य इंन्द्रियां संयोग काल, परिणाम से भी रोगों का सब सामान्य कारण है, जनपदोध्वंस प्रकरण में बाह्य कारणों का निर्देश किया है कि भूमि, उदक और काल की दुष्टि रोगोत्पादक है किन्तु इन चारों के हेतु होने में मूल कारण अधर्म है अर्थात् सदाचार का लोप । अनेक दुर्विज्ञेय व्याधि समुदाय को जन्म देते हैं, इस तरह सामाजिक स्वास्थ्य एवं रोग भी सहेतुक चिंतनीय रहे हैं ।

### लिङ्ग स्कंध

जिन लक्षणों के द्वारा व्याधि का ज्ञान होता है उसको लिङ्ग या लक्षण कहते हैं । भावी का बोधक लक्षण पूर्वरूप कहा जाता है और पश्चात् उत्पन्न होने वाले लक्षण को उपद्रव तथा नियत मरण स्वापक लिङ्ग को अरिष्ट कहा जाता है । कभी-कभी एक रोग का प्रत्यात्म लिङ्ग रहता है यथा ज्वर में उष्णता, शोथ में उत्सेध एवं पांडु में पांडुता कभी एक लक्षण, अनेक रोगों में देखा जाता है यथा शूल, उदर में, कटि, संधियों में इत्यादि, उसी प्रकार एक रोग के अनेक लक्षण भी होते हैं यथा त्रिरूप, षडरूप और एकादश रूप और कभी अनेक लक्षण अनेक रोगों में पाये जाते हैं और अवस्था के अनुसार लक्षणों में भिन्नता भी आती है यथा सामज्वर-निरामज्वर, उत्तान तथा गंभीर, कुष्ठ, नवज्वर-जीर्णज्वर, अत: वैद्य का कर्तव्य बनता है कि सूक्ष्म अवलोकन करते हुए व्याधि का विनिश्चय सम्प्राप्ति के अनुसार ही करें क्योंकि चिकित्सा का प्रयोजन तभी फलदायी होगा जब दोष-दूष्य सम्मूर्च्छना का सम्यक विघटन सम्पन्न होगा । महर्षि चरक ने निर्देश दिया है कि न लिङ्ग: व्याधि मुपाचरेत् ।

### औषध स्कंद :

औषध शब्द का अर्थ प्राण तत्व का संरक्षण एवं वृद्धि करना, प्राय: वनस्पति अथवा सजीव प्राणी योग के दूध आदि का उपयोग करना, नैसर्गिक तत्व का मूल तत्व है, इसीलिये विश्व आरोग्य (W.H.O.) संस्था ने परंपरागत चिकित्सा के अन्तर्गत Herbal Medicine के रूप में जन



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



स्वास्थ्य के लिये स्वीकृत किया है । मध्यकालीन युग में प्रचार-प्रसार बढ़ा तब पारद-गंधक वाले औषध का निर्माण एवं उपयोग प्रारंभ हुआ । आधुनिक चिकित्साशास्त्र ने रासायनिक संयोजन, केमिकल Formula के आधार पर करोड़ों औषध बनाये जो सर्वथा निरापद नहीं हैं, आज मणि, मंत्र, आसन, योग, होम, हवन आदि दैव व्यपाश्रय चिकित्सा का पुन: प्रचार की संभावना बढ़ी है क्योंकि मानसं विकारों का निघारण सत्वावजय एवं दैव व्यापाश्रय से ही संभव है ।

महर्षि वाग्भट्ट ने आदर्श औषध के लक्षण बताये हैं कि बहुकल्प बहुगुणं संपन्नं योग्य औषधम् । महर्षि सुश्रुत ने शस्त्रं कर्म प्राणिधान् क्षारकर्म और अग्नि कर्म भी रोगों के चिकित्सा के लिये उपदिष्ट किये हैं ।

भारतीय तत्व चिंतन की दृष्टि से पुनर्जन्म भी रोग है और उससे मुक्ति पाने के लिये सद्ज्ञान की आवश्यकता है, उपधा अर्थात् राग-द्वेषक, बंधन मनुष्य को दु:ख एवं सुख के आश्रय (शरीर और मन) को देता है । अत: मुमुक्ष व्यक्ति को ज्ञान पक्ष पर अग्रसर होना चाहिये, परन्तु इस ज्ञान पाने के लिये कठिन तपश्चर्या दीर्घकाल तक करनी चाहिये, इसके लिये शीत-उष्ण आदि को सहन कर सके ऐसा दृढ़तर होना चाहिये । अत: देह शुद्धि के लिये पातंजलि योग दर्शन का अनुसरण करना चाहिये । भारतीयों की सांस्कृतिक मान्यता है कि भवरोग का निवारण के लिये गंगाजल एवं ईश्वर कृपा (औषध जाहन्वी तोयं वैद्यो नारायणौ हरि:) ये दो ही समर्थ है । इस सैद्धातिक चिंतन के परिप्रेक्ष्य में बाल पक्षाघात Polio वात बलासक ज्वर का कार्य-कारण सम्बन्ध प्रस्तुत करेंगे ।

**पोलियो माईकायटीस का आधुनिक चिकत्साशास्त्र के अनुसार परिचय**

यह प्राय: 5 से 10 साल के आयु वाले शिशुओं में होने वाला पक्षाघात है जिसका कारण विषाणु का मस्तिष्क एवं सुषुम्णा में उपसर्ग है, पहले ऐसी धारणा थी कि श्वसन तंत्र में विकृति इसका कारण है परंतु अब यह स्पष्टतया स्वीकार किया गया है कि व्याधि क्षमत्व न्यूनता इसका मूल कारण है यथा अति परिश्रम (आघ शोक-श्रम एवं अभिघात Troma इसका कारण देखा है । बल हानि होने से रक्तगत श्वेत अणुओं का विनाश इस रोग का सहायक कारण है । विकृति विज्ञान निष्णातों ने अध्ययन किया है कि सूक्ष्म ज्ञान तंतुओं कोषों की सूक्ष्म रचना में अपचय होना यह विकृति का द्योतक है । जब Motor cell नष्ट होते हैं तो मृत्यु निश्चेष्टता आ जाती है । विकृति विज्ञान के महान वि William Boyal लिखा है कि मस्तिष्क के धूसर (gr मेटर में जब ज्वर Polio Virus का उपसर्ग होता है तो रोग होता है । इसके पहले, शिर:शूल, अंगमर्द और देह मान 103°F बढ़ जाता है और एक या दो पाँव एवं में Paralysis यह क्रिया प्राय: सुबह में होती है आकस्मिक होती है । इस रोग के प्रसार का समय के उत्तर गोलार्ध में ग्रीष्म एवं वर्षा का काल होता है दक्षिण गोलार्ध में मार्च एवं अप्रिल में होता है । सामान्य 5 से 10 वर्ष की आयु में यह विशेष देखा जाता है, प्रक्र की प्रक्रिया पोलियो का विषाणु मुंह के द्वारा गले पहुँचकर, आंत्रों में जाकर लीन पड़ा रहता है । खासका नाले वाले पानी में खेलने वाले बच्चों को ज्यादा संभव है । यह पाचन मार्ग को विकृत करता है एवं शरीर जलीय अंशों को घटाता है, इससे मलावरोध होता है, शुष्क, कठिन मल प्रवृत्ति कष्ट के साथ आती है ।

**रोग के लक्षण एवं रोगी-परीक्षा**

प्रारंभ में मंद ज्वर, शिर:शूल, गले में शोथ, में अरुचि, अपचन, छर्दि एवं अपक्व मल प्रवृत्ति होती जब रोग बढ़ता है तब पृष्ठ में वेदना एवं दौर्बल्य बढ़ और सहिष्णुता होती है । Polio के रोगी में सात दि मांसपेशिओं की शिथिलता होने लगती है और आगे प्रसारण क्षमता घट जाती है, मांस कठिन हो जाता है, तन्द्रावस्था में रहता है । खंज, पंङ्गुता एवं मांस शो कारण इस रोग का निदान प्रत्यक्ष तया देखने से सरलत किया जाता है, विकलाङ्गता उसका परिचायक लक्षण



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



इस रोग की गंभीरता इसलिये मानी जाती है कि पहले इसके प्रतिबंधक औषध Vaccine का ज्ञान नहीं था तब महामारी Epidemics के रूप में हजारों बालकों को विकलांग करता था एवं कई बालक इससे मृत्यु भी पाते थ ।

**Polio रोग की रोकथाम एवं Prevention के उपाय**

(1) विषाणु का उपरान्त Infection रोकना ।
(2) अजीर्ण एवं कोंन्टिपेंशन नहीं होने देना ।
(3) गंदे पानी में खेलना तथा स्नान नहीं करना चाहिए ।
(4) अजीर्ण एवं कृमि रोग की चिकित्सा करनी चाहिए ।
(5) ज्वर की चिकित्सा में सावधानी रखनी चाहिये ।
(6) रोगी का व्याधि क्षमत्व बढ़े इसलिये स्वस्थ बालकों में भी समय-समय पर वैक्सीनेशन कराना चाहिए । इतना ही नहीं निवास स्थान के आस-पास स्वच्छता रखनी चाहिये ।
(7) बालकों को मुँह में या नाक में हाथ या अंगुलियां डालने वाली आदत छोड़ने का परामर्श देना चाहिए ।
(8) सार्वजनिक स्वास्थ्य की दृष्टि से स्वच्छता अभियान एवं वेक्सीन्स का प्रयोग अनिवार्य रूपेण पहले से चलाना चाहिए ।

ऐसा देखा गया है कि मल-मूत्र का उत्सर्जन जिस स्थान में अधिक मात्रा में अव्यस्थित होता है एवं स्वच्छता का अभाव होता है वहाँ जीवाणुओं से Infection का भय विशेष रहता है, बड़े महानगरों में नगरपालिका के स्वास्थ्य केन्द्र में दो प्रकार के Vaccines उपलब्ध कराया जाता है (1) इन्जेकशन के द्वारा (2) मुंह में ड्रोपस के रूप में दिया जाता है । यह निर्विवाद सत्य है कि Polio Virus को नष्ट करने वाला कोई औषध आजतक निश्चित रूप से बनाया नहीं गया है । अत: रोगी की चिकित्सा, सावधानी पूर्वक करनी चाहिए अन्यथा घातक सिद्ध होता है । कभी कोई रोगी जीवित रहता है तो विकलाङ्ग दशा में व्यथित रहता है ।

**आधुनिक चिकित्सा शास्त्र के अनुसार पोलियो की चिकित्सा :-**

इस रोग की चिकित्सा दो अवस्थाओं में की जाती है (1) सद्य: चिकित्सा (2) दीर्घ कालीन चिकित्सा

(1) जिस रोगी का पोलियो का निदान हो चुका है उसको संपूर्ण विश्राम के लिये लिटा कर आराम देना चाहिए और जिस अंग में विकृति हो उसको परिश्रम नहीं कराना चाहिए ।
(2) विकृत अंगों में स्थानिक स्वेदन के लिये अर्थात् गरम पानी में भिगोये हुए कपड़ों का आच्छादन करना चाहिए ताकि वेदना शमन हो ।
(3) शरीर में जलीय अंश का कमी न हो इसलिये रोकने के लिये अधिकाधिक प्रवाही मुंह अथवा शिराधारा देना चाहिए ।
(4) उसको ऐसा आहार या औषध देना चाहिए कि रोगी के मृदु, स्निग्ध पुरीष प्रवृत्ति हो ।

**रोगी की दीर्घकालीन चिकित्सा ।**

जब सद्य: चिकित्सा की अवस्था दूर हो जाय तब रोगी की विकलांगता को रोकने के लिये Physiotherapy में विशिष्ट व्यायाम कराना चाहिये ।

**विशेष परिचर्या -**

Readers Digest के फेमिली हेल्थ के गाइड-पुस्तक में लिखा है कि इस रोग की कोई विशिष्ट चिकित्सा नहीं है किन्तु यदि दक्ष परिचारक से परिचर्या की जाय तो रोगी स्वस्थ होते हैं इसलिये आतुर को आतुरालय में दाखिल कराना चाहिए जहाँ विशेष साधन Respirator (रेस्पीरेटर) के उपयोग से श्वास कष्टता नहीं होता है, विश्राम, स्वेदन एवं उचित व्यायाम से स्वास्थ्य प्राप्ति होती है इस हेतु अलग विभाग में रोगी को व्यायाम के लिये भेजते हैं एवं उपकरणों का उपयोग करता है ।

**उपसंहार :-** यह व्याधि घातक नहीं है परन्तु दीर्घकालतक, विकलांगता पैदा करने स्वभाव वाला है अत: उसकी सद्य: चिकित्सा तत्परता से करनी चाहिए एवं दीर्घ कालीन चिकित्सा के लिये अच्छे हॉस्पिटल में दक्ष परिचारकों एवं फिजियोथैरापी के विभाग में विशेषज्ञ के द्वारा उपचार करवाना चाहिये ताकि वह अपाहिज न बने ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**ाल पक्षाघात का पुरोगामी कारणरूप वात बलासक वर का निदान अर्थकरत्व का विमर्श**

**ास्ताविक :-**

आयुर्वेद में सांख्य मत का कार्य-कारण बाद को हत्वपूर्ण स्थान दिया गया है, माधव निदान में स्पष्ट ल्लेख है कि कोई रोग अन्य रोग का हेतु बनकर शांत हो ाता है और कई बार व्याधि के साथ समान्तर रूप से वद्यमान रहता है यथा ज्वर अग्निमांद्य आदि कारणों से त्पन्न होकर उसके अनुगामी अतिसार पैदा करता है और वर का प्रशमन हो जाता है । यदि लङ्घन न किया गया तो अग्निमांद्य जनित आम से उत्पन्न ज्वर के बाद अनुगामी तिसार होता है तब ज्वरातिसार नामक विशेष व्याधि संकर वशेष अवस्था उत्पन्न होती है, इसी प्रकार ज्वर प्रकरण में र्णित विषमज्वर में एक विशिष्ट प्रकार वातबलासिक होता वह आगे चलकर बालपक्षाघात का कारण बनता है । अत: कार्य-कारण के सिद्धान्त के अनुसार कार्य का नाश करने के लिये कारण की समीक्षा परमावश्यक है । इसलिये ातबलासक ज्वर का शास्त्रीय विवेचन किया जाता है जो चिकित्सा में मार्गदर्शन बनेगा ।

(1) बालकों में वात बलासक ज्वर की प्रभूता, ाल्यावस्था में कफ दोष की अधिकता होती है एवं विकृत फ कफ विकृत रूप में व्यथित रूप में अत: विकृत कफ मार्ग का अवरोधक बनता है । इसी प्रकार मल रोधक कफ बाहर निष्कासित होता है, सभी विषम ज्वर वात प्रधान होते है, अत: वात बलासक ज्वर में मंद ज्वर, स्तब्धता, शरीर में भारीपन, चेष्टाहानि एवं भारीपन होता है ।

(2) वातबलासक ज्वर में जीर्ण अवस्था दुष्परिणाम नित्य मंद ज्वर दीर्घकाल तक रहने के कार जठराग्नि मांद्य का परिणाम रस धातु का मल कफ उत्पत्ति को बढ़ाता है, मलरूप कफ जिस स्थान में आव करता है उस धातु को शिथिलता उत्पन्न करता है विशेष संधि और कंडरा में वायु के गमन के मार्ग का आव करता है उससे आक्षेप Convulsion एवं चेष्टा हानि हो है, अस्थियों में अवसाद होता है (क्रियाहानि) मज्जा हो संधि में शुष्कता से वक्रता आती है, वातबलासक के लक्ष प्राय: बाल पक्षाघात में प्रारंभिक लक्षणों के साथ सा रखता है इसीलिये वात बलासक ज्वर Polio का निदान व्याधि है ।

कभी-कभी ज्वर प्रशम होने के बाद भी धातु की शिथिलता अवशिष्ट रहती है तो खंजता या पङ्गु करती है ऐसा हमारा अवलोकन एवं निष्कर्ष है । अत: व बलासक की चिकित्सा में दीपन, पाचन, अनुलोमन, विरे पथ्य पालन एवं अपथ्य का त्याग हितावह है ।

**आधुनिक चिकित्सा के संदर्भ ग्रंथ :-**


1. An Introduction of the study of Disease - Pag No. 500 William Boys, Sixth Edition, 1971
2. Black's Medical Dictionary, Page. 717.
3. The pengiune Medical Encyclopedia Pet wingate, Penguine Books, London (Englan 1976.
4. Reader's Digest, Family Heath Guide, Lond 1972.
5. The New Home Medical Encyclopedia Vol Page 956 Samuel - Andelman, U.S.A. (197


बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
पेट साफ कर पाचन शक्ति को बढ़ाता है



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अर्कवटी योग निर्माण विधि का प्रायोगिक अध्ययन

*डा० रजनी बाला ** डा० के० शंकर राव *** डा० एल० के० द्विवेदी

## परिचय –

प्रस्तुत विषय मुख्यत: अर्कवटी के निर्माणात्मक प्रक्रिया से सम्बन्धित है । यह औषध निर्माणात्मक कार्य बृहत्त्रयी काल से आरम्भ हुआ ऐसा प्रतीत होता है । आचार्य चरक ने द्रव्यों का औषधि रूप संस्कार करने के लिए प्रयुक्त प्रक्रिया को ही संस्कार माना है । इस परिप्रेक्ष्य में भैषज्यकल्पना का अर्थ द्रव्यों का संग्रहण, संरक्षण, निर्माण एवं सिद्ध औषधि तक लिया जाना उचित होगा ।

## अर्कवटी निर्माण विधि –

समस्त निर्माण प्रक्रिया को दो भागों में विभक्त किया गया है ।

1. घटक द्रव्यों का सामान्य शोधन ।
2. अर्कवटी निर्माण प्रक्रिया ।

### 1. अर्कवटी के घटक द्रव्यों का सामान्य शोधन -

अर्कवटी के घटक द्रव्यों में सौवर्चल लवण, अर्कपुष्प, अर्कपुष्प लवंगिका एवं मरिच का सामान्य शोधन किया गया है । नवसादर का सामान्य शोधन एवं निर्मलीकरण विधि द्वारा विशेष शोधन भी किया गया है । निम्न प्रकार से नवसादर का निर्मलीकरण किया गया है ।

### नवसादर निर्मलीकरण

**1. आवश्यक द्रव्य –**

नवसादर – 1. किग्रा, जल – 3 लीटर

**2. उपकरण**

भगोना, दर्विका, ट्रे, गैस चूल्हा, उलूखल यंत्र, तुला ।

**3. नवसादर निर्मलीकरण विधि –**

सर्वप्रथम एक किलोग्राम नवसादर का तुला से वजन करके चूर्ण किया गया । फिर उसको 3 लीटर जल में घोलकर मोटे एवं साफ वस्त्र से छान लिया गया । तदुपरान्त उसको भगोने में डाला गया। फिर गैस चूल्हे पर चढ़ाकर तीव्राग्नि में पाक किया गया । जब पानी का अवशोषण होकर घोल सूख गया तब चूल्हे से नीचे उतारकर ट्रे में निकालकर फैलाया गया । इस प्रकार नवसादर क निर्मलीकरण किया गया ।

**4. परिणाम**

शुद्धनवसादर का वर्ण = श्वेत
स्वरूप = कण और चूर्णरूप
प्रारम्भिक मात्रा = 1 किग्रा
प्राप्त मात्रा = 970 ग्राम
क्षति = 30 ग्राम
क्षति का कारण = छानने से विजातीय द्रव्य तथ पाक के कारण ।

**5. सावधानियाँ –**

1. नवसादर के मोटे टुकड़ों का चूर्ण बनाकर जल घोलने से शीघ्रता से घुल जाता है ।
2. घोल को साफ वस्त्र से छानकर सुखाया गया है ।

### 2. अर्कवटी योग निर्माण प्रक्रिया

**1. साधन एवं सामग्री**

अर्कवटी योग के निर्माणार्थ निम्नांकित साध सामग्री की आवश्यकता है –

खल्वयंत्र, तुला, छननी, मिक्सी, चूर्ण करने क मशीन, ट्रे, गोली बनाने की मशीन, ग्रेन्यूलर मशीन, सिलवट्ट गैसचूल्हा ।

**2. द्रव्य (Ingredients) –**

1. सौवर्चल लवण
2. नवसादर
3. अर्कपुष्पलवंगिका
4. अर्कपुष्प
5. मरिच

उपरोक्त द्रव्य राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान की रसाय शाला एवं वनौषधि उद्यान से प्राप्त कर उनकी गुणवत्ता च परीक्षणोपरान्त ही प्रयोग में लिया गया है ।

**3. विधि सूत्र –**

अर्कवटी का निर्माण निम्नांकित ग्रन्थों के सन्द

* पी.जी. स्कालर, रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना विभाग, रा.आ.सं., जयपुर
** सह. प्रोफेसर, रसशास्त्र विभाग, रा.आ.सं., जयपुर
*** प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना विभाग, रा.आ.सं., जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



के आधार पर रस शास्त्र विभाग की प्रयोगशाला में किया गया है ।

A. सिद्ध भैषज मणिमाला - चतुर्थ गुच्छ अग्निमांद्य प्रकरण 194

B. भारतीय आयुर्वेद योग संग्रह 67/10:2

**अर्कवटी योग प्रथम का निर्माणात्मक प्रायोगिक विवेचन**

प्रयोग संख्या 1 = अर्कवटी प्रथम निर्माण

आधार ग्रन्थ = सिद्ध भैषज मणिमाला - चतुर्थ गुच्छ, अग्निमांद्य चिकित्सा - 194

**प्रमुख घटक द्रव्य**

1. सौवर्चल लवण = 450 ग्राम
2. नवसादर = 450 ग्राम
3. अर्कपुष्प लवंगिका = 450 ग्राम
4. मरिच = 450 ग्राम

**सहायक द्रव्य -**

गोंद - 90 ग्राम

**उपकरण -**

खल्वयंत्र, मिक्सी, चूर्ण करने की मशीन ट्रे, ग्रेन्यूलर मशीन, वटी निर्माण करने वाली मशीन ।

**निर्माण विधि -**

सर्वप्रथम अर्कवटी के चारों घटक द्रव्यों का अलग-अलग खल्वयंत्र एवं चूर्ण करने वाली मशीन तथा मिक्सी से सूक्ष्म चूर्णकर समान भाग में लेकर उनका मिश्रण किया गया । इसके बाद मिश्रित चूर्ण में 5 प्रतिशत गोंद को 225 मिली. पानी में घोल बनाकर डाला गया । तदुपरांत लुगदी बनाकर उसको धूप में सुखाया गया । फिर दाने बनाने वाली मशीन के द्वारा दाने बनाए गए । फिर वटी बनाने वाली मशीन से 250 मि.ग्रा. की मात्रा में वटियों का निर्माण किया गया ।

**परिणाम -**

सूक्ष्म चूर्ण द्रव्य मात्रा - 1800 ग्राम

निर्मित औषध योग मात्रा - 1755 ग्राम

क्षति = 45 ग्राम

**सावधानियाँ -**

1. सूक्ष्म चूर्ण का मिश्रण करने के बांद नमी (Moisture) से बचाकर रखा गया ।
2. घटक द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण बनाया गया है ।
3. निर्मित औषधयोग को काँच की शीशी में ढक्कन बन्द करके रखा गया ।

**अर्कवटी योग द्वितीय का निर्माणात्मक प्रायोगिक विवे**

प्रयोग संख्या 2 = अर्कवटी द्वितीय निर्माण

आधार ग्रन्थ = भारतीय आयुर्वेद योग संग्रह II,

**प्रमुख घटक द्रव्य -**

1. सौवर्चल लवण = 450 ग्राम
2. नवसादर = 450 ग्राम
3. अर्कपुष्प = 450 ग्राम
4. मरिच = 450 ग्राम

**सहायक द्रव्य**

गोंद = 90 ग्राम

**उपकरण**

खल्व यंत्र, मिक्सी चूर्ण करने की मशीन दाने बनाने वाली मशीन, वटी निर्माण करने वाली मशी

**निर्माण विधि -**

सर्वप्रथम अर्कवटी द्वितीय के सभी घटक द्र सौवर्चल लवण, नवसादर, अर्कपुष्प एवं मरिच अलग-अलग सूक्ष्म चूर्ण को समान मात्रा में लेकर उ मिश्रण किया गया । इसके बाद मिश्रित चूर्ण में 5 प्रति गोंद को 225 मिली. पानी में घोल बनाकर डाला गय तदुपरान्त लुगदी बनाकर उसको सामान्य धूप में सु गया । फिर दाने बनाने वाली मशीन के द्वारा दाने ब गए । फिर वटी बनाने वाली मशीन से 250 मि.ग्रा. की में वटियों का निर्माण किया गया ।

**परिणाम -**

सूक्ष्म चूर्ण द्रव्य मात्रा = 1800 ग्राम

निर्मित औषध योग मात्रा = 1745 ग्राम

क्षति = 55 ग्राम

**सावधानियाँ -**

1. घटक द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण बनाया गया है ।
2. सूक्ष्म चूर्ण को मिलाने के बाद नमी से बचाकर गया है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



3. निर्मित वटियों को वायुरहित पात्र में रखा गया है ।

विशेष –

1. अर्कवटी के निर्माण में घटक द्रव्यों की मात्रा चूर्ण करने के बाद समान भाग में लिया गया है ।
2. अर्कवटी के निर्माण में राजस्थान, जयपुर की परंपरा में अर्कपुष्प कलिका को गीला ही समान भाग में डाला जाता है । लेकिन शोधकर्ता ने अर्कपुष्प एवं अर्कपुष्प कलिका को अर्कवटी में शुष्क अवस्था में समान भाग में लिया है ।
3. 750 ग्राम अर्कपुष्प आर्द्र में से अर्कपुष्पकलिका आर्द्र 250 ग्राम प्राप्त होती है ।
4. अर्कपुष्प एवं अर्कपुष्पकलिका को शुष्क करने के बाद 100 ग्राम को शुष्क करने के बाद 12 ग्राम शेष रह जाता है ।

4. निरीक्षण एवं परिणाम –

1. अर्कवटी निर्माण के पूर्व मरिच चूर्ण कृष्ण श्वेत वर्ण अर्कपुष्प चूर्ण श्वेत गुलाबी वर्ण, नवसादर चूर्ण श्वे वर्ण तथा सौवर्चल लवण कृष्ण वर्ण का दिखाई दिया उपरोक्त सभी द्रव्यों को मिश्रित करने के उपरा श्वेतकृष्ण वर्ण का दिखाई दिया ।
2. प्रयोग क्रम 1 एवं 2 में अर्कपुष्प एवं कलिका क छाया शुष्क करके ही प्रयोग किया गया है । जबकि अर्कवटी प्रयोग क्रम 3 में अर्कपुष्पकलिका आर्द्रावस्थ में प्रयोग किया गया है ।
3. प्रयोग क्रम 1 में 1800 ग्राम चूर्ण में 1755 ग्राम तथ प्रयोग क्रम 2 में 1800 ग्राम चूर्ण में 1745 ग्रा अर्कवटी का निर्माण हुआ ।

अर्कवटी योग निर्माण

| प्रयोग क्रम | प्रारम्भ में घटक द्रव्यों की मात्रा | निर्मित औषधि योग की मात्रा | हानि |
|---|---|---|---|
| 1. | 1800 ग्राम | 1755 ग्राम | 45 ग्राम |
| 2. | 1800 ग्राम | 1745 ग्राम | 55 ग्राम |

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# स्त्री रोगों में उत्तर बस्ति - एक वरदान

*डॉ० माण्डवी गौतम **डॉ० विनोद कुमार गौतम ***प्रो० ओम् प्रकाश उपाध्याय

बस्ति वह प्रक्रिया है जिसमें प्राय: गुद आदि मार्गों स औषधि द्रव्यों को शरीर में प्रविष्ट कराया जाता है ।

उत्तर बस्ति, उत्तर मार्ग अर्थात् मूत्र मार्ग तथा अपथ्यपथ्य से दी जाने के कारण ही बस्ति कहलाती है तथा उत्तम व श्रेष्ठ गुण वाली होने से भी इसे उत्तर बस्ति कहते हैं तथा जो बस्ति मूत्र मार्ग (पुरुषों में मेढ्र तथा स्त्रियों में योनि) से मूत्राशय में पहुँचायी जाती है, वह मूत्राशयगत बस्ति कहलाती है । एक अन्य प्रकार की गर्भाशय गत उत्तर बस्ति होती है जो स्त्रियों में गर्भाशय के दोषों को दूर करने के लिए दी जाती है । इसमें अपथ्यपथ से गर्भाशय में औषध पहुँचायी जाती है ।

बस्ति में प्रयुक्त द्रव्य के आधार पर बस्ति दो प्रकार की होती है -

1. **निरूह बस्ति** - इस बस्ति में औषध के रूप में प्राय: क्वाथ का प्रयोग करते हैं ।
2. **अनुवासन बस्ति** - इस बस्ति में औषध के रूप में स्नेह प्रमुख द्रव्य होता है ।

**उत्तर बस्ति देने का समय -**

स्त्रियों में ऋतुकाल होने पर उत्तर बस्ति दी जाती है क्योंकि ऋतुकाल होने पर गर्भाशय का मुख खुला रहता है, जिसके कारण औषध द्रव्य आसानी से अपने कार्यस्थल पर पहुँच जाता है । उत्तर बस्ति देने हेतु पहले स्त्रियों के योनि मार्ग में 4 अंगुल पुष्य नेत्र अंदर प्रविष्ट कराना चाहिए । 10 वर्ष से छोटी बालिकाओं के मूत्र मार्ग में एक अंगुल नेत्र प्रविष्ट कराना चाहिए ।

**उत्तर बस्ति द्रव्य का प्रमाण -**

आचार्य चरक ने स्नेह की मात्रा अर्द्ध पल (2 तोला) निर्दिष्ट की है । जबकि आचार्य सुश्रुत ने गर्भाशय गत उत्तर बस्ति के लिए स्नेह की मात्रा । प्रसृत तथा क्वाथ की मात्रा 2 प्रसृत बतायी है । गर्भाशय शोधन हेतु यदि स्नेह से भी उत्तर बस्ति देनी हो तो 2 प्रसृत मात्रा देनी चाहिए । 12 वर्ष से नीचे की उम्र की कन्याओं में । प्रसृत मूत्राशयगत बस्ति ही देनी चाहिए ।

**उत्तर बस्ति की श्रेष्ठता -**

आचार्य वाग्भट्ट ने नाभि के अधोभाग में व स्थान माना है तथा वात के लिए बस्ति सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा बतायी है । आचार्य चरक ने चिकित्सा स्थ वर्णित 20 प्रकार के योनि व्यापदों में मुख्य रूप से वायु की विकृति होना माना है । अपान वायु का आर्तव, मल, मूत्र को बाहर निकालना है । योनि व्याप चिकित्सा में विभिन्न प्रकार की उत्तर बस्ति का किया जाता है क्योंकि उत्तर बस्ति द्वारा प्रदत्त औषध शमन के साथ-साथ अपने वीर्य के द्वारा व संस्कार के द्वारा पित्त व कफ दोषों का भी शमन करती है

इसके अतिरिक्त स्त्रियों से संबंधित अनेक में उत्तर बस्ति लाभदायक है । जैसे -

1. योनि में स्थानिक व्रण होने पर ।
2. योनि शोथ में ।
3. योनि से होने वाले वैकारिक स्रावों में
4. योनि भ्रंश व इससे होने वाले विकारों
5. तीव्र योनि शूल में ।
6. योनि व्यापद में ।
7. प्रदर रोग में ।
8. मूत्र सर्वथा रुकने पर ।
9. मूत्र त्याग बूंद-बूंद रूप में होने पर ।
10. मूत्राशयगत विकार में ।
11. गर्भाशयगत विकार में ।
12. बन्ध्यत्व में ।
13. आर्तव दोषयुक्त होने पर ।
14. मासिक चक्र अनियमित होने पर ।

**स्त्रियों हेतु लाभकारी कुछ उत्तर बस्तियों के प्रकार है -**

1. दशमूलादि निरुह बस्ति - सभी प्रकार के विकारों में प्रयुक्त ।

* एम.डी. स्कॉलर, स्नातकोत्तर संहिता विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर
** एम.डी. स्कॉलर, स्नातकोत्तर कायचिकित्सा विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर
*** प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर संहिता विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



2. एरण्डमूलादि निरुह बस्ति - जंघोरूपादत्रिकपृष्ठशूल तथा शूलयुक्त मूत्र शुक्र व अपान वायु की रुकावट को दूर करती है ।
3. द्राक्षादि निरुह बस्ति - पित्तशामक, मूत्रकृच्छ्र, क्षीण व क्षत में ।
4. पंचमूलादि निरुह बस्ति - वातजन्य मूत्राघात बस्ति प्रदेश में होने वाले भयंकर आटोप में लाभकारी ।
5. दशमूलादि अनुवांसन बस्ति - सभी वातिक विकारों में लाभकारी ।
6. जीवन्त्यादि अनुवासन बस्ति - मूत्र व आर्तव स्थित दोषों का नाश करती है ।
7. विडङ्गादि अनुवासन बस्ति - त्रिदोषनाशक एवं नपुंसकता में लाभकारी ।
8. पलाश बस्ति - पार्श्वशूल, आनाह एवं योनिदोष ।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -**


1. चरक संहिता सविमर्श 'विद्योतिनी' हिन्दी व्याख्या (उत्तरार्द्ध) - पं० काशीनाथ शास्त्री एवं डॉ० गोरखनाथ चतुर्वेदी ।
2. सुश्रुत संहिता - 'आयुर्वेदतत्व संदीपिका' हिन्दी व्याख्या (पूर्वार्द्ध), कविराज डॉ० अम्बिकादत्त शास्त्री ।
3. अष्टांग संग्रह सर्वांगसुन्दरी व्याख्या सहित (सूत्र स्थान प्रथम भाग), पं० लाल चन्द्र शास्त्री वैद्य ।
4. आयुर्वेदीय प्रसूति तंत्र एवं स्त्री रोग - द्वितीय भाग, प्रेमवती तिवारी, द्वितीय संस्करण ।



स्त्रियों के लिए कांतिवर्द्धक एवं बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

अशोकारिष्ट

मासिक-धर्म की अनियमितता, कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, भूख न लगना तथा मासिक-धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# द्रव्य परिचय की एक विशेष विधा : इतराह्वा

* डॉ० गोपेश कुमार न. शर्मा ** डॉ० दिनेश कुमार न. शर्मा

आयुर्वेदीय वनस्पति विज्ञान में द्रव्य परिचय हेतु करण व पर्याय कथन एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक दु है । यह हिस्सा आयुर्वेद में विज्ञान एवं साहित्य का भुत मिश्रण है । बाह्यत: भिन्न-भिन्न प्रतीत होने वाले ान एवं साहित्य प्राय: एक दूसरे के श्रेष्ठ पूरक हैं । र्थात् विषय की नीरसता को लालित्यपूर्ण बनाने के लिये हित्य का सदुपयोग किया जाता है । उसी प्रकार साहित्य प्रखर विस्तार एवं वितरण हेतु विज्ञान के विविध साधनों उपयोग किया जाता है । अत: ये दूसरे की कमियों को रने वाले या एक दूसरे के गुण वर्धन वाले होने के कारण गवाही' माने जा सकते हैं ।

द्रव्यों के नामकरण के विविध भेद बताते हुए चार्य कहते हैं

**नामानि क्वचिदिह रुढ़ित: प्रभावाद्**
**देश्योक्त्या, क्वचिदिहलाञ्छनोपमाभ्याम् ।**
**वीर्येण क्वचिदितराह्वयादि देशाद्**
**द्रव्याणामित् सप्दहधोदितानि ।।**

(राजनिघण्टु)

कुछ नाम रुढ़ि से, कुछ उपमा, वीर्य, देशोक्ति स्वभाव, प्राणियों पर प्रभाव, प्रयोग आदि के आधार पर गये हैं । साथ ही कई द्रव्यों के नाम सृष्टि में सुविख्यात द्रव्य या गुण विशेष का उदाहरण देकर उसके सभी पर्याय को ग्रहण करने का विधान बताया है । इसे संज्ञा विशेष गयी है - इतराह्वा अर्थात् आदि या तथा अन्य शब्द ।

यहां कतिपय उदाहरण प्रस्तुत हैं जो प्रसिद्ध द्रव्य एवं उनके पर्यायों के द्वारा जाने पहचाने जाते हैं । इन द्रव्य के नामों को निकट से देखने पर पता चलता है तीन द्रव्य के इतराह्व (पर्याय) सुवर्ण के पर्याय हैं । इससे लोक व्यवहार में स्वर्ण के प्रभाव का पता चलता है ।

पिघले हुए सोने के मनोहारी वर्ण (स्वर्णक्षीरी) सामान्य आकर्षण (नागकेसर) से लेकर; तीव्र लोभ जगा की क्षमता वाले, पुण्य-पाप या हित-अनहित के भेद समाप्त कर जुनून या नशा या मनो विकार तक उत्पन्न कर की क्षमता वाले (धतूर) के गुणों का चित्ताकर्षक वर्ण मिलता है ।

| क्र. | द्रव्यनाम | वानस्पतिक नाम | वर्ग | पर्याय | इतराह्वा |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | चित्रक | Plumbago zeylanica | Plumbaginaceae | चित्रक, पाठी व्याल ऊषण | **अनलनामा:** पावक, ज्वलन, वह्नि दहन, हुताशन, वैश्वानर, कृशानु: हुतवर: हव्यवाहन:, विभावसु, शुक्र उषर्बुध, चित्रभानु आदि । |
| 2. | शतपुष्पा | Anethum sowa | Umbelliferae | शतपुष्प कारवी, संहितछत्रिका अति लम्बी, सितच्छत्रा । | **शताह्वा**-सौ (100) के पर्याय । |
| 3. | कुटज एवं इन्द्रयव | Holorrhena antibody senterica | Apocynaceae | वृक्ष-कुट, कूटज, कौट, गिरिमल्लिका, शक्रशाखी, मलिकापुष्पा वत्सक, कुटजबीज, इन्द्रयव, कलिंग, | **इन्द्राह्वा :** देवराज, पुरन्दर, शक्र, वज्रिन्, वृत्रहा, पाकशासन, सुरपति शचीपति, आखंडल, सहस्त्राक्ष, नाकनाथ, वज्रपार्ण, मरुत्वान्, मघव शतमन्यु, जम्भभेदी, मेघवाहन, |

* द्रव्यगुण विज्ञान विभाग, दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज, जालन्धर (पंजाब)
** एस.एस. आयुर्वेदिक कालेज, मैसूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र. | द्रव्यनाम | वानस्पतिक नाम | वर्ग | पर्याय | इतराह्वा |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | | लिंगका, भद्रयव | वृद्धश्रवा, गात्रभिद्, सुत्रामा, संक्रन्दन आदि |
| 4. | तेजवती | Zanthoxylum alatum | Rutaceae | तेजस्विनी, तेजवती, तेजबल, तेजवल्कल | **तेजोह्वा** : तेज, तीक्ष्ण, तीव्र, निशात, निशित, उग्र प्रचण्ड, क्षिप्रकर्मन्, सूक्ष्म, **कुशाग्र, प्रखर**, सूच्यग्र, तीक्ष्णधार, शितधार, **आशु अवन**, शीघ्रगामिन्, महावेग आदि । |
| 5. | कुष्ठ | Saussurea lappa | Compositae | कुष्ठ,त्वाप्य,पारिभाव्य, कूठ, उत्पल | **रोगाह्वा** : रोग, रूजा, व्याधि, गद, आमय, उपताप, **मृत्युभृत्य** विकार, दुःख, आबाध आदि । |
| 6. | स्वर्णक्षीरी | Argemone mexicana | Papaveraceae | कटुपर्णी, हेमक्षीरी हिमावती, पीतदुग्धा | **हेमाह्वा** : कांचन, हेम, तपनीय, शातकुंभ, चामीकर, जातरूप, महारजत । |
| 7. | नागकेशर | Mesua ferrea | Guttiferae | नागपुष्प, नागकेशर चामोय, नामकिंजल्क | **काञ्चनाह्वा** : रुक्म, द्रविण, लोहवर, कलधौत, कर्बुर, जांबूनद, भास्कर, दीप्त, मनोहर । |
| 8. | धतूर | Dhatura metel | Solanaceae | धुत्तूर, उन्मत्त, कितव, तूरी, मातूल, शिवप्रिय महामोही, धूर्त्त | **कनकाह्वा** : कनक, सुवर्ण, स्वर्ण, हाटक, हिरण्य, अग्निशिख, निष्क, मंगल्य आदि । |
| 9. | कर्कटश्रृंगी | Pistacia integerima | Anacardiaceae | श्रृंगी, कुलीर, विषाणिका अजश्रृंगी, चक्रा । | **कर्कटाख्या** – कर्कट, कुलीर । |
| 10. | हरिद्रा | Curcuma longa | Zingiberaceae | काञ्चनी, पीता वरवर्णिनी कृमिघ्नी, योषित्प्रिया, हट्टविलासिनी | **निशाख्या**: रात्री,रात्रि, शर्वरी, शार्वरी त्रियामा, क्षणदा, क्षपा, विभावरी, रजनी, यामिनी, तमी, तमस्विनी, श्यामा, घोरा, नक्त, दोषा, निशीथिनी |
| 11. | कर्पूर | Camphora | | सिताभ्र, हिमवालुक घनसार | **चन्द्रसंज्ञ**:सोम, शशांक, शशि, विधु:, रजनीकर, रजनीनाथ, रजनीपति, निशानाथ, शर्वरीपति, मृगांक, कलानिधि:, हिमाशु, शीतांशु, सुधांशु, शुभ्रांशु, इंदु, शशधर, चंद्रमस् |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र. | द्रव्यनाम | वानस्पतिक नाम | वर्ग | पर्याय | इतराह्वा |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | क्षपानाथ आदि । **हिमनाम:** हिम, शीत, सुधा, शुभ्र, खवाष्प, आकाशवाष्प, अवश्याय, तुषार, नीहार, प्रालेप, मिहिका, रजनीजल, इन्द्राग्निधूम, कुज्झटिका तुहिन, घनवारि आदि । |
| 2. | पद्मक | Prunus puddum | Rosaceae | पद्मक, पद्मगंधि पद्माख | **पद्माह्वा:** सरोज, पुण्डरीक, अब्ज, अंबुज अंभोज, अरविंद, कंज, नल, नलिन, पंकज, पंकेरूह, शतपत्र, सहस्रपत्र, सरसिज, सरोरुह, सारस, राजीव, कमल, कुशेशय, पुष्कर आदि । |
| 3. | शिलारस | Liquidamber orintalis | Hamameli daceae | तरुष्क, सिल्हक, कपितैल | **कपिनामा:** वानर, मर्कट, वलिमुख शाखामृग, प्लवंग, कीश, वनौक, प्लवग आदि । |
| 14. | लवंग | Syzygium aromaticum | Myrtaceae | लवंग, देवकुसुम श्रीप्रसूनक | **श्रीसंज्ञ:** (लक्ष्मीवाचक) श्री, कामल पद्मा, पद्मालया, इंदिरा, हरिप्रिया, हरिवल्लभा, मा, रमा, क्षीराब्धितनय भार्गवी, लोकमातृ आदि । |
| 15. | पत्र | Cinnamomum tamala | Lauraceae | तमालपत्र, पत्र, पत्रक | **पत्रनामक:** पर्ण, छदन, पलाश, दल, छद । |
| 16. | केसर | Crocus sativus | Iridaceae | कुंकुम, काश्मीर, रक्त धीर पिशुन, पीतक, धुसृण, संकोच | **शोणिताभिधम् :** शोणित, रुधिर, लोहित, असृज, रोहित, अस्त्र, क्षतज आदि । |
| 17. | बाल (सुगंधवाला) | Pavonia odorata | Malvaceae | हीबेर, उदीच्य, बर्हिष्ठ, बालक | **केशनाम :** केश, बाल, कच, कुन्तल, चिकुर, शिरोरुह, शिरसिज मूर्द्धज, वृजिन आदि । **अम्बुनाम :** अंबु, पानीय, आप, अंभवारि, उदक, जल, सलिल, अमृत, जीवन, नीर, घनरस, पयस मेघपुष्प, अर्ण आदि । |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र. | द्रव्यनाम | वानस्पतिक नाम | वर्ग | पर्याय | इतराह्वा |
|---|---|---|---|---|---|
| 18. | मुस्तक | Cyperus rotundus | Cyperaceae | मुस्त, कुरुविंद | **वारिदनामा :** (मेघवाची) वारिद, घन, जलद, जीमूत, वारिवाह, मेघ अब्द, कंधर, अभ्र, जलमुच्, पयोमुक् धाराधर, धूमयोनि, नभोगज, बलाहक वातरथ, स्तनयित्नुः,व्योमधूम आदि |
| 19. | प्रियंगु | Callicarpa macrophylla | Verbenaceae | फलिनी, लता, कान्ता गुन्द्रा, विष्वक्सेनांगना, प्रिया । | **महिलाह्वा :** महिला, रामा, नारी, स्त्री, प्रमदा, वामा, ललना, वनिता, सुंदरी, रमणी, मानिनी, योषा आदि |
| 20. | जीवन्ती | Leptadenia reticulata | Asclepidaceae | जीवा, जीवनी, जीवनीया मधुस्रवा, शाकश्रेष्ठ पयस्विनी | **मांगल्यनामधेया** (मंगलवाचक सर्भ नाम)मंगल श्रेयस, कल्याण, कुशल भद्र, हित, क्षेम, भव्य, शस्त, प्रशस्त अरिष्ट, शिव, मद्र, शुभ आदि । |
| 21. | रक्तार्क | Calotropis Procera | Asclepdaceae | विकिरण, रक्तपुष्प, आस्फोट, अर्कपर्ण | **अर्कनामा (सूर्य):** सूरः, आदित्य, भास्कर, विवस्वत, दिवामणि, दिनकर, विभाकर, दिवाकर,भास्वत् उष्णकर, चंडकर, खमणि, रश्मिकर तिग्मकर, मार्तण्ड, मिहिर, तरणि, मित्र, सवितृ, अंशुमाली, पतंग, ग्रहराज, मरीचिमाली, सहस्रांशु, रवि, दिनपति, अहपति, पद्मिनी-वल्लभ, दिनमणि, तमोनुद, करः तिग्मरश्मि, चण्डरश्मि, तपन आदि । |
| 22. | पर्पट | Fumaria indica | Fumariaceae | वरतिक्त, पर्पटक | **पांशुपर्याय :** धूलि, रजस्, पाशु, पांसु, रेणु, क्षोद, क्षितिकण, महीद्रव वातकेतु, नभकेतु, चूर्ण आदि । **कवचनामक :** कंचुक, सन्नाह, वमन, तनुवार, तनुत्राण, तनुत्र उरच्छदं आदि । |
| 23. | अश्वगंधा | Withania somnifera | Solanaceae | वराटकर्णी वरदा, बलदा कुष्ठगंधिनी | **वाजिनामा (+गंध):** वाजिगंधा, घोटकगंधा, तुरगगंधा, हयगंधा, वाहगंधा, अर्वगंधा, तुरंगगंधा, आदि । |



CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection, Ujjain

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र. | द्रव्यनाम | वानस्पतिक नाम | वर्ग | पर्याय | इतराह्वा |
|---|---|---|---|---|---|
| 4. | मुण्डी | Sphaeranthus indicus | Compositae | मुण्डी, भिक्षु, श्रावणी, तपोधना, मुण्डतिका, श्रवणशीर्षका | **श्रवणाह्वा (श्रमण) :** परिव्राज, परिव्राजक: वज्रक, संन्यासिन्, मस्करिन्, पराशरिन् आदि । |
| 5. | काकमाची | Solanum nigrum | Solanaceae | ध्वाङ्क्षमाची, वायसी | **काकाह्वा :** वायस, ध्वांक्ष, मौकुलि एकाक्ष, उलूकारि, आत्मघोष, बलिपुष्ट, बलिभुक्, करंट, परभृ चिरञ्जीवी, अरिष्ट, एकदृष्टि आदि |
| 6. | शंखपुष्पी | convolvulus pluricaulis | Convolvulaceae | मंगल्यकुसुमा | **शंखाह्व :** शंख, कंबु, कंबोज, अर्णोभव, सुनाद, पावनध्वनि, अं कुटिल, महानाद, बहुनाद, दीर्घनाद मुखर:, हरिप्रिय आदि । |
| 27. | मयूरशिखा | Actinopteris dichotoma | Polypodiaceae | सहस्रादि, मधुच्छदा | **मयूराह्वा(+शिखा):** नीलकंठ शिखा, बर्हिण, भुजंगभुक्, कलापि केकिन्, चित्रपिच्छक, चित्रपत्रक, भुजंगारि, मेघनाद, मेघानंदिन्, शिखंडिन, शिखावल, वर्णमद, प्रचलाकिन । |
| 28. | अर्जुन | Terminalia | Combretaceae | नदीसर्ज, इन्द्रदु, वीरवृक्ष | **अर्जुननामा:** अर्जुन, गाण्डीवी, पा धनंजय, कर्णारि, कपिध्वज, गुडा शुक्ल, शुभ, शुचि, श्वेत, गौर अवदात, सित, विशद, श्वेत आ |

बैद्यनाथ
मूर्च्छा, भय, घबराहट, अनिद्रा,
अश्वगंधारिष्ट
मंदाग्नि आदि में लाभकारी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# वनौषधियों का तुलनात्मक अध्ययन : शोध का एक नया पहलू

*डा० सुधांशु कुमार जैन, पी.एच.

वनौषधियों पर शोध प्राय: निम्न विधियों से होता है ।

1. ग्रन्थों के आधार पर किसी रोग विशेष की चर्चा में वर्णित एक या अधिक द्रव्यों से औषधि बनाकर रोगियों को देना । लाभ होने की स्थिति में इस औषधि को और अधिक प्रयोग में लाना ।
2. द्रव्यों के गुणों पर खोज करके नये खोजे हुए उपयोगी पदार्थों का प्रयोग करना ।
3. जिन द्रव्यों को प्राप्त करने में कठिनाई हो, उनके मिलते-जुलते द्रव्य जैसे उस ही वंश की कोई अन्य जाति प्रयोग करके लाभ-हानि का अध्ययन करना ।

शोध की वर्तमान विधियों के अनुसार निम्न-प्रकार के परीक्षण किये जाते हैं :-

1. पौधे के भिन्न अंगों का रासायनिक विश्लेषण ।
2. पाये गए रसायनों में यदि वर्णित गुण वाला कोई रासायनिक पदार्थ मिलता है तो पहले उसका जन्तुओं (जैसे चूहों, खरगोश आदि) पर परीक्षण करना ।
3. सफलता मिलने पर और अधिक जन्तुओं पर परीक्षण करना तथा ये निर्धारित करना कि द्रव्य कितनी मात्रा में देना उपयुक्त है तथा कितना अधिक देने पर हानिकारक अथवा विषैला हो सकता है ।

यह सब सफलतापूर्वक पार करने के उपरान्त यह द्रव्य सीमित मात्रा में मनुष्यों पर प्रयोग होता है ।

भिन्न चिकित्सकों के अध्ययन के आधार पर यह द्रव्य बाहुल्य में प्रयोग में आने लगता है । ऐसे विधिवत परीक्षणों आदि के अतिरिक्त मौखिक परम्पराओं के द्वारा भी बहुत-सा औषधि ज्ञान संसार के विभिन्न क्षेत्रों में युगों-युगों से प्रचलित है तथा नये अनुभवों के आधार पर इसमें नया ज्ञान भी जुड़ता रहता है ।

अनेक बार भिन्न व्यक्तियों का अनुभव भिन्न होता है विशेषकर दूर स्थित क्षेत्रों या देशों में रहने वालों के अनुभव भिन्न जलवायु तथा परिस्थितियों के कारण भि होते हैं ।

यहाँ यह उल्लेख करना उपयोगी है कि स संसार में एक जैसी ही वनस्पति विविधता नहीं मिलती -पौधों की कौन-सी जातियाँ कहाँ उगती हैं यह उस स्थ की भौगोलिक परिस्थिति, जलवायु, भूमि आदि पर नि करता है, प्राय: ही समान जलवायु वाले क्षेत्रों में एक उ या मिलती जुलती वनस्पतियाँ उगने की संभावना अधि होती है ।

जलवायु तथा वन-संपत्ति के आधार पर संसार विभिन्न देशों को कई क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है तटवर्ती क्षेत्रों की, पर्वतीय क्षेत्रों की, मरूस्थलों की त ऐसे विशेष जलवायु वाले क्षेत्रों की वनसम्पत्ति भिन्न होती है, किन्तु बहुत हद तक एक पर्वतीय क्षेत्र वनस्पति दूसरे पर्वतीय क्षेत्रों से कुछ मिलती जुलती सकती है । यही बात मरूस्थलों और तटीय तथा अ विशेष जलवायु के क्षेत्रों पर भी लागू होती है ।

चीन में आज भी पश्चिमी औषधि (एलोपैथ के साथ पारम्परिक औषधियां प्रयोग में आती हैं, मौखि परम्परा में जिन औषधियों का प्रयोग बताया जाता है, च में उनपर केवल दो प्रकार के परीक्षण किये जाते हैं ।

1. पहले यह परीक्षण होता है कि औषधियों कोई विषैला पदार्थ तो नहीं है । यदि औषधि का क हानिकारक प्रभाव मनुष्यों पर नहीं होता है तो वह औष अस्पतालों में रोगियों को दी जाती है ।

2. यदि रोगियों पर लाभदायक सिद्ध होती है इस औषधि को सरकारी मान्यता भी दे दी जाती है, कि साथ-साथ प्रयोगशालाओं में नये-नये प्रकार के परीक्षण जै भैषज विज्ञान (फारमेकोगनोसी) रासायनिक विश्लेषण जन्तु पर परीक्षण आदि पूर्ण खोज भी की जाती है । पहले सीक्षे में यह देखते हैं कि पौधों के औषधीय गुण उनके किन अ

* ए-26, गाल एनेक्स कालोनी, लखनऊ-226001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



था किस रूप में पाए जाते हैं । प्रत्येक जीव-जन्तु की
त पौधों पर शरीर अनेक छोटे-बड़े तथा विभिन्न आकार
रूप के कोष्टकों का बना होता है । सभी कोष्टकों में
ु तरल तथा अन्य पदार्थ रहते हैं । कुछ कोष्टकों में
ायनिक पदार्थ जैसे एलकेलोइड, वाष्पशील तेल,
बोहाड्रेट, वसा तथा टैनिन होते हैं । इनमें से कुछ पदार्थों
भिन्न रोगों की रोकथाम या निवारण का गुण होता है ।
पदार्थ पौधों के विभिन्न अंगों में जैसे मूलस्तंभ, शाखाऐं,
फूल, फल तथा बीज सभी में कम या अधिक मात्रा
हो सकते हैं । भेषज विज्ञान द्वारा अध्ययन करके
ानिक यह देख लेते हैं कि किस अंग में कौन-से
ायनिक विद्यमान हैं ।

ऊपर वर्णित परीक्षणों तथा खोज में प्राय: कई वर्ष
लम्बा समय लग सकता है । अत: वैज्ञानिक औषधियों
नए स्रोत ढूँढने के लिये तथा उपयोगी गुणों के लिए
तमात्र हेतु सुगम विधि ढूढने की चेष्टा करते रहते हैं ।

यहाँ पर यह उल्लेख करना उपयोगी है कि
दिवासी आवश्यकतानुसार आस-पास पाई जाने वाली
स्पतियों में से निरन्तर अपने लिये उपयोगी जातियों को
ने की चेष्टा करते रहते हैं ।

यह सर्वज्ञात है कि पक्षियों और जन्तुओं में
कृतिक रूप से यह बोध होता है अथवा उन्हें अपने अच्छे
अनुभव के आधार पर केवल चुने हुए पौधों (या
तुओं) से ही अपना भोजन प्राप्त करना होता है तथा वे
स्वस्थ होने की दशा में उपयोगी पौधों या अन्य पदार्थों का
कुछ ज्ञान रखते हैं । वन्य जातियाँ ऐसे जन्तुओं को
करके यह प्रारम्भिक संकेत लेती हैं कि अमुक पौधा
के किसी रोग विशेष में उपयोगी हो सकता है ।

संसार के भिन्न देशों या क्षेत्रों के शोधकर्ता वन्य
तियों के रोगों, उपचार वाली वनस्पतियों का अध्ययन
के इस विषय पर पुस्तकें तथा शोध पत्र छापते रहते हैं ।

**नात्मक अध्ययन**

पौधों की अनेक जातियों का विवरण क्षेत्र या
देश में सीमित न होकर कई देशों में फैला होता है
विशेषकर जिन देशों की भौगोलिक स्थिति तथा जलवा
समान हो ।

पौधे की एक ही जाति को भारत के भिन्न-भि
प्रान्तों और क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी भिन्न प्रकार
प्रयोग करते हैं ।

इस तथ्य का और विस्तार करते हैं । ऐसे पौ
का जो भारत में तो उगते ही हैं किन्तु दूर स्थित क्षेत्रों में
उगते हैं । यदि उनके भारत तथा उस क्षेत्र में भिन्न प्रयो
का उल्लेख मिले तो भारतीय शोधकर्ताओं को एक न
उपयोग का संकेत मिल जाता है अर्थात् आवश्यक परीक्ष
के बाद किसी पौधे के एक रोग में प्रयोग होने के सा
किसी भिन्न रोग में प्रयोग होने का संकेत मिल जाता है

इसके लिये उदाहरण आगे दिये हैं ।

पिछले कुछ वर्षों में लेखक तथा उसके सहकर्मि
ने भारत की लोक वन औषधियों में प्रयुक्त पौधों के उपयो
की तुलना तिब्बत, चीन, वेस्टइंडीज, अफ्रीका तथा हिन्
महासागर में स्थित द्वीपों आदि की लोक वन औषधियों
की । फलस्वरूप बीसियों पौधों के ऐसे उपयोगों पर सूच
मिली जो कदाचित भारत में ज्ञात नहीं थे अर्थात् ऐसे पौ
में औषधियों के नए स्रोत मिलने की सम्भावना प्रकट हुई

विदेशों से तुलना के कुछ उदाहरण

**गोखरू (ट्रीबुलुस टेर्रेस्ट्रिस)**

यह भूमि पर फैलता छोटी पत्ती, पीले फू
कटीले नुकीले फल वाला घन का रोमिल पौधा होता है
सारे भारत में सूखे खेतों, मैदानों तथा मार्गों के किन
मिलता है ।

भारत की जनजातियाँ इसे यकृत विकार में
हैं ।

चीन में इसके फल यकृत विकार में,
गर्भपात हेतु, फूल श्वेत कुष्ठ में तथा शाखाएं त्वचा रोग



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रयोग करते हैं ।

**चंदन (सांटालुम आल्बुम)**

यह सुपरिचित सुगन्धित काष्ठ वाला वृक्ष है । भारत में इसका तेल त्वचा रोग में प्रयोग होता है । चीन में बीज का तेल हृदय रोग की एक प्रमुख औषधि में प्रयोग होता है ।

**चौलाई (कांटे वाली "अमारांथुस स्पीनोसुस")**

यह रामदाना वंश का जंगली कटीला पौधा प्राय: भाजी और औषधि के काम आता है । लगभग सभी प्रांतों में व्यर्थ जगह पर उगता है ।

भारत में मूल सहित समूचा पौधा उखाड़ कर प्रयोग करते हैं ।

चीन में केवल भूमि के ऊपर का भाग तोड़ कर प्रयोग करते हैं । इस प्रकार मूल से नया पौधा फिर निकल आता है और पूरा पौधा नष्ट नहीं होता है ।

**रीठा (सैपिंडुस लॉरीफोलियस)**

यह रीठे जैसा एक वृक्ष है । भारत की जनजातियां इसे कृमि रोग में प्रयोग करती है किन्तु भारतीय महासागर के दीपों की जनजातियां इसे वमनकारी तथा वात रोग में भी प्रयोग करती हैं ।

उक्त लेख तथा उदाहरणों का आशय यही है कि जिन वैद्यों, विद्यार्थियों तथा शोधकर्ताओं को पुस्तकालय की सुविधा उपलब्ध है या थोड़े से प्रयास से हो सकती है । वे इस प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन करके द्रव्यों की नयी उपयोगिता की संभावना खोजने की चेष्टा करें ।


शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# बर्डफ्लू (Bird Flu) एवं बर्ड ब्रिडर लंग्स (Bird Breeder Lungs) के सन्दर्भ में आयुर्वेदीय रोगी परीक्षा एवं चिकित्सा

वैद्य राम किशोर जोशी, एम.डी.(आयु.), पीएच.डी. (

**Abstract**

प्रस्तुत लेख में आधुनिक युग में ज्वलन्त रूप से फैले हुए नवीनतम् रोग Bird Flu & Bird Breeder Lungs के बारे में आम जन तक जानकारी पहुँचाना तथा इस जटिलतम् व्याधि का आयुर्वेद मतानुसार कौन से-कौन से योग चिकित्सा में कारगर सिद्ध हो सकते हैं यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है । आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में रोगी परीक्षा का विशिष्ट महत्व है । बिना रोगी की परीक्षा के कोई भी रोग की चिकित्सा सफल नहीं हो सकती इसलिए इस लेख में रोगी परीक्षा के महत्त्वपूर्ण पहलुओं को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है तथा बर्ड फ्लू व्याधि का सामान्यतया आयुर्वेदोक्त प्राणवह स्रोतोदुष्टि जन्य लक्षणों से किया जा सकता है । रोगी की परीक्षा का सांगोपाँग विवेचन सभी आयुर्वेद संहिताओं में मिलता है, लेकिन इस लेख में जो व्यावहारिक रूप से रोग निदान में आवश्यक परीक्षा दर्शन, स्पर्शन, श्रवण परीक्षा का ही विवेचन किया गया है ।

किसी भी रोग की चिकित्या करने से पूर्व रोगी परीक्षा का महत्व विशेष रूप से होता है । रोगी की परीक्षा किये बिना रोगों की चिकित्सा सम्भव नहीं है । आचार्य चरक ने-

**"त्रिविधं खलु रोग विशेष विज्ञानं भवति ।**
**अथवा-आप्तोदेश प्रत्यक्ष अनुमानेन चेति"**

(च०वि० 5/31)

अर्थात् रोगों की परीक्षा -

1. आप्तोपदेश द्वारा
2. प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा
3. अनुमान प्रमाण द्वारा की जाती है ।

**1) आप्तोपदेश प्रमाण द्वारा** - आप्त पुरुषों द्वारा कहे गये वचनों को आप्तोपदेश कहते हैं, जिनका ज्ञान राग, द्वेष अहंकार आदि से रहित होता है जिनमें सत्व गुण की प्रधानता है, जो भूत, भविष्य एवं वर्तमान में होने वाले ज्ञान के ज्ञाता होते हैं, उन्हें आप्त पुरुष समझना चाहिए प्रकार चरक, सुश्रुत आदि आचार्यों के वाक्य भी आप्त है । इसी प्रकार आधुनिक काल में जो व्यक्ति भिन्न विषयों पर अनुसंधान करते हैं उन विषयों पर कहे गये वचन भी आप्त समझना चाहिए ।

रोगी की परीक्षा करते समय आप्तोपदेश चिकित्सक का सर्वप्रथम सहायक होता है उसके पश्चात् प्रत्यक्ष परीक्षा या अनुमान परीक्षा की जा सकती है ।

बर्ड फ्लू रोग के सम्बन्ध में आधुनिक चिकि विशेषज्ञों द्वारा प्रतिपादित वर्णन आप्तोपदेश के रूप में माना जाता है ।

**2) प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा रोगी परीक्षा** - प्रमाण द्वारा रोगी की दो प्रकार से परीक्षा की जाती (1) बाह्य प्रत्यक्ष अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप आदि इन्द्रि विषयों का प्रत्यक्ष होना बाह्य प्रत्यक्ष एवं (2) मानस में सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष आदि जिनका अनुभव मन किया जाता है उसे मानस प्रत्यक्ष कहते हैं, बिना प्रमाण के रोगी की चिकित्सा वर्तमान समय में सम्भव नहीं है । अनेक व्याधि यथा कुष्ठ, पाण्डु, बिना प्रत्यक्ष प्रमाण के चिकित्सा सम्भव नहीं हैं ।

**3) दर्शन परीक्षा** - आचार्यों ने- **चक्षुरिन्द्रिय विज्ञेया: शरीरोपचयापचयर्आयु लक्षणं विकारादय: ।** (च०

अर्थात् शरीर का उपचय एवं अपचय, स्नेह, शरीर का वर्ण तथा शरीर का प्रमाण एवं शक्ति कान्ति या छाया तथा पुरीष मल, मूत्र, रक्त, स्वेदन भावों की विकृति का दर्शन भी प्रत्यक्ष परीक्षा का है ।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में प्रतिपादित फ्लू (Bird Flu) या बर्ड ब्रिडर लंग्स (Bird Breeder Lungs) में भी दर्शन परीक्षा का विशेष महत्व है ।

**4) स्पर्शन परीक्षा** (Palpitation)-

सहायक प्रोफेसर, काय चिकित्सा विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर आर.एम.ओ. आरोग्यशाला,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सुश्रुत ने -

स्पर्शनेन्द्रिय विज्ञेयाः शीतोष्ण कर्कश मृदु कठिनत्वादयः स्पर्शविशेषःज्वरशोषादिषु (सु०सू० 10)

अर्थात् शरीर की शीतलता या उष्णता, गुरुता या लघुता, श्लक्षणता या खरता, मृदुता या कठोरता, अवन्नतता या उन्नता, सशूलता या निःशूलता, घनता या द्रवता आदि भाव स्पर्शन प्रमाण द्वारा रोगी में जाने जाते हैं ।

Bird Flu & Bird breeder Lungs एक संक्रामक व्याधि है, जिसका हेतु Chlamydia psittaci माना जाता है जोकि Parrots, Pigeon एवं Polutary Farms मुर्गियों के द्वारा फैलता है । इस व्याधि का प्रसारण पक्षी के विट् मांस तथा उनके संसर्ग में रहने से मनुष्यों में होता है ।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार शरीर पर तापक्रम देखने के लिए थर्मामीटर का प्रयोग किया जाता है वह भी स्पर्श परीक्षा ही है । इस प्रकार स्पर्श परीक्षा के अन्तर्गत में नाड़ी परीक्षा का समावेश करना चाहिए ।

5) **श्रवण परीक्षा** (Asculation Examination) - शरीर में उत्पन्न होने वाले प्राकृत और अप्राकृत शब्दों का ज्ञान श्रवण परीक्षा द्वारा जाना जाता है । कुछ शब्द ऐसे हैं जिन्हें श्रवण यंत्र के माध्यम से ही जाना जा सकता है । यथा आंत्र कूजन, सन्धिस्फुटन, हृदयगत मर्म ध्वनि, फुफ्फुस के प्राकृत एवं विकृत स्वर विशेष ।

6) घ्राण परीक्षा - घ्राण परीक्षा द्वारा शरीर में उत्पन्न होने वाले सर्व प्रकार की प्राकृत एवं विकृत गन्धों का ज्ञान किया जाता है । अनेक वैकारिक अवस्थाओं तथा अरिष्ट लक्षणों में विशेष प्रकार की गन्ध शरीर से आने लगती है उन सबका ज्ञान इसी परीक्षा से किया जाता है -

* मूत्र की प्राकृत एवं अप्राकृत गन्ध
* पुरीष की प्राकृत एवं अप्राकृत गन्ध
* स्वेद की प्राकृत एवं अप्राकृत गन्ध
* श्वास द्वारा उत्पन्न अप्राकृत गन्ध
* शरीर से निसृत होने वाली वमन तथा ष्ठीवन की गन्ध ।

7) **अनुमान प्रमाण परीक्षा** - आचार्य चरक के "अनुमान खलु तर्कोयुक्त्यपेक्षः" (च०वि० 4/4) अर्थात् युक्ति पूर्वक परोक्ष पदार्थ का जो ज्ञान होता है उसे अनुमान कहते हैं । आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान में बाह्य लक्षण या चिन्हों को देखकर आभ्यान्तर अवयवों में होने वाले दोष-दूष्य सम्मूर्च्छनाजन्य विकृति का ज्ञान होता है । निम्न अनुमान गम्य भावों से निम्न स्थिति एवं शरीर की क्रियाओं का ज्ञान होता है -

* पाचन शक्ति के द्वारा - अग्नि बल की सम, विषम आदि का ज्ञान ।
* व्यायाम करने की शक्ति द्वारा - शारीरिक बल का ज्ञान ।
* विषय ग्रहण से - मन का ज्ञान ।
* आसक्ति से - रजोगुण का ज्ञान ।
* अविज्ञान से - मोह का ज्ञान ।
* पर पीड़ार्थक प्रवृत्ति से - क्रोध का ज्ञान ।
* दैन्य सूचक रोदनादि से - शोक का ज्ञान ।
* नृत्य गायन से - हर्ष का ज्ञान ।

इस प्रकार रोगी परीक्षा द्वारा बर्ड फ्लू या बर्ड ब्रिडर लंग्स नामक व्याधि का ज्ञान भी कर सकते हैं -

इस व्याधि का आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में विस्तृत रूप से वर्णन मिलता है Chlamydial genus की तीन जातियाँ (species) होती है -

1) Chlamydial Psittaci
2) Chlamydial Trachomatis
3) Chlamydia Pneumonia

इन तीन जातियों में से यह रोग Chlamydial Psittaci द्वारा उत्पन्न होता हैं ।

1) Chlamydial Psittaci -

Chlamydial Psittaci is widely distributed in nature producing genital, Conjuctival, Instestinal or Respiratory Infections in many mammalian and Avian species (Harison 5, Textbook Ed. 13th Pg.759).

उपरोक्त वर्णन को हम आप्तोपदेश प्रमाण के रूप में मान सकते हैं । Chlamydial Psittaci से उत्पन्न व्याधि का संक्रमण काल 5-10 दिन का होता हैं यह उन लोगों में विशेष होता है जो मुर्गी पालन व्यवसाय करते हैं तथा जो पक्षी पालते हैं । इस व्याधि के प्रमुख लक्षण निम्न प्रकार से हैं -



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



1. अरति, बेचैनी, Malaise होना ।
2. ज्वर होना - Fever ।
3. ग्रसमिका शोथ - Pharyngisic ।
4. यकृत्प्लीहा वृद्धि- Hepatosleenomegaly।
5. लसिका ग्रन्थि शोथ - Adenopathy ।

उचित चिकित्सा न करने पर यह व्याधि अत्यधिक उग्र रूप भी ले सकती है तथा मारक के रूप में मिलती है ।

**2) Chlamydial Pneumoniae -**

इस व्याधि का महत्वपूर्ण प्रसारण माध्यम मनुष्य से मनुष्य में होता है । व्याधि ग्रसित श्वास प्रश्वास के माध्यम से दूसरे व्यक्तियों में फैलता है । लेकिन स्पष्ट कारण अभी तक सिद्ध नहीं हो पाया है । इस व्याधि के प्रमुख लक्षण निम्न प्रकार से मिलते हैं -

1. श्वास कष्ट - Dysponoea
2. न्यूमोनिया - Pneumonia
3. प्रतिश्याय - Sinusitis
4. वक्षशूल - Chest pain

में व्याधि प्राय: 20 वर्ष से कम आयु वाले व्यक्ति में विशेष होती है तथा -

**3) Chlamydial Trachomatis -**

इस जाति से उत्पन्न होने वाली व्याधि उपर्युक्त वर्णित दोनों से अधिक तीव्र लक्षण वाली होती है । इस व्याधि में संक्रमण का माध्यम Sexual Activities माना है, इस व्याधि से प्रतिवर्ष 3 मिलियन रोगी नवीन संक्रमित होते हैं । यदि गर्भवती महिला को यह रोग है तो उसके बच्चे में भी यह संक्रमण हो सकता है । इस व्याधि के प्रमुख लक्षणों में -

1. मूत्राशय शोथ- Urethritis 30-50% रोगियों में मिलता है ।
2. नेत्रश्लेष्मा शोथ - Conjuctivitis ।
3. सकष्ट मूत्र प्रवृत्ति - Painful urination or frequently urination ।
4. नेत्रकला शोथ - Trachoma पोथकी ।
5. लसिका ग्रन्थि शोथ - Lymphogranuloma।

**चिकित्सा** - आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान में इ रोग का वर्णन नहीं मिलता है लेकिन सामान्यत: लक्षणों आधार पर चिकित्सा सिद्धान्त की कल्पना की जा सक है । सबसे प्रमुख रूप से संक्रमण विरोधी चिकित्सा क चाहिए । निम्न औषधि कल्पना की जा सकती है ।

1. प्रमुख रस - त्रिभुवन कीर्ति रस, आनन्द भैरव मृत्युंजय रस तथा श्वासकास चिन्तामणि, श्वासकु हिंगुलेश्वर रस, स्वच्छ भैरव रस, सर्वांग-सुन्दर त्रिपुर भैरव रस, शीतांगरस, मृत्युंजय रस, कस्तूरी रस, अचिन्त्यशक्ति रस आदि ।
   मात्रा - 125 से 250 मि.ग्रा. - शहद से ।
2. प्रमुख क्वाथ - निदिग्धिकाद्रि क्वाथ, पंचतिक्त क अमृताष्टक क्वाथ, भद्रमुस्तादि क्वाथ, गुडूच्यादि क दार्वी क्वाथ, भार्ग्यादि क्वाथ आदि ।
   मात्रा - 10-20 मि.ली.
3. प्रमुख वटी - संजीवनी वटी, जया वटी, सं वटी, सुदर्शनघनवटी, बैद्यनाथ वटी, जयन्ती ज्वरहर वटी, पानीय वटी आदि ।
   मात्रा - 125 - 250 मि.ग्रा. ।
4. चूर्ण - श्रृंग्यादि चूर्ण, तालिशादि चूर्ण, सुदर्शन ज्वरनाना मयूर चूर्ण, ज्वरभैरव चूर्ण आदि ।
   मात्रा - 2-3 ग्राम जल से ।
5. प्रमुख भस्म - गोदन्ती भस्म, विषाण भस्म, अ भस्म आदि ।

**अनुभूत योग -**

**ज्वर होने पर -**

| | |
|---|---|
| संजीवनी वटी | 250 मि.ग्रा. |
| अमृता सत्व | 250 मि.ग्रा. |
| जयमंगल रस | 215 मि.ग्रा. |
| गोदन्ती भस्म | 4 रत्ती |
| | 1 x 2 शहद से |
| अमृतादि क्वाथ | 20-20 मि.ली. 1 x 2 |
| सुदर्शन वटी | 2-2 गो. 1 x 2 उष्ण जल |

**गल शोथ होनें पर** - दिन में 2 बार काँचनार गुग्गुलु 2/2 1 x 2



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



उष्ण जल में स्फटिका डालकर गण्डूष करावें ।

श्वास कष्ट या न्यूमोनिया जैसे लक्षण होने पर -

| | | |
|---|---|---|
| अभ्रक भस्म | - | 250 मि.ग्रा. |
| विषाण भस्म | - | 250 मि.ग्रा. |
| गोदन्ती भस्म | - | 250 मि.ग्रा. |
| तालीसादि चूर्ण | - | 2 ग्राम |

1x3 शहद + आर्द्रक स्वरस

बालकों में न्यूमोनिया होने पर - रसपीपरी 1 गोली

बालजीवन वटी - 1-1 गो.

1 x 2 शहद से

स्थानिक संक्रमण हेतु -

धूपन द्रव्यों का प्रयोग करना चाहिए यथा -

1. माहेश्वर धूप
2. अगर्वादि धूप
3. गुग्गुलु + चन्दन, गन्धक + मंजिष्ठा के चूर्ण + तगर, विभीतक आदि द्रव्यों का धूपन देवें ।

सन्दर्भ ग्रन्थ चिकित्सा -


1. चरक संहिता पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध प्रो०जी.एन. पाण्डेय ।
2. सुश्रुत संहिता - डल्हण कृत - प्रो०पी.वी. शर्मा ।
3. अष्टांग संग्रह हेमाद्रि टीका सहित - डॉ. आठवले ।
4. कायचिकित्सा - डॉ० रामरक्ष पाठक ।
5. कायचिकित्सा - प्रो० श्री आर.एच. सिंह ।
6. कायचिकित्सा - प्रो. श्री शिवचरण ध्यानी ।
7. भावप्रकाश पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध - प्रो० प्रियव्रत शर्मा ।
8. माधन निदान सुदर्शन शारीर I & II ।
9. आयुर्वेदीय कायचिकित्सा - श्री विद्याधर शुक्ल ।
10. रोगी परीक्षा - प्रो० सिंह ।
11. रोगी परीक्षा - आचार्य त्रिकम जी ।
12. International Medicine by Harrison.
13. Clinical Method by Hutchsion .

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# चन्द्रहास रस का शीघ्रपतन एवं स्वपनदोष पर एक सफल आतुरीय परीक्षण

* वैद्य (डा०) ओमवीर सिंह "वीर", एम.डी. (आयु०) ** डा० मीना आहूजा, एम०डी०(आयु०)
*** सुरेन्द्र सिंह, बी०ए०एम०एस० (छात्र ।। प्रोप.)

आज के युग के संचार क्रान्ति का युग कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगी पर संचार क्रान्ति ने जहां एक ओर दूरियां घटायी है वहीं व्यक्ति विशेष को हर मामले में काफी फास्ट बना दिया है कामुकता अपनी चरम पर हैं युवक मुक्तियां में दृष्टिगोचर होती है । दूरदर्शन या प्रिन्टमीडिया सभी अश्लीलता का नंगा नाच रहे हैं जिसके कारण किशोर होने के पहले ही बच्चे युवा हो जा रहे हैं और बिना किसी हानि लाभ का विश्लेषण किये वे यौन विसंगतियों का शिकार होते जा रहे हैं । नशा, फास्ट फुड एक तरफ उन्हें खोखला कर रहा है तो दूसरी तरफ रहन-सहन की विसंगतियां उन्हें सेक्स की खुली छूट दे रही है । मोबाईल के प्रचलन ने तो इसमें चार चाँद लगा रखे हैं । लगातार पौष्टिक आहार का अभाव, कामुकता पूर्ण माहौल एवं यौन-शिक्षा का अभाव नवयुवक हो या अधेड़ उम्र युवक सभी या तो शीघ्र पतन की समस्या लेकर आते हैं या स्वप्नदोष की संस्थान में किये गये परीक्षणों के अध्ययन बताते हैं कि यौन रोगों से सम्बन्धित रोगियों में 80% रोगी शीघ्रपतन या स्वप्नदोष की शिकायत करते हैं ।

**रोगियों का चयन :-** संस्थान में जो रोगी शीघ्रपतन या स्वप्नदोष का इतिवृत्त लेकर चिकित्सा हेतु उपस्थित हुए उनका पूर्ण शारीरिक परीक्षण कर देखा गया कि उनमें किसी प्रकार की अन्य जीर्ण व्याधि तो नहीं है । जिन लोगों में जनन तंत्र को छोड़कर अन्य प्रकार की व्याधियों का इतिवृत्त नहीं मिला ऐसे उक्त लक्षण युक्त 50 रोगियों को अध्ययन हेतु चयनित किया गया ।

**योग के घटक एवं उसका निर्माण मात्रा एवं अनुमान :-**

| | | |
|---|---|---|
| घटक :- | हरिद्रा चूर्ण | 100 ग्राम |
| | त्रिफला चूर्ण | 100 ग्राम |
| | शु०स्वर्ण गैरिक | 100 ग्राम |
| | शु०स्फटिक भस्म | 300 ग्राम |
| | रस सिन्दूर | 10 ग्राम |
| | मिश्री | 600 ग्राम |

सर्व प्रथम रस सिन्दूर को खरल में डालकर रहित होने तक खूब घोटाई करें, फिर अन्य औषधियां थोड़ा-थोड़ा मिलाकर रस सिन्दूर के साथ कूट पीस मिलाकर घोटाई करता जाए, जब सारी की सारी दवा एक हो जाये तब बर्तन में भरकर रख लें और आवश्यकता के 10-10 ग्राम की मात्रा में सुबह-दोपहर-शाम के हिसाब शीतल जल या दुग्ध के साथ सेवन करें ।

**अवलोकन :-**

**1. वयानुसार रोगियों की संख्या (सारणी नं०1):-**

| क्र.सं. | वय | संख्या | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 1. | 15 - 20 | 20.00 | 40% |
| 2. | 21 - 25 | 06.00 | 12% |
| 3. | 26 - 30 | 10.00 | 20% |
| 4. | 31 - 35 | 08.00 | 16% |
| 5. | 36 - 40 | 02.00 | 04% |
| 6. | 40 से ऊपर | 04.00 | 08% |
| | योग | 50.00 | 100.00% |

**2. नशीली चीजों के सेवन के आधार पर रोगियों वर्गीकरण (सारणी - 2) :-**

| क्र.सं. | नशे की स्थिति | संख्या | प्रति |
|---|---|---|---|
| 1. | सेवन करते हैं | 42.00 | 8 |
| 2. | सेवन नहीं करते हैं | 08.00 | 1 |
| | योग | 50.00 | 1 |

**3. फास्ट फुड तथा उत्तेजनात्मक आहार के सेवन आधार पर रोगियों का वर्गीकरण (सारणी नं०3):-**

| क्र.सं. | आहार की स्थिति | संख्या | प्रति |
|---|---|---|---|
| 1. | फास्ट फुड अधिक प्रिय है | 40.00 | 8 |
| 2. | कभी कभार लेते हैं | 10.00 | 2 |
| | योग | 50.00 | 1 |

* निदेशक, धन्वन्तरि अष्टांग आयुर्वेद शोध संस्थान, दरोगाबाग, उन्नाव (उ०प्र०)
** प्राचार्या, श्री गंगानगर कालेज ऑफ आयुर्वेदिक साइन्सेस एण्ड हॉस्पीटल, हनुमान गढ़ रोड़, गंगानगर (
*** ललित हरि राजकीय स्नातकोत्तर आयुर्वेदिक कालेज, पीलीभीत (उ०प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



4. अश्लील साहित्य तथा आडियो विडियो का अध्ययन तथा उपयोग करने के आधार पर वर्गीकरण (सारणी नं० 4)

| क्र.सं. | अश्लील साहित्य उपयोग की स्थिति | संख्या | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 1. | पढ़ते या देखते हैं | 35.00 | 70% |
| 2. | नहीं पढ़ते तथा देखते हैं | 15.00 | 30% |
| | योग | 50.00 | 100% |

5. 45 दिन औषधि सेवन के बाद रोगियों के लाभालाभ की स्थिति (सारणी 5)

| क्र.सं. | लाभालाभ | संख्या | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 1. | पूर्णालाभित | 40.00 | 80% |
| 2. | आंशिक लाभित | 09.00 | 18% |
| 3. | अलाभित | 01.00 | 02% |
| | योग | 50.00 | 100% |

निष्कर्ष :-

(1) तालिका नं०-1 के आधार पर कहा जा सकता है कि ये व्याधि युवाओं की एक आम बीमारी है तथा अधेड़ अवस्था में शारीरिक पौरुष कम होने के कारण भी शीघ्र पतन के रोगियों की संख्या पायी गयी पर उसमें कोई विशेष बढ़ोतरी नहीं दर्ज की गयी है ।

(2) तालिका नं०-2 को देखने से ज्ञात होता है कि इन रोगों से ग्रस्त अधिकतर रोगी नशीली चीजों के आदी पाये गये । 84% रोगियों में कोई न कोई व्यसन पाया गया जिसमें शराब तथा पान-मशाला एवं बीड़ी सिगरेट बहुलता में सेवन करते पाये गये ।

(3) फास्ट फुड तथा अधिक मिर्च मशाले युक्त उत्तेजक भोजन अंडों आदि का सेवन करते करीब 80% लोग पाये गये, खास करके युवावर्ग में इस भोजन प्रवृत्ति के कारण विबन्ध लक्षण बहुलता से पाया गया और पेशाब के साथ धातु जाना तथा रात्रि में स्वप्न दोष होना लक्षण पाये गये, जबकि अधिक वय वाले रोगियों में शीघ्र पतन की समस्या पायी गयी जो अधिकतर अति मैथुन सेवन के कारण धातुक्षय के कारण पायी गयी जबकि नव युवाओं में हस्त मैथुन का व्यसन भी कुछ रोगियों द्वारा करने का इति वृत्त मिला ।

(4) सारणी नं० 4 से स्पष्ट होता है कि 70.00% लोग अश्लील साहित्य का उपयोग कर रहे हैं जो कि उनकी बीमारी का एक मुख्य कारण कहा जा सकता है । जबकि जो लोग इस प्रकार के साहित्य का उपयोग नहीं कर रहे, उनमें धातुक्षय तथा कमजोरी या अतिमैथुन या हस्त मैथुन आदि का इति वृत्त कम पाया गया ।

(5) लाभालाभ दर्शक तालिका नं० 5 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि ये औषधि अधिकतर लोगों (80.00%) को लाभ दे रही है जबकि 2% लोगों को इस औषधि से कोई लाभ नहीं मिला, जिसका कारण शायद उनका व्यक्तिगत व्यवहार या रोग का मानसिक होना हो सकता है ।

नोट :- अध्ययन के दौरान पाया गया कि कुछ लोग औषधि के कषैलेपन को सहन नहीं कर पाते और उनको उल्टी हो जाती है । अत: मिश्री की मात्रा इस अवस्था में बढ़ायी जा सकती है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# सुख शांति कल्याणमय जीवन का व्यवहारोपयोगी मार्ग

* डा०बी.एम. निर्मल

**साम्प्रत समस्या**

प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा रहती है कि उसको सुख और शांति प्राप्त हो । विश्व की जनता नि:संदेह मानती है कि सुख और शान्ति से ही जीवन में विकास और प्रसन्नता संभावित है । चाह होने पर भी उसे प्राप्त करनें का सर्वमान्य, राजमार्ग प्राप्त नहीं है । प्रत्येक धर्म एवं सम्प्रदाय मानव का उत्कर्ष करने हेतु उपदेश एवं नियम बतलाता है जो मानव के लिए हितकर है । परन्तु आचरण में वह नगण्य-सा देखा जाता है ।

**समस्या का बीज**

आधुनिक समाज विभिन्न हेतुओं से संघर्ष में प्रवृत्त है । कई अंधश्रद्धा पीड़ित व्यक्ति धर्म के नाम से धर्मान्धता वश रक्तपात एवं हिंसा करते हैं । प्रत्येक धर्म में मानवहित कर सत्य छिपा हुआ है परन्तु लोग उस सत्व से वंचित हैं ।

राष्ट्र एवं विश्व शान्ति, सहिष्णुता, प्रेम एवं सद्भाव से पल्लवित हो ऐसा सार्वजनिक श्रेय:स्कर धर्म-मानव धर्म की नितान्त आवश्यकता है ।

**अष्टांग धर्म** – अहिंसा, सत्य, अस्तेय कामनाओं का नियंत्रण, क्रोध पर विजय, लोभ निग्रह एवं भूतदया के प्रति प्रतिबद्धता युक्त संयम इन तत्वों का धर्म का अष्टांग मानकर इसका प्रचार, प्रसार, व्यवहार एवं पालन करने की आवश्यकता है ।

मानव शरीर के संचालन में बुद्धि, इन्द्रियाँ मन एवं प्राण का नितान्त महत्व है । सत्वगुण रजोगुणी व्यक्ति प्रवृत्ति करेगा, किन्तु रागद्वेष के विषचक्र में आसक्त होकर रोग, मोह, दु:ख प्राप्त करेगा । तमोगुण प्रधान व्यक्ति आलस्य, असहिष्णुता, नैष्कर्म्य एवं अज्ञान तिमिर में डूब जाएगा ।

आध्यात्मिक उन्नति के लिए एकाग्रता, विवेक एवं साधना के पथ पर चलना चाहिए ।

शारीर एवं मानस व्याधियों के नियंत्रण हेतु आज देश एवं विदेशों में योग का आकर्षण बढ़ा है । भारतीय योगदर्शन का अध्ययन एवं अनुसरण एक उत्तम उपा

महर्षि पतञ्जलि ने चित्तवृत्ति का निरोध क योग पर दर्शनशास्त्र में सूत्र दिये हैं । अष्टांगयोग (1 (2) नियम (3) आसन (4) प्राणादाय (5) प्र (6) धारणा (7) ध्यान (8) समाधि का परिच है ।

इन आठ अंगों में प्रथम यम का विस्तृत का विस्तार से उसके पांच घटको का वर्णन किया

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह

**1. अहिंसा :-** प्राणी मात्र को मन, वाणी से किसी को कष्ट न देना । यह नियम सर्वे सन्तु नि सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित दु:खम् आप्तुयात् । से व्यक्त किया गया है । सर्वजन सुख का यह सिद्धान्त है ।

**2. सत्य** अर्थात् यथार्थ । देखना जानना, अनुभव करना, स्वीकार करना, सत्यनिष्ठ चाहिए । अप्रिय हो तो उसका उच्चारण स्पष्ट: न करते हु रखना अभीष्ट है ।

**सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रि**
**प्रिय च नानृतं ब्रूयात् एषो धर्म: सनातन:**

कई वाद विवाद एवं झगड़ों का मूल कार का विवेक रहित उपयोग है । सत्य पालन असाधा कठिन कार्य है । परन्तु आजीवन सत्यपालन आदर्श राष्ट्रनायक एवं मानवता के पथप्रदर्शक का पद प्राप्त करते हैं ।

**3. अस्तेय** – अन्य के अधिकार, सं लाभों को छिनकर अपना स्वार्थ सिद्ध करना चा द्रव्यचोरों, कामचोरों, मान एवं लाभ से वंचित करना एवं शान्ति हड़प करना, सब अनुचित है । चोरी न समदर्शी, उदारहित बनते हैं । समाज का कल्याण की उन्नति के लिए अस्तेय उत्तम व्रत है । स्वदेश

ए-1, स्नेहपूजा एपार्टमेन्ट, ७, पटेल कालोनी सेक्टर नं० १, जामनगर (गुजरात) – 361 008

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



पालन अस्तेय से होता है ।

**4. ब्रह्मचर्य** – सामाजिक सुव्यवस्था के लिए ही विवाहित जीवन को नितान्त उपयोगी माना गया है । कामीचार, स्त्री-देह शोषण, नारी का स्वमान हनन किसी भी संस्कारी देश में निषिद्ध है । मनुस्मृति में नारी के प्रति सम्मान की उच्च भावना प्रकट की गई है ।

**यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।**

आज समाज में विद्याभ्यास काल में ही स्त्री सहवास की वृत्ति बढ़ गई है । परदारा भिगमन, अलक्ष्मीकारक है । ऐसा भारतीय अभिमत की उपेक्षा की जाती है । एड्स एवं अन्य यौन विकारों का प्रसार अन्यथा काम या अवैध मैथुन के दुष्परिणाम हैं ।

**5. अपरिग्रह** – लोभवृत्ति एवं स्वार्थ का कारण व्यक्ति अन्न, धन, संपत्ति का अनैतिक रूप से संचय करत है । आमदनी से कई गुना अधिक संपत्ति का मालिक बनने वाला रिश्वत, गबन, करचोरी एवं अन्य अवैध रूपों से धन सम्पत्ति का संचय करता है । विभिन्न बैंक एवं व्यापारी पीढ़ियों की प्रतिष्ठा अपरिग्रह के दूषण से नष्ट होती है । आशा, तृष्णा एवं लोलुपता की कोई सीमा न होने से अति श्रीमन्त बनने का मोह छूट नहीं पाता ।

अन्न, वस्त्र, आवास एवं भविष्य की सुरक्षा हे आवश्यक संचय करने में दोष नहीं है ।

**सारांश :-** जीवन को सुख, शांति एवं कल्याण से उत्तम बनाने के लिए योग दर्शन के शाश्वत सिद्धान्तों क मनन, अनुशीलन एवं प्रचार-प्रसार करना श्रेष्ठ है ।

भारत इस दिशा में जगतगुरु गौरवमय प्रतिष्ठा प्राप्त करेगा


प्रसूता के लिए बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध
प्रसव के बाद इसके सेवन से माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती है।




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# 'रोगाः सर्वेऽपि मन्देग्नौः' के नैदानिक महत्व का वैज्ञानिक विवेचन

* डा० संजय कुमार सिंह, एम.डी.(आयु.) बी.एच.यू. डिप्लो

रोगों का प्रादुर्भाव तो सृष्टि की उत्पति के समय ही है । इसी को दृष्टिगत रखते हुए ब्रह्मा जी ने सृष्टि निर्माण के समय ही रुग्ण प्राणियों की चिकित्सा के लिए त्रिसूत आयुर्वेद का उपदेश किया ।

**हेतुलिङ्गऔषध ज्ञानं स्वस्थातुर परायणं ।**
**त्रिसूतं शाश्वतं पुण्यं बुबुधे यं पितामहः ।।**

(च०सू०)

आयुर्वेद एक सम्पूर्ण जीवन विज्ञान है जो कि **दोषधातु मल मूलं हि शरीरं'** तथा **'समदोषः समाग्निश्च समधातु मलः क्रियः । प्रसन्नात्मेन्द्रिय मनः'** को आधार मानकर एवं ब्रह्मा जी द्वारा उपदेशित त्रिसूत्र आयुर्वेद (हेतु-लिङ्ग, औषध) का उपयोग करते हुए रुग्ण मानवता की सेवा सृष्टि निर्माण काल से ही करता आ रहा है ।

आयुर्वेद शास्त्र रोगों का प्रमुख कारण दोष वैषम्य मानता है जो कि मूल रूपेण **त्रिविध रोगायतन** (असात्मेन्द्रियार्थ संयोग, प्रज्ञापराध एवं परिणाम) जन्य है । इन्हीं तीन कारणों के रोगोत्पत्ति के मूल में रहने से ही अग्नि वैषम्य (मन्दाग्नि प्रमुख रूपेण) प्रधान रूप से संक्षेप में सभी व्याधियों का कारण बनता है । इस प्रकार चरक एवं आचार्य वाग्भट द्वारा उदर रोग प्रकरण में वर्णित कथन **"रोगाः सर्वेऽपि मन्देग्नौः"** उपरोक्त तथ्य की पुष्टि करता है ।

प्राणियों में अग्नि की महत्ता को बताते हुए भगवान श्रीकृष्ण जी ने गीता में अर्जुन से कहा है कि **'अहं प्राणिनां प्राणभूतो वैश्वानरो रूपेण संस्थिताः'** अर्थात् मैं ब्रह्माण्ड के समस्त प्राणियों में वैश्वानर (अग्नि) के रूप में विराजमान हूँ एवं उनके प्राणों का संचालन कर रहा हूँ ।

आयुर्वेद संहिता ग्रन्थों में अग्नि के महत्व पर अनेक स्थानों पर विशेष वर्णन मिलता है । जिस प्रकार संसार में बाह्य जगत की समस्त क्रियाएं चन्द्रमा, सूर्य एवं वायु के द्वारा नियंत्रित होती है, ठीक उसी प्रकार इस शरीर की समस्त क्रियाओं का संचालन त्रिदोष (वात, पित्त, कफ) द्वारा होता है । शरीर में अग्नि, पित्त के अन्त स्थित होती है तथा अग्नि के शान्त हो जाने पर रोगी मृत्यु हो जाती है, वैषम्य रहने पर नाना विध रोगों की उ होती है एवं सम्यक रूप से कार्य करने पर बल, वर्ण, आदि की पुष्टि होती है ।

अतः अग्नि की रक्षा चाहने वाले व्यक्ति को आहार विधि विशेषायतन एवं द्वादशन प्रविचार का प करते हुए तथा वैरोधिक आहार घटकों को ध्यान में रख मात्रावत भोजन ग्रहण करना चाहिए । ग्रहण किये गये का पाचन, शरीर की पुष्टि एवं जीवनापयोगी सम चयापचयात्मक क्रियाएं अग्नि के ऊपर ही निर्भर इसीलिए अग्नि के महत्व को दर्शाते हुए आचार्य चर कहा है कि अग्नि की उपस्थिति एवं अनुपस्थिति प प्राणी का जीवन-मरण अवलम्बित है, क्योंकि अन देह, धातु, ओज, बल, वर्ण, मेधा आदि का पोषण अग्नि बल पर ही निर्भर है तथा अग्नि के अभाव में से उत्पन्न पोषक रसधातु की उत्पत्ति ही नहीं होगी ।

आचार्य चरक ने अग्नि व्यापार को तीन अवस्था में विभाजित करते हुए कुल 13 प्रकार की अग्नियों उल्लेख किया है -

(1) जठराग्नि - एक (सर्वाधिक महत्वपूर्ण अन्य अग्नियों की पोषक, ग्रहणी में स्थित)

(2) धात्वाग्नियाँ - सात (प्रत्येक धातुओं में स्रोतसों में स्थित) - धातु पोषण एवं निर्माण में सह

(3) भूताग्नियाँ - पाँच (आयुर्वेद में स्थान का वर्णन नहीं है परन्तु आधुनिक चिकित्सा विज्ञान अनुसार जठराग्नि व्यापार के बाद की अ (Enterohepatic circulation के समय का metabo or first pass metabolism) को हम ग्रहण कर है ।

Modern Human Physiology के अनुसार

प्रवक्ता, रोग निदान विभाग, ऋषिकुल रा.आ.का., हरिद्वार (उत्तरांचल)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



व्यापार को हम Digestion, absorption, assimilation followed by metablism ग्रहण करते हैं। मदाग्नि से आम की उत्पत्ति होती है जो कि विष के समान होता है एवं अनेको व्याधियों की उत्पत्ति में सहायक होता है। आमोत्पत्ति प्रमुख रूप से जाठराग्नि के मंद होने से होती है, परन्तु धात्वाग्नि मान्द्य एवं भूताग्निमांद्य से भी अनेको आमज व्याधियां उत्पन्न होती हैं।

**जाठराग्निमान्द्यजन्य आमज व्याधियों** में प्रमुख रूप से अजीर्ण, विसूचिका, आलसक (स्थानिक) तथा आमवात (सार्वदैहिक) को ग्रहण करते हैं। चूंकि आम के लक्षण विष के समान हैं तथा यह स्रोतोरोध, बलनाश, गौरव, अनिल मूढता, अपक्ति आदि लक्षण उत्पन्न करता है। अतः उपरोक्त कारण एवं लक्षणों को दृष्टिगत रखते हुए आधुनिक मतानुसार Gastroenteritis, Food poisoning, Rheumatic disorders (R.A. SLE, Scleroderma, systemic sclerosis, Polymyosistis, Reactive arthritis, Ankylosing spondylitis), ulcerative colitis, Psoriasis, Amoebic colitis, worm infestation आदि व्याधियों को आमजन्य समझ सकते हैं। उपरोक्त व्याधियाँ या तो Autoimmune है या फिर Toxic substances (Elevated levels Autoantibodies, antinuclear antibodies, L.E. cells, R.A. factor etc) की शरीर में उपस्थिति को दर्शाती हैं।

धात्वग्निमांद्य जन्य आमज व्याधियों में प्रमुख रूप से मेदोरोग, प्रमेह, कुष्ठ, राजयक्ष्मा आदि को ग्रहण करते हैं।

Metabolic disorders - Hyperglycemia (D.M.), Hyperuricemia (Gout) uraemia (renal failure) Hyperbilirubinemia (Hepatic failure), Diabetic ketoacidosis, Obesity आदि को धात्वग्निमांद्य जन्य आमज व्याधियों में ग्रहण कर सकते हैं। उपरोक्त तथ्यां की पुष्टि आम के लक्षण सम्बन्धी कथन से हो सकती है'

आमं अन्नरसं केचित् केचित् तु मलसंचयम्
प्रथमां दोष दुष्टि रसमामं प्रचक्षते ॥

1. अन्न रस - जाठराग्नि दौर्बल्य से उत्प आहार रस जो अलसक, विसूचिका आमजीर्ण, आमज आमवात आदि रोगों को उत्पन्न करता है।

2. मल संचय - मल, मूत्र, स्वेद की असम्य प्रवृत्ति तथा शरीर के अन्दर अन्य सूक्ष्म मलों (metabo waste products like urea, creatinine, billirubi ketone bodies) आदि का सामान्य मात्रा से ज्यादा जाना या शरीर के अन्दर बढ़ जाना क्योंकि ये सभी सू मल तत्व मूत्र एवं पुरीष के साथ ही बाहर निकलते ह इनके शरीर में एकत्र होने पर अनेक व्याधियां की उत्प होती है।

**3. प्रथमां दोष दुष्टि** - प्रत्येक राग की उत्प में दोष का दूषित (प्रकुपित) होना अनिवार्य है। अतः मत से दोष दुष्टि की प्रारम्भिक अवस्था ही आम है।

निष्कर्ष - इस प्रकार से सभी व्याधियों उत्पत्ति आमजन्य है एवं आम मन्दाग्नि जन्य है जो कि "रोगाःसर्वेऽपि मन्देऽग्नौ" कथन की पूर्ण रूपण पुष्टि करता है।

- विसर्गादान विक्षेपैः सोम सूर्य निलायथा।
  धारयन्ति जगद्देहं कफपित्तानिलास्तथा ॥
  (अ०सं०सू०
- अग्निरेव शरीरे पित्तान्तर्गतः।
  कुपिताकुपितः शुभाशुभानि करोति।
  (च०सू० 1
- आयुवर्णो बलं स्वास्थमुत्साहोपचयौ प्रभा।
  ओजस्तेजोऽग्नयः प्राणाश्चोक्ता देहाग्निहेतुकाः
  शान्तेऽग्नौ मियते युक्ते चिरं जीवत्यनामयः।
  रोगी स्याद्विकृते मूलमग्निस्तस्मान्निरूच्यते ॥
  (च०चि० 15/3 4
- यदन्नं देह धात्वोजोबलवर्णादि पोषकम्।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तत्राग्निहेतुराहारान्नह्यपक्वाद्रसादयः ।।
(च०चि० 15/5)

उष्मणोऽल्पबलत्वेन धातुमाद्यमपाचितम् ।
दुष्टनामाशयगतं रसमामं प्रचक्षते ।।
(अ०ह०सू० 13/25)

रोगाः सर्वेऽपि मन्देऽग्नो सुतरामुदराणि च ।
अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैजयिन्ते मल संचयात् ।।
(वा०नि०12/1)

अतिसारे निवृत्तेऽपि मन्दाग्नैरहिताशिनः ।
भूयः संदूषितो वह्निग्रहणीमभिदूषयेत् ।।
(सु०उ० 40/167)

विरुद्धाहार चेष्टस्य मन्दाग्ने निश्चिलस्य च ।
स्निग्धं भुक्तवतो ह्यननं व्यायामं कुर्वतस्तथां ।।
(मा०नि० 25/1)

अतिसंचित दोषाणां पापं कर्म च कुर्वताम् ।
उदराण्युपजायन्ते मन्दाग्नीनां विशेषतः ।।
(मा०नि० 35/1)

मन्देऽग्नो वर्धते गुल्मो दीप्ते चाग्नौ प्रशाम्यति ।
तस्मान्नानाति सौहित्यं कुर्यान्नाति विलङ्घनम् ।।
(च०चि० 5/112)

त्रयो विकाराः प्रायेण ये परस्पर हेतवः ।
अर्शांसिचातिसारश्च ग्रहणीदोष एव च ।।
एषामग्निबले हीने वृद्धिवृद्धे परिक्षयः ।
तस्मादग्नि बलं रक्ष्यमेषु त्रिषु विशेषतः ।।
(च०चि० 14/244-245)

मिथ्याहार विहाराभ्यां दोषा ह्यामाशयाश्रयः ।
बहिर्निरस्य कोष्ठाग्नि ज्वरदाः स्यू रसानुगाः ।।
(मा०नि० 2/2

दोषैर्मन्दानलत्वेन सोपलेपैः कफोल्गैः ।
स्रोतोमुखेषु रूद्धेषु धातुष्मस्वल्पकेषु च ।।
मात्राशी स्यात् । आहारमात्रा पुनरग्निबलापेक्षिणी
(च०सू० 5

मात्राशी सर्वेकालं स्यान्मात्रा ह्यग्नेः प्रवर्तिका
मात्रा द्रव्याण्यपेक्षन्ते गुरूण्यपि लघुन्यपि ।।
विरुद्धाध्यशना जीर्ण शीलिनी विषलक्षणम् ।
(अ०ह०नि० 5/11

आमदोषं महाघोरं वर्जयेद्विषसंज्ञकम् ।।
विषरूपाशुकारिंवाद्विरुद्धोपक्रमत्वतः ।
अथाऽऽममलसीभूतं साध्यं त्वरितमुल्लिखेत् ।।
(अ०ह०सू० 8/13-14

स्रोतारोध बलभ्रंशगौरवानिल मूढ़ताः ।
आलस्यापक्तिनिष्ठीवमलसङ्ग रुचिक्लमाः ।
(अ०ह०सू० 12/23

न च खलु केवलमतिमात्रामेवाहारराशिमामप्रदोष
करमिच्छन्ति, अपितु खलु गुरुरुक्षशीतशुष्कद्विष्ट
विष्टम्भिविदाह्यशुचिविरुद्धा नामकालेचान्नपानान
मुपसेवनं, कामक्रोधलोभमोहेर्ष्याहीशोकमनोद्वेगो
पतप्तमनसा वा यदन्नपानमुपयुज्यते, तदप्याममे
प्रदूषयाति ।।
(च०चि० 2/

बैद्यनाथ
दाद मलहम
बिना तकलीफ के दाद को जड़मूल से नष्ट करने वाली दवा



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# घृत कुमारी (*Aloe*)

*डॉ० गणेश उपाध्याय
**प्रो० पी०पी० शर्मा

घी कुवाँर, वार पाठा, गृहकन्या आदि नामों से संबोधित यह छोटा-सा पौधा आम तौर पर बागों में लगाया जाता है । यह बगानों की शोभा तो बढ़ाता ही है साथ में इसके कई औषधीय गुण हैं जिसके कारण इसने पूरे संसार में वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है ।

हालांकि इसका वर्णन प्राचीन आयुर्वेद संहिताओं (चरक सुश्रुत) में नहीं मिलता मगर पर्वतीय निघण्टु व ग्रंन्थों में इसका वर्णन मिलता है ।

**परिचय :**

इसका क्षुप 1-2 फुट ऊँचा होता है, जमीन से ही कंटकित, चक्राकार, मांसल पत्तियाँ निकलती हैं । क्षुप के मध्य से लंबा पुष्प ध्वज निकलता है, जिसमें रक्ताभ पुष्प आते हैं । पत्तियों के भीतर घी के समान पिच्छिल मज्जा होती है । पत्तों के काटने पर पीला रंग का द्रव्य भी निकलता है, जिसे कुमारी सार कहते हैं, तथा यह विरेचक होता है ।

| | |
|---|---|
| हिन्दी | - घृत कुमारी घृत |
| अंग्रेजी | - *Aloe* (एलो) |
| *Latine Name* | - *Aloe Vera* (एलोई वेरा) |
| कुल | - *Laliaceae* (लिलियशी) |
| यूनानी | - मुसब्बर |

**रासायनिक संगठन :-**

*Aloin, (Glycoside), Iso barbilon, β - barbalion antraquinone.*

इसका *'Aloe'* नाम से प्रयोग करते हैं, जो पत्रों से निकले रस को सुखाने से बनता है । इस *Aloe* का वर्ण व स्वरूप, काला, मोमवत, पारदर्शक या अपारदर्शक भिन्न-भिन्न निर्माण प्रक्रिया के आधार पर निर्भर करता है ।

**आयुर्वेदिक दृष्टिकोण :**

गुण :- गुरु, स्निग्ध, पिच्छिल ।

रस :- मज्जा (मधुर), तिक्त (पीला पदार्थ)

विपाक :- कटु, वीर्य - उष्ण ।

**कर्म :**

रसायन बल्य, वृष्य, वात-विष प्रणुत, गुल्म-प्ल - वृद्धिहर ज्वर हर, ग्रंथि अग्निदग्ध, विस्फोट, पुष्प ज गर्भपातन:, रक्त व त्वकगत रोग ।

**प्रयोग :**

हालाकि ग्रंथों में इसके अनेक प्रयोग व उप लिखे हैं आजकल, आयुर्वेदिक व एलोपैथिक चिकित्स इस द्रव्य का प्रयोग कुछ विशिष्ट रोगों में करते हैं । उ अनुसंधान संस्थानों में इस पर कार्य चल रहा है ।

**बाह्य प्रयोग :-**

दग्ध : First Degree tum (अग्नि दग्ध) में त्वचा सामान्य ताप में आ जाए तो इसको लगाने से पी व सूजन कम होती है साथ घाव जल्दी भरता है । मगर ग व्रण में इसका प्रभाव नहीं मिलता । *Laprotomy* (उ पाटन शल्य क्रिया) द्वारा बने व्रण में यह कार्यकारी सि नहीं हुआ है । इसके स्वरस में कई रासायनिक तत्व हैं व्रण में शूल, शोथ व कण्डू का नाश करते हैं तथा वहाँ रक्त प्रवाह को बड़ा कर व्रण को भरने में सहायता क हैं । धूप से झूलसे त्वचा में भी अच्छा काम करता है

**विस्फोट (*Herpes Zoster*)**

इसकी गुदा लगाने से पीड़ा व कण्डू में रा मिलती है तथा व्रण में पाक भी नहीं होता है ।

**एक कुष्ठ (*Psoriasis*)**

घृत कुमारी का स्वरस इस रोग में फायदे साबित हुई है । कुष्ठ में होने वाली कण्डू व पीड़ा का न होता है ।

**चर्मकील (*Warts*) घृत**

रुई में घृतकुमारी का जूश लेके उसे चर्मकी के ऊपर रख दें, एक सप्ताह में ही असर दिखाई देने लग है । अगर *Cotton* न रख पायें तो सिर्फ घृत कुमारी का ज

* एम.डी. स्कालर, ** एच.ओ.डी., द्रव्यगुण विभाग
आई.पी.जी.टी. एण्ड आर.ए., गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी, जामनगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



न देवें ।

- √ बालों में लगाने से चमक आती है ।
- √ अन्य द्रव्यों लोध्र, मजिष्ठा आदि के साथ मुँह में लगा सकते हैं ।

**भ्यंतर प्रयोग :-**

**वंध :-**

इसके स्वरस को प्रयोग करने से बिवंध का नाश ता है ।

**ल्पित्त + आमाश्य व्रण :**

घृतकुमारी का स्वरस शोथ हर (*Anti flammatory*) है, अत: इसको आमाश्य व्रण व अम्लपित्त देते हैं । जापान में हुए अनुसंधान से ज्ञात हुआ कि इसका रस आमाश्य व्रण में लाभकारी सिद्ध हुआ, तथा यह माश्य में स्राव व व्रण को कम करता है ।

कई अनुसंधानों में इसके व्याधिक्षमत्व को बढ़ाने प्रमाण प्राप्त हुए हैं ।

कई अनुसंधान संस्थान इसके रक्तार्बध *eukamia*) में कार्यक्षमता का पता लगाने में व्यस्त हैं ।

घृतकुमारी की वस्ति *Colitis* में लाभकारी है ।

आर्तव जनन हेतु ।

**षेध :-**

1) गर्भवती महिलाओं व स्तनपान करानेवाली महिलाओं को न दें । क्योंकि गर्भपात होने का भय रहता है ।
2) अधिक समय तक विरेचक के रूप में लेने से शरीर में $K^+$ की कमी हो जाती है ।
3) *Oral Corti Costeriod* लेनेवाले मरीजों में इसका आभ्यंतर प्रयोग न करें ।
4) किसी-किसी व्यक्ति में बाह्य प्रयोग से *Allergy* होती है तथा चकते बनते हैं, उस स्थिति में इ लगाना छोड़ देवें ।
5) घृत कुमारी स्वरस का आभ्यंतर प्रयोग उस रोगी भी निषेध है जिसे *Digoxin or Lanoxin* चालू तथा *Potassium Losing diuretic* दवा चल रही ।

अत: बेहतर यही है कि इस सुलभ औषध प्रयोग डाक्टर के परामर्श के बाद ही इस्तेमाल करने से है ।

**मात्रा :-**

स्वरस - 5 - 10 *ml*

एलुआ चूर्ण - 125 - 250 *mg*

**विशिष्ट योग :-**

कुमार्यासव, कुमारिका वटी, रज:प्रवर्तनी व कुमारी पाक ।

बाजार में *Aloe Vera Extract a reconstitute Aloe vera* उपलब्ध है मगर यह घृत कुमारी स्वरस मुकाबले बहुत कम प्रभावशाली है ।

घृत कुमारी की अन्तर्राष्ट्रीय मांग होने पर सर व गैर सरकारी संस्थान इसके कृषिकरण पर ध्यान दे है । क्योंकि यह पथरीली भूमि पर आसानी से उग है, तथा इसे पानी/खाद की भी आवश्यकता नहीं होती इसके पत्तों की कटिंग से या कन्द से ही इसका पौधा जाता है ।

बैद्यनाथ
जीवन कल्प
दुर्बलता, कब्जियत, अग्निमांद्य, कैल्सियम एवं खून की कमी में लाभदायक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# स्वास्थ्यरक्षक मेथी

स्मिता गुप्ता* एडवीन जेराल्ड, शीजा एडवीन जेराल्ड

मेथी रुचिकारक, पथ्यकारक एवं शरीर के लिए हितावह है। वह थोड़ी तीखी, उष्ण, अधिक मात्रा में खाने पर पित्तवर्धक, दीपन, लघु, कड़वी, रूक्ष, हृद्य एवं बलप्रद है।

मेथी ज्वर, अरुचि, उल्टी, खाँसी, वातरक्त, वायु, कफ, अर्श (बवासीर) कृमि तथा क्षय का नाश करती है। मेथी रक्त को सुधारनेवाली है किन्तु रक्तस्राव के रोगियों को नहीं लेनी चाहिए। मेथी रस तथा रक्त को बलवान बनाती है एवं जठराग्नि को प्रदीप्त करती है।

रोज सुबह-शाम 1-1 ग्राम मेथी के दानों को पानी के साथ निगल जाने से घुटने एवं शरीर के जोड़ मजबूत होते हैं, वायु के रोग नहीं होते, डायबिटीज अथवा उच्च-निम्न रक्तचाप नहीं होता है। शरीर स्वस्थ रहेगा एवं स्थूलता नहीं बढ़ेगी।

**वायु के कारण होनेवाली हाथ-पैर की पीड़ा के लिए**

मेथी को घी में सेंककर उसका आटा बनाएँ। फिर उसके लड्डू बनाकर रोज एक लड्डू खायें। आठ-दस दिन में ही हाथ-पैर की पीड़ा में लाभ हो जायेगा।

**प्रसूता स्त्री का दूध लाने या बढ़ाने के लिए**

30 ग्राम मेथी का आटा 500 मि.ली. दूध में रात्रि में भिगोकर रखें। दूसरे दिन सुबह एक बर्तन में 50 ग्राम घी डालकर उसे अच्छी तरह तपाकर उसमें भिगोया हुआ मेथी का आटा डालकर उतार लें। जब कुनकुना गर्म रह जाय तब उसमें गन्ने का 20 ग्राम देशी गुड़ मिलाकर 21 दिन तक पिलायें। इस प्रयोग से दूध न आता हो तो आ लगता है एवं कम आता हो तो बढ़ जाता है। दूध अ दोषयुक्त होता है तो शुद्ध हो जाता है। गर्भाशय का संकोच होता है।

**गर्मी में लू लगने पर :**

मेथी की सुखायी हुई भाजी को ठंडे पानी भिगोकर रखें। अच्छी तरह से भीगनें पर मसलकर, छानव उसका पानी पीने से लाभ होता है।

**आँव के लिए :**

मेथी की भाजी 50 मि.ली. रस निकालकर उस छः ग्राम मिश्री मिलाकर पीयें अथवा 20 ग्राम सूखी मे के पाउडर को 40 ग्राम दही में मिलाकर लें।

**बहुमूत्र के लिए :**

मेथी की भाजी का 100 ग्राम रस निकालें उसमें 1.5 ग्राम कत्था एवं 3 ग्राम मिश्री डालकर पीयें

**रक्तातिसार :**

40 मि.ली. मेथी की भाजी के रस में 20 ग्रा काली द्राक्ष डालकर पीयें।

**पायरिया :**

भिगोयी हुई मेथी को मिश्री के साथ खायें।

**डायबिटीज :**

10 ग्राम मेथी को 100 मि.ली. पानी में भिगोक सुबह उस मेथी को मसलकर मेथी खा लें एवं वही पा पी लें।

बी.आर. नाहटा कॉलेज ऑफ फार्मेसी, मंदसौर

बैद्यनाथ
कुटजावलेह
खूनी बवासीर में उपयोगी दवा
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# सन्तत ज्वर विवेचन

* राजवैद्य धर्मवीर, डी एवाई एम, पीएचडी (

वर्तमान में प्रचलित भाषा में विषम ज्वर से लेरिया का ग्रहण होता है। चरक संहिता एवं अन्य हिताओं में विषम ज्वर का अर्थ है विषमाविषमारम्भं वेग धारणं क्षयम् अर्थात् जिस ज्वर का आरम्भ वेग और रण-क्षय विषम हो वह विषम ज्वर कहलाता है। संतत वर का भी आरम्भ वेग धारण क्षय विषम होता है। संतत वर प्रातः कम और सायंकाल अधिक होता है, लगातार ना रहते हुए भी यह विषमता मिलेगी। इसी प्रकार से 5, , 9, 12 दिन में इसका वेग समाप्त होता है विषम ज्वर े सम्बन्ध में आचार्यों के मतः-

1) अ०हृ०नि० 2 में स्पष्ट है -

**"विषमो विषमारम्भं क्रिया कालोऽनुसङ्गवान्"**

जिस ज्वर का आरम्भ, क्रिया तथा काल विषम हो वह विषम ज्वर कहलाता है।

2) भालूकि तंत्र में कहा है - जो ज्वर शीतपूर्वक तथा उष्णतापूर्वक (शीत लगाकर या गर्मी लगाकर) अनियत काल से आता है तथा जिसका वेग भी विषम होता है वह ज्वर विषमज्वर कहलाता है।

**यः स्याद नियतात्कालाच्छीतोष्णाभ्यां तथैव च।**
**वेगताश्चपि विषमः स ज्वरो विषमः स्मृतः॥**

(भालूकि)

3) काश्यपसंहिता में समज्वर तथा विषम ज्वर का जिस प्रकार से भेद किया गया है वैसा वर्णन अन्यत्र नहीं प्राप्त होता है। खिल स्थान में प्रथम अध्याय में जिसका नाम विषम ज्वर निर्देशीय अध्याय है, सर्वप्रथम समज्वर का लक्षण कहकर विषम ज्वर का वर्णन किया गया है। वेदों में इसे अवृत ज्वर कहा है।

**अल्प हेतुर्बहिमार्गो वैकृतो निरूपद्रवः।**
**एकाश्नयः सुखोपायो लघुपाकः समोज्वरः॥**

(का०खि० 1-8)

इन लक्षणों के विपरीत लक्षणों वाला ज्वर विषम वर है। इस विषम ज्वर के अन्तर्गत 'सन्तत ज्वर' 'प्रेतोत्थ वर' ग्रहोत्थ ज्वर तथा अन्य चार विषम रूप से उत्पन्न होने ाले ज्वरों (सतत, अन्येद्युष्क, तृतीयक तथा चतुर्थक) का हण किया है। संतत ज्वर के लिए कहा गया है कि तीक्ष्ण तथा समज्वर से विपरीत लक्षण वाला होने से इसे विषमज्वर के अन्तर्गत मानना चाहिये। यथा -

विषमस्तद्विपर्यस्तीक्ष्ण त्वात् संततो मतः।
तद्वत्प्रेतग्रहोत्था ये चत्वारो विषमागमात्॥

इन उपर्युक्त संततादि ज्वरों को विषम ज्वर देने की युक्ति प्रदर्शित करते हुए कहा है कि ये दुर्जय हैं तथा उग्र एवं दुष्ट ग्रहों द्वारा ग्रहीत होने पर उत्पन्न हैं और भयंकर (दारूण) लक्षणों को उत्पन्न करते हैं अतः इन्हें विषम ज्वर कहा गया है।

(4) चरक संहिता - प्रायः सन्निपात अर्थात् तीनों दोषों प्रकोप से पांच प्रकार के विषम ज्वर देखे जाते हैं

विषम ज्वर एवान्यचतुर्थक विपर्ययः।
त्रिविधो धातुरेकैको द्वि धातुस्थः करोति यम्

(च०चि० 3/

(5) सुश्रुत संहिता - मिथ्या आहार से प्रकुपित रसादि धातुओं में से किसी को भी प्राप्त (दुष्टकर) विषम ज्वर को उत्पन्न करते हैं।

**दोषोऽल्पोऽहितसम्भूतो ज्वरोत्सृष्टस्य वा पुन**
**धामुमन्यतमं प्राप्य करोति विषमज्वरम॥**

(सु०उ० 39/

(6) खरनाद - संतत ज्वर को छोड़कर चार को वि ज्वर मानता है। परन्तु यह मत ठीक नहीं क्योंकि समज्वरों के लक्षणों से भिन्न विषमज्व मानना उचित है। इस सम्बन्ध में चिकित्सा के आचार्य चरक का मत प्रगट करते हैं :-

**विसर्ग द्वादशे कृत्वा दिवसेऽव्यक्त लक्षणम्**
**दुर्लभोपशमः कालं दीर्घमस्यनुवर्तते॥**

(च०चि० 3

इस प्रकार संतत ज्वर का भी अन्तर्भाव विष में ही हो जाता है। काश्यप ने तो समज्वर और विष की स्वतंत्र परिभाषा देकर इस संदेह को स्थान ही नहीं है। संभव है-खरानाद (खरनाद) ने चिकित्सा सौक लिए संतत का शेष विषम ज्वरों से पार्थक्य दर्शाया विषम शब्द के भी संस्कृत में 2 अर्थ होते हैं। अनियमित (2) विकट। इस शब्दार्थ के कारण भी

पूर्व चिकित्साधीक्षक- [illegible] संकर्मा आयुर्वेदिक हस्पताल, प्रशान्त विहार, दिल्ली - 85

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ज्वर को विषमज्वर में गिना जाता है । चक्रपाणिदत्त ने कहा भी है कि, "विमत्वं विषम कालेन भवति, यदुक्तम्-विषयो विषमारम्भ क्रियाकालेऽनुसङ्गवान् ।"

अतः संतत ज्वर में भी बारहवें दिन विसर्ग होकर तेरहवें दिन पुनः ज्वर का अनुबन्ध होने से काल वैषम्य हो जाने के कारण विषम ज्वर श्रेणी में आ जाता है ।

परिभाषा :- सप्तांह वा दशाहं वा द्वादशाहमथापि वा सँतत्या योऽविसर्गीस्यात् सन्ततः स निगद्यते"

(सु० उत्तर 3/66)

जो ज्वर सात दिन (वातिक) दस दिन (पैत्तिक), बारह दिन (श्लैष्मिक) तक लगातार बिना उतरे बिना रहे उसे 'सन्तत ज्वर' कहते हैं क्योंकि यह ज्वर लगातार बना रहता है, इसलिए इसे सन्तत ज्वर कहते हैं ।

सन्तत और अविसर्गी इन दो विशेषणों द्वारा इस ज्वर के दारुण सन्तापादि लक्षित घोर रूप का तथा सर्वधातु एवं मलों की दुष्टि का सूचक कहा गया है । चरक ने स्पष्ट किया है कि इस ज्वर में जिस प्रकार धातुयें दूषित होती हैं उसी प्रकार मूत्र, पुरीष तथा अनिलादि मलें भी युगपत् दूषित हो जाते हैं । यथा

यथा धातुँस्तथा मूत्रं पुरीषं चानिलादयः ॥56॥
युगपच्चानुपद्यन्ते नियमात् सन्तते ज्वर ॥

(च०चि० 3/57)

यह अविसर्गी होने पर भी क्यों त्रिषम ज्वर के अन्दर ग्रहण किया गया है इसका विवेचन पहले कर चुके हैं । इसमें तीनों दोषों का प्रकोप होने से मोह-प्रलापादि सन्निपातिक लक्षण भी दृष्टिगोचर होते हैं । यदि रसादि धातुयें उचित रूप से शुद्ध नहीं हो पायीं तो सप्ताहादि उपर्युक्त अवधि के अन्दर घातक भी सिद्ध होता है । इनमें बारहवें दिन अव्यक्त लक्षण विसर्ग होता है इसका संकेत प्रथम कर चुके हैं, यथा

स शुद्धया वा ऽप्यशुद्धया वा रसादीनामशेषतः ।
सप्ताहादिषु कालेषु प्रशमं याति हन्ति वा ॥

(च०चि० 3/58)

सम्प्राप्ति-स्रोतोभिर्विसृता दोषा गुरवो रसवाहिभिः ॥53॥
सर्वदेहानुगाः स्तब्धा ज्वरं कुर्वन्ति सन्ततम् ॥

(च०चि० 3)

गुरू (बढ़े हुए) दोष सम्पूर्ण शरीर में फैले हुए रसवाही स्रोतों में फैल जाते हैं तो सम्पूर्ण शरीर जकड़ जाता है । उस समय सन्तत ज्वर उत्पन्न हो जाता है ।

वातादि तीन दोष, रसादि सात धातु और मूत्र तथा पुरीष, 2 मल-से बारह त्रिदोषज सन्तत ज्वर के आश्रय हैं ।

प्रावृट-पूर्वाह्न आदि काल, दूष्य-(रसादि सात धातु और मूत्र, मल पुरीष ये दो मल) और वातज प्रकृति इनके तुल्य समान और निष्प्रत्यनीक (जिनका कोई-प्रत्यनीक-प्रतिकूल) नहीं है । ऐसे दोष त्रिदोषज ज्वर-सन्तत ज्वर को उत्पन्न करते हैं । यथा

काल-दुष्य-प्रकृतिभिदोर्षस्तुल्यो हि सन्ततम् ।
स निष्प्रत्यनीकः कुरूते तस्माज्ज्ञेयः सदुःसहः ॥

(च०चि० 5/3)

अतः सन्तत ज्वर दुःसह होता है और अपनी अवधि कालमर्यादा तक दिन रात बना रहता है । किसी भी समय साफ उतरता नहीं यदि काल दूष्य और प्रकृति इनमें से कोई भी प्रतिकूल रहता है तो उसके समय में ज्वर उतर जाता है । सन्तत ज्वर रसादि धातु और मलों की सम्यक् शुद्धि (दोष मुक्त होना) तथा दोषों के प्रकृतिगमन (फिर अपने स्वाभाविक रूप में लाना) होने पर सातवें, दसवें तथा बारहवें दिन उतर जाता है और जब उनकी सम्यक् शुद्धि तथा प्रकृतिगमन नहीं होता है तब रोगी को मारता है । किन्तु जब धातु और मल बिल्कुल शुद्ध (दोषमुक्त) हो जाते हैं और कुछ अशुद्ध (दोषमुक्त) रह जाते हैं तब बारहवें दिन अव्यक्त लक्षण ऐसा विसर्ग करके उतरके दीर्घ काल तक चलता है और कृच्छ्र साध्य हो जाता है ।

**गुरुत्व रसादि धातुओं में संततज्वर के लक्षण:-**

**रस गतः धातु** - गुरुत्व (शरीर का भारीपन), दैन्य - (मन की ग्लानि), उद्वेग, अवसाद, वमन, अरुचि, बहिस्ताप, अङ्गमर्द, जृम्भा, हृदयोत्क्लेश ।

**रक्त धातुगत** - रक्तवर्ण और उषास्पर्शवाली पिडकायें निकलना, तृषा बारंबार रक्त मिश्रित थूक आना, दाह, चक्कर आना और प्रलाप संग ।

**मांस धातुगत** - अन्तर्दाह, तृषा, इन्द्रियों का मोह, ग्लानि, शरीर में --- हाथ-पांव बार-बार हिलाना और पिड़ियों का टूटना ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**मेदधातुगत** – स्वेद, अधिक प्यास लगना, प्रलाप, बार-बार वमन होना, असहनीय शारीरिक गंध, ग्लानि, अरुचि, मूर्च्छा ।

**अस्थि धातु गत** – वमन और विरेचन दोनों होना, हड्डियों में टूटने की पीड़ा, हाथ-पांव बार-बार पछाड़ना और श्वास ।

**मज्जा गत** – हिचकी, श्वास, खांसी, आंखों के सामने अंधेरा दिखना, मर्मस्थानों में कटने की पीड़ा, शरीर बाहर से ठण्डा और भीतर गरम ।

**शुक्रगत** – लिङ्ग की स्तब्धता, शुक्रसाव तथा मरण ।

**साध्यासाध्यता** – साध्य-रसगत, रक्तगत मांस और मेदोगत कृच्छ्र साध्य अस्थि तथा मज्जागत ।

**असाध्य** – शुक्रगत

**वर्तमान में वर्णित ज्वरों से साम्यता :-** वर्तमान काल के Typhoid का इससे साम्य कर सकते हैं क्योंकि यह हर समय रहने वाला व 7, 10, 12 दिन में उतरने वाला होता है, इससे भी अधिक काल तक चल सकता है ।

सन्तत ज्वर या तो 12 दिन तक ठीक हो जाता है या 13 वें दिन पुन: स्पष्ट हो जाता है और फिर 14वें, 20वें या 24वें दिन उतरता है । यदि इसमें भी ठीक न हो तो मृत्युकारक होता है परन्तु दुबारा संक्रमण होने से 25 से 36 दिन और 37 से 48 दिन तक रोगी को जीवित देखा गया है । मेरे चिकित्साकाल में हजारों रोगी सन्तत ज्वर के आये उसमें से 2 रोगी तो 60 दिन तक रूग्ण रहे और तब जाकर ठीक हुये ।

**चिकित्सा व्यवस्था :-** अपतर्पणीय चिकित्सा ही प्रशस्त बताई गई है ।

**1. षडंङ्गपानीय विधान :-** नागरमोथा, पितपापड़ा, खस चन्दन, सुगन्धबाला, सोंठ, समान मिलाकर, 64 गुना पानी में डालें और आधा शेष रहने पर सुहाता-सुहाता पिलायें । ग्रीष्म ऋतु में मिट्टी के पात्र में ठण्डा कर पिलायें, इससे पसीना भी आता है और ज्वर वेग शीघ्र शान्त होता है ।

**चरक संहिता का पानक :**

मुस्तपर्पटकोशीरचन्दकोदीयच्य नागरै ॥
शृतंशीतं जलं दद्यात् पिपासाज्वर शान्तयो ॥
च०चि० 3

**2. खूबकलाँ पानीय :** खूबकलां (खाकसी), मुनक्क ग्राम, उन्नाव 5 ग्राम ।
खांसी हो तो मुलहटी 5 ग्राम इनको 350 मि पानी में उबाल 1/2 रहने पर ऐसे क्वाथ को में 3-4 बार पिलायें ।

**3. औषध व्यवस्था :-** नवज्वर होने पर - संजीवनी 2-4 गोली तक मधु के साथ उपरोक्त द्रव्य से दिन में 2 बार दें ।

संताप अधिक Temperatuse rise होने पर :- (1) कस्तुरी भैरव रस 100 मि०ग्राम से 200 मि तक दिन में 2-4 बार ज्वर के लक्षणों के अ मधु से ।

(2) ब्राह्मी वटी (के०क०युक्त) 100 से 200 मि मधु से ।

(3) षडङ्ग पानीय में चन्दन शर्बत मिलाकर चाहिये ।

(4) पाशुपतरस या सौभाग्यवटी 250 मि०ग्राम उष्ण जल से दें । पिष्टी 250 मि०ग्राम चन्दनादि अर्क या चन्दनादिपानक से 1/2 घंट बाद दें ।

(5) रसादि वटी 250 मि०ग्रा० गोदन्ती भस्म मि०ग्रा० जहरमोहरा ।

**अभ्यान्तर उपचार :-**

**(1) गीली पट्टी :-** गुलाब जल में कुछ बर्फ मि उससे भीगी पट्टी माथे पर रखें ।
बर्फ की पट्टी या ठण्डे जल में भिगोकर 100°F तक तापमान आ जाने पर पट्टी लगान कर देना है । नहीं तो तापमान गिरकर शीत होने का भय रहता है ।

**(2) शिरोधारा :-** सिर पर कुछ शीतगुण वाले पदार्थों की धारा टपकाना जैसे बकरी का दूध का दूध, भैंस का दूध या दूध की कच्ची ल

**(3) तैलधारा :-** चन्दनबलालाक्षादि तैल, विष्णु



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



त्रिफला तैल, आंवला तैल, चमेली तैल की धारा बूंद-बूंद कर, माथे पर टपकायी जावे ।

(4) **स्थालीधारा :-** रोगी को पीठ के बल लिटाकर उसके उदर पर ताँबे, कांसे या स्टील की थाली में बर्फ या शीतल जल भर कर रखें, जब तापमान 102° से नीचे गिरने लगे बंद कर दें ।

(5) **मिट्टी का लेप :-** नाभि प्रदेश और उससे नीचे बस्ती प्रदेश में मिट्टी में भिगोकर पट्टी या मिट्टी रखने से भी तापमान शीघ्र गिरता है ।

(6) **शीतप्रच्छद (Wetsheet Pack) :-** ठण्डे पानी में अथवा बर्फ के पानी में भिगोकर चादर से रोगी के सारे शरीर को लपेट देना, गर्दन से लेकर पैर तक।

(7) **शीतलावगाह या परिषेक (Cold tub Bath) :-** शीतल जल से स्नान या तो जल शरीर पर डालते हुए (परिसेक) अथवा शरीर को जल में प्रवेश करते हुए अवगाह किया जाता है । जल यथा सम्भव सहन करने लायक शीतल होना चाहिये और स्नान की मात्रा तापमान गिरने तक, शरीर हल्का होने तक सीमित रहनी चाहिये । 102°F तक ही ।

**प्रलापावस्था Delirium :-**अधिक तेज बुखार होने पर रोगी असम्भव बातें करने लगता है उस अवस्था में :

(1) ब्राह्मीवटी (सुवर्ण +मूल) 100 से 200 मि.ग्राम मधु या शर्बत सन्दल (चन्दन) से दिन में 2-3 बार ।

(2) त्रैलोक्य चिन्तामणि रस - मुक्ता, अम्बर युक्त 100 से 200 मि.ग्राम ।

(3) अपतंत्रकादि बटी - 125 मि०ग्राम दुग्ध से दिन में दो बार ।

(4) वृ० वात चिन्तामणि - 100 से 200 मि०ग्राम मधु से ।

**अनिद्रा** (Insomnia) और अरति (Restlessness) ये दोनों लक्षण प्राय: इकट्ठे मिलते हैं । अत्यधिक तापमान होने पर मस्तिष्क क्षुब्ध होता है । अत: निद्रा नहीं आती, ऐसी अवस्था में :-

(1) योगेन्द्ररस 125 से 250 मि०ग्राम मधु के साथ चटाकर मांस्यादिक्वाथ दें ।

(2) सर्पगन्धानवटी । से 2 गोली जल से ।

(3) मिद्रोदय रस (अहिफन योग) 125 मि०ग्राम जल से ।

(4) चन्दनबलालाक्षदि तैल का शंख प्रदेश में अभ्यङ्ग और उसी का नस्य तुरन्त निद्रा ले आता है । यहाँ तक उसको नेत्राञ्जन रूप में भी प्रयोग कर सकते हैं ।

**मूर्च्छा (COMA)**

(1) **नरसारसुधा नस्य** - नरसार तथा चूना सम भाग मिलाकर डाटबंद शीशी में रख दें । कुछ देर बाद उस शीशी का मुख रोगी के नथुने में लगाकर सुंघावें ।

(2) **कट्फल नस्य**-कायफल पीसकर उसका नस्य दें

(3) **शुण्ठी नरसार नस्य** - शुण्ठ + नरसार पीसकर इसका नस्य ।

(4) **शुण्ठी कणदि नस्य** - शुण्ठ, पीपल, पीसकर उसका नस्य दें ।

(5) **मूर्च्छान्तक रस** - 250 मि०ग्राम दाडिमस्वरस अथवा गो दुग्ध 200 ग्राम से दें ।

(6) **वृ० वातचिन्तामणि** - 125 मि०ग्रा० अश्वगंध चूर्ण 500 मि०ग्राम मधु के साथ चटावें ।

(7) **शीतल जल परिषेक - मुख पर शीतल जल का परिषेक,** अंजन, सुई चुभोना, नाक एवं मुख को थोड़ी देर बंद करना आदि से भी मूर्च्छा टूट जाती है ।

**उत्तरावस्था (1) धातुक्षय** - लघु, सुपच, पौष्टिक आहार यथा सौंफ, इलाइची, मुन्नका आदि से शाधित दुग्ध या यवागु का सेवन ।

**(2) यकृतप्लीहोदर** - कुमार्यासव, आरोग्यवर्द्धिनी वटी पुनर्नवामण्डूर का सेवन ।

उपरोक्त औषध टाइफाइड (Typhoid) ज्वर में निस्संकोच दें । क्लोरमफैनीकोल या फलेजिल एवं अन्य अंग्रेजी औषधों से अधिक लाभकारी निरापद आयुर्वेद औषध है । अत: चिकित्सकों को निस्संकोच प्रयोग में लानी चाहिये ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अम्लपित्त (*Hyperacidity*)

*प्रो०बी०एन०सिंह, पी.एच.डी. (द्रव्य
**डॉ० विनोद कु०सिंह, एम.डी. (

पित्त की विकृति को अम्लपित्त कहते हैं ।

'अम्ल विदग्धं च तत् पित्तम् अम्ल पित्तम्'

(शब्दकल्पद्रुम)

अम्लपित्त शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है अम्ल और पित्त । आचार्य चरक ने पित्त का रस अम्ल माना है, किन्तु आचार्य सुश्रुतानुसार पित्त का रस कटु होता है । सुश्रुत ने स्पष्ट किया है कि जब यह पित्त विदग्धावस्था (Fermentation) को प्राप्त होता है तब उसका रस अम्ल हो जाता है । अत: अम्लपित्त की अनुभूति रुग्णावस्था में होती है । कई बार यह स्वतंत्र व्याधि के रूप में भी उल्लिखित है ।

माधव निदान में माधवकार ने अम्लपित्त को स्वतंत्र व्याधि के रूप में माना है । इन्होंने इसकी परिभाषा निम्न प्रकार से दी है :-

**विरूद्धदुष्टामल विदाहि पित्त प्रकोपिपानान्नभुजोविदग्धम् ।**
**पित्तं स्वहेतु पचितं पुरायत्तद्म्लपित्तं प्रवदन्ति सन्त : ।।**

(माधवनिदान 51/1)

पित्त प्रकोपक कारणों से संचित पित्त जब विदग्ध हो जाता है तब उसे अम्लपित्त कहते हैं । माधव निदान के टीकाकार आचार्य विजय रक्षित ने अम्लपित्त की परिभाषा निम्न प्रकार से दी है - पाचन क्रिया में व्यतिक्रम के कारण अम्ल गुणों का बढ़ जाना ही अम्लपित्त है ।

काश्यप संहिता में अम्लपित्त की परिभाषा निम्न प्रकार की गई है -

**विदग्धं शुक्ततां याति शुक्तमाशये स्थितम् ।**
**तदम्लपित्तमित्याहुर्भूयिष्ठं पित्त दूषणात् ।।**

(काश्यप संहिता )

विदग्धता से शुक्तता की उत्पत्ति होती है और आमाशय में स्थित यही शुक्तता पित्त को दूषित करके अम्लपित्त का प्रार्दुभाव करता है ।

**निदान :-** सुश्रुत संहिता के अन्नपान विधि में उल्लिखित है कि विदाही और अविदाही भोज्य का वैकारिक पित्त के कारण भलीभाँति पाचन नहीं है । चक्रपाणि ने अपनी टीका में लिखा है कि आमा एकत्रित अपूर्ण पाचित अन्न का किण्वन (Fermentation) होकर अम्लपित्त उत्पन्न होता काश्यप संहिता में अम्लपित्त की उत्पत्ति में निम्न का उल्लेख मिलता है -

- विरुद्ध भोजन
- अध्यशन (भोजन के भलीभांति पाचन न होने पर भोजन ग्रहण करना) ।
- पिष्टान्न - उड़द, चावल आदि भोज्य पदार्थ बार-बार ग्रहण करना ।
- अजीर्ण से उत्पन्न आम की स्थिति में भोजन
- अपक्व मद्य आदि का सेवन ।
- गुरू, अभिष्यन्दि पदार्थों का सेवन ।
- अधारणीय वेगों (मल, मूत्र आदि) को धारण
- अति उष्ण, अति स्निग्ध, अतिरूक्ष, अति अम्ल द्रव्यों के अधिक सेवन से ।
- फाणित (राब) तथा इक्षु विकारों (गुड़ आदि) अधिक सेवन करने से ।
- कुलथी की दाल का अधिक सेवन करने से ।
- भुने हुय धान्य, तुच्छ धान्य, चिउड़ा आदि के करने से ।
- दिवाशयन - अधिक भोजन करके दिन में सोने
- भोजन करके स्नान, अवगाहन आदि करने से
- भोजन करते समय बीच-बीच में अधिक पानी से, बासी भोजन करने से अम्लपित्त की उत्पत्ति है ।

माधव निदान में विरुद्ध भोजन, विकृत

* भूतपूर्व प्राचार्य, एस.बी.एम.एन. आयु. कॉलेज, रोहतक
** काय चिकित्सा प्रवक्ता, एम.बी.एस.एस. आयु. कॉलेज, रोहतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अम्ल भोजन, विदाही भोजन, पित्त प्रकोपक भोजन, पान (तक्र, सुरा आदि) का अधिक प्रयोग करने से अम्लपित्त उत्पत्ति मानी गई है ।

**सम्प्राप्ति :-** आचार्य सुश्रुत के अनुसार अम्लरस अप् (जल) और अग्नि महाभूत से मिलकर बना है । पित्त के अपने स्थान से हट जाने से, अग्नि महाभूत के बढ़ जाने से विषमता पैदा हो जाती है जिससे अम्लरस एवं जलन की अनुभूति होने लगती है । अग्नि के साथ-साथ अप महाभूत भी बढ़ जाता है जो अम्ल के रस संगठन में सहायक है और अम्लरस अग्नि के सामान्य कार्य (पाचन) में सहायक है । इसकी व्याख्या अन्य ग्रन्थकारों ने भी पैत्तिक ग्रहणी के संदर्भ में किया है । उपर्युक्त कारणों से वात आदि दोष प्रकुपित हो जाते हैं जिसके फलस्वरूप जठराग्नि मंद हो जाती है । अग्नि के मंद हो जाने से जो कुछ खाते या पीते हैं वह दाह उत्पन्न करता है । सेवन किया हुआ भोजन विदग्धावस्था के कारण शुक्तावस्था को प्राप्त हो जाता है । आमाशय में स्थित यही शुक्त पित्त को दूषित कर देता है । इसी को वस्तुतः अम्लपित्त कहते हैं ।

अभोजनादजीर्णभोजनाद् विषमाशनात् ।
असात्म्यगुरूशीततिरूक्षसन्दुष्टभोजनात् ।।
विरेकवमनस्नेहविभ्रमाद् व्याधिकर्षणात् ।
देशकालर्तुवैषम्याद् वेगानां च विधारणात् ।।
दुष्यत्यग्निः स दुष्टोऽन्नं न तत् पचति लघ्वपि ।
अपच्यमानं शुक्तत्वं यात्यन्नं विषरूपताम् ।।
संसृज्यमानं पित्तेन दाहं तृष्णां मुखामयान् ।
जनयत्यम्लपित्तं च पित्तजांश्चापरान् गदान् ।।

(च०चि० 15/42-46)

भेद :-

(क) दोषों के आधार पर काश्यप संहिता में अम्लपित्त के तीन भेद का उल्लेख मिलता है :-
(i) वातिक (ii) पैत्तिक (iii) श्लेष्मिक

(ख) मार्गानुसार - माधव निदान में रोग के मार्गानुसार अम्लपित्त के दो भेद का उल्लेख मिलता है :-
(i) अधोग अम्लपित्त (ii) उर्ध्वग अम्लपित्त

लक्षण :-विडभेदोगुरूकोष्ठ त्वमम्लोक्लेशः शिरोरूजा ।
हृच्छलमुदराध्मानमंगसादाऽन्त्रकूजनम् ।।
कण्ठोरसी विदहयेते रोमहर्षश्च जायते ।
सामान्य लक्षणं श्वेतार्द्रनशेषश्चौपदेश्यते ।।

(काश्यप संहिता)

(अ) सामान्य लक्षण - काश्यप संहिता में -

- विडभेद (Diarrhoea)
- गुरूकोष्ठता (Constipation)
- अम्लोत्क्लेश (Sour eructation)
- शिरोवेदना (Headache)
- हृच्छूल (Substernal pain)
- उदराध्मान (Tympanites)
- अंगसाद (Letharginess)
- आन्त्रकूजन (Abnormal sound of bowel)
- कण्ठदाह (Acidic regurgitation)
- रोमहर्ष (Horripilation)

माधवनिदान में अविपाक (Indigestion)

- क्लम्
- उत्क्लेश
- तिक्तम्लोद्गार
- गौरव
- हृत्कण्ठदाह
- अरुचि आदि, अम्लपित्त के सामान्य लक्षणों का उल्लेख मिलता है । अविपाक क्लमोत्क्लेश तिक्ताम्लोद्गार गौरवैः ।

(माधव निदान 51/2)

(ब) विशिष्ट लक्षण :-

वातिक अम्लपित्त - के लक्षण में

- शूल (Epigastric pain)
- अंगसाद (Letharginess)
- जृम्भा (Yawning)
- स्निग्धोपशामिता (Relief by fatty substances)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



का उल्लेख है ।

माधव निदान में कम्प (Tremor), प्रलाप (Delirium), मूर्च्छा (Stupor), चिमचिमाहट (Tingling sensation), अवसाद (Depression), शूल (Epigastric pain), तमसोदर्श (Darkness before eyes), विभ्रम (Delusions), मोह (semiconsciousness), रोमहर्ष (Horripilation)

पैत्तिक अम्लपित्त - में भ्रम (Delusions), विदाह (Burning sensation) स्वादुशीतोपशामिता (Relief by sweet & cool substances) आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं ।

श्लेषिमक अम्लपित्त - गुरूत्व (Heariness), छर्दि (Vomiting), रूक्षोष्णोपशामिता (relief by coarse & warm substances) आदि लक्षण काश्यप संहिता में उल्लिखित है ।

माधव निदान में कफनिष्ठीवन (Expectoration), गौरव (Heaviness), जड़ता (Dullness), अरुचि (Anorexia), शीत (Coldness), अवसाद (Depression), दहन बलसाद (Intestinal dyspepsia), कण्डू (Itching), निद्रा (Sleep) आदि लक्षण उल्लिखित है ।

अधोग अम्लपित्त के लक्षण - तृष्णा (Polydipsia), दाह (Burning sensation), मूर्च्छा (Stupor), मोह (Semiconsciousness), भ्रम (Delusions), हृल्लास (Nausea), कोठ (Abortive urticaria), अग्निसाद (Intestinal dyspepsia), हर्ष (Horripilation), स्वेद (Sweating), अंगों का पीला पड़ जाना (Pallor) आदि लक्षण पाये जाते हैं ।

उर्ध्वग अम्लपित्त - इसमें वमन (Vomiting) जो विभिन्न प्रकार की यथा हरा, पीला, नीला, काला हल्का या गहरे लाल रंग का, धोये हुये मांस के ज तरह अति पिच्छिल (चिपचिपा), अच्छा (C होती है । इसका रस अधिक अम्ल होत भोजन करने के तुरन्त बाद या विदग्धाव (1-2 घंटे बाद) अथवा बिना भोजन कि तिक्त एवं खट्टा वमन होता है ।

इसी प्रकार का अर्थात् तिक्ताम्ल (Eructation), हृदय, कुक्षि और कण्ठ में दाह (Burning sensation), शि (Headache), हस्तपाद में दाह (Bu sensation), शिरःशूल (Headache), ह में दाह (Burning sensation in palm & s अत्यधिक अरुचि (Anorexia), (Pyrexia), कण्डू (Itching), मण्डल वि अविपाक उत्क्लेश (Nausea) आदि माधव निदान में उल्लिखित है ।

**चिकित्सा सिद्धान्त -**

(क) संशोधन चिकित्सा -

(i) वमन - सर्वप्रथम सभी अम्लपित्त में वमन चाहिए । वमन कर्म हेतु निम्बपत्र, पटोल मदन फल, सैंधव लवण तथा मधु का श्रेष्यकर है ।

(ii) मृदु विरेचन - वमन के बाद मृदुविरेचन उपयुक्त होता है अथवा अधोग अम्लपित्त ही मृदुविरेचन कराना अच्छा है । इसम त्रिवृत्त सर्वोत्तम द्रव्य है जिसका प्रयोग उचित है ।

(iii) स्नेहन अनुवासन - वमन विरेचन के बाद अनुवासन कराना चाहिए । इस हेतु घृत प्रयोग कराना चाहिए । नारियल की गरी भी में लाना उपयुक्त होगा । इसके अतिरिक्त घृत, पिप्पली घृत, शतावरीघृत, नरायण प्रयोग श्रेयकर है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(iv) निरूह या आस्थापन बस्ति - का प्रयोग करना जीर्ण अम्लपित्त में सर्वथा उपयुक्त है ।

(ख) संशमन चिकित्सा -

(i) निरान्न चिकित्सा - इसके लिए किसी पर्पटी कल्पना से कल्प कराना उपयुक्त है । भोजन में दुग्ध का प्रयोग कराना लाभप्रद है । फल में सन्तरा, खरबूजा देना ठीक रहता है ।

(ii) सान्न चिकित्सा - पर्पटी या अन्य कोई औषध योग दे सकते हैं । साथ में दलिया या मुग्दयूष दे सकते हैं ।

(ग) चिकित्सा में प्रयुक्त औषधियाँ -

(i) एकल द्रव्य चिकित्सा

- भूम्यामलकी, मधुयेष्ठी, शतावरी, आमलकी, कूष्मांड, गुडूची आदि ।

(ii) औषध योग -

चूर्ण - अविपत्तिकर चूर्ण, आमलकी चूर्ण, शतावरी चूर्ण, मधुयेष्ठी चूर्ण आदि ।

खण्ड/ अवलेह - कूष्माण्ड अवलेह, नारिकेल खण्ड आदि ।

भस्म/पिष्टी - प्रवाल भस्म, मुक्तापिष्टी, मुक्ताशुक्ति भस्म, शंखभस्म, प्रवाल पिष्टी आदि ।

वटी - शूल वज्रिणी वटी, ब्राह्मी वटी आदि ।

रस/लौह - सूतशेखररस, लीलाविलास रस, कामदुधा रस, अम्लपित्तान्तक रस/लौह, चन्द्रकला रस, प्रवाल पंचामृत रस, धात्री लौह आदि ।

(घ) यौगिक चिकित्सा -

- कुंजल क्रिया (अनौषधीय वमन)
- शवासन
- शीतली प्राणायाम

झटपट आराम फुर्ती से चले काम...

बैद्यनाथ

गैसोल पाचक

गैस तथा हाजमा के लिए लाभदायक व कब्जियत नाशक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# दही औषधि भी है

* परिधि जैन

चिकित्सा वैज्ञानिकों और आहार विशेषज्ञों का मानना है कि दही स्वास्थ्य के लिए अति उत्तम है । यह हल्का तथा सुपाच्य होने के साथ-साथ शरीर में स्थित कई विजातीय द्रव्यों को निकालने में अधिक सक्षम है । यही कारण है कि आयुर्वेदिक ग्रन्थों में दही को 'भू-लोक का अमृत' कहा गया है । यह उत्तम, बल-कारक, स्वादिष्ट, रुचिकर, पाचक, स्निग्ध, पौष्टिक तथा वातनाशक है । स्वाद में कुछ कषाय तथा विपाक में यह अम्लीय होता है ।

विशेषज्ञों का मानना है कि दही में विटामिन 'बी', विशेषकर थायमिन, रिबोलेवीन और निकोटेमाइड की मात्रा दुगुनी हो जाती है । इसमें प्रोटीन की श्रेष्ठ मात्रा तो होती ही है साथ ही कैल्शियम भी इसमें प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जो हमारे शरीर की वृद्धि तथा हड्डियों को मजबूती प्रदान करने में सहायक होता है ।

हम अपने दैनिक जीवन में प्राय: गर्म दवाइयों और गर्म पेय पदार्थों का उपयोग करते हैं, जो आंतों के बैक्टिरिया फ्लोरा को प्रभावित करता है । इससे हमारी पाचन शक्ति में कमी आ जाती है । दही इस कुप्रभाव को दूर कर हमारी पाचन शक्ति को संतुलित करने में हमारी काफी सहायता करता है ।

दही में हृदय रोग, उच्च रक्तदाब तथा गुर्दे की बीमारियों को रोकने की अद्‌भुत क्षमता है । यह हमारे रक्त में बनने वाले कोलेस्ट्रोल नामक घातक पदार्थ को बढ़ने से रोकता है, जिससे वह रक्त शिराओं में जमकर रक्त प्रवाह को प्रभावित न करे और हृदय गति सुचारु बनी रहे ।

चिकित्सा वैज्ञानिकों ने काफी परिश्रम के बाद यह निष्कर्ष निकाला है कि दही के सेवन से ट्यूमर तथा कैंसर जैसे भयंकर रोगों से भी छुटकारा पाया जा सकता है, क्योंकि दही खाने के एक घंटे बाद ही उसके 80 प्रतिशत अंश को शरीर आत्मसात कर लेता है जबकि दूध सेवन के एक घंटे बाद केवल 30 प्रतिशत अंश ही शरीर आत्मसात कर पाता है ।

गर्मियों में घरेलू इलाज के लिए यह एक रामबाण औषधि है । इन दिनों दाह, खाज, खुजली, फोड़े-फुंसी, अजीर्ण, पसीने की दुर्गन्ध, अधिक प्यास लगना, लू, सनबर्न, दस्त लगना इत्यादि परेशानियां पैदा हो जाती हैं । इन सभी में दही को अलग-अलग ढंग से सेवन करने लाभ मिलता है ।

**फोड़े-फुंसी :-** फोड़े-फुंसी में दर्द और होने पर पानी निकाला हुआ दही उस पर बांधने से मिलता है । सरसों के तेल और दही की बराबर मिलाकर बनाए गए लेप को दिन में तीन बार फोड़े-फुं पर लगाने से काफी फायदा होता है ।

**पसीने की दुर्गन्ध :-** गर्मियों में शरीर से पसीना निकलता है । पसीने की बदबू दूर करने के यदि दही और बेसन मिलाकर शरीर पर मालिश कर आधे घंटे बाद स्नान करें तो इससे पसीने की दुर्गन्ध जाएगी और काया भी कांतिमय हो जाएगी ।

**मुंह में छाले :-** पेट में कब्ज तथा अजीर्ण अवस्था के कारण मुंह में छाले उभर आते हैं । इन करने के लिए शहद और दही बराबर मात्रा में मि सुबह-शाम सेवन करने से मुंह के छाले दूर हो जाते

**बवासीर :-** दही में सेंधा नमक और पिसी अजवाइन मिलाकर पीने से बवासीर में लाभ होता है। के उपयोग से नष्ट हुई बवासीर पुन: नहीं उभरती।

**नशा उतारने में :-** भांग, गांजा तथा शराब नशीले पदार्थों के सेवन से यदि नशा अधिक बढ़ ज एक दिन पहले जमाए गए दही को पिलाएं, इससे नश उतर जाएगा ।

**बालों के लिए :-** बालों के सही देखभाल वाले, दही का उपयोग बाल धोने में भी करते हैं । द चुटकी भर पिसी हुई काली मिर्च मिलाकर सिर में से बालों की अच्छी सफाई हो जाती है । इससे बाल मुलायम तथा काले भी रहते हैं और बालों का गिर बंद हो जाता है । दही का उपयोग बाल धोने के केवल गर्मियों के दिनों में करना चाहिए, जाड़ों में

**मोटापा कम करने में :-** दही के सेवन से में फालतू चर्बी कम करने में मदद मिलती है, इ मोटापा कम करने के लिए दही या मट्ठे का सेवन उपयोगी है । इसके अलावा दही में नौसादर मि लगाने से दाद भी ठीक हो जाता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# सोरीयासिस (PSORIASIS) रोग की आयुर्वेद में अवधारणा

* डा० विजय कुमार राय

** डा० राधे श्याम शर्मा

सोरीयासिस एक हठी रोग होता है । आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में - बिना संक्रमण के होने वाला, जो गोल-गोल चकत्ते, थोड़ा उठे हुये, शुष्क लाल एवं जो चाँदी जैसी पपड़ी वाले होते हैं, उसे सोरीयासिस रोग कहते हैं । इस रोग के उत्पन्न होने में कारण एवं विकृति (Etiology) का पूर्ण ज्ञान अभी भी होना बाकी है । इसके होने का जो मुख्य कारण आधुनिक चिकित्सक मानते हैं, वह यह है कि बाह्य त्वक (Epidermis) की मोचन (Replacement) दर सामान्य से बहुत ज्यादा हो जाती है । सामान्य त्वक के लिए जो लगभग 28 दिन का समय होता है, वह मोचन (Replacement) 3 से 4 दिन में होने लगता है । इस कारण से अन्त: त्वक (Dermis) के ऊपरी सतह पर रक्त कोशिकाएं फैलने लगती हैं तथा कुण्डलित रूप में स्थित होने लगती हैं । त्वचा गहरे रंग की एवं कड़ी (Keratinization) होने लगती है । आज विश्व में सौन्दर्य का बड़ा महत्व है परन्तु सोरीयासिस रोग सौन्दर्य के लिए दुश्मन जैसा है, इसी कारण इस रोग से ग्रस्त व्यक्ति हीनता सत्वता का शिकार हो जाता है । एलोपैथी के चिकित्सक स्पष्ट कहते हैं कि इनके पास इसका कोई इलाज नहीं है ।

आयुर्वेद में सभी त्वक रोगों के लिये कुष्ठ शब्द का प्रयोग होता है । त्वचा रोगों की गंभीरता के आधार पर इनके दो वर्ग बनाये गये हैं । एक वर्ग है क्षुद्र कुष्ठ तथा दूसरा वर्ग है महाकुष्ठ । सोरीयासिस रोग को आयुर्वेद के विद्वान एक कुष्ठ, किटिभ या मण्डल कुष्ठ मानते हैं । जिस त्वचा से 'स्वेदन न हो, रोग बड़े, मूल वाला हो तथा मछली की त्वचा के सदृश हो, तो उसे एक कुष्ठ कहा है तथा जो त्वचा श्याव वर्ण की, व्रण सदृश स्पर्श में हो, खुरदरी हो तथा कठोर हो तो उसे किटिभ कुष्ठ कहा जाता है । सर्वप्रथम तो सोरीयासिस एक कठिन व्याधि है जबकि कुष्ठ एवं किटिभ क्षुद्र कुष्ठ है जो साध्य होते हैं । सोरीयासिस रोग रक्त वर्ण एवं चान्दी (white) के रंग का होता है, जिसमें त्वचा टुकड़ों मे छूटती रहती है । इस रोग के चकत्ते (Patches) गोल-गोल, आपस में मिले हुए होते हैं । एक कुष्ठ में मत्स शकलोपम एक लक्षण सोरीयासिस के लक्षण के रूप में माना जा सकता है । सदृश, खुरदरे स्पर्श वाला, यह किटिभ का लक्षण सोरीयासिस के करीब है । परन्तु, एक कुष्ठ एवं किं सम्पूर्ण रूप में सोरीयासिस रोग को प्रदर्शित नहीं करते

श्वेत (White Patch), रक्त (Erythema ous), उत्सन्न (Raised Patch), मण्डलम् (Round Coin shape), स्थिरं (Stable), अन्योन्यसंस (Constituent), लक्षण जो मण्डल कुष्ठ के हैं, सोरीयासि रोग के मुख्य लक्षणों से स्पष्ट रूप से मेल खाते हैं । स्ल (Denselesion), गुट्टेट सोरीयासिस (Guttak Psoriasi को स्रुति (Secretory), पिताभ (Yellowish=Pu तथा गुरू (Heavy in Feeling) लक्षण पश्चुलर सोरीयासि (Pustular Psoriasis) के अत्यंत करीब है । स्निग्ध (Moist), कण्डू (Itching) लक्षण फ्लेस्जुरल (Flexu Psoriasis) सोरीयासिस से स्पष्ट मेल खाते हैं । मण्ड कुष्ठ का स्लक्षण लक्षण यह बताता है कि सोरीयासि ग्रस्त त्वचा की तुलना में सामान्य त्वचा चिक (Surrounded by smooth area) होती है तथा कृ लक्षण, सोरीयासिस के उपद्रव या द्वितीय संक्रम (Secondary Injection) की तरफ इशारा करता है उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट है कि सोरीयासि रोग के मुख्य लक्षण, प्रकारों के लक्षण एवं उपद्रवों लक्षण मण्डल कुष्ठ के लक्षण हैं । चिकित्सा की दृष्टि मण्डल कुष्ठ कृच्छ्र माना गया है तथा सोरीयासिस रोग कठिन रोग है । अत: यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता कि सोरीयासिस आयुर्वेद का मण्डल कुष्ठ है ।

सोरीयासिस रोग की सफल चिकित्सा आज आयुर्वे के द्वारा की जा रही है । संशोधन कर्म के द्वारा त्वक व शीघ्र मोचन कम होता है तथा शमन चिकित्सा (लेप ए आभ्यान्तर औषध प्रयोग) से रुग्ण त्वचा धीरे-धीरे सामान होने लगती है । पञ्चतिक्त घृत गुगुल, कुष्ठघ्न महा कषाय मन: शिलादि लेप, तेल 777 आदि अत्यन्त उपयोगी हैं

* लेक्चरर, चौधरी देवी लाल कालेज ऑफ आयुर्वेद, जगाधरी, हरियाणा

** असो० प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, पंचकर्म विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# बरसाती बहार में आरोग्यदाता आहार-विहार

* कविराज दिवाकर ठाकुर, जी.ए.एम.एस. औनर्स (पटना) डी.एससी.ए. (आयुर्वेद बृहस्पति)

पूर्ण स्वस्थ रहने से ही मनुष्य इहलौकिक एवं लौकिक कार्यों को सम्पन्न करने में सक्षम हो सकता है। आराम की कामना करने वाले मनुष्य को दिनचर्या, चर्या एवं ऋतुचर्या का अनुसरण करना चाहिए।

आयुर्वेद विज्ञान में काल विभाजन के अन्तर्गत और चन्द्रमा की गति को दर्शाते हुए वर्ष को दो विभाग ए हैं जिन्हें उत्तरायण बदलिणायन कहते हैं। उत्तरायण आदान काल कहते हैं, इसमें शिशिर, बसन्त और ग्रीष्म तु का समावेश है। दक्षिणायन को विसर्ग काल कहते । इसमें वर्षा, शरद और हेमन्त ऋतु को लिया गया है।

बिसर्ग काल की प्रथम ऋतु वर्षा ऋतु है। इसमें र्य की गति दक्षिणायन होती है। भूमण्डल पर अपनी तल किरणों को बिखेरता हुआ जगत को तृप्त करता है। ऋतु में प्राणियों का बल क्षीण रहता है।

भीषण गर्मी की तपिश के बाद रिमझिम या सलाधार बारिश से हर कोई का चेहरा प्रफुल्लित हो जाता । सावन आया, बहार लाई व खुशहाली लाई। देखते खते पूरा समां हरियाली से भर जाता है। मानसून में कृति का बदला हुआ अन्दाज हमें मजबूर कर देता है कि न भी उसकी ही तरह बरसाती रंगों से सराबोर हो जायें। ड़ों की कौन कहे युवक, युवतियाँ व महिलाओं के चेहरे ो खिल उठते हैं। मानसून की पहली दस्तक होते ही ागों के रहन-सहन में बदलाव नजर आने लगता है। जब र्षा की पहली बून्द पृथ्वी पर पड़ती है तो पृथ्वी अपने ानन्द की अनुभूति की सोन्धी-सोन्धी सुगंध में प्रकट रती हैं, जो पेड़-पौधे, जीव-जन्तुओं, पशु-पक्षियों और नुष्यों के लिए अमृत का कार्य करती है।

वर्षा का जल शुरू में स्वच्छ रहता है, परन्तु बाद वायु मंडल तथा जमीन के सम्पर्क में आने से उसमें नेक विकृतियाँ आ जाती हैं। प्रत्येक ऋतु का अपना लग-अलग प्रभाव रहता है। ग्रीष्म कालीन सूर्य की तीक्ष्ण करणों से उत्पन्न असहनीय पीड़ा को वर्षा ऋतु शान्त कर न में हर्ष और उल्लास उत्पन्न करती है, वहीं दूसरी ओर इसका अपना दुष्प्रभाव होता है। यह तो विधि का विधा है कि जिसमें गुण है, उसमें अवगुण भी सन्निहित रहता है इस ऋतु में दो महीने का अस्तित्व रहता है, सावन औ भादों।

आकाशीय वर्षाकालीन जल की बून्दें भूमि गिरने से वाष्प निकलने के कारण जठराग्नि व बल क्षी होकर वातादि दोषों को कुपित कर देते हैं। इस स्थिति थोड़ी-सी असावधानी बरतने से ज्वर, वातवह संस्थान विकृति, फुफ्फुसीय विकृति, पाचन सम्बन्धी विकार, कीट पुरानी चोट, दर्द की पुनरावृति आदि रोग शामिल हैं। पा शक्ति कमजोर के कारण इस ऋतु में लघु व सुपाच्य भो का सेवन हितकर होता है। वर्षा ऋतु में कई संक्रामक रो का प्रचार-प्रसार अधिक रहता है क्योंकि पानी संक्रमित जाता है। अतः स्वच्छ जल ही पीना चाहिए। यदि पानी और आहार-विहार पर ध्यान दिया जाय तो इस के कुप्रभाव से बचा जा सकता है।

आजकल एक्वागार्ड फिल्टर, जीरोवी जैसे सा से पानी को स्वच्छ किया जाता है, परन्तु इस सबमें सर्वो यह कि पानी उबालकर पिया जाय। एक्वागार्ड से निक पानी भी स्वच्छ रहता है लेकिन चौबीस घंटे से ज इसका पानी प्रयोग में नहीं लाना चाहिए। अगर कु तालाब, नदी आदि का पानी पीना हो तो फिटकिरी पोटाश आदि द्वारा शोधन करके व्यवहार में लाना हितावह होता है। जठराग्नि को प्रदीप्त करने के पीपल, पीपरामूल चव्य, चित्रक, सोंठ, काला नमक, आदि का सेवन करना चाहिए। इसके अतिरिक्त जौ, पुराना शालि चावल, यूष, पशु-पक्षियों का माँस रस, अम्ल, लवण, स्निग्ध, उष्ण एवं सुपाच्य आहार ग्रहण श्रेयस्कर होता है। करेला, अदरक, लौकी, जीरा, सेवन से वर्षा ऋतु का दुष्प्रभाव नहीं होने पाता है। आम, फालसा, अंजीर एवं खजूर भी इस ऋतु के अनुकूल होता है।

वर्षा ऋतु वातप्रकोपक होता है, इसलिए ब

* किडनी रिसर्च एण्ड इन्स्टीट्यूशन ऑफ आयुर्वेद, चाँदमारी कार्नर, पटना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तेल मालिश करना चाहिए । शीलन युक्त स्थान का परित्याग करना चाहिए । वर्षा होने पर मच्छर, मक्खी आदि का प्रकोप अत्यधिक बढ़ जाता है । इससे बचने के लिए मच्छरदानी का प्रयोग व डीडीटी का छिड़काव करना चाहिए । निवास स्थान के आसपास गड्ढे, नाला में पानी का बहाव एवं गन्दगी जमा नहीं करनी चाहिए क्योंकि ऐसी जगहों में कीटाणु उत्पन्न होते हैं । वमन-विरेचन द्वारा शरीर का संशोधन अवश्य करना चाहिए ।

परिधान विशेषज्ञों का कहना है कि गरमी और मानसून दोनों साथ-साथ चलते हैं । इसलिए मानसून में ऐसे कपड़ों का चयन करना चाहिए जो भींग जाने पर बदन को ठंडक पहुँचावे, बरसात में भींग जाने पर शीघ्र सूख भी जाय । कॉटन, शिफॉन, जोर्जेट, नेट लिवेन, आदि से बने कपड़े पहनावा में उपयोग करना चाहिए । लाइक्रा, पोलिस्टर, नायलोन ट्रान्सपेरेन्ट, बहुत अधिक मोटे वस्त्रों का व्यवह हानिकारक होता है ।

विषैले जीव-जन्तुओं का प्रकोप भी वर्षा ऋतु अधिक होता है । वर्षा के पानी से भरे बिलों के कारण स बिच्छू आदि घर की तरफ आ जाते हैं । घर के अन फिनाइल, डेटॉल, किरासन तेल का छिड़काव कर चाहिए । खाट, चौकी, पलंगों को फर्श से ऊँचा उठाव तथा रात में प्रकाश का इन्तजाम करके इनसे बचा सकता है । पाचकाग्नि मन्द होने के कारण गुरू आसार जै खीर, चावल, पुआ, अरवी, भिण्डी, अधिक व्यायाम, धू खूले स्थान में सोना, दिन में सोना तथा रात्रि जागरण हा पहुँचाता है ।

उपरोक्त चर्चा का अनुसरण किया जाय अग्निमांद्य, दुर्बलता, विषमज्वर, अतिसार चर्म रोग त जीवाणु जन्य व्याधियों से बचा जा सकता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# atho physiology and management of Allergic disorder in Ayurved

[1]Dr. N.S. Shukla, M.D. (Ayu

The term Allergy has come to light in the st century only. There after, a great deal of work as been carried out in this regard throughout the orld.

Allergy is the altered immune response. It defined as alios - other, ergon work i.e. an quired abnormal response to a substance llergen) that doesn't cause a reaction. It is the action which is not found to average individual t this type of reaction is common to a particular dividual. This is one of the reasons, why Charaka as advised [ पुरुषं पुरुष वीक्ष्य ] to examine each dividual.

Allergy or hyper sensitivity is classified in ur types viz.

Type I - Anaphylactic
Type II - Cylotoxic
Type III - Immune Complex mediated
Type IV - Delayed.

Allergy can be understood on the following asis according to Ayurveda.

Prakruti [individual constitution]
Asatmya [individual homologicity]
Viruddha - aahar [food habits]
Ama [digestion and metabolism]
Oja vikriti [altered immune response]
Khawaiguna [pathological changes in the rgans of the body due to previous diseases]

**PRAKRUTI :-**

Prakruti or Partyatmaniyataprakruti individual's own constitution) one of the important actors in determining allergy.

The immune system is highly specific in ature and differs from individual to individual. It is especially in T - lymphocytes, mast cells, asophills etc. They carry particular receptor sites and when a particular antigen attached to it will destroy mast cells and liberate immune response mediators which produce hypersensitivity reactio They cause broncho constriction, vasodilatatio and shock and even death.

This is highly specific. The allergic reactio also follows the same but may not occur in fi exposer, but can occur even in subsequent one The changes in the receptor site, memory cel and immune mediator occur which recognize t allergen and liberate histamine, which produc allergic reaction.

Allergy is the reaction of a specific allerg to a particular person where as infection is comm to a mass. Allergic manifestation may occur d to a particular substance in an individual and n to many people as is seen in infectious diseas Thus the knowledge of individual Prakruti is a important.

Prakruti is the individual's constitutio Prakruti is also responsible for the state of hea and disease. But in allergic manifestati प्रत्यात्मनियता प्रकृति is more important.

means Def. C
प्रति - individual (everyone)
आत्म - Soul or body
नियता - specific

Thus the meaning is the Prakruti tha specific for a particular individual and not a ma

**VIRUDHA AAHAR :-**

Food we eat, is a combination of ma things, which are helpful or synergic, but so combinations may disturb homeostasis of bo so they are contraindicated. Charaka in Sutra mentioned 18 types of virudha-aahars. In the N of diseases like raktapitta, pandu, kustha, sh virudhas are mentioned. In practice in disea especially genetic disorders like thallasimia, s cell anaemia, G 6 P.D. virudha aahara-vihar m be playing a great role. The communities in w

[1] Lecturer, G.A.U., Jamnagar.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



the above genetic disorders might be consuming specific combination of food since generation. The genes might have changed their form after many generations. For example - these communities in which food is like onion and milk togather.

The use of virudha aahara may lead to shandya. andhya. visharpa, udar. ulcer, visphota. unmade, bhagandara, murchha, mada. adhmana, glagraha, pandu, amavisha, kitasa, kustha, grahani, shotha, amlapitta, jwara, peenesa and Santana dosha, mrityu-death, anaphylactic shock. (Ch.Su. 27).

The diseases mentioned in Ch.Su. 27, some porduce immediate effect, some late effect and some may cause gene mutation.

Effect of virudha aahara depends on Prakruti. Vaya (age), extent of use and bala. All these factors affect the body and provocation of dosha and vitiation of dhatus.

Ama as far as allergic reactions are concerned the undigested protein is responsible for allergic manifestation. In type I anaphylactic, the protein molecule binds the receptor sites and than liberates inflammatory mediators like histamine, brady kinis etc.which may produce allergic manifestations.

Auto immune disease like SLE. auto immune hemolytic anaemina are also due to virudha aahara.

Along with the combination of food Charaka mentioned some food article which do not suit to many people and may produce disease. They are ahitatma. They may produce allergic reaction.

ASATMYA :

Satmya means homologus or suitable and are nourishing to the body i.e. suitable. These may be the aahara (food), vihara (daily regimen and environmental factors) and aushadha (treatment) which are helpful in control of diseases.

On the other hand asatmya is responsib for disease or may worsen the disease. They m lead to allergic disorders also.

It is clear that food, surroundings, cloth and drugs may cause allergic manifestations.

AMA :-

Ama is the undigested unmetabolize substance. When agni is not able to metaboli metabolities, the intermediate substance whe accumulated is called ama and will provoke th dosha and vitiate dushya and produce disease. should be understood that mandagni is the caus and the product formed by incomplete digestio metabolism or tranformation is called Ama.

Ayurveda gives great importance to agn Agni is responsible for digestion metabolism ar transformation. Generally in majority of disorde mandagni and ama are responsible for productio and disease.

As far as allergy and allergic manifestatic the histamine is the mediator, which is metabolize by histaminase but in some person, when th histamine is liberated by the lysis of mast cells the histamine is not metabolized, hence it is als called ama.

Thus, Ama is produced by mandagn which may be the level of Jatharagni dhatu agn and bhootagni. The undigested, unmetabolize untransformed material, which cannot b assimilated in the body is called Ama.

OJA - VIKRUTI :-

Ojas is responsible for the maintenanc of healthy state and resistance against diseases Charaka says "Bala is responsible to contro prakupita dosha,

When the ojas or bala is vitiated o decreased the disease is produced or increased and hypersensitivity to particular substance is



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



oduced.

Charaka in Jwara - Chikitsa uses three rms viz. Sapratyanika, nispratyanika and atyanika bala kshaya. These three terms are used r resistance or immunity.

Sushruta mentions three types of ojas iseased conditions) viz. Visransha, Vyapada and haya. Vyapada means changes in the properties ojas. Dalhana says that visranasha means hana chyuti and vyapada means anyathapatti.

Sthana has two meanings - (1) Structural nd functional integrity and (2) location. Here hanachyuti (visransa) can be understood in both e meaning. The changes in quality of ojas are entioned by Charaka in madatyaya chikista.

Sushruta gives the symptoms of sransha, vyapada and kshaya. In vyapada the ymptoms are (1) stabdha guru gatrata, (2) vata ofa, (3) varnabheda, (4) glani, (5) tandra, (6) nidra c. Over and above some more symptoms entioned in ojas - visransa. Thus, auto immune, iseases, auto immune hemolytic anaemia, rythroblastosis fatalis, good posture's disease, rthus reaction, serum sickness, SLE etc. which re called auto immune diseases can be compared ith the symptoms of ojo vyapada.

In the diseases like Jwara (Pyrexia), andu (anaemia), Prameha (urinary anamolies) etc. ja vikruti takes place, Sushruta says, ojo isransate yasya pitta anil samuchichhryata.

In Charaka Sutra 28, two types of bala iz. Vyadhi Utpada Prati bandhaktva and vyadhi ala virodhitva are mentioned. The first one revents the disease while the second fights gainst the disease.

if they are reduced the disease may occur r may be increased.

In all types of hypersensitivity of vikruti or bala vikruti plays an important role in one for or other.

KHAVAIGUNYA OR SROTODUSTI :-

Khavaigunya or srotodusti is the importa process in pathogenesis of diseases. When th doshas are provoked, they move throughout th body and settle to a particular site स्थानसंश्रय an then produce disease. In the same way histamine when irritates the bronchous produce asthama: wh reaches skin produce urticaria and in GIT ac peptic disease. So the site is importan Khavaigunya means structrual changes in the bo organs. They may of sudden onset आशुकारी gradual onset. चिरकारी

Khavaiguna is responsible for allerg manifestation. Charaka mentions that if prak sthapana is most important to complete eradicati of disease. Prakruti - Sthapana means to bring t previsously diseased organ to its norm constitution. Lowered vitality gives opportunity the doshas to produce diseases.

Khavaiguna is clearly seen in the disea like allergic rhinitis, and allergic bronchitis. It c also be correlated with type II, III and hypersensitivity.

For example, unless the nasal muco membrance is not brought to its norm composition recurrent allergic rhinitis will occur. T real line of treatment is to bring the nasal muco membrane to its normally. In allergic bronchitis bronchial asthama the same is true.

SAMPRAPTI :-

In pathogenesis of allergic disorders t stepwise samprapti may be as under. The N causes khavaigunya, ojo-vikruti a hypersensitiveness of the organ and thereb provoke doshas. When doshas settle in the dis doshadushya sammurrchhana will lead to production of diseases.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Schematically samprati can be understood as under.

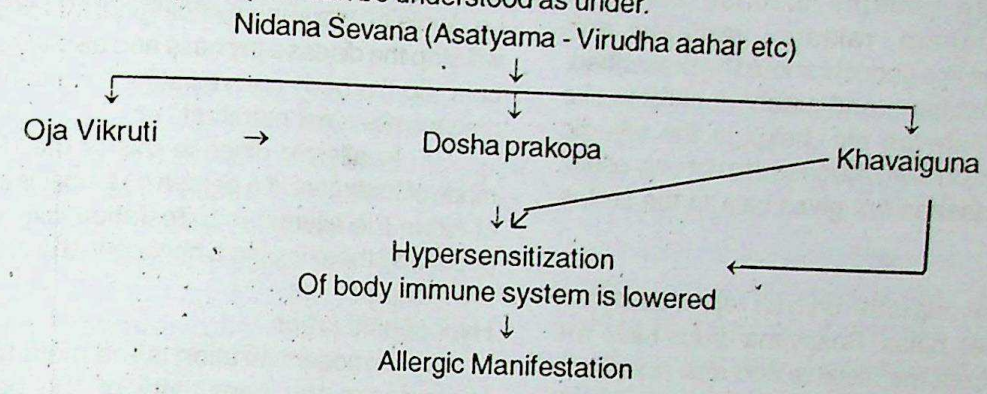


Sensitization
↓
Ig E production
↓
Mast cells destruction
↓
Release of Mediators
↓
Clinical Manifestation

Management :-

Most of allergic manifestation can be easily controlled by Ayurvedic means. But in certain conditions Ayurvedic medicine has very little role to play as they require highly specialized intensive medical care. They are anaphylactic shock, anaphylojd reaction, serum sickness, rejection etc.

In other manifestation, Ayurvedic, medicines have great role to play and it is not wrong in saying that Ayurveda can very well treat these diseases. As Ayurveda keeps more emphasis to immunity and bala and treatment is to build up the immunity in each cells of the body.

The management of allergic disorders includes following.

1. Srotas shuddhikar chikitsa by shaman and shodhana treatment or both. संशोधनं संशमन निदानस्य वर्जनम् (च०चि०) ।
2. Rasayana
3. Nidana parivarjana
4. Hyposensitization

Srotas Shuddhikar Chikitsa :-

Diseases occur due to dosha-dusl sammurchchhana in some organ or system of body. So srotas-suddhikar chikitsa wil prove to fruitful. This will not only correct sammurchchhana, but also nourishes srotas increase bala of dhatus. So the treatment must planned in that way.

In treatment of any disease the organ the site of disease (dhatudusti) must be correc first and then the morbid doshas. स्थानं जयेडि पू स्थान स्थस्याविरोधतः ।

In dealing with sthanastha dosha must not neglect organ or srotas in which disea has taken place. In the management of aller rhinitis and allergic bronchitis. Use of sunthi pippali will prove to be fruitful because it not o is kaphagna but also gives bala to the respirat system. In the same way in tamak-swas (aller bronchitis) Charaka has prescribed oil massa and swedana (fomentation) on the chest and ba This treatment not only clears sleshona but a brings softness in the srotas. खानि मार्दवमाय (च०चि०।)


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



In auto immune disease also like aemia, pittahara, raktagni vardhaka and ayana drugs like guduchi should be prescribed. rticaria virechana and pittahara chikitsa like use of Shatavari etc. helps in the allergic nifestations on skin. All these are not only useful rovoked dashas but gives bala to the srotas .

sayana :

Rasayana is the drug for rejuvenation and increases balas. Rasayana drugs have the perty to cure the disease and also nourishes dhatu, so they increase immunity and also check pathological process occurring in allergic dition when immunity is restored, it will act as ventive and curative treatment. In oja vyapada ayana drugs are prescribed.

Rasayana treatment will nourish all the tu. The effect of Rasayana treatment is long memory increase medha (grasping power), gya (healthy life), Taruna vayas energetic like ng people; prabha (luster), Varna (complexion), ara audarya (voice), strength of the body and sory organ, vak siddhi, pranati, kanti etc.

Here specific resayana acting on particular tas dhatu will be more useful. They will not only e disease but also increase bala and will make body capable to prevent the disease.

lan Pari Varjana :-

Nidan parivarjana means to restrain from ng the etiological factors which are responsible disease. This is mentioned by both Charaka d Sushruta as a main line of treatment.

In this method of treatment the person is vised not to indulge in the use of etiological factors of the disease. This will help in two ways i.e. avoiding the known etiological factor the body will stop the disease-process and also will increase bala. So the body can resist to the nidan and the disease does not manifest.

In allergic disease this is the important mode of treatment. If a person no longer is in contact of nidan the allergic manifestation will no longer occur and there is also a chance in the changes in the receptor sites.

Hyposensitization :-

Hyposensitization is the main treatment to decrease the sensitivity of the body to particular substance.

In describing asatmya Charaka says that one has to stop the use of asatmya and to avoid the substances which are provocative of doshas in a particular person. One method used as a folk medicine not mentioned in any classic is the use of charcoal prepared from the specific food stuff. This charcoal hyposensitized the specific allergy of food. The results are amazing specially in food allergy. The modern science has developed the use of certain vitamins for increase of resistance in the body.

The allergens which produce allergy are if the allergen is known Charaka suggested a method of aclamatizing the allergen. It is to make use of the same allergen is very small close to ¼th dose and gradually increase the dose to aclamatize the substance.

Thus if one tries to treat the allergic disorders Ayurveda can treat such disorders very successfully by aclamatizating, sodhana, samana treating the khavaiguna.

वैद्यनाथ
पंचसंकार चूर्ण
यह चूर्ण पेट साफ करता है तथा
पाचन शक्ति और भूख बढ़ाता है।
इससे पेट के कृमि भी दूर होते हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# EVALUATION OF *LAUHA BHASMA* ON CLASSICAL ANALYTICAL PARAMETERS - A PILOT STUDY

[1] *Dr. Prasanta Kumar Sarkar* [2] *Dr. Anand Kr. Choudhary* [3] *Dr. P.K. Prajapati*

BSTRACT :

*Lauha Bhasma* is the most widely used *hasma* preparation in therapeutics, but till date e temperature pattern to prepare *Lauha Bhasma* electric muffle furnace is not fixed. So in this ilot study an attempt has been made to confirm e appropriate temperature pattern to prepare *auha Bhasma* on classical analytical parameter, hich reflects the physical and chemical properties the *Bhasma*.

NTRODUCTION

*Lauha* is one of the known metal to the uman civilization. Description about uses of *auha* were available in the oldest written treatise, e *Veda*, *Lauha Bhasma* is the most widely used *hasma* preparation in general practice of *yurveda* and it is considered as best remedy to eat disease like *Panduroga* i.e. iron deficiency naemia.

There are so many methods available in fferent texts to prepare *Lauha Bhasma*, and ainly *Gajaputa* is used to prepare it. Now a days e methods of preparing *Ayurvedic* medicines have een altered due to commercialization of the *yurvedic* pharmacies. Mostly electric muffle rnace is the temperature pattern means what ould be the appropriate temperature and duration prepare *Bhasmas*.

Ancient scholars of *Rasashastra* were so uch wise that they have mentioned the analytical rameters for standard and quality production. All ese parameters are dealt with different ndpoints to test the perfectness of *Bhasma's*. though most of these tests are based on ganoleptic methods of examination, but some sts indicate specific chemical assessment.

BJECTIVES :

To establish a definite temperature pattern in electric muffle furnace to prepare *Lauha Bhasma*.

(2) To evaluate *Lauha Bhasma* by classical analytical parameters.

PHARMACEUTICAL CONTRIVE :

Materials and Methods :

Raw *Lauha* (iron scrap) was collected from the pharmacy of Gujarat Ayurved University. It was subjected to different *Samaskaras* like *Shodhana* and *Marara* to make *Bhasma*. *Shodhana* (purification and detoxification) was done in *Triphala Kwath*[1]. Seven times *Nirvapa* (heating the metal upto red hot and quenching in liquid media) process was performed in *Triphala* decoction. This decoction was prepared by boiling it with 8 times water and reduced to 1/4th. After proper drying coarse powder of *Lauha* was mixed with 1/12th parts of *Suddha Hingula* (purified cinnabar) and was lavigated by *Kumari Svarasa* (aloe gel) continuously for 6hr[2]. After that it was subjected to horizontal muffle furnace for incineration. This method was repeated for 7 times. In muffle furnace temperature pattern means required highest temperature and duration at highest temperature was changed in each *Puta* to find out suitable temperature pattern. It was started from highest temperature at 650°C and duration at highest temperature 1/2 hr, and gradually was increased in each *Puta* until obtaining of suitable temperature range.

***Observation :***

After *Shodhana* colour of the *Lauha* became black, and the iron scrap became coarse powder form. After first 3 *Putas* the colour of the pellets of Lauha was brown and these were very hard in consistency, metallic lustre was observed on the surface of pellets. After 4th *Puta* colour of pellets were purple but these were till remained hard. After 5th *Puta* colour became purple, pellets became soft and metallic lusture was also not

1 Lecturer, Department. of R.S. & B.K., Smt. Urmila Devi Ayur. College, Hoshiarpur, Punjab.
2 Lecturer, Department. of R.S. & B.K., 3 H.O.D. Department. of R.S. & B.K.
pt. of R.S. & B.K., including drug research, I.P.G.T. and R.A., Gujarat Ayurveda University, Jamnagar

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



seen. After 7th *Puta* colour of *Lauha Bhasma* was purple (*Pakwa Jambu Phala Varna*), soft and smooth in touch and become metallic lustureless.

Result :

Fig. - 1 : Temperature (°C) pattern during Marana in EMF

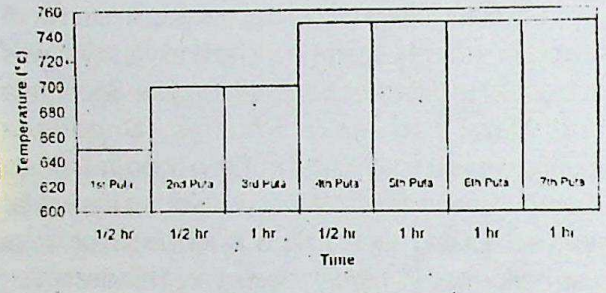


In first *Puta* 650°C as highest temperature for 1/2 hr. was given. In 2nd *Puta* highest temperature was increased to 700°C and duration was kept same. In third *Puta* highest temperature remained same but duration was increased to 1 hr. In 4th *Puta* highest temperature increased to 750°C and duration was decreased to 1/2 hr. In 5th *Puta* highest temperature was remained same but duration was increased to 1 hr. In final 2 *Puta* highest temperature and duration was kept same as 5th *Puta*.

Fig.- 2 : Change in weight (g) to Lauha during Marana

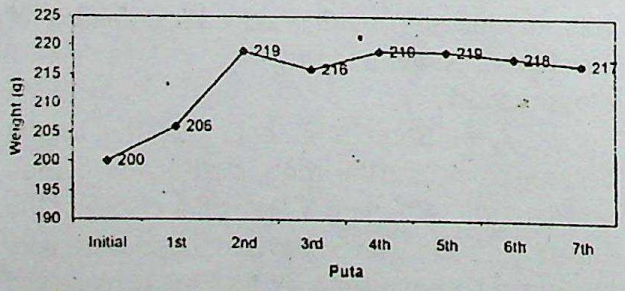


After *Shodhana* the weight of iron (200g) remained same. After 1st *Puta* it was increased to 206 g and after 2nd *Puta* it was again increased to 219 g. After 3rd *Puta* it was decreased to 216 g. After 4th *Puta* it was increased to 219g. After 5th *Puta* the weight remained same. After 6th and 7th *Puta*, 1g and 2g weight lost was mea respectively and 217 g *Lauha Bhasma* achieved. So, the ultimate gain in weight wa

ANALYTICAL CONTRIVE :

Materials and Methods :

The prepared *Lauha Bhasma* evaluated on the basis of classical ana parameters. Various analytical techniques, are mentioned in our classics were adopted, reflects the physical as well as che characteristics of the *Lauha Bhasma*.

*Varitara*[4] : A little amount of *Lauha Bh* was sprinkled on stagnant surface and observed, wh the *Bhasma* float on t surface or not.

*'Unam' Test* : A grain of rice was kept ca on the layer of floated *Bhasma*.

*Rekhapurnata*[5] : A little amount of *Lauha Bh* was taken in between index and thumb and rubbed.

*Nirchandrata*[6] : *Lauha Bhasma* was take palm observed in the sun

*Slakshnata* : *Lauha Bhasma* was touch the finger tips.

*Gatarasatva* : Small amount of *Lauha Bh* was taken and tasted.

*Apunarbhavata*[7] : 20 g of *Lauha Bhasma* mixed with equal quantity o *Panchaka* (Seeds of *A precatorius*. Honey, Ghee, and Gaggery) and it was in *Sarava Samputa* (E pots), there after, the s grade of heat used f preparation of the par *Bhasma* was applied an self cooling, product observed.

*Niruttha*[8] : 50 g of *Lauha Bhasma* mixed with a fixed weight (g) of silver (Ag). It was k *Sarava Samputa* (Earthe and similar grade of hea

OBSE
Varna
Varitar
Unam
Rekha
Nischa
Slaksh
Gatara
Apunar
Niruttha
Result
Sr. No
1
2
3
4
Sr.No
5
6.
7.
8.
9.
DISCUS



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



applied as for preparation of *Bhasma*, and after self cooling, weight of silver was taken.

OBSERVATIONS :

*Varna (Colour)* : The colour of the *Bhasma* is purple ('Pakwa Jambuphala Varna')

*Varitara* : *Lauha Bhasma* floated on the stagnant water surface.

*Unam' Test* : The grain remained as it is on the layer of floated *Bhasma*.

*Rekhapurnata* : The *Lauha Bhasma* filled the minute furrows of the finger tips.

*Nischandrata* : No *Chandrika* (lustred particle) was observed in sunlight.

*Slakshnata* : The *Lauha Bhasma* was soft and smooth on touch.

*Gatarasatwa* : The *Bhasma* was tasteless.

*Apunarbhavata* : No accumulated hard mass was felt and no lustred particle was observed after this test.

*Niruttha* : Weight of the silver piece remained almost same (0.3952g). It was not increased.

Result :

| Sr. No. | Parameters (physical) | Result |
|---|---|---|
| 1 | *Varitara* | +ve |
| 2 | *'Unam' Test* | +ve |
| 3 | *Rekhapurnata* | +ve |
| 4 | *Slakshnata* | +ve |
| **Sr.No.** | ***Parameters (Chemical)*** | ***Result*** |
| 5 | *Gatarasatwa* | +ve |
| 6. | *Varna* (colour) | *Pakwa jambuphala Varana* (Purple) |
| 7. | *Nirchandrata* | +ve |
| 8. | *Apunarbhavata* | +ve |
| 9. | *Niruttha* | +ve |

DISCUSSION :

In this modern era, when the method of preparation has been altered due to commercialization of *Ayurvedic* pharmacies, it is very much needed to fix a particular temperature pattern in the modern instrument like electric muffle furnace for giving *Puta*.

The highest temperature in the first *Puta* was selected at 650°C, because cinnabar (*Hingula*) dissociates to mercury (Hg) and sulphur (S) above 650°C, and in this temperature mercury becomes evaporated and gets out. sulphur part combines directly with iron in this temperature to form ferrous sulphide (FeS)[9].

But after *Puta* the pellets remained hard. so the highest temperature and duration of highest temperature was increased. At a highest temperature 750°C for a duration of 1 hr. the desired characteristics of iron pellets were achieved, meaning there by the consistency of the pellets becomes soft and its colour becomes purple. So. this temperature pattern is taken as standard to prepare *Lauha Bhasma*.

After *Marana*, weight, of *Lauha* is increased because during incineration it may combine directly with sulphur (dissociation product of cinnabar) to form ferrous sulphide. Some part of *Lauha* is also oxidized to ferroso-ferric oxide, during red hot stage. Inorganic content of aloe gel (total ash) also causes increase in weight.

Before clinical application of any *Bhasma* is properly prepared or not ancient scholars of *Rasashastra* have mentioned some parametrs to assess the standard and quality of a *Bhasma*. Although most of the parameters are based on organoleptic examination, but some parameters indicate particular physical and chemical characteristics.

Specific colour of the *Bhasma* indicates



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



formation of particular metallic compounds, because each chemical compound possesses specific colour.

Tastelessness of *Bhasma* indicates, transformation of the particular metallic taste to tasteless compounds, i.e. a new entity resulted due to unique pharmaceutical processes.

*Nischandrata* test indicates change of the specific metallic lusture to lustureless compound after incineration.

*Rekhapurnata* indicates micro fineness of *Bhasma*. The particles of *Bhasma* should be so small size that it can fill the furrows of the finger tips.

*Varitara* test indicates lightness and micro fineness of *Bhasma*. It is a floating character of *Bhasma* on water surface. This test can be considered, based on law of surface tension. Here the particles of *Bhasma* attain so much lightness and fine in character that they can not break the surface tension of stagnant water.

*'Unam'* test in the further re-assessment of 'varitara' test.

*Apunarbhavata* test indicates stableness of the *Bhasma*. All the materials used in this test may act as source of carbon on that temperature in which this test is performed. An unstable metallic compound (oxide) can reduce to metallic state during this test by carbon reduction process, but a stable metallic compound should not be changed on the particular temperature in which it is formed.

*Nirutthata* test also indicates stableness of the *Bhasma*. A more electro positive metal helps in accumulation of free metal in *Bhasma* if if remains. But a proper *Bhasma* can not be retrieved, Silver (Ag) when heated, combines directly with sulphur to form the sulphide $Ag_2S$. But it is affected by oxygen and having a low chem reactivity[10]. So silver is used in this test, and if *Bhasma* contains any free sulphur, then the su reacts with silver on heating and causes incr in weight of sulphur. A complete *Bhasma*, whi properly prepared should not contain any sulphur. So there will not be any increase i weight of silver.

The prepared *Bhasma* passed all physico-chemical parameters of ancient class So the *Bhasma* is considered as properly prepa

CONCLUSION :

The temperature pattern (highest req temperature 750°C, duration at high temperature; 1 hr.) in electric muffle furna prepare *Lauha Bhasma* should be take standard.

The *Bhasma* should be considered required quality when the classical analy parameters are concerned.

REFERENCES :

1,3,4,5,7,8, Vagbhat Acharya, Kulkarni Commentary, Rasa Ratna Samucch Ucharchand Lachhmandas Publication Delhi 1998. 5/103, 8/26, 8/27, 8/28, 8/29

2. Bhatta K.G., Tripathhi Indradev comme Rasandra Sara Samgraha, Chaukha Orientalia, Varanasi, 2003, 1/336-357.

6. Madhav Upadhyay, Ayurveda Prakasha commentary by Shri Gulraj Sharma Mi Chaukhamba Bharati Academy, New D 1994, 2/105.

9,10. Dutt P.K., General and Inorganic Chem Sarat Book House, Culcutta. Vol.-II. 320, 193.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# TREATMENT OF AMLAPITTA (HYPERACIDITY)

*Dr. J.P. Singh

**Dr. S.K. Tiwari

Amlapitta does not find place in Brihattri. In Charaka Samhita in the chapter on *grahani* one finds similar symptoms of *amlapitta* in the prodromal symptoms named under the term *shuktapaka*. Madhava Nidana and Kashyapa Samhita have described this disease separately and that too in detail.

## Definition

*Pachaka Pitta* is secreted in the stomach for digestion of food. *Kledaka Kapha* is secreted in the stomach. It protects the stomach wall from hot, penetrating secretions of *Pitta* and too hot, irritant or too cold food.

In *amlapitta* (hyperacidity) the quantity of *pachaka Pitta* gets increased and it changes from normal bitter taste (alkaline) to sour (acid) taste also. (M.N.)

Heartburn is also known as hyperacidity, or acid indigestion, and is, not related to the heart at all. It is actually a condition called "esophageal reflux" in which stomach acid flows upward from the stomach to the chest, causing a burning sensation in the chest. Accompanying symptoms include acid belching sour taste in the month, nausea, and possibly, vomiting and loss of appetite.

This can be the result of excess acid in the stomach often brought on by eating acidic foods; hot, oily, or fried foods; pungent, sour; and salty tastes; or excessive sugar and sweets, drinking excessive alcohol, and smoking cigarettes staying awake late at night.

According to Ayurveda, heartburn occurs when *Pitta* is aggravated by liquid qualities and affects the stomach and small intestine normally, the hot and penetrating qualities of *Pitta* are healthy, allowing us to digest food properly.

## Etiology

Intake of pungent, sour, salty, fermented, preserved food, for a long time, Drinking carbonated drinks in excess and excessive consumption of alcohol. Irregular eating timings, eating and staying late at night are also important causes.

Using drugs like indomethacin, analgesics like aspirin, anti-inflammatory drugs in large doses and for longer time. Chewing betalnut leaf (*pan*) containing tobacco, habit of smoking, working in excessive hot atmosphere (sun, radiation, furnaces, chemical factories, etc.) and mental stress and strain. There is a proverb that hurry-worry and curry causes hyperacidity.

## Pathogenesis

All *doshas* get vitiated, but the predominance is that of *Pitta*. The liquid quality of *Pitta* gets increased hence although quantitatively it increases, *agni* becomes low, which results in indigestion. The normal bitter taste of *Pitta* also changes to sour, which again causes the food to become toxic - *vidagadha* resulting into hyperacidity. (Kashyapa).

## Types

Ayurveda distinguishes two types of hyperacidity; upward - heartburn, described above and downward, which affects the small intestine and the downward variety.

***Symptoms of Adhoga (Downward***

* M.D.(Ay.) JR-II, Department of Kaya Chikitsa, IMS, BHU, Varanasi

** Reader & Senior Consultant, Department of Kaya Chikitsa, IMS, BHU, Varanasi.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



*Direction)* : Thirst, burning, sensation, fainting, giddiness, delusion, diarrhoea, and occasional pain in the chest, poor digestion, perspiration and yellowish skin.

*Symptoms of Urdhwaga (Upward Direction):* Vomiting of green, yellowish, bluish black colour or bright red colour, with very sour materials resembling mutton washes. Thin and sticky *Kapha* usually follows this vomiting.

The patient also develops *Kapha-Pitta* type fever with appearance of circular rashes and itching.

Complications

High fever, acute diarrhoea, severe pain in abdomen, edema on body, vertigo, and tissue loss are some of the important complications. Gastric and intestinal ulcers are also a co- complication.

Treatment :

A. Avoidance of etiological factor

B. Medicine - 1. Shatavari mandoor 1½ gm with Ghrita
½ gm before meal, ½ g, during meal, after the meal

2. Sankha Vati 2 Tab TDS

C. If not responding to above medicine, add the medicine.
Swarnasutshekhar Rasa - 125 mg
Dhatri Lauhe - 365 mg
Amalki Rasayana - 2 gm
Varata Bhasma - 500 mg
2 Divided doses with Honey + Bhir Swarasa


बैद्यनाथ

मधुमेहारि योग दाने

मधुमेह ( डायबिटीज )
व उससे उत्पन्न
विकारों में
लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Kshara Basti in Amavata (Rheumatoid Arthritis)

[1]Dr. Deepshikha Aggarwal [2]Dr. Harbans Singh

Rheumatoid Arthritis is a chronic multi-system disease characterized by persistent inflammatory synovitis usually involving peripheral joints in a symmetric distribution. The potential of the synovial inflammation to cause cartilage damage and bone erosions and subsequent change in joint integrity is the hallmark of the disease. Patients of Rheumatoid Arthritis present with almost similar clinical features to that of Amavata mentioned in Ayurvedic treatise.[1]

Mandagni and Ama play an important role in the pathophysiology of Amavata. A variety of individual and environment factors are held responsible to vitiate and to sluggish the functions of digestive and metabolic fire (Jatharagni, Dhatavagni as well as Bhutagni). As a consequence a morbid state leads to production and stagnation of certain toxic, unripe & unwanted products of food, which stay at the level of gut as well as at systemic level in tissues, cells and molecules. These morbid factors are called Ama of GIT origin.[2] Ama because of its Antigenic nature acts like an Autoantigen and brings about multisystemic auto-immune disease involving peripheral joints called Amavata.

Cakrapani Datta (C.D., 25) was the pioneer to describe the principle and line of management of Amavata.[3] The line of treatment and principles proposed appeared firstly to digest the morbid Ama and promote the function of Agni and then Vata Samaka treatment. Amavata which manifest peripherally in joints has essentially its origin in the gut in the form of mandagni and Ama formation.

Hence, during the early stage of disease, treatment includes langhan with Tikta, Katu, Dipana Dravya, Svedana, Virechana, Snehpana, Anuvasana Vasti with Saindhavadi Taila and Ksara Basti.

Ksara Basti

Drugs used in *Kshara Basti* and their quantity

| | |
|---|---|
| *Madhu (Honey)* | - 50 gm |
| *Saindhava Lavana (Rock Salt)* | - 5-7 gm |
| *Sneha (Oil)-Saindhavadi Taila* | - 50 ml |
| *Kalka (medicated paste of sunpha or Putoyavanyadi kalka* | - 25 gm |
| *Kwatha (decoction) Dashmula Kwatha* | - 200 ml |
| *Gomutra* | - 200 ml |
| *Guda* | - 100 gm |
| *Imli* | - 100 gm |
| *Apamarga Kshara* | - 5 gm |

Order of Mixing the Drugs:

Stage-I *Madhu (honey)* - *Saindhava Lavana (Rock Salt)*

↓

Stage-II add *Sneha (Oil)* - *Saindhavadi Taila*

↓

Stage-III Add *Kalka* - *(Puto-Yavanyadi Kalka)*

↓

Stage-IV Add *Dasamula Kwatha Contains Guda, Imli*

↓

Stage-V Add *Gomutra containing Apamarga Kashara*

These medicines are mixied one by one churning it. It is then heated in steam to make it lukewarm and homogenous.

***Method of Preparation of Kshara Basti***

For preparing *Ksara Vasti, Guda* and *Imli*-100 gm each should be soaked in 200 ml of *Dasamula Decoction* the previous night, alongwith it, coarsely powdered *Putoyavaniadi Kalka* 20gm or *Saunpha* 20-25 gm should be tied in a piece of cloth and soak over night.

*Saindhava Lavana* 5 to 7 gm and *Madhu* 50 gm should be taken in a morter and a fine

[1] B.A.M.S., [2] M.D. (Kayachikitsa), Ph.D. Scholar, Lecturer - Deptt. of Kayachikitsa
Desh Bhagat Ayurvedic College and Hospital, Mandi Gobindgarh (Pb.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



emulsion should be made with the help of pestle. Then 50 ml of *Saindhavadi taila* should be added to the emulsion and should mix till the oil blends properly. The *Dasamula Kwatha* containing *Guda, Imli* and extracts of *Saunpha* or *Putoyyavaniadi Kalka* added to the mixture. Roughage of *Imli* and *Saunpha* should be taken out before that Finally *Gomutra* 200 ml and *Apamarga Ksara* 5 gm should be added to the preparation. All the contents should be mixed and filtered properly. Then it should be heated to lukewarm and should be given to the patient while lying in the left lateral position following all the rules of *Bastidana.*

Mode of Vasti Dana

- The Basti course should be given for 30 days according to *Karma Basti.* First one and last five *Anuvasana Basti* and 12 *Ksara Basti* Should be given alternative.
- Purva Karma (Pre Operative Care)
- Screen the patients eligible for *Kshara Basti.*
- Decide the dose of *Kshara Basti* as per age of the patient.
- Give maximum importance to preparation of *Kshara Basti.*
- Teach the patient about the procedure and instruct him to allow the entry of the nozzle.
- *Kshara Basti* is to be performed on empty stomach between 7-9 a.m. after subjecting the patient for gentle massage with *Saindavadi Taila* and mild sudation as per stage of *Amavata.*

Pradhan Krama (Procedure)

- Ask the patient to lie down on the table in the left lateral position.
- Squeeze lightly to remove air and froth from the *Putaka* (bag).
- Insert the nozzle at the level coinciding with the vertebral column.
- With constant and equal pressure sq... the *Putaka* (Bag) uniformly and init... the medicine.
- During administration the patient is ad... not to sneeze, cough, laugh, yawn or... the body. Withdraw the catheter/ra... patient develops an urge to mictur... defecate.
- Then slowly withdraw the *Basti* t... catheter.

Samsarjana Krama

- The maximum time for the material d... to come out is 30-45 minutes usu... will come out instantly in two to three...
- After proper evacuation a quick ... water bath should be given.
- Patient must be advised to take ... immediately.
- Warm, nutritious, vegetarian s... mentioned in Samsarjana Karma are...

Signs and symptoms of Proper Kshara Bas...

- Expulsion of Medicine is between ... minutes.
- Proper and complete evacuation of ... and drugs.
- Feeling of purification.
- A sense of lightness.
- Improved appetite and digestion.

References :

1. सर्वांगकांग सन्धिस्थशोथातिग्रहगौरवम् ।
ज्वरोऽपाकाग्निमान्द्ये च तृष्णा चामानिलाद्...
(अन्द...

2. जठरानलदौर्बल्यादविपक्वस्तु यो रसः ।
स आमसंज्ञको देहे सर्वदोष प्रकोपणः ॥
(...

3. लंघनं स्वेदनं तिक्तं दीपनानि कटूनि च
विरेचनं स्नेहपानं बस्तयश्चाममारुते ॥
सैन्धवाद्ये नानुवास्य क्षारबस्तिः प्रशस्यते
आमवातेपंचकोलसिद्धं पानान्नमिष्यते ॥
(चक्रदत्त 2...



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# MARKET SURVEY ON MEDICINAL PLANTS OF UTTARANCHAL STATE-

G.C. JOSHI, R.N. TEWARI, J.C.ARYA

Uttaranchal is well known for its rich medicinal plant resources. That's why recently it is declared as "Herbal State:, the area has been one of the most preferred destinations for religious tourism and because of this large number of ashrams and religious institutions have come up in the state to promote the herbal sector. The current value of medicinal plant sector of the country has been estimated around Rs. 4,200.00 crores (Planning commission, Govt. of India, 2004). Therefore, there is immense scope for the growth of this sector in the state. It can be developed as one of the income generating activity by involving local people in sustainable management and conservation of these resources.

The Uttaranchal Forest Development Corporation (UAFDC) is also dealing in the value addition and marketing of the medicinal plants in the State. The total value of trade by UAFDC during 2003-04 was Rs. 60 lakh and they had a target of bringing it to Rs. 1 crore during 2004-05. The markets of medicinal plants are one of the most recreative phenomena as no one is willing to disclose the source and the actual price of the material. It is learnt that large quantity of material is coming from Nepal through Pithoragarh and Champawat, Himachal Pradesh and of course, Khari Baoli, New Delhi. It is a general nation that the major portion of raw material is still being extricated from the wild. This may be one of the reasons why most of the traders are not willing to disclose the source and price of the material. The genuine collectors, cultivators as well as government suffer vigoriously due to this.

Concrete efforts and policies are required to set the things moving in right direction.

The cultivation of medicinal plants is gradually picking momentum in Uttaranchal. The Herbal Research and Development Institute, Gopeshwer, Forest Department and Bheshaj Sangh have been registering the cultivators of medicinal and aromatic plants in different parts of the state.

The state government has assigned the task of marketing of medicinal plants to the Uttaranchal Forest Development Corporation (UAFDC). The UAFDC has started conducting regular auction of medicinal plants in their Depots viz. at Bibiwala Depot in Rishikesh, Aamwala Depot, Ramnagar and at Tanakpur. Dates of auction have been fixed permanently in these depots. It will definitely help in checking the illegal trade and establish centralised mandis giving official information and records.

The government is also planning to establish a fourth mandi at Kathgodam (Nainital). The important species available during the year with UAFDC are ***Jhula, Moss, Tejput, Shatvari, Giloy, Kalibad, Ban Tulsi.***

***Dudhiabael, Malkanghani, Marodphali, Chitrakmool, Mameriganth, Chirgulla, Karupunchang, Reetha, Harad, Bahera, Amla, Pashanbhed, Kantkari, Nirvisi, Khareti*** etc.

The Uttaranchal Forest Development Corporation entered into the trade of medicinal and aromatic plants (MAP) in 2003-04. Presently they are dealing mainly with the collection and marketing of MAPS from the forest areas of the state. Their initiatives have started paying dividends both in terms of number of species as well as revenue i.e. it has increased from the collection of 31 species from wild with a total value of Rs. 67 lakh in 2003-04 to 51 species with Rs. 76,59,919.00 in 2004-2005.

**DEALERS/SUPPLIERS/TRADERS OF RAW DRUGS IN DISTT.- CHAMPAWAT (UTTARANCHAL)**

1. A.S. Sharda Enterprises
   Nehru Marg, Tanakpur - 262309-(265133)
2. Agarawal trading Co.
   G.B. Pant Marg, Tanakpur,
   Distt. - Champawat-262309-265014



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


Agarawal Trading company
ward No.1, Tanakpur,
Champawat - 263309-2265014
Himalaya Jari Buti Centre,
Near Basear Hotel,
Tanakpur, Distt.- Champawat
262309-265205
Jagdish Narain Hari Mohan,
Tanakpur, Distt.- Champawat-262309-265003
Mahesh Chand and sons,
Tanakpur, Champawat-262309-265059
Nutan Enterprises,
G.B. Pant Marg, Tanakpur,
Distt. - Champawat-262309-265133
Ratan Lal & Sons.
G.B. Pant Marg, Tanakpur,
Distt.- Champawat - 262309-265061
Sharda Brothers,
Tanakpur,
Distt.-Champawat-262309-265022
10. Jila Bhesaj & Sahkari Vikas Sangh Ltd.,
Champawat.

The status of collection, cultivation and marketing as of medicinal and aromatic plants was studied in South Pithoragarh forest division, district Champawat, Uttaranchal. The primary information collected through the traders is being summarized below -

Traditionally, 'Anwals' (the animal herders) visiting the alpine grazing land used to collect medicinal plants for their personal use only. Later on they started bartering of these plant parts with the local contractors to get essential commodities. However, with the increase in demand and high profit margins, the number of contractors increased. The main species, which are being collected from forests include ***Indrayan, Kapurkachri, Jhula, Moss grass, Reetha, Tejpat, Daruhaldi,*** Agencies like Bhesaj Sangh, Kumaun Mandal Vikas Nigam (KMVN) and Uttaranchal Forest Development Corporation (UAFDC) are involved procurement of medicinal plants from collectors. Besides this, large quantities ***Reetha, Tejpat, Pashanbhed, Jatamansi, Ku Atish, Vatsanabh, Chirayata*** and few barr crude drug species enter in Pithoragarh from Ne

The Bhesaj sangh and Kumaun Mand Vikas Nigam receive the plant parts collected the registered members/societies against paym as specified rates. The forest department then us to verify the material, charge royalty and iss transport permit. The produce is transported markets like Tanakpur, Ramnagar and New D for sale. After deducting the operational charg the profit is supposed to be distributed equall all the members of the Bhesaj Shangh/Societi

However, during the course of study it w observed that this mechanism was not be followed in practice and instead the contracto engage local people for collection of specif medicinal plants and also give them some mo as *advance*. These collectors then proceed towa the higher reaches in the month of Aug September and remain there for almost two to th months. During winters, they return to th respective villages and handover the produc the contractors. Children and women folk are a engaged in the collection activities at local le Real community approach was not in practice the collectors received only the minimum wa

The practice of collection has, howe been modified recently with the Govt. order August and October, 2003. Under the mechanism the Divisional Level Committee (D constituted under Divisional Forest Officer been authorized to take decision about allo the forest area for medicinal plants extractio UAFDC, Bheshaj Sangh and KMVN. The G Order also provides for registration of colle


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



who will be identified in the villages near the allotted forest areas. The registration is to be done by the Divisional Managers under intimation to the concerned Forest Divisions.

**Marketing channels :**

The marketing channels for medicinal plants is as Follows -

1. Producer - Middleman - Traders - Consumer
2. Producer - Trader - consumer
3. Producer - Local trader - Trader- Consumer

As far the Tanakpur market of raw drugs is concerned, the reason could be that a sizeable proportion of the collectors comprise Nepalies, who prefer to sell their produce directly to the local traders. The local cultivator, prefer selling their produce to middlemen because of small quantities of their collected material, high transportation costs and quite often under obligation.

Bhesaj Sangh (a branch of Co-operative Department) is involved in marketing of medicin plants.

**Purchase of Raw Drugs:**

1. By the Champawat Jila Bhesaj Vika evam 'Kray-Vikry Sahkari Sangh Ltd Champawat-
   *Jhula, Moss, Reetha, Tejpat, Amla Kapurkachhari, Majisha, Ghurvacha Coleus, Ganiyya, Sataver, Chir Ki Gulli*
2. By Traders :
   *Chharila, Tejpat, Reeta, Moss grass, Ch gulli, Daruhaldi*
   *Gethi* (bark of *Boehmaria* as a bindin material for making *Agarbatti*)
   *Rhododendron* flower (fresh) for juic making as cold drink.
3. From Nepal (as per information obtaine from traders)-
   *1. Tagar, 2. Dhoop Lakkar, 3. Kutki 4. Balchhar, 5. Chirayata*

COLLECTION OF RAW DRUGS FROM 01.04.2005 TO 30.04.2005 BY DIFFERENT AGENCIES

*1. FOREST CORPORATION, PITHORAGARH*

| DRUG | QUANTITY | RATE (Rs.) | TOTAL (Rs.) |
|---|---|---|---|
| 1. Jhula | - | 52.38 per kg. | 16,02.135.00 |
| 2. Tejpat | 98.670 Qtl. | 19.10 per kg. | 72,409.00 |
| 3. Awala | 15.330 Qtl. | 23.50 per kg. | 29,050.00 |
| 4. Pashanbhed | 0.645 Qtl. | 12.50 per kg. | 860.00 |
| 5. Reetha | 2.575 Qtl. | - | 2,772.00 |
| 6. Moss grass | 22.620 Qtl. | 20.25 per kg. | 15,349.00 |
| 7. Satavar | 2.355 Qtl. | - | - |
| 2. FOREST CORPORATION, TANAKPUR | | | |
| 1. Sikakai | 21.400 | 14.30 per kg. | 30,602.00 |
| 2. Gurjbel | 2.770 | - | - |
| 3. Semal phool | 0.365 | - | - |
| 4. Satavar | 0.130 | 100.00 per kg. | 1,300.00 |
| 3. BHESAJ SANGH, PITHORAGARH | | | |
| 1. Tejpat | 80.950 | 24.15 | 1,95,502.00 |
| 4. BHESAJ SANGH, CHAMPAWAT | | | |
| 1. Jhula | 305.115 | 51.65 | 3,99,332.00 |
| 2. Mossgrass | 1.945 | 23.00 | 4,474.00 |
| 3. Tejpat | 5.440 | 19.00 | 917.00 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ARKET SURVEY, RISHIKESH

Due to richness of the medicinal plants in e state Uttaranchal has been declared as Herbal tate. Due to lack of knowledge about medicinal ants in the state and past disorganized anagement has caused a lot of loss on the natural abitat of the medicinal plants. Keeping in view e above facts a strategy has been developed by ttaranchal State Forest Development Corporation JAFDC) to collect the date on trade, marketing nd sustainable utilization. A survey was conducted the Rishikesh herbal drugs trade and UAFDC, istt.- Haridwar. The following observations on the ade of herbal drugs and marketing were under ıken and data were collected.

At present in Uttaranchal, three (3) rganizations viz. UAFDC, Bhesaj Sangh and arhwal Mandal Vikas Nigam Ltd. are involved in ıe collection of medicinal plants/raw drgus.

Sale of following raw drugs/plant material as done during 2005-06 through auction by the AFDC Depot at Bibiwala, Rishikesh.

| Sl. | Name of Plant/Raw Drug material | Name of the For Development Co |
|---|---|---|
| 1. | PanBel | Haridwar |
| 2. | Marodphali | -do- |
| 3. | Satawari | -do- |
| 4. | Mansparni | -do- |
| 5. | Salparni | -do- |
| 6. | Mansparni | -do- |
| 7. | Salparni | -do- |
| 8. | Patharchur | Tehari |
| 9. | Bel | Dehradun |
| 10. | Chir-Gulia | Tehari |
| 11. | Tejpatta | Dehradun |
| 12. | Padamkaast | New Tehari |
| 13. | Pashanbhed | Deharadun |
| 14. | Bidarikand | Deharadun |
| 15. | Chitrak | Deharadun |
| 16. | Khusheda | Deharadun |
| 17. | Kapurkachari | Deharadun |
| 18. | Moss | Bhesaj Sangh Chamoi |
| 19. | Lichens | Bhesaj Sangh Uttarkashi |

***NFORMATION ABOUT MANDI'S/TRADERS***

| *Sl.* | *Name of the Mandi/Market* | *Name of trader/Marchent* | *Address* |
|---|---|---|---|
| 1. | Rishikesh | 1. Sh.Nevedan Jadibuti<br>2. M/S Sethi Traders (wholesaler)<br>3. Sh.Mahipal Tyagi | Kshetra Bazar, Rishikesh<br>Puskar Mandi, Dehradun Chawra<br>Mukharjee road,Rishikesh, Galli N<br>Geeta Nagar C-878, IDPL Colony Rishikesh. |
| 2. | Saharanpur | 1. Bharati Vati Bhawan<br>2. Indian Siwalik Herb<br>3. Whole saler Trader | Ambala Road, Saharanpur<br>Purani Lal Mandi, Ambala Rd.<br>Nababganj & Morgani, Saharanp |
| 3. | Roorki | 1. Hakim Faijal<br>2. Phoolchand Jain,<br>3. Kamal Raj Pamsar | Whole salers |
| 4. | Dehradun | Aryavastu Bhandar, Paltan Bazar | Behind Kotwali, Paltan Bazar, The biggest firm of herbal plant material in Dehradu |

ACKNOWLEDGEMENT : Authors are grateful to Dr. G.S. Laveker, Director, CCRAS New Delh providing facilities to this work.



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## परीक्षोपयोग प्रश्नोत्तरी 'प्रमाण' पर आधारित

1. प्र०:- पदार्थ के यथार्थ ज्ञान के साधन को क्या कहते हैं ?
   उ०:- **प्रमाण ।**
2. प्र०:- यथार्थ ज्ञान को क्या कहते हैं ?
   उ०:- **प्रभा ।**
3. प्र०:- प्रमाण को प्रभा का करण किसमें कहा गया है ?
   उ०:- **तर्क संग्रह ।**
4. प्र०:- प्रमाण के पर्याय कौन-से हैं ?
   उ०:- **उपलब्धि, साधन, ज्ञान और परीक्षा ।**
5. प्र०:- आचार्य सुश्रुत ने प्रमाण के पर्याय के रूप में किसका प्रयोग किया है ?
   उ०:- **विज्ञान शब्द का ।**
6. प्र०:- आचार्य चरक ने प्रमाण के लिए किस शब्द का प्रयोग किया है ?
   उ०:- **परीक्षा ।**
7. प्र०:- अयथार्थ ज्ञान को क्या कहते हैं ?
   उ०:- **अप्रभा ।**
8. प्र०:- पूर्व का ज्ञान जब किसी वस्तु को देखकर जागृत हो तो उसे क्या कहते हैं ?
   उ०:- **स्मृति ।**
9. प्र०:- स्मृति के आठ कारण कौन-से हैं ? (चरक के अनुसार ।
   उ०:-
   1. निमित्त
   2. रूपग्रहण
   3. सादृश्य
   4. सविपर्याय
   5. सत्वानुबन्ध
   6. अभ्यास
   7. ज्ञानयोग
   8. पुनः श्रवण ।
10. प्र०:- 'न्याय दर्शन' में स्मृति के कितने कारण बताए गए हैं ।
    उ०:- **24 कारण ।**
11. प्र०:- तर्क संग्रहकार ने स्मृति के कितने भेद बताए हैं ?
    उ०:- **दो भेद :- (1) प्रभाजन्य यथार्थ**
    **(2) अप्रभाजन्य अयथार्थ**
12. प्र०:- अप्रभा के तीन भेद कौन-से हैं ?
    उ०:- **1. विपर्यय, 2. संशय, 3. तर्क ।**
13. प्र०:- अतद्रुपप्रतिष्ठम् से क्या तात्पर्य है ?
    उ०:- **जो वास्तविक रूप है वह नहीं दिख देना ।**
14. प्र०:- न्यायदर्शन के अनुसार प्रमेय कितने प्रकार होता है ?
    उ०:- **12 प्रकार का -**
    1. आत्मा
    2. शरीर
    3. इन्द्रिय
    4. अर्थ
    5. बुद्धि
    6. मन
    7. प्रवृत्ति
    8. दोष
    9. प्रेत्यभाव
    10. फल
    11. दुःख
    12. अपवर्ग
15. प्र०:- वैशेषिकदर्शनानुसार प्रमेय कौन-से हैं ?
    उ०:- **षड् द्रव्यादि पदार्थ -**
    1. द्रव्य 2. गुण 3. कर्म
    4. सामान्य 5. विशेष 6. समवाय
16. प्र०:- यथार्थ ज्ञान कितने प्रकार का होता है ?
    उ०:- **दो प्रकार का -**
    1. स्मृति
    2. अनुभव
17. प्र०:- आचार्य चरक ने कौन-से प्रमाण को प्रधानता है ?
    उ०:- **आप्तोपदेश ।**
18. प्र०:- आप्तपुरुष के उपदेश को क्या कहते हैं ?
    उ०:- **आप्तोपदेश ।**
19. प्र०:- आप्तपुरुषों में कौन-सा गुण प्रधान होता है
    उ०:- **सत्व ।**
20. प्र०:- सुश्रुत ने आप्तोपदेश के स्थान पर किस श का प्रयोग किया है ?
    उ०:- **'आगम' शब्द का ।**
21. प्र०:- प्रत्यक्ष के लिए किनका संयोग होता है (चरक के अनुसार)
    उ०:- **आत्मा, इन्द्रिय, मन और इन्द्रियार्थों ।**
22. प्र०:- इन्द्रियों को उनके कार्यों के आधार पर कितने वर्गों में विभक्त किया गया है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



उ०:- तीन श्रेणियों में -

1. ज्ञानेन्द्रिय 2. कर्मेन्द्रिय
3. उभयेन्द्रिय

3. प्र०:- इन्द्रियों की कुल संख्या कितनी है ?

उ०:- 5 ज्ञानेन्द्रियां, 5 कर्मेन्द्रियां और 1 उभयेन्द्रिय मन ।

4. प्र०:- पाँच बुद्धिन्द्रियां कौन-सी हैं ?

उ०:- चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, रसना, त्वक् ।

5. प्र०:- पाँच कर्मेन्द्रिया कौन-सी है ?

उ०:- 1. दो हस्त 2. दो पाद 3. गुदा 4. अपस्थ 5. वाक् ।

प्र०:- मन को कौन-सी इन्द्रिय कहा गया है ?

उ०:- उभयेन्द्रिय ।

7. प्र०:- प्रत्यक्ष प्रमाण के कितने भेद हैं और कौन से ?

उ०:- दो भेद :-

1. सर्विकल्प और 2. निर्विकल्प ।

8. प्र०:- अलौकिक प्रत्यक्ष कितने प्रकार का है, उनके नाम लिखें ।

उ०:- तीन प्रकार का :-

1. सामान्य लक्षणाप्रत्यासत्ति ।
2. ज्ञान लक्षणाप्रत्यासत्ति ।
3. योगज प्रत्यक्ष ।

9. प्र०:- इन्द्रियों की प्राप्यकारिता से क्या भाव है ?

उ०:- इन्द्रियों का अपने अधिष्ठान से बाहर जाकर विषय को ग्रहण करने को प्राप्यकारिता कहते हैं ।

0. प्र०:- कौन-सी इन्द्रिय में प्राप्यकारिता का गुण है ?

उ०:- चतुरीन्द्रिय ।

1. प्र०:- तर्क संग्रहकार के अनुसार अनुमान के कितने भेद हैं ?

उ०:- दो भेद :-

1. स्वार्थानुमान 2. परार्थानुमान

2. प्र०:- पञ्चावयव कौन-से हैं ?

उ०:- प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनयन और निगमन ।

33. प्र०:- तर्कसंग्रह के अनुसार हेत्वाभास के कितने भ हैं ?

उ०:- 1. सत्यभिचार 2. विरुद्ध 3. सत्प्रतिपक्ष 4. असिद्ध 5. बाधित ।

34. प्र०:- यूक्ति को दार्शनिक क्षेत्र में किसने प्रमाण मा है ?

उ०:- चरक ने ।

35. प्र०:- उपमान के तीन भेद कौन-से हैं ?

उ०:- 1. साधर्म्य उपमान 2. वैधर्म्य उपमान 3. धर्ममात्र उपमान ।

36. प्र०:- जहाँ एक अर्थ कहने के बाद दूसरे न कहे अर्थ का ज्ञान स्वयं हो जाए उसे क्या कहते हैं

उ०:- अर्थापति ।

37. प्र०:- 'चार्वाक' ने कौन-सा प्रमाण माना है ?

उ०:- प्रत्यक्ष प्रमाण ।

38. प्र०:- आचार्य चरक ने कितने प्रमाण माने हैं और कौ से ?

उ०:- चरक ने चार प्रमाण माने हैं :-

1. प्रत्यक्ष 2. अनुमान
3. आप्तोपदेश 4. यूक्ति

39. प्र०:- न्यान दर्शन में अक्षपाद ने अनुमान के कौन भेद बताएं हैं ?

उ०:- तीन भेद :-

1. पूर्ववत अनुमान
2. शेषवत् अनुमान
3. सामान्यतोदृष्ट

40. प्र०:- प्रत्यक्ष ज्ञान के कितने बाधक कारण हैं (चरक के अनुसार )

उ०:- 8 बाधक कारण ।

डा० अनूप कु० गक्खड़
एवं
अनु भण्डारी, बी.ए.एम.एस. प्रथम प्रॉफ
दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज,
जालन्धर शहर - 144008



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## आपके अनुभूत प्रयोग

# गृध्रसी - सियाटिका की एक निश्चित आयुर्वेदिक चिकित्सा-एक अनुभव

आयुर्वेदिक भाषा में गृध्रसी तथा आधुनिक भाषा में सायटिका और आम लोक भाषा में रींगणवाय या रांगणवाय कहा जाता है । यह रोग बड़ा कष्टदायक होता है । लोग इससे महीनों, वर्षों परेशान देखे जाते हैं ।

आयुर्वेदिक भाषा में इसका निदान और चिकित्सा बहुत निश्चित है ।

इसके निदान के लिए बड़ा निश्चित उल्लेख मिलता है आयुर्वेद में -

स्फिक्पूर्वा कटिपृष्ठोरुजानु जंघापदं क्रमात् ।
गृध्रसी स्तम्भरुक्तोदैर्गृह्णाति स्पन्दते मुहुः ॥
वाताद्वातकफात्तन्द्रागौरवारोचकान्विता ।

(माधव निदान - वातव्याधि)

अर्थात् - 'स्फिक् प्रदेश' कमर के नीचे नितम्ब के खड्डे वाले भाग को कहते हैं । स्फिक् प्रदेश से शुरु होकर कमर पीठ जानु घुटने जंघा और पैर में क्रमशः इसका प्रकोप होता है । यह पैर को जकड़ देती है । दर्द-सुई चुभने जैसी वेदना के साथ स्पन्दन होता है बार-बार । यह केवल वात प्रकोप से हो सकती है तथा वात और कफ के मिश्रित प्रकोप से (अर्थात् साम वात से) होती है । इसमें तन्द्रा-आरोचक-गौरव लक्षण होते हैं । इसका निदान बहुत स्पष्ट है । स्फिक् प्रदेश वाले स्थान पर दबाने से वहां दर्द होता है । यह इस व्याधि का प्रारम्भ होने का निश्चित स्थान है । यहां से चल कर कमर पीठ से होती हुई उरु-घुटना-जंघा तथा बाद में पैर तक विकास होता है क्रमशः । साथ में ऊपरलिखित लक्षण भी दिखाई देते हैं । व्यक्ति बहुत परेशान रहता है, चलना मुश्किल हो जाता है ।

इसलिए सुपठित वैद्य को माधव निदान में लिखित निदान को हृदयंगम करके इसको अच्छी तरह पहचान लेना चाहिए । लक्षण बहुत ही स्पष्ट है । किसी भी प्रकार के आधुनिक टैस्ट करवाने की आवश्यकता नहीं है ।

निदान निश्चित होने के बाद इसकी चिकित्सा भी इतनी ही निश्चित है । चरक संहिता-चिकित्सा संस्थान-१ में संस्कृत टीकाकार चक्रदत्त ने इसकी चिकित्सा बड़ी सार्थक, संक्षिप्त तथ अनेकशः अद्भुत् लिखी है -

**प्रथम सूत्र :-शेफालिकादलैः क्वाथो मृद्वग्निपरिसाधितः**
**दुर्वारं गृध्रसी रोगं पीतमात्रं समुद्धरेत् ।**

(चक्रदत्त वातव्याधि

अर्थात्-शेफालिका-यानि प्रचलित नाम हरसिंग पारिजात । अंग्रेजी में वीपिंग निक्टेंथस (Weepin Nyctenthes) - नाइट जैस्मिन (Night Jasmin) क जाता है । इसके पत्ते बड़े खुरदरे रेगमाल जैसे तथा फू सफेद, छोटे लाल डंडी वाले होते हैं । इसकी खास पहचा यह है कि आसोज-कार्तिक मास में इस पर पुष्प आते हैं बड़े मन्द खुशबू वाले होते हैं । रात को फूल खिलते हैं औ प्रातः के समय जमीन पर अपने आप झड़ जाते हैं । य इसकी खास पहचान होती है । कहीं-कहीं कोठियों में भ इसे लगाया जाता है । साल में एक ही बार फूल आते हैं इसके हरे पत्तों को 15-20-25 तक तोड़ कर, धोक थोड़ा कूट कर मन्द आँच पर काढ़ा बनावें । छान क प्रातःकाल खाली पेट रोगी को पिला देवें ।

द्वितीय सूत्र :- अश्नाति यो नरः सिद्धामेरण्डतैलसाधिताम्
वार्ताकुं गृध्रसीक्षीणः पूर्वामाप्नोत्यसौ गतिम्

(चक्रदत्त वातव्याधि

अर्थात् - जो व्यक्ति एरण्ड तैल - केस्टर ऑय में बैंगन की सब्जी बना कर खावें (रात को) - वह गृध्रस रोग से मुक्त हो जाता है ।

मैंने अपने लम्बे चिकित्सा काल में अनेक रोगि को इन सूत्रों के आधार पर निश्चित रूप में रोग मुक्त कि है ।

तृतीय सूत्र :- इसके अतिरिक्त चिकित्सा सू संख्या 3 - त्रयोदशांगगूगल 2 से 4 गोली 2 बार गर्म ज से चबाकर, तोड़कर, पीसकर सुबह शाम देवें । साथ जरूरत समझें तो महायोगराज गूगल 2-2 गोली भी दे सक हैं ।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



इस चिकित्सा से वर्षों पुराने अनेक गृध्रसी पीड़ित गी बड़ी शीघ्रता से रोग मुक्त हुए हैं ।

इसके अतिरिक्त एक चौथा सूत्र है - महानारायण ल 10 ग्राम रात को गर्म दूध या गर्म जल में पिला देवें । श्चित रोग से मुक्ति मिलेगी और चिकित्सक को धन, श तथा धर्म का लाभ मिलेगा । लोग महानारायण तैल का योग मालिश के लिए तो आम रूप में करते हैं, किन्तु लाने में बहुत कम करते हैं ।

लेखक ने अपने चिकित्सीय जीवन में अनेक हठी ात रोगों में सफलतापूर्वक लाभ उठाया है ।

इसके अतिरिक्त अनेक मुष्टिक योग हैं : इस गृध्रसी चिकित्सा के लिए ऊपर से गृध्रसी नाड़ी को छेड़ हुए पादांगुलि में लाकर रक्तस्राव या अग्नि चिकित्सा वर्णन है - इन्द्रवस्तिमर्म में अग्नि कर्म करने पर लाभ है ऐसा सुश्रुत ने लिखा है । कुछ जानकार लोग चिकित्सा भी करते हैं, जो अग्निकर्म में माहिर हैं । मैंने जो चिकित्सा लिखी है, वह अनेकशः परीक्षित है, लोग अनुभव करके देखें ।

आचार्य डा०एस०एल० वसंत,
पंचकर्म विशेषज्ञ, एम.डी. (आयुर्वेद)
एलर्जी एवं क्रोनिक रोग विशेषज्ञ,
नागपाल स्ट्रीट, फाजिलका (पंजाब)।
फोन नं०: 01638 - 263336, 26263

बैद्यनाथ
प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं । इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है । हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है । इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, बरवट और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं । मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है । बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व

# आयुर्वेद की उपेक्षा सर्वथा घातक, बैद्यनाथ प्रतिष्ठान की आयुर्वेद-सेवा-अनुकरणीय

## पटना-निर्माण केन्द्र में डा० पी.एस. मेहरा का भाषण

सितम्बर, 1966

इस अवसर पर अपने भाषण में डा० मेहता ने सर्वप्रथम प्राणाचार्य वैद्यराज पं० दुर्गा प्रसाद शर्मा, आयुर्वेदाचार्य तथा श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० की आयुर्वेद-सेवाओं की प्रशंसा की । आपने कहा कि वैद्यराज पं० दुर्गा प्रसाद शर्मा ने देश के आयुर्वेद-आन्दोलन में नई जान डाल दी है और देश को बहुत ही व्यापक दृष्टि दी है । आपने कहा कि वैद्यराज श्री शर्मा का दृष्टिकोण आन्दोलनात्मक दिशा में भी आयुर्वेद तीव्र गति से बढ़ रहा है । पं० शर्मा के वनौषधि-प्रेम को उन्होंने अनुकरणीय बताया ।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० की आयुर्वेद सेवाओं का उल्लेख करते हुए आपने कहा कि वे ऐतिहासिक महत्व के अधिकारी भी हैं और अन्य आयुर्वेदिक प्रतिष्ठानों के लिए भी अनुकरणीय है । आपने कहा कि आयुर्वेद-सेवा में बैद्यनाथ प्रतिष्ठान देश के आयुर्वेदिक प्रतिष्ठानों में सबसे आगे है और यदि यह प्रतिष्ठान न होता तो आधुनिक युग में आयुर्वेद का इतना प्रचार-प्रसार कदापि नहीं हो पाता और न इतनी संख्या एवं इतने परिमाण में शुद्ध आयुर्वेदिक दवाएं ही सुलभ हो पातीं ।

आयुर्वेद के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए आपने कहा कि आयुर्वेद संसार का सबसे उत्कृष्ट स्वास्थ्य-विज्ञान है । यह रोगों का दमन नहीं बल्कि उन्मूलन करने वाला चिकित्सा विज्ञान है । यही कारण है कि आयुर्वेद असाध्य रोगों की चिकित्सा करने में सक्षम है जब कि पाश्चात्य चिकित्सा इसमें अक्षम है ।

आपने कहा कि स्वस्थ शरीर वाले ही नहीं बल्कि स्वस्थ चरित्र एवं विचार वाले मानव-समाज के निर्माण के लिए भी आवश्यक है, क्योंकि यह चरित्र निर्माण एवं विचार निर्माण पर भी बल देता है । आपने कहा कि चरक, सुश्रुत और वाग्भट्ट के संदेश कालजयी हैं और उनकी तपस्या एवं साधना से उद्भूत आयुर्वेद सर्वदा अमोघ एवं प्राणान्वित रहेगा । किन्तु, आपने इस बात पर खेद प्रकट किया कि देश के स्वतंत्र होने पर भी आयुर्वेद की सरकारी उपेक्षा का क्रम चल रहा है । आपने कहा कि आयुर्वेद की उपेक्षा देश के लिए घातक है, क्योंकि स्वस्थ, सदाचारी एवं सद्विचारी समाज का निर्माण करने के लिए आयुर्वेद सर्वथा आवश्यक है । आपने कहा कि देश का पुनरुद्धार एवं विकास नितान्त आवश्यक है ।

आपने कहा कि वैद्य समाज को साधना में संलग्न होना चाहिए और आस्थापूर्वक आयुर्वेद की सेवा करनी चाहिए । आपने आगे कहा कि आयुर्वेद को यदि देश में यथोचित स्थान दिलाना है तो वैद्यों को सेवाभाव से काम करना चाहिए और अनुसंधान में संलग्न होना चाहिए ।

अन्त में आपने कहा कि आयुर्वेद को भारत में तो प्राथमिकता मिलनी ही चाहिए, संसार में भी सर्वत्र इसका उपयोग किया जाना चाहिए क्योंकि इसकी विशेषताएं अन्य चिकित्सा-विज्ञानों में सुलभ नहीं है ।

बैद्यनाथ

घाव मलहम

फोड़े, फुंसी तथा खुजली में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## आपके पत्र

# आयुर्वेद की ओर लौटती दुनिया-विकल्प नहीं देसी चिकित्सा

सेवा में

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०
पटना

महाशय

विज्ञान और तकनीक के मामले में देश ने काफी तरक्की की है, लेकिन चिकित्सकीय अनुसंधान के मामले में हम पश्चिमी दुनिया से अभी भी इसलिए पीछे हैं क्योंकि देश की प्राचीन परम्परागत चिकित्सा शैली यानि आयुर्वेद की उपेक्षा हुई है । इसी का नतीजा है कि आज आयुर्वेद के नाम पर लोग अधकचरे ज्ञान से अपनी जेबें भरने लगे हैं । आयुर्वेद वस्तुत: जीवन शैली का विज्ञान है और यदि इसे व्यावसायिकता के चंगुल से निकालकर विकास के क्रम में ढाला जाए तो इससे बेहतर वैकल्पिक चिकित्सा प्रणाली और कोई नहीं ।

आयुर्वेद यानी देसी चिकित्सा पद्धति के बारे में आम धारणा यही है कि यह एलोपैथी के मुकाबले काफी पिछड़ी हुई है और इसमें बीमारियों के उपचार के लिए वे तकनीकें मौजूद नहीं हैं, जिनका इस्तेमाल आज के एम.बी. बी.एस. डाक्टर करते हैं । जो लोग आयुर्वेद को जानते हैं, और इसके फायदों से परीचित हैं, उनके लिए निश्चित रूप से यह एक गलत धारणा है, क्योंकि आयुर्वेद में सिर्फ उन बीमारियों के इलाज लिखें हैं, जिनके विषय में दुनिया को उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में पता चला, बल्कि जटिल रोगियों की शल्य चिकित्सा आदि के बारे में भी विस्तार से वर्णन किया गया है । आयुर्वेद के विद्वानों ने रोग की ऐसी स्थिति के लिए अत्यंत ही उत्तम वैज्ञानिक शब्द "आत्ययिक व्याधि" प्रयोग किया है जिसका तात्पर्य है त्वरित चिकित्सा करना । इसमें मुख्य व्याधि को ध्यान में रखकर ही उपद्रव का निवारण करना चाहिये । यदि रोगी के उपद्रव निवारण में मुख्य व्याधि या दोष के प्रतिकूल भी कोई चिकि करनी पड़े तो करनी चाहिए । इसका कारण यह है अधिक हानिकारक उपद्रव के निवारणार्थ अल्प हानिक व्याधि व दोष बढ़ भी जाय तो उसे सहन किया जा स है । आपरेशन भी होता है आयुर्वे चिकित्सा के किसी अंग को अनछुआ नहीं रखा है । संस्थान से औषधि के शोषित होने में पर्याप्त समय ल है. अत: औषधियों के सीधे रक्त में पहुंचने के निकाले गये । गम्भीर रूप से बीमार रोगी के सिर में द्वारा काक पदाकार नामक स्थान बनाकर वहाँ औषधि दी जाती थी, जिससें वह रक्त में मिल सीधे शरी फैलकर शीघ्र प्रभाव डालती है । रक्त से औषधि सम्पर्क होते ही मूर्छित व्यक्ति उठ बैठता है । इसी सि पर इंजेक्शन विधि का आविष्कार हुआ है । मूर्च्छा सन्निपात की भयंकर अत्यधिक अवस्थाओं में इंजेक्शन औषधि की शरीर में पहुँचाने का निर्देश दिया है । औ को पतपेटी सिरिंज में भरकर सूई की नोंक से नस पहुँचाने का स्पष्ट विधान मिलता है । अत: आज जो समझते हैं कि आयुर्वेद के डाक्टर इंजेक्शन लगाना जानते थे, रक्तक्षय होने पर रक्ताभरण नहीं करते थे उन अज्ञान षडयंत्रकारियों का प्रलाप मात्र है ।

आयुर्वेद में शराब और विष को भी औषधि प्रयोग करने का विधान है ।

अत: आप ही सोचिये कि आपको क्या करना अपनी देसी चिकित्सा पद्धति सर्वोत्तम है ।

भवदीय

(डा० राकेश मोहन शर्मा)
प्रभारी चिकित्साधिकारी
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
बरईशाहपुर - हाथरस
(उ०प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आरोग्य समाचार

## अखबार की कतरनों से

## Gene therapy grants new lease of life to many

*The results represent the first time gene therapy has been used successfully to treat cancer.*

A team of U.S. researchers successfully reversed advanced melanoma skin cancer by manipulating the genes of white blood cells to get them to attack the cancer, according to a new report on Thursday.

The National Cancer Institute scientists showed the ability to get a sustained regression in melanoma, a highly dangerous and frequently fatal form of skin cancer, by reprogramming through gene therapy the patient's own lymphocytes, or white blood cells, to recognise and fight the cancer cells.

They tried out the method on 17 patients in three groups, injecting into them the patient's own lymphocytes altered by the genetic introduction of T cell receptors, which steer the cells to find and destroy cancer tumour cells.

At first, the method failed to stall the disease in the first group of three. So, the researchers modified the treatment to make sure the genetically manipulated lymphocytes were injected into the patients at the cell's most active growth phase.

That generated better results: of the remaining 14 patients, the cancer regressed in two patients. Moreover, one month after receiving the gene therapy, all patients in the latter two groups continued to have significant levels of the cancer fighting cells.

"These results represent the first time gene therapy has been used successfully to treat cancer," said Elias Zerhouni, director of the national Institutes of Health, which oversees the National Cancer Institute.

"We hope it will be applicable not only to melanoma, but also for a broad range of common cancers, such as breast and lung cancer," he said.

The study of the gene therapy research was published by *Science* on its online edition on Thursday. — AFP

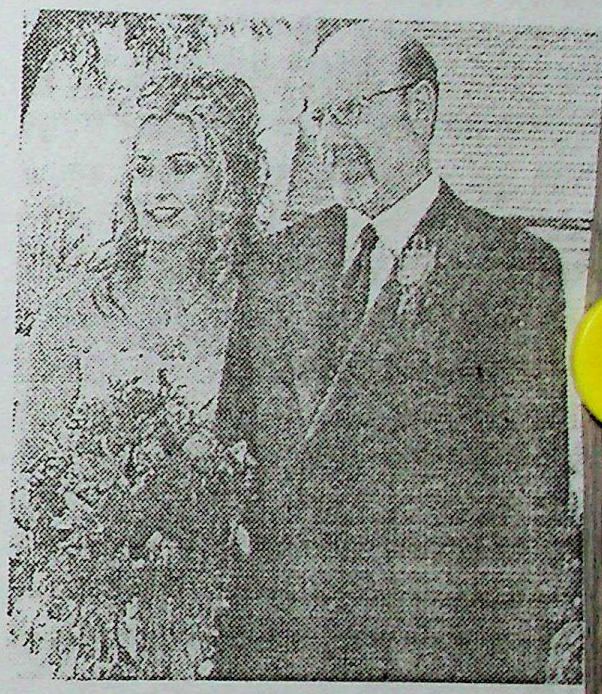

*Mark Origer (53), of Wisconsin, with his daughter Katie at her wedding recently, an event he had feared he would not live to see because of his end-stage melanoma. Mr. Origer underwent an experimental gene therapy and is disease-free now. – A.P.*

(With courtesy from The Hindu)

## स्थौल्य से आदमी नपुंसक हो सकता है

मोटापा से पुरुषों में नुपंसकता बढ़ने का खतरा बढ़ जाता है । एक ताजा अध्ययन के अनुसार यदि किसी व्यक्ति में सामान्य वजन से 20 पौंड ज्यादा वजन बढ़ जाता है, तो इससे हृदय रोग, नुपंसकता, मधुमेह, श्वास कृच्छ्र एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कुछ प्रकार के कैन्सर उत्पन्न होने का खतरा बढ़ सकता है।

## जब हो पीएमएस की शिकायत

प्री मेन्सटूअल सिंड्रोम (पीएमएस) नामक मर्ज में मासिक चक्र से पूर्व ही महिलाएं शारीरिक व मानसिक शिकायतों से ग्रस्त हो जाती हैं।

**क्या है पीएमएस**

अधिकांश महिलाएं मासिक चक्र के पूर्व कुछ असामान्य और अनचाहे लक्षणों को महसूस करती हैं। कुछ लक्षण कुछ घंटों से लेकर कई दिनों तक बरकरार रह सकते हैं। इनसे दैनिक क्रियाकलाप प्रभावित होते हैं। पीएमएस के लक्षण मासिक चक्र शुरू होने के 7 दिन से 14 दिन पूर्व परिलक्षित होते हैं।

**शारीरिक व मानसिक लक्षण**

पीएमएस की स्थिति में सिरदर्द, थकान, पेटदर्द, कब्ज, जी मिचलाना, उल्टी, स्तनों में भारीपन और या दर्द, शरीर में सूजन आदि शारीरिक लक्षण परिलक्षित होते हैं। इसी तरह मानसिक लक्षणों के तहत पीड़ित महिला कमजोरी, चिड़चिड़ापन, नींद न आना, मानसिक अस्थिरता, घबराहट, क्रोध, अवसाद, एकाग्रता में कमी की शिकायत महसूस करती है।

**कारण**

पीएमएस के कारणों के विषय में अभी तक पूर्ण जानकारी उपलब्ध नहीं है। माहवारी के पूर्व हार्मोनों के उतार-चढ़ाव के कारण शारीरिक लक्षण प्रकट हो सकते हैं। वहीं मानसिक लक्षणों का सीधा संबंध मस्तिष्क के 'रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम' से होता है।

**निदान**

पीएमएस का निदान करने के लिए फिलवक्त कोई परीक्षण उपलब्ध नहीं है। इस मर्ज के निदान के लिए आवश्यक है कि पीड़ित महिला अपने लक्षणों के संदर्भ में एक डायरी बनाकर उसमें प्रतिदिन के लक्षणों को लिखें। यदि लक्षण मासिक चक्र से एक से दो सप्ताह पूर्व होते हैं और माहवारी होने के बाद समाप्त हो जाते हैं पीएमएस की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता

**क्या करें**

- थकान लाने वाले कार्य न करें।
- तनावपूर्ण स्थितियों से बचें और सकारात्मक अपनाएं।
- तीन बार भोजन कर और तीन बार हल्का स्नैक्स
- कम नमकयुक्त आहार लेने से शारीरिक तनाव में मिलती है। नमक की कम मात्रा लेने से मासिक के पूर्व होने वाले सिरदर्द में आराम मिलता है सूजन कम होने से शरीर में हल्कापन रहता है
- मौसमी फल, सब्जियाँ और सादा भोजन ग्रहण
- तनावमुक्त होने के लिए योग करें और सुबह
- ध्यान, प्राणायाम और हल्की मालिश करना है।
- हमेशा खुश और हँसते-मुस्कुराते रहने से तनाव होता है।
- पूरी नींद लें। धूप से बचें।

**क्या न करें**

- भोजन के बीच मे लंबा अंतराल न रखें।
- अधिक चीनी और कैफीनयुक्त आहार से बचें चाकलेट कोलड्रिंक और कॉफी आदि।
- फास्ट फूड्स से परहेज करें।
- मांसाहार से परहेज करना हितकर है।
- यदि इन सबसे लाभ न मिले, तो शीघ्र ही विशेषज्ञ से परामर्श लें।

*(दैनिक जागरण से*

## लीवर पर हमला करते हैं मलेरि के विषाणु

घातक बीमारी मलेरिया से वर्षों से पूरी दुनि परेशान किये हुए है। विषाणु से फैलने वाले इस



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



बारे में वैज्ञानिकों-स्वास्थ्य विशेषज्ञों के हाथ आज तक खास सुराग नहीं लग सका है । हावर्ड हजेज मेडिकल इंस्टीट्यूट (एचएचएमआई) के वैज्ञानिकों ने चूहे पर परीक्षण के बाद मलेरिया के विषाणु के जीवन चक्र का पता लगाने का दावा किया है ।

एचएमएमआई के रॉबर्ट मेनार्ड व उनके सहयोगियों और पास्चर इंस्टीट्यूट (पेरिस) के रोजेरियो एमिनो ने बताया कि मलेरिया के विषाणु किसी व्यक्ति के लीवर पर सबसे पहले हमला करते हैं । इसके बाद वे लाल रक्त कणिकाओं में मिल जाते हैं । इसकी वजह से व्यक्ति तेज ठंड के साथ बुखार की गिरफ्त में आ जाता है । अध्ययन में मेनार्ड व एमिनो के अलावा जर्मनी के हम्बर्ग स्थित बर्नार्ड-नोक्ट इंस्टीच्यूट के वोल्कर हेयूस्लर आदि भी शामिल थे । वैज्ञानिकों ने चूहे के भीतर मलेरिया के विषाणु के जीवन चक्र की पूरी फिल्म भी तैयार की । उनकी अध्ययन रिपोर्ट विज्ञान पत्रिका 'साइंस एक्सप्रेस' के ताजातरीन अंक में प्रकाशित हो गयी है । इसका ऑनलाइन संस्करण भी पत्रिका की वेबसाइट पर जारी की गयी है । मेनार्ड और एमिनो मानते हैं कि विषाणु के जीवन चक्र का पता चलने से मलेरिया का कारगर इलाज ढूंढ़ना आसान होगा । अभी तक घातक बीमारी की कोई खास दवा विकसित नहीं हो सकी है । उल्लेखनीय है कि पूरी दुनिया में हर साल करीब 30 करोड़ लोग मलेरिया के शिकार होते हैं । इसमे कम से कम 10 लाख लोगों की मौत हो जाती है । मेनार्ड और उनके सहयोगियों के विषाणु की संरचना बहुत जटिल होती है.... बिल्कुल 'ट्रोजान घोड़े' की तरह ! दरअसल, यूनान में 'ट्रोजान घोड़ा' लकड़ी के उस घोड़े को कहा गया है जिसके पेट में घुसकर यूनानी सैनिकों ने ट्रॉय में प्रवेश किया था । ठीक उसी तरह मलेरिया के विषाणु लीवर की झिल्ली में घुसकर हमला करते हैं । तत्पश्चात, वे लाल रक्त कणिकाओं में घुलते-मिलते हैं ।

## पार्किंसन का खतरा कम करता है निकोटीन

अभी तक धूम्रपान या चाय-काफी के जरिये अधिक निकोटीन के सेवन से तमाम तरह के शारीरिक नुकसान ही सामने आये थे । लेकिन हाल में किये गये एक शोध के अनुसार निकोटीन स्वास्थ्य को सुरक्षा भी प्रदान कर सकता है । अध्ययन के अनुसार निकोटीन उस तरह की मस्तिष्क क्षति से सुरक्षा प्रदान करता है, जैसी पार्किंसन की स्थिति में होती है । यानी धूम्रपान के और चाहे जितने नुकसान हों, पर वह पार्किंसन रोग का खतरा कम करता है । हाल में पशुओं पर किये गये प्रयोगों के दौरान उन्हें छह माह तक निकोटीन के डोज दिये गये, बाद में पाया गया कि उनमें मस्तिष्क की क्षति 25 फीसदी कम हुई थी ।

बैद्यनाथ

मकरध्वज बटी

इसके व्यवहार से शारीरिक कांति की वृद्धि होती है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

## उत्तर प्रदेश

### चरक जयन्ती समारोह

विश्व आयुर्वेद परिषद्, साहिबाबाद, गाजियाबाद के तत्वावधान में आज दिनांक 30/7/2006 को सनातन धर्म मंदिर, लाजपतनगर में महर्षि चरक जयन्ती समारोह सम्पन्न हुआ ।

समारोह के संयोजक वैद्य शान्ति कुमार मिश्र ने वैदिक रीति से चरक पूजा सम्पन्न की । उपस्थिति महानुभावों में आयुर्वेद के वैद्य महेन्द्र कुमार त्यागी, पूर्व सहायक निदेशक केन्द्रीय अनुसंधान परिषद् प्रमुख थे । समारोह की अध्यक्षता डा० विशन लाल गौड़ ने की । बाबू जगजीवन राम के प्रधानाचार्य श्री रामचन्द्र श्रीवास्तव ने महर्षि चरक के जीवन तथा आयुर्वेद के महत्व पर प्रकाश डाला।

अध्यक्षीय भाषण में डा० गौड़ ने पश्चिमी की एलोपैथी और भारत की आयुर्वेद पद्धति के बीच रेखा खींचते हुए बताया कि चरक ऋषि का आयुर्वे मात्र के मानसिक, शारीरिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य विद्या है । उन्होंने इस बात पर गहरा दुख प्रकट किय पूँजी के लोभ में फँसी पश्चिम की चिकित्सा पद्धति तक हमारा पतन कर रही है कि चरक के देश के ह फीस लेकर मनुष्य अंग-भंग करने के में फँसने लगे हैं। जोर देकर कहा आधुनिक विज्ञान के मेडिकल साइन्स कल्याण कर सक जब देश के डाक्टर वैद्य सभी चरक आयुर्वेद की मानवत संस्कृति को धारण समारोह में उपस्थि सुरेश पाठक, शि अवस्थी, जयपाल

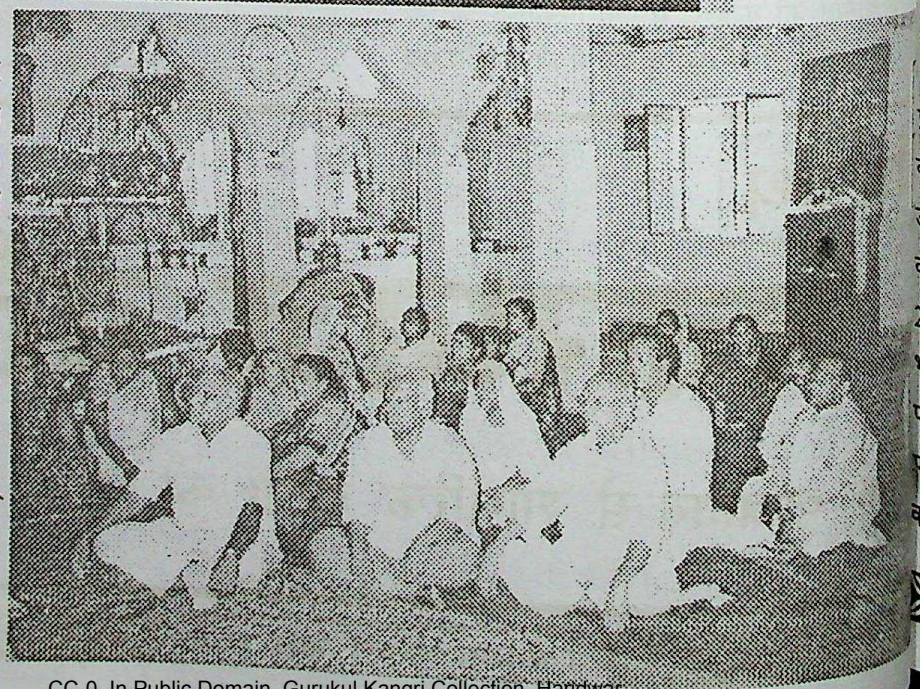

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



के०डी० दत्ता, संतोष कुमार, डा० रवि कौशिक, महा सचिव-आयुर्वेद विश्व परिषद् सभी महानुभावों ने माता बहनों के समूह के साथ महर्षि चरक के चित्र पर माल्यार्पण किया। मंदिर के अधिष्ठाता पं० सुदर्शन मिश्र ने विश्व आयुर्वेद परिषद् के सदस्यों को आर्शीवाद प्रदान किया।

## बधाई

डा० राकेश मोहन शर्मा, चिकित्साधिकारी, सचिव, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, बरई शाहपुर, हाथरस ने अपनी ओर से तथा जनपद शाखा - हाथरस की ओर से श्री पी.के. दीक्षित भा०प्र० सेवा, सचिव, आयुर्वेद, यूनानी एवं होम्योपैथी को कार्यभार ग्रहण करने के उपलक्ष्य में बधाई दी है तथा विश्वास प्रकट किया है कि उनके कार्यकाल के दौरान आयुर्वेद दिन प्रतिदिन उन्नति के पद पर अग्रसर होगा।

## बिहार

### लम्बी सेवा के उपरान्त चिन्तामणि उपाध्याय 'बैद्यनाथ' की सेवा से अवकाश ग्रहण करेंगे

वर्ष 1971 से निरन्तर श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० की पटना शाखा में कार्यरत श्री चिन्तामणि उपाध्याय 60 वर्ष पूरा करने के उपरान्त दिनांक 01.10.2006 को सेवानिवृत्त होंगे। ये भस्म निर्माण एवं रस भस्म के कार्य में पारंगत हैं। ये मूलत: ग्राम : हीरा पाटा, सेड्जा, पो०+जि०-सेड्जा - पुतली बाजार नगर पालिका, वार्ड नं० 10 (नेपाल) के रहने वाले हैं। कम्पनी की सेवा से अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् शेष जीवन गांव में बिताना चाहते हैं, फिर भी, यदि किसी आयुर्वेदिक दवा कम्पनी उनसे निर्माण सम्बन्धी जानकारी के लिए सहयोग मांगेगी तो वे सहर्ष अपनी सेवा देंगे।

वे भारतवर्ष सबसे पहले वर्ष 1965 में आये। उन्होंने अपना जीवन आसाम राज्य के लमडिंग जिला के काली बाड़ी स्थान से प्रारम्भ किया। लगभग 8 माह काम करने के पश्चात् वे फिर नेपाल चले गये। 1968 में नेपाल के धनगढ़ी में 7 माह रोड़ बनाने का काम किया। उसके पश्चात् वे पुन: भारत आ गये।

सेवा-निवृत्ति के पूर्व ही उन्होंने अपने समस्त साथियों से कार्य में सहयोग देने के लिए आभार प्रकट किया है।

## हिमाचल प्रदेश

चड्ढा ट्रेडर्स के डा० गोपाल चड्ढा ने निम्नलिखित समाचार प्रेषित किये हैं :-

### बवासीर और कैन्सर पर गोष्ठी

प्राप्त सूचना के आधार पर इस गोष्ठी में 110 रोगी आये। रोगियों के साथ-साथ बड़ी संख्या में विद्वान एवं औषधि निर्माताओं ने भी इस गोष्ठी में भाग लिया और अपने विचार प्रकट किये।

### कांगड़ा में गोष्ठी आयोजित

इस गोष्ठी में डा० चड्ढा ने बताया कि कोल्ड ड्रिंक के सेवन करने से कैन्सर की सम्भावना 30% बढ़ जाती है।

### सोलन में महिला शिविर आयोजित

हिमाचल विभूति पुरस्कार के विजेता डा० चड्ढा ने बताया कि संतुलित श्रम एवं भोजन से गर्भपात से बचा जा सकता है।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पृष्ठ सं० 161 का शेषांश)

निदेशक - देशी चिकित्सा एवं होमियोपैथी, बिहार सरकार, सचिवालय, स्वास्थ्य विभाग ।

श्री भीमराव अम्बेदकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर एवं कामेश्वर सिंह संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा के शोध प्रबंधन परीक्षक ।

यूनियन सर्विस कमीशन, नई दिल्ली, बिहार लोक सेवा आयोग, पटना एवं उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग, इलाहाबाद के शैक्षणिक एवं प्रशासनिक पदों के विशेषज्ञ ।

हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी के शैक्षणिक पदों के विशेषज्ञ ।

सम्पादक - सचित्र आयुर्वेद, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन, पटना (बिहार) ।

नियंत्रक - केन्द्रीय वनस्पति सर्वेक्षण ईकाई आयुर्वेद कालेज, पटना ।

अनुज्ञप्ति अनुशंसक - बिहार आयुर्वेदिक औषधि निर्माण संस्थानों को ।

परामर्शदाता - बिहार आयुर्वेद यूनानी अनुसंधान ईकाई, राजकीय आयुर्वेदिक कालेज अस्पताल, पटना ।

आजीवन सदस्य - अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन, नई दिल्ली ।

संचालक - हरिनाम स्वास्थ्य धाम- आयुर्वेदिक अस्पताल, शेखपुरा, बेली रोड, पटना ।

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar-249404 (U.K.)

यशस्वी चिकित्सक - वर्ष 2003 में धन्वन्तरि जयन्ती समारोह के अवसर पर इन्हें श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना की ओर से पुरस्कार मिला तथा शाल एवं श्रीफल से सम्मानित किया गया । इसी तरह प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन, बिहार एवं झारखण्ड द्वारा 26-27, अप्रैल, 2006 को भारतीय नृत्य कला मन्दिर, पटना में अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन, शताब्दी समारोह के अवसर पर आयोजित समारोह में बिहार एवं झारखण्ड राज्य के सम्मानित वैद्यों में स्व० वैद्यराज नागेशजी भी थे ।

यह विश्व मृत्युलोक है । जो जन्म लेता है उसकी मृत्यु होती ही है । जन्म और मृत्यु तो इस संसार का नियम है । सृष्टिकर्त्ता ने काफी सोच-समझकर यह नियम बनाया है । यदि जन्म लेने के बाद मृत्यु नहीं होती तो शायद लोगों को खड़े होने की भी जगह नहीं मिलती । आने वाली पीढ़ी का भी पता नहीं चलता । लोग सन्तान उत्पन्न करने से भी घबड़ाते । नये लोगों का प्रवेश इस संसार में निषिद्ध हो जाता । एक भयंकर स्थिति उत्पन्न होती । इस स्थिति से बचने के लिए ही सृष्टिकर्त्ता ने जन्म और मृत्यु के नियम बनाये । अतः यह शोक की बात नहीं है कि श्री नागेशजी इस मायावी संसार से कूच कर गये । उन्होंने अपना जीवन भरपूर जीया । वे एक ऐसे पेशे से जुड़े जिसमें मानव-कल्याण अपने आप निहित है । जो व्यक्ति दूसरों के लिए जीवित रहता है, वस्तुतः उसका जीवन धन्य है । इस दृष्टि से स्व० नागेशजी का जीवन धन्य था । उन्होंने अपने चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान से हजारों रोगियों को स्वस्थ किया । आयुर्वेद की परम्परा को जीवित रखा । वे अपने व्यवस्था-पत्र में एलोपैथी औषधियों को नहीं लिखते थे । आमतौर पर आज के आयुर्वेदिक चिकित्सक आयुर्वेदिक औषधियों के साथ-साथ एलोपैथी औषधियों को भी एक साथ लिखते हैं । इससे स्व० नागेशजी परे थे । वे शुद्ध आयुर्वेद में विश्वास करते थे । आयुर्वेद में उनकी गहरी आस्था थी । एक अर्थ में वे आयुर्वेदपुत्र थे । ऐसे यशस्वी पुत्र का तिरोधान हो जाना आयुर्वेद के लिए दुर्भाग्यपूर्ण है । किन्तु मृत्यु पर किसी का नियंत्रण नहीं है । उन्होंने एक सकारात्मक जीवन जीया यह उनके जीवन का महत्वपूर्ण पहलू है । ऐसे यशस्वी आयुर्वेद-पुत्र को हमारा प्रणाम ।

- विमलचन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ISSN - 090678 X

# सचित्र आयुर्वेद

# SACHITRA AYURVED

## A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

वर्ष - 59 अंक - 4 अक्टूबर - 2006

कफघ्नो दीपनो हृद्यः शुद्धानां व्रणिनामपि ।
ज्ञेयः पथ्यतमश्चैव मुद्गयूषः कृताकृतः ।।
स तु दाडिममृद्वीकायुक्तः स्याद्रागषा (रवा) डवः ।
रूचिष्यो लघुपाकश्च दोषाणां चाविरोधकृत् ।।

सु०सू० 46/366-367

मूङ्ग का यूष - कफनाशक, अग्निदीपक, हृदय के लिए प्रिय, वमन-विरेचन द्वारा शुद्ध व्रणियों के लिए हितकारी है ।

कृत - अकृत (लवण, मरिच द्वारा संस्कृत या असंस्कृत) - मूंङ्ग यूष अतिशय पथ्य है । इस मूङ्ग के यूष में दाढ़िम (अनार) और मृदवीका (किसमिस) को मिलाने से 'राग-खाडव' बनता है । यह राग-खाडव-रूचिकारक, लघुपाक, वात आदि दोषों का थोड़ा शमन करता है ।

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar-249404 (U.A.)
14/12/06

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना–800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अब भूल जाईये महीने की चिन्ता

## बैद्यनाथ सुन्दरी कल्प फोर्ट

रक्त की कमी, घबराहट, थकावट, हाथ पाँव के तलवे की जलन आदि परेशानियों में फौरन आराम देता है ।

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

## बैद्यनाथ सुरक्ता

आयुर्वेदिक स्किन टोनर
कील मुहाँसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



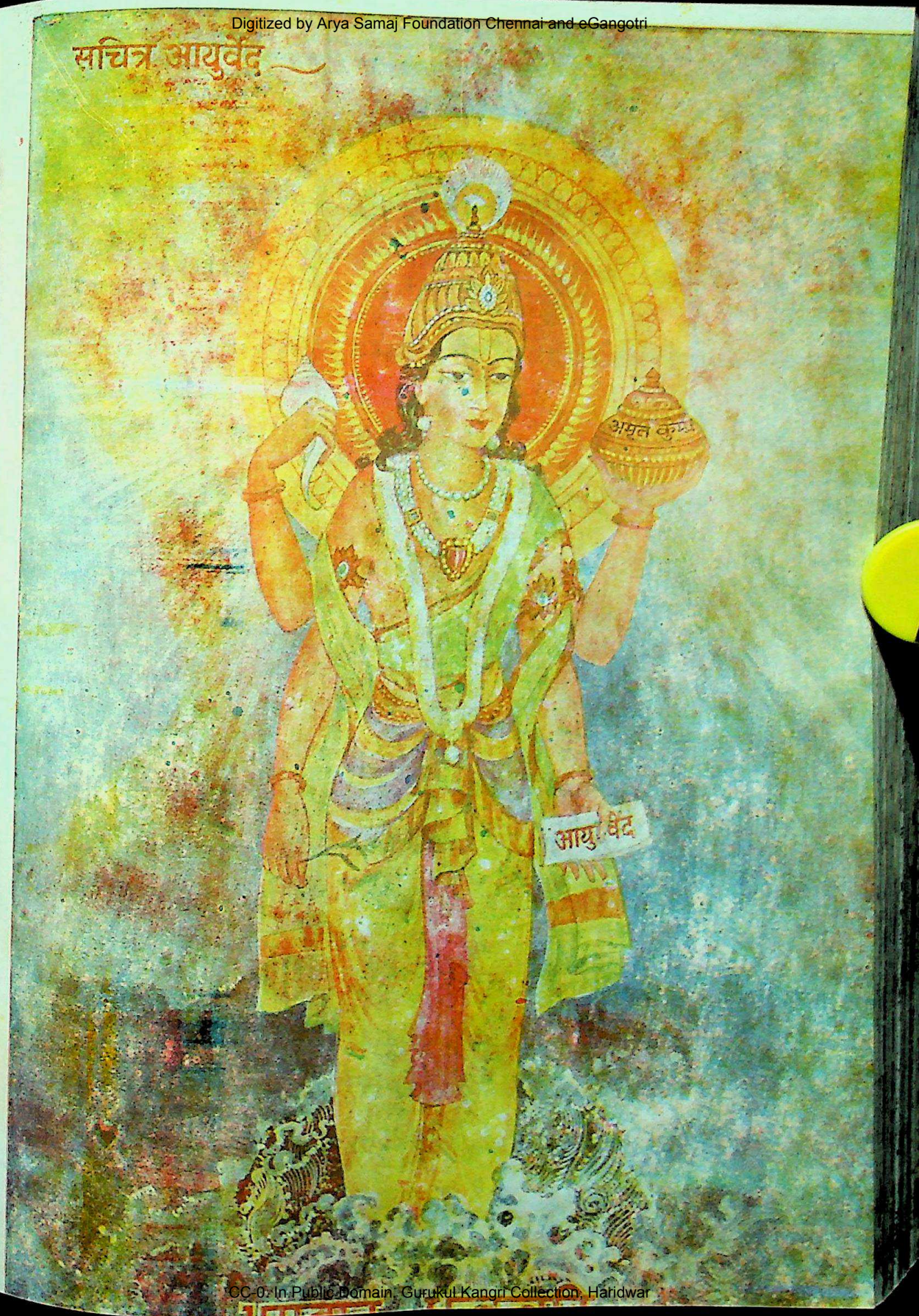


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# धन्वन्तरि वन्दन

अभिनवनीरदनीलं सुषमा शीलं महेन्द्रमणिमालम् ।
मानस मुदिल मरालं वन्दे सितंसिन्धुजं वालम् ॥ 1 ॥

घृतदर चक्रसुधाब्ज मजितमनन्समपारमव्यक्तम् ।
देव मनुज दितिजेशं वन्देक्षं सिन्धुजं वालम् ॥ 2 ॥

क्षितिजखाग्निप्रवात रचित प्रपंच पाँच भौतिक देह
स्थितशतगददवदहनं. वन्देलं सिन्धुजं वालम् ॥ 3 ॥

कविकुलकेलि कलापं काव्यालापं विनष्ट सन्ताप.
पापप्रलाप्रहारं वन्देजं सिन्धुजं वालम् ॥ 4 ॥

चन्दनचर्चितचीरं मृदु मंजीरं रसाब्धि संचारम् ।
मधुमयनूपुटपुरं वन्दे तं सिन्धुजं वालम् ॥ 5 ॥

कृतिलति काव्य कदम्बं करूणालम्बं नीलाब्ज
प्रतिविम्बम् व्याधिव्यथितकुटुम्बं वन्दे तंसिन्धुजंवालम्

गीष्णातिगणनान्तरं गीर्वोणार्चित युग्मपादाब्धम् ।
गौरवगौरगभीरं वन्दे तं सिन्धुजं वालम् ॥ 6 ॥

Central Library Gurukul Kangri University Haridwar-249404 (U.A.)

डा० आचार्य गौरकृष्ण गोस्वामी काव्य पुराण दर्शन तीर्थ, रमण परिसर, वृन्दावन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची

वर्ष - 59 अंक - 4 अक्तूबर - 2006

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मूल्य - 10 रुपये प्रति

वार्षिक मूल्य - 100 रुपये प्रति

आजीवन शुल्क - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुल्क - 2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 243

2. आयुर्वेद का इतिहास - 82 245
पं० बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा

3. स्वेद विकार चिकित्सा 249
वैद्य पी.एस. अंशुमान

4. विभिन्न रोगों में उपयोगी औषधीय पौधे 254
डा० राजकुमार द्विवेदी

5. बांस, वंशलोचन एवं नकली वंशलोचन 256
का अध्ययन
डा० मायाराम उनियाल

6. शय्यामूत्रत्व 261
वैद्य हरिदास श्रीधर कस्तुरे

7. बालकों में फक्क रोग - एक विवेचन 263
डा० दिनेश कुमार राय
डा० मोती राय

8. समाज की एक ज्वलन्त समस्या : कैन्सर 267
डॉ० बी माया, डॉ० जे० मनोहर
प्रो० एम०एस० मीणा

9. "कांकायनवटी" गुल्म और अर्श 271
डॉ० विजय प्रकाश पाठक "शास्त्री"

10. आयुर्वेद में मन एवं आहार का सम्बन्ध 275
डा० आदर्श कुमार, डा० मोहन लाल पाठक

11. दिल का दौरा : जरूरी जानकारियां 278
कैलाश जैन

12. मनोरोगी एवं मनोचिकित्सक ध्यान दें 280
डॉ० गोपेश कुमार न० शर्मा
डॉ० दिनेश कुमार शर्मा

13. अष्टांग संग्रह के सन्दर्भ में अतिसार 283
डा० अनूप कु० गक्खड़

14. Effect of Mansyadi Kwath Shirodhara in Essential Hypertension 284
Vd. Meghana Nimbkar
Vd. Mukesh Shaukla
Vd. Hariprasad Sharma

15. Effect of Sunthyadi Churna - a herbal compound in the Management of Amavata (Rheumatoid Arthritis) 287
T. Maheswar, S.N. Murthy
G. Venkateshwarlu, Kiran V Kale
M.M. Jumle

16. Rasa Shastra - An Expansion of Rasayana Therapy 294
Dr. Sri Durga, Dr. K.R.C. Reddy

17. Management of Madhumeha by Ahara & Vihar (Pathya-Apathya) 295
Dr. Rachana Bharti, Prof. Loknath Sharma
Dr. Ashvini Kumar Sharma

20. Herbal drugs useful against cancer 300
Gupta S.* Sheeja E., E. Edwin

21. Phytoesterogens : A herbal alternative in minizing risk of postmenopausal Osteoporosis 302
Dr. M.A. Pandya, Dr. Jasmine P. Japee
Dr. Rakesh Kumar Mishra

22. Garbhashaya griva mukha gata dushita vrana par khadirtail aur agnikarma ke prayoga ka tulanatmaka adhyayana 305

23. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 31

24. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 31

25. आरोग्य समाचार 31

26. आपके पत्र 31

27. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**सम्पादकीय**

# शीतल पेय के सम्बन्ध में बढ़ता युद्ध और हमारा स्वास्थ्य

सुश्री सुनीता नारायण हमारे देश की एक ऐसी सशक्त महिला के रूप में सामने आयी हैं जिन्होंने अपने वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर सरकार के साथ-साथ बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को भी चुनौती दी है । अपनी पत्रिका 'डाउन टू अर्थ' में उन्होंने विशद् विश्लेषण किया है । विज्ञान एवं पर्यावरण केन्द्र नामक संस्था के माध्यम से देश के 12 राज्यों से 25 विभिन्न शीतल पेय निर्माता कम्पनी के 57 नमूनों की जांच की । प्राप्त नमूनों में कोला-कोला, पेप्सी कोला, लिमका, फैन्टा, 7अप, मिरिण्डा आदि उत्पाद शामिल थे । प्रयोगशालीय जांच में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले गये :-

1. सभी शीतल पेय में कीटनाशक तत्व मौजूद थे ।
2. तीन से चार प्रकार के कीटनाशकों का मिश्रण सभी शीतल पेयों में पाया गया ।
3. लिण्डेन जिससे कैन्सर पैदा होता है, उसकी मात्रा 5.5 ppb पायी गयी जो भारतीयमानक से 54 गुना ज्यादा है ।
4. कलकत्ता से प्राप्त कोका-कोला के कुछ नमूनों में लिण्डेन की मात्रा 14 ppb पायी गयी जो मानक से 140 गुना ज्यादा है ।
5. क्लोरपायरिफोस जो स्नायु को विषाक्त करता है, सभी शीतल पेयों में 4.8 ppb पाया गया जो 47 गुना ज्यादा है ।
6. मुम्बई से प्राप्त एक कोका-कोला नमूना में क्लोर पायरिफोस 24.4 ppb पाया जो मानकों से 200 गुना ज्यादा है ।
7. हेप्टाक्लोर जो भारत में प्रतिबन्धित है, जिसके सभी नमूनों में 71% पाया गया जो बीआइएस के मानकों से 23 गुना ज्यादा है ।
8. सभी कीटनाशकों की औसत मात्रा सभी शीतल पेयों में 11.85 ppb पाया गयी जो मानकों से 23 गुनी ज्यादा है । विदित है कि इसकी औसत मात्रा 0.5 ppb रहनी चाहिएं ।

इसी तरह सभी शीतल पेय उत्पादों में विभिन्न कीटनाशकों की मात्रा पायी ।

वर्ष 2003 में जब राजग की सरकार थी, तब भी सुश्री नारायण की जांच से पूरे देश में तहलका मच गया था । संयुक्त संसदीय समिति ने भी इसकी जांच की थी । उस समय तर्क यह दिया गया कि जांच में जीसी-एमएस नाम की खर्चीली मशीन का प्रयोग नहीं किया गया किन्तु सुश्री नारायण के अनुसार प्रस्तुत जांच में इस मशीन का भी प्रयोग किया गया ।

अखबारों में प्रकाशित समाचार के अनुसार केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा गठित विशेषज्ञ समिति ने सुश्री सुनीता नारायण के दावे को सिरे से खारिज कर दिया है । केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री, श्री अंबुमणि रामदास ने बहुराष्ट्रीय कम्पनी का पक्ष लिया है । केन्द्रीय मंत्री के अनुसार जांच में कीटनाशकों के सम्बन्ध में स्पष्ट साक्ष्य सामने नहीं आया है । लोकसभा में उन्होंने बताया कि एक उच्चस्तरीय समिति गठित की गयी है जो यह पता लगायेगी कि पेय पदार्थ में कीटनाशकों की कितनी मात्रा मौजूद रह सकती है ।

पेय पदार्थों में कीटनाशकों की उपस्थिति के समबन्ध में कम्पनी ने निम्नलिखित तर्क दिये हैं :-

1. चीनी के चलते कीटनाशक मौजूद रहते हैं ।
2. अन्तिम उत्पाद के मानक निर्धारित नहीं किये जा सकते हैं क्योंकि यह एक जटिल अन्तर्द्रव्य (कम्पेल्क्स मेट्रिक्स) है । केवल कच्चे द्रव्यों के मानक निर्धारित किये जा सकते हैं ।
3. चीनी के मानकों को अभी तक निर्धारित नहीं किया गया है, अत: कीटनाशकों के मानक भी निर्धारित नहीं किये जा सकते हैं ।
4. उत्पाद काफी जटिल है, अत: कीटनाशकों की जांच - ppb स्तर पर नहीं की जा सकती है ।
5. अन्तिम उत्पाद की जांच नहीं की जा सकती है, क्योंकि दुनिया में यह कहीं सम्भव नहीं है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

6. जबतक केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा गठित समिति मानक निर्धारित नहीं करती है, तबतक जनता के लिए मानक निर्धारित नहीं किये जा सकते हैं ।
7. चूंकि मामला सर्वोच्च न्यायालय में विचाराधीन है, अत: सरकार मानक निर्धारित नहीं कर सकती है ।
8. भारतीय मानक संस्थान द्वारा निर्धारित मानक खाद्य मिलावटी प्रतिबन्ध अधिनियम के प्रावधानों के विरूद्ध है ।
9. मानक इसलिए निर्धारित नहीं किये जा सकते, क्योंकि कम्पनी तैयार नहीं है ।

विदित है कि शीतल पेय पदार्थ में 89% जल और 10% चीनी रहती है । शेष 1% गुप्त द्रव्य एवं कार्बन डायआक्साइड रहता है ।

राजस्थान उच्च न्यायालय ने आदेश दिया कि "उपभोक्ताओं को पेय पदार्थों में मिलाये गये द्रव्यों के बारे में पूरी सूचनी देनी चाहिए ।" माननीय न्यायालय ने पेप्सी कं०, कोका-कोला और अन्य कम्पनियों को निर्देश दिया कि बोतल पर लगाये गये लेबुल में उत्पादों में उपलब्ध सभी प्रकार के द्रव्य, कीटनाशक और रसायन के बारे में भी कम्पनी को पूरी जानकारी देनी चाहिए ।

अब प्रश्न उठता है कि सरकार सुश्री सुनीता नारायण एवं सीएसई पर विश्वास क्यों नहीं कर रही है । क्या केवल इसलिए कि ये बहुराष्ट्रीय कम्पनियां हैं और अमेरिकी सत्ता में बैठे अनेक राजनीतिज्ञों का पैसा इन कम्पनियों में लगा हुआ है या इसलिये कि अमेरिकी कम्पनी नाराज होकर चली जायेगी, तो हमारे विदेशी मुद्रा भण्डार पर इसका असर पड़ेगा या इसलिए कि हमारे नेतागण और कम्पनियों के मध्य किसी प्रकार का गुप्त समझौता है ? यह मानकर हम चलते हैं कि हम भ्रष्ट व्यवस्था में जी रहे हैं । किन्तु, इसका अर्थ यह नहीं है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ किया जाय । एक जनतांत्रिक देश में सरकार जनता के प्रति जिम्मेवार होती है । यह सरकार का नैतिक एवं संवैधानिक दायित्व है कि वह जनता के स्वास्थ्य का ध्यान रखे । जहां तक शीतलपेय में प्राप्त कीटनाशकों का प्रश्न है, वह निम्न कारणों से हो सकता है :-

1. स्वयं उस जल में कीटनाशक द्रव्य मौजूद हों जिसका प्रयोग शीतल पेय के निर्माण में होता है ।

यदि ऐसा है, तो कम्पनी को सीधे धरती से प्राप्त जल का उपयोग नहीं करना चाहिए, बल्कि प्राकृतिक जल का उपयोग करना चाहिए ।

2. जो गुप्त द्रव्य शीतल पेय में मिलाया जाता है, उसका खुलासा होना चाहिए ।

जनतंत्र का यह तकाजा है कि सभी खाद्य एवं पेय पदार्थों में मिलाये जाने वाले द्रव्यों के नाम एवं मात्रा लेबुल-खोली में अवश्य हों । यदि हम निर्मित औषधियों के डिब्बों/लेबुल खोलियों पर मिश्रित द्रव्यों का नाम लिख सकते हैं, तो पेय पदार्थों पर क्यों नहीं ? कुछ सिक्रेट के नाम पर किसी प्रकार के द्रव्य का नाम पेय उत्पादों पर गुप्त नहीं रहना चाहिए । सरकार को इस सम्बन्ध में कानून बनाना चाहिए ।

3. यह भी सम्भव है कि चीनी के निर्माण के क्रम में जिन गन्नों का इस्तेमाल किया जाता है, उनमें ही कीटनाशकों की ज्यादा मात्रा हो या चीनी निर्माण प्रक्रिया में जिन रसायनों का इस्तेमाल किया जाता है, उनमें ही कीटनाशक तत्व मौजूद हों ।

यदि ऐसा है, तो भी चीनी निर्माण प्रक्रिया के दौरान कीटनाशकों को नष्ट करने की विधि का उपयोग होना चाहिए । यदि हम सुश्री नारायण की बात पर विश्वास करें, तो शुद्ध चीनी का निर्माण किया जाता है जो कीटनाशक से परे है । फिर भी, चीनी की जांच इसके प्रयोग में होने से पूर्व होनी चाहिए ।

हमारी भोली-भाली जनता विज्ञापनों से ज्यादा प्रभावित होती है । यदि विज्ञापन करने वाले उच्च कलाकार हों, तो आमतौर पर लोग उनकी बात पर विश्वास करते हैं । इसलिए जनता को भी अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहना चाहिए । संघर्ष की इस घड़ी में हम आयुर्वेदज्ञ सुश्री नारायण के साथ हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

# आयुर्वेद का इतिहास-82

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

## दृढ़बल

श्री जी.पी. श्रीवास्तव[1] ने अपनी पुस्तक में दृढ़बल के सम्बन्ध में निम्न प्रकाश डाला है :-

1. चरक ने अग्निवेश तंत्र को पूरी तरह प्रतिसंस्कृत नहीं किया है । केवल दो-तिहाई भाग पूरा किया है । शेष 41 अध्याय दृढ़बल ने पूरा किया है । विद्वानों में इस सम्बन्ध में मतभेद है । कुछ विद्वानों के अनुसार चरक ने पूरी पुस्तक का प्रतिसंस्कार किया, कुछ कारणों से अन्तिम 41 अध्याय नष्ट हो गये जिसकी खोज सम्भव नहीं हो सकी । कुछ विद्वानों के अनुसार चरक ने केवल 83 अध्याय लिखे और शेष कार्य अधूरा छोड़ दिया ।

2. जो भी हो, यह स्थापित सत्य है कि आज जो चरक संहिता उपलब्ध है, उसमें 41 अध्याय दृढ़बल ने संपूरित किया है ।

3. इन्होंने हार्नले के मत का उल्लेख किया है जिसकी चर्चा पिछले अंकों में की गयी है ।

4. माधव और दृढ़बल के काल में अन्तर है । इसकी चर्चा भी पिछले अंक में की गयी है ।

5. चरक संहिता का अनुवाद 8वीं शती में अरबी भाषा में हारूण-अल-रशीद के कार्यकाल में हुआ था । लैटिन भाषा में इसका अनुवाद हुआ था और रचयिता का नाम 'Sharaka Indianus' रखा गया था । Sharak से आचार्य चरक का ही बोध होता है । 9वीं शती में इसका अनुवाद फारसी भाषा में हुआ था ।

यह ज्ञात नहीं है कि 8वीं शती में अरबी में अनूदित चरक संहिता में दृढ़बल का नाम आया है अथवा नहीं । यदि है, तो दृढ़बल 8वीं शती के पहले का हो सकता है । 9वीं शती का नहीं ।

6. दृढ़बल चरक संहिता के भाष्यकार (Commentator) थे ।

किसी भी ग्रन्थ का भाष्यकार होना और ग्रन्थ को पूरा करने में अन्तर है । श्री वास्तवजी ने भाष्यकार शब्द उपयोग क्यों किया, यह कहा नहीं जा सकता है ।

कविराज सूरमचन्द्रजी ने हार्नले की इस मिथ्य कल्पना कि 'माधव, दृढ़बल तथा द्वितीय वाग्भट सातवीं 9वीं शताब्दी में हुए हैं,' के सम्बन्ध में निम्नलिखित र प्रकट की है -

भारतीय ऐतिहासिक तिथि-क्रम को ठीक क वाल पं० भगवद्दत्तजी 'भारतवर्ष का इतिहास' पृ० 157 हार्नलि के इस कल्पित तिथि-क्रम को काटने के लि निम्नलिखित अकाट्य तर्क उपस्थित करते हैं -

आयुर्वेदीय चरक-संहिता का प्रसिद्ध टीकाक भट्टार हरिश्चन्द्र महाराज साहसांक, गुप्त चन्द्रगुप्त (प्रथ शती विक्रम) का समकालीन था । माधव-निदान मधुको व्याख्या 18/9 के अनुसार हरिश्चन्द्र ने चिकित्सा-स्थान ये अन्तिम अध्याय दृढ़बल के पूरित किए हुए हैं ।

माधव निदान के इस प्रमाण से ज्ञात होता है वि दृढ़बल चरक-संहिता के इन भागों का पुनरूद्धार भट्टा हरिश्चन्द्र से पूर्व कर चुका था । अतः दृढ़बल हरिश्चन्द्र क पूर्ववर्ती था, अतः हर्नलि की कल्पना निराधार है ।

दिलचस्प बात यह है कि कविराज सूरमचन्द्रज दृढ़बल के पिता कपिलबल को भट्टार हरिश्चन्द्र क पूर्ववर्ती मानते हैं । उनके ही शब्दों में "अष्टांग संग्र सूत्रस्थान पृ० 152 पर वाग्भट आचार्य कपिलबल का म उद्धृत करता है - कपिलबलत्वेषां स्वलक्षणानि रसत निर्दिदेश ।

स्पष्ट है कि कपिलबल वाग्भट का पूर्ववर्ती था परिणामतः ये पिता-पुत्र गुप्तकाल के पूर्वकाल के वैद्य थे इससे आगे वाग्भट सुश्रुत का पाठ पढ़ता है । इस सुश्रुत-पा के विषय में इन्द्र लिखता है -

**यथा सुश्रुतः कपिलबलमेतमेव विशेषयति ।**

अर्थात् सुश्रुत कपिलबल के मत को ही विशेष

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, 2 सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ता है । यदि यह संकेत ठीक है, तो निश्चय ही पलबल सुश्रुत-प्रतिसंस्कर्ता नागार्जुन का पूर्ववर्ती था ।

श्री अत्रिदेव विद्यालंकार ने दृढ़बल के सम्बन्ध में नलिखित तथ्य निरूपित किये हैं :-

य पंचनदपुर के रहनवाले थे (चरक चि०सि०12)। पंचनदपुर कश्मीर देश में था; जैसा राजतरंगिणी में कल्हण ने लिखा है (राज. 246, 250) । दृढ़बल को कश्मीर देश का कह सकते हैं ।

दृढ़बल के पिता का नाम कपिलबल था ।

दृढ़बल का समय वाग्भट से पूर्व का है, क्योंकि अष्टांग संग्रह में उसके वचन उद्धृत मिलते हैं । जैज्जट ने भी अपनी निरन्तर पर व्याख्या नामक चरक टीका में दृढ़बल के वचन प्रमाण रूप में उपस्थित किये हैं ।

वाग्भट और जैज्जट का समय चौथी शताब्दी है । इसलिए उससे पूर्व इसका समय होना चाहिए ।

दृढ़बल से पूरित भाग को जया, विष्णु, वासुदेव, कृष्ण का नाम आता है । इससे स्पष्ट है कि गुप्तकाल में जब कृष्ण वासुदेव की पूजा चल पड़ी थी, उस समय इसकी रचना हुयी है । मंत्रों में 'हिलि' शब्द का प्रयोग गुप्तकाल में प्रसिद्ध मातंगी विद्या का द्योतक है (देखिये - नावनीतक में मातंगी विद्या) ।

चरक चि० 23/90-94 में वर्णित "पिण्णमाण इमं मात्रा सिद्धं.....हिलिमिलि संस्पृष्टे रक्ष सर्वभेषजोत्तमे स्वाहा" में गुप्तकाल की छाया है ।

इसी तरह चि०चि० (24/13-20) में 'देशे यथर्तुकेशस्ते कुसुमप्रकरी कृते.....संवाह्यमान इष्टाभि: पिवेन्मद्यमनुत्तमम्' में दृढ़बल के मद्यपान की ही छाया है । यह स्पष्टत: गुप्तकाल के वैभव की उत्तम झांकी है ।

दृढ़बल गुप्तकाल के प्रारम्भ में वाग्भट से पूर्व हुआ था । इसका समय चतुर्थ शती का पूर्वभाग या तृतीय शती का उत्तरार्द्ध होगा ।

ढ़बल की देन

चरक संहिता क चिकित्सा स्थान के अन्त दृढ़बल ने कहा है कि इस संहिता में सत्रह चिकित्स अध्याय, कल्पस्थान और सिद्धस्थान नहीं मिलते उनको दृढ़बल ने भिन्न-भिन्न स्थानों से एकत्रित करके किया जिससे यह तंत्र पूरा हो जाय ।

चिकित्सा स्थान के सत्रह अध्यायों में विवाद कि कौन-से सत्रह अध्याय दृढ़बल ने पूरे किये चिकित्सा-स्थान में दो क्रम मिलते हैं ।

| प्रथम क्रम (निर्णय सागर, बम्बई) | द्वितीय क्रम (कलकत्ता प्रकाशन) |
|---|---|
| 1. रसायन | 1. रसायन |
| 2. वाजीकरण | 2. वाजीकरण |
| 3. ज्वर | 3. ज्वर |
| 4. रक्त पित्त | 4. रक्त पित्त |
| 5. गुल्म | 5. गुल्म |
| 6. प्रमेह | 6. प्रमेह |
| 7. कुष्ठ | 7. कुष्ठ |
| 8. राजयक्ष्मा | 8. राजयक्ष्मा |
| 9. उन्माद | 9. अर्श |
| 10. अपस्मार | 10. अतिसार |
| 11. क्षत | 11. विसर्प |
| 12. शोथ | 12. मदात्यय |
| 13. उदर | 13. द्विव्रणीय |
| 14. अर्श | 14. उन्माद |
| 15. ग्रहणी | 15. अपस्मार |
| 16. पाण्डु | 16. क्षत |
| 17. श्वास | 17. शोथ |
| 18. कास | 18. उदर |
| 19. अतिसार | 19. ग्रहणी |
| 20. छर्दि | 20. पाण्डु |
| 21. विसर्प | 21. श्वास |
| 22. तृष्णा | 22. कास |
| 23. विष | 23. छर्दि |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | | |
|---|---|---|---|
| 24. | मदात्यय | 24. | तृष्णा |
| 25. | द्विव्रणीय | 25. | विष |
| 26. | त्रिमर्मीय | 26. | त्रिमर्मीय |
| 27. | ऊरूस्तम्भ | 27. | ऊरूस्तम्भ |
| 28. | वातव्याधि | 28. | वातव्याधि |
| 29. | वातशोणित | 29. | वातशोणित |
| 30. | योनिव्यापद् | 30. | योनिव्यापत् |

प्रथम अध्यायों में एकमत है, पिछले पांच अध्याय दृढ़बल के हैं, इसमें दोनों संस्करण समान हैं। चक्रपाणि का कहना है कि प्रथम आठ अध्याय और द्वितीय क्रम के नौ से तेरह अध्याय छोड़कर शेष को दृढ़बल ने पूरा किया है। माधव निदान के टीकाकार विजय रक्षित ने 26, 27, 28 अध्यायों को दृढ़बल से सम्बन्धित बताया है। इसके अतिरिक्त (क) विभाग के 5, 16, 17, 22, 23 या (ख) भाग के 19, 20, 21, 24 और 25 को पिछले लेखकों ने दृढ़बल के नाम से उद्धृत किया है।[4]

अष्टांग हृदय के टीकाकार अरूणदत्त ग्रहणी रोग की टीका में (एक भाग का 15वां अध्याय) दृढ़बल का मत दिखाते हुए कहा है -

**रसाद् रक्तं ततो मांस मांसान्मेदस्ततोऽसि च ।**
**अस्थ्नो मज्जा ततः शुक्रं शुक्राद्गर्भः प्रसादजः ॥**
**इत्युक्तदन्तमाचार्य शिष्यस्त्विदमचोदयत् ।**
**रसाद् रक्तं विषदशात् कथं देहेऽभिजायते ॥**

चार पाण्डु, श्वास, तृष्णा, विष को (क भाग के 16, 27, 22 और 23 को) विजयरक्षित ने माधवनिदान की टीका में उद्धृत किया है।

अब केवल बारह अध्याय रहते हैं, जिनके विषय में संदेह है। अर्श, अतिसार, विसर्प का (क भाग के 14, 19, 21) उल्लेख नावनीतक में हुआ है। नावनीतक का समय भी दृढ़बल का समय है; (गुप्तकाल के आसपास का समय है) इसलिए ये अध्याय सम्भवतः दृढ़बल से पूर्व के हों।[5]

मदात्यय और द्विव्रणीय (क भाग के 24 और 25) अध्यायों को चरक के टीकाकार जज्जट ने अपनी निरन्तरपदव्याख्या में चरकाचार्य से सम्बन्धित बताया है

24 वाँ अध्याय-चरकाचार्यसंस्कृतश्चायमध्याय

25 वाँ अध्याय-आचार्यप्रणीतश्चायमध्यायः।

इस प्रकार से ख भाग के 9, 10, 11, 12, 13 पाँच अध्याय चरक के पक्ष में आते हैं। इस प्रकार कलकत्ता से मुद्रित (ख भाग) पोथी के पिछले अध्याय दृढ़बल से पूर्ण किये गये हैं। इनमें भी ग्रहण पाण्डु, श्वास, तृष्णा, विष ये पाँच अध्याय सन्दिग्ध लग हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि चक्रपाणिदत्त के समय (11वीं शताब्दी तक) क्रम सुरक्षित था। इसके पीछे क्र बदला। कलकत्ता की छपी पुस्तक (देवेन्द्र नाथसे उपेन्द्रनाथ सेन द्वारा प्रकाशित) में ख भाग का ही क्रम । बम्बई की प्रकाशित पुस्तकों में क भाग का क्रम है

दृढ़बल ने सुश्रुत का श्लोक पूर्णतः किया (चरक चि०अ० 26/113-114; 'आन ह्यते यस्य विशुष्य च' आदि सुश्रुत उत्तर अ० 22/6 से उद्धृत है।)

इस प्रकार पुनर्वसुत्रेय से उपदेश की गयी अग्निवे की बनायी, चरक द्वारा प्रतिसंस्कृत और दृढ़बल से पूरी क गयी वर्तमान चरक संहिता आज उपलब्ध है।

अब हमारे समक्ष निम्न प्रश्न उपस्थित होते हैं

1. चरक संहिता कब लिखी गयी ?
2. दृढ़बल का काल क्या था ?
3. क्या यह सम्भव है कि चरक संहिता के प्रणयन क तेरह-चौदह सौ वर्षों के पश्चात् ग्रन्थ को पूरा कि गया हो ?
4. "इत्यग्निवेश कृते तन्त्रे चरक प्रतिसंस्कृतेऽप्राप्ते दृढ़बल संपूरिते" का क्या-क्या अर्थ हो सकता है ?

श्री के.एन. उडुपा (सांत: Science an Philosophy of Indian Medicine - K.N.Udupa an R.H. Singh, B.H.U., Shri Baidyanath Ayurve Bhawan Ltd., Nagpur) के अनुसार चरक संहिता ई०पू 5वीं शती में लिखी गयी थी। आचार्य प्रियव्रतजी व अनुसार चरक का काल 2री शती ई०पू० है। दोनों विद्वान के मत में 300 वर्षों का अन्तर है। कुछ विद्वान चरक क



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ाल तीसरी शती मानते हैं । अर्थात् 600 वर्षों का अन्तर । या यह विश्वसनीय है ? इसी तरह दृढ़बल का काल कुछ द्वान 8वीं या 9वीं शती मानते हैं । आचार्य प्रियव्रत शर्मा हें गुप्तकालीन मानते हैं । अर्थात् इसका काल 4थी शती नते हैं । श्री अत्रिदेव विद्यालंकार इनका काल चतुर्थ शती ा पूर्व भाग या तृतीय शती का उत्तरार्ध मानते हैं । यह त्य है कि चरक संहिता के कुछ भागों को दृढ़बल ने पूरित किया था, किन्तु यह सम्भव नहीं है 13-14 सौ र्षों के बाद संपूरित किया गया हो । यह तो एक नयी रचना । जायेगी, न कि संपूरित । अत: दृढ़बल का काल 8वीं । 9वीं शती नहीं हो सकता है । जहां तक तीसरी या चौथी ती का प्रश्न है । इसमें भी एक विद्वान के अनुसार लगभग ०० वर्षों का एवं एक अन्य विद्वान के अनुसार 500 वर्षों ा अन्तर हो जाता है । भाषा-विज्ञान के अनुसार इतनी म्बी अवधि में भाषा की शैली बदल जाती है एवं प्रवाह भी अन्तर हो जाता है । इसलिये यह सम्भव नहीं लगता कि चरक के अधूरे कार्यों को दृढ़बल ने पूरा किया हो 'इत्यग्निवेश कृते तंत्रे चरक प्रतिसंस्कृतेऽप्राप्ते दृढ़बल संपूरिते' से स्पष्ट है कि दृढ़बल के समय तक चरक संहिता के कुछ भाग अप्राप्त हो गये थे । अर्थात् चरक-संहिता को पूरी तरह प्रतिसंस्कृत आचार्य चरक ने किया था । कुछ भाग नष्ट हो जाने या अनुपलब्ध हो जाने से दृढ़बल ने संपूरित किया था । 'पूरित' शब्द का अर्थ संस्कृत में पूरा किया, ढका हुआ आदि होता है । इसका आशय यह भी ो सकता है कि चरक संहिता के खोये हुए भागों के बदले लिखकर पूरे ग्रन्थ को पूरा किया हो । सम्भवत: इसलिये संपूरिते' शब्द का प्रयोग किया गया हो । जो भी हो, दृढ़बल का काल निश्चित रूप से चौथी शती के पूर्व होना ाहिए ।

(निरन्तर जारी)

संदर्भ :-


1. History of Indian Pharmacy - G.P. Srivastava - Vol.I - Pindars Limited, 7, Lower Rewdon Street, Calcutta - 20
2. आयुर्वेद का इतिहास - प्रथम भाग - कविराज सूरमचन्द्र, बी.ए. - 29, दक्षिण पटेल नगर, मार्केट नयी दिल्ली ।
3. आयुर्वेद का बृहत् इतिहास - अत्रिदेव विद्यालंकार प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, उ०प्र० ।


4. जामनगर से प्रकाशित चरकसंहिता (भाग पृष्ठ 104 में) नावनीतक का समय दृढ़बल से पूर्व गया है । परन्तु नावनीतक में अष्टांग संग्रह की भाँति की प्रशस्ति है । गुप्तकाल के ग्रन्थों में लशुन की प्रशं इसके खाने पर विशेष जोर देना यह इस समय की विशे है, जिस प्रकार की इस समय के बारीक झीन वस्त्र, उ चुन्नट विशेष है । इसलिए नावनीतक दृढ़बल के पीछे होना चाहिए ।

**5. व्यायाममम्लं लवणानि मद्यं मृदं दिवास्वप्नमतीय तीक्ष्ण निषेत्यमाणस्य प्रदूष्य रक्तं दोषास्त्वचं पाण्डुतां नयन्ति रक्तमित्युपललक्षणं, तेन त्वक् मांसमपि दूष्यत्वेनदृढ़ब पठितम् ।**

(मा.नि.टीका

**हिक्काश्वास - यदाह दृढ़बलः - कफवातात्मकौ पित्तस्थानसमुद्भवौ ।**

च०चि०अ

**तृष्णा :- दृढ़बलेन तु पञ्चतृष्णा पठिता, वातपित्तश्लेष्म सर्गजा इति ।**

**मूर्च्छा (विष) - यदुक्तं दृढ़बलेन -**

**लघुरूक्षमाशुविशदं व्यवायी तीक्ष्णं विकासी सूक्ष्म उष्णमनिर्देश्यरस दशगुणमुक्तं विषं तज्ज्ञैः ॥**

(मा०नि० 17-15 टीका

**ते तैलादौ व्यस्तास्तीव्राः सन्ति, विषमद्ययोस्तु तीव्रता अतस्तैलादिभिर्न मोहः, किन्तु विषमद्याभ्यामिति ।**

(मा०टीका



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# स्वेद विकार चिकित्सा (DISORDERS OF THE SWEAT)

*वैद्य पी.एस. अंशुमान, एच.पी.ए.

परिचय

आयुर्वेद में स्वेद को एक द्रव मल के रूप में ग्रहण किया गया है । स्वेद स्वेदग्रंथि में उत्पन्न हो स्वेदवाहिनी द्वारा बाहर आता है । इसके निकलने से जहां त्वचा मृदु एवं आर्द्रतामय रहती है वहीं शरीर का तापक्रम भी नियंत्रित रहता है । साथ ही शरीर के दोष क्षार-पित्त आदि स्वेद के साथ निकल जाने से रक्त शुद्ध रहता है । कुछ ने इसको मेद की उपधातु भी कहा है ।

स्वेद को मेद धातु का मल माना गया है । जब देहगत जल, उष्मा से संयुक्त होकर रोमकूप से बाहर आता है तब उसे स्वेद रूप मल कहा जाता है । मेद के किट्टांश से स्वेद की उत्पत्ति होती है ।

स्वेद त्वचा पर आर्द्रता करता है या क्लेदित करता है, उष्णता प्रतिकार करता है, त्वचा को सुकुमार बनाता है, तथा दोषों के पाक में मदद करता है ।

त्वचा स्थित स्वेद ग्रंथियों की क्रियाशीलता का नियंत्रण सुष्मनाशीर्ष (मेड्युलाआबलोन्गेटा) से होता है । अतः भय, क्रोध आदि में इनकी क्रियाशीलता बढ़ स्वेद प्रवृत्ति देखी जाती है ।

स्वेदवहस्रोतो दुष्टि

आयुर्वेद साहित्य में स्वेदवहस्रोतोमूल के रूप में (I) मेद एवं (II) रोम कूप को माना गया है । इन स्रोतोमूल की दुष्टि कई कारणों से होना संभव है यथा -

- अत्यन्त संताप ।
- शीत एवं उष्ण का सहसा परस्पर सेवन ।
- व्यायाम अतिरेक ।
- क्रोध, शोक, भय आदि ।

लक्षण

स्वेदवहस्रोतो दुष्टि से उत्पन्न लक्षण नीचे लिखे अनुसार कहे गये हैं ।

- पसीने का नहीं आना (या कम आना) ।
- या पसीना अधिक आना ।
- शरीर त्वचा का खर या रूक्ष होना ।
- या त्वचा का अत्यधिक-स्निग्ध होना या श्लक्षण होना ।
- दाह होना (या गर्मी लगना) ।
- लोम हर्ष (रोम हर्ष) होना ।

चिकित्सा -

इन स्रोतों के दुष्ट होने पर निम्नलिखित चिकित्सा सूत्र-निर्देश मिलते हैं -

- ज्वर में कही चिकित्सा के अनुसार चिकित्सा करना यथा -
  - * रोमहर्ष एवं रूक्षता के वातिक ज्वरवत् ।
  - * दाह एवं अतिस्वेद में पैत्तिक ज्वरवत् ।
  - * स्वेदाल्पता एवं त्वक स्निग्धता (श्लक्षणता) में कफज ज्वरवत ।

स्वेदाल्पता या स्वेदक्षय (ANIDROSIS)

जब शरीर से पसीना कम निकलता हो या सर्वथा नहीं आता हो तो उसे स्वेदाल्पता या स्वेदक्षय की अवस्था कहते हैं ।

यह स्थिति कई कारणों से होना संभव है, यथा - हाईपोथायरॉयडिज्म एवं जराज शल्कीयत्वक विकार आदि का होना ।

आयुर्वेद में स्वेद नहीं आने से सम्बन्धित कारणों को निम्नानुसार रखा जाता है -

- वात एवं कफ कोप, कफावृत्त उदान, कफावृत्त समान, उदानावृत्त व्यान आदि ।
- आमदोष, आमवात, आद्यवात ।
- अपतर्पण, विबंध ।
- शीत पर्यावरण ।
- शूल युक्त अवस्थायें, कर्ण-मन्या-शिर-गृध्रसी आदि ।
- ग्रह, स्तंभ, आयाम, जैसी स्थितियां ।
- कम्प, अर्दित, वैपथु जैसे वात विकार ।
- सुप्ति, अर्ति, पाद, जंघा, जानु, ऊठ अर्ति, अंगमर्द, गौरव ।
- घात युक्त अवस्थायें, एकाङ्ग-सर्वाङ्गघात, विनाम पक्षाघात, शुक्रघात ।

* (निवृत्त प्रोफे./प्राचार्य) 1497, ए 2/1, कृष्णनगर, रूपाणि सर्कल, भावनगर (गुजरात) 364001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



- ग्रंथि, अर्बुद ।
- प्रतिश्याय, कास, श्वास, हिक्का जैसे रोग ।

**लक्षण**

(क) स्वेदाल्पता या स्वेदनाश (सर्वथा अभाव) त्वक रूक्षता ।

(ख) रोमकूप स्तब्धता
त्वकदोष (कुष्ठादि विकार), त्वकशोष (क्षीण होना) स्पर्श वैगुण्य (स्पर्श सम्बंधी विकार)

(ग) स्वेदरोध युक्त ज्वर, त्वकरोग एवं विष/मद युक्त लक्षण ।

**स्वेदाल्पता एवं क्षय की चिकित्सा**

**(क) सूत्र**

- उष्ण चिकित्सा ।
- स्वेदन कर्म करना ।
- स्वेदजनन अन्तःप्रयोग ।

**(ख) उपक्रम**

- अभ्यङ्ग पूर्वक स्वेदन (साग्नि एवं निराग्नि) ।
- निदानानुसार चिकित्सा ।
- निर्वात, उष्ण, स्थान, गुरु प्रावरणादि का सेवन ।

**(ग) औषध**

- षड्धरण जल ।
- वच्छनाग विष, भल्लातक ।
- शोभांजन (सहजन), एरण्ड, अर्क, पुनर्नवा, यव, तिल, कुलत्थ, माष, बदर आदि स्वेदोपग द्रव्य प्रयोग ।
- ज्योतिषमति, तज, जटामांसी, कटफल, एरण्ड, अंकोल, रसोन, देवदार, सुदर्शन, भृंगराज, राजिका, अजगंधा, वाकुचि, वनप्लांडु, कुंकुम, वासक, पुष्करमूल, भार्ङ्गी, चित्रक, दन्ती, कालमेघ, कुष्ट, कनेर, तुलसी, चोपचीनी, कपूर, सैरेमक आदि का प्रयोग ।
- त्रिभुवन कीर्ति जैसे कल्प ।
- विविध स्वेदन प्रयोग ।
- * **अनाग्नि स्वेद** - व्यायाम, उष्ण सदन/कुटि, गुरुप्रावरण, क्षुधा, बहुपान, नियुद्ध, आतप, उपनाह, भय एवं क्रोध आदि 10 प्रकार ।
- * साग्निस्वेद -
- जेन्ताक, कर्ष, कुटि, कूप, होलाक आदि
- या पाणि, कांस्य, कपाल, कंदुक, व
- वस्त्रादि ।
- उपनाह - बंधन, प्रदेह, पोट्टली ।
- संकर, प्रस्तर, नाड़ी, अश्मघ्न, कुंभी, भू
- ऊष्म स्वेद या पाषाण, कपाल, इष्टिका,
- जेन्ताक, कुटि ।
- परिषेक, अवगाह आदि द्रव स्वेद ।

**स्वेदाधिक्य या स्वेदवृद्धि (HYPERIDROSIS)**

जब शरीर से मात्रा से अधिक प्रमाण में निकलता है तब उसे स्वेदाधिक्य कहते हैं । इसे आयुर्वेद में स्वेद वृद्धि कहा गया है ।

स्वेद वृद्धि के हेतुओं को निम्नानुसार ख सकता है -

- पैत्तिक प्रकृति ।
- पित्तदोष वृद्धि, पित्तावृत्त समान, व्यानावृ
- उष्णता वृद्धि, ऊष्ण पर्यावरण ।
- उष्ण, तीक्ष्ण आहार सेवन ।
- ज्वर (पैत्तिक ज्वर) ।
- वातनाड़ी क्षोभ ।

**लक्षण**

(क) अति स्वेद प्रवृत्ति -

I सर्वांग स्वेदाधिक्य - ज्वरादि में ।

II एकाङ्ग स्वेदाधिक्य -
चेहरे पर - गरम क्षौभक आहार संवन
हस्तपाद तल स्वेद - पैत्तिक विकार ।
कक्षा - वंक्षण-स्वेद-पित्त प्रकृति स्त्री,
ब्रोमोडोसिस में ।
जननाङ्ग स्वेद - रक्त दुष्टि में ।

III पक्षीय स्वेदाधिक्य -
एक पक्ष में स्वेद - पक्षघात में ।
एक पार्श्व - फुफ्फुस प्रदाह/ रोग में ।
मुखमण्डलपार्श्व - अर्दितादि में ।





CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(ख) स्वेद - त्वक दुर्गंधता -

I उग्र / तीक्ष्णगंधता - फेट्टी एसिड के साथ, वट्टस्वेद मिलने पर, मेदवृद्धि आदि में ।

II अम्ल गंधता - वातरक्त, अश्मरी, अम्लमेह ।

III क्षार गंधता - क्षारमेह, शरीर में क्षारीयता बढ़ना ।

IV असह्यदुर्गंधता - केरोटीन विघटन से, स्टेफे+संक्रमण ।

V विस्रगंधी (आमगंधी) को पित्तप्रकृति का लक्षण कहा है । अत: इनमें - कक्षा-शिर-शरीर में पूतिगंध आती है । (च०वि० 8/118)

(ग) स्वेद वैवर्ण्यता

स्वेद में रंजक घटक मिलने से स्वेद के रंग में अन्तर देखा जाता है, यथा -

* पीत स्वेद Lepothrix से कक्षा-वंक्षण में पीताभ या रक्ताभ स्वेद आना ।
* रक्त स्वेद - स्वेद में रक्त मिलने पर रक्तपित्त संयुक्त स्थितियां विशेषत: तिर्यकरक्तपित्त में ।
* नील स्वेद - यह बी.पायोनस (B.Pyoeyaneus) में देखा जाता है ।

(घ) कण्डू - स्वेदवृद्धि जन्य लक्षणों में इसे भी पढ़ा गया है ।

(ङ) अतिस्वेदन कर्म के कारण उत्पन्न उपद्रवों को पृथक से कहा गया है, यथा -

I द्रव्रव एवं शीताङ्गता ।

II ऐंठन, संधिपीड़ा, तृषा, मूर्च्छा ।

III अतिस्विन्न जन्य लक्षण -

पित्तप्रकोप, समकोप, विस्फोट, दाह, अवसाद (श्रम), अंग शैथिल्य, स्वर दौर्बल्य, क्लम, तृषा, ज्वर, छर्दि, भ्रम, मूर्च्छा ।

**अतिस्वेद चिकितसा -**

(क) सूत्र

- ग्रीष्म ऋतुचर्या में कहे आहार-विहार, उपक्रम ।
- पित्त एवं रक्त विकारोक्त चिकित्सा ।
- ज्वर एवं दग्धवात चिकित्सा ।
- पित्तघ्न, मेददोषघ्न, स्वेद स्तंभक चिकित्सा ।
- शिरीष, खस, नागकेसर, लोध्रादि स्वेदघ्न अवचूर्णन ।

(ख) लक्षणानुसारी चिकित्सा

I अतिस्वेदता - स्तंभक चिकित्सा

(अ) शीत परिषेक, स्तंभन द्रव्य अवचूर्णन ।

(च) क्षेत्र विशेषगत अतिस्वेद में कारणानुसार उपचार ।

II दुर्गन्धता - सुगंधित जल स्नान, उद्वर्तन, अवचूर्णन आदि का प्रयोग ।

* ग्रीष्मकालीन अतिस्वेदज दुर्गंधता में - अर्जुन, जामुन, लोध्रकृत उबटन प्रयोग ।
* श्रम एवं उष्णपर्यावरण जन्य दुर्गंधता में - लोध्र, खस, शिरीष, कुमुदनीकृत चूर्ण का अवचूर्णन ।
* कक्षा, जंघा स्वेद दुर्गन्धनाशनार्थ - बिल्वमज्जा हरड़ कृत चूर्ण अवचूर्णन या उद्वर्तन ।
* देह दुर्गन्धनाशनार्थ -

- श्वेतचंदन, केसर (नागकेसर), लोध्र, तगर, कमलमूल चूर्ण का उद्वर्तन ।
- इमलीबीज, करौंदा बीज चूर्ण प्रलेपन ।

III स्वेद दुर्गन्ध विशेष नाशनार्थ -

- उग्रगंध - मेदघ्न, अमृतादिगूगल आदि ।
- तीक्ष्णगंध - पित्त - मेदहर, गोक्षुरादि गूगल आदि ।
- अम्लगंध - कफघ्न, अम्लमेहघ्न, अश्मरीहर, वातरक्तघ्न कल्प, चन्द्रप्रभावटी, न्यग्रोधादिकषाय आदि ।
- क्षार गंध - पित्तघ्न, क्षारविरूद्ध, क्षारमेहघ्न, उशीर, लोध्र, चन्दन, अर्जुनकृत कषाय (च) त्रिफला क्वाथ (सु) मेहमुदगर रस, त्रिफला गूगल आदि ।
- असह्य दुर्गंध - भूतघ्न, प्रमेहघ्न, ज्वरघ्न, गुडुच्यादि क्वाथ, विडङ्ग लोह सुदर्शनघन वटी, गंधकवटी या गंधक रसायन आदि ।

(ग) स्वेद वैवर्ण्य चिकित्सार्थ

- पीत - पित्तघ्न, कामलाहर, अमृतादि या भूनिम्बादि कषाय आदि ।
- रक्त - पित्तघ्न, रक्तशोधक, रक्तपित्तघ्न, रक्त मेहघ्न, अमृता, वासा, गोक्षुर, प्रवाल आदि के



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कल्प ।

- नील - पित्तघ्न, नीलमेहघ्न, उशीर, मुस्तक, आंवला, हरड़े कृतकषाय या शालसारादि कषाय (सु) मेहान्तक रस ।

(घ) लक्षण विशषानुबंध चिकित्सार्थ

- कण्डू - रक्तशोधक, कण्डुघ्न, शीतपित्तघ्न मंजोष्ठादिक्वाथ, पंचनिम्बादिवटी, कैशोर गुग्गुल, चन्दन, कर्पूर युक्त अवचूर्णन ।
- दाह - पित्तघ्न ज्वरघ्न, गुडुचिक्वाथ, चन्दन प्रलेप ।
- अन्य उपद्रव - लक्षणानुसारी चि० ।

(ङ) अंग विशेष स्थित स्वेद चिकित्सा ;

- ललाट एवं मुखमण्डल - पित्त, अम्लक, मधुर पावक, धान्यकहिम, चन्द्रकलारस ।
- हस्त-पाद तल स्वेदता - पित्तघ्न, मेदघ्न, गुडूची क्वाथ, संशमनी, चन्द्रप्रभावटी ।
- कक्षा/ पित्तघ्न, शीत;
- वक्षण - कक्षावत;
- जननाङ्ग स्वेद - रक्त-पित्त कुष्ठ हर क्रिया, मंजीष्ठादि क्वाथ ।
- अर्धपक्ष एवं अर्धाङ्ग स्वेद - पक्षावधकृत अर्दितवत यथा एकाङ्गवीर एवं योगराज/सिंहनाद गूगल ।

**स्वेदाधिक्य कुष्ठ रोगी**

| (क) आतुर | | | | |
|---|---|---|---|---|
| क्र० | 1 | 2 | 3 | 4 |
| वयवर्ष | 40 वर्ष | 25 वर्ष | 35 वर्ष | 45 वर्ष |
| लिंग | पु० | स्त्री | स्त्री | पु० |
| रोग/लक्षण | स्वेदाधिक्य<br>देह दुर्गन्ध<br>श्रम | हस्ततल स्वेद<br>अतिप्रवृत्ति<br>दाह<br>तृषा | कक्षा-वंक्षण<br>स्वेदाधिक्य<br>देहदौर्गंध्य<br>स्थौल्य | ललाट स्वेद<br>प्रभूतता |

**(ख) औषध**

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. मंजीष्ठादिक्वाथ<br>2 तोला प्रात: | 1. गुडुच्यादिक्वाथ<br>2 तोला प्रात: | 1. √ | 1. √ |
| 2. सारिवादि वटी<br>आरोग्यवर्धिनी<br>पुनर्नवामण्डूर<br>1-1 गो० x 2 बार | 2. संशमनी,<br>नवजीवन 1-1 गोली<br>x 2 बार | 3. आरोग्यवर्धनी<br>मेदोहर गुग्गुल<br>1-1गो० x 2 बार | 3. संशमनी<br>सूतशेखर<br>1-1 गो० x 2 बार |
| 3. धात्रिनिशा<br>पंचनिम्बादि<br>अश्वगंधा<br>यष्टि, अर्जुनाभ्र<br>प्रवाल, चन्द्रकला 1मा. x 2 बार | 3. रसायन चूर्ण<br>प्रवाल<br>अर्जुन<br>लोध्र मि०<br>1मा. x 2 बार | 3. √ | 3. धात्रिलोह<br>मण्डूर<br>प्रवाल शतावरी<br>मि०1 माशा<br>x 2 बार |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | | |
|---|---|---|---|
| 4. आमपाचन वटी<br>1-1 भोजनोत्तर | 4. √ | 4. चित्रकादिवटी<br>1-1 गो०भोजनोत्तर | 4. शंखवटी<br>1-1गो० भोजन के बाद |
| 5. कैशोरगूगल 2 गो०<br>1 गो. रात्रि में | 5. चन्द्रप्रभावटी<br>1 गो. रात्रि में | 5. शिलाजीत वटी<br>1 गो. रात्रि में | 5. त्रिफला वटी<br>1 गो. रात्रि में |
| (ग) परिणाम<br>लक्षण शमन : | √ | √ | √ |

आधार: संदर्भ :-


1. मेदसोमल (चरक चि. 15/18) मेदस उपधातु (शार्ङ्गधर आढमल) किट्टात्स्वेद xx मला पुष्यन्ति (च०सू० 28/42), स्वेद जलस्नेह रूप (चरक).
2. स्वेदवहानां स्रोतसां मेदो मूलं रोमकूपाश्च

च०वि० 5/12

व्यायामादतिसंतापाच्छीतोष्णक्रमसेवनात् ।
स्वेदवाहीनि दुष्यन्ति क्रोध शोक भयैस्तथा ।

च०वि० 5/29

प्रदुष्टानां खल्वेषामिदं विशेषविज्ञानं भवति तद्यथा अस्वेदमति स्वेदनं पारूष्यमतिश्लक्षणतामङ्गस्य परिदाहं लोमहर्ष च दृष्ट्वा स्वेदवहान्यस्य स्रोतांसि प्रदुष्टाभीति विद्यात् ।

च०वि० 5/10

xx स्वेदवाहनां चिकित्सा xx ज्वर चिकित्सकी ।

च०वि० 5/33

यद् (उदकम्) च ऊष्मणा नुवद्धं लोभकोपेभ्यो निष्यतद् स्वेदशब्द मवाप्नोति (च०शा० 7/15) स्वेद क्लेदत्वक् सौकुमार्यकृत् (सु०सू० 15/5)
3. स्वेद क्षये स्तब्धरोमकूपता त्वकशोष: स्पर्श वैगुण्यं स्वेदनाशश्च । सु०सू० 15/17, च०सू० 14/20-24, सु०चि० 32/17-21, अतिस्विन्न लक्षण च०सू० 14/13, सु०चि० 32/37, स्वेदनं (द्रव्यं) स्वेदकारकम् । स्तम्भगौरव शीतघ्नं च तत्राभ्यङ्ग स्वेदोपयोगश्च । सु०सू० 15/11 स्वेदोपग, च०सू० 4/22 (शोभाजनकैरण्डार्कवृश्चीर पुननर्वायवतिलकुलत्थमांषवदशणीति दशेमानि स्वेदोपगानि भवन्ति) ।
4. स्वेदस्वचो दौर्गंध्य कण्डू च । सु०सू० 15/15, च०सू० 14/16-19, सु०चि० 32/25-27, च०सू० 15/12, सु०चि०32/24, अ०ह०सू० 27/16-17, अ०ह०सू० 17/-

शिरीषलाभज्जकहेमलोध्रस्वेदांष संस्वेदहर: प्रवर्ष: च०सू० 3/28 अ०र० 15/85-88



बैद्यनाथ

अश्वगंधारिष्ट

मूर्च्छा, भय, घबराहट, अनिद्रा,
मंदाग्नि आदि में लाभकारी




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विभिन्न रोगों में उपयोगी औषधीय पौधे

डा० राजकुमार

1. पपीता :-
   (अ) पपीता के बीज कृमिघ्न होते हैं ।
   (ब) पत्रों का स्वरस हृदय रोग में लाभकारी होता है ।
   (स) दुग्ध क्षीर का उपयोग मुंहासों पर लाभदायक होता है ।

2. अमलतास :-
   अमलतास के पत्रों का स्वरस दद्रु, चेहरा पक्षाघात में लाभकारी होता है ।

3. चना :-
   चने के पत्तों का कल्क मोच एवं अस्थिभग्न में लाभकारी होता है ।

4. तेजपात :-
   तेजपात के पत्रों का क्वाथ मधुमेह में लाभकारी होता है ।

5. गूलर :-
   (अ) श्वेतकुष्ठ में गूलर के फल के रस को पुराने गुड़ के साथ सेवन कराने से लाभ होता है ।
   (ब) कण्ठ कैंसर में गूलर के मूल में चीरा करने से झरने वाले रस को सेवन करने से लाभ होता है ।
   (स) अर्श (बवासीर) में गूलर के दुग्ध का लेप करना चाहिये ।

6. पीपल :-
   (अ) बच्चों के तोतलेपन में इसके पके हुये फलों को सेवन कराना चाहिये ।
   (ब) पोलियो रोग में पीपल के 2-4 पत्तों को इतने ही लसूड़े के पत्रों के साथ घोंटकर और छानकर नमक के साथ नित्य लेने से अतिशीघ्र लाभ होता है ।
   क्वाथ - 50 से 100 मि.ली.
   चूर्ण - 1 से 3 ग्राम ।

7. बकायन (महानिम्ब) :-
   (अ) बीज, छाल या पत्र स्वरस रक्त विकार विकार में लाभदायक होता है ।
   (ब) श्वान विष में इसके मूल का स्वरस लाभ होता है ।

8. लज्जावन्ती (छुईमुई) :-
   मूल का चूर्ण 1-1 रत्ती मधु के साथ काली खांसी में लाभकारी होता है ।

9. करेला :-
   योनिभ्रंश में करेले के मूल को पीसकर कल्क को योनि के अन्दर रखने से योनि स्थान अंदर प्रविष्ट कर जाती है ।

10. सहिजन (शिग्रू) :-
    (अ) मस्तिष्क ज्वर (मैनिंजाइटिस) में छाल जल में घिसकर इसकी 2 बूँद नासिका डालने से लाभ होता है ।
    (ब) छाल या मूल का क्वाथ पिलाना वृक्कशोथ लाभदायक होता है ।

11. मकोय :-
    विसर्प (Herpes) के दाग का नाश करने लिये मकोय के पंचांग का स्वरस में घिसकर इसका लेप करने से लाभ होता

12. जामुन :-
    (अ) जामुन का सिरका अतिसार एवं मधुमेह लाभकारी होता है ।
    (ब) जामुन के पके फल अश्मरी नाशक एवं में उपयोगी होते हैं ।

13. इमली :-
    सर्पविष में इमली के पत्रों का रस तथा सैंधव लवण 2 तोला मिलाकर सांप का विष उतर जाता है ।

14. सिंघाड़ा :-

प्रभारी चिकित्साधिकारी, राजकीय आयुर्वेद चिकित्सालय, सुम्मेरपुर, पोस्ट-घातरी (फिरोजाबाद) (उ



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



गर्भिणी महिलाओं को सातवें माह में सिंघाड़े का सेवन लाभदायक होता है ।

15. परवल (पटोल) :-

(अ) गंजापन में पटोल के पत्रों का रस गंजे सिर पर लगाने से असमय हुआ गंजापन दूर हो जाता है ।

(ब) पटोल के पत्रों का क्वाथ पीने से जलोदर में लाभ होता है ।

16. वाकुची :-

(अ) वाकुची के बीज का चूर्ण 16 तोला और हरताल का चूर्ण 4 तोला अच्छी तरह गोमूत्र में खरल करना चाहिये और फिर श्वित्र (श्वेतकुष्ठ) पर लेप करने से श्वित्र मिटकर त्वचा का रंग बदल जाता है ।

17. मूसली :-

वधिरता में मूसली तथा वाकुची का चूर्ण प्रतिदिन सेवन करने से लाभ होता है ।

18. शिकाकाई :-

पत्रों का सेवन करने से बिच्छू विष का प्रभाव कम हो जाता है ।

19. मण्डूकपर्णी :-

(अ) उच्च रक्तचाप में अर्जुन की छाल का चूर्ण, मण्डूकपर्णी का चूर्ण तथा शंखपुष्पी तीनों को समान मात्रा में मिलकर सुबह-शाम सेवन करना चाहिये ।

(ब) मण्डूकपर्णी के पत्रों का स्वरस दूध के साथ सेवन करने से अपस्मार में लाभ होता है ।

20. मूली :-

(अ) मूली के स्वरस को गुनगुना करके 1 या 2 बूँद कान में डालने से कर्णशूल दूर होता है ।

(ब) कुष्ठ रोग में मूली के बीज अपामार्ग के स्वरस में पीसकर लेप करने से लाभ होता है ।


झटपट आराम फुर्ती से चले काम...

बैद्यनाथ

गैसोल पाचक

गैस तथा हाजमा के लिए लाभदायक व कब्जियत नाशक




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# बांस, वंशलोचन एवं नकली वंशलोचन का अध्ययन

डा० मायाराम उनियाल, से०नि० निदेशक (आ

बांस न केवल भारतीय संस्कृति के अपितु सम्पूर्ण दक्षिण-पूर्वी एशियाई संस्कृति के अभिन्न अंग हैं । अपने व्यापक उपयोग के कारण प्रजातियों का यह ग्रुप उन प्रमुख प्रजातियों में से एक समझा जाता है जो हमारे देश में ग्रामीण जीवन और संस्कृति का मुख्य आधार है । बांस बहुमुखी प्रतिभा के कारण यह अनेक नामों से पुकारा जाता है । बांस संस्कृति - हरा सोना गरीब आदमी का टिम्बर व्यक्तियों का साथी है । वंश, वेणु, त्वक्सार, तवाशीर, कीचक, आदि नामों से जाना जाता है । विशेष किस्म मादा प्रजाति के पोरों में संचय होने वाला तरल वंशलोचन कहलाता है ।

**परिचय :-** वनस्पतिशास्त्र के आधार पर यह पौधा घास परिवार कुल का सदस्य है । भारत में बांस की 125 स्वदेशी और कुछ विदेशी प्रजातियाँ बांस से सम्बन्धित हैं । बांस के वन 10.3 मिलियन हैक्टर से घिरे हुये हैं, जो मोटे तौर पर देश में कुल वनक्षेत्र का 12.8% है । बांस के प्रजातियों का वन उष्णकटिबन्धीय से शीतोष्ण और कच्छारी मैदान से ऊँचे पहाड़ों तक देश के अधिकांश सभी राज्यों में पाये जाते हैं । केवल कश्मीर ही एक ऐसी जगह है जहाँ ये प्राकृतिक रूप से पैदा नहीं होते । भारत में पैदा होने वाले मुख्य बांस का जीनस बैम्बूसा वैम्बोस, बैम्बूसा वलगोरिस, बैम्बूसा स्पाईनोक्षा, डैन्ड्रोकैलेमस, जाइजैन्टोक्लोआ आदि कतिपय प्रजातियाँ हैं । पचास प्रतिशत से अधिक बांस की प्रजातियाँ, अरुणाचलप्रदेश, आसाम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड, सिक्किम, त्रिपुरा और पश्चिमी बंगाल में पाई जाती हैं । इसके अतिरिक्त अंडमान, म०प्र०, उ०प्र० तथा पश्चिमी घाट हैं । पर्वतीय वनों तीन हजार फीट (900) मीटर की ऊँचाई तक नीलगिरि में विशेष रूप से पैदा होता है । मध्यप्रदेश में 6,400 वर्गमील क्षेत्र में बांस के जंगल हैं । इनमें से लगभग हर साल सात-आठ लाख टन बांस निकाला जाता है । बांस की पोरी के अन्दर वंशलोचन दिखाई देता है ।

बांस उष्णकटिबंधीय प्रदेश में समुद्र तल से लेकर शीतोष्ण प्रदेश 2800 मीटर की ऊँचाई तक इसकी किस्में पाई जाती हैं । अधिक प्रजातियाँ ट्रोपिकलजोन में पाई जाती हैं । बांसों का भौगोलिक वितरण बहुत कुछ वर्षा, ऊँचाई और मृदा (मिट्टी) की अवस्थाओं से प्रभावि है । अच्छी उपज के लिये अधिकांश बांसों को सेल्सियस से 36 डिग्री तक तापमान, 1000 मि.मी. वार्षिक वर्षा और उच्च वायुमण्डलीय आद्रता की आव पड़ती है । बांस अक्सर नमघाटियों, परिरक्षितगतों, के समीप और निचली पहाड़ी ढ़लानों पर पाये जाते अक्सर वृक्ष प्रजातियों के साथ मिलकर अथवा उन पैदा होते हैं । इन प्रजातियों की उपज मृदा की स्थलाकृति अर्थात् पहाड़ी ढाल, ऊँची पहाड़ियों, भूमि, निम्नवर्ती पहाड़ी, नदियों एवं नालों के किनारे और सरिताओं के किनारे, समतलभूमि, आद्रभूमि, और आद्रस्थान एवं भौगोलिक वितरण पश्चिमी हि पूर्वी हिमालय, आसाम, पूर्वी बंगाल की पहाड़ी, मध्य और दक्षिण का पठार, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, एवं केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु आर्द्र-पश्चिमी घ अंडमान-निकोबार द्वीप समूह आदि विभिन्न जलवायु स्थानों में बांस की किस्मों का प्राकृतवास है ।

एकाक्षी प्रकन्द संकीर्ण होने तक क्षैतिजवत् बैठते हैं । प्रकन्द की अधिकांश पार्श्व कलियाँ कल्प पैदा करती हैं । बहुत कम कलियाँ नये प्रकन्द करती हैं । ये प्रकन्द लम्बे, पतले और खोखले होते अधिकांश बांसों की नालें खोखली होते हैं । डाइनोक जैसी बहुत कम प्रजातियाँ हैं जिनकी नालें ठोस होती

**बांस का रस** - अत्यधिक खोखले बां अन्दर एक मीठा द्रव रिस कर बहुधा गांठों (पर्व) से हो जाया करता है । आदिवासी इसे उदरविकारों में मानते हैं । इसका रस प्यास बुझाने के काम में आ यह उत्तम तृषाशामक है । बांस के रस के संदर्भ ने लिखा है कि जावा-सुमात्रा के पर्वतों पर यात्रा बांस के रस ने मेरी प्यास को शान्त किया है । कारण बांस की रस में मिठास होती है । कभी-कभी रस सूख कर सफेद डला-सा बन जाता है जो के समान दीखता है । वास्तव में यही वंशशर्करा

निदेशक, महर्षि आयुर्वेद प्रोडक्स लि०, नोयडा एक्सपोर्ट प्रोसिसिंगजोन, नोयडा, (उ०प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अंग्रेजी में बम्बुमाना (Bamboo manna) कहते हैं। जो लोग बांस के जंगल में आग लगा कर वंशलोचन निकालते हैं उसमें वंशशर्करा के डले जल जाते हैं। इसका कारण यह है कि शर्करा इसमें होने के कारण यह जल जाता है, जो ज्वलनशील है। वास्तव में बांस का शुष्क पदार्थ वंशलोचन न होकर इक्षु शर्करा सदृश वंशशर्करा है। संभवत: निघण्टुकारों वंशक्षीरी एवं वंशजा इसी कारण इसके पर्याय दिये हैं। यथा - **तव: क्षीरं पय:क्षीरं यवजं गवयोद्भवम्:** । रा०नि०

**आयुर्वेद में वंशलोचन :-** वंशलोचन संस्कृत शब्द है जिसका भावार्थ है कि बांस की आंख। बांस की पोरी की गांठ को हिन्दी में आंख और संस्कृत में लोचन कहते हैं। इस आंख के ऊपर वंशलोचन जमा होता है। इसी कारण इसे वंशलोचन कहते हैं। यह कपूर सदृश सफेद रंग का होता है। इसलिए ये इसको वंशकर्पूर कहा गया है। आरम्भिक अवस्था में यह दूधिया सफेद द्रव के रूप में रिसता है। जिसके कारण इसे वंशक्षीरी, तव:क्षीर कहते हैं। निघण्टुकारों ने इसके पर्यायों तुगाक्षीर, त्वक्क्षीरी आदि नामों का उल्लेख किया है। चरक, सुश्रुत आदि संहिताकारों ने वंशलोचन को तुगाख्या (च०सं०चि०अ० 4/76) तुगाक्षीरी, वांशी आदि नामों से चिकित्सा में इसका प्रयोग किया है।

यथा - **वंशत्वक्सार, कर्मारत्वचिसार तृणध्वज: ।**
**शतपर्वा यवफवो, वेणुभस्कर तेजन: ॥**

(शालिग्राम निघण्टु)

तथा - **त्वक्क्षीरी वंशजाशुभ्रा वंशक्षीरीच वैष्णवी ।**
**त्वक्सारा कर्मरीश्वेता, वंशकर्पूर रोचना: ॥**
**स्याद्वंशरोचना बांशी, तुङ्गक्षीरी तुगाशुभा ॥**

(धन्वन्तरि निघण्टु शतपुष्पादिको द्वितीय वर्ग)

भारत में औषध द्रव्य विक्रेता वंशलोचन को तवाशीर के नाम से जानते हैं। यद्यपि यह पार्शियन शब्द है, परन्तु मूलत: यह संस्कृत से निकला है। संस्कृत में तुगाक्षीरी या त्वक्क्षीरी के स्थान पर पार्शियन व्यापारी तवाशीर कहने लगे हैं। जावा के लोग इसको एपस (Apus) और ताहीबम्बू (Tahi Bambu) कहते हैं। सुमात्रा के देहातों में जहां वंशलोचन का संग्रह किया जाता है वहाँ के लोग इसको बीगा कहते हैं। बीगा शब्द मल भाषा का है। मलयी भाषा में कपूर-बुलोह (Buloh) कहते हैं। मलयी भाषा में चूने को कपूर कहते हैं। सिंगा में इसको कपूर बम्बू कहते हैं। असम के मिकिर ल वंशलोचन को आर्थम साहिनी कहते हैं।

**बांस के भेद (प्रजातियाँ):** वनावट व गुणों जानकारी सर डेविट ब्यूस्टर ने 1819 में (Journ. Science) प्रकाशित किया। इसी प्रकाशन में प्रो०एच.ए विल्सन ने संस्कृत ग्रन्थों के आधार पर वंशलोचन आयुर्वेदिक नाम, शास्त्रीय एवं स्थानीय गुण-कर्मों के विष में जानकारी प्राप्त की। अरब के चिकित्सा प्रणाली ए ग्रीक के ग्रन्थों में भी तवाशीर का उल्लेख है। अरब हकीम 940 ईस्वी के पश्चात् इसके बारे में जानकारी दे लगे। वंशलोचन के चमत्कारी प्रभाव के विषय में जा निवासियों का मानना है कि हड्डियों को मजबूत बनाने कारगर द्रव्य है। यह हृदय को मजबूत करता है तथा वृक (किडनी) को शीतलता प्रदान करता है।

**बांस में वंशलोचन निर्माण :-** जिस तरह पेड़ में गोंद होता है उसी तरह बांस की कुछ प्रजातियों की प (पोरी) के अन्दर ही वंशलोचन पाया जाता है। कतिप लेखकों के अनुसार बम्बुसा बम्बोस, Bambus araudinacea के पोरों में वंशलोचन पाया जाता है। पो के अन्दर की सतह पर दूधिया रस रिसता है। पोरी रिसकर यह नीचे गिरता है और गांठ पर आकर इकट्ठा ह जाता है। आरम्भ में यह पतला द्रव्य होता है। धीरे-धी गाढ़ा हो जाता है। चावल जैसी माण्ड में घन होकर गाढ़ हो जाता है। इस अवस्था में इस द्रव्य का रंग सफेद होत है। यह कच्चा और मृदु वंशलोचन कहलाता है। परिपाक होने पर यह स्फटिकमय एवं कठोर होता है। बांस की गांठ के अन्दर जमा वंशलोचन प्यालेनुमा आकार का, भीतरी सतह गहरी चमकदार नीलाभ रहती है। कुछ लोगों क विचार है कि कीट द्वारा बांस में क्षत करने पर जो रस निकलता है वह जम कर वंशलोचन बनता है। नये उगने वाले बांसों में यह बनना शुरू होता है।

सुमात्रा जोकि पहाड़ी प्रदेश है, जहाँ पर बांस के



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जंगल हैं । इन्हीं जंगलों से वंशलोचन निकाला जाता है । ा विश्वास किया जाता है कि अधिक वर्षा वाले जंगलों विशेष जंगली किस्मों की प्रजाति से वंशलोचन निकाला ता है । असम, जावा, सुमात्रा में पतली किस्मों वेम्बुसा बोस शाखारहित बांसों में सीधी पतली दीवार वाले खले और लम्बी पोरी वाले बांस वंशलोचन के लिये योगी हैं । असम के पानी की बहुलता वाले प्रदेशों के सों में वंशलोचन अधिक पैदा होता है । असम के वनों मिकिर कबीले के लोग वंशलोचन निकालते हैं । इनकी ली में वंशलोचन को आर्थिभी साहिनी कहते हैं । इनलोगों यह पहचान होती है कि अमुक बांस में वंशलोचन है । च से लेकर मई तक वंशलोचन निकालते हैं । असमी ग बांस के जंगल जलाकर वंशलोचन इकट्ठा करते हैं । क ही बांस की कई पोरियों से वंशलोचन निकाला जाता । यह वंशलोचन बांस की गांठ पर इकट्ठा होता है । शलोचन मादा जाति की प्रजातियों में पाया जाता है । ऐसा । कुछ लोगों का मानना है कि स्वाति नक्षत्र का जल बांस पोरों पर जमा होने से वंशलोचन बनता है । असली शलोचन मृदु, नीलाभ वर्ण लिये सफेद रंग का होता है । सि के खड़े जंगल को जलाने से वंशलोचन के डले काले ड़ जाते हैं । बाजार में यदा-कदा जो वंशलोचन मिलता है ह काले रंग का जला हुआ मिलता है । भारत के व्यापारी हीं ढेरियों को खरीदते हैं । सुमात्रा से जो वंशलोचन भारत आता है उसकी मुख्य मंडियां लाहट, लिंगाड, वंकुचन, रादुआ आदि है । पालिम्बांग से वंशलोचन खरीदने वाले वल भारत और चीन दो देश हैं । पालिम्बांग से लदान कर वंशलोचन सिंगापुर आता है । भारत में आया शलोचन फिर बम्बई बन्दरगाह से ईरान, इराक, काबुल, फगानिस्तान आदि मुस्लिम देशों को निर्यात किया जाता । पाकिस्तान से अमृतसर आता रहता था । कच्चा शलोचन मृदु होता है । मुट्ठी में भींचने पर वह लड्डू जैसा न जाता है ।

**वंशलोचन का शोधन एवं संस्कार** - अलग स्थानों से संग्रहीत वंशलोचन कूड़ा-करकट एवं मिलावट का अनुपात अलग-अलग होता है । कभी-कभी ढेरी में 10% वंशलोचन निकलता है । यद्यपि आयुर्वेदिक ग्रन्थों वंशलोचन के शोधन का उल्लेख नहीं मिलता है । सर्वप्र 1816 में जिला फरूखाबाद कायमगंज के कस्बे के वाले श्री गिरधारी लाल ने वंशलोचन का व्यापार शुरू कि था । फरूखाबाद के रहने वाले लखपतराय-समप नामक दो भाइयों ने 1887 में वंशलोचन का काम किया । प्राकृतिक वंशलोचन का कारोबार करने वाले पहले व्यापारी हैं । ये लोग सुमात्रा और जावां से क वंशलोचन मंगाया करते थे । ये लोग कलकत्ता में भूनकर पकाते थे तथा पका माल बेचते थे । ये लोग माल को सबसे पहले अलग-अलग नम्बर की छाननि छानते थे । मोटा और बारीक माल अलग-अलग क में पानी में भिगोकर रातभर छोड़ देते थे । इससे वंशलो के ढलों में चिपकी मिट्टी-धूल आदि फूलकर धुल है । वंशलोचन के 6-7 पानी से धो लेते हैं । इस प्र वंशलोचन का शोधन करते हैं । इस सुखाये हुए माल मिट्टी की कड़ाहियों में भूनते हैं । इस काम के लिये ह किस्म की बन्द भट्ठियाँ बनाते हैं । इसमें 2-3 घण्टे आंच देते हैं । लोहे की कड़छुले से माल का उलट-प करते रहते हैं । संस्कार किये हुये वंशलोचन डलों आधार पर व्यापारी ग्रेड करते हैं । ग्रेड बनाने के लि अलग-अलग नम्बर की छलनियों का उपयोग किया है । प्राकृतिक बांस से प्राप्त वंशलोचन की सही पह एवं प्राप्ति स्थान के संदर्भ में श्री रामेश वेदी ने विशेष से अनुसंधान किया है । श्री वेदी जी के विचारों का समावेश लेख में किया गया है ।

**नकली वंशलोचन :-** असली वंशलोचन लि मात्रा में उपलब्ध होने के कारण तथा प्राकृतिक वंशलोचन शुद्ध करने व पकाने की प्रक्रिया पेचीदा हो कारण आजकल सिन्थेटिक वंशलोचन तैयार किया जा है । संश्लिष्ट वंशलोचन का एक घटक सोडियम सिलि है । कुछ लोग कैल्सियम सिलिकेट भी तैयार करते एसिडसाल्ट भी इसमें मिलाया जाता है । सोडियम सल्फेट, पोटाशियम वाई सल्फेट अमोनियम सल्फे घोल समान मात्रा में लिये जाते हैं । इनकी जैली तैय



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सात दिन तक धूप में यही भट्टियों में 50% से 70% शतांश पर सुखाकर डले बना लेते हैं । इन डलों को बहते पानी में धोकर पुनः इसे करीब 60% तापमान पर सूखा लेते हैं । प्राप्त पदार्थों को भिन्न-भिन्न आकार की छलनियों से छान लेते हैं । व्यापारी मोटाई के आधार पर ग्रेड बना लेते हैं । यह सफेद, नीलाभ, अपारदर्शक या पारदर्शी होता है । सिन्थेटिक वंशलोचन बनाने का दावा है कि बांस से प्राप्त वंशलोचन के द्रव्यों के आकार की दृष्टि से गैस सोखने की क्षमता अधिक है । साथ ही यह अधिक रन्ध्री और अधिक हल्का होता है । नकली वंशलोचन यदि ठीक तरह से बनाया जाय तो समझदार आदमी भी इसे असली समझने लगता है । रासायनिक विश्लेषण के द्वारा प्राकृतिक वंशलोचन से नकली वंशलोचन का विश्लेषण करना कभी-कभी कठिन हो जाता है । प्राकृतिक वंशलोचन में पोटाश की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है जबकि नकली वंशलोचन में पोटाश नहीं पाया जाता है ।

**रासायनिक संगठन :-**

| | |
|---|---|
| सैकजा (सिलिका) | - 90.50 |
| पोटाश | - 1.10 |
| पेरोक्साईड आफ आयरन | - 0.40 |
| एलूमीनिया | - 4.87 |
| आर्द्रता | - 2.23 |

फरवरी 1836 में प्रो.टी.थॉमसन ने रिकार्डस् औफ जनरल साईन्स में रिपोर्ट प्रकाशित की है ।

**वंशलोचन का चिकित्सा में उपयोग :-**

आयुर्वेद के संहिताग्रन्थों से लेकर भैषज्य कल्पना एवं निघण्टु आदि ग्रन्थों में वंशलोचन तुगाक्षीरी, तुगा, वांशी, तुगाख्या, वंशक्षीरी, त्वक्क्षीरी आदि नामों से चिकित्सा योगों में उल्लेख है । सुश्रुत संहिता सू०अ० 13/23 दग्ध चिकित्सा के बाह्य प्रलेप में वंशलोचन का उल्लेख है ।

1. यथा - **सम्यदग्धे तुगाक्षीरी प्लक्ष चन्दन गैरिके ॥**

(सु०सू०अ० 12/23

2. पूतनाग्रह घृतपान योग में तुगाक्षीरी (वंशलोचन) का उल्लेख है ।

**हितं घृतसिद्धं तुगाक्षीर्या मधुरकेषु च ॥**

(सु०उ०अ० 32/5

3. रक्तपित्त चिकित्सा में केवल वंशलोचन चूर्ण क शर्करा और मधु के साथ सेवन करने से लाभ होता है

**रक्तपित्ते - सिताक्षौद्रयुतां तुगाख्याम् ॥**

(सु०उ०अ० 45/34

4. कास चिकित्सा में वंशलोचन का उल्लेख सुश्रुत किया है ।

**द्राक्षासितां मागधिकांञ्चतुल्यां, सश्रृङ्गवेरं मधुकं तुगाञ्च**

(सु०उ०अ० 52/17

5. महर्षि चरक ने रक्तपित्त चिकित्सा में वंशलोचन क उल्लेख किया है ।

यथा - **तुगा वेतस तण्डुलीयं स सारिवं मोचरसः समङ्गा**

(च०चि०अ० 4/276

6. इसी प्रकार चरक ने क्षतक्षीण एवं रक्तष्ठीवन चिकित्स में तथा सर्पिगुड योग में वंशलोचन का उल्लेख किय है ।

**पयस्या पिप्पली वांशी कल्क सिद्धंक्षतेशुभम् ॥**

(च०चि०अ० 11/32

भैषज्य रत्नावली के च्यवनप्राश, सीतोपलादि चूर्ण में वंशलोचन के प्रयोग का विशेषरूप से उल्लेख आया है निघण्टु ग्रन्थों में वंशलोचन के गुणकर्मों का विशद विवेचन मिलता है जो निम्न प्रकार से है । यह शीतवीर्य, रूक्ष, मधुर, वृंहण, हृदय के लिये हितकारी सौमन्स्यजनन, संग्राही, प्यास को बुझाने वाला और व्रणरोपक है । ज्वर, कामला, मुखपाक, कास, क्षय, रक्तपित्त, वमन, अतिसार, शुक्रमेह, रक्तार्श (खूनी बवासीर) और मूत्रकृच्छ्र में उपयोगी है ।

यथा - **कषाया मधुरा तिक्तः शीतल सारकोमतः ।**
**मूत्रकृच्छ्र क्षय श्वास, हिक्का बल्या च बृंहणी ।**

(धन्वन्तरि निघण्टुः)

तथा - **बंशम्ल स्तुवर तिक्तः शीतल सारको मतः ।**
**बस्तिशुद्धिकर स्वादुः छेदनो भेदको मतः ॥**
**कफं रक्तजं पित्तं कुष्ठं शोथ व्रणं तथा ।**
**मूत्रकृच्छ्र प्रमेहाशनि् दांहचैव विनाशयेत् ॥**

(शालिग्राम निघण्टुः)

**बांस के बीज के गुणः-** बांस के बीज मधुर



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



षायानुरस, कटु, विपाक, उष्ण, वीर्य, मूत्र के परिणाम को म करने वाला, बलदायक एवं वातप्रकोपक होते हैं । ये फहर, पित्तहर, मेहहर, कृमिनाशक और विष को दूर रनेवाले होते हैं ।

था - **वेणोर्यवस्तु तुवरः रूक्षश्च मधुरो मतः ।**
**पुष्ठिकृद्वीर्यबल्यः कफ पित्त हरोमतः ।।**
**विष मेहशमनो मुनिभिः परिकीर्तितः ।।**

(निघण्टुरत्नाकर)

**बांस के अंकुर के गुण :-** बांस के अंकुर रपरे, रूखे, भारी, कसैले, भारी कफकारक एवं वायु को कुपित करने वाले होते हैं ।

था - **तत्करीरः कटुः पाके रसे रूक्षो गुरूः सरः ।**
**कषायः कफकृत्स्वादुः विदाहीवात पित्तलः ।।**

(नि०रत्नाकर)

**वंशलोचन का स्थानिक प्रयोग :-** बांस से शलोचन निकालते समय जब निकिर आदि जाति के लोगों को चोट लग जाती है तो खून निकलने लगता है तो घाव र वंशलोचन लगाने से खून निकलना बन्द हो जाता है । कमजोरी के लिये गर्भवती महिलायें वंशलोचन का सेवन करती हैं । गर्भवती महिलायें वंशलोचन के डले को मुँह में डालकर सुपारी की तरह चबाती हैं । इनका विश्वास है कि इसके नियमित सेवन करने से गर्भस्थ शिशु की हड्डियाँ पुष्ट होती है और शिशु का रूप रंग निखर आता है । पत्ते रजःप्रवर्तक माने जाते हैं । कष्टार्त्तव में बांस के पत्तों का क्वाथ लाभ करता है । बांस की कुछ प्रजाति के पत्तों में कैन्सररोधी तत्व पाये जाते हैं । आसाम के बांस बहुल क्षेत्र में रहने वाले आदिवासियों का कहना है कि बांस की 2-3 प्रजातियों की अन्तर्गांठि से वंशलोचन या तवाक्षीर निकाला जाता है जो सिल्कामय स्राव है । इसें शीतल, टॉनिक एवं कामोत्तेजक मानते हैं ।

**बांस के संरचनात्मक प्रयोग :-** अनादि काल से परम्परागत रूप से भवन निर्माण में काम आता रहा है । भारत में 125 प्रजातियाँ होने की जानकारी है । किन्तु अभी तक 20 महत्वपूर्ण प्रजातियों के ही मौलिक और यांत्रिक गुणों हेतु परीक्षण किया गया है । बांस के एक से लेकर हजारों उपयोग बहुत पहले से ही भारतीयों को ज्ञात है । विस्तारभय से उसकी जानकारी इस प्रसङ्ग में नहीं दी जा रही है ।


बैद्यनाथ
मधुमेहारि
योग दाने
मधुमेह ( डायबिटीज )
व उससे उत्पन्न
विकारों में
लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# शय्यामूत्रत्व

वैद्य हरिदास श्रीधर कस्तुरे, एम.ए., जी.सी.ए.एम., एच.पी.ए. निवृत्त आयुर्वेद नियामक, गुजरा

'शय्यामूत्रत्व' नाम से कोई व्याधि बृहत्त्रयी में वर्णित नहीं है । चरक संहिता में मूत्राघात तथा मूत्रकृच्छ्र प्रकरण में मूत्रविकारों का वर्णन किया गया है जिसमें भी समान प्रकार की कोई व्याधि नहीं है । यह बालकों में उत्पन्न होनेवाला रोग है । शार्रगधर संहिता और भैषज्य रत्नावली में उसका वर्णन दिया गया है ।

शारंगधर संहिता - में निम्नोक्त संदर्भ मिलता है ।

**शय्यामूत्रं प्रसिद्धम् । रात्रौ स्वप्नावस्थासां शय्यागतौ बाल: अशीषपूर्वकं मूत्रयति दोष प्रभावात् ।**

अर्थात् शय्यामूत्र रोग प्रसिद्ध है । रात में निद्रावस्थाा में बालक शय्या में ही जाने बगैर मूत्र विसंर्जन करता है - जिसमें प्राय: अपानवायु का प्रभाव होता है ।

मूत्र का निर्माण वृक्क में होता है और दो गवीनियों के द्वारा वह मूत्राशय का बस्ति (bladder) में आता है । बस्ति में प्राय: 200 मि.ली. के अधिक स्तर पर मूत्र भर जाए तब मूत्रविसर्जन की संज्ञा उत्पन्न होती है । यह संज्ञा वस्तुत: वात नाड़ी द्वारा होती है । तथापि जन्म के बाद कुछ महीनों तक इस पर ऐच्छिक नियंत्रण नहीं रहता । अनैच्छिक क्रिया (Auto nomous control) से इसका कार्य चलता है । धीरे-धीरे बालकों में यह नियंत्रण पद्धति विकसित होती है जो उम्रभर सक्रिय रहती है तथापि कुछ बालकों में यह विकसित नहीं होती या अल्प विकसित या अर्धविकसित अवस्था में रहती है जिससे बालकों में शय्यामूत्रत्व विकार रह जाता है ।

मूत्र की इच्छा के बिना विसर्जित होना इसके आधुनिक विज्ञान में Incontinence of Urine (इनकॉन्टिनन्स ऑफ यूरिन) कहा जाता है । यह शय्यामूत्र (Bed wetting) के समान नहीं है तथापि चिकित्सा संदर्भ से इसका विस्तार ध्यान में लेना आवश्यक होता है ।

यह इनकॉन्टिनेन्स चार प्रकार का होता है । मूत्र का निर्माण न होकर अपने आप जो विसर्जन होता है उसे इनकॉंटिनेन्स कहते हैं ।

**सम्पूर्ण अनियंत्रण** - Total incotinence इसमें रोगी को सतत् मूत्र विसर्जन होते रहता है और उस पर कोई नियंत्रण नहीं रहता । आतुर किसी भी अवस्था में हो - निन्दित, सुषुप्ति, जागृत, चलन्त, बैठना-उठना । सभी सम मूत्रण चालू रहता है ।

**(2) Stress incontinence :-** इसमें मूत्रक्ष किसी दबाव में खाँसी, छींक या भार उठाने में इस तरह क दबाव आ जाये तो नियंत्रक खो जाता है और मूत्र प्रवृ होती है ।

**वेगावस्था में अनियंत्रण :-** जब मूत्र का वे नैसर्गिक प्रकार से उत्पन्न होता है उस समय वह इत आवेग पूर्ण होता है कि उस पर नियंत्रण खो जाता है औ जिस अवस्था में रोगी हो उसी समय (शय्या में भी) मू विसर्जन होता है । इसे Urge incontinence (मूत्रवेगकाली अनियंत्रण) ऐसा कहा जाता है ।

प्राय: शय्यामूत्रत्व का समावेश इसी में हो सक है । ऊपर विधान किया गया था कि यह बालकों में उत्पन्न विकार है तथापि समझने योग्य बात यह है कि बालकों म होने वाला यह रोग इतना गंभीर नहीं होता और प्राय: अप आप वयानुसार नियंत्रण आ जाता है । किन्तु कभी-कभ वह नहीं लौटता, और कुछ विशिष्ट व्याधि में खो भी जात है तब शय्यामूत्रत्व गंभीर स्वरूप पकड़ लेता है ।

**बालकों में चेचक** - शीतल (Small pox) य रोमान्तिका (measels) वगैर व्याधि उत्पन्न हो जाये त कभी-कभी उनका मूत्र नियंत्रण लुप्त होकर शय्यामूत्रत्व प्रारंभ होता है । बड़ों में भी पक्षाघात (Hemiplegia) अधरोगघात (Paraplegia) जैसी व्याधि द्वारा मूत्र नियंत्रण खो जाता है और सतत् मूत्र प्रवृत्ति चालू रह सकती है, य अवक्षेपयुक्त प्रवृत्ति होती है ।

**शय्यामूत्र और व्याधि व्यवच्छेद** - (Differentia Diagonosis) मूत्र प्रवृत्ति का इतिवृत्त होने पर व्याधि व्यवच्छेद हो सकता है । खासकर कुछ प्रकार के मूत्राघात और मूत्रकृच्छ्र से इसे भिन्न करना जरूरी होता है । मूत्रोत्पत्ति होकर वेगकाल में नियंत्रण न रहना और मूत्रावरोध होकर वेग नियंत्रण न होना इन दोनों को भी व्यवच्छेद करना चाहिये ।

अत: अवयव परीक्षा द्वारा मूत्राशय में (Bladder) मूत्र की स्थिति समझ लेना आवश्यक होता है । नाभि के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



नम्न भाग स्पर्श द्वारा यह खयाल आता है । स्पर्श परीक्षा से भी उत्तम यह होगा कि ठेपन परीक्षा करें । प्राकृत अवस्था में मूत्राशय (बस्ति) स्पर्श से उपलब्ध नहीं होती । खासकर जब तक बस्ति में 150 मि.ली. प्रमाण में मूत्र अवशिष्ट न हो तब तक बस्ति भर गई है (Distended bladder) का अनुमान नहीं हो सकता । ठेपन करने से जब पूर्ण मसक जैसा ध्वनि सुनने पर बस्ति के अंतर्गत रिक्तता या जब्यूम्रला का खिचाव आ जाता है ।

**शय्यामूत्र की चिकित्सा :-**

भैषज्य रत्नावली में शय्यामूत्र की चिकित्सा निम्नलिखित प्रकार से की गई है :-

**1. कृत मूत्रार्द्रभूभाग मृदुभाकृष्य खोलके ।**
**संभार्ज्य मधुसर्पिभ्यो लेहयेन् मूत्रितं जनं ।**
**शय्यायां मूत्ररोधः स्यात् मूत्रितस्य न संशयः ।**

शय्यामूत्र रोग से पीड़ित रोगी के द्वारा लिखी हुई जमीन की मिट्टी को लेकर तवे पर भून देवें । । से 3 माशा मात्रा में मधु के साथ चटाने से रोग मिट जाता है ।

2. बिंबी का जड़ 2 तोला लेकर उसका स्वरस बनाकर पिलाने से लाभ होता है ।

वंगसेन ने उपर्युक्त शय्यामूत्र से भिंगोई हुई मिट्टी द्वारा चिकित्सा के पाठ को 'न करोति नरो धातु भ्रष्टमेंन निरंतरम्' (न करोतु ?) ऐसा कहकर पाठ को भ्रष्ट योग बनाकर देने के लिये मना किया है । कुछ निम्नांकित योग इस रोग को मिटाने में लाभप्रद होते हैं ।

1. शुद्ध कराकर 1/4 से 1/2 रत्ती
त्रिवंग भस्म । रत्ती
रसायन चूर्ण 4 रत्ती
3 बार मधु से चटावें ।

2. चन्द्रप्रभा । गोली प्रातः, । मध्याह्न में, । रात्रि में पानी के साथ दें ।

3. सुवर्ण राज वंगेश्वर 1/2 रत्ती से 2 रत्ती मधु के साथ रात में सोने के पहले बालक को 2 से 3 बार मूत्र विसर्जन करावें ।

4. पुनर्नवासव 2 चम्मच + अश्वगंधारिष्ट 2 चम्मच + दशमूलारिष्ट 2 चम्मच मिश्रण कर 4 चम्मच पानी मिलाकर भोजन के बाद पिलाएं ।

5 लघुवंसन मालती, नवजीवन रस, शिलाजतुवटी में से कोई योग । से 2 गोली 2 बार दें ।

6. छोटे बालकों के शय्यामूत्र करने पर लज्जित करना, धिक्कारना भी उपयोगी होते हैं । फिर भी इतना भयंकर क्रोध न करे जिससे उसके मन पर विपरीत असर हो जाए ।

7. मनस् समाधान और नियंत्रणार्थ, ब्राह्मीवटी, कुमार कल्याण रस, मेध्य रसायन, सारस्वतारिष्ट जैसे पुष्टिकर योग प्रयुक्त करें ।

8. यापन बस्तियों का प्रयोग भी लाभप्रद होता है ।

9. सौम्य विरेचन अभयारिष्ट या अविपतिकर चूर्ण देने से द्रव्य (स्लेम) स्रवित होकर शय्यामूत्रत्व कम होता है ।

वंगेश्वर तथा वृहत् वंगेश्वर रस - इन दोनों को भैषज्य रत्नावली में बहुत प्रशंसा की गई है । वस्तुतः ये प्रमेहाधिकार की औषधियां हैं । रससिंदूर और वंगभस्म एक-एक भाग लेकर खरल में महीन पीसकर बोतल में भर कर रख दें । यह 1/2 रत्ती मात्रा में शहद के साथ दें 'हन्ति मेहान् क्षौद्र समन्वितम्' ऐसा कहा है । योग रत्नाकर ने वंगेश्वर पाठ कुछ अलग दिया है, वंगभस्म, कांत लौह भस्म, अभ्रक भस्म और नागकेशर इनको समभाग लेकर घृतकुमारी के रस में 4 बार भावना दें । 2 से 3 रत्ती की गोलियां बना लेवें । यह नागार्जुन द्वारा सिद्ध पाठ है जो रसायनपूर्वक कार्य करता है । प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग और अश्मरी को दूर करता है ।

बृहद्वंगेश्वर या सुवर्ण राज वंगेश्वर में - सुवर्ण धातुरा पड़ता है जिसका पाठ निम्नांकित है ।

वंगभस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, रजत भस्म, कर्पूर तथा अभ्रक भस्म प्रत्येक 1-1 तोला और सुवर्ण भस्म तथा मुक्तापिष्टी प्रत्येक 1/4 तोला लेकर प्रथम पारद और गंधक की कज्जली बनाए, फिर शेष भस्म डाल कर 'केशराज रस में भावित कर 2-2 रत्ती की वटिका बनाएं यह बृहत् वंगेश्वर रस 20 प्रकार के प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पुराने जीर्ण ज्वर, हवीमक, रक्तपित्त, आम विकार, मंदाग्नि अरुचि आदि रोगों के नष्ट करता है । इसमें 'सुवर्ण माक्षिक' मिलकर बनाने का और भी एक पाठ है ।

यह प्रयोग यथावश्यक करें । भस्म युक्त प्रयोग करने के पहले वृक्करोगों की जांच करना जरूरी होता है



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# बालकों में फक्क रोग - एक विवेचन

*डा० दिनेश कुमार राय, एम.डी. (आयु.)

** डा० मोती राय, एम०डी०(आयु.)

बाल्यावस्था मानव जीवन की एक ऐसी अवस्था है जिसमें उसका पूर्णतः वृद्धि एवं विकास होता है । यदि शिशु स्वस्थ रहता है तो उसकी वृद्धि एवं विकास सम्यक् प्रकार से होती है, नहीं तो अस्वस्थता के कारण इन प्रक्रियाओं पर प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है तथा वह जीवन के अन्य सोपान में दुःखी रहता है ।

"वर्षशतं खल्वायुष प्रमाणमस्मिन् काले ।"

(च०शा० 6/28)

कलियुग में शतायु को पूर्णायु मानकर मानव की आयु को विभिन्न दृष्टि से वर्गीकृत किया गया है । इस तरह कालकृत शरीर की अवस्था को वय या आयु कहा गया है । स्थूल भेद से आयु के बाल, मध्य एवं वृद्ध (जीर्ण) इस प्रकार तीन भेद हो सकते हैं ।

आयुर्वेद में बाल्यावस्था का महत्वपूर्ण स्थान है तथा आधुनिक विद्वानों ने इस अवस्था में अनेक महत्वपूर्ण रोगों का वर्णन किया है जिनका सूक्ष्म रूप से आयुर्वेद में वर्णन प्राप्त होता है । दुष्ट स्तन्यपान से क्षीराद् व क्षीरान्नाद शिशुओं में अनेक प्रकार की व्याधियां होती हैं जिनमें फक्क रोग एक प्रमुख व्याधि है जिसका विशद वर्णन काश्यप संहिता में उपलब्ध है ।

नित्यग एवं आवस्थिक रूप में काल को दो वर्गों में बांटा गया है -

"आवास्थिको द्विविध स्वस्थस्य बाल्यादि भेदेन ।"

(सु०सू० 10/5 पर डल्हण टीका)

बालक के तीन भेद-क्षीराद् (क्षीण), क्षीरान्नाद तथा अन्नाद होते हैं । एक वर्ष की आयु तक बालक माता या धात्री के क्षीर (स्तन्य) पर निर्वाह करता है, वह क्षीराद, दो वर्ष तक बालक क्षीर व अन्न पर वृत्ति (निर्वाह) करता है । वह क्षीरान्नाद, तत्पश्चात् काल में अन्न वृत्ति पर निर्भर रहने के कारण उसे अन्नाद संज्ञा दी जाती है -

दुग्धाशी वर्षपर्यन्तं दुग्धान्नाशी शरद्द्वयम् ।
तदुत्तरं स्यादन्नाशी एवं बालस्त्रिधा मतः ।

व्याधि हेतु के निरूपण तथा चिकित्सा व्यवस्था में वय का ज्ञान आवश्यक है । स्तन्य दोष या आहार के कारण बालक अस्वस्थ हो जाता है । कौमारभृत्य विषयक ग्रन्थों में स्तन्यदृष्टि के हेतु, व्याधियों तथा उनकी चिकित्सा का विशेष रूप से वर्णन प्राप्त होता है ।

सोलह वर्ष के पूर्व तक की वय 'बाल्य' कही जाती है -"ऊनषोडशवर्षस्तु नरो बालो निगद्यते ।" बाल्य में धातुओं का परिपाक या विकास सम्यक् प्रकार से नहीं होता जिससे वे मृदु स्वभाव के होते हैं । इस कारण ये क्लेशों को सहन करने में असमर्थ होते हैं । श्लेष्माधिक्य, स्निग्धता, मृदुता, सुकुमारता, सौभाग्य (सौन्दर्य) व क्रोध की अल्पता होती है ।

"तत्र बाल परिपक्वधातुमजातव्यञ्जनं सुकुमारमक्लेश सहमपूर्णबलं श्लेष्मधातुप्रायमाषोडशवर्षम् ।।

(च०वि० 8/12)

"बालस्य (श्लेष्मोद्रकात्) बालस्य स्नेहमार्दव-सौकुमार्य अल्पक्रोधत्वसौभाग्यानि भवन्ति ।"

(अ०सं०शा०

बालकों में लिङ्गानुसार पूर्णतः प्रकटभाव अप्रकटभाव या अल्प प्रकट होते हैं । बाल्यावस्था में श्लेष्मा, मध्यमावस्था पित्त तथा वृद्धावस्था में वायु की वृद्धि होती है ।

बाले विवर्धते श्लेष्मा, मध्यमे पित्तमेव तु ।
भूयिष्ठे वर्धते वायु वृद्धे तद्वीक्ष्य योजयेत् ।।

(सु०सू० 3

बालक प्रायः मधुर, गुरु, स्निग्ध आदि सात्म्य पदार्थों का सेवन करता है । फलतः इस वय में श्लेष्मा प्रभुत्व रहता है जिससे श्लेष्मजन्य व्याधियां अधिक होती हैं -

"बालो मृदु भेषजीयानाम् ।"

(च०सू० 2

* प्रवक्ता, बालरोग विभाग, राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर
** सहायक आचार्य, कौमारभृत्य विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



बच्चों में मृदु औषधियों का प्रयोग चिकित्सा में ना चाहिए । विषौषधियाँ, तीक्ष्ण गुणवाली रसौषधियां ा क्षोभक औषधियों का प्रयोग वर्जित है । आचार्य कश्यप शब्दों में -

**त्वेव बालस्य विशोषणं हितं नैवाति संशोधन रक्त मोक्षणे: ।**
**ग्धै: सुशीतैर्मधुरैरदाहिभिस्तत्रोपचरोऽशनलेपसेचनै:**

(का०सू० 28)

बालकों की चिकित्सा के कार्य में अधिक शोषण, धिक रक्तमोक्षण तथा आवश्यकता से अधिक शोधन ना उचित नहीं है । उनका स्निग्ध, शीतल, मधुर, क्षोभक अन्नपान, लेप तथा परिषेचन के द्वारा ही उपचार ना चाहिए । बालक एवं वृद्ध में अग्निकर्म, क्षारकर्म तथा न-विरेचन जैसे पंचकर्म का निषेध है फिर भी साध्य धियों में मृदु शोधन का प्रयोग करना चाहिए -

**अग्निक्षार विरेकस्तु बालवृद्धो विवर्जयेत् ।**
**तत्साध्येषु विकारेषु मृद्वी कुर्यात् क्रियां पुन: ।।**

(सु०सू०)

कुपोषण, अस्थिविकृतिजन्य तथा क्षीणताजनित धियों में फक्करोग का वर्णन किया गया है जो दुष्टस्तन्यपान ने से शिशुओं में होती है जिसके कारण बालक की वृद्धि ं विकास (Growth and Development) की गति द हो जाती है । इसका प्रभाव उसके क्रियात्मक विकास Motor Development) पर भी पड़ता है जिससे स्थिमार्दव, मांसपेशीक्षय भी लक्षणात्मक रूप से दृष्टिगोचर ते हैं । जहां आचार्य काश्यप ने फक्करोग का वर्णन किया वहीं आचार्य वाग्भट्ट ने कार्श्य प्रत्यात्म लक्षण वाली धि बालशोष का वर्णन कर निदान-दुष्टस्तन्य से उत्पत्ति नकर दोनों में समानता प्रदर्शित की है ।

फक्क शब्द की उत्पत्ति फक्क धातु से हुई है । का अर्थ -

**फक्कति नीचै: गच्छति इति फक्क: ।**

अर्थात् क्रमश: नीचे जाना (Run down ndition) या स्वास्थ्य में गिरावट आना फक्क कहलाता है ।

आचार्य काश्यप ने फक्क रोग की निम्नलिखित परिभाषा दी है -

**बाल: संवत्सरापन्न: पादाभ्यां यो न गच्छति ।**
**स फक्क इति विज्ञेय:..... ।।**

(का०सं०चि०)

यदि एक वर्ष का बाल स्वयं अपने पैरों से अच्छी तरह खड़ा होकर चलने में असमर्थ होता है तो उस व्याधि को फक्करोग कहा जाता है । आचार्य ने इसके तीन प्रकार दिये हैं -

**क्षीरजं गर्भजं चैव तृतीयं व्याधिसम्भवम् ।**
**फक्कत्वं त्रिविधं प्रोक्तं ..... ।।**

(का०चि०फक्क प्र०)

(1) क्षीरज फक्क
(2) गर्भज फक्क
(3) व्याधिजन्य फक्क ।

**(1) क्षीरज फक्क** - यह फक्क रोग कुपोषण जन्य है जिसमें मातृस्तन्य पान करने से शिशु में कार्श्य आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं । श्लैष्मिक स्तन्य वाली माता को 'फक्कदुग्धा' संज्ञा दी गयी है ।

**धात्रीश्लैष्मिक दुग्धा तु फक्कदुग्धेतिसंज्ञिता ।**
**तत्क्षीरपो बहुव्याधि: कार्श्यात् फक्कत्वमाप्नुयात् ।।**

आचार्य काश्यप द्वारा वर्णित क्षीरज फक्क का निदान एवं लक्षण के आधार पर समानता वाग्भट्टोक्त 'बालशोष' नामक व्याधि से की जाती है क्योंकि दोनों व्याधियों के निदान-श्लैष्मिक स्तन्य तथा प्रत्यात्म लक्षण-कार्श्य हैं ।

**अत्यह: स्वप्नशीताम्बुश्लैष्मिक: स्तन्यसेविन: ।**
**शिशो: कफेन रूद्धेषु स्रोत:सु रसवाहिषु ।।**
**अरोचक: प्रतिश्यायो ज्वर: कासश्च जायते ।**
**कुमार: शुष्यति तत: स्निग्ध शुक्लमुक्षण: ।।**

(अ०हृ०)

निदान सेवन से प्रकुपित दोष-कफ द्वारा रसवह



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



रसवहस्रोतस् का मार्ग अवरुद्ध होने से, धातु पोषण क्रम का उत्तरोत्तर क्षय होने से शोष की उत्पत्ति होती है । बालक दुर्बल, निस्तेज तथा सारहीन दिखलाई पड़ता है । कर्मेन्द्रियों तथा ज्ञानेन्द्रियों के कार्य में बाधा पड़ने से लक्षण रूप में पंगुता, जड़त्व, मूकत्व एवं वागिन्द्रिय विकृति होने पर मूकत्व के साथ बाधिर्य का प्रादुर्भाव हो जाता है ।

**(2) गर्भज फक्व** – गर्भिणी माता पोषणाभाव के कारण पीड़ित होते हुए भी अपने बालक को क्षीरप अवस्था में कुपोषणयुक्त स्तन्य का पान कराती है तो बालक उत्तरोत्तर क्षीण हो जाता है । इस व्याधि को 'गर्भ पीड़ित फक्क' कहा जातां है । आचार्य कश्यप के शब्दों में -

**गर्भिणीमातृकः क्षिप्रं स्तन्यस्य विनिवर्तनात् ।**
**क्षीयते म्रियते वाऽपि स फक्को गर्भपीड़ितः ॥**

(का०चि०फक्क)

बालक में उदरवृद्धि, विबन्ध या अतिसार, दौर्बल्य, अग्निमांद्य, कास, चिड़चिड़ापन आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त शीघ्र चिकित्सा न करने पर रक्तादि धातुओं का क्षय होकर मृत्यु भी हो सकती है ।

गर्भवती हो जाने पर माता का स्तन्य कम हो जाता है। माता जिन आहारों का प्रयोग करती है उसका अधिकांश भाग गर्भ का पोषण करता है परिणामस्वरूप उसके दुग्ध में पोषक तत्वों की कमी हो जाती है जिससे बालक दिन पर दिन कमजोर होता चला जाता है । यदि उसे अतिरिक्त मात्रा में पोषक तत्वों की पूर्ति न की जाय तो धातुक्षय के कारण मृत्यु अवश्य सम्भावी है । आचार्य वाग्भट्ट द्वारा वर्णित 'पारिगर्भिक रोग' को हम गर्भज फक्क को एक ही व्याधि मान सकते हैं क्योंकि निदान व लक्षण में दोनों व्याधियों में पर्याप्त समानताएं हैं ।

**मातुः कुमारो गर्भिण्यां स्तन्यं प्रायो पिबन्नपि ।**
**कासाग्नि सादवमथुतन्द्रा कार्श्यारुचिर्ज्वरैः ॥**
**युज्यते कोष्ठवृद्धया च तमाहुः पारिगर्भिकम् ।**

(अ०सं०उ० 2)

**(3) व्याधिजन्य फक्क -**

**निजैरागन्तुभिश्चैव.....रो ज्वरादिभिः ।**
**अनाथः क्लिश्यते बालः क्षीणमांस बलद्युति ॥**
**संशुष्कास्फिच्..... ।**
**..... व्याधिनां फक्कतां शिशोः ॥**

(का०चि०फक्व)

निज एवं आगन्तुज व्याधियों से ग्रस्त बालक का मांसबल, (शारीरिक व रोगप्रतिरोधक क्षमता) तेज का क्षय होने लगता है । उदर, शिर एवं मुख बड़े हो जाते हैं । स्फिक् या नितम्ब प्रदेश, बाहु तथा हस्त आदि अवयवों की त्वचागत मांस या मेद का शोष हो जाता है । शरीर अस्थि पंजर के समान क्षीण दृष्टिगोचर होता है । नेत्र पीतवर्ण के तथा हाथ पैरों में कम्पन होने लगता है । शरीर का निचला भाग विशेषरूप से म्लान दिखाई पड़ता है । धीरे-धीरे कटि प्रदेश का भाग निश्चेष्ट हो जाता है तथा बालक हाथ एवं घुटनों के बल चलने या घिसकने लगता है । दुर्बलता के कारण उसकी चेष्टाएँ मन्द पड़ जाती हैं । चेष्टाओं के मन्द हो जाने से कृमि, कीट, मक्खियाँ आदि उसे आक्रान्त करते हैं । असमय मल मूत्र का त्याग हो जाता है । बच्चे में नख व रोमगत विकृति मिलती है । शरीर से दुर्गन्ध आने लगती है क्योंकि सार-भाग अल्प मात्रा में बनता है तथा मल भाग शरीरस्थ संचित होता रहता है । रुग्ण के श्वास-प्रश्वास में बाधा उत्पन्न होती है तथा उसका स्वभाव चिड़चिड़ापन हो जाता है ।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार बाल्यावस्था में दुग्ध में कैल्सियम व विटामिन के अभाव, गन्दी व प्रकाशहीन स्थान पर रहने से, त्वचा पर सूर्य रश्मि की पर्याप्त मात्रा न पड़ने से विटामिन डी की कमी हो जाती है जिससे फास्फोरस व कैल्सियम जैसे जीवनीय तत्वों का चयापचय सम्यक् प्रकार से नहीं होता है । अस्थियों में अपर्याप्त कैल्सिफिकेशन होने से फक्क या Rickets हो जाता है । प्रायः धनवान की अपेक्षा गरीब वर्ग में यह रोग ज्यादा मिलता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



विश्व के बालरोग विशेषज्ञों ने रोग की उत्पत्ति के आधार पर फक्करोग को तीन कालों में बांटा है -

**(1) प्रारम्भिक काल** - अधिक स्वेद आना, सिर के पश्चात् भाग में केश की न्यूनता रहना, सर्वदा बैचेन रहना, ब्रह्मरन्ध्र के किनारे मृदु रहना । X-ray में किसी परिवर्तन का न मिलना ।

**(2) रोगोत्तर काल** - रक्तस्थ फास्फोरस की मात्रा बढ़ती है किन्तु कैल्सियम की कमी होती है । अस्थिओं में काठिन्य बढ़ता है । ब्रह्मरन्ध्र के किनारे स्थिर हो जाते हैं । Ricket Rossary X-rays परीक्षण में पायी जाती है ।

**(3) अवशिष्ट परिवर्तन काल** - 2-3 वर्ष की आयु वाले बालकों में फक्क के कारण सभी लक्षणों में अल्पता होकर अस्थिगत अवशिष्ट विकृति रह जाती है । शरीर में पाण्डुता रहती है ।

**चिकित्सा -**

(1) स्नेहन हेतु बालक को कल्याणक घृत, पट्पल घृत या अमृत घृत का प्रयोग करना चाहिए तथा सात दिन पश्चात् त्रिवृत् क्षीर विरेचनार्थ प्रयोग करके बल्य, लघु, मधुर, मेधावर्धक ब्राह्मी घृत का प्रयोग करना चाहिए ।

(2) रास्ना, मुलेठी, पुनर्नवा, एरण्ड, सौंफ, द्राक्षा, त्रिवृत् से बने क्षीर का प्रयोग आभ्यान्तर रूप से तथा इन्हीं औषधियों से बने तैल का प्रयोग आभ्यान्तर बाह्य रूप में करना चाहिए ।

(3) अस्थिस्थौल्य, शारीरिक बल की वृद्धि हेतु 'फक्क रथ' का प्रयोग करना चाहिए ।

(4) पोषक एवं बलवर्द्धक चिकित्सा - मधुर, लघु, सुपाच्य पोषक चिकित्सा के अन्तर्गत अश्वगन्धा, श्वेतमूसली, शतावरी, आँवला, बला, अतिबला, कर्पास बीज, मधुयष्टि, गम्भारी आदि द्रव्यों का प्रयोग बलवर्द्धन हेतु करना चाहिए ।

**बल्य योगों में** - मधुमालिनी वसन्त, कुष्माण्ड कल्याण रस, अश्वगन्धा चूर्ण ।

**लौह योगों में** - पुनर्नवादि मण्डूर, मण्डूर भस्म, धात्री लौह, शिलाजत्वादि लौह, ताप्यादि लौह ।

**सुधा योगों में** - कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म, प्रवाल भस्म, शम्बुक भस्म, सुधाषट्क योग, प्रवालपंचामृत ।

**अभ्यांगार्थ** - बला तैल, बलालाक्षादि तैल, नारायण तैल ।

**बस्ति प्रयोग** - कुक्कुराण्ड बस्ति प्रयोग करना चाहिए ।


स्त्रियों के लिए कांतिवर्द्धक एवं बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

अशोकारिष्ट

मासिक-धर्म की अनियमितता, कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, भूख न लगना तथा मासिक-धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# समाज की एक ज्वलन्त समस्या : कैंसर

* डॉ० बी माया ** डॉ० जे० मनोहर *** प्रो० एम०एस० मीणा

भारत में लिये गये स्वास्थ्य आँकड़ों के मुताबिक लगभग 20 लाख मनुष्य (आदमी) कैंसर के रोगी पाये गये। इसके अलावा हर वर्ष 6 लाख मनुष्य इस रोग के शिकार होते हैं। आजकल दिल के दौरे (Heart Attacks), रोड टक्करों (Road accidents) के बाद अधिक से अधिक लोग इस रोग के कारण मृत्यु की ओर बढ़ रहे हैं। इससे हम अन्दाजा लगा सकते हैं कि यह रोग कितना भयानक प्राणघातक रोग है। कैंसर के विषय में जनसाधारण में अनेक प्रकार की भ्राँतियाँ फैली हुई हैं। आम आदमी इस व्याधि को समझ नहीं पा रहा है और उसकी जब समझ में आती है तो बहुत देर हो चुकी होती है।

1. इस व्याधि से बचने के लिये किस प्रकार की सावधानियाँ या उपाय लेने चाहिए ?
2. इस व्याधि से ग्रस्त रोगी को किस प्रकार के निदान या इस रोग की रोकथाम के लिए किस प्रकार के प्रयास करने चाहिए ?

इन सभी विषयों पर ज्ञान प्राप्त कर समाज को जागरूक (सतर्क) रहना चाहिए।

सब से पहले कैंसर किसे कहते हैं, प्राचीन काल में इसका क्या रूप है ?

प्राचीन काल के ग्रन्थों का अवलोकन से यह जानकारी प्राप्त होती है कि कैंसर के रूप में निर्दिष्ट एवं प्रचलित भयंकर व्याधि का समावेश अर्बुद में कर लिया है। इसके विभिन्न स्वरूप भी सूत्ररूप में पाये जाते हैं।

सुश्रुत संहिता में इसका वर्णन इस प्रकार है कि -

"मुष्टि प्रहारादिभिरर्दितेऽङ्गे मांस प्रदुष्टं प्रकरोतिशोफम्।
अरुंदनमं स्निग्धमनन्यवर्णमपाकमश्मोपमम प्रचाल्यम्। (28)
प्रदुष्टमांसस्य नरस्थ बाढ़मेतद्भवेन्मांसपरायणस्य।
मांसार्बुदं त्वेतदसाध्यमुक्तं साध्येष्वपीमानि विवर्जयेत्तु। (19)
संरुद्धमूत्रं मर्मणि यच्चजातं स्रोतः सुत्रायच्च भवेदचाल्यम् ॥(20)
वर्जयतेऽन्यत्खलु पूर्वजाते ज्ञेयं तद्ध्यर्बुदमर्बुदज्ञैः।
यद् द्वन्द्वजातं युगपत्क्रमाद्वा द्वरर्बुदं तच्च भवेद साध्यम्॥ (1)

## अर्बुद की परिभाषा -

स्वकारणों से प्रवृद्ध-दोष मांस को विशेष रूप से दूषित कर शरीर के किसी भी प्रदेश में गोलाकार, स्थिर, अल्पपीड़ायुक्त, गम्भीर-मूलवाला, धीरे-धीरे बढ़ने वाला, न पकने वाला, मांस के संघात के रूप में शोथ होता है इसे "अर्बुद" कहते हैं। दोषानुसार अर्बुद 6 प्रकार के माने गये हैं -

1) वातज 2) पित्तज 3) कफज
4) मांसज 5) मेदोज 6) रक्तज

अर्बुद के दो भेद बताये गये हैं - अध्यर्बुद द्विरर्बुद।

1) 'अध्यर्बुद - पूर्व अर्बुद के रहते हुये ही अथवा उसके छेदनादि के पश्चात् उसी स्थान विशेष पर पुनः होने वाले अर्बुद का नाम ही अध्यर्बुद है।

2) द्विरर्बुद - अर्बुद के साथ या बाद में उत्पन्न होने वाले अर्बुद का नाम ही द्विरर्बुद हैं। दोनों ही असाध्य हैं।

महर्षि सुश्रुत ने उसके उपचार के लिए - आग में गर्म की गई लाल सलाखों से जलाने की बात बताई है।

आधुनिक चिकित्सा शास्त्रियों के मतानुसार कैंसर ग्रीक के सर्जन Denoidas ने चाकू की सहायता से स्तन के कैंसर का ऑपरेशन किया था, तदुपरान्त उसको अग्नि से तप्त किये हुये लाल गर्म लोहे की शलाका से जलाकर प्रदाह (Cauterize) किया था। उसके बाद रोम के प्रसिद्ध कायचिकित्सा Galen ने कैंसर के लक्षणों के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये थे।

## शरीर में कैंसर किस प्रकार उत्पन्न होता है ?

शरीर के प्रत्येक अंग में कोशिकाओं का निरन्तर निर्माण तथा विनाश होता रहता है। प्रकृति ने शरीर-तंत्र का निर्माण कुछ इस ढंग से बनाया है कि यदि शरीर के किसी अंग-विशेष में एक प्रकार की कोशिकाओं का विनाश होने लगता है तो शरीर का वही अंग उसी प्रकार की कोशिकाओं

* पीएच.डी. स्कॉलर, स्नातकोत्तर शारीर क्रिया विभाग, रा.आ.सं., जयपुर
** एसिस्टेंट प्रोफेसर, स्नातकोत्तर शारीर रचना विभाग, रा.आ.सं., जयपुर
*** प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर शारीर क्रिया विभाग, रा.आ.सं., जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



का निर्माण कर लेता है । अंग-विशेष को जितनी कोशिकाओं की आवश्यकता होती है, शरीर उतनी ही कोशिकाओं का निर्माण करके इनका उत्पादन रोक देता है । यदि आवश्यकता की पूर्ति के बाद भी निर्माण बन्द नहीं होता तो उसे कैंसर (Cancer) कहा जाता है ।

कोशिकाओं के विभाजन (Cell division) के फलस्वरूप एक कोशिका दूसरी कोशिका का निर्माण करती है और नई जन्मी कोशिका मूल कोशिका के जैसी ही प्रतिकृति की होती है और अगर नई कोशिका मूल कोशिका की जैसी प्रतिकृत के रूप में जन्म नहीं लेती, तब भी कैंसर हो सकता है ।

कैंसर से ग्रस्त रोगी या कैंसर कोशिकाएँ (cancer cells) कालान्तर में अपने मूलस्थान से रक्त (Blood) तथा लसिका (Lymph) द्वारा शरीर के अन्य हिस्सों में भी कैंसर का निर्माण कराती है । इस प्रकार की प्रक्रिया को विक्षेप (Metastasis) कहते हैं ।

**व्याधि के कारण (निदान)-**

कैंसर के विषय में जनसाधारण में अनेक प्रकार की शंकाऐं फैली हुई हैं । कैंसर कैसे होता है, क्यों होता है, किन-किन खान-पान से होता है ?

यह बात तो निश्चित है कि कोशिकाओं की गड़बड़ी के कारण कैंसर होता है । जब कोशिकाएँ अपना नियंत्रण खो देती हैं तब नि:सन्देह कैंसर का जन्म होता है । अब प्रश्न यह उठता है कि कोशिकाओं की गड़बड़ी क्यों होती है । इस प्रश्न का ठीक-ठाक उत्तर अभी तक तो चिकित्सा-विज्ञानों के पास नहीं है परन्तु अब तक के शोधों से इतना तो अन्दाजा लगाया जा चुका है कि -

कोशिकाओं के अन्दर Enzymes, D.N.A. तथा हार्मोन्स आदि की अव्यवस्था भी शायद कैंसर का कारण है और इसमें रक्त भी शामिल है तथा कुछ ऐसे विषयों का भी पता चला है, जिनका सम्बन्ध कैंसर के जन्म से है ।

संसार के अधिकांश चिकित्सकों का मत यह है कि

1. धूम्रपान से फेफड़ों का कैंसर होता है (धूम्रपान करने वाले लोगों में धूम्रपान न करने वालों से नौ गुना अधिक कैंसर होने की सम्भावना होती है ।)
2. जिन-जिन क्षेत्रों में वातावरण-प्रदूषण अधिक होता है वहाँ पर भी फेफड़ों का कैंसर पुरुषों में अधिक पाया जाता है ।
3. भारतवर्ष में मुंह, जीभ, होंठ और गलों आदि का कैंसर संसार भर की तुलना में सबसे अधिक होता है । तम्बाकू-पान, अधिक चूना आदि खाने वाले व्यक्तियों को जीभ, गाल या होठों का कैंसर हो सकता है । इसका कारण यह है कि धड़ल्ले से पान तम्बाकू तथा सूरती खाना ।
4. आन्ध्रप्रदेश के कुछ हिस्सों में लोग सिगरेट को उल्टा करके पीते है और इस कारण उन्हें तालु का कैंसर होता है ।
5. जम्मू-कश्मीर के लोगों में कांगडी कैंसर नामक कैंसर होता है यह कैंसर उस जगह पर होता है जहां काश्मीर के लोग गर्म कांगडी लटकायें रहते हैं । इस तरह किसी अंग के निरन्तर उत्तेजित होने के कारण भी कैंसर होता है ।
6. गुर्दे या पित्त की थैली में पथरी के लम्बे समय तक रहने के कारण ऊतकों (Tissues) के निरन्तर उत्तेजित रहने के कारण गुर्दे तथा पित्त का कैंसर हो जाता है ।
7. धुएँ की चिमनी की कालौंच से (Chimney sweep Cancer) होता है ।
8. खानों (Mines) में काम करने वाले लोगों को फेफड़ों का कैंसर होता है ।
9. रंग के कारखानों में काम करने वाले लोगों को कैंसर होता है ।
10. कुछ रासायनिक पदार्थों से भी निम्नलिखित कैंसर होते हैं -
    a) बीटा-नेफ्थेनामिन (β-Nephathyamine)
    b) बेंझिडिन (Benzidine)
    c) एमाइनोडाइफेनिल (Aminodiphenyl) Urinary Bladder का कैंसर होता है ।
    d) अधिक तापक्रम के अलकतरे (Coal tar) त्वचा का कैंसर हो सकता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



e) शेल का तेल (Shale oil) से त्वचा का कैंसर होता है ।

f) पेट्रोलियम से त्वचा का कैंसर हो सकता है ।

g) खान के रासायनिक पदार्थों से फेफड़ों का कैंसर होता है ।

h) रेडियम तथा Radioactive पदार्थों से हड्डियों तथा अन्य तन्तुओं (Bones and other tissues) का कैंसर हो सकता है ।

11. वायरस तथा परजीवों के संक्रामक से कैंसर हो सकता है ।

12. अधिक मसालेदार अन्नपान से अधिक गर्म पदार्थों से स्थूलकाय वालों को कैंसर हो सकता है ।

**क्या कैंसर की वय परिणति होती है ?**

कैंसर एक ऐसा रोग है जो शरीर के किसी भाग में, सभी वय के व्यक्तियों में हो सकता है लेकिन वृद्धावस्था में यह रोग अधिक सम्भावित है । बच्चों तथा युवकों का कैंसर 45 से 64 वर्ष आयु वालों की तुलना में कम होता है । कुछ व्यक्तियों को भ्रम है कि यह रोग वंशपरम्परागत (Hereditary) होती है परन्तु ऐसा नहीं है, कुछ विशेष प्रकार के कैंसर एक ही परिवार में एक-दूसरे को हो सकता है ।

कुछ लोग कैंसर के रोगी से भयभीत हो कर उससे दूर रहते हैं । जहाँ तक मनुष्य में होने वाले कैंसर का प्रश्न है, तो इसमें छूत से प्रसार का कोई प्रमाण नहीं मिलता क्योंकि ऐसा यदि होता तो चिकित्सक, नर्स तथा कैंसर-रोगियों के साथ काम करनेवाले हर व्यक्ति को कैंसर से अवश्य ग्रस्त हो जाना पड़ता । आज तक कैंसर के किसी औपसर्गिक कारण का पता नहीं लगा है । कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि Virus इसका औपसर्गिक है । इसलिए कैंसर किसी भी प्रकार से छूत की बीमारी नहीं है ।

कैंसर का पता शुरू में ही लगाना बहुत कठिन है । प्रारम्भ में इस व्याधि का पता नहीं लगता इसलिए साधारण जनता के लिये इस रोग का जानना असम्भव है । शरीर के गम्भीर अवयवों में कैंसर के प्रारम्भ से लेकर उसके लक्षणों के प्रकट होने तक की अवधि कई महीनों की होती है । कैंसर का फोड़ा या फुन्सी या गाँठ 0.05 मि. मी. की जब तक नहीं हो जाती तब तक उस गाँठ का पता लगाना बहुत मुश्किल है । यह देखने को मिलता है कि इस रोग की जानकारी अन्य रोगों के निदान के दौरान (कैंसर) पता चलता है ।

अब एक दूसरी समस्या से लोग परेशान रहते हैं कि कैंसर से ग्रस्त रोगी को यह बता देना उचित हो सकता है या उससे यह बात को छुपा कर रखना चाहिये । रोगी के घरवालों तथा उसकी परिचर्या करनेवाले व्यक्ति को उसकी पूरी जानकारी होनी चाहिए ताकि रोग के इलाज तथा देखभाल में किसी प्रकार की अवहेलना न हो सके । इस विषय में और सब बातें व्यक्ति-व्यक्ति पर निर्भर करती है । पहले स्तब्धता (Shock) की उत्पत्ति के भय के कारण रोगी को कैंसर के बारे में बताना निषिद्ध था, परन्तु जैसे-जैसे इसके उपचार में सफलता मिलती गई है, रोगी को इसके बारे में जानकारी दे दी जा रही है ।

त्वचा के कैंसर तथा इस प्रकार के अन्य कैंसरों के बारे में रोगी को पूरी जानकारी देनी चाहिए क्योंकि इसमें सफलता की सम्भावना अत्यधिक है, परन्तु शरीर के गम्भीर अवयवों के सम्बन्ध में जिसके अच्छे होने की कम सम्भावना रहती है, रोगी से इस रोग को छिपाया जाता है और इसका कोई नियम नहीं बनाया जा सकता ।

**क्या कैंसर रोग के बारे में जानने के बाद उसकी रोकथाम के लिये उपाय कर सकते हैं ?**

इस प्रश्न के उत्तर में इस बात पर विचार करना आवश्यक है कि कुछ विशेष प्रकार के कैंसर ऐसे होते हैं जो व्यक्ति के व्यवसाय, आदतों, रीति-रिवाजों तथा वस्तुओं के गलत इस्तेमाल से सम्बन्धित रहते हैं । इस प्रकार के कैंसरों की रोकथाम के लिये यह आवश्यक है कि व्यक्ति उन पदार्थों एवं परिस्थितियों के सम्पर्क में बहुत कम आये जिनके द्वारा कैंसर की उत्पत्ति होती है ।

कैंसर के प्राणघातक रूप में पहुँचने की अवस्था में यह आवश्यक है कि जहाँ तक हो सके जल्द से जल्द इस भयंकर व्याधि का निदान करके इसे पूर्णतया निर्मूल करने की व्यवस्था करनी चाहिए । इससे जनता में इसके



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रांतजागृति पैदा करने से पर्याप्त सहायता मिलती है । इसमें शिक्षा का अत्यधिक महत्व है जिससे लोगों को कैंसर सम्बन्धी प्रारम्भिक ज्ञान कराया जाये । एक खास अवस्था के उपरान्त जैसे 50 साल के ऊपर की अवस्था में व्यक्ति की सामसिक स्वास्थ्य-परीक्षा कराई जानी चाहिए । इससे कैंसर से उत्पन्न घातक परिणामों से व्यक्ति के जीवन की रक्षा हो सकती है तथा कैंसर को बढ़ने से रोका जा सकता है ।

**कैंसर रोग की परीक्षा पद्धति –**

कैंसर के सफल उपचार के लिये निश्चित निदान होना आवश्यक है । इसके निदान की अनेक विधियाँ हैं –

1. कोशिकाओं की जाँच (Cancer cells)
2. X-ray
3. रेडियो आइसोटोप (Radio-isotopes)
4. गुह्यान्तदर्शी (Endoscopy)
5. रक्त परीक्षण (Blood examination)

**वर्तमान में प्रचलित आधुनिक चिकित्सा पद्धतियाँ –**

1. शस्त्र चिकित्सा (Surgery)
2. विकिरण चिकित्सा (radio Therapy)
3. रसायन चिकित्सा (Chemo therapy)
4. इम्यूनोथेरेपी (Immuno therapy)
5. बॉयलॉजिकल रेंस्पान्स मोडिफेयर
6. Transplantation of Bone marrow

इस बात पर ध्यान देना चाहिए की वह व्यक्ति किस प्रदेश का है, क्योंकि यह भिन्न-भिन्न देशों में व्याधियों की आवृत्ति सामाजिक, पैतृक तथा आहारजन्य परिस्थितियों के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है जैसे –

1. त्वचा का कैंसर – ऑस्ट्रेलिया में
2. स्तन, मूत्राशय का कैंसर – मिस्र (Egypt) में
3. अवटु (Thyroid) का कैंसर-स्विट्जरलैंड में
4. यकृत (Liver) का कैंसर- अफ्रीका (Africa) में
5. बृहदांत्र (Large intestine) का कैंसर आयरलैंड में
6. फुफ्फुस (Lungs) का कैंसर - जापान तथा भारत में अधिक होता है ।


बैद्यनाथ

प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं । इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है । हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है । इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, बरबट और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं । मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है । बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# "कांकायनवटी" गुल्म और अर्श

* डॉ० विजय प्रकाश पाठक "शास्त्री"

आयुर्वेदीय चिकित्सा में व्यवहृत होनेवाली औषधियों के नाम प्रायः औषधि विशेष में घटक द्रव्यों, रोगोपशमनीय गुण अथवा उस योग के आविष्कर्त्ता के नाम पर होता है। "कांकायन वटी" (मोदक, गुटिका) का नामकरण उसके आविष्कर्त्ता आचार्य कांकायन के नाम पर है। जैसा कि अर्श और गुल्म दोनों रोगाधिकारों में वर्णित "कांकायन वटी" की निर्माण-विधि में स्पष्ट उद्धृत है :-

विशेषता है कि एक ही नाम से दो रोगाधिकारों - अर्श और गुल्म में "कांकायन वटी" लाभकर बतायी गयी हैं। प्रस्तुत निबंध में दोनों की विवेचना कर दोनों की विशेषताओं पर विचार प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

इन औषधियों की विशेषता, घटक द्रव्यों का परिचय, अनुपान विश्लेषण से पूर्व इन दोनों रोगों का सामान्य परिचय उचित प्रतीत होता है। दोनों रोगों-अर्श और गुल्म - में प्रथमतः अर्श का संक्षिप्त परिचय अधोलिखित रूप में देखा जा सकता है, जैसा कि आयुर्वेद के मनीषियों ने वर्णन किया है :-

गुदमार्ग में अंकुरवत् ग्रंथियों या मांसकीलों के निकल जाने या गुदमार्ग से रक्तस्राव (शूल रहित या शूलयुक्त) होने "अरिवत् प्राणान् श्रृणाति इति अर्शः" के अनुरूप दुश्मन की तरह पीड़ादायक-शुष्कार्श और रक्तार्श - दो रूप प्रचलित हैं। दोनों अर्शों में तीनों दोष होते हैं, किन्तु प्रधानता के आधार पर वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज, सन्निपातज, रक्तज के अतिरिक्त सहज कई रूपों में यह विभाजित होता है। आधुनिक चिकित्साशास्त्र में भी इसके चार स्तर प्रायः स्वीकृत हैं। पंचविधवायु, पंचविधकफ और पंचविध पित्त गुदा की बलियों में कुपित होने पर अर्श उत्पन्न करते हैं। वस्तुतः त्रिदोषज, सहज और तृतीय श्रेणीगत् अर्श कष्टसाध्य ही नहीं, अपितु असाध्य माना जाता है। प्रारम्भिक अवस्था में ही सावधानी एवं चिकित्सा प्रारम्भ कर दी जाय, तो अर्श ठीक हो जाता है। इस रोग में अनेक उपचार क्रम आयुर्वेद के आचार्यों ने बतलाया है। विविध चिकित्साक्रम (औषधि, क्षार, अग्नि, शस्त्र) औषध कल्प निर्दिष्ट हैं। वर्ण्य कांकायन वटी (अर्श) आचार्य कांकायन प्रणीत योग माना गया है।

द्वितीय रोग - उदर प्रदेश में वायु से निर्मित ग्रन्थि का नाम गुल्म है। वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज, सन्निपातज तथा रक्तज इसके प्रमुख भेद बतलाये गये हैं :-

**गुल्मास्त्वष्टौ समाख्याता वातपित्तकफैस्त्रयः।**
**द्वन्द्वभेदास्त्रयः प्रोक्ताः सप्तमः सन्निपाततः।**
**रक्तस्त्वष्टमकः ख्यातः..... ॥**

(शार्ङ्गधर संहिता प्रथम खंड 7/50-51)

**इसका मुख्य स्थान** - वस्ति, नाभि प्रदेश, हृदय दोनों पार्श्व माने जाते हैं, किन्तु रक्तज गुल्म स्त्रियों में विशेषतः होता है, उसका स्थान गर्भाशय भी हो सकता है। अतएव इसकी चिकित्सा दस माह बाद करने का निर्देश आयुर्वेद के प्राचीन आचार्यों ने दिए हैं। वर्तमान में एक्सरे, अल्ट्रास्केन आदि के माध्यम से निदान स्थिर कर पहले भी चिकित्सा की जा सकती है। इसके अनेकशः चिकित्साक्रम एवं औषध कल्पों का विधान किया गया है। वैसे ही औषध-कल्पों में कांकायन वटी (गुल्म) आचार्य कांकायन द्वारा कल्पित योग है।

कांकायन वटी (अर्श) और कांकायन वटी (गुल्म) - दोनों योगों का वर्णन आयुर्वेदीय ग्रन्थों में अधोलिखित रूप में प्राप्त होता है :-

**कांकायन वटी (गुटिका, मोदक) अर्शरोगाधिकार**

चक्रपाणिदत्त कृत चक्रदत्तसंग्रह में अर्शरोगाधिकार में अर्श रोग के निवारण के लिए "कांकायन गुटिका या मोदक" योग का वर्णन किया गया है। यह प्रायः सभी प्रकार के अर्श में लाभप्रद है। इसके घटक एवं निर्माण विधि निम्नतः बतलायी गयी है :-

* व्याख्याता (मौलिक सिद्धान्त विभाग), राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज, पटना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



"पथ्यापंचपलान्येकमजाज्या मरिचस्य च ।
पिप्पली पिप्पलीमूल चव्यचित्रकनागराः ॥
पलाभिवृद्धाः क्रमशो यवक्षारपलद्वयम् ।
भल्लातकपलान्यष्टौ कन्दस्तु द्विगुणो मतः ॥
द्विगुणेन गुडैनेषां वटकानक्षसंमितान् ।
कृत्वैनं भक्षयेत्प्रातस्तक्राम्भोऽनुवापिवेत् ॥
मन्दाग्निं दीपयेत्येष ग्रहणीपाण्डुरोगनुत् ।
कांकायनेन शिष्येभ्यः शस्त्रक्षाराग्निभिर्विना ॥
भिषग्जितमिति प्रोक्तं श्रेष्ठमर्शोविकारिणाम् ।"

(चक्रदत्तसंग्रह अर्शोऽधिकार 5/38-42)

वंगसेन संहिताकार ने अपनी संहिता में अर्शरोगाधिकार के 162-165 श्लोकों में चक्रदत्त संग्रहोक्त विधि एवं घटकों को हूबहू उल्लिखित किया है ।

तदनुसार जीरा 4 तोला, मरिच 4 तोला, पीपल 4 तोला, पीपरामूल 8 तोला, चव्य 12 तोला, चीता 18 तोला, सोंठ 20 तोला, यवक्षार 8 तोला, शोधितभिलावा 32 तोला, जिमीकन्द 64 तोला, गुड़ दुगुना मिलाकर 1 तोला की गुटिका बनाकर उसका सेवन करना चाहिए ।

योगरत्नाकर ने अर्शचिकित्सा अधिकरण में इस योग का वर्णन आंशिक शब्द परिवर्त्तन के साथ किया है ।

"पथ्यादलस्य पलपञ्चमेकमेवमेकम् ।
पलं तु मरिचादपि जीरकस्य ।
कृष्णातदुद्भवजराचविकाग्निशुण्ठ्यः ।
कृष्णादपि पञ्चकमिदंपलतः प्रवृद्धम् ।
पलाष्टभल्लातक संयुक्तकंदस्त्व
रूष्कफलाद् द्विगुणः प्रकल्प्यः ।
स्याद्यावशूककुडववार्धमतः समस्तैर्यौज्यो गुडो
द्विगुणितो वटकीकृतश्च ।
कांकायेन मुनिना वटकः किलायमुक्तः द्विगुणितो
वटकीकृतश्च प्रजाहिततमेन गुदामयघ्नः ।
क्षाराग्निभस्म पतनैरपि ये न सिद्धाः ।
सिध्यन्त्येन वटकेन गुदामयास्ते ॥"

उल्लेख्य है कि "आरोग्य प्रकाश", श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, प्रकाशन के पृष्ठ 292 में एरण्ड बीज 16 भाग लेने का उल्लेख किया गया है, परन्तु चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी द्वारा प्रकाशित (योगरत्नाकर अर्शरोगचिकित्सा पृ० 300 चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी 198 वर्षीय संस्करण) 1983 वर्ष संस्करण में एरण्ड बीज का उल्लेख नहीं किया गया है

चक्रपाणि दत्त एवं वंगसेन के अनुसार यह औषधि अर्श के साथ-साथ मन्दाग्नि, ग्रहणी तथा पाण्डु रोग में लाभकर है । इसके घटक द्रव्य ऐसे हैं, जिनका सम्बन्ध पाचनतंत्र से सीधे है ।

किसी भी आचार्य ने इस योग में गुड़ प्रयोग के कारण मधुमेहयुक्त अर्श के रोगियों पर रोक के सम्बन्ध उल्लेख नहीं किया है । यहाँ समाधान है कि मधुमेह अल्पता-तीव्रता (वृद्धि की गति) को ध्यान में रखते इस औषधि का सेवन करना या परामर्श करना चाहिए

कांकायनवटी (गुटिका) गुल्मरोगाधिकार

शटी पुष्करमूलञ्च दन्ती चित्रकमाद्रकी ।
श्रृंगवेर वचाञ्चैव पलिकानि समाहरेत् ।
त्रिवृत्तायः फलं कुर्यात् त्रीन्कर्षांसिश्चैव हिंगुलः
पलंहि लवणानाञ्च यवक्षारं पलं तथा ॥
द्वे पले च तथा शुण्ठ्या द्वेपलेचाम्लवेतसात् ।
यमान्याजाजीमरिचं धान्यरे गिरिकर्णिका ।
उपकुञ्जिकाजमोदा च कुर्यादर्द्धपलोन्मितान् ।
हरीतकीपले द्वे च विडंगं दाडिमं तथा ।
मातुलुङ्गरसेनैव गुटिकाः कारयेद्भिषक् ।
एकां तासाञ्च द्वे तिस्रो गुटिकास्ताः सुखाम्बुना ।
अम्लैर्मद्यैश्च पातव्या घृतेन पयसाऽथवा ।
एताः कांकायनोक्ताः गुटिका गुल्मभेदिकाः ।
गोमूत्रेण निहन्युश्च श्लेष्मगुल्मं चिरोत्थितम् ।
क्षीरेण पित्तगुल्मन्तु मद्येन श्लेष्मवातिकम् ।
त्रिफला रसमूत्राभ्यां निचयं सान्निपातिकम् ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



रक्तगुल्मञ्च नारीणां पयसाकारभेण तु ।।

(वंगसेन संहिता - गुल्मरोगाधिकार 118-126)

अर्थात् कचूर, पुष्करमूल, दन्ती, चीता, सोरठ की मिट्टी (मतान्तर-अरहर की जड़), अदरक, बच, निशोथ, सभी 4-4 तोला, पाँचों नमक (सांचरनमक, सेंधानमक, सांभरनमक, सामुद्रनमक, विड्नमक) 4-4 तोला, हींग 3 तोला, यवक्षार 4 तोला (मतान्तर 8 तोला), सोंठ 8 तोला, अम्लबेंत 8 तोला, अजवायन 2 तोला, विष्णुक्रान्ता (2 तोला), कलौंजी (मंगरैला) 2 तोला, अजमोदा 2 तोला, हरड़ छिलका 8 तोला, वायविडंग 8 तोला, अनारदाना 8 तोला, महीन चूर्णकर विजौरे नीम्बू के रस में गोली बनाकर विभिन्न अनुपानों के साथ विविध गुल्मों में प्रयोग करने पर लाभ मिलता है । सामान्यतया सामान्य जल से लेना चाहिए। अम्ल, मद्य, घी या दूध के साथ लेने से गुल्म का भेदन करने में यह औषध सहायक है। विशेषत: गोमूत्र के साथ लेने से कफज गुल्म, मद्य के साथ लेने से कफज वातज, दूध के साथ लेने से पित्तज, त्रिफला या मूत्र (गोमूत्र) के साथ लेने से सान्निपातिक या ऊँटनी के दूध से लेने पर रक्तजगुल्म में लाभ मिलता है ।

चक्रदत्त संग्रह में भी इस योग का वर्णन किया गया है :-

शठी पुष्करमूलं च दन्ती चित्रकमादीकम् ।
श्रृंगबेरं बचां चैव पालिकानि समाहरेत् ।
त्रिवृत्तायाः पलं चैव कुर्यात् जीर्ण च हिंगुनः ।
यवक्षारपले द्वे च द्विपले चाम्लवेतसात् ।
यमान्याजाजी मरिचं धान्यकं चेति कार्षिकम् ।
उपकुंच्यजमोदाभ्यां तथा चाष्टमिकामपि ।
मातलुङ्गरसेनैव गुटिकाः कारयेद्भिषक् ।
तासामेकां पिवेद् द्वे च तिस्रो वापि सुखाम्बुना ।
अम्लैश्च मद्यैर्यूषैश्च घृते पयसाथवा ।
एषा कांकायेनोक्ता गुटिका गुल्मनाशिनी ।
अर्शोहृद्रोगशमनी क्रिमिणां च विनाशनी ।
गोमूत्रयुक्ता शमयेत् कफगुल्मं चिरोत्थितम् ।
क्षीरेण पित्तगुल्मं च मद्यैरम्लैश्च वातिकम् ।
त्रिफलारसमूत्रैश्च निमच्छेत्सान्निपातिकम् ।
रक्तगुल्मो च नारीणामुष्ट्रीक्षीरेण पाययेत् ।

(चक्रदत्त-गुल्मरोगाधिकार 29/49-57)

इस प्रकार चक्रपाणि दत्त ने भी अपने ग्रन्थ "चक्रदत्त संग्रह" में योग निर्माण विधान बतलाते हुए विविध अनुपानों के साथ विविध रोगों को उपशमन करने वाला बतलाया है । यथा - अर्श, हृदयरोग और क्रिमिजन्य रोग ।

आयुर्वेद में औषधीय कल्पों के साथ-साथ अनुपान का भी महत्व है । "अनुपीयते इति अनुपानम्" तदनुसार औषधि लेने के बाद लेने वाले द्रव्य । यह अनुपान औषधियों के लिए योगवाही अर्थात् उचित स्थान तक पहुँचाने में कभी उत्प्रेरक के रूप में, तो कभी औषधि के रूप में कार्य करता है । एक औषधि अनुपान, सहानुपान के अन्तर से कई रोगों में उपयोगी हो जाती है । उपर्युक्त "कांकायन गुटिका" (गुल्म) के प्रयोग में कई अनुपानों का उल्लेख है । यह एक उपयुक्त उदाहरण है ।

यहाँ एक तथ्य ध्यातव्य है कि "कांकायनगुटिका" (गुल्म) में पांचों लवणों का प्रयोग किया गया है और अनुपान में गोदुग्ध या ऊँटनी का दूध बतलाया गया है जबकि नमक और दूध को आयुर्वेद विरुद्ध आहार मानता है। ऐसे में ऐसा प्रयोग क्यों निर्दिष्ट है इस पर किसी टीकाकार या व्याख्याकार ने समाधान प्रस्तुत नहीं किया है ।

यहाँ एक ही स्पष्ट समाधान है कि गुटिका को दूध में मिश्रित कर नहीं लेना है, अपितु गुटिका लेने के पश्चात् दूध लेना है । दूध स्वकीय गुणों में सरत्व के कारण पित्तज या रक्तज गुल्मों को दूर करने में सहयोगी सिद्ध होता है । ऊँटनी के दूध में यह सरत्व गुण विशेषरूप से पाया जाता है । स्निग्धता के साथ सरत्वगुण गुल्म को दूर करने में सहायक है । अत: अनुपान के रूप में इसका आचार्यों



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रावधान किया है ।

दोनों प्रकार की "कांकायन गुटिका" के घटकों में अन्तर भी है । इस अन्तर को तालिका के माध्यम से भी स्पष्ट कर दिया गया है ।

| घटक द्रव्य | कांकायन वटी (अर्श) | कांकायन वटी (गुल्म) |
|---|---|---|
| कचूर | (-) | (+) |
| पुष्करमूल | (-) | (+) |
| दन्ती | (-) | (+) |
| चीता | (+) | (+) |
| सोंठ मिट्टी/ अरहर की जड़, (आढ़की) | (-) | (+) |
| अदरक | (-) | (+) |
| बच | (-) | (+) |
| निशोथ | (-) | (+) |
| लवण (पाँचों) | (-) | (+) |
| हींग | (-) | (+) |
| यवक्षार | (+) | (+) |
| सोंठ | (-) | (+) |
| अम्लवेंत | (+) | (+) |
| अजवायन | (-) | (+) |
| जीरा | (+) | (+) |
| कालीमिर्च | (+) | (+) |
| धनियाँ | (-) | (+) |
| विष्णुक्रान्ता | (-) | (+) |
| कलौंजी | (-) | (+) |
| अजमोदा | (-) | (+) |
| हरड़ | (+) | (+) |
| वायविडंग | (+) | (+) |
| पिप्पली | (+) | (-) |
| अनारदाना | (-) | (+) |
| पीपरामूल | (+) | (-) |
| चव्य | (+) | (-) |
| भिलावा | (+) | (-) |
| जिमीकन्द | (+) | (-) |
| गुड़ | (+) | (-) |
| बिजोरा नींबू | (+) | (+) |
| *एरण्ड बीज | (+) | (-) |

* आरोग्य प्रकाश, बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० में 16 भाग एरण्ड बीज लेने का उल्लेख है ।

(-) नहीं का बोधक चिह्न ।

(+) हाँ का बोधक चिह्न ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद में मन एवं आहार का सम्बन्ध

* डॉ० आदर्श कुमार, एम.डी. (आयु.)

** डा० मोहन लाल पाठक, एम.डी. (आयु.)

प्रसन्नचित्त मन ही आरोग्य का साधन है। आचार्य सुश्रुत ने स्वस्थ व्यक्ति के लक्षणों का उल्लेख करते हुए कहा है, 'प्रसन्नात्मेन्द्रिय मनः स्वस्थ इत्याभिधीयते।' स्वास्थ्य के लिये दोष, धातु, अग्नि, मलादि क्रिया का प्राकृत रूप में होना ही नहीं अपितु आत्मा तथा इन्द्रिय के साथ मन की प्रसन्नता भी अनिवार्य है। मन पांच महाभूतों से उत्पन्न होने के कारण पांच भौतिक माना गया है। इसलिये सत्त्व, रज तथा तमोगुण प्रत्येक मन में होते हैं। इन गुणों के कारण ज्ञान-अज्ञान, सुख-दुख, आशा-निराशा की प्रवृत्तियाँ आदि कार्य प्रत्येक मन में दिखाई देती हैं। लेकिन प्रत्येक मन में सामान्य गुणों के रूप में कार्य करते हुए भी अधिकता एक-एक गुण के अनुरूप कर्म देखने में आते हैं। इन गुणों के कारण मन तथा उसके अधिष्ठाता (पुरुष) को सात्त्विक, राजस तथा तामस कहा जाता है। जिस प्रकार वात, पित्त, कफ दोष हैं उसी प्रकार रज तथा तम मानसिक दोष हैं। सत्त्व गुण के कारण मन दोष रहित तथा रोग मुक्त होता है। मन तो इन्द्रियों तथा आत्मा के मध्यस्थ की कड़ी है जो कि ज्ञान कराती है। प्राणी शरीर में इन्द्रियों के विकृत होने पर मन के स्वस्थ रहने पर भी किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं होती। अपितु इन्द्रियों के स्वस्थ तथा मन के विकृत होने पर अनेक प्रकार के मानसिक रोग पैदा हो जाते हैं। जैसे दोष, धातु, मल, अग्नि, सत्त्व, रज तथा तम का प्रभाव मन पर होता है उसी प्रकार से अन्न का प्रभाव मन पर होता है। अन्न पाचन के पश्चात तीन भागों में विभक्त हो जाता है।

1. स्थूल 2. मध्यम 3. अणु

अन्न के स्थूल भाग को पुरीष (मल) कहते हैं। मध्य भाग को रस रक्तादि धातुएं कहते हैं। इस मध्य भाग से शरीरस्थ रस रक्तादि धातुओं की वृद्धि होती है। अणु या सूक्ष्म भाग मन का पोषण करता है। मन का भोजन अणु भाग से पोषण होने के कारण ही मन के दो गुणों से एक गुण अणु भी माना गया है। जिस प्रकार दहीं सूक्ष्म सारभूत भाग घृत होता है उसी प्रकार अन्न का सार भाग मन होता है। इसलिए मन अन्न से उत्पन्न एवं परिपु होता है।

आत्म कल्याण के पथ पर चलने तथा अन्तःक की शुद्धि का मुख्य आधार स्तंभ अन्न है। मन की शु अन्न पर निर्भर करती है। अन्न के शुद्ध होने पर मन शुद्ध होता है। क्योंकि शुद्ध अन्न के सेवन से मन शुद्ध हो पर परम तत्त्व की निश्चल समृति होती है। निश्चल स्मृ से ग्रन्थि मोक्ष होता है अर्थात् जीव सारे बन्धनों से मुक्त जाता है। आहारा शुद्धौ सत्त्वशुद्धौः सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृ स्मृति लम्भे सर्वग्रन्थीनाम् विप्रमोक्षः। (छन्दो 7/26/2 शुद्ध आहार विहार (सत्त्व) ही मन को पुष्ट करने उत्त निद्रा तथा ब्रह्मचर्य के पालन करने में समर्थ होता है। आहार, निद्रा तथा ब्रह्मचर्या जीवन के तीन आधारभूत स्तम हैं जिन पर मानव शरीर आश्रित रहता है। इन तीनों से प्रथ आहार है जो उत्तरोत्तर निद्रा तथा ब्रह्मचर्या को प्रभावि करता है। अशुद्ध अन्न पान करने से लक्ष्य प्राप्ति नहीं होत है। अतः पवित्र सत्त्व गुण अन्न ही सेवन करने का निर्दे दिया है। इसलिए मन को अन्नमय बतलाया है :-

'मनसः अन्नमय' अर्थात् मन अन्न से उत्पन्न होत है तथा अन्न द्वारा ही पुष्ट होता है। जैसा कि आम भाष में 'जैसा खाइये अन्न वैसा होवे मन' कहा गया है क्योंक सभी प्रकार के वातादि दोष, धातु तथा मल जिस अन्न उत्पन्न होकर वृद्धि को प्राप्त होते हैं, उसी अन्न का मन प क्या प्रभाव होता है इसका विशद वर्णन प्राचीन आचार्यों किया है। भारतीय संस्कृति में अन्न एवं आहार की शुद्

* सहायक प्रोफेसर, रस शास्त्र विभाग, सरकारी आयुर्वेदिक कालेज, पटियाला, भूतपूर्व सुपरिन्टेन्डेंट, सरकारी आयुर्वेदिक फार्मेसी, पटियाला।

** (सेवानिवृत प्रोफेसर एवम् सुपरिन्टेन्डेंट राजकीय आयुर्वेदिक कालेज/फार्मेसी, पटियाला) नजदीक मोदी कालेज, सुनामी गेट, पटियाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



विशेष ध्यान दिया है 'अन्नमय: हि सोम्य मन:' अर्थात् सोम्य ! अन्न से ही मन बनता है जैसा अन्न खाते हैं वैसा मन बन जाता है । मन के अनुरूप ही बुद्धि, भावना, चार तथा कल्पना शक्ति का निर्माण होता है ।

आध्यात्म विद्या के वैज्ञानिक ऋषियों ने आहार के म गुणों का अत्यंत गम्भीरता पूर्वक अध्ययन किया है कि येक खाद्य पदार्थ अपने में सात्त्विक, राजसिक तथा ोगुण धारण किये हुये है और उनके खाने से मनोभूमि का र्माण भी वैसा ही होता है । साथ ही यह भी शोध किया या था कि आहार में निकटवर्ती स्थिति का प्रभाव ग्रहण रने का भी एक विशेष गुण है । दुष्ट, दुराचारी, दुर्भावना क्त या हीन मनोवृत्ति के लोग यदि भोजन पकायें या परोसें उनके दुर्गुण आहार के साथ सम्मिश्रित होकर खाने वाले र अपना प्रभाव अवश्य डालेंगे । न्याय तथा अन्याय से, प तथा पुण्य से कमाये हुए पैसे से जो आहार खरीदा गया उससे भी वह प्रभावित रहेगा । अनीति की कमाई से जो ाहार बनेगा वह भी अवश्य ही उपभोक्ता को अपनी बुरी कृति से प्रभावित करेगा । अथर्ववेद में कहा है 'रमन्तां ण्या लक्ष्मीर्या: पापीस्ता अनीनशम् ।।' अर्थात् पुण्य से माया गया धन ही समृद्धि दे सकता है । पाप युक्त धन ाश करने वाला होता है । न्यायोपार्जित अन्न ही ग्राह्य तथा ुद्ध होता है ।

इन तथ्यों पर भली प्रकार विचार करके उपनिषदों ं साधक को सत्त्वगुणी आहार ही अपनाने पर बल दिया । मद्य, मांस, प्याज, लहसुन, मसाले, चटपटे, उत्तेजक, ाशीले, गरिष्ठ, बासी, तमोगुणी प्रकृति के पदार्थ त्याग देने ी योग्य हैं । इसी प्रकार दुष्ट प्रकृति के लोगों द्वारा बनाया ाया अथवा अनीति से कमाया हुआ आहार भी सर्वथा त्याज्य है । इन बातों का ध्यान रखते हुए स्वाद के लिए या जीवन रक्षा के लिए जो अन्न औषधि रूप समझ कर भगवान का प्रसाद मान कर ग्रहण किया जाएगा, वह शरीर तथा मन में सतोगुणी स्थिति पैदा करेगा । उसी के आधार पर साधना मार्ग में सफलता मिलनी संभव होगी । भारतीय संस्कृति में भोजन की आन्तरिक स्वच्छता तथा उसके संस्कारों को अधिक महत्त्व दिया है । शुद्धान्न, स्वच्छ स्थान तथा बनाने वाला पवित्र होना चाहिये । भले ही शुद्धान्न संस्कार सम्पन्न हो लेकिन अन्न को बनाने वाले की प्रवृत्ति भी अन्न को असंस्कृत बना देती है तथा भोजन करने वाले पर अपना बुरा प्रभाव डालती है । अत: अन्न शुद्धि के लिये अन्न बनाने वाले का सदाचारी एवं अन्न बनाने में निपुण होना भी आवश्यक है ।

उपनिषदों में अन्न सम्बंधी अनेकों उपदेश दिए गए हैं :-

'मन अन्नमय है । प्राण जलमय तथ वाक् तेजोमय है ।'

(छांदोग्य अ. 6 खण्ड 5)

'अन्न ही बल से बढ़कर है । इसी से यदि दस दिन भोजन न मिले तो प्राणी को समस्त शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं और फिर वे तभी लौटती हैं जब पुन: भोजन करने लगे । तुम अन्न की उपासना करो । यह अन्न ही ब्रह्म है ।'

(छान्दोग्य, अध्याय 6 खण्ड 9)

'आहार में अभक्ष्य पदार्थ त्याग देने से चित्त शुद्ध हो जाता है । आहार शुद्धि से चित्त शुद्धि स्वयमेव हो जाती है । जब चित्त शुद्ध हो जाता है तो क्रम से ज्ञान होता जाता है । अज्ञान की ग्रंथियाँ टूटती जाती हैं ।'

(पाशुदत्त ब्रह्मोपनिषद्)

आहार शुद्ध होने से अन्त:करण की शुद्धि होती है । अन्त:करण शुद्ध होने से भावना दृढ़ हो जाती है तथा भावना की स्थिरता से हृदय की समस्त गांठें खुल जाती हैं ।

(छान्दोग्य)

तैत्तरीय उपनिषद् में इस सम्बंध में अधिक प्रकाश डाला गया है और आत्म कल्याण के इच्छुकों को आहार शुद्धि का विशेष रूप से ध्यान रखने का निर्देश किया है ।

''अन्न की निन्दा नहीं करें । यह व्रत है । प्राण ही अन्न है । शरीर प्राण पर आधारित है । इसलिए यह अन्न में ही स्थित है । जो मनुष्य यह जान लेता है कि मैं अन्न में ही प्रतिष्ठित हूँ, वह प्रतिष्ठावान हो जाता है । अन्न



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हो जाता है । प्रज्ञावान हो जाता है, पशुवान भी । वह ब्रह्मतेज से उत्पन्न होकर महान बनता है । कीर्ति से सम्पन्न होकर भी महान बनता है ।'

(तैत्तरीय 3/6)

अत: आहार शुद्ध हो जाने पर सत्त्व (अन्त:करण) भी शुद्ध हो जाता है जिसके कारण बुद्धि ठीक काम करती है, अज्ञान जन्य बन्धन, ग्रंथियाँ खुल जाती हैं तथा परमतत्त्व का साक्षात्कार हो जाता है । अथर्ववेद में अनुपयुक्त अन्न को त्याज्य ठहराया है । भगवत गीता के सतारहवें अध्याय के सूत्र 7-8-9 में सात्त्विक, राजस एवं तामस पुरुषों के प्रिय आहार बतलाते हुए उनके परिणाम भी स्पष्ट किए हैं । सात्विक पुरुष आयु, बुद्धि, बल, आरोग्य, सुख तथा प्रीति को बढ़ाने एवं रस युक्त चिकने तथा स्थिर रहने वाले तथा स्वभाव से सात्त्विक मन को प्रिय लगते हैं । राजस पुरुष को कटु, अम्ल, लवणयुक्त, अति उष्ण, तीक्ष्ण रूक्ष, दाहकारक तथा दु:ख चिन्ता तथा रोगों का पैदा करने वाले रज गुण प्रधान अन्नपान प्रिय लगते हैं । तामस पुरुष को अर्धपक्क, रस हीन, दुर्गन्धित, वासी, अपवित्र तामसिक अन्न प्रिय लगते हैं ।

अन्न के सूक्ष्म भाग से मन के उत्पन्न होने के कारण आचार्य चरक ने भी अन्न का मन से सम्बंध बतलाते हुए कहा है :-

'कुशल पुरुषों द्वारा इष्ट (प्रिय तथा हितकर) वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श वाला एवम् विधि पूर्वक बनाया हुआ अन्नपान प्राणि नामक प्राणियों के लिए प्राण कहा जाता है । अत: मोक्ष पर्यन्त अन्नपान की अपेक्षा रहती है । प्रत्यक्ष रूप में भी हम देखते हैं कि विधान के अनुसार अन्नपान के सेवन से आयु पर्यन्त प्राण रहते हैं ।'

'अन्न वै प्राणा:' अर्थात् अन्न ही प्राण है । यदि अन्नपान विधि अनुसार न किया जाए तो आयु क्षीण हो जाती है अथवा मृत्यु हो जाती है । अन्नपान रूपी ईंधन से अन्तराग्नि प्रदीप्त रहती है । यथोक्तम्:-

'बलमारोग्यमायुश्च प्राणाश्चाग्रौ प्रतिष्ठिता: ।
अन्नपानेन्धनैश्चाग्निदीप्यते शाम्यतेऽन्यथा ।'

(चरक आ० 27/34

बल, आरोग्य, आयु तथा प्राण ये सब अग्नि आश्रित हैं । अन्नपान रूपी ईंधन से यह अग्नि प्रदीप्त है, अन्यथा शांत हो जाती है । अत: इस अन्नपान रूपी ई के द्वारा शरीरस्थ धातुओं का पाक उचित प्रकार से होता तथा शरीर को आरोग्यता प्रदान करने में सक्षम है ।

जैसे अन्नपान का प्रभाव मन पर होता है वैसे का प्रभाव अन्नपान के पाचन पर भी होता है । भोजन प्रीति लगा कर भोजन न किया जाये, उचित समय भोजन न किया जाये, भोजन के पूर्व-पश्चात् क्रोधादि युक्त अन्न का सेवन करने से शरीर में आमदोष का प्रक हो जाता है जिससे शरीर में विभिन्न प्रकार के रोग उत्प हो जाते हैं और शरीर अस्वस्थ हो जाता है ।

अत: जिस प्रकार का भोजन व्यक्ति करता उसी प्रकार का मन पर प्रभाव होता है । जीवन के लि अन्न ही उत्तम माना गया है इसलिये 'अन्न वै प्राणा:' अ के बिना प्राण स्थित नहीं रह सकते । अन्न ही प्राणियों प्राण हैं । अन्न पर ही प्राणी जीवित रहता है । व प्रसन्नता, स्वर, जीवन, प्रतिभा, सुख, संतोष, पुष्टि, व मोक्ष सब अन्न के आश्रित हैं । देह यात्रा के कर्म, स प्राप्ति एवं मोक्ष के साधन के लिए ब्रह्मचर्य आदि कर्म अ में प्रतिष्ठित होते हैं । अन्न के बिना संसार में कोई क नहीं हो सकते हैं इसीलिये अन्न ही सर्वश्रेष्ठ है । शुद्ध अ ही मानसिक सत्त्व गुण एवं शारीरिक वातादि दोष तथा रक्तादि धातुओं की पुष्टि करने वाला अर्थात् जिन गुणों शरीर में न्यूनता/अधिकता आ जाती है उनको पूर्ण क वाला है । विधि पूर्वक निर्मित तथा प्रयुक्त अन्न शरीर प्रसन्नता, तृप्ति, बल तथा वर्ण आदि गुणों को प्रदान कर है, विधि रहित निर्मित तथा प्रयुक्त किया गया अन्न श के लिये लाभप्रद नहीं होता है । यथोक्तम् -

(शेष पृष्ठ संख्या - 279 पर)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# दिल का दौरा : जरूरी जानकारियां

* कैलाश जैन, एडवोकेट

अड़तालीस वर्षीय शर्माजी को आफिस में कार्य ते समय अचानक सीने में असहनीय दर्द महसूस हुआ र वह अचेत हो गए । उनके सहकर्मी अचानक हुए इस दसे से एकदम घबरा गए और किंकर्तव्यविमूढ-सी थति में आ गए । दुर्भाग्य से उनमें से कोई दिल के दौरे लक्षण तथा उस समय क्या किया जाना चाहिए, यह नहीं नता था । वह मात्र पानी के छींटे देकर, हवा करके उन्हें श में लाने के प्रयास करते रहे । समय पर डाक्टरी ायता न मिलने और तत्काल प्राथमिक उपचार प्राप्त नहीं ने के कारण वह पहला दिल का दौरा ही जानलेवा साबित ा और शर्माजी असमय ही चल बसे ।

दरअसल दिल के दौरे के प्राथमिक लक्षण व काल उपचार की विधि किसी को ज्ञात होती तो संभवत: र्माजी को आसानी से बचाया जा सकता था । चिकित्सकों कथन है कि इस जानकारी के अभाव में प्रति वर्ष ारों व्यक्तियों की मृत्यु दिल के दौरे के कारण हो जाती ।

दिल के दौरे के लक्षणों और कारणों को समझने लिए हमें सर्वप्रथम दिल की कार्य-प्रणाली को समझना गा । दिल हमारे शरीर का सर्वाधिक संवेदनशील तकरीबन 50 ग्राम वजन का हिस्सा है, जिसका आकार करीब पांच व लम्बा व साढ़े तीन इंच चौड़ा होता है । यह सीने के ीचों-बीच पसलियों के पीछे और फेफड़ों के नीचे स्थित ता है । इसका कोना बायीं ओर स्थित होने से दिल की ड़कन बायीं ओर सुनाई पड़ती है । हृदय को काम करने लिए ऑक्सीजन-युक्त रक्त की निरंतर आवश्यकता ड़ती है । दिल के चारों ओर बुने गए धमनियों के जाल इसे रक्त की सप्लाई होती रहती है । जब किसी कारण मनियों में रक्त-प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है तो दिल के किसी हिस्से में पर्याप्त मात्रा में रक्त नहीं पहुँच पाता है । ऐसी स्थिति में सीने में एक दर्द उठता है । इसी दर्द को 'हार्ट-अटैक' या 'दिल का दौरा' कहा जाता है ।

दिल का दौरा एक गंभीर बीमारी है । समय पर समुचित उपचार उलब्ध नहीं होने पर यह प्राणघातक सिद्ध हो सकता है । पश्चिमी देशों के मुकाबले हमारे देश में हार्ट अटैक से मरने वालों की संख्या चार गुना अधिक है । पश्चिमी राष्ट्रों में दिल के दौरों से मरने वाले युवाओं की दर मात्र चार प्रतिशत है, जबकि भारत में यह दर 15 प्रतिशत है ।

जहां तक इसके लक्षणों का प्रश्न है, हार्ट अटैक का सबसे महत्वपूर्ण और सामान्य लक्षण सीने के बीच या बायीं तरफ असहनीय दर्द होता है । यह दर्द बहुत सारी सुइयों एक साथ चुभने के दर्द के समकक्ष होता है । यह दर्द, कंधों, बांहों, गले और जबड़ों में भी हो सकता है । इसके अतिरिक्त बेतरह, पसीना आना, सांस फूलना, बेहोशी आना, घबराहट व बेचैनी होना, मितली आना, आंखों के आगे अंधेरा छा जाना, दिल की धड़कन तेज होना, रक्तचाप कम हो जाना आदि लक्षण दिल के दौर की ताईद करते हैं । कई बार इनमें से कोई भी लक्षण प्रकट नहीं होता । ऐसी स्थिति को 'साइलेंट अटैक' कहते हैं ।

अचानक दिल दौरा पड़ने की स्थिति में रोगी के आस-पास के व्यक्तियों को बिना घबराए उसके लक्षणों को पहचानते हुए तुरंत उपचार प्रारंभ कर देना चाहिए । डाक्टरी सहायता मिलने से पूर्व मरीज को सख्त सतह पर लिटा दें और तत्काल चिकित्सक को बुलाने या रोगी को अस्पताल ले जाने की व्यवस्था करें । यदि डाक्टर के आने के पूर्व रोगी के दिल की धड़कन बंद हो जाए तो उसके मुंह में मुंह मिलाकर सांस दें तथा उसके हृदय की मालिश करें । मालिश करने का तरीका यह है कि सीने की बीच की हड्डी पर हर सेकेंड दबाव दिया जाए व छोड़ दिया जाए

* 34-बंदा रोड, भवानीमण्डी (राज०) (07433) 222358 / 222479

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



इससे रोगी की धड़कन पुनः चालू होने की काफी संभावना रहती है। थोड़े-थोड़े समय के अंतराल से रोगी की सांस व नब्ज जांच करते रहना चाहिए। रोगी को डाक्टरी सहायता जितनी जल्दी संभव हो, उतनी जल्दी उपलब्ध करनी चाहिए क्योंकि इसमें मिनटों का अंतर भी जीवन-मृत्यु का अंतर बन सकता है।

यदि रोगी को समय पर समुचित चिकित्सकीय मदद उपलब्ध हो जाती है, तो प्रायः उसे बचा लिया जाता है। साधारण किस्म के दिल के दौरे में करीब 8-10 दिन में रोगी को अस्पताल से छुट्टी दे दी जाती है। किन्तु उसके लिए भविष्य में काफी सावधानियां रखना व नियमित दिनचर्या रखना आवश्यक होता है।

भविष्य में 'हार्ट अटैक की पुरावृति न हो, इसके लिए रोगी को धूम्रपान तथा अन्य नशीली मादक वस्तुओं का उपयोग कतई बंद कर देना चाहिए। चाय, काफी, घी-तेल की तली हुई वस्तुओं और मांसाहार को तुरंत कर देना चाहिए।

खान-पान के साथ-साथ जीवन-चर्या को नियं बनाना भी आवश्यक है। मानसिक तनावों से यथा-संभ बचना चाहिए क्योंकि दिल के दौरे में मानसिक तन घातक सिद्ध हो सकता है। ताज़ा फलों व हरी सब्जियों सेवन भी लाभप्रद रहता है।

अस्पताल से छुट्टी मिलने के बाद रोगी को पर आराम करना चाहिए। वह घर में ही कुछ टहल सक है। करीब एक माह बाद वह आधा किलोमीटर तक च सकता है। दौरे के बाद कम-से-कम दो माह तक रोगी सीढ़ियां चढ़ने व सहवास से परहेज करना चाहिए। इस अतिरिक्त, डाक्टर द्वारा बताई गई दवाओं को नियमित रू से लेते रहना चाहिए। इसमें लापरवाही करना खतरना सिद्ध हो सकता है। अपने स्वास्थ्य की नियमित रूप जांच करवाते रहना चाहिए।

(शेषांश पृष्ठ संख्या 277 का)

**तत् सत्त्वमूर्जयति, तत्छरीरधातुव्यूहबलवर्णेन्द्रियप्रसादकरं यथोक्तमुंपसेव्यमानं, विपरीतमहिताय सम्पद्यते।**

(चरक सू० 27/3)

**सत्त्वमूर्जयति मनोबलं करोति ॥**

(चक्रपाणि)

अतः मानवप्राणी को सर्वदा अपने कल्याण तथा मन को पवित्र रखने के लिये सत्त्वगुण प्रधान शुद्ध एवं संस्कारित अन्नपान का ही सेवन करना सुखदायी एवं लाभप्रद होता है।

शुद्ध अन्न ही चित्त की शुद्धि, स्वभाव में मृदुता, क्रोध का नाश, विचारों की शुद्धि, बल, पराक्रम, आनन्द प्राप्ति एवं मनुष्य की चौमुखी उन्नति करने वाला होता है। अन्न को प्रसन्नता पूर्वक अभिनन्दन करते हुए ग्रहण करना चाहिये क्योंकि अन्न ब्रह्मा है, रस विष्णु एवं भोजन करने वाला महेश्वर है। अन्न का निरादर न करें यह एक महा है। 'अन्नं न निन्द्यात्। तत् व्रतम्।' अन्न ही शरीर र धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष की प्राप्ति का उत्तम साधन है भोजन करने से पूर्व भगवान का चिन्तन एवं निम्न मन्त्र उच्चारण करना चाहिये। तेजोऽसिसहोऽसि बलमसि, ओजो देवानां धामनामसि विश्वमहि विश्वायुः। अर्थात् हे अन्न तुम तेज हो, तुम उत्साह हो, तुम बल हो, तुम दीप्ति ह तुम ही चराचर विश्व रूप हो, तुम ही विश्व के जीवन हो

आयुर्वेद ऋषियों ने तो यहां तक कहा है कि सात्त्विक (शुद्ध) अन्न के सेवन करने वाला प्राणी सत्वपुरु द्वारा प्रशंसित होकर 100 वर्ष (36000 दिन) तक रो रहित होकर जीवित रहता है।

**षट्त्रिंशतं सहस्राणि रात्रीणां हितभोजनः।**
**जीवत्यनातुरो जन्तुर्जितात्मा संमतः सताम् ॥**

(चरक सू० 27/348



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# मनोरोगी एवं मनोचिकित्सक ध्यान दें !

*डॉ० गोपेश कुमार न० शर्मा ** डॉ० दिनेश कुमार शर्मा

वर्तमान में चिकित्सा के दौरान प्राय: सभी मनुष्यों एकाकी या सामूहिक रूप से कई लक्षण सामान्य रूप से लते हैं जिनमें से कुछ हैं - चिंता, अनवस्थित चित्त, वृति हानि, अवसाद, शिर:शूल, शिरोगौरव, केशहानि, लित्य, तनाव, अरति, नपुंसकता आदि आदि । ये लक्षण सी अन्य रोग से संयुक्त हो सकते हैं अन्यथा अनागत भविष्य के) कैंसर, हृदयावसाद, वृक्कावसाद, प्रमेह, धुमेह, उच्च रक्तचाप आदि रोगों के कारणरूप होते हैं ।

स्वस्थता एक प्राकृतिक अवस्था है किन्तु आजकल स प्राकृतिक अवस्था को प्राप्त करना एवं इसमें बने रहना ठिनतम या जटिलतम काम हो गया है । स्वस्थता में न्द्रियों, मन तथा आत्मा का समावेश प्राचीन तथा अर्वाचीन विश्व स्वास्थ्य संगठन भी) आचार्यों ने स्वीकार किया । अर्थात् प्राकृत (स्वस्थ) एवं विकृत दोनों अवस्थाओं में रीर एवं मन समानुपाती होते हैं ।

प्राकृत

↗ ↘

शरीर मन

↖ ↗

विकृत

इनको प्रभावित करने वाले भावों पर जब हम चार करते हैं तो सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाव दिखता है आहार' । भले ही वर्तमान में हमने इसे उस दृष्टि से पूर्णत: पेक्षित व अमहत्वपूर्ण समझा हुआ है । आहार पर अनेक कार के 'रचनात्मक' (फ्रोस्टेड/रोस्टेड/प्रिजर्वड/चिल्ड/हेल्थी/ स्कन या व्यूटि कांशियस आदि) प्रयोग किये जाते हैं ोकि उनके गुणों को कहाँ ले जाते हैं वह न सोचा जा कता न ही परीक्षण किया जा सकता । अपनी अग्नि को ी हमने 'सर्वपच' समझ कर कहीं भी-कभी भी-कुछ ी कैसा भी स्वीकार करने का 'नियम' बना लिया है । तिदिन होने वाले परिणामों से यह अनुमान अवश्य लगाना ाहिये कि हम किस दिशा में जा रहे हैं । आहार के आधुनिक गुणों पर दृष्टि डालिये - टेस्टी, डेलिशियस, कृत्रिम (Artificially prepared contain no fruit juice or pulp), आकर्षक, लो कैलोरी, लो फैट आदि । इन बहुगुण सम्पन्न आहार के कतिपय विचित्र प्रभावों अर्थात् Corcinogenocity, Terotogenicity, Hormonal imbalance, चयापचय क्रिया प्रभावक, अम्लपित्तकर, अन्नमार्ग विकृतिकर, रक्तवह संस्थान विकृतिकर, वृक्क एवं मूत्रमार्ग प्रभावक, Habit forming आदि के कारण वैज्ञानिक तथा भोजन विज्ञानी भी आश्चर्यचकित हो जाते हैं । इसलिये जब तक जीवन है इससे जुड़ी सभी चीजों का निकटता से, सूक्ष्मता से अवलोकन करना, समझना व अनुपालन करना नितांत जरूरी है । विकृति शारीरिक एवं मानसिक शक्ति कई रूपों में अभिव्यक्त होती है, जैसे -

**1) कृत्रिमता** - पूर्व की तुलना में वर्तमान में अधिक महापूजाओं, जागरणों, कथाओं, शत-सहस्र-लक्षाधिक यज्ञों, यात्राओं का आयोजन होता है । इनमें प्राय: भावना कम भव्यता अधिक दिखाई पड़ती है । पैसे आदि का प्रभाव अधिक किन्तु शान्ति कम दिखाई पड़ती है । व्यवहार में भी आपसी सम्बन्धों में कृत्रिमता अधिक प्रतीत होती है। हम अपने परिचित रिश्तेदारों, मित्रों, भाइयों आदि से स्वाभाविक रूप से नहीं मिलते, कई बार बचने की कोशिश करते हैं दूसरों को या अपने आपको धोखा देते हैं । दूसरे के कष्ट में मन से सुख अनुभव करते हुए भी बाहर से नकली सहानुभूति प्रकट करते हैं, पूरी तरह खाली होते हुए भी अपने को व्यस्त दिखाते हैं । अपनी स्वाभाविक शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, घरेलू व आर्थिक स्थिति को परिस्थिति अनुसार लाभ प्राप्त करने के लिये कम या अधिक रूप में प्रदर्शित करते हैं । प्रदेश, ऋतु, अवस्था के प्रतिकूल आहार वस्त्रादि, पेयादि चीजों का प्रयोग करते हैं कुल मिलाकर स्वाभाविकता को छुपाकर बनावटीपन दिखावा, नकलीपन को प्रदर्शित किया जाता है । इस नकलीपन से स्वाभाविक अर्थात् स्वस्थता किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है ?

**2) स्वाभाविक शक्ति हानि** - आजकल प्रत्येक

* द्रव्यगुण विज्ञान विभाग, दयानंद आयुर्वेदिक कालेज, जालन्धर - 144 008
** जे०एम०एस० आयुर्वेदिक कालेज, मैसूर - 15

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



छोटे-बड़े शहर में, प्रायः सभी अखबारों में, केवल पर बड़े-बड़े विज्ञापन, होर्डिंग देखने को मिलते हैं - ताकत शक्ति, खोई जवानी पुनः प्राप्त करें आदि । इस अस्वाभाविक बाढ़ से अनुमान लगाया जा सकता है सामान्य रूप से स्वाभाविक शक्ति का क्षय हुआ है । व्यक्ति अपनी पारिवारिक जीवन में संतुष्ट नहीं है व शक्तिहीनता अनुभव करता है और उसी की पूर्ति के लिये तथाकथित कविराज, शाही हकीम, डाक्टर कुकुरमुत्ते के समान उगे हुए दिखते हैं। थोड़े कारण से व्यक्ति अत्यधिक परेशान हो जाता है। धैर्य, सहनशीलता, समझदारी आदि स्वाभाविक गुण कम हो गये हैं। कुछ पैसे या चंद रुपयों के लिये दूसरे की हत्या कर दी जाती है । व्यक्ति लोभ, मोह-इच्छा आदि धारणीय वेगों का धारण नहीं कर पा रहा जिससे छोटे-बड़े सभी प्रकार के अपराध गाँव-शहर, देश-विदेश में सभी जगह बहुतायत से हो रहे हैं ।

3) **शक्ति का दुरुपयोग** - शरीर, मन एवं बुद्धि के विकृत तारतम्य के कई उदाहरण दिखाई पड़ते हैं । अर्थात् शक्ति का जहाँ प्रयोग नहीं करना चाहिये वहाँ विवेकहीनता के कारण प्रयोग किया जाता है । समाचार पत्रों में देखने पर सिर शर्म से झुक जाता है । छोटी-छोटी बच्चियों से बलात्कार, दहेज या अन्य किसी कारण से एक दूसरे पर अत्याचार, जिसका आश्रय या संरक्षण दिया जाता है या दिया जाना चाहिये ऐसे बच्चों, बहनों, बेटियों आदि के साथ कुकर्म निकटस्थ परिजन रिश्तेदार जिनकी जिम्मेदारी बच्चों बहनों को बचाने की होती है वे ही उन्हें बेच देते हैं। इस प्रकार शक्ति का विपरीत गमन विकृत मानसिक एवं आत्मिक भावों को पुष्टि करता है जिससे व्यक्ति शारीरिक बल का दुरुपयोग करने को बाध्य होता है ।

स्वस्थ रहने के लिये किस प्रकार का आहार ग्रहण करना चाहिये तथा विभिन्न प्रकार के आहार द्रव्य किस-किस प्रकार का प्रभाव डालते हैं । इस विषय में शास्त्रों में विस्तृत विवेचन मिलता है । इसमें एक वैदिक सूत्र है-

**आहारशुद्धौ सत्वशुद्धिः सत्वशुद्धौः ध्रुवा स्मृति ।**

शुद्ध आहार ग्रहण करने पर सत्व (मन) की शुद्धि होती है तथा उसके पश्चात स्मृति, स्थैर्य आदि श्रेष्ठ आत्मिक भावों की प्राप्ति होती है ।

आहार की शुद्धता को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है, संभवत इसीलिये पूर्व के लोग बाहर की कोई चीज नहीं खाते थे । यात्रा के दौरान भी अपना शुद्ध भोजन साथ ले जाते थे या उपवास कर लेते थे या अपना भोजन स्वयं बनाते थे । यात्रा में अपने थाली, बर्तन, स्टोव, निर्माण सामग्री आदि ढोते थे । यह सब सिर्फ भोजन अर्थात् शारीरिक संतुष्टि के लिये के नहीं बल्कि अपने मन, बुद्धि एवं विचारों की पवित्रता के लिये किया जाता था, काफी कष्ट उठाया जाता था । भोजन बनाने वाले अर्थात् माता बहिन, पाचक (रसोइया) या अन्य के मानसिक भावों का आहार पर तथा उसे ग्रहण करने वाले पर जबरदस्त प्रभाव पड़ता है यह अनेक प्रयोगों से सिद्ध हो चुका है ।

सामान्य रूप से गृहीत अन्न के स्थूल भाग से मल तथा सूक्ष्म भाव से प्रारंभिक तौर पर शरीर की आवश्यकताएँ पूर्ण होती हैं पाचित होते हुए भावी सूक्ष्मता भाव से मन की पुष्टि होती हैं तथा अंत में सूक्ष्मतम भाव, आत्मबल, स्मृति

| शारीरिक भाव | मानसिक भाव | आत्मिक भाव |
|---|---|---|
| सूक्ष्म | सूक्ष्मतर | सूक्ष्मतम |
| शारीरिक पुष्टि | इच्छाद्वेष, सुख-दुःख | निर्विकारता, धैर्य, |
| क्षतिपूर्ति | मनोद्वेग, अरति | स्मृति, आत्मबल, |
| | भ्रम, चिंतन, विचार | सहनशीलता, विवेक, |
| | | सत्कर्मों की प्रेरणा आदि |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



उर्जा उत्पत्ति आदि

इस कार्य प्रणाली की पुष्टि आचार्य चरक के एक अन्य सूत्र से भी होती है ।

**येषामेष ही भावानां संपत्संजन्येन्नरम् ।**
**तेषामेव विपद्व्याधीन् विविधान्समुदीरयेत् ।।**
**प्राणाः प्राणभृतामन्नं तदयुक्त्या निहन्त्यसून् ।**
**विषं प्राणहरं तच्च युक्तियुक्तं रसायनम् ।।**

उत्पादक भाव की श्रेष्ठता उनके द्वारा उत्पन्न भावों में अभिव्यक्त होती है । उत्तम भावों से उत्तम तथा विकृत भावों से विकृति या विविध व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं । जैसे प्राणियों के प्राणों का आधार अन्न-सम्यक् अवस्था में श्रेष्ठ शरीरस्थ व अन्य भावों को उत्पन्न करता है तथा विकृत अवस्था में अनेक रोगों को (शारीरिक, मानसिक व आत्मिक) उत्पन्न करता है ।

उत्कृष्ट आहार → उत्तम शारीरिक भाव → उ०मानसिक एवं आत्मिक भाव

निकृष्ट आहार → हीन शारीरिक भाव → विकृत मानसिक व आत्मिक भाव

**निष्कर्ष :-**

1. आचार्यों ने भोजन विषयक कई महत्वपूर्ण सूत्र बताए हैं । एक स्थान पर 'कोऽरूक' (कौन निरोग है ?) इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं - 'हितभुक मितभुक् ऋतभुक' अर्थात् हितकर अन्नग्रहण करने वाला व्यक्ति अल्प भोजन ग्रहण करने वाला तथा ईमानदारी, सच्चे व सात्त्विक कमाई से सम्प्राप्त अन्न । शुद्ध एवं पवित्र अन्न शरीर की सम्पूर्ण शक्ति को बढ़ाते हैं ।
2. सर्व्वरसाभ्यासः बलकराणां श्रेष्ठः । एक रसाभ्यास बलहराणां श्रेष्ठः ।।
सम्पूर्ण शरीर के लिये हितकारी सभी रसों से युक्त आहार होता है । जिव्हा मात्र को अच्छा लगने वाला एकांगिक भोजन सभी प्रकार के बल को घटानेवाला होने से अहितकर, निन्द्य व त्याज्य होता है ।
3. सकारात्मक प्राणिक ऊर्जा युक्त भोजन सदैव हितकर होता है जैसे - अंकुरित अन्न, कूष्माण्ड, घिया, मूंगफली, शहद और ऐसे बहुत से आहार द्रव्य ।
4. नकारात्मक प्राणिक ऊर्जा वाले अन्न मानसिक व आत्मिक भाव को अधिक प्रभावित करते हैं जैसे - हींग, प्याज, लहसुन, बासी अन्न, विरुद्धाहार, अपथ्य, पान-मसाला आदि अतः इससे बचना चाहिये ।
5. तथाकथित मृदुपेय (Soft Dirnks) एवं कठिन पेय (Hard Dirnks) के स्थान पर नींबू शिंकजवी, पन्ना शर्बत, ब्राह्मी शर्बत, चंदन, बादाम, चिंचा पानक, खर्जूरादि मन्थ, नीरा, नारियल जल, तक्र, लस्सी साधारण जल बेहतर व उत्तम हैं ।

बैद्यनाथ
आयुसिड
अम्लपित, उदरशूल एवं कब्जियतनाशक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अष्टांग संग्रह के सन्दर्भ में अतिसार

डा० अनूप कु० गक्खड़ एवं कामिनी सैनी

- अतिसार रोग में स्नान का निषेध है । (सू० 3/75)
- बकरी का दूध अतिसार को नष्ट करनेवाला होता है । (सू० 6/57)
- मधु अतिसार को नष्ट करनेवाला है । (सू० 6/98)
- तिल के कल्क के साथ बनाया गया उपेदिका का शाक अतिसार को पैदा करता है । (सू० 9/17)
- अतिसार रोग से ग्रस्त प्राणी को दिन में सोना सात्म्य है। (सू० 9/46)
- अतिसार रोग में कुटज का प्रयोग कहा गया है । कुटजो अतिसृतो । (सू० 22)
- विसूचिका में अतिसार आदि रोग होते हैं । (सू०उ० 56)
- विसूचिका में पित्त अतिसार आदि होता है । (सू० 11/16)
- दुर्बल अथवा मन्द अग्नि वाले, अधिक कफ वाले, वायु, मूत्र पुरीष के वेग को रोकनेवाले का अन्नपान वायु द्वारा दूषित एवं कफ द्वारा अवरुद्ध मार्ग वाला हो जाता है तो छर्दि एवं अतिसार के रूप में नहीं निकलता। (सू० 11/17)
- अतिसार में अनुलोमन (विरेचन) करने का विधान है। (सू० 12/9)
- हरीतकी अतिसार को शांत करती है । (सू० 12/42)
- शकृत वृद्धि से उत्पन्न रोगों में अतिसार के समान उदर शोधन तथा जठराग्नि दीपन आदि चिकित्सा करनी चाहिए । (सू० 19/115)
- पुरीष तथा मूत्र में स्थित वातादि दोष जिन रोगों को उत्पन्न करते हैं, उनका वर्णन मूत्राघात और अतिसार आदि के रूप में किया जाएगा । (सू० 19/29)
- सुश्रुत के अनुसार अतिसार में क्रम से सर्वप्रथम पित्त को, फिर कफ को तत्पश्चात् वायु को जीतना चाहिए। (सू० 21/23)
- अन्य आचार्यों का कथन है कि ज्वर और अतिसार की चिकित्सा में प्रथम कफ की, फिर पित्त की और अन्त में वायु की चिकित्सा करनी चाहिए । (सू० 21/25)
- महास्त्रोतस्, शरीरमध्य, महानिम्न, आमपक्वाशयाश्रय, कोष्ठ तथा अन्तराभ्यन्तर रोगमार्ग के छः पर्याय हैं । इनका आश्रय लेकर अतिसार आदि रोग होते हैं । (सू० 22/15)
- अर्शरोग, गुल्मरोग, उदररोग, अतिसार और ग्रहणी रोग का कारण बनता है । (सू० 22/16)
- अतिसार वालों को पहले प्रायः दीपन-पावन से लंघन करना चाहिए । (सू०24/14)
- अतिसार से ग्रस्त व्यक्ति को हृस्व मात्रा का सेवन करना चाहिए। (सू० 25/24)
- अतिसार में स्तंभन औषधि देनी चाहिए । (सू० 26/24)
- अतिसार रोग में वमन कराना चाहिए । (सू० 27/6)
- अतिसार रोग में विरेचन नहीं कराना चाहिए । (सू० 27/10)
- आमातिसार से पीड़ित व्यक्ति आस्थापन के अयोग्य हैं। (सू० 28/11)
- पक्वातिसार में भी पुटपाक कहा गया है । (सू० 33/9)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Efficacy of Mansyadi Kwath Shirodhara in Essential Hypertension

* Vd. Meghana Nimbkar ** Vd. Mukesh Shaukla *** Vd. Hariprasad Sharma

In general, Hypertension is defined as a persistent rise in systolic blood pressure above 140 mm of Hg and diastolic blood pressure above 90 mm Hg.

Hypertension is a major contributing factor for the development of cardiovascular disease, cerebrovascular disease and renal disease.

Thus, there is now a much greater awareness of all the risk factors associated with hypertension in both developed and developing countries.

Ayurveda, the ancient Indian system of medicine describes any disease as a disequilibrium of doshas and dhatus. Thus, any therapeutic procedure in Ayurveda primarily aims to reachieve a stage of equilibrium of doshas and dhatus.

There is no direct reference to hypertension in ancient Ayurvedic texts. But diseases described like pittavruta vata, raktagata vata, siragata vata, dhamnipratichay show symptoms similar to those occurring in hypertension.

Thus, accordingly hypertension can be regarded as disequilibrium of Pran and Vyan Vayu, Sadhaka Pitta and Ras-Rakta Dhatu.

The samprapti or aetiopathology of hypertension can be summarized as follows:

1) **Dosha :-** Vata Pitta :-
   Vyan Vayu gunataha karmataha vruddhi,
   Pran Vayu gunataha karmataha vruddhi
   Sadhaka pitta gunataha vruddhi karmataha kshaya
2) **Dushya :-** Rasa, Rakta
3) **Adhishtan :-** Hrudaya, Dhamani
4) **Strotas :-** Rasavahastrotas
   Raktavahastrotas
5) **Sancharsthan :-** Rasavahastrotas
6) **Vyaktisthan :-** Rasavahastrotas
   Pranavahastrotas
7) **Strotodushti :-** Sanga, Vimargagaman
8) **Rogmarg :-** Madhyama
9) **Swabhav :-** Ashukari
10) **Sadhyasadhyatva :** Kashtasadhya

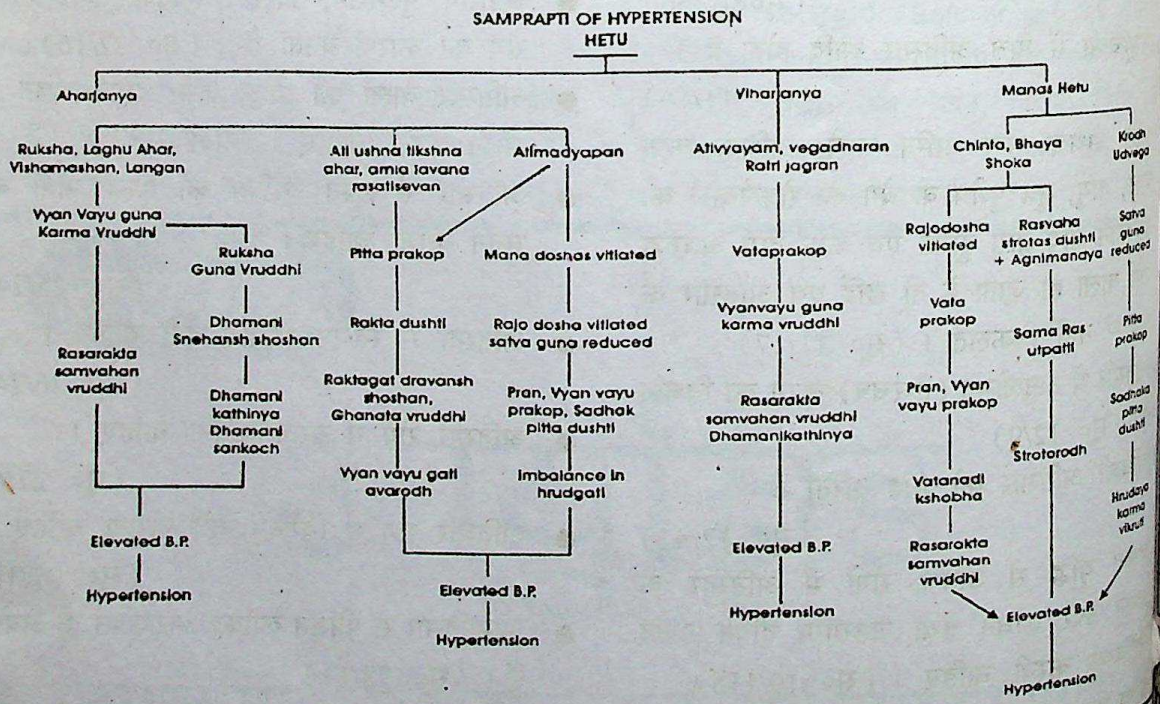


* P.G. Scholar, Dept. of Kayachikitsa, Smt. K.G.M.P. Ayurved Hospital & College, Mumbai - 2
** Lecturer, Dept. of Kayachikitsa, Smt. K.G.M.P. Ayurved Hospital & College, Mumbai - 2
*** Principal, Smt. K.G.M.P. Ayurved Hospital & College, Mumbai - 400 002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Efficacy of Mansyadi Kwath Shirodhara in Essential Hypertension

Among all therapeutic procedures, Shirodhara is considered as a major line of treatment in hypertension. This procedure has been traditionally used to treat stress related disorders.

Mansyadi kwath has been described in Siddha Yog Sangraha to be effective on hysteria, mania and other anxiety related disorders.

Research has shown that stress, emotional imbalance is a contributing factor in the aetiopathogenesis of hypertension.

Thus, with this referece, Mansyadi kwath Shiodhara was formulated to treat hypertension.

**Selection of Patients :-** 30 patients were randomly selected from the IPD of Smt. K.G.M.P. Ayurvedic Hospital Mumbai. Patients having stage I(Mild) and stage II (Moderate) essential hypertension were included in the study. Patients suffering from diabetes, renal disease, hyperlipidaemia were excluded from the study.

## MATERIAL AND METHODS :-

The contents of Mansyadi kwath are as follows :-

Jatamansi 192 gm
Ashwagandha 48 gm
Khurasani ajawayan 12 gm

All the three drugs were mixed in the proportion mentioned above and were coarsely ground. Kwath was prepared from this mixture as per the kwath procedure mentioned in the texts.

Shirodhara of this kwath was administered to all the patients daily in the morning for 16 days. Approximately 1-1½ lt of kwath has used everyday per patient.

Symptoms were noted down and graded on a scale of 0-3 according to severity before and after shirodhara. Blood pressure was measured before and after treatment.

The results obtained were as follows :

**SYMPTOMWISE :-**

| Sr.No. | Symptom | Graded Points | | Symptom relief percentage |
|---|---|---|---|---|
| | | Bf.Tt. | Af.Tt. | |
| 1. | Shirahshool | 52 | 15 | 71.16% |
| 2. | Bhrama | 47 | 17 | 63.83% |
| 3. | Anidra | 52 | 13 | 75% |
| 4. | Netralalima | 11 | 5 | 54.55% |
| 5. | Hrutspanda | 33 | 17 | 48.49% |
| 6. | Pipilikasancharanvat vedana | 47 | 21 | 55.32% |
| 7. | Urahshool | 23 | 12 | 47.83% |
| 8. | Shirogaurav | 43 | 17 | 60.47% |

**BLOOD PRESSUREWISE :-**

**1) Systolic B.P.**

| B.P. Reduction | No of Pts. | Percentage |
|---|---|---|
| 0-10 mm Hg | 1 | 3.33% |
| 10-15 mm Hg | 11 | 36.67% |
| > 15 mm Hg | 18 | 60% |

The observed 't' value for Systolic B.P. is 9.37; $p<0.01$. Hence the change due to drug is highly significant.

**2) Diastolic B.P. :-**

| B.P. Reduction | No of Pts. | Percentage |
|---|---|---|
| 0-10 mm Hg | 7 | 23.33% |
| 10-15 mm Hg | 16 | 53.33% |
| > 15 mm Hg | 7 | 23.33% |

The observed 't' value for Diastolic B.P. is 15.17; $p<0.01$. Hence the change due to drug is highly significant.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**CONCLUSION :-**

1) Mansyadi kwath shirodhara promotes mana prasadan and indriya prasadan. Thus, it acts on the vitiated pran vayu balancing the vitiated vyan vayu and reduces elevated blood pressure levels.
2) It improves functioning of sadhak pitta by enhancing the satva guna of mind. It also reduces the vitiated rajo dosha of mind. Thus overactivity of the sympathetic nervous system is reduced causing vasodilatation and reduction of blood pressure level.
3) It improves circulation of blood to the bra thereby, leading to correction of the circulatio to heart. Thus, it has an effect on the cardi contractility leading to reduction in heart ra and causing vasodilatation.
4) Mansyadi kwath shirodhara has pittashama and rasa rakta prasadak properties. It reduc rasa dushti and promotes the formation prakrut, soumya, rasa. This promotes prop nourishment to the heart, thereby, balanc the systemic circulation and reducing blo pressure levels.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Effect of Sunthyadi Churna - a herbal compound in the Management of Amavata (Rheumatoid Arthritis)

*T. Maheswar ** S.N. Murthy *G.Venkateshwarlu *Kiran V Kale ***M.M.Jumle

Sunthyadi Churna - a combination of Sunthi and Haridra was studied for clinical evaluation of its efficacy on Amavata (Rheumatoid Arthritis). A total number of 20 diagnosed cases of Amavata were studied and the response of treatment was analysed on the basis of improvement in clinical signs and symptoms. The response to the treatment was encouraging with statistically significant (P<0.0001) results.

**Introduction**

Amavata is a chronic multi system disease characterized by fever, stinging pain and swelling in multiple joints, loss of appetite, constipation, body pain, weakness, heaviness of body etc. It is caused by constant use of incompatible food and irregular activities resulting in the formation of 'Ama' and gets circulated throughout of body by vyanavayu and accumulates at shleshma sthanas viz sandhi, urah, sirah, kantha, etc leading to manifestation of the disease. The disease is progressive in nature and results in the development of contracture and deformity. Due to the similarity of clinical manifestations the disease Amavata can be correlated with Rheumatoid Arthritis of modern medical science.

The Ayurvedic approach in the management of Amavata is mainly based on aetiopathogenesis of the disease. As the 'Ama' and 'Vayu' are playing an important role in the pathogenesis the disease, the classics given prime importance towards amapachana, and vata shamana therapy. On the basis of classical references and recent claims the formulation Sunthyadi Churna (Combination of two drugs Sunthi Churna 3 parts and Haridra Churna 1 part) was selected and studied to establish its effect on Amavata (Rheumatoid Arthritis).

**Material and methods.**

A total number of 20 diagnosed patients amavata (R.A) were selected from the O.P.D. of Smt. Laxmidevi bajaj hospital, Shri Ayurved Mahavidyalaya, Nagpur and Regional Research Institute (Ayurveda) Nagpur. These patients were studied with Sunthyadi Churna 2gms thrice daily with luke warm water for two months followed up at every 15 days. The method of study was based on inclusion and exclusion criteria, periodic observations and assessment of results.

**Criteria for selection of patients:**

**Inclusion Criteria**

A. Age between 20 to 70 years
B. Chronicity more than 6 weeks duration
C. Morning stiffness
D. Arthritis of three or more joints.
E. Arthritis of hand joints.
F. Symmetric arthritis
G. Subcutaneous nodules over bony prominence (rheumatoid nodules)
H. Typical radiographic changes of involoved joints include erosions or bony decalcification of localized or adjacent to the affected joints.
I. Positive test for Rheumatoid Factor.

**Exclusion Criteria**

a. Age below 20 and above 70 years.
b. Patients who develop secondary complication of disease e.g. Pleuropericardial disease, severely damaged joints with bed ridden patients.
c. Any Other serious systematic illness e.g. Hepatic/Renal failure etc.
d. Patient with diagnosed other arthritis like gouty Arthritis, psoriatic arthritis, tuberculus arthritis, arthrtis with malignancy, ankylosing Spondylitis etc.
e. Patient receiving any other treatment.

**Source of drugs**

The drug Sunthiyadi Churna was prepared in the Department of Rasa Shastra and Bhaishajya Kalpana, Shri Ayurved Mahavidyalaya, Nagpur.

**Laboratory Investigations**

R.A. Factor (Latex, fixation test), E.S.R. and other routine pathological, biochemical

* Research Officer (Ayurveda) ** Asstt. Director, Regional Research Institute (Ay.),
*** Principal, Shri Ayurveda Mahavidyalaya, Nagpur.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



investigations of blood for TLC, DLC, Hb%, sugar, routine and microscopic investigation of urine and stool was carried out before and after the treatment.

**Criteria for assessment of response of the therapy**

Assessment of the results were made mainly on the basis of relief in clinical symptomatoloty of the disease. For this a score system was evolved assigning points according to the involvement and severity of various findings which were recorded before treatment, periodical at 15 days interval and after the treatment. The results were classified into four groups.

1. **Good Response**
   - 75% and above relief in symptomatology.
   - Significant improvement in the well being of the patients.
   - Laboratory parameters tending towards normalcy.
2. **Fair Response**
   - 50% and more improvement in symptoms and signs of disease intially recorded.
   - Satisfactory improvement in the well being of the patients.
   - Improvement in the joints in respect of swelling, pain and movement.
   - Significant improvement in laborator findings.
3. **Poor Response**
   - 25% and above improvement in present symptomatology.
   - Insignificant improvement in laborato parameters.
4. **No Response**
   - No Relief in symptomatology and n improvement in laboratory parameters.

**Observation and Results**

The detailed data in respect of variou parameters viz. Age, Sex, Duration of illnes Sharira and Manasika Prakriti, Body Weig incidence of various Clinical findings observe during the study and the overall response of th formulation Sunthyadi Churna are as follows:

**Details of data in respect to various parameter observed during the study**

**Incidence of Age and Sex**

In the parent study it was observed tha the patients belonging to age group 31 to 40 year (40%) followed by 41 to 50 years (35%) we maximum sufferers of the disease Amavata and was also observed that females (70%) we affected more than males (Table 1).

**Table - 1 Distribution of cases according to age and sex.**

| Sr. No. | Age Group (Years) | No. of Patients | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | Male | Female | Total | Percentage |
| 1 | 21-30 | 00 | 01 | 01 | 05% |
| 2 | 31-40 | 03 | 05 | 08 | 40% |
| 3 | 41-50 | 01 | 06 | 07 | 35% |
| 4 | 51-60 | 02 | 02 | 04 | 20% |
| 5 | 61-70 | 00 | 00 | 00 | 00% |
| | Total | 06 (30%) | 14 (70%) | 20 | 100% |

**Duration of illness :**

As regards to chronicity of disease, more number of patients i.e. 65% were observed up to 1 year duration than other categories. (Table 2)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**Table - 2 Distribution of cases according to duration of illness**

| Sr. No. | Duration of illness | No. of Patients | Percentage |
|---|---|---|---|
| 1. | up to 180 days | 06 | 30% |
| 2. | 181 days to 1 year | 07 | 35% |
| 3. | 1 to 2 years | 05 | 25% |
| 4. | 2 to 3 years | 02 | 10% |
| 5. | 3 to 4 years | 00 | 00% |
| 6. | 4 to 5 years | 00 | 00% |
| | Total | 20 | 100% |

**Prakriti of Patients**

Prakriti examination of the cases in this study shows the predominance of Vatakapha type o Prakriti Patients (50%) were more prone to the disease Amavata followed by Pittakaphaj Prakriti (Table 3). In regard to Manasika Prakriti Satvatamo predominance patients (55%) followed by Rajotamo patients are more prone to this disease. (Table 3)

**Table - 3 Incidence of Sharira prakriti**

| Sr. No. | Manasika Prakriti | No. of Patients | Percentage |
|---|---|---|---|
| 1. | Satva | 00 | 00% |
| 2. | Rajo | 00 | 00% |
| 3. | Tamo | 03 | 15% |
| 4. | Satvrajo | 01 | 05% |
| 5. | Rajotamo | 05 | 25% |
| 6. | Satvtamo | 11 | 55% |
| | Total | 20 | 100% |

**Body Weight**

Distribution of body weight shows that more number of cases i.e. 50% was observed in between 41 to 50 Kg. (Table 5)

**Table - 5 Distribution of body weight**

| Sr. No. | Range of Weight In kg | No. of Patients | Percentage |
|---|---|---|---|
| 1. | 31- 40 | 4 | 20% |
| 2. | 41- 50 | 10 | 50% |
| 3. | 51- 60 | 6 | 30% |
| 4. | 61- 70 | 0 | 0% |
| 5. | 71- 80 | 0 | 0% |
| | Total | 20 | 100% |

**Clinical findings**

In the present study it was observed that pain, swelling, tenderness, morning stiffness, loss of appetite, anorexia, were present in all the patients (100%), fever observed in 75% cases. whereas subcutaneous nodules and deformity observed in less number of cases. (Table 6)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**Table - 6 Distribution of various clinical findings**

| Sr. No. | Clinical Findings | No. of Patients | Percentage |
|---|---|---|---|
| 1. | Pain | 20 | 100% |
| 2. | Swelling | 20 | 100% |
| 3. | Tenderness | 20 | 100% |
| 4. | Morning stiffness | 20 | 100% |
| 5. | Restriction of Joint movement | 20 | 100% |
| 6. | Muscle weakness | 15 | 75% |
| 7. | Fever | 14 | 70% |
| 8. | Subcutaneous nodules | 6 | 30% |
| 9. | Loss of appetite | 20 | 100% |
| 10. | Anorexia | 20 | 100% |
| 11. | Constipation | 14 | 70% |
| 12. | Deformity | 5 | 25% |
| 13. | R A Positive | 14 | 70% |

**Effect of Sunthyadi Churna on Amavata (R.A.)**

The overall response of Sunthyadi Churna therapy was observed as, out of 20 cases 03 (15% cases have shown good response, 06(30%) cases shown fair response, 04(20%) cases shown poo response, and 04(20%) cases have not responded for therapy (Table 7)

**Table - 7 Overall response of Sunthyadi Churna on Amavata (R.A.)**

| Sr. | Drug | Result of treatment | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | Good Response | Fair Response | Poor Response | No Response | Total Response |
| 1. | Sunthyadi churna | 03 (15%) | 06 (30%) | 07 (35%) | 04 (20%) | 20 (100%) |

**Table - 8 Effect of sunthyadi churna on R.A. factor**

| Sr. | R. A. factor | No. of Patients | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | Before Treatment | Percentage | After Treatment | Percentage |
| 1. | Positive | 14 | 70% | 12 | 60% |
| 2. | Negative | 06 | 30% | 08 | 40% |
| | Total | 20 | 100% | 20 | 100% |

From the above two tables it was observed that with Sunthyadi Churna out of 14 cases only cases became R.A. Negative



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Table - 9 Effect of sunthyadi churna on E.S.R.

| Sr.No, | E.S.R. (mm/1st hour) | No. of Patinets | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | Before Treatment | Percentage Treatment | After | Percentage |
| 1 | 71 and above | 4 | 20% | 2 | 10% |
| 2 | 41 to 70 | 8 | 40% | 6 | 30% |
| 3 | 21 to 40 | 6 | 30% | 8 | 40% |
| 4 | 00 to 21 | 2 | 10% | 4 | 20% |
| | Total | 20 | 100% | 20 | 100% |

The above table shows that the drug Sunthyadi Churna was effectively reduces the ESR Amavata patients.

Statistical analysis of results

T-Test Paired Samples Statistics

| | | N | Correlation | Sig. |
|---|---|---|---|---|
| Pair 1 | BT & AT | 20 | .375 | .103 |

Paired Samples Statistics

| | | Mean | N | Std. Deviation | Std. Error Mean |
|---|---|---|---|---|---|
| Pair 1 | BT | 378.25 | 20 | 82.045 | 18.346 |
| | AT | 189.10 | 20 | 88.735 | 19.842 |

Paired Samples Test

| | | Paired Differences | | | | | t | df | Sig. (2-tailed) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | Mean | S.D. | S.E. | 95%Confidence Interval of the Difference | | | | |
| | | | | | Lower | Upper | | | |
| Pair 1 | BT — AT | 189.15 | 95.614 | 21.380 | 144.40 | 233.90 | 8.84 | 19 | .000 |

Ho : mean (btscore - atscore) = mean (diff) = 0

Ha : mean (diff) < 0 Ha : mean (diff) ! = 0 Ha : mean (diff) > 0

t = 8.8471 t = 8.8471 t = 8.8471

P < t = 1.0000 P> ltl = 0.0000 P> t = 0.0000

The result of Sunthadi Churna is significantly effective and P value at 0.0001

Discussion

In Ayurveda a unique aetiopathogenesis of Amavata has been described, which explains formatio



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



f 'Ama' (a toxic substance), due to Agnimandhya, aused by improper food and activities, is the main esponsible factor for this disease. As the 'Ama' ue to Agnimandhya is the main aetiological factor nd hence the efforts are directed towards nproving 'Jataragni' and to bring 'Amvastha' to irama' stage. When the 'Ama' stage is over, comes ne next step is to pacify the vitiated 'Vata' dosha. rugs which possess katu, tikta rasa and deepana ualities are useful for Amapachana and to ncrease Agnibala. These drugs will have Vedana hamana (Analgesic) and Sothahara (Anti nflammatory) properties. The drugs possessing aghu, ruksha & teekshna gunas are contradictory o the properties of Ama as well as kapha dosha, which are predominant in Amavata, hence ushna eerya, alleviates the pain and reduces swelling s well as stiffness of the joint.

Hence it is obvious that the ingredients of unthyadi Churna (Sunthi, and Haridra) which ossessess all the above qualities could be esponsible for the better results on Amavata atients. Sunthi is considered as best Agnidipana nd Amapachaka due to its katu rasa, ushna eerya, it alleviates kapha and vata dosha, hence has Sothahara (anti inflammatory) and Vedana thapana (analgesic) properties. More over, the arlier studies demonstrated a dose dependent nhibition of prostaglandin; during inflammation in ats (Mascolo et al).

Apart from the Sunthi, Haridra has tikta, atu rasa, rusksha, laghu guna, ushna veerya and atu vipaka. It has Shotha hara and Vedana thapana properties. Recent studies on Haridra also howed potent Anti-inflammatory activity (Sharma t al 1965, Arora et al 1971), Anti arthritic activity f volatile oil (Dinesh chandra, Gupta 1972). Tripathi t al (1973) investigated anti inflammatory activity vith reference to the inhibition of protease esponsible for acute inflammatory process. Further tudies revealed that the extracts of petroleum ether, alcohol, water showed significant anti infiammatory activity in both exudative and proliferative inflammation. All the extracts showed the presence of steroids and it is likely that presence of steroids are responsible for the anti inflammatory activity. The presence of curcumin alcoholic and water extract may also be contributing to its anti inflammatory activity. In carragenin induced oedema, 80mg/kg of the water extract, almost completely suppressed inflammation. In the granuloma pouch method, the water extract was the most potent and its activity was similar to that of hydrocortisone. In the cotton pellet test, the petroleum ether extract was most potent and the activity was similar to that of indomethacin (Pharmacognosy of indigenous medicine). Hence the combined properties of Sunthi and Haridra could be the reason for having good results with Sunthyadi Churna on Amavata patients.

**Conclusion :**

As the herbal compound Sunthyadi Churna (Sunthi and Haridra) shows statistically significant ($P < 0.001$) results it can be effectively employed for the management of the painful disease Amavata (Rheumatoid Arthritis).

**Acknowledgements**

The authors are thankful to the Director C.C.R.A.S. for giving permission and guidance for this study.

**References**

1. Charaka Samhita, Acharya Agnivesh, 11th edition, Commentary by Kashinath Shastri and Dr. G.N. Chaturvedi, Chaukhambha Bharati Academy, Varanasi, 1983.
2. Astanga Hridaya, Acharya Vagbhata, edited with Vidyotini Hindi Commentary by Atridev Gupta Edited by Yadunandan Upadhyaya, Chaukhamba Sanskrit Sansthan, Varanasi, 1984.
3. Bhavaprakash, Bhavamisra, Vidyotini Hindi Commentary, Chaukhambha Sanskrit Series, Varanasi, 1961.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




4. Drayaguna Vignan, Prof. P.V. Sharma, Chaukhambha Bharati Academy, Varanasi 1999.
5. Madhava Nidanam (Roga Vinischaya), Prof. K.R. Srikanta Murthy, Chaukhambha Orientalia, Varanasi, 5th edition, 2003.
6. Kaya Chikitsa – Prof Ramaharsha Singh, Chaukhambha Sanskrit Pratishtan, Delhi, First edition, 2001.
7. The Ayurvedic Pharmacopoeia of India, Dept. of ISM & H, Ministry of Health and Family Welfare, Govt. of India, 1st Edition 2001.
8. Data base on Medicinal Plants used in Ayurveda by P.C. Sharma, M.B. Yelne, T.J. Dennis, Published by CCRAS, New Delhi, 2001.
9. API Text book of Medicine, G.S. Sainani, published by Association of Physicians of India, Mumbai, 1999.
10. Further clinical evaluation of Sunthi Guggul in the treatment of Amavata, Kishore P. Padhi M.M., JRAS, Vol IX, 1988.
11. The Wealth of India - ICMR, New Delhi - 1988
12. Pharmacognosy of Indigenous drugs - K. Raghunathan and Miss Roma Mitra, CCRAS New Delhi - 1982.
13. Role of Ayurvedic line of treatment in Amavat (Rheumatoid Arthritis) Dr. L.K. Sharma, Dr. G. Prasad et al 2001.
14. Harrison's principles of Internal Medicine, 15 Edition, Mc Graw - hill Medical publshin division, USA, 2001.
15. Clinical Study on the treatment of Amavat with compound Ayurvedic Preparation, M.N.S Nambudri et al., JRAS, Vol V No. 1-4 December 1984.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Rasa Shastra - An Expansion of Rasayana Therapy

* Dr. Sri Durga **Dr. K.R.C. Reddy

*Ayurveda* is the science of life. This holistic science has two fold objectives viz. 1) to maintain the health of a healthy person. 2) to treat the sick person. The entire science of *Ayurveda* is framed in *Tri Sutras (Hetu, Linga* and *Aushadha*). *Aushadha* is the most important amongst them and plays an important role in the alleviation of disease as well as maintenance and promotion of health. Plants, animals and minerals are the three main sources of drugs material.

Revolutionary changes occurred in the field of medicine from time to time. The introduction of *Rasoushadhis* (mineral and metal based medicines) in the field of Ayurvedic therapeutics is also a consequence of these changes. Earlier, herbs were extensively used due to their easy availability and processing techniques. But later on the therapeutic values of mineral materials were also identified and they occupied an important place in therapeutics. The use of minerals and metals in therapeutics can be seen from the *Samhita* period, but their use was very much limited. They were mainly administered in purified and *Ayaskriti* forms. The main cause for the limited use of mineral materials is their toxic nature. But later on in the medieval period, various specialized processing techniques like *Shodhana, Samskara, Jarana, Murchchana, Marana* etc. have been developed which rendered these mineral materials nontoxic and converted them into colloidal state, adaptable, absorbable and assimilable forms. This medieval period is considered as the golden period of *Rasa Shastra*.

*Rasa Shastra* is a science dealing with mercury and other minerals and metals. Mercury is the chief material of *Rasa Shastra* and is considered as the soul of *Rasa Shastra*. The ultimate aim of *Ayurveda* and *Rasa Shastra* is to attain salvation. But the science of *Rasa Shastra* recognized the importance of having the knowledge of salvation during lifetime. This concept of *Rasa Shastra* is well known by the term *"Jeevanmukti"* in the language of *Rasa* literatures. It has been said in *Rasarnava:* "If the destruction of the body is only considered as salvation, even a donkey can attain salvation. Therefore a person should preserve his body by making it stable and strong by using *Rasa* (mercury) and *Rasayana Oushadhis"*. Thus it is clear that the science of *Rasa Shastra* gave utmost importance to *Rasayana* drugs.

*Parada* (mercury) is said to possess the best Rasayana qualities. Apart from it, many other materials of *Rasa Shastra* like *Abhraka, Vaikranta, Manahshila, Swarna, Rajata, Kantaloha* etc are claimed to possess good *Rasayana* qualities. The science of *Rasa Shastra* was developed to explore *Rasayana* qualities of these mineral materials. These are used in the form of *Bhasma, Sindura, Parpati, Pottali, Sattva, Druti Kharaliya* etc.

After incineration these materials are claimed to be converted into colloidal state i.e. which easily mix with the *Rasa Dhatu* of the body. If administered properly, they eradicate dreadful diseases. If consumed regularly for longer durations, they make the body stable and strong and also prevent the onset of diseases and senility. (RRS 6/139)

Thus it is clear from the above-mentioned facts that the branch of *Rasa Shastra* flourished with the aim of attaining good *Rasayana* qualities from mineral originated materials. Hence, *Rasa Shastra* can be considered as a boon of medieval period to the field of medicine. Small doses, easy administration, quick effectiveness, wide range of therapeutic efficacy and long shelf life are the superior qualities of *Rasoushadhis*, which make them occupy a prestigious and coveted place in the main stream of Ayurvedic therapeutics.

* Senior Resident ** Reader & Head, Dept. of Rasa Shastra, I.M.S., B.H.U.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Management of Madhumeha by Ahara & Vihar (Pathya-Apathya)

* Dr. Rachana Bharti **Dr. Ashvini Kumar Sharma ***Prof. Loknath Sharma

**Introduction :-**

Madhumeha is not newly known disease to the Indian system of Medicine. Ayurveda has been perhaps the earliest to give an elaborate description of this disease, its clinical features and its treatment with diet exercise and drugs. Detailed description of a number of medical conditions inciuding diabetes mellitus which is known as "Madhumeha" in the Vedic hymns written centuries before the christiam era has been given. Inclusion of Madhumeha among eight major disorders in Ayurveda (Ashtamahagad) shows the significance of the disease given by the seers.

Management of a disease by Ahar, Vihar and Aushadh is not new concept for Ayurveda but now a days less importance is being given to the diet and regimen aspect of management.

So here we wish to give emphasis on this aspect of the management by the canceptual concept.

**Diet Management of Madhumeha -**

In Madhumeha 1) Promotive (Santarpana) treatment should be given to the lean and 2) Samshodhan (evacuation) in case of patients having abundance of dosha and strength.

A person suffering from Madhumeha should consume - less of Madhur, Amla and Lavana containing substance in his diet.

More Katu, Tikta and Kashaya containing substances in daily diet as the vipaka of Katu, Tikta, Kashaya rasa in Katu (Lightness).

Less Guru and Sheeta substances which provoke kapha.

The patient of Madhumeha should take Mantha, extracts, lintus made of barley powder and light edibles, rough articles such as boiled barley, barley cakes, flour of parched grains and apupa with palatable meat soup of mudga etc. and bitter vegetables added with oil of danti and ingudi or linseed or mustard. In cereals he should use shashtika and wild rice the diet of the patient of Madhumeha that consists mainly of barley. As -

मुद्गादियूषैरथ तिक्तशाकैः पुराणशाल्यादननादतीत ।
दन्तीङ्गुदीतैलयुतं प्रमेही तथाऽतीसर्षपतैलयुक्तम् ।
सपष्टिकं स्यातृणधान्यमन्नं यवप्रधानस्तु भवेत प्रमेही ॥
सपष्टिकं स्यातृणधान्यमन्नं यवप्रधानस्तु भवेत प्रमेही ।

(Ch.Ck. 6/20-21)

Barley grain dipped in decoction of Triphala for the whole night make a saturating food taken with honey. The patient may also take them regularly mixed with vinegar for alleviation of Prameha (Ch.Ck. 6/20-21). He should use flour of parches grains, bolus and other various edibles made of barley impregnated with decoctions of drugs prescribed in Kaphaja Prameha. Various preparations of barley and the seeds of bamboo and wheat may also be used in forms similar to those of barley.

One suffering from prameha should drink water processed with drugs of salsaradi group. Khas, honey, water, triphala water or old madhwika (kind of Rum) of good type. He should eat roasted meat of animals and birds and various preparations of barley. As -

सारोदकं वाऽथ कुशोदकं वा मधूदकं वा त्रिफलारसं वा ।
सीधुं पिबेद्वा निगदं प्रमेही माध्वीकमग्र्यं चिरसंस्थितं वा ॥

(Ch.Ck. 6/46)

**Apathya for Madhumeha -**

Pramehi patient should avoid - 1) Excessive eating, 2) Gramya, Anupa, Odaka mamsa, 3) Milk, Curd, Ghee 4) Jaggery, Til, Oil, 5) Sours articles and amlapanaka, 6) Asava, Sura, Sirka (Vinegar), Kanji, 7) Sugarcane juice, 8) Preparations of rice flour, 9) Excessive water consumption.

* M.D. Scholar, Deptt. of Rog Vikriti Vigyan, ** B.A.M.S., M.D. (Ay.), Medical Officer
*** Prof. & Head, Deptt. of Rog Vikriti Vigyan, Nationai Institute of Ayurveda, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



athya Ahara for Madhumehi according to different classics

| S. N. | Pathya | Charaka | Shushruta | Asthanga Samgraha | Asthanga Hridaya | Haranchandra | Chakradutta | Bhava Prakash | Yoga ratnakara |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | Barley | + | + | + | + | + | + | + | + |
| 2. | Green gram | + | + | + | - | - | - | + | - |
| 3. | Mustard | + | + | - | - | - | - | - | - |
| 4. | Sathi rice | + | + | + | + | + | - | + | - |
| 5. | Shaali rice | + | + | + | + | + | - | + | + |
| 6. | Pigeon pea | - | + | - | - | - | + | + | + |
| 7. | Horse gram | - | + | - | - | + | + | + | + |
| 8. | Kodo | - | + | - | + | - | + | + | + |
| 9. | Masoor | - | - | - | + | - | - | + | - |
| 10. | Wheat | + | + | - | - | - | + | + | + |
| 11. | Amlaki | - | + | + | - | - | - | - | - |
| 12. | Carrot | - | - | + | - | - | - | - | - |
| 13. | Turnip | - | - | + | - | - | - | - | - |
| 14. | Kapith | - | + | + | - | - | - | - | - |
| 15. | Jambu | - | + | + | - | - | - | - | - |
| 16. | Triphala | - | - | + | + | - | - | - | - |
| 17. | Honey | + | + | + | + | - | + | - | + |
| 18. | Bitter guard | - | + | + | + | - | - | - | - |
| 19. | Vit khadhir | - | - | - | - | - | - | + | - |
| 20. | Salt | - | - | - | - | - | - | - | + |
| 21. | Pipper | - | - | - | - | - | - | - | + |
| 22. | Asav, Aarish, Sidhu | - | - | - | + | - | - | - | - |
| 23. | Tikta, Kasay rasa pradhana Shaak | + | + | + | + | - | + | + | + |
| 24. | Cow's excreta | - | + | - | - | - | + | - | - |
| 25. | Viskir, pratud Mansa | + | + | - | - | - | - | - | - |
| 26. | Jangala Mansa | + | + | + | + | - | - | - | + |
| 27. | Barley obtained by cow, horse, ass and deer's excreta | + | - | + | + | - | - | - | - |
| 28. | Less water consumption | + | - | - | - | - | - | - | - |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 29. | Rukshahar | + | - | - | - | - | - | - | - |
| 30. | Shuskahar | + | - | - | - | - | - | - | - |
| 31. | Giloya, Bakuchi, Kutki patra makoy, Neem, vrihti, Kantkari, Patol, brinjal, | - | + | - | - | - | - | - | - |
| 32. | Husk of til and Mustard | - | - | - | + | - | - | - | - |

Rasa, Guna & Karna of food and good products are equally important as protein, carbohydrates, fat and calorie value. Here tabulated information according to Ayurvedic and Modern view of Pathya articles and food products is given for Madhumeha.

| S.N. | Pathya | Rasa | Guna | Karma | Proteins (gm/100 gms) | Fats (gm/100 gms) | Carbohy drates (gm/100 gms) | Calories (Cal/100 gms) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | यव Barley (Hordium vulgare) | Madhur | Ruksha Sheet not Guru | Increase excessively vata and purish grahi, Sthirakar promotive of strength and curative of Kaph vyadhi | 11.5 | 1.3 | 70 | 335 |
| 2. | यवकोरदुष श्यामाक Sanwa millet alongwith common millet (बाजरा) (Paspalum scrobiculatum and Echinochloa frumentacea) | Kashaya Madhur | Laghu Sheet | Vat stimulant diminishes Kapha and Pitta, grahi | 11.6 | 5.0 | 67.5 | 356 |
| 3. | मुद्ग (Green gram) Vagha radiata | Kashaya Madhura | Ruksha Sheet Vishad, laghu | Curative of kapha and Pitta | 24.5 | 12 | 60 | 350 |
| 4. | कुलत्थ (Horse gram) | Kashaya | Ushna | Corrective of Kapha and Vata grahi beneficial in Swas, Kas, Hicca, Arsha | 22 | 0.5 | 57.2 | 336 |
| 5. | Patola (wild snake gourd) | Tikta | Shita | Regulators of Kapha and Pitta | 1.4 | 0.3 | 4.0 | 24 |
| 6. | Vartak (Brinjal) | Tikta | Shita | Regulators of Kapha and Pitta | 1.4 | 0.3 | 4.0 | 24 |
| 7. | फल्गु (Common fig) Ficus carica | Shita | Guru | Tarpana, Brihan, Vishtambhi | 1.3 | 0.2 | 7.6 | 37 |
| 8. | बिल्व (Bael) - immature Aegle marmelos | Snigdha | Ushna | Digestive stimulant curative of Kapha & vata | 10.8 | 0.3 | 31.8 | 137 |
| 9. | जम्बूफल (Black berry)- fully ripe | Amla Kashaya, Madhur | | Raktapitta, increase Pitta Subdues Vata & increase Mansa, Shukra & Strength | 0.7 | 0.3 | 14.0 | 62 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| S.N. | Pathya | Rasa | Guna | Karma | Proteins (gm/100 gms) | Fats (gm/100 gms) | Carbohy drates (gm/100 gms) | Calories (Cal/100 gms) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 10. | सिंचितिका (Apple) Malus pumida | Kashaya Madhura | Shita | Grahi | 0.2 | 0.5 | 13.4 | 59 |
| 11. | नारंगफल (Common orange) Citrus reticulata | Madhur Slightly Amla | Guru | Hridya, difficult to digest, curative of vata | 0.7 | 0.2 | 10.9 | 48 |
| 12. | जम्बीर (lemon) | Amla | Teekshna fragrant | | 0.6 | 0.7 | 8.2 | 42 |
| 13. | Mulaka-tender (radish)-overgrown Raphanus sativus | | | Ally humoral disordance causes tri humoral discocordance cure vata | 0.7 | 0.1 | 3.4 | 17 |
| 14. | तक्र (Butter milk) | Amla Kashaya | Laghu | To be administered in shotha, mutraghat, arsh, grahni, anaha, Mandagni, Pandu and Visha | 0.8 | 1.1 | 0.5 | 15 |
| 15. | Madhu (Honey) | Kashaya madhura | Guru, sheet Ruksha | Provacative of Vata curative of raktapitta and Kapha sandhankar | 0.3 | - | 79.5 | 319 |

**/ihar (Regimen) in Madhumeha -**

Pramehas disappear quickly by the use of various physical excercises (including Yogasans) profuse anointings, baths, sprink/sings of water and paste of Usira, twaka, ela, aguru chandan. Much importance is given to physical exercise in the management of madhumeha. The patients of madhumeha who have no money (for his treatment) should go on walk (by foot) of one hundred yojanas (800-900 miles approx, in his life time) without making use of an umbrella and good wear, adhering to the way of life of an ascentic (disciplined and hard life) of dig a reservoir of water by himself or wander along with a heard of cow's subsisting on the dung, urine etc. of the cows. (A.H. 2/36-37).

Now a days a healthy person should walk atleast 5 km/day as prophylaxis for many diseases along with madhumeha. Before beginning an exercise program, the individual with diabetes mellitus should undergo a detailed medical evaluation with appropriate diagnostic studies. This examination should carefully screen for the presence of macro & microvascular complications that may be worsened by exercise. A careful medical history & physical examination should focus on the symptoms and signs of disease affecting the heart, blood vessels, eyes, kidneys and nervous system.

Main features of the metabolic adaptation to moderate exercise

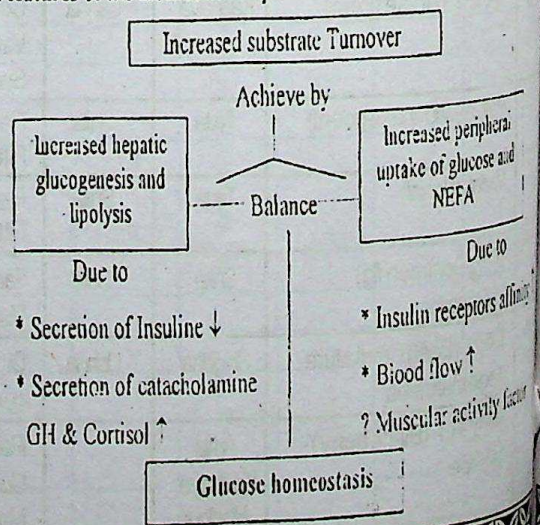




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**YOGASANA -**

Following yogansanas are important for the patients of Madhumeha -

1) Padmaasan 2) Matsyendrasan
3) Matsyasna 4) Mayurasan
5) Bhujangasan 6) Sarvangasan
7) Garbhasan 8) Ardha Mastsyendrasan
9) Shirshasan

mudga etc. and bitter vegetables added with oil of danti and ingudi or linseed or mustard. In cereals. He should use shashtika and wild rice the diet of the patient of Madhumeha should consist mainly of barley. As-

मुद्गादियूषैरथ तिक्तशाकैः पुराणशाल्योदननाददीत ।
दन्तीङ्गुदीतैलयुक्तं प्रमेही तथाऽतीसर्षपतैलयुक्तम् ॥
सषष्टिकं स्यातृणधान्यमन्नं यवप्रधानस्तु भवेत प्रमेही ।
(Ch. Ck. 6/20-21)

Barely grain dipped in decoction of Triphala for the whole night makes a saturating food taken with honey. The patient may also take them regularly mixed with vinegar for alleviation of Prameha (Ch.Ck. 6/20-21). He should use flour of parches grains, bolus and other various eldibles made of barley impregnated with decoctions of drugs prescribed in Kaphaja Prameha. The seeds of bamboo and wheat may also be used in forms similar to those of barley.

One suffering from prameha should drink water processed with drugs of salsaradi group, Khas, honey, water, triphala water or old madhwika (kind of Rum) of good type. He should eat roasted meat of animals and birds and various preparations of barley. As -

सारोदकं वाऽथ कुशोदकं वा मधूदकं या त्रिफलारसं वा ।
सीधुं पिबेद्वा निगदं प्रमेही माध्वीकमग्र्यं चिरसंस्थितं वा ॥
(Ch. Ck. 6/46)

**Apathya for Madhumeha -**

Pramehi patient should avoid - 1) Excessive eating, 2) Gramya, Anupa, Odaka mamsa, 3) Milk, Curd, Ghee, 4) Jaggery, Til, Oil, 5) Sours articles and amlapanaka, 6) Asava, Sura, Sirka (Vinegar), Kanji, 7) Sugarcare juice, 8) Preparations of rice flour, 9) Excessive water consumption.

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# HERBAL DRUGS USEFUL AGAINST CANCER

Gupta S.*, Sheeja E., E. Edwin

| Sl. No. | Drugs | Planst source | Habitat | Parts used |
|---|---|---|---|---|
| 1. | Upodika | Basella eubra L. | Herb | Whole plant |
| 2. | Kadli | Musa sapientum . | Large shurb | Leaves, root |
| 3. | Salmali | Salmalia mala baricum | Tree | Root, flowers, bark |
| 4. | Yava | Hordeum vulgare L. | Grass, cereal | Seeds |
| 5. | Vidanga | Embelia ribes (burm) f. | Shrub or small tree | Alkalies ash, seeds |
| 6. | kancanara | Bauhinia variegataL. | Tree | Bark, flowers |
| 7. | Sunthi | Zingiber officinale rose. | Herb | Rhizomes green and dried |
| 8. | kancanara | Bauhimia racemosa Lamk. | Tree, small or medium sized tree | Bark, flowers, pods |
| 9. | Sigru | Morringa oleifera Lam. | Small tree or moderate sized tree | Bark, leaves, pods |
| 10. | Guggulu | Commiphora eightii (Arun.) | Shrubs | Oleogum resin |
| 11. | Bhallataka | Semecarpuis anacardium Linn. | Tree | Fruit (nut) |
| 12. | Rohitaka | Tecomella undulata (Sm.) | Tree | Bark. |
| 13. | Sakhotaka | Streblus asper lour. | Small or moderate sized tree | Bark |
| 14. | Nimba | Azadirchata indica juss. | Tree | Leaves, inner bark e |
| 15. | Madyantika | Lawsonia inermis L. | Shrubs | Leaves |
| 16. | Cangeri | Oxalis carniculata | Herb | Whole plants. |
| 17. | Pasana bheda | Bergenia ligulata Yes | Herb | Roots |
| 18. | Sarapunkha | Tephrosia purpurea Pers. | Shrubs or under herb | Roots |
| 19. | Amarvalli | Cuccuta refleexa Roxb. | Twining herb | Plants |
| 20. | Svarnaksiri | Agremone mexicana L. | Prickly herb | Roots |
| 21. | Punarnava | Boerhavia diffusa L. | Prostate herb | Roots, leaves. |
| 22. | Bhrngaraja | Eclipta prostata L. Linn. | Herb | Whole plant |
| 23. | Manjistha | Rubia cordifolia L. | Climber | Roots |
| 24. | Tila | Sesamum orientale L. | Herb or under shrub | Seeds |
| 25. | Draksa | Vitis vifera L. | Climber | Fruits |
| 26. | Kiratatikta | Swertia chirayita | Shrubs | Whole plants, roots |
| 27. | Rasna | Pluchea Lanceolata | Herb | Root, leaves, whole plant |
| 28. | Mundi | Aphaeranthus indicus L. | Herb | Whole plants, flowers |
| 29. | Gaduchi | Tinospora cordifolia L. | Climber | Stem |
| 30. | Hritaki | Terminalia chebula Retz. | Tree | Fruits |
| 31. | Bibhitaka | Terminalia belerica garter. | Roxb. tree | Fruits |
| 32. | Amalaki | Emblica oficnalis Gaertn. | Tree | Fruits |
| 33. | Karkatasrngi | Pistacia chinensis Bunge | Tree | Follicles |
| 34. | Dronapushpi | Leucas cephalotes (Roth.) Spr. | Herb, Whole plant | Leaves |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 35. | Nirgundi | Vitex nigundo L. | Shrubs | Root, leaves, bark. |
| 36. | Rohitaka | Aphananmixis polystachya (Wall.) | Parker tree | Bark, seeds, |
| 37. | Franda | .Ricinus communis L. | Shrubs | Root, leaves, seeds |
| 38. | Haritaki | Terminalia chebula Retz. | Tree | Fruits |
| 39. | Daruharidra | Berberis arista Dc. | Horney shrub | Root, bark, fruits |
| 40. | Bhumyamalaki | Phyllanthus Frtaernus Webst. | Prostate herb | Various parts |
| 41. | Kasamarda | Cassia occidentalis Linn. | Tall herb | Various parts |
| 42. | Aristaka | Sapindus emarginatus Vahl. | Tree | Fruit, bark. |
| 43. | Ahiphena-pnala | Papaver somniferum L. | Under shrub | Fruit |
| 44. | Erandakarkati | Carica papaya L. | Shrubs | Fruit (latex) |
| 45. | Brahmi | Bacopa monieri L. penn. | Herb | Whole plant |
| 46. | Mandlukaparni | Centella sciatica L. | Urban | Herb, prostate whole plant |
| 47. | Babulla | Acacia nilotica Del | Thorny tree | Bark, pods, gum |
| 48. | Punarnava varsabhu | Boerhavia chinensis | Prostate herb | Root |
| 49. | Sadpushpi | Catharanthus roseus | Herb | Whole plant leaves |
| 50. | Pattanga | Caesalpinia sappan Linn. | Small tree | Heart wood |
| 51. | Aksota | Juglans regia L. | Tree | Bark, tree |
| 52. | Gidar tamaku | Verabascum thapsus L. | Herb | Leaves |
| 53. | Garjarapatrika | Parthenium hysterophorus L. | Herb, weed | Leaves, whole plant |
| 54. | Khadira | Acacia catechu willd. | Thorny tree | Bark, heart wood |
| 55. | Gojihva | Onosma bracteatum wall. | Herb | Roots |
| 56. | Udambara | Ficus racemosa L. | Tree | Bark, fruit |
| 57. | Lodhara | Ficus glomerata Roxb. | Tree | Bark. |
| 58. | Ingudi | Balanites aegyptica linn. Delile | Small tree | Fruit, seeds |
| 59. | Langali | Gloriosa superba L. | Herb | Rhizomes |
| 60. | Vasa | Adhatodas vasica Nees. | Shrub | Leaves, flowers, roots |

**References :**

1. Dr. Gyanendra Pandey, "Anticancer herbal drugs of India With speical reference to ayurveda", Sri Satguru publications, Ist edition, Delhi 2002 PP27-46.
2. Irfan A Khan & Atiya Khanum "Role of biotechnology in medicinal & aromatic plants" . Special Edition on Cancer, Volume, V. Ukkaz publications. Ist edition, 2002, PP 74-102.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# PHYTOESTROGENS: A HERBAL ALTERNATIVE IN MINIMIZING RISK OF POSTMENOPAUSAL OSTEOPOROSIS

* Dr. M. A. Pandya ** Dr. Jasmine P. Japee *** Dr. Rakesh Kumar Mishra


## ABSTRACT

Getting old is vulnerable time for both men and women if the alterations are concerned. For women it is more so, as aftermath of menopause, women also survive with estrogen deficient phase. Increasing prevalence of postmenopausal osteoporosis has forced all medical sciences to draw their attention towards it. Osteoporosis is characterized by low bone mass and microstructure deterioration of bone tissue, with a consequent increase in bone fragility and susceptibility to fracture. It renders a woman to live an immobile and bedridden life as fracture occurs with minor trauma or without trauma.

Hormone Replacement Therapy (HRT) is well known in preventing postmenopausal osteoporosis. But long term HRT use is associated with more risks than benefits.

Interest in natural sources of estrogenic substances to prevent postmenopausal bone loss has led to tremendous interest in phytoestrogens, which are a group of compounds having estrogenic properties. Phytoestrogens containing plants can be a new alternative for this disability disease. Details are given as follows:


## INTRODUCTION

The term osteoporosis is derived from Latin, which means " porous bones". The World Health Organization defines osteoporosis as a "Progressive systemic skeletal disease characterized by low bone mass and microarchietectural deterioration of bone tissue, with a consequent increase in bone fragility and susceptibility to fracture."1

The strikingly different gender ratio of hip fracture and colles' fracture has implicated estrogen deficiency as an etiology of osteoporosis unique to postmenopausal.

Beginning at age of 30 to 40, women lose about 10% of their bone mass per year and g accelerated after menopause. When bone ma falls below a critical threshold level, non-traum fractures occur.

## BONE PHYSIOLOGY

Bone is continually being deposited a absorbed by osteoblasts and osteoclas respectively. The rates of bone deposition a absorption are equal to each other so that the to mass of bone remains constant. This process bone remodelling serves to maintain t mechanical integrity of skeleton[2].

## ESTROGEN AND BONE LOSS:

Bone loss appears due to imbalance bone remodelling, either because of an increa in the amount of bone reabsorbed or decrease amount formed, or combination of both. Second bone loss can occur when there is an increase number of remodelling units activated on bo surface[3]. Estrogen, during reproductive years women, prevents bone loss by conserving calci It enhances the intestinal absorption and impro renal conservation of calcium. In addition, estro appears to have a direct effect on osteob function; studies have also shown the effect estrogen on parathyroid hormone.

## POSTMENOPAUSAL OSTEOPOROSIS:

It is one of the most common a disabling disease-affecting women aftermath o ageing strike women because of estrogen defic phase. Osteoporosis is often called the si disease' because bone loss occurs wi symptoms. Statistics reveal that –

- 80% of those affected by osteoporosis women.
- 50% have osteoporosis

* H.O.D. ** Scholar *** Ph.D. Scholar
Department of Kaumarbhritya, Speciality – Striroga and Prasuti Tantra, I.P.G.T. & R.A., Gu
Ayurved University, Jamnagar.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



- 35% have low bone mass that puts them at risk of developing osteoporosis.

## MANAGEMENT OF POSTMENOPAUSAL OSTEOPOROSIS:

Bone loss is only partly reversible. For this reason, it has been more practical and effective to implement therapy to prevent bone loss at time of menopause. The central role played by estrogen deficiency in the pathogenesis of postmenopausal osteoporosis, supports the efficacy of estrogen therapy in its management.

For prevention and management of postmenopausal osteoporosis, HRT – Hormone replacement therapy is to be given not for months, years, but for decades. Recent research findings suggest that long tem HRT use is associated with more risks than benefits. There is an early harm of coronary artery disease, stroke, thrombo embolism and uterine and breast cancer[4].

So the search far an alterative of HRT has led towards tremendous interest in phytoestrogens.

## PHYTOESTROGENS:

Phytoestrogens are naturally occurring compounds or phytochemicals that are structurally and biologically similar to estrogens. However, phytoestrogens tending to have weaker effects than estrogen, are not stored in body, and can be easily broken down and eliminated. After consumption, phytoestrogens get metabolized into heterocydic phenols, containing a diphenolic ring similar to human endogenous estrogen, accounting for their estrogenic effects [5,6].

Phytoestrogens are adaptogens. This is their main mechanism of action. They can be beneficial when estrogen levels are either increased or decreased. They also exhibit antioxidant, radical – scavenging, hypolipidemic and serum cholesterol lowering propertis[7].

Phytoestrogens are classified into three major compounds

1. Isoflavones
2. Coumestans
3. Lignans

Isoflavones are again classified as Diadzein, Genestein and Glycetin. Also steroida saponins, phytosterols belong to this family.

Herbs containing steroidal saponins exer estrogenic effect by binding with estrogen receptors in the hypothalamus, which is part of negative feed back mechanism of estrogen control.

## PHYTOESTOGENS: AN ALTERNATIVE TO HR

As HRT is associated with risk o thrombosis, cancer, gallstones etc, SERM'S - Selective Estrogen Response Modifiers, were identified to have an estrogen agonist and antagonist effect on different tissues like brain bone, endometrial, breast etc. Phytoestrogens ac as SERM'S with the desirable properties of being anti estrogenic in breast and uterine tissue, bu being post estrogenic in bone, brain and lipic metabolism. This ideal set of properties confe protection from cardiac diseases, osteoporosis and Alzheimer's diseases, without increasing the risk of hormone dependent cancers of breast and uterus, and gall stone formation[8].

Current evidence suggests that the protective effect of phytoestrogens is likely to be brought via stimulation of SHBG – Sex Hormone Binding Globulin, and thereby reducing free estrogen levels in plasma[9].

## PHYTOESTROGENS & OSTEOPOROSIS:

Recent studies conducted to evaluate the effect of phytoestrogens on Bone Mineral Density (BMD) in postmenopausal women showed significant increase in BMD in lumber spine[10].

Evidence generated in vitro studies have shown that Isoflavones found in soy-glycine max can stimulate osteoblastosis, suppress osteoclastosis and induce osteoclast apoptosis[11].

As proved in various prospective randomized controlled clinical trials, synthetic estrogens are beneficial in preventing osteoporotic process. Trials on phytoestrogens also have similar



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



effect in management of postmenopausal osteoporosis[12].

Elaborate research studies conducted in the recent past had shown the medicinal values in about – 300 herbs containing phytoestrogens and possessing estrogenic property.

Ayurveda, the oldest system of medicine and science of life, has provided many herbs, which can be used in prevention of postmenopausal osteoporosis.

Shatavari – *Asparagus racemosus*

Also known as "Female Rejuvenative" contains steroidal saponins, glycosides, mucilage.

They have known phytoestrogen like properties.

Active compounds like Shatavrin I – IV show estrogen like activity in clinical studies[13,14,15].

Fenugreek – Methi – *Trigonella foenum-graecum* contains steroidal saponins[16].

*Withania somnifera* is used as immunomodulator.

*Dioscorea villosa* – contains Disogenin – a phytonutrient similar to phytoestrogen.

Other identified drugs containing phytoestrogens are *Sida cordifolia*, *Glycyrrhiza glabra*, *Puereria tuberosa* and other varieties of *Puereria* and *Dioscorea*, *Foeniculum vulgare*.

These herbs can be used for long term without causing and undesirable effect in prevention of posts menopausal osteoporosis yet its evidence by proper research is a need of present scientific era.

## REFERENCES


1. World Health Organization – Assessment of fracture risk and its application to screening for postmenopausal osteoporosis, Geneva WHO, 1994. (Technical support – Series 843)
2. Guyton A.C., Textbook of Medical Physiology, Saunders Company, Pennsylvannia, 9th Edition, 990-991, 1996.
3. British Medical Bulletin, Vol. 48, No.2, Page 309-344,1992
4. Grady D. Herrington D, Bittner V, Cardiovascular disease outcomes during 6-8 years of hormone therapy : Heart and Estrogen/Progestin Replacement study followup (HERS II) JAMA 288 :49, 2002.
5. Mitra S.K. et al. The beneficial effect of OST-6 (osteocare) a herbomineral formulation in experimental osteoporosis. Phytomed. 8 195,2001.
6. Kalpan D. Phytoestrogens: Fact and fiction Patient Care, 22 : 147, 1999.
7. Anderson G.D. Phytoestrogen: What are the and how they work. Dyrnamec Chiropractic Vol. 18: 21,2001.
8. Knight D. And Edan, J.A. A review of the clinical effects of phytoestrogens. Obstet. Gynecol 87: 897, 1996.
9. Marilyn Glenville, The Nutritional Health Handbook for Women. Page 422, 2001.
10. Arena S, Rappa C, Del Frate E, Cenci S. Vilar C. A natural alternative to menopausal hormone replacement therapy Phytoestrogens.
11. Doris M. et al. Potential Health Benefits of dietary phytoestrogens : A review of clinical epidemiological and mechanistic evidence Clin. Endo. Metab. 83 : 2223, 1998.
12. Ishida, H. et al. Preventive effects of genistein on bone loss in ovaractomised rats fed a calcium deficient diet. Bio. Pharma. Bull. 21 62, 1998.
13. Roge NN et al. Research 1999. 13 : 275-29
14. Indian J. of Pharmacology, 19 : 1, 1987.
15. Dwiwedi M, Kulkarni K.S. Evaluation of efficacy of menosan in women with menopausal syndrome. A placebo controlled study. Obst. And Gyn. Loday, VIII, 3 : 15 156,2003
16. Obs. And Gyn. Vol. 101 (6) : 1345-1349, 20




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# GARBHASHAYA GRIVA MUKHA GATA DUSHITA VRANA PAR KHADIRTAIL AUR AGNIKARMA KE STHANIK PRAYOGA KA TULANATMAKA ADHYAYANA

* Dr. Meera Pandya, M.S.A.M, Ph.D

Garbhashayagreevagata Vrana or Cervical Erosion is the development of reddened area on the portiovaginalis around the external o.s. Pathologically it is the replacement of the stratified squamous epithelium of the portiovaginalis by columnar epithelium of the endocervix.

Although cervical erosion is translated as Garbhashayagreevagata Vrana (Ulcer), but actually cervical erosion is never ulcerated unless and until it acquires a malignant form. Hence, an ulcerated cervix definitely arises as strong suspicion of cervical carcinoma.

Garbhashayagreevagata Vrana has not been mentioned as a separate disease entity in classics. However, close contemplation of the classics reveals that sign & symptoms pertaining to and accompanying Garbhashayagreevagat Vrana are incorporated in various local disorders of Trayavarta Yoni (Yoni Vyapada) e.g. Slesmala, Pittala, Asruja, Acharana & Aticharana Yonivyapada.

In Ayurveda, excessive coitus, unwholesome diet especially Lavan, Amla, Katu, Kshar, Abhishyandi diet, local unhygiene etc. are said to be the causative factors while modern medicine believes abnormal levels of hormones & infection as a cause for cervical erosion.

**Incidence:** Three fourth of adult women suffers from cervical erosion.

**Types:** 1. Congenital
2. Acquire (a) Simple Flat
(b) Papillary
(c) Follicular

**Aetiology :** 1 Physiological - Puberty
Pregnancy
Puerperium

2 Pathological –
Sex hormonal hyperplasia
Oral contraceptive pills hyperplasia
Chronic inflammatory hyperplasia

Clinical Features: (Symptoms)

1. Persistent white discharge P/V either watery, mucoid, curdlike, purulent etc.
2. Metrorrhagia especially after sexual intercourse
3. Low backache
4. Frequency of Micturation
5. Chronic ill health (Debility)
6. Pruritus Vulva
7. Psychological upset
8. Infertility may be present

**Diagnosis:**

P/S examination reveals a red granular surface with well-defined margin.

**Differential Diagnosis –**

1. Early carcinoma of cervix
2. Mucous polyp.
3. Tubercular ulcer.
4. Chanchre
5. Vaginitis

**Aims & Objects:**

1. To study the role of Khadir Taila on cervical erosion.
2. To study the role of Agnikarma on cervical erosion.

**Materials & Methods:**

The patients attending the Striroga Prasutitantra OPD of the I.P.G.T. & R.A. Hospital Jamnagar with complaints of gyanecological problems were thoroughly examined and those having cervical erosion were selected for the present study.

**Criteria for Diagnosis:**

The patients were diagnosed on the basis of history and thorough bimanual examination inclusive of the following:

**P/V Examination –**

To confirm the size, shape, motility, position, tenderness etc.

**P/S Examination –**

To find out the type, degree, appearance, site of the erosion.

pH of the vagina was recorded by using pH indicator.

Vaginal smear examination was considered to rule out vaginal infection.

HOD, SRPT DEPT. I.P.G.T.& R.A. JAMNAGAR

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Vaginal Tampoons were used to measure ıe amount of vaginal discharge.

**ıvestigations:**

The patients were subjected to routine, lood, Urine & Stool examinations.

A special proforma was prepared for iagnosis of the patients as well as for grading the ymptoms of the patients.

**ıradation of Cervical Erosion:**

1st Degree Erosion – only one cervical lip partially involved.

2nd Degree Erosion – Both cervical lip partially involved or on lip completely eroded.

3rd Degree Erosion – Both cervical lips completely eroded.

The patients diagnosed in the above said ıanner were randomly divided and studied in the ollowing two different groups.

Group I (TG) – patients in this group were reated with Khadir Taila (Local Vaginal Tampoons oaked in Khadir taila)

Duration – 15 days

Tampoons were changed everyday for 5days.

Group II (CG) – Patients in this group has ndergone cervical cauterization using an lectrocautery.

Duration – one sitting.

**riteria for Assessment:**

1. Time taken for healing of erosion and nature of healing
2. Reduction in white discharge P/V
3. Improvements in general symptoms like Daurbalya, Angamarda etc.
4. Improvements in local symptoms like itching, burning, (backache) etc.

After completion of the therapies the nvestigations (Vaginal smear routine done before he treatment) were repeated & taken into consideration during assessment.

In total 80 patients were registered for administering the therapies, out of this 15 patients were dropped out. Hence, a clinical data of 65 patients is presented.

1. Group C.G.- 20 patients.
2. Group T.G.- 45 patients.

## OBSERVATION & RESULT

**Table no. 1**

| Age | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| 20-25 | 10 | 15 | 25 | 38.46 |
| 25-30 | 05 | 15 | 20 | 30.76 |
| 30-35 | 04 | 06 | 10 | 15.38 |
| 35-40 | 02 | 04 | 06 | 07.69 |
| 40-45 | 00 | 03 | 03 | 04.60 |
| 45-50 | 00 | 02 | 02 | 03.07 |

Showing the age wise distribution of 65 patients of cervical erosion

**Table no. 2**

| Religion | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| Hindu | 12 | 38 | 50 | 76.92 |
| Muslim | 05 | 05 | 10 | 15.38 |
| Christian | 01 | 01 | 02 | 03.07 |
| Sikh | 02 | 01 | 03 | 04.60 |

Illustrating the religion wise distribution of 65 patients of cervical erosion

**Table no. 3**

| | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| Lower class | 8 | 22 | 30 | 46.15 |
| Middle class | 7 | 13 | 20 | 30.76 |
| Upper class | 5 | 10 | 15 | 23.00 |

Exhibiting the classification of patients based on socio-economic status



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**Table no. 4**

| | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| No issue | 01 | 04 | 05 | 07.69 |
| 1-3 | 15 | 38 | 53 | 81.53 |
| 4-6 | 05 | 02 | 07 | 10.76 |

Showing the classification of 65 patients according to parity

**Table no. 5**

| | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| O.C. Pills | 10 | 30 | 40 | 61.53 |
| Local Contraceptive | 07 | 08 | 15 | 23.00 |
| Excessive coitus | 03 | 07 | 10 | 15.38 |
| Foreign body use | 00 | 00 | 00 | 00 |

Classification of 65 patients of Cervical erosion. according to aetiology

**Table no.6**

| | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| 1st | 05 | 07 | 12 | 18.50 |
| 2nd | 10 | 18 | 28 | 43.70 |
| 3rd | 05 | 20 | 25 | 38.50 |

Classification of 65 patients according to degree of erosion

**Table no. 7**

| | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| Oedematous cx | 10 | 25 | 35 | 53.80 |
| Tenderness during P/V | 12 | 13 | 25 | 38.50 |
| Bleeding during P/V | 02 | 03 | 05 | 07.60 |

Showing the findings of P/V examination in 65 patients

**Table no. 8**

| | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| Anteverted | 16 | 42 | 58 | 89.20 |
| Retroverted | 04 | 03 | 07 | 10.80 |

Classification of 65 patients according to position of uterus

**Table no.9**

| Type of erosion | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| Simple | 06 | 22 | 28 | 43.70 |
| Papillary | 11 | 16 | 27 | 41.50 |
| Follicular | 03 | 07 | 10 | 15.40 |

Classification of 65 patients according to type o erosion

**Table no.10**

| Symptoms | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| Katishoola | 13 | 38 | 51 | 78.46 |
| Angamarda | 16 | 31 | 47 | 72.30 |
| Bhrama | 12 | 29 | 41 | 63.07 |
| Daurbelya | 14 | 24 | 38 | 55.46 |
| Mootradaha | 08 | 28 | 36 | 55.38 |
| Kandu | 12 | 38 | 50 | 76.92 |
| Gramya Dharmanuj | 06 | 14 | 20 | 30.76 |
| Yonidaha | 04 | 23 | 27 | 40.53 |
| Yoni strava | 19 | 41 | 60 | 92.30 |

Classification of 65 patients according to symptoms

Table no. 11

| Infection | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| Monilial | 04 | 06 | 10 | 15.38 |
| Trichomonal | 03 | 05 | 08 | 12.30 |

Incidence of infection in 65 patients

Table no.12

| PH | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| 5.0 | 3 | 04 | 07 | 10.80 |
| 5.5 | 2 | 03 | 05 | 07.60 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| PH | No. of Pts C.G. | No. of Pts C.G. | Total | % |
|---|---|---|---|---|
| 6.0 | 3 | 02 | 05 | 07.60 |
| 6.5 | 1 | 05 | 06 | 09.20 |
| 7.0 | 1 | 02 | 03 | 04.60 |
| 7.5 | 2 | 02 | 04 | 06.20 |
| 8.0 | 6 | 14 | 20 | 30.80 |
| 8.5 | 2 | 13 | 15 | 23.70 |

Classification of 65 patients according to symptoms

**Discussion of tables of observation**

**Age:**

Among the patients selected for the study, maximum number i.e. 38.46% belongs to 20-25 years age group and 30.76% patients were from the age group of 25-30 years. 15.38% patients belongs to 40-45 years of age group and only 7.07% patients belongs to 45-50 years of age.

**Religion:**

Maximum number of patients i.e.76.92 were Hindus and 15.38% were Muslims remaining 7.07% were Christians and Sikhs constituted 4.6% (table no.2).

**Socio economic status:**

Highest number of the patients of this series i.e.46.15% belongs to lower class while 30.76% were from middle class and rest 23.0% belongs to upper class (table no.3)

**Parity :**

Incidence of cervical erosion was found more in 1-3 (parity group) that is 81.53% followed by 4-6 parity i.e. 10.76%. No issue was concerned in7.79% (Table no 4).

**Aetiology:**

Most of the patients of this series i.e., 61.53% were using oral contraceptive pills, 23.0% patients were taking local contraceptive and 15.38% were having excessive coitus (table no 5).

**Degree of Erosion :**

43.1% patients of this series were having 2nd degree erosion 38.5% were having, 3rd degree erosion and only 18.5% patients were having 1st degree erosion (table no 6).

**P/V Examination:**

As evident from this series, 53.8% patients had edematous cervix, 38.5% patients had tenderness during P/V. examination, while bleeding during P/V was observed in 5 patients i.e., 7.6% (table no 7).

**Position of uterus:**

The uterus was found to be anteverted in 89.2% patients and retroverted in 10.8% (table no 8).

**Type of Erosion:**

Table no. 9 reveals that out of 28 patients i.e. 43.7% were having simple type of erosion followed by papillary type of erosion (41.5%) and follicular type of erosion in 15.4% patients.

**Infection:**

Monilial infection was observed in 15.38% patients and Trichomonas infection was observed in 12.30% patients as indicated by Table no.11.

**Symptoms :**

78.46% patients suffering from cervical erosion Yoni Strava were found to be one of the cardinal symptoms accounting for 92.30%. Katishoola was also observed to be another prominent symptoms accounting for 78.46%. Angamarda & Daurbalya too was observed in 72.30% & 58.46% patients respectively. Associated symptoms like mootradaha, Bhagakandu & Yonidaha was found in 55.38%, 76.92% & 40.53% respectively. Painful menstrual bleeding was observed in 30.76% patients whereas 63.07% patients were complaining of Bhrama.

**pH of white Discharge :**

In maximum number of patients the pH of white discharges from the vagina was found to



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ranging between 8.0 to 8.5 (54%) while in rest of the patients the vaginal pH was found to be ranging between 5.5 to 7.5.

**Table no. 13**

| Symptoms | Number of pts | % Relief |
|---|---|---|
| Katishoola | 13 | 43.17 |
| Angamarda | 16 | 53.00 |
| Bhrama | 12 | 53.47 |
| Daurbalya | 14 | 50.00 |
| Mootradaha | 08 | 27.38 |
| Kandu | 12 | 31.50 |
| Gramaya Dharmanrju | 06 | 42.85 |
| Yonidaha | 04 | 49.82 |
| Yoni Sarava | 19 | 32.57 |

Effect of therapy on signs and symptoms in patients of cervical erosion in Group C.G. (Cauterisation)

In the CG Group cardinal symptoms like Katishoola & Yonistrava were relieved by 43.17% & 32.57% respectively. Associated symptoms like Yonidaha, Bhagakandu, Mootradaha did not show significant improvement as they were relieved by 49.82%, 31.50% & 27.38% respectively.

बैद्यनाथ
च्यवनप्राश
स्पेशल

विटामिन-सी
और
कैल्सियम युक्त
एक संपूर्ण
स्वास्थ्य टॉनिक

"माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है। इसीलिए हर माँ अपने नन्हे मुन्ने के लिए स्वास्थ्यवर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है। परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामिन व पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता। उनके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक। जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल। जिसमें हैं ५२ (बावन्नी हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर। अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं। विश्व में आयुर्वेदिक औषधियों के सबसे विशाल निर्माता-वैद्यनाथ द्वारा निर्मित बैद्यनाथ च्यवनप्राश में आपको मिलेगी विश्वस्तरीय उत्तमता, जिसे आज करोड़ों का विश्वास प्राप्त है। अब कोई अन्य टॉनिक भला क्यों को प्रयोग ? जब विश्व श्रेष्ठतम टॉनिक है आपके साथ, आपके बच्चों के श्रेष्ठतम विकास के लिए।"

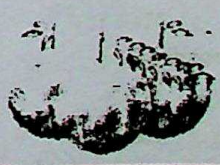

स्वस्थ जीवन का मस्त स्वाद




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी

1. प्र०:- मधुर रस वाले अंजन को किस धातु के पात्र में धारण करना चाहिये ?
(a) स्वर्ण (b) रजत
(c) मेष श्रृंग (d) कांस्य

2. प्र०:- संदश यंत्र की लम्बाई कितने अंगुल होनी चाहिए ?
(a) 16 (b) 18 (c) 20 (d) 22

3. प्र०:- शिष्योपनयनीय अध्याय में शिष्य के कितने गुण बताए हैं ?
(a) 10 (b) 15 (c) 20 (d) 25

4. प्र०:- चौण्डय जल के प्रयोग से किस दोष का प्रकोप होता है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) त्रिदोष

5. प्र०:- अग्निमांद्यकर कौन-सा गुड़ होता है ?
(a) धौत (b) अधौत
(c) पुराण (d) नव

6. प्र०:- भ्रामर किसका भेद है ?
(a) घृत (b) तेल
(c) मधु (d) एरण्ड

7. प्र०:- क्षार में किस रस की प्रधानता होती है ?
(a) मधुर (b) अम्ल
(c) लवण (d) कषाय

8. प्र०:- मध्यदोष का प्रकोप होने पर किस अपतर्पण उपक्रम का प्रयोग करना चाहिए ?
(a) लंघन (b) लंघन पाचन
(c) अवसेचन (d) उक्त सभी

9. प्र०:- किसकी हुंकार से यक्ष्मा मृत्युलोक में चला आया ?
(a) इन्द्र (b) अश्विनी कुमार
(c) भारद्वाज (d) दक्ष प्रजापति

10. प्र०:- विनमन क्या है ?
(a) स्वस्तिक यंत्र (b) ताल यंत्र
(c) यंत्र कर्म (d) शस्त्र कर्म

11. प्र०:- माधव किस प्रदेश से सम्बन्धित थे ?
(a) वंग (b) जांगल
(c) यायावर (d) अवन्ति

12. प्र०:- आतङ्कदर्पक टीका के रचयिता कौन थे ?
(a) श्री वाचस्पति (b) गंगाधर
(c) चक्रपाणि (d) भानुमति

13. प्र०:- किस ऋतु में दिन में अनुवासन वस्ति का प्रयोग करनी चाहिए ?
(a) वर्षा (b) शरद
(c) हेमन्त (d) ग्रीष्म

14. प्र०:- बृहंण बस्ति का निषेध नहीं है ?
(a) कुष्ठ (b) प्रमेह
(c) मेदस्वी (d) उक्त सभी

15. प्र०:- किस रोग में बस्ति का निषेध है ?
(a) क्षीव (b) मूर्च्छा
(c) आध्मान (d) शोष

16. प्र०:- विधि भेद से बस्ति के कितने भेद हैं ?
(a) 1 (b) 2 (c) 3 (d) 4

17. प्र०:- चक्रपाणि अनुसार प्राणोरोध का क्या अर्थ है ?
(a) बलवृद्धि (b) प्राणक्षय
(c) बलक्षय (d) प्राणवृद्धि

18. प्र०:- उदर रोगी को विरेचन कब कराना चाहिए ?
(a) एक सप्ताह के उपरान्त
(b) दो सप्ताह के उपरान्त
(c) तीन दिन बाद (d) नित्य

19. प्र०:- शिरोविरेचन के अतियोग में क्या चिकित्सा निर्दिष्ट है ?
(a) तर्पण कारक (b) मृदु
(c) द्रव पदार्थ (d) उक्त सभी

20. प्र०:- अजीर्ण रोगी को विरेचन देने से क्या परिणाम होता है ?
(a) शरीर में आम दोष की उत्पति
(b) आध्मान (c) अम्लपित्त
(d) बल क्षय

21. प्र०:- कौन-सी बस्ति का प्रयोग भोजनोपरान्त किया जाता है ?
(a) निरूह (b) अनुवासन

22. प्र०:- निचय गुल्म में किस दोष का प्रकोप होता है ?
(a) वात (b) पित्त (c) कफ (d) त्रि

23. प्र०:- कफ की अधिकता से कौन-सा कुष्ठ होता है ?
(a) ऋष्यजिव्ह (b) पुण्डरीक
(c) मण्डल (d) सिध्म

### Answer - Keys

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| (1) A | (2) A | (3) C | (4) B | (5) |
| (6) C | (7) C | (8) B | (9) D | (10) |
| (11) A | (12) A | (13) C | (14) D | (15) |
| (16) C | (17) C | (18) D | (19) D | (20) |
| (21) B | (22) D | (23) C | | |

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## सविनय आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व

# आयुर्वेद को रूढ़ि-मुक्त करें ।

*अक्टूबर, 1966*

यह सर्व विदित है कि आयुर्वेदीय पद्धति सर्वथा वैज्ञानिक थी और दो सहस्त्र वर्ष पूर्व यह पद्धति अत्यन्त उत्कर्षावस्था में थी । कुछ कारणों से आयुर्वेद चिकित्सा-पद्धति वैज्ञानिक विधि को छोड़ बैठी, जिससे आगे आयुर्वेद का विकास अवरूद्ध हो गया और प्रगति न हो सकी । आयुर्वेद के शास्त्रीय ग्रंथों में जो कुछ बताया गया था वे "बाबा वाक्यम् प्रमाणम्" बन गए और एक किस्म की रूढ़िवादिता ने इस चिकित्सा-विज्ञान को ग्रस लिया । ऐसी स्थिति में हमें पुनः उन सूत्रों को पकड़ने का प्रयास करना चाहिए जिन्हें हम पीछे छोड़ आए हैं - और उन्हें पकड़कर हम आगे बढ़ें । आधुनिक वैज्ञानिक विधियों एवं शोध के विश्लेषणात्मक तरीकों से निश्चय ही आयुर्वेद को पुनः वैज्ञानिक भित्ति पर प्रतिष्ठित कर सकने में हम सफल हो सकेंगे

डा० सुशीला नायर
स्वास्थ्य-मंत्री, भारत सरकार

# धन्वन्तरि जयन्ती और हमारा कर्त्तव्य

हमें औपचारिक रूप से ही धन्वन्तरि-जयन्ती नहीं मनानी हैं, धन्वन्तरि-जयन्ती की विधि ही नहीं पूरी करनी है, बल्कि, हमें एक सबल अभियान का भी संकल्प करना है । अभियान और अनुसंधान के दो पहियों के द्वारा हमें आयुर्वेद के रथ को आगे बढ़ाना है और, वैद्य-चेतना के साथ-साथ जन-चेतना की ज्योति भी हमें जगानी है, जो अधिकाधिक जन-सम्पर्क से ही सम्भव हो सकती है । अतएव, हम अनुरोध करेंगे कि इस वर्ष धन्वन्तरि-जयन्ती में अधिकाधिक जन सहयोग प्राप्त किया जाय । जयन्ती के पूर्व अधिकाधिक जनसम्पर्क स्थापित किया जाय और आयुर्वेद के लिए लोक-समर्थन प्राप्त किया जाए । हमारा विचार है कि ग्राम-पंचायत, जिला पंचायत-परिषद्, नगर पालिका, नगर-निगम, विधान सभा, विधान परिषद्, लोक सभा, राज्य सभा आदि जन-प्रतिनिधि संस्थाओं के सदस्यों से भी सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और उनसे आयुर्वेद की आवाज बुलन्द करने तथा आयुर्वेद का समर्थन करने का अनुरोध करना चाहिए । उनके निर्वाचकों को भी सा लेकर उनसे ऐसा अनुरोध करना चाहिए, जिससे उन समुचित प्रभाव पड़ सके और उनकी वाणी को लोकम की शक्ति भी प्राप्त हो सके ।

व्यापक संगठित और प्रभावशाली अभियान लिए यह आवश्यक है कि अखिल भारतीय आयुर्वेद-म सम्मेलन को अधिक सबल, और सक्रिय बनाया जाय प्रत्येक वैद्य का सहयोग उसें प्राप्त होना चाहिए । आखि सदस्य ही किसी भी संस्था की शक्ति होते हैं । और, फि संस्था के सुधार की आकांक्षा भी सहयोग के द्वारा ही पू हो सकती है, असहयोग के द्वारा नहीं । काम तो तभी हो है जब दृष्टिकोण रचनात्मक रहता है । ध्वंसात्मक दृष्टिको से कोई कार्य कदापि संभव नहीं हो पाता । ऐसा दृष्टिको तो शक्ति का अपव्यय और दुरूपयोग ही करता है । अस्तु

कुछ राज्यों में वैद्यों के राज्य-संगठन एक अधिक हैं और उनके नाम भी अखिल भारतीय नाम भिन्न हैं । ऐसा कदापि वाँछनीय नहीं है । वैद्यों व राज्यव्यापी संगठन तो एक ही होना चाहिए और उसका ना भी आयुर्वेद सम्मेलन ही होना चाहिए, वैद्य-सम्मेलन अन्य कुछ नहीं । अतएव हम अनुरोध करेंगे कि प्रत्ये राज्य में वैद्यों की एकता का ऐसा प्रयास अविलम्ब कि जाय ।

आयुर्वेद की हितकामना और इस रचनात्म दृष्टिकोण के आधार पर ही प्राणाचार्य श्री दुर्गा प्रसाद शम आयुर्वेदाचार्य ने अखिल भारतीय आयुर्वेद-महासम्मेलन व अपना सहयोग प्रदान किया और निरन्तर वे वैद्य-समाज च एकता जागरूकता और सक्रियता का नारा बुलन्द करने अ रहे हैं । इसमें भला कौन-सा विवाद हो सकता है वि आयुर्वेद और वैद्य-समाज के लिए उनका यह कार्य अभिनन्दनी तथा अनुकरणीय है ? भगवान धन्वन्तरि के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए हम वैद्यराज श्री शर्मा जी के इस अभिया की सफलता की कामना करते हैं ।

अखिल भारतीय आयुर्वेद-महासम्मेलन से ह अनुरोध करेंगे कि आयुर्वेद के लोक-समर्थन की अभिव्यवि के लिए वह देशव्यापी हस्ताक्षर-अभियान भी आरम्भ करें हम आश्वस्त हैं कि उसे इसमें व्यापक सफलता मिलेगी

**जय धन्वन्तरि ! जय आयुर्वेद !!**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आरोग्य समाचार

## अखबार की कतरनों से

### बुढ़ापे को रोकने में कारगर जीन का पता चला

**दैनिक जनसत्ता में प्रकाशित समाचार के अनुसार** वृद्धावस्था के रहस्यों को खोजने में लगे वैज्ञानिकों ने एक महत्वपूर्ण जीन को खोज निकाला है जो समय बीतने के साथ-साथ शरीर के वृद्ध होने के कारणों पर रोशनी डाल सकता है । आईएनकेए नामक यह जीन एक ऐसे प्रोटीन को नियंत्रित करता है जिसका प्रमुख कार्य कैंसर कोशिकाओं को काबू में रखकर दीर्घायु प्रदान करना है । वृद्धावस्था के साथ-साथ यह जीन सक्रिय होकर अंततः उस प्रणाली में हस्तक्षेप करना शुरू कर देता है जो शरीर के ऊतकों के पुनरुत्थान के लिए नई कोशिकाओं को जन्म देती है । साप्ताहिक ब्रिटिश वैज्ञानिक पत्रिका नेचर ने गुरूवार को प्रकाशित अंक में मिशिगन विश्वविद्यालय में सेंटर फार स्टेल सेल बायोलाजी के निदेशक सीन मारीसन ने कहा- अच्छी बात यह है कि कैंसर होने से पहले ही हम वृद्ध हो सकते हैं । खराब बात यह है कि हमारे ऊत्तक अपनी मरम्मत खुद नहीं कर सकते ।

प्रयोगशाला के चूहों पर किए गए अनुसंधान में उन विभिन्न क्षेत्रों में जीन के पी 16 आईएनकेपी ए प्रोटीन के स्तर को देखा गया जो स्टेम कोशिकाओं को जन्म देते हैं । यह क्षेत्र मस्तिष्क का आल फैक्टरी केन्द्र रक्त कोशिकाओं का निर्माण करने वाली अस्थिमज्जा और इंसुलिन का निर्माण करने वाली बीटा कोशिकाओं का घर माने जाने वाता अग्न्याशय हैं । प्रत्येक मामले में जैसे चूहों की उम्र बढ़ती गई पी 16 आईएनके4ए का स्तर बढ़ता गया और स्टेम कोशिकाओं के पुनर्नवीकरण की प्रक्रिया की रफ्तार धीमी पड़ गई । इस खोज को एक कदम और बढ़ाते हुए वैज्ञानिकों ने आनुवांशिक तकनीकी की मदद से एक ऐसा चूहा बनाया जिसमें आईएनके4ए जीन नहीं है । हैरानी की बात यह थी कि इस चूहे में कोशिकाओं के पुनरुत्पादन की क्षमता बरकार रही । हालांकि उनकी मौत अनेक किस्म के कैंसर के कारण हो गई और वे एक साल की उम्र ही पूरी कर पाए ।

### मधुमेही को कैन्सर का ज्यादा खतरा

**द टाइम्स ऑफ इण्डिया में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार** जापानी शोधकर्मियों ने अनुसंधान से पता लगाया है कि मधुमेहियों को कैन्सर उत्पन्न होने का विशेष खतरा रहता है, विशेषकर अग्न्याशय एवं यकृत् में । टोकियो स्थित राष्ट्रीय कैन्सर केन्द्र ने 98,000 उन लोगों पर प्रयोग किया जो कैन्सर से पीड़ित थे । इनमें से 27% वैसे लोग थे जो मधुमेही नहीं थे । बाकी 73% रोगी मधुमेही थे ।

### तनावग्रस्त कामगारों में उच्च रक्त-चाप के रोगियों की संख्या ज्यादा

अमेरिकन जरनल ऑफ पब्लिक हेल्थ में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार सफेदपोश कामगार में उच्च रक्तचाप की शिकायत उनकी अपेक्षा ज्यादा पाई गयी जो सामान्य स्तर के कामगार थे । क्यूबेक शहर में 18 वर्ष से 65 वर्ष की आयु के 6,719 कामगारों पर प्रयोग किये गये । अध्ययन से पाया गया कि उच्च रक्तचाप एवं हृदय रोग से पीड़ित ज्यादातर कामगार सफेदपोश थे ।

### दिल्ली डेंगू से परेशान

दैनिक हिन्दुस्तान में डेंगू और पोलियो के सम्बन्ध में निम्नलिखित आंकड़ें दिये गये हैं :-

| | डेंगू रोगी | पोलियो रोगी |
|---|---|---|
| वर्ष 2006 | 743 | 353 |
| वर्ष 2005 | 1023 | 66 |
| वर्ष 2004 | 606 | 134 |
| वर्ष 2003 | 2853 | 225 |

दिल्ली और उसके आस-पास के इलाके डेंगू की चपेट में हैं और देश के कई राज्यों में चिकनगुनिया से लाखों लोग बीमार हैं । महाराष्ट्र से शुरू हुआ चिकनगुनिया इधर मध्यप्रदेश और उधर केरल तक पहुंच चुका है । दोनों ही बीमारियों के वाइरस को इंसान के खून में पहुंचाने वाला एडीस एजिप्टी अब वैसी ही ख्याति अर्जित कर चुका है जैसी मलेरिया फैलाने वाला एनोफिलिस । मलेरिया भी कहीं नहीं गया । कई राज्यों में उसका उद्यम जारी है । कालाजार भी है और यहां-वहां गेस्ट्रोएंट्राइटिस और हेपेटाइटिस के फैलने की खबरें आती रहती हैं । ये भारी संक्रामक बीमारियां अपनी जगह हैं और हमारे देश को दुनिया की मधुमेह के मामलों में अव्वल माना जा रहा है । हृदय रोग के बारे में भी यह कहा जा सकता है कि भारतीय इस मामले में कुछ ज्यादा ही खतरे की जद में हैं । बाकी एड्स क्षय रोग वगैरा भी हैं ही ।

लेकिन फिलहाल हम संक्रामक रोगों की बात करेंगे । हमारे शरीर में अपनी जितनी कोशिकाएं होती हैं उससे कहीं ज्यादा संख्या में सूक्ष्मजीवी हमारे शरीर में रहते हैं । यानी हमारा शरीर सिर्फ एक जीव न होकर एक किस्म का ईको सिस्टम है । इनमें से कई सूक्ष्मजीवी हमारे बड़े काम के हैं । वे कई ऐसे काम करते हैं जो हमारे शरीर के लिए जरूरी है । कई क्या काम करते हैं, ठीक से पता नहीं । कई इनमें से कुछ रोग फैलाने वाले होते हैं लेकिन हमारा शरीर और वे दोनों आमतौर पर शांति संधि करके साथ-साथ चलते रहते हैं, कुछ रोग फैलाते हैं । लेकिन महामारियां जिन वायरस या बैक्टीरिया से फैलती हैं वे आंधी की तरह आते हैं और तूफान की तरह गुजर जाते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आपके पत्र

## फर्जी डाक्टर

सेवा में

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०
पटना

महाशय,

आज भारत के प्राय: बड़े-बड़े राज्य स्तर के दैनिकों में 'सुनहरा मौका' शीर्षक के अन्तर्गत विभिन्न संस्थाओं के विज्ञापन हर रोज प्रकाशित हो रहे हैं जो कानून का सीधा उल्लंघन तो करते ही हैं अत्यंत संदेहास्पद चरित्र के भी हैं । आज दिल्ली, मुम्बई, पटना, लखनऊ आदि शहरों में बहुत-सी संस्थाऐं आर.एम.पी. के प्रमाण-पत्र खुलेआम बेच रही हैं ।

शिक्षण संस्थाओं द्वारा किसी विशेष पाठ्यक्रम गलत नहीं लेकिन जब ये ही संस्थायें 'पत्राचार द्वारा डॉक्टर बनें', वैद्य विशारद पास कर आर.एम.पी. डॉक्टर बनें, पत्राचार द्वारा डिग्री प्राप्त करें आदि प्रलोभन भरे विज्ञापन देती हैं तो अल्प शिक्षा दर वाले भारतीय समाज के लिए अत्यंत घातक एवं गुमराह करने वाले सिद्ध हो रहे हैं ।

अपने देश में डॉक्टरी डिग्री देने का अधिकार सिर्फ उन्हीं विद्यालयों को है जिनके पाठ्यक्रम को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त है, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग सिर्फ उन्हीं संस्थाओं को मान्यता देता है जो उनके मानदंडों पर सही उतरते हैं, उसमें कहीं भी उपाधियाँ इतनी सुलभ नहीं हैं और न ही 6 महीने या । वर्ष में पत्राचार द्वारा डॉक्टरी पास करने का ही प्रावधान है ।

कुछ संस्थायें आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा परिषद्, बिहार से झूठे एवं नकली प्रमाणपत्रों के आधार पर पंजीकरण करवाकर दे रही है, व्यक्ति चाहे अँगूठाटेक ही क्यों न हो उसका रजिस्ट्रेशन भी 500 रुपए से 1000 रुपए में बनवा देते हैं, बिहार सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय ने हमारे लिखने के बावजूद कार्रवाई नहीं की ।

बिहार एवं उत्तरप्रदेश में इलैक्ट्रो होम्योपैथी के नाम पर लोगों को गुमराह करके उनका आर.एम.पी. में रजिस्ट्रेशन किया जा रहा है, जो कि मान्यता प्राप्त नहीं है, दर्जनों निजी संस्थायें इलैक्ट्रो होम्योपैथी के नाम पर 2 वर्षीय कार्यक्रम चला रही हैं और लोगों को गुमराह कर रही हैं ।

इस तरह की संस्थायें हर साल हजारों अल्प शिक्षित युवकों को अपने जाल में फँसाती हैं, फिर ये ही अधकचरे लोग अपनी बोगस डिग्रियों का रोब दिखाकर आम जनता को धोखा देते हैं,

कुछ धोखेबाज संस्थानों ने सरकारी नामों से मिलती-जुलती संस्थायें बना रखी हैं जो लोगों को गुमराह कर रही हैं, देखिए -

असली संस्था है - सैंट्रल कौंसिल ऑफ इन्डियन मेडिसन, नकली नाम, मिलते जुलते, जो आर.एम.पी. के प्रमाण-पत्र बेचती है :-

(1) Central Council of Allopathic Practitioners
(2) Central Council of Medical Practitioners
(3) Central Council of Medical Studies
(4) Central Council of Registered Medical Practitioners
(5) Central Council of Ayurvedic Medicines
(6) The Indian Medicine Central Council

इसी प्रकार वास्तविक नाम है -

Central Board of Secondary Education

नकली नाम देखिए -

(1) Central Board of Higher Secondary Education
(2) Secondary Education Board
(3) Central Board of High Education

आदि-आदि ।

ग्रामीण एवं पिछड़े इलाके से लेकर बड़े-बड़े शहरों तक आजकल ऐसे फर्जी डॉक्टर अपनी दुकान लगाए बैठे हैं, पर इनकी जाँच-पड़ताल करने वाली कोई सरकारी व्यवस्था नहीं है, आखिर मौत के इन सौदागरों की इन गतिविधियों पर रोक न लगा पाने का कारण ?

(1) क्योंकि इन फर्जी डॉक्टरों पर सीधे कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती, पहले इनका तथाकथित प्रमाण-पत्र सम्बन्धित बोर्ड को भेजा जाता है और नकली होने की पुष्टि के बाद मामला प्रशासन के गृह विभाग को दे दिया जाता है, गृह विभाग मामले को पुलिस की अपराध शाखा को सौंप देता है - तब कहीं कार्रवाई सम्भव हो पाती है ।

(2) वर्तमान कानून इतना प्रभावशाली नहीं है, जैसे उत्तरप्रदेश सरकार ने 02-07-82 से प्राइवेट होम्योपैथिक एवं आयुर्वेदिक शिक्षण संस्थाओं पर प्रतिबंध लगा दिया है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



फिर भी उत्तरप्रदेश की प्राइवेट संस्थाओं के विज्ञापन दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित हो रहे हैं ।

(3) सरकार ने इस मामले को कभी गंभीरता से नहीं लिया, जब केन्द्रीय परिषद् ने स्पष्ट कर दिया है कि प्रांतीय बोर्ड केवल उन वैद्यों को ही रजिस्टर्ड करे जिनकी योग्यता अधिनियम 1970 के अंतर्गत हो, इसके बावजूद बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश के बोर्ड इस आदेश का स्पष्टतः उल्लंघन कर रहे हैं और वैद्य विशारद पास लोगों का पंजीकरण कर रहे हैं ।

(4) दिल्ली पुलिस ने एक डिग्री बिक्रेता को बंदी भी बनाया था जो कि कला संस्कृति साहित्यार्वेद के नाम पर उपाधियाँ बेचता था, लेकिन पुलिस आज तक उसे आरोप पत्र नहीं दे सकी है ।

गाँव और कस्बों में घूमने वाले फर्जी डाक्टर ऐसी ही संस्थाओं के शिष्य होते हैं, यह कितनी बड़ी विडम्बना है कि भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् आजकल इस आशय का विज्ञापन देती है कि फलाँ-फलाँ संस्थायें मान्यता प्राप्त नहीं हैं, इसलिए उनके द्वारा प्रदत्त डिग्रियाँ वैद्य नहीं हैं, जैसे हिन्दी साहित्य सम्मेलन की वैद्य विशारद या आयुर्वेद रत्न, भारत सरकार का स्वास्थ्य मंत्रालय इसे केवल-केवल 1967 तक मान्यता देता है, लेकिन इसके बावजूद भी आप विज्ञापन पढ़ते हैं कि मान्यता प्राप्त वैद्य विशारद करके आर.एम.पी. डॉक्टर बनें, अतः लोगों का ध्यान भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् अधिनियम 1970 की ओर आकृष्ट किया जाता है कि वे इस एक्ट को पढ़कर ही ऐसे कालेजों में प्रवेश लें, अतः ऐसी संस्थाओं से आम जनता को सावधान रहने की सलाह दी जाती है ।

कितने आश्चर्य की बात है कि आजकल विज्ञापन के जरिए लोगों को खुलकर धोखा दिया जा रहा है, संबंधित विभाग भी इन विज्ञापनों को नियमित रूप से पढ़ता है फिर भी इस संबंध में कोई कार्यवाई नहीं हो रही । ऐसे डाक्टरों की संख्या भी बढ़ती जा रही है जो अपने नाम के पीछे M.R.S.H. (London or U.K.) लिखने लगे हैं ताकि मरीज इस भुलावें में आ जाएं कि डाक्टर विदेश से पढ़कर आया है । जबकि वास्तविकता यह है कि कोई भी व्यक्ति 100 रु० खर्च करके लन्दन से Royal Society of Health का सदस्य बन सकता है चाहे वह डाक्टरी जानता भी न हो । और अपने नाम के पीछे M.R.S.H. (London) लिखने लगता है । इस प्रलोभन से तो अच्छे-अच्छे योग्यता प्राप्त डाक्टर भी नहीं बचे हैं वे भी अपने नाम के A.R.S.H. या F.R.S.H. (London) लिखने में गौरव का अनुभव करते हैं ।

कुछ नीम हकीमों से जब R.M.P. का अर्थ पूछा गया तो उन्होंने इसका अर्थ -

Rural Medical Practitioner
Regular Medical Practitioner
Registered Magnet Physician

बताया और उनके पास ऐसे ही प्रमाण-पत्र भी जो बोगस संस्थानों ने बेचे थे । और चतुर डाक्टरों से B.A.M.S. या B.I.M.S. या M.D. का अर्थ पूछा क्योंकि उन्होंने अपने नाम के बाद उक्त डिग्रियां लिख रक्खी थी का अर्थ क्रमशः -

(1) ब्रादर आफ एडवायजरी मेडिकल सोसाइटी
(2) बैचुलर इन मैग्नेटिक साइंस
(3) डिप्लोमा इन मेग्नेट थैरेपी बताया ।

अब यदि कोई अपने आपको या अपने नाम के बाद M.B.B.S. लिखकर इसका अर्थ मियां बीवी सहित बतलाएं तो क्या यह क्षमा योग्य समझा जायेगा ।

कहने का तात्पर्य यह है कि जब कोई भी अपने नाम के पीछे ऐसी उपाधियाँ लिख सकता है असली और नकली में क्या अन्तर रह जाता है । कानून की अवहेलना के साथ-साथ जनता के साथ भी है ।

समाधान-प्रत्येक डाक्टर के अपने क्लीनिक दवाखाने में अपनी डिग्री जो उसने बोर्ड पर लिख रखी और रजिस्ट्रेशन के प्रमाण-पत्र का प्रदर्शन (Display) अनिवार्य कर दिया जाए ।

सम्बन्धित विभाग समय-समय पर इसकी पड़ताल करता रहे ।

अनुभव के आधार पर रजिस्ट्रेशन बन्द है ।

वी.के. खुल्लर
अखिल भारतीय आयुर्वेद सेवा संघ, 24, रिषी नगर
दिल्ली - 110034



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

## गुजरात

### वैद्य शाह के पिता का दुखद निधन

गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन के प्रधानमंत्री, वैद्य श्री देवेन्द्र के.शाह (Proctologist) के पिताश्री समाज शिरोमणि श्री कन्हैयालाल डी.शाह का 92 वर्ष की आयु में अहमदाबाद में दिनांक 20-08-2006 को दु:खद निधन हुआ। वे अहमदाबाद एवं महेसाणा जिले में कई संस्थाओं में चिरकाल तक अध्यक्ष एवं कई समितियों में सदस्य रहकर समाज सेवा का उत्कृष्ट कार्य किया । आयुर्वेद परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा की चिर शांति एवं शोक संतप्त परिवार को सांत्वना हेतु ईश्वर से प्रार्थना की गई ।

### पुस्तक का विमोचन

नाड़ियाद (गुजरात), आयुर्वेद महाविद्यालय के प्राध्यापक डा०एस०एन०गुप्ता द्वारा लिखित पंचकर्म चिकित्सा पुस्तक का जर्मनी में स्थानीय भाषा में रूपांतर कर इस पुस्तक का विमोचन 24 जून 2006 को जर्मनी में किया गया। गुज.प्र.आ.सम्मेलन की ओर से विशेष रूप से बधाई दी गयी एवं अभिनन्दन किया गया ।

### चुनाव सम्पन्न

गुजरात प्र. आयु. सम्मेलन की कच्छ जिला शाखा का चुनाव, चुनाव अधिकारी एवं क्षेत्रीय मंत्री, वैद्य विक्रम शुक्ला, वैद्य बकुलेश मेहता की (गांधीधाम) उपस्थिति में हुआ।

इसमें निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गये

प्रमुख :- डा० भारतीबेन जाडेजा (आदिपुर)
उपप्रमुख :- डा० बकुलेश जे मेहता (गांधीधाम)
उपप्रमुख:- डा० जयभाई संधवी (भुज)
मंत्री:- डा० विजय सोलंकी (गांधीधाम)
सहमंत्री:- डा० रोहित पंडित (रापर)
खजांची :- डा० भक्तिबेन अहिर (आदिपुर)
संगठनमंत्री :- डा० कृस्नाबेन पटेल (आदिपुर)
संगठनमंत्री:- डा० धमेन्द्र परमार (भचाऊ)
संगठनमंत्री:- डा० निपुणभाई बूच (भुज)
संगठनमंत्री:- डा० अफरोक्ष खत्री (अंजार)

### कार्यकारिणी समिति की बैठक संपन्न

गुजराज प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन के 25वें अधिवेशन के संदर्भ में कार्यकारिणी समिति की बैठक दिनांक 03-09-2006 को अहमदाबाद स्थित सिद्धि विनायक हॉस्पिटल के सभागृह में सायं 4.00 बजे वैद्य श्री कांतिभाई जानी की अध्यक्षता में संपन्न हुई ।

गुजराज प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन का 25वां अधिवेशन दिनांक 19.11.06 मिल्क सिटी, आणंद शहर में बड़ी धूमधाम से मनाया जायेगा । उसी समय अखिल भा.आ.म. सम्मेलन का शताब्दी समारोह भारत भर के एवं गुजरात के लब्ध प्रसिद्ध वैद्यों एवं महानुभावों की उपस्थिति में मनाया जायेगा । इस शताब्दी समारोह एवं 25वें अधिवेशन में आरोग्य आयुर्वेद का अनोखा प्रदर्शन आयोजित किया जायेगा ।

### नि:शुल्क चिकित्सा शिविर आयोजित

सूरत जिला आयुर्वेद सम्मेलन (गु.प्र.आ.स. अन्तर्गत) के सूरत, भरुच, बलसाड़, बड़ोदरा में भयानक बाढ़ से पीड़ित लोगों को गु.प्र.आ. सम्मेलन और सूरत जिला आ. सम्मेलन के 50 से अधिक वैद्य एवं डाक्टर मित्रों ने लगातार 15 दिनों तक इन सभी शहरों और आसपास के गांवों में स्वयं सेवकों के साथ जाकर औषधि द्वारा एवं शिविर लगाकर नि:शुल्क चिकित्सा एवं औषध वितरण और फूड पैकेट्स, पानी, दूध एवं खाद्य सामग्री का वितरण बड़ी भारी मात्रा में विविध जगहों पर किया गया । तत्पश्चात् अभी रोग संक्रमण से बचने के लिए शहर एवं गांवों में धूप आदि कार्यक्रम का अभियान शुरू किया गया है । इस कार्य में सूरत के महापौर वैद्य कानुभाई मावाणी एवं सूरत जि०आ०सं० के अध्यक्ष वैद्य निपेश पटेल की सेवाएं सराहनीय हैं ।

## नयी दिल्ली

### महात्मा हंसराज दिवस के उपलक्ष्य पर दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज के प्रिंसिपल डॉ० राजकुमार सम्मानित

गत दिवस डी०ए०वी० मैनेजिंग कमेटी, नयी दिल्ली द्वारा तालकटोरा स्टेडियम में आयोजित महात्मा हंसराज दिवस के उपलक्ष्य में जालन्धर के दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज के प्रिंसिपल डॉ० राजकुमार शर्मा को उनकी उत्कृष्ट सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया । इस अवसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



पर डी.ए.वी. मैनेजिंग कमेटी नयी दिल्ली के प्रधान श्री जी.

पी. चोपड़ा जी की अध्यक्षता में आयोजित एक भव्य समारोह में श्रीमती शीला दीक्षित, मुख्यमंत्री दिल्ली राज्य एवं श्री रघुनंदन लाल भाटिया, राज्यपाल, केरल के द्वारा उन्हें स्मृति चिन्ह, शाल व प्रशस्ति पत्र दिया गया । प्रिंसिपल डॉ० राजकुमार ने पांच वर्ष से भी कम समय में कालेज का विकास द्रुतगति से किया । पांच वर्षो के इस कार्यकाल में बाबा फरीद यूनिवर्सिटी ऑफ हेल्प सांइसेज द्वारा आयोजित बी ए एम एस फाईनल की परीक्षा में गत पांच वर्षों में से चार बार यूनिवर्सिटी टापर इसी कालेज के रहे । यूरोपियन साईन्टिफिक रिसर्च इन्स्टीटयूट आफ आयुर्वेद, हालैण्ड के साथ एक अनुबन्ध कर दयानन्द आयुर्वेद कालेज का शिक्षा के क्षेत्र में अन्तर राष्ट्रीय स्तर पर लाने का श्रेय डॉ० राजकुमार को ही जाता है । यहां के अध्यापकों का आयुर्वेद के अध्यापन हेतु विदेश जाना व विदेशी विद्यार्थियों की इस कालेज में आना इनके कार्यकाल में ही प्रारम्भ हुआ ।

इस अल्पावधि में ही राष्ट्रीय/अन्तरराष्ट्रीय स्तर के तीन सेमिनार इनके कार्यकाल में ही हुए । डॉ० राजकुमार ने कालेज की ओर से एक नियमित पत्रिका आयुर्वेदा फार हालिस्टिक हेल्थ का प्रकाशन प्रारम्भ कर कालेज एवं आयुर्वेद के विकास हेतु एक नया मील पत्थर प्रकाशित हुआ ।

डी०ए०वी० फार्मेसी के उत्पादों का सस्ता दामों में डी०ए०वी० संस्थाओं के नेटवर्क के द्वारा घर-घर पहुंचाने की नयी नीति प्रारम्भ कर फार्मेसी के विकास को नयी दिशा दी । 108 वर्षीय पुराने इस कालेज के अस्पताल में डिलीवरी, अल्ट्रा साउंड व अन्य सुविधाओं का प्रारम्भ भी इन्हीं के निर्देशन में हुआ ।

## शोक व्यक्त

| | |
|---|---|
| डा० महेश चन्द्र रावत | श्रीमती डा०शोभा रावत |
| चिकित्साधिकारी | एवं चिकित्साधिकारी |
| राजकीय आयु०चिकित्सालय | राज०आयु०चिकित्सालय |
| चिरोलिया, अलीगढ़ | ताहिरपुर, अलीगढ़ |

आपके युवा पुत्र के आकस्मिक निधन पर दनकौर शाखा हाथरस हार्दिक शोक व्यक्त करती है । इस कष्टदायक क्षण में मैं तथा हम सब आपके शोक के सहभागी हैं ।

हम सभी ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह दिवंगत आत्मा को मोक्ष एवं शान्ति प्रदान करे एवं आपको तथा परिवार को धैर्य प्रदान करे । सुख-दुख, यश-अपयश, धूप-छांव, जीवन-मरण यह जीवन का अटूट सत्य है । मानव को इस सत्य को ग्रहण करना चाहिए, जो आया वह गया है, कुछ समय बाद यदि क्षणिक होने पर जीवन अपनी गति पर आ जाता है ।

एक बार पुन: प्रार्थना है कि आप धैर्य एवं शांति से अपना जीवन यापन करें ।

(डा० राकेश मोहन शर्मा)
चिकित्साधिकारी/सचिव
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
बरईशाहपुर - हाथरस

## सचित्र आयुर्वेद को हार्दिक शुभकामनायें

प्रान्तीय संघ के समस्त पदाधिकारीगण, सम्मानित चिकित्साधिकारी, उत्तर प्रदेश आयुर्वेद, यूनानी, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, नवीन प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, पाठक गण सचित्र आयुर्वेद, सम्पादक मण्डल तथा कर्मचारीगण 'सचित्र आयुर्वेद' को ज्योति पर्व दीपमाला की पूर्व सन्ध्या पर मेरी हार्दिक शुभकामनायें ।

(डा० राकेश मोहन शर्मा)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



चिकित्साधिकारी/सचिव
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
बरईशाहपुर - हाथरस

## जनपद हाथरस की वर्ष 2006-07 की नवीन कार्यकारिणी का गठन

राजकीय आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा सेवा संघ जनपद शाखा हाथरस की चुनाव बैठक वर्ष 2006-07 हेतु पूर्व निर्धारित कार्य क्रमानुसार राजकीय आयुर्वेद चिकित्सालय, सासनी, हाथरस में दिनांक 16-05-2006 दिन मंगलवार को कोरम पूरा होने पर डॉ० वीरेन्द्र पाल सिंह, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, अलीगढ़ की संरक्षता/अध्यक्षता में सम्पन्न हुई ।

चुनाव वर्ष 2006-07 के निम्न पदाधिकारी सर्वसम्मति से निर्विरोध चुने गए ।

1. संरक्षक, डॉ० वीरेन्द्र पाल सिंह, क्षे०आयु०/यू० अधि०, अलीगढ़ ।
2. अध्यक्ष, श्रीमती डॉ कुसुम लता कौशिक, रा०आयु०चि० सासनी, हाथरस ।
3. उपाध्यक्ष, डॉ० मानवेन्द्र कुशवाह, रा०आयु०चि०, सासनी, हाथरस ।
4. सचिव, डॉ० राकेश मोहन शर्मा, रा०आयु०चि०, बरई शाहपुर हाथरस ।
5. उपसचिव, डॉ० रमेश अग्निहोत्री, रा०आयु०चि० वाजिदपुर, हाथरस ।
6. प्रचार एवं वि० सचिव, डॉ० मदन मोहन भारद्वाज, रा०आयु०चि०, मैढू, हाथरस ।
7. आय-व्यय निरीक्षक, डॉ० राकेश मित्तल, रा०आयु०चि०, कौमरी, हाथरस ।

**अस्थ कार्यकारिणी**

डॉ० जागेश्वर दयाल, रा०आयु०चि०, भैंकुरी, हाथरस, डॉ० अश्वनी कुमार पाण्डेय, रा०आयु०चि०, वरसे, हाथरस, डॉ० प्रमोद चौहान, वरवाना, हाथरस, डॉ० संजीदा बानो, रा०यु०चि० लाखनू, हाथरस ।

अन्त में शान्तिपूर्वक सम्मानजनक नवीन कार्यकारिणी गठित कराने में किये गये सहयोग हेतु कार्यकारिणी गठित समिति के अध्यक्ष डा० वीरेन्द्र पाल सिंह, क्षे०आ०यू०अधि०, अलीगढ़ ने सभी सदस्यों का आभार व्यक्त किया एवं आशा व्यक्त की कि नवीन कार्यकारिणी एकता के साथ संघ के हितों के लिए कार्य करेगी । प्रान्तीय कार्यकारिणी से अपेक्षा की गयी कि कैडररिव्यू कराके समयगत वेतनमान् जारी कराया जाये ।

## आयुर्वेदिक स्वास्थ्य शिविर आयोजित

जनपद उत्तरकाशी में विभाग द्वारा दिनांक 16/04/2006 को प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र चिन्याली सौड में आयुर्वेदिक स्वास्थ्य शिविर का आयोजन किया गया शिविर में 350 से अधिक रोगियों को उपचार एवं परामर्श दिया गया ।

दिनांक 23.04.2006 को सरस्वती शिशु मन्दिर, पुरोला में पुनः विशाल आयुर्वेदिक स्वास्थ्य शिविर लगाया गया जिसमें लगभग 1000 रोगियों को उपचार एवं परामर्श दिया गया ।

उक्त शिविर में डा० भण्डारी के निर्देशानुसार डा० चौकियाल, डा० डी०डी० बधानी, डा० शशि जोशी, डा० बतसला बहुगुणा तथा फार्मेसिस्टों श्री सुशील चन्द्र बिजल्वाण, श्री पी०सी० व्यास, श्री के०पी० भट्ट, श्री के०एस० कैन्तुरा तथा श्री विजय सिंह विष्ट लिपिक ने सराहनीय कार्य किया ।

ऋषिकुल एवं गुरूकुल से आये चिकित्सक डा० देवेश शुक्ला, डा० वृजेश मिश्रा, डा० जी.पी. गर्ग, श्री रवि चौहान फार्मे० ने भी प्रशंसनीय योगदान किया ।

चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी श्री हर्षपति जोगेला, श्री रूकम सिंह, श्री अजय नैथानी, श्री त्रिलोक सिंह आदि ने सराहनीय कार्य किया ।

जनता एवं जनप्रतिनिधियों द्वारा उक्त शिविरों की प्रशंसा की गई । शिविरों में उमड़ती हुई भीड़ को देखने हुए जनप्रतिनिधियों ने त्रिदिवसीय एवं पंचदिवसीय शिविर लगाने का अनुरोध किया, लोक प्रियता एवं शिविरों के प्रभाव को देखते हुए जनता का रूझान अब आयुर्वेदिक चिकित्सालयों की ओर और भी अधिक होने लगा है ।

## नयी कार्यकारिणी की आम बैठक सम्पन्न



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



आज दिनांक 21.04.2006 को फार्मेसिस्ट एसोसिएशन जनपद शाखा, उत्तरकाशी का नई कार्यकारिणी की आम बैठक संघ के अध्यक्ष डा० सुशीलचन्द्र विजल्वाण की अध्यक्षता में सम्पन्न हुयी । साथियों ने अपने-अपने विचार एवं सुझाव रखे तथा अपनी समस्याओं से संघ को अवगत कराया । सभी साथियों के सुझाव व समस्याओं को ध्यान में रखते हुए सर्व सम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव पारित हुये तथा इन पर शीघ्र कार्यवाही करने का अनुरोध किया गया है ।

**प्रस्ताव संख्या 1- पिछली कार्यवाही की पुष्टि:** - समस्त सदस्यों के सम्मुख पिछली कार्यवाही का वाचन किया गया एवं सर्व सम्मति से उसकी पुष्टि की गई ।

**प्रस्ताव संख्या 2 - आयुर्वेद विभाग द्वारा चिकित्सा शिविर के आयोजन पर विचार :-** सर्व सम्मति से निर्णय लिया गया है कि आयुर्वेद विभाग द्वारा इस तरह के चिकित्सा शिविरों का समय-समय पर विभिन्न स्थानों में आयोजन किया जाता रहे, ताकि जनता को अधिक से अधिक स्वास्थ्य सेवायें उपलब्ध कराई जा सकें और आयुर्वेद पद्धति का प्रचार-प्रसार हो सके । उत्तरकाशी जनपद में क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी, डा० शूरवीर सिंह भण्डारी की प्रेरणा एवं सौजन्य से चिन्यालीसौड एवं पुरोला में चिकित्सा शिविरों का आयोजन क्रमश:16.04.06 एवं 23.04.06 को किया गया जहां शुल्क चिकित्सा की गई तथा हजारों की संख्या में आये रोगियों को आयुर्वेदिक औषधियां निशुल्क वितरण की गई । इस सफल आयोजन के लिये क्षे० आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी डा० भण्डारी जी कोटि-कोटि बधाई के पात्र हैं । संघ ईश्वर से प्रार्थना करता है कि डा० भण्डारी स्वस्थ जीवन व्यतीत करते हुये लम्बी आयु प्राप्त करें तथा लोकप्रिय, ईमानदार अधिकारी की तरह सभी को इसी तरह टीम भावना के साथ जोड़ते हुये कार्य करते रहें ।

टीम से जुड़े समस्त चिकित्साधिकारी, फार्मेसिस्ट, कार्यालय सहायक एवं चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी भी बधाई के पात्र हैं, सभी ने अपनी योग्यता का परिचय देते हुये उत्साह से अपना कार्य किया । संघ का सुझाव/मांग है कि आसवारिष्ट एवं तेल आदि की छोटी-छोटी पैकिंग जैसे 50 एम.एल. 100 एम.एल. तथा 200 एम.एल. में वितरण हेतु मंगवाई जायं ताकि अधिकाधिक संख्या में रोगियों को इसका लाभ मिल सके ।

**प्रस्ताव संख्या-3 क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी स्तर की मांगें :-** फार्मेसिस्ट ऐसोसिएशन उत्तरकाशी क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी से मांग करता है कि :-

1. फार्मेसिस्टों के समस्त देयक जो भुगतान हेतु कार्यालय में लंबित पड़े हैं, उनके शीघ्र भुगतान की कार्यवाही की जाय । फार्मेसिस्टों की अपेक्षा सहन नहीं की जायेगी ।
2. फार्मेसिस्टों की भविष्य निधि पास बुकों में चक्रवृद्धि सहित अंकन किया जाय एवं सभी संबंधित कर्मचारियों की पासबुक एवं सेवा पुस्तिका पर समय-समय पर हस्ताक्षर करवाये जायं ।
3. फार्मेसिस्टों की समस्याओं के शीघ्र समाधान हेतु जनपद के पदाधिकारियों के साथ हर तीसरे माह बैठक कर अपने स्तर की समस्याओं का समाधान किया जाय ।
4. क्रय समिति में चीफ फार्मेसिस्ट के अतिरिक्त कम से कम दो प्रतिनिधि फार्मेसिस्टों को रखें जायं ताकि औषधियां अच्छी गुणवत्ता वाली क्रय की जाय ।
5. जनपद से बाहर स्थानान्तरण पर गये फार्मेसिस्टों के कार्यालय से यदि कोई सूचना मंगवाई जाती है तो उसे तत्काल संबंधित कार्यालय को भेजा जाय ।

**प्रस्ताव संख्या 4 - निदेशालय एवं शासन स्तर की मांगें :-** संघ निदेशक महोदय से निवेदन करता है कि फार्मेसिस्टों की निम्नलिखित मांगों के समाधान हेतु उचित कार्यवाही करने की कृपा करें ।

1. फार्मेसिस्टों की विभाग में योगदान की तिथि की सूचना उनकी सेवा पुस्तिका के अनुसार प्रत्येक जनपद से मंगवाई जाय उसके पश्चात् पूरे उत्तरांचल की वरिष्ठता सूची प्रकाशित की जाय । पूर्व में जो वरिष्ठता सूची प्रकाशित की गई है वह त्रुटिपूर्ण है ।

2. उत्तरकाशी जनपद में 2 फार्मेसिस्ट श्री केदार प्रसाद भट्ट एवं श्री नन्दकिशोर जायसवाल को लगभग 15-16 वर्ष विभाग में अविरल सेवा देते हुए हो गये लेकिन उनका विनियमितिकरण अभी तक नहीं हुआ है जबकि श्री भट्ट उत्तरांचल के निवासी होने के साथ-साथ विकल्पधारी भी हैं । अत: इनका विनियमितिकरण



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



करने का कष्ट करें ।

3. प्रत्येक फार्मेसिस्ट को पंचकर्म, क्षारसूत्र, काय चिकित्सा, औषधि निर्माण एवं प्रशासनिक व्यवस्था का प्रशिक्षण दिया जाय क्योंकि दूरस्थ चिकित्सालयों में एवं चिकित्साधिकारी की अनुपस्थिति में फार्मेसिस्ट ही चिकित्सालयों के समस्त कार्य का सम्पादन करते हैं ।

4. फार्मेसिस्टों का पंजीकरण पैरा - 2(दो) या पैरा - 3(तीन) में किया जाय।

5. जनपद से बाहर सम्बद्ध किये गये फार्मेसिस्टों की संबद्धता समाप्त की जाय एवं उन्हें मूल तैनाती जनपद में वापस भेजा जाय या उनका स्थानान्तरण किया जाय।

6. निर्दोष निलंबित फार्मेसिस्ट श्री किसन लाल आर्य को शीघ्र बहाल किया जाय । बड़े खेद का विषय है कि जो अधिकारी भ्रष्ट हैं, अनेक घोटालों में संलिप्त रहे हैं वो तो बिना जांच के बहाल कर दिये गये हैं किन्तु निर्दोष फार्मेसिस्ट जो दो तीन चिकित्सालयों का कार्य सम्पादित कर रहे हैं, उनकी छोटी गलती पर अभी तक निलंबित हैं । बिना जांच के अधिकारी कैसे बहाल हो गये ।

7. टिहरी जनपद में 1997 से कार्यरत 34 कर्मचारियों जिनमें 14 चिकित्साधिकारी, 8 फार्मेसिस्ट तथा 12 चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों का माह दिसम्बर 1997 का वेतन जो तत्कालीन क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी डा. आई. पी. शर्मा की उदासीनता एवं संलिप्तता के कारण गबन हुआ था तथा बार-बार अनुरोध करने पर भी आजतक संबंधित कर्मचारियों को भुगतान नहीं हुआ है । शाखा संघ एवं प्रान्तीय संघ ने इस संबंध में कईबार मांग की, वार्ता की, किन्तु झूठे आश्वासनों के अलावा आज तक कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ । कर्मचारी भी टिहरी जनपद से बाहर स्थानान्तरित हो गये हैं । तत्कालीन क्षे०आ०अधिकारी डा०आई०पी० शर्मा निदेशालय में मौज-मस्ती उड़ा रहे हैं तथा वेतन भुगतान के मामले को निस्तारण होने में बाधा पहुंचा रहे हैं । उक्त वेतन का गठन अधिकारी की गलती से हुआ है इसलिये उनके उपर जिम्मेदारी निर्धारित करते हुये कर्मचारियों का वेतन ब्याज सहित उनके वेतन अथवा फण्ड से वसूल करवाया जाय ।

8. 15-25 बेड (शैयायुक्त) चिकित्सालयों में फार्मेसिस्ट के 4 पद, चीफ फार्मेसिस्ट के दो पर सृजित किये जायं ।

9. जिला चिकित्सालयों के आयुर्वेदिक यूनिट में फार्मेसिस्ट के तीन पद तथा चीफ फार्मेसिस्ट का एक पद सृजित किया जाय ।

10. सभी पंचकर्म यूनिटों में 3 फार्मेसिस्ट, एक चीफ फार्मेसिस्ट का पद सृजित किया जाय ।

11. कार्यालय के औषधि भण्डार में फार्मेसिस्ट का एक पद सृजित किया जाय ।

12. प्रत्येक जनपद के क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी कार्यालय में फार्मेसी अधिकारी के पद का सृजन किया जाय, जो जनपद के सभी चिकित्सालयों के औषधि भण्डार का निरीक्षण कर रख-रखाव के निर्देश देंगे ।

## चुनाव 2006-07 (नयी कार्यकारिणी का गठन)

आज दिनांक 21-4-2006 को प्रान्तीय वरिष्ठ उपाध्यक्ष श्री भगत सिंह भण्डारी के पर्यवेक्षण में जनपद शाखा उत्तरकाशी की नई कार्यकारिणी का गठन हुआ, जिनमें निम्नलिखित पदाधिकारी एवं सदस्य निर्विरोध निर्वाचित हुए।

-131495

1. अध्यक्ष, डा० सुशील चन्द्र बिजल्वाण, फार्मे०यूनिट जिला चिकित्सालय, उत्तर काशी ।
2. वरिष्ठ उपाध्यक्ष, श्री शक्ति सिंह कैन्तुरा, फार्मे० रा०आ०चि०, साल्ड, उत्तरकाशी ।
3. उपाध्यक्ष, श्री कृपाल सिंह, कैन्तुरा, फार्मे०क्षे० आ०कार्यालय, उत्तरकाशी (स्टोर)
4. उपाध्यक्ष, श्री जीतपाल सिंह रावत, फार्मे० रा० आयु० चि०, डोभालगाँव, उत्तरकाशी ।
5. मंत्री, श्री द्वारिका प्रसाद थपलियाल, फार्मे०, रा०आ०चि०, बौन (उत्तरकाशी) ।
6. कोषाध्यक्ष, श्री कैलाश प्रसाद भट्ट, फार्मे० रा०आ०चि०, मुस्टिक सौड़, उत्तरकाशी ।

**कार्यकारिणी सदस्य :- (मनोनीत)**

1. प्रकाश चन्द्र व्यास, फार्मे०रा०आ०चि०, उत्तरकाशी (नगर)
2. श्री बृजमोहन कुड़ियाल, फार्मे०रा०आ०चि०, जोगत, उत्तरकाशी ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



3. श्री चन्द्र प्रकाश सेमवाल, फार्मे०रा०आ०चि०, कण्डारी, उत्तरकाशी ।
4. श्री कुशला नन्द डंगवाल, फार्मे०रा०आ०चि०, कण्डारी, उत्तरकाशी ।
5. श्री देवी प्रसाद त्रिवेदी, फार्मे०रा०आ०चि०, कुथनौर, उत्तरकाशी ।

## जिला आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी उत्तरकाशी बधाई के पात्र

आज दिनांक 06.05.2006 को योग कक्ष में श्रीमान जिला आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी डा०एस०एस० भण्डारी की अध्यक्षता में एक प्रशासनिक बैठक सम्पन्न हुई, जिसमें जनपद के सभी आयुर्वेदिक चिकित्सालयों के चिकित्सा अधिकारी एवं फार्मेसिस्ट इंचार्ज उपस्थित हुए, इस अवसर पर दीर्घ काल से चल रही चतुर्थ वर्गीय कर्मचारियों की मांगों के अन्तर्गत डा० भण्डारी द्वारा सभी चतुर्थ वर्गीय कर्मचारियों को ग्रीष्मकालीन वर्दी वितरित की गई । इस उपलब्धि के लिये आयुर्वेदिक चतुर्थ वर्गीय संघ के अध्यक्ष, श्री हर्षपति जोगेला एवं कोषाध्यक्ष श्री अशोक कुमार ने डा० भण्डारी जी का आभार व्यक्त करते हु आशा व्यक्त की कि भविष्य में भी कर्मचारियों की लंबि मांगों को इसी प्रकार निस्तारित करने का प्रयास करते रहें इस अवसर पर श्री जोगेला ने अपने सभी साथियों से अ कर्तव्यपरायणता एवं कार्यकुशलता से जनता की सेवा क का अनुरोध किया ।

## हिमाचल प्रदेश

**डा० गोपाल चड्ढा, चड्ढा ट्रेडर्स ने निम्नलिखित समाच प्रेषित किये हैं :-**

### धर्मशाला में कैन्सर और स्तनपान गोष्ठी

इस गोष्ठी में बड़ी संख्या में प्रतिनिधियों ने भ लिया । गोष्ठी में स्तनपान के लाभ और स्तनपान नहीं क पर कैन्सर के उत्पन्न होने का खतरा बताया गया । मु कैन्सर के कारणों में पान-मसाला, खैनी, सुपारी, अ मिर्च का सेवन सहित अन्य कारण बताये गये । साथ किशोरियों बढ़ते कैन्सर पर चिन्ता प्रकट की गयी ।

कैन्सर जागरण शिविर में बताया गया कि जल का अधिकाधिक सेवन, ताजा फल, हरी सब्जियों प्रयोग, गाजर, तुलसी, गोमूत्र का सेवन करना चाहिए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ISSN - 090678 X

# सचित्र आयुर्वेद

# SACHITRA AYURVED

## A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

वर्ष - 59 अंक - 5 नवम्बर - 2006

मूसरमुद्गो धूमवुल्लत्थलवणैः कृतः ।।368।।
कफपित्ताविरोधी स्याद्वात व्याधौ च शस्यते ।
मृद्विकादाडिमैर्युक्तः स चाप्युक्तोऽग्निलार्दिते ।।369।।
रोचनो दीपनो हृद्यो लघुपाक्युप दिश्यते ।
पटोलनिम्बयूषौ तु कफमेदोविशोषिणौ ।।370।।
पित्तघ्नौ दीपनौ हृद्यौ कृमिकुष्ठ ज्वरापहौ ।

सु०सू० 46/368-370

मसूर, मुङ्ग, गेहूँ, कुलत्थी तथा नमक से तैयार किया पंचक यूष-कफ-पित्त का अविरोधी तथा वायु रोग में उत्तम है। (मूंग और मसूर का यूष वायु में, मसुर, मूंग, गेहूं इन तीनों का यूष पित्तनाशक और पाँचों का यूष कफ नाशक है।)

इसी पंचक यूष में मृद्वीका और अनार का योग होने से, अतीव वायुनाशक हो जाता है। रूचिकारक, अग्निदीपक, हृदय के लिये प्रिय, लघुपाकी है।

पटोल (परवल) और नीम का यूष - कफ और मेद को सुखाता है। पित्तनाशक, अग्निदीपक, हृदय के लिये प्रिय, कृमि-कुष्ठ और ज्वरनाशक है।

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


अब भूल जाईये महीने की चिन्ता

बैद्यनाथ

सुन्दरी कल्प फोर्ट

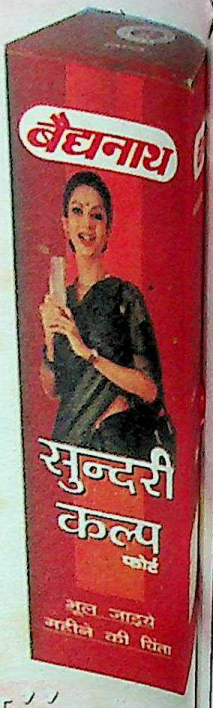


रक्त की कमी, घबराहट, थकावट, हाथ पाँव के तलवे की जलन आदि परेशानियों में फौरन आराम देता है ।

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

बैद्यनाथ

सुरक्ता

आयुर्वेदिक स्किन टोनर
कील मुहाँसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# औषधि-शास्त्र में नोबेल पुरस्कार विजेता, प्रोफेसर क्रेग सी० मेल्लो और प्रोफेसर एन्ड्रू जेड० फायर को शतशः बधाई

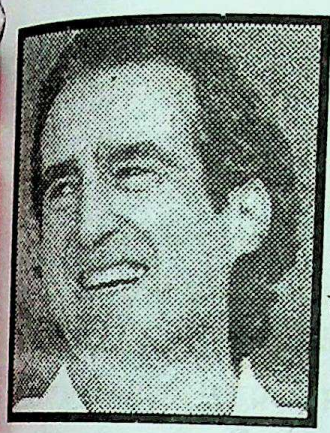

मेसाच्यूट्स विश्वविद्यालय चिकित्सा महाविद्यालय के मोल्युकुलर मेडिसिन एवं हार्वर्ड हग्स चिकित्सा विज्ञान संस्थान के अन्वेषणकर्त्ता, प्रोफेसर क्रेग सी० मेल्लो

स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय चिकित्सा महाविद्यालय के पैथोलोजी एवं जेनेटिक्स विभाग के प्रोफेसर एन्ड्रू जेड० फायर

वर्ष 1998 में अमेरिकी वैज्ञानिक एवं प्राध्यापक प्रोफेसर एण्ड्रू फायर एवं प्रोफेसर क्रेग मेल्लो ने एक एस

## RNA interference

— gene silencing by double-stranded RNA

(शेष पृष्ठ 324 पर)

### 1. The central dogma

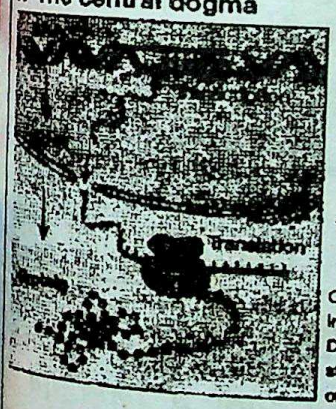


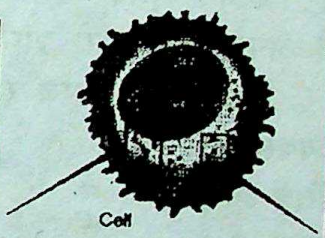


Our genome operates by sending information from double-stranded DNA in the nucleus, via single-stranded mRNA, to guide the synthesis of proteins in the cytoplasm.

### 2. The experiment

RNA carrying the code for a muscle protein is injected into the worm C. elegans. Single-stranded RNA has no effect. But when double-stranded RNA is injected, the worm starts twitching in a similar way to worms carrying a defective gene for the muscle protein.

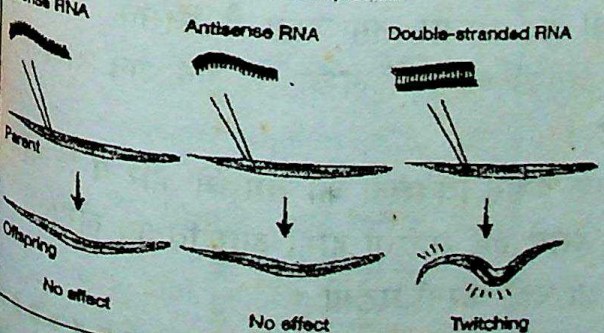


### 3. The RNAi mechanism

RNA interference (RNAi) is an important biological mechanism in the regulation of gene expression.

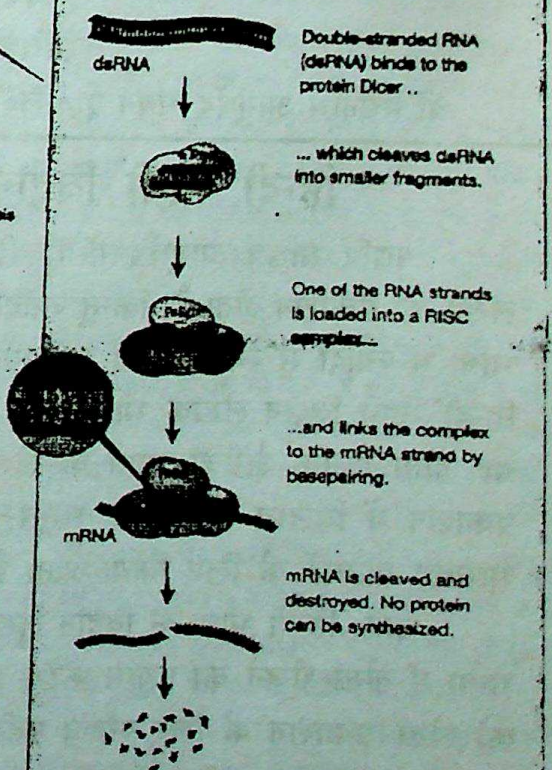


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# 'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहक कृपया ध्यान दें

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहकों से हमारा विनम्र निवेदन है कि जिनका चन्दा दिसम्बर' 2006 तक जमा है, दिसम्बर' 2006 का अंक मिलने के बाद उनका वार्षिक शुल्क समाप्त हो जाएगा । अतः निवेदन है कि अब वे यथाशीघ्र जनवरी, 2007 से दिसम्बर, 2007 तक की अवधि के लिए वार्षिक शुल्क 100 रुपया मनीआर्डर से निम्न पते पर भेज दें । इस प्रकार जिन ग्राहकों का वार्षिक शुल्क हमें प्राप्त हो जायेगा, उन्हें हम अलग से कोई कार्ड अथवा वी.पी. नही भेजेंगे । स्मरणीय है कि मनीआर्डर से चंदा भेजने पर केवल 100 रुपये ही देने पड़ेंगे जबकि वी.पी. भेजने पर लगभग 150 रुपये देने पड़ जायेंगे । अतः एकमात्र तरीका मनीआर्डर द्वारा वार्षिक चंदा यथाशीघ्र भेज देना है । अगर किसी ग्राहक महानुभाव को किसी कारणवश अग्रिम वर्ष 2007 से ग्राहक नहीं बनना हो तो वे अपने निर्णय की सूचना इस कार्यालय को शीघ्र देंगे । यदि किसी कारणवश वार्षिक शुल्क में वृद्धि हुयी, तो यह वृद्धि उन ग्राहकों पर लागू नहीं होगी, जिन्होंने शुल्क भेज दिया है ।

नोट - जो ग्राहक छात्र हैं, वे अपने संस्थान से प्राप्त प्रमाण-पत्र के साथ रियायती वार्षिक शुल्क मात्र 75.00 रु. मनीआर्डर से भेज सकते हैं ।

व्यवस्थापक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800 001

# हिन्दी भाषी विद्वान लेखकों से निवेदन

यद्यपि सचित्र आयुर्वेद में हिन्दी, अंग्रेजी एवं संस्कृत भाषा में लिखे गये लेखों का प्रकाशन होता है, किन्तु ज्यादातर पाठक हिन्दी भाषी होने के कारण हिन्दी भाषा में ज्यादा से ज्यादा लेखों का प्रकाशन करना हमारी विवशता है । दुर्भाग्यवश हिन्दी भाषी विद्वान लेखक भी अंग्रेजी में लिखना पसन्द करते हैं । इसका परिणाम यह होता है कि अंग्रेजी भाषा के लेखों का अम्बार लग जाता है जिसके कारण प्रकाशन में विलम्ब होता है । वस्तुतः अंग्रेजी भाषा में लेखों का प्रकाशन दक्षिण भारतीय पाठकों के लिए किया जाता है ।

अतः हिन्दी भाषा के विद्वान लेखक हमारी विवशता को समझेंगे और वे हिन्दी भाषा में लेख भेजने का प्रयास करेंगे । इससे हमें सुविधा होगी और विद्वान लेखकों को लेख-प्रकाशन के लिए ज्यादा प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# रसायन शास्त्र क्षेत्र में नयी खोज से कैन्सर और हृदय रोग को पराजित करने में मदद मिलेगी

प्रोफेसर रोजर डी० कार्नबर्ग को रसायन शास्त्र में इसलिए नोबेल पुरस्कार मिला कि उन्होंने अपने अध्ययन से पता लगाया कि किस तरह जीन से प्रोटीन का निर्माण करने

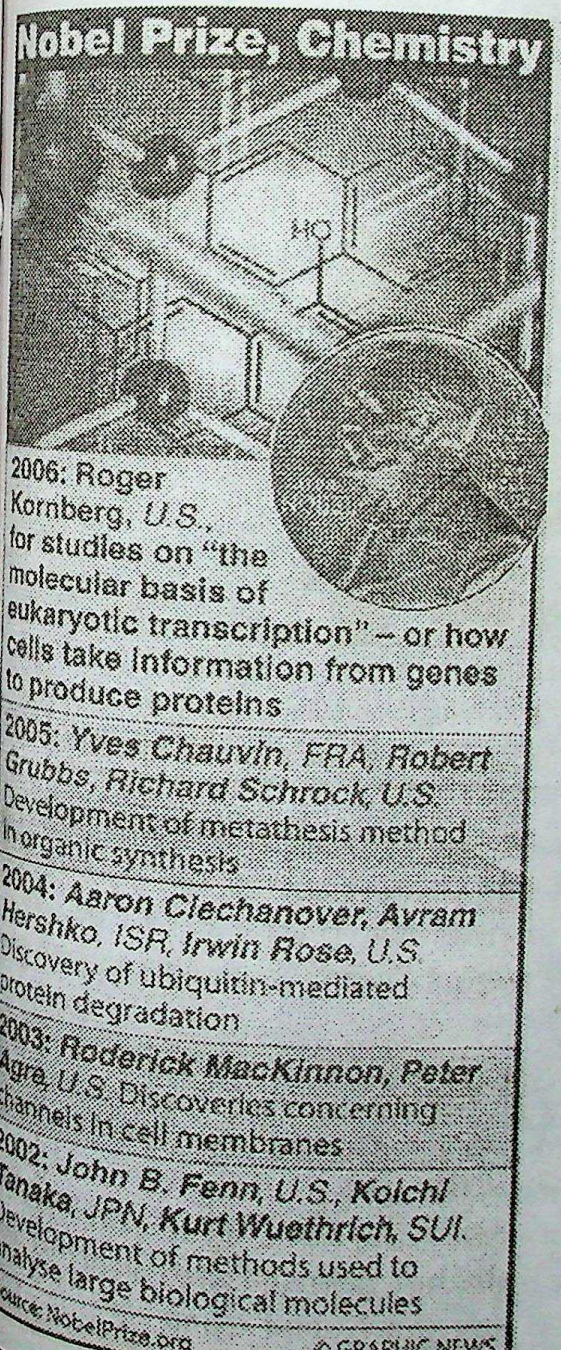


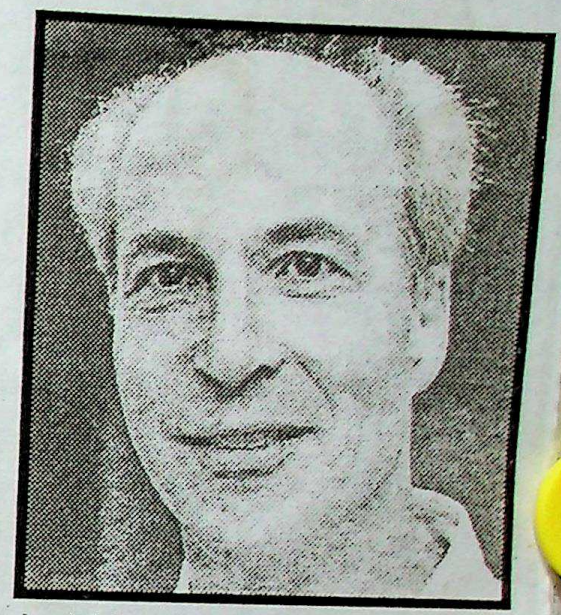

स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय चिकित्सा महाविद्यालय के प्रोफेसर रोजर डी० कार्नबर्ग

के लिए कोष सूचना प्राप्त करता है । इस प्रक्रिया से कैन्सर को परास्त करने एवं स्टेम कोष अनुसंधान को आगे बढ़ाने में मदद मिलेगी । इस प्रक्रिया में जो बाधा उत्पन्न होती है, उसे 'ट्रान्सक्रिप्शन' कहा जाता है । रायल स्वीडीश एकेडमी ने अपने प्रशस्ति-पत्र में कहा है कि "ट्रान्सक्रिप्शन प्रक्रिया सम्बन्धी ज्ञान से हमें मौलिक सिद्धान्त को समझने में मदद मिलेगी कि किस तरह खास प्रकार के कोषों के विभिन्न स्वरूपों को विकसित करने में स्टेम कोष मदद करता है । इससे विभिन्न अंगों को परिभाषित करने में भी मदद मिलेगी । एकेडमी ने यह भी कहा है कि "ट्रान्सक्रिप्शन के नियमन को समझना एक आवश्यक कदम है यदि हम चिकित्सा-शास्त्र में स्टेम कोष की पूर्ण क्षमताओं का दोहन करना चाहते हैं ।

59 वर्षीय अनुसंधानकर्त्ता के पिता को भी लगभग 50 वर्ष पूर्व रसायनशास्त्र में नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ था । **श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० एवं सचित्र आयुर्वेद की ओर से विद्वान शोधकर्त्ता को हार्दिक बधाई ।**

(विस्तृत सूचना के लिए **आरोग्य समाचार** नामक स्तम्भ **दिसम्बर अंक 2006** में पढ़ें ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

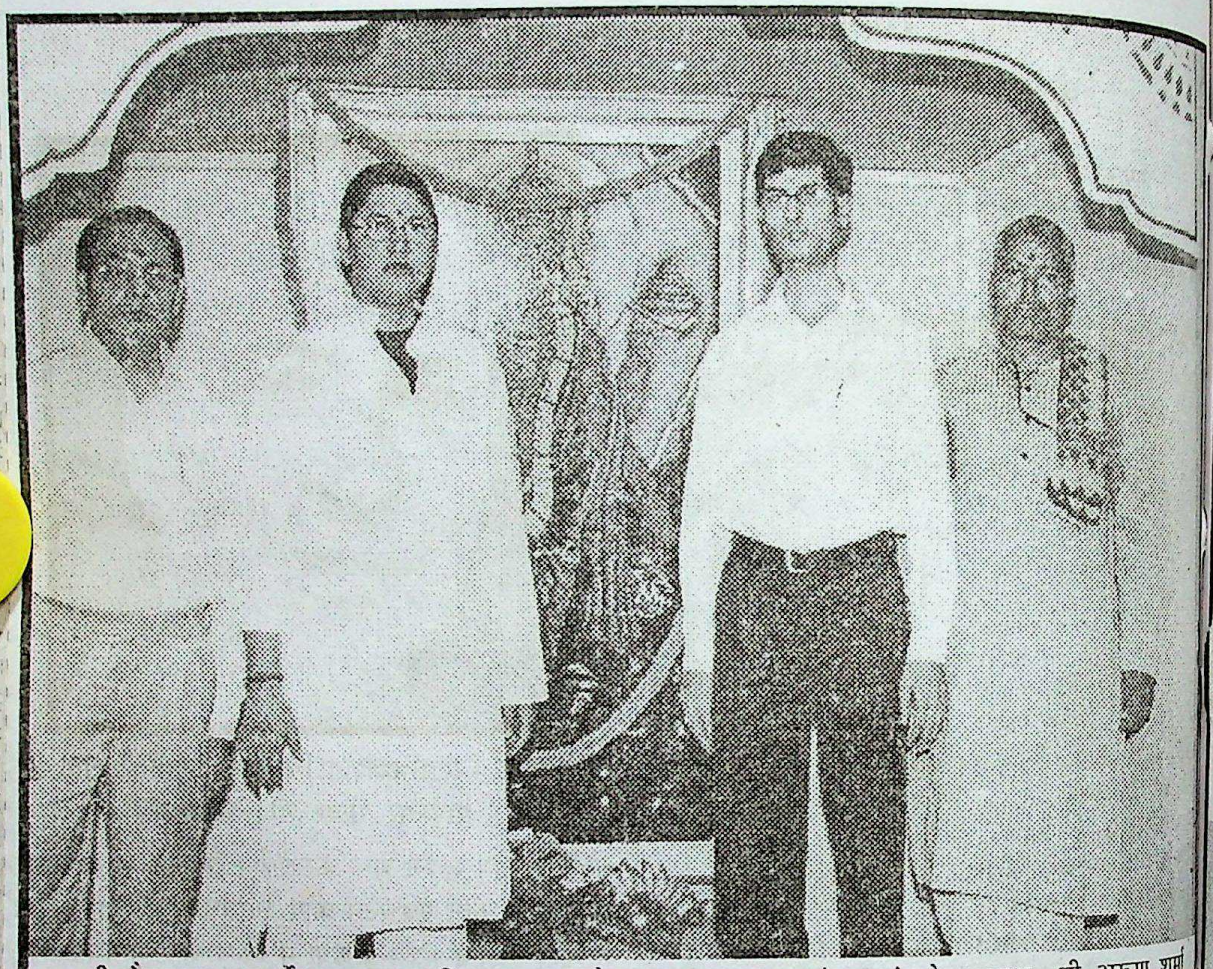

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना के शुभ अवसर पर 'भवन' के अध्यक्ष, श्री अरूण शर्मा (चित्र में बायें से द्वितीय) एवं उनके बायें 'भवन' के प्रबन्धक, डा०एल०के० चौधरी एवं उनके (श्री शर्मा के दायें) 'भवन' के सहायक महाप्रबन्धक, श्री देवनारायण झा एवं पंडित जी परिलक्षित हैं।

(पृष्ठ सं० 321 का शेषांश)

तंत्र की खोज की जिसके द्वारा mRNA को एक विशेष जीन से प्रोन्नत करना आसान हो गया। RNA मोल्युकिल्स जब कोष में स्थित दो जोड़े को सक्रिय करता है तक ऐसी प्रक्रिया को RNA हस्तक्षेप कहा जाता है। ये जोड़े जैव रसायन-तंत्र को सक्रिय करते हैं जो जोड़े RNA के समान अनुवांशिक रहस्य को अवनत करते हैं। जब mRNA मोलीकुल्स समाप्त हो जाते हैं, तो सम्बन्धित जीन भी शान्त हो जाता है और किसी अनजान प्रोटीन का निर्माण नहीं होता है।

RNA हस्तक्षेप पौधों, जानवरों और मनुष्यों में भी हो सकता है। इसका महत्व काफी बढ़ इसलिए जान है कि यह वायरस संक्रमण को रोकने में मदद करता है और इधर-उधर भागने वाले जीन को अपने नियंत्रण में रखता है। DNA का अनुवांशिक कोड यह बताता है कि किस तरह प्रोटीन का निर्माण होता है। विदित है कि हमारे जिनोम में लगभग 30,000 जीनों में से कुछ जीन ही कोष में इस्तेमाल किये जाते हैं।

इसमें कोई शक नहीं कि वर्त्तमान खोज से शरीर में जो प्रतिरोधी शक्ति मौजूद हैं, उस पर वायरस से आक्रमण को रोका जा सकता है। इस खोज के लिए **श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० एवं सचित्र आयुर्वेद की ओर से विद्वान शोधकर्त्ताओं का हार्दिक अभिनन्दन।** विस्तृत सूचना के लिए आरोग्य समाचार स्तम्भ देखें।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

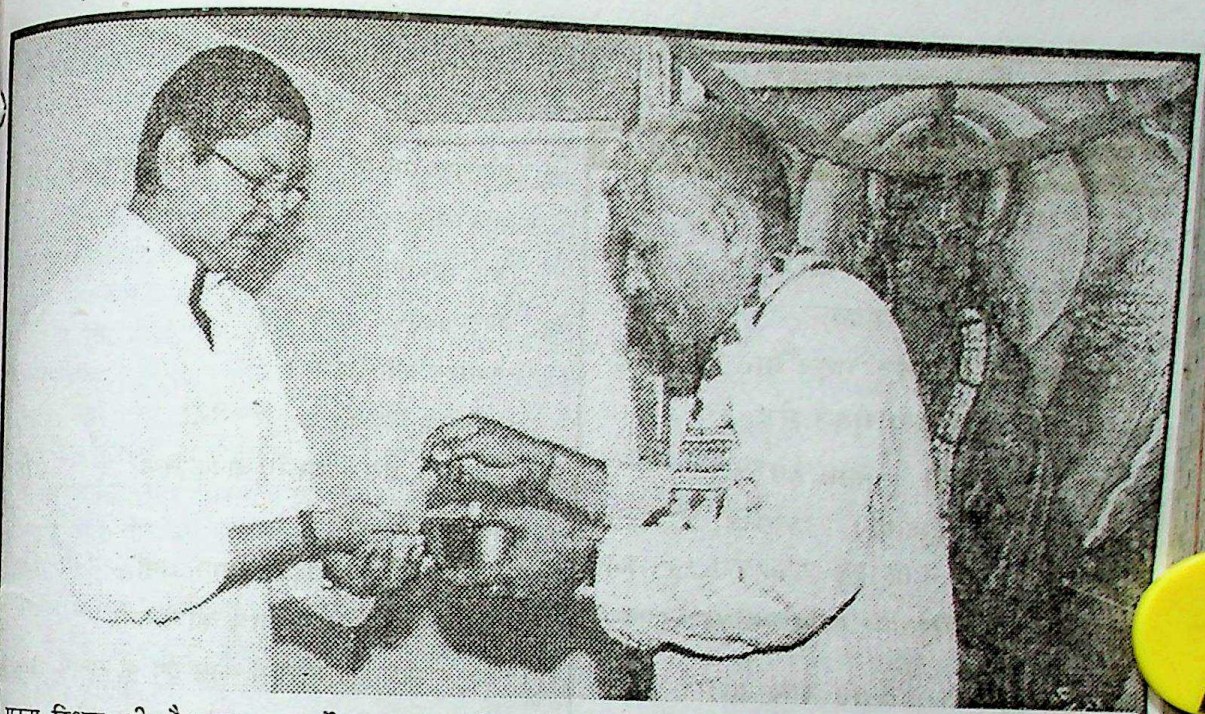

पटना स्थित श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के प्रांगण में धन्वन्तरि-पूजा के शुभ अवसर पर 'भवन' के अध्यक्ष, श्री अरूण शर्मा पूजा के उपरान्त प्रसाद ग्रहण करते हुए परिलक्षित हैं (चित्र में बायें)

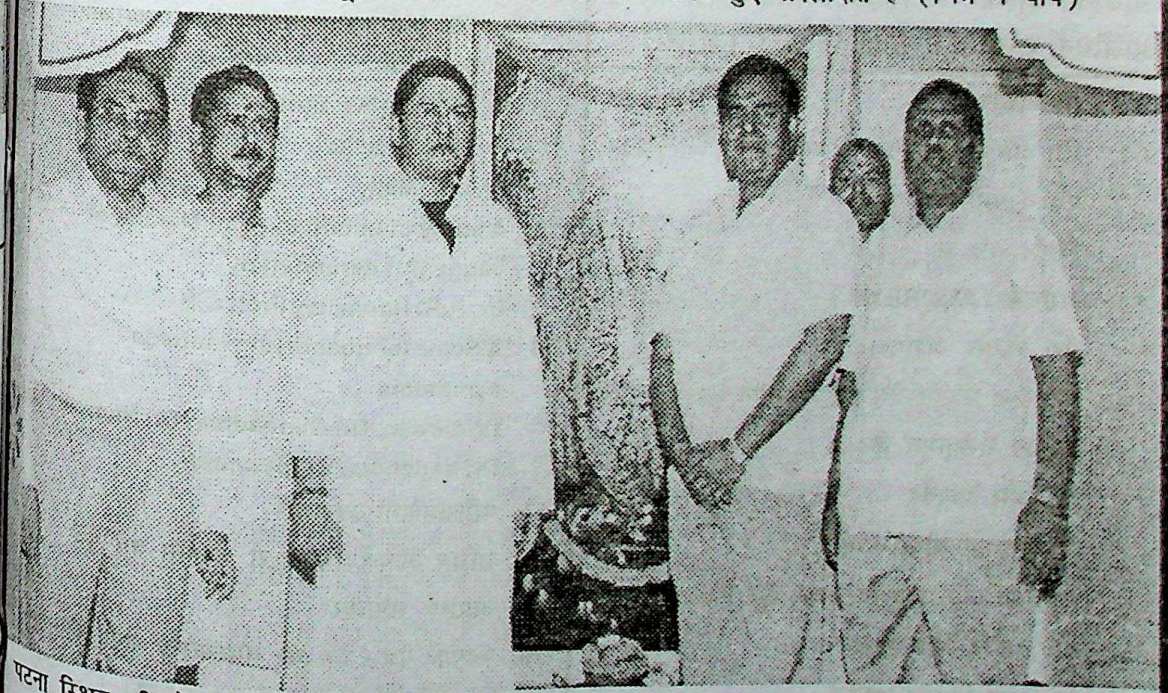

पटना स्थित श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के प्रांगण में धन्वन्तरि-पूजा के अवसर पर 'भवन' के अध्यक्ष, श्री अरूण शर्मा दिखलायी पड़ (बायें से तृतीय) रहे हैं । उनके बायें उत्पादन प्रबन्धक, श्री समादार एवं प्रबन्धक, डा०एल०के०चौधरी तथा उनके दायें उत्पादन प्रबन्धक, श्री विनय कुमार एवं प्रधान वैद्य, डा० नागेश्वर प्रसाद, साव परिलक्षित हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची

वर्ष - 59 अंक - 5 नवम्बर - 2006

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-**baidyanath_ayurved@vsnl.com**

एक प्रति मूल्य - 10 रुपये प्रति

वार्षिक मूल्य - 100 रुपये प्रति

आजीवन शुल्क - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुल्क - 2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 327

2. डेंगु और चिकनगुनिया - एक आतंक 328
पं० बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा

3. अरोचक (ANOREXIA) 332
वैद्य पी.एस. अंशुमान

4. वृक्षों का पर्यावरणीय एवं औषधीय महत्व 339
आचार्य राजकुमार जैन

5. योग और आयुर्वेद 342
वैद्य हरिदास श्रीधर कस्तुरे

6. आमवात और आयुर्वेद:कारण एवं निवारण 346
प्रो० महेन्द्र सिंह मीना
डा० नन्द किशोर दाधीच
डा० बाल कृष्ण पंचार

7. परिवार नियोजन : कब और क्यों 352
डा० राजीव गुप्ता

8. ऋषिवृक्ष - अगस्त 354
डा० नागेश्वर मिश्र

9. केशपात समस्या-एक गवेषणात्मक अध्ययन 358
डा० अश्विन बी. निर्मल
डा० बी०एम० निर्मल

10. पित्त प्रकोपक शरद ऋतु में 360
स्वास्थ्य की देखभाल
कविराज दिवाकर ठाकुर 'वैद्य'

11. दिल का दौरा : जरूरी जानकारियां 278
कैलाश जैन

12. वैद्यराज आचार्य पंडित श्रीराम शर्मा - 362
एक बहुआयामी व्यक्तित्व का स्वामी

13. अष्टांग संग्रह सूत्र स्थान में कास रोग के सन्दर्भ 364
डा० अनूप कु० गक्खड़ एवं हरप्रीत कौर

14. Clinical Evaluation of Hypertension and its Management by Shatavari and Rudraksha 367
Dr. Jayanta Kr. Sarma
Dr. Dhiren Deka
Dr. L.N. Malty

15. A study of Shodhana and Marana of Vanga (A Literary study) 370
Dr. R.R. Hiremath, Prof. C.B. Jha

16. A Scale for quantifying unmada symptoms 373
Dr. Devika, Dr. Gangadhar, Dr. Nagarathana
Dr. Nagendra, Dr. Suchitra

17. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 381

18. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 386

19. आरोग्य समाचार 387

20. आपके पत्र (देश के समस्यारूप रोगों के समाधान में आयुर्वेदज्ञों की भूमिका - प्रो० गोपाल कृष्ण चतुर्वेदी) 389

21. आपके अनुभूत प्रयोग 391

22. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**सम्पादकीय**

# भारत में बच्चों के स्वास्थ्य की स्थिति खतरनाक मोड़ पर

किसी भी राष्ट्र का आधार स्वस्थ नागरिक है। स्वस्थ नागरिक की आधारशिला शिशु-वर्ग है। यदि बचपन बीमार है, तो जवानी भी बीमार होगी। पता नहीं, इस तथ्य को हम क्यों भूल जाते हैं ? सचित्र आयुर्वेद के माध्यम से हम निरन्तर बच्चों के स्वास्थ्य की ओर राष्ट्र का ध्यान आकर्षित करने का प्रयास कर रहे हैं। खेद है कि हमारे जन-प्रतिनिधिगण अपने वोट बैंक को मजबूत करने के लिए निहित स्वार्थ में फंसे हुये हैं। उन्हें जाति, धर्म, क्षेत्र और भाषा की राजनीति से फुरसत ही नहीं है। सरकार में शामिल हमारे नेतागण स्टाक मार्केट के सूचकांक और विश्व द्वारा बहुप्रचारित यह नारा कि 'भारत और चीन की अर्थव्यवस्था सारी दुनिया को चुनौती दे रही है', के माया-जाल में फंसे हुए हैं। इस लुभावनी प्रशंसा से हम अपनी पीठ ठोकते हैं। हम यह नहीं कह रहे हैं कि सूचकांक की वृद्धि हमारी प्रगति का द्योतक नहीं है, बल्कि हम यह कह रहे हैं कि केवल सूचकांक की वृद्धि से आम जनता में धन की वृद्धि नहीं होती है। शेयर मार्केट के कुछ खिलाड़ियों का इसका फायदा अवश्य मिलता है, लेकिन आम जनता को नहीं। इस तरह इसमें कोई शक नहीं कि विज्ञान और तकनीकी प्रगति हमारे देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत कर रही है, किन्तु इस प्रगति का लाभ आम जनता को नहीं मिल पाता है। निश्चय ही हमारी राष्ट्रीय नीति का दोष है। हमारे इस कथन की पुष्टि ग्लोबल हंगर इन्डेक्स (विश्व व्यापी भूख सूचकांक) द्वारा जारी किये गये प्रतिवेदन से होती है।

सर्वेक्षणकर्त्ताओं के अनुसार 119 देशों में सर्वेक्षण किया गया। दुर्भाग्यवश भारत का स्थान कम वजन वाले शिशुओं की श्रेणी में 117 वां है। केवल बंगलादेश और नेपाल का स्थान इसके बाद है। भूख या कुपोषणजन्य अन्य व्याधियों का यदि विश्लेषण किया जाय, तो भारत का स्थान 119 देशों में 96 वां है। नवीनतम जानकारी के अनुसार भारत में कुपोषित शिशुओं का अनुपात 47.5% है जो संघर्षरत और सूखाग्रस्त, सहारा, अफ्रीका से भी ज्यादा है। विदित है कि यहां के 30% शिशु औसत रूप से कुपोषण के शिकार हैं। ये आंकड़ें वाशिंगटन स्थित अन्तर्राष्ट्रीय खाद्य नीति संस्थान् (IFPRI) द्वारा जारी किये गये हैं।

सामान्यतया विश्वव्यापी भूख सूचकांक के तीन तत्व होते हैं - शिशु कुपोषण, शिशु मृत्युदर और न्यून कैलोरीयुक्त भोजन लेने वाला का अनुपात। इसमें से 97 देश विकासशील श्रेणी के और 22 देश विकासशील श्रेणी में शामिल होने वाले देश हैं। (जो देश विकासशील होने की प्रक्रिया में हैं) प्रतिवेदन के रचयिता, श्री डोरिस विजमैन के अनुसार भारत की खराब स्थिति के लिए जिम्मेवार दो तत्व हैं :- (1) 1997 के पश्चात् प्रति व्यक्ति भोज्य पदार्थ की उपलब्धता बढ़ी नहीं है, (2) शिशु कुपोषण की दर काफी ऊँची रही है। इसमें 5 वर्ष से कम आयु वाले शिशुओं का प्रतिशत 46% है।

प्रतिवेदन के अनुसार हमारे देश में महिलाओं की स्थिति भी काफी गंभीर है। 83% भारतीय महिलाओं में लौह तत्व की कमी है जबकि इसका प्रतिशत सहारा-अफ्रीका में 40 है। सम्भवत: यही कारण है कि बच्चे जो पैदा होते हैं, वे बचपन से कुपोषण जन्य व्याधियों के शिकार होते हैं।

स्थिति स्पष्ट है। देश की विकास दर 8% के बावजूद विश्वस्तर पर हमारी स्थिति दयनीय है। स्टाक मार्केट, वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति और सरकार का प्रगति के संबंध में दावा ये सभी छलावा हैं यदि वास्तविक रूप से निचले स्तर में हमारे देशवासियों की दशा में सुधार नहीं आता है।

आरोग्य की दृष्टि से यदि हम आर्थिक स्थिति का विश्लेषण करें, तो दो तथ्य हमारे समक्ष स्थापित होते हैं - (1) भूख के कारण कुपोषण जन्य व्याधियों से देशवासियों का ग्रस्त होना जिसका प्रतिशत 90 है और (2) अति भोजन से उत्पन्न व्याधियों से देशवासियों का ग्रसित होना। ये दोनों तथ्य विरोधाभासी हैं, किन्तु सत्य हैं। समाज के एक वर्ग के पास अपनी भूख मिटाने के लिए पर्याप्त धन है और दूसरे वर्ग के पास नहीं के बराबर। सरकार की इसमें जबरदस्त भूमिका हो सकती है। यह सरकार का कर्तव्य है कि कम से कम अपने देशवासियों की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति करे। भूख या भूख से उत्पन्न बीमारी की मृत्यु किसी की नहीं हो - इसके लिए संविधान में पर्याप्त प्रावधान हैं। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भी कई मामलों में इस ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट किया है। ऐसे भी किसी भी सभ्य देश के लिए यह शर्म की बात है कि भूख से मृत्यु देशवासियों की हो।

आशा है, इस ज्वलन्त समस्या की ओर केन्द्र सरकार, सम्बन्धित राज्य सरकार, जनप्रतिनिधिगण, बुद्धिजीवी वर्ग, सहृदयीगण एवं अन्य देशवासी ध्यान देंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# डेंगू और चिकनगुनिया - एक आतंक

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

विभिन्न स्रोतों से प्राप्त जानकारी के अनुसार आज दिनांक 30 अक्टूबर, 2006 तक डेंगू से मरने वालों की संख्या 150 से ज्यादा हो चुकी है । आने वाले दिनों में इससे मृत्यु होने वालों की संख्या में वृद्धि होगी - इसमें कोई शक नहीं । आंकड़ों के अनुसार केरल में 794, राजस्थान में 456, गुजरात में 441, प० बंगाल में 429, उत्तर प्रदेश में 318, तमिलनाडु में 307, पंजाब में 250, महाराष्ट्र में 240, हरियाणा में 113, कनार्टक में 90 और आन्ध्र प्रदेश में 33 डेंगू के मामले प्रकाश में आये हैं । केवल राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में 1,465 मामले प्रकाश में आये हैं । बिहार में भी अबतक 50 मामले डेंगू के विभिन्न अस्पतालों में आ चुके हैं । विभिन्न प्रान्तों से मिली जानकारी के अनुसार अबतक 50,000 से ज्यादा लोग डेंगू से प्रभावित हो चुके हैं ।

जहां तक चिकनगुनिया का प्रश्न है, अबतक 1,610 मामले प्रकाश में आये हैं जबकि 20 लाख से ज्यादा सीरीज सन्देह की परिधि में हैं । सम्पूर्ण भारतवर्ष के जो जिले प्रभावित हैं, उनकी संख्या 181 है । अबतक 14,025 व्यक्तियों के नमूने जांच के लिए प्रयोगशाला में भेजे जा चुके हैं । लगभग 1610 रोगियों का रक्त पोजिटिव आया है । अर्थात् रोग के विषाणु रक्त में पाये गये हैं । दुर्भाग्य है कि हमारे देश में आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए विश्वसनीय साधन/स्रोत उपलब्ध नहीं हैं । सरकारी स्रोत के अतिरिक्त निजी अस्पताल के स्रोत भी हैं जिनके आंकड़ें में सम्पूर्णतया उपलब्ध नहीं हैं । इसके अतिरिक्त वे मरीज भी हैं जो किसी चिकित्सक के पास नहीं जाते हैं और घरेलू इलाज के भरोसे रहते हैं ।

अब प्रश्न है कि ये रोग कहां से आये, कैसे आये एवं क्यों आये ? जबतक हम इन प्रश्नों का उत्तर नहीं खोजेंगे, तबतक इनका समाधान हम खोज नहीं पायेंगे । हमारी जानकारी के अनुसार डेंगू के उत्पन्न होने के लिए निम्नलिखित तत्व जिम्मेवार हो सकते हैं -

(1) डेंगू और चिकनगुनिया के लिए एडेज एजेप्टी नामक मच्छर जिम्मेवार हैं ।

(2) इस प्रजाति का मच्छर पहले जंगलों में रहता था और बाद में यह मानवीय आबादी में आया ।

(3) बड़े नगरों में यहां तक कि छोटे नगरों में भी (पटना सहित) जल की जो आपूर्त्ति की जाती है, वह त्रुटिपूर्ण है और नियमित नहीं है । परिणाम यह होता है कि लोग पानी को स्टोर (एकत्रित) करना प्रारम्भ कर देते हैं जो मच्छर उत्पन्न होने के लिए जिम्मेवार है ।

(4) सफाई की व्यवस्था अपर्याप्त है ।

(5) योजना के अनुसार शहर, कस्बा या गांव का विकास नहीं किया जाता है । अर्थात् सड़क, ड्रेन पाइप या कूड़ा फेंकने की पर्याप्त व्यवस्था नहीं रहती है, परिणामतः गन्दे स्थानों पर मच्छरों का जन्म होता है ।

(6) सभी प्रकार के बर्त्तन जिसमें जल का जमाव किया जाता है अर्थात् पानी की टंकी हो, या जार, प्लास्टिक बर्त्तन हो या नष्ट होने वाले कप - सभी डेंगू मच्छरों के अण्डे को पैदा करने में समर्थ हैं ।

(7) वेक्टर कन्ट्रोल रिसर्च सेन्टर के निदेशक, श्री पी०के०दास के अनुसार पुरानी गाड़ी के टायर भी मच्छरों के अण्डों के लिए सुरक्षित स्थान हो सकता है । दिल्ली में जल कूलर भी इसकी शरण स्थली है ।

(8) मदुराई स्थित सेन्टर फॉर रिसर्च इन मेडिकल एन्टोमोलोजी के उपनिदेशक, श्री अरूणाचालम के अनुसार एडेज एयेजेप्टी नामक मच्छर के अण्डे अन्य मच्छरों के अण्डों से भी ज्यादा कठोर होते हैं । अन्य मच्छर जल के अभाव में शीघ्र मर जाते हैं जबकि डेंगू के मच्छर एक वर्ष तक जीवित रहते हैं ।

(9) विशेषज्ञों के अनुसार डेंगू मच्छरों के लिए यह जरूरी नहीं है कि जल के सभी पात्रों में यह उत्पन्न हो । अध्ययन के अनुसार ये खास प्रकार के जल के बर्तनों में उत्पन्न होते हैं । वेनेजुएला स्थित ट्रोपिकल डिजीज अनुसंधान केन्द्र के अनुसार एक विशेष जल-पात्र 20% से 55% तक डेंगू मच्छरों के लार्वा के लिए जिम्मेवार पाया गया जबकि पानी के बोतलों में इसका प्रतिशत 5% से कम था । क्यूबा में किये गये अनुसंधान के अनुसार जिन जल पात्रों का इस्तेमाल नियमित रूप से होता था उसमें 1% वयस्क मच्छर पाये गये जबकि जिन जल पात्रों का इस्तेमाल नहीं होता था उसमें इसका प्रतिशत 50% से ज्यादा

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० 2. सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



या।

समाधान

हमारी दृष्टि में इसके समाधान को दो श्रेणियों में रखा जा सकता है :-

(1) प्रतिषेधात्मक प्रथम और द्वितीय

(2) उपशमनात्मक

प्रतिषेधात्मक :- निम्न प्रतिषेधात्मक उपाय प्रयोग में लाये जा सकते हैं :- (1) भारत जैसे देश के लिए जहां पीने योग्य जल का अत्यन्त अभाव है, वहां यह सलाह दी जाय कि जमा किये गये जल को फेंक दिया जाय यह व्यावहारिक नहीं है । बड़ें शहरों से लेकर छोटे शहरों तक में जल की पर्याप्त आपूर्त्ति जल पर्षद या जल की अन्य एजेन्सी द्वारा नहीं होती है । पटना जैसे शहर में भी यदि निवासी जल की निजी व्यवस्था नहीं करे तो पीने योग्य जल का सेवन करना मुश्किल हो जायेगा । ग्रामीण क्षेत्रों के अधिकांश निवासी पीने योग्य जल के लिए चापाकल, कुंआ, नदियों एवं पोखरों पर निर्भर करते हैं । ऐसी स्थिति में जल नष्ट करने का उपदेश देना एकदम अव्यावहारिक है।

(2) हमें जल जमाव करने के लिए ऐसी टंकियों का प्रयोग करना चाहिए जो मच्छर प्रूफ हो अर्थात् जिससे मच्छर उत्पन्न होने का खतरा नहीं हो । यदि इस प्रकार की टंकियां उपलब्ध नहीं हों, तो सामान्य टंकी के ऊपर रबर का जाल या मसहरी लगा दी जाय । साथ ही हमें सफाई, कचरों को फेंकने के लिये अलग स्थान, जहाँ-तहाँ कूड़ा फेंकने की आदत आदि चीजों पर ध्यान देना चाहिए ।

(3) कुछ कार्य प्रशासन के बिना सहयोग के सम्पन्न नहीं हो सकते हैं । उदाहरण के लिए यदि शहरों में कचरा फेंकने का स्थान नहीं हो और यदि हो तो नगर निगम या कोई एजेन्सी कूड़ा-कचरा ढोने की व्यवस्था नहीं करे, तो गन्दगी फैलेगी ही और मच्छरों का प्रकोप बढ़ेगा । किसी व्यक्ति से यह कार्य नहीं हो सकता है । यह सामूहिक कार्य है । किसी सरकारी या निजी एजेन्सी के बिना यह सम्भव नहीं है ।

(4) आठवीं पंचवर्षीय योजना में यह सुझाव दिया गया था कि प्रत्येक जिले में मच्छर उन्मूलन कार्यक्रम की व्यवस्था हो । खेद है कि सरकार ने इस पर विचार नहीं किया । इस प्रकार की व्यवस्था आवश्यक है ।

(5) विगत बीस वर्षों से डेंगू-नियंत्रण कार्यक्रम से कोई लाभ नहीं हुआ । अब सरकार ने इसका भार सामुदायिक एजेन्सी पर छोड़ दिया है । सरकार ने इस एजेन्सी को संसाधन या विशेषज्ञता भी प्रदान नहीं की है । यह दुखद बात है । या तो सरकार प्रभावकारी ढंग से डेंगू उन्मूलन कार्यक्रम पर ध्यान दे या समुदाय को पर्याप्त संसाधन उपलब्ध करावे ।

(6) विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार सम्पूर्ण संसार में डेंगू का विस्तार तेजी से हुआ है । 1970 के पूर्व केवल नौ देश के निवासी इस रोग से पीड़ित थे । 1995 आते-आते इसकी संख्या चार गुनी बढ़ गयी । एक अनुमान के अनुसार प्रत्येक वर्ष 5 करोड़ व्यक्ति विश्व में डेंगू के शिकार होते हैं । 1986 में हमारे देश में, विशेषकर दिल्ली में 2 लाख व्यक्ति इस रोग के शिकार हुए । प्रति वर्ष 7,000 से 16,000 तक डेंगू के शिकार मिलते हैं । यह दावा वेक्टर कन्ट्रोल रिसर्च सेन्टर के वेबसाइट में किया गया है । हमारे अनुमान के अनुसार डेंगू के मरीजों की संख्या सरकारी आंकड़ों से ज्यादा है । उदाहरण के लिए, बिहार सरकार ने दावा किया है कि बिहार में डेंगू के एक मरीज भी नहीं हैं जबकि एलोक्ट्रोनिक मीडिया के अनुसार डेंगू के शिकारियों की संख्या ज्यादा है, क्योंकि कई व्यक्ति निजी चिकित्सालय में इलाज कराते हैं । पटना के तो कई चिकित्सक भी इसकी चपेट में आ चुके हैं ।

विदित है कि भारतवर्ष में 1950-1960 के दौरान मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम काफी तेज गति से चलाया गया था । यह कार्यक्रम काफी कारगर था । आंकड़ों के अनुसार 1950 में मलेरिया से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या साढ़े सात करोड़ थी और आठ लाख रोगियों की मृत्यु हुयी थी जो 1953 में घटकर एक लाख तक आ गयी । 1965-66 तक मृत्यु का एक भी आंकड़ा हमारे समक्ष नहीं आया ।

अतः हमारी राय में इस कार्यक्रम को पुनर्जीवित करना चाहिए ।

(7) विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा 2003 में प्रकाशित डेंगू बुलेटिन के अनुसार कीटनाशक का छिड़काव काफी असरदार साबित हुआ था । इसका पुनरारम्भ जरूरी है ।

(8) विश्व प्रसिद्ध डेंगू विशेषज्ञ, श्री दुआने गुबलर के अनुसार क्यूबा और सिंगापुर ने एडेज एयेजिप्टी


CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



पर पूर्ण नियंत्रण पा लिया है । हमें इससे सीख लेनी चाहिए ।

**आयुर्वेदीय औषधि समाधान**

यद्यपि हम पूर्णरूपेण दावा नहीं कर सकते हैं कि निम्नलिखित औषधि डेंगू और चिकनगुनिया में कारगर हो सकती है, किन्तु हम प्रयास तो कर सकते हैं । जिन रोगियों पर एलोपैथी चिकित्सा असफल हो रही है, कम से कम उन पर प्रयोग कर सकते हैं । हम आशा करते हैं कि चिकित्सा उपयोगी साबित होगी । हम केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान परिषद् से भी आग्रह करते हैं कि वे इस महामारी को रोकने के लिए नयी कारगर औषधियों की खोज करें । इस अन्तराल में निम्न औषधि-व्यवस्था का उपयोग करना चाहिए बशर्ते इससे बेहतर कोई और व्यवस्था उपलब्ध नहीं हो ।

सर्वप्रथम हमें प्रतिषेधात्मक उपाय करना चाहिए अर्थात् न केवल अपना कमरा बल्कि आसपास की जगहों को भी साफ-सुथरा रखना चाहिए । सफाई जरूरी है । ऐसी किसी भी वस्तु का आसपास जमाव नहीं करें जिससे डेंगू मच्छरों के उत्पन्न होने का खतरा हो । साथ ही निम्नलिखित औषधि व्यवस्था करनी चाहिए :-

(1) सुगन्धित/ औषधीय/धूप या अगरबत्ती का इस्तेमाल करना चाहिए ।

(2) रोगी की अवस्था के अनुसार काल को ध्यान में रखते हुए लंघन कराना चाहिए । यदि तीव्र ज्वर है, तो शीतल जल या बर्फ के बैग को सिर पर रखना चाहिए । आवश्यकता अनुसार सुषुम जल से देह को पोंछना चाहिए । इसमें अतिरिक्त सिरका और अण्डे के सफेद भाग का विष्णु तैल या गुलाब रोगन या गुलाब लड्डू में मिलाकर इस्तेमाल करना चाहिए । कभी-कभी चन्दन का प्रयोग भी सिर पर कर सकते हैं ।

(3) स्वेदन और मूत्रकृच्छ्र से सम्बन्धित औषधियों का प्रयोग करना चाहिए । शडांग पानीय का भी इस्तेमाल किया जा सकता है ।

(4) मुस्तक, पित्तपापड़ा, उशीर, चन्दन, उदीच्च और नागरा का भी प्रयोग किया जा सकता है ।

(5) औषधियों में ज्वरहर योग, गोदन्ती भस्म, सुरसादि फाण्ट, गोदन्ती भस्म, ज्वर मोहरा पिष्टी, महासुदर्शन चूर्ण, घनवटी, काढ़ा या अर्क, गोदन्त मिश्रण किरातकल्प, करंजादि वटी, सन्तर्पण धन-शतावरी, अश्वकंचुकी रस, ज्वर मुरारि रस, पित्त-ज्वरान्तक वटी आदि औषधियां लाभकारी सिद्ध हो सकती हैं ।

(6) चिकित्सक को विरेचन या वस्ति द्वारा रोगी का पेट साफ कराना चाहिए ।

(7) निम्न जड़ी-बूटियों का भी प्रयोग किया जा सकता है -

सहदेवी, पीत दारु, त्रायमाण, कारकोटक, सप्तपर्ण, कारवेल्लक, करंज, द्रोणपुष्णी, तुलसी और किरात तिक्त का भी प्रयोग किया जा सकता है ।

(8) यदि श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा निर्मित प्राणदा उपलब्ध हो तो इसका भी प्रयोग किया जा सकता है ।

चिकनगुनिया के सम्बन्ध में भी लगभग वही सिद्धान्त लागू होते हैं जो डेंगू के सम्बन्ध में हैं । वस्तुतः यह शब्द अफ्रीकी भाषा, स्वाहिली से उत्पन्न हुआ है । बीमारी के कारण जो विकृति आती है, उसी से यह शब्द उत्पन्न हुआ है । इस रोग में जोड़ों (सन्धि-स्थल) पर दर्द होता है । मृत्यु की दर डेंगू की अपेक्षा इसमें कम है । आम तौर पर मलेरिया ज्वर की जो चिकित्सा-व्यवस्था है, लगभग यही व्यवस्था इसमें हो सकती है । अभी तक तो डेंगू और न चिकिनगुनिया की खास चिकित्सा किसी चिकित्सा-पद्धति में उपलब्ध है । हां, चिकित्सा लक्षणों के आधार पर की जा सकती है । सचित्र आयुर्वेद के अंक 2004 अंक में वैद्य पी०एस० अंशुमान का एक आलेख ज्वर के सम्बन्ध में प्रकाशित हुआ है । यह उत्तम लेख है । चिकित्सकों एवं जिज्ञासुओं को इस लेख को अवश्य पढ़ना चाहिए ।

राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर के स्नातकों ने चिकनगुनिया औषधियों की निम्न व्यवस्था की है । पूना में आयोजित द्वितीय विश्व आयुर्वेद महाधिवेशन में राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर के बहिरंग विभाग की ओर से एक पोस्टर प्रदर्शनी लगायी गयी थी । उसमें दावा किया गया था कि 5000 से ज्यादा रोगियों को निम्न चिकित्सा-व्यवस्था से लाभ हुआ है । चिकनगुनियाहर औषधि निम्नोक्त दवाओं से निर्मित की गयी थी :-

1. पुष्पकरमूल - एक ग्राम
2. गोदन्ती - 500 मिलीग्राम



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



3. लक्ष्मीविलास रस - 500 मिलीग्राम
4. सितोपलादि - दो ग्राम

इन्हें मिलाकर दो-दो कैप्सूल या वटी प्रात:+संध्या सेवन करावें ।

**चिकित्सा** - अवधि 5 से 7 दिन है ।

**क्वाथ :-** हरिद्रा, हरीतकी, विभीतक, आमलकी, कुटज, नगरमोथा, तुलसी, रक्त चन्दन, मधुक, मूलेठी का क्वाथ 20 मिली की मात्रा में सुबह+शाम दें ।

**पथ्य :-** क्वथित स्वांगशीत जल (लवंग) पान, गुरू - तैलीय - निषेध ।

आयुर्वेद के शोधार्थियों से भी अनुरोध है कि एक उत्तम चिकित्सा-व्यवस्था जनता के समक्ष उपस्थित करें, जो रोगियों पर कम से कम 90% सफल हो । वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर आतुरालयी परीक्षण के उपरान्त ही चिकित्सा व्यवस्था जनता के समक्ष प्रस्तुत करें । इससे आयुर्वेद की प्रतिष्ठा बढ़ेगी और आयुर्वेद के छात्रों को शोध के प्रति रुचि भी । आशा है, शोधार्थी हमारे सुझाव पर अवश्य ध्यान देंगे ।

डेंगू और चिकनगुनिया पर शोध और अध्ययन के लिए देश भर में 12 केन्द्र खोले जाएंगे । इसके लिए संस्थान तय कर लिए गए हैं । दिल्ली और पूणे स्थित राष्ट्रीय संचारी रोग संस्थानों का आधुनिकीकरण भी किया जाएगा । इस बाबत संस्थानों को संबंधित राज्यों को निर्देश भी जारी किए जा चुके हैं ।

पिछले 10 सालों से राजधानी सहित देश के तमाम राज्यों में डेंगू का कहर बरपता है । हर साल लोग मरते हैं । पर इस बीमारी की रोकथाम उपचार, बचाव के लिए अध्ययन व शोध करने वाले संस्थानों की भारी कमी है । दिल्ली में ही चार तरह के तंत्र के पास स्वास्थ्य का बजट है । केन्द्र सरकार, दिल्ली सरकार, नगर निगम और नगर पालिका परिषद । इन चारों का स्वास्थ्य तंत्र होने के बावजूद डेंगू पर नियंत्रण या इस बीमारी के बढ़ते प्रभाव पर लगाम लगाने की दिशा में कोई ठोस कार्य नहीं हो पाया है । अदालत ने भी दखल दी फिर भी कोई खास बदलाव नहीं आया । अमूमन हर साल वही हायतौबा मचती है । इस बार स्थिति की गंभीरता को देखते हुए केन्द्र सरकार ने कुछ पहल की है । इसके तहत तय किया गया है कि जल और जीवाणु जनित बीमारियों पर शोध अध्ययन और विकास के लिए काम करने वाले केन्द्र खोले जाएंगे । चिकनगुनिया, डेंगू और स्लोफीवर (पीत ज्वर) तीन ऐसी बीमारियां हैं जो एडीज मच्छर के काटने से होती हैं । इनके वायरस के स्वरूप गुण, प्रभाव समय के साथ आए उनमें बदलाव और इससे बचाव के बार में यहां हाल के सालों में कोई ठोस काम नहीं हो पाया है । जबकि बड़ी आबादी में डेंगू फैलता है ।

लिहाजा सरकार ने तय किया है कि इसके लिए देशभर में 12 केन्द्र खोले जाएं । इनके लिए संस्थान चिन्हित कर लिए गए हैं । जिन संस्थानों में यह केन्द्र खोले जाने की योजना है उनमें एलओपी कालेज - चेन्नई, एम्स विन्हांस - बंगलूर, पीजीआई चंडीगढ़, जेएस कालेज - अमहदाबाद और पीजीआई लखनऊ प्रमुख हैं । इनके अलावा दिल्ली स्थिति राष्ट्रीय संचारी रोग संस्थान /पूणे में स्थित राष्ट्रीय संचारी रोग संस्थान को और आधुनिक सुविधाओं से लैस किया जाएगा । जिन राज्यों में यह केन्द्र खोलने की योजना है उन सभी को निर्देश दिया जा चुका है । राज्यों से विस्तृत रिपोर्ट देने को कहा गया है ।

दिल्ली के राष्ट्रीय संचारी रोग संस्थान के जल एवं जीवाणुजनित बीमारी विभाग के निदेशक डा०पीसी जोशी का कहना है कि पिछले कुछ सालों से इन बीमारियों और इसके वायरस का प्रकोप और प्रभाव बढ़ता जा रहा है । कीटनाशकों के उपयोग और बदलते वातावरण के चलते इन वायरस की प्रतिरोधक क्षमता और बढ़ गई है । इसलिए कीटनाशकों का असर भी इन पर अब कम होता है । पर समय के साथ आए तेज बदलाव इससे बचाव और उपचार टीके पर अध्ययन और विकास नहीं हो रहे हैं । उन्होंने कहा कि सरकार की इस योजना से निश्चित तौर पर इस क्षेत्र में अध्ययन को बढ़ाया जा सकेगा । सभी अफ्रीकी देशों में पीत ज्वर का प्रभाव और इसके वायरस पाए जाते हैं । यह भी एडीज मच्छर से फैलता है । जब 32 साल में एडीज से चिकनगुनिया सिर उठा सकी है तो पीत ज्वर का खतरा भी फैल सकता है । इसलिए पहले ही सावधानी बरतने और जरूरी कदम उठाने की दरकार है । ताकि इन वायरस से बचाव संबंधी तरीके विकसित करने, दवाएं खोजने और इन वायरसों को नष्ट करने संबंधी अध्ययन को बढ़ाया जा सकें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अरोचक (ANOREXIA)

*वैद्य पी.एस. अंशुमान, एच.पी.ए.

**परिचय**[1]

प्राच्य आयुर्वेद चिकित्सा साहित्य में भोजन करने की इच्छा नहीं होना, भोजन में रुचि मर जाना, भोजन के प्रति द्वेष होना, अतः भोजन नहीं करने की स्थिति के लिये अरोचक जैसे रोग वाचक शब्द का प्रयोग मिलता है । यह 'भूख नहीं लगना' या 'अग्नि मंद' होने से भिन्न रोग स्थिति है । इसमें अग्नि प्राकृत (या विकृत) होने पर भी, भूख लगती होने पर भी इच्छा नहीं होने, इच्छा मरने या द्वेष वश रोगी को भोजन में रुचि नहीं रहती है यही अरोचक है ।

**संज्ञा**

इसके लिये कई संज्ञाओं का प्रयोग किया गया है, यथा -

अरोचक - भोजन अरुचि युक्त अवस्था का रोग (च) (सु) (अ)

अरुचि - भोजन में रुचि नहीं होना जैसी स्थिति (च०चि० 8/59) या न-अन्न-अभिरुचि (सु०उ० 59/3) या भोजनानाकांक्षा (भे.)

अन्नानभिनंदन - अभीप्सित आहार होने पर भी उसका रुचिकर नहीं लगना, खाने की इच्छा नहीं होना या नहीं खाना ।

भक्तोपघात - खाने की इच्छा मर जाना (सु०उ० 57/3)

भक्तद्वेष - खाने का द्वेष (विरोध) करना या अभीष्ट अन्न दर्शन, स्पर्श, गंध, श्रवण मात्र से या स्मरण मात्र से मन उद्विग्न हो उठना (यो.)

अभक्तच्छन्द - भय-शोक-क्रोधादि मानसिक कारणों से भोजन करने की इच्छा नहीं होना (यो.)

आधुनिक चिकित्सा में इसको एनॉरेक्षीया (Anonexia) कहा जाता है । इसके दो प्रकार माने जाते हैं शारीरिक कारण जन्य तथा मानसिक कारण जन्य (जिसे एनॉरेक्षीया नेर्वासी (Anonexia Nervosa) कहते हैं.।)

(-जब) जिह्वा एवं हृदय में आश्रित वात, पित्त, कफ पृथक्-पृथक् या सर्व दोष से अथवा दुष्ट मनोर्थ (मन के विषय) के कारण आहार में अरुचि उत्पन्न हो जाती है (तब उसे अरोचक कहते हैं) (च०चि० 8/59)।

-(जब) वातादि दोषों से

या शोक, भय, अतिलोभ, क्रोध के द्वारा (या) मन के आहत होने से, या भोजन की गंध, वर्ण (रूप) से भोजन में अरुचि उत्पन्न हो जाती है (तब उसको अरोचक कहते हैं ।) (च०चि० 26/123)

- (जब) वातादि पृथक् -पृथक् दोषों से या तीनों दोषों से तथा पित्तविपयर्य से भोजन के आश्रय अन्न वह स्रोत में एवं हृदय में अतिशय दोष व्याप्त होने से अन्न में रुचि नहीं रहती है (तब उसे आरोचक कहते हैं) (सु०उ० 57/3)

अरुचि - जब मुख में भोजन डालने पर भी सुस्वादु भोजन भी अस्वादु लगे या रुचिकर न लगे उसे अरुचि कहते हैं (वृ० भोज)

अन्नानभिनन्दन - अभीप्सित आहार देने पर भी खाने की श्रद्धा न होना अन्नानभिनन्दन कहाता है (भोज)

भक्तद्वेष - अन्न के स्पर्शन, दर्शन, गंधग्रहण भोजन का नाम श्रवण या उसके स्मरण मात्र से होने वाली मनोद्विग्नता को भक्तद्वेष कहते हैं । (भोज)

अभक्तच्छन्द - क्रोध, भय, आदि मानसिक कारणों से भोजन की इच्छा न होने कों अभक्तच्छन्द कहते हैं । (भोज)

भक्त-अन-अशन- भोजन नहीं खाना या उसके खाने की इच्छा नहीं होना भक्त-अन-अशन (अनशन) है (च)

अरोचक - इन सब का सम्मलित रूप है ।

**हेतु**[2]

**(क) मुख्य**

**I मनोगत**

- भय, शोक अनुबंधता (च) राग, चिंता (सु)
- अतिक्रोध अभिषङ्गता (च) अशुचिदर्शन (सु)
- अतिलोभ युक्तता (च)
- विलुप्त चेतसत्व (सु)
- अभिचार (भे.)

* (निवृत्त प्रोफे./प्राचार्य) 1497, ए 2/1, कृष्णनगर, रूपाणि सर्वान्न, भावनगर (गुजरात) 364001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



II भोजनगत
- भोजन का अहृद्य होना ।
- अभीष्ट गंध, वर्ण, रस युक्त न होना या अरुचिकर गंध-वर्ण-रस युक्त होना ।
- अशुभि, अशुचि दर्शन (सु)।
- असात्म्य, दोष कोपक आहार ।
- मनोज्ञ आहार, गंध वर्ण (रूप) (च) (चक्र)

(ख) अन्य/गौण
- आयास (च) ।
- दोष कोपक विहार ।

(ग) रोग विशेष अनुबंध
- विविध ज्वर एवं भूताभिषंग (संक्रमण) ।
- पांडु, कामला आदि ।
- यकृत एवं उदर रोग ।
- आमाशय प्रदाह, अम्लन्यूनता, आमशयार्बुद ।
- हृद्रोग ।
- क्षय या शोष ।
- विविध कैंसर ।

(घ) प्रकार विशेषानुसारी

I निजदोष प्रकोपक निमित्त
(वात-पित्त-कफ एवं त्रिदोष कोपक निदान/चिकित्सा प्रकरण में संसर्गज भी कहा है । अतः उसका निदान भी)

II आगन्तु निदान
* **कायिक** - आयास कारक निदान ।
* **मानसिक** -
* द्वेषज एवं तज्जनक मनोविकार कारक निदान, चिन्तन, दर्शन, श्रवण।
* अभिषङ्गः भय-शोक एवं तज्जन्य वात कोप क्रोध अतिरेक एवं तज्जन्य पित्त कोप अति आलस्य एवं तज्जन्य कफ ।
* अभिचार दोष कारक निदान ।

विकृति
(क) घटक
I कायिक
दोष-वात, पित्त, कफ, दूष्य - रस
अग्नि - मंद (या प्राकृत भी)
आम - साम (निष्प्र भी)

स्रोत/आश्रय
I अन्नवहस्रोत, रसवहस्रोत
II जिह्वा (च) हृदय (च) (सु)

II मानसिक
दोष - रज दूष्य/सत्व - विप्लुप्त चेतसत्व (सु)
विकारानुबंध - भय-शोक चिन्ता आदि द्वेषज ।
स्रोत/आश्रय - I मनोवह एवं इन्द्रियवह स्रोत ।
II मन /सत्व या चेतस ।

(ख) चरण
I कायिक
संचय-प्रकोप - मिथ्याहार विहार जन्य दोष संचय होना एवं प्रकोप होना ।
प्रसर/संश्रय-दोषों का जिह्वा एवं हृदय में जाकर स्थान सश्रित होना (च) हृदय आवृत्त करना (सु) ।
व्यक्ति - (1) आस्य वैरस्य होना ।
(2) भोजन अच्छा नहीं लगना ।
(3) भोजन की अनिच्छा होना ।
भेद - वात - पित्त - कफ एवं सर्व (त्रि) दोषज (आदि निज चार) एवं मानस मिल कर पांच (च. चि.) (सु.उ.) (अ) या वात-पित्त-कफ जन्य तीन + द्वेषज एवं आयासज = कुल पांच (च.सू.) माधव ने वात-पित्त-कफ त्रिदोष को दोषज तथा मानस को आगन्तुज प्रकार कहा है ।

II मानसिक - चिकित्सा में द्विदोषज भी उल्लेखित है।
- रज दोष वर्धक निदान सेवन से रजोगुण (दोष) वृद्धि एवं द्वेष जन्य विकार उत्पत्ति ।
- भय-शोकादि का अभिषङ्ग से ।
- या अभिचार जन्य मनोद्विग्नता से ।
- चेतस विप्लुतता पूर्वक ।
- भक्तद्वेष उत्पन्न होना ।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अरोचक लक्षण : तुलनात्मक रूप में

| क्र० | घटक | 1 | 2 | 3 |
|---|---|---|---|---|
| (क) | निजदोषक | वातज 4 | पित्तज 5 | कफज 6 |
| | आस्य एवं जिह्वा | वैरस्य (सु)<br>कषायास्यता (च)(सु)(अ) | विरसता (च)<br>कदु-अम्लास्यता (च)<br>तिक्तास्यता (च) (सु) (अ)<br>लवणास्यता (च) | -<br>मधुरास्यता (च)(सु)(अ) |
| | मुख गुहा एवं दंत | परिहृष्ट दन्तत्व (च)<br>(रूक्ष/शुष्कास्य ?) | ऊष्ण<br>पूति (दुर्गंधित) आस्य (च)<br>तृषा ल० (सु) | शीत (च)<br>पिच्छिलत्व (च)<br>गुरुता (च)<br>विवद्ध-संवद्ध आस्य (च)<br>कफ प्रसेक (सु) (च) |
| | देहगत | हृच्छूल (सु)<br>हृद् पीड़ा (सु) (च)<br>- | हृक्दाह (सु) (च)<br>चोष (सु (च)<br>तृषा (सु) (च) | कण्डू (सु)<br>गौरव (सु)<br>साद (सु) |
| | मानसिक ल० | - | मूर्च्छा (सु) | तन्द्रा (सु) |
| (ख) | संसर्गज एवं | संसर्गज[5] | त्रिदोषज[6] | आगन्तु[7] |
| | आगन्तु | 4 | 5 | (मानस) 6 |
| | | इस का प्रकारों में उल्लेख नहीं है परन्तु वात-कफज आदि प्रकार का चिकित्सा में उल्लेख मिलता है । | इस मिश्र लक्षण सबके द्वारा कहे गये हैं (च)(सु)(अ)<br>+ हृदयादि में अनेक, बहुरूजा (च) (सु) असाध्यत्व | स्वाभाविक<br>1. रसानुभूति आस्य प्राकृत परन्तु द्वेषज भक्तद्वेष (च) + यथादोष ल० (अ)<br>2. मानसिक अरति मोह (च) (य) जड़त्व (च) |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(ग) आयासज अरोचक - वातादि दोषों के द्वारा हृदय के आच्छादन से आयास के कारण भी भोजन की इच्छा नहीं होती है (यही आयासज अरोचक कहाता है।)

चिकित्सा

(क) चिकित्सा सूत्र[8]

I शोधन चि०

- वातज में वस्ति; पित्तज में विरेचन, कफज में वमन द्वारा शोधन करायें (च०चि० 26/218)
- इनके लिये वातघ्न द्रव्यसिद्ध वस्ति, शर्करायुक्त मृदु विरेचन एवं मृदु वमन का उपयोग करें (सु)
- वमन कर्म के लिये वातज में वचा क्वाथ, पित्तज में गुडाम्बु, कफज में निम्ब क्वाथ से वमन करायें। (सु०उ०57/-)
- शिरोविरेचन प्रयोग (सु०)

II मुख शुद्धि चि०

- अरोचक का आश्रय मुख होने से उसमें भी जिह्वा आश्रम होने से मुख शुद्धि हेतु चिकित्सा करें या करावें। इसके लिये मुख शोधक क्वाथ-कवल धारण तथा दिन में (प्रातः सायं) दो बार दातून करायें। (च०चि० 8/133-35)
- ऊर्ध्वाङ्ग रोग चिकित्सा अनुसार प्रायोगिक धूमपान करायें। (च०चि० 8/135)
- जिह्वाशुद्धि एवं रूचि बढ़ाने हेतु आचूषण कल्पों का प्रयोग करायें। (च०चि०26) (भै०र०)

III शमन चि०

- शोधन के बाद शमन कल्पों द्वारा उपचार करें। (च०चि० 26/218)
- अग्नि दीपन, पाचन कल्पों का प्रयोग करावें (च०चि० 8/132)
- क्षयानुबंध में क्षय/शोष हर उपक्रम तथा हृद्रोग आदि में हृद एवं हृद्रोग चिकित्सा करें।
- अरोचक नाशक कल्प उपयोग करें।
- वातानुबंधी कफज अरोचक में अग्निमांद्य हर चिकित्सा (यथा कृष्णाद्य चूर्ण) (सु)

IV आगन्तु या मनोभिघातज - मानसिक अरोचक में

(अ) मनोघ्नज में

- मनोभिघात दूर करने हेतु आश्वासन चिकित्सा (च) दैन्य चिकित्सार्थ (सु) हर्षण चिकित्सा (च)
- मनोनुकूल हृद्य उपचार (च) प्रिय संवन (सु)
- मन प्रसन्न कारक उपक्रम (च) इच्छित वस्तु देना (सु)।
- स्वच्छ, रुचिकर, अभीष्ट, गंध वर्ण, रसयुक्त औषध आहार कल्प प्रयोग (च)।
- भय-शोक शमनार्थ प्राण्यवस्तु देना, अप्राप्ति जन्य में पुनः वस्तु प्राप्ति कराना तथा पुराण कथा श्रवण (सु)।

(ब) स्वाभाविक दोष कोपक में

- प्राकृत दोष कोपक मनोविकार। मनोविकार जन्य यथादोष कोपानुसार चिकित्सा करें यथा भय-शोक जन्य वात कोप में वातघ्न, क्रोध जन्य पित्त कोप में पित्तघ्न, आलस्य जन्य कफ कोप में कफघ्न चिकित्सा करें। (च)

(ख) चिकित्सा कल्प[9]

I अन्तः प्रयोग

**स्वरस** - आर्द्रक, दाडिम।

**कल्क चूर्ण** - आमलकी, तालिसादि चूर्ण (च)। त्र्यूष्णादि चूर्ण (भै.) दाडिमाद्य चूर्ण।

**क्वाथ** - दशमूल, रास्नादि, गुडुच्यादि, मुस्तादि, अरोग्वाधादि

**वटी** - नागरादि, व्योषादि।

**रस** - सुलोचनाभ्र, सुधानिधि, रस केसरी।

**लेह / पानकादि** - तिंतिडीकपानक, यवानिषाडव

**कांजी** - कालहंस कांजी।

**अन्य** - रसाला, तक्र दधिमंथ (जीरा राई हींग सोंठ, सैंधव युक्त कर)

**आसव/अरिष्ट** - मूत्रासव, क्षारासव, माधवारिष्ट/मद्य, गंध मद्य



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**क्षार** - यवक्षार, प्लाश क्षार (सु) ।

**अवलेह/प्राश** - द्राक्षालेह (गोमूत्रसिद्ध) (सु) मुस्ताद्य अवलेह (मेषमूत्रसिद्ध) (सु) पाठाद्यलेह (हस्तिमूत्रसिद्ध) (सु) मण्डूकपर्ण्यादिलेह (महीषमूत्रसिद्ध) (सु) प्राश-त्रिकटु, हरिद्रा, त्रिफला, यवक्षार-मधु (च) मुस्तादिगण सिद्ध लेह (सु) आरग्वाधादिगण सिद्धलेह (सु) दशमूलादि सिद्धलेह (सु)

**II मुख शोधक कल्प**

*** मुख प्रक्षालार्थ**

1. तज, मोथ, धान्यक, ऐला कृत जल ।
2. मोथा, आंवला, तज कृत जल ।
3. तज दारुहरिद्रा, अजवायन, कृतजल ।
4. पीपर, तेजवती, कृतजल ।
5. अजवायन तिन्तिडीक कृत जल या कषाय (च)।

*** कवलगुहार्थ**

1. सुरा, माध्वीक, सीधु तथा दूध, घी, इक्षुरस और तैल, मधु आदि (च) ।

2.I कुष्ठ, संचल, जीरक, मरि, विड, शर्करा कृत जल (च) (वातज) ।

II आंवला, ऐला, पद्माख, खस, पीपर, रक्त चंदन, नीलोत्पलकृत (च) (पित्तज) ।

III लोध्र, चव्य, हरडे, त्रिकटु, यवक्षार कृत जल (च) (कफजे) ।

IV अनार रस, जीरक, शर्करा (च) (सर्व)

*** मुखशुद्धि कर आचूषण -**

* कृष्णजीरक, मरि, द्राक्षा, वृक्षाम्ल, संचल, गुड, मधु कृत वटी (च) ।

**III दोषानुसारी उपक्रम**

I **वातज** - बस्ति प्रयोग (च) वचा क्वाथ से वमन (सु) पीपर, विडङ्ग यवक्षार, हरेणु, भार्ङ्गी, रास्ना, एला, हींग, सैंधव कृत । चूर्ण + स्नेह, सुरा या ऊष्णोदक (सु) कुष्ठाद्य चूर्ण (च) त्वग, मोथा, धान्यक, ऐला कृत चूर्ण + मधु (च) तैल कबल ।

II **पित्तज** - मृदु विरेचन (च) गुडजल, काकोल्या क्वाथ पान पूर्वक वमन (सु) सैंधव, शर्करा मधु लेहन (सु) धान्यकाद्य चूर्ण (च) मोथा, आंवला चूर्ण + नवनीत (च) इक्षु, घृत कवल (च)

III **कफज** - मृदुवमन (च) निम्नक्वाथ वमन (सु) शिरोविरेचन आरग्वधक्वाथ + मधु (सु) लोध्रादि चूर्ण, त्वक, दारू अजवायन, मधु, प्राशन (च) सुरा, (सीधू ?) कवल (च) ।

IV **त्रिदोषज** - असाध्य कथन पूर्वक मिश्र (च) (सु)

* अनाररस, भृष्टजीरक, शर्करामधु (च) ।

* दाडिमरस + विड लवण (च)

* अजवायन इमलीक्षार + मधु ।

* पीपर, चव्य चूर्ण + मधु मिश्र कवल (च)

**4. संबद्ध रोग चिकित्सा**

अरोचक उत्पादक या संबद्ध रोगों की चिकि यथा रोग अनुसार करनी चाहिए । यथा - ज्वरघ्न, भूतज पाण्डु-कामला हर, यकृतोदर हर, आमाशय प्रदाह, क्षमघ्न, हृद्रोग हर अर्बुद (कैंसर) नाशक चिकित्सा

**5. आयासज अरोचक चिकित्सा**

जैसा कि विदित है च०सू० 19/- में इस अरोचक के पांच प्रकारों में पढ़ा गया है परन्तु चिकि स्थान में इसका उल्लेख नहीं मिलता है । फिर भी संवर्ग से इस को स्वीकार किया जा सकता है ।

तदानुसार आयसज अरोचक में अध्वज कई चिकित्सा की जानी चाहिए ।

इसी प्रकार श्रम जन्य ज्वर की चिकित्सा उपयोगी है ।

इनमें तर्पण यवागुओं द्वारा, दशमूल सिद्ध आदि का प्रयोग विभिन्न संदर्भों में मिलता है ।

**6. (क) मानसारोचक चिकित्सा**

* इष्ट अप्राप्ति जन्य (भग्नमन) में - इ वस्तु देना ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



* भय - शोकज में - प्राप्य पदार्थ प्राप्ति कराना। अप्राप्य वस्तु की पुनः प्राप्ति कराना, पुराण कथा श्रवण ।
* मनौदैन्य जन्य में - आश्वासन देना
  - प्रिय (मनोनुकूल) विषय सेवन । (सु०उ० 57/16-17)

(ख) सत्वावजय
- विषादहर औषध - हर्षकर कल्प प्रयोग (यथा अश्वगंधारिष्टादि) निद्राजनक कल्प प्रयोग (यथा- पारसीक यवानि आदि) मानस रोगहर कल्प प्रयोग (यथा सर्पगंधा वटी) ।

पथ्यापथ्य[10]

I अन्नपान
- स्वाद (मधुर), अम्ल, तिक्त रस ।
- सांठी एवं रक्तशालि, गेहूं आदि शूक धान्य मूंग आदि शिम्बी धान्य ।
- वेताग्र, मधुनिम्ब पत्र शाक, मूलकपत्र बैंगन, परवल, सहजन आदि फल शाक मूलक मूल एवं जिमिकंद आदि कंद मूल शाक ।
- पक्व कपित्थ, अपक्व, तालफल या तालपज्जा, अनार, आम्र, कमरख, द्राक्ष तथा खजूर, केला आदि फल ।
- लहसुन आर्द्रक, तज कृष्ण लवण एवं शर्करा ।
- कांजी, तक्र, दधि, रसाला अन्य पान, पेय ।
- घृत, दूध, षाडव, राग ।
- समिषाहारार्थ -
  शश, अज, मृग, शूकर तथ, कृत मांसरस चैंगम मत्स्य, झषमत्स्यांड इलीश, मोष्ठी, खलीश, कवची, रोहू आदि मत्स्य ।
- यथा देश भक्ष्य, स्वदेश भक्ष्य, लघु, रूक्ष, मनोनुकूलाहार ।

II विहार
- शीतल रेती पर टहलना (प्रातः चक्रमण) ।
- स्वच्छ वस्त्र धारण ।
- स्वच्छ रहना ।

(ख) अपथ्य
- अहृद्य, अरुचिकर, अन्नपान ।
- दुर्गन्धी, कुरूप पदार्थ ।
- वेगरोध (कास, उदगार, क्षुधा, अश्रु, आदि) ।
- रक्तमोक्षण आदि कर्म ।
- भय, शोक, लोभ, क्रोध, अनुबंधता ।

आधार: संदर्भ :-

1. पंच भक्तस्यानशनस्थानानि (च०सू० 19/2)
पंच भक्तस्यानशन स्थानानीति वातपित्तकफद्वेषायासा (च०सू० 19/4) वातपित्तकफसन्निपातद्वेषाः (योगेन्द्रनाथ- पाठान्तर)
* दोषैः पृथक् सहं च चित्तविपर्ययाच्य, भक्तायनेषु हृ चावर्तते प्रगाढ्म् । नान्नेरुचिर्भवति तं भिषजो विका भक्तोपघातमिह पञ्चविध वदन्ति । (सु०उ० 57/3)
* प्रक्षिप्तं तु मुखे चान्नं जन्तोर्न स्वदते मुहुः, अरोचकः र विज्ञेयो भक्तद्वेष मतः श्रृणु । चिन्तयित्वा तु मनस दृष्ट्वाऽपि श्रुत्वाऽपि भोजनम्, द्वेषमायाति यज्जन्तुः भक्तद्वे स उच्यते । कुपितस्य भर्यातस्य अभिचार हतस्य च यस्य नान्ने भवेच्छ्रद्धां सोऽभक्तच्छन्दउच्यते । (वृ भोज)
2. पृथग्दोषैः समस्तैर्वा जिह्वाहृदयसंश्रिते, जायतेऽरुचिराहा दुष्टैरथैश्च मानसः ।
(च०चि० 8/59)
* अरोचके शोकभयातिलोभक्रोधाद्य हृद्या शुभिगंधजे स्यात् स्वाभाविकं चास्यमथारुचि, वातादिभिः शोकभयातिलो क्रोधैर्मनोघ्नाशन गंधरूपै अरोचकाः स्यु ।
(च०चि०26/123)
3. च०चि० 8/, च०चि० 26/124, सु०सू० 57/4-; अ०स०नि० 5/56
4-6. कषायतिक्तमधुरैर्विद्यान्मुखरसैः क्रमात् वाताद्यैरुचिं जात मानसीं दोष दर्शनात् ।
(च०वि० 8/60)
xxपरिहृष्टदंतः कषायवक्त्रश्चमतोऽनिलेन, कट्वम्लमुष्ण विरसं च पूतिपित्तेन विद्याल्लवणच वक्त्रम् । माधुर पैच्छिल्यगुरूत्व शैत्य, विबंधसम्बन्धयुतं कफेन । x)


CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



त्रिदोषजेनैकरस भवेत्तु । (च०चि० 26/123-125)

* हृच्छूलपीडनयुतं विरसाननत्वं वातात्मके भवति, लिङ्गभरोचके तु । हृदाहचोष बहुला मुखतिक्तता च, मूर्च्छा सतृड्. भवति पित्तकृते तथैव ।
कण्डूगुरूत्वकफ संस्रवसादतन्द्राः श्लेष्मात्मकं मधुरमास्यमरोचके तु । सर्वात्मके पवनपित्त कफा बर्हूनिरूपाण्यथास्य हृदयं समुदीरयन्ति ।

(सु०सू० 57/4-5)

* कषायतिक्तमधुरं वातादिषु मुखं क्रमात् ।
सर्वोत्थे विरसं शोकक्रोधादिषु यथामलम् ।

(अ०स०नि० 5/-)

* हृच्छूल पीडनयुतं पवनेन, पित्तात्तृड्दाहचोष बहुलं सकफप्रसेकम् । श्लेष्मात्मकं बहुरूजं बहुर्भिश्च विद्याद् वैगुण्यमोह जड़ताभिरथापरं ।

(च०चि० 26/-)

7. अरोचके शोकभयातिलोभक्रोधाद्यहृद्याशुचिगंधजे स्यात्, स्वाभाविकं चास्यमथोऽरुचिश्च xx ।

(च०चि० 26/125)

संरागशोकभयविप्लुतचेतसु, चिन्ताकृतो भवति सोऽशुचि दर्शनाच्च ।

(सु०उ० 57/6)

प्रतिच्छन्नं तु हृदये वातपित्तकफैर्नरः, आयासादमनोज्ञान्न भोज्यमन्न न कांक्षति ।

(भे०सू० 26)

* प्रतिच्छन्ने तु हृदये वातपित्तकफैर्नरः आयासाद मनोज्ञान्न भोज्यमन्नं न काक्षति ।

(भै०स०सू० 26/-)

8. अरुचौ कवलग्राहा धूमाः समुखधावना मनोज्ञमन्नपानं च हर्षणश्वसनानि च ।

(च०चि० 26/215)

बस्ति समीरणे पित्ते विरेकं वमनं कफे कुर्याद् भृङ्ग मुकूलानि हर्षणश्च मनोहनजे ।

(च०चि० 26/218)

परं मुखस्य वैरस्यनाशनं रोचनं श्रृणु । द्वौकालौ दंतधावनं भक्षयेन्मुखधावनम् । तद्वत् प्रक्षालमेदास्य धारयेत् बलग्रहान् । पिवेद्धूमं ततोभ्रष्टमद्यादीपनपाचनम् । भोजनं पानमन्नं चहितमिष्टश्येकल्पितम् ।

(च०चि० 8/134-35)

9. च०चि० 26/-, सु०उ० 51/-, भै०र० 18/-
10. भै०र० 18/51-58, सु०उ० 57/12

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# वृक्षों का पर्यावरणीय एवं औषधीय महत्व

आचार्य राजकुमार जैन, एच. पी.ए. एम. ए. (संस्कृत-हिन्दी

भारत के ग्रामीण अंचलों में रहने वाला शायद ही कोई ऐसा हिन्दू परिवार होगा जिसमें वृक्षों-पौधों को धार्मिक मान्यता और आस्था प्राप्त न हो तथा किसी न किसी रूप में उनकी पूजा नहीं होती हो । यह एक निर्विवाद तथ्य है कि प्राचीन भारतीय समाज में धर्म और धार्मिक आचरण का परिपालन एक अनिवार्यता थी जिसे टालना व्यक्ति या समाज के लिए सम्भव नहीं था । अत: ऐसे धर्म से जुड़े हुए वृक्षों का महत्व स्वत: ही बढ़ जाता है । यहां यह कहना अप्रासंगिक नहीं होगा कि वृक्षों के महत्व को आज से कई हजार वर्ष पूर्व ही हमारे पूर्वजों एवं मनीषियों ने समझ लिया था और इसलिए उन्हें हमारे धर्म, विभिन्न धार्मिक संस्कारों और रीति-रिवाजों तथा समाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के साथ जोड़ कर धार्मिक आस्था का प्रतीक बना दिया था। यही कारण है कि भारतीय धर्म, संस्कृति, नीति शास्त्र, आचार शास्त्र आदि में वृक्षों की बड़ी महिमा प्रतिपादित की गई है । उसी आधार पर लोग सदियों से वृक्षों की पूजा करते आए हैं ।

विभिन्न प्राचीन धर्म ग्रंथों में वृक्षों के महत्व को स्वीकार किया गया है । वृक्षों में वट, पीपल, नीम को अधिक महत्वपूर्ण माना गया है । भारतीय समाज एवं जनजीवन में ये वृक्ष सर्वाधिक आदरणीय एवं पूज्य रहे हैं। आज भी यत्र-तत्र वृक्षों की पूजा की जाती है और उन्हें पूर्ण आदर दिया जाता है । जबकि आधुनिक दृष्टि से प्राणदायिनी वायु आक्सीजन (प्राणवायु ) एवं जीवनोपयोगी अन्य महत्पूर्ण तत्वों की अपार निधि इन वृक्षों में विद्यमान है ।

धर्मशास्त्रों में इन वृक्षों के काटने का सर्वथा निषेध किया गया है । उसके मूल में सम्भवत: यह भावना निहित रही है कि मत्स्य पुराण एवं अग्नि पुराण में एक वृक्ष को दस पुत्रों के समान माना गया है । इसके अतिरिक्त वेदों में उपलब्ध विवरण के अनुसार वृक्षों के प्रत्येक अंग में देवताओं का निवास माना गया है । इसलिए ये तीर्थ हैं, पूज्य हैं और आदरणीय हैं ।

भारतीय हिन्दू परिवारों में वट वृक्ष को विशेष रूप से धार्मिक आस्था का प्रतीक माना जाता है । यही कारण है कि वह महनीय और पूजा है। हिन्दू परिवारों में प्राचीनकाल से यह विश्वास प्रचलित है कि वट वृक्ष में आत्मा का वा रहता है । इसकी आध्यात्मिक महिमा यह है कि वह ब्र का प्रतीक माना जाता है । इसकी विशेषता यह है कि इसका मूल जड़ें ऊपर की ओर तथा शाखाएं निम्नाभिमु होती हैं । ये शाखाएं सृष्टि रूप है और मूल जड़ ब्रह्म रू हैं । इसलिए यह अभ्यर्चना के योग्य है । अधिकांश हि घरों में धार्मिक महत्व के कारण तुलसी का पौधा आंगन पाया जाता था और महिलाएं उनका अर्चन कर उस जल--चढ़ाया करती थी । इसी प्रकार पीपल के वृक्ष वासुदेव का निवास मानकर उसकी अर्चना-पूजा की जा थी । आंवले के वृक्ष की उपासना 'धात्री पूजन' के रूप की जाती है तो बिल्व पत्र बेल के पत्ते शिवलिंग पर च कर भगवान शिव को अर्पित किए जाते हैं । आंवले के वृ का पूजन कार्तिक माह के शुक्ल पक्ष में किया जाता है

**प्रकृति संतुलन का आधार -**

वस्तुत: यदि देखा जाय तो पर्यावरण या प्रकृ संतुलन सम्बन्धी समस्त समस्याओं का केन्द्र बिन्दु वृक्ष वनस्पतियां और वन हैं । सम्पूर्ण मानव जाति का अस्ति मात्र इसी वन सम्पदा पर टिका हुआ है । हमारे ऋषि-मुनि एवं साधु-संन्तों ने मानव जीवन में वृक्षों एवं वनों क महत्वपूर्ण भूमिका को गहराई से समझा था । यही कार है कि वे स्वंय भी वनों में विचरण तथा प्रकृति की गोद निवास एवं रमण करते थे । उन्होंने प्रकृति के सन्तुलि विकास की प्रक्रिया को हृदयंगम कर आत्मसात् किया और सम्भवत: इसलिए वृक्षारोपण को भी उन्होंने अ धार्मिक अनुष्ठानों की भांति पवित्र एवं उपयोगी कर्त्तव मानकर उसे हमारी संस्कृति,पर्व,उत्सव एवं रीति रिवाजों व अभिन्न अंग बना दिया था जिससे मनुष्य उसकी अवेलहन का दु:साहस नहीं कर सके । सम्भवत: इसके मूल में यह भावना निहित थी कि प्रकृति का सन्तुलन बना रहे । यह कारण है कि प्राचीन भारत में ऋषि-महर्षियों ने अप आश्रमों के माध्यम से अरण्य संस्कृति को विकसित किया ऋषिगण अपने आश्रम में पेड़-पौधों के संरक्षण का विशे ध्यान रखते थे और उन्हें किसी भी पेड़-पौधों को काट सहन नहीं था । किसी भी पेड़-पौधो को काटना उन्हें अप


CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Varanasi.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अंग-भंग के समान पीड़ादायक लगता था । उनके प्रति वे आत्मवत् व्यवहार करते थे । यह पेड़ों के प्रति उनके अपनत्व को दर्शाता है ।

**वृक्षों का औषधीय महत्व**

हमारे देश में वृक्षों का केवल धार्मिक महत्व ही नहीं है, उनका औषधीय महत्व भी बहुत अधिक है । देश में अत्यन्त प्राचीनकाल से लोगों की स्वास्थ्य रक्षा और रोगोपचार की विधि सुलभ कराने की दृष्टि से जीवन विज्ञान और चिकित्सा पद्धति के रूप में आयुर्वेद प्रचलित रहा जिसके बीज वेदों, पुराणों, धर्मशास्त्रों एवं अन्य आर्ष ग्रंथों में प्रचुरता से मिलते हैं । उस आयुर्वेद शास्त्र में लगभग सभी पेड़-पौधो और लता-गुल्मों का औषधीय उपयोग तथा गुण धर्म का प्रतिवेदन करते हुए महत्व बतलाया गया । अत: आयुर्वेद और वनस्पतियों एवं वनौषधियों का सम्बन्ध बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है । यही कारण है कि प्रत्येक भारतीय एक ओर यदि अपनी धार्मिक भावनाओं के कारण वृक्षों-वनस्पतियों से जुड़ा हुआ है तो दूसरी ओर वह उनके औषधीय गुण-धर्मों से परिचित होने के कारण आवश्यकता पड़ने पर उनका औषधीय प्रयोग भी करता है । उदाहरण के तौर पर तुलसी,पीपल,वट वृक्ष आदि को ले लीजिये । इस व्यवस्था के पीछे केवल अन्ध विश्वास कह कर उसे नहीं टाला जा सकता, अपितु वास्तविकता यह है कि इन पौधों और वृक्षों का औषधीय महत्व भी कम नहीं है । गृहणियां अभी भी घरेलू उपचार के रूप में तुलसी के पत्तों का उपयोग करती हैं । आयुर्वेद में तुलसी को एक उपयोगी और महत्वपूर्ण औषधि के रूप में मान्यता प्राप्त है ।

पीपल का वृक्ष अनेक औषधीय गुणों से भरपूर होने के कारण महत्वपूर्ण है तो उसकी छाल,पत्ते और दूध से अनेक रोगों में उपयोगी औषधियों का निर्माण किया जाता है । पीपल के वृक्ष की यह एक विशेषता है कि वह स्वयं कभी रोग ग्रस्त या जर्जर नहीं होता है ।

आंवले का आयुर्वेद में औषधीय दृष्टि से विशेष महत्व है । यह एक रसायन द्रव्य है जो जरा (बुढ़ापा) और व्याधियों का नाश करने के लिए विभिन्न औषधियों में प्रयुक्त होता है । विश्व प्रसिद्ध शक्तिवर्धक रसायन औषधि च्यवनप्राश का मुख्य घटक द्रव्य आंवला ही है जो लगभग तीन चौथाई भाग के रूप में उसमें प्रयुक्त होता है। आयुर्वेद के अनुसार आंवला का सेवन करने से शरीर का कायाकल्प हो जाता है और शरीर की धातुएं पुष्ट हो जाती हैं । आंवले के वृक्ष के नीचे बैठने से जो प्राण वायु (आक्सीजन) प्राप्त होती है वह फेफड़ों को स्वस्थ रखने में सहायक होती है इससे फेफड़ों के रोग श्वास आदि नहीं होते हैं । रक्त विकार और पित्त की उष्णता से होने वाले समस्त विकारों में आंवला का सेवन विशेष लाभदायक होता है ।

इसी प्रकार बेल का भी औषधीय महत्व कम नहीं है । यह सभी पित्त विकारों और शरीर की गर्मी को शान्त करता है । वैद्यगण अतिसार (दस्त लगना) की तीव्रावस्था में बेल का शर्बत या बेल गुदे (बेल गिरी) का चूर्ण बनाकर प्रयोग करते हैं । बच्चों को बेल का मुरब्बा चटाया जाता है ।

सभी प्रकार के उदर विकारों में यह लाभदायक होता है । आजकल मधुमेह में बेल की पत्तियों का निर्यास सेवन कराया जाता है ।

इसी प्रकार आम का वृक्ष भी अपने धार्मिक महत्व और स्वास्थ्योपयोगी दृष्टि से अत्यन्त लोकप्रिय है । आम का फल बड़े-चाव से खाया जाता है और उसी चाव से उसका रस पिया जाता है। कच्चे आम की चटनी बनाकर पीने से गर्मी में लू लगने से बचाव होता है । यह पाचक भी होता है । अपनी बहु उपयोगिता के कारण लोक कहावत में भी इसने अपना स्थान बनाया है । जैसे 'अन्धे के आम गुठली के दाम' कहने की आवश्यकता नहीं कि उसकी गुठली की गिरी का उपयोग अनेक रोगों में किया जाता है । धार्मिक संस्कारों और रीति रिवाजों से जुड़ा हुआ आम का वृक्ष हिन्दू परिवारों में इतना घुला-मिला है कि उसके बिना किसी धार्मिक संस्कार में पूर्णता नहीं आती और वह एक खटकने वाली कमी का अहसास कराती है ।

वट वृक्ष जिसे सामान्य बोलचाल में इसे बरगद का पेड़ कहा जाता है, शरीर में चोट आदि लगने पर इसके पत्ते का उपयोग लाभदायक होता है । इसके फल और दूध का प्रयोग अनेक औषधियों में होता है । वट वृक्षों की छाया भी अपना औषधिय महत्व रखती है और औषधि निर्माण में काम में आती है ।

नीम का वृक्ष जो सुदीर्घ काल में भारतीय



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जीवन से जुड़ा हुआ है और आयुर्वेद में औषधि के रूप में विशेष उपयोगी माना जाता है । अपने उत्कृष्ट औषधीय गुणों के कारण अन्तर्राष्ट्रीय महत्व स्थापित कर चुका है । उसे न केवल जबरदस्त जीवाणु नाशक वनस्पति के रूप में महत्ता प्राप्त हुई, अपितु शरीरावयवों की क्रियाओं को नियमित रखने, रक्त संचार को सुचारु करने, रक्त विकार एवं त्वचा सम्बन्धी विकारों में विशेष रूप से उपयोगी होने के कारण भी उसका विशेष औषधीय महत्व है । अभी हाल में एड्स रोग पर आयोजित एक अखिल भारतीय विचार गोष्ठी में एक विद्वान शोधकर्त्ता ने अपने शोध पत्र में एड्स रोग का कारण समाप्त करने में नीम के तेल का उपयोग बहुत कारगर होने का दावा किया है । उपयोगिता की दृष्टि से नीम का प्रत्येक अंग उपयोगी पाया गया है । नीम के पत्ते, फल (निम्बौली) छाल, तेल आदि सभी अंग अनेक औषधीय गुणों से भरपूर हैं । एक लम्बे समय तक प्रत्यके परिवार में नीम की दातुन का प्रयोग आमतौर पर होता आया है । इसी प्रकार हरड़,बहेड़ा,जामुन,अमलतास आदि ऐसे अनेक वृक्ष हैं जो औषधीय गुणों से तो भरपूर हैं ही, भारतीय परिवार और जनजीवन से भी जुड़े हुए हैं ।

### पर्यावरण सन्तुलन और हमारा दायित्व

निःसन्देह वृक्ष मानव जीवन और प्राणि जगत के लिए प्रकृति के अमूल्य वरदान हैं । वृक्ष सदैव मनुष्य मात्र का उपकार करते रहे हैं, अतः उनके माध्यम से मनुष्य सदैव प्रकृति से जुड़ा रहा है और प्रकृति के साथ उसका गहरा सम्बन्ध बना रहा । मनुष्य जीवन पर उपकार करने वाले वे ही वृक्ष आज मनुष्य की दया पर आश्रित हैं । क्योंकि पता नहीं उन्हें कब निर्दयता पूर्वक काट दिया जाय ।

वर्त्तमान में वृक्षों के महत्व को वैज्ञानिक रूप से रेखांकित किया जा रहा है। विशेषतः विभिन्न प्रदूषणों के नियंत्रण और पर्यावरण संरक्षण के लिए वृक्षों की उपयोगिता और आवश्यकता को अतिशय रूप से अनिवार्य माना जा रहा है । गत दो दशाब्दियों के दौरान पर्यावरण विदों एवं वैज्ञानिकों का ध्यान इस समस्या की ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुआ और उन्होंने वृक्षों के महत्व को विशेष रूप से समझा ।

आज जबकि विश्व में औद्योगिक विकास की गति तीव्र हुई है और उसने मनुष्य के लिए भौतिक सुख-सुविधाएं तो जुटाई हैं, साथ ही विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों को भी जन्म दिया है । जिस तीव्रगति से औद्योगिक विकास हुआ है उसी तीव्रगति से प्रकृति में, मनुष्य के मन-मस्तिष्क में और नैतिक आचरण में प्रदूषण का फैलाव हुआ है । इसका परिणाम यह हुआ है कि मनुष्य का प्रकृति के प्रति लगाव और प्रेम कम होता गया, प्रकृति में विकृति होने लगी, पर्यावरण संतुलन बिगड़ने लगा और मनुष्य ने अपने लिए अनेक समस्याए खड़ी कर लीं ।

आज विश्व में इस बात की महती आवश्यकता अनुभव की जा रही है कि तीव्रगति से बढ़ रहे प्रदूषण को रोका जाय और प्रकृति में पार्यावरण संतुलन की रक्षा की जाय । किन्तु इस लक्ष्य को प्राप्त करने में तब सहायता मिल पायेगी जब मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्धों की अवधारणा को मनुष्य समाज दृढ़ता के साथ स्वीकार करे और उसमें किसी प्रकार की शिथिलता नहीं आने दे । मनुष्य जब तक यह मानता रहेगा कि प्रकृति, उसका तमाम सौन्दर्य और संदर्भ और संसाधन मनुष्य की सेवा और उपयोग के लिए है तब तक पर्यावरण के बारे में हमारी सोच में किसी प्रकार का बदलाव आना सम्भव नहीं है । आज मनुष्य पार्यावरण की रक्षा के लिए चिंतित अवश्य नजर आ रहा है, उसका कारण प्रकृति के प्रति उसका प्रेम या प्रकृति के प्रति उसके द्वारा अपनाई क्रूरता और निर्दयता के प्रति पश्चाताप का भाव नहीं है, अपितु वह समझने लगा है कि यदि हम अभी नहीं चेते तो हमें भविष्य में खाने-पीने, तरीके से रहने-पहनने की भीषण समस्या का सामना करना पड़ेगा । मनुष्य की यह चिन्ता भी स्वार्थ प्रेरित ही है, फिर भी इसमें बुराई नहीं है । अब भी यदि प्राकृतिक संरचना के प्रति कोई छेड़-छाड़ किए बिना मनुष्य आचरण करता है और अपनी जीवन शैली अपनाता है तो कोई हानि नहीं है । यह वास्तविकता है कि प्रकृति से दूर रहकर मनुष्य जिन्दा नहीं रह सकता और अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए उसे प्रकृति की गोद, प्रकृति का संरक्षण और प्रकृति का वरदान अनिवार्य रूप से अपेक्षित है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# योग और आयुर्वेद

वैद्य हरिदास श्रीधर कवठेकर

'योग' के विषय में आदरणीय स्वामी रामदेवजी [illegible] ज के प्रवचनों के बाद हजारों लोगों में एक विशेष [illegible]ार की जिज्ञासा उत्पन्न हुई है । वैसे तो भारतीय परम्परा के अनुसार हजारों वर्ष से योग विद्या चलती आई है । वेद, उपवेद पुराण, दर्शनशास्त्र आदि भारत की धरोहर है जिसका कोई मुकाबला विश्व के अन्य शास्त्रों में नहीं है । यहां योग का महत्व का विस्तार करना इस लेख का उद्देश्य नहीं है, किन्तु आयुर्वेद में योग के सन्दर्भ में चरकादि आचार्यों ने जो संदर्भ दिये हैं उसमें चरक, सुश्रुत, वाग्भटादि आचार्यों ने इसका चिकित्सा विषय के साथ जो समन्वय किये हैं उसका लाक्षणिक संक्षेप में विवरण देखना है ।

**योग शब्द निरूक्ति, व्याख्या -**

संस्कृत शब्द कोष में योग शब्द की व्युत्पत्ति, अर्थ तथा भिन्न-भिन्न संदर्भ इस प्रकार दिये गये हैं । युज् + घञ् + कुत्थ - धातु प्रत्ययों द्वारा योग शब्द बनता है । इसका अर्थ है -

अ - आक्रमण ।
आ - सतत संसक्ति ।
इ - लगातार मिलना ।
ई - क्षमता ।
क - दुःस से छुटकारा-दुःख संयोग वियोग संज्ञितम्।
ख - मिलाना, जोड़ना, संपर्क, उपयोग ।
ग - परिणाम ।
घ - जुआ ।
च - योगदण्ड - शक्ति ।
छ - योग नाविक - एक प्रकार की मछली ।
ज - योग पानम् - मूर्च्छा लानेवाला पेय ।
झ - योग पुरुष - गुप्तचर ।

उपर्युक्त शब्दार्थो में से 'आ', 'इ', 'क', 'च' इन सबके द्वारा प्रचलित अर्थों में आयुर्वेद ने बहुत कुछ साहित्य है ।

**पातञ्जल योगदर्शन -**

योग का सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ पातंजल योग दर्शन है । दर्शनशास्त्र (षड्दर्शन) छः हैं । इनमें पातञ्जलि ने 'योग दर्शन' पर भाष्य किया है । चरक के सुप्रसिद्ध टीकाकार चक्रपाणि हुए हैं । उन्होंने प्रथम अध्याय पर टीका करते हुए 'नमन' श्लोक में ही पातंजलि का आदरपूर्वक उल्लेख किया है । कहते हैं -

**पातञ्जल महाभाष्य चरक प्रतिसंस्कृते ।**
**मनोवाक्का दोषणां हर्त्रेऽहि पतये नमः ॥**

इस प्रारंभिक वन्दना श्लोक के द्वारा कुछ विद्वान ऐसा अर्थ करते हैं कि चरक और पतञ्जलि एक ही थे । कुछ इन्हें समकालीन कहते हैं - दोनों अवस्था में चरक के विषय विवरण मे योग की छाया पड़ना अति सहज है । चरक ही नहीं अपितु सुश्रुत के कितने सारे सन्दर्भ हैं जो योग सान्निध्य दर्शक हैं ।

आयुर्वेद में योग का विचार करना हो तो सर्वप्रथम योग के सामान्य सिद्धान्तों के अवलोकन करना आवश्यक है ।

योग के आठ अंग :- जिस तरह आयुर्वेद के आठ अंग प्रसिद्ध है (अष्टांग आयुर्वेद) उसी तरह योग भी आठ अंगों में- विभागों में बंटा हुआ है ।

1. यम 2. नियम, 3. आसन, 4. प्राणायाम
5. प्रत्याहार 6. धारणा 7. ध्यान 8. समाधि

**1. यम :-** वैसे तो यम समाज में मृत्यु देवता के लिये प्रसिद्ध है किन्तु योग में आत्म संयम (Self Control) के अर्थ में लिया गया है । यहां केवल शारीरिक संयम करना अभिप्रेत नहीं है । किन्तु मन से भी नियंत्रण होना चाहिये । उदाहरण के लिए हमें किसी का अपशब्द (गालियां) नहीं बोलना चाहिये, क्रोध नहीं करना चाहिये । अन्य हाथ-पांव से वाक् इंन्द्रिय से अपकार नहीं करते किन्तु मन में बहुत खराब सोचते हैं तो वह भी 'यम' के विरुद्ध आचरण कहा जाएगा । स्वयं नियंत्रण के लिये चरक ने [illegible] स्थल के 8वें अध्ययन में जिसका नाम इंद्रियोपक्रमणीय है - अनेक सद्वृतों का वर्णन किया है । उदाहरण - [illegible] ब्रूयात्, नान्यस्वमादघात् अभिजपेत्,.... नान्यदोषान् इस [illegible] अनेक नियमों का उल्लेख है - जो यम- आत्म संयम के लिये आवश्यक है । इसमें 'ना' अर्थात न करने योग्य [illegible]

सेवानिवृत्त आयुर्वेद निदेशक, गुजरात राज्य, पंचकर्म परामर्शदाता, आयुर्विज्ञान
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Jammu. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



नियम बनाए हैं वैसे ही आगे क्या करना उचित है इसलिये भी बहुत सी साधन बताये गये हैं । इस अध्याय में लगभग ऐसे 75 से भी अधिक यमों का निर्देश किया गया है । वे सब आत्म संयम (Self Control) के लिये उपयुक्त होते हैं । इस लेख में कुछ का ही बाद में वर्णन किया जाएगा ।

2. **नियम :-** कोष के अनुसार नियम का अर्थ है केवल प्राप्ति के लिय जो व्रतादि किये जाते हैं उनका स्वीकार । व्रतादि में जप तपादि तथा भारतीय अनेक परम्परागत व्रतों का समावेश किया जाता है । चरकादि संहिताओं में रोग हेतु वर्णन में 'प्रज्ञापराध' एक महत्व का हेतु दिया है, कहते हैं :-

**धीधृतिस्मृतिविभ्रष्टः कर्म यत् कुरूतेऽशुभम ।**
**प्रज्ञापराधं न विद्यात् सर्व दोष प्रकोपणम् ।।**

अर्थात् बुद्धि, धैर्य, स्मरणशक्ति भ्रष्ट होने पर जो अशुभ कर्म (पाप) व्यक्ति करता है उसे प्रज्ञापराध कहते हैं जो सभी दोष प्रकोप (रोग की उत्पत्ति) का मूल है । यह वाचिक, शारीरिक और मानसिक ऐसे तीन प्रकार से वर्णित हैं । (च०सू० 11) अर्थात् पापकर्म का उपाय करना चिकित्सा के लिये अभिप्रेत है । चरक विमान स्थान अ०3 में इस प्रकार संदर्भ देते हैं -

**'वाय्वादीनां यद् वैगुण्यं उत्पद्यते तस्य**
**मूलमधर्मः तन्मूलं वाऽसत्कर्म....''**

अर्थात् वातादि दोषों का वैगुण्य अधर्म और प्राणवृत्ति से होता है जिसका मूत्र असत्कर्म है । ऐसा भी कहा गया है 'नहि कर्म महत् किंचित् फल यस्य न भुज्यते'' अतः कर्म परिहार आवश्यक होता है । और वह नियमों (व्रतादि) के आचरण पर निर्भर होता है । नियम के यौगिक प्रकारों का वर्णन करते समय प्रत्येक की आयुर्वेद संनिद्धता बताई जाएगी ।

3. **आसन :-** योग का तीसरा महत्व का अंग है आसन इतना महत्वपूर्ण अंग है कि आजकल 'लोग' समझने लगे हैं कि योग यानी आसन । बहुत से लोग (रोगी) भी आजकल 'फैशन' में कहते हैं कि हम योगा (Yoga) करते हैं । मैं पूछता हूँ 'आप क्या-क्या करते हैं - तब दो चार आसनों का नाम बताते हैं । यह योग शास्त्र वस्तुत खिलवाड़ है । योग का अंशभाग भी पूर्ण जाने बिना जो इस तरह 'योगो' 'योगा' ऐसा प्रयोग करते हैं वह मिथ्याचार है आसन का वास्तविक अर्थ है बैठना । चुपचाप सीधा बैठक कोई चेष्टा न करते हुए बैठना (Sitting position like state) जाने की कोई मूर्ति बैठी हो - ऐसी अवस्था इसके अनेक प्रकार भी निर्दिष्ट हैं - जैसे :- सिद्धासन सुखासन, पद्मासन, बद्ध पद्मासन इत्यादि । तथापि आसन के विविध प्रकार कसरत व्यायाम के स्वरूप में भी निर्दिष हैं । शीर्षासन, हलासन, मत्स्यासन, पश्चिमोत्तानासन उत्तानपादासन, पवन मुक्तासन, शलभासन, भुजंगासन, नुरासन आदि जो किसी आसनों के पुस्तिका में सचि उपलब्ध हैं । किन्तु यहां जानना अत्यावश्यक है कि 'आसन' मात्र शारीरिक व्यायाम (Physical exercise नहीं है अपितु वह 'आत्मा (Spiritual Pathway) सान्निध्य से परमात्मा की प्राप्ति का एक उपाय है भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहतें हैं -

**तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रिय क्रियः**
**उपविश्यासने युञ्ज्याद् योगमात्म विनिग्रहे ।**
6-1
**समं कायशीरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरम् ।।**
**सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानव लोकयन्**
भ०गी०अ० 6-12, 1

अर्थात् शुद्ध भूमि जिसपर कुश अथवा मृगचर्म व आसन रखा हो, जो न बहुत ऊंची हो न नीची हो ऐसे स्था पर (भ०गीता 6-11) बैठकर चित्त और इन्द्रियों व एकाग्रता करते हुए अंतःकरण (मन+आत्मा) के शुक्ति लिये योग करें । शरीर, गर्दन और गले को समान रखते हु किसी प्रकार की चेष्टा न करते हुए नासिका के अग्रभा की तरफ दृष्टि स्थिर करते हुए किसी अन्य दिशा की अ न देखते हुए बैठना आसन लगाना योग में निर्दिष्ट है । अ यहाँ आसनों से मात्र व्यायाम नहीं है । भारतीय परम्परा सूर्य नमस्कार जैसे कसरतों का वर्णन है । लोग कहते हैं - तथापि उसके पीछे जो मंत्रविद्या है - उसे भुला दि जाता है । उदाहरण - सूर्यनमस्कार करते समय सूर्य


CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Jain Gurukul Kangri Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ारह नाम - मित्र, रवि, सूर्य, भानु, खग, पूष, हिरण्यगर्भ, रिचि, आदित्य, सवितृ (सविता), अर्क, भास्कर, इनके त्येक के साथ 'ह्रां, ह्रीं, ह्रूं, ह्रैं, ह्रौं, ह्रः इन बीज मंत्रों को गाकर करने की पद्धति है । उदाहरण -

ऊँ ह्रां मित्राय नमः, ऊँ ह्रीं खगे नमः, ऊँ ह्रूं सूर्याय मः, ऊँ ह्रैं भानवे नमः, ऊँ ह्रौं खगत्राय नमः, ऊँ ह्रः पूष्ये मः । तदन्तंर व्दिकचर त्रिरूत्तर जैसे ऊँ ह्रां ह्रीं मित्र रविभ्य म ऐसे करते-करते बारह, पच्चीस या अधिक सूर्यनमस्कार किये जा सकते हैं । सूर्यनमस्कार के प्रारंभ में 'ध्येयः सदा वितृ मंडल मध्यवर्ति.....' श्लोक द्वारा ध्यान और अंत में ग्रपात्र में भरा रखा हुआ तीर्थ जल (पली के द्वारा) प्राशन रते हुए ' सूर्यपादोदकं तीर्थं जठरे धारदयाम्यहं' यह च्चारण करना होता है । सूर्यनमस्कार की बारह अवस्था अनेक प्रकार के आसनों का अभ्यास होता है ।

आसनों के बारे में सामान्य निर्देश भी आयुर्वेद में किया गया है - जैसे -

''न जानुसमं कठिनं आसनं अध्यासीतं''

अर्थात् घुटनों तक ऊँचे तथा कठिन आसनों पर अधिक समय) न बैठें इत्यादि । विशेष विचार आगे किया एगा ।

**4. प्राणायाम :-** प्राण का अर्थ है प्राण वायु, ण, उदान, समान, व्यान और आपान भेद में वायु पांच कार के हैं । श्वासोच्छवास में जो वायु अंतः प्रविष्ट होता तथा जो बर्हिनिष्कासित होता है, आयुर्वेद की दृष्टि से नों 'प्राण' वायु है । योग प्रक्रिया में प्राण का आयाम यानी यंत्रण किया जाता है जिसमें तीन विभाग (Stage) या म है । 1. पूरक 2. कुम्भक 3. रेचक ।

पूरक का अर्थ है बाहर से वायु को अंदर लेना । म्भक का अर्थ है उसे कुछ देर तक रोके रखना और क का अर्थ है रोके हुए वायु को धीरे-धीरे छोड़ना । क में दाहिना नासा पुट बंद करते हुए वाम से विशिष्ट मय तक वायु अंदर किया जाता है । वायु से फुफ्फुस के ी करना पूरक है । कुम्भक में उसे कुछ सेकेंड तक रण किया जाता है और रेचक में उसे धीरे-धीरे दक्षिण नासा पुट से छोड़ा जाता है । समय प्रमण, 1:8:4 ऐसा होता है । प्राणायाम के देश परिमाण, काल परिमाण और संख्या परिमाण ऐसे 3 प्रकार हैं । इन सबकी दृष्टि से आयुर्वेदिक विचार आगे किया जाएगा ।

**5. प्रत्याहार :-** मनुष्य पांच भौतिक जगत् की वस्तुओं का ज्ञान पांचभौतिक इंन्द्रियों के द्वारा प्राप्त करता है । ज्ञाता आत्मा या पुरुष है, उसका संबंध मन द्वारा इन्द्रियों से जुड़ा रहता है । इनके बीच एक श्रृंखला होती है । वह इस प्रकार - आत्मा, मनसा, संयुज्यते, मन इन्द्रियेण ततः प्रत्यक्षं ।

यह संबंध प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान या तर्क से भी हो सकता है । प्रत्याहार का अर्थ है - कि अपने इन्द्रियों को, (चक्षु, श्रोत्र, जिह्वा, नासा, त्वक्) अपने विषयों में नियंत्रित करना और उन्हें मन में तथा मन को आत्मा में संलग्न करना । बाह्य सृष्टि में क्या हो रहा है उसकी चिन्ता किये बिना अन्तर्मुख हो जाना, ईश्वर में समर्पण भाव रखना । यह कैसे हो सकता है ? क्या यह संभव है ? इसका विचार आगे करेंगे और उसका आयुर्वेद के साथ संबंध का विवरण करेंगे ।

**6. धारणा :-** धारणा यह अंतरंग साधन है । इन सबके योग के बाह्ययांग या बहिरंग कहा जाता है । धारणा, ध्यान और समाधि ये अंतरंग कहे जाते हैं । केवल बहिरंग से योगविद्या प्राप्त नहीं होती । योगविद्या का फल है ईश्वर प्राप्ति । धारणा द्वारा इन्द्रिय और मन को आत्मा में संयुक्त किया जाता है । सभी इंन्द्रियों को अपने विषय से अलग कर आत्मा में संलग्न करना धारणा है । इसके दो प्रकार हैं ।

1. आभ्यन्तर (Internal) और

2. बाह्य (external)

इनका भी विस्तार और आयुर्वेद का संबंध आगे विस्तार से देखेंगे ।

**7. ध्यान** - योग का महत्व का अंग ध्यान और समाधि है । ध्यान या समाधि के लिये अभ्यास का पूर्वरूप है । जब मन की धारणा द्वारा एकाग्रता सिद्ध हो जाती है तो उस अवस्था को ध्यान कहते हैं । इस अवस्था में हमें सब


CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कुछ भूल जाना है । इतना ही नहीं बल्कि स्वयं अपने आपके अपने अस्तित्व को भी भूल जाना है। मैं हूं, मैं पुरुष हूं स्त्री हूं, धनिक हूं, गरीब हूं, ईश्वर का भक्त हूं इत्यादि सभी भावों को भूल जाना है । अपने आपका शरीर कुछ अलग ही और में अलग हूं ऐसी प्रतीति होती है । यह अवस्था बड़े-बड़े महायोगियों को भी अत्यंत प्रयत्नों द्वारा सिद्ध होती है । ध्यान द्वारा योगी त्रिकालज्ञ हो जाता है । इसका विचार विस्तार से आगे करेंगे ।

**8. समाधि :-** ध्यान की आगे की अवस्था समाधि है । 'समाधि' अवस्था योगभ्यास का परमलक्ष्य है । मन और आत्मा एक होकर परमात्मा में संपूर्ण समर्पित होना समाधि है । धारणा-ध्यान में अंशत: बाह्य संपर्क रहता है क्योंकि वह इसके अभ्यास युक्त पूर्णावस्था है । वह अभ्यास सिद्ध होने पर समाधि में ईश्वर सान्निध्य के पूर्णावस्था में व्यक्ति सब कुछ भूल जाता है और ध्यान, ध्येय और ध्याता ये पद होते हैं किन्तु सिद्ध होने पर इनका अभ्यास भी शेष नहीं रहता । इसका विशेष विचार आगे आयुर्वेद की दृष्टि से करेंगे ।

यह योग की सामान्य रूप रेखा हुई । यदि इसका आयुर्वेद के साथ संबंध न हो तो फिर हमें इसका अभ्यास क्यों करना चाहिये ।

चरक कहते हैं :-

**योगे मोक्षे च सर्वासां वेदनानामवर्तनम् ।**
**मोक्षे निर्वृत्तिर्निशेषा योगो मोक्षप्रवर्तकः ॥**

च०शा० 1-137

चक्रपाणि कहते हैं कि जो वेदना (रोग) एक बार निवृत्त होती है (औषधि चिकित्सा द्वारा) वह पुन:पुन: हो सकती है । किन्तु योग द्वारा जो निवृत्ति होती है । वह पुन: उत्पन्न नहीं होती । यहां चक्रपाणि ने अध्यात्मिक अर्थ के विषय आयुर्वेद का लक्ष्य ध्यान में रखकर कहा है -

**'तथापि इह कर्तृतया वेदना निवृत्तिं दर्शयति, इति न पीनकक्त्यम् ' ।**

आगे के लेख में सभी योगांगों का आयुर्वेद परिभाषा में उपयोगिता को समझने का प्रयास करेंगे ।


बैद्यनाथ
च्यवनप्राश
स्पेशल

विटामिन-सी
और
कैल्सियम युक्त
एक संपूर्ण
स्वास्थ्य टॉनिक

"माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है । इसीलिए हर माँ अपने नन्हे मुन्ने के लिए स्वास्थ्यवर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है। परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामिन व पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता । उनके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक । जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल । जिसमें हैं ५२ (परखी हुई) जड़ी बूटियाँ और केसर । अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं । विश्व में आयुर्वेदिक औषधियों के सबसे विशाल निर्माता-बैद्यनाथ द्वारा निर्मित बैद्यनाथ च्यवनप्राश में आपको मिलेगी विश्वसनीय उत्तमता, जिसे आज करोड़ों का विश्वास प्राप्त है । अब कोई अन्य टॉनिक भला क्यों करे प्रयोग ? जब विश्व श्रेष्ठतम टॉनिक है आपके साथ, आपके बच्चों के श्रेष्ठतम विकास के लिए ।"

स्वस्थ जीवन का मस्त स्वाद


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आमवात और आयुर्वेद : कारण एवं निवारण

*प्रो० महेन्द्र सिंह मीना **डा० नन्द किशोर दाधीच ***डा० बाल कृष्ण पंवार

## सामान्य परिचय

आमवात सन्धिशोथ व शूलयुक्त प्रमुख व्याधि है। यह रोग मारक न होते हुए भी अपने आक्रमण काल में अन्य रोगों की अपेक्षा अत्यन्त कष्टदायी होता हैं। शरीर की छोटी या बड़ी सभी सन्धियों में तीव्र वेदना शोथ, कर्मनाश आदि प्रमुख लक्षणों के साथ यह किसी भी आयु वर्ग में हो सकता है। किन्तु प्रौढ़ावस्था में यह अपेक्षाकृत अधिक होता है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ इस रोग से अधिक आक्रान्त होती हैं। शीतल वातावरण, पारिवारिक इतिवृत्त, पाचन संस्थान की विकृति तथा मानसिक तनाव आदि इस रोग के कारक भाव हैं। रात्रि, प्रात:काल, शीतल वातावरण, मेघाच्छन्न आकाश तथा चित्तावसाद में जहाँ इसके लक्षणों में वृद्धि देखी जाती है वहीं मध्यान्हीं, उष्णवातावरण, सम्यक् मलप्रवृत्ति, प्रसन्न चित्तावस्था आदि में स्वत: इसके लक्षणों में अल्पता आ जाती है।

आयुर्वेदोक्त आमवात रोग आधुनिक रूमैट्वायड आथ्रोइटिस (Rheumatoid Arthritis) से बहुत मिलता-जुलता रोग है। आधुनिक आमवातिक ज्वर (Rheumatic Fever) का भी आयुर्वेदीय दृष्टि से इसी में अन्तर्भाव किया जा सकता है क्योंकि सरूज सन्धिशोथ के साथ-साथ ज्वर तथा हृदग्रह जैसे लक्षण भी आमवात में कहे गये हैं।

## निरुक्ति

"आमवात" पुल्लिङ्ग, संज्ञा है। इसमें दो शब्द है - आम+वात।

आयुर्वेद में 'आम' तथा 'वात' का पृथक-पृथक अस्तित्व है।

1. 'आमेन सहित: वात आमवात:'।
आम के साथ वात का अनुबन्ध आमवात है।
2. आमेन युक्तो वात आमवात: स तु शोथादि युक्तस्त्रिक संधि वेदनावत्'।

आम से युक्त वात किंवा वात की दृष्टि से आमवात है, जो शोथादि लक्षण एवं त्रिकसंधि वेदनायुक्त होती हैं।

इस रोग में ये आम एवं वात दोनों तत्व प्रकुपित हों तो एक साथ विभिन्न सन्धियों में प्रविष्ट होकर शोथ, वेदना आदि लक्षणों के साथ स्तब्धता या कर्मनाश कर 'आमवात' रोग उत्पन्न करते हैं। एकीभाव होकर आम व वात इन दोनों के संयुक्त रूप को ही 'आमवात' संज्ञा दी जाती है।

## आमवात के निदान

1. विरुद्ध आहार विहार, विरुद्ध चेष्टा, मन्दाग्नि, निश्चलता एवं स्निग्ध भोजनोपरान्त व्यायाम आमोत्पत्ति पूर्वक आमवात को उत्पन्न करते हैं।
2. मन्दाग्नि वाला पुरुष जब गुरु पदार्थ खाता है और निश्चलता में रत रहता है तथा कन्दमूल शाकों से तृप्त होता रहता है तो उसका आम पदार्थ वायु से प्रेरित होकर कफ के स्थान (आमाशय) में पककर बहुत कष्ट देता है। उससे आमातिसार, संधिशोथादि व्याधियाँ होती हैं।
3. विरुद्धाहार-विरुद्धचेष्टा, मन्दाग्नि, आहार की लोलुपता एवं स्निन्ध भोजनोपरान्त व्यायाम करने से आमवात होता है।

आमवात के उपर्युक्त हेतुओं को निम्न स्वरूप उपनिबद्ध किया जा सकता है।

**आमवात के हेतु**

| आहार जन्य | विहार जन्य | निदानार्थकर | अन्य हेतु |
|---|---|---|---|
| 1. विरुद्धाहार | 1. विरुद्ध चेष्टा | 1. अग्निमांद्य | 1. शीतकाल |
| 2. स्निग्ध भोजन | 2. निश्चलता | 2. अजीर्ण | 2. मेघाच्छन्नकाल |
| 3. गुरुभोजन | 3. स्निग्ध भोजन-के तुरन्त बाद व्यायाम करना। | 3. ग्रहणी | 3. आनूपदेश एवं शीत कटिबंधीय देश |
| 4. मधुराति सेवन | | 4. उपदंश-फिरंगादि | |

* विभागाध्यक्ष, ** पीएच.डी. स्कॉलर, *** पीएच.डी. स्कॉलर, शारीर क्रिया विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



उपर्युक्त हेतुओं में मन्दाग्नि का विशेष कारणत्व है।

### आमवात के लक्षण

आमवात के लक्षणों का वर्णन करते हुये उन्हें प्रधानत: तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं ।

1. सामान्य लक्षण 2. प्रवृद्ध लक्षण
3. दोषानुसार लक्षण

### आमवात के सामान्य लक्षण

- दौर्बल्य
- हृद्गौरव
- त्रिकवेदना
- संधिवेदना
- गात्रस्तब्धता
- अंगमर्द
- अंगशून्यता
- अरुचि
- तृष्णा
- आलस्य
- गौरव
- ज्वर
- अपाक

### प्रवृद्ध आमवात के लक्षण

- प्रसेक
- संधिरूजा
- हृदग्रह
- उत्साहहानि
- वृश्चिक व्याविद्ध इव रूजा (वृश्चिक दंशवत्तीव्र पीड़ा)
- वैरस्य
- अग्नि दौर्बल्य
- दाह
- छर्दि
- बहुमूत्रता
- भ्रम एवं मूर्च्छा
- निद्रा विपर्यय
- कुक्षि काठिन्य एवं शूल
- विबंध
- जाड्य
- आंत्र कूजन
- आनाह
- अन्य उपद्रव - आमवात की प्रवृद्धावस्था में वात प्रकोप जन्य संकोच, खञ्जत्व आदि उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं ।

### आमवात के दोषानुसार लक्षण

आमवात रोग में पित्त का अनुबन्ध होने पर संधियों में दाह एवं लाली (राग) की उपस्थिति रहती है । वात का अनुबन्ध होने पर शूल की प्रधानता रहती है । कफ का अनुबंध होने पर संधियों में स्तैमित्य, गौरव, कण्डू एवं अन्य आमातिसरण आदि लक्षण मिलते हैं ।

### आमवात सम्प्राप्ति

आमवात की सम्प्राप्ति का अध्ययन करने पर आमवात की दो प्रकार की सम्प्राप्ति बनती है । (1) विरुद्ध आहार-विहार करने वाले मन्दाग्नि और निश्चेष्ट अथवा (2) स्निग्ध भोजन करने के उपरान्त तुरन्त व्यायाम करने वाले मनुष्य का आमरस प्रकुपित वायु से प्रेरित होकर श्लेष्मा के मुख्य स्थान की ओर जाता है तथा वहां से अधिक विकृत होकर धमनियों में पहुँचता है । वात और आम एक साथ प्रकुपित होकर कोष्ठ, त्रिक प्रदेश तथा संधियों में प्रविष्ट हो जाते हैं और सारे शरीर को जकड़ देते हैं । यह रोग आमवात कहलाता है ।

### प्रथम सम्प्राप्ति

अग्नि वैषम्य
↓
अग्निमांद्य
↓
आमोत्पत्ति
↓
वात के द्वारा आम का धमनियों (रसानियों) में ले जाना
↓
परिसर्पण करते हुये स्रोतसों में अभिष्यन्द (पिच्छिल होने से)
↓
हृद्वय में गमन-हृद्वय गौरव, दौर्बल्य
↓
श्लेष्म स्थान संधियों में गमन
↓
संधि स्थानों में स्थान संश्रय = ख - वैगुण्य होने से
↓
आमावातोत्पत्ति -स्तब्धता, शूल, शोथ

### द्वितीय सम्प्राप्ति

स्निग्ध आहार के साथ - साथ व्यायाम
↓
आमोत्पत्ति एवं वातवृद्धि
↓
आम का श्लेष्म स्थान की ओर गमन (आमाशय सन्ध्यादि)
↓
वात के द्वारा आम की सम्मूर्च्छना
↓
वात प्रकोप (सामवात प्रकोप)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



↓

आमवात लक्षणों की उत्पत्ति

**आमवात सम्प्राप्ति घटक**

1. उद्भव स्थान - आमाशय
2. संचार - रसायनियाँ
3. अधिष्ठान - अस्थिसंधियाँ स्नायु एवं तत्रस्थकला
4. रोगमार्ग - मध्यम रोग मार्ग
5. अग्नि - जठराग्नि एवं धात्वाग्नियाँ
6. आम - जठराग्नि एवं धात्वाग्नियों की दुर्बलता
7. दोष - वात - समानवायु, व्यानवायु, अपानवायु
   पित्त - पाचक पित्त
   कफ - क्लेदक कफ, श्लेषक कफ
1. दूष्य - रस
2. स्रोतस - रसवह एवं अन्नवह
3. स्रोतोदुष्टि - संगजन्य
4. प्रत्यात्मलिङ्ग - वृश्चिक दंशवत पीड़ा, गात्रस्तब्धता

**आमवात का सापेक्ष निदान**

**आमवात का सापेक्ष निदान**

| क्र.सं. | आमवात | वातरक्त | संधिवात | क्रोष्टुक वीर्य |
|---|---|---|---|---|
| 1. | आम सहित वात प्रकोप होता है । | वात एवं रक्त प्रकोप होता है । | संधियों में वात प्रकोप होता है । | जानसंधि में रक्त एवं वात प्रकोप होता है। |
| 2. | दोष-वातकफ, दूष्य-रस | दोष-वात, दूष्य-रस | दोष-वात, दूष्य-रक्त | दोष-वात, दूष्य-रस-रक्त |
| 3. | मुख्य कारण आमोत्पादक एवं वातप्रकोपक आहार-विहार | वात एवं रक्त प्रकोपक आहार-विहार कारणभूत | अधिक वायु वाले व्यक्ति द्वारा वात प्रकोपक आहार-विहार सेवन | वात एवं रक्त - रसक्षय |
| 4. | रुग्ण संधियों में गुरुता, स्निग्धतायुक्त शोथ पाया जाता है । | शोथ उष्णता एवं लालिमा युक्त रहता है । | शोथ अल्प एवं रुक्ष होता है । | शोथ केवल जानु संधि गीदड के शिर जैसी हो जाता है । |
| 5. | प्रायः बड़ी संधियाँ प्रभावित होती हैं । छोटी भी प्रभावित हो सकती हैं । यह किसी भी आयु में हो सकता है। | प्रायः छोटी संधियाँ प्रभावित होती हैं । रोग का प्रारम्भ हाथ या पैर की अगुलियों से होता हैं । प्रायः 40 वर्ष बाद होता है । | प्रायः बड़ीं संधियाँ प्रभावित होती है । रोग प्रायः अधिक उम्र के व्यक्तियों को होता है । | केवल जानु संधिरूग्ण होती है । |
| 6. | संधियों में भ्रमणशील व वृश्चिकदंशवत् पीड़ा होती है । | इसमें तोद, मेद के समान पीड़ा होती है । | इसमें आंकुचन प्रसारण में संधियों में पीड़ा होती है । | इसमें वृश्चिकदंशवत् पीड़ा नहीं होती है । |
| 7. | शोथ अपक्व होता है । | शोथ पाकयुक्त होता है । | शोथ अपक्व होता है । | शोथ अपक्व होता है । |
| 8. | ज्वर की उपस्थिति हो सकती है । | इसमें प्रायः ज्वर नहीं रहता है । | ज्वर नहीं रहता है । | ज्वर नहीं रहता है । |


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र.सं. | आमवात | वातरक्त | संधिवात | क्रोष्टुक वीर्य |
|---|---|---|---|---|
| 9. | हृदय विकृति मिलती है । | हृदय विकृति नहीं मिलती है । | हृदय-विकृति नहीं मिलती है । | हृदय-विकृति नहीं मिलती है । |
| 10. | जीर्णावस्था में अंगुलियों विकृति हो जाती है । | जीर्णावस्था में विकृति पाई जाती है । | संधियों में विकृति हो है । | अनुपस्थित |
| 11. | गौरव, अपाक, अरुचि आदि लक्षण मिलते हैं । | अनुपस्थित | अनुपस्थित | अनुपस्थित |
| 12. | उपशय-लंघन, रूक्ष स्वेदन, बलानुसार व्यायाम | उपशय-स्नेहन रक्तमोक्षण | उपशय-स्नेहन स्वेदन | उपशय-स्नेहन व रक्तमोक्षण |
| 13. | अनुपशय-स्नेहन व रक्त मोक्षण | अनुपशय अतिस्वेदन | अनुपशय-रूक्ष चिकित्सा | अनुपशय-अतिस्वेदन |
| 14. | स्वभाव-चिरकारी | आशुकारी | चिरकारी | आशुकारी |

## आमवात एवं आमवातिक ज्वर-सापेक्ष निदान

| क्र.सं. | आमवात | आमवातिक ज्वर |
|---|---|---|
| 1. | आयु-आमवात प्राय: 20-45 वर्ष के व्यक्तियों में पाया जाता है । | सामान्यत: 5-15 वर्ष की आयु में अधिक होता है । |
| 2. | पुरुष-स्त्रियों में 1:3 का अनुपात पाया जाता है । | पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक होता है । |
| 3. | यह Autoimmune रोग माना जाता है । | स्ट्रेप्टोकोकस जीवाणु विषजन्य होता है । गलग्रन्थि शोथ या गलशोथ पाया जाता है । |
| 4. | प्रारंभविकृति-हाथों की अंगुलियों में होती है । संधियों में शोथ, वृश्चिकदंशवत् पीड़ी तथा स्पर्श में शैत्यानुभूति, बाद में बड़ी संधियों यथा-जानु-कर्पूर, मणिबंध, पृष्ठवंश, गुल्फ आदि संधियों भी प्रभावित हो जाती हैं । संधि में स्पर्शासह्यता व शोथ मिलता है तथा तरल का संचय अधिक होता है । | प्रारंभ में बड़ी संधियों यथा-जानु-गुल्फ कर्पूर आदि प्रभावित होती हैं । प्रथम संधि में दो-तीन दिन पीड़ा रहने के बाद दूसरी संधि में प्रसर कर जाती है । यदि रोग का पुन:-पुन: आक्रमण न हो तो रोगी में ठीक होने के बाद विकृति नहीं रहती है । संधियों में लालिमा, पीड़ा, शोथ व स्पर्श में उष्णता, स्पर्शसह्यता मिलती हैं । संधियों में पूय नहीं पड़ता । तरल संचय कम होता है । |
| 5. | रात्रि व प्रात:काल में संधियों में स्तब्धता पाई जाती है । | - |
| 6. | रोग के जीर्ण होने पर संधियों में स्थायी विकृति रह जाती है । | रोग के ठीक होने पर संधियों में विकृति नहीं रहती है । |


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र.म. | आमवात | आमवातिक ज्वर |
|---|---|---|
| 7. | ज्वर अधिक तीव्र नहीं रहता, ठण्डा स्वेद आता है । | ज्वर लगभग 101°F से 104°F तक रहता है तथा स्वदोधिक्य होता है । |
| 8. | हृदय अन्तआवरण शोथ, फुफ्फुसावरण शोथ हो सकता है । | हृत्पेशी शोथ, कपाटिकाशोथ एवं उसमें क्षीणता मिलती है |
| 9. | रक्त का ESR बढ़ा मिलता है । पॉलीमॉर्फ, ल्यूकोसाइटॉसिस, रक्ताल्पता, रक्तभार में कमी तथा रूमेटॉइड फेक्टर धनात्मक होता है । | ESR बढ़ा हुआ ल्यूकोसाइटॉसिस, रक्ताल्पता तथा एण्टी-स्ट्रेप्टोलाइसिन टाइगर (ASLO) बढ़ जाता है । |
| 10. | उपशयात्मक सोडियम सेलिसिलेट से लाभ नहीं होता है । रूक्ष स्वेद से लाभ मिलता है । | सोडियम सेलिसिलेट से लाभ होता है । |

**आमवात के उपद्रव**

जाड्य, आन्त्रकूजन, छर्दि, बहुमूत्रता, आनाह, शूल, तृष्णा, शयननाश, कोष्टुकशीर्ष, खञ्जता, जानुसंधि में व्रणशोथ, लसिका संचय, चिरपाक एवं दारुण संधि शोध ।

**आमवात की साध्यासाध्यता**

* साध्य - एकदोषज आमवात साध्य माना है ।
* याप्य - द्विदोष्ज को याप्य माना है ।
* कृच्छ्र साध्य - सर्वशरीर व्यापी शोध से युक्त सान्निपातिक आमवात को कृच्छ्रसाध्य माना है ।

**आमवात का चिकित्सा सिद्धान्त**

1. आमवात में लंघन, स्वेदन, तिक्तरस, दीपन, रेचन, कटु पदार्थ, एरण्ड स्नेहपान और बस्ति देनी चाहिये ।
2. अभिष्यन्दि और पिच्छिल आहार तथा गुरु आहार आमवात के रोगी को नहीं देनी चाहिये ।

**सामान्य चिकित्सा**

1. एरण्ड तैल से विरेचन ।
2. शुण्ठी 2 ग्राम कांजी से या जल से दें ।
3. त्रिवृत् स्वरस भावित त्रिवत् चूर्ण ।
4. लहसुन की चटनी या तेल में पकाकर दाल में डालकर खाना ।
5. रसोन सुरा का प्रयोग ।
6. हरीतकी चूर्ण 2 ग्राम एरण्ड तैल में मिलाकर देना ।

**घरेलू अनुभूत योग**

1. कुचला शुद्ध और काली मिर्च दोनों को सममात्रा में लेकर अदरक के रस में घोटकर मूंग के आकार की गोलियां बनाकर सुखाकर शीशी में सुरक्षित रखें। इसे सुबह-शाम (1गोली) पानी के साथ सेवन करने से कुछ ही दिनों में पुराने से पुराना आमवात नष्ट हो जाता है ।
2. लहसुन का रस 6 ग्राम, गोदुग्ध 50 ग्राम में मिलाकर पिलाते रहने से कुछ ही दिनों में आमवात में लाभ होता है ।
3. एरण्ड तैल प्रातःकाल कुछ दिनों तक खाली पेट लेने से आमवात समूल नष्ट हो जाता है ।
4. मेथी को पीसकर बनाया गया चूर्ण 10 ग्राम की मात्रा में पानी या तक्र के साथ सेवन करने से आमवात में शीघ्र लाभ होता है अथवा मेथी और सोंठ का चूर्ण 4-4 ग्राम की मात्रा में दिन में 2 बार गुड़ के साथ मिलाकर सेवन करने से आमवात नष्ट हो जाता है ।
5. धतूरे के पत्तों पर एरण्ड तैल चुपड़कर जोड़ों की सूजन पर बांधकर ऊपर से नमक की गरम पोटली से सेंक करने से विशेष लाभ होता है ।
6. अजवायन 3 ग्राम, काला नमक 5 ग्राम को मिलाकर (यह एक मात्रा है) दिन में तीन बार गरम जल के साथ सेवन करने से पतला पाखाना तथा आम का बनना बन्द हो जाता है । आमवात नाशक भी है ।
7. लौंग 1 ग्राम एवं संभालू (हालू) की कोंपलें 20 ग्राम दोनों को बारीक पीसकर बेर के बराबर गोलियां



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



लें। 2-2 गोली प्रातः सायं बासी पानी से सेवन करायें। अतीव गुणकारी है।

8. हालू (संभालू), कलौंजी, मेथी और अजवायन चारों को सम भाग लेकर कूट पीसकर चूर्ण बनायें। प्रतिदिन 3 ग्राम की मात्रा में पानी के साथ सेवन करायें। गठिया तथा कमर दर्द के लिये अत्यंत लाभप्रद है।

9. इन्द्रजौ (कंडू) आवश्यकतानुसार लेकर बारीक पीस लें, फिर इसमें दुगुनी खांड मिला लें। प्रतिदिन 10 ग्राम की मात्रा में गर्म दूध से सेवन करने से महीनों की गठिया में कुछ ही दिनों के प्रयोग से लाभ हो जाता है।

10. एरण्ड का तेल, लहसुन तथा रतनजोत का रस प्रत्येक 6-6 ग्राम तीनों को मिलाकर पीने से 3-4 दिन में गठिया के दर्द में आराम आ जाता है।

11. नमक 20 ग्राम, अजमोद 30 ग्राम, सोंठ 50 ग्राम, हरड 100 ग्राम लें। सभी को कूट पीसकर चूर्ण बना लें। इसे 6 ग्राम की मात्रा में जल के साथ प्रतिदिन प्रयोग करायें। शीघ्र गठिया नष्ट हो जाती है।

12. तिल्ली का तेल 400 मि.ली. कपूर 10 ग्राम दोनों को स्वच्छ शीशी में भरकर मजबूत कार्क (ढक्कन) लगा दें, तथा शीशी को धूप में रख दें। जब कपूर और तेल मिलकर एक हो जाये तो काम में लायें। इस तैल की मालिश से गठिया तथा अन्य वात-विकार बहुत कम समय में ही नष्ट हो जाते हैं।

13. 1 कि.ग्रा. गाय का दूध+एक बड़ी लहसुन की गांठ + बारीक - बारीक टुकड़े+आग पर ओटावें + 1 पाव शेष रहने पर + लहसुन सहित गुनगुना दूध पी जावें। यह प्रयोग 6 सप्ताह तक करें। इस प्रयोग में खटाई नहीं खायें।

**शास्त्रीय योग**

**रस** - महावात विध्वसंन रस, आमवातारि रस, समीर पन्नग रस, वृ०वात चिन्तामणि रस, हिंगुलेश्वररस, सिद्धदरदामृत। त्रिपुरभैरवरस, वात गजेन्द्र रस, आमवातेश्वर रस, रसराजरस।

**लौह** - दार्व्यादि लौह, विंडगादि लौह, त्रिफलादि लौह, पुनर्नवामण्डूर।

**भस्म** - स्वर्णभस्म, रौप्य भस्म, अभ्रक भस्म, लौह भस्म, मण्डूर भस्म।

* **वटी** - अग्नि तुण्डी वटी, अमर सुन्दरी वटी, आरोग्य वर्धिनी वटी, आमवात प्रमथनी वटी, चन्द्रप्रभा वटी, हिंग्वष्टक वटी।
* **गुग्गुलु** - योगराज, महायोगराज, सिंहनाद, पुनर्नवा, अमृतादि, त्रयोदशांग, वातादि, शिवा गुग्गुलु।
* **चूर्ण** - पंचसमचूर्ण, अजमोदादिचूर्ण, नागरादि चूर्ण, वैश्वानरचूर्ण, अश्वगंधादिचूर्ण, पिप्ल्यादि चूर्ण, पुनर्नवादि चूर्ण।
* **आसव अरिष्ट** - अश्वगंधारिष्ट, पुनर्नवासव, बलारिष्ट, वृश्चीकाधारिष्ट, कुर्मायासव, मध्वारिष्ट।
* **क्वाथ** - महारास्नादि क्वाथ, रास्नादि क्वाथ, रास्ना सप्तक क्वाथ, पुनर्नवादिक्वाथ, दशमूलादि क्वाथ, शुठंयादि क्वाथ।
* **पाक अवलेह** - आमवात गजसिंह मोदक, एरण्ड पायस, एरण्डपाक, रसोनपिण्ड, महारसोन पिण्ड।
* **घृत** - नराच घृत।
* **तैल** - वृ० सैंधवादि तैल, प्रसारिणी तैल, नारायण तैल, विषगर्भ तैल, महानारायण तैल, बला तैल, धत्तूरादि तैल से यथा समय अभ्यंग करावें।

**स्वानुभूत सामान्य चिकित्सा व्यवस्था पत्र**

| | | |
|---|---|---|
| * | आमवातारि रस | 250 मि.ग्रा. |
| | शुद्ध कुचला | 125 मि.ग्रा. |
| | रससिन्दूर | 250 मि.ग्रा. |
| | | 1 x 3 |

**अनुपान रास्ना सप्तक क्वाथ से**

* संजीवनी वटी 6 वटी/ 3 मात्रा
* अजमोदादि चूर्ण 5 ग्राम/ 2 मात्रा

अनुपान दूध से

**रात्रि को**

* एरण्ड तैल 20 मि.ली. 1 मात्रा

अनुपान दूध से

* बालुका स्वेदन / 2 बार
* दशमूलारिष्ट 40 मि.ली:/ 2 मात्रा

**नोट - उपर्युक्त सभी औषधियों को चिकित्सक की परामर्श के बाद ही उपयोग में लाना चाहिए।**



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# परिवार नियोजन : कब और क्यों

डा० राजीव गुप्त

स्त्री और पुरुष जीवन के दो महत्वपूर्ण स्तंभ हैं । दोनों के मिलन के पश्चात् संतान की उत्पत्ति होती है और वंश आगे बढ़ता है । इसीलिए विवाह जैसी संस्था का अस्तित्व सार्थक हुआ और उसे सामाजिक मान्यता मिली । विवाह के बंधन में बंधकर स्त्री-पुरुष परस्पर शारीरिक संबंध बनाते हुए सृजन की इस नैसर्गिक परंपरा को आगे बढ़ाने के लिए स्वतंत्र होते हैं । विवाह स्त्री-पुरुष के मिलन की पारिवारिक और सामाजिक स्वीकृति है । विवाह करके स्त्री-पुरुष तो एक अटूट बंधन में बंध ही जाते हैं, साथ-ही-साथ दो परिवार भी एक-दूसरे के निकट आते हैं और कई नवीन रिश्तों का सृजन होता है ।

कुछ दशकों पहले तक हमारे बुजुर्ग घर की नई-नवेली बधू को कई संतानों की माता बनने का आशीर्वाद देते थे और उस समय एक भरे-पूरे परिवार की कल्पना मन में एक सुखद अहसास जगाती थी । पहले न तो इतनी प्रतिस्पर्द्धा थी और न ही भौतिक सुख-सुविधाओं की इतनी ललक । कुछ दशक पहले शिक्षा का भी इतना महत्व नहीं था । मनुष्य की औसत आयु भी उस समय काफी कम थी, क्योंकि तब बच्चों और महिलाओं की मृत्युदर बहुत अधिक थी ।

धीरे-धीरे समय ने करवट बदली । मनुष्य भौतिक सुख-सुविधाओं का दास बनता गया और खुद को समृद्धि के शिखर पर पहुँचाने की प्रतिस्पर्द्धा में उसके पास इतना समय नहीं रहा कि वह अधिक संतान के पालन-पोषण की जिम्मेदारी का निर्वाह कर सके । उसनें समक्ष लिया कि परिवार सीमित रखने में ही उसकी भलाई है । इस मंहगाई के युग में वह बस एक या दो बच्चों को ही अच्छी तरह से पालपोस सकता है । उसे उच्च शिक्षा दिला सकता है और इस समाज में स्थापित कर सकता है ।

आज मनुष्य खुद को समाज के प्रतिष्ठित स्थान पर स्थापित करने को अधिक प्रयत्नशील है । पहले की तरह युवाओं को कम उम्र में शादी रास नहीं आती । जीवन में एक सफल व्यक्ति बनना उसका मुख्य उद्धेश्य है ।

आज स्त्रियों में भी जागरूकता आई है । उनमें गजब का आत्मविश्वास है । उनमें आत्मनिर्भर होकर [illegible] की ललक है । वे अपने सौन्दर्य और बुद्धि का लोहा मनव रही हैं । ऐसी स्थिति में वे मात्र सारे जीवन माँ की भूमि कैसे निभा सकती हैं । कुछ स्त्रियां तो अपने कैरियर लिए एकांकी रहने से भी नहीं हिचकतीं, क्योंकि ऐसा भी बंधन जो उन्हें सफलता की नित नई ऊँचाइयों को में बाधक हो, स्वीकार नहीं है ।

साधारण पढ़ीलिखी लड़कियां भी आजकल विव के तुरन्त बाद माँ नहीं बनना चाहती हैं । वे दो-तीन तक वैवाहिक जीवन का जमकर आनन्द लेना चाहती हैं पति को प्यार देना व पाना चाहती हैं । ऐसे समय पति-पत्नी मिलकर किसी उचित गर्भनिरोधक साधन उपयोग के बारे में विचार कर लेते हैं ।

समझदार दंपति आगे भी अपनी मनमर्जी से ज ही संतान का प्रयास करते हैं, जिनको वे सुविधा-पू पालपोस सकें । पहले की तरह इसे वे भगवान की बनाकर अपनी हैसियत से अधिक संतान पैदा करने भूल नहीं करते ।

इतना सब होते हुऐ भी अब भी जनसंख्या अनुपात देश के संसाधनों की अपेक्षा बढ़ता ही चला ज है । जिस कारण हरेक व्यक्ति को जीवन की मूल सुविधाएं भी प्राप्त नहीं हो पा रही हैं और देश की एक आबादी गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रही है सरकार की नित नई बनती योजनाएं आबादी के महाप्रलय के सामने औधे मुंह गिर रही हैं । देश आर्थिक स्थित चरमरा रही है तथा विदेशी कर्ज बढ़ता चला जा रहा है । इस देश का हर बच्चा अपने सिर पर लेकर ही जनमता है । देश की आबादी बढ़ते जाने के कारण निम्न हैं :-

- अभी भी शिक्षा के प्रचार-प्रसार में कमी ।
- लड़कों की चाहत में अधिक संतानों को देना ।
- परिवार नियोजन के साधनों को अपनाने में हिच
- कुछ लोगों का यह मानना कि परिवार नि

5/dd० बाग कुंजा, फर्रुखाबाद, उत्तर प्रदेश - 209625

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



के साधन अपनाने से सैक्स सुख में बाधा पड़ती है ।

- संतान के जन्म देने के मामले में औरतों के निर्णय को सम्मान न देना ।
- धार्मिक कारणों से परिवार नियोजन के साधन अपनाने में बाधाएं ।

## परिवार-नियोजन का महत्व और आवश्यक परिस्थितियाँ

पति-पत्नी साथ-साथ रहते हुए, शारीरिक सुख लेते हुए भी जब कुछ स्थाई या अस्थायी साधनों द्वारा गर्भधारण पर ऐच्छिक नियंत्रण रखते हैं, तो उसे संतति निरोध (परिवार-नियोजन) कहते हैं । कुछ परिस्थितियों में तो सिद्धांतत: परिवार नियोजन की पद्धति अपनाना नितांत आवश्यक है । इन परिस्थितियों में तीन प्रधान हैं :-

1. चिकित्सकीय परिस्थितियां
2. आर्थिक परिस्थितियां
3. मनोवैज्ञानिक परिस्थितियां

### चिकित्सा परिस्थितियां

माता-पिता किसी में भी यदि ऐसा रोग हो, जो उनके द्वारा आनुवांशिक रूप से उनकी संतानों में भी हो सकता है, तो संतान न पैदा करना ही श्रेयकर है । जिन स्त्री-पुरुषों को हृदय रोग, रक्त के रोग, मधुमेह, उग्र सक्रिय राजयक्ष्मा, यौनरोग, रीढ़ एवं कूल्हे की हड्डियों में विकृति, गर्भाशय, ग्रीवा तथा गर्भाशय के साधारण तथा घातक अर्बुदों की उपस्थिति में स्तन कैंसर, नर्वस सिस्टम के गंभीर रोग, जीर्ण श्वास रोग, जब पूर्व प्रसव किन्हीं कारणों से ऑपरेशन द्वारा कराया गया हो, तो ऐसी परिस्थितियों में परिवार नियोजन अत्यधिक आवश्यक है ।

### आर्थिक परिस्थितियां

भारत जैसे विकासशील देश में अधिकतर परिवारों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है । ऐसे में अधिक बच्चों का पालन-पोषण और शिक्षण एक समस्या है । ऐसे परिवारों में परिवार नियोजन के तरीके अपनाए जाने से दो बच्चों के जन्म के बीच पर्याप्त अन्तर रखा जा सकता है । इस प्रकार उनका पालन-पोषण भली प्रकार से किया जा सकता है । सन्तति निरोध के तरीके अपनाने से परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी रहती है, जिससे पर्याप्त सुख-सुविधा रह है । इससे बच्चों की अच्छी एवं उत्तम शिक्षा व्यवस्था सामान्य कल्याण संभव होता है ।

### मनोवैज्ञानिक परिस्थितियां

कुछ मनोवैज्ञानिक परिस्थितियां ऐसी हैं जि गर्भधारण से बचना चाहिए एवं सुविधानुसार उचित निरोधकों का प्रयोग करना चाहिए । विशेषत: न्यूरासि मनोविक्षिप्ति, पागलपन, मिर्गी, अवांछित गर्भस्थिति भय, यौन उदासीनता आदि ।

### परिवार नियोजन से लाभ

दो या तीन बच्चे होते हैं घर में अच्छे, हम हमारे दो, छोटा परिवार सुखी परिवार, जैसे स्लोगनों में म महत्वपूर्ण संदेश एवं उद्देश्य छिपा है । ये कवल नारेबा या दीवारों पर लिखने मात्र के लिए ही नहीं है, यदि इनको अपनाकर जीवन को सुखमय तथा समृद्ध बनाया सकता है । भारत की जनसंख्या को चरम की ओर बढ़ देख हमारा मूलमंत्र यह होना चाहिए 'हम दो हमारा एक छोटा परिवार होने में लाभ ही लाभ है -

- परिवार नियोजन पर अमल करके स्त्री अपने स्वास्थ्य के साथ-साथ बच्चों तथा पति के स्वास्थ्य की उचित ढंग से देखभाल कर सकती है ।
- परिवार नियोजन के तरीकों को अपनाकर दो बच्चों के जन्म में पर्याप्त अन्तर रखा जा सकता है जिस उनके पालन-पोषण के लिए अधिक समय त साधन उपलब्ध रहते हैं ।
- कम बच्चे होने से उनकी शिक्षा की व्यवस्था उच्च ढंग से की जा सकती है ।
- नियोजित परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी रह है, जिससे पर्याप्त सुख-सुविधा रहती है ।
- परिवार नियोजन के तरीके जनसंख्या को क करके परिवार, समाज एवं राष्ट्र को समृद्धि की ओ ले जाने में सहायक हैं । फिर सभी के लि रोटी-कपड़ा-मकान के साथ अच्छी शिक्षा औ सुख-संपन्नता की परिकल्पना साकार हो सकत है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# ऋषिवृक्ष - अगस्त

डा० नागेश्वर मिश्र, जी.ए.एम.एस.डी. एवाई, एम.डी. साहित्यआयुर्वेदाचार्य, सेवानिवृत्त प्रोफेसर, द्रव्यगुण

प्रकृति की प्रत्येक व्यवस्था जनस्वास्थ्य को ध्यान रखकर की गई है । ऋतुओं की व्यवस्था, ऋतु परिवर्तन अनुसार पंच महाभौतिक स्वरूप में प्रत्यक्ष ईश्वर का ोक सूर्य, चन्द्र, जल, वायु, आकाश आदि की प्रकृति रिवर्तन आदि क्रिया के द्वारा समय-समय पर प्राणियों के ास्थ्य को योगक्षेम वहन करती है । वर्षा, शरद, हेमन्त, शिर, वसन्त, ग्रीष्म ये छः ऋतु विभाजित होकर पंच ाभौतिक स्वरूप सूर्य, चन्द्र आदि प्राणियों के जीवन का ाधार बन कर सृष्टि का नियमन करती हैं । इसी के नुसार शरीर के आधार भूत दोष धातु और मलों का भाव भी परिवर्तित होते रहता है । उसके अनुसार आचरण रने से दोष-धातु और मल समावस्था में रहकर प्रकृति ार देही का कल्याण करते रहते हैं । विषमावस्था में आने स्वयं स्वभाव के प्रभाव द्वारा अनुलोम-विलोम गतियों था संशोधन-संशमन कर्मों के द्वारा उसे प्रकृति एवं देही देह से बाहर कर साम्यावस्था में लेकर स्वास्थ्य प्रदान रती हैं । जिस ऋतु में जिस दोष का बाहुल्य होता है ससे विकार होने की संभावना होती है तदनुसार ही ाणियों के आहारोपयोगी औषध एवं आहार द्रव्य की त्पत्ति-विकास कर अपने सम्पर्क में आकर विवरण करने ाले जलवायु, सूर्य, चन्द्रादि के स्वभावों में परिवर्तन लाकर न-मानस का स्वास्थ्य की रक्षा करने की व्यवस्था करती है।

इसी व्यवस्था के अनुकूल शरद ऋतु में उत्पन्न ाने वाला तथा जनमानस के गृह एवं बाग बगियों की शोभा दान करने वाला प्राचीन काल से ही ऋषि मुनियों के द्वारा मादृत एवं प्रशस्ति प्राप्त वृक्ष है अगस्त । इसे ऋषि वृक्ष ी कहा जाता है क्योंकि ऋषियों द्वारा ही इसका प्रचार-प्रसार आ है । इस वृक्ष का कार्य केवल शोभा बढ़ाना ही नहीं , बल्कि इसका मानव स्वास्थ्य के साथ बड़ा ही घनिष्ट म्बन्ध है। इसके औषधीय कर्म समादरणीय है । इस चना में अगस्त वृक्ष के सम्बन्ध में गुरु ग्रन्थों के आधार पर काश डालने का प्रयत्न किया जा रहा है ।

अगस्त के परिचच में आचार्यों ने कहा है कि आकाश में अगस्त तारा के उदय होने पर ही वृक्ष में फूल लगना प्रारम्भ होता है इसीलिये इसे अगस्त वृक्ष कहा जाता है ।

शिवदास सेन ने वृक्ष परिचय में इसका उल्लेख किया है कि, यह सिद्धवृक्ष अगस्त के पत्र-पंक्तियों में होते हैं और इसकी फली सिम्बी के समान और मृदु होता है। भावमिश्र जी ने वृक्ष के गुण कर्मों का वर्णन किया है कि यह पित्त और कफ को परास्त करने वाला है विशेष का चातुर्थिक (विषम) ज्वर नाशक है । स्वभाव में शीत वीर्य वाला है । रूक्षगुण युक्त है, वायु को बढ़ाता है । इसका रस तिक्त है । रोगों में प्रतिश्याय (नजला-जुखाम) को शान्त करता है । इसके फूल, गुण का विशेष रूप से वर्णन किया है कि पिन्नस (बिगड़ा जुखाम) कफ, पित्त को शान्त करता है । इसका महत्वपूर्ण कार्यों में अन्धापन को नाश करने के लिये लिखा है । निघन्टु रत्नाकर में इसका शरीर पर प्रयोग करने के बाद समयानुसार उदर में परिवर्तन होने वाले रसों के बारे में लिखा है कि उदर में जब इसका पाचन क्रिया होती है उस समय यह मधुर रस युक्त रहता है । यह स्मृति एवं शक्ति को बढ़ाने वाला है । परिचय में लिखा है कि इसका सिम्बी फल होता है, कर्म में सर अर्थात् दोषों को शरीर के अन्दर भ्रमण करने में सहयोगी होता है। वृद्धि वर्धक, स्वाद वर्धक इसका गुण लघु होता है । मुनिवृक्ष का विपाक मधुर रस तिक्त और कार्य स्मृति शक्ति वर्धक है । दोषों के ऊपर कर्म का उल्लेख करते हुए त्रिदोष हारक बताया है । विशेष करके कफ दोष को शान्त करनेव वाला बताया है । रोगों के उपर कार्य बताया गया है कि यह पाण्डु रोग शेष रोग गुल्म रोग नाशक है । इसका विषघ्न प्रभाव भी बताया है । अगस्त का पक्वफल पित्तवर्धक तथा रूक्ष गुण वाला होता है ।

राजर्षि सुश्रुत ने सूत्र स्थान 46 (छयालिसवाँ अध्याय में लिखा है कि दोनों अगस्त का फूल तिक्त

पं० नुनुआ राय, गंगा देवी देव इन्द्रदत्त नन्द कुमारी धर्मार्थ सेवा संस्थान, सत्येन्द्र नगर, रोड नं०-1, लेन नं०-1, औरंगाबाद (बिहार) समीप- अनुग्रह नारायण रेलवे स्टेशन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



पाक में कटु रस वाला तथा रोगों के प्रति इसके कार्य का दर्शन किया है कि क्षय और कास नाश करता है । गुण का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा है कि यह न अतिशीत है और न अति उष्ण है विशेष करके रतौंधी रोग के लिए प्रशस्त है ।

हारीत संहिता में अगस्त वृक्ष का वर्णन करते हुए आचार्य ने व्यक्त किया है कि अगस्त के पत्रों को मूत्र के साथ पीसकर अपस्मार रोग में नस्य के लिये उत्तम है । इन्होंने स्पष्ट उल्लेख किया है कि मनुष्य का अपस्मार रोग शीघ्र ही नष्ट करता है । यहां पर मूत्र शुद्ध ही लिखा गया है । योनि विशेष का उल्लेख नहीं होने से गोमूत्र का प्रयोग ही होना चाहिये । भाव प्रकाश ने पुनः लिखा है कि अगस्त फूल का चूर्ण बनाकर भैंस का दही बनाना चाहिये । उसके मन्थन से प्राप्त नवनीत द्वारा मनुष्य के स्फोट रोग की चिकित्सा करनी चाहिये ।

पण्डित लोलिम्ब राज जी ने अपने सरस वैद्य जीवन की रचना से स्पष्ट कर दिया है कि सरस व्यवहार रोग दूर करने में महत्वपूर्ण सहायक है । इन्होंने सरस कृतियों में अनेक महत्वपूर्ण औषधियों का उल्लेख किया है । इन्होंने मुनिद्रुम (अगस्त) के विषय में लिखा है कि मुनिद्रुम के पुष्प दल के जल से चातुर्थिक ज्वर का नाश होता है । इस जल से रोगी को नस्य क्रिया करानी चाहिये । हल्दी और शोभाञ्जन क्वाथ के प्रयोग से तीन दिन के अन्दर शूल का नाश होता है । यह नहीं स्पष्ट है कि किस प्रकार के शूल का नाश करता है ।

वैद्य मदनपाल ने लिखा है कि नागर (शुंठी) और शोभाञ्जन के स्वरस से तीन दिन के अन्दर शूल का शमन होता है । इसी प्रकार से मुनिद्रुम (अगस्त) की छाल के क्वाथ में सोंठ मिलाकर के प्रयोग से भी शूल का तीन दिन में नाश होता है और भी कहा है कि मुनिवृक्ष की छाल के क्वाथ में रामठ (सौंठ) मिलाकर प्रयोग करने से उसी दिन (तीन दिन में) शूल नाश करने में पटु है जैसा कि लोलिम्बराज ने लिखा है । अगस्त वृक्ष का परिचयात्मक विवरण में यह वृक्ष शिम्बी (लेगुमिनेसी) कुल की है उपकुल अपराजिता (पैपिलियोंनो) वानस्पतिक नाम (पैंसेवनिया ग्रेन्डीफोलियो) है अगस्त मुनिद्रुम वंगसेन और बक्र पुष्प है । हिन्दी - अगस्त, बंगरू - वक, मद्रासी - अगस्ता, गुजराती - अगिधयों, तामिल - अगनी, तेलगु - अविधि, उड़ीसा - बुको, अगस्त को वर्णन कहा जाता है ।

स्वरूप का वर्णन इस प्रकार है कि शीघ्र परिवर्तनशील किन्तु अल्पायु 20 से 30 फुट उँचा, काण्ड - सरल शाखायें विरल अर्थात् अनियमित होती है । पत्र 1/2 से 1 फिट लम्बे शिरीष में समान लम्बे शींका (रेचिस) पर 41 से 61 लम्बे आयताकार चिकने तथा हल्के हरे रंग के होते हैं । पुष्प श्वेतवर्ण नाव के आकार का होता है । यह 2 से 4 छोटी अक्षीय (बगल से) मञ्जरियों में होते हैं । इसका पुष्पागम अगस्त तारा के उदय लेने पर अर्थात् शरद ऋतु में होता है । शिम्बी - थोड़ा बक्र स्थूल शिवनी युक्त प्रायः चतुष्कोणीय होती है जिसमें 15-20 हल्के भूरे रंग के बीज होते हैं । इसी फली और पुष्प के शाक एवं अचार बनते हैं ।

**ऋषिवृक्ष की जातियाँ :-** 1. श्वेत, 2. पीत 3. नीला 4. रक्त पुष्प के आधार पर इन चार जातियाँ बताई गई हैं । क्षेत्र में श्वेत और रक्त दो ही प्रकार के उपलब्ध होते हैं । वनौषधि यात्रा के माध्यम से गोआ गया था । दक्षिणी गोआ में वृक्ष था जिसका फूल कालीमाँ लिये थे । नील आभा युक्त वृक्ष नजर आया था । इसके अतिरिक्त पश्चिम पश्चिमोतर, दक्षिण एवं दक्षिण पश्चिमी कई स्थानों की यात्रा करने का अवसर मिला किन्तु नील अगस्त का कहीं भी दर्शन नहीं पाया ।

यह सम्पूर्ण भारत में बागीचा की शोभा बनाये रखते हैं । जो लगाया गया होता है वन्य रूप में उत्पन्न नहीं देखा गया है ।

**रासायनिक संगठन :-** द्रव्यगुण विज्ञान द्वितीय भाग में रासायनिक वर्णन दिया गया है कि इसकी छाल में टैनिन और रक्त वर्ण का निर्यास होता है । पत्तियों में टैनिन कैल्शियम, फास्फोरस, लौह तथा विटामिन ए०बी०सी० पाये जाते हैं । पुष्पों में प्रोटीन विटामिन तथा विटामीन बी० और सी० पाये जाते हैं । बीजों की गणना में सभी वनस्पतियों में अगस्त बीज बड़ा ही महत्वपूर्ण बताया गया


CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



है । यह अरूचि कर होता है, इनमें प्रोटीन, वसा और कार्बोहाइड्रेट होता है । इससे सभी बीजों की अपेक्षा अधिक प्रोटीन उपलब्ध होता है, इसमें लगभग 70% प्रोटीन होता है जो प्राणियों में विशेष कर मनुष्यों के लिए बड़ा ही महत्व रखता है । बीज से एक प्रकार का तेल निकाला जाता है ।

**गुण :-** गुणों के ऊपर विचार करने पर गुण-रूक्ष । रस - तिक्त विपाक कटु - वीर्य उष्ण होता है ।

गुण के आधार पर लघु, रूक्ष एवं शीत होने के कारण कफ को प्रभावित करता है, शीत होने पर पित्त का शामक है ।

**स्थानिक कर्म :-** इस औषधि का कार्य सभी संस्थानों पर कुछ न कुछ प्रभावकारी है :- अंग विशेष में पत्रों और छाल का शोथ नाशक एवं व्रणरोपण तथा व्रणशोधन कार्य करता है । पत्र स्वरस का शिरो विरेचन के लिये रूप कार्य किया जाता है । यह बाह्य प्रयोग और आभ्यन्तर कार्य में भी महत्व का है ।

अंगों के कार्यों को सक्रिय बनाकर रखने में नाड़ी संस्थान का ही प्रमुख कार्य है । इस आधार पर नाड़ी संस्थानिक कार्य में आभ्यन्तर तथा बाह्य नाड़ी को प्रबोधित अर्थात् उत्तेजित करता है तथा चाक्षुष्य और मेध्य कार्य करता है । पाचन संस्थान में इसके पत्र में पुष्प अनुलोमन (वायु को अधोभागी) करता है तथा उदर कृमि विशेषकर पृच्छदार (फलेजिलेटा) पर कार्यकारी है । त्वचा के लिए ग्राही अर्थात् सिकुड़न या जकड़न कार्य तथा शूलनाशक है । रक्तवह संस्थान पर रक्त पित्तनाशक कार्य करता है ।

श्वसन संस्थान के लिए पत्र एवं पुष्प और छाल विशेष कार्यकारी है, यह अश्लेष्मा (कफ) को बाहर निकालकर श्वास कास को दूर करता है ।

**प्रजनन संस्थान के लिए गर्भाशय शोथ नाशक है**

मूत्र मार्ग जन्य शोथ एवं स्राव को दूर करता है, त्वचा जन्य स्फोट (फटना) नाशक तथा शोथ नाशक है ।

तापमान के ऊपर ज्वरघ्न विशेषकर विषम ज्वर (मलेरिया) नाशक है, सात्मीकरण में विशेषकर विषों को नाश करता है । किस प्रकार का विष नाशक है यह अनुसंधेय है ।

प्रयोग की दृष्टि से व्रण शोथ के ऊपर विषम (घाव को बैठानेवाला) एवं पाककार्य के लिए बाह्य रूप प्रयोग किया जाता है । ग्रामीण प्रयोग में कोष्ट (पेट रूक्षता तथा विबन्ध (मल सूखजाना) को दूर करने के लि फूल की पकौड़ी बनाकर खाते हैं । अर्श, यकृत वृद्धि कामला में लाभ करता है । प्लीहा वृद्धि में आभ्य मंजरी जामुन के सिरका में सात दिन संधान करके सेवन करने के लिए द्रव्यगुण विज्ञान में आचार्य शर्मा ने लिखा है । सन्धिगत वात रक्त पित्त तथा रक्त विक प्रयोग है । श्वासमार्ग की रूक्षता (सूखापन) और जलन के लिए इसका पत्र, फल, फूल का प्रयोग कि सकता है । इसका प्रयोग जकड़े हुए कफ को निकाल लिये भी दिया जाता है । अश्मरी वृक्क (गुर्दे) को और मूत्र वृक्ष को ठीक करता है । शुक्र दौर्बल्य में शुक्रल द्रव्यों के साथ प्रयोग होता है । यहाँ अभी यह नहीं हुआ है कि शुक्रप्रवर्तक है या शुक्राणु वर्धक शुक्रल शब्द की विपत्ति है कि शुक्रलाती प्रवर्तक शुक्रलः । इससे स्पष्ट होता है कि शुक्र नलिकाओं में किसी प्रकार का अवरोध हो या उसके गति में कमी उसमें लाभ करता है ।

त्वचादाह, मसूरिका (एसमौल कौक्स) जन्य अर्थात् चमड़े में विदार होना इसमें प्रयोज्य है ।

विषम ज्वर तथा ज्वरोत्तर दौर्बल्य (कमजो इसका प्रयोग लिखा है । विपाक के उपरान्त यह शरीर दौर्यबल्यता नाशक बताया गया है । प्रयोज्य लिए फूल और फल का वर्णन है । फल का स्वरूप में होता है । अतः फल के बीजों के दाने की मात्रा 20 दाने का उल्लेख है ।

**विवेचन :-** प्रकृति के नियमानुसार प्रकृति वाले दोषों एवं मलों का शमन हेतु ही उन ऋतुओं औषधीय पादपों का उद्गम (पुष्प काल) निश्चित गया है । अगस्त पादप शरद ऋतु में ही फूलता है और के अन्त तक उसमें फलोदगम होने लगता है । वैज्ञानिकों ने लिखा है की वर्षा ऋतु में खाये हुए साधिक्य द्रव्य तथा लवण आदि अति सेवन से



CC-0. Hurikt Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



के अन्त में प्रकुपित होता है । शरद ऋतु में अम्ल रस पित्त तथा रक्त दूष्य से होता है । प्रयोग की दृष्टि से इनकी बहुल्यता होती है । अतः दाह विस्फोट रक्तपित्त सन्धि शूल श्वास मार्ग की श्लैष्मिक कला जन्य पित प्रकोप से रूक्षता दाह आदि पित जन्य लक्षण प्राप्त होते हैं । मसूरिका के जलन में लेप या जलन के प्रकोप से शान्ति मिल सकती है । इससे यह सिद्ध होता है कि स्निग्ध गुण मधुर रस तथा विपाक मधुर और शीतवीर्य से युक्त यह ऋषि वृक्ष पीत के अम्लादि रस तथा अन्य अपने गुणों से कहीं वीर्य कहीं विपाक द्वारा शरद ऋतु जन्य विकारों को शान्त करने की क्षमता रखता है तथा सभी संस्थान जन्य पित्त दोषों को अपने गुणों के द्वारा शमन करता है ।

**उपसंहार :-** प्राचीन काल से लोकप्रियता प्राप्त अगस्त की उत्पत्ति प्रकृति में अगस्त तारा उदय होने से प्रकृति की विशुद्धि करण के उपरान्त जन मानस कल्याण हेतु ऋषियों ने इसे प्रकट किया तथा उसकी प्रशस्ति करके लोकप्रिय बनाया । वर्तमान युग आधुनिकता का शिकार होकर इन महत्वपूर्ण औषध वृक्ष की अवहेलना कर अपने घरों में अनेक शोभा द्रव्यों का आरोपन कर रहा है ।

अतः सभी को अगस्त वृक्ष का रोपन करना चाहिए एवं इसकी गुणवत्ता का प्रचार जनमानस तक पहुँचाना चाहिए जिससे जनमानस का कल्याण हो ।

द्रव्यगुण विज्ञान आचार्य प्रियव्रत शर्मा जी द्वारा गागर में सागर भरने वाली दृष्टिकोण से आयुर्वेद के तथा आधुनिक ग्रन्थों का मंथन कर लिखा है । इस पुस्तक में सभी संदर्भ उदाहरण वाले ग्रन्थों का समावेश है ।

अतः इस रचना में इन्हीं के ग्रन्थों का आधार मानकर उल्लेख किया गया है । इसमें सिद्धयोग संग्रह, भाव प्रकाश, कैयदेव निघण्टु, निघण्टु रत्नाकर, सुश्रुत संहिता, हारित संहिता, वैद्य जीवन वृ०मा० आदि ग्रन्थों का संदर्भ उदाहरण में उल्लेख है । अतः इन्हीं उद्धरणों के आधार पर रचना प्रस्तुत की गई है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**अनुसंधान के बढ़ते चरण**

# केशपात समस्या - एक गवेषणात्मक अध्ययन

*डा० अश्विन बी. निर्मल, बी.ए.एम.एस., एम.डी.,पीएचडी ** डा० बी०एम० निर्मल, एच.पी.ए., पीएचडी

## पूर्व भूमिका

जनसमाज में केशपात सर्वत्र प्रचलित प्रबल समस्या है । केश रोगों से पीड़ित 60 प्रतिशत रोगी देखे जाते हैं । कई लोगों में एक भ्रामक मान्यता है कि केशपात कोई रोग नहीं है । यह केवल प्राकृतिक परिवर्तन का लक्षण है; इसको रोका नहीं जा सकता, इसका कोई उपाय नहीं है । आधि, व्याधि उपाधिग्रस्त, अतिव्यस्त बुद्धिजीवी लोग केशपात से विशेष ग्रस्त देखे जाते हैं ।

आधुनिक चिकित्साशास्त्र में केशपात के विषय में मत प्रचलित है कि इसका कोई निश्चित कारण ज्ञात नहीं हुआ है, और न ही उसकी शतश: सफल चिकित्सा उपलब्ध है । इसलिये चिकित्सक अपनी विवशता बतलाकर रोगियों को कहते हैं, कितने ही उपाय करो किन्तु इस रोग की सफल एवं संतोषप्रद चिकित्सा संभव नहीं है ।

विशेषत: केशपात के परिणाम स्वरूप खालित्य-गंजापन Baldness उत्पन्न होता है । प्राय: इसको असाध्य माना जाता है ।

इस प्रकार केशपात समाज और चिकित्सकों के लिए एक चुनौती बन गया है । अपरंच देश-विदेशों में केश सम्बन्धित विकारों से पीड़ित रोगियों की संख्या वृद्धि होने से यह विश्व व्यापक समस्या Global Problem बनी है ।

अत: इस पर हेतु, लक्षण, औषध एवं उपचार के विषय में गवेषणा करना आवश्यक माना गया ।

## उद्देश्य :-

इस गवेषणा कार्य में अध्येता ने रोग परिचय सन्दर्भ में सामान्य, विशेष कारणों एवं लक्षणों पर गहन अध्ययन, रोग सम्प्राप्ति का विशद वर्णन, चिकित्सा विमर्श, औषध प्रयोग, प्रायोगिक अभ्यास प्रस्तुत किया है ।

## सामग्री एवं कार्य पद्धति

आयुर्वेद का आधारभूत सिद्धान्त है कि सभी रोग दोष वैषम्य से होते हैं । अहित (मिथ्या) आहार-विहार को दोष प्रकोप का मुख्य कारण माना है, अत: अध्ययन [illegible] प्रथम चरण में हेतु स्कन्ध विषयक साहित्य का [illegible] करके 11 वर्गों (TABLES) में हेतु विमर्श संकलित [illegible] है जिनमें व्यसनों और आदतों पर विशेष प्रकाश डाला [illegible]

व्याधि विनिश्चय में हेतु (कारणों) के [illegible] पूर्वरूप, रूप, उपद्रवों का परिचय आवश्यक है । [illegible] द्वितीय चरण में लिंग विमर्श में केशपात की पूरी सम्प्राप्ति का निरूपण किया गया है । चिकित्सा प्रयोजन है सम्प्राप्ति का विघटन करना तथा निदान परिवर्जन करना, इसे [illegible] का विनियोजन के हेतु केश स्वास्थ्य वर्धक उपाय [illegible] विवरण भी दिया, रोगानुत्पत्ति हेतु अपथ्यत्याग पर [illegible] किया ।

## तृतीय चरण औषध स्कन्ध

1. रक्त शोधक योग के रूप में मंजिष्ठादि घनवटी [illegible] आभ्यन्तर प्रयोग किया गया ।
2. बाह्य प्रयोगार्थ मांस्यादि लेप (राजमार्तण्ड से [illegible] शिरोरोग अधिकार से चयित किया गया ।
3. शिरोऽभ्यंग के लिए भृंगराज तैलम् (स्वल्प), [illegible] गदनिग्रह भैषज्यरत्नावली के अनुसार चर्चित किया [illegible]

56 रोगियों में औषध प्रयोग से प्राप्त [illegible] तालिका द्वारा प्रस्तुत कर विमर्श एवं निष्कर्ष स्थापित [illegible] गया ।

**प्रयोगाविधि** - 6 सप्ताह की अवधि [illegible] की गई थी ।

**अवलोकन एवं प्राप्त परिणाम** - 56 रुग्णों [illegible] दो वर्गों A & B में विभक्त किया गया । (A) वर्ग [illegible] रूग्ण एवं (B) वर्ग में 16 कुल 56 रुग्णों की [illegible] की गई । दोनों वर्ग (A+B) के सभी रुग्णों को [illegible] घनवटी 2 गोली, 2 बार पूर्णावधि तक आभ्यन्तर [illegible] रूप में दी गई ।

बाह्य औषध के रूप में (A) वर्ग के 40 [illegible]



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



को मांस्यादि लेप केशप्रक्षालनार्थ दिया गया। (B) वर्ग के 16 रुग्णों को बाह्य प्रयोगार्थ भृंगराज तैल शिरोभ्यंगार्थ प्रतिदिन दिया गया।

परिणाम-विमर्श

| | (A) वर्ग 40 रुग्ण | रुग्ण % | (B) वर्ग 16 रुग्ण | रुग्ण % |
|---|---|---|---|---|
| केशपात रूक गया | 10 | 25% | 8 | 50% |
| केशपात कम हुआ | 16 | 40% | 6 | 37.5% |
| केशपात अलाभ | 14 | 35% | 2 | 12.5% |
| | 40 | | 16 | |

निष्कर्ष :-

1. केशपात रोकने के लिए अपथ्य त्याग करना ही सर्वोत्तम निर्मूलन उपाय है।
2. पथ्य-पालन एवं केश स्वास्थ्य सुरक्षा के नियमों सम्यक् पालन दीर्घकालीन स्वास्थ्य के लिये अभ है।

सारांश :-

रक्तदुष्टि, केशमूल में मलसंचय, मानसिक तन विष का प्रभाव, शारीरिक दौर्बल्य, आहार में कटु, अ उष्ण, तीक्ष्ण, विदाहि आहार का अधिक सेवन इनसे कष्टसाध्य बनता है।

केशपात में केश तैलों से शिर अभ्यंग एवं स्नाण के प्रति दत्तचित्त होकर रोकने का प्रयत्न क चाहिए। केशमूलों की स्वच्छता, रक्तशोधन के प्रति ध रखने से 'केशपात' का नियंत्रण संभव है।

समाज के हित चिंतन के प्रयास रूप में गवेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# पित प्रकोपक शरद ऋतु में स्वास्थ की देखभाल

कविराज दिवाकर ठाकुर 'वैद्य', जी.ए.एम.एस. औनर्स (पटना) डी.एस.सी.ए. (आयुर्वेद बृहस्पति)

जब सूर्य तुला-वृश्चिक राशि में करता है भ्रमण
सुहावनी शरद ऋतु का होता है आगमन। सूरज की
स्त क्षीण और चन्द्रमा बलवान यही है स्वास्थ्य वर्द्धक
द ऋतु की पहचान । वर्षा काल में संचित पित
त्कालीन सूर्य की किरणों से तप्त होकर प्रकुपित हो
ा है । शरद ऋतु में शारीरिक उष्णता के कारण शरीरस्थ
ा को बढ़ने का मौका मिलता है । उष्ण प्रकृति वाले
क्ति को इस मौसम में बड़ी तकलीफ होती है । शारीरिक
ों को शुद्ध करने का उपयुक्त समय शरद ऋतु ही है ।
के दूषित होने से रक्त भी दूषित हो जाता है क्योंकि
ा व रक्त दोनों समान गुण धर्मी हैं । अत: पित्त और रक्त
शुद्धि के लिए विरेचन एवं रक्त मोक्षण सुयोग्य
कित्सक की देख-रेख में कराना चाहिये । दूषित पित्त
निकालने के लिए विरेचन के रूप में निशोथ, अमलतास
गुहा, हरीतकी चूर्ण, त्रिफला, मुनक्का, क्वाथ आदि
क द्रव्यों का प्रयोग करना हितकर होता है । कुटकी चूर्ण
मिश्री के साथ रात को सोते समय गर्म जल से लिया
ा चाहिए । मृदु कोष्ठ वालों के लिए गुलकन्द उत्तम
चक होता है । अगर दूषित पित्त का निर्हरण न किया
ा तो यह रक्त को दूषित कर देता है । दूषित रक्त से
न्न रोग से बचने के लिए रक्त दान करना श्रेष्ठ उपाय
। रक्त दान से निकाले गए रक्त की पूर्त्ति नए कण से
जाता है और सेहत भी बनी रहती है । रक्त दान एक
सी०सी० से एक सौ पच्चीस करना चाहिए क्योंकि सब
य एक तरफ और रक्त दान एक तरफ ।

प्रकुपित पित्त जब रक्त को दूषित करता है तो
, फोड़ा, त्वचा में विकृति, दाद, विचर्चिका, खुजली
दि कुपित पित्त दाह, छर्दि, तृष्णा, रक्तपित्त, कंठमाला,
शूल, भ्रम अम्लपित्त, विबंध अजीर्ण आध्यामान प्रतिश्याय
चि आदि रोगों को उत्पन्न करता है । इस ऋतु में मनुष्य
मध्य बल युक्त होता है । चरकाचार्य ने भी इस ऋतु को 'नृणा मध्य बला वहा' कहा है । जब पृथ्वी का ताप वर्षा द्वारा शांत हो जाता है तब अरूक्ष, अम्ल, लवण एवं मधुर रस की वृद्धि होने से प्राणियों में बल का संचार होने लगता है ।

पित्त और रक्त की विकृति को ध्यान में रखते हुए भोज्य पदार्थों का चयन करना चाहिए । इस समय पित्त बढ़े नहीं इसके लिए आहर विहार पर भी कड़ी निगरानी जरूरी है । आहार में मधुर शीत तिक्त रसों की प्रधानता होनी चाहिए जो पित्त प्रकोप को शान्त करे । उक्त स्वाद वाली वस्तुएँ पित्त को शांत करता है जिससे पित्त रोग नहीं हो पाता है । गर्म चीजों में चाय,काफी,तीखे,चटपटे या मसालेदार आदि की मात्रा कम करनी चाहिए अएतव चावल गेहूँ, ज्वार, मूंग, चना, गुड़ और घी से निर्मित रोटी, नारियल और शक्कर से बनाए चावल रूचिकर के अलावे शारीरिक स्वास्थ्य के लिए है । नारियल मीठा और शीतल होने से पित्तज विकार को गमन करता है । अत: 'मधुरं शीतं तिक्त पित्तंसमन सेवयमं' का अनुसरण करना चाहिए ।

नाश्ते में डबल रोटी, बिस्कुट, मूंग का हलुवा, जलेबी, छेने की मिठाई, आंवला-बेल कर मुरब्बा, बतासे और चावलों की खीर ली जा सकती है । मट्ठा, गोदुग्ध, मक्खन, मलाई, घृत खाने का यही उपयुक्त समय है। क्योंकि ये सभी वस्तुएँ मीठा, बलकारक व हल्का दस्तावर होने से पित्त को दुरुस्त रखते हैं, कहा जाता है कि राजा महाराजाओं से ब्राह्मण लोग घी, दूध और शरद चन्द्र के समान पवित्र दही की माँग करते थे - भाजन देहि राजेन्द्र घृतक्षीर समन्वित शरद च शरदचन्द्र चन्द्रिका धवल दधि:। यह माना जाता है कि शरद पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा की शीतल किरणों से अमृत बरसता है, शरद पूर्णिमा के दिन रात में खीर बनाकर दूसरे दिन प्रात: सेवन करने का प्रचलन

किडनी रिसर्च इन्स्टीट्यूशन ऑफ आयुर्वेद, चाँदमारी कॉर्नर, कंकड़बाग, मेन रोड, पटना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



भी यत्र-तत्र है । आयुर्वेद के चिकित्सक इस खीर में मिलाकर दम्मा के रोगियों को देते हैं ।

इसके अतिरिक्त साग-सब्जियों में करैला, मेथी चटनी, सोंठ, हल्दी, बन्दगोभी, तोरई आदि मौसम के विक हरे शाक-सब्जियों का प्रयोग होना चाहिए । इस तु में उत्पन्न फल जैसे नासपाती,सीताफल,सेव,केला,पपीता, , अन्नानास कसेरू, सिंघाड़ा, मीठा मौसमी आदि फलों सेवन से उत्तम स्वास्थ एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता ती है । नीम्बू, अम्ल होते हुए भी पित्त विकृति को दूर ता है ।

इस मौसम में दूध-घृत का सेवन यथेष्ठ मात्रा में ना चाहिए.क्योंकि ये दोनों बलवर्द्धक सुख निरेचक और न शामक होता है । खूब औटाये दूध को रात के शीतल ली में ठंडा करके व्यवहार करने से तन-मन प्रफुल्लित ता है ।

ताम्बे के जलपात्र को प्रशस्त एवं विसंक्रमित माना है 'जलं पात्रं तु ताम्रस्य' रात्रि को ताम्र पात्र में जल भरकर ः मुँह साफ कर पीने से पित्त शामक और दस्तावर होता है थ ही शरीर हल्कापन और दिल दिमाग में ताजगी रहती है सोदक (जो जल दिन में सूर्य की किरणों से तप्त और रात्रि न्द्रमा की शीतल किरणों से शीतल हो) का सेवन उपयोगी स्वास्थ वर्द्धक माना गया है ।

शराब इस ऋतु में अहितकर होता है क्योंकि यह त को प्रकुपित करता है । अगर शराब के बिना जो नहीं रह सकते हैं तो वे गन्ने का रस, मुनक्का, अंगूर, ताड़, खजूर आदि आदि मधुर पदार्थों से बना हुआ सौम्य मद्य अल्प मात्रा में ले सकते हैं ।

रात को शीतल चाँदनी में बैठना या सोना दिल-दिमाग को शाँति प्रदान करता है मगर बारह बजे रात्रि के बाद नहीं । अन्यथा ठंड लगने से बीमार होने की संभावना रहती है । दिन में सोना भी स्वास्थ के विपरीत है ।

इस समय में दिन भर गरमी के कारण शरीर दाह को कम करने के लिए पंखा,कूलर एवं शीतलता प्रदान करने वाला माध्यम का उपयोग करना चाहिए । सायंकाल जब चन्द्रमा निकल रहा हो तो विमल एवं स्वच्छ वस्त्रों को धारण कर ऋतु फूलों की माला और बाग-बगीचों में शीतल धनल चाँदनी में टहलना आनन्द कर होता है । रेशम, सूती वस्त्र, खादी, मलमल के वस्त्र का पहनावा शरीर के लिए आरामदेह होता है क्योंकि हवा का गमन होता है ।

इस ऋतु में पित्त व रक्त जनित शारीरिक कष्ट हो जाने पर स्थानीय सुयोग्य चिकित्सक की देख-रेख में स्वर्णसूतशेखर रस, योगेन्द्र रस, दाडिमावलेह, खसखस गुलाब, केवड़ा व चन्दन क शर्बत, अर्जुनत्वक चूर्ण अश्वत्थत्वक चूर्ण, आम्रत्वक चूर्ण, पंचतिक्त घृत, निम्यादि चूर्ण शतावरी घृत, बंशलोचन, गूलर दुर्वा, पित्त पापड़ा, धनिया आदि पित्त शामक गौरतलब है कि आधिभौतिक अधिदैनिक आध्यत्मिक होगों को दूर करने में ऋतुसर्थथा अनुकुल है ।

बैद्यनाथ
अश्वगंधारिष्ट
मूर्च्छा, भय, घबराहट, अनिद्रा,
मंदाग्नि आदि में लाभकारी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पूणे द्वारा इनके सम्मान में डी. लिट् उपाधि प्रदान समारोह (दि०23 जुलाई 2006) के संदर्भ में

# वैद्यराज आचार्य पंडित श्रीराम शर्मा - एक बहुआयामी व्यक्तित्व का स्वामी

दिनांक 23 जुलाई 2006 को महान् विभूति लोकमान्य तिलक की जयन्ती के शुभअवसर पर आयुर्वेद महर्षि वैद्यराज आचार्य पंडित श्रीराम शर्मा का तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पूणे द्वारा डी०लिट् की उपाधि प्रदान कर सम्मान दिया गया । नि:सन्देह वैद्यराज का आयुर्वेद के क्षेत्र में किया गया योगदान वृहद् स्वरूप का है ।

वैद्यराज आचार्य पं० श्रीराम शर्मा जी का जन्म दिनांक 21 जनवरी 1928 को झुंझुनू जिले के छापड़ा गाँव में हुआ । इनके पिताजी पंडित गजानन जी शर्मा राजवैद्य थे एवं संस्कृत एवं आयुर्वेद दोनों के श्रेष्ठ विद्वान थे । पिताजी से विरासत में प्राप्त आयुर्वेद विज्ञान के मूलमंत्र को आत्मसात् कर वैद्यराज ने इसके उत्तरोत्तर विकास में अत्यन्त योगदान प्रदान किया है ।

छापड़ा गाँव जहाँ पर वैद्यराज का जन्म हुआ अत्यन्त ही छोटा-सा गाँव था । उस समय वहाँ प्राथमिक शिक्षा के साधनों का भी अभाव था ऐसी परिस्थिति में वैद्यराज ने पास के गाँव में जाकर अपनी प्राथमिक शिक्षा पूर्ण की । तत्पश्चात् इन्होंने पंजाब जाकर ब्रह्मचारी तुलसीराम जी शर्मा के ब्रह्मचर्याश्रम में गुरूकुल पद्धति से संस्कृत का अध्ययन किया । गुरुकुल में अध्ययन के दौरान इन्होंने गुरुवर्य ब्रह्मचारी जी से प्राप्त साहचर्य, शिक्षा, आशीर्वाद, सौहार्द्रभाव, अनुशासन एवं सेवाभाव के गुणों को अपने जीवन में आत्मसात् किया जिसके फलस्वरूप इन्हें अध्यात्म का ज्ञान हुआ ।

इसके पश्चात् वैद्यराज ने बनारसीदास गोपीराम जी रुहया महाविद्यालय, रामगढ़, राजस्थान से आयुर्वेद विशारद की परीक्षा उत्तीर्ण की । यहाँ इन्होंने प्राचार्य पंडित रामगोपाल जी शास्त्री के सान्निध्य में आयुर्वेद निदान चिकित्सा का सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त कर प्राचार्य जी के आशीर्वाद से मुंबई शहर को अपने कार्यक्रम के रूप में चयन किया । तत्पश्चात् इन्होंने आयुर्वेदाचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण कर 1945 में अग्रवाल नगर, माटुंगा के सार्वजनिक आयुर्वेद औषधालय में रोगी सेवा के रूप में चिकित्सा कार्य प्रारंभ किया जो अबतक अनवरत रूप से जारी है । तत्पश्चात् इ बालकेश्वर में स्वतंत्र औषधालय की स्थापना की 1950 में अन्य सहयोगियों के साथ मिलकर आयुर्वे संस्था की स्थापना की । 1954 में शुद्ध आयुर्वे पाठ्यक्रम की स्वीकृति मिलने पर इन्होंने प्रसिद्ध उद्य मित्तल बंधुओं के सहयोग से पुनर्वसु आयुर्वेद महाविद्य की स्थापना की । साथ ही मुम्बई स्थित मरीन ड्राइव में आयुर्वेद प्रचार संस्थान के ग्यारह मंजिले भव्य निर्माण करवाया जहाँ से सैकड़ों छात्र-छात्राएं आयुर्वे अध्ययन कर अपने चिकित्सा कर्म एवं शिक्षण के क्षे संलग्न हैं ।

आयुर्वेद चिकित्सा के साथ ही इन्होंने अ के क्षेत्र में भी अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर देश-विदेश में कोटि के अध्यापक के रूप में ख्याति प्राप्त की है । मार्गदर्शन के फलस्वरूप पुनर्वसु महाविद्यालय के छात्र-छात्राओं ने आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेद निष्णात, वाचस्पति आदि उपाधियों को प्राप्त किया है । आयु वैद्यकशाखा के अधिष्ठाता के रूप में रहकर इन्होंने विद्यापीठ की आयुर्वेद शिक्षा के उपक्रम को वैज्ञा प्रदान की है । राजस्थान एवं गुजरात स्थित उ विद्यापीठ, बनारस हिन्दू विद्यापीठ, मध्य प्रदेश रविशंकर विद्यापीठ एवं रानी अहिल्या बाई विद्यापीठ स्थित काकतीय विद्यापीठ इनके विभिन्न शिक्षा एवं न समितियों द्वारा इनको समय-समय पर आमंत्रित गया है जहाँ इनके विचारों एवं दिशा निर्देशों से शिक्षा के विकास में अत्यन्त योगदान रहा है ।

भारतवर्ष की अनेक आयुर्वेद की शीर्ष के विभिन्न पदों पर रहकर आयुर्वेद की उत्कृष्ट इन्होंने अमूल्य मार्गदर्शन किया है । भारत सर केन्द्रीय भारतीय वैद्यक परिषद् के अध्यक्ष, राष्ट्रीय संस्थान की सर्वसाधारण सभा के सदस्य, केन्द्रीय एवं सिद्ध संशोधन परिषद् के उपाध्यक्ष, बनारस विद्यापीठ की आयुर्वेद शाखा में राष्ट्रपति द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सदस्य, केन्द्र सरकार की राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ के संस्थापक सदस्य तथा राष्ट्रीय आयुर्वेद प्रबोधिनी के नियामक मंडल के सदस्य, केन्द्रीय आयुर्वेद संशोधन परिषद्, आयुर्वेद की शास्त्रीय सलाहकार समिति, मोरारजी देसाई राष्ट्रीय योग संस्था तथा अन्य विभिन्न शासकीय संस्थानों के सदस्य के रूप में रहकर आयुर्वेद की राष्ट्रीय स्तर की शैक्षणिक अध्ययन, अध्यापन आदि की नीतियों को निर्धारित किया हैं।

आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार हेतु इन्होंने अनेक देश-विदेश की यात्राएं की हैं जिनमें इंग्लैंड, अमेरिका, स्विट्जरलैण्ड एवं हॉलैण्ड प्रमुख हैं। साथ ही चीन, सिंगापुर, थाइलैण्ड, इंडोनेशिया आदि अनेक देशों में संपन्न हुए परिषदों में अध्यक्ष, सभापति एवं प्रमुख वक्ता के रूप में आयुर्वेद की श्रेष्ठता का कथन किया है।

आयुर्वेद के क्षेत्र में इनके योगदान के लिए इन्हें देश-विदेश में अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए हैं जिनमें आयुर्वेद शिरोमणि, आयुर्वेद मार्तंड, आयुर्वेद गौरव आदि प्रमुख हैं। इसी क्रम में इन्हें वर्ष 1994 में वैद्य रामनारायण शर्मा अनुसंधान पुरस्कार, 1995 में वैद्य खीडवाले शोध संस्थान की ओर से श्रेष्ठ चिकित्सक का पुरस्कार, 1998 में अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा 'आयुर्वेद महर्षि' का गौरव तथा 2006 में वैद्यक शाखा के अत्यधिक प्रतिष्ठित 'धन्वन्तरि पुरस्कार' एवं 2006 में ही राष्ट्रीय शिक्षा मंडल की ओर से दिया जानेवाला 'जीवन गौरव पुरस्कार' आदि प्राप्त हुए हैं।

आयुर्वेद के इतर भी इन्होंने अपनी जन्मभूमि के विकास के रूप में वहाँ बिजली, पानी, पाठशाला, वाचनालय मंदिर आदि की समस्याओं का निराकरण सक्रिय रूप किया है।

आयुर्वेद महर्षि वैद्यराज आचार्य पंडित श्रीराम शर्मा जी की सर्वधारण जीवन शैली, आदर का भाव, सेवापरायणता कार्यशीलता इनके जीवन को विशिष्टता प्रदान करती है। वैद्यराज के स्वयं के शब्दों में इनके यश का मूल कारण गुरुजनों का आशीर्वाद एवं भगवत्कृपा है। ये तो केवल निमित्त मात्र हैं ऐसा इनकी विनम्रता के गुण को दर्शाता है। सम्पूर्ण जीवन आयुर्वेद को समर्पित करने वाले वैद्यराज को तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पूणे की ओर से 'डी.लिट' की उपाधि देकर सम्मानित करना एक स्वस्थ परम्परा का द्योतक है।

**ये तु शास्त्रविदो दक्षाः शुभश्च कर्मकोविदः जितहस्ता**

इन गुणों से परिपूर्ण वैद्यराज निरामय शतायु को प्राप्त होवें जिससे आयुर्वेद शास्त्र इनकी प्रभा से आलोकित होकर उत्तरोत्तर उन्नति को प्राप्त हो ऐसा भगवान धन्वन्तरि के चरणों में निवेदन है।

**प्रो० लोकनाथ शर्मा**
प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
रोग एवं विकृति विज्ञान विभाग, रा.आ.सं., जयपुर एवं
पूर्व निदेशक एवं डीन, एकेडेमिक
राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

बैद्यनाथ
पंचसंस्कार चूर्ण
यह चूर्ण पेट साफ करता है तथा
पाचन शक्ति और भूख बढ़ाता है।
इससे पेट के कृमि भी दूर होते हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अष्टांग संग्रह सूत्र स्थान में कास रोग के सन्दर्भ

डा० अनूप कु० गक्खड़ एवं हरप्रीत कौर

कास रोग में दातौन नहीं करना चाहिए ।
(सू० 3/19)

अधिक व्यायाम करने से कास की उत्पत्ति होती है ।
(सू० 3/66)

सद्वृत के अनुसार कास का परित्याग करना चाहिए ।
(सू० 3/108)

उद्गार का वेग रोकने से कास की वृद्धि होती है ।
(सू० 5/11)

कास का वेग रोकने से कास की वृद्धि, श्वास, अरुचि, हृद्रोग, शोष तथा हिक्का होता है ।
(सू० 5/17)

छर्दि का वेग रोकने से कास की उत्पत्ति होती है ।
(सू० 5/21)

दूषित जल से स्नान और पान करने से कास रोग उत्पन्न होता है ।
(सू० 6/25)

अधिक जल का सेवन करने से कास में वृद्धि होती है ।
(सू० 6/34)

उष्ण जल का प्रयोग कास रोग में उपयोगी होता है ।
(सू० 6/45)

गाय का दुग्ध कास को नष्ट करता है ।
(सू० 6/55)

मधु के सेवन से कास रोग नष्ट होता है ।
(सू० 6/91)

वारुणी से कास रोग नष्ट होता है ।
(सू० 6/120)

बकरी का मूत्र कासनाशक है ।
(सू० 6/144)

यव (जौ) का सेवन करने से कास रोग का नाश होता है ।
(सू० 7/20)

- कुलथी कास को नष्ट करता है ।
(सू० 7/29)
- लाजा (लावा या खील) कास को शांत करती है ।
(सू० 7/58)
- गाय का मांस कास को नष्ट करने में सहायक है ।
(सू० 7/98)
- कासमर्द का शाक कास को नष्ट करने वाला होता है ।
(सू० 7/150)
- बालमूली (कच्ची-मूली) कास को नष्ट करती है ।
(सू० 7/153)
- सुरसा (तुलसी) कास को नष्ट करता है ।
(सू० 7/160)
- लहसुन कास को नष्ट करता है ।
(सू० 7/165)
- द्राक्षा फल कास को नष्ट करता है ।
(सू० 7/170)
- कोल मज्जा कास को नष्ट करती है ।
(सू० 7/181)
- मातुलुंग (बिजौरा नींबू) का केसर कास को नष्ट करता है ।
(सू० 7/199)
- कास रोग में तक्र अप्रशस्त है, किन्तु संस्कार द्वारा सिद्ध होने पर प्रशस्त है ।
(सू० 7/262)
- अहित निद्रा से कास रोग उत्पन्न होता है ।
(सू० 9/51)
- कास रोग में अनुपान का सेवन अहितकर होता है ।
(सू० 10/55)
- अति द्रव आहार कास को उत्पन्न करता है ।
(सू० 10/79)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



- शिलाजतु कास रोग को नष्ट करता है ।
(सू० 12/27)
- त्रंशलोचन कासघ्न होता है ।
(सू० 12/29)
- तवाक्षीरी कास को नष्ट करता है ।
(सू० 12/29)
- यवक्षार कास रोग को शांत करता है ।
(सू० 12/37)
- हरीतकी कास को शान्त करती है ।
(सू० 12/43)
- विभीतक (अक्ष/बहेड़ा) कास रोग नाशक होता है ।
(सू० 12/46)
- शुष्क पिप्पली कास को नष्ट करती है ।
(सू० 12/52)
- त्रिकटु कास रोग को नष्ट करता है ।
(सू० 12/54)
- अमृता (गिलोय) कास रोग को नष्ट करती है ।
(सू० 12/72)
- कण्टकारी कासघ्न है ।
(सू० 13/3)
- पुष्पकरमूल कास नाशक है ।
(सू० 13/3)
- कासहर महाकषाय के सभी द्रव्य कासनाशक हैं ।
(सू० 15/36)
- विदार्यादिगण कास को नष्ट करता है ।
(सू० 16/4)
- सुरसादिगण कास नाशक है ।
(सू० 16/25)
- अधिक मात्रा में सर्वदा मधुर रस का सेवन करने से कास रोग उत्पन्न होता है ।
(सू० 18/7)
- कास रोग कफ वृद्धि का लक्षण है ।
(सू० 19/6
- आभ्यन्तर रोगमार्ग का आश्रय लेने से कास रोग उत्प होता है ।
(सू० 22/15
- प्रतिश्याय रोग कास का कारण है ।
(सू० 22/16
- कास रोग क्षयरोग का कारण है ।
(सू० 22/16
- कास रोग में मुहुर्मुहुः काल में औषध का सेवन कर चाहिए ।
(सू० 23/2
- प्योषादि मन्थ का विधि पूर्वक सेवन करने से का रोग नष्ट होता है ।
(सू० 24/45
- अतिलंघन करने से कास रोग उत्पन्न होता है ।
(सू० 24/47
- कृश व्यक्ति में कास रोग जल्द उत्पन्न होता है ।
(सू० 24/50
- लंघन (कृशता) के कारण उत्पन्न कास रोग च चिकित्सा तत्काल करनी चाहिए ।
(सू० 24/56
- कास रोग से पीड़ित व्यक्ति को ह्रस्व मात्रा का सेव करना चाहिए ।
(सू० 25/24
- स्नेह का अतियोग होने पर कास रोग उत्पन्न होता है
(सू० 25/51
- कास रोग में औषधियों द्वारा स्वेदन करना चाहिए
(सू० 26/32
- कास रोगी को वमन करवाना चाहिए ।
(सू० 27/6



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



- कास रोगी आस्थापनबस्ति के अयोग्य है ।

(सू० 28/11)

- तुरन्त भोजन किए हुए व्यक्ति को नस्य के कारण प्रेरित हुए दोष ऊर्ध्व जत्रु के स्रोतों के आवृत्त करके कास उत्पन्न करते हैं ।

(सू० 29/11)

- तुरन्त वमन, विरेचन और बस्ति देने से नस्यकर्म कराने से कास उत्पन्न हो जाता है ।

(सू० 29/11)

- कास के रोगी को नस्य कराने से उसके रोग में और भी वृद्धि हो जाती है ।

(सू० 29/11)

- कास के न आने पर रात्रि में मर्श नस्य देना चाहिए ।

(सू० 29/15)

- नासा में स्नेह डालते समय क्रोध, हास्य, बोलना, कम्पन तथा उच्छिन्दन नहीं करना चाहिए, इससे कास रोग हो जाता है ।

(सू० 29/16)

- धूमपान का प्रयोग उन व्यक्तियों में व्याधि के प्रशमनार्थ किया जाता है, जो कास रोग से पीड़ित है ।

(सू० 30/3)

- धूमपान जब शरीर के समस्त स्रोतों में पहुँच जाता है तब कास रोग उत्पन्न होता है ।

(सू० 30/7)

- कासघ्न धूम देने के लिए धूमनेत्र की लम्बाई आठ अंगुल रखनी चाहिए ।

(सू० 30/9)

- कासघ्न धूपन हेतु प्रयुक्त होने वाले धूमनेत्र की नलिका कलाय अन्न के समान मण्डलाकार तथा कुलथी के प्रवेश योग्य छिद्र वाली होनी चाहिए ।

(सू० 30/9)

- कासघ्न धूम के प्रयोग में वंश, नल, एरण्ड का प्रयोग भी किया जा सकता है ।

(सू० 30/10)

- कास रोगी को सिरावेध नहीं करना चाहिए ।

(सू० 36/8)


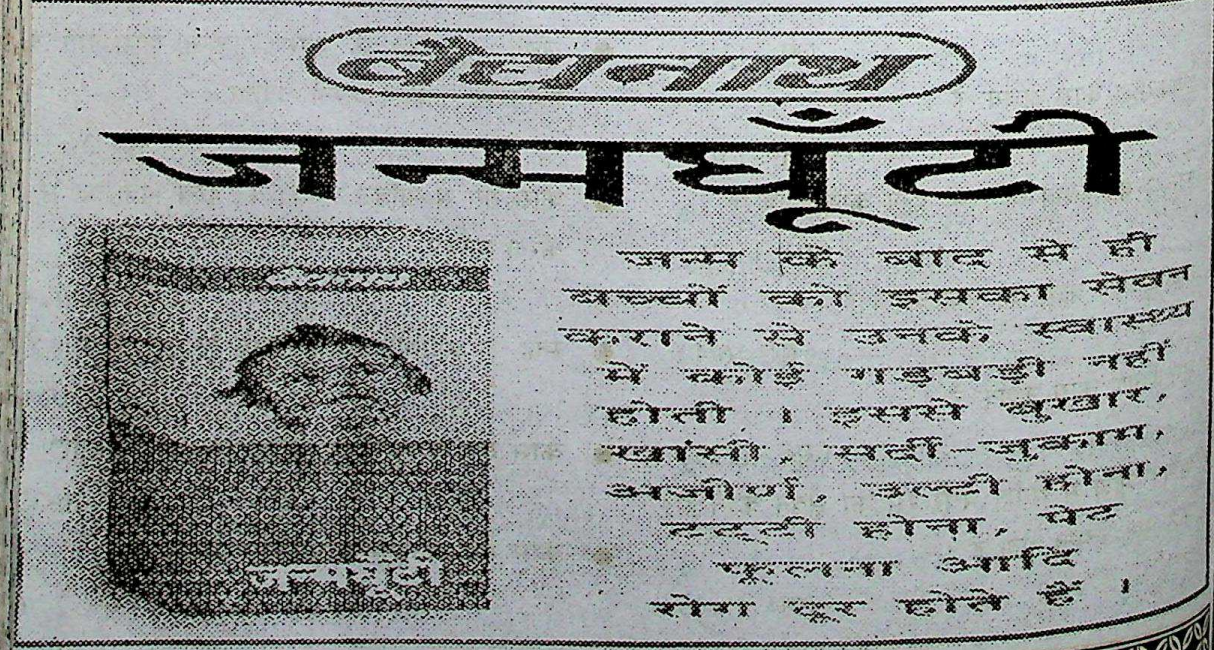





CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Clinical Evaluation of Hypertension and its Management by Shatavari and Rudraksha

* Dr. Jayanta Kr. Sarma * Dr. Dhiren Deka ** Dr. L.N. Maity

## TRODUCTION :

Hypertension is an important ardiovascular risk factor, a universal health roblem of human beings, about 15% of world opulation is suffering from Hypertension as per HO. With the advancement & modernization in e life style of human beings, there is increase in ertain psychosomatic diseases like ypertension.

Manasik Bhavas like Chinta (anxiety), rodha (anger), Bhaya (Phobia), Soka (grief), dvega (Tension), Raja guna vriddhi (Ch.su. 7/27) d Vihara like Dwiva swapna (Day sleep), yayama (sedentary habit), Rathrijagarana (night akening), & atisrama (excessive physical mental ertion) play very important role in the evelopment of Hypertension.

Sattva, the mental constitution of an ividual plays an important part in Hypertension. attvik personality does not develop Hypertension such type of psychosomatic disorder, as they e free from tension, anxiety, stress, strain & other muli; having good adoptogenic power. ogressively rise of B.P. above the present (JNC- criteria) dividing line 140/90 mm Hg increases ith morbidity & mortality (silent killer).

Even though Ayurveda does not explain ypertension directly but modern authors of yurveda co-relates this entity with Raktagatavata, aktavritavata, Rasodvega, Dhamanipurnata, iragatavata, Vyanavritavata, Uccharaktachapa c. Pathogenesis of Hypertension basically related increased catecholamine level in blood, which creases sympathetic activity. Keeping this view hatavari (anti-stress, Vatashmak, mutrala & asayana) and Rudraksha taken & given in a dose 5 gm BD & 3 gm BD respectively with water for e month.

## URGS AND TREATMENT SCHEDULE :

**haravari** tablets 5 gms. BD with water for one month.

**Rudraksha** tablets 3 gms. BD with water for one month.

## FOLLOW UP :-

Follow up was done every weekly. After one month of medication up to 3 months follow up were done.

## CLINICAL STUDY :

## AIM AND OBJECTIVES:

To screen out the relation of Hypertension with Age, Sex, Caste, Religion, Marital status, Habitat with different etiological factors. To evaluate the therapeutic value and toxic effect of the trial drugs in the treatment of Hypertension.

## MATERIALS AND METHODS :

- 45 Patients were selected from IPD and OPD of Institute of post Ayurvedic Education & Research at S.V.S.P. Hospital, Calcutta for this study.
- To diagnose Hypertension thorough clinical examination laboratory investigations like urine analysis for protein and sugar, Lipid profile, Serum urea, creatinine, ECG and CXR P/A view were done.

## SELECTION OF PATIENT :

- Patients of either sex group of mild to moderate "ESSENTIAL HYPERTENSION" were selected.
- JNC-IV criteria had been adopted for Hypertension detection. (140/90 mm Hg is taken as dividing line for Hypertension).
- Patients with or without symptoms, between the age group of 40-60 yrs were taken for study.
- Hypertension with Diabetes has been excluded from the study.

## EXCLUSION CRITERIA OF PATIENT :

- Severe Hypertension (Diastolic B.P>115

* Lecturer, Dept. of Kayachikitsa, SJGCHS' Ayurvedic Medical College, Ghataprabha.
** Professor, Dept. of Kayachikitsa, IPGAE&R, CALCUTTA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



mm Hg), Secondary Hypertension, Hypertension with complication involving CNS, Retina, Kidney, Heart were excluded.

- Patients with other significant illness like Diabetes, Thyrotoxicsis, were excluded from this study.

**ETHICAL CONSIDERATION :-**

- Duly written consent of the patients for trial has been undertaken.

**GROUPING OF PATIENT :-**

In this study drugs were administered under three different groups in selected 45 patients.

**Group A - Shatavari** - ( 5 gm BD)
**Group B - Rudraksha** - (3 gm BD)
**Group C - Rice powder** - (Placebo)

**CRITERIA FOR ASSESSMENT :**

For assessment of therapeutic efficacy; the subjective and objective criteria are analyzed. The overall result of therapy had been assessed statistically by student 't' test & by percentage wise.

**Complete improvement** : - 100% relief of sign & symptoms with reduction of B.P. (Systolic & diastolic) to normal level, without any reflex tachycardia.

**Marked improvement** :- More than 75% relief of sign & symptoms with reduction of B.P. below 140/90 mm Hg.

**Improved** : - 50% reduction of symptoms and reduction of B.P. below 140/90 mm Hg

**Unchanged** : - 25% reduction of symptoms, without reduction of B.P.

**OBSERVATION :-**

In this study 45 patient registered, out of whom 36 patients completed their protocol for treatment. Observations on 36 patients are presented here.

**Age wise distribution** :- Maximum 45% patients were in between 45-50 yrs. of age group. (Mean age 50.7 ± 1.58).

**Sex wise distribution** :- Maximum 82% pati... were male.

**Religion wise distribution** :- Maximum 6... patients were Muslims.

**Socio economic status wise** :- Maximum 60 ... patients belonged to middle income group, ... 6.07% higher income group.

**Marital status wise** :- Maximum 90.9% pati... were married.

**Occupation wise** :- Maximum 50% patients ... businessmen.

**Habitat wise distribution** :- 70% patients ... from Urban area.

**Habit wise** :- Maximum of 37% were smoke... 20% were alcohol addicted.

**Relations with Diet** :- Maximum 90% pati... were non-vegetarian.

**Symptom wise distribution** :- Maximum 66.6... patients present with **palpitation**, 67% ... headache specifically. All the patients came ... common symptoms like Vertigo, easy fatigua... insomnia and lack of concentration

**Family History** :- Maximum 50% patients ... having the family history of Hypertension.

**Body weight wise** :- Maximum 60% patients ... having weight in between 65-75 kg

**Height wise** :- Maximum 67% patients were ha... the height in between 161-170 cm.

**Body mass index wise** :- 6.06% were Ob... 24.24% patients were over weight, 69.69% ... having normal weight.

**EFFECT OF THERAPY :-**

- In the patient treated with **Shatavari** ... patients were relieved of symptoms ... Insomnia. Vertigo, Easy fatigua... Headache and statistically signific... reduction of both **Systolic, Diastolic ... and mean B.P.** ($p<0.01$, $p<0.02$, $p<0.0$... respectively) without any significant cha... of pulse rate (BT - 86.66 ± 3.38, AT - 8...



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



± 2.90; p>0.5).

- In patients treated with **Rudraksha** 90% patients were relieved from symptoms like Insomnia, Vertigo, Easy-fatiguability, and statistically highly significant fall of both **Systolic, Diastolic B.P. and mean B.P.** (p<0.001, p<0.001, p<0.001 respectively) without causing any reflex tachycardia or bradycardia. (Pulse BT=82.0 ± 3.63, AT = 83.33 ± 2.76; p >0.5).
- In patients treated with Placebo in all the patients, there were increase of both SBP, DBP & mean BP without any relief from symptoms.
- Patients treated with both the drugs for a period of 1 month did not produce any alteration of serum Creatinine & Urea level, in Lipid profile & in ECG in BT & AT.

**PROBABLE MECHANISM OF ACTION :-**

In Ayurveda Shatavari is considered as best drug to pacify vata along with Pitta, Kapha. As it pacifies Vata (main contributor of Hypertension) as well as brings equlibrium of tridosa helps in reduction of BP. As it is rasayana & medhya, definitely brings the normalcy o somatic & psychic factors (Manasa Bhava Shatavari is mutrala, helps in reduction of BP b diuresis. Rudraksha by virtue of Guru & Snigdh guna pacifies the vata dosa & by its prabhava reduces the B.P., probably it was acted by blockin catecholamine pathway.

CONCLUSIONS :-

- The overall anti-hypertensive effect o **Rudraksha** is highly significant: an **Shatavari** is moderately significant i placebo controlled study.
- Rudraksha and Shatavari do not cause an reflex tachycardia.
- In the treatment of mild to moderat Hypertension **Rudraksha** could be use safely in lieu of any syntheti antihypertensive drug.
- No toxicity or adverse effect had been foun in the course of treatment with Rudraksh & Shatavari.
- There is no drug having satisfactor therapeutic potentiality without any unt ward effect. Here these drugs in th management of **Hypertension** are unique.

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।



CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# A STUDY OF SHODHANA AND MARANA OF VANGA ( A LITERARY STUDY)

* Dr. R.R. Hiremath, PhD Scholar *Prof. C.B. Jha

## ITRODUCTION :-

Metals/Lohas are classified in to Suddha ha, Putiloha and Misraloha. The lohas which oduce bad odour on heating, easily melting ature comes under putiloha group. Vanga is 5th etal included in Putiloha varga. It is of two types amed as Khuraka and Misraka. The Vanga which silvery white in colour, mrudu, guru, easily elting, not producing any sound is Khuraka Vanga nd superior one, used for medicinal purposes. anga bhasma is an effective, potent, safe edicine in the therapeuctic world of Ayurveda. his paper is restricted to literary part of harmaceutical processing of Vanga. The durgs sed in shodhana, jarana, marana of Vanga are resented in classified manner. A work was done o compile all materials and presented in classified ay in this study.

## HODHANA PROCESSES :

Vanga shodhana is mainly done to remove oshas present in it, to bring brittleness in the metal hich will further help for easy incineration process. lmost all Acharyas mentioned the Dhalana rocesses using pithara yantra for shodhana. leating the metals to melt and pouring in to liquids s called Dhalana processes. Other processes pecified are Swedana, Sechana, Avapa, Seka and ravap.

Drugs used for Shodhana process ccording to different texts.

| Sl No | Drugs used | No. of Dhalan | Referecnces |
|---|---|---|---|
| 1. | Amla Takra | 7 | RP14/6:RT18/13 |
| 2. | Amla Takra & Punarnava | 3/7 | R.CU14/129; RJN vol 3. |
| 3. | Arka dugda | 3/7 | RB4/70:RHT 6/14: RSS79/389: RS111: AP3/53: RT 18/10: RJN Vol. 3 |
| 4. | Amla varga | 3 | RJN vol 3 |
| 5. | Bramha vraksha kwatha | 21 | RKD 465: RSS 326/122 |
| 6. | Brangarajswarasa | 7 | RT 18/14: RK 465 |
| 7. | Churnodaka | 7 | RT 18/8 |
| 8. | Chincha kwatha | 7 | RSS 326/1-2. RS 112 |
| 9. | Gomutra | 3/7 | RKD 463 : RSS 326: AP 3/48: RS 112:RPS4/82 |
| 10. | Ghrita Kumari swaras | 7/21 | RKD 465:RT18/14 |
| 11. | Kadalimoola swaras | 3/7 | AP3/54 |
| 12. | Kanji | 3/7 | AP3/54:RS112 |
| 13. | Katphala kashaya | 3/7 | RRS5/157 |
| 14. | Ksharambu | 7 | RRS5/70:RJNVol3 |
| 15. | Kulatha kwatha | 3/7 | AP 3/48 |
| 16. | Mutra varga | 7 | RP274:RRS5/70: RJN vol 3 |
| 17. | Nimbu swaras | 7 | RSS326/1-2:RS112 |
| 18. | Nirgundi swaras | 21 | R.CU 6/13 : RKD 465 : RP 14/7 : RJN Vol.3 |
| 19. | Nirgundi swarasa & Haridra churna | 3 | RRS 5/156: RT 18/11 : R. CU 4/135: RM 112 |
| 20. | Taila varga | 7 | RSS 326/1-2: RRS 5/70. |
| 21. | Snuhi kshira | 7/21 | RN 7/115 : RKD 464 : RSS 326/1-2: RS 111-112 |
| 22. | Taila, Takra Gomutra, Kanji Kulatha kwatha | 3times per liquid | RB4/70 :AP3/53 RPS 4/82 |
| 23. | Sarja kshara jala | 7 | RS 111-112. |

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| Sl No | Drugs used | No. of Dhalan | Referecnces |
|---|---|---|---|
| 24. | Churnodaka | Swedana | RJN vol 3 |
| 25. | Bhallataka taila | 3 | RPS 4/82. |
| 26. | Mahisha mutra | Sechana | RS 7/112 |
| 27. | Mahishasti churna | Avapa | RS 7/112 |
| 28. | Nirgundi swarasa | seka | RHT 6/14 |
| 29. | Nigrundi rajah | Pravap | RHT 6/19 |

**MARANA PROCESSES :-**

Vanga marana involves the following steps :

* Jarana
* Bhavana
* Putapaka/Marana.

***Jarana :*** Vanga jarana is the initial process of vanga marana. By jarana the vanga is partially converts into bhasma form & presence of thin granules of tin metal or it contains unreduced free metals. Hence marana is necessary for reducing the metal completely into bhasma form. Shodhita Vanga is taken in an iron pan and heated till it melts. The herbal/mineral/animal origin drugs are sprinkled slowly, little by little and rubbed with back of iron ladle till it turns to powder form completely.

***Bhavana :*** Jarita vanga is triturated with herbal juices/decoctions alone or by mixing with herbal/mineral drugs, chakrilkas prepared, kept in sharava and samputa is made. Thin plates of Shodhita Vanga are smeared by the paste prepared by mineral/herbal drugs and kept in sharava samputa, closed with another and sealed.

***Marana :*** The samputas are subjected to puta for complete conversation of vanga into bhasma form.

| SNO. | Drugs used | Referecnces |
|---|---|---|
| 1. | Apamarga | RKD469: RJN 3 vol ; RM 3/89: RP14/14: AP3/155: RT18/20 |
| 2. | Arka | RRS5/159: RJN3vol: RP14/17: AP3/170: RT 18/27 |
| 3. | Ashwattha twak | RRS5/159: RKD 469: RJN 3 vol: RP14/11: AP3/170: RT 18/29: RB 4/71-73: RM 93: RS135: BP 3/75. |
| 4. | Babbula twak | RP 14/32 |
| 5. | Ballataka taila | RB 4/74: RJN 3 vol: RRS 5/161. |
| 6. | Chincha twak | RRS 5/159. RB4/71-73; RS 135:BP13/75: RKD 467: RJN 3 vol: RP 14/11 : AP 3/174. |
| 7. | Haridra | RSS : RJN 3 vol : AP 3/171. |
| 8. | Jiraka | RKD 483 : RJN 3 vol : RP 24/24:AP 3/171. |
| 9. | Palash | RJN 3 vol : RP 14/32 : RM 3/93. |
| 10. | Pippali | RRS 5/159 : AP 3/167. |
| 11. | Tila | AP 3/176 |
| 12. | Vata twak | RM 3/93 |
| 13. | Yavani/ajavayana | RKD 483: RJN vol : RP 14/24 : AP 3/161 : RS 134. |

**Mineral drugs used in Jarana/Marana procedures**

| SNO. | Mineral used | Referecnces |
|---|---|---|
| 1. | Haratala | RHT 17/6: RS7/148: RB 4/71: RS 137: R.CU 14/137 : RRS 5/159, 160, 161 : RKD 466, 467, 472: RP14/11-13:AP 3/162: RT 18/16&25. |
| 2. | Makshika | RJN 3 vol |



CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| SNO. | Mineral used | Referecnces |
|---|---|---|
| 3. | Parada | RRS 5/160: RT 18/16,25: R.CU 14/138: RS140: RJN 3 vol |
| 4. | Saindhava | RJN 3 vol. |
| 5. | Shilajitu | RKD 483: AP3/160 |
| 6. | Souvarchika | RP 14/8: AP3/171 |

**Animal origin drugs used in Jarana/Marana procedures**

| SNO. | Animal drugs | Referecnces |
|---|---|---|
| 1. | Karkatasthi | RKD481:R.CU:RJN3vol |
| 2. | Kukkutanda twak | RM 92 |
| 3. | Mukta shukti | RJN 3 vol: RM 92 |
| 4. | Shankha | RJN 3 vol. |
| 5. | Varatika | RJN 3 vol. |

**Bhavana dravyas used for marana processes:**

| SNO. | Dravyas | Referecnces |
|---|---|---|
| 1. | Amla dravyas | RKD468, 473 |
| 2. | Arka dugda | R.CU 14/137: RRS 5/159: RKD 473: RT 18/25-28: AP 3/170 |
| 3. | Ghritakumari swarasa | RM 94: AP3/163 |
| 4. | Shatavari swarasa | RM 94: |
| 5. | Kshira sara | RM 94: |
| 6. | Mutra varga | RKD 468 |
| 7. | Nimbu swarasa | RB4/71:AP3/163:BP3/75 |
| 8. | Snuhi ksira | RKD 472 |

**Type of Agni according to different Texts :**

| SNO. | Agni | Referecnces |
|---|---|---|
| 1. | Jarana | RRS 5/160: AP3/155: RT18/15-20; RP 14/8-10 |
| 2. | Laghu puta | RRS 5/159: RKD 466: RP14/17-18 |
| 3. | Jarana & Laghu puta | RKD 468:RP14/14: R.CU 14/137 |
| 4. | Gaja puta | AP3/101-169:RB4/73 |
| 5. | Ardha gaja puta | RM 3/94 |
| 6. | Lavaka puta | RT 18/25-28 |

**CONCLUSION :**

In the beginning though the therapeutic value of metals was known by Acharyas but still they were used in the form of powder along with herbal juices. Hence their utility was very much restricted. The metallic as well as mineral drugs became frequent in therapeutic use after adopting the process techniques like shodhana and marana. Depending on the availability and therapeutic indication, so many drava dravyas are explained for shodhana. Initially haratala/talaka yoga was used for marana, further herbal, mineral and animal origin drugs are explained for marana processes. This process removes the doshas, make the material more potent, effective, safe and assimilable form.

**REFERENCES :**


1. Study on Vanga Bhasma with special reference to its toxicity and testicular regeneration. Dr. V.Najaraju etal 1982.
2. RP - Resendra Purana.
3. RT- Rasa Tarangini.
4. R.CU - Resendra Chudamani.
5. RJN - Rasa Jala Nidhi.
6. RB - Rasendra Bhaskara.
7. RHT - Rasa Hradaya Tantra.
8. RSS - Rasendra Sara Sangraha.
9. RS - Rasarnava.
10. AP - Ayrveda Prakasha.
11. RKD - Rasa Kama Dhenu.
12. RM - Rasamruta.
13. RRS - Rasa Ratna Samuchaya.
14. RPS - Rasa Prakasha Sudhakara.




CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# A SCALE FOR QUANTIFYING UNMADA SYMPTOMS

* Dr. Devika HS, BAMS ** Dr. Gangadhar BN, MD (Psychiatry) *** Dr. Nagarathna R, MD (Gen Med), FRCP (Edin)
**** Dr. Nagendra HR, ME (Mechanical) PhD ***** Dr. Suchitra SP, BAMS

*Abstract*

*Objective*

This is a report on the development and initial standardization of a scale to measure the unmada (psychosis) symptoms in patients with non-affective psychosis.

**Design**

Ayurveda unmada scale (AUS) consisting of 68 items was developed based on the translation of the sloka's (verses in Sanskrit) describing unmada and with the opinion from the experts viz., fifteen Ayurveda scholars and five each of Psychologists and Psychiatrists.

**Setting/location**

A private psychiatric nursing home, in Bangalore city.

**Subjects**

The scale was administered to 44 patients with non-affective psychotic disorders.

**Result**

Ayurveda unmada scale is associated with excellent internal consistency (Cronbach's = 0.8862, split-half reliability r = 0.7876) and inter-rater reliability (Kappa values ranged from 0.828 to 1.000).

**Conclusions**

The symptoms of unmada can be measured reliably by this scale in patients with non-affective psychosis.

## INTRODUCTION

Psychosis is considered to be a major mental disorder. This is caused due to the improper functioning of the mental faculties. The narrowest definition of psychosis is restricted to delusions or prominent hallucinations, which occur in the absence of insight[1].

Life time prevalence of psychosis is considered to be ranged from 0.5% to 1%. In India, the average prevalence of severe mental disorders is considered to be 18-20 per 1000 populaton[2]. The above data show that the magnitude of this problem is considered to be fairly high.

The description of unmada according t Ayurveda can be correlated with the manifestation of present reliable clinical conditions c psychosis[3,4,5]. There is no separate chapter i Ayurvedic texts that deal with unmada tha correspond to modern classifications such as b polar affective, depression, mania, schizophreni etc. Instead, all these clinical conditions ar described under the heading of unmada.

In classical texts,[3,4,5] symptoms o unmada are described as altered functions c mental faculties (vibhrama), viz., manovibhrama (altered functions of the mind); buddhivibhran (Altered discriminative power or judgment); sanjna jnana vibhrama (Altered state of consciousness (orientation); smrti vibhrama (Confused memory) bhakti-vibhrama (Altered desire, embellishment attachment); sila vibhrama (Altered nature disposition), cesta vibhrama (Altered moto activities, gesture); acara vibhrama (Altered conduct).

Unmada seems to be a cluster o symptomatology with several components, which can either exist together or independently. Thus, i can fall under different diagnostic categories o mental illness as per modern classification. For e.g. smrti vibhrama (memory disturbance) can exist independently in the conditions of Alzheimer's disease.[1,2,3,4,6]

Several literary studies [7,8,9] explored the symptoms, classification and psychotherapeutic aspects of mental illness as described in Ayurveda and the sacred texts of Atharvaveda. Management under the heading of unmada is prevalent but there have been still lacunae in identifying the clinica conditions.

Standard measures like Brief Psychiatry Rating Scale (BPRS)[10] and the Positive and Negative syndrome Scale (PANSS)[11] are available to measure and diagnose the psychosis according

* PG scholar. MSc (Yoga), SVYASA, Bangalore
** Professor, Department of psychiatry, National Institute of Mental Health and Neuro-Sciences, Bangalore
*** Dean, Department of life sciences, SVAYSA, Bangalore
**** Vice-chancellor, SVYASA, Bangalore
***** PG scholar MSc (Yoga), Swami Vivekananda Yoga Anusandhana Samsthana (SVYASA), Bangalore

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



o modern science.

A simple and standardized instrument to neasure the symptoms of unmada in patients with non-affective psychosis according to Ayurveda concept is not available. Hence, the present study has been done to develop a scale to identify the individual symptom complexes (vibhrama) of unmada.

## METHODS

AUS was developed based on the 90 Sanskrit statement from available authoritative texts describing the each typical symptom of unmada. The author has just translated the Sanskrit verses in English statements and then created the items. These items were initially presented to five Ayurveda experts who participated in the item generation. They were asked for the correctness of each statement applicable to unmada and to check any of the items were repeated. It was found that out of the 90 items, 10 items were not appropriate to the respective dimensions and 10 items conveyed the same meaning. Hence, finally 70 items agreed by all the five experts were retained.

These final items were presented to 10 senior Ayurvedic clinicians. For each item these judges were asked to indicate (i) whether the symptoms of unmada selected for this scale are appropriate or not, and (ii) whether it is an acceptable translation of the Sanskrit verses from the authoritative texts. After obtaining this content validity, few translations and statements for some dimensions were refined.

Further, the items were then presented to five psychiatrists; they were asked to indicate whether it was a representative statement, that could be presented to patients with psychotic disorder and accopanied informants. All the 70 items were found suitable. The final scale was presented to five psychologists to check whether the instrument had an acceptable format of a scable and to give their suggestions for the type of scoring to be used. Three point scale (0,3,6) was used in the final AUS as per their suggestions.

### Descriptions of the final scale

The AUS had 68 items under 1 dimensions. Out of 17 dimensions, 8 were the contributions of Caraka, 9 dimensions were the physical symptoms contributed by Susruta and Vagbhata. A clinician using a scripted interview administers the scale and marks the severity of the each symptoms as 0, 3, 6, (absent, sometimes always) based on the responses given by both the patient and the informant. Scores of each item is the sum of all the positive responses.

**Table - 1**

**AUS and Its DIMENSIONS**

| Sl.No. | NAME | DIMENSION | No.of ITEMS |
|---|---|---|---|
| 1. | MANO | MANO VIBHRAMA | 5 |
| 2. | BUDDHI | BUDDHI VIBHRAMA | 9 |
| 3. | SANJNA | SANJNA VIBHRAMA | 5 |
| 4. | SMRTI | SMRTI VIBHRAMA | 5 |
| 5. | BHAKTI | BHAKTI VIBHRAMA | 5 |
| 6. | SILA | SILA VIBHRAMA | 5 |
| 7. | CESTA | CESTA VIBHRAMA | 6 |
| 8. | ACARA | ACARA VIBHRAMA | 6 |
| 9. | PARY | PARY AKULA | 5 |
| 10. | NSND | NA SUKHA NA DUKHA | 2 |
| 11. | NAND | NA ACARA NA DHARMA | 4 |
| 12. | UDVE | UDVEGA | 2 |
| 13. | GATRA | GATRAPAKARSANAM | 2 |
| 14. | ATIUT | ATIUTSAHA | 2 |
| 15. | ARU | ARUCHI | 2 |
| 16. | VAYU | ARUCHI | 3 |
| 17. | BHRAMA | BHRAMA | 2 |
| TOTAL | | AUS | |

NOTE : See Appendix for items

### Subjects

The study was done at a private Psychi hospital (Spandana Psychiatric Nursing Hom Bangalore. Consecutive out-patients accompa by an informant of both sexes diagnosed as ha non-affective psychosis by attending se



CC-0. Prof. Dongre Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



psychiatrist were included in the study (n=44). Their age ranged between 22-25 yrs. Patients with neurosis and affective disorder were excluded from the study.

**Design**

After the diagnosis by a senior psychiatrist, patients for the study attended an assessment interview to complete the AUS by the investigator who is a Ayurvedic clinician. Information including the demographic data, clinical history and the current psychiatric diagnosis were recorded. In addition, the informant of the patient was asked about the symptoms.

**Data analysis**

The data analysis was done using SPSS (Statistical Package for Social Science), standard 10.0 version. Item difficulty level was applied for item analysis. The data was first assessed for reliability (internal consistency) by Cronbach's alpha and Split-half reliability. The Kappa co-efficient was applied to analyze inter-rater reliability. Pearson's co-relation analysis was done to check the degree of association between dimensions and the whole scale.

## RESULTS

**Demographic data**

The sample consisted of 44 patients (Mean age ± SD = 36.25 ± 9.20 yrs) of whom 24 were males. Their diagnosis included schizophrenia NOS (n=18); paranoid schizophrenia (n=15) and psychosis NOS (n=11).

**Content validity**

Among the ten Ayurvedic experts who served as the judges, three judges agreed on 90% of the items present in the scale; five judges agreed on 95% and two judges agreed on 92% of the items.

**Item difficulty level**

This is defined as the presence of a said symptom and also expressed as the percentage of acceptance for a particular item by the patients.[12] Items that has poor difficulty level (<50% of the patients having the symptom) were B3 (absent in 94.4%), F3 (absent in 100%). Therefore, these items were deleted from the scale. Data analysis was carried out after deleting these items. All other items were retained as they ha good difficulty level. The final scale has 68 item

**Internal consistency**

The whole scale shows good intern consistency (Cronbach's °C= 0.8862; split ha reliability is r = 0.7876)

**Inter-rater reliability**

Two raters rated the items differently f 15 patients, Reliability co-efficient Kappa=1.00 (This means 100% agreement). Kappa value ranged from 0.828 to 1.000 for items.

**Table 2 Pearson's correlations with total sco and Cronbach's alpha values for dimension**

| Sl. No. | DIMENSIONS | PEARSON'S CORRELATIONS WITH TOTAL SCORE | CRONBACH ALPHA VALUE |
|---|---|---|---|
| 1. | MANO VIBHRAMA | 0.6556* | 0.6799 |
| 2. | BUDDHI VIBHRAMA | 0.2260 | 0.7034 |
| 3. | SANJNA JNANA VIBHRAMA | 0.5998* | 0.8955 |
| 4. | SMRTI VIBHRAMA | 0.7222* | 0.8359 |
| 5. | BHAKTI VIBHRAMA | 0.4391 | 0.5406 |
| 6. | SILA VIBHRAMA | 0.2892 | 0.5202 |
| 7. | CESTA VIBHRAMA | 0.5213* | 0.8771 |
| 8. | ACARA VIBHRAMA | 0.3771 | 0.0370 |
| 9. | PARYAKULA | 0.5404* | 0.7296 |
| 10. | NA SUKHA NA DUKHA | 0.4839 | 0.3630 |
| 11. | NA ACARA NA DHARMA | 0.5305* | 0.1187 |
| 12. | UDVEGA | 0.1179 | 0.6263 |
| 13. | GATRAPAKARSANAM | -0.1354 | -0.0511 |
| 14. | ATIUTSAHA | 0.4648 | 0.3002 |
| 15. | ARUCHI | 0.3892 | 0.5169 |
| 16. | VAYUNONMATHANA | 0.4902 | 0.5508 |
| 17. | BHRAMA | 0.6286* | 0.8283 |

NOTE : Cronbach's Alpha values fo different dimensions ranged from 0.1187 (11 Scale) to 0.8955 (3rd Scale). All dimension possessed good inter-item consistency except th dimensions 8, 10, 11 and 14 (0<0.5), only the 13 dimension showed negative value. The manc Smrti and bhrana dimensions co-related strongl (*significant) with the total score. The 13th dimensio (gatrapakarsanam) negatively correlated with tota score. Dimensions 2 (buddhi vibhrama),



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ilavibhrama) and 12 (udvega) correlated poorly with the total score.

**Table 3 Distribution characteristics of the dimensions for 44 pts with non-affective psychosis**

| Sl. NO. | NAME | MEAN | MEDIAN | S.D. | RANGE (potential) | RANGE (obtained) |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | MANO | 23.5 | 24.0 | 5.8 | 0-30 | 12.-30 |
| 2. | BUDDHI | 37.7 | 39.0 | 7.7 | 0-54 | 21-48 |
| 3. | SANJNA | 19.15 | 18.0 | 7.87 | 0-30 | 0-30 |
| 4. | SMRTI | 22.5 | 24.0 | 6.89 | 0-30 | 9-36 |
| 5. | BHAKTI | 19.9 | 21.0 | 6.72 | 0-30 | 0-30 |
| 6. | SILA | 15.54 | 15.0 | 4.93 | 0-30 | 0-24 |
| 7. | CESTA | 27.68 | 30.0 | 8.40 | 0-36 | 12-36 |
| 8. | ACARA | 23.11 | 24.0 | 5.42 | 0-30 | 12-30 |
| 9. | PARY | 23.79 | 24.0 | 5.42 | 0-30 | 12-30 |
| 10. | NSND | 9.0 | 9.0 | 3.16 | 0-12 | 3-12 |
| 11. | NAND | 8.72 | 9.0 | 2.80 | 0-12 | 0-12 |
| 12. | UDVE | 17.86 | 18.0 | 5.78 | 0-24 | 6-24 |
| 13. | GATRA | 8.72 | 9.0 | 2.65 | 0-12 | 3-12 |
| 14. | ATIUT | 10.90 | 12.0 | 2.24 | 0-12 | 6-12 |
| 15. | ARU | 6.95 | 6.0 | 3.81 | 0-12 | 3-12 |
| 16. | VAYU | 16.15 | 18.0 | 2.60 | 0-18 | 9-18 |
| 17. | BHRAMA | 9.95 | 12.0 | 3.64 | 0-12 | 3.-12 |

NOTE : The above table shows that the second nd the seventh dimensions are highly distributed mongst the selected samples. The sixth and fteenth dimensions are poorly distributed amongst he selected samples (distribution of items in these imensions were different).

**DISCUSSION :**

The present study has described the evelopment and initial standardization of interview ased AUS consisting of 68 items as an instrument or measuring the symptoms of unmada in patients ith non-affective psychosis. A major impetus of s development was the need for a sychometrically sound procedure to serve the imensional assessment of unmada.

AUS is developed based on the meaning f the Sanskrit statements described in the vailable authoritative texts of Ayurveda and by aking the content validity from the fifteen Ayurveda experts, opinion from five psychiartrists and five psychologists. The dimensions were assembled mainly on the basis of theoretical and psychometric considerations. (E.g: definition of dimensions, content sampling and balancing the items). Primary empirical analysis indicated that the items selected were appropriate to the dimensions.

Item analysis indicated that the third item (B3) of buddhi vibhrama dimension, and the third item (F3) of sila vibhrama dimension showed low item difficulty level,hence these were suggested to drop from the scale.

The reliability of the whole scale was upheld by Cronbach's alpha, split-half analysis and Kappa co-efficient which provided the evidence of stability over the items and the scorer.

The reliability of all the subscales of AUS was consistently good except the acara vibhrama (8th) which was found negative.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



The examinatin of correlation of the seventeen dimensions with that of the total scores indicated that mano, smrti and bhrama dimensions co-related strongly; buddhi vibhrama, silavibhrama and udvega co-related poorly. While hetrapakarsanam co-related negatively. The items in these dimensions have to be refined.

Thus, this study provides clinicians and the researchers with a useful instrument for collection of the phenomenological data for further research on diagnosis and treatment outcome.

This investigation indicates that the symptoms of unmada can be measured reliably and that their concepts have good internal consistency, content validity and inter-rater reliability. However, it has not addressed the issue of test-retest reliability and the scale has to be validated with other existing scales like Brief Psychiatry Rating Scale (BPRS) and the positive and negative syndrome scale (PANSS). The scale has to be tested for its property to measure the changes after treatment. Though the study provides the evidence of measurement of unmada symptoms in different diagnostic groups, the diagnosis of three catagories was not established by using standard instruments or measures.

**CONCLUSION :**

An AUS is a reliable instrument to measure the symptoms of unmada in patients with non-affective psychosis.

**ACKNOWLEDGEMENT :**

We thank Dr. Srinivas, Director Spandana Psychiatric Nursing Home, Bangalore, Dr. Ravikulkarni, Statistician, Consultant Biostatistics, SVYASA, Bangalore, Dr. Subbakrishna, Head of the Department, Biostatistics, NIMHANS, Dr. Kishore, Sr. Research Scholar NIMHANS, Bangalore and all the Ayurvedic experts in Government Ayurveda Medical College, Bangalore, for their immense support and valuable guidance in the study.

**REFERENCES**

1. American psychiatric association. *Diagnostic and statistical manual of mental disorders,* fourth edition. Jay pee brothers medical publishers, New Delhi, 1995.
2. Bhatia MS. *Essential of psychiatry,* fourth edition. CBS publishers and distributors, New Delhi, 2004.
3. Pandeya GS. *caraka samhita,* Hindi commentary, fifth edition. Chowkhamba publications, New Delhi, 1997; 527-535.
4. Tripati B. *Astanga hrdaya:* Hindi commentary, second edition. Chowkhamba publications, New Delhi, 1997; 921-927.
5. Sastry K.A. *Susruta samhita:* Hindi vyakhya, fifteenth edition. Chowkhamba publications, New Delhi, 2002; 452-462.
6. Acharya TJ. Cakrapanidatta; commentary on *caraka samhita,* first edition. Chowkhamba publications, New Delhi, 2004; 222-225.
7. Balodhi J.P., Chowdhary J.R. Psychiatric concepts in Atharvaveda: A Review *Indian journal of psychiatry* 1986; 28 (1): 62-68.
8. Venkoba Rao A. Psychiatric thought in ancient India. *Indian journal of psychiatry* 1978; 20: 107-119.
9. Varma L.P. Psychiatry in Ayurveda *Indian journal of psychiatry* 1965; 5:292-312.
10. Over all J.E., Gorham D.R. Brief psychiatry rating scale; Original 16-item Version. *Psychol Rep.* 1962; 10: 799 - 812.
11. Kay SR, Fiszbein A, Opler LA. The Positive and negative syndrome Scale (PANSS) for schizophrenia *schizophr Bull* 1987; 13 (2): 261-276.
12. Anastasi A., Urbina S. *Psychological testing,* seventh edition. Pearson education, Delhi, 2005.

**APPENDIX :**

**AYURVEDA UNMADA SCALE**

**1. MANOVIBHRAMA : ALTERED FUNCTIONS OF THE MIND**

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I feel I am sitting in the middle of the ocean. | | | |
| B. | I feel worthless. | | | |
| C. | I feel as though I am flying in the sky. | | | |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| D. | I don't understand the proverb one man's meat is other man's poison! | | | |
| E. | I can't tell the similarities between, Cat and Tiger. | | | |

**2. BUDDHI VIBHRAMA : ALTERED DISCRIMINATIVE POWER/JUDGEMENT**

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I feel that the things around me are unreal ? | | | |
| B. | I experience that my own body is unreal ? | | | |
| C. | I behave like a robot | | | |
| D. | I feel the environment in which I live is artificial and lifeless ? e.g. sky, trees, animals, rivers. | | | |
| E | I hear a sound when no one else is beside me. | | | |
| F. | I hear the sound of flute, veena within me. | | | |
| G. | I hear a voice as though some one is talking to me. | | | |
| H | I feel emotionally hurt/ sad when I see a heart breaking accident of a child ? | | | |
| I | I am suspicious about the persons around. | | | |

**3. SANJNAJNAJA VIBHRAMA : ALTERED AWARENESS/ALTERED STATE OF CONSCIOUSNESS**

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I can't perceive the things correctly ? | | | |
| | e.g. shown a pen, book television, table etc. | | | |
| B. | I can't recognize the person and name him? | | | |
| C. | I don't experience the burning sensation of the fire. | | | |
| D. | I can't say the exact date, time and month when I came in ? | | | |
| E. | I can't exactly locate the place of your stay presently ? | | | |

**4. SMRITI VIBHRAMA : CONFUSED MEMO**

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Alwa |
|---|---|---|---|---|
| A. | I can't repeat these numbers. e.g. 59274156, 9432017608 | | | |
| B. | I can't repeat these five items. e.g. switch, door, plate, tree, stars | | | |
| C. | I can't remember where I went last month. | | | |
| D | I can't tell what I ate yesterday night for dinner ? | | | |
| E. | I can't recall who was my class teachers in primary school. | | | |

**5. BHAKTI VIBHRAMA : ALTERED DESI**

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Alwa |
|---|---|---|---|---|
| A. | I don't prefer to join the previous office | | | |
| B. | I don't like to do the things which I used to do earlier | | | |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| C. | I don't like my wife/ husband. | | | |
| D. | I don't want to settle in other places. | | | |
| E. | I wish to eat the desired sweet now which was not liked by me earlier. | | | |

### 6. SIELA VIBHRAMA : ALTERED NATURE

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I don't brush the teeth everyday morning. | | | |
| B. | I enter some body's house and shout it as mine. | | | |
| C. | I see the stale food in my dreams. | | | |
| D. | I remove the clothes in front of people. | | | |
| E. | I scratch and pluck my hair and eat it. | | | |

### 7. CESTHA VIBHRAMA : ALTERED MOTOR ACTIVITIES

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I over perform the physical exercises. | | | |
| B. | I like nail biting, lip biting, teeth biting. | | | |
| C. | I move around constantly | | | |
| D. | I stare continuously out of the window and cry loudly. | | | |
| E. | I hit constantly on the table. | | | |
| F. | I talk continuous irrelevantly. | | | |

### 8. ACARA VIBHRAMA : ALTERED CONDUCT

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I perform violent activities, any where. e.g. hitting | | | |
| B. | I don't involve in religious activities e.g. pooja, festivals etc. | | | |
| C. | I interfere in a serious discussion and suggest. | | | |
| D. | I abuse elders. | | | |
| E. | I don't like the premises being clean. | | | |
| F. | I am over religious. | | | |

### 9. PARYAKULA : CONFUSION

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I can't rate myself as good or bad. | | | |
| B. | I can't choose things given in a set/group. | | | |
| C. | I can't say the bus route to my place. | | | |
| D. | I can't distinguish between the seasons. | | | |
| E. | I can't say numbers in reverse order from 10-1. | | | |

### 10. NA SUKHA NA DUKHA : DEPRIVED FROM THE EXPERIENCE OF HAPPINESS AND SORROW

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I don't feel anything when I lose my family members. | | | |
| B. | I don't feel anything when I get all the luxuries. | | | |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



### 11. NA ACARA DHARMA : NO MANNERS

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I clean my nose by fingers in front of others | | | |
| B. | I move my hands or any body parts irrelevently. | | | |

### 12. UDVEGA : ANXIETY, AGITATION

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I have apprehensive attitude in my face, hand movements speech etc. | | | |
| B. | I have tension and irritability on small matters. | | | |
| C. | I worry constantly on the matters which are not important. | | | |
| D. | I express fear without any reason. | | | |

### 13. GATRAPAKARSHANAM : EMACIATED BODY

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I have lost weight recently. | | | |
| B. | I am weak and non-active. | | | |

### 14. ATIUTSAHA : OVER ENTHUSIASTIC

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I over do walking and moving around. | | | |
| B. | I do excess of talking with one topic. | | | |

### 15. ARUCHI : TASTELESSNESS

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I refuse the delicious food at sight. | | | |
| B. | I develop nausea with the thought of food. | | | |

### 16. VAYUNONMATHANA : CHURNING MOVEMENT OF AI

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I feel unusual movement of air in the body | | | |
| B. | I experience whirling movement in the intestines. | | | |
| C. | I feel pricking sensation, pain in the body. | | | |

### 17. BHRAMA : GIDDINESS

| Sl.No. | Questions | Absent | Sometimes | Always |
|---|---|---|---|---|
| A. | I feel giddy while moving around. | | | |
| B. | I feel giddy while I get up from the bed. | | | |

बैद्यनाथ
शंखबटी
अजीर्ण, मंदाग्नि, पेट दर्द में
लाभदायक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी

1. प्र०:- समीर पन्नग रस में सोमल की मात्रा पारद की मात्रा से कितनी गुणा होती है ?
(a) 1 (b) 2 (c) 3 (d) 4

2. प्र०:- मन:शिला का सूत्र क्या है ?
(a) $As_3S_2$ (b) $As_2S_2$
(c) $As_2S_3$ (d) $As_3S_3$

3. प्र०:- फेनाश्म का सर्वप्रथम उल्लेख किस ग्रन्थ में है ?
(a) चरक (b) सुश्रुत
(c) अष्टाङ्ग (d) शार्ङ्गधर

4. प्र०:- शुक्ति के कितने भेद हैं ?
(a) 1 (b) 2 (c) 3 (d) 4

5. प्र०:- गोदन्ती का रसायनिक संगठन क्या है ?
(a) कैल्शियम फासफेट
(b) कैल्शियम क्लोराइड
(c) कैल्शियम नाइट्रेट
(d) कैल्शियम सल्फेट

6. प्र०:- तुत्थ भस्म की मात्रा क्या है ?
(a) 1 रत्ती (b) 2 रत्ती
(c) 3 रत्ती (d) 1/8 से 1/4 रत्ती

7. प्र०:- निम्नलिखित में सबसे छोटा-पुट कौन सा है ?
(a) लवक (b) भूधर
(c) बालुका (d) कपोत

8. प्र०:- मलज कृमियों की संख्या कितनी है ?
(a) 4 (b) 1 (c) 2 (d) 3

9. प्र०:- उन्माद के कितने भेद हैं ?
(a) 4 (b) 5 (c) 3 (d) 6

10. प्र०:- कफनानात्मज विकार कितने हैं ?
(a) 80 (b) 40 (c) 30 (d) 20

11. प्र०:- ऐषणाएं कितनी हैं ?
(a) 3 (b) 4 (c) 2 (d) 1

12. प्र०:- जीवक किस स्कन्ध का द्रव्य है ?
(a) कटु (b) मधुर
(c) अम्ल (d) तिक्त

13. प्र०:- मधुमेह के निदान और सम्प्राप्ति का उल्लेख चरक के किस स्थान में मिलता है ?
(a) निदान (b) विमान
(c) सूत्र (d) चिकित्सा

14. प्र०:- देहमार्दव किस दोष का प्राकृत गुण है ?
(a) पित्त (b) वात
(c) कफ (d) सन्निपातज

15. प्र०:- शंखक किस दोष के प्रकोप के कारण होता है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) सन्निपातज

16. प्र०:- वृद्धि रोग किस दोष के कारण होता है ?
(a) पित्त (b) कफ
(c) वात (d) त्रिदोष

17. प्र०:- कुष्ठ किस धातु की दुष्टि से उत्पन्न होता है ?
(a) रक्त (b) मज्जा
(c) मांस (d) मेद

18. प्र०:- किसका दूध श्वासकारक होता है ?
(a) अजा (b) गाय
(c) अविक् (d) महिषी

19. प्र०:- त्रिसूत्र क्या है ?
(a) हेतु, लिंङ्ग, औषधि
(b) हेतु, लिंङ्ग, चिकित्सा
(c) पूर्वरूप, औषधि, लिङ्ग
(d) हेतु, लिंङ्ग, सम्प्राप्ति

20. प्र०:- महास्नेह कितने हैं ?
(a) 5 (b) 2 (c) 4 (d) 1

21. प्र०:- सर्वश्रेष्ठ वामक द्रव्य कौन-सा है ?
(a) जीमूतक (b) मदनफल
(c) इक्षवाकु (d) उक्त सभी

22. प्र०:- चरक ने 'क्वाथ' के लिए किस शब्द का प्रयोग किया है ?
(a) स्वरस (b) श्रृत
(c) हिम (d) फाण्ट

23. प्र०:- जीवनीय महाकषाय का प्रथम द्रव्य कौन-सा है ?
(a) ऋषभक (b) काकोली
(c) मेदा (d) जीवक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



24. प्र०:- किसके निरन्तर सेवन का निषेध किया गया है ?
(a) आमलक (b) यव
(c) कूर्चिका (d) दुग्ध

25. प्र०:- आदानकाल में कितनी ऋतुएं हैं ?
(a) 5 (b) 4 (c) 2 (d) 3

26. प्र०:- किस ऋतु में प्राय: मधु का प्रयोग करना चाहिए ?
(a) वर्षा (b) शरद्
(c) बसन्त (d) ग्रीष्म

27. प्र०:- किस के बिना दधि का सेवन नहीं करना चाहिए ?
(a) आंवला (b) मधु
(c) मूंग की दाल (d) उक्त सभी

28. प्र०:- पञ्चपञ्चक का वर्णन चरक में कहां किया गया है ?
(a) सूत्रस्थान 4 (b) च०सू० 6
(c) च०सू० 8 (d) च०सू० 9

29. प्र०:- चरक 'निदान' स्थान के प्रथम अध्याय का क्या नाम है ?
(a) गुल्म निदान (b) अतीसार निदान
(c) ज्वर निदान (d) ग्रहणी रोग निदान

30. प्र०:- नील वर्ण का आकाश रोगी को किस मूर्च्छा में दिखाई देता है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) रक्तज

31. प्र०:- अव्यक्तबुद्धि मद की किस अवस्था में होती है ?
(a) 1 (b) 2 (c) 3 (d) 4

32. प्र०:- अधिक निद्रा किस उन्माद का लक्षण है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) सन्निपातज

33. प्र०:- अरोचक किस मदात्यय का लक्षण है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) सन्निपातज

34. प्र०:- पीतनयन किस स्वरभेद में मिलते हैं ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) सन्निपातज

35. प्र०:- क्षुद्र किसका भेद है ?
(a) कृमि (b) श्वास
(c) अर्श (d) श्वयथु

36. प्र०:- हिक्का का असाध्य लक्षण क्या है ?
(a) अन्नद्विह (b) अश्रद्धा
(c) रक्तस्राव (d) ज्वर

37. प्र०:- शोणितच्छर्दि किस का लक्षण है ?
(a) श्वास (b) कास
(c) ज्वर (d) उर:क्षत

38. प्र०:- गन्धर्व ग्रह प्राय: किस तिथि को प्रवेश करते हैं ?
(a) अष्टमी (b) एकादशी
(c) पञ्चमी (d) चतुर्दशी

39. प्र०:- क्षतज किसका भेद है ?
(a) शोथ (b) रक्तपित्त
(c) श्वास (d) कास

40. प्र०:- अन्त्राद कौन-सा कृमि है ?
(a) कफज (b) रक्तज
(c) पुरीषज (d) मलज

41. प्र०:- तारकेश्वर रस किस रोग में प्रयुक्त होता है ?
(a) कुष्ठ (b) बहुमूत्र
(c) प्रतिश्याय (d) ज्वर

42. प्र०:- धतूरा बीज किस योग में प्रयुक्त होते हैं ?
(a) ज्वराकुंश रस (b) ज्वरमुरारिरस
(c) त्रिपुर भैरव रस (d) तारकेश्वर रस

43. प्र०:- वंगेश्वर रस में काष्ठौषधि द्रव्य क्या है ?
(a) नागरमोथा (b) शुंठी
(c) नागकेश (d) पिप्पली

44. प्र०:- कुमारकल्याण रस का निर्माण करते समय किस के रस में मर्दन किया जाता है ?
(a) गिलोय (b) तुलसी
(c) घृतकुमारी (d) चित्रक


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



45. प्र०:- अर्शोघ्नी वटी का प्रमुख द्रव्य क्या है ?
(a) गुड़ (b) शुद्ध रसौंत
(c) सूरण (d) गिलोय

46. प्र०:- सुधानिधि पत्रिका का प्रकाशन कहां से होता है ?
(a) इलाहाबाद (b) हरिद्वार
(c) अलीगढ़ (d) रूड़की

47. प्र०:- शुद्ध वत्सनाभ का प्रयोग किस योग में किया जाता है ?
(a) प्रतापलंकेश्वर रस (b) नीलकंठ रस
(c) पंचवक्त्र रस (d) नागार्जुनाभ्र रस

48. प्र०:- इच्छाभेदी रस का प्रमुख द्रव्य कौन-सा है ?
(a) आरग्वध (b) ज़यपाल
(c) हरीतकी (d) विभीतक

49. प्र०:- धात्री लौह के निर्माण में आंवले की मात्रा, मुलेठी चूर्ण से कितनी गुणा होनी चाहिए ?
(a) 1 (b) 2 (c) 3 (d) 4

50. प्र०:- अभ्रक शोधन किस में होता है ?
(a) गोमूत्र (b) पाठा स्वरस
(c) नींबू का रस (d) हरीतकी क्वाथ

51. प्र०:- ब्रह्मविद्या को आंग्ल भाषा में क्या कहा जाता है ?
(a) Theories (b) Theosophy
(c) Thesis (d) Theory

52. प्र०:- परम तत्त्व को आंग्ल भाषा में क्या कहा जाता है ?
(a) Existence (b) Ethic
(c) Absolute (d) Idealism

53. प्र०:- सुश्रुत ने ओष्ठ रोग कितने बताए हैं ?
(a) 2 (b) 4 (c) 6 (d) 8

54. प्र०:- शार्ङ्गधर ने योनिव्यापद् कितने माने हैं ?
(a) 10 (b) 20 (c) 30 (d) 40

55. प्र०:- शार्ङ्गधर ने अधिमन्थ के कितने प्रकार माने हैं ?
(a) 1 (b) 2 (c) 3 (d) 4

56. प्र०:- प्रदर कौन-सा रोग है ?
(a) रसज (b) रक्तज
(c) मांसज (d) अस्थिगत

57. प्र०:- प्रभाव भेद से रोगों के कितने भेद हैं ?
(a) 1 (b) 2 (c) 3 (d) 4

58. प्र०:- उदावर्त कौन-सा नानात्मज विकार है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) रक्त

59. प्र०:- प्रतिश्याय किस स्रोत का रोग है ?
(a) प्राणवह (b) उदकवह
(c) रसवह (d) रक्तवह

60. प्र०:- त्वक् पारूष्य किस स्रोत की विकृति से उत्पन्न होने वाला रोग है ?
(a) रसवह (b) रक्तवह
(c) स्वेदवह (d) मज्जावह

61. प्र०:- कास में पथ्य क्या है ?
(a) छर्दि (b) दन्तघर्षण
(c) आतप (d) तुम्बी फल

62. प्र०:- स्वरभेद में पथ्य क्या है ?
(a) कवलग्रह (b) माष
(c) निष्पाव (d) तुम्बीफल

63. प्र०:- उरूस्तम्भ में अपथ्य क्या है ?
(a) शोभाञ्जन (b) कारवेल्लक
(c) लशुन (d) विरेचन

64. प्र०:- आमवात में अपथ्य क्या है ?
(a) दधि (b) रूक्ष भोजन
(c) स्वेदन (d) लंघन

65. प्र०:- शूल रोग में अपथ्य क्या है ?
(a) पटोल (b) व्यायाम
(c) लवण (d) तिल

66. Q.:- What is the most common primary malignant renal tumour of childhood ?
(a) Angiomyolipoma
(b) Wilms Tumour
(c) Onocytomas


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



67. Q.:- What is the normal value of band neutrophils in DLC ?
(a) 1 - 2 % (b) 2 - 3 %
(c) 3 - 5 % (d) 6 - 7 %

68. Q.:- What is normal value of serum lipase ?
(a) 10 - 50 U/L (b) 10 - 100 U/L
(b) 10 - 40 U/L (d) 10 - 30 U/L

69. Q.:- What is the therapeutic range of Amikacin ?
(a) 10 - 20 μg/ml (b) 25 - 30 μg/ml
(a) 5 - 10 μg/ml (c) 10 - 15 μg/ml

70. Q.:- Bexaroten comes under which classification ?
(a) NSAID (b) Antiplatelet
(c) Antineoplasitc (d) Anti infective

71. Q.:- What is the adult daily dose of Maprotiline ?
(a) 75 -15 mg (b) 75 - 300 mg
(c) 200 - 400 mg (d) 150 - 200 mg

72. Q.:- What is normal value of serum Amylase ?
(a) 25-50 U/L (b) 25-75 U/L
(c) 50-75 U/L (d) 25-125 U/L

73. Q.:- In Frostbite, damage occurs due to freezing of
(a) Peripheral (b) Vascular tissue
(c) Superficial tissue

74. Q.:- What is the daily dose of sulfasalazine in ulcerative colition ?
(a) 1.-2 gm (b) 2 - 4 gm
(c) 3 -6 gm (d) 7 - 8 gm

75. Q.:- What is the main symptom of Giardiasis ?
(a) Constipation (b) Urticaria
(c) Fever (d) Diarrhea

76. Q.:- What is the drug of Choice in Ascariasis ?
(a) Albendazole (b) Coronut Oil
(c) Thiabendozole (d) Ivermectin

77. Q.:- Parkinson's disease is
(a) Neuro degeneration
(b) Musculodegeneration
(c) Musculotrophing

77. Q.:- How much % age of world populat... suffers from Rheumatoid Asthritis ?
(a) 1 (b) 2 (c) 3 (c) 4

78. Q.:- What is the maximum daily dose of Asp...
(a) 500 mg (b) 5200 mg
(c) 1000 mg (d) 3000 mg

79. Q.:- Sarcoidosis is a
(a) Renal disease (b) Granuto mato...
(c) Cardiac disease

80. Q.:- Which cancer is second only to disea... the breast cancer in incidence a... mortality ?
(a) Uternie Cervix (b) Gall bladder
(c) Kidney (d) Pancreas

81. Q.:- What are the parts used of Piper bet...
(a) Leaf (b) Root
(c) Fruit (d) All the above

82. Q.:- What is the family of musa paradisia...
(a) Musaceae (b) Fabaceae
(c) Papilionaceae (d) Gultiferae

83. Q.:- What is the part used of mimosa pud...
(a) Roots (b) Leaves
(c) Stem (d) All the above

84. Q.:- What is the botamical name of Tulsi ?
(a) Ocimum Sanctium
(b) Acacia Catechu
(c) Saraca indica
(d) Vitis Vinifera

85. Q.:- What is the botical name of Karvira...
(a) Nerium indicum
(b) Hibiscus rosa sinensia
(c) Hemidesmus indicus

86. प्र०:- किस उन्माद में रोगी आँखें रक्तवर्ण ... जाती हैं ?
(a) वातज (b) कफज
(c) विषज (d) भूतोन्माद

87. प्र...
88. प्र...
89. प्र...
90. प्र...
91. प्र...
92. प्र...
93. प्र०:...
94. प्र०:...
95. प्र०:...
96. प्र०:...
97. प्र०:...
98. प्र०:...
99. प्र०:...


CC-0. Hobbi Domain Varuku Library Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



87. प्र०:- श्यावारुण वर्ण की अश्मरी किस दोष के प्रकोप के कारण होती है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) त्रिदोष

88. प्र०:- मूत्रकृच्छ के कितने भेद हैं ?
(a) 4 (b) 5 (c) 6 (d) 8

89. प्र०:- भावप्रकाश ने मूत्राघात के कितने भेद माने हैं ?
(a) 10 (b) 11 (c) 12 (d) 13

90. प्र०:- कुण्डलीभूत बस्ति के क्या लक्षण हैं ?
(a) तृष्णा (b) मोह
(c) श्वास (d) उक्त सभी

91. प्र०:- राजवृक्ष किस का पर्याय है ?
(a) इक्ष्वाकु (b) मदनफल
(c) आरग्वध (d) लोध्र

92. प्र०:- अग्निवेश तंत्र का प्रयोजन क्या है ?
(a) दोष साम्य (b) धातु साम्य
(c) मल साम्य (d) उक्त सभी

93. प्र०:- जीवनीय महाकषाय का सर्वप्रथम द्रव्य क्या है ?
(a) जीवक (b) ऋषभक
(c) मेदा (d) महामेदा

94. प्र०:- चरक सूत्र स्थान में कितने चतुष्क हैं ?
(a) 4 (b) 5 (c) 6 (d) 7

95. प्र०:- ज्वर की उत्पत्ति किसके कोप से हुई ?
(a) रुद्र (b) ब्रह्मा
(c) दक्ष (d) अश्विनी कुमार

96. प्र०:- चरक निदान स्थान में कुल कितने रोगों का वर्णन है ?
(a) 4 (b) 6 (c) 8 (d) 10

97. प्र०:- अष्टाङ्ग संग्रह के शारीर स्थान में कितने अध्याय हैं ?
(a) 10 (b) 12 (c) 16 (d) 18

98. प्र०:- उत्तर तंत्र सहित सुश्रुत संहिता में कितने अध्याय हैं ?
(a) 120 (b) 160 (c) 170 (d) 180

99. प्र०:- अष्टाङ्ग संग्रह के उत्तरतंत्र में कितने अध्याय हैं ?
(a) 10 (b) 20 (c) 30 (d) 50

100. प्र०:- चरक ने तंत्रयुक्तियां सिद्धि स्थान के कि अध्याय में वर्णित की है ।
(a) 4 (b) 6 (c) 10 (d) 12

## Answer - Keys

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| (1) A | (2) B | (3) B | (4) B | (5) D |
| (6) D | (7) A | (8) C | (9) B | (10) D |
| (11) A | (12) B | (13) C | (14) A | (15) B |
| (16) C | (17) A | (18) A | (19) A | (20) C |
| (21) B | (22) B | (23) D | (24) C | (25) D |
| (26) A | (27) D | (28) C | (29) C | (30) A |
| (31) B | (32) C | (33) C | (34) B | (35) B |
| (36) A | (37) D | (38) A | (39) D | (40) A |
| (41) B | (42) B | (43) C | (44) C | (45) B |
| (46) C | (47) A | (48) B | (49) D | (50) A |
| (51) B | (52) C | (53) D | (54) B | (55) D |
| (56) B | (57) B | (58) A | (59) A | (60) C |
| (61) A | (62) A | (63) D | (64) A | (65) A |
| (66) B | (67) C | (68) D | (69) B | (70) C |
| (71) B | (72) D | (73) A | (74) B | (75) D |
| (76) A | (77) A | (78) B | (79) B | (80) A |
| (81) D | (82) A | (83) D | (84) A | (85) A |
| (86) C | (87) A | (88) D | (89) D | (90) D |
| (91) C | (92) B | (93) C | (94) D | (95) A |
| (96) C | (97) B | (98) D | (99) D | (100) D |

डा० अनुप कु० गक्खड़
दयानन्द आयुर्वेदिक कॉलेज, जालन्धर
एवं
डा० अनिल कु० गक्खड़
श्रीमती उर्मिलादेवी आयुर्वेदिक कालेज, ऊना रोड, होशियारपुर


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व

### श्री धन्वन्तरि जयन्ती-अभिनन्दन

वम्बर, 1966

श्री धन्वन्तरि त्रयोदशी उस परमशक्ति के प्रादुर्भाव का स्मृति-चिन्ह है, जिसने रोग दु:खाक्रान्त मानव जाति के कल्याणार्थ, सुख-शान्ति, स्वास्थ्य और दीर्घायु पाने के आध स्वरूप आयुर्वेद का ज्ञानामृत संसार को प्रदान किया ।

यह पुण्य दिवस मानव मात्र के लिए सुन्दर स्वास्थ्य-साधन का माँगलिक प्रतीक है और चिकित्सक मात्र के लिए कर्तव्यबोधक एवं प्रेरणा स्रोत है । प्रत्येक आयुर्वेद सेवी के लिए यह परम सौभाग्यदाता-पावनपर्व है ।

इस पुनीत अवसर पर श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० तथा सचित्र आयुर्वेद परिवार की ओर से हम भारतीय चिकित्सा-क्षेत्र के प्रत्येक सहयोगी बन्धु का अभिनन्दन करते हुए भगवान धन्वन्तरि के चरणों में नतमस्तक होकर समस्त विश्व के मानवों के लिए स्वास्थ्य, दीर्घायु एवं सुख-शान्ति के लिए हार्दिक शुभकामना प्रकट करते हैं।

**श्री रामनारायण वैद्य, श्री हजारी लाल शर्मा**
संचालक - श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० तथा सचित्र आयुर्वेद

## राष्ट्रीय स्वास्थ्य के लिए कुछ कार्यक्रम

स्थायी आरोग्य की स्थापना के लिए भारत में भारतीय आरोग्य विज्ञान का विकास ही श्रेयष्कर हो सकता है । अतएव देश के उज्जवल भविष्य के लिए स्वास्थ्य-संरक्षण को मुख्य आधार मानकर भारत की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति और राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम यथाशीघ्र निम्न प्रकार से निर्धारित होना चाहिए ।

1. अधिक डाक्टर और अधिक डिस्पेन्सरियाँ बढ़ाने की अपेक्षा गाँव-गाँव में स्वास्थ्य रक्षा केन्द्र, व्यायाम शालाऐं, संयम शिक्षा शालाऐं और स्वास्थ्य-प्रशिक्षण शिविरों की स्थापना करके अधिकाधिक भारतीय दृष्टिकोण वाले स्वास्थ्य प्रचारकों की नियुक्ति होनी चाहिए ।
2. पाठ्यपुस्तकों में प्राथमिक शिक्षा से उच्चशिक्षा तक भारतीय स्वास्थ्य-सिद्धान्तों के पाठ अनिवार्य विषय के रूप में रखे जाने चाहिये ।
3. राष्ट्र व्यापी स्वास्थ्य प्रतियोगिताओं का आयोजन हो और विविध प्रकार के शारीरिक प्रदर्शनों और स्वास्थ्य संरक्षक साहित्यों द्वारा जनता में स्वाभाविक रूप से स्वस्थ रहने एवं रोग-प्रतिरोध-क्षमता बढ़ाने की भावना उत्पन्न की जानी चाहिए ।
4. जनता में उत्तम स्वास्थ्य-निर्माण की रूचि को प्रोत्साहन देने के लिए युवकों को स्वास्थ्य-छात्रवृत्तियाँ और पारितोषिक देना चाहिये ।
5. शिक्षा, समाजकल्याण, श्रम आदि विभागों द्वारा प्रदत्त छात्रवृत्तियों में बौद्धिक योग्यता के साथ सबल स्वास्थ्य होना भी एक अनिवार्य शर्त होना चाहिये ।
6. नीचे से उपर तक सभी प्रशासनिक सेवाओं में और विभागीय परीक्षाओं में शारीरिक स्वास्थ्य की उत्तमता अनिवार्य कर देनी चाहिये, जिससे लोगों का ध्यान इस ओर कि सरकारी नौकरी के लिए शैक्षणिक ज्ञान के साथ-साथ स्वस्थ होना भी आवश्यक है ।
7. वर्तमान विकास खण्डों के अन्तर्गत जो प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र चालू हैं, वह एलोपैथी की डिस्पेन्सरी मात्र है । उन्हें सही अर्थों में स्वास्थ्य-रक्षा-केन्द्र बनाना चाहिये जिनके अन्तर्गत स्वास्थ्य-प्रशिक्षण, शरीर गठन और व्यायाम सम्बन्धी कार्यक्रम, पौष्टिक खाद्य वितरण, संयम का प्रचार, स्वच्छता और रोग-निरोधक इत्यादि स्वास्थ्यपरक कार्य होने चाहिए ।
8. खाद्य पदार्थों में मिलावट करनेवालों को कठोरतम दण्ड व्यवस्था द्वारा बन्द करना और वनस्पति घी, मद्य, बीड़ी, सिगरेट तथा स्वास्थ्य में बाधा पहुँचाने वाली अन्यान्य सामग्रियों के निषेध हेतु राज्य को सबल कदम उठाना चाहिए ।
9. अधिकाधिक मात्रा में जनता को शुद्ध दूध, दही, मक्खन और घृत उचित मूल्य में प्राप्त हो, इसके लिए राज्य को चाहिए कि इनके उत्पादन बढ़ाने का प्रयत्न करें और पशुपालन को पूर्वापेक्षा अधिक प्रोत्साहन दें ।
10. गाँव-गाँव में शुद्ध पेयजल तथा स्वच्छता प्रचार व्यवस्था को यथाशीघ्र संचालन के लिए केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय सर्वोच्च प्राथमिकता दें ।
11. जनस्वास्थ्य सुधार कार्यक्रमों में यथार्थता लाने के लिये ऐसी सुदृढ़ व्यवस्था की जावे कि स्वास्थ्य मंत्रालय के बजट का कम से कम आधा द्रव्य केवल स्वास्थ्य संरक्षण के कार्यों में लगाया जाय और शेष चिकित्सा विस्तार पर व्यय किया जाय । अतिरिक्त हम यह भी आवश्यक समझते हैं कि केन्द्रीय तथा राज्य शाखा में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा को दो स्वतंत्र निर्देशालयों के अन्तर्गत पृथक-पृथक रखी जाये ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आरोग्य समाचार
## अखबार की कतरनों से

## How genetic information flow is controlled

The mechanism, RNA interference has already become an important research tool in biology and biomedicine.

This year's Nobel Laureates have discovered a fundamental mechanism for controlling the flow of genetic information.

Our genome operates by sending instructions for the manufacture of proteins from DNA in the nucleus of the cell to the protein synthesising machinery in the cytoplasm. These instructions are conveyed by messenger RNA (mRNA).

In 1998, the American scientists Andrew Fire and Craig Mello published their discovery of a mechanism that can degrade mRNA from a specific gene.

**Molecular degradation**

The mechanism, RNA interference, is activated when RNA molecules occur as double-stranded pairs in the cell. Double-stranded RNA activates biochemical those mRNA molecules that carry a genetic code identical to that of the double-stranded RNA.

When such mRNA molecules disappear, the corresponding gene is silenced and no protein of the encoded type is made.

RNA interference occurs in plants, animals, and humans. It is of great importance for the regulation of gene expression, participates in defence against viral infections, and keeps jumping genes under control. The genetic code in DNA determines how proteins are built. The instructions contained in the DNA are copied to mRNA and subsequently used to synthesize proteins. Our genome consists of approximately 30,000 genes. However, only a fraction of them are used in each cell. Which genes are expressed (i.e. govern the synthesis of new proteins) is controlled by the machinery that copies DNA to mRNA in a process called transcription.

It, in turn, can be modulated by various factors. The fundamental principles for the regulation of gene expression were identified more than 40 years ago by the French Nobel Laureates Francois Jacob and Jacques Monod.

Today. we know ,that similar principles operate throughout evolution, from bacteria to humans.

They also form the basis for gene technology, in which a DNA sequence is introduced into a cell to produce new protein.

Around 1990, molecular biologists obtained a number of unexpected results that were difficult to explain. The most striking effects were observed by plant biologists who were trying to increase the colour intensity of the petals in petunias by introducing a gene inducing the formation of red pigment in the flowers.

But instead of intensifying the colour, this treatment led to a complete loss of colour and the petals turned white ! The mechanism causing these effect remained enigmatic until Fire and Mello made the discovery for which they receive this year's Nobel Prize.

**'Sense' and 'antisence'**

Andrew Fire and Craig Mello were investigating how gene expression is regulated in the nematode worm *Caenorhabditis elegans*. *Injecting* mRNA molecules encoding a muscle protein led to no changes in the behaviour of the worms.

The genetic code in mRNA is described

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



s being the 'sense' sequence and injecting ntisense' RNA, which can pair with the mRNA, lso had no effect.

But when Fire and Mello injected sense nd antisense RNA together, they observed that ne worms displayed peculiar, twitching novements. Similar movements were seen in vorms that completely lacked a functioning gene or the muscle protein. When sense and antisense RNA molecules meet, they bind to each other and orm double stranded RNA.

Could it be that such a double-stranded NA molecule silences the gene carrying the same ode as this particular RNA ?

Fire and Mello tested this hypothesis by njecting double-stranded RNA molecules ontaining the genetic codes for several other worm roteins. In every experiment, injection of double- tranded RNA carrying a genetic code led to ilencing of the gene containing that particular ode. The protein encoded by that gene was no onger formed.

Their discovery clarified many confusing nd contradictory experimental observations and evealed a natural mechanism for controlling the low of genetic information. The components of the RNAi machinery were identified during the following ears.

**Serves as a probe**

Double-stranded RNA binds to a protein complex Dicer, which cleaves it into fragments. Another protein complex, RISC, binds these fragments. One of the RNA strands is eliminated but the other remains bound to the RISC complex and serves as a probe to detect mRNA molecules.

When an mRNA molecule can pair with the RNA fragment on RISC, it is bound to the RISC complex, cleaved and degraded. The gene served by this particular mRNA has been silenced.

RNA interference is important in the defence against viruses, particularly in lower organisms. Many viruses have a genetic code that contains double-stranded RNA.

When such a virus infects a cell, it injects its RNA molecule, which immediately binds to Dicer.

**Jumping genes**

The RISC complex is activated, viral RNA is degraded, and the cell survives the infection. Jumping genes, also known as transponsons, are DNA sequences that can move around in the genome.

They are present in all organisms and can cause damage if they end up in the wrong place. Many transposons operate by copying their DNA to RNA, which is then reverse transcribed back to DNA and inserted at another site in the genome.

**New Opportunities**

Part of this RNA molecule is often double stranded and can be targeted by RNA interference. In this way, RNA interference protects the genome against transposons.

New opportunities in bio-medical research, gene technology and health care. RNA interference opens up exciting possibilities for use in gene technology.

Double-stranded RNA molecules have been designed to activate the silencing of specific genes in humans, animals or plants - *Excerpted from public information avaiable on* http nobelprize.org.

**(With Courtesy from The Hindu**



CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आपके पत्र

## देश के समस्यारूप रोगों के समाधान में आयुर्वेदज्ञों की भूमिका

सेवा में

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०
पटना

महाशय,

प्रत्येक देश की अपनी भिन्न-भिन्न समस्याएं होती हैं - आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, भौगोलिक एवं अन्य अनेक, किन्तु हम अपने देश की मात्र आरोग्यविषयक समस्या के प्रति आयुर्वेदज्ञों की भागेदारी के प्रति संकेत करना चाहते हैं । क्या इस देश के आयुर्वेदज्ञ राष्ट्रीय स्वास्थ्य समस्याओं (National Health problems) के समाधान में कहीं भागीदार हैं ? यदि भागीदार हैं तो कितने अंश में ? प्रसिद्ध विचारक शिवखेड़ा कहते हैं - If you are not the part of the solution, you are a problem. "यदि आप किसी समस्या के समाधान में भागीदार नहीं हैं, तो आप स्वयं एक समस्या हैं" यदि इस वाक्य में सत्यांश है तो हम आयुर्वेदज्ञ कभी इस देश के लिए 'समस्या' घोषित किये जा सकते हैं, क्योंकि इस देश के नागरिक आजादी के पश्चात् पिछले 59 वर्षों में जिन रोगों एवं स्वास्थ्य सम्बंधी समस्याओं से पीड़ित हैं एवं भारत सरकार ने जिन्हें राष्ट्रीय समस्या रूप रोग मानकर उनसे मुक्ति दिलाने हेतु आह्वान किया है, जिन रोगों के कारण असंख्य बाल, युवा एवं वृद्ध अकाल में कालकलवित हो रहे हैं, संक्रामक रूप से फैलनेवाले, नये संक्रमण से फैलनेवाले, पर्यावरण प्रदूषण से फैलनेवाले, जीवन शैली के परिवर्तन से विस्तार पानेवाले, गरीबी, कुपोषण एवं गंदगी के कारण बढ़नेवाले रोगों से सारा देश त्रस्त है, अनेक रोग तीव्र गति से बढ़ रहे हैं उन्हें रोक पाना संभव नहीं हो रहा है, अनेक रोग अपना मारक स्वरूप बता रहे हैं जिनसे अनेक आर्थिक एवं सामाजिक समस्याऐं उत्पन्न हो रही हैं । ऐसे रोगों को रोकने में या उनका उपचार करने में हम कितने भागीदार रहे हैं यह प्रश्न अब बारम्बार उठ रहा है । आयुर्वेदज्ञ इस देश की संस्कृति के संरक्षक हैं किन्तु केवल शास्त्रों को सम्भालकर रखे रहने से उनकी कर्तव्यपरायणता पूर्ण नहीं हो जाती है । इस शास्त्र से हजारों वर्षों तक नागरिकों का आरोग्य रक्षण होता आया है । अनेक विपरीत परिस्थितियों में भी आयुर्वेदज्ञों ने अपनी प्रतिभा बताई है किन्तु स्वयं को इन राष्ट्रीय स्वास्थ्य समस्याओं में भागीदार बनाने की प्रबल आकांक्षा कभी प्रकट नहीं की । सरकार ने भी अनेक आयुर्वेद चिकित्सालय, महाविद्यालय एवं अन्य संस्थाएं खोली, किन्तु जहां रोगों के सामने संघर्ष करना था वहां आयुर्वेदज्ञों एवं आधुनिक चिकित्सकों को अलग-अलग ही रखा, परिणाम यह हुआ कि लाखों आयुर्वेद के स्नातक राष्ट्रीय रोग उन्मूलन के संघर्ष से पृथक हो गये, वे उ समस्या रूप रोगों से ऐसे पृथक हो गये जैसे उनका इन रोग से कोई संबंध ही नहीं ।

प्रारम्भ से कुछ आयुर्वेदज्ञ आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति घोषित करने के लिए राजनीतिज्ञों प दबाव डालते रहे किन्तु रोगों के प्रतिरोध एवं उन्मूलन म हमारी क्षमता 5% से भी कम होने के कारण यह संभव नह हो सका, दुर्भाग्यवश प्रारम्भ के कुछ स्वास्थ्यमंत्री भी आयुर्वेद विरोधी रहे । अत: आरोग्य विषयक सभी समस्याओं का भार आधुनिक चिकित्सकों को देकर आयुर्वेद को मात्र प्रदर्शन योग्य बना दिया । आयुर्वेदज्ञ भी संख्या एवं चिकित्सा कुशलता में कम थे । अत: अपना प्रभाव नहीं बता पाये । कुछ नई परिस्थितियों ने भी उन्हें निराश किया आयुर्वेदज्ञों के निराश होने के निम्न कारण रहे :-

**उदासीनता के कारण :-**

(1) नये रोगों का आगमन ।
(2) नये रोगों को समझने की आवश्यकता ।
(3) उत्तरदायित्व का अभाव ।
(4) प्राचीन शास्त्रज्ञों में ही समाधान ढूढ़ने की वृत्ति ।
(5) आधुनिक चिकित्सा शास्त्रज्ञों का असहयोग ।
(6) अन्यों पर आश्रित रहने की वृत्ति ।
(7) अत्यन्त बुद्धिशाली व्यक्तियों का अभाव ।
(8) सीमित साधन एवं व्यक्ति ।
(9) अनुसंधान की स्पष्ट रूपरेखा का अभाव ।
(10) प्राच्य प्रतीच्य में संतुलन का अभाव ।
(11) सामाजिक एवं राजकीय समर्थन में उदासीनता ।
(12) व्यावसायिकों द्वारा आर्थिक शोषण ।
(13) बार-बार अभ्यासक्रमों का बदलना ।
(14) शुद्ध एवं मिश्र आयुर्वेद का विवाद ।
(15) मात्र आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से चिकित्सा करनेवाले का कम होना ।
(16) अधिकांश स्नातकों द्वारा आयुर्वेद औषधों का अनुपयोग ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



17) आयुर्वेदीय औषधि के निर्माण में निम्नस्तरता ।
18) शिक्षण एवं अन्य संस्थानों में बढ़ती गंदी राजनीति ।
19) प्रतिष्ठित राजनीतिज्ञों द्वारा योग्य समर्थन का अभाव ।
20) सर्वत्र अनिश्चयात्मकता का वातावरण ।

ऐसे ही कुछ अन्य कारण आयुर्वेदज्ञों की उदासीनता के कारण बन गये । यदि उन्हें समस्या रूप रोगों के समाधान में सहयोगी बनाया जाता तो आज परिस्थिति बहुत भिन्न होती ।

अब यह निश्चित हो गया है कि हम समय से पीछे रह गये हैं । हमने पिछले 60 वर्षों से लगभग 150 पाठ्यक्रम बदलकर अपनी अस्थिरता का नया रिकार्ड बनाया है । ऐसा सम्भवत: शिक्षण की किसी भी अन्य शाखा से नहीं हुआ है । अभी जो पाठ्यक्रम चल रहा है वह कब बदल जायगा यह किसी को ज्ञात नहीं है । शिक्षण एवं अनुसंधान ये दो घटक ही किसी शाखा के विकास के मापदण्ड होते हैं और इन दोनों में ही हमने अपनी कमजोरी का प्रदर्शन किया है । पिछले 40 वर्षों की अनिर्यात्मक स्थिति के कारण कई बुद्धिमान पुरुष हीन ग्रन्थियों से (Inferiority Complex) पीड़ित हुए हैं एवं व्यवसाय की संतुष्टि (Job Satisfaction) के अभाव में जीवन की निरर्थकता का अनुभव कर रहे हैं ।

आधुनिक चिकित्सा शास्त्र 100 वर्ष पूर्व हमसे बहुत पीछे था किन्तु अब हमसे बहुत आगे निकल गया है । उसे संसार के श्रेष्ठतम बुद्धि धन का सहयोग प्राप्त है एवं संसार के सभी देशों की स्वीकृत चिकित्सा पद्धति बन गई है । हमारे कई उत्साही सहयोगी अभी भी आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति घोषित किए जाने की मांग कर रहे हैं एवं 97% अनुदान जो आधुनिक चिकित्सा पद्धति को दिया जाता है वह आयुर्वेद को देने का आग्रह कर रहे हैं ऐसे अनुपयोगी एवं अव्यावहारिक मंतव्य प्रदर्शित कर हम स्वयं को हास्यास्पद बना रहे हैं । व्यावहारिकता यह है कि 3% से प्रतिवर्ष द्विगुणीत करते हुए अगले 10-15 वर्ष में समानता लाई जाय एवं इस समयावधि के मध्य हम अपनी उपयोगिता सिद्ध करें । जब तक हम स्वयं को आरोग्य विषयक समस्याओं के समाधान में उपयोगी सिद्ध नहीं करेंगे तब तक न हमें कोई सुनेगा एवं न ही समर्थन देगा । हमारा शास्त्र स्वयं कहता है कि किसी भी वस्तु की उपयोगिता उसके परिणाम से ज्ञात होती है, हमें परिणाम बताना होगा स्वयं को श्रेष्ठ बताने के लिए, देश की संस्कृति का प्रतिनिधि होना ही अनिवार्य नहीं है वरन् जिन विपत्तियों से संघर्षरत है उसमें समाधान ढूढ़ने वाले असली प्रतिनिधि सिद्ध होते हैं ।

आज देश जिन विकट रोगों के जाल में फंसा हुआ है उसमें आयुर्वेदज्ञों की भूमिका प्रशंसनीय नहीं है कभी-कभी ऐसा ज्ञात होता है कि इस देश के आरोग्य की सभी समस्याओं से केवल आधुनिक चिकित्सा शास्त्र ही संघर्ष कर रहा है उसमें आयुर्वेदज्ञों की कोई भूमिका ही नहीं है । ऐसे समस्यारूप रोगों की सूची यहां प्रस्तुत की जा रही है, जिनसे राष्ट्र के नागरिक संपीड़ित हैं ।

**राष्ट्रीय समस्या रूप रोग कौन से हैं :-**

कुछ रोगों ने नागरिकों को इतना त्रस्त किया है कि उनके नाम से ही भय का वातावरण फैल जाता है डेंग्युफीवर, कालाजार, चिकनगुनिया, Bird flue के अतिरिक्त Aids, Malaria, Fileria, T.B., Cancer, Diabetes, CAD Conginital Heart, Hypertension, Leprosy, Epilepsy Polio, Measles, Neutritional disorders, Chikenpox Herpis, STD, Rheumatic एवं अनेक मानसिक रोग शस्त्रसाध्य रोगों का समूह हमारी सीमा रेखा से बाहर हो जा रहे हैं । ये रोग इस देश के लिए समस्या रूप हैं और आयुर्वेदज्ञों ने इनके समाधान हेतु कितनी भागीदारी की यह सब जानते हैं । हम यदि एक भी औषध साध्य रोग में भी अपनी कुशलता बता पाते या मात्र मलेरिया जैसे रोग में भी अपनी प्रभावशीलता सिद्ध कर देते तो आज आयुर्वेद का स्वरूप ही भिन्न होता, हमारी विश्वसनीयता बढ़ती और भावी सम्भावना के प्रति आश्वस्त हो पाते ।

केन्द्रीय सरकार ने केन्द्रीय अनुसंधान परिषद् बनाकर ऐसा प्रयास किया था । अनेक प्रांतों में अनुसंधान इकाइयां एवं केन्द्र बनाए गये, बड़े-बड़े प्रतिष्ठानों का निर्माण भी हुआ, कई सन्निष्ठ अनुसंधानकर्त्ताओं ने महत्वपूर्ण कार्य भी किया, किन्तु राष्ट्रीय स्तर पर बहुजन समाज को कोई महत्वपूर्ण लाभ नहीं मिला । ऐसी कोई विधि नहीं ढूढ़ी जा सकी जो शत प्रतिशत लाभकारी हो । केन्द्र सरकार की इस अनुसंधान परिषद् में अबतक करोड़ों नहीं अरबों रुपये खर्च हो चुके हैं । पिछले 40 वर्षों से चल


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ऐसी संस्थाओं से अब यह कहा जा रहा है कि इनमें अनुसंधान की विधियां ठीक नहीं थीं । प्रारम्भ की इकाइयों में (Enquiries and units) में अनुसंधानकर्त्ताओं ने अपनी-अपनी मान्यताओं के आधार पर कार्य प्रारम्भ किया किन्तु बाद में उन्हें गंभीर अनुसंधान का भाग न मानकर बंद कर दिया गया । आधुनिक साधनों के अभाव में हुए कार्य को "आयुर्वेद के माध्यम से आयुर्वेद का अनुसंधान" कहा गया । अनुसंधान की स्पष्ट विधियों के अभाव में कई वर्षों तक हुए इस कार्य को अनुपयोगी सिद्ध कर दिया गया । अब ऐसा प्रयास किया जा रहा है कि आधुनिक चिकित्साशास्त्र एवं औषध निर्माण के आधुनिक मानकों के आधार पर ही कार्य किया जाय । इन विधियों से आयुर्वेद के अनुसंधान को क्या दिशा मिलेगी एवं क्या परिणाम आयेगा, यह भविष्य के गर्भ में ही है अभी तक कार्य से न आयुर्वेदज्ञ लाभान्वित हुए हैं एवं नहीं सामान्य प्रजाजन ।

**समस्याओं का व्यावहारिक समाधान –**

हमारी प्रथम समस्या यह है कि इस देश की आरोग्य विषयक समस्याओं के समाधान में हम भागीदार नहीं रहे हैं एवं न ही सत्ताधारियों ने आयुर्वेदज्ञों की सेवाएं इस सम्बध में ली है । यदि स्वतंत्रता के शीघ्र पश्चात् चीन देश की तरह स्थानिक चिकित्सा शास्त्र को भी सहयोगी बनाकर सेवाएं ली जातीं तो आज आयुर्वेद का विकास उल्लेखनीय होता । हमें प्रारम्भ से ही ऐसी सांस्कृतिक धरोहर का प्रतिनिधि बना दिया गया तो मात्र प्रदर्शनीय हो। अब जबकि मिडिया का प्रचार एवं विश्व के अन्य देशों में आयुर्वेद की प्रसिद्धि जैसे-जैसे बढ़ती जा रही है वैसे-वैसे स्थानिक राजनैतिक तंत्र भी इस ओर सतर्क हुआ है, जब आयुर्वेद के दक्षिण भारतीय औषधालयों एवं पंचकर्म रिसोर्ट्स में असंख्य विदेशियों का आगमन प्रारम्भ हुआ तब उन्हें अपनी सांस्कृतिक धरोहर की उपयोगिता का ज्ञान भी होने लगा, अभी तक अरबों रुपयों की आधुनिक दवाइयां विदेशों से आती रही हैं किन्तु अब अरबों रुपयों की दवाइयां आयुर्वेद के माध्यम से बाहर जा रही हैं । आयुर्वेद को अब विकसित करना हो तो उसका समाधान आयुर्वेदज्ञों को ही ढूंढना पड़ेगा । इस संसार में जिन्हें मार्ग ढूढ़ने की लालसा है उन्हें मार्ग मिल ही जाता है । यहां कुछ ऐसे उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं जो हमें समाधान में भागीदार बना सकते हैं :-

**(1) विभिन्न रोगों के प्रतिरोधकपक्ष को उपयोग बनाइए –**

पूर्वोक्त राष्ट्रीय समस्यारूप रोगों के नैदानिक प को हमें पहले दृष्टिगत करना होगा । हम जब तक समा के इन रोगों के कारणों एवं प्रसार माध्यम का प्रभावशा प्रचार-प्रसार नहीं करते, तब तक इनके निदान परिवर्जन व सार्थकता सिद्ध नहीं होगी । इन व्याधियों के ज्ञान हेतु चा आधुनिक चिकित्सा द्वारा वर्णित ही क्यों नहीं, हमें प्रत्ये स्तर पर उनका प्रचार-प्रसार करना चाहिए । यह आवश्य नहीं है कि मधुमेह, हृद्रोग, श्वास, आमवात, यक्ष्मा, मलेरिय कुष्ठ, मेदोरोग, उच्च रक्तचाप, कुपोषण जन्य रोग, महास्रोत के रोग एवं संक्रमणजन्य तथा उच्च रोगों को रोकने व एकाधिकार मात्र आधुनिक चिकित्साशास्त्र को ही न दिया है, इन्हें रोकने का अधिकार सभी चिकित्सा पद्धति को है । यदि हम विभिन्न प्रचार-प्रसार माध्यमों से इन रो के निदान परिवर्जन पक्ष की उपयोगिता बताएंगे तो ह राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति समर्पित हैं, ऐसा आभास दि सकेंगे ।

आज जिस संख्या से हृदय रोगियों एवं मधुमेहि की संख्या बढ़ रही है वह इस देश एवं विश्व के लि अत्यंत चिंता का विषय है । जिस तीव्रता से इन रोगों क विस्तार होता जा रहा है एवं मृत्यु संख्या बढ़ रही है उ रोकने में हमें भागीदार होने की आवश्यकता है । आधुनि चिकित्साशास्त्र भी नये मधुमेहियों एवं हृद्रोगियों की संख्यावृ को बड़ी मजबूरी से देख रहे हैं आयुर्वेद की मान्यता है वि प्रथम रोग के हेतुओं को रोका जाना चाहिए एवं हेतुओं व विपरीत आचरण का प्रारम्भ करना चाहिए, यह कार्य इत व्यापक है कि सभी रोगों के प्राच्य प्रतीच्य हेतुओं व ढूंढ़कर उनकी सूची बनाना एवं उनमें से आयुर्वेद में वर्णि हेतुओं का आधुनिक चिकित्साशास्त्रज्ञों से परस्पर आदान-प्रदा करना एवं परस्पर सम्मति से निर्धारित हेतुओं का सभ माध्यमों द्वारा प्रचार करना एक उपयोगी समाधान हो सक है । उदाहरण के रूप में मधुमेह के आयुर्वेद में वर्णि लगभग 50 हेतुओं में से कई हेतु ऐसे हैं जो आधुनि चिकित्साशास्त्र में वर्णित नहीं हैं या उन हेतुओं के प्रति ध्यान नहीं दिया गया । किन्तु यदि उन हेतुओं को आयुर्वे



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



के आचार्य विश्वास पूर्वक कहते हैं तो उसके पीछे अपना सूक्ष्म अभ्यास या अवलोकन (Observation) आवश्यक रहा होगा, आधुनिक चिकित्साशास्त्र के पास कुछ गिने चुने कारण ही हैं जो वर्षो से बताए जा रहे हैं । वैसे देखने में आयुर्वेद के हेतु साधारण ज्ञात होते हैं यथा आसनसुख, स्वप्नसुख, दधिसेवन, नवान्नपान, गुढ़विकार, पयांसि, एक स्थानासन, आलस्य, स्नानद्वेष आदि साधारण ज्ञात होते हैं केन्तु ये सभी हेतु पिछले 50 वर्षों में आई हमारी जीवनशैली (Life style) के परिवर्तन की ओर संकेत करते हैं एवं मधुमेह की सम्प्राप्ति के साथ इनका सीधा सम्बंध है । हम यदि इन हेतुओं का आधुनिक चिकित्सा शास्त्रज्ञों से समाधान करवाकर संयुक्त रूप से लोगों को इन हेतुओं के प्रति सतर्क रहने को कहा जाय तथा मिडिया के माध्यम से प्रचार-प्रसार करवाकर तीव्रगति से बढ़ रही मधुमेहियों की संख्या कम करवा सकें तो मधुमेह को नियंत्रण से हमारी भागीदारी निश्चित की जा सकती है । एक बार यदि हमें ऐसी व्याधि के नियंत्रण में भागीदार मान लिया गया तो मात्र चिकित्सा जगत ही नहीं वरन् सारे संसार के बुद्धिजीवी, वैज्ञानिक एवं सत्ताधीश हमारी पूजा करने को तत्पर हो जायेंगे । ऐसे रोगों की तीव्रता घटाना एवं वृद्धि को रोकना एक बड़ी उपलब्धि सिद्ध हो सकती है । इस व्याधि के कारण प्रतिवर्ष अरबों रुपये एवं डालर इसकी चिकित्सा में ही समाप्त हो रहे है जो सर्वथा निरर्थक है । इसके अतिरिक्त लोगों की कार्यक्षमता पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है । मधुमेही आजीवन थका, उदास, अशक्त एवं वीर्यहीनता का अनुभव करता है । इससे उसकी कार्यक्षमता पर प्रभाव पड़कर आर्थिक एवं सामाजिक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं, एक बार मधुमेह हो जाने के बाद उसका आजीवन बने रहना एवं माता-पिता से पुत्र-पुत्रियों में आ जाना एक गम्भीर समस्या है । इसके कारण रुग्णों की संख्या बहुत बढ़ गई है, कभी-कभी पूरा परिवार मधुमेही हो जाता है इसीलिए ऐसे रोगों के प्रति हमारी सतर्कता बढ़नी चाहिए । आज मधुमेहियों की बढ़ती संख्या के कारण भारत देश सारे विश्व में बदनाम हो रहा है एवं इसे "Capital of Diabetes" कहा जाने लगा है । ऐसे रोगों को रोकने में या प्रारम्भिक चिकित्सा में यदि हम सफल सिद्ध होते हैं तो हमारा आत्मविश्वास बढ़ेगा । आज स्थिति यह है कि कई वैद्य मधुमेह को जड़मूल से उखाड़ फेंकने का दावा ही नहीं करते वरन् 2-3 मास की दवा से आजीवन मधुमेह से मुक्त होने का दावा भी करते हैं ऐसा वे आर्थिक लाभ उठाने के उद्देश्य से करते हैं किन्तु जब परिणाम नहीं मिलता तो तरह-तरह के बहाने बनाकर छूट जाते हैं । इससे आयुर्वेद के प्रति लोगों की श्रद्धा कम होती है एवं परोक्षरूप से आयुर्वेद को हानि ही होती है ।

यदि हमें आयुर्वेद की प्रतिष्ठा बढ़ानी है तो इन महारोगों को देश के सभी प्रबुद्ध आयुर्वेदज्ञ अपने अध्ययन का विषय बनाएं । उसकी समय मर्यादा निश्चित करें । देश के सभी आतुरालयों, अनुसंधान केन्द्रों एवं शिक्षण संस्थाओं में निर्णयात्मक अनुसंधान कार्य होना चाहिए वे जनहित में कितने भागीदार हो सकते हैं इस एक मात्र उद्देश्य से कार्य किया जाना चाहिए ।

**(2) समस्यारूप रोगों को अनुसंधान का विषय बनाइए :-**

हमारे यहां प्रतिवर्ष सैकड़ों अनुस्नातक स्तरीय महानिबन्ध (Desertation) प्रतिवर्ष लिखे जा रहे हैं किन्तु अब तक उनसे आयुर्वेद की विशेष प्रतिष्ठावृद्धि, उनकी उपयोगिता या चिकित्सा जगत् को कोई अप्रतिम लाभ प्राप्त नहीं हुआ है । प्राय: एक निश्चित परिपाटी से बंधे सभी महानिबन्ध आयुर्वेद जगत में कोई चमत्कारिक परिणाम उत्पन्न नहीं कर पाये हैं । महानिबन्धों के संकलन का अभाव होने से एक ही विषय का पिष्टपेषण अनेक बार हुआ है । कई महानिबन्धों में अपने कार्य को बढ़ाचढ़ा भी बताया जाता रहा है ।

वस्तुत: राष्ट्रीय समस्यारूप रोगों के प्रति अनुसंधान कार्य किए जाने की वृत्ति को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है । रूढ़िगत रोगों को छोड़कर नये उत्पन्न हुए रोगों पर अभ्यास का माध्यम बनाना चाहिए । इस कार्य के लिए विषय निर्धारण एवं कार्यसूची उच्चप्रतिष्ठित विद्वानों से निश्चित कराई जानी चाहिए ।

**(3) शिक्षण के अभ्यासक्रम में समस्यारूप रोगों को स्थान दीजिए :-**

अभी तक के अभ्यासक्रमों में राष्ट्रीय समस्या रूप रोगी को विशेष महत्व नहीं दिया गया है । कई स्थानों पर मधुमेह, यक्ष्मा, हृद्रोग, कुष्ठ आदि रोगों को आज भी स्वरूप में पढ़ाया जाता है जैसा 200 या 500 वर्ष



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



बताया गया है । ऐसा करने से उस रोग के हेतु सम्प्राप्ति एवं चिकित्सा में आए परिवर्तन का ज्ञान नहीं हो पाता एवं समय के साथ आए परिवर्तनों को भी समझा नहीं जा सकता है जो स्नातक उत्तीर्ण होने के पश्चात् चिकित्साकर्म में इन्हें समझ नहीं पाते हैं, तब उन्हें ग्लानि होती है, वे इन रोगों के लिए रोगी को अन्य चिकित्सकों के पास भेजते हैं या स्वयं अंदाज से तीर चला देते हैं । इस स्थिति को रोका जाना चाहिए "विकारनाम कुशलो" कहने वाले ऐसे अवसरों पर उपयोगी नहीं हो पाते, हमें नये रोगों को स्पष्टरूप से पाठ्यक्रम का भाग बनाना चाहिए -

**(4) अतिशयोक्ति से बचिये -**

कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि आयुर्वेद के शास्त्रों, विशेषत: संहिताग्रन्थों के अतिरिक्त जो ग्रन्थ आये हैं, उनमें अपार अतिशयोक्ति है, मुख्यत: रोगों की चिकित्सा में एवं औषध द्रव्यों के वर्णन में अत्यन्त बढ़ा चढ़ाकर वर्णन किया गया है, चन्द्रप्रभावटी, लक्ष्मी विलास रस, शिवाघुटिका, शिलाजतु रसायन, रस रसायन एवं वाजीकरण के विभिन्न योगों में इतना अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया गया है कि वे स्पष्टत: शंकास्पद लगते हैं ऐसे अतिशयोक्ति पूर्ण योगों की संख्या असंख्य है । ये योग एवं चिकित्सा के वर्णन सामान्य चिकित्सकों को दिग्भ्रमित करते हैं यद्यपि तर्क यह दिया जाता है कि ऐसा वर्णन चिकित्सकों को प्रोत्साहित करने एवं योग की प्रभावशीलता बताने के लिए किया जाता है, किन्तु इससे चिकित्सकों का योगों एवं चिकित्सा के प्रति विश्वास ही कम नहीं होता वरन् आत्मविश्वास भी कम होता है । वे इनके साथ अन्य योगों को भी निरर्थक समझने लगते हैं पिछले 40 वर्षों से हजारों अनुसंधान-पत्र ऐसे पढ़े गये हैं जिनकी विश्वसनीयता शंकास्पद है । यही कारण है कि हमारे अनुसंधान-पत्रों एवं महानिबन्धों को अधिक महत्व नहीं दिया जाता, हमें शास्त्र की अतिशयोक्ति से बचना चाहिए एवं जो जैसा है उसे वैसा ही प्रस्तुत करने का प्रयास करना चाहिए ।

**(5) नये उत्पन्न हुए रोगों को समझने एवं उन्हें अभ्यासक्रम में स्थान देना :-**

पिछले 50 वर्षों में अनेक नये रोगों ने अपना विकृतस्वरूप बताया है मुख्यत: Conginital, hereditary, AID, STD, A.G.I., Polio, Melignancy, Lumber Disorders, Viral Inpections एवं कई प्रकार के ज्वरों ने असंख्य लोगों की जान ली है किन्तु इनमें से अधिकांश को न पाठयक्रमों में स्थान मिला है एवं न ही सामान्य चिकित्सकों को इनसे परिचित होने की कोई व्यवस्था की गई है । हमें ऐसी कई सहज व्यवस्था निर्माण करनी होगी जिससे नये आनेवाले रोगों को यथाशीघ्र समझा जा सके, नये रोगों को समझने के नैदानिक पक्ष को भी अभ्यास का विषय बनाना आवश्यक है, साथ ही चिकित्सा व्यवस्था शीघ्र की जा सके, ऐसा आयोजन भी किया जाना चाहिए ।

**(6) समस्यारूप रोगों के लिए उच्चस्तरीय संभाषा परिषदों तथा आयोजन :-**

समस्यारूप रोगों को विद्यार्थियों एवं सामान्य चिकित्सकों के समक्ष रखने से पूर्व राष्ट्रीय स्तर पर उनका विवेचन एवं समीक्षा की जानी चाहिए, इसके लिए वरिष्ठ एवं विद्वान चिन्तकों की संभाषा की जानी चाहिए जो निर्णयात्मक हो । प्रांतीय स्तर की शिक्षण संस्थाओं में भी ऐसी गोष्ठियां आयोजित कर केन्द्रीय समिति को परिचित कराना चाहिए । सामान्यत: हमारी शिक्षण संस्थाओं में शिक्षण कम एवं राजनीति अधिक होती है एवं कुछ दुष्ट लोग आजीवन इसे अपना व्यवसाय बना लेते हैं । अत्यंत समर्पित रूप से कार्य करनेवालों की संख्या कम होती जा रही है, किन्तु शास्त्र का संरक्षण एवं संवर्धन समर्पित लोगों से ही होता है, अच्छा यह हो कि ऐसा कार्य कुछ गिने चुने विद्वानों को ही दिया जाय ।

**(7) आयुर्वेद की उपयोगिता बढ़ाइए -**

अधिकांश आयुर्वेद स्नातक आयुर्वेद को जीवनयापन का माध्यम न बनाकर मात्र आधुनिक चिकित्सा पर ही अवलम्बित हो जाते हैं इसे वे अपनी प्रतिष्ठा समझते हैं, किन्तु ऐसा करके वे आयुर्वेद को अप्रतिष्ठित बनाते है यह संभव है कि अत्यंत आत्ययिक अवस्था में कोई कभी आधुनिक उपचार का आश्रय ले किन्तु रोज की चिकित्सा में आयुर्वेद को भुला देना शास्त्र के प्रति विश्वासघात ही है प्रत्येक आयुर्वेदज्ञ यदि स्वेच्छा से यथासंभव अधिकतम आयुर्वेद औषधों का प्रयोग करे तो हमारे औषध द्रव्यों एवं उपचार पद्धति की प्रतिष्ठा बढ़ेगी ।

**(8) प्रचार माध्यमों का विस्तृत उपयोग कीजिए :-**

अब हम ऐसे युग में पहुँच गये हैं जहां प्रचार माध्यम सर्वाधिक प्रभावशाली हो गये हैं । मिडिया का



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रभावशाली सकारात्मक प्रचार जनमानस की भावनाओं को आंदोलित कर देता है । वे हमारी उपलब्धियों को उजागर कर जनसामान्य में प्रतिष्ठित भी कर सकते हैं एवं संशयात्मक वातावरण हेतु कई विवाद भी खड़े कर सकते हैं (जैसा बाबा रामदेवजी के प्रसंग में हुआ है) । अभी आयुर्वेद की कुछ कम्पनियां प्रचार माध्यमों का खूब उपयोग कर रही है किन्तु वे ऐसा अपने आर्थिक हितों को अधिक दृष्टिगत करके ही कर रहे हैं, हमें आयुर्वेद के चिकित्सा पक्ष एवं रोग प्रतिरोधकपक्ष (Preventive) को प्रचारित करना चाहिए कम से कम जनसामान्य में प्रचलित प्रतिश्याय, कास, शिरोरुक, अंगमर्द, सामान्य नेत्र, कर्ण एवं नासारोग, उदरशूल एवं मलविबन्ध जैसे रोगों का सामान्य उपचार बारम्बार प्रचार माध्यमों से बताया जाना चाहिए । इसी तरह जो समस्या रूप रोग हैं जैसे मधुमेह, हृद्रोग, उच्चरक्तचाप, कुष्ठ, मलेरिया एवं अन्य ज्वर पोलियो, STD, Aids, A.G.L. आदि अनेक रोगों के प्रतिरोध हेतु हमें प्रतिरोधक माध्यमों का प्रचार प्रसार करना चाहिए ।

**(9) इन्फार्मेशन टेक्नालाजी का व्यापक उपयोग करिए**

अब समय ऐसा आ गया है कि कम्प्यूटर एवं अन्य साधन आपके कार्यों को अत्यन्त सरल बना देते हैं यद्यपि अब कई शिक्षण एवं चिकित्सा संस्थानों में आई.टी. का प्रवेश हो चुका है, किन्तु अभी भी अन्य शाखाओं की अपेक्षा हम बहुत पीछे हैं । हमें ये साधन अत्यन्त उपयोगी हो सकते हैं अन्यथा इसके अभाव में हम बहुत पीछे रह जायेंगे ।

**(10) सामाजिक एवं राजनैतिक समर्थन प्राप्ति का प्रयास कीजिए ।**

हमें वर्तमान में उक्त दोनों समर्थन न्यूनमात्रा में प्राप्त हैं । कुछ लोग आयुर्वेद को देश की सांस्कृतिक धरोहर बताकर दवा खाते हैं । वे इसे आदरणीय मानते हैं, किन्तु उपयोगी नहीं मानते हैं, वे केवल आयुर्वेद को हमारे ऋषिमुनियों का प्रसाद मानकर सम्मान देते हैं, उसकी प्रशंसा से दो शब्द भी कह देते हैं, धन्वन्तरि भगवान की आरती भी उतार देते हैं किन्तु आयुर्वेद के विकास के लिए योजनाबद्ध कार्यक्रम बनाकर केन्द्र सरकार को प्रस्तुत नहीं करते । कई आयुर्वेदज्ञ जो पहले शिक्षण एवं चिकित्सा क्षेत्र में रुचि लेते थे वे अब केवल पूर्ण समय की आयुर्वेद राजनीति को अपना व्यवसाय बना चुके हैं । देश की केन्द्रीय परिषद् में जहाँ राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझा एवं रोगों के समाधान में भागीदार हो सके ऐसे समर्थ को स्थान मिलना चाहिए, उसके स्थान पर खटपट भ्रष्टाचार में व्यस्त रहनेवालों की संख्या बढ़ती जा रही एक बार जिसे सदस्यता मिल जाती है वह उसे टिकाने लिए आमरण प्रयास करता रहता है, इससे कई लोग घुस गये हैं जिनका आयुर्वेद चिकित्सा से नाममात्र सम्बन्ध है । ऐसे लोग नये कालेजों को मान्यता प्रतिवर्ष निरीक्षण करने, वहां के साधन साम्रगी में कमी बताने, आकार प्रकार की पूर्ति सम्यक न होने, प्राध्या की संख्या कम होने आदि का बहाना बनाकर संस्थाओं आर्थिक लाभ प्राप्त करने में व्यस्त रहते हैं । अर्थप्राप्ति पर सभी कमियां समाप्त हो जाती हैं यह दूषण शीघ्रगति बढ़ता जा रहा है । यदि इसे रोका नहीं गया तो आयुर्वे परिषद् देश के लिए एवं आयुर्वेद के लिए समाधान होकर भार रूप हो जायेगी ।

**(11) आयुर्वेदीय औषध योगों की कार्यक्षमता बढ़ा**

नये रोगों का प्रतिरोध यदि करना है तो आयुर्वेद के औषध योगों की कार्यक्षमता बढ़ानी होगी हेतु पूर्व में कई बार प्रयास हुए हैं यथा समान द्रव्य से द्रव्य की भावना (यथा आमलकी), विष द्रव्य सम्मिलित किया जाना, औषध का घन बनाना, कार्यशील सत्वों को समाविष्ट करना, मात्र कार्यकारी (Active principle) को जोड़ना एवं बहुमूल्य औषध यथा केशर, कस्तूरी, अंबर, स्वर्ण, हीरक आदि अनेक को योग में समाविष्ट कर योगों की क्रियाशीलता जाती है ऐसा प्रखर प्रयास सर्वप्रथम रसशास्त्रियों ने था । वे बहुत सफल भी रहे किन्तु बीच में कुछ अवरोध आया कि नवसर्जन की प्रक्रिया ही अवरुद्ध हो आज भी कई औषध निर्माता जोड़-तोड़कर नये प्रस्तुति करते हैं किन्तु किसी रोग विशेष पर उनका कार प्रस्थापित नहीं हुआ है । प्रारम्भ के रसशास्त्र आचार्यों ने पारद एवं गन्धक को माध्यम बनाकर अन्य का संयोग किया । इसमें धातु द्रव्य एवं वनस्पति द्रव्य सम्मिलित किए गए । ऐसे संयोग से सैकड़ों योग बने जो आज भी प्रचलित हैं । आरोग्यवर्धिनी एवं श्वास रस आदि इसके उदाहरण हैं । किन्तु आज के परिवेश ये द्रव्य भी शीघ्र क्रियाशील नहीं माने जा रहे हैं,



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रभाव होते-होते कभी सप्ताह व्यतीत हो जाता है । अत: ऐसे द्रव्यों की शीघ्र आवश्यकता है जो रोग विशेष पर शीघ्र प्रभाव बता सके, आयुर्वेद में एक ही रोग पर सैकड़ों औषध योग बताए गये हैं यथा मधुमेह पर श्रेष्ठ द्रव्य मेहेषुध त्रिनिशे के पश्चात् मामज्जक, सप्तरंगी, अमृता, कारवेल्लक, मेथी, विजयसार, जम्बु, निम्ब, कटुकी, मधुनाशिनी, आमलकी, लोध्र, शिलाजीत, इन्द्रयव, पटोल, करंज आदि लगभग 60 औषधियां प्रमेह एवं मधुमेहहर मानी जाती हैं । इनके न्यूनाधिक मिश्रण से अनेक कम्पनियों ने मधुमेहहर योग बनाए हैं किन्तु कोई कम्पनी यह दावा नहीं करती है कि केवल उसी दवा के लेने के पश्चात् आधुनिक चिकित्साशास्त्र की कोई दवा नहीं लेनी पड़ेगी । बहाना यह बनाया जाता है कि उनकी दवा को साथ-साथ लेने से रोगी को अच्छा लगता है, दुष्परिणाम नहीं होते, रोगी स्वस्थ अनुभव करता है आदि-आदि । यही स्थिति अन्य सभी रोगों के विषय में है । अभी तक किसी भी रोग के प्रति शत-प्रतिशत जवाबदारी नहीं ली गई है एवं देश के आरोग्य एवं परिवार कल्याण विभाग को कभी आश्वस्त भी नहीं किया जा सका है कि किसी भी रोग के निमूर्लन की क्षमता निर्विवाद है । हमारी यही कमजोरी आज हमें कमजोर दिखा रही है । हम आरोग्य के क्षेत्र में उतने सम्मानित नहीं रहे जितने आधुनिक चिकित्साशास्त्रज्ञ हैं और ये ही बातें हमें समस्या के समाधान में भागीदार होने से दूर ले जा रही है । अब तो राजनीतिज्ञ एवं सामान्य प्रजाजन भी मानने लगे हैं कि हमारे बिना भी उनका काम हो सकता है । हमारी अनिवार्यता नहीं रही है, इस हेतु हमें जड़मूल से विचार करना होगा क्योंकि अगले 2-3 दशक में यह हमारे अस्तित्व का प्रश्न बन जायेगा ।

**(12) आयुर्वेद एवं आधुनिक चिकित्सा का सह उपयोग संभव है ?**

कई संस्थाओं के स्नातक आज भी स्वयं को Integrated Graduate मानते हुए आधुनिक एवं आयुर्वेद रोगों के औषध योग काम में ले रहे हैं किन्तु B.A.M.S. पाठ्यक्रम आने के पश्चात् उनकी दुविधा बढ़ी है । कुछ आयुर्वेदज्ञ ऐलोपैथी की मुख्य दवा के साथ आयुर्वेद की एक सहायक औषधि दे देते हैं किन्तु इससे आयुर्वेद की प्रतिष्ठा नहीं बढ़ी है । अब कुछ आयुर्वेदज्ञ मानने लगे हैं कि आयुर्वेद की औषधों को अतिक्रियाशील बनाने के लिए आयुर्वेद एवं एलोपैथी के द्रव्यों का मिश्रण कर अनुसंधान किया जाना चाहिए । ऐलोपैथी का क्रियाशील तत्व steroid आयुर्वेद औषधि यथा बला, अश्वगंधा, कंटकारी, जीवन्ती, गुग्गुलु, वराहीकंद में प्राकृतिक रूप से मिलता है । इन्हीं द्रव्यों से इसकी मात्रा बढ़ाकर विभिन्न रोगों में प्रयोग करना चाहिए । पहले भी विष को निर्विष या उनके दुष्परिणाम घटाने के लिए सहयोग द्रव्य उपयोग में लाते थे यथा वत्सनाभ के साथ टंकण, आज एलोपैथी की अधिकांश औषध बिना Side effect की नहीं होती । उनका यह प्रभाव घटाने के लिए आयुर्वेद औषध का उपयोग किया जा सकता है । यह कार्य औषधों के रासायनिक सूत्रों का निर्माण कर एवं उन्हें Synthetic form में लाकर भी किया जा सकता है कुछ लोग Alios Ayur Medicine को भविष्य में विकसित करना चाहते हैं ऐसा प्रयास यदि सफल होता है तो भी हमें समस्या के समाधान में भागीदार बनने की भूमिका मिलेगी हमें भागीदार बनने के मार्ग ढूढ़ने होंगे, हम अब निर्णयात्मक स्थिति में पहुँच गये हैं राष्ट्रीय समस्याओं को छोड़कर या उनकी उपेक्षाकर हम अपना अस्तित्व अधिक समय तक नहीं टिका पायेंगे, जो लोग यह मानते हैं कि आयुर्वेद सनातन है, सृष्टि की उत्पत्ति के काल से निर्मित है अत: हम सनातन ही रहेंगे यह भ्रम हमें "कालेन दशगा सर्वे" का स्मरण दिलाता है । जो कहता है कि काल ही सर्वोपरि है स्वयं ईश्वर भी उसकी क्रिया को रोक नहीं पाते । अन्तत: पुन: अपने तात्पर्य का निर्देश किया जाता है कि हमें स्वयं समस्यारूप बनने से पूर्व ही समस्याओं के समाधान में सहयोगी बन जाना चाहिए ।

भवदीय

**प्रो० गोपाल कृष्ण चतुर्वेदी**

**प्रोफेसर, जी.जे.पटेल आयुर्वेद कालेज, विद्यानगर (गुजरात)**

(यद्यपि प्रस्तुत पत्र में व्यक्त विचार के अधिकांश अंशों से हम सहमत नहीं हैं, फिर भी पत्र विचारोत्तेजक होने के कारण इसे प्रकाशित करने का लोभ हम संवरण नहीं कर पा रहे हैं । यह जनतंत्र का युग है । हमारे महर्षियों ने भी गोष्ठियों को आयोजित करके विभिन्न रोगों पर अपने विचार रखे थे एवं एक निष्कर्ष पर पहुंचने का प्रयास किया गया था । आज भी हम विभिन्न सुझावों को एकत्रित करके सार्थक निष्कर्ष निकाल सकते हैं । यह युग की मांग है । जो पाठक विद्वान, प्रोफेसर के सुझाव न भी हों, वे अपना सुझाव प्रकाशनार्थ भेज सकते हैं । - सम्पादक)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# बिच्छू के काटे की शास्त्रीय व अनुभूत चिकित्सा

बिच्छू एक जहरीला जानवर है । यह करीब-करीब दुनिया के हर क्षेत्र में पाया जाता है; कहीं पर अधिक पाये जाते हैं और कहीं पर कम पाये जाते हैं । गरम प्रदेशों जैसे रेगिस्तानी क्षेत्र में अधिक पाये जाते हैं । साथ ही खण्डरों, पुराने एवं कच्चे मकानों, कूड़े-करकट के ढ़ेर पर व अंधेरे में अधिक पाया जाता है । बिच्छूओं में भी कुछ कम जहरीले होते हैं कुछ अधिक जहरीले होते हैं । कुछ बिच्छू तो इतने अधिक जहरीले होते हैं कि जिनके काटते ही मनुष्य मर जाता है । वैसे तो बिच्छू एक शर्मीला जानवर है । जब इसको अपने प्राण संकट में लगते है तब ही यह काटता है । शास्त्रों एवं आयुर्वेद के ग्रंथों में इसका वर्णन अगद तंत्र के अन्तर्गत आता है -

**वृश्चिक विष के लक्षण :-**

बिच्छू का विष तीक्ष्ण होता है, प्रारंभ में अग्नि की भांति जलता है, जल्दी ही ऊपर चढ़ता है । पीछे से दंश स्थान पर रहता है । दंश स्थान में तुरन्त अति वेदना होती है । चुभता है, अग्नि के समान जलता है एवं फटने के समान प्रतीत होता है ।

**वृश्चिक (बिच्छू) दंश से बचने के उपाय :-**

1. जो लोग मूली और खीरा खाते हैं उन्हें बिच्छू नहीं काटता है, यदि काटता भी है तो उनको जहर का असर कम होता है । जहां बिच्छुओं की अधिकता हो वहां इन वस्तुओं को अधिक खाना चाहिए ।
2. मूली के छिलके, पत्ते एवं विशेषकर रस बिच्छू पर डालने से मर जाते हैं ।
3. यदि किसी मनुष्य को कैसा भी बिच्छू काटे तो सर्वप्रथम डंक के स्थान से ऊपर नीचे की ओर सुदृढ़ रस्सी से मजबूती से बाँध दे ताकि विष सारे शरीर में प्रविष्ट व संचरित न हो सके ।
4. घर के कोने या घर में कहीं भी वर्षा की चीजें इकट्ठी न करें अन्यथा वहाँ पर बिच्छू निकलने का भय रहता है । घर में कोयले व उपलों के ढेर में बिच्छू निकलते है । अत: उन्हें घर से अलग रखना चाहिए ।

**सामान्य बिच्छू दंश की चिकित्सा :-**

सब तीव्र बिच्छू के विषों में दधि और घी पिलावें । सिरा का वेधन करें । बमन, अंजन और नस्य का प्रयोग करें । उष्ण, स्निग्ध, अम्ल, मधुर एवं वातनाशक भोजन देवें ।

आयुर्वेद शास्त्रानुसार वृश्चिक दंश की चिकित्सा निम्न प्रकार बताई गई है -

1. बन्धन 2. स्वेद 3. धूम 4. लेप 5. नस्य 6. पेयादि

1. **बन्धन :-** दंश स्थान से ऊपर एवं नीचे मजबूत बांध देना चाहिए जिसमें बिच्छू का जहर शरीर में अधिक फैले नहीं ।
2. **स्वेद :-** दंश स्थान पर शिरीषादि विषहर द्रव्यों से बनाई गई उत्कारिका से स्वेदन करना चाहिए ।
3. **धूम्र :-**

(A) मोर पंख को चिलम में भरकर इसमें अंगार रखकर धूम्रपान करने से विष शीघ्र नष्ट होता है ।

(B) जीरे का धूम्रपान करने से लाभ होता है ।

(C) पुरानी सुपारी बारीक पीस कर चिलम में भरकर धूम्रपान करने से अतिशीघ्र लाभ होता है ।

(D) कड़वे नीम के पत्ते अथवा नीम के फूल चिलम में भरकर धूम्रपान करने से बिच्छू का जहर तुरंत उतर जाता है ।

4. **नस्य :-**

(A) आक के पत्तों का रस 2-2 बूंद नाक में डालने से छींकें आती हैं जिससे बिच्छू का जहर धीरे-धीरे कम होता चला जाता है ।

(B) हुरहुर के पत्ते को मसलकर सूंघने से क्षण भर में विष उतर जाता है ।

5. **लेप :-**

(A) अपामार्ग के पत्तों का रस या मूली घिसकर दंश स्थान पर लगाने या इनको चबाने से विष उतर जाता है ।

(B) सफेद कनेर की जड़ को घिसकर दंश स्थान पर लेप करने से जलन में आराम मिलता है ।

(C) एक-दो जमालगोटे के बीज पानी में घीसकर दंश स्थान पर लेप करने से विष उतर जाता है ।

(D) निर्मली के बीज को पानी में घिसकर लगाने से वेदना में कमी होती है ।

(E) सतावर बीजों को अर्क-दुग्ध में घिसकर लगाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



लाभ होता है ।

(F) गाय के घी में सेंधा नमक मिलाकर लगाने से जलन एवं पीड़ा शान्त होती है ।

(G) दंश स्थान पर लाल मरीच या आम की गिरी पानी में घिसकर लगाने से आराम मिलता हैं ।

(H) सत्यानाशी के बीजों को या तैल को दंश स्थान पर लगाने से लाभ होता है ।

(I) नींबू का रस, तुलसी के पत्रों का रस, सूखा अंमचूर, या सूखा लहसुन का दंश स्थान पर लेप करने से लाभ होता है ।

(J) चूहे की मेंगनी को पानी में घिसकर लेप करने से लाभ होता है ।

(K) भैंस का गोबर गर्म करके दंश स्थान पर लेप करने से फायदा होता है ।

(L) नागरमोथा का रस पीने से तथा दंश स्थान पर लेप करने से लाभ होता है ।

(M) करेले की जड़ गोमूत्र में घिसकर लगाने से विष उतर जाता है ।

(N) कबूतर की वीट, बिजौरा नींबू, शिम्रिष के फूलों का रस, शंखिनी, मदार का दूध, सौंठ तथा करंज की गुद्दी के समभाग चूर्ण को मधु मिश्रित कर लेप करें ।

(O) लहसुन की 4-5 कली लेकर पीस लें, उसमें आक का दूध 8-10 बूंद मिला लें और दंश स्थान पर लगा दें । थोड़ी ही देर में विष दूर हो जाता है ।

(P) कुचले का बीज या जड़ पान के रस में घिसकर लगाने से विष उतर जाता है ।

(Q) कपास के पत्ते एवं राई एक साथ पीसकर लेप करने में आराम मिलता है ।

(R) शहद, घी और चूना बराबर मिलाकर दंश स्थान पर लेप करने से विष का असर समाप्त हो जाता है ।

(S) पोटेशियम परमेगनेट दंश स्थान पर डालकर नींबू के रस की 2-3 बूंदें टपकाने से उसमें उफान आकर विष शान्त हो जाता है ।

(T) अमृतधारा को रूई में भिगोंकर दंश स्थान पर रखने से तत्काल आराम मिलता है ।

6. पेया:-

(A) घी में थोड़ा सेंधा नमक मिलाकर पीने से जहर उतर जाता है ।

(B) रविवार के दिन खोदकर लाई गई कपास की जड़ चबाने से लाभ होता है ।

(C) सत्यानाशी की छाल को पान में खिलाने से विष नष्ट होता है ।

(D) बकरी मेंगनी बँगला पान में खिलाने से विष नष्ट होता है ।

(E) इंद्रायण का हरा फल खाने से विष नष्ट हो जाता है ।

(F) इंद्र जौ, तगर, तिक्त लौकी, जालमालीनी, इनके समभाग चूर्ण को जल के साथ लेने से तथा इनकें चूर्ण का नस्य लेने से बिच्छू एवं सर्प विष नष्ट होता है ।

(G) संजीवनी वटी की 4-4 गोली पानी से लेने से विष का असर समाप्त हो जाता है ।

**बिच्छू दंश की अनुभूत चिकित्सा :-**

1. कागजी नींबू का रस आधा सेर, नौसादर एक पाव, शुद्ध शहद 8 तोला, मेथिलेटिड स्प्रिट-तीन छटांक, इन सबको एक शीशी में । सप्ताह के लिए भरकर रख दें । प्रतिदिन दिन में दो बार हिलाते रहें । एक सप्ताह बाद ऊपर से आसव निथार कर दूसरी बोतल में निकालकर रख लें । यह बिच्छू दंश की रामबाण दवा है । बिच्छू दंश पर रूई की फुरेरी से लगाने पर ऐसा हुआ व्यक्ति कुछ देर में ही हँसने लगता है ।
2. 100 मि.ली. स्पिरिट में दस बिच्छू पकड़कर डाल दें एवं एक माह तक ऐसे पड़ा रहने दें । छानकर अलग कर लें । इस स्पिरिट की फुरेरी दंश स्थान पर लगाने से तत्काल आराम मिलता है ।
3. बिच्छू एवं सर्प के विष को उतारने के लिए मंत्र चिकित्सा भी की जाती है । वैसे तो इसका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है लेकिन सम्पूर्ण भारतवर्ष में कई स्थानों पर प्रत्यक्षत: मंत्रों द्वारा बिच्छू एवं सर्पविष की चिकित्सा देखी जा सकती है ।

जो लोग ऐसी चिकित्सा करते हैं मेरा उनसे अनुरोध है कि जनसाधारण एवं पाठकों के लाभार्थ उसकी विधि प्रकाशित करनी चाहिए ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



की । समारोह का संचालन वैद्य विक्रम वीर भूषण ने किया ।

Central Library Gurukul Kangri University Haridwar-249404 (U.A.)

## उत्तर प्रदेश

### धन्वन्तरि जयन्ती समारोह

विश्व आयुर्वेद परिषद्, साहिबाबाद, गाजियाबाद के तत्वावधान में राज आयुर्वेदिक सेन्टर, सै-3 राजेन्द्र नगर के मार्किट में आज दिनांक 19.10.2006 गुरूवार के दिन प्रात: 10.00 बजे भगवान धन्वन्तरि जयन्ती का विधिवत पूजन आदि के द्वारा शुभारम्भ किया गया ।

इससे पहले सामयिक ज्वर वायरल, मलेरिया, डेंगू इत्यादि से पीड़ित 50 रोगियों का निरीक्षण, परीक्षण एवं चिकित्सा उपचार सभी निशुल्क किया गया । इसमें सभी स्थानीय वैद्यों एवं दिल्ली से आये डा० रवि कौशिक आयुर्वेद विश्व परिषद् का सहयोग सराहनीय रहा ।

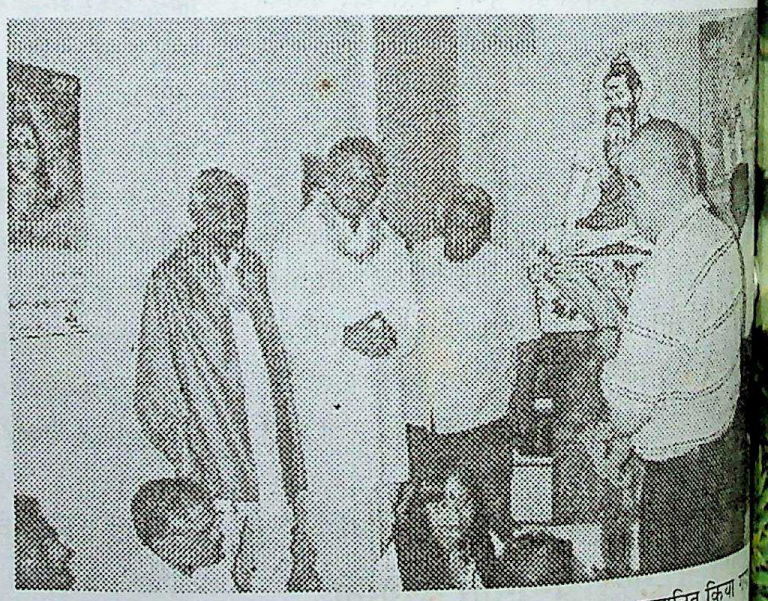

मुख्य अतिथि डा० गणेश दत्त शर्मा, पूर्व प्राचार्य, ला०रा०कालेज, साहिबाबाद ने दीप प्रज्वलित कर धन्वन्तरि भगवान की वन्दना की और ऋषि परम्परा एवं वेदो में आयुर्वेद के बारे में प्रकाश डाला । डा०एम०के०बन्सल ने विषम ज्वर और डेंगू की चिकित्सा पर प्रकाश डाला । वैद्य शान्ति कुमार मिश्र ने आयुर्वेदिक क्वाथ एवं स्वरस चिकित्सा विधि की तुरन्त लाभकारी प्रकृति पर जोर दिया । वैद्य महेन्द्र कुमार त्यागी ने आयुर्वेद में शास्त्रीय एकौषधि चिकित्सा पद्धति एवं चरकोक्त, दशेमानि वर्ग की औषधियों द्वारा निरापद एवं सफल चिकित्सा का वर्णन किया । इस अवसर पर परिषद् की तरफ से प्रशंसनीय सेवाओं के लिए वैद्य शान्ति कुमार मिश्र और डा० गणेश दत्त शर्मा को श्री फल एवं शाल द्वारा समानित किया गया । डा० महेन्द्र कुमार त्यागी ने सभा का संचालन किया । धन्वन्तरि जयन्ती के इस पवित्र अवसर पर प्रख्यात चिकित्सक तथा अतर्रा पोस्ट ग्रेजुयेट कालेज, बाँदा के पूर्व प्राचार्य, डा० विशन लाल गौड, डा०आर०के० सोनी तथा पण्डित पुरुषोत्तम मिश्र बैकुण्ठ धाम आदि महानुभाव उपस्थित हुए और अपने मूल्यवान विचार प्रकट किये ।



CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ISSN - 090678 X

# सचित्र आयुर्वेद

# SACHITRA AYURVED

## A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

वर्ष - 59 अंक - 6 दिसम्बर - 2006

श्वासकास प्रतिश्याय प्रसेकारोचक ज्वरान् ।।371।।
हन्तिमूलकयूषस्तु कफमेदोगल ग्रहान ।
कलत्थयूषोऽनिलहा श्वासपीनसनाशनः ।।372।।
तूणीप्रतूणीकासाश्मगुल्ममेदः कफामहः ।
दाडिमामलकैर्यूषो हृद्यः संशमनो लघु ।
प्राणाग्नि जननो मूर्च्छा मेदोघ्नो वात पित्त जित् ।

सु०सू० 46/371-373

मूलक यूष (बाल-शुष्क मूली का यूष) - श्वास कास, प्रतिश्याय, प्रसेक (लालास्राव), अरोचक, ज्वरनाशक है एवं कफ-मेद और गले के रोगों को नष्ट करता है ।

कुलत्थी का यूष - वायुनाशक, श्वास-पीनसनाशक है ।

तूनी-प्रतूनी-कास, गुल्म, मेद और कफनाशक है ।

अनार और आंवले का यूष - हृदय के लिए संशमन (बिना वमन और बिना विरेचन के वहीं पर स्थित दोषों का शमन करता है), लघु है ।

प्राण - अग्निजनक, मूर्च्छाभेद नाशक पित्त - वायु को नष्ट करती है ।

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


# अब भूल जाईये महीने की चिन्ता

बैद्यनाथ

## सुन्दरी कल्प फोर्ट

रक्त की कमी, घबराहट, थकावट, हाथ पाँव के तलवे की जलन आदि परेशानियों में फौरन आराम देता है ।

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

बैद्यनाथ

## सुरक्ता

आयुर्वेदिक स्किन टोनर
कील मुहाँसों के लिए

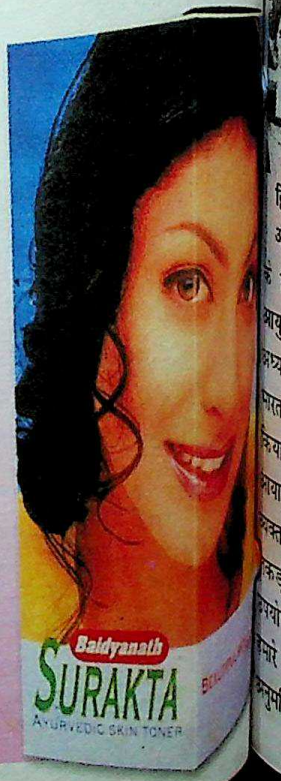


सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूणे से विशेष संवाददाता की रपट

# द्वितीय विश्व आयुर्वेद महाधिवेशन एवं आरोग्य 2006 सम्पन्न

## सरकार के पास जमा प्रवाल, चन्दन एवं श्रृंग में से कुछ हिस्सा आयुर्वेद औषधि निर्माताओं को दें ।

– प्रमोद शर्मा

पूणे विश्वविद्यालय के विशाल प्रांगण में दिनांक 10/11/2006 से 12/11/2006 तक द्वितीय विश्व आयुर्वेद महाधिवेशन एवं आरोग्य 2006 नये संकल्पों के साथ शानदार ढंग से सम्पन्न हुआ ।

महाधिवेशन के अन्तिम दिन दिनांक 12/11/2006 (Coral) का उपयोग सीमेन्ट उद्योग में होता है । चीन को भी निर्यात किया जाता है । श्रृंग भस्म सरकार के पास टनों में पड़ा हुआ है । सरकार को इस पर से प्रतिबन्ध उठा लेना चाहिए । जो द्रव्य सरकार के पास पड़े हैं, उन्हें आयुर्वेदिक औषधि निर्माताओं को अविलम्ब वितरित कर देना चाहिए ।

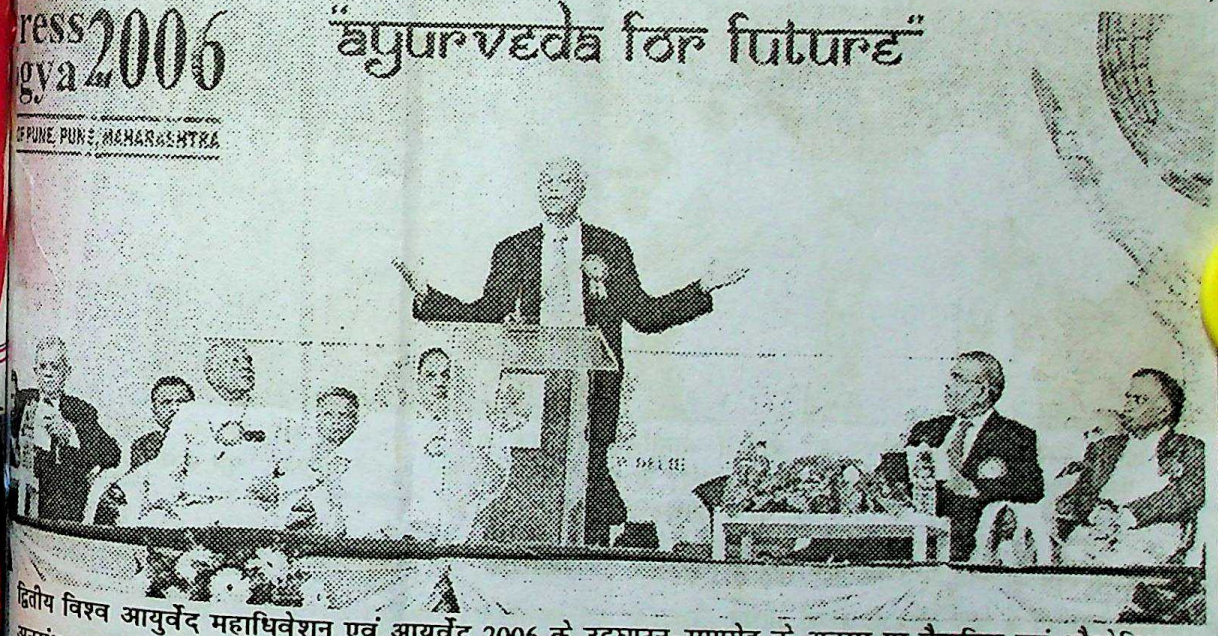


**द्वितीय विश्व आयुर्वेद महाधिवेशन एवं आयुर्वेद 2006 के उद्घाटन-समारोह के अवसर पर वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् के महानिदेशक, डा० रघुनाथ माशेलकर पूणे विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए परिलक्षित हैं**

के द्वितीय सत्र की अध्यक्षता करते हुए **श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०** के निदेशक एवं आडमा के अध्यक्ष, **श्री प्रमोद शर्मा** ने उपस्थित प्रतिनिधियों का ध्यान भारत सरकार की आयात-निर्यात नीति की ओर आकृष्ट किया । उन्होंने कहा कि आयुर्वेदिक औषधियों के आयात-निर्यात में संतुलन होना चाहिए । उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया कि औषधियों के लिए हमें चन्दन की लकड़ी, प्रवाल, श्रृंग भस्म आदि पदार्थों का औषधियों के उपयोग में लाने हेतु हमें अनुमति नहीं दी जाती है । यदि हमारे यहां ये द्रव्य उपलब्ध नहीं हैं, तो आयात करने की अनुमति हमें मिलनी चाहिए । आश्चर्य है कि प्रवाल

आयुर्वेद-शिक्षा की ओर प्रतिनिधियों का ध्यान आकृष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि छात्रों एवं प्राध्यापकों को संस्कृत का वृहद् ज्ञान होना चाहिए । आयुर्वेद में जो अनुसंधान विशेषकर क्षेत्रीय अनुसंधानशाला, जम्मू, पूणे एवं सिमैप में हो रहे हैं, उन्हें इन्टरनेट पर वैज्ञानिक आंकड़ों के साथ देना चाहिए । सार्क देशों के मध्य आयुर्वेदिक औषधियों के आयात-निर्यात पर प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिए । इन देशों में फर्माकोपिया भी एक समान होना चाहिए । उन्होंने नेपाल की विचित्र नीति भी ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया । श्रीलंका का उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा कि वहां आयुर्वेद का पृथक् स्वास्थ्य मंत्री है । श्री अठगेले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



गाहब प्रथम देसी चिकित्सा के मंत्री थे । हमारे देश में भी केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रियों में से एक मंत्री आयुर्वेद का होना गाहिए ।

श्री शर्मा ने प्रारम्भ में आडमा के उद्देश्यों पर काश डाला । फार्मेक्सिल, हैदराबाद के कार्यकारी निदेशक, डा०पी०व्ही०अप्पाजी के इस कथन का समर्थन किया कि साकार के पास कई योजनाएं हैं । हम 25 लाख रुपये का अनुदान निर्याात में प्रोत्साहन देने के लिए देते हैं । दुर्भाग्यवश

श्री शर्मा ने आश्चर्य व्यक्त किया कि गहनों में मूंगा (Coral) अर्थात् प्रवाल के इस्तेमाल की छूट है किन्तु औषधियों हेतु इसके इस्तेमाल पर प्रतिबन्ध है । अन्त में उन्होंने मंच पर उपस्थित नेशनल मेडिसिनिल प्लान्ट्स बोर्ड के मुख्य कार्यकारी अधिकारी, श्री वी.एस.सुब्रह्मण्यम, फार्मेक्सिल, हैदराबाद के कार्यकारी निदेशक डा०पी०व्ही०अप्पाजी, प्रख्यात् चिकित्सक, श्री बालाजी ताम्बे एवं आयुर्वेदिक मेडिकल कान्सिल के निबन्धक का

**द्वितीय विश्व आयुर्वेद परिषद् की ओर से आयोजित वैज्ञानिक सत्र के उद्घाटन-समारोह के अवसर पर परलक्षित हैं - बायें से सर्वश्री एस.के. शर्मा, बालाजी ताम्बे, दिलीप वाल्से पाटिल, आर.ए.माशेलकर, नरेन्द्र जाधव और देवेन्द्र त्रिगुणा**

यह रकम भी लेने के लिए निर्यातक नहीं आते हैं । सरकार से विभिन्न विभागों के पास आंकड़ों के जो आधार (DATA BASE) हैं उनका व्यापक उपयोग होना चाहिए । जी एम पी सहित अन्य प्रावधानों का भी कार्यान्वयन उद्योगों में होना चाहिए । वाजीकरण औषधियों में चीन, कोरिया के पास जिनसेंग है, किन्तु हमारे पास अश्वगंध है । हम समझते हैं कि अश्वगंध को वैज्ञानिक आधार देना चाहिए । उन्होंने आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माण में काम आने वाली जड़ी-बूटी के कृषिकरण एवं संरक्षण पर जोर दिया । साथ ही उन्होंने सलाह दी कि मोनोग्राफ के जरिये किसानों एवं निर्माताओं को किस तरह लाभ मिले - इसकी व्यवस्था करनी चाहिए । उन्होंने प्रसन्नता व्यक्त की कि नेशनल मेडिसिनल प्लान्ट्स बोर्ड अस्तित्व में आया है ।

सत्राध्यक्ष, श्री प्रमोद शर्मा ने स्मृति चिन्ह एवं गुलदस्ता सम्मानित किया एवं श्री प्रभाकर कुलकर्णी ने श्री प्रमोद **शर्मा** को सम्मानित किया । श्री शर्मा ने अन्त में यह कहते हुए सत्र का समापन किया कि 'आयुर्वेद को यदि विश्वव्यापी बनाना है, तो हमें इसे सर्वसुलभ बनाना पड़ेगा ।

वस्तुतः महाधिवेशन की शुरूआत 5 नवम्बर 2006 से हो चुकी थी । 9/11/2006 को तिलक आयुर्वेद महाविद्यालय एवं पूणे विश्वविद्यालय के चरक कार्यशाला आयोजित की गयी थी । तीन दिनों के आयुर्वेद महाधिवेशन का क्रमवार कार्यक्रम निम्नानुसार आयोजित किया गया था ।

(शेष पृष्ठ सं० 476 पर)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# 'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहक कृपया ध्यान दें

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहकों से हमारा विनम्र निवेदन है कि जिनका चन्दा दिसम्बर' 2006 तक जमा है, दिसम्बर' 2006 का अंक मिलने के बाद उनका वार्षिक शुल्क समाप्त हो जाएगा। अतः निवेदन है कि अब वे यथाशीघ्र जनवरी, 2007 से दिसम्बर, 2007 तक की अवधि के लिए वार्षिक शुल्क 100 रुपया मनीआर्डर से निम्न पते पर भेज दें। इस प्रकार जिन ग्राहकों का वार्षिक शुल्क हमें प्राप्त हो जायेगा, उन्हें हम अलग से कोई कार्ड अथवा वी.पी. नही भेजेंगे। स्मरणीय है कि मनीआर्डर से चंदा भेजने पर केवल 100 रुपये ही देने पड़ेंगे जबकि वी.पी. भेजने पर लगभग 150 रुपये देने पड़ जायेंगे। अतः एकमात्र तरीका मनीआर्डर द्वारा वार्षिक चंदा यथाशीघ्र भेज देना है। अगर किसी ग्राहक महानुभाव को किसी कारणवश अग्रिम वर्ष 2007 से ग्राहक नहीं बनना हो तो वे अपने निर्णय की सूचना इस कार्यालय को शीघ्र देंगे। यदि किसी कारणवश वार्षिक शुल्क में वृद्धि हुयी, तो यह वृद्धि उन ग्राहकों पर लागू नहीं होगी, जिन्होंने शुल्क भेज दिया है।

नोट - जो ग्राहक छात्र हैं, वे अपने संस्थान से प्राप्त प्रमाण-पत्र के साथ रियायती वार्षिक शुल्क मात्र 75.00 रु. मनीआर्डर से भेज सकते हैं।

व्यवस्थापक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800 001

# हिन्दी भाषी विद्वान लेखकों से निवेदन

यद्यपि सचित्र आयुर्वेद में हिन्दी, अंग्रेजी एवं संस्कृत भाषा में लिखे गये लेखों का प्रकाशन होता है, किन्तु ज्यादातर पाठक हिन्दी भाषी होने के कारण हिन्दी भाषा में ज्यादा से ज्यादा लेखों का प्रकाशन करना हमारी विवशता है। दुर्भाग्यवश हिन्दी भाषी विद्वान लेखक भी अंग्रेजी में लिखना पसन्द करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि अंग्रेजी भाषा के लेखों का अम्बार लग जाता है जिसके कारण प्रकाशन में विलम्ब होता है। वस्तुतः अंग्रेजी भाषा में लेखों का प्रकाशन दक्षिण भारतीय पाठकों के लिए किया जाता है।

अतः हिन्दी भाषा के विद्वान लेखक हमारी विवशता को समझेंगे और वे हिन्दी भाषा में लेख भेजने का प्रयास करेंगे। इससे हमें सुविधा होगी और विद्वान लेखकों को लेख-प्रकाशन के लिए ज्यादा प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

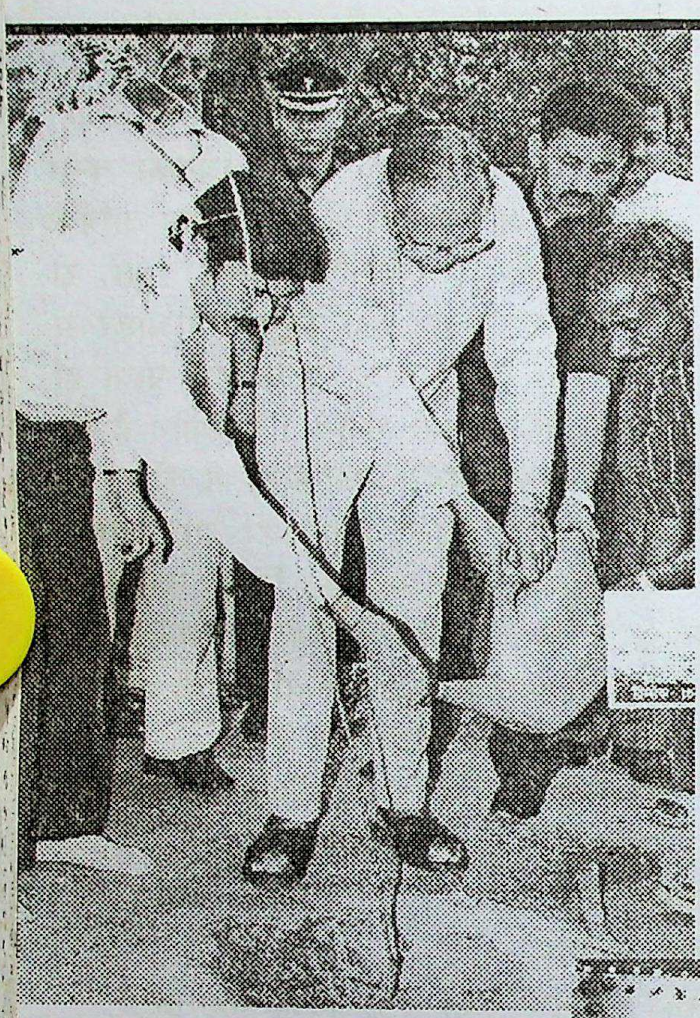

19 अक्टूबर, 2006 श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर "धन्वन्तरि वाटिका" राजभवन, उ०प्र०, लखनऊ में "महानिम्ब" का पौधा रोपित करते हुए महामहिम श्री टी०वी० राजेश्वर, राज्यपाल, उ०प्र० ।

(समाचार "आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां' नामक स्तम्भ में पढ़ें )

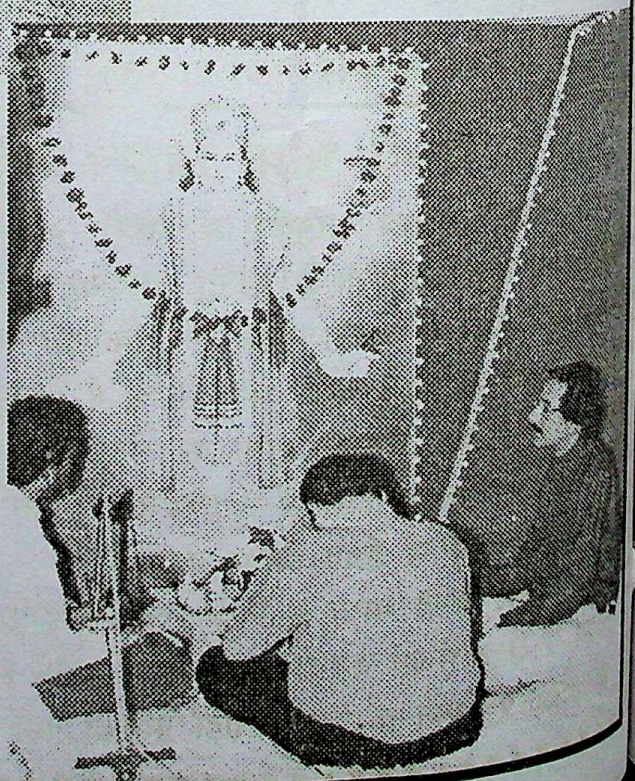

19 अक्टूबर, 2006 श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर धन्वन्तरि जी की पूजा अर्चना करते हुए प्रतिष्ठान के एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर श्री अनुराग शर्मा दायें से प्रथम व बीच में श्री अक्षय गौड़

'गायुर्वेद जगत् की गतिविधियां' स्तम्भ में पढ़ें )

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

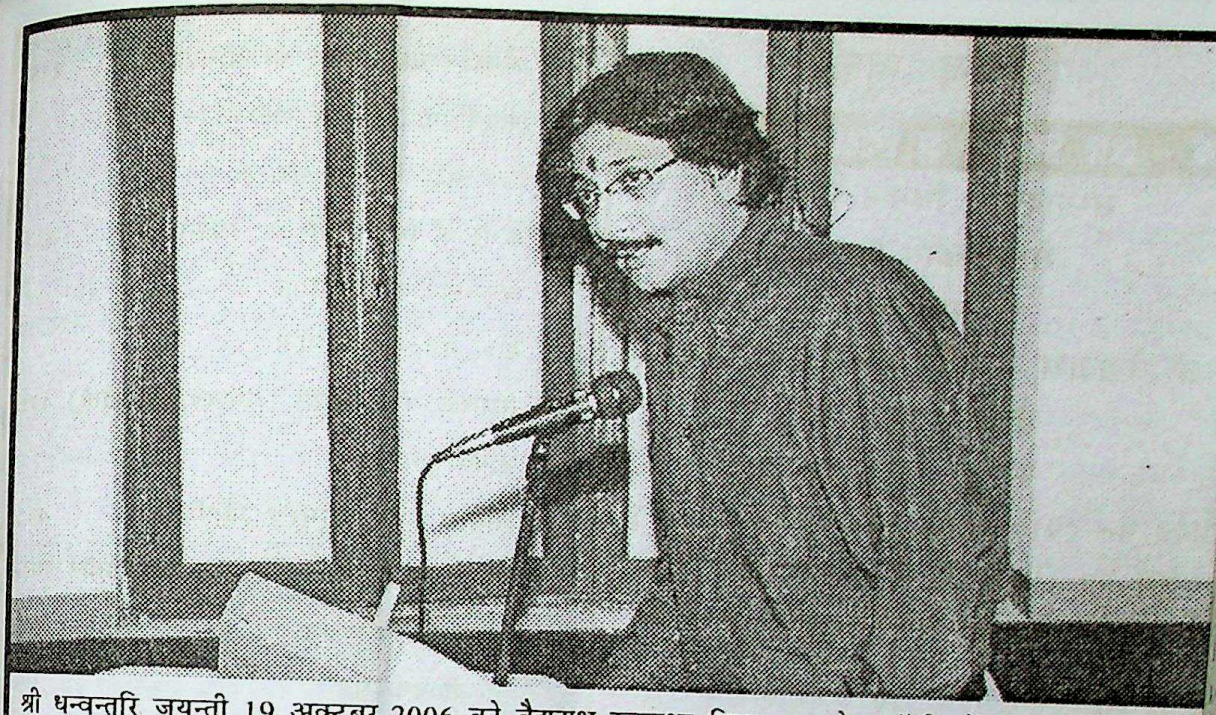

श्री धन्वन्तरि जयन्ती 19 अक्टूबर 2006 को बैद्यनाथ स्वास्थ्य दिवस समारोह झाँसी, में पधारने व आयुर्वेद चिकित्सा पर अटूट श्रद्धा रखने के लिए जन-समुदाय का आभार व धन्यवाद व्यक्त करते हुए प्रतिष्ठान के एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर श्री अनुराग शर्मा

श्री धन्वन्तरि जयन्ती बैद्यनाथ स्वास्थ्य दिवस समारोह 19 अक्टूबर 2006 को सम्मान के लिए आमंत्रित आयुर्वेद चिकित्सा विशेषज्ञ वैद्यगण दायीं ओर से प्रथम वैद्य संकट मोचन मिश्र, वैद्य रामशंकर मिश्र, डॉ० (श्रीमती) चंचल जौहरी, समारोह अध्यक्ष श्री हरगोविन्द सिंह कुशवाहा (राज्यमंत्री), डा० ज्ञान प्रकाश त्रिपाठी, डा० नवीन दुबे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची

**वर्ष - 59 अंक - 6 दिसम्बर - 2006**

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मूल्य - 10 रुपये प्रति

वार्षिक मूल्य - 100 रुपये प्रति

आजीवन शुल्क - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुल्क - 2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 407

2. योग और आयुर्वेद - 2 409
वैद्य हरीदास श्रीधर कस्तुरे

3. प्रकृति एवं स्रोतस् विवेचन 414
डॉ० अश्विनी कुमार शर्मा

4. आयुर्वेद का पंचमहाभूतात्मक त्रिदोष विज्ञान और चिकित्सा अनुसंधान 426
वैद्य इन्द्रदेव भट्ट

5. अम्ल, पित्त रोग एवं चिकित्सा 430
डा०एस०डी० शर्मा, डा० पूनम यादव

6. वृद्धावस्था में रसायन प्रयोग 432
गणेश चन्द्र उपाध्याय

7. शतावरी एक फायदे अनेक 434
डा० रवीन्द्र सिंह यादव
डा० रमेश चन्द्र तिवारी

8. औषधीय घटक द्रव्यों की अधिप्राप्ति- आयुर्वेदिक उद्योग में अतिकठिन अर्श 435
डा० व्ही० नागेश्वर राय

9. केसर के मिश्रित ढंग के उपयोग पर अनुसंधान की निर्धारिता 437
डा० आर०बी० सक्सेना

10. सरस्वती पंचक ब्राह्मी (परिचय एवं खेती) 441
लायक राम भट्ट

11. आंवला : एक बहुमूल्य औषधि 445
स्मिता गुप्ता, एडवीन जेराल्ड, शीजा एडवीन जेराल्ड

12. कालीयक विनिश्चय 447
डा०बी०एन०सिंह

13. अष्टांग संग्रह सूत्र स्थान में अर्श रोग में सन्दर्भ 448
डा० अनूप कु० गक्खड़

14. Vanga in Ayurveda 451
Dr. R.R. Hiremath

15. Sukti Bhasma & Its effect on amlapitta 453
Dr. Pronab Haldar, Dr. Dinesh Kr. Mishra

16. Ayurvedic Management of Joints Disorders 456
Atal Bihari Trivedi, Prof. A.K. Sharma

17. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 460

18. श्रद्धांजलि 461

19. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 462

20. आरोग्य समाचार 463

21. आपके पत्र 466

22. आपके अनुभूत प्रयोग 468

23. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 469

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा.लि. के प्रबन्ध निदेशक, स्व. डा. बृजेन्द्र कुमार शर्मा को हार्दिक श्रद्धांजलि

विगत दिनों श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के दो प्रबन्ध निदेशकों में से एक आयुर्वेदाचार्य डा० बृजेन्द्र कुमार शर्मा, एम.ए., ए.एम.बी.एस. का देहान्त अचानक हो गया । वे 'भवन' के प्रबन्ध निदेशक तो थे ही, साथ ही श्री शर्मा आयुर्वेद मन्दिर, दतिया के प्रधान संचालक भी थे । उनकी आकस्मिक मृत्यु से आयुर्वेद जगत् की अपूरणीय क्षति हुयी है ।

स्वनामधन्य पुण्यश्लोक बृजेन्द्र बाबू श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के दो संस्थापकों में से एक आदरणीय स्व०पं० रामनारायण शर्मा के ज्येष्ठ पुत्र थे । वे पांच भाइयों (पं० बृजेन्द्र कुमार शर्मा, पं० विश्वनाथ शर्मा, पं० शिवनाथ शर्मा, पं० सुरेश कुमार शर्मा तथा पं० रमेश चन्द्र शर्मा) एवं चार बहनों (सौ० नर्वदा, सौ० शान्ता, सौ० सावित्री तथा सौ० सुभद्रा) में ज्येष्ठ थे । जीवन के प्रारम्भिक दिनों में उन्होंने अपनी पढ़ाई कलकत्ता में प्रारम्भ की । 7-8 वर्ष की अवस्था में वे आदरणीय पं० रामावतार शर्मा (सम्प्रति श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के संयुक्त प्रबन्ध निदेशक) के साथ हिन्दी जगत् के चकमकते नक्षत्र, हिन्दी व्याकरण के पाणिनी एवं मूर्धन्य साहित्यकार आचार्य पं० किशोरी दास वाजपेयी के संरक्षण में अध्ययन करने के लिए कनखल (हरिद्वार) चले गये । उनके सान्निध्य का जबरदस्त प्रभाव स्व० बृजेन्द्र बाबू पर पड़ा । विदित है कि वाजपेयी जी सत्यनिष्ठ, कर्त्तव्यनिष्ठ, वेशभूषा में साधारण, स्वभाव से अक्खड़ (जैसा आमतौर पर स्वाभिमानी विद्वानों का होता है) और विद्वान पुरुष थे । उन्हें दुर्गुणों एवं दुर्व्यसनों से चिढ़ थी । इनके संरक्षण से सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि वे दुर्गुणों और दुर्व्यसनों के चक्कर में नहीं पड़े । सन् 1951 में मैट्रिक की परीक्षा पास करने के उपरान्त झांसी आ गये । उनकी इच्छा एलोपैथ डाक्टर बनने की थी, किन्तु अपने पिताजी के प्रभाव के चलते उन्होंने आयुर्वेद का अध्ययन किया । बुन्देलखण्ड आयुर्वेद कालेज, झांसी से उन्होंने ए.एम.बी.एस. की उपाधि प्राप्त की । श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० एवं श्री शर्मा आयुर्वेद मन्दिर के उत्थान एवं विकास में उनका अमूल्य योगदान था ।

आयुर्वेद मात्र चिकित्साशास्त्र नहीं, बल्कि जीवन विज्ञान है । जीवनरूपी दर्शन के प्रत्येक पक्ष को आयुर्वेद प्रभावित करता है । निश्चय ही शाश्वत आयुर्वेद की पवित्रता बनाये रखने एवं प्राणियों को स्वस्थ रखने में इनके अवदान को सफल बनाया रखना तभी सम्भव है जब औषधि-निर्माण उच्चकोटि का एवं शास्त्रानुसार हो । स्व० बृजेन्द्र बाबू ने इस तथ्य को समझा । परिणामतः श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० का यश चारों तरफ फैलने लगा । शास्त्रोक्त औषधि-निर्माण के क्षेत्र में इसका एकाधिकार हो गया । आम जनता की नजर में आयुर्वेद का पर्याय श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन हो गया । आज जब विश्व आयुर्वेद की ओर मुखातिब हुआ है, तो ऐसे समय में स्व० बृजेन्द्र बाबू की मृत्यु से आयुर्वेद जगत् को गहरा आघात लगा है, लेकिन प्रारब्ध को कौन टाल सकता है । हमें यह मानकर चलना चाहिए कि मृत्यु अनिवार्य है । यह मृत्युलोक कर्मलोक भी है । सार्थक जीवन जीने के पश्चात् यदि मृत्यु भी आ जाती है, तो उसका स्वागत करना चाहिए । स्व० बृजेन्द्र बाबू का जीवन सार्थक कर्म का जीवन था । अतः हम आयुर्वेदज्ञों को नियति के इस निर्णय को स्वीकार करना ही पड़ेगा । साथ ही संतोष भी करना पड़ेगा ।

हम आशा करते हैं कि उनकी असामयिक मृत्यु से आयुर्वेद जगत् की जो अपूरणीय क्षति हुयी है, उसकी पूर्त्ति श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन से जुड़े हुए लोग अवश्य करेंगे । मृत आत्मा के प्रति हमारी श्रद्धांजलि तभी सार्थक होगी जब हम स्व० बृजेन्द्र बाबू के आयुर्वेद सम्बन्धी आयुर्वेद के कार्यों को आगे बढ़ावें ।

अतः "सचित्र आयुर्वेद" की ओर से उन्हें हार्दिक श्रद्धांजलि समर्पित है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के प्रबन्ध निदेशक एवं चैयरमैन स्व०पं० बनवारी लाल शर्मा को हार्दिक श्रद्धांजलि ।

विधि का विधान सम्भवत: कोई नहीं टाल सकता है । स्व० डा० बृजेन्द्र बाबू के सम्बन्ध में सम्पादकीय लिखा ही था कि एक अनभ्र वज्रपात् का समाचार दिनांक 30 नवम्बर, 2006 के प्रात: सुनने को मिला । यह दुखद समाचार श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के एक अन्य प्रबन्ध निदेशक एवं चैयरमेन, श्रद्धेय पं० बनवारी लाल शर्मा के अचानक परलोक गमन के सम्बन्ध में प्राप्त हुआ । बीस दिनों के भीतर दोनों भ्राता सह प्रबन्ध निदेशक का अचानक इस मृत्युलोक से चला जाना कम्पनी एवं आयुर्वेद जगत् पर भयंकर विपत्ति आने के समान है ।

इसमें कोई शक नहीं कि स्व० बनवारी बाबू एक विरल व्यक्तित्व के स्वामी थे । एक प्रख्यात् उद्योगपति होते हुए भी वे केवल व्यवसाय के जरिये धन कमाने में विश्वास नहीं करते थे । उनका सिद्धान्त था कि जिस विद्या के जरिये हम धनोपार्जन कर रहे हैं, उसके हित, विकास एवं उत्थान के लिए भी धन खर्च करना चाहिए । उन्होंने आयुर्वेद की सेवा शोधपूर्ण लेखों, आयुर्वेदिक साहित्य का प्रकाशनों, विभिन्न आयुर्वेदिक संस्थाओं को दान में देकर की । विदित है कि आयुर्वेद का आधार वनौषधियां हैं । शुद्ध वनौषधि प्राप्त हो, तो शुद्ध दवाओं का निर्माण सम्भव हो पायेगा । वे अपने चिन्तन को कार्यरूप देने में सदैव तत्पर रहते थे । पटना में उनके सतत् प्रयास के फलस्वरूप एक पंचकर्म अस्पताल का निर्माण किया गया, जिसने कुछ ही दिनों में पटना में प्रसिद्धि प्राप्त कर ली । दुर्भाग्यवश उनके अस्वस्थ होने से इसका सफल संचालन सम्भव नहीं हो सका ।

स्व० बनवारी बाबू को आयुर्वेद के अतिरिक्त विश्व शान्ति, हिन्दी साहित्य, अध्यात्म, दर्शनशास्त्र बौद्ध धर्म, जैन धर्म सहित अनेक क्षेत्रों में अभिरूचि थी । राजगीर बुद्ध बिहार सोसायटी के जरिये उन्होंने विश्व शान्ति के लिए अद्‌भुत् एवं विलक्षण कार्य किया । अमेरिका से प्रबन्ध विज्ञान में स्नातकोत्तर डिग्री होते हुए भी उनमें सभी विधाओं के प्रति न केवल अभिरुचि थी, बल्कि उन्हें आगे बढ़ाने के लिए यथाशक्ति तन-मन-धन से कार्य किया ।

ऐसे महामानव का इस संसार से चला जाना न केवल राष्ट्र, आयुर्वेद, विश्व-शान्ति, साहित्य, दर्शन कम्पनी जिसके प्रबन्ध निदेशक थे, की क्षति है, बल्कि हमारी दृष्टि में सम्पूर्ण मानवता की क्षति है ।

स्व० बनवारी बाबू न केवल श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के प्रबन्ध निदेशक थे, बल्कि अपने जीवन काल में अनेक उद्योगों के संचालक एवं निदेशक थे । धनपति रहते हुए भी उनमें धन के प्रति आकर्षण नहीं था, बल्कि एक प्रकार से विरक्ति थी । उनको देखकर कोई यह नहीं कह सकता था कि यह व्यक्ति करोड़पति भी होगा । कुर्त्ता और धोती वे खादी के पहनते थे । उनका जीवन सरल, सहज एवं सौम्य था । लक्ष्मी पुत्र होते हुए भी वे सरस्वती-पुत्र थे । अत्यन्त विद्यानुरागी थे । ऐसे अप्रतिम व्यक्तित्व का इस संसार को छोड़कर चला जाना, वस्तुत: समाज की क्षति है ।

ऐसे महामानव को 'सचित्र आयुर्वेद' परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि समर्पित है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# योग और आयुर्वेद-2

वैद्य हरीदास श्रीधर कस्तुरे, एच.पी.ए., सेवानिवृत्त निदेशक, आयुर्वेद, गुजरात राज्य

योग और आयुर्वेद के इस द्वितीय लेखांक में दोनों के कुछ विषयों के साम्य और वैषम्य के विषय पर स्वरूप विवेचन करना है । योग अकेला ही एक इतना बड़ा विषय है कि उसके सभी अंग-प्रत्यंग तथा विवेचन योग्य विषयों का विवरण देना स्फुट लेखों में शक्य नहीं है और न इस लेख का यह उद्देश्य है । तथापि चरक टीकाकार चक्रपाणि ने जो प्रारंभ में ही चरक विषय में 'पातञ्जल महाभाष्य चरक प्रति संस्कृतैः' आदि मांगलिक वचनों द्वारा नमन श्लोक दिया है, उस कारण पातंजल का मुख्य ग्रंथ 'योगदर्शन' दृष्ट योग सूत्रों के साथ कुछ विषयों को यहां स्पर्शमात्र किया जाता है । विशेष अभ्यास के लिये आचार्य प्रियव्रत शर्मा द्वारा लिखित 'चरक चिन्तन' पुस्तक इस विषय में पढ़ना चाहिये जिसमें चरक और पांतजलि का एकत्व या पृथक्त्व के ऊपर 40 से 50 मुद्दों द्वारा सुन्दर विवेचन किया है ।

**योग का फल :-** "तदा द्रष्टुः स्वरूपे अवस्थानम् (योग 1-3) जब सब वृत्तियों का निरोध (चित्तवृद्धि निरोध ही योग कहलाता है ।) होता है, तब जीव की स्थिति सर्व द्रष्टा सर्वशक्तिमान ईश्वर के स्वरूप के समान होती है । जीव परमात्मा को जानकर प्राकृतिक पदार्थों की उपासना छोड़कर ईश्वर स्वरूप में मग्न हो जाता है । इसे योगी लोग निरूद्धावस्था या असंप्रज्ञात समाधि करते हैं । भक्त जन इसे ईश्वर का साक्षात्कार हो गया ऐसा मानते हैं । इस अवस्था में योगी के ज्ञान तथा परम आनंद की प्रतीति होती है ।[2]

'यथा कैवल्ये' का अर्थ मोक्ष में जैसी परमात्मा के स्वरूप की स्थिति होती है वैसी ही शरीरावस्था में जीव की होती है ।

यहां सर्वप्रथम प्रश्न है कि आयुर्वेद में 'ईश्वर' की क्या स्थिति है ? आयुर्वेद आस्तिकशास्त्र है । योगशास्त्र मोक्ष प्राप्ति के उपाय दर्शक शास्त्र है, तो आयुर्वेद भौतिक आधि व्याधि में से मोक्ष प्राप्ति का उपाय दर्शक शास्त्र है । चिकित्सा के भेद बताते हुए ही आयुर्वेद ने - मुख्य दो प्रकार बताये हैं - 1. युक्ति व्यापाश्रय 2. दैव व्यापाश्रय तथा मानस दोष के लिये धी, धैर्य, ज्ञान, विज्ञान, स्मृति तथा समाधि ये उपाय बताये गये है ।[3]

दैव व्यापाश्रय में ईश्वर की अराधना, जप, तप, होम, बली मंगलादि अनेक उपाय बताये गये हैं । यहां ज्वर रोग का एक उदाहरण देखेंगे ।

**ज्वर में ईश्वर प्राणिधान या अर्चना[4]:-** जब ज्वर की औषधि चिकित्सा योग्य प्रकारेण करने पर भी ज्वर शान्त नहीं होता तो दैव्य व्यापाश्रय चिकित्सा में सोम मातृगण, ईश्वर की पूजा करे (विषम ज्वर) जिससे ज्वर से युक्ति मिलती है । यहां 'सोम' शब्द से 'सह उमया' इति सोम 'ऐसी टीका च.पा. करते हैं । अर्थात् भगवान शंकर पार्वती तथा उसके गण नन्दी आदि सभी की पूजा करनी चाहिये । भगवान विष्णु की जो सहस्री युक्त है, उसकी पूजा करे 'वेदोक्त' सहस्र शीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपाद' आदि पुरुष सूक्त से पूजा करे । विष्णु सहस्रनाम का पाठ करे । ब्रह्मा, अश्विनी कुमार, इन्द्र, अग्नि, हिमालयपर्वत गंगा तथा अन्य देवताओं की पूजा का निर्देश है । इसके अतिरिक्त माता, पिता, गुरुजन इनकी भी पूजा निर्दिष्ट है । ब्रह्मचर्य पालन, होम, तपस्या, जप, सत्यभाषण, नियमजप साधु पुरुषों का दर्शन ज्वरनाशक कहा गया है ।

इस विषय में अनेक ऐतिहासिक सत्य घटनाओं का इतिवृत्त मिलता है । कहते हैं - श्री साईं बाबा के दर्शन से अनेक लोगों की आधि-व्याधि दूर हो जाती थी । कुछ ही वर्ष पूर्व महाराष्ट्र में श्री वासुदेवानन्द सरस्वती महान योगी और तपस्वी हुए । उन्होंने अनेक रुग्णों को रोगमुक्त किया था । एक बार वह प्रवचन दे रहे थे - और उनको अत्यंत शीतपूर्वक ज्वर भर गया । उन्होंने कहा - पांच मिनट रुकिये - मैं इस ज्वर को दूर कर शेष प्रवचन देता हूं और मात्र योग सामर्थ्य से उन्होंने ज्वर को शान्त कर दिया । वे सभी किसी रोग के लिये दवा नहीं लेते थे ।

चरक संहिता शारीर अध्याय एक का निम्नोक्त

आयुर्विज्ञान क्लीनिक, चतुर्थतल, अग्रवाल सेन्टर, इनकम टैक्स सर्किल, गुजरात विद्यापीठ के पास, आश्रम रोड, अहमदाबाद-14

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्लोक इस विषय में बहुत अध्ययन योग्य है ।

**योगे मोक्षे च सर्वासां वेदनानावर्तनम् ।**
**मोक्षे निर्वृत्तिर्निःशेषा योगो मोक्षप्रवर्तकः ।**

च०शा० 1-137

अर्थात् योग के द्वारा सभी प्रकार की वेदनाएं - दुःख और रोग सर्वथा दूर हो जाते हैं । मोक्ष शब्द देहिक और पारलौकिक (जन्म मृत्यु चक्र से मुक्ति) दोनों अर्थ में प्रयुक्त होता है । अतः चक्रपाणि स्पष्ट करते हैं :- "तदा अस्मिन्पक्षे योगमोक्षयोर्वेदना निवर्तकत्वं योगे मोक्षे च इत्यादिना श्लोकार्धेन उक्तं, तथाऽपि योग मोक्षयोः इह कर्तृता वेदना निवृतिं प्रति दृश्यत इति न पौनरूक्त्यम् ।"

इस श्लोक के पश्चात् तुरंत चरक ने आयुर्वेद की योग परिभाषा निम्नांकित श्लोक से स्पष्ट की है ।

**"आत्मन्द्रियमनोऽर्थानां सन्निकर्षात् प्रवर्वते ।**
**सुखदुःखमनारंभात्आत्मस्थे मनसि स्थिरे ।।**
**निवर्तते तदुमयं वशित्वं चोपजायते ।**
**स शरीरस्य योगज्ञास्तं योगभृषयो विदुः ।।"**

च०शा० 1-138, 139

**च०पा०:- अनारम्भादिति विषयोपादानार्थं मनसाऽनारंभात् । आत्मस्थे मनसि इति विषये निवृत्ते केवलात्मज्ञानस्थे स्थिरे अचले ।।**

इसी को योग विद्या में निम्नांकित प्रकार से स्पष्ट किया है ।

**वृत्तयः पंचतव्यः क्लिष्टाक्लिष्टाः..... अभ्यास वैराग्याभ्यां तन्निरोधाः । योग 1-12 । तत्र स्थिक्तौ यत्नोऽभ्यामः। स तु दीर्घकाल्नैरन्तर्य सत्कारा सेवितो दृढ़भूमिः ।**

यो.1-10

चित्त की वृत्तियाँ पांच प्रकार की कही गई हैं । क्लिष्ट और अक्लिष्ट भेद से । जो वृत्ति मनुष्य में अज्ञान, अधर्म, अनीश्वरता (नास्तिकता) की ओर ले जाती है उसे क्लिष्ट कहते हैं, और इसके विपरीत जो ज्ञान, धर्म और ईश्वर की ओर ले जाती है वह अक्लिष्ट कहलाती है । पांच वृत्तियाँ सुख और दुःख को उत्पन्न करती हैं वे हैं - प्रमाण वृत्ति, विपर्यय वृत्ति, विकल्प वृत्ति, निद्रा वृत्ति, स्मृति वृ आयुर्वेद में इन सबका अन्यान्य संदर्भ से निर्देश मिलता जैसे - प्रज्ञापराध, असात्म्य इन्द्रियार्थ संयोग इत्य प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम (शब्द) प्रमाण द्वा इंद्रियार्थ संयोग है वह वृत्ति है । कहते हैं -

**'तदर्थातियोगायोगमिथ्यायोगात् समनस्कं इन्द्रियं विक मापद्यमानं यथास्वं बुद्धयुपघातय सम्पद्यते, सा योगात्पुनः प्रकृतिमापद्यामानं यथास्वं बुद्धिमाप्यावर्**

च०सू०

इन कुवृत्ति के प्रतिषेध या प्रतिकार के लिये तत्वाभ्यास उपाय बताया गया है । ईश्वर सेवा यति दुर्बल, सिद्धि, रुग्णों की सेवा ऐसे सभी धर्म कहते हैं विज्ञान कहता है -

**'मैत्री करुणाभुदिलोपेक्षाणां सुख दुःख पुण्य विषयाणां भावनातश्चित प्रसादनम् ।**

योग

योगी सुखयुक्त प्राणियों के साथ मैत्री रखे, दुः पर दया रखे । पुण्यात्माओं में हर्ष रखे और पापी लो लिये उपेक्षा (न हर्ष न द्वेष) रखे । इस तरह के से चित्त प्रसन्न रहता है ।

इसीको भगवद् गीता में कर्मयोग कहा है का अनारंभ कर कोई जी नहीं सकता, प्रत्येक क्षण कुछ तो कर्म करता ही है, वह चाहे अन्यों के ला चाहे हानिप्रद हो, चाहे अपने खुद के लिये लाभ या हो । अतः 'तस्मादसक्तः सततं कार्य कर्म समाचर । सभी इन्द्रियों में कुछ स्वयं के लिये राग (ईर्ष्या) रहता है । उनके वश न रहे, यही गीता की शिक्षा है गी. 3-33) ।

वाग्भट कहते हैं -

**हिंसास्तेयान्यथा कामं पैशुन्यं परुषानृते ।**
**संभिन्नालापा व्यापाद मभिध्यां दृग्विपर्ययम् ।**
**पाप कर्मेति च दशधा काय वाङ्मानसैस्त्यजेद**

अ०हृ०सू० 2-2


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हिंसा-प्राणियों पर अत्याचार, स्वेद, चोरी करना, निषिद्ध काम सेवा (परस्त्री कामना, पशु मैथुन, गुरु, बंधु स्त्री गमन), कठोर भाषण, असत्य भाषण ये वाचिक पाप कहलाता है। इन सबका काया, वाचा, मनसा त्याग करना चाहिये।

जैसा योगशास्त्र में लिखा है वैसा ही वाग्भट कहते है - "आत्मवत् सततं पश्येदपि कीट पिपीलकम् ॥' अ०हृ०सू०2) अर्थात् सभी प्राणी मात्रों को अपने जैसा ही समझना चाहिए।

योग द्वारा आठ अंग, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि के पीछे कहे गये हैं ये परमात्मा प्राप्ति अर्थात् मोक्ष के उपाय हैं।

'यमान् सेवित सततं' ऐसा मनुस्मृति कहती है। सभी गृहस्थों को यमों के पांच उपदेशों का पालन करना चाहिये। ये पांच निम्नलिखित प्रकार से निर्दिष्ट हैं।

1. अहिंसा
2. सत्य
3. अस्तेय
4. ब्रह्मचर्य
5. अपरिग्रह

इनके संबंध में आयुर्वेद क्या कहता है यह तुलनात्मक दृष्टिकोण से देखेंगे।

**1. अहिंसा** - अहिंसा की व्याख्या इस प्रकार की गई है - तत्रहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्व भूतानामनभिद्रोहः। अर्थात् सभी काल में सब प्रकार से सभी भूतों (प्राणिमात्र) के प्रति पीड़ाकारक काम न करना यह अहिंसा है। किसी भी प्राणि से वैरभाव न करना। यह काया, माया और मन से करना चाहिये। मै तुम्हें मार डालूंगा ऐसा कहना भी हिंसा होती है। भले ही हाथ से मारे या न मारे। इसी तरह सत्यभाषण, चोरी न करना, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (दूसरे की वस्तु पर कब्जा करना परिग्रह) इनके विचार मन में लाना भी पाप है।

चरक ने सूत्र 8 में निम्नांकित उद्धरण दिये हैं।

1. काले हित मित, मधुरार्थवादी स्यात्।
2. अतिथीनां पूजकः स्यात्।
3. क्षमावान् स्यात् - अर्थात् दूसरे द्वारा किये हुए हिंसा पर भी क्षमा भाव रखे। (बहुत कठिन है ना) साधु पुरुष भी नहीं करेंगे।
4. भीलानां आश्वासयिता - डरनेवाले को रक्षण देना।
5. मंगलाचार शीलः स्यात्।
6. सर्वप्राणिषु बंधुभूतः स्यात्।
7. दीनों पर उपकार करने वाला हो।

**2. सत्य भाषण :-** जैसा देखा हो, जैसा जाना हो, सुना हो, वैसा किया हो वैसा ही व्यवहार में आचरण करना सत्य कहलाता है। (योग दर्शन)

चरक कहते हैं - सत्यसंधः स्यात् (सू०8) - सत्य संघ याने 'प्रतिज्ञातार्थ निर्वाह का होना चाहिये। जैसा कहा हो वैसा आचरण करना सत्यसंध कहलाता है। 'वचस्यन्यं मनस्यन्यं' भाषण में अलग और करने में अलग ऐसा नहीं होना चाहिये। नानृतं ब्रूयात् - झूठ न बोले।

**3. अस्तेय :-** मन, वाणी और शरीर से चोरी का परित्याग। किसी की सुन्दर वस्तु देखकर वह मेरे पास हो ऐसा विचार भी मन में आना नहीं चाहिये। वह भी मानसिक चोरी होगी।

**4. ब्रह्मचर्य :-** योग ब्रह्मचर्य की व्याख्या इस प्रकार करते है - "ब्रह्मचर्य गुप्तोन्द्रियस्योप स्थस्य संयमः। पुरुषों के लिये जननेन्द्रिय शिशन या उपस्थ पर संयम और स्त्रियों में योनि पर संयम यह ब्रह्मचर्य कहा गया है। अपने स्त्री के साथ मासिकधर्म के बाद संतान कामना से किया गया मैथुन कर्म ब्रह्मचर्य कक्षा में मान्य है अन्यथा स्वच्छंद मैथुन ब्रह्मचर्य भंग कहा जाता है। मैथुन के अतिरिक्त वेदाभ्यास ईश्वर पूजा धर्माचरण, ये भी ब्रह्मचर्य के कर्म कहे गये हैं।

चरक में ब्रह्मचर्य के संबंध में इस तरह कहा है।

1. नान्यस्त्रियंनान्ययोनिं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


2. न कुर्यात् पापम् ।
3. न स्त्रियमवजानीत - स्त्रियों के अपमानित न करे ।
4. न रजस्वलां, नातुरां, नानिष्ट रूपा, चामेध्यां, (गच्छेत) - जो रजवस्वला न हो, जो रोगी हो, जिसके अंग-प्रत्यंग यथारूप न हो, जिसका आचार-विचार शुद्ध न हो ऐसे स्त्री के साथ सहगमन न करे ।
5. जो दक्ष न हो, जिसको कामेच्छा न हो, जो किसी अन्य के साथ कामनातुर हो, उनके साथ तथा अयोनि मैथुन (गुद मैथुन, हस्त मैथुन, पशु मैथुनादि) न करें ।
6. मंदिर, पूजा स्थान, पूज्यनीय वृक्ष (बड़, उदुंबर, पीपरादि), चौरस्ता, उपवन, जंगल, श्मशान, वधस्थान, जल स्थान, औषधवन, देव, गुरूद्वार आदि स्थानों में तथा असमय अवस्था में तथा सत्संकल्प के बिना स्त्री सहवास न करें ।
7. जहां एकान्त न हो, सभी स्वयं या पुरुष श्रमित हो, व्यायाम के बाद, उपवास के बाद या उपवास काल में मैथुन न करें इत्यादि ।

**5. अपरिग्रह :-** इच्छित विषयों को प्राप्त करना, उसे संरक्षित करना, उसका क्षय, संग (ध्यान) दोषादि का विचार कर विषय योग करना परिग्रह है । उसका त्याग करना अपरिग्रह है । उनके प्राप्त करने की इच्छा भी मन में नहीं आनी चाहिये । (योग दर्शन) चरक कहते हैं :-

1. न अन्य स्व आददीत: ।
2. नान्यास्त्रियं अभिलषेत् ।
3. न पापवृत्तान् स्त्रीमित्र भृत्यान् भजेत ।
4. न छित्वा द्विजै: भक्षयेत् ।
5. वश्यात्मा, धर्मात्मा (स्यात्) ।
6. रागद्वेष हेतूनां हन्ता (स्यात्) ।

इस तरह योग शास्त्र के उपदेशों को आयुर्वेद ने अपनी विशिष्ट परिभाषा में अपनाया है ।

श्रीमद्भगवद् गीता में इस विषय में विस्तृत वर्णन स्मरणीय है -

जिसके कर्मयोग के द्वारा संपूर्ण कर्मों को ईश्वर समर्पित किया है (निष्काम कर्म किया है; और ज्ञान योगाचरण से संशय का नाश किया है उस आत्मवान आत्मा द्वारा - मन द्वारा इंद्रियों के अपने वश में रहते उसके कर्म बांध नहीं सकते । कर्मों का बंधन कायिक, वाचिक, मानसिक किसी रूप में बाधा कर नहीं सकते ।

इसीलिये चरक कहते हैं -

**नहि कर्म महत् किंचित् फलं यस्य न भुज्यते**
**क्रियाघ्नाः कर्मजा रोगाः प्रशमं यान्ति वत्सवात्**

इस तरह योगाचरण का फल भी चरक ने प्रथम अध्याय में विस्तार से बताया है । चरक कहते हैं

**आवेशश्चेतसो ज्ञानमर्थानां छन्दतः क्रिया ।**
**दृष्टिः श्रोतं स्मृतिः कान्तिरिष्ट तश्चाप्य दर्शनम्॥**
**इत्यष्टविधमाख्यातं योगीनां बलमैश्वरम् ॥**
**शुद्ध सत्वसमाधानात् तत्सर्व मुपजायते ॥**

शा०।४॥

अर्थात् - । आवेश यानि इच्छानुसार किसी में प्रवेश करने की योग्यता 2. ज्ञान - दूसरों के मन में चल रहा है इसका ज्ञान होता है । 3. मन में जो इच्छा होती है उसी प्रकार से कार्य होता रहता है । (अर्थोऽनुधावतिः) । 4. दृष्टि - अतीन्द्रिय दृष्टि पश्यत्यात्मा तिरस्कृतम् दूसरी जगह, दूसरे गांव में क्या रहा है इसका आंखों से देखना । 5. स्रोत - अतीन्द्रिय - अंयत्र का सुनाई देना । 6. स्मृति - सभी प्रकार के का स्मरण । 7. कांति - शरीर तेज:पुंज होता है । चाहे तब गुप्त होने की शक्ति प्राप्त होती है ।

इस तरह ये आठ प्रकार की दिव्य चिकित्सा को प्राप्त होती है । कुछ तथाकथित योगी इस पर करते हैं कि ऐसी कोई अद्भुत शक्ति योगी को प्राप्त होती । किन्तु इसका कारण हो सकता है कि योगसिद्धि परिपूर्ण न हो और खुद को महान योगी


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मैंने कुछ विद्वानों को देखा जो स्वयं योगी योगाभ्यासी लाते हैं और अन्य योगियों की टीका करते हैं । दुःख है कि एक प्रसिद्ध योगी ने भगवान योगेश्वर कृष्ण पर का करते हुए कहा कि वे महान योगेश्वर थे फिर भारत युद्ध के बिना भी 'यम' सिद्ध होने के बावजूद न्निधौ वैरत्यागः" का फल क्यों न मिला ? अर्थात् से ये सब सिद्धियां प्राप्त होती हैं यह भ्रमभ्यामा है । लेखक भूल जाते हैं कि श्रीकृष्ण अवतार ही 'परित्राणाय नां विनाशाय च दुष्कृताम्' हुआ है । अतः इस प्रकार दृष्टांत योग फल को असिद्ध नहीं शक्ति कर सकते । गीताकार कहते हैं -

'अनेक जन्मसांसिद्धः ततो याति परां गतिम् ।।

भ०गी० 6-45

अर्थात् यह विद्या एक ही जन्म में सिद्ध हो ऐसा नहीं है । अनेक पिछले जन्म के संस्कार से सिद्ध होकर बाद में परमगति को प्राप्त होता है ।

इस विषय में पुनर्जन्मादि विषय में चरक कहते हैं -

"पुरुषः प्रलयेचेष्टैः पुनर्भावैर्वियुज्यते ।
अव्यक्ताद्व्यक्ततां याति व्यक्तात् अव्यक्ततां पुनः ।
रजस्तमोभ्यामा विष्टश्चक्रवत्परिवर्तते.... ।
उदयप्रलयौतेषां न तेषां ये त्वक्तेऽन्यथा ।।

च०शा० 1-65, 68

इन तत्त्वों में योग के अनेक सिद्धान्तों को आयुर्वेद ने अपनाया है किन्तु वर्णन पद्धति परिभाषा में अपनी विशिष्ट पद्धति अपनायी है । इसके लिये और अन्तिम लेख में बाकी विषय स्पष्ट करेंगे ।


प्रसूता के लिए बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति
बढ़ाने में प्रसिद्ध
प्रसव के बाद इसके सेवन से
माताएं अपने और शिशु के
स्वास्थ्य की रक्षा करती हैं।




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# प्रकृति एवं स्रोतस् विवेचन

डॉ० अश्विनी कुमार

**1. निरुक्ति :-**

"प्र" + "कृ" कर्त्तरि क्विच् भावादौ क्तिन वा" अर्थात् प्रकृति शब्द "प्र" उपसर्ग पूर्वक "कृन्" धातु से क्तेच् या क्तिन् प्रत्यय के योग से निष्पन्न होता है ।

विभिन्न शब्द कोषों में प्रकृति का अर्थ भिन्न है:-

"स्वभावे लिङ्गे" (शब्दस्तोय)

शब्दस्तोयानुसार प्रकृति स्वभाव या लिङ्ग का बोध करती है।

"संसिद्धि प्रकृतित्वमे" - अमरकोष प्रथम खण्ड नाट्य वर्ग - 37

"प्रकृतिर्योनि लिङ्गे च" - अमरकोष नानार्थ तृतीय खण्ड - 73

**2. व्युत्पत्ति**

1. "प्र + कृति" में "प्र" शब्द प्रकृष्ट का वाचक है और 'कृति' शब्द सृष्टि का । इस प्रकार सृष्टि में जो प्रकृष्ट देती है वही प्रकृति है ।
2. प्रकृति में "प्र" शब्द सत्वगुण का बोधक है, "कृ" शब्द रज गुण का तथा "ति" शब्द तमस् का बोधक है ।
3. इस प्रकार जो त्रिगुणात्मक, अव्यक्त, नित्य, कारण रूप सर्वशक्ति-समन्वित, परमशक्तिशाली है तथा निर्विशेष होकर भी सम्पूर्ण विशेषधर्मों का आश्रय है, उस प्रधान तत्व को प्रकृति कहते हैं ।

**3. पर्याय**

**तमो व्यक्तं शिवं धाम.....ज्ञेयानि नाम धेयानि ।**

(महा-आश्वमेधिक पर्व) अनु०गीता पर्व (31/23-24)

प्रकृति को महाभारत में तम, व्यक्त, शिव, धाम, रज, योनि, सनातन प्रकृति, विकार, प्रकय, प्रधान, प्रभव, अप्यय, अनुद्रिक्त, अनून, अनुकम्प, अचल, ध्रुव, सत्, असत्, अव्यक्त और त्रिगुणात्मक कहा है ।

अन्य कोषकारों ने प्रकृति के पर्याय निम्न बताये हैं :-

कुदरत, स्वभाव, तासीर, मिजाज, धर्म, गुण, माया, प्रधान शक्ति चैतन्य, Nature, Habit, Character, Constitution, Temperament आयुर्वेदीय ग्रन्थों में प्रकृति शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया गया है :-

1. "साम्यं प्रकृतिरुच्यते" (च०सू० 9/4)
2. "धातुसाम्यं प्रकृतिरारोग्यम्" (च०सू०9/4 चक्रपाणि)
3. स्वभावमीश्वर ईश्वरं कालं यदृच्छा नियति तथा परिणामं च मन्यन्ते प्रकृति पृथुदर्शिन: ॥

- सु०सं०सू०

उपरोक्त श्लोक के अनुसार जगत का उत्पत्ति कारण प्रकृति है, तथा स्वभाव, ईश्वर, काल, यदृच्छा, परिणाम आदि को प्रकृति का पर्याय माना है ।

4. मातरं पितरं चैके ..... यदृच्छा चापरे जना:

-च०सं०सू०

सृष्टि के निर्माण के हेतु रूप में आचार्य चरक ने माता-पिता आदि कारणवाद का वर्णन किया है, जो सुश्रुत संहिता के समान चरकसंहिता में भी प्रकृति के पर्यायों का वर्णन है ।

5. तत्र प्रकृति जाति प्रसक्ता..... प्रत्यात्म नियत:

- च०सं०शा०

मनुष्य का स्वभाव जाति कुल, देश काल और प्रत्येक के व्यक्तित्व पर निर्भर है ।

**4. परिभाषा :-**

1. **शुक्रशोणित प्रकृतिं काल गर्भा... प्रकृतिमातुराहारविहार प्रकृति महाभूत... प्रकृति च गर्भ शरीरमपक्षते । एतानि... येन-येन दोषेणाधिकेनैकेनानेकेन... समनुबद्धयन्ते, तेन-तेन दोषेण गर्भोऽनुबद्धो... तत: सासा दोषप्रकृतिरुच्यते मनु... गर्भादिप्रवृता । तस्माच्छ्लेष्मला: प्रकृति... पित्तला केचित्, वातला केचित्, संसृष्ट... समधातव: केचित् भवन्ति । तेषां हि तं... व्याख्यास्याम: ॥**

-च०वि०



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



चरकानुसार गर्भ शरीर शुक्र आर्त्तव प्रकृति की काल और गर्भाशय प्रकृति की, माता के आहार-विहार की, महाभूत विकार प्रकृति की अपेक्षा करता है ।

यह प्रकृति जिस-जिस दोष के आधिक्य से हो, जैसे-एक दोष के, दो दोष के या अनेक दोष के आधिक्य में होने पर उन्हीं-उन्हीं दोषों से गर्भ भी (गर्भाशयस्थ बालक) सम्बन्धित हो जाता है । गर्भ काल से ही लेकर मनुष्य की जो प्रकृति बनती है उसे दोष प्रकृति कहते हैं । इसीलिए कुछ मनुष्य प्रकृति से वातिक, कुछ पैत्तिक, कुछ श्लेष्मिक, कुछ द्वन्द्वज प्रकृति और कुछ समधातु प्रकृति वाले होते हैं । मनुष्य की प्रकृति गर्भकाल से ही बनती है । इसके लिए उक्त 7 कारणों की भूमिका रहती है ।

2. अरुणदत्त और चक्रपाणि के मतानुसार शरीरस्वरूप स्वभाव या जन्म से ही बढ़े वातिक दोष का नाम प्रकृति है । परन्तु चरक संहिता सूत्रस्थान में धातुओं की साम्यावस्था को प्रकृति कहते हैं जो साम्यावस्था का परिचायक है, क्योंकि प्रकृति से स्वभाव लिया जाता है तो इससे शरीर और मानस प्रकृति का ग्रहण किया जाता है । इस प्रकार जन्मत: शरीर में जो दोष उत्कट होता है उसे किंवा उससे बने शरीर व मन के वैशिष्ट्य को प्रकृति कहा है ।

**प्रकृतिश्च जन्मप्रकृति वृद्धौ वातादिरुच्यते ।।**

च०सू० 17/62 चक्रपाणि टीका

3. **शुक्रशोणित संयोगे यो भवेद्दोष उत्कट: ।**
**प्रकृतिर्जायते तेन तस्या में लक्षणं श्रृणु ।।**

सु०शा० 4/62

सुश्रुतानुसार शुक्रशोणित संयोग काल में जिस दोष की उत्कटता होती है उसी से व्यक्ति की प्रकृति उत्पन्न होती है अर्थात् शुक्रशोणित संयोग प्रकृति की उत्पत्ति का कारण है । पुरुष का शुक्र और स्त्री का शोणित जिनके संयोग से गर्भ उत्पन्न होता है वे वात-पित्त-कफ युक्त होते हैं । प्रत्येक में दोषों की कुछ न्यूनाधिकता हो सकती है । जब दोनों का संयोग होता है, तब दोनों के भीतर त्रिदोषों का संयोग होकर वात से वात, पित्त से पित्त एवं कफ से कफ मिलकर गर्भ का त्रिदोष बनता है ।

इस प्रकार दोषज प्रकृतियां बनती हैं ।

| दोष प्रधानता | प्रकृति |
|---|---|
| 1. वाताधिक्य | वातक |
| 2. पित्ताधिक्य | पित्तल |
| 3. श्लेष्माधिक्य | श्लेष्मल |
| 4. द्वन्दाधिक्य | द्वन्दल |
| 5. त्रिदोष (समावस्था) | समप्रकृति |

5. **प्रकृति के प्रकार :-**

1. वात प्रकृति 2. पित्त प्रकृति
3. श्लेष्मिक प्रकृति 4. वात-पित्त प्रकृति
5. वात-कफ प्रकृति 6. पित्त-कफ प्रकृति
7. समधातु प्रकृति (सम वात-पित्त-कफ)

**सप्त प्रकृतयो भवन्ति । दोषै: पृथक् द्विश: समस्तैश्च ।।**

-सु०शा० 4/61

**समवात-पित्त कफ की श्रेष्ठता**

इस प्रकृति के पुरुष स्वस्थ व निरोग रहते हैं तथा अन्य प्रकृति के पुरुषो में रोगों के आक्रान्त होने के आसार अधिक रहते हैं । समप्रकृति के अतिरिक्त कफ प्रकृति उत्तम, पित्त प्रकृति मध्यम, वात प्रकृति हीन तथा द्विदोषज प्रकृतियाँ निन्दनीय होती हैं ।

**"तैश्च तिस्र: प्रकृतयो हीन मध्यमोत्तमा: पृथक् ।**
**समधातु: समस्तासु श्रेष्ठा निन्था द्विदोषजा: ।।**

- अ०ह०सू० 4/78

**"विषजातो यथा कीटो नेविषेण विपद्यते ।**
**तद्वत्प्रकृतो मर्त्य शक्नुवन्ति न बाधितुम् ।।"**

- सु०शा० 4/78

विष की प्रबलता से उत्पन्न हुआ कीट जिस प्रकार शरीरगत विष से मरता नहीं है, उसी प्रकार शरीरगत प्रकृतियाँ मनुष्य को कोई हानि नहीं पहुँचाती है ।

यद्यपि समधातु प्रकृति के अतिरिक्त अन्य प्रकृतियों में दोष समभाव में स्थित नहीं होते हैं परन्तु इन प्रकृतियों में बढ़े हुये दोषों द्वारा मनुष्य को हानि नहीं होती है । उदाहरणार्थ जिस प्रकार विषैले सर्पो को अपने विष के कारण कोई हानि नहीं होती है इसी प्रकार यह दोषोत्कटता



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



गर्भ में होने के कारण सहज है । अत: घातक नहीं होती है ।

दोषोत्कटता के अनुसार
(डल्हण-सुश्रुत संहीता के टीकाकार)

↓

| प्राकृत | वैकृत |
|---|---|
| (हानिकर नहीं) | (हानिकर) |

चक्रपाणि के अनुसार दोषोत्कटता - → हीन, → मध्य, → उत्तम

**6. वात प्रकृति पुरुष के लक्षण :-**

**अल्पकेश: कृशोदक्षो वाचालश्चलमानस: ।**
**आकाशचारी स्वप्नेषु वातप्रकृति को नर: ।।**

-शा०पू० 6/20

वात प्रकृति का पुरुष अल्पकेश युक्त, कृश, रूक्ष शरीर वाला वाचाल, चपल तथा स्वप्न में आकाश में विचरने वाला होता है ।

**सुश्रुत:-** वात्तिक पुरुष बकरी, गीदड़, खरगोश, चूहा, ऊँट, कुत्ता, गिद्ध, कौआ, गधा आदि के स्वभाव का होता है अर्थात् वात प्रकृति का व्यक्ति इन पशुओं के स्वभाव वाला चपल, अदृढ़, मत्सर और भीरू होता है । (सु०शा०)

3. **श्वश्रृगालोष्ट्रगृध्रा खुकाकासूकाश्च वातिका: ।**

अ०ह०शा० 3/89

गीदड़, ऊँट, गिद्ध, चूहे तथा कौवे के स्वभाव वाले व्यक्ति को वातज प्रकृति का जानना चाहिये ।

**वात के गुणानुसार प्रकृति :-**

**रुक्ष: शीतो लघु: सूक्ष्मश्चलोऽथ विशद: खर: ।** (चरक)
**तत्र रूक्षो लघु: शीत: खर: सूक्ष्मरश्चलोऽनिल: ।।**

(अ०ह०)

वात के गुण, रूक्ष, शीत, लघु, सूक्ष्म, चल, विशद तथा खर है । वात प्रकृति मनुष्यों में शारीरिक तथा मानसिक गुण इसी (गुण) के अनुरूप होते हैं ।

**वातिक प्रकृति पुरुष के शारीरिक लक्षण -**

शरीर रूक्ष, कृश, कुरूप होता है । अंग बेडौल होते हैं तथा आकृति लम्बी होती है । शरीर पर कणडरा और शिरायें उभरी रहती हैं । त्वचा रूक्ष व फटी रहती है दाढ़ी, मूंछ, केश, नख व दन्त रूक्ष होते हैं । नेत्र खर, धूसर गोल, कुरूप, मृत प्राय: होते हैं । शयन के समय उभरे प्रतीत होते हैं स्वर अत्यन्त जर्जर तथा रुक-रुक कर आने वाला होता है । अंग हर समय फड़कते हैं, तेज गति से चलता है, संधि पीड़ा होती है ।

- शीत असहिष्णु होता है अत: शीत से शरीर में कम्प तथा स्तम्भन होता है ।
- अम्ल व लवण रस की इच्छा करता है ।
- शरीर में पित्त (Temp) कम होता है तथा कम बलशाली होता है ।

**मानसिक लक्षण :-** शीघ्र कार्य प्रकृति में आदत होती है, किसी बात को शीघ्र ग्रहण कर लेता परन्तु अल्प स्मृति के कारण शीघ्र भूल जाता है, चंचल अदृढ़ स्वभाववाला, शीघ्र क्षुब्ध होने वाला, धैर्यहीन अजितेन्द्रिय, कृतघ्न, आचारहीन स्त्रियों को अप्रिय, कम संतान वाला, नास्तिक, द्वेषी, मत्सर चोरी करनेवाला स्वप्न होता है । स्वप्न में पर्वतों व वृक्षों को देखता है तथा आकाशचारी होने के स्वप्न देखता है ।

**7. पित्त प्रकृति पुरुष के लक्षण :-**

**A. अकाले पलितै: व्याप्तो धीमान् स्वेदीरोषण: ।**
**स्वप्नेषु ज्योतिषां दृष्टां पित्त प्रकृतिको नर: ।।**

शा०पू० 6/

पैत्तिक प्रकृति पुरुष के केश असमय ही श्वेत हो जाते हैं, वह बुद्धिमान् होता है, स्वेद व क्रोध अधिक आता है, स्वप्न में अग्नियाँ देखता है ।

B. पित्त प्रकृति का पुरुष सर्प, उल्लू, गन्धर्व, यक्ष बिल्ली, बन्दर, व्याघ्र रीछ और नेवले के स्वभाव के समान स्वभाव वाला होता है ।

(सु०शा० 4/

C. पित्त प्रकृति का पुरुष की आयु मध्यम, मध्यम होता है । वह विद्वान् होता है साथ ही क्लेश असहिष्णु होता है तथा व्याघ्र, रीछ, बिल्ली यक्ष के स्वभाव वाला होता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(अ०ह०शा० 3/89)

पित्त के गुणानुरूप :-

सस्नेहमुष्णं तीक्ष्णं च द्रवमम्लं सरं कटु ।''

- चरक

पित्तं सस्नेह तीक्ष्णोष्णं लघु विस्रं सरं द्रवम्

-अ०ह०

पित्त प्रकृति पुरुष में गुणों की प्रधानता होती है अत: उनके शारीरिक और मानसिक लक्षण इन गुणों के अनुरूप होते हैं ।

**शारीरिक लक्षण :-** सुकुमार, गौरवर्णी, शिथिल अंग, पेशियाँ व संधियाँ, अंगों पर झुर्री पड़ जाती है, मुख, नख, नेत्र, तालु, जिह्वा, हाथ, पैर, ताम्रवर्णी, नेत्र छोटे व कपिल वर्णी, पलकें छोटी व कम बालों वाले केश तथा रोम भी कम, कपिलवर्णी अकाल में श्वेत, पालित्य, स्वेदाधिक्य, आमगंध के कारण दुर्गन्धाधिक्य, शरीर में सामान्य से अधिक ऊष्णता, भूख व प्यासाधिक्य, शीतकामिता, मैथुन हीनता, त्वचा पर पिल्लु, व्यंग, तिल अधिक होते हैं। पिड़कायें बहुत निकलती हैं ।

**मानसिक लक्षण :-** तीक्ष्ण स्वभाव, शीघ्रक्रोधी व शान्ति श्रृंगार प्रिय, वीर, साहसी, बुद्धिमान, मेधावी, उत्तम धारणा शक्ति सम्पन्न, कुशाग्र बुद्धि वाला, तेजस्वी, भयरहित, प्रतिवादी के पक्ष का खण्डन कर बोलने वाला, उत्तम चरित्रवान, ईर्ष्यालु, स्वज में अग्निदहन, उल्कापात सूर्य अग्नि देखनेवाला, स्वर्ण देखने वाला होता है ।

**श्लेष्म प्रकृति के पुरुष के लक्षण**

**गम्भीर बुद्धि स्थूलाङ्ग स्निग्ध केशो महाबलः ।**
**स्वप्ने जलाशयालोकी श्लेष्मप्रकृति कोनरः ॥**

- शा०पू० 7/22

1. कफ प्रकृति के पुरुष गम्भीर बुद्धि, स्थूलाङ्ग काले, स्निग्ध केश, अति बलवान, स्वप्न में जलाशय, तडाग आदि देखता है ।

2. कफ प्रकृति को पुरुष ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र, वरुण, सिंह, घोड़ा, हाथी सांड, गरूड़ और हंस के स्वभाव वाला होता है । सु०सं०

3. कफ प्रकृति का मनुष्य ब्रह्मा, रुद्र, वरुण, हंस, हाथी, सिंह, घोड़ा, गौ, सांड़ के स्वभाव वाला होता है (अ०ह० 3/103)

**कफ के गुणानुरूप प्रकृति**

**गुरुशीतः मृदु स्निग्ध मधुर स्थिर पिच्छिलाः ।**

चर

**स्निग्धः शीतो गुरूर्मन्दः श्लक्ष्णो मृत्स्नः स्थिरः कफः**

(अ०ह०

इन गुणों के अनुरूप श्लेष्मल प्रकृति के पुरुष क प्रकृति होती है ।

**शारीरिक लक्षण :-** शरीर सुडौल, सुविभक अंग स्थिर, पुष्ट, बांहें लम्बी और गोल, वक्षस्थल पुष्ट ऊँचा मस्तक, निर्मल वर्ण, नीलकमल कोमल पत्र सरकण्ड प्रियंगु धान्य, गोरोचन अथवा सुवर्ण के समान, मुख प्रसन्नता दिखाई देती है । नेत्र प्रसन्न विशाल तथा कोरों सुर्खी लिये हुये होते हैं । पलकें काली, केश काले चमकदार, चाल सारयुक्त, हृद, स्थिर हाथी की तरह, स्व मेध, मृदङ्ग तथा सिंह के समान गम्भीर होता है । अत्यधिक वीर्यवान, मैथुन शक्ति सम्पन्न तथा अधिक सन्तानों वाला होता है । अत्यल्प शारीरिक विकार होते हैं ।

मानसिक लक्षण :- सात्विक चित्त वाला, सत्यवादी, धर्मात्मा स्मृतिवान, मान को महत्व देने वाला स्थिर स्वभावी, मनवचन प्रकृति में शीघ्रता नहीं करता है । क्षोभ कम करने वाला । कृतज्ञ, वीर, सहनशील, ऐश्वर्य वाला, ओजस्वी, शान्त दीर्घायु तथा धनवान । मित्रता तथा शत्रुता को स्थिर रखने वाला, आदर देनेवाला, अल्पक्रोधी ईर्ष्या, अल्पाहार-विहार वाला आयुष्मान स्वप्न में जलाशय में कमल व पक्षी तथा में देखता है ।

**सम व द्वन्द्वज प्रकृतियों के लक्षण**

सम प्रकृति पुरुष में तीनों प्रकृतियों के उत्तम लक्षण व द्वन्द्वज प्रकृति वाले मनुष्यों में उन प्रकृतियों के सम्मिलित लक्षण मिलते हैं ।

**भौतिक प्रकृतियाँ**

| प्रकृति | पुरुष के लक्षण |
|---|---|
| 1. नाभस - | मुख, कर्ण, नासिका के बड़े छिद्रो वाला दीर्घायु । |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | |
|---|---|
| वायव्य | वातिक प्रकृति पुरुष के समान । |
| आग्नेय | पैत्तिक प्रकृति पुरुष के समान । |
| वारुणेय | कफज प्रकृति पुरुष के समान । |
| पार्थिव | स्थिर, विपुल शरीरवाला, क्षमावान । |

मानस प्रकृतियाँ

संदर्भ-चरक संहिता शा०अ०4
सुश्रुत संहिता सु०शा० 4

सात्विक → उत्तम
राजस → मध्यम
तामस → हीन

## सात्विक प्रकृति

**1. ब्राह्म सत्व या बाह्य काय :-**

शुचि, सत्य प्रतिज्ञ, जितात्मा, सहकर्मियों के कर्मफल में उचित विभाजन करनेवाला, ज्ञान-विज्ञान-भाषण प्रश्नोत्तर करने में पटु स्मृतिवान्, कामक्रोध लोभ-मान-मोह, हर्ष-ईर्ष्या, अमर्ष से रहित एवं प्राणिमात्र में समदृष्टि रखनेवाला ।

**2. आर्ष सत्व या ऋषि काय :-**

यज्ञकर्त्ता, अध्येता, वृती, ब्रह्मचारी, अतिथि सेवा करने वाला मक्ष्मान-राग-द्वेष-लोभ-मोह-रोष रहित, प्रतिभावान, वक्ता, विज्ञान कुशल, धारणाशक्ति सम्पन्न होता है ।

**3. ऐन्द्र सत्व**

लक्ष्मीवान्, ग्राह्य वचन बोलने वाला, यज्ञकर्त्ता पराक्रमी, ओजस्वी, तेजस्वी, निन्दित एवं कष्टप्रद कर्मो को न करनेवाला, भविष्यदृष्टा, धर्म-अर्थ-काम में संलग्न रहने वाला होता है ।

**4. वारुण सत्व**

पराकर्मी, धैर्ययुक्त, पवित्रात्मा, अपवित्रता से द्वेष करने वाला, यज्ञकर्ता, जलक्रीड़ा प्रेमी, आनन्दित कर्म करने वाला, समयानुसार क्रोध व प्रसन्नता व्यक्त करने वाला होता है ।

**5. याम्य सत्व**

कर्त्तव्याकर्तव्य का विवेचक, वर्त्तमान काल के कर्मो को तत्परता से करनेवाला, असम्प्रहार्य, सतत जागरुक स्मृतिवान्, ऐश्यर्वशाली, रागद्वेष, ईर्ष्या, मोहादि से रहित ।

**6. कौबेर सत्व**

यथा स्थान मान करनेवाला, समाज में प्रतिष्ठित प्रचुर मात्रा में उपभोग सामग्री वाला, भरा पूरा परिवार वाला धर्म अर्थ काम का सम उपभोग पवित्र सुखद विहार करने क्रोध प्रसन्नता को स्पष्टतः व्यक्त करने वाला ।

**7. गान्धर्व सत्त्व**

नृत्य, गीत, वादन, स्रोत-कथा-इतिहास और पुराण को पढ़ने वाला, सुगन्धमाला, इत्रप्रेमी, स्वच्छवस्त्र धारणकर्ता स्त्रीविहार में रुचि रखने वाला, किसी के प्रति दोषारोपण न करने वाला होता है ।

## राजस प्रकृति

**1. आसुर सत्त्व**

वीर भाव वाला, क्रोधी स्वभाव वाला, दूसरों के छिद्रान्वेषण करनेवाला, प्रतापशाली, छलकपट वाला, भयंकर निर्दयी क्रूर एवं अपने ही मान-सम्मान में अनुरक्त रहनेवाला होता है ।

**2. राक्षस सत्त्व**

असहिष्णु, सदैव क्रोध करने वाला, अवसर पर प्रहान करनेवाला, क्रूर स्वभाव वाला, बहुत भोजन करनेवाला मांसाहारी, अधिक सोने वाला, अधिक थक जाने वाला अधिक ईर्ष्या करने वाला होता है ।

**3. पैशाचिक सत्त्व**

बहुत खाने वाला, स्त्री के वश में रहने वाला एकान्त में स्त्री के साथ रहने की इच्छा करनेवाला, अधिक भीरु-डराने वाला, विकृत रूप में आहार-विहार करने वाला ।

**4. सार्प सत्व**

क्रुद्ध, शूर, अक्रुद्ध भीरु, तीक्ष्ण स्वभाव का थकाने वाले कार्य करने वाला, भयग्रस्त जैसा दिखने और आहार-विहार में अधिक रुचि रखने वाला होता

**5. प्रेत सत्व**

सदैव भोजन प्रिय, दुःखद आचार वाला, परिश्रमी अपने धन को न बाँटने वाला, लोभी और कामचोर



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



6. शाकुन सत्व

सदैव कामेच्छा रखने वाला, आहार-विहार में संलग्न, अस्थिर चित्त, असहिष्णु और संचय न करनेवाला होता है ।

## तामस प्रकृति

**तामस प्रकृति के तीन भागों में :-**

1. **पाशव सत्त्व** - आगत बाधा निराकर्त्ता, धारणा शक्तिहीन, निन्दित आचार और आहार वाला, मैथुन परायण व निद्रालु ।

2. **मात्स्य सत्त्व** - भीरु, मूर्ख, आहार, लोभी, चञ्चल चित्त सदैव कामातुर, सदैव क्रोधी, सदैव गमनशील एवं जल को अधिक पसन्द करने वाला ।

3. **वानस्पत्य सत्त्व** - आलसी, भोजन में लीन रहनेवाला, बुद्धिहीन, ज्ञान शून्य-सा रहता है ।

## भावाश्रित प्रकृति

**(Factor related of constitution)**

1. जातिप्रसका - ब्राह्मण जाति की पवित्रता ।
2. कुल प्रसका - विशेष कुल में जन्य (राजपूतों में शौर्य)
3. देशानुपातिनी - देश विशेष में जन्म (बंगवासियों में मेधा)
4. कालानुपातिनी- अग्दान व विसर्ग काल की ऋतुओं का आधार निर्बलता सबलता
5. वयोऽनुपातिनी - वय दोष प्रधानता
   बाल्यावस्था कफ
   युवावस्था पित्त
   वृद्धावस्था वात
6. प्रत्यात्म नियता- प्रत्येक व्यक्ति के शरीर मन व इन्द्रियों पर निर्भर ।

आधुनिक मनोविज्ञान Persnality में का वर्णन :-

Personality is socially acquired given its genetic basis over the course of time. An individual is personality is regarded as normal if his actions and reaction are not grossly defferent form. Customary behaviour is society; when a personality is diagnoseed as disordered, the implication is that person deviates observably in behaviour presenting a type of abnornal personality.

***Which is well recogniged clinically***

(DAVIDSON' D MEDICINE)

**चरक ने चतुष्कोणीय रूप में प्रकृति का महत्व बतलाया है**

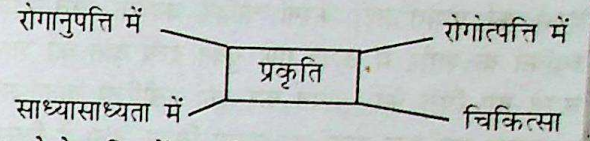


**1. रोगोनुपत्ति में प्रकृति का महत्व :-**

सूत्र स्थान के सातवें अध्याय में वर्णित संदर्भानुसार सदा आतुर वातिक व्यक्तियों को स्वस्थवृत विधि के नियमानुसार अपने दोष के विपरीत गुण वाले आहार-विहार का सेवन करना चाहिए तथा समधातु प्रकृति वाले मनुष्यों को सर्वदा सभी रसों का प्रयोग करना और उन्हें सात्म्य बताना श्रेष्ठ माना जाता है । **शारीर स्थान** के अनुसार भी अपने शरीर के विपरीत गुणों वाले कर्मों तथा आहार-विहार का क्रम से उचित रूप से प्रयोग धातुओं का साम्य (स्वास्थ्य) बनाने में सहायक है ।

**2. रोगोत्पत्ति में :-**

आयुर्वेद के प्रमुख सिद्धान्त "सर्वदा सर्वभावानां सामान्यं वृद्धिकारणम्" के अनुसार तथा विमान स्थान के छठें अध्याय के वर्णनानुसार वात, पित्त श्लेष्म प्रकृति के मनुष्य यदि क्रमशः वातिक, पैत्तिक तथा श्लेष्मल आहार-विहार का सेवन अधिक करते हैं तो वे जल्दी ही वात्तिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक रोगों से ग्रसित हो जाते हैं ।

**3. साध्यासाध्यता में -**

चरक सूत्रस्थान 10 वें अध्याय में बताया गया है कि रोग के सुखसाध्य होने के लिए अर्थात् सु-चिकित्स्य होने के लिए रोगोत्पादक दोष रोगी की प्रकृति के अनुसार नहीं होना चाहिए । यदि रोगारम्भक दोष तथा रोगी की प्रकृति समान दोष वाले होते हैं तो रोग कृच्छ्र साध्य हो जाते हैं जैसे - वातक प्रकृति के मनुष्यों में वात्तिक विकार स्वभावतः कृच्छ्रसाध्य माने जाते हैं ।

**4. चिकित्सा में प्रकृति का महत्व:-**

चरक के टीकाकार गोरखनाथ चतुर्वेदी तथा काशीनाथ पाण्डेय ने विमान स्थान के 8वें अध्याय में



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रकृति वर्णन के अन्त में कहा है कि रोगियों की परीक्षा प्रकृति के अनुसार करनी चाहिये । तात्पर्यार्थ यह है कि जिस प्रकृति का रोगी होता है, उसकी प्रकृति का ध्यान रखते हुए चिकित्सा करनी चाहिए । जैसे - पित्त प्रकृति का मनुष्य यदि वात्तिक रोग से पीड़ित हो तो वातनाशक उष्ण द्रव्यों का प्रयोग नहीं करना चाहिये क्योंकि पित्त प्रधान व्यक्ति के शरीर में ऊष्ण गुण युक्त द्रव्य वात को शान्त करते हुए पित्त को कुपित कर देगा इसीलिए वातनाशक स्नेहयुक्त एवं गुरू द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है जिससे वायु शान्त हो जाये और पित्त का विरोध भी न हो ।

**सारांश**

A. 7 प्रकार की प्रकृति

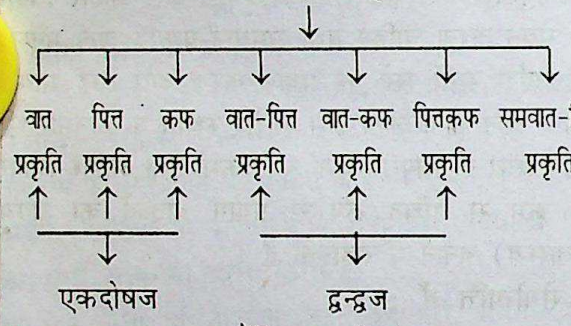


B. भौतिक प्रकृतियां

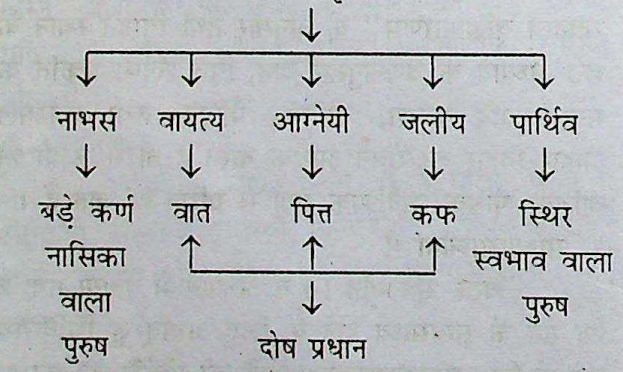


C. मानस प्रकृतियाँ संदर्भ च०शा०अ०4 सु०शा०अ०4

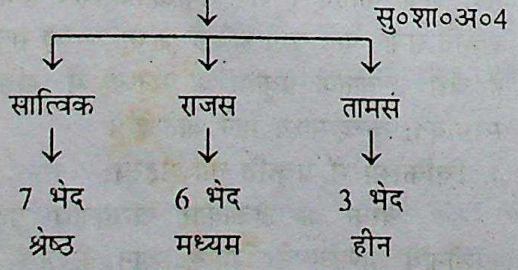


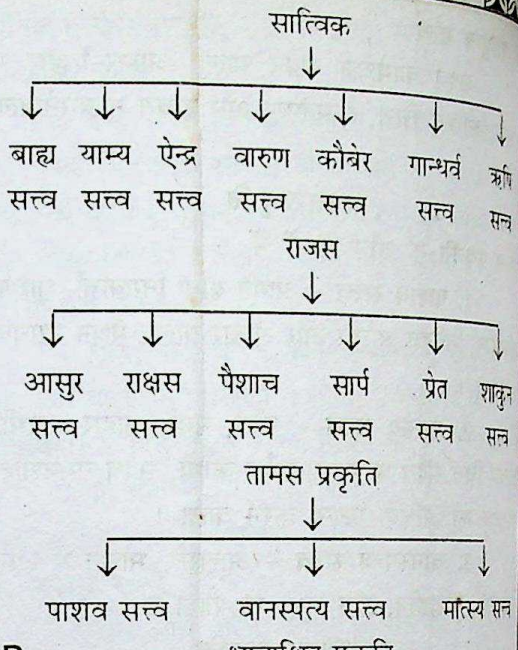


D. भावाश्रित प्रकृति

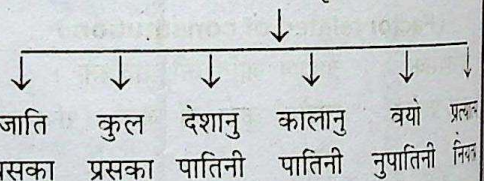


**मानसिक प्रकृतियों के सन्दर्भ में :-**

1. कल्याण अंश से सम्यक् योग के कारण ब्राह्म को अत्यन्त शुद्ध मानना चाहिये । च०शा० 4/9
2. रोष का अंश अधिक होने से प्रकृति राजस कहलाती है ।
3. तामस प्रकृति में मोहांश अधिक होता है ।

**मानसिक प्रकृति ज्ञान का महत्त्व (उपयोगिता)**

**कायानां प्रकृतिर्ज्ञात्वा त्वनुरूपां क्रियां चरेत् ।** सु०शा० 4/

पुरुष की सत्त्व, रज, तम से उत्पन्न प्रकृति देखकर चिकित्सा करनी चाहिए ।

(अ) सात्त्विक प्रकृति पुरुष सुख से उत्कर्षता दिखाकर और दुःख दीनता को न दिखाकर स्वाभाव से जीवन भोगता है ।

(ब) राजस स्वभाव का व्यक्ति सुख को घमण्ड के और दुःख को दीनता के साथ भोगता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(स) तामसी स्वभाव का व्यक्ति सर्वदा दु:खों से घिरा रहता है ।

## स्रोतस

1. व्युत्पत्ति (स्रोतस शब्द)

1. संस्कृत में "सु गतौ" धातु से "सुरिभ्यां तुट्" इस सूत्र द्वारा असुन् प्रत्यय व तुट् का आगम होकर स्रोतस शब्द सम्पन्न होता है ।

- उणादि 4/201

2. निरुक्ति

2. A. एकम् "अकृत्रिम जल वहनस्य" स्रोत (=स्रोतस न) स्रोतां अर्थात् पानी के प्राकृतिक नि:सरण का नाम है ।

B. स्रोतस शब्द की निरुक्ति एवं परिभाषा चरक संहिता में निम्न प्रकार से दी गई है :-

"स्रवणात् सोतांसि" -च०सू० 30/12

**स्रवणादिति रसादेरेव पोष्यस्य स्रवणात् ।**
**रसादेरेव: रसस्येव पोषकस्य स्रवणात् ।।**

इति चक्रपाणि टीका

पोष्य धातुओं में पोषक रक्तादि का स्पंदन होता है । --आचार्य गणनाथ सेन ने कहा है कि "स्रवणं स्पन्दनं" अर्थात् स्पन्दन जहाँ होता है, वह स्रोतस है । --चरक संहिता विमान स्थान 5/7 के अनुसार स्रोतस परिणाम प्राप्त धातुओं को अन्यत्र ले जाने के लिए वहन करने वाले होते हैं ।

**स्रोतांसि खलु परिणाममापधमानानां धातुनाम**
**भिवाहिनी भवन्ति अयनार्थेन ।"**

- च०वि० 5/7

B. सुश्रुत मतानुसार :-

**मूलात् खादन्तरं देहे प्रसूतं त्वभिवाहियत् ।**
**स्रोतस्दिति विज्ञेयं सिरा, धमनी वर्जितम् ।।**

सु०शा० 9/23

वे आकाशीय रचनाएं जो अपने मूल स्वरूप आकाश में शरीरस्थ किसी हृदयादि आशय या अंग विशेष से प्रारम्भ होकर शरीर में प्रसृत हो एवं जिनके माध्यम से बाह्य द्रव्य का अभिवहन हो, वे स्रोतस् कहलाते हैं तथा सिरा व धमनी से पृथक् होते हैं ।

आचार्य डल्हण ने इसी सु०शा० 9/3 पाठ की टीका करते हुए लिखा है कि -

**"प्राणान्नवारि रसशोणितं मांस मेदो वाहित्वं स्रोतसांम्"**

(डल्हण टीका)

प्राण अन्न, जल, रस, रक्तादि पदार्थों का जिन मार्गों से स्रवण होता है, वे सभी स्रोतस है ।

3. स्रोतस पर्याय :-

A. स्रोतांसि, सिरा, धमन्य:, रसवाहिन्य:, नाड्य, पन्थान, मार्गा: शरीर छिद्राणि, संवृतासंवृतानि, स्थाप्तनि, आशय: निकेताश्चेति शरीर धातु अवकाशानां लक्ष्यालक्ष्याणां नामानि भवन्ति ।"

(च०वि० 5/9)

B. आचार्य सुश्रुत ने :- मूलात् खादन्तरं....वर्जितम् ।।"

सु०शा० 9/25

उक्त श्लोक में खं एवं अभिवाही शब्दों का भी स्रोतस पर्याय रूप में ग्रहण होता है ।

C. इसके अतिरिक्त विभिन्न स्थानों पर क्षया, वर्त्म आदि शब्द भी स्रोतस् अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं ।

आचार्य सुश्रुत ने नव बर्हिमुख स्रोतसों का वर्णन किया है-

**"श्रवणवदननयनघ्राण गुदमेदानि नव स्रोतांसि नराणां बर्हिमुखानि"**

(External or excretory oryfices)

4. स्रोतस् वर्गीकरण :-

कुछ आचार्य स्रोतों के अधिक संख्या में होने से इन्हें असंख्य मानते हैं ।

**अति बहुत्वात् खलु केचिद् अपरिसंख्येयान्याचक्षते स्रोतांसि अपरिसंख्येयानिपुनरल्ये ।"** च०वि० 5/5

**यावन्त: पुरुषे मूर्तिमन्तो भावविशेषा: तावन्त एव अस्मिन् शरीरे स्रोतसां प्रकार विशेषा: ।"** च०वि०5

शरीर में जितने भी भाव होते हैं । उन्हें वहन करने के लिए उतने ही स्रोतस होते हैं ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



चरक मतेन शरीर में जितने भी मूर्तिमान भाव विशेष हैं उतने ही स्रोतस हैं । मूर्तिमान भाव का अर्थ है, वह रचना जो इन्द्रियों द्वारा दृश्य है । ऐसे मूर्तिमान भाव शरीर में चरक ने 17 माने हैं यथा :-

1. वात, पित्त, कफ - त्रिदोष
2. प्राण, अन्न, उदक - तीन बाह्य पदार्थ
3. रसरक्तादि सप्त धातु
4. मल मूत्र स्वेद - त्रयमूल
5. स्त्रियों में शुक्र का प्रतिनिधि आर्त्तव ।

परन्तु :-

**"प्राणोदकान्न रसरूधिरमांस मेदोऽस्थि शुक्र मूत्र पुरीष स्वेदवहानिति ।**

**वातपित्त श्लेष्माणां पुनः सर्वशरीर चराणां सर्वाणि स्रोतांसि अयनभूतानिति ।।**

च०वि० 5/6

वात, पित्त, श्लेष्मा (त्रिदोष) सर्वशरीर व्याप्त होते हैं । अतः इनको अलग से वहन करने स्रोतस नहीं होते हैं । अतः 16 के स्थान् 13 स्रोतसों (काय चिकित्सा की दृष्टि से) को चरक ने विमान स्थान में स्थान दिया है ।

गर्भ प्रकरण तथा असृग्दर चिकित्सा अध्याय में आर्तव वह स्रोतस भी बताया है । इसप्रकार चरकानुसार 14 स्रोतस माने हैं ।

आचार्य सुश्रुत ने । युग्म स्रोतों का उल्लेख किया है :-

1. प्राणवहस्रोतस -2
2. उदकवह - 2
3. अन्नवह - 2
4. रसवह - 2
5. रक्तवह - 2
6. मांसवह - 2
7. मेदवह - 2
8. शुक्रवह - 2
9. मूत्रवह - 2
10. पुरीषवह - 2
11. आर्तववह - 2

महर्षि सुश्रुत ने बाधिर्य रोग की सम्प्राप्ति में शब्द-वह स्रोतस कफ के कर्ण स्रोतों में बहुत संचित होने से कर्ण में कण्डू होती है । इस प्रकार कर्ण, स्रोतस का वर्णन किया है ।

**स्रोतस स्वरूप -**

**स्वधातु समवर्णानि वृत्त स्थूलानि अणूनि च ।**
**स्रोतांसि दीर्घाण्याकृत्या प्रतान सदृशामि च ।।**

च०वि० 5/

**सुश्रुतानुसार -**

**यथा स्वभावतः खानि मृणालेषु विशेषु च ।**
**धमनीनां तथा खामि रसोर्येरूपचीयते ।।"**

(सु०शा० 9/1

यहाँ कमल नाल तथा कमल की जड़ उदाहरण देते हुए कहा है कि जिस प्रकार कमल नाल और कमल की जड़ में छिद्र रहते हैं और उनमें पानी रिसता रहता है उसी प्रकार मानव शरीर में धमनियों के स्रोत फैले हुए हैं जिनसे पोषक रसों द्वारा शरीर धातुओं का उपचय होता है ।

अतः संयुक्त (चरक व सुश्रुत मतेन) स्रोतस स्वरूप से स्पष्ट होता है कि

1. जिन धातुओं का वहन करते हैं, उनके वर्ण के समान वर्ण के होते हैं ।
2. जिन प्राणियों को स्रोत कहा गया है, उनके अन्दर सिरा औधमनी का समावेश नहीं होता ।
3. स्रोतस की रचना की तुलना कमल नाल के अन्दर रहने वाले सूक्ष्मप्रणालिकाओं एवं छिद्रों से की है ।
4. स्रोतस रस का परिवहन करते हैं तथा शरीर के विभिन्न भागों को पोषण प्रदान करते हैं ।

**स्रोतसों का वर्णन :- (चरक व सुश्रुतमतानुसार)**

**1. प्राणवह स्रोतस :-**

**तत्र प्राणवहे द्वे तयोर्मूलं हृदयं प्राणवाहिन्यश्च (रसावाहिन्यस्च) धन्यः ।**

सु०शा० 9



CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्राणवह स्रोतस् दो हैं, इनका मूल हृदय व रसवाही धमनियाँ हैं ।

**प्राणवह स्रोतस की दुष्टि के लक्षण :-**

**चरकानुसार:-** श्वास अधिक निकलना, शरीर अधिक बंधा हुआ, कुपित थोड़ा-थोड़ा, बार-बार एवं शब्द व मूल के साथ निकलता है उस मनुष्य का प्राणवह स्रोतस दुष्ट जानना चाहिए ।

**सुश्रुतानुसार :-** शरीर झुकना, आक्रोश, मूर्च्छा, भ्रम, कम्प आदि लक्षण होते हैं ।

**दुष्टि के कारण :-**

धातुओं के क्षय से, मन से, मलमूत्रादि वेगों को रोकने से, रूक्ष वस्तु के सेवन से, अपनी शक्ति से अधिक कठोर कार्य से । (चरक)

**2. उदकवह स्रोतस**

**"उदक वहे द्वे, तयोर्मूलं तालु क्लोम च"**

**दुष्टि लक्षण :-** चरकानुसार जिह्वा, तालु, ओष्ठ, कण्ठ और क्लोम नलिका सूखकर पिपासा अधिक बढ़ जाती है । सुश्रुतानुसार इनके अधिक वेध होने पर प्यास और मृत्यु होती है ।

**उदकवह स्रोतस दुष्टि के हेतु :-** उष्ण आहार-विहार से, आम दोष से, भय से, मदिरा आदि के सेवन से अधिक भूखे रहकर अन्न के सेवन से तथा प्यास के अधिक रोकने से जलवाही स्रोतस दुष्ट हो जाते हैं । (चरक)

**3. अन्नवह स्रोतस -**

**"अन्नवहे द्वे तयोर्मूलमामाशयोऽन्नवाहिन्यश्च धमन्य:।"**

सुश्रुत शा० ।

**अन्नवह स्रोतस की दुष्टि लक्षण :-** इस स्रोतस के दुष्ट होने पर अन्न खाने की इच्छा न होना, अरुचि, अन्न का ठीक न पचना और वमन का होना आदि लक्षण होते हैं ।

- चरक संहिता

पेट का फूलना, शूल, अन्नद्वेष, वमन, प्यास, चक्कर अथवा मृत्यु तक हो सकती है ।

- सुश्रुत संहि

**स्रोतो दुष्टि के हेतु :-** अकाल में अधि भोजन करने से, अहित भोजन करने से तथा जाठराग्नि विकृत होने से अन्नवह स्रोतस दुष्ट हो जाते हैं ।

**4. रसवह स्रोतस :-**

**"रसवहे द्वे तयोर्मूलं हृदयं रसवाहिन्यश्च धमन्य:"।**

- सुश्रुत शा.

**"रसबहानां स्रोतसां हृदयं मूलं दश च धमन्य:"।**

चरक वि०

**दुष्टि के लक्षण :-** भोजन में अरुचि, ज्वर, मिचलाना, अंङ्गमर्द, पाण्डुरोग, अग्निनाश आदि - चरक

**सुश्रुतानुसार :-** शोष, मृत्यु व अन्य लक्षण हो हैं ।

**दुष्टि के हेतु :-** अत्यन्त भारी, अधिक शीत अतिस्निग्ध, अधिक मात्रा में भोजन करने से और विच करने विषयों का विचार करने से रसवाही स्रोतस दुष्ट हो हैं ।

- चर

**5. रक्तवह स्रोतस :-**

**"रक्तवहे द्वे, तयोर्मूलं यकृत प्लीहानौ रक्तवाहिन्यश्च धमन्य:"**

- सुश्रु

**"शोणितवहानां स्रोतसां यकृन्मूलं प्लीहा च"**

- चरक वि०

**दुष्टि के हेतु :-** दाह पैदा करने वाले स्निग्ध ऊष्ण और द्रव भोजन से तथा अधिक धूप से, वायु व सेवन करने से (चरक)

**दुष्टि के लक्षण :-** काला अजार, विषमज्वर पाण्डु रोग, कामला आदि रोग उत्पन्न होते हैं । कुष्ट विसर्प, पिड़का, रक्तपित्त, रक्तप्रदर, गुदापाक, मुख पाक प्लीहा वृद्धि, गुल्म, विद्रधि, नीलिका, व्यंग पिप्लु ।"

- चरक

**सुश्रुतानुसार :-** शरीर में कालापन ज्वर, दाह पाण्डुर वर्णता, रक्तस्राव की अधिकता से आँखें लाल होत



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



।

**मांसवह स्रोतस :-**

**"मांसवहानां च स्रोतसां स्नायुर्मूलं त्वक च"**

- चरक वि० 5

**मांसवहे द्वे तयोर्मूलं स्नायुत्वचं रक्तवाहश्च धमन्यः।"**

- सुश्रुत

**दुष्टि के हेतु :-** अभिष्यन्दी, स्थूल, गुरु भोज्य दार्थों के सेवन से और भोजन करने के बाद तत्काल दिन शयन करने से मांसवह स्रोतस् दुष्ट हो जाते हैं। - चरक

दुष्टि के लक्षण :- अधिमांस, अर्बुद, मांसकील, लशालूक, गलशुण्डी, पूतिमांस, अलजी, गण्ड, गण्डमाला, पजिव्हिका आदि - चरक

सुश्रुतानुसार - मांसशोष, शिराओं का गठीलापन ौर मृत्यु।

**. मेदवहस्रोतस -**

**"मेदोवहे द्वे तयोर्मूलं कटि वृक्कौ च"** -सुश्रुत

**'मेदोवहानां स्रोतसां वृक्कौ मूलं वपावहनं च।"**

- चरक वि. 5

**दुष्टि के हेतु :-** व्यायाम करने से, दिन में सोने , चर्बी वाले मांस को खाने से और अधिक मदिरा पीने दुष्ट होते हैं। - चरक

**दुष्टि के लक्षण :-** प्रमेह के पूर्वरूप होते हैं, वह द की पुष्टि से होते हैं। - चरक

**सुश्रतानुसार :-** पसीना आना, अंगों में स्निग्धता, लु में शुष्कता स्थूल, सूजन तथा प्यास अधिक लगती है।

**. अस्थिवह स्रोतस -**

**"अस्थिवहानां स्रोतसां मेदोमूलं जघनं च"**

-चरक वि० 5

**दुष्टि के हेतु :-** व्यायाम से, अधिक क्षोभ होने , हड्डियों की टक्कर या आघात से, वातल आहार-विहार रने से अस्थि वह स्रोतस दुष्ट होते हैं। - चरक

**दुष्टि के लक्षण :-** अध्यस्थि, अधिदत्त, दन्त द, दन्तशूल, अस्थि भेद, अस्थि शूल, दांतों और अस्थि विवर्णता, केश, लोम, नख, दाढ़ी में दोष दिखाई देता है।

- चरक

**9. मज्जावह स्रोतस: -**

**"मज्जावहानां स्रोतसामस्थीनि मूलं सन्धयश्च।"**

- च०वि० 5

**दुष्टि के हेतु :-** कुचल जाने से, कफ के भ जाने से, चोट लग जाने से, दब जाने से, विरुद्ध आहार-विहा के सेवन से दुष्ट हो जाते हैं।

**मज्जावह दुष्टि के लक्षण :-** शरीर की ग्रन्थियों में वेदना, भ्रम, मूर्च्छा, आँखों के आगे अंधकार न होते हु भी अन्धकार दिखाई देना, पर्वो में स्थूल मूल वाली फुन्सियाँ आदि लक्षण दिखाई देते हैं।

**10. शुक्रवह स्रोतस -**

**"शुक्रवहे द्वे, तयोर्मूल स्तनौ वृषणौ च"**

- सुश्रु

**"शुक्रवहानां स्रोतसां मेदोमूलं जघनं च"**

- चरक

**दुष्टि के हेतु :-** शुक का वेग रोकने से, अकाल में और अयोनि में, मैथुन से और शुक्रवाही स्रोत पर शस्त्र क्षार, अग्नि के लग जाने से दुष्ट हो जाता है।

**दुष्टि के लक्षण :-** नपुंसकता, मैथुन में उत्सा का न होना, यदि संतानें होती हैं तो वह रोगी, नपुंस अल्पायु और कुरूप, संतान होती ही नहीं, गर्भपात आदि लक्षण होते हैं। - चरक

**सुश्रुतानुसार** - षण्ढता, देर से वीर्य स्खल कभी-कभी रक्तयुक्त वीर्य आदि लक्षण होते हैं।

**11. मूत्रवहस्रोतस :-**

**"मूत्रवहे द्वे तयोर्मूलं बस्ति मेदंच।"**

- सुश्रु

**"मूत्रवहानां स्रोतसां बस्तिर्मूलं वङ्क्षणौ च"**

- चरक

**दुष्टि के हेतु :-** मूत्र वेग रोककर जल पीने भोजन करने से, मैथुन करने से, बार-बार मूत्र के वेगों रोकने से, शरीर के अधिक क्षीण होने से मूत्रवाही स्रोतस आघात से दुष्ट हो जाते हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



दुष्टि के लक्षण :- मूत्र का अधिक होना, रुक-रुक कर आना, विकृत मूत्र थोड़ा-थोड़ा बार-बार शूल के साथ गाढ़ा मूत्र आना ।

सुश्रुतानुसार :- बस्ति फूलना, मूत्र रुकना, शिश्न में दर्द होना ।

2. पुरीषवह स्रोतस :-

पुरीषवहे द्वे तयोर्मूलं पक्वाशयोगुदं च ।''

- सुश्रुत

पुरीषवहानां स्रोतसां पक्वाशयो मूलं स्थूल गुदं च ।''

- चरक

दुष्टि के हेतु :- मल के वेग को रोकने से, अधिक भोजन करने से, अजीर्ण होने से, भोजन के बाद शीघ्र भोजन करने पर, अग्निमंद होने से, शरीर में कृशता होने से दुष्ट हो जाते हैं ।

दुष्टि लक्षण :- कठिनता से, थोड़ा-थोड़ा शब्द व शूल के साथ अत्यन्त पतला, गांठदार, अत्यधिक मल त्याग करता है ।

सुश्रुतानुसार - उदर का फूलना, मल में दुर्गन्ध और गांठे उत्पन्न होती है ।

13. स्वेदवह स्रोतस :-

''स्वेदवहानां स्रोतसां मेदो मूलं लोमकूपाश्च''

- चरक

दुष्टि के हेतु :- व्यायाम से, अधिक धूप सेवन से, अनुचित रूप से, शीत और उष्ण आहार-विहार सेवन करने से, क्रोधाशोक भय से स्वेद वह स्रोतस दुष्ट हो जाते हैं ।

दुष्टि लक्षण :- स्वेद न आना, अधिक आना, शरीर में अधिक कठिनता, अधिक चिकनापन, त्वचा में दाह और रोमांच होना । - चरक

14. अतिवह स्रोतस -

आर्तववहे द्वे तयोर्मूलं गर्भाशय आर्तव-वाहिन्यश्च धमन्य:''

- सुश्रुत

स्रोतस दुष्टि के लक्षण :- वन्ध्यता मैथुन कर्म को असहनशीलता तथा आर्तव नाश होना इत्यादि लक्षण दिखाई देते हैं ।


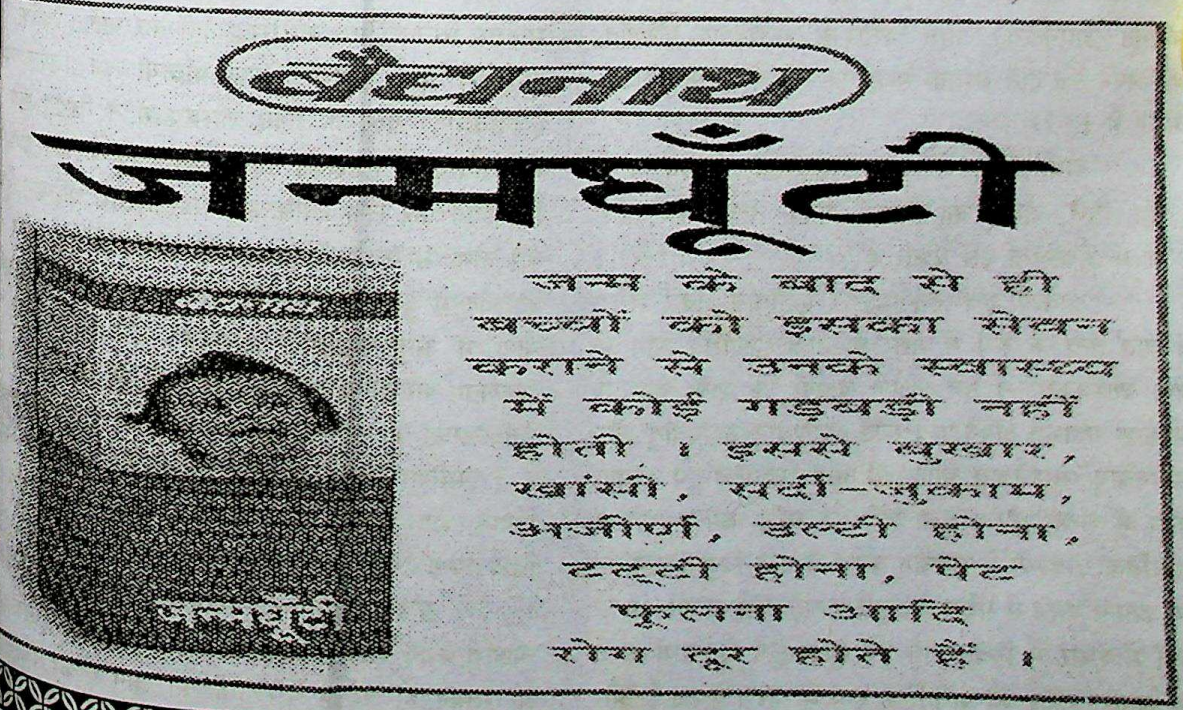





CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद का पंचमहाभूतात्मक त्रिदोष विज्ञान और चिकित्सा अनुसंधान

वैद्य इन्द्रदेव

आयुर्वेद के त्रिदोष (वात, पित्त, कफ) में ही पंचमहाभूत समाहित है और पंचमहाभूत (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) से सम्पूर्ण शरीर एवं संसार की रचना, मूर्तरूप है । इस प्रकार सामान्यत: आकार रूप धारण करने में अथवा पोषण क्रम में पृथ्वी-जल महाभूत एकीकृत होकर कफतत्व की प्रधानता होती है । आकाशतत्व वायु का प्रत्यक्ष दर्शन सूक्ष्मतम् जीव में संचालन क्रिया से हो जाता है । इसके द्वारा प्राणि मात्र का संचार-विकास व ह्रास इसी आकाशतत्व के अधीन निश्चित है । यह आकाशतत्व वायु रूप में एकीकृत होकर सम्पूर्ण स्थूल शरीर में सप्तधातु की रचना व गतिशीलता प्रदान में करने में सक्षम है । यही आकाश महाभूत वायुरूप में शरीर के स्रोतों/आशयों (नाक-कान आदि) अवयवों (फुफ्फुस-गुदा आदि) से बिना रुके चलता रहता है जिसके द्वारा सारभाग का ग्रहण एवं किट्ट/ का त्याग और सेवन किया गया सुपाच्य आहार रस से शरीर का विकास होता रहता है । आकाश-वायु, महाभूत एकीकृत होकर वात संज्ञातत्व द्वारा समग्र शरीर के कर्म सम्पादन के साथ-साथ धातुमलों को पूर्ण गतिशीलता देता है, तेज महाभूत (अग्नितत्व) "पित्त" शरीर के अन्नादिपाक परिणति को अपने तेज द्वारा सम्यक संचालित होने में सहयोग प्रदान करता है ।

हमारे शरीर में पंचमहाभूतात्मक, त्रिदोष तत्व (वात, पित्त, कफ) का निवास प्रत्येक तत्व, पांच-पांच रूपों में अवस्थित इस प्रकार है :-

आकाश एवं वायु महाभूत एकीकृत होकर शरीर में वात तत्व के रूप में शरीर के उर्ध्व (ऊपरी) भाग में जहां शास्त्रकारों ने यह लक्षण बताया कि शब्द रूप में आकाश महाभूत अपने पांच रूपों (प्राणवायु-उदानवायु और अपानवायु, समानवायु आदि) में अवस्थित रहते हुये सम्पूर्ण शरीर में संचार करता हुआ शरीर के वृद्धि कर्म व्यापार में प्राकृतिक अवस्था में सहयोग करता है तथा विकृत होने पर रोग उत्पन्न करने में सक्षम है । इस प्रकार अपने अलग-अलग रूपों में शरीर में स्थित होते हुये सुक्ष्म रूप में क्रिया करते हुये समस्त शरीर को प्राकृतिक रूप में धारण करता है और विकृत होने पर अनेक रोगों का प्रमुख कारण हो जाता है ।

तेज महाभूत (अग्नि) पित्त के रूप में शरीर में व्याप्त होकर 'रूप सन्तापे' अनुरूप शरीर के ताप (तापमान) को नियंत्रित रखकर प्राकृतिक अवस्था में शरीर का पोषण अपने पंच, रूपों (साधक पित्त, भ्राजक पित्त, आलोचक पित्त, रंजक पित्त, पाचक पित्त) से शरीर में अवस्थित रहते हुये शरीर को जीवन पर्यन्त क्रियाशील रखता है ।

उसी प्रकार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का अन्तर्गत आयुर्वेदीय मनीषियाँ (शास्त्रकारी) ने शरीर चिकित्सा के त्रिदोष तत्व (वात, पित्त, कफ) के वर्णन में कर दिया शरीर रूपी विश्व के रक्षणार्थ इस त्रिसूत्र सिद्धान्त के आधार पर स्वास्थ्य जीवन रक्षा और रोग निवारक विधि का हजारों वर्ष पूर्व ही उल्लेख कर दिया था । आज के चिकित्सा सिद्धान्त के सन्दर्भ में आवश्यकता है आयुर्वेद चिकित्सकों को अध्ययन से लेकर चिकित्सा क्षेत्र में लगातार आकर निदान चिकित्सा से साक्षात्कार करते रहना ।

आज आयुर्वेद स्नातक शास्त्र का समग्र अध्ययन की ओर ध्यान न देकर चिकित्सा-जगत में आयुर्वेद के सर्वोत्तम विज्ञान विधा को सिद्ध नहीं कर पाते । विवेक दृष्टि से पंच भौतिक क्रिया-प्रक्रिया का विश्लेषण (वर्गीकरण) द्रव्य के लिए शास्त्रकारों ने विशेष रूप वर्णन किया है । उसका गहन-चिन्तन किये बिना चिकित्सा कर लेना चिकित्सा में सफलतम परिणाम कर लेना सम्भव नहीं है । यही कारण है कि आज आयुर्वेद में कुछ इने-गिने आयुर्वेद शास्त्र विशेषज्ञ योगों में अनुसंधान-शोध (रिसर्च) कर किसी सफलतम परिणाम प्राप्त करते हैं तो उसी योग से अलग चिकित्सकों को सफल-असफल परिणाम देखने को हैं । इसलिए निदान में जहां स्थान, गुण-धर्म का निदान (डायग्नोसिस) के प्रकारों को पंचमहाभूत में किये बिना किसी रोग का निवारण साध्य नहीं है ।

पंचमहाभूतात्मक त्रिदोष विज्ञान में ज्ञान औषधि प्रयोग करने से आधुनिक चिकित्सा पद्धति के समान ही परीक्षा परिणामों का ज्ञान लेकर

प्रभारी, वैद्य सहायता केन्द्र, बैद्यनाथ रिसर्च फाउण्डेशन, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



करना आयुर्वेद के मूलभूत सिद्धान्तों की उपेक्षा है ।

**आयुर्वेद में पंचविध निदान का वर्णन :-** निमित्त, हेतु, कारण, उत्थान, प्रत्यय, आयतन का अध्ययन भी पंचभौतिक प्रक्रिया के आधार पर सम्पूर्ण विचारणीय है । त्रिदोष सिद्धान्तानुसार प्रत्येक पंचविध प्रकारों के स्थान, गुण, कर्म शरीर क्षेत्र अवयव आदि पर सम-विषम आदि क्रिया की उत्पत्ति से उत्पन्न लक्षण समूह रोगों का निदान कर तद्व्याधि विपरीत द्रव्यों के पंचभौतिक संघठन का विचार कर व्याधि विपरीत कर्मों से प्राकृतिक कर्म में लाना तथा अनुकूल-प्रतिकूल का ज्ञान और उनसे होने वाले सामान्य-विपरीत के सिद्धान्तों से प्रयोग करना है । साधारण ज्ञान स्वरूप में इन पंचभौतिक तत्वों के प्रधान अवयव भी परिगणित किये जा सकते हैं ।

जैसे इन पंचमहाभूतों का स्थान शरीर में इस प्रकार है :-

**1. आकाश-वायु (वात) तत्व :-** मस्तिष्क एवं नाड़ी संस्थान (नर्वससिस्टम) मध्यभाग और आकाश (खाली) स्थान में संचार के रूप में ।

**2. तेज (अग्नि) पित्त :-** शरीर के मध्य भाग विशेषतः आशय पक्वाशय अग्नाशय तथा हृदय में ।

**3. पृथ्वी+अप (जल) कफ :-** शरीर के मध्य भाग किंचित अधोभाग से अपान (गुदामार्ग) तक और शरीर के अन्य अव-यव, यकृत, प्लीहा, वृषण बस्ति, मेढ़लिंग, आमाशय, गुदामार्ग में आकार "स्वरूप" अवस्थित है ।

चिकित्सा कर्म के समय द्रव्यों का तारतम्य भाव का ज्ञान होना नितान्त आवश्यक है । अन्यथा एकीय चिकित्सा योग में एकमहाभूत प्रधान अवयव का प्रयास आधुनिक चिकित्सा विज्ञान (एलोपैथी) करता है । साथ ही अप/जल, महाभूत प्रधान के विरोधी होने से इस अवयव की क्रिया रचना का अभिघात करता है । यही कारण है कि आधुनिक चिकित्सा के दुष्परिणाम से एक अवयव ठीक करके दूसरे अवयव को दूषित करने तथा समग्र स्वास्थ्य का विनाश होने लगता है । यह अन्य पैथी से विशेषकर एलोपैथी से आयुर्वेद में चिकित्सा कराने आये प्रभावित रोगियों (मरीजों) को देखने और उनकी चिकित्सा आयुर्वेद निदान (डायग्नोसिस) सिद्धान्त अनुसार करने पर अनुभव हुई । आज का चिकित्सक ज्वर की चिकित्सा में उच्चताप/टेम्प्रेचर और विषाणु नाशक औषधियों के प्रयोग से पाचकाग्नि का समापन आकाश तत्व का व्यवधान (भ्रम-अनिद्रा) पृथ्वी सत्व का विपरीत गमन मलमूत्र त्याग की विषमता अति और न्यून निसरण होना तेजस तत्व-अग्नि-पित्त की क्रियाशीतला में न्यूनता उत्साह, बल वर्ण का ह्रास और रस से भी अति तेजो महाभूत प्रधान समग्र शरीर क्रियाओं का सम्पादन करने वाला हृदय भी औषधि विषों के दुष्परिणाम का कारण आधुनिक वैज्ञानिक रक्तचाप दाप तेज के प्रभाव को बाधित करने में शर्करा मेद अति होने से निष्कर्मशील जलीय अंश का आम/आंव, के कारण रस की अवरुद्धता/भारीपन से विशेष विकृति होने से कोलेस्ट्रोल, यूरिया, एलब्यूमिन, क्रेटोनिन आदि का संवर्धन उक्त आधुनिक चिकित्सा (एलोपैथिक) प्रक्रिया का परिणाम है । इस प्रकार पांचों महाभूतों के प्रधान अवयवों की क्रिया रचना में विकृति लाकर आतुर (रोगी) को अरिष्ट अल्पायु-मृत्यु की तरफ ले जाने में आयुर्वेद विपरीत चिकित्सा निदान के कारण होता है ।

चिकित्सा करने से पहले यह जान लेना जरूरी है कि मूल में विकृति किस तत्व की है क्योंकि यह शरीर पंचभौतिक है । इसलिये शरीर में पंचमहाभूत का अन्तरभाव "त्रिदोष" में कौन-कौन से दोषतत्व विकृत है, तद-अनुरूप ही निदान (डायग्नोसिस) सोचना चाहिये । अर्थात् किस अव-यव की विकृति शरीर के किस स्थान में है । जैसा कि क्लिनता-आर्द्रता जल महाभूत का गुण है क्योंकि शरीर में जलमहाभूत का प्रतिशत अधिक है । बहुसंग के समान बहुमत सर्वाधिक कार्य करने में सक्षम होता है । इसी प्रकार ये पंचमहाभूत शरीर के उत्तमांग (सिर) से लेकर पदतल (पैर के तलुओं) तक व्याप्त रहते हुये सम्यक रूप में प्राकृतावस्था में प्राणिमात्र को स्वस्थ रखते हैं और विकृत अवस्था में शरीर के सभी अवयवों (अंगों) की रचनाओं और क्रियाओं को बाधित कर अंतिम परिणति में बाधा उपस्थित करते हैं । आधुनिक/एलोपैथी चिकित्सा-विज्ञानी समग्र रोग जीवाणुमय मानते हैं और तदनुरूप औषधि



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



व्यवस्था करते हैं । जीवाणु अथवा विषाणु/वैक्टीरिया की उत्पत्ति जलमहाभूत की क्लिनता से होती है, और आयुर्वेद में श्लेष्मजन्य रोग में जीवाणु की उत्पत्ति को नजर अन्दाज नहीं किया गया । इसमें जब तेज अग्निमहाभूततत्व "पित्त" की न्यूनता होती है तो शरीर अवयवों में जन्तुमय प्रभाव होता है ।

इसका मतलब यह नहीं हुआ कि जन्तुनाशक औषधि देना ही चिकित्सा है, इसके लिये हमें मल-मूत्र विसर्जन के लिये मूत्रल, मृदुविरेचक-पंचकर्म विधि की उपविधि उपचार आदि क्रियायें तथा जीर्ण रोग में पंचकर्म, वमन, विरेचन, आस्थापनादि, क्रियाओं व सुपाच्य गुण प्रधान औषधि आहार का प्रयोग कराते हुए दोष पाचन का उपकर्म करना चाहिये ।

जैसे कि किसी को ज्वर है, 'ज्वर की प्रथमावस्था असमय अपच आमाशय में आम (कच्चा-आहार रस) की वृद्धि इसके लिये लंघन करना, उष्णोदक (गर्मजल) का सेवन उपकर्म है । फिर दीपन-पाचन व ज्वरहर औषधि चिकित्सा की जानी चाहिये । किन्तु आज का चिकित्सक सीधे ताप/टैम्प्रेचर, घटाने की औषधि दे देता है, इसका परिणाम यह होता है कि, जलमहाभूत की अपक्व अवस्था बढ़ जाती है, और ज्वर का पाचन नहीं होता, जिससे ज्वर मंथरक (टायफाइड) मंद-मंद बना रहता है, और उसी अवस्था में शरीर की सप्तधातुओं (रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र) को प्रभावित करता है । जहाँ तक तेज-तीव्र ताप (ट्रेम्प्रेचर) का सवाल है वह माथे पर शीतलजल की वस्त्रपट्टिका अथवा चन्दन का लेप लगाने व गर्मजल थोड़ा-थोड़ा पिलाते रहने से ताप कम हो जाता है । इसी प्रकार शास्त्रों में वर्णित अन्य रोगों की चिकित्सा भी की जा सकती है । जिससे हर रोग साध्य-अवस्था में हो जाता है, और रोगों को सहज ही शरीर से दूर किया जा सकता है ।

**वातजन्य रोग :-**

आमवात-संधिवात आदि में भी दर्द निवारक औषधियों की अपेक्षा दीपन-पाचन एवं रक्तवर्धक औषधि द्रव्यों का बाहुल्य होना चाहिये । वात रोगों में प्रथम उपकर्म स्वेदन, स्नेहन एवं मर्दन पश्चात, दीपन-पाचन रक्तवर्धक औषधियों का उपयोग कराना चाहिये । वात की चिकित्सा के लिये आयुर्वेद में रक्तवर्धक एवं पाचक औषधि द्रव्यों का समावेश विशेष है । इसी प्रकार आयुर्वेद की अनुभूत औषधियों में भी श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० ने रक्तवर्धक, दीपन, पाचन एवं मल निःसारक मृदुविरेचक औषधि द्रव्यों का समावेश किया है । उदाहरण जैसे बैद्यनाथ आर्थो, रूमार्थो टैब एवं रूमार्थो गोल्ड कैप्स अब सवाल उठता है कि जब शास्त्रोक्त योग रोग शमन करने में सक्षम है तो उन पर अनुसंधान-शोध (रिसर्च) की क्या आवश्यकता है ? इसका उत्तर यह है कि शास्त्रों में बहुत से योग/फार्मूले, वर्ग अनुरूप हैं, जैसे - वातार्श एवं रक्तार्श । वातार्श के लिये "अर्शकुठार रस" का वर्णन जो कि रक्तार्श में विपरीत कर्म/उष्णता कर सकता है, रक्तार्श रोग अधिकार में 'अर्शोघ्नी वटी' का वर्णन जिसका वातार्श में विशेष गुणकारक प्रभाव शायद पूर्ण नहीं है । किसी-किसी व्यक्ति को दो-दोष और त्रिदोषज दुष्ट दोष अवस्था का अर्श रोग होता है जिसके लिये कोई योग शास्त्रों में सहज अवलोकन से नहीं मिलता । इसी में अनुभूत औषधि की आवश्यकता की पूर्ति के लिये शास्त्रोक्त योगों के रहते हुए भी शोध (रिसर्च) कार्य निर्मित औषधि योग की आवश्यकता होती है, जैसे बैद्यनाथ पायराइड्स टैबलेट में रक्तवर्धक, पाचक, शोथघ्न रक्तरोधक, व्रणपूरक, मृदुविरेचक, समशीतोष्ण प्रकृति लौह-सुधा (आयरन-कैल्शियम) तत्व गुण युक्त औषधि द्रव्यों का समावेश किया गया है । अतः इस को रक्तार्श, वातार्श, त्रिदोषज अर्श की अवस्था में उपयुक्त एवं हानिरहित पूर्ण असरकारक है । "पायराइड्स टैबलेट" के साथ शास्त्रोक्त योगों में अर्श रोग के लिये अभयारिष्ट, त्रिफलाचूर्ण, अविपत्तिकर चूर्ण पायराइड्स के साथ जिस अवस्था में उपयुक्त जो योग हो उसे रोगी को प्रयोग कराया जा सकता है । यह उपलब्धता और लक्षणों की जटिलता पर निर्भर रहता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



आयुर्वेद चिकितसा पद्धति संसार की सर्वप्रथम और सर्वोत्तम जीवन-विज्ञान है, जिसमें रसायन वाजीकरण निरोग रहने के तरीके, आहार-विहार (भोजन एवं आचरण) के संदर्भ में 75 प्रतिशत और रोगोपचार के लिये मात्र 25 प्रतिशत का विवरण मिलता है । यानी सम्पूर्ण विज्ञान को दो-भागों में विभाजित कर यह बताया गया कि रोग का आगमन प्रकृति के विरुद्ध आचरण करने पर होता है । यदि फिर भी किसी कारण शरीर में रोग होता है तो उसका उपचार सहज व सरल ढंग से चिकित्सा की व्यवस्था का आयुर्वेदिक, व्यावहारिक व आधुनिकतम् विज्ञान अनुरूप सैकड़ों ग्रंथों का वर्तमान समय भारत में हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी एवं प्रान्तीय भाषा लिपियों में आयुर्वेद साहित्य उपलब्ध है । श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० प्रतिष्ठान द्वारा आयुर्वेद की सेवा सर्वविदित है, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० ने इसी उद्देश्य से लगभग 64 से भी अधिक ग्रन्थों का प्रकाशन कराया है जो आयुर्वेद में शोध (रिसर्च) कार्य में दिनों दिन औषधि निर्माण में जहां द्रव्यों की शुद्धता और उपलब्धता के लिये समय और श्रम की आवश्यकता विशेष है वहीं द्रव्यों का अध्ययन-अवलोकन भी अनिवार्य है ।

शास्त्रों में कुछ औषधीय द्रव्य प्रतिनिधि के रूप में लेने को कहा गया है, किन्तु वह तब जब वह द्रव्य योगों का गौण द्रव्य हो, प्रमुख नहीं । जैसे-हिंग्वाष्टक चूर्ण में शुद्ध हींग प्रमुख है बाकी 7 द्रव्य गौण व सहयोगी हैं । इसी प्रकार स्नायु दौर्बल्य की औषधियों में अश्वगंधा मूल प्रमुख द्रव्य है किन्तु बाजार में अश्वगंधा की दो से अधिक किस्में मिलती हैं इसका निर्णय उस समय भौतिक, रसायनिक तथा प्रत्यक्ष-समाभ्यासी (अनुभवी) द्वारा 3 परीक्षाविधियों की आवश्यकता होती है, कि विशेष गुणकारी अश्वगंधा की कौन-सी किस्म है । जबतक उपरोक्त परीक्षा से द्रव्य प्रमाणित नहीं होता तबतक शोध (रिसर्च) कार्य अधूरा ही है और संदिग्ध द्रव्य संदिग्ध ही रह जाता है । "बैद्यनाथ प्रतिष्ठान" में उपरोक्त भौतिक रसायनिक व प्रत्यक्ष कर्माभ्यासी तीनों परीक्षण की व्यवस्था विगत् 80 वर्षों से भी अधिक समय से निरन्तर होती आ रही है जो प्राचीन एवं आधुनिक दोनों समयानुरूप व्यवस्था है । रासायनिक एवं भौतिक परीक्षण के लिये प्रतिष्ठान में योग्य आयुर्वेदाचार्य एवं टैक्नीशियनों द्वारा स्वयं की प्रयोगशालाएं तथा प्रत्यक्ष कर्माभ्यासीपरीक्षण की व्यवस्था है । प्रतिष्ठान में प्रत्यक्ष कर्माभ्यास की प्रतीक कई एकड़ भूमि में वनौषधि वाटिकायें हैं, जिनमें योग्य-वनस्पति विज्ञानवेताओं द्वारा विपणन (प्लानटेशन) की व्यवस्था है ।

औषधि निर्माण और शोध कार्य में सुशिक्षित योग्य व्यक्तियों की आवश्यकता अनिवार्य है । इससे अधिक कर्माभ्यासित (अनुभवी) योग्य व्यक्ति द्वारा ही शोध कार्य प्रगति की ओर अग्रसर होने की दिशा पकड़ता है ।

बैद्यनाथ
अश्वगंधारिष्ट
मूर्च्छा, भय, घबराहट, अनिद्रा,
मंदाग्नि आदि में लाभकारी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अम्ल पित्त रोग एवं चिकित्सा

## (Hyper acidity/Acid dyspepsia/Gastroxia&Treatment)

*डॉ० एस०डी०शर्मा, एम.डी.(आयु.), पी.एच.डी. (आयु.) **डा० पूनम यादव, ईन्टर्नी

आज के इस यांत्रिक युग में जहाँ मानव अपने सारे कार्य बैठे-बैठे ही कर रहा है, वहीं जिह्वा लोलुपता के वशीभूत होकर वह कटु-अम्ल-लवण प्रधान द्रव्यों का सेवन अधिक करता है जिसके परिणामस्वरूप मानव शरीर में विपरीत प्रभाव पड़ने से अम्ल-पित्त रोग की उत्पत्ति होती है ।

अम्लं च तत् पित्तम् । विदाहाद्यम्लगुणोद्रिक्तं पित्तमम्लपित्तम् (मधुकोष)

जब विदाही आदि पदार्थों के सेवन से पित्त में अम्ल गुण की अति वृद्धि हो जाती है, तो उसे "अम्ल पित्त रोग" कहते हैं ।

पित्त → प्राकृत/अविकृत → आरोग्यता कारक
पित्त → विकृत/विदग्ध → अम्लपित्त रोग उत्पत्ति कारक

निदान ⇒

**विरूद्धदुष्टाम्लविदाहि पित्तप्रकोपिपानान्नभुजो विदग्धम् ।**
**पित्तं स्वहेतूपचितं पुरा यत्तदम्लपित्तं प्रवदन्ति सन्तः ।।**

(माधव निदान)

वर्षा ऋतु आदि के प्रभाव से पहले से ही सञ्चित पित्त जब विरुद्ध भोजन, विकृत, भोजन, अत्यधिक अम्ल, विदाही तथा पित्त प्रकोपक भोजन और पान (तक्र, सुरा, आसव, अरिष्ट, नया चावल, उड़द) करने वाले व्यक्ति विदग्धता (अधिक अम्ल) हो जाने से, अम्लपित्त उत्पन्न होता है ।

**Cause** – - Gastro – duodenal ulcer
- Excessive smoking
- Improper digestion of the carbohydrate
- Fermentation of the sugar, Acid, Acid

सम्प्राप्ति ⇒ विरुद्ध दुष्ट-विदाही आदि पित प्रकोपक आहार एवं विहार, वर्षा, ऋतु, आनूपदेश, जलार्द्र वातावरण वेगावरोध आदि निदान सेवन से → आहार की विदग्धता की अम्लता एवं संचय ↓ अविपाक क्लम, उत्क्लेश तिक्तामल उद्गार आदि

अम्ल पित्त रोग ←

**सामान्य लक्षण ⇒**

**अविपाकक्लमोत्क्लेशतिक्ताम्लोद्गार गौरवैः ।**
**हृत्कण्ठदाहारूचिभिश्चाम्लपित्तं भवेद् भिषक् ।**

(माधव निदान)

भोजन का न पचना – बिना परिश्रम के थकावट
मिचली, अरुचि – कड़वी या खट्टी डकार
शरीर में भारीपन – हृदय प्रदेश तथा गले में जलन

**भेद एवं विशिष्ट लक्षण ⇒**

- प्यास जलन, मूर्च्छा, भ्रम और मोह करने वाला
- हरे, पीले, काले या रक्त वर्ण के दुर्गन्ध युक्त अम्ल पित्त का गुदामार्ग से निकलना
- मिचली, अग्निमांद्य
- शरीर पर चकत्ते
- रोम हर्ष, स्वेद
- अंगों में पीलापन
- कफ से अनुबन्ध वाले अम्लपित्त का वमन हरे पीले, नीले-काले हल्के या गहरे लाल रंग का, बहुत खट्टा, मांस के धोवन के समान, अत्यधिक चिपचिपा
- डकारें आना ।
- कण्ठ, हृदय प्रदेश व उदर में जलन ।
- शिरोवेदना ।

⇑ अधोग ⇑ उध्वर्ग

गति भेद से

↓

भेद



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



↓

दोष संसर्ग भेद से

↓

| वाताधिक | कफाधिक | वातकफाधिक |
|---|---|---|
| - कम्पन, प्रलाप, मूर्च्छा । | - मुख से कफ का गिरना । | - दोनों के मिले-जुले लक्षण । |
| - शरीर में चुनचुनाहट । | - शरीर में भारीपन । | |
| - अंगों में शिथिलता, शूल । | - निष्क्रियता, शिथिलता । | |
| - विपरीत ज्ञान । | - वमन, अरुचि, अग्निमन्दता । | |
| - अकारण हर्ष या रोम हर्ष । | - शीत लगना । | |
| | - मुख का कफ से लिप्त रहना । | |
| | - खुजली, निद्रा । | |

चिकित्सा ⇒ 1. सुबह व शाम -

| | |
|---|---|
| कामदुधा रस | - 250 मि.ग्रा. |
| शिरःशूलादि रस (अगर सिर शूल हो तो) | - 250 मि.ग्रा. |
| गोदन्ती भस्म | - 125 मि.ग्रा. |
| लीला विलास रस | - 125 मि.ग्रा. |

1 x 2 (मधु से)

2. भोजन के ½ घण्टे पूर्व -

| | |
|---|---|
| अविपत्तिकर चूर्ण | - 3 ग्राम |
| + Soda bi carb. | - ¼ ग्राम |

1 x 2

3. भोजन के बाद-रोहितकारिष्ट-4 चम्मच (समभाग जल से)

4. रात्रि - शिवक्षार पाचन चूर्ण/ त्रिफला चूर्ण - 3 ग्रा. (उष्णोदक से)

- चन्दन, लाल चन्दन, नेत्रवाला, खस, विदारीकन्द, शतावर, पित्तपापड़ा, फालसा और सन्तरा ये सब पित्त की उग्रता का शमन करते हैं ।
- भोजन के पूर्व शीतल जल का पान, चूने का पानी और चाक मिट्टी ये आमाशय की अम्लता शान्त करते हैं ।
- मधुयष्टी - 4 ग्राम (मधु से) - दिन में 3 बार ।
- त्रिफला चूर्ण - 3 ग्राम - दो-तीन बार (मधु से) ।
- आंवले का स्वरस - 10 ग्राम/चूर्ण - 4 ग्राम (मधु से)
- कागजी नींबू को शर्बत में डालकर अपरान्ह में दें ।
- मुनक्का को मिश्री के साथ खाना चाहिए ।
- पकी लाल बेर की चटनी मिश्री या नमक मिला कर दें ।
- नारियल की गिरि मिश्री के साथ चूसना या नारियल का पानी पीना लाभदायक है ।
- पटोलादि क्वाथ, द्राक्षावलेह, द्राक्षादि चूर्ण, अविपत्तिकर चूर्ण, द्राक्षादि गुटिका, कल्याणवटक, वलादि मण्डूर, सूतशेखर रस, लीलाविलास रस, कामधेनु रस, क्षार पर्पटी, नारिकेल लवण, नारिकेल खण्ड, कुष्माण्ड खण्ड, अम्लपित्तान्तक, जीरकादिमोदक, मुक्तापिष्टी, प्रवालपिष्टी, प्रवाल पञ्चामृत आदि का सेवन लाभप्रद है ।

**पथ्य** - पुराना चावल, जौ, गेहूँ, मूंग, धान के लावा का सत्तू, जांगल पशु-पक्षियों का मांस, चीनी, मिश्री, पेठा, आंवले या सेब का मुरब्बा, गुलकन्द, मुनक्का, किर्शामिश, अनार, बेर तथा इसी तरह के कफ व पित्त शामक तिक्त, कषाय एवं मधुर रस प्रधान द्रव्यों का सेवन उत्तम है ।

- परवल, करेला, बथुआ, पालक, चौलाई, लौकी, तरोई, नेनुआ आदि तिक्त रस-भूयिष्ठ शाक उपयुक्त हैं ।
- गाय या भैंस का दूध, ताजा मक्खन या घी, धनियाँ, जीरा सेंधा नमक और कागजी नींबू देना उचित है ।
- मीठी मौसमी, केला, मीठा आम, छेने की मिठाई, खीर मलाई, रसगुल्ला, उत्तम बर्फी और पेड़ा लिया जा सकता है ।

**अपथ्य** - नया चावल, विरोधी आहार, पित्त प्रकोपक आहार, तिल, उड़द की दाल, बैंगन, टमाटर, मछली, कुलथी, दही, काँजी, अम्ल द्रव्य, गरिष्ट भोजन, मदिरा आदि अपथ्य हैं ।

- धूम्रपान, चाय, गरम भोजन, सूर्यताप सेवन, अग्नि सेवन तथा क्रोध आदि मनोविकार हानिकारक होते हैं ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# वृद्धावस्था में रसायन प्रयोग

गणेश चन्द्र उपाध्याय

चरक चिकित्सा के प्रारम्भ में ही रसायन प्रयोग विधि व रसायन द्रव्यों का वर्णन मिलता है, इससे आयुर्वेद के उद्देश्य की पुष्टि होती है ।

**स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणं आतुरस्य विकार प्रशमन च**

(च०सू० 26/24)

रसायन मुख्य रूप से जरा व्याधि के नाश करने हेतु या इसकी गति को कम करता है ।

**"यज्जराव्याधिविनाशनम् तदरसायनम्"**

(शार्ङ्गधर)

चरक मतानुसार शरीर में रसादि धातुएं अच्छी रूप में बनी रहे जिससे शरीर स्वस्थ रहे, इस प्रकार उत्तम गुणों से युक्त रसादि धातुओं की प्राप्ति जिन उपायों द्वारा होती है, उन उपायों को ही रसायन कहा जाता है ।

रसायन की परिभाषा से लक्षित होता है कि रसायन मुख्य रूप से जरा व व्याधि को दूर करता है । अत: रसायन प्रयोग वृद्धावस्था को समय से पूर्व न आने के लिए निर्देशित किया है, वृद्धावस्था में जो शारीरिक व मानसिक परिवर्तन आते हैं वही आयु को लक्षित करती है, अत: अगर इन परिवर्तनों को कम कर दिया जाए या रोक दिया जाए तो मनुष्य वृद्ध नहीं कहा जाएगा । वृद्धावस्था में निम्न परिवर्तन आते हैं ।

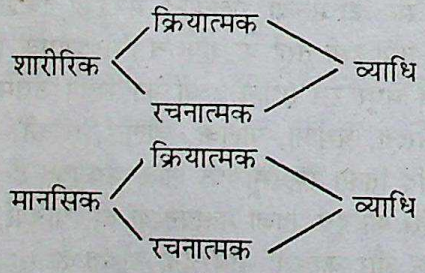


वृद्धावस्था की मानसिक स्थिति में मनुष्य की शारीरिक स्फूर्ति में ह्रास, अनिद्रा, भार की कमी, आत्मग्लानि, आत्महत्या प्रवृत्ति अवसाद, ध्यान केन्द्रित करने में असमर्थता ।

**उपचार**

आध्यात्मिकता की ओर उसका रूझान पैदा करें । आचार रसायन, प्राणायाम व योगासान औषध योगों में कुछ विशिष्ट रसायनों का प्रयोग किया जा सकता है, जैसै - च्यवनप्राश, ब्राह्म रसायन, नागबला रसायन, भल्लातक आमलकी रसायन, शिलाजतु रसायन ।

**शारीरिक स्थिति :-**

इसमें मनुष्य की त्वचा से लेकर उसके उपागों में परिवर्तन नजर आते हैं, जैसे :- त्वचा में पड़ना, सुनाई व दिखाई कम दिखाई देना, विवर्ण क्षमता की कमी, हार्मोन की कमी से उत्पादन इसके अलावा मुख्य संस्थान जैसे श्वास, हृदय, मूत्र, पाचन क्रिया, नाड़ी वह संस्थान बुरी तरह से प्रभावित हैं । रसायन द्रव्यों से इनको सुचारु रूप से चलाने का करना चाहिए ।

श्वसनवह संस्थान की क्षमता कम हो व्यक्ति को बार-बार संक्रमण होता है, उसको श्वास परेशानी होती है, साथ में बार-बार खाँसी व बलगम है ।

इस अवस्था में अगर हो सके तो पंचकर्म संशोधन कराके निम्न औषधियाँ देनी चाहिए जिसमें रूप से है ।

**एकल औषध :-** कण्टकारी, वासा, मधुयष्टी, हरिद्रा, तालीश पत्र, पुष्करमूल, तुलसी, विभीतक, शिरीष ।

**योग :-** शितोपलादि चूर्ण, तालीशादि चूर्ण घृत, वासावलेह, लंवगादि वटी, श्वास कास चिन्तामणि गोजिह्वादि क्वाथ ।

नाड़ीवह संस्थान में मुख्यत: Parkinson's Alzheimer's dementia, Hemplegia अर्दित आदि का भय रहता है । याददाश्त व अवसाद की स्थिति में रसायन द्रव्य लेने चाहिए ।

**मेध्य रसायन :-** शंखपुष्पी, मण्डूकपर्णी, यष्टीमधु, गुडूची, जटामांसी, वचा, अश्वगंधा, स्मृतिसागर रस आदि ।

PARKINSONISM में पंचकर्म (शिरो

लेक्चरर, गौड़ ब्राह्मण आयुर्वेदिक कॉलेज, ब्राह्मणवास, रोहतक, हरियाणा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



पिण्डस्वेद व शिरोविरेचन) का अच्छा लाभ है । इस रोग में कपिकच्छु चूर्ण से अच्छा लाभ मिलता है ।

पक्षाघात/अर्दित हेतु स्नेहन, स्वेदन, महानारायण तैल व महामाष तैल, वातगुजांकुंश व बस्ति का प्रयोग किया जा सकता है । इसके साथ Physiotherapy द्वारा भी अच्छा लाभ मिलता है ।

पाचन संस्थान में मुख्यत: आमाशय व्रण, ग्रहणी (Irritable Bowel syndrome, Inflammatory bowel desease, ulcerative colitis) प्रभावित होते है । इसके अलावा यकृत आदि का सुचारु रूप से काम न करना ।

परिणाम शूल (Peptic Ulcer)- पटोल, शतावरी, यष्टीमधु, अश्वगंधा, आमलकी चूर्ण, सूतशेखर रस, अविपत्तिकर चूर्ण, लीलाविलास रस, धात्री लौह, शंखभस्म, नारिकेल क्षार । गृहणी रोग में, कुटजघन वटी, पंचसकार चूर्ण, एरण्ड भृष्ट हरीतकी, यकृत हेतु, भृंगराज, कुटकी, कालमेघ, भूम्यामलकी, कुमार्यासव, यकृदादि लौह, वृहतलोकनाथ रस, आरोग्यवर्धनीवटी ।

मूत्रजनन संस्थान में BPH (प्रोस्टेट ग्रन्थि का बढ़ना) Beningn Prostate Hypertrophy, संक्रमण (Urinary tract infection) मूत्रकृच्छ्रता आदि प्रमुख समस्यायें हैं ।

इस स्थिति में तृणपंचमूल, शुद्ध कुपीलु, शिग्रु गुग्गुल, वरुणादि क्वाथ, चन्द्रप्रभा वटी, गोक्षुरादि गुग्गुल, चन्दनासव, स्वर्ण वंग साथ में वस्ति का भी प्रयोग किया जा सकता है महिलाओं में Post menopausal symtomps आम बात है । इस कारण इस पड़ाव में महिलाओं को मानसिक, शारीरिक व क्रियात्मक परिवर्तनों का सामना करना पड़ता है । इस स्थिति में ऐसी आयुर्वेदिक औषधियाँ दी जाती हैं, जिनमें प्राकृतिक रूप से Oestrogen (Phyto hormones) पाया जाता हो, जैसे उलटकम्बल, काला तिल, घृतकुमारी, चॉगेरी, करञ्जबीज, रसोन, अजमोदा, तुलसी, क्षीरविदारी, शतावरी, सोयाबीन, अखरोट आदि द्रव्य साथ में उत्तरवस्ति भी दी जाती है ।

सन्धि सम्बंधी (सन्धिवात, आमवात) समय साथ सन्धियों तरल पदार्थ की कमी के कारण सन्धियों क्षमता पर बुरा असर पड़ता है इस कारण कुछ समय पश्चा रोगी को रोजमर्रा के कार्य करने में बड़ी मुश्किल होता है इस स्थिति में पंचकर्म का भी अच्छा प्रभाव देखा गया (स्नेहन, स्वेदन, विरेचन, आस्थापन, बस्ति)

विशिष्ट औषधियों में कुपीलु, शल्लकी, गुग्गुल पंचकोल चूर्ण शतपुष्पादि चूर्ण, वैश्वानर चूर्ण, रास्ना पंचक रास्ना सप्तक क्वाथ, योगराज गुग्गुल, कैशोर गुग्गुल, सिंहना गुग्गुल ।

हृदय सम्बन्धी परिवर्तन इस उम्र में व्यक्ति उच्च रक्तचाप Hyperlipidaemia, Cardeomyopathy, Ischaemic heart disease से घिरा रहता है । रोगानुसा औषध द्रव्य Hypertension सर्पगन्धा, जटामांसी, शंखपुष्पी पुनर्नवामण्डूर, अश्वगन्धा देना चाहिए ।

**Hyperlipidaemia :-** इसमें शरीर में चर्बी अधिक होने के कारण, वह रक्तवाहिनियों में रुकावट पैद होती है । इस स्थिति में लेखनीय द्रव्य का प्रयोग किया ज सकता है । जैसे वचा, नागरमोथा, हैमवती, वचा, अतिविषा दारुहरिद्रा शुण्ठी, त्रिफला, रसोन, गुडूची, निम्ब ।

**Cardiac tonic :-** अर्जुनारिष्ट, जवाहर मोहर पिष्टी, नागार्जुनाभ्र रस, हृदयार्णव रस, पथ्यादि कल्क ।

इसी अवस्था में मधुमेह की समस्या भी रहती है जो उपरोक्त अवस्था में और ज्यादा प्रभावित करती है, अत मधुमेहनाशक औषधियों का प्रयोग करना चाहिए ।

**मधुमेहनाशक** - आमलकी, हरिद्रा, मेषश्रृंगी खदिर, मजिष्ठा, मेथिका, कारवेल्लक, विजयसार, मामज्जक जम्बू आदि का प्रयोग करना चाहिए ।

अत: स्पष्ट है कि वृद्धावस्था में महिला व पुरुष दोनों में अनेक रचनात्मक व क्रियात्मक परिवर्तन आते हैं जिस कारण मनुष्य में अनेक व्याधि उत्पन्न हो जाते हैं । इस अवस्था में अगर रसायन द्रव्यों का सेवन किया जाए तो वृद्धावस्था जन्य विकारों को कम किया जा सकता है ।



CC-0. In Public Domain. Sunkul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# शतावरी एक फायदे अनेक

*डा० रवीन्द्र सिंह यादव **डा० रमेश चन्द्र तिवारी

शतावरी भारतवर्ष में प्राकृतिक रूप में पैदा होने ाला कण्टकयुक्त एक आरोहणीय लताजातीय औषधीय ोधा है । यह मनुष्यों व पशुओं दोनों के लिए लाभदायक ौषधि है । यह Liliaceace कुल का सदस्य है, जिसके ूल (rootlet या tubers) व अंकुरों का चिकित्सा में पयोग किया जाता है । इसकी छोटी व बड़ी जातियाँ ातावरी व महाशतावरी नाम से जानी जाती है । शतावरी का ानस्पतिक नाम Asparagus racemosus है तथा यह हुसुता, भीरू, इन्दरीवरी, वरी, नारायणी, शतपदी, शतवीर्या । पीवरी पर्यायों से जानी जाती है । महाशतावरी का ानस्पतिक नाम Asparagus sarmentosus है । यह क्षिण भारत में मुख्य रूप से पायी जाती है तथा शतमूली, र्ध्वकण्टिका, सहस्रवीर्या, ऋष्यप्रोक्ता व महोदरी इत्यादि र्यायों से जानी जाती है ।

आचार्य चरक ने बल्य व वयःस्थापन महाकषाय मधुरस्कन्ध के अन्तर्गत, आचार्य सुश्रत ने विदारी गन्धादि, टकपंचमूल गण में पित्तसंशमन वर्ग के अन्तर्गत शार्ङ्गधर । शुक्रल द्रव्यों के अन्तर्गत इसका वर्णन किया है ।

**रिचय :** –

इसका क्षुप कांटेदार, बहुवर्षायु, आरोहणशील तथा ता की तरह अनेक शाखाओं से युक्त लगभग 25 से 30 ीट तक फैला रहता है । शाखाएं त्रिकोण युक्त चिकनी व रेखाचित होती हैं । इसमें वास्तविक पत्र के स्थान पर टेढे ा सीधे 1/4 से 1/2 काँटे होते हैं जो किसी जाति में धिक तो किसी में कम पाये जाते हैं । Asparagus ilicinus प्रजाति में काँटे नहीं होते हैं । पत्र के आगेवाले ाण्ड समान 1 इंच लम्बा हँसिया के समान वक्र, सुई के प्रमान व 2 से 6 एक साथ गुच्छों में होते हैं । सितम्बर-अक्टूबर ाह में इसके गुच्छों में श्वेताभ पुष्प आते हैं । तदुपरान्त उन र मटर के दाने जैसे कच्चे में हरे व पकने पर लाल फल लगते हैं । मूलस्तम्भ से स्थूल, लंबगोल दोनों सिरों पर ुकीले श्वेत मूलों का गुच्छा निकलता है ।

**गुणकर्म :-**

**शतावरी गुरूः शीता तिक्ता स्वाद्वी रयायनी**
**मेधाऽग्निपुष्टिदा स्निग्धा नेत्र्या गुल्मातिसारजित्**
**शुक्रस्तचकरो बल्यो वातापित्तास्रशोथजित**
**महाशतावरी मेध्या हृद्या वृष्या रसाश्नी**

(भ.प्र.नि.)

शतावरी गुणों में गुरू, स्निग्ध, रस में मधुर, तिक्त, विपाक में मधुर व वीर्य में शीत है । मुख्य रूप में वात पित्त शामक है । शतावरी के मूलों का संग्रह करते समय उत्तर दिशा की ओर मुँह करके किसी नुकीली वस्तु का उपयोग करते हुए "ओऽम् सर्व व्याधिनशिन्यै स्वाहा" इस उत्पादन मंत्र का उच्चारण करते रहना चाहिए, फिर मूलों को सुखाकर air tight डिब्बे में dry व cold place में रखना चाहिए तथा एक वर्ष के भीतर उपयोग कर लेना चाहिए ।

शतावरी कन्द में अनेक सैपोनिन, अमीनो एसिड, म्यूसिलेज व शर्करा पायी जाती है । सम्भवतः इसका कार्य स्त्रियों के pituitary adernal axis को प्रभावित कर हारमोन्स के स्राव को प्रभावित करता है । यह गर्भाशय के संकोचों को रोकती है तथा प्रसूता स्त्रियों में milk के production को बढ़ाती है। स्त्रियों के लिए यह रसायन उत्तम औषधि है।

आचार्य चरक ने शतावरी से सिद्ध घृत को वृष्य में (शुक्र की वृद्धि करने वाले) द्रव्यों में श्रेष्ठ कहा है ।

**घृतं शतावरीगर्भ क्षीरे दशगुणे पचेत् शर्कराषिप्पली**
**क्षौद्रयुक्तं तद् वृष्टामुन्तमम् ।**

(च0 चि0 2/3-1

**बाजीकरणार्थ** –

वृहंणी गुटिका, बाजीकरघृत, षष्टिकादि गुटिका, अपत्यकर स्वरस, वृष्टाक्षीर, अपत्यकर घृत में शतावरी का वर्णन आया है ।

बाजीकरण द्रव्य सहवास के प्रहर्ष को बढ़ाते हैं, शुक्र के दोषों को दूर करते हैं, शुक्र की उत्पत्ति बढ़ाते हैं तथा सन्तानोत्पत्ति में सहायक होते हैं । शतावरी उपयोगी है इन समस्त गुणों के साथ-साथ गर्भाशय को भी पोषण प्रदान करती है ।

आचार्य चरक ने ब्राह्यारसायन, इन्द्री रसायन (च0 चि0 1/4/6) में रसायन द्रव्यों के अन्तर्गत भी शतावरी का वर्णन किया है । रसायन द्रव्य memory, retaining power, voice व sense organs के perception को improve करते हैं तथा longivity प्रदान करते हैं व youthfulness को बनाये रखते हैं ।

शतावरी के सेवन से lactating mother में milk का production बढ़ता है ।

**शतावरीक्षीर पिष्टा पीता स्तन्यविवर्धिनी** (योग)

अर्श की प्रथम अवस्था (अदृष्ट) में शतावरी का कल्क बनाकर दूध के साथ देना चाहिए ।

(सु0 चि0 6/13)

शतावरी व गोखरू के कल्क सिद्ध दुग्ध का सेवन painful Haematuria में लाभदायक है ।

(चि. चि. 4/

रक्तासितार में शतावरी के कल्क को दुग्ध के साथ सिद्ध कर सेवनकराना चाहिए (चि. चि. 19/2

मधुर तिक्त व शीत वीर्य होने से विदाहजन्य पैत्तिकशूल, अम्लपित्त व परिणामशूल में शतावरी उपयोगी

*प्रवक्ता - क्रिया शारीर **प्रवक्ता - द्रव्य गुण ऋषिकुल राजकीय स्नाकोत्तर महाविद्यालय एवं चिकित्सालय, हरिद्वार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# औषधीय घटक द्रव्यों की अधिप्राप्ति-आयुर्वेदिक उद्योग में अतिकठिन कार्य

डा० व्ही० नागेश्वर र

आयुर्वेद विश्व की सर्वप्राचीन चिकित्सा पद्धति है। इसमें जो चिकित्सा से सम्बन्धित कच्ची औषधियां (RAW DRUGS) प्रयोग में ली जाती हैं उनका इतिहास सृष्टि की रचना के साथ ही प्रारंभ हो गया था। जब पृथ्वी की रचना हुई उसमें अनेक प्रकार के खजिन द्रव्य भी बने, उनमें भी जो औषधि उपयोगी थे उन्हें हमारे प्राचीन ऋषियों ने पहचान व परीक्षण करके नामकरण भी किया। आज जो खनिज द्रव्य हैं - उनमें रस, महारस, उपरस, साधारणरस, लौहादि धातु व उपधातुवर्ग, रत्न व उपरत्न वर्ग, सुधावर्ग आदि का द्रव्यों की सत्ता प्राक् वैदिक काल से ही था तथा आयुर्वेदज्ञों ने उन्हें वेद, उपवेद, संहिता तथा अन्य ग्रन्थों में वर्णित किया। खनिज द्रव्यों के साथ-साथ व कुछ काल बाद वानस्पतिक द्रव्यों की भी उत्पत्ति हुई तथा उन्हें भी वेदों तथा संहिताओं में वर्णित किया। औषधियों में प्रयुक्त होने वाले खनिज व वानस्पतिक द्रव्यों की पहचान औषध व आहार द्रव्यों के रूपमें सहस्त्राधिक द्रव्य लिए गए।

प्राचीनकाल में वानस्पतिक द्रव्य, खनिज द्रव्य व जान्तव द्रव्य आसानी से उपलब्ध थे। अत: भिषगवर्य उन्हें ताजा ही लेकर सद्य: औषध निर्माण करके चिकित्सा उपयोग में लेते थे। प्राचीनकाल में पर्यावरण शुद्ध होने से औषधियों में रस, गुण, वीर्य, विपाक व प्रभाव भी स्पष्ट प्रतीत होते थे।

कुछ सदियों से अतिवृष्टि, अनावृष्टि वनों के अत्यधिक दोहन होने से तथा वन्यभूमि के संकुचित होने व शहरीकरण अधिक होने से वानस्पतिक द्रव्यों का तीव्रता से ह्रास होने लगा तथा कई वानस्पतिक द्रव्य लुप्त हो गए एवं अनेक द्रव्य लुप्त होने के कगार पर है।

शहरीकरण अधिक होने से, जनसंख्या की वृद्धि से औषधि उद्योग की वृद्धि हुई तथा व्यापारिक लाभ देने के लिए वर्तमान में लाखों की संख्या में रसायनशालाएं खुल गईं। साथ ही वर्तमान चिकित्क भी स्वयं औषधि निर्म करने लगे। किन्तु जो द्रव्य लुप्त होते जा रहे हैं उन विषय में बहुमान्य स्तर पर एक मत से विचार नहीं सका। जिस प्रकार कूट कड़वा, अतीस कड़वा, अष्ट के पूरे द्रव्य वंशलोचन, आदिद्रव्य या तो उचित समय बाजार में उपलब्ध नहीं होते या सर्वथा अप्राप्त होने औषध उद्योग में उनके प्रतिनिधि द्रव्य स्वकल्पित कर डालते हैं या रहित बनाना पड़ रहा है जिस कारण निर्मित योग का पूर्ण लाभ रोगी में दृष्टि गोचर नहीं होती

कुछ जान्तव द्रव्य जैसे कस्तूरी, विषाण, हस्तिद अम्बर, आदि प्राचीन काल से ही आयुर्वेदिक औषधियों प्रयुक्त होते रहे हैं किन्तु वन्यजीवों के संरक्षण के अभाव सम्बन्धित जीवधारियों की संख्या में कमी आने से जान्तव द्रव्यों की उपलब्धता में न्यूनता हो गई, मूल्य वृ भी अधिक हो गई, एवं सरकार द्वारा प्रतिबंध लगा दि गया जिससे कस्तूरीभैरव रस, विषाणभस्म आदि जीवनदा औषधियों के निर्माण में अत्यधिक कठिनाई उत्पन्न हो ग

मादक द्रव्य अहिफेन, सुरा, भंग आदि पर सरक के कठिन प्रतिबंध हो जाने के कारण व कठिन शर्तों कारण अनेक फार्मेसियों ने उनका निर्माण बन्द कर दि जिससे तत्काल शूल व स्तम्भन आदि से संबंधित औषधि का अभाव हो गया।

खनिजों में भी अनेक द्रव्य हरताल, हिंगु मन:शिला, गौरीपाषाण, स्वर्ण, हीरकादि रत्न आदि का मू आसमान छूने लगा है। साथ ही बाजार में उनका अच स्वरूप उपलब्ध नहीं है और यदि है तो अधिक महंगे जैसे कि आज देश के किसी भी बाजार में स्वर्णमाक्षिक नाम पर विमल या पाषाण खण्डों का विक्रय हो रहा जिसमें ताम्र की मात्रा नहीं है। के बराबर है, इसका प्रमु कारण ताम्र उद्योग केवल सरकार के ही संरक्षण में

सहायक प्रोफेसर एवं फार्मेसी प्रभारी, स्नातकोत्तर विभाग, रसशास्त्र, रा. आयु. सं., आमेर रोड, जयपुर-3020

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



उका उपयोग केवल ताम्र निकालकर विक्रय किया जाता तथा अच्छा स्वर्ण माक्षिक औषध उद्योगों को व बाजार लिए उपलब्ध नहीं कराया जाता जिससे स्वर्ण माक्षिक स्म तथा उससे सम्बन्धित योगों के निर्माण में गिरावट आई ।

**थेटिक द्रव्यों का प्रचलन –**

वंशलोचन, श्वेतमूसली, हिंगु आदि द्रव्य सही व र्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होने से कृत्रिम रूप में बाजार आ रहे हैं, इन्हें औषध उद्योगों में प्रयुक्त किया जाता है निर्मित औषधि की गुणधर्मिता प्रभावित होती है ।

उपरोक्त औषध उद्योग की असुविधाओं को दूर रने के लिए विद्वानों व सरकार के सहयोग से अत्यावश्यक अतिशीघ्र निर्णय लेना आवश्यक है यथा –

1. वनों के दोहन पर प्रतिबंध लगाना ।
2. उपजाऊ भूमि के शहरीकरण पर पाबंदी ।
3. जिन वनस्पतियों की नस्ल समाप्त होने जा रही है उनका उचित संरक्षण व कृषि उद्योग लगाकर पनपाना ।
4. पर्यावरण पर अंकुश रखना ताकि हवा, पानी, भूमि प्रदूषण से बचेंगे तो औषधियां हितकारी उत्पन्न होगीं ।
5. कच्चे औषध द्रव्यों की सुगत व सस्ती परीक्षण प्रणाली का विकास करना तथा हर शहर व कस्बे में प्रयोगशालाएं खोलना ।


बैद्यनाथ

मधुमेहारि

योग दाने

मधुमेह ( डायबिटीज )
व उससे उत्पन्न
विकारों में
लाभदायक

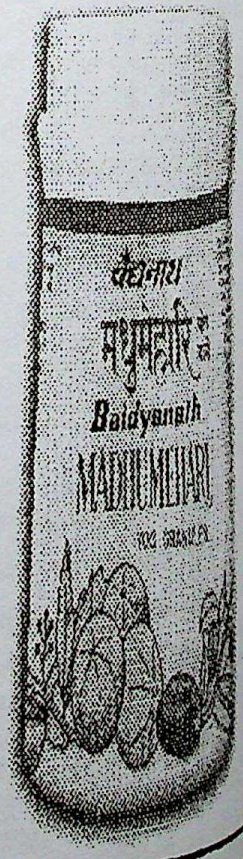





CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# केसर के मिश्रित ढंग के उपयोग पर अनुसंधान की निर्धारिता

डा० आर०बी० सक्से

**सारांश**

अनुसंधान एक उत्पादक कार्य है जो आगे की वृद्धि करता है तथा ज्ञान को बढ़ाने में खास निर्धारित करता है। यह अब सिद्ध हो गया है कि आयुर्वेद-ग्रन्थों में जो औषधियां बताई गई हैं, उनके उपयोग इत्यादि, वह पृथ्वी पर पाई जाने वाली बीमारियों के लिये बहुत प्रभावयुक्त है। इसके पश्चात् भी यह कहा जाता है कि वह इतनी उपयोगी नहीं है। अत: इस पर शोधन कार्य होना अति आवश्यक है। प्राचीन काल में केसर (फेमली-इरिडेसी) का अनेक मिश्रित ढंग का उपयोग होता था शायह वह लोग इसका उपयोग विबमारियों पर वातावरण के अनुसार चिकित्सा करते थे। यही कारण है कि प्राचीनकाल में केसर को औषधि के रूप में अलग-अलग पद्धतियों द्वारा उपयोग किया जाता था। इस लेख में मिश्रित ढंग के उपयोगों के बारे में जानने के लिए केसर का प्राचीन और आधुनिक अनुसंधान द्वारा अध्ययन किया गया है।

**प्रस्तावना**

मानव जाति हजारों वर्षों से अपने ज्ञान से पता करती आ रही है कि कौन-सी औषधि का उपयोग किस बीमारी में हो सकता है। प्राचीन काल में मानव जाति की खोज कुछ इस प्रकार थी कि जब कोई जानवर किसी पौधे को खाता था तो उसको औषधि मानते थे अन्यथा विष एवं उसका अर्न्तज्ञान के द्वारा उसका प्रयोग करते थे। 5000 साल ई०पू० में चीन में औषध-संस्कार ग्रन्थ (फार्माकोपिया) बन गया था। पुराना ग्रीक शब्द 'फार्माकोन' का अर्थ होता है औषधि वाले ही नहीं बल्कि विष वाले भी, आकर्षण, यथास्थान या जादू टोना इत्यादि। ईसा से पूर्व करीब 1500 वर्ष कई औषध पौधे, जानवर और खनिज पदार्थ धातु को औषध-वनस्पति साहित्य में मिला दिया। उसके पश्चात् कई वैज्ञानिकों ने अपने ज्ञान का उपयोग औषधियों में करने लगे जिससे प्राचीन उपयोगिता धीरे-धीरे लुप्त होती गई और नये तरीकों ने उसका स्थान ले लिया।[1,2]

क्राकस सेटाइवस (केसर) एक बारहमासी पौ है। प्राचीन काल से इसका उपयोग दुनियां में किया जा र है। केसर ग्रीक या इटली का पौधा है जो पूरी दुनियां फैल गया। अंग्रेजी शब्द सैफ्रन अरेबिक शब्द 'जाफरा से आया है। जाफरान का मतलब पीला होता है। यूना में इसे ब्यूसल-इ-जाफरान कहते हैं जिसमें ब्यूसल का अ होता है फूला हुआ हिस्सा तथा जाफरान का सैफ्रन।[3] य उदाहरण तर्कानुसार सही प्रतीत होता है। केसर औषध रूप में सन् 921 ई० के पश्चात् शिखर पर पहुंची जब अर लोगों ने इसकी खेती स्पेन में प्रारम्भ कर दी थी। वहां प आज भी इसे अरबी भाषा में 'एजाफोरान' के नाम से बोल हैं। केसर क बारे में ग्रीक, ईजिप्शन, रोमन, हिन्दू औ मुसलमान अच्छी तरह जानते थे। प्राचीन काल से आजत केसर ने औषधि के बारे में बहुत प्रख्याति प्राप्त कर ली यह उसमें भौतिक-रसायनिक गुणों/द्रव्यों का होना है। उपरोक्त लेख में प्राचीनकाल में इसकी मिश्रित ढंग क उपयोगिता का प्राचीन और आधुनिक अनुसंधान द्वारा बता का प्रयत्न किया गया है।

**वाद-विवाद**

प्राचीन काल में पौधे का मिश्रित ढंग का (यह शब्द शायद उस समय आया जब रुपया आया) उपयोग किसी भी बीमारी के प्राकृतिक औषधि तरीकों द्वारा ठीक किया जाता था ऐसी बीमारी जो अचानक हो जाती थी। हिन्दू, मुसलमान, ईजिप्शन, ग्रीक, जूस और रोमन में केसर अपनी एक अलग-जगह बनाये हुये थी इसका उपयोग धार्मिक एवं सम्मान सूचक पद्धति इत्यादि होता था। केसर को अलग-अलग भूगोल-विषयक उत्पत्ति स्थान से लिया तथा उसकी सुगंध को डायनामिक हेड-स्पेस से विश्लेषण क्रिया[4] जिससे प्रतीत हुआ कि इसके अन्दर करीब 160 वाष्पशील मिश्रित होते हैं। इसमें कई अन्य सुगंध शायद अलग-अलग जगह पर पैदा होना, सिंचाई, तोड़ना, सुखाना, जमा करना इत्यादि के प्रभाव से होता है। सुगंध का प्रभाव

औषध मानकीकरण अनुसंधान विभाग, केन्द्रीय आयुर्वेद एवं चिकित्सालय अनुसंधान संस्थान, आमखो, ग्वालियर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ादा होने से इसका गुण एवं परिणाम सम्बन्धी विश्लेषण ति आवश्यक हो गया है ।[8-10] वागभट्ट ने औषध के गुण बारे में लिखा है :-

**हुकल्पं बहुगुणं सम्पन्नं योग्य औषधम् ।** अ०हृ०सू०1/28

प्राचीन आयुर्वेद ग्रंथों में लिखा है जब किसी भी धे का पूर्ण/अंश भाग लेते हैं तो उसकी पूजा एवं हवन रता अति आवश्यक था अन्यथा उसमें औषध गुण बहुत म/नहीं होते थे । यह कर्म करने से पहले समय निर्धारित ना भी अति आवश्यक होता था । अब यह सिद्ध हो गया कि हवन कराने से कई प्रकार की गैस निकलती है जसमें एक गैस ओजोन है जो गैसों की परत से सबसे ऊपर हती है । ओजोन गैस होने से जो 'रि-डोक्स' क्रिया धीरे ोती है वह तेज हो जाती है जिससे अक्रियाशील पदार्थ मिश्रण में होते हैं वह क्रियाशील हो जाते हैं । ऐसे पौधे का जब औषधि के रूप में प्रयोग होता है तो बड़ा फायदा होता ।

केसर के खुद का भाग्य उसके रंगों पर निर्भर रहता है । क्रोसीन ज्यादा असंतृप्त है इस कारण यह ऑक्सीजन लेकर आसोमेराइज हो जाती है इस कारण इसका रंग हल्का पड़ जाता है । जब इसको इक्ट्ठा करके रखा जाता है तब इसमें ओटो-ऑक्सीडेशन क्रिया होती है जिससे इसका रंग हल्का पड़ जाता है ।[11-14] सेफ्रानल सुगन्धित अकेला पदार्थ नहीं है इसके संग ओर भी सुगन्ध वाले कम्पाउन्ड होते हैं जो अलग-अलग समय, औषध तैयार करने के तरीके इत्यादि समय पर बन जाते हैं । यहां पर केसर के कुछ प्राचीन मिश्रित ढंग के उपयोगों के बारे में दिया जा रहा है ।

**01.** केसर का ज्यादा उपयोग अलग-अलग जाति/धर्म वाले लोग इसको भगवान की पूजा में उपयोग करते हैं ।

हिन्दू इसको चिन्तामृत में डालकर मूर्ति पर चढ़ाकर लेते हैं । चरणामृत अलग-अलग द्रव्यों मिलाकर बनाया जाता है । यह द्रव्य औषध/विष हो सकता हैं । आधुनिक शोध से यह सिद्ध हो गया कि अगर चरणामृत सही तरीके से बनता है तो आरोग्य करता है ।

**02.** (अ) मौलवी/विद्वान व्यक्ति केसर के रस से लिख करते थे ।[16]

इसके रंग से जो रोशनी वापस होकर नेत्रों में है उससे कई बीमारियां नेत्रों की और त्वचा बनती नहीं या बनी हुई समाप्त हो जाती हैं ।

(आ) वैदिक काल में ब्राह्मण लाल केसर डोरे अपने यजमान की कलाइयों में बांधा करते एवं उसकी लम्बी आयु, स्वस्थ शरीर इत्यादि कामना करते थे । आजकल इस पवित्र त्योहार रक्षा-बंधन के नाम से मनाया जाता है ।[19]

ऐसा देखा गया है कि रक्षा-बंधन जिस मनाया जाता है उस समय कई प्रकार की विमारि होती हैं । जब लाल केसर के डोरे को कलाई बांधते हैं तो हाथ में वात, पित्त एवं कफ की नाड़ि होती हैं उस पर इसकी सुगन्ध शोषित होती रोशनी से इसके रंग का असर, कई नये मिश्रित तत्व का बनता इत्यादि प्रभाव शरीर पर डालते हैं जि शरीर आरोग्य रहता है ।

**04.** प्राचीनकाल में टीन की चादरों पर केसर पालिस जाती थी क्योंकि स्वर्ण बहुत महंगा होता था ।[18]

केसर की वार्निस टीन की चादरों पर लगाना उपयोगी होता था इससे उपसर्ग-विषैला तत्वों अलग-अलग समय एवं ऋतुओं में पैदा होने इसका असर उसमें रखी वस्तुओं पर होता था । विषैले तत्वों का निर्माण अगर होता है तो वातावर की गर्मी से केसर से ऐसे उपमार्ग-विषैले बनते थे जो विषैले तत्वों को समाप्त कर देते

**05.** प्राचीनकाल में रोमन लोग इसे नहाने में उपयोग थे तथा यहूदी लोगों का इसका उपयोग जरूरी था ।[20]

केसर को जब जल में घोला जाता है



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



उपसर्ग-विषैले तत्व जल में घुल जाते हैं । शायद इन उपसर्ग-विषैले तत्वों का जीवन काल बहुत कम होता है ।

अत: स्नान करने से पहले कुछ विषैले तत्व पैदा हो जाते हैं जब केसर के जल को हल्का गर्म करके स्नान करते हैं तो वह विषैले तत्व खुद समाप्त हो जाते हैं ।

06. जब निरो रोम शहर में आते थे तब वहां की गलियां तथा सड़कों पर केसर का छिड़काव किया जाता था ।[15]

प्राचीन काल में मानवजाति अच्छी तरह जानती थी कि केसर का जल/ केसर को छिड़का जाता था तो शरीर पर क्या प्रभाव होता है तथा इसको इसी तरीके से उपयोग किया जाता है । अब यह सिद्ध हो गया है कि जब सूखी केसर टूटती है तो आवाज होती है जिससे कई उपसर्ग-विषैले तत्वो का निर्माण होता है । इसके अलावा घर्षण होता है जिससे गर्मी निकलती है इससे भी उपसर्ग-विषैले तत्वों बनते हैं । यह शरीर के लिये बड़े उपयोगी होते हैं इसमें कुछ ऐसे हैं जो उत्प्रेरक का कार्य भी करते हैं । यह क्रिया समय एवं वातावरण के अनुसार बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है ।

07. प्राचीनकाल में पक्षियों को इसके रंग से रंगा जाता था तथा उनका सोचना था कि केसर लगाने से जब पक्षी के पंख गिरते हैं तो वह निरोग हो जाता है ।[16]

मानव जानता था कि पक्षी जब अपने पंख गिराता था तो उसको थोड़ी तकलीफ होती है । अगर हम केसर से इसे रंग देंगे तो जब पंख गिरायेगा तब दर्द प्रतीत नहीं होगा तथा इससे निकलने वाले उपसर्ग-विषैले तत्व शरीर को हानि से बचायेंगे ।

08. प्राचीनकाल में केसरिया रंग अपना अलग चिन्ह प्रदर्शित करता था । इससे रंगा वस्त्र जो धारण करता था उसे त्यागी समझा जाता था । यही कारण है कि आज भी इसके रंगे वस्त्र सन्यासी तथा योगी लोग धारण करते हैं ।[17]

जब मातृ-द्रव्य को अम्ल में डाला जाता है हल्का नीला लाल रंग हो जाता है तथा जब इस कपड़ा डाला जाता है तो लाल हो जाता है । ला रंग रक्त के चलने की शक्ति बढाता है तथा ज प्रकाश शरीर पर पड़ता है तो शरीर की क बीमारियों को नष्ट कर देता है । केसर में उपसर्ग-विषै तत्व अधिक होते हैं । इस कारण भी वस्त्रों क ज्यादा रंगा जाता है ।

तुलसीकृत रामचरित मानस में बताया गया है वि सीताजी के सिन्दूर से हनुमान जी ने अपने शरीर क रंग डाला था अगर किसी भी प्रकार की बीमा शरीर में हो तो खत्म हो जाये तथा शरीर की चंचलत एक सी हो जाये ।

09. प्राचीनकाल में एक समय ऐसा आया जब रोग लोग अपने पीले बाल केसर से रंगते थे ।[21]

पीले रंग की कुछ खासियत है जैसे -छोटे-छोटे कीड़े, पक्षी इत्यादि भगाना जिससे त्वचा पर बीमार न आ सके, वातावरण द्वारा बनाई गई त्वचा क एक-सा रखे, त्वचा चमकदार रहे इत्यादि। इस उपसर्ग-विषैले तत्व ज्यादा होते हैं जो समय-सम पर बनते हैं । इस कारण जब इससे बाल रंग जा हैं तो किसी प्रकार का असर नेत्र, त्वचा इत्यादि प नहीं पड़ता है ।

10. भारत-माता का जब चित्र बनाया गया तो केसर क रंग उनके माथे पर प्रदर्शित किया गया ।

यह प्रदर्शित करता है कि केसर की खेती भार में उत्तर में होती है तथा इसका उपयोग चेहरे क ऊपरी भाग (माथा) पर किया जाता है ।

उपरोक्त उदाहरणों से प्रतीत होता है कि जिसक हम मिश्रित ढंग का उपयोग बताते हैं वे बड़े उपयोग हैं । अगर इन पर अनुसंधान और किया जाये त इसके उपयोग के बारे में अधिक ज्ञान प्राप्त होगा एव इसका उपयोग खतरनाक बीमारियों में भी आन्तरिक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


उपयोग न करके बाहरी उपयोग से ठीक किया जा सकेगा ।


**र्देश-पुस्तकें :-**

01. लेले, आर०डी० 1999 मोलिक्यूलर फार्मोकोलॉजी : दी थीम ऑफ 21 स्ट सेन्चयूरी, फार्मा टाईमस 15
02. सक्सेना, आर०बी० 2000 मोलिक्यूलर फार्मोकोलॉजी : ए न्यू इन्टरफेस बिटवीन आयुर्वेद और मॉर्डन मेडीसिन, सचित्र आयुर्वेद, 53, 2, 141.
03. एफ्यू, एस०एच० 1998 एन ऑभरवियू ऑफ फार्माकोग्नोस्टीबल आइडेन्टीफिकेशन ऑफ सम हर्बल ड्रग्स, प्रोसिडिंग ऑफ दी नेशनल सेमिनार ऑन रिसर्च मेथाडोलोजी इन यूनानी मेडीसिन, नई दिल्ली-41-47 ।
04. मदन, सी०एल०, बी०एम० कपूर और यू०एस० गुप्ता 1966, सेफ्रान, इको०बोट० 20,2, 123-127
05. सामपथयू, एस०आर०, एस०शिवशंकर एण्ड वाय०एस० लेविस, 1934, सैफ्रन (क्राकस सेटाइवस लिन०)-कल्टिवेशन, प्रोसेसिंग, केमिस्ट्री एण्ड स्टीन्डर्डाइजेशन, सी आर सी क्रिट०रेव०फूड साई० न्यूट्री० 22, 2, 123-157 ।
06. फ्रेइव्यर घेयस, एफ०पी०मेयर एण्ड एच० पफन्डर 1998 नटयूरो० आरडसच० 51, 91-95ध
07. रोडेल, डब्लू एण्ड सम० पेट्रजीका 1991 एनालिसिस ऑफ वोलेटाईल कम्पोनेन्टस ऑफ सैफ्रन, जे०हाई० क्रोमेटोग्रा० 14, 771-774.
08. नेगबी, एम० 1999 सैफ्रन कल्टीवेशन: पास्ट, प्रिजेन्ट एन्ड फ्यूचर प्रोस्पेक्टस, हारबुड एकाडेमिक पवल 1. ओवर-सीस प्वल०एससः एमसटेर्डम, 1-17.
09. सक्सेना, आर०बी० 2002 ए रिव्यू ऑन कल्टीवेशन, हार्वेस्टिंग, प्रोसेसिंग एण्ड ईल्ड ऑफ सैफ्रन, सीरीज रीसेन्ट प्रोग्रेस इन मेडीसनल प्लान्ट्स, वोल. 5 (क्रोप इंप्रोवेमेन्ट, प्रोडेक्सन टेक्नोलॉजी, ट्रेड एण्ड कॉमर्स) एस.सी.आई.टेक फ्यूव.यू०एस०ए० 295-348.
10. खन्डयूरी एस०एण्ड सी०बी० झा 2002 कलेक्शन एण्ड स्टोरेज ऑफ रो ड्रग्स फोर मेनीफेक्चरिंग ऑफ आयुर्वेदिक ड्रग्स, सचित्र आयुर्वेद 55, 5, 362-366.
11. एलोन्सो, जी०एल०, आर०वरोन, आर०गोमेज, एफ० नामार्रो एण्ड एम०आर०सालीनास 1990 ओटो-ओक्सीडेशन इन सैफ्रन एट 40° से०ग्रे० एण्ड 75% रिलेटिव ह्यूमिडिटी, ज० फूड साई० 55, 595-596.
12. एलोन्सो, जी०एल०, आर०वरोन, एम०आर० सालीनास एण्ड एफ० नाभार्रो 1999. ओटो-ओक्सीडेशन ऑफ क्रोसीन एण्ड पिक्रोक्रोसीन इन सैफ्रन अन्डर डिफरेन्ट स्टोरेज कन्डीशन, वोल्ल०केम० फार्म० 132 116-120.
13. विन्ट्ररहालटेर, पी०एण्ड एम० एसट्रायूविंगस 2000 सैफ्रन रिनियूड इट्रेंस इन एन एनसीयन्ट स्पाईस, फूड रिव० इन्स० 16, 1, 39-59 ।
14. सक्सेना, आर०बी० रिव्यू ऑन केमिस्ट्री ऑफ सैफ्रन (अन्डर पब्लिकेशन)
15. नयूरीलाल, जे०पी०, आर० गुप्त एण्ड सी०के० नैओरगे 1977. सैफ्रन इन इंडिया, एस्कोनेंट एण्ड स्पाईस बुलेटिन 8,3,59-72 ।
16. बोंटले, आर० एण्ड टी० हेनरो 1980 मेडिसनल प्लान्टस, वोल्यू जे० एण्ड ए० चर्च हिल. न्यू व्यूरींगटोन स्ट्रीट, 104, गुल्यूस्ट्र पिलेस लन्डन ।
17. वाट०जी० 1972 डिस्कनरी ऑफ दी इकोनोमिक प्रोडेक्टस ऑफ इंडिया वोल्यू, पैरीओडीकल एक्सपर्ट 42-डी विवेक विहार, सहारा-नई दिल्ली 592
18. बास्कर, डी०एण्ड एम० नगबी 1985 यूसेस ऑफ सैफ्रन, ईको० बोट० 37, 2, 228-236 ।
19. बेह्यूरा, एस०के० 1999. राखी सिगनीफाइस सेलेब्रेट ईम्पोबेरमेन्ट, दी हिन्दुस्तान टाईमस - नई दिल्ली 75, 232, 13.
20. उर, ए०के० 1990 सैफ्रन-ब्रिडिंग एण्ड एग्रोटेक्नोलॉजी -ए स्टेटयूस रिपोर्ट, पवई जरनल 18-22 ।
21. रोई, एफ०सी० जआर 1966, दी यूस ऑफ सैफ्रन इन हेयर एण्ड स्काल्प प्रिपेरेशनस, ईको० बोट० 27-30 ।




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# सरस्वती पंचक ब्राह्मी (परिचय एवं खेती)

लायक राम भट्ट

वचा, ब्राह्मी, शतावरी, जटामांसी, गोरखमुण्डी, सरस्वती पंचक औषध द्रव्य कहलाते हैं । सरस्वती पंचक औषध सेवन से शरीर मस्तिष्क के सारे विकार बाहर हो जाते हैं और मनुष्य तन मन से स्वस्थ, बुद्धिमान, मेधाशक्ति से युक्त हो जाता है । विशेषकर घरेलू इलाज के रूप में इस औषध पादप का बीज पौध संग्रह कर इसे इर्द-गिर्द औषध वाटिका में उगाकर ताजा इस्तेमाल के लिए सुलभता के विचार से ब्राह्मी पर परिचर्चा की जा रही है ।

ब्राह्मी (वैकोपा मुनेरी) सरस्वती पंचक का एक घटक द्रव्य है । मण्डूकपर्णी (सट्रिएला ऐसियाटिका) ब्राह्मी से मिलता जुलता औषध पादप है । कुछ लोग मण्डूकपर्णी को ब्राह्मी के रूप में जानते व प्रयोग करते हैं, मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य संवर्धन के लिए ब्राह्मी को चिर पुरातन काल से सरस्वती पंचक के एक घटक द्रव्य के रूप में प्रयोग में लाया जा रहा है । ऋषिकाल से ही तन्मयता बढ़ाने हेतु योग साधना में ब्राह्मी प्रयुक्त होती आ रही है तो ब्राह्मी स्फूर्ति देती है । मिरगी के दौरे व उन्माद जैसी बीमारियों को यह समाप्त कर देती है । जन्मजात तुतलाने व स्वरभंग में ब्राह्मी लाभकारी है । मस्तिष्क व नाड़ीतंत्र के बलवर्धन हेतु ब्राह्मी का इस्तेमाल होता है । यह तनाव को नष्ट करती व मेधाशक्ति बढ़ाती है । मस्तिष्क के लिए ब्राह्मी पौष्टिक/ टानिक का काम करती है । ब्राह्मी से सीखने की क्षमता में वृद्धि होती है । आज के वैज्ञानिकों के मत में भी ब्राह्मी स्नायु संस्थान के रोगों के लिए सर्वश्रेष्ठ बहुमुखी औषध है । अब तो ब्राह्मी बलवर्धक औषध/रसायन के रूप में मान्यता प्राप्त कर चुकी है । मेघ बलवर्धक होने के साथ-साथ वयः स्थापक व प्रजास्थापक द्रव्य भी है । अनिद्रा रोग मिटाने, उच्चरक्तचाप घटाने, स्मृति ह्रास, हिस्ट्रीरिया या मिरगी अवसाद, चिन्ता, खांसी बुखार, पीलिया, प्रमेह आदि मनोशारीरिक रोगों को मिटाने में ब्राह्मी समर्थ औषध है । किसी आंतरिक कारण से होने वाला दर्द ब्राह्मी सेवन करने से ठीक हो जाता है । यह मस्तिष्क में प्रचुर मात्रा में रक्त पहुंचाने में सहायक द्रव्य है । मस्तिष्क की रक्तवाही नालिकाओं में रक्त के थक्के जमने या रक्तस्राव होने की स्थिति में जो मिरगी उन्माद या स्मृति ह्रास हो जाता है उसमें ब्राह्मी अत्यन्त लाभकारी साबित हुई है । ब्राह्मी ज्वर में भी हितकर है । सांस फूलना, खांसी ब्रोंकाइटिस जोड़ों के दर्द, सूजन के लिए औषध रूप में प्रयोग होती है । चर्मरोग सोराइसिस कोढ़ तक के लिए ब्राह्मी अच्छी दवा है । नर्वस सिस्टम की कमजोरी, हृदय की कमजोरी, वीर्य विकार जैसे रोगों में ब्राह्मी लाभकारी है ।

ब्राह्मी आवाज में मधुरता लाती है, आयु-बुद्धि-स्मृति वर्धन के मामले में ब्राह्मी को अत्यधिक प्रतिष्ठा प्राप्त है । यह श्रेष्ठ प्रजास्थापन द्रव्य है, यह भ्रूण विकास में भी सहायता करती है, यह उपापचय क्रियाओं को गतिशील करती है, ब्राह्मी के अन्दर मृत कोशिकाओं को पुनर्जीवित करने की अद्‌भुत क्षमता होती है । ब्राह्मी पित्त की गर्मी से तप्त शरीर में शान्ति पैदा करती है । सिर में दर्द रहना, चक्कर आना, आंत्र कृमि व आत्र की क्रिया हीनता, मानसिक अस्थिरता को स्थिर करने आदि अनेक रोगों में ब्राह्मी का प्रयोग अमृत तुल्य है ।

मण्डूकपर्णी ब्राह्मी से मिलती जुलती होती है, यह ब्राह्मी से कम मेध्य होती है, मण्डुकपर्णी त्वचा रोगों में बाह्य प्रयोग में ज्यादा लाभकर है । इसका प्रयोग गठिया या पीलिया में होता है । सूखने पर मण्डूकपर्णी के कार्यकारी तत्व प्रायः उड़ जाते हैं, इसके कार्यकारी तत्व अधिक वाष्पशील हैं, सूखने पर मण्डूकपर्णी लगभग निष्प्रभावी हो जाती है, ब्राह्मी का सुखाया हुआ चूर्ण एक वर्ष तक प्रयोग कर सकते हैं, ब्राह्मी का पूरा पौधा तिक्त कड़वापन लिए होता है, कण्डूकपर्णी का पौधा मात्र तिक्त होता है । मण्डूकपर्णी के छोटे-छोटे छतेदार पौधे होते हैं । इनके तने (रनसी) जमीन पर फैलते हैं, प्रत्येक ग्रन्थि पर से पत्र मूल एवं फूल फल निकलकर स्वतंत्र पौधों के रूप में उगे दीखते हैं, पर्वों पर एक से तीन पत्तियां निकलती हैं पत्तियां

सरांस गांव केमर, पो.आ. पिलखी 249181, टिहरी गढ़वाल, उत्तरांचल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक से भी से छः सेमी तक गोलाकार वृकाकार होती हैं, डण्ठल के स्थान पर कटावदार होते हैं । काण्ड ग्रन्थियां पर सूत्राकार जड़ों का गुच्छा निकला होता है । ग्रन्थियों पर लाल रंग के पुष्प निकलते हैं, जो गुच्छों में होते हैं, इन्हीं स्थानों पर फल व उनके अन्दर चपटे बीज निकलते हैं । ब्राह्मी या जल नीम के प्रस्सरणशील पौधे मांसल काण्डमुक्त छोटे-छोटे हर्व किस्म के पौधे होते हैं । इसकी पत्तियां आधा सेमी से ढाई सेमी की होती हैं, इस पर सफेद हल्के नीले एक सेमी से छोटे पुष्प निकलते हैं, पुष्पों पर छोटे-छोटे लम्ब गोल चपटे बीज निकलते हैं । मण्डूकपर्णी का ताजा क्षुप मसलने पर गाजर जैसी गंध देता है । स्वाद तिक्त किंचित कषाय होता है । मण्डूकपर्णी के पत्ते अपेक्षाकृत ज्यादा हरे होते हैं । ब्राह्मी का पौधा छोटा मांसल व शाकीय होता है । यह तिरछा कोणीय होता है । पत्तियां छोटी नुकीली उंगली नुमा होती हैं, पुष्प एकल अक्षीय सफेद कुछ नीलापन लिए होते हैं । अन्य मण्डूकपर्णी के गुण ब्राह्मी जैसे होते हैं । ऐसा भी अनुमान है कि यदि मण्डूकपर्णी को ताजा सेवन किया जाय तो यह ब्राह्मी के मुकाबले का ही औषध द्रव्य है । ब्राह्मी में हाड्रोकोटिल दो प्रजातियां मिलावटी रूप में भी बाजारों में आ जाती हैं ।

मण्डूकपर्णी भारत के हिमालय के पर्वतीय व तराई क्षेत्र, उत्तरांचल, उ०प्र०, बिहार में नदी-नालों नहरों के किनारे जलीय भूमि पर ठण्डे नम स्थानों पर चार हजार फुट ऊंचाई तक बहुतायत स्वयंजात उगती है । जिस क्षेत्र में यह अधिक उगी दिखाई देती है उस क्षेत्र के मनुष्य सामान्यतः ज्यादी तन मन से स्वस्थ सबल दिखते हैं । ब्राह्मी/ जलनीम भी समस्त भारत वर्ष में पंजाब से श्रीलंका तक हरिद्वार से बंगाल तक चार हजार फुट ऊंचाई तक दलदली भूमि के आस-पास स्वयंजात अच्छी उगती है । पूरे देश में ब्राह्मी की आपूर्त्ति प्रधानतः हरिद्वार से ही होती है । गंगा के किनारे की ब्राह्मी अतिगुणकारी मानी जाती हैं । यहीं से यह पूरे भारत में जाती है ।

वैद्यक दृष्टि से ब्राह्मी गुण लघु पर रस तिक्त, कषाय, मधुर, शीत वीर्य, मधुर विपाक, त्रिदोषन मेध्य, बल्य, दृद्य रक्तशोधक, कुष्ठघ्न, ज्वरघ्न, शोथघ्न मूत्रल, अनिद्रानाशक द्रव्य है । यदि उष्ण प्रकृति नुकसानदेह लगे तो सूखी धनिया से इसका निवार सकता है । ब्राह्मी की अनुपलब्धता में कवाब चीनी दालचीनी को प्रतिनिधि द्रव्य के रूप में प्रयोग कर हैं ।

ऐलोपैथिक/रसायन बतौर ब्राह्मी में एलकेलाइ सैपोनिन्स, बेलेरीन स्टेवोल, टैनिन ग्लूकोसाइडस उड़नशील तेल होते हैं । इसके अलावा प्रोटीन आदि के सभी तत्व कैल्सियम आदि लवण भी इसमें मौजू हैं । जल नीम में ब्राह्मीन नामक एलकेलाइड, स्टेरॉ मस्तिष्क तत्व पाये जाते हैं । शास्त्रों में ब्राह्मी के गु विस्तृत रूप से वर्णित हैं, हिमासरा तिक्ता लघु स्नि शीतला, कषाया मधुरा स्वादुपाका आयुष्या रसायनं (भा०प्र०)

ब्राह्मी के प्रयोग शास्त्रों में विस्तृत रूप से हैं, ब्राह्मी स्वरस श्वसन संस्थान को बलदायक है, उन्म चाप में ब्राह्मी चूर्ण 4-5 ग्राम शहद या दूध से आमवात में ब्राह्मी स्वरस की मालिश हितकर होती अग्निमांद्य, रक्तविकार शोथ आदि में ब्राह्मी सेवन लाभ देता है । गला बैठने पर ब्राह्मी स्वरस का व व मधु के साथ सेवन करते हैं । ब्राह्मी सेवन गर्भाशय के लिए भी बल्य है । उन्माद अपस्मार में स्वरस व वासा तथा शंखपुष्पी सिद्ध घृत इस्तेमाल स्मरणशक्ति या मेधाशक्ति, बुद्धिवर्धक हेतु ब्राह्मी शहद या वचा के साथ सेवन करते हैं । अनिद्रा रोग में पत्र तिलतैल में पकाकर ठण्डा रात्रि में सिर पर यदि रोग वर्षों पुराना हो तो ब्राह्मी चूर्ण गाय के दूध ताजे पत्ते गाय के दूध पर घोंटकर पिलाते हैं । स्मृति में ब्राह्मी स्वरस या चूर्ण पानी या मिश्री के साथ प्रयो हैं । दिमागी खुश्की में ब्राह्मी स्वरस को नारियल में उबालकर ठण्डा करके मालिश करते हैं, जीर्णज्व


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हृदयाघात जैसे किसी गम्भीर रोग के बाद की कमजोरी में ब्राह्मी को मधु के साथ प्रयोग करना हितकर होता है। खांसी, कासश्वास या क्षयरोग में ब्राह्मी तेल की मालिश लाभदायक होती है। ब्राह्मी दोषमुक्त शरीर में स्मृति व मेधाशक्ति को बढ़ाती है तथा मनुष्य को दीर्घायु प्रदान करती है। चरक ने ब्राह्मी को मानस रोगों की अचूक औषधि माना है। शंखपुष्पी की तरह ब्राह्मी का प्रयोग दवाई की तरह भी होता है। औषधों के अलावा बालों के तेलों में, सौन्दर्य प्रसाधनों में ब्राह्मी का उपयोग होता है।

ब्राह्मी का प्रयोग जहां तक हो सके ताजी अवस्था में ही करना चाहिए। ब्राह्मी का काढ़ा बनाकर नहीं पीना चाहिए, काढ़ा बनाने से ब्राह्मी का कार्यकारी द्रव्य उड़ जाता है। ब्राह्मी ताजी-ताजी न प्राप्त हो सके तो छाया में सुखाया हुआ चूर्ण प्रयोग करना अच्छा रहता है। ब्राह्मी का सेवन मात्रा स्वरस 10-20 ग्राम, चूर्ण 3-5 ग्राम ताजे पत्ते बड़ों को 8-12 छोटों को 2-4 नग है। ब्राह्मी का अनुपान द्रव्य पानी दूध घी व मधु मिश्री है। ब्राह्मी व मण्डूकपर्णी में भेद करते हुए इनका प्रयोग बाह्य आभ्यान्तर या ताजा अथवा चूर्ण में करना चाहिए।

चार साढ़े चार हजार फुट ऊंचाई तक ब्राह्मी के पूरे भारत में छोटे-छोटे शाकीय पौधे होते हैं, इसका काण्ड/रनर्स जलीय जमीन पर फैलता है व काण्ड की प्रत्येक ग्रन्थि पर जड़ पते पुष्प फल लगते हैं, ब्राह्मी की खेती के लिए जलीय दलदली, रेतीली दोमट, काली कपासी मिट्टी अच्छी होती है। नम जलवायु ठण्डे स्थानों पर यह स्वयंजात प्रसारित होती दिखाई देंती है, विशेष उन स्थानों पर जहां ठण्डा पानी रेतीली ह्यमस मिट्टी के ऊपर रिसता हुआ बहता है एवं जहां खरपतवार न्यूनतम होता है। ब्राह्मी की खेती के लिए खेत को वर्षा से पूर्व दो तीन बार जोतकर 10-12 ट्राली गोबर की खाद प्रति एकड़ खेत में डालकर मिलाकर जलीय जमीन पर अप्रैल से अगस्त तक कभी भी किन्तु वर्षा आधारित फसल में रूप में जून जुलाई में वर्षारम्भ होने पर, 2-2 फुट पर कटिंग रोपकर पौधों को पानी दे देना चाहिए। खेत को सींचकर दलदला बना देना अच्छा होता है। प्रति एकड़ तीस हजार या पांच क्विन्टल के करीब कटिंग्स की आवश्यकता होती है। बीज से भी बुआई कर सकते हैं। खेत में नमी रहनी जरूरी है, वर्षात में 10-15 दिनों में तत्पश्चात महीने के करीब में निराई करते रहना चाहिए।

यदि बीज पौध नर्सरियों में मिल जाय तो बेहतर है यदि नहीं मिलती तो जहां ब्राह्मी स्वयंजात उगती है वहां परसे प्रसरणशील पौधों को जो 5-10 स्थानों पर जहां-तहां गांठे होती हैं वहां जड़े लिए हुए व पौधे का रूप लिए हुए होता है। कुटले की सहायता से पूरे पौधे को सभी गांठों पर की जड़ों सहित उखाड़कर हाथ में लेकर फिर काण्ड पर से जितनी जड़वाली गांठें मिले उतने टुकड़े कर इन टुकड़ों को पौध के रूप में इस्तेमाल करना चाहिए। अच्छा यह हो कि अधिकतम पौधे लेकर अपनी बाग वाटिका में एक क्यारी में रोपकर प्रसारीकरण कराया जाय जब जहां जरूरत पड़ इसे प्लांटिंग मैटीरियल के रूप में प्रयोग में लाया जाय। एक बेल से 10-12 से अधिक पौधे मिल सकते हैं। फल बीज पकने पर बीज संग्रह करने चाहिए। जाड़े से पहले पंचांग संग्रह करने के लिए पूरे-पूरे पौधों को उखाड़कर धोना छाया में 8-10 दिन सुखाना या ड्रायर में कम ताप पर सुखा कर पंचांग में शुष्क मुखबंद पात्रों में या जूट के थैलों में अनार्द्र शीतल स्थान पर संग्रह करना चाहिए। ब्राह्मी के पते बीज पूरा पंचांग बिक जाता है, प्लांटिंग मैटीरियल के लिए ताजी कटिंग्स भी बिक जाती है। यह गिनती या किलो के हिसाब से बिक सकती हैं। ब्राह्मी सूखा पंचांग दो ढ़ाई हजार रुपये प्रति क्विंटल, बीज हजार रुपये किलो के करीब व बिक सकते हैं। ब्राह्मी की फसल से 60-70 क्विंटल प्रति एकड़ पंचांग प्राप्त हो सकता है, इस तरह से ब्राह्मी की खेती से छः महीने में प्रति एकड़ डेढ़ लाख रुपये के करीब उत्पादन सम्भव है।

पानी के स्रोतों, जलबहाव वाले नदी नालों नहरों के आस-पास या अन्य ठण्डे नमस्थानों पर जहां ब्राह्मी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


स्वयंजात उगती है । इन स्थानों पर ब्राह्मी/मण्डूकपर्णी का प्रसारीकरण सिर्फ निराई गुड़ाई छंटाई, रोपाई से आसानी से हो सकता है, ऐसा करना आसान भी है और फायदेमंद भी, बेकार बिना उपयोग पड़ी जलीय भूमि या नम ठण्डी जमीन पर ब्राह्मी का स्वस्थान प्रसारीकरण इन-सीटू खेती कहलाता है, यह भी जड़ी-बूटी कृषिकरण वित्तीय प्रोत्साहन के अन्तर्गत का केन्द्रीय औषध एवं सगंध पादप बोर्ड द्वारा निर्देशित कार्यक्रम है । बर्हिस्थान कृषिकरण के लिए हर ब्लाक के (उत्तरांचल) मास्टर ट्रेनर्स जिला भेषज, फारेस्ट एनजीओ इत्यादि से सम्पर्क कर सकते हैं ।

ब्राह्मी के अन्दर हैवी पार्टिकल्स (पारा, ताम्बा) जैसे तत्वों का अभाव या कमी होने से ऐसे तत्वों के शरीर से बाहर निकालने की समस्या नहीं आती ऐसा अनुमान है । अत: ब्राह्मी का निरपवाद प्रयोग और अतिमहत्व का औषध द्रव्य होना महसूस करते हुए घरों में, गमलों पर बाग-वाटिकाओं कीचन गार्डनों, इसके घरेलू इस्तेमाल आदि के लिए पैदावार भी इन-सी टू कार्यक्रम के अन्तर्गत जरूरी है । जो स्थान ब्राह्मी के प्राकृतिक वास है उन स्थानों के कृषकों या अन्य भूमिधरों, जंगलकर्मियों को इसकी खेती या किसी भी तरह हो प्रसारीकरण करना चाहिए । शहरवासियों को ब्राह्मी का उत्पादन और भी महत्व का है । ब्राह्मी एक ऐसा औषध द्रव्य है कि अकेली यह औषध प्रजाति आधी चौथाई स्वास्थ्य समस्याओं का सीधे घरेलू चिकित्सा के रूप में निराकरण कर सकती है ।

एक वैद्य ने एक महात्मा का बताया एक चमत्कार प्रयोग बताया है, इतवार के दिन जब पुष्य नक्षत्र हो, ब्राह्मी बहुतायत हो उस स्थान कोई मुर्दा जला या गड़ा हो, शनिवार को उस स्थान पर जाना ब्राह्मी को नमन व निवेदन करना कि मैं अपने अभीष्ट कार्य सिद्धि के तुम्हें लेने आऊंगा, मेरा निमंत्रण स्वीकार करो, धूप ब्राह्मी का पूजन करके लौट आवें । इतवार को नक्षत्र हो उस घड़ी में ब्राह्मी के पास जाना बिना व रास्ते में बिना किसी से बातचीत किए ब्राह्मी उखाड़कर लानी, छाया में सुखानी छांट कूटकर शहद, शर्करा किसी अनुपान द्रव्य के साथ चवनी सेवन करना, लगातार छ: माह सेवन करने से व्यक्ति के सम्मान वेगवान व सूर्य के समान तेजस्वी बनता है

जमनोत्री, गंगोत्री, केदार, बद्री, उत्तरांचल चारधाम वर्ष में सदा रहने वाली हिमालयी बर्फ के काफी दूर-दूर है यद्यपि बहुत पुराने बर्फीली रास्ते निकट भी हैं, इन धामों के नजदीकी लोगों में चर्चा है कि चारों तीर्थों में नित्य एक ही पुजारी करता था । आजकल के मनुष्य के लिए यह कल्पना है हो सकता है ब्राह्मी जैसे द्रव्यों के सेवन से सम्भव रहा हो, यदि ऐसा था तो आज भी ब्राह्मी जैसे के सेवन से भारतीय ऐथलीट औलम्पिक खेलों में तो हासिल कर ही सकते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आंवला : एक बहूमूल्य औषधि

स्मिता गुप्ता* एडवीन जेराल्ड, शीजा एडवीन जेराल्ड

- आंवला
- एंब्लिका ओफ्फिचिनालिस गेर्तनर
- इंडियन गुजबेरी
- आंवला
- आंवला
- आंवला, आंवला मायरोबलान, आंवला ग्रीन/ आंवला सूखा ।
- एउफोर्बिआसी ।

**रासायनिक संघटन** – आंवले के ताजे फल में 81.2, प्रोटीन 0.5, वसा 0.1, खनिज 0.7, रेशे 3.4, कार्बोहाइड्रेट 14.1 प्रतिशत तथा अनेक प्रकार के विटामिन हैं, जिनमें निकोटिनिक एसिड तथा विटामिन सी मुख है । फल के कल्क व स्वरस में क्रमशः 720 और 1 मि.ग्राम प्रति 100 ग्राम में विटामिन-सी पाया जाता । विटामिन सी का यह सर्वश्रेष्ठ स्रोत है । इसके तिरिक्त फल में मुख्य खनिज – लोहा 12 मि.ग्राम प्रति 0 ग्राम तथा फास्फोरस 20 मि.ग्राम प्रति 100 ग्राम होते । प्रमुख कार्बोहाइड्रेटों में पैक्टिन मुख्य है । आंवला का अच्छा स्रोत माना जाता है । ये टैनिन सूखी अवस्था लगभग 28 प्रतिशत जल के सूखने पर गैलिक, इगैलिक ल व ग्लुकोज बनाते हैं । गूदे में इस प्रकार के तेरह न पाए गए हैं तथा फाइलेक्बिन नामक पदार्थ भी – जो सक्रियता की दृष्टि से उल्लेखनीय है ।

बीजों में भी लिनोलिक, लिनोलेनिक ओलिक जैसे महत्वपूर्ण घटक पाए गए हैं, जिनकी भूमिका न संस्थान की दृष्टि से महत्व रखती है । ये सभी वसा क एसेंशियल फैटी एसिड समूह में आते हैं तथा आहार आवश्यक अम्लों की पूर्ति कर देते हैं । तेल की मात्रा में 16 प्रतिशत होती है ।

**उपयोगिता** – मुख्यतः हरे व सूखे आंवला फल अधिक मांग है । इसमें विटामिन-सी की सबसे ज्यादा है । एक आंवला फल में बीस संतरों के बराबर मीन-सी की मात्रा विद्यमान रहती हैं । अवलेह, नप्राश, शरबत, मुरब्बे तथा चटनी बनाने में इसके फलों का प्रयोग किया जाता है ।

**क. फल जूस** – फल जूस में विटामीन सी दानेदार या सारकृत मिश्रण के रूप में एकत्र किया जाता है जो कि पलमोनरी टयूबक्लोसिस के रोगियों को सिंथेटिक विटामिन की तुलना में चूर्ण, जूस या सारकृत मिश्रण रूप में विटामिन-सी की अनुविद्धता शीघ्र प्राप्त होती है ।

पके आंवला फल पर चीरा लगाकर एकत्र किया तरह द्रव्य नेत्र रोग औषधि के निर्माण में प्रयोग किया जाता है । आंवला रस ठंडक देने वाला, अजीर्णहारी, कब्जहारी एवं शीतक रूप में प्रयोग किया जाता है ।

**ख. फल चूर्ण** – यकृत बढ़ने, सिरदर्द, कब्ज, बवासीर व बदहजमी रोग में त्रिफला चूर्ण रूप में प्रयोग किया जाता है । आंवला फल का प्रयोग हेयर डाई, केशवर्द्धन एवं प्रिंटिंग इंक निर्माण में किया जाता है । सूखे आंवला फल का प्रयोग रक्त की कमी, रक्तस्राव, मंदाग्नि, पीलिया व खांसी में किया जाता है ।

**ग. बीज** – आंवला बीजों से प्राप्त फिक्स्ड तैलीय पदार्थ सिर के केशवर्द्धन व नए केश विकास आदि औषधीय उत्पाद में प्रयोग में लाया जाता है । इसके बीजों का उपयोग श्वास, अस्थमा इत्यादि रोगों में भी किया जाता है ।

**घ. छाल** – साधारण प्रयोग टेनिंग तथा औषधि निर्माण में किया जाता है । पीलिया, सूजाक, पेचिश इत्यादि रोगों में भी क्रिया जाता है ।

**च. पत्ते** – पत्तों का प्रयोग नेत्र के आंतरिक रोगों, उदरशूल, आंव, पेचिश, जलन एवं पलमोनरी रोग में विटामिन की कमी दूर करने के लिए किया जाता है ।

**निर्धारणनुसार प्रयोग** –

क. हिचकी तथा उलटी में आंवले का रस मिश्री की चाशनी के साथ तुरंत तथा दिन में दो से तीन बार 10 से 15 ग्राम चूर्ण पानी के साथ दिया जा सकता है ।

ख. रक्त पित्त में रक्त के वमन का कारण यदि आमाशयिक व्रण है तो आंवला चूर्ण दही के साथ अथवा चूर्ण क्वाथ बनाकर गुड़ के साथ दिया जाता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ग. अम्ल पित्त में ताजा आंवला का स्वरस साथ स्वरस 25 ग्राम समभाग शहद के साथ प्रात+सायं देने पर खट्टी डकारें, आमलाधिक्य की शिकायतें दूर हो जाती हैं ।

आंवले के 10 ग्राम बीज रात भर जल में भिगोकर रखने पर व अगले दिन गौ दूध में पीसकर 250 ग्राम गौ दूध के साथ देने पर पित्ताधिक्य में लाभ होता है ।

इन सभी उपरी पाचन संबंधी विकारों, जिन्हें डिसपेप्सिया या पी.यू. सिंड्रोम नाम से जाना जाता है, हेतु रात्रि में 5 ग्राम भिगोया आंवला अगले दिन 70 ग्राम दूध के साथ देने पर एक माह में अच्छा आराम होता है ।

घ. यकृत की दुर्बलता व पीलिया निवारण के लिए आंवले की शहद के साथ चटनी बनाकर सुबह शाम लिया जाना चाहिए ।

**अन्य उपयोग** – पाचन संस्थान को सशक्त बनाने एवं स्कर्वी रोग का निवारण कर संपूर्ण अंत: संस्थान मजबूत करने के अतिरिक्त त्रिदोषहर होने के नाते अन्य उपयोग भी हैं ।

पैत्तिक शिरोशूल, मूत्रावरोध में इसका लेप हैं । नेत्र रोगों में रस आंखों में डालते हैं । आंवले धोकर रूसी व खाज मिटाना पुराना घरेलू प्रयोग है

इन्द्रिय दुर्बलता, मस्तिष्क दौर्बल्य, हृदय रोग, रक्त वमन, खांसी, श्वास तथा महिला प्रमेह रोगों में भी यह उपयोगी है । क्षय, शरीर शोथ कुछ चर्म रोगों में भी वैद्य इसका सफल प्रयोग करते

आंवला एक समग्र औषधि है । पाचन मात्र तक इसका कार्य क्षेत्र सीमित नहीं है । त्रिफला में इसके प्रयोगों से सभी अवगत हैं, पर प्रस्तुत किए एकौषधि प्रयोग में आंवले को अकेले उपर्युक्त संस्थान के रोगों में ही प्रयोग किया जा रहा है एवं पुष्टि हेतु वैज्ञानिक मत भी दिए गए हैं ।


स्त्रियों के लिए कांतिवर्द्धक एवं बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

अशोकारिष्ट

मासिक-धर्म की अनियमितता, कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, भूख न लगना तथा मासिक-धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# कालीयक विनिश्चय

डा०बी०एन० सिंह

कालीयक का उल्लेख संहिता ग्रन्थों में अति प्राचीन काल से है । संहिता ग्रन्थों में कालीयक का निर्देश प्रधानत: कालीयक शब्द के ही वर्णान्तर भेद से विभिन्न रूपों से यथा - ''कालीयकम् कालीय'', - 'कालेयक', 'कालेयकम्', एवं 'कालीका', आदि पर्यायों से किया

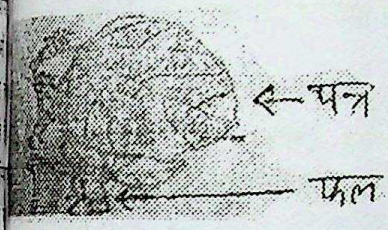


गया। धन्वन्तरि निघण्टु में दारूहरिद्रा एवं कालीयक का उल्लेख भिन्न-भिन्न वर्गों यथा - गुडूच्यादि वर्ग के प्रथम एवं चन्दनादि वर्ग के तृतीय तथा राज निघण्टु के पिप्पल्यादि वर्ग 6 एवं चन्दनादि वर्ग 12 में किया गया है, तथा उल्हण आदि संहिता के टीकाकारों द्वारा उल्लिखित दारूहरिद्रा के पर्यायों के साथ-साथ कालीयक एवं पीतचन्दन को भी दारूहरिद्रा के पर्यायों में गणना किया गया हैं । कालीयक का चन्दन के भ्रम से सुगन्धित द्रव्यों वाले चन्दनादि वर्ग में पुन: पृथक उल्लेख किया है । उसके लिए पतंग तथा पीत चन्दन पर्याय भी दिये गये हैं । साथ ही 'मलयोत्थ' पर्याय द्वारा उसके उद्भव क्षेत्र का निर्देश किया है । यहां यह भी उल्लेखनीय है कि धन्वन्तरि निघण्टु एवं राज निघण्टु में कालेयक नाम से अगुरू भेद कृष्ण अगुरू का पृथक उल्लेख भी उसी सुगन्धित वाले द्रव्यों के वर्ग में किया है । अगुरु बंगाल, आसाम आदि पूर्वोत्तरी क्षेत्र में पाया जाने वाला सुगन्धित वृक्ष है । इस प्रकार व्यवहार में दारूहरिद्रा, कालीयक - पीतचन्दन-कालेयक (कृष्णागुरु - कृष्णकाष्ठ - कालाकाठ) का एक भ्रमात्मक चक्र सा बन गया है । भाव मिश्र ने भी यद्यपि इसी परम्परा का अवलम्बन किया है । किन्तु साथ ही कालीयक के सम्बन्ध में भावमिश्र की विशिष्ट देन है । जिससे इसके विनिश्चय में सहायता मिली है । भावमिश्र ने कालियक के लिए 'कलम्बक' नाम का सर्व प्रथम उल्लेख किया है और इसी नाम से कालीयक का उल्लेख किया हैं ।

वस्तुत: कलम्बा नामक औषध कालियक की भाँति इसी कुल गुडूची कुल (फेमिली - मेनिस्पर्मेसी) की एक अन्य विदेशी लता जातीय वनस्पति जेटियोरहाइजा पामेटा से प्राप्त किया जाता हैं जो पूर्वी अफ्रीका का

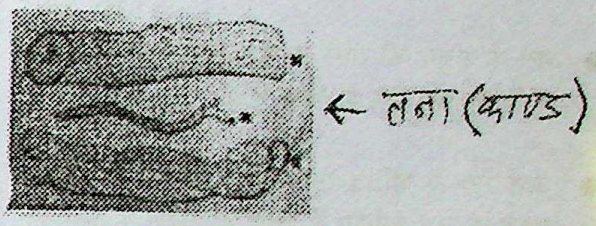


आदिवासी पौधा है । अंग्रेजी नाम कलम्बा वस्तुत: अफ्रिकी नाम कलम्बा से व्युत्पन्न है । कलम्बा का ज्ञान अरब वालों को अति प्राचीन काल से था । कलम्बा का भारतवर्ष में प्रवेश पुर्तगालियों द्वारा हुआ और भारतवर्ष से पुन: इसका प्रचार-प्रसार यूरोपिय देशों में हुआ । उसी समय कोसिनियम फेनेस्ट्रेटम जो उसी क्षेत्र के दक्षिण भारत मालाबार (पश्चिमी घाट, लंका) के जंगलों में पाया जाता है । इसकी मांग देशी कलम्बा के रूप में हुई है और व्यवसाय में इसका उपयोग असली कलम्बा में मिलावट के लिए किया जाता था । यही भाव प्रकाश में वर्णित कलम्बक तथा प्राचीनों का कालीयक है ।

पीत चन्दन के प्रसंग में उल्लेखनीय है कि धन्वन्तरि एवं राजनिघण्टु ने चन्दनादि वर्ग तीन एवं बारह में 5-6 प्रकार के चन्दन का उल्लेख किया है । यहां पर यह भी स्पष्ट करना है कि रस एवं वीर्य सभी समान बतलाया गया है । उनके परस्पर तर - तम भेद का मान दण्ड सुगन्धि बतलाया गया है जो वास्तव में केवल श्वेत चन्दन में पाया जाता है ।

प्राचीन संहिताओं में मुख्यत: चन्दन द्रय और कहीं पर त्रिहिम से चन्दन त्रय का संकेत मिलता है । धन्वन्तरि निघण्टुक्त चन्दनों में मुख्य चार प्रकार के चन्दन का उल्लेख मिलता है । 1.श्वेत 2. रक्त 3. पतंग (कुचन्दन) 4. कालीयक या कलम्बक (पीत चन्दन) ।

(शेष पृष्ठ सं० 450 पर)

निदेशक, एस०बी०एम०एच० आयुर्वेद महाविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अष्टांग संग्रह सूत्र स्थान में अर्श रोग के सन्दर्भ

डा० अनूप कु० गक्खड़ एवं हरविन्द

- अर्श रोग असाध्य रोग (याप्य रोग) की गणना में आता है जो अल्प काल के लिए ठीक हो जाता है, किन्तु मूल रूप से नहीं होता ।

(सू० 2/27)

- प्रयत्नपूर्वक मलोत्सर्ग करने पर अर्श हो जाता है ।

(सू० 3/6)

- मल के संचय की सीमा पर पहुंच कर मलों की उपेक्षा करने से अर्श रोग हो जाता है ।

(सू० 5/32)

- अर्श रोग से पीड़ित रोगी को कच्चे एवं पक्व सभी प्रकार के जल वर्जनीय हैं, किन्तु प्राणधारण में असमर्थत: हो, तो रोग योग्य औषधियों से संस्कार करके थोड़ा जल पीना चाहिए ।

(सू० 6/40)

- ऊँटनी का दूध अर्शरोग में पथ्य है ।

(सू० 6/58)

- तक्र अर्शरोग को नष्ट करता है ।

(सू० 6/69)

- मस्तु अर्शरोग को नष्ट करता है ।

(सू० 6/71)

- नवोद्धृत (शीघ्र निकला हुआ) नवनीत (मक्खन), अर्शरोग को नष्ट करता है ।

(सू० 6/72)

- दन्ती आदि के तैल अर्श रोग को नष्ट करते हैं ।

(सू० 6/107)

- सुरा (शालिधान्य को पीसकर बनाया मद्य) अर्शरोग को नष्ट करती है ।

(सू० 6/119)

- जगल (वारूणी या सुरा का नीचे का भाग) अर्शरोग के लिए पथ्य है ।

(सू० 6/121)

- अरिष्ट अर्शरोग को नष्ट करता है ।

(सू० 6/125)

- माद्वीक (द्राक्षारसोद्भव) अर्शरोग को नष्ट करता है ।

(सू० 6/127)

- पक्व इक्षु रस से बना (सीधु) अर्शनाशक में श्रेष्ठ

(सू० 6/1

- मृद्वीकासव (मुनक्का से बना आसव) अर्शरोग नष्ट करता है ।

(सू० 6/1

- सौवीरक एवं तुषोदक भी अर्श रोग को नष्ट करत

(सू० 6/1

- गो (गाय), अजा (बकरी), महिषी (भैंस), (हाथी), अश्व (घोड़ा) तथा उष्ट्र (ऊँट), (गर्दभ) का मूत्र अर्शरोग को नष्ट करता है।

(सू० 6/1

- इन सभी मूत्रों में गो मूत्र अर्शनाशक में श्रेष्ठ (उ होता है ।

(सू० 6/1

- कुलथी अर्शरोग को नष्ट करता है ।

(सू० 7

- राजवक्षक का शाक उत्तम कोटि का अर्श रो नाशक होता है ।

(सू० 7/1

- चांगेरी का शाक अर्शरोग में पथ्य है ।

(सू० 7/1

- पत्तूर (जलपिप्पली) अर्शरोग शामक होता है ।

(सू० 7/1

- लहसुन अर्श रोग को नष्ट करता है ।

(सू० 7/1

- सूरण (जिमीकन्द) अर्श रोगियों के लिए अ होता है ।

(सू० 7/1

- पीलु का फल अर्श रोग को नष्ट करता है ।

(सू० 7/1

- मातुलुंग (बिजौरा नींबू) की केसर अंशरोग क करती है ।

(सू० 7/1

- विरूद्धाहार से अर्श महागद की उत्पत्ति होती है

(सू० 9/

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



- हिंग्वादि चूर्ण अर्श रोग को नष्ट करता है । (सू० 11/28)
- रसतरङ्गिणी के अनुसार सीसे की विधिपूर्वक बनाई गई भस्म अर्शशामक है । (सू० 11/28)
- शिलाजतु विशेष रूप से अर्श रोग को नष्ट करता है । (सू० 12/28)
- अवक्षार अर्शरोग को शांत करता है । (सू० 12/37)
- नागकेसर अर्श रोग को नष्ट करता है । (सू० 12/49)
- प्राक्वायु (पूर्व दिशा की हवा) अर्श रोग को कुपित करने वाली होती है । (सू० 12/95)
- तक्राभ्यास (तक्र का निरंतर सेवन) अंश रोग से होने वाली व्याधियों को नष्ट करता है । (सू० 13/3)
- अर्शोघ्न महाकषाय का गण अर्शनाशक होता है । (सू० 15/17)
- मुष्कादि गण अर्श रोग का नाश करते हैं । (सू० 16/26)
- वत्सकादि गण अर्श रोग को नष्ट करता है । (सू० 16/28)
- अर्शरोग सहजन्य रोग है, यह रोग पितृजन्य शुक्रदृष्टि से तथा मातृजन्य आतर्वदृष्टि से होता है । (सू० 22/3)
- अर्शरोग बाह्य रोगमार्ग की गणना में आता है, यह बाह्य भाग (त्वचा) में होने वाला रोग है । (सू० 22/15)
- कृश लोगों में प्रायः अर्शरोग जल्द उत्पन्न होता है । (सू० 24/50)
- अमात्रा (अधिक मात्रा या हीन मात्रा) में तथा अकाल स्नेहपान करने पर मिथ्या आहार - विहार के कारण अर्श रोग उत्पन्न होता है । (सू० 25/52)
- अर्श रोग से पीड़ित रोगी वमन के लिए अयोग्य है अर्थात् अर्श रोग से पीड़ित रोगी को वमन नहीं कराना चाहिए । (सू० 27/7
- अर्श रोग अस्थापन बस्ति के अयोग्य रोग है । (सू० 28/11
- अर्श रोग में मलमार्ग बन्द होने से बस्ति वापस आकर प्राणों को नष्ट कर डालती है और स्नेह अर्श का अभिष्यन्दन करके आध्मान उत्पन्न कर देती है (सू० 28/11
- अर्श शल्य को शरीर से बाहर निकालने के लिए शस्त्र क्षार, अग्नि आदि का प्रयोग किया जाता है तथा शे अंगों की रक्षा के लिए यंत्र का प्रयोग होता है । (सू० 34/3
- मुचुण्डी नामक यंत्र छिन्नार्थ, शेषार्थ (शल्यक्रिया कर के पश्चात् अर्श का छूटा हुआ शेष भाग) शल्य आहरण में प्रयुक्त है । (सू० 34/7
- अर्श नामक शल्य को बाहर निकालने के लिए एक छिद्र अर्शोयन्त्र से अर्श के उपर क्षार का प्रयोग किय जाता है । (सू० 34/9
- अर्श यंत्र तीन प्रकार के होते हैं । यह लोह, दंत, शाङ्ग वार्क्ष के बने हुए गोस्तनाकार, चार अंगुल लम्बे, हथेली जितने मोटे तथा पुरुषों में पाँच अंगुल की परिधि वाले होते हैं । (सू० 34/11
- यह अर्शयंत्र दो प्रकार का होता है - दो छिद्रों वाले अर्शयंत्र से देखने का काम लिया जाता है तथा एकछिद्र वाले अर्श यंत्र से अर्श पर क्षारकर्म का प्रयोग होता है । (सू० 34/11
- इन दोनों अर्शयत्रों के अतिरिक्त एक तीसरा उसी प्रकार का शमी नामक यंत्र होता है जिसके पार्श्व में कोई छिद्र नहीं होता । इन शमीयंत्र का प्रयोग अर्श क पीड़नार्थ होता है । (सू० 34/11



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



- प्रमार्जनी यंत्र अर्श आदि पर लगाए गए क्षार को साफ करने में इस्तेमाल होता है ।

(सू० 34/16)

- सर्ववक्त्र - यह वक्र होता है तथा इसका फलक आधा अंगुल चौड़ा होता है एवं नासार्श एवं कर्णार्श के विच्छेदनार्थ में प्रयुक्त होता है ।

(सू० 34/27)

- अर्श रोग सिरावेध के अयोग्य रोग है ।

(सू० 36/8)

अर्श रोग की चिकित्सा के लिए विशेष रूप से बहि:परिमार्जन क्षार का ही प्रयोग होता है ।

(सू० 39/

- गुदार्श में क्षारकर्म करने के लिए क्षार को उस स्थान पर लगाने के पश्चात् यंत्र के मुख को हाथ से ढंक कर सौ गिनने तक प्रतीक्षा करनी चाहिए । तत् जले हु देखकर घृत एवं शहद का लेप करना चाहिए ।

(सू० 39/12

- अर्श रोग में जाम्बवौष्ठ, सूई, शलाका, घृत, गुड़, मधुयष्टी, तैल, वसा, हेम, ताम्र, लोहा, चाँदी, कर्ण आदि से उनके अनुसार उचित स्थान पर मांस में दा किया जाता है ।

(सू० 40/

पृष्ठ सं० 447 का शेषांश)

संयोग वशात् इन चारों का उद्भव क्षेत्र प्राय: एक ा उल्लिखित है और विशेष रूप से घाट के जंगलों एवं त्समीप वर्ती क्षेत्रों की वनस्पतियां हैं ।

आधुनिक वानस्पतिक नामकरण में भी चन्दन के क्त अनेक भेदों के भ्रम मूलक धारण को विचार में रखते ए पीत चन्दन के स्थान में कोसिनियम फेनेस्ट्रेटम नाम वीकार किया गया है और पतंग का भी सम्बन्ध चन्दन से ा करके सीजलपीनिया सप्पन नाम स्वीकार किया गया है । नब चन्दन का सम्बन्ध केवल श्वेत चन्दन एवं रक्त चन्दन रोकारपस सैन्टालिनम से ही माना गया है ।

न्दर्भ :-


1. कालीयक सुश्रुत संहिता 38/8 सालसारादिगण कालीयक मलेन्द्रीचन्दनम् इति प्रसिद्ध: ।

- डल्हण ।

2. कालीयक पीतचन्दन् अन्ये कालिआकाठ इति प्रसिद्धमाहु:।

- चक्रपाणी ।

3. सु०चि० 37/36 आनुवासनोत्रवस्ति चि० कफजरोगों में तैल योग कालीयक दाहहरिद्रानुकारि द्रव्यम् ।

-डल्हण ।

4. कालीयक दाहहरिद्रानुकारि प्रसिद्धम् ।

- डल्हण ।

5. कालीयक दाहहरिद्रा ।

-डल्हण ।

6. कालीय कृष्णचन्दनम् ।

- सुश्रुत चिकि. 20/3

7. कालेयक: कृष्णवर्ण चन्दन विशेषोमलयाद्रि चन्दन इति लोके ।

-डल्हण

8. 'कालेयक पीतचन्दन'

- डल्हण

9. 'कालीय कृष्णचन्दम्'

- सुश्रुत चिकि० 20/3

10. 'कालेयक:' सुश्रुत सूत्र 39/9 श्लेष्मसंशमन वर्ग में

11. 'कालेयक:' कृष्णचन्दनविशेषोमलयादि चन्दनम् इति लोके ।

- डल्हण

12. 'कालेयक:' - सुश्रुत कल्प 6/16 ।

13. 'कालेयक:' पीत चन्दनम्-सुश्रुत उत्तर 44/31

14. कामला चि० कालेयक घृत योग में

15. 'कालेयक दारूहरिद्रा नुकारि द्रव्यम्'

-डल्हण

16. 'कालेयक कालियाकाष्ठम्' चरक सूत्र 3/26

17. 'कालेयक कालियाकाष्ठम्'

-चक्रपाणी

18. 'कालिका' सुश्रुत 3051/23

19. 'कालिका कालेयम्'

-डल्हण




CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# VANGA IN AYURVEDA (A CRITICAL STUDY)

*Dr. R.R. Hiremath , **Prof. C.B.JI

## INTRODUCTION :

The knowledge of Vanga to Indians was traced back to Indus Valley Civilization. An alloy made up of Vanga and Tamra known as Kansya was used in ancient India in many a form. Initially these metals were used for the preparation of utensils, hunting tools, ornaments etc. Later on with the development of knowledge the therapeutic efficacy of these metals was recognized by Acharyas and explained in Samhitas. But durig the Samhita kala the utility of these metals was very restricted due to lack of modificatory process techniques. Initially these metals were used in powder form along with herbal juices. With the development of Rasa Shastra the new Pharmaceutical process like Shodhana, Marana etc. were introduced to transform these metals in to potent, effective and assimilable form (fit for absorption). For these reason the metallic materials became more frequent in therapeutic use in curing so many diseases.

## VANGA IN VEDIC PERIOD :

The word 'Trapu' was mentioned for Vanga in Rig Veda, Yajur Veda, Atharva Veda, Koutilya's Arthashastra and Manusmriti. The word 'Trap' is derived from the Sanskrit root means to be ashamed. Mc Donell in his Vedic Index mentioned that whatever the Trapu word specified in Vedic Granthas denotes the metal Tin because of its easily smelting nature.

## VANGA IN SAMHITA KALA :

Vanga was included in Bhouma dravyas, Trapwadi gana. It was used for the preparation of Jihva nirlekhana yantra, bastinetra along with other metals. Tin coin is used in bandaging in case of Khaphaj Arbuda. The pharmacological properties are katu, lavana, tikta, rasayana, krimighna, lekhana used in garavisa, krimi, pipasa, hridroga, pandu, meha and bhedi. Trapu churna was indicate in Mandala kusta for extranal purposes.

## VANGA IN RASA SHASTRA :

Vanga was included in Putiloha group d to its easy melting nature & produce bad odour heating. Vanga was originated from the injured na of Lion of Godess Durga during the battle betwe Durga and Shumbha (Rasendra Purana). Van was also originated from the semen of Indra (Ra Kama Dhenu). The synonyms are abhira, chark chiputa, kastira, kurupya, mukhabhushan nagajivana, nagabhava, parasa, pichhat shukraloha, putigandha, swetarupya etc.

Vanga was classified in to Sweta, Krishi and Khuraka, Mishraka. The vanga which dhavala, mrudu, snigda, drutadrava, guru a nishabda in nature is Khuraka vanga a considered as superior one and used for therapeu purposes.

Improperly processed vanga will produ gulma, hridrog, shoola, arsha, kasa etc. Hen proper purification and incineration is essent before its administration.

Almost all Acharyas explained Dhala processess for Shodhana, using different liqui in Pithara yantra. The Vanga is melted on fire a poured in Churnodaka, Arka dugda, Nirgun swarasa mixed with Haridra churna, Kadali kan swarasa, Taila, Takra, Gomutra, Kanji, Kulatt kwatha etc for 3 to 7 times.

Marana is done by following Jarana a putapaka processes using Herbal (Apamar panchang, Ashwatha twak, Chicha twak, Harid churna, Vata twak etc). Animal (Karkatas Kukkutanda twak, MuktaShukti, Varatika) a Mineral (Haratala, Makshika, Parada, Shilajatu e origin drugs. Shodhita Vanga is heated till it me and any of these drugs are sprinked and rubb

*Ph.D. Scholar **Prof. and H.O.D., Deptt. of Rasa Shastra, I.M.S.B.H.U.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



th back of a ladle till it turns to powder form. This ita Vanga is triturated with Kumari swarasa, natavari swarasa, chakrikas prepared, dried and bjected to puta. Shweta Varna Bhasma was tained. Without Jarana the Vanga marana was ne by using shodhita haratala or shodhita Parada c bhavana was given by herbal juices and puta as given.

Initially Vanga was used for dhatuvada rposes like Tara karma, garbhadruti, swarna eeza, charana, ranjana and rasa beeza eparation. Vanga is a stronger metal among all has. It makes parad stambhana (Rasopanishata 3/6). Later its therapeutic importance was known Acharyas and explained in chikitsa. Its erapeutic properties are Tikta, Kashaya, slight nleeya, Ruksha, Ushna, Medohara, Krimighna, khana, best Rasayana, Kapha Pithahara and ght Vataprakopaka. Mainly it is indicated in sarva ameha and Shukragata viaras. How the Lion one can kill the hard elephants, similarly alone anga can irradiates ail types of Prameha rogas P3/151). It is also used in Medoroga, Krimi roga, ndu, Swasha, Kasa, Ratrisweda, Visha. Its matra is 1-2 Ratti.

**CONCLUSION:**

Vanga was one of the known metals since ancient time, named by the name 'Trapu'. Initially its use was restricted only for coating the metals and preparation of alloys. Later in Samhita period it is used for the preparation of surgical instruments along with other metals and also used externally. Later its therapeutic importance was identified by Scholars and used for oral administration after adopting proper shodhana and marana procedures. It is the best rasayana and vrashya dravya specially indicated in genito-urinary disorders.

**REFERENCES:**


1) Charaka Samhita
2) Sushruta samhita
3) Astanga sangraha
4) Rasendra Purana
5) Rasa Hradaya Tantra
6) Rasa Kama Dhenu
7) Rasendra Chudamani
8) Ayurveda Prakasha
9) Rasa Ratna Samuchhaya
10) Rasa Tarangini



शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है।




CC-0. Kurukshetra University Kurukshetra Collection. Harmika

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# SUKTI BHASMA & ITS EFFECT ON AMLAPITTA

*Dr. Pronab Haldar **Dr. Dinesh Kr. Mishra

The importance of Rasasastra which deals with Rasausadhies can be marked by the quotation described in Rasendra sara samgraha (1/4) which indicates that Rasausadhies are effective in smaller doses, having aggreable taste, quick action and need shorter duration of administration.

**Alpamatropayogitwat aruchera prasangataha l**
**Khiprang arogyadayitwat ausadhebhydhiko rasaha ll**
(R.S.S.)

Sudhavarga is one of them which is considered as latest class in the field of Rasasastra. Shukti is considered as an imp. drug in sudhavarga. Like other drugs it is also used in Bhasma form. Rasacharyas have vividly described broad spectrum therapeutic uses of Suktibhasma, in their relevant texts.

Now a days in market many preparations with diff. brand name containing sukti bhasma along with sankha bhasma and varata bhasma etc are available, which are said to be effective in Amlapitta, Hence it was decided to administer sukti bhasma as a single drug in the treatment of Amlapitta.

"HURRY, CURRY AND WORRY
make the man SORRY"

These 3 are main causes of Amlapitta, which are now a days mainly effecting human beings. Though amlapitta has been considered as a very minor disease both by the patient and the doctor, infact, it has got a very wide range of impacts.

**Subject :-**

According to different authors the meaning of sukti is,

- According to sabdastoma mahanidhi, sukti means kapala khanda means a type of flat skull bone.
- According to Monier William, sukti has derived from the root word 'SUC' means shining or brightness.

From the above it is clearly known that Sukti is found in water, resembles like the flat and skull bone and inside which mukta is found.

**Types:-** According to Rasaratnasamucchaya and Rasarnava it is of 1 type, but according to Ay. Prakash, Rasakamdhenu, Rasa tarangini it is of 2 types.

1. Mukta Sukti
2. Jala sukti

According to name, it indicates the presence of mukta inside the first variety and jala sukti is devoid of mukta.

Among all rasagranthas, their opinion muktasukti is the best variety among the 2 but it is necessary to select the best variety of mukta sukti.

According to K.C. Chunekar, there are 2 types of muktasukti in its shape. That are,

1. Broad and Circular
2. Ear like (karnikakara)

Out of these two, second one is best which is used in medicines and first one can be taken as the substitute of second one but it is of low quality.

**Modern View of Sukti.**

There are thousands of species found in and aroud the sea, those are covered with some hard matter. One of the family of such species known as mollusc. The 2nd largest class of mollusc is lamellibrachia. It is again sub divided into 3 sub groups.

1. Placipods
2. Scophods
3. Gastropods

The species which creates sukti or oyster shell is included under placipods group.

**Shodhana of Sukti :-** For the reduction of external impurities and to enhance the resident qualities, sodhana is done for sudhavargiya dravyas.

- Sukti can be purified by cooking them in the juice of jayanti swarasa (sesbania egyptica) with the help of dola yantra, for 3 hours (Rasa tarangini 12/65).

**Marana of Sukti :-** The shells are crushed into fine pieces and sealed properly in samputa and subjected to heating in gajaputa. Fine white coloured basma of sukti is formed (R.T. - 12/67)

- In some cases after giving one gajaputa, it

* M.D. Scholar (B.K.) ** Prof. & H.O.D. P.G. Dept. of R.S. & B.K.
A.L.N. RAO. Ayurvedic Medical College, Koppa

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



is processed with aloe juice and then again one gajaputa is given.

- Some texts mention that in samputa, the pulp of aloe is kept above and beneath the purified shells and then gajaputta is given. After cooling on its own, it is processed with the lemon juice. By this the prepared bhasma is very soft and snow white in colour.

**Chemical composition** :- Sukti predominantly contains calcium.

Dose - 2 Rati (250 mg) B.I.D.

Anupana - Honey, Ghee, milk

**Amlapitta :-** According to Su. Samhita, Miyoga of lavana rasa 'amlika' can occur. While discussing vipaka, Susruta says that due to agnimandya, the pitta dosha gets vitiated and becomes sour in taste (Su.Su. 40/11).

Kasayapa is the 1st Acharya who has described Amlapitta as a disease (ka:khi. 16)

In the above definition of Amlapitta based on the pathology of pitta, except the derangement of pitta in terms of sourness and fluidity, the other clinical characteristics of amlapitta are not revealed. Therefore, certain authorities have defined amlapitta. through a group of certain symptoms which includes Avipaka, klama, utklesa, amlodgara, gaurava, kandu, daha, aruchi etc. This set of symptoms gives a correct clinical picture of amlapitta (ma.ni. 51/2)

The aetiological factors of amlapitta can be discussed under 4 groups

1. Aharaja hetu (Dietary factors)
2. Viharaja hetu (Habit factors)
3. Manasika hetu (Psychogenic factors)
4. Agantuja hetu (Miscellaneous factors)

**VICIOUS CIRCLE FORMED IN AMLAPITTA**

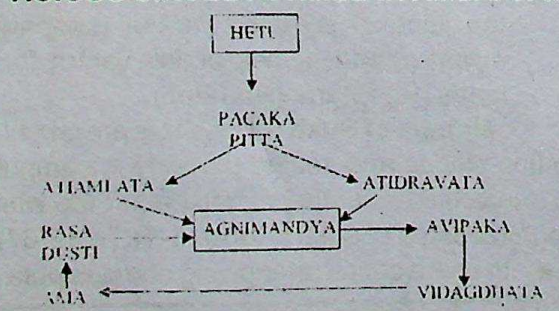


**Types of Amlapitta**

According to gati of Madhava has explained 2 types,

1. Urdhwaga
2. Adhoga

According to the involvement of Dosa,

**Kasyapa told 3 types**

1. Vatika amlapitta
2. Paittika amlapitta
3. Slesmika amlapitta

Madhava told 4 types

1. Sanila amlapitta
2. Kaphanugata Amlapitta
3. Vatakaphadhika amlapitta
4. Slesmapitta amlapitta

In modern medical literature, some technical terms have been used to indicate an abnormal condition resembling to amlapitta.

These terms are,

1. Hyperacidity
2. Hyperchlorhydira
3. Acid gastritis
4. Gastritis syndrome
5. Acid dyspepsia

After all these classification, comparison and correlation, one can easily come to a conslusion that amlapitta is a disease in which whether it is pathological, biological or biochemical interpretation, the acid content of the gastric secretion is increased. Apart form this qualitative increase of pitta or the digestive ferments, there may also occur a quantitative increase. This qualitative and quantitative increase of pitta excites the local gastric mucosa and give rise to some local symptoms. The same pitta which is circulating all over the body through the blood stream, may produce various other symptoms. It can be seen that Amlapitta may be correlated with 'GASTRITIS' of modern medical science.

**Mode of action of Sukti :-** The main component of sukti bhasma is $CaCo_3$. It is weak



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



insoluble. $CaCo_3$ falls under non systemic antacid group of drugs, means only a small portion of it is absorbed by G.I.T., $CaCo_3$ is converted into $CaCl_2$ and $H_2O$ in stomach. About 10% of $CaCl_2$ is absorbed.

**The probable mechanism of action of sukti bhasma is.**

1. It causes synthesis and release of prostaglandins which bolster the mucosa defence and also reduce basal nad stimulated gastric acid secretion.
2. It binds with some nociceptive substances which could damage gastric or duodenal mucosal (cytoprotective action).
3. 1 gram of $CaCo_3$ can neutralise about 13 meq of acid. From this it is clear that calcium preparations are used as antacids.

* Exogenous prostaglandins exerts some actions which enhance the mucosal defence,

A) It stimulates the gastric mucosal secretion.
B) It maintains gastric mucosal blood flow.
C) It stimulates mucosal cell restitution.
D) It stimulates gastric and duodenal bicarbonate secretion.
E) It maintains the gastric mucosal barrier to back diffusion of H+ions.

**Analytical Reports of Sukti Bhasma**

Analytical parameters

| | | |
|---|---|---|
| 1. | Loss of drying | - 0.2% (at 100°C) |
| 2. | Ash valve | - 41.6% |
| 3. | Acid insoluble ash | - 0.7% |
| 4. | PH of 10% Aqueous solution | - 12.0 |
| 5. | Calcium as ca | - 38.13% |
| 6. | Calcium as Cao | - 67.2% |
| 7. | Calcium as $CaCo_3$ | - 95.5% |
| 8. | Magnesium as MgO | - 0.51% |
| 9. | Sulphate as $SO_4$ | - Trace |
| 10. | Iron as $FezSo_3$ | - Trace |

**Conclusion :-** Sukti Bhasma was found to be a non-systemic type of antacid. It has acid neutralising capacity, speed of antacid action and prolonged buttering actions were excellent.

Thus it can be concluded that amlapitta can be effectively treated with Sukthi Bhasma which is cheaper, easily available in most parts of India and can be prepared easily.

**Bibliography :-**


1) **Ayurveda prakasa :-** Sri Madhava, com. by Gulraj Sharma with introduction by Pt. Shiv Sharma, 1987.
2) **Kasyapa Samhita :** Hindi comm. Pt. Hemraj Vrddhativaka Sharma.
3) **Madhava Nidana :** Madhava kara with Madhukosha commentary by Vijaya Raksita and Srikantha Dutta, 18th edition, Yadunanda Upadhyaya, Choukhamba Samskrit Samsthan, Varanasi.
4) **Rasarnava :** With Hindi commentary by Dr. Indradev Tripathy 2nd edition, 1978, Chaukhamba, samskrit samsthan, Varanasi.
5) **Rasa Kama Dhenu :** Cudamani Mishra, published by Yadavji Trikamji Acharya, 1925.
6) **Rasa Ratna Samuccaya :** Vagbhattacharya, commentary by D.A. Kulkarni (1st part), 3rd edition 1982, published by Meherchandra Laksman Das.
7) **Rasendra Sara Samgraha :** Krishna Gopal Bhatt with Hindi commentary by Indradev Tripathy, 1st edition 1987, Chaukhamba Orientalia, Varanasi.
8) **Rasa Trangini :** Sadanada Sarma, edited by Pandit Kasinath Sastry, 11th edition 1989, Motilal Banarasi Das, Varanasi.
9) **Sabdastoma Mahanidhi :** Taranath Battacarya, Varanasi, 1967.
10) **Susrut Samhita :** Acharya Sursut, 4th edition 1980, commentary by Ambikadatta Shastry, Chankamba Orientallia, Varanasi.




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Ayurvedic Management of Joints Disorders

*Atal Bihari Trivedi **Prof. A.K. Sharma

There are several types of joints disorders. As per Ayurveda, diseases affecting the joints are of different types. The treatment is to be performed after assessing Dosha, Dushya etc. Some of the most common joints disorders which are seen in daily pratice which are described in Ayurvedic texts include -

i. Sandhigata Vata
ii. Asthigata Vata
iii. Kroshtuka Sheersha.
iv. Amavata
v. Vatarakta etc.

Some commonly occurring joints disorder described in modern medicine are-

**A. Degenerative Arthritis (OSTEOARTHRITIS)**

Degenerative Joint disease is a chronic disorder of the predominantly weight bearing joints characterised by degeneration of cartilage and sclerosis of bone at the articular margins.

Majority of cases (90%) are classified as primary i.e. without any predisposing cause, 10% are secondary. Various causes of O.A. include -

- Congenital defects (Hip dysplasia)
- Trauma
- Metabolic disorder
- Neuropathic joints (Charcot's Joint in syringomyelia, diabetes etc.)

The manifestations of this disease resembles with the disease "SANDHIVATA" as described in Ayurvedic texts.

**Pathogenesis of Sandhivata -**

Vata prakopaka Nidan Sevana
↓
Vata Prakopa
↓
Altered functions of Vatavaha nadi
↓
Joints involvement
↓
Sandhivata
(Oesteo Arthritis)

**B. Rheumatoid Arthritis (RA)**

Criteria for diagnosing RA include -

i. Morning stiffness ≥ 1 Hr.
ii. Arthritis of three or more Joints.
iii. Arthritis of hand joints (PIP, MCP or Wrist)
iv. Symmetrical arthritis.
v. Suscntaneous nodules.
vi. Serum Rheumatoid factor.
vii. Erosions and/or periarticular osteopenia in hand/wrist joints. Seen on X-ray.

Rheumatoid arthritis can be correlated with Amavata on the basis of their clinical manifestations.

**Pathogenesis of Amavata -**

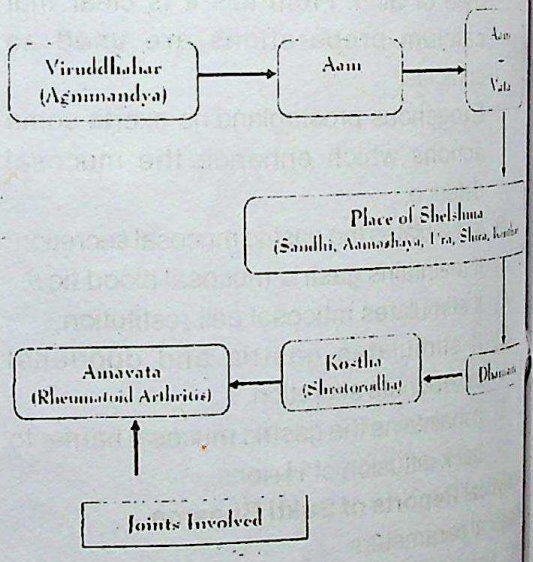


**C. Crystal induced arthropathies -**

Crystal induced arthropathies are a group of disease caused by the deposition of various crystals in the joint space which in turn initiate synovial inflammation. When the deposited crystals are of monosodium urate, the disorder is known as "Gout" and when the desposited crystals are calcium pyrophosphate the disorders is known as "Pseudo-Gout".

Symptoms of Gout are very much similar

* M.D. (Ay.) Scholar, P.G. Deptt. of Kaya Chikitsa, National Institute of Ayurveda, Jaipur - 302002
** Prof. & Head, P.G. Deptt. of Kaya Chikitsa, National Institute of Ayurveda, Jaipur-302002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



to that of Vatarakta roga as described in Ayurvedic texts.

**Pathogenesis of 'VATA RAKTA' -**

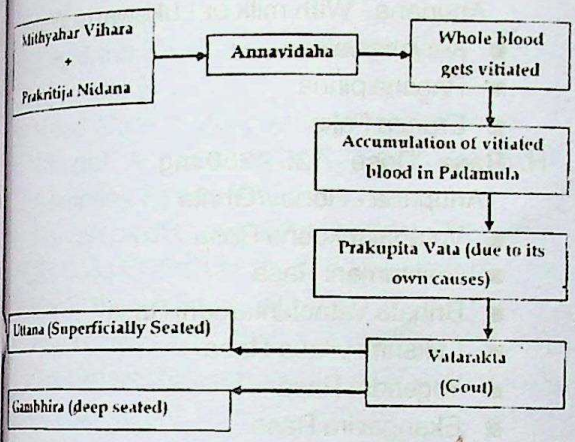


**Investigations relatd to joint disorders**

(1) Blood
- Complete Haemogram
  TLC, DLC, ESR, Hb gm%
- Platelet Count
- Viscosity
- Serum Ferritin
- Rheumatoid factor
- Antinuclear antibody
- Serum uric acid
- C-Reactive protein
- Fibrinogen
- Hepatoglobin

(2) **Synovial fluid analysis**
(3) **Synovial Biopsy**
(4) **Arthroscopy (Looking into the joints)**
(5) **DNA Binding test**
(6) **Arthrography**
(7) **Imaging -**
  (a) X-ray
  (b) USG and MRI
  (c) CT Scan

**Common manifestation of joint disorders -**

A. Arthralgia
B. Joint Stiffness
C. Inflammatory changes
D. Loss of functions
E. Low Back Pain
F. Neck Pain
G. Shoulder Pain
H. Elbow Pain
I. Knee Pain
J. Swelling of Joints

**Ayurvedic Line of management of Joint disorders-**

A. Rest to the joints
B. Reduction in weight
C. Advice for Nidana Parivarjana
D. Oleation (External)
E. Fommentations (Snigdha, Ruksha, Patrapinda, Nadisweda etc.)
F. Pradeha
G. Aalepa
H. Upanaha (Poultice)
I. Parisheka
J. Panchakarma Treatment
K. Simple exercises
L. Shamana Therapy
M. Surgery

**Drugs useful in Joint Disorders -**

**1. For external applications**
- Shatadhauta Ghrita
- Baladi Lepa
- Tiladi lepa
- Pinda Taila
- Dashanga Lepa
- Nirgundi Patra Lepa
- Haridra Lepa

**2. For Internal use**

**A. Churna** - Dose - 2-5 gm
Anupana - Lukewarm water
- Ajamodadi Churna
- Vaishwanara Churna
- Pathyadi Chura
- Panchakola Churna
- Chitrakadi Churna
- Panchasama Churna



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


**B. Bati -** Dose - 250 - 500 mg
Anupana - Lukewarm water

- Sanjivani Bati
- Agnitunda Bati
- Rasana Bati
- Amavatari Bati
- Chitrakadi Bati
- Sarvangsundari Bati

**C. Guggulu -** Dose - 500 mg - 1 gm
Anupana - Lukewarm water

- Yogaraja Guggulu
- Kaishore Guggulu
- Sinhanada Guggulu
- Rasnadi Guggulu
- Amrnritadi Guggulu
- Vatadi Guggulu
- Trayodashanga Guggulu
- Punarnawa Guggulu
- Gokshuradi Guggulu

**D. Decoction -** Dose - 30 - 40 ml
Anupana - Lukewarm water

- Rasna Saptaka
- Rasna Dashamula
- Mashabaladi
- Patoladi
- Mahamanjishthadi
- Haritaki
- Dashmula

**E. Taila (Oils) -** For both type of use External & Internal

- Bala Tail
- Sahachara Tail
- Nirgundi Tail
- Prasarini Tail
- Mahamasha Tail
- Dashmula Tail
- Mahanarayan Tail
- Panchaguna Tail

**F. Aasawa - Arishta** Dose - 30 - 40 ml
Anupana - With equal quantity of Water

- Chandanasava
- Punarnavasava
- Sarivadyasava
- Dashmularishta
- Amritarishta etc.

**G. Awaleha/Paka** Dose - 10 - 20 ml
Anupana - With milk or Lukewarm Wa

- Kalyanawaleha
- Rasona pinda
- Eranda Paka

**H. Rasa** Dose - 125 - 250 mg
Anupana - Honey/Ghrita

- Vatagajankusha Rasa
- Chintamani Rasa
- Brihata Vatachintamani Rasa
- Lakshmi vilasa Rasa
- Yogendra Rasa
- Ekangavira Rasa
- Amvatari Rasa
- Malla sindura

**I. Bhasma -** Dose - 250 - 500 mg
Anupana - Honey/Ghrita

- Godanti Bhasma
- Mrigashringa Bhasma
- Swarana Bhasma
- Vanga Bhasma
- Abhraka Bhasma
- Lauha Bhasma
- Tamra Bhasma

**PATHYA**

**Aaharaja -** Amla, Draksha, Oat, Munga, Bathu Parvala, Bitter Gourd, Maricha, Cum Yawani, Garlic, Madhu etc.

**Viharaja-** Mridu vyayam, Usna Vastra Mornin walk

**APATHYA**

**Aaharaja-** Milk - Fish, Cold drinks, Smokes, U of curd at night, Urada, Sema, Brin Samosa, Spicy vegetables, Pala Masala dosa etc.

**Viharaja-** heavy exercise, Sedentary habits, Ra Jagrana, Day time sleeping, Anxi Shoka, Bhaya (Terror) etc.


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## REFERENCES


1. Charaka Samhita — Shastri Kashinath & Chaturvedi Gorakhanath, Vidyotini Hindi Commentary, Chaukambha Bharati Acadami, Varanasi.
2. Dristartha Shariram — Athawale P.G., 1st Part, Athawale P.
3. Hand Book of Osteology — Poddar S. & Bhagat A., Bhagat V.K. Scientific Book Company Patna, 9th Edition.
4. Handbook of General Anatomy — Chaurasia, Dr. B.D.; CBS Publishers & Distributors, New Delhi; IIIrd edition/1997.
5. Kaya Chikitsa — Shukla Vidyadhar, IInd part, Chaukhambha Surbharati. Hindi Commentary, 4th edition.
6. Madhukosh Vyakhya — Upadhyaya Yadunandan, Shastri Sudarshan Madhav nidan, 1st Part, Chaukhambha Sanskrit Sansthan, Varanasi, 27th Edition.
7. Medicine for Students — Golwalla A.F. & Golwalla S.A., Golwalla A.F. Mumbai, 21st Edition.
8. Practical Medicine — Mehta P.J., Mehta S.P. Mumbai, 14th Edition.
9. Principles & Practice of Medicine — Davidon Stanley, Churchill livingstone, 19th Edition.
10. Ross & Wilson — Wilson K.J.W., ELBS. 7th Edition.
11. Sushruta Samhita — Shastri Ambikadatta, Chaukhambha Sanskrit Sansthan, Varanasi, 12th Edition.
12. Text Book of Medicine — Vasan R.S. & Shesadri Sudha. orient Longman Ltd. 1st Edition 1998.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी

1. प्र०:- महाभारत में अक्षोहिणी सेना की संख्या कितनी है ?
(a) 10 (b) 20 (c) 30 (d) 18

2. प्र०:- प्रमुख उपनिषद कितने हैं ?
(a) 4 (b) 11 (c) 13 (d) 6

3. प्र०:- हीनयान के ग्रन्थों में कितनी व्याधियों का वर्णन है ?
(a) 20 (b) 30 (c) 40 (d) 50

4. प्र०:- दक्षप्रजापति किस के मानसपुत्र कहे गये हैं ?
(a) अग्निवेश (b) आत्रेय
(c) ब्रह्मा (d) अश्विनीकुमार

5. प्र०:- शस्त्रावचारणीय का उल्लेख किस ग्रन्थ में मिलता है ?
(a) चरक संहिता (b) सुश्रुत संहिता
(c) अष्टाङ्ग संग्रह (d) भास्कर संहिता

6. प्र०:- वर्तमान में कौन-सा तंत्र चरक संहिता के रूप में उपलब्ध है ?
(a) भेल संहिता (b) हारीत संहिता
(c) पराशर संहिता (d) अग्निवेश तंत्र

7. प्र०:- शार्ङ्गधर संहिता कितने खण्डों में विभक्त है ?
(a) 3 (b) 4 (c) 5 (d) 6

8. प्र०:- कर्णमूलिक शोथ में किस दोष की प्रधानता होती है ?
(a) पित्त (b) कफ
(c)वात (d) उक्त कोई नहीं

9. प्र०:- त्वचा का रूक्ष होना किस धातु के क्षय के कारण होता है ?
(a) रस (b) रक्त (c)अस्थि (d) शुक्र

10. प्र०:- सुश्रुत ने प्रमेह पिडिकाएँ कितनी बतायी हैं ?
(a) 8 (b) 6 (c) 10 (d) 7

11. प्र०:- किस संहिता का चिकित्सा स्थान रसायन से प्रारम्भ हुआ है ?
(a) चरक (b) सुश्रुत
(c) निदान (d) सूत्र

12. प्र०:- शार्ङ्गधर संहिता में कुल कितने अध्याय
(a) 17 (b) 32 (c) 37 (d)

13. प्र०:- चरक के निदान स्थान में किस रोग का करते हुए उपद्रवों का उल्लेख पूर्वक उपरान्त किया गया है ?
(a) रक्तपित्त (b) प्रमेह
(c) उन्माद (d) अपस्मार

14. प्र०:- पित्तज प्रमेह के कितने भेद हैं ?
(a) 10 (b) 6 (c) 7 (d)

15. प्र०:- कौन-सा कुष्ठ असाध्य है ?
(a) काकाणक (b) सिध्म
(c) मण्डल (d) कपाल

16. प्र०:- उग्रतपा किसका पर्याय है ?
(a) इन्द्र (b) अग्निवेश
(c) आत्रेय (d) काकांयन

### Answer - Keys

| | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| (1) | D | (2) | B | (3) | D | (4) | C |
| (5) | B | (6) | D | (7) | A | (8) | A |
| (9) | B | (10) | C | (11) | A | (12) | B |
| (13) | A | (14) | B | (15) | A | (16) | A |

डा० अनुप कु० गक्खड़
दयानन्द आयुर्वेदिक कॉलेज, जालन्धर
एवं
डा० अनिल कु० गक्खड़
श्रीमती उर्मिलादेवी आयुर्वेदिक कालेज,
रोड, होशियारपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# पीयूषपाणि चिकित्सक प्रो० चन्द्रवली दूबे को हार्दिक श्रद्धांजलि

(स्व०) प्रो० चन्द्रवली दूबे का जन्म 4 जुलाई 1934 को ग्राम-कूड़ी, जनपद-वाराणसी में पवित्र सरयूपारिण ब्राह्मण कुल में स्वर्गीय पं० कृष्णानन्द दूबे की पत्नी की कुक्षि से हुआ था । आप बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, ए०बी०एम०एस० तथा बी०एवाई०एम० एवं पी०एच०डी० (काय चिकित्सा) किया था । आप प्रारम्भ में अध्यापन पूर्ण करने के पश्चात् अतरी आयुर्वेद महाविद्यालय, बाँदा उ०प्र० में अध्यापन कार्य किया । तत्पश्चात् भारत सरकार के सिर्च यूनिट में पं० विश्वनाथ द्विवेदी के निर्देशन में आयुर्वेद महाविद्यालय, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी में कार्य करते रहे । इसी बीच राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, लखनऊ में प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष के पद पर आपकी नियुक्ति, लोक सेवा आयोग, उ०प्र० द्वारा 1973 में हो गयी । तत्पश्चात् क्रमशः अपनी योग्यता एवं व्यवहार से क्रमशः प्रधानाचार्य एवं अधीक्षक, अपर निदेशक तथा निदेशक, आयुर्वेद एवं यूनानी सेवाएँ, उत्तर प्रदेश के पद पर उत्तरोत्तर आपका प्रोन्नत होता गया । अगस्त 1992 में आप निदेशक आयुर्वेद एवं यूनानी सेवाएँ उ०प्र०, लखनऊ के पद से कार्यमुक्त हुए ।

दूबे जी स्वभाव से बहुत मधुर, सरल तथा सज्जन व्यक्ति थे । 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना आप में देखने को मिलती थी । सम्पूर्ण आयुर्वेद जगत् को अपना परिवार समझते थे । छल-छद्म, धोखाबाजी, विश्वासघात एवं धूर्तता से आप कोसों दूर थे । सब पर विश्वास करते थे । इसलिए कभी-कभी आपको परेशानी भी उठानी पड़ती थी ।

आयुर्वेद के आप कुशल एवं पीयूषपाणि चिकित्सक थे । अध्ययन काल से आपकी चिकित्सा में रूचि थी । आयुर्वेद की चिकित्सा करते थे । ''माँ आनन्दमयी' स्वामी करपात्री जी, महामहिम ऊत्तर प्रदेश, आपकी चिकित्सा में रहे । लखनऊ में आप आयुर्वेद के गणमान्य चिकित्सकों में रहे । आप पूज्य गुरुवर पं० यदुनन्दन उपाध्याय जी से बहुत प्रभावित थे और उन्हीं को अपना गुरु मानते थे ।

आपके निर्देशन में अनेक छात्रों ने एम०डी० तथा पी०एच०डी० किया है । मैं उनके निर्देशन में पी०एच०डी० 'देह-प्रकृति' विषय पर लखनऊ विश्व विद्यालय से किया था ।

आप कुशल एवं अच्छे अध्यापक थे । अनेक अखिल भारतीय सम्भाषा परिषदों में अध्यक्ष रह चुके हैं । आपके दो पुत्र एवं तीन पुत्रियों का भरा पूरा परिवार है ।

ऐसे महामानव प्रो० दूबे का निधन 29 अक्टूबर 2006 को दिन में 10 बजे लखनऊ में इनके आवास पर हो गया जो आयुर्वेद परिवार की अपूरणीय क्षति है । भगवान् धन्वन्तरि से प्रार्थना है कि दिवगंत आत्मा को शान्ति प्रदान करे तथा परिवार को यह दुःख सहने की शक्ति प्रदान करें ।

**प्रो० रविदत्त त्रिपाठी**

भूतपूर्व निदेशक,

आयुर्वेद एवं यूनानी सेवाएँ, उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

**सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व**

# विभिन्न चिकित्सा-पद्धतियों में सहयोग जरूरी

*दिसम्बर, 1966*

आयुर्वेद विज्ञान पर आधारित चिकित्सा-प्रणाली है और इसे अवैज्ञानिक कहना सही नहीं है । पश्चिमी जगत् ने भी बहुत-सी बातें आयुर्वेद से ग्रहण की है और ऐसा लगता है कि लोग पुनः आयुर्वेद की ओर लौट रहे हैं लेकिन आज आवश्यकता इस बात की है कि सभी प्रचलित चिकित्सा-प्रणालियाँ पारस्परिक सहयोग के आधार पर गले-गले मिलाकर देश के करोड़ों जन के दीर्घायुष्य एवं सुन्दर स्वास्थ्य के लिए काम करे - क्योंकि राष्ट्र के चतुर्दिक विकास के लिए स्वस्थ शरीर एवं स्वस्थ तथा संतुलित मस्तिष्क चाहिए ।

आयुर्वेद चिकित्सा-प्रणाली सर्वाधिक प्राचीन है और इससे असंख्य जन लाभन्वित भी होते रहे हैं; किन्तु कोई भी पद्धति आज की दुनियाँ में विकास नहीं कर सकती, अगर उसके दरवाजे अन्य चिकित्सा-पद्धतियों से उपलब्ध ज्ञान के लिए बन्द रखे जायें । विज्ञान के अन्य क्षेत्रों से भी हमें सीखने का प्रयास करना चाहिए । परस्पर आदान-प्रदान, ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में वांछनीय है । पश्चिम के वैज्ञानिकों ने आयुर्वेदीय वाङ्मय से पर्याप्त ग्रहण किया है ।

**श्रीमती इन्दिरा गाँधी**

भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री

## बिहार के आयुर्वेदिक कालेज

बिहार में नाम लेने के लिए केवल एक ही सरकारी आयुर्वेदिक कालेज हैं - पटना में । इसके विपरीत सरकारी एलोपैथिक कालेज तीन हैं - पटना, दरभंगा तथा राँची में और चौथा सरकारी एलोपैथिक कालेज, भागलपुर में खुलने वाला है । यह स्थिति तब है जब एक-एक एलोपैथिक कालेज की स्थापना में करोड़ों रुपये खर्च होते हैं और उसके संचालन पर भी प्रतिवर्ष कितने ही लाख रुपये खर्च हो जाते हैं ।

बिहार में गैर-सरकारी एलोपैथिक कालेज केवल एक है - जमशेदपुर में । लेकिन, अभी वह प्रान्त वंचित है । वहाँ दस-बारह हजार रुपये प्रत्येक को लेकर उसका नाम लिखा जाता है । इस प्रकार उसका व्यावसायिक-सा है । फिर भी उसे बिहार सरकार ने लाख रुपये दिये हैं ।

इसके विपरीत, इस राज्य में तीन गैर-सरकारी आयुर्वेदिक कालेज हैं - बेगूसराय, भागलपुर तथा में । इसका अर्थ यह हुआ कि सरकार के तिगुने कालेज बिहार की जनता ने खोले दिये हैं । मेरा है कि बिहार-सरकार इन गैर-सरकारी आयुर्वेदिक का प्रान्तीयकरण कर लें । लेकिन अभी तक बिहार ने इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाया है । यह है कि इन तीनों में से दो अर्थात् बेगूसराय कालेज भागलपुर कालेज के पास तो काफी सम्पत्ति भी है

## राँची में भी आयुर्वेदिक कालेज खोला जाय

मेरा अनुरोध है कि वर्तमान आयुर्वेदिक के प्रान्तीयकरण के अतिरिक्त बिहार-सरकार राँची में आयुर्वेदिक कालेज भी स्थापित करे, क्योंकि सम्पन्न छोटानागपुर प्रमण्डल में एक भी सरकारी गैर-सरकारी आयुर्वेदिक कालेज नहीं है । यदि बिहार-सरकार राँची में आयुर्वेदिक कालेज खोल दे तो वहाँ शुद्ध आयुर्वेदिक पाठ्यक्रम के प्रयोग के लिए क्षेत्र सुलभ हो सकेगा ।

## विश्वविद्यालयों में आयुर्वेदिक अधिकाय

बिहार के विश्वविद्यालयों में आयुर्वेदिक अधिकाय नहीं है । यह अधिकाय अवश्य ही होना चाहिए । यह शिक्षा का अनिवार्य अंग है । बिहार में हजारों स्नातक स्तर तक शिक्षा पाते हैं । विश्वविद्यालयों में आयुर्वेदिक अधिकाय कायम हो जाने पर आयुर्वेद की संख्या बढ़ेगी । तब स्नातकोत्तर शिक्षा तो विश्वविद्यालयों ही अंग है और आयुर्वेद की स्नातकोत्तर शिक्षा की होने पर ही अनुसंधान की विधिवत् व्यवस्था हो सकती है ।

प्राणाचार्य पं० दुर्गाप्रसाद शर्मा, आयुर्वेदाचार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आरोग्य समाचार

## अखबार की कतरनों से

## A milestone in unravelling transcription process

**Many illnesses - such as cancer, heart disease and inflammation - are linked to disturbances in the transcription process**

ROGER D. KORNBERG is awarded this year's Nobel Prize in Chemistry for his fundamental studies concerning how the information stored in the genes is copied, and then transferred to those parts of the cells that produce proteins.

Kornberg was the first to create an actual picture of this process at the molecular level in the important group of organisms called eukaryotes (which, as opposed to bacteria, have well-defined cell nuclei).

**A central process**

Mammals like ourselves, as well as ordinary yeast, belong to this group of organisms. Constant transcription in the DNA is a central process for all living beings. If the trascription process is interrupted the organism will soon die, since all protein production in the cells ceases.

This is what happens in cases of poisoning by certain types of toadstools, like the death cap. The toxin in the death cap blocks the function of a specific enzyme, RNA-polymerase, which plays a central role in the transcription process.

Within a few days the toxin spreads from the bowels to the liver and kidneys, hence slowly destroying all these organs. Many illnesses – like cancer, heart disease, and different kinds of inflammation – are also linked to disturbances in the transcription process.

It is thanks to the flexible transcription system in eukaryotes that such complexity is possible within this group of organisms. All the cells in the body contain the same genetic information, but there is great variation between organs in the information that is actually transcribed, and thereby translated into protein production.

Knowledge about the transcription process is also fundamental for understanding how stem cells develop into different kinds of specific cells, with well-defined funcinterest in stem cells for therapeuctic application is very largely based on their capacity to develop into any kind of functional cell in a living organism. Understanding more about how transcription is regulated is therefore one of the necessary steps, if we want to realise the full potential of stem cells in medicine.

The DNA-molecule is constructed using four different types of building blocks: G,C, A and T. The RNA is composed of four corresponding types of building blocks. The genetic information written into these molecules is determined by the sequence in which the building blocks are put together.

The genetic code therefore consists of an alphabet with only four letters. The DNA-molecules is a double helix, with a G on one of the strands always opposing a C on the other strand, and A in a similar manner opposing T.

The transcription process starts with the DNA-double helix opening up so that a strand of 'naked' building blocks can be used as a template in creating an RNA-strand.

**Building blocks**

The cell contains the RNA building blocks in solution. If the transcription process functions, the RNA building block corresponding to a G inserts itself opposite a C on the DNA-strand, the RNA-version of a T inserts itself opposite an A on the DNA-strand, and vice versa. In this manner, the RNA strand is constructed in a step-wise process to form a 'negative' of the DNA-strand.

One fundamental question is how this process works in more detail. The wellbeing of the organism depends on translation of the correct information into proteins. Not more than one fault in ten thousand can be tolerated before the organism is impaired. For this reason the mechanism ensuring that the building blocks of RNA are put together in the right order must be very specific.

The key lies in a special en this process: RNA-polymerase.

The polymerase molecule keeps the DNA-strand in the right position during transcription and

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



creates a minuscule "cavity", so small that it will only accept the RNA building block that fits with the opposing DNA building block exactly.

If the wrong RNA building block tries to insert itself into the cavity it simply does not fit, just as the wrong piece cannot be inserted in a half completed jigsaw puzzle. This leads to the step-wise construction of the RNA-strand.

Once a new building block has been inserted in the right place, the DNA-strand is prompted forward by a small helical structure in the polymerase.

**Spontaneous changes**

This spring-like structure flips back and forth thanks to constant spontaneous changes in shape of the polymerase (this is precisely the mechanism which is destroyed by the toxin of the death cap, mentioned above).

In this manner, the DNA strand is again and again moved into the right position for a new building block to be added to the growing RNA-strand.

The truly revolutionary aspect of the picture Kornberg has created is that it captures the process of transcription in full flow. What we see is an RNA-strand being constructed and hence the exact positions of the DNA, polymerase and RNA during this process.

In an ingenious manner Kornberg has managed to freeze the construction process of RNA half-way through, simply by leaving out one of the necessary building blocks from the solution he uses. When the construction reaches the point where the missing building block should be inserted the whole process stops.

Kornberg has then created crystals of the molecules involved, and 'taken their picture' using X-rays. This picture is of course not an ordinary photo but an image of line form. Starting with such a picture, a computer can calculate the real position of atoms in the molecules.

This method of making crystals of biological molecules in order to depict them is a very common tool today. Normally, however, we only see pictures of finished complexes a individual molecules.

**Capturing a reaction**

To capture a chemical reaction as it tak place is very difficult, and it is not enough to b good crystallographer in order to succeed. Wha particular about the way Kornberg works is that combines crystallography with very de biochemical knowledge, which makes it possib for him to assume full control of the process wants to depict.

Besides this detailed piclymerase, he also contributed several other important pieces information concerning the transcription proce by studying other crystals of RNA-polymeras DNA, RNA and important complexes ca general transcription factors.

**Molecular mechanisms.**

These images make it possible understand the molecular mechanisms govern the transcription process.

For a long time it was believed that transcription process in eukaryotes was s similar to that in bacteria (which unlike eukary cells lack a well-defined nucleus).

It has however become clear that process in eukaryotes is much more comp RNA- polymerase was malian liver cells. T proved very difficult to work with these cells.

Instead, bacteria became the organisms to be studied in detail, since they much easier to use. In 1965 the Nobel Pri Physiology or Medicine was awarded to Jac Monod, Andre Lwoff and Francois Jacob, a other things for their description of transcription in bacteria works. Besides R polymerase another molecule called sigma fa is necessary in order for transcription in bac to start.

**Recognising Codes**

This molecules binds to RNA-polym and, through its capacity to recognize sp codes in the DNA, it tells where the ge information starts and where it ends.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Without the sigma factor, transcription would never start since the polymerase on its own does not 'know' where on the DNA-strand to start reading. However, when researchers returned to eukaryotic cells after this discovery no one managed to find the sigma factor.

It gradually transpired that in eukaryotes there are five different molecular complexes which correspond to the single sigma factor in bacteria. All of them are necessary for transcription to start in our cells. These complexes are called general transcription factors and play an important role in the fine-tuning of transcription in eukaryotes.

Finding all these five transcription factors required a great deal of painstaking work, purifying cell extracts in several steps. By removing one substance at a time from these extracts until the transcription stopped working, researchers isolated the substances that were necessary for transcription to take place.

**Variety in function**

When this was done, many were convinced that every part of the transcription system in eukaryotes had been discovered, just as with bacteria. Even so, the great variety in shape and function of eukaryotic cells had not been explained.

There were as yet no good answers to questions concerning how certain genes are expressed in blood cells, others in the cells of the liver, and so on.

One of Kornberg's great contributions at this stage was his development of a new system of using yeast cells in laboratory work.

Ordinary yeast is a eukaryote, just as mammals are. This makes it possible to use yeast as a model organism instead of cells from mammal organs.

Yeast cells are much easier to manipulate and it is easier to create a homogenous material to work with using these cells. In spite of this Kornberg's research group spent ten years fine-tuning the system, before it could be used to investigate the transcription process.

Many research groups would have given up much earlier, since several years went by without any actual results that could be publish But it is this very system, using yeast cells, t has made it possible for Kornberg to produce RN polymerase and general transcription factors in t adequate form and quantity to create crystals investigate.

Thanks to this systme of yeast ce Kornberg found yet another molecular comp which turned out to play an important role as kind of on-off switch for the transcription proce in eukaryotes.

The DNA-helix includes parts call enhancers, which bind to specific substances th are found in different tissues.

In this manner transcription of certa genes is stimulated in certain tissues. In the liv — for instance – there is a specific signalli substance, which binds to a liver-enhancer in t DNA hence turning on the transcription of a ge close to the enhancer.

In other parts of the body, this live specific gene will however never be switched because the necessary signalling substance lacking, Kornberg discovered that this regulati requires the proesence of yet another molecu complex, transmitting the signals and there switching the transcription on or off. This 'relay complex is called Mediator.

**The great complexity**

The great complexity of eukaryot organisms is actually enabled by the fine interpl between tissue-specific substances. enhancers the DNA and Mediator.

The discovery of Mediator is therefore true milestone in the understanding of th transcription process.

Kornberg continues his crystallograph and functional work today, by trying to include ev larger parts of the transcription apparatus in h descriptions.

Hitherto he has shown the inerpla between RNA-polymerase, DNA and the growin RNA-strand and its building - *Excerpted from pub information available on* http:// nobelprize.org.

**(With Courtesy from The Hindu**



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आपके पत्र

## आयुर्वेद चिकित्सक केवल आयुर्वेद-पद्धति से चिकित्सा करें ।

ा में

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०
पटना

ाशय,

मैं आपके प्रतिष्ठित पत्र की ओर से हिन्दुस्तान के ाम वैद्यों एवं सम्बन्धित सरकार का ध्यान इस ओर ले ना चाहता हूँ कि आयुर्वेद के स्नातक, वैद्य या चिकित्सक द चिकित्सा-कार्य में संलग्न हैं, तो आयुर्वेद पद्धति से हें चिकित्सा-कार्य करना चाहिए । ऐसा देखा जाता है कि ायुर्वेदिक चिकित्सक धड़ल्ले से एलोपैथी की दवाई पने रोगियों को देते हैं । मामूली सर-दर्द, ज्वर, कमर-दर्द हित अनेक रोगों से सम्बन्धित व्यवस्था-पत्र में एलोपैथी ाओं की भरमार रहती है । इससे आयुर्वेद का अहित होता जनता के मध्य यह संदेश जाता है कि आयुर्वेद में रोग ो शमन करने का उपाय नहीं है । यह तथ्य सत्य से परे । इसके विपरीत आयुर्वेद में असाध्य रोग को ठीक करने ो क्षमता है, किन्तु हमें इसके लिए जनता को विश्वास में ाना पड़ेगा। ऐसे भी जिस शास्त्र का हमने अध्ययन नहीं किया है और किया भी है तो संक्षिप्त, इससे मानव-आरोग्य ा कल्याण नहीं हो सकता है । आयुर्वेद हो या अन्य चिकित्सा-विज्ञान, यह एक वृहद् शास्त्र है । संक्षिप्त ज्ञान हम रोगियों का हित करने के बजाय अहित करते हैं । दाहरण के लिए हम वैद्य एण्टीबायोटिक्स के विषय में ादा नहीं जानते हैं, फिर भी, अपने व्यवस्था-पत्र में इन ौषधियों को लिखते हैं । दिलचस्प बात यह है कि लोपैथी चिकित्सकों को भी एलोपैथी औषधि की संरचना Pharmocology) के विषय में पर्याप्त ज्ञान नहीं रहता । उनके पाठ्य-क्रम में एक या दो पत्र फर्माकोलोजी का हता है । जब एलोपैथी चिकित्सकों को द्रव्य-संरचना का र्याप्त ज्ञान नहीं रहता है, तो हम आयुर्वेदज्ञों को कहां से होगा । उदाहरण के लिए ट्रेट्रा सायक्लिन हाइड्रोक्लोराइड के साथ विटामीन-सी (एसकोर्बिक एसिड) का प्रयोग वर्जित है, फिर भी, कई चिकित्सक अपने व्यवस्था-पत्र में ड़ल्ले से लिखते हैं । इसी तरह अनेक एण्टी-बायोटिक्स दूध का प्रयोग वर्जित है, किन्तु एलोपैथी चिकित्सक गण को इस सम्बन्ध में नहीं बताते हैं । जिस तरह आयुर्वेद अनुपान-भेद है, उसी तरह एलोपैथी में भी है ।

हमारे लिखने का आशय यह है कि जिस विषय का हमें पर्याप्त ज्ञान नहीं हो, उसमें दखल नहीं देना चाहिए । ऐसे भी, प्राप्त सूचना के अनुसार माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एक निर्णय के द्वारा आयुर्वेदज्ञों को एलोपैथी औषधियों के प्रयोग पर प्रतिबन्ध लगाया है । सरकार कानून बनावे या नहीं, हम जनता, आयुर्वेद एवं राष्ट्र के व्यापक हित को ध्यान में रखते हुए आयुर्वेदिक चिकित्सकों को एलोपैथी औषधियों के प्रयोग में परहेज होना चाहिए ।

– वैद्य रामासन तिवारी
श्री बाबा गुप्तनाथ आयुर्वेदिक स्टोर्स
ब्लाक के सामने, मेन रोड़, चेनारी, सासाराम

## आयुर्वेरत्न परीक्षा के आधार पर पंजीयन न करने, महिला प्रताड़ना हर्जाना समेत प्रताड़ना मुक्त करने रजिस्ट्रार बोर्ड ऑफ इन्डियन मेडिसिन राजस्थान के खिलाफ दर्ज कर दण्डात्मक कार्यवाही की सादर अपील

सेवा में,

श्रीमान सचिव
राजस्थान उच्च न्यायालय विधिक सेवा उप समिति
(राजस्थान उच्च न्यायालय पीठ भवन जयपुर
जयपुर, राजस्थान

द्वारा,

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०
पटना

संदर्भ :-

1. श्रीमान् जी के क्रमांक पी०एल०सी०/186/06 दिनांक 02.08.06 ।
2. श्रीमान् जी के क्रमांक पी०एल०सी०/181/06

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



दिनांक 22/09/06

3. रजिस्ट्रार बोर्ड ऑफ इन्डियन मेडिसिन, राजस्थान के पत्रांक 13865/13864 दिनांक 4/09/06

प्रार्थिनी डा० (श्रीमती) गीता गुप्ता, पत्नी, डा० सुनील राज आयुर्वेद रत्न की परीक्षा 1990 में उत्तीर्ण की। पंजीयन हेतु आवेदन पत्र संख्या 3302 दिनांक 18/08/94 को निर्धारित पंजीयन शुल्क के साथ रजिस्ट्रार बोर्ड ऑफ इन्डियन मेडिसिन राजस्थान, जयपुर को जमा किया। पंजीयन शुल्क का जमा होना मान्यता की पुष्टि की। इस डिग्री के आधार पर सूरतगढ़, पिलीबंग में सरकारी नियुक्ति पर है।

समय-समय पर कोर्ट के आदेश शिक्षा विभाग (मानव संसाधन विकास मंत्रालय), मेडिकल बोर्ड के आदेश रजिस्टार बोर्ड ऑफ इन्डियन मेडिसिन, राजस्थान ने पत्र निकाल कर मान्यता की पुष्टि की।

लगभग 12 वर्ष से महिला प्रताड़ना, गृहिणी से शिक्षा क्षेत्र में आगे बढ़ने के अवसर में बाधक बनने व समाजिक मानसिक प्रताड़ना की ऐवज में रजिस्ट्रार बो ऑफ इन्डियन मेडिसिन, राजस्थान, जयपुर-15 गलत त प्रस्तुत कर प्रताड़ित करने के प्रयास के एवज में FIR द कर दण्डात्मक कार्यवाही करने की अनुमति दिलावे।

प्रार्थिनी को उचित मुआवजा जोकि पूर्व में दा कर चुकी है, के साथ सम्मानपूर्वक जीवन यापन करने मदद करें।

प्रार्थिनी उचित न्याय दिलाने के लिए सदै आभारी रहेगी। इस संदर्भ में 12/9/06 को रजिस्टर्ड प सचिव राजस्थान उच्च न्यायालय विधिक सेवा, उप समि जयपुर को मान्यता पुष्टि के कागजात दो प्रतियों में प्रेषित क चुकी है।

भवदीय
डा०(श्रीमती) गीता गुप्ता
w/o डा० सुनील राज
मुख्य डाकघर के पास
अर्चना कलर लैब के बगल में
बीकानेर, राजस्थान - 334001


बैद्यनाथ
प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं। इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है। हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है। इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, बरबट और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं। मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है। बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# फिटकरी के उपयोगी घरेलू नुस्खे

फिटकरी सामान्यत: सभी घरों में मिलती है । सके द्वारा कई रोगों का एवं लक्षणों का उपचार किया जा कता है । कुछ घरेलू नुस्खे प्रस्तुत हैं :-

1. बाह्य रक्तस्राव :- चोट लगने पर, दाढ़ी बनाने पर या किसी अन्य कारण से त्वचा से रक्तस्राव होने पर फिटकरी का कपड़छन चूर्ण या इसका घोल प्रयोग करने से रक्तस्राव रूक जाता है ।
2. नाक से रक्त स्राव होने पर फिटकरी-चूर्ण को रूई में लेकर नासा में पैंकिग कर देना चाहिए या इसके 2% घोल को बूंद-बूंद कर डालने से नाक से रक्त बहना बंद हो जाता है ।
3. मसूढ़ों से रक्तस्राव होने पर इसके 2% घोल से कुल्ले करना चाहिए ।
4. महिलाओं में योनिगत रक्तस्राव होने या माहवारी में अधिक समय तक रक्तस्राव होते रहने की स्थिति में फिटकरी के घोल में मलमल के कपड़े को भिगोकर इसे योनि में रखें । इससे रक्तस्राव बंद हो जाता है ।
5. आर्द्र विचर्चिका (Eczema) में फिटकरी का 1% एवं टंकण का 1% घोल मिलाकर प्रतिदिन साफ करने से लाभ होता है ।
6. दांत निकालने के पश्चात् निकलने वाले रक्त को रोकने के लिए इसके घोल से कुल्ले करावें और इसके चूर्ण को रूई के फाहे में लेकर दबाकर लगा देवें ।
7. फिटकरी को तवे पर गरम करने पर इसका फूला बन जाता है । इसको शहद में मिलाकर आँखों में लगाने से आँखों की गरमी खत्म होती है । आँखों से पानी गिरना बन्द होता है ।
8. पायरिया मंजन :- फिटकरी 2 भाग, सुपारी भस्म - 2 भाग, इलायची-1 भाग, लौंग-1 भाग, सोना गेरू-2 भाग, पिपरमेंट- ¼ भाग, खटिका- 4 भाग, शीतलचीनी - 2 भाग, नीम की पत्तियों की भस्म - 4 भाग । इन सबको मिलाकर बारीक चूर्ण कर लें । इसके मंजन करने से पायरिया एवं दांतों व मसूड़ों के सभी रोग दूर हो जाते हैं ।
9. कूकर खाँसी :- बच्चों में होने वाली कूकर खाँसी फिटकरी भस्म- 1 रत्ती, प्रवाल पिष्टी- ¼ कांकड़ासिंगी चूर्ण - 2 रत्ती मिलाकर शहद के चटाने से तुरंत फायदा होता है ।
10. अतिसार एवं प्रवाहिका रोग में 2 ग्राम फिटकरी को 500 मि०ली० बकरी के दूध में मिलाकर पिला
11. त्वचा सम्बन्धित रोगों जैसे - खुजली, दद्रु, विचर्चिका पाया आदि में फिटकरी का चूर्ण लगाना चाहिए फिटकरी के 2% घोल से नित्य धोना चाहिए ।
12. विषम ज्वर एवं प्रतिश्याय में क्रमश: आक एवं की भावना देकर फिटकरी की भस्म बना लें । इसे 2-2 रत्ती की मात्रा उष्ण जल से लें ।
13. निमोनिया में फिटकरी भस्म, टंकण भस्म एवं बराबर मिलाकर देने से बहुत फायदा होता है ।
14. पाण्डु एवं कामला रोग में फिटकरी भस्म 4-4 मट्ठे या दही के तोड़ से दें ।

डा० गोविन्द गुप्ता, एम०डी०
रीडर, रोग एवं विकृति विज्ञान विभाग
श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेद कॉलेज
अस्थल बोहर, रोहतक

## अनुभूत योग यकृत कैन्सर के लिये

मैंने (डा० गोपाल चड्ढा निर्माणाध्यक्ष चड्ढा (रजि०) नगरोटा बगवा जिला कांगड़ा, हि०प्र० आविष्कृत गोका पैरोडी दन्त औषध एवं कैन्सर अनुसंधानकर्त्ता अनु योग ।। यकृत कैसरों से अधिक रोगियों को प्रयोग है जिसमें एल्फा प्रोटीन की वृद्धि हो जाती है । एल्फा, प्रोटीन 82 हजार से भी अधिक या 6 माह के लगभग आ गया ।

1. हीरक भस्म - 3 रत्ती
2. ताम्र भस्म - 10
3. प्रवाल पिष्टी- 40 ग्राम
4. कुटकी चूर्ण - 20
5. नीम पत्र चूर्ण -20 ग्राम
6. आमला चूर्ण - 40
7. चिरैता - 20 ग्राम
8. कनैर जड़ चूर्ण-20

7+7 भावना गोमूत्र - वन तुलसी

मात्रा :- 1 ग्राम दिन में तीन बार ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

## उत्तर प्रदेश

### श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, झांसी द्वारा श्री धन्वन्तरि जयन्ती ''बैद्यनाथ स्वास्थ्य दिवस'' समारोह सम्पन्न

दिनांक 19 अक्टूबर 2006 को श्री धन्वन्तरि जयन्ती के शुभावसर पर ''बैद्यनाथ स्वास्थ्य दिवस समारोह'' का आयोजन लक्ष्मी व्यायाम मन्दिर के नव निर्मित स्टेडियम सभागार झांसी में किया गया ।

सर्वप्रथम भगवान धन्वन्तरि की पूजा अर्चना प्रतिष्ठान के एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर श्री अनुराग शर्मा एवं श्री अक्षय गौड़ के द्वारा की गयी ।

समारोह कार्यक्रम की अध्यक्षता के लिये सर्वसम्मति से झांसी विकास प्राधिकरण के अध्यक्ष श्री हरगोविन्द सिंह कुशवाहा को चुना गया । समारोह के मुख्य अतिथि श्री श्याम सुन्दर सिंह (एम.एल.सी.) व अध्यक्ष को माल्यार्पण श्री अनुराग शर्मा एवं श्री अक्षय गौड़ ने किया । समारोह में परम्परागत आयुर्वेद के 5 चिकित्सा विशेषज्ञ वैद्यों को सम्मानित किया गया । समारोह का संचालन एवं सम्मान के लिये आमंत्रित वैद्यों का संक्षिप्त परिचय प्रतिष्ठान के महाप्रबन्धक श्री वाई०पी० शर्मा द्वारा कराया गया । आमंत्रित वैद्यों का सम्मान प्रतिष्ठान के एक्जीक्यूटिव डारेक्टर श्री अनुराग शर्मा ने उनके आयुर्वेद जगत के रचनात्मक कार्यों के लिये उत्कृष्ट चिकित्सा कार्य में सफलतम परिणाम हेतु प्रशस्ति पत्र एवं श्रीफल व अंगवस्त्र आदि भेंट देकर सम्मानित किया गया । सम्मानित किये गये वैद्यराज श्री **संकटमोचन मिश्र (मकरांव, हमीरपुर)** ने अपने सम्बोध न में कहा कि बैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा दिन प्रतिदिन हो रहे औषधियों पर शोधकार्य व जनहित में स्वास्थ्य शिविर व नि:शुल्क स्त्रास्थ्य साहित्य वितरण के कार्य पर मुझे हार्दिक प्रसन्नता होती है ।

**कठौन्द जालौन से पधारे वैद्य श्री रामशंकर** मिश्रा ने कहा कि बैद्यनाथ प्रतिष्ठान के आदि संस्थापक स्व० वैद्यराज पं० रामनारायण शर्मा जी ने जो-जो कार्य जनहित में आयुर्वेद माध्यम से समाज व राष्ट्र के किये आरम्भ किये थे आज उनका परिवार उनके पद चिन्हों पर चलकर जनहित कार्य में संलग्न है । बैद्यनाथ प्रतिष्ठा परिवार से देश के आम व्यवसाय वर्ग को राष्ट्र सेवा क प्रेरणा लेनी चाहिये और समझना चाहिये कि अपने कार्य क्षे द्वारा अपने ढंग से देश व समाज सेवा की जा सकती है

**ग्वालियर से पधारीं डॉ०(श्रीमती) चंचल जौहरी** अपने सम्बोधन में कहा कि औषधियों पर शोध-अनुसंधा के साथ-साथ भारत की सभी आयुर्वेदिक कम्पनियों क अपने औषधि उत्पादन प्रोपरायटरी पेटेन्ट पंजीयन करा लेन चाहिये ताकि कोई विदेशी हमारे उत्पादनों में प्रयुक्त औषधि द्रव्य को पेटेण्ट का दावा न कर सके । जैसा कि कुछ वर्ष पूर्व अमेरिका ने भारतीयों द्वारा हजारों वर्ष पूर्व की अनुसंधानि हल्दी, नीम, कुटकी व बासमति चावल का पेटेन्ट कर

लिया था ।

**लखनऊ से पधारे डॉ० नवीन दुबे** ने अपने सम्बोधन में कहा कि भारत के आयुर्वेदिक प्रतिष्ठानों में केवल बैद्यनाथ प्रतिष्ठान ही एक ऐसी संस्था है जो अपने साथ-साथ आयुर्वेद के चहुमुखी विकास के प्रति जागरूक है, बैद्यनाथ प्रतिष्ठान के संचालकगण आयुर्वेद व आयुर्वेदिक चिकित्सकों का सही मूल्यांकन कर उन्हें उत्साहित और अपने कर्तव्यों के प्रति विगत कई वर्षो से जागरुक व कर्त्तव्यवान बनाता आ रहा है ।

**कानपुर से आमंत्रित डॉ० ज्ञानप्रकाश त्रिपाठी** ने अपने सम्बोधन ने कहा कि वर्तमान समय देश में हजारों आयुर्वेदिक फार्मेसियां हो गयी हैं किन्तु आयुर्वेद का विकास व आयुर्वेद द्वारा समाजिक कर्तव्य, समाज सेवा व राष्ट्रभक्ति किस प्रकार की जा सकती है इसके लिये बैद्यनाथ प्रतिष्ठान के संचालकगण व प्रतिष्ठान के आदि संस्थापक स्व० वैद्यराज पं० रामनारायण शर्मा जी को प्रेरणा स्रोत मानता हूँ । **प्रतिष्ठान की ओर से स्वागत भाषण**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ाचन करते हुये प्रतिष्ठान के महाप्रबन्धक श्री वाई०पी० र्मा ने समारोह में उपस्थित सभी गणमान्य लोगों का ागत अभिवादन करते हुये कहा कि आयुर्वेद की निरापद णवत्ता और विश्वसनीयता का प्रचार-प्रसार अब विदेशों में ो प्रसारित हो चुका है । पश्चिमी देशों में आयुर्वेद का ाध्ययन-अध्यापन और रिसर्च-अनुसंधानों की व्यापक होड़ गी हुई है । वहां के बड़े-बड़े व्यवसायी, भारतीय दवा र्माताओं के साथ मिलकर आयुर्वेद के विकास व चिकित्सा नुसंधान विधा के लिए वैज्ञानिक रिसर्च करने में संलग्न ने को आतुर हैं किन्तु हमने आयुर्वेद एवं वैकल्पिक ौषधियों के अध्ययन, अनुसंधान एवं विकास के उद्देश्य से बुन्देलखण्ड यूनिवर्सिटी झाँसी'' के सहयोग से वैद्य पं० मनारायण शर्मा इंस्टीट्यूट ऑफ आयुर्वेद एण्ड अलटरनेटिव डीसिन एजुकेशन एण्ड रिसर्च की स्थापना की है । हमें श्वास है कि यदि निष्ठापूर्वक कार्य करते हुए भी बिना वदेशी सहायता से आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का विकास म्भव है । इसके लिए अर्थ और शिक्षा अनिवार्य है । वदेशी चिकित्सा पद्धति सर्जरी के कारण विकसित है किन्तु भारतीय समाज के लिए महंगी चिकित्सा है जिस दन आयुर्वेद की उपेक्षित शल्य चिकित्सा का विकास व संसाधन जुटेगा उसी समय से भारतीय आमजन समुदाय को रल व सस्ती चिकित्सा उपलब्ध हो सकेगी । **समारोह के अध्यक्ष श्री हरगोविन्द कुशवाहा ने** उपस्थित जन समुदाय को सम्बोधित करते हुए अपने अध्यक्षीण भाषण में कहा कि आयुर्वेद की समाज के स्वास्थ्य एवं जीवन उत्थान में महती भूमिका है । वर्तमान परिवेश में एलोपैथी की ओर से लोगों का मोह भंग होता जा रहा है । आज विभिन्न रोगों से बचने का एक ही मार्ग है कि वह प्रकृतिवत रहने व प्राकृतिक स्वयं उत्पन्न जड़ी-बूटियों से निर्मित औषधियों का उपयोग करें जो है आयुर्वेदिक औषधियां । कहा भी गया है कि जो प्राणी जहां पैदा हुआ उसकी वहीं की प्राकृतिक वस्तुओं से जीवन रक्षा होती है । अलग-अलग भौगोलिक स्थान व देश में अलग-अलग प्राकृतिक वातावरण है । उन्होंने उदाहरण स्वरूप बैद्यनाथ विज्ञापन की एक पंक्ति पढ़कर सुनायी ''देश की मिट्टी, देश की हवा । देश का पानी, देश की दवा'' और कहा कि इस विज्ञापन का भी यही अर्थ है कि भारत के लोगों के लिए भारतीय चिकित्सा आयुर्वेद की ही औषधियां लाभ करती हैं ।

समारोह के समापन के अवसर पर प्रतिष्ठान के एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर श्री अनुराग शर्मा जी ने समारोह में पधारने के लिए उपस्थित वैद्यगण एवं जन समुदाय का आभार व धन्यवाद व्यक्त किया ।

अन्त में भगवान श्री धन्वन्तरि का प्रसाद वितरण व स्वल्पाहार के बाद समारोह का समापन हुआ ।

## उत्तर प्रदेश

## धन्वन्तरि जयन्ती पर राज्यपाल ने औषधि पौधे रोपित किये

**लखनऊ : 19 अक्टूबर, 2006**

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल, श्री टी०वी० राजेश्वर ने धन्वन्तरि जयन्ती के असवर पर आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि के चित्र पर माल्यार्पण करते हुए राजभवन स्थित ''धन्वन्तरि वाटिका'' में महानिम्ब (Melia azedarach) एवं बहेड़ा (Terminalia belerica) आदि आयुर्वेदीय औषधि पौधे रोपित किये । इस अवसर पर प्रमुख सचिव राज्यपाल श्री लव शर्मा के श्वेत सेमल (Ceiba pentandra) का पौधा रोपित किया । इसके साथ ही विशेष सचिव राज्यपाल, श्री हरि चरण प्रकाश ने शमी (Prosopis cineraria) एवं वित्त नियंत्रक, श्री आर०आई०विश्वकर्मा तथा विशेष कार्याधिकारी, श्री जार्ज पी० जैकब ने गूगल (Commiphora mukul) के पौधे रोपित किये । कार्यक्रम में राजभवन के समस्त अधिकारी एवं कर्मचारी उपस्थित थे ।

चिकित्साधिकारी (आयुर्वेद) एवं प्रभारी अधिकारी धन्वन्तरि वाटिका, आयुर्वेदाचार्य डा० शिवशंकर त्रिपाठी ने बताया कि राजभवन में स्थापित इस धन्वन्तरि वाटिका का मुख्य उद्देश्य आयुर्वेदीय औषधि पौधों की वाटिका के अनुसरण कर प्रदेश के विभिन्न अंचलों में ऐसी धन्वन्तरि वाटिकाएं स्थापित हो चुकी हैं और जन-सामान्य


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



में औषधीय पौधों के रोपण के प्रति रूचि बढ़ी है । उल्लेखनीय है कि धन्वन्तरि वाटिका की स्थापना राजभवन में 6 वर्ष पूर्व हुई थी । डा० त्रिपाठी के अनुसार इस वाटिका में अर्जुन, रूद्राक्ष, कुटज, कंचनार, ऑवला, हरड़, बादाम, पुत्रंजीव, कदम्ब, पारिजात, कर्पूर, नारियल, सर्पगन्धा, अश्वगंधा, मौलश्री, निर्गुण्डी, लताकस्तूरी, श्योनाक, सिकाकाई, काली हल्दी, गुडमार, आकाशी घुइयां, कियोकन्द, कर्चूर आदि अनेक दुर्लभ औषधि पौधों सहित 200 से अधिक प्रजाति के पौधे यहाँ रोपित हैं ।

## धन्वन्तरि जयन्ती सम्पन्न

विश्व आयुर्वेद परिषद् के तत्वावधान में धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर जिला पंचायत सभागर हरदोई में "कन्या भ्रूण हत्या सामाजिक अपराध" विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया । इस अवसर पर कार्यक्रम की मुख्य अतिथि सुश्री आतिका सलाउद्दीन सिद्दकी की, मुख्य चिकित्साधिकारी हरदोई तथा श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन, नई दिल्ली के सेल्स मैनेजर श्री ए.के. शर्मा द्वारा भगवान धन्वन्तरि के चित्र पर माल्यार्पण कर कार्यक्रम का शुभारम्भ किया गया । इस अवसर पर मुख्य चिकित्साधिकारी ने अपने विचार व्यक्त करते हुये भ्रूण हत्या के विषय में बनाये गये लागू कानून तथा उसके क्रियान्वयन की जानकारी दी । उन्होंने कहा कि इस जघन्य कृत्य में महिलायें एवं पुरुष दोनों समान रूप से भागीदार हैं । इसमें महिलाओं को भी आगे आकर प्रयास करना होगा ।

विश्व आयुर्वेद परिषद् के जिला अध्यक्ष, डा० आर०के० त्रिवेदी के अवतरण के सम्बन्ध में अवगत कराते हुये "पत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" की विचारधारा वाले देश में कन्या भ्रूण हत्या जैसे अपराध को लज्जाजनक बताया । वैद्य जी बालशास्त्री ने आयुर्वेद को जीवन शैली में उतारने की आवश्यकता पर बल देते हुये कन्या भ्रूण हत्या को महापाप बताया । कोपल संस्था के जी अरुण सिंह ने बताया कि वर्तमान में राष्ट्रीय गणना के अनुसार प्रति 1 हजार लड़कों पर 875 लड़कियों का अनुपात चिन्तनीय है । इस पर हर दशा में रोक लगानी चाहिये ।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन, दिल्ली से अ ए०के०शर्मा ने अपने ओजस्वी उद्बोधन में कहा कि प्रकार का आयोजन सराहनीय है । इस कार्यक्रम से सम में एक नारीचेतना का संचार होगा तथा कन्या भ्रूण ह जैसे जघन्य अपराध के लिये प्रयास और अधिक कठोर चाहिये । बरेली आयुर्वेदिक कॉलेज से आये डा० दे कुमार द्विवेदी ने अपने अध्यक्षीय सम्बोधन में वि आयुर्वेद परिषद् के इस प्रयास को बहुत आवश्यक सराहनीय बताते हुये जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरिय के देश में जननी स्वरूपा कन्या भ्रूण हत्या को निन्दन बतलाया । गोष्ठी को सम्बोधित करते हुये क्षे०आयु०यून अधिकारी, डा०वी०के० मिश्रा ने भी इस विषय पर अ विचार व्यक्त किये । कार्यक्रम का संचालन डा० सु अग्निहोत्री ने किया तथा डा० अवनीन्द्र कुमार मि "शिशु" ने समस्त आगन्तु को आभार प्रकट किया । अवसर पर बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की ओर से डा०ए शर्मा ने समस्त वैद्यों, चिकित्सकों एवं आगन्तुकों को उप भेंट किये ।

गोष्ठी में श्री एस.के. मिश्रा, श्री आशीष सिन वैद्य महादेव प्रसाद डडवानिया, डा० महेश्वर सहाय गुप्त डा० इन्दूरयन दीक्षित, डा० शरद चन्द्र मिश्रा, श्री गोप डिडवानिया, वैद्य रमेश वाजपेई, डा०पी.के. चौहान, डा विजय त्रिवेदी, डा० आलोक सिंह, डा०एम०वी०वर्मा, ड नवीन सक्सेना, डा०एन०सी० त्रिपाठी, डा०आर०एन०शुक्ल डा० राहुल त्रिवेदी, डा० सुरनाथ अवस्थी 'खुवखुब' वै राम लखन, डा०एम०वी०वर्मा, डा०वी.सी. गुप्ता त अवनीकान्त वाजपेई आदि नगर के सन्तान्त व्यक्ति उपस्थि रहे ।

## धन्वन्तरि-जयन्ती सम्पन्न

धन्वन्तरि जयन्ती भव्य रूप से मनाई गई । अक्टूबर धनतेरस, धन्वन्तरि त्रयोदशी धन्वन्तरि जयन्ती अवसर पर विश्व आयुर्वेद परिषद् की शाखा कासगंज ओर से जिलाध्यक्ष डा० विनय शौनक के निर्देशन में न अध्यक्ष डा० रामेश्वर सिंह यादव के संयोजन में सहावर



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



भीम नगर बाल कल्याण स्कूल में धूम-धाम से मनाया

। इस अवसर पर गणमान्य नागरिकों ने सहभागिता की।
अवसर पर संस्कृत एवं इतिहास के विद्वान डा० श्री
ास शर्मा शास्त्री मुख्य अतिथि थे जिन्होंने भगवान
न्तरि के चित्र पर दीप प्रज्जवलित कर कार्यक्रम का
ारंभ किया तथा विशेष अतिथि अलीगढ़ से पधारें ।
म०प्र० के राजकीय तकनीकी महाविद्यालय के
काश प्राप्त उप प्राचार्य प० उमाशंकर दीक्षित थे,
र्यक्रम की अध्यक्षता मोहन लाल शर्मा प्रवक्ता, इन्टर
लेज ने की ।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि डा०श्री निवास वर्मा
स्त्री ने कहा, कि राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति को राज्याश्रय
अभाव हमारी मानसिक गुलामी को दर्शाता है । उन्होंने
ा कि हमें भौतिक तरक्की के साथ-साथ सांस्कृतिक
क्की की बात भी सोचनी चाहिए क्योंकि वही हमारी
चान है । आयुर्वेद और भगवान धन्वन्तरि उसी श्रेणी में
ते हैं । विशिष्ठ अतिथि पं० उमाशंकर दीक्षित ने कहा
आयुर्वेद सार्वभौम विज्ञान है । उसे नकारनेकी धृष्टता
ई महामूर्ख ही कर सकता है । कार्यक्रम के अध्यक्ष,
नलाल आर्य ने कहा कि समग्र सृष्टि ही आयुर्वेद है ।
अर्न्तचक्षु खोलने होंगे । जिलाध्यक्ष डा० विनय शौनक
कहा, कि आयुर्वेद के द्वारा ही पूर्ण स्वास्थ्य लाभ
ारीरिक, मानसिक) प्राप्त किया जा सकता है । आयुर्वेद
है जिसने सृष्टि के आरंभ से आज तक करोड़ों वर्षों तक
ुण्ण मानव की सेवा की है । उन्होंने आयुर्वेद जगत् से
जुट होकर आयुर्वेद को समृद्ध करने पर बल दिया
उन्होंने कहा कि जनपद एटा में तीन वर्ष से लगातार, विश्व
आयुर्वेद परिषद् द्वारा प्रायोजित चारों कार्यक्रम (धन्वन्तरि
जयन्ती, चरक जयन्ती, नववर्ष संवत्सर, मकर संक्रान्ति)
उत्साह पूर्वक मनाये गये हैं जहां आयुर्वेद प्रेमियों की संख्या
उत्तरोत्तर बढ़ी है । विशिष्ट अतिथि शेर सिंह एडवोकेट ने
कहा कि यज्ञ हवन के द्वारा रोगों को नियंत्रित किया जा
सकता है ।

संस्था के जिला महामंत्री, डा०के०डी०पाण्डेय,
पूर्व चिकित्साधिकारी ने कहा कि आयुर्वेद और भगवान
धन्वन्तरि स्वास्थ्य के देवता हैं । अत: संसार का सबसे बड़ा
सुख निरोगी काया ही है । नगर अध्यक्ष डा० रामेश्वर सिंह
यादव ने जनता से अपील की कि आयुर्वेद से बेहतर
निरापद कोई पैथ नहीं है । उन्होंने आयुर्वेद के सम्बन्ध में
भ्रान्ति फैलाने वालों को आड़े हाथों लिया । उन्होंने कहा
कि आयुर्वेद में एक ओर रिसर्च की बात की जाती है
दूसरी ओर मार्तण्ड, सिद्धि फार्मेसी, झांसी जैसी फार्मेसियों
के आयुर्वेदिक इंजेक्शनों के उत्पादनों पर प्रतिबंध लगा दिया
जाता है । यह दोहरा मापदण्ड क्यों ?

इस अवसर पर नगरपालिका परिषद्, कासगंज के
मुख्य स्वास्थ्य एवं खाद्य निरीक्षक, बाई.ए. खान, टिहरी
गढ़वाल में राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय में प्रवक्ता
राजकुमार चतुर्वेदी, जिन्हैरा इन्टर कॉलेज में संस्कृत प्रवक्ता
रामेश्वर कुलश्रेष्ठ, बी.ए.बी. इन्टर, कॉलेज में अर्थशास्त्र
प्रवक्ता बुद्धिजीवी विचार परिषद् (रजि०) के वरिष्ठ
सदस्य डा० राजेन्द्र कौशल ने भी सम्बोधित किया ।
कार्यक्रम की व्यवस्था बार एसोशियेशन के सचिव शेर सिंह
एडवोकेट ने किया ।

## डा० वाजपेयी चिकित्सा परिषद् के सदस्य नामित और नियुक्ति

उ०प्र० में वैद्य और हकीमों के रजिस्ट्रेशन करने
वाली उ०प्र० की सांविधिक निकाय भारतीय चिकित्सा
परिषद् उ०प्र० का डॉ० मदन गोपाल वाजपेयी, पनगर
बाँदा को महामहिम राज्यपाल उ०प्र० शासन ने मनोनीत
नामित और नियुक्ति किया है । इनके अतिरिक्त मुजफ्फरनगर
के डा० मो० अकरम खाँ को अध्यक्ष, सहारनपुर के हकीम


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जलील अहदम खाँ और गोरखपुर के वैद्य श्री निवास शर्मा को सदस्य नामित और नियुक्त किया गया ।

ज्ञातव्य है कि विगत 34 वर्षों से यह बोर्ड भंग था इसका संचालन अभी तक या तो नियंत्रक (निदेशक आयुर्वेद) के आधीन होता था या केवल अध्यक्ष नामित करके । परिणामत: आयुर्वेद यूनानी चिकित्सकों की पंजीयन सम्बन्धी समस्याओं के समाधान और परिषद् के माध्यम से अपनी बात सरकार तक पहुँचाने का रास्ता बन्द था । मा० मुलायम सिंह यादव मुख्यमंत्री एवं मा० वीरेन्द्र सिंह बुन्देला आयुर्वेद मंत्री जी, के सद्प्रयास से इस बोर्ड का गठन हो सका ।

## दिल्ली

## वैद्य व्यास डॉट कॉम का लोकार्पण

## रोग स्वाभिमानी है बुलाओगे तब ही आवेंगे - स्वामी प्रज्ञानंदजी

## 23 वां अखिल भारतीय आयुर्वेद विशेषज्ञ सम्मेलन पूणे में सम्पन्न

उज्जैन । पुणे । द्विदिवसीय अखिल भारतीय आयुर्वेद विशेषज्ञ सम्मेलन के अवसर पर उज्जैन तथा मुम्बई में सक्रिय आयुर्वेद विशेषज्ञ डा० मणीन्द्रकुमार व्यास के द्वारा निर्मित वेबसाइड www.vaidyavyas.com वैद्यव्यास डॉट कॉम का लोकार्पण सुप्रसिद्ध चिकित्सक तथा अष्टांग आयुर्वेद महाविद्यालय पुणे के संचालक डॉ०एम०एच० परांजपे द्वारा किया गया । यह वेबसाइट अपने आप में विशिष्ट है जिसमें कि आयुर्वेद से संबंधित कई प्रकार की जानकारियों का भंडार है । रोग तथा उनकी औषधियाँ, जड़ी-बूटियाँ व इनका सचित्र परिचय, आन लाइन नि:शुल्क परामर्श, पंचकर्म सुविधा जानकारी तथा पंचकर्म संबंधित अद्यतन शोध आदि की जानकारी दी गई । पंचकर्म के क्षेत्र में होने वाले अनुसंधानों से संबंधित शोध पत्रों का प्रकाशन सीधे साईंटिफिक जर्नल ऑफ पंचकर्म से लिंक किया गया है जो कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चिकित्सकों आदि को नि:शुल्क उपलब्ध रहेगा ।

इस अवसर पर विशेष रूप से उपस्थित विश्व आयुर्वेद संघ के संरक्षक स्वामी प्रज्ञानंदजी महाराज ने आयुर्वेदीय वेदनास्थापक एवं शोथहर औषध द्रव्यों पर आयोजित सम्मेलन के अवसर पर अपने उद्घाटन उद्बोधन में जन सामान्य को चेताया कि बीमारियाँ स्वाभिमानी होती हैं, जब तक बुलाओ नहीं आती नहीं है और हम लोग प्राय: बीमारियों को आमंत्रित करते रहते हैं । तब ही तो बड़ी मुश्किल हो जाती है शरीर में । वह भी अपथ्य सेवन से आकर रोगियों के शरीर में घर कर जाती है । जब तक प्रकृति के समीप जाकर हम अपने शरीर को प्रकृतिमय नहीं बनायेंगे तब तक बीमारियाँ हमारा साथ नहीं छोड़ने वाली । प्रज्ञाधाम आश्रम जबलपुर तथा दिल्ली के स्वामीजी ने आगे कहा कि मन के संयम से ही दु:खद वेदनाओं का शमन होता है । आयुर्वेद की नैसर्गिक औषधियाँ प्रकृति के अत्यंत समीप हैं तथा ये शरीर के अनुकूल होती हैं ।

विश्व आयुर्वेद संघ की गतिविधियों व उद्देश्यों की जानकारी देते हुए स्वामी जी ने बताया कि आयुर्वेद का उद्देश्य प्राणी मात्र पर अनुकंपा करने का है । आयुर्वेद विशेषज्ञों को प्रेरित करते हुए आगे कहा कि चिकित्सकों में साधना, तप व तपस्या का अभाव होता जा रहा है । उसे हमदर्दी व सहानुभूति के द्वारा रोगी को स्वस्थ करना चाहिए । आज किसी पेथी की नहीं वरन सिंपेथी की आवश्यकता है ।

इस अवसर पर इंटरनैशनल आयुर्वेद एसोसिएशन तथा यूरोपीय आयुर्वेदीक अकादमी के अध्यक्ष तथा सैकड़ों अनुसंधान योजनाओं के विशेषज्ञ डा०पी०एच० कुलकर्णी, आयुर्वेद विशेषज्ञ सम्मेलन के अध्यक्ष तथा भूतपूर्व निदेशक, केन्द्रीय आयुर्वेदीय तथा सिद्ध अनुसंधान परिषद् के डॉ० विवेकानन्द पाण्डेय, सचिव कविराज धर्मवीर, राजकीय आयुर्वेद म०वि०, लखनऊ के भूतपूर्व शारीर विभागाध्यक्ष, डा०डी०जी०थत्ते, मर्म चिकित्सा विज्ञान के विशेषज्ञ डा०आर०बी० गोगटे, बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय के अन्तर्गत फैकल्टी ऑफ इंडियन मेडिसिन के प्रसूति विभागाध्यक्ष डॉ० मंजू द्विवेदी तथा भारत के विभिन्न प्रदेशों तथा अमरीका आदि विदेशों से आए आयुर्वेद विशेषज्ञगण भी उपस्थित थे । शोध कर्ताओं ने वेदना निवारण संबंधित अपने



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अनुसंधानात्मक शोध पत्रों का प्रस्तुतीकरण तथा प्रेक्टिकल डिमांस्ट्रेशन भी किया ।

## पंजाब

### धन्वन्तरि जयन्ती सम्पन्न

दिनांक 12.11.06 को ऊंझा आयुर्वेदिक फार्मेसी की ओर से भगवान धन्वन्तरि जन्मोत्सव लारेंस गार्डन, अमृतसर में बड़े उत्साहपूर्वक मनाया गया । इस मीटिंग में अमृतसर के सभी महत्वपूर्ण वैद्यों ने भाग लिया। उक्त मीटिंग की अध्यक्षता वैद्य त्रिलोकी नाथ सुधीर जी ने की । डाक्टर अशोक नन्दवानी, डा० चावला, डा०एन०के० भारद्वाज, डा० रविन्द्र सुधीर, डा० कीर्ति भारद्वाज, डा०सुशील, डा० राजीव मित्तल, डा० भल्ला, डा० सूद, डा० विकास गुप्ता, वैद्य गिरवरलाल शर्मा ने श्रद्धांजलि अर्पित की । इस समय आयुर्वेदिक सेवाओं के कारण वैद्य त्रिलोकी नाथ सुधीर, डा० नन्दवानी और वैद्य नीलाम्बर दत्त जी को ऊंझा आयुर्वेदिक फार्मेसी की ओर से सम्मानित किया गया और संकल्प लिया गया कि आगामी मीटिंग में सभी वैद्य अपने रोगियों से सम्बन्धित अनुभव प्रस्तुत करेंगे । सभी वैद्यों को प्रीति भोज कराया गया । अध्यक्षीय भाषण के बाद सभा विसर्जित की गई ।

## हिमाचल प्रदेश

### कैन्सर जागरण शिविर चम्बा में सम्पन्न

डा० गोपाल चड्ढा ट्रेडर्स के सौजन्य से चम्बा में कैन्सर जागरण शिविर का आयोजन किया गया । इसमें बड़ी संख्या में प्रतिनिधियों ने भाग लिया । इस अवसर पर डा० रचना ने बताया कि डा० गोपाल चड्ढा को हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री ने 'हिमाचल विभूति' से सम्मानित किया । उन्होंने कैंसर उत्पन्न होने के कारणों पर प्रकाश डाला । इसके बाद सुजानपुर में भी इस विषय पर शिविर आयोजित किया गया ।

### किशोरिया एवं रक्ताल्पता पर गोष्ठी

डा० गोपाल चड्ढा के सौजन्य से रक्लापता रोग के कारणों पर प्रकाश डाला गया ।

### नाड़ी शिक्षण एवं क्षार सूत्र गोष्ठी सम्पन्न

इन दोनों गोष्ठियों में अनेक प्रतिनिधियों ने भाग लिया । इस अवसर पर डा० गोपाल चड्ढा ने कहा कि अधिक चिकित्सा पद्धतियां रोग निदान में नाड़ी का प्रयोग करती हैं । किसी हद तक ऐलोपैथी नाड़ी निर्णय का प्रयोग रोग निदान पर करता है । नाड़ी विज्ञान के द्वारा से निम्न लाभ होंगे । (1) आयुर्वेद की अपनी पहचान (2) 75 लेबोट्री टेस्टों में कमी (3) औसतन 100 वर्ष का स्वास्थ्य (4) रोग शीघ्र ठीक

## राजस्थान

### धन्वतरि जयन्ती एवं स्थापना-दिवस मनाया

जयपुर, झोटवाड़ा, कांटा चौराहा, 19 अक्टूबर महावीर आयुर्वेद चिकित्सालय में आयु एवं आरोग्य प्रदाता भगवान धन्वतरि की जयन्ती एवं संस्थान का दिवस समारोह पूर्वक मनाया ।

कार्यक्रम में मुख्य अतिथि गलता पीठाधीश महन्त अवधेशाचार्य जी महाराज ने आयुर्वेद को जीवन पद्धति बताया । आयुर्वेद के सटीक निदान एवं आयुर्वेद दवा का शरीर पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है।

कार्य में विशिष्ट अतिथि स्थानीय पार्षद श्रीमती शर्मा ने श्री महावीर आयुर्वेद चिकित्सालय ने अपनी

श्री महावीर आयुर्वेद चिकित्सालय में धन्वन्तरि पूजन करते हुए वैद्य रवीन्द्र गौतम, गलता पीठाधीश्वर महन्त श्री अवधेशाचार्य महाराज पार्षद श्रीमती मंजू शर्मा

सेवाऐं प्रदान कर क्षेत्र में अपनी कीर्ति स्थापित की है।



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए डॉ० रमेश चन्द्र ने कहा कि आयुर्वेद में बताए गऐ स्वस्थ रहने के उपायों को अधिक से अधिक जन-जन तक पहुंचाकर समाज को स्वस्थ बनाया जा सकता है ।

कार्यक्रम में चिकित्सालय के वैद्य रवीन्द्र गौतम ने बताया कि वर्तमान में फैली मौसमी बीमारियों से बचाव के लिए आयुर्वेद में कारगर उपाय व उपचार हैं । वैद्य गौतम ने बताया कि चिकनगुनिया के आयुर्वेदिक उपचार के बाद जिन रोगियों में रोग ठीक होने पर जोड़ों में दर्द एवं अन्य परेशानियां नहीं पायी गयीं, जबकि अन्य पद्धतियों के उपचार के बाद रोगी 10-15 दिन तक शरीर के विभिन्न जोड़ों में दर्द की शिकायत करते पाए गए ।

कार्यक्रम के संयोजन-प्रद्युम्न गौतम ने बताया कि इस अवसर पर ग्यारह आयुर्वेद चिकित्सकों को सम्मानित किया गया ।

## गुजरात

### 18 एवं 19 नवम्बर 2006 आणंद में गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन एवं आयुर्वेद मेले का आयोजन

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के शताब्दी महोत्सव के उत्सव पर्व पर आणंद में आयुर्वेद ज्योति की मशाल गुजरात के सभी शहर जिलों से लाई जाएगी एवं गुजरात प्रदेश आयुर्वेद का 25 वां अधिवेशन आयोजित किया जाएगा । इस शुभ अवसर पर 18 एवं 19 नवम्बर 2006 दिन आयुर्वेद मेले का भी आयोजन किया गया है ।

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के शताब्दी महोत्सव के उत्सव पर्व पर गुजरात के सभी गाँवों एवं शहरों से आयुर्वेद के स्नातकों द्वारा आयुर्वेदिक क्षेत्र में जागृति लाने के लिए आयुर्वेद ज्योति मशाल स्वरूप में आयुर्वेद संकुल आणंद में लाने का आयोजन किया गया है । गुजरात भर के 16 हजार रजिस्टर्ड स्नातक वैद्य अपने-अपने विस्तार में से आयुर्वेद ज्योति लेकर आयुर्वेद संकुल आणंद पहुँचेंगे ।

आयुर्वेद ज्योत जिन-जिन विस्तारों में से आगमन होगी उन-उन विस्तारों में आयुर्वेद के सुनहरे सूत्रों, स्वास्थ्य संबंधित प्रवचनों से सामान्य प्रजा जनों को संबोधित किया जाएगा ।

आयुर्वेद महासम्मेलन के शताब्दी पर्व पर आणंद में आयुर्वेदिक वनस्पतियाँ, वनस्पतियों के रंगीन चित्रों, उनके घरेलू उपचार, योग-प्राणायाम विषय का सचित्र महत्व एवं स्वास्थ्य के लिए उसकी उपयोगिता, पंचगव्य गौदुग्ध, गौ घी, गाय का दही, गौमल एवं गौमूत्र के विषय में स्वास्थ्य संबंधित उपयोगी महत्व प्रदर्शित किया जाएगा ।

आयुर्वेद पंचगव्य औषधियां एवं योग प्राणायाम के उपयोग से केन्सर, हृदय रोग, पक्षाघात, चिकनगुनिया, डेन्यु, लेप्टोस्पायरोसीस, सोरायसीस, सफेद दाग, अर्श-भगंदर, डायाबीटीज, ओबेसिटी, संधियों के दर्द इत्यादि कितने प्रमाण में मिटाए जा सकते हैं या कितने प्रमाण में नियंत्रित किये जा सकते हैं इस विषय की संबंधित विषयों के विद्वान चिकित्सकों द्वारा प्रवचन एवं मार्गदर्शन दिये जायेंगे ।

इसके अलावा दिनांक 18 एवं 19 के दिन सामान्य प्रजा के लिए सुश्रुषा यज्ञ का आयोजन किया गया है जिसमें बाल झड़ना जैसी सामान्य समस्याओं से लेकर हृदयरोग, चिकनगुन्या, डेन्यु, केन्सर जैसे रोगों का भी इलाज किया जाएगा ।

आयुर्वेद के इस भव्य सम्मेलन में माननीय भू०पू० केन्द्रीय मंत्री श्री मुरली मनोहर जोशीजी, गुजरात राज्य के आदरणीय मुख्यमंत्री श्री नरेन्द्र मोदीजी, स्वास्थ्य मंत्री अशोक भट्टजी, गृहमंत्री अमित शाहजी एवं अन्य महानुभाव अतिथिगण पधारेंगे ।

दिल्ली से पद्मश्री वैद्यराज देवेन्द्र त्रिगुणाजी, वैद्य श्री एस०के० मिश्राजी, वैद्य श्री एच०के० शर्माजी, वैद्य श्री ताराचंद्र शर्माजी, कविराज श्री गौरीलाल चाननाजी, जयपुर से वैद्य श्री रामप्रसाद मिश्राजी, वाराणसी से वैद्यराज श्री रामहर्ष सिंहजी, मुम्बई से पद्म श्री वैद्यराज सुरेश चतुर्वेदीजी, हैदराबाद से वैद्य श्री प्रमोद चतुर्वेदीजी पधारेंगे ।

इसके अलावा समग्र भारतवर्ष एवं गुजरात से पाँच हजार से भी अधिक वैद्यराज आणंद क इस भव्य महोत्सव की शोभा बढायेंगे ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(पृष्ठ सं० 402 का शेषांश)

दिनांक 10/11/2006

द्वितीय आयुर्वेद महाधिवेशन एवं आयुर्वेद 2006 के उद्घाटन-समारोह के अवसर पर वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् के महानिदेशक, डा० रघुनाथ माशेलकर ने कहा कि "आयुर्वेद को आतुरालयी परीक्षण ज्यादा से ज्यादा करना चाहिए, आधुनिक प्रयोगशालाओं से समर्थन लेना चाहिए तथा वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओं में ज्यादा से ज्यादा अपनी उपस्थिति दर्ज करानी चाहिए।" अपने उद्घाटन-सम्बोधन में डा० माशेलकर ने स्पष्ट किया कि यदि हम आयुर्वेद को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ले जाना चाहते हैं, तो चिकित्साओं का विभिन्न प्रक्रियाओं पर अनुसंधान होना चाहिए। हमें यह प्रमाणित करना होगा कि पंचकर्म कहां तक जैविक एवं प्रतिरोधी प्रक्रियाओं को प्रभावित कर सकता है। हम इसे आयुर्वेद जीव-विज्ञान कह सकते हैं जैसा कि डा० एम०एस० वलियाथन ने कहा है। उन्होंने आह्वान किया कि आयुर्वेदज्ञ ज्यादा से ज्यादा विषहर, दीर्घायु प्रदान करने वाली औषधि एवं प्रतिरोधी औषधियों का विक्रय काउन्टर से करे। उन्होंने आयुर्वेदिक औषधियों का प्रयोग एलोपैथी औषधियों के साथ करने का आह्वान किया।

आक्सफोर्ड मेडिकल स्कूल के प्राध्यापक, डा० जीरार्ड बोडेकर, यू०के० ने पश्चिम में आयुर्वेद के प्रचार के लिए भारत से सहायता की अपील की। डा० बोडेकर के अनुसार, "पश्चिम के चिकित्सक जड़ी-बूटी आसानी से प्राप्त नहीं कर सकते हैं। वे विधि सम्मत ढंग से आयुर्वेद की चिकित्सा नहीं कर सकते हैं और यदि करते हैं तो उनका लाइसेन्स रद्द हो सकता है, क्योंकि उनके पास पर्याप्त वैज्ञानिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है।" डा० बोडेकर ने पुनः कहा कि "हमारे परम आयुर्वेदिक चिकित्सा के स्तरीकरण, प्रशिक्षण एवं सुरक्षा के पर्याप्त साक्ष्य नहीं है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने चीनी वैकल्पिक चिकित्सा-पद्धति, एक्यूपंक्चर हेतु कई केन्द्र खोले हैं, किन्तु आयुर्वेद के लिए एक भी नहीं है। केवल भारत ही आयुर्वेद को विश्वव्यापी बनाने के लिए सक्रिय कदम उठा सकता है।"

'भविष्य के लिए आयुर्वेद' की व्याख्या करते वैद्य वसन्त लाड ने कहा कि यद्यपि हम शिक्षा एवं अनुसंधान के माध्यम से विधिवत् चिकित्सा-कार्य कर सकते हैं, किन्तु हमें यह दावा नहीं करना चाहिए कि हम कैंसर का भी चिकित्सा कर सकते हैं। उच्च चिकित्सा-शिक्षा मंत्री श्री दिलीप बालसे पाटिल विशिष्ट अतिथि के रूप समारोह में उपस्थित थे और उन्होंने सुझाव दिया कि किसानों को औषधीय पादपों की खेती करनी चाहिए।

इसके पूर्व योजना आयोग की सदस्या एवं स्वास्थ्य प्रखण्ड की अध्यक्षा, सुश्री सायिदा हमीद ने कहा ग्यारहवीं पंच वर्षीय योजना में ऐसी चिकित्सा-पद्धति लिए ज्यादा से ज्यादा धन का इन्तजाम किया जाय। उन्होंने बताया कि दसवीं पंच वर्षीय योजना में स्वास्थ्य प्रखण्ड के लिए 37,153 करोड़ रुपयों का प्रावधान था, इसमें से आयुष के लिए 775 करोड़ रुपयों का प्रावधान था। इस अवसर पर स्वास्थ्य मंत्रालय, आयुष, सरकार के सलाहकार डा०एस०के०शर्मा ने कहा आयुर्वेद के लिए केवल 3% संसाधन उपलब्ध है, जबकि एलोपैथी के लिए 97%। उन्होंने यह भी बताया कि लाख आयुर्वेदिक चिकित्सकों में 30-40,000 ही सेवा में हैं, बाकी निजी क्षेत्र में।

तीन दिवसीय द्वितीय महाधिवेशन विश्व आयुर्वेद एवं आरोग्य 2006 विज्ञान भारती, भारत सरकार (आयुष) और पूणे विश्वविद्यालय की ओर से आयोजित किया था। इस महाधिवेशन में लगभग 3500 भारतीय प्रतिनिधियों एवं लगभग तीस विदेशी प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन में आयुर्वेदिक 'जीवविज्ञान' एवं आयुर्वेदिक 'विज्ञान' को विकसित करने पर जोर दिया गया। डा० बोडेकर के अनुसार आयुर्वेद के विश्वव्यापी प्रचार के राजदूत की आवश्यकता है। यदि आयुर्वेद को विश्वस्तर देखना है, तो हमें नीति, विनिवेश, थेरापी एवं पारम्परिक चिकित्सा पद्धति पर भी ध्यान देना होगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा दिये गये दिशा-निर्देश का पालन करना चाहिए। वस्तुतः हमारी निष्ठा "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" में है।



CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**श्री देवेन्द्र त्रिगुणा,** अध्यक्ष, अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन ने कहा कि पश्चिमी देशों में वर्ष 1978 के पूर्व आयुर्वेद का लोग नहीं जानते थे। हमने अपने पिताजी, श्री बृहस्पतिदेव त्रिगुणा के साथ मिलकर अमेरिका में आयुर्वेद के लिए प्रचार किया। लगभग 1000 डाक्टरों को प्रशिक्षित किया। 'प्रकृति' का विवेचन वैज्ञानिक आधार पर होना चाहिए। उन्होंने खेद प्रकट किया कि महाराष्ट्र में 60 से ज्यादा आयुर्वेद महाविद्यालय रहते हुए भी केवल 600 आयुर्वेदिक डिस्पेन्सरी है, जबकि उत्तर प्रदेश में 3,000 एवं हिमाचल प्रदेश में 500 से ज्यादा औषधालय है।

भारत सरकार के आयुर्वेद सलाहकार, डा० एस. के. शर्मा ने बताया कि आयुर्वेद को पांचवां वेद कहा गया है। आयुर्वेद आयुर्वेद है। इसका उद्देश्य प्राणियों का कल्याण करना है। त्रिदोष एवं पंचमहाभूत की कल्पना आयुर्वेद में है। 'यथा तुण्डे या ब्रह्माण्डे' आयुर्वेद की अवधारणा है। प्रकृति, वीर्य, विपाक, त्रिदोष आयुर्वेद की देन है।

पूणे विश्वविद्यालय के कुलपति, डा० जाधव ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि पूना गंगा-यमुना के संगम की तरह है। जड़ी-बूटी का विश्व व्यापार लगभग 60 मिलीयन डालर का है जिसमें चीन का हिस्सा 27-29% है जबकि भारत का हिस्सा मात्र 5% है। उन्होंने बताया कि हम विश्वविद्यालय में आयुर्वेद का स्नातकोत्तर विभाग भी है।

विज्ञान भारती के अध्यक्ष डा०के०आई० वासु ने द्वितीय सत्र की अध्यक्षता की। इस अवसर पर श्री धूत पापेश्वर, मुम्बई के मुख्य कार्यकारी अधिकारी, श्री रणजित पुराणिक ने बताया कि सम्प्रति आयुर्वेद का व्यापार 5,000 करोड़ रुपयों का होता है। इसकी विकास-दर 10% वार्षिक है। 2001 से प्रारम्भ जी.एम.पी. में 90-95% औषधीष्ठानों ने प्रमाण-पत्र प्राप्त कर लिया है।

**डा० वसन्त लाड** ने बताया कि तिलक आयुर्वेद महाविद्यालय में बी.ए.एम.एस. एवं स्नातकोत्तर भी पढ़ाई प्रारम्भ हो चुकी है। पश्चिमी देशों में उनके पढ़ाने का अनुभव 20 वर्ष है। विधि सम्मत ढंग से धीरे-धीरे वे अमेरिका, जर्मनी एवं कनाडा में चिकित्सा-कर्म कर सकते हैं। आयुर्वेद वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति नहीं है। हमें वात पित्त, कफ को अपने व्याख्यान के माध्यम से संसार को बताना पड़ेगा।

केरल के **श्री पी०शंकरन कुट्टी** ने जोर देकर कहा कि आयुर्वेद की शिक्षा हमें बच्चों से ही प्रारम्भ करनी चाहिए।

श्री देवेन्द्र त्रिगुणा, भारत के राष्ट्रपति के अवैतनिक चिकित्सक ने आयुर्वेद को Traditional, Complementary या Alternative Medicine कहने पर गहरी आपत्ति प्रकट की। उन्होंने कहा कि ऐसे समय में जब एलोपैथ बुरी तरह यकृत्, कैन्सर आदि रोगों को दूर करने में असफल हो गया है, इसमें आयुर्वेद ही समर्थ हो सकता है। ब्राह्म रसायन प्रतिषेधात्मक औषधि के रूप में बेहतर कार्य कर सकता है। संजीवनी बूटी, हरीतकी आदि औषधि बेहतर कार्य कर सकती है। हमें आधुनिक जांच के तरीके को अपने प्रयोग में लाना चाहिए, किन्तु आयुर्वेद के सिद्धान्तों के आधार पर हम पूर्वाग्रह से प्रभावित नहीं हैं। दुर्घटना, रक्तचाप आदि में ऐलोपैथी कारगर हो सकती है और हम इसका इस्तेमाल भी कर सकते हैं।

भारत सरकार के आयुर्वेद सलाहकार, **डा०एस०के० शर्मा** के Codified System पर जोर दिया। दवाओं के स्तरीकरण को हमें प्राथमिकता के आधार पर लेना चाहिए। चित्रकादि वटी, लहसुनादि वटी को T.L.C. के आधार पर परीक्षण के लिए 20 प्रयोगशालाओं की आवश्यकता है।

सी०सी०आई०एम० के अध्यक्ष एवं प्रख्यात आयुर्वेदज्ञ, वैद्य श्रीराम शर्मा ने अपना सम्बोधन श्लोक से प्रारम्भ किया। व्याख्यान का प्रारम्भ उन्होंने आंग्ल भाषा से किया, किन्तु बाद में व्यापक लोक हितार्थ हिन्दी में बोलना प्रारम्भ किया। हमें पहले अपने घर को सुधारना चाहिए, तब बाद में इसके प्रकार करने की बात करनी चाहिए। आयुर्वेद के मौलिक सिद्धान्तों के साथ किसी प्रकार का समझौता नहीं करना चाहिए। आधुनिक Parameters को लेना बुरा नहीं है। आयुर्वेद शाश्वत विज्ञान है। अत: 99%



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


औषधियों का जानवरों पर प्रयोग करना व्यर्थ है ।

विज्ञान भारती के अध्यक्ष, **डा० के०आई० वासु** ने बताया कि आयुर्वेद एक पूर्ण एवं वृहद् जीवन का विज्ञान है । उन्होंने स्मृति चिन्ह से सह-सत्राध्यक्ष, वैद्य श्रीराम शर्मा, वैद्य देवेन्द्र त्रिगुणा, डा० एस०के० शर्मा और श्री पी० शंकरन कुट्टी, डा० वसन्त लाड और श्री रणजित पुराणिक का सम्मान किया और डा० वासु का सम्मान विज्ञान भारती के अखिल भारतीय सचिव, **श्री प्रभाकरण कुलकर्णी** ने किया ।

इन्टरडिसप्लीनरी स्कूल ऑफ हेल्थ सायन्सेज के निदेशक, **डा० भूषण पटवर्धन** ने बताया कि एच०आई०व्ही० वस्तुतः ओज के क्षय होने से होता है । आयुर्वेद में जो रसायन की परिकल्पना है, उसका कार्य भी प्रतिरोधी शक्ति में वृद्धि करना है । केमोथेरापी के जो दुष्प्रभाव होते हैं, उसे गुरुची, आमलकी एवं अश्वगंधा से दूर कर सकते हैं ।

डा० मारशेलकर को डा० पटवर्धन ने सम्मानित किया । इस अवसर पर डा० भूषण पटवर्धन एवं डा० अविनेश पटवर्धन द्वारा लिखित एवं विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा प्रकाशित पुस्तक का विमोचन डा० मारशेलकर ने किया । उन्होंने डा० जयराज, डा० बोडेकर, डा० दर्शन शंकर, डा० जैक किलेन, डा० श्रीकान्त अनन्त एवं डा० नरेन्द्र भट्ट को सम्मानित किया ।

**दिनांक 11/11/2006**

**डा० बोडेकर** ने वैश्वीकरण एवं बौद्धिक संपदा पर प्रकाश डाला । योजना आयोग के सदस्य डा० दर्शन ने भी बौद्धिक सम्पदा कानून पर प्रकाश डाला । डा० विजय भाटकर ने जो सुपर कम्प्यूटर के विशेषज्ञ एवं प्रख्यात् तकनीकी विशेषज्ञ हैं, ने बताया कि आयुर्वेद एवं आधुनिक विज्ञान दोनों को एक दूसरे को समझना पड़ेगा ।

केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद् के निदेशक, डा०जी०एस० लव्हेकर ने बताया कि आयुर्वेद के मूल दर्शन में परिवर्त्तन नहीं हो सकता है । चरक, सुश्रुत व्यक्ति नहीं होकर चिन्तन-शाखा है । उन्होंने अपने संस्थान् के उद्देश्यों पर विस्तार से प्रकाश डाला ।

एस डी - अकार्ट्स, मुम्बई के डा० उर्मिला थत्ते ने इस बात पर जोर दिया कि रोगों का निदान आयुर्वे सिद्धान्तों के अनुसार होना चाहिए, न कि आधुनिक के अनुसार । फण्डू फार्मा, मुम्बई के मुख्य का अधिकारी, डा० नरेन्द्र भट्ट ने भौतिकी एवं निदान के सिद्धान्तों को परिभाषित करने पर बल दिया । की क्या भूमिका है, मन्दाग्नि-मधुमेह-संयोग का सम्बन्ध है, आयुर्वेद को कैसे व्यवसाय के रूप में चाहिए - आदि विषयों पर प्रकाश डाला ।

अमेरिका स्थित नेशनल सेन्टर फॉर कम्पलीमेन्ट्री एण्ड अल्टरनेटिव मेडिसिन/नेशनल इन्स्टीच्यूट्स ऑफ एवं इन्टरनेशनल हेल्थ रिसर्च के निदेशक, डा० **किलेन** ने बताया कि भारत की उनकी द्वितीय यात्रा है पूणे की प्रथम । उन्होंने कहा कि आयुर्वेद में मौजूद - जेनोमिक्स एच०आई०व्ही० एड्स की समस्या समाधान कर सकता है । फार्माको - जिनोमिक्स अनुवांशिक संरचना और औषधि का उस पर प्रभाव सम्बन्ध की ओर संकेत करता है । इस दृष्टि से इस सम्बन्ध में धनी है ।

नेशनल एड्स रिसर्च इन्स्टीच्यूट् (नाको) निदेशक, श्री रमेश परांजपे ने कहा कि आयुर्वेद में शक्ति उत्पन्न करने की क्षमता है - यह निर्विवाद किन्तु हमें आवश्यकता है आतुरालयी परीक्षण की सभी दावों की दोहरी जांच हो सके ।

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के श्री के०एस० ने विश्व स्वास्थ्य रक्षा-पद्धति में आयुर्वेद की भूमि प्रकाश डाला । उन्होंने बताया कि उन्हें प्रथम विश्व महाधिवेशन में भी भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ उस सम्मेलन में 2200 भारतीय प्रतिनिधि एवं 20 प्रतिनिधि उपस्थित थे । वर्तमान सम्मेलन में 3200 ने निबंधन कराया है और 500 प्रतिनिधियों का निबंध हो सका, फिर भी वे सम्मेलन में भाग ले रहे हैं । इसी भरकम उपस्थिति को उन्होंने व्यवस्था-तोड़ उपस्थिति संज्ञा दी । इस सम्मेलन के पूर्व 5 नवम्बर से ही प्रारम्भ हुयी है । लोक अदालत - 'आयुर्वेद अभिशाप वरदान' विषय पर लगायी गयी है । अंग्रेजों ने आयु


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



चेहरा ढकेलकर एलोपैथी को प्रश्रय दिया । एक बार मुगल सम्राट शाहजहां की लड़की जल गयी थी । अंग्रेज डाक्टर ने वसलिन लगाया । लड़की के दर्द में कमी आयी । मुगल बादशाह ने इनाम में कुछ मांगने के लिए कहा । अंग्रेज डाक्टर ने अंग्रेजों को निःशुल्क व्यापार करने की अनुमति प्रदान करने का आग्रह किया । बादशाह राजी हो गये । अंग्रेजों ने सोचा कि क्या कारण है कि मुसलमान 500 वर्षों से राज कर रहे हैं, फिर भी भारतीय संस्कृति नष्ट नहीं हुयी है । उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि भारतीय व्यवस्था विकेन्द्रीकृत है । ग्राम राज्य व्यवस्था शासन की नींव थी । ग्राम पंचायत के अधीन जल, जमीन और जंगल रहते थे । उन्होंने बताया कि यूनानी वस्तुतः आयुर्वेद का अरबी संस्करण है । इस सम्बन्ध में उन्होंने कहानी सुनायी । हकीम अजमल खां और डा० अंसारी दोनों कांग्रेस के बड़े नेता थे । एक बार वे दोनों इंग्लैण्ड गये । चूंकि डा० अंसारी आक्सफोर्ड के स्नातक थे, इसलिए वे दोनों आक्सफोर्ड गये । वहां एक उनके परिचित मित्र थे । वे एक रोगी के पेप्टिक अल्सर का आपरेशन करना चाहते थे । हकीम अजमल खां ने रोगी का निरीक्षण किया । उन्हें पता लगा कि रोगी को अल्सर नहीं है । किन्तु, डाक्टर उनकी बात से सहमत नहीं थे । आपरेशन किया गया, लेकिन पेट में अल्सर नहीं निकला । डाक्टर आश्चर्यचकित रह गये । नाड़ी विज्ञान आयुर्वेद का महत्वपूर्ण अंग है, हमें इसका प्रचार सम्पूर्ण विश्व में करना चाहिए ।

दिनांक 12/11/2006

**डा० बोडेकर** ने आस्ट्रेलिया के **डा० पी०के० कृष्ण कुमार**, जर्मनी के **डा० मार्क रोजेनबर्ग**, अमेरिका के **डा०क्रेग थोमस**, अमेरिका के **डा० आमला**, मलेशिया के **डा० दोराई राजू**, ब्रिटेन के **डा० किलेन**, आयुष, दिल्ली के **श्री शिव बसन्त, श्री राजूजी** एवं आस्ट्रेलिया के **डा० कैथरीन डी० क्रूज** को सम्मानित किया । इसके पूर्व **डा० बोडेकर** को सम्मानित किया गया था । **डा० बोडेकर** ने बताया कि चीन-भारत में अन्तर है । जापान, कोरिया, वियतनाम, आस्ट्रेलिया आदि देशों में एक्यूपंक्चर का प्रचार ज्यादा हुआ है । भारतीय देशी पद्धति में सहयोग का अभाव है । भारत सरकार को इस दिशा में पहल करनी चाहिये ।

**डा०पी०के०कृष्ण कुमार** ने बताया कि आयुर्वेद का विकास आस्ट्रेलिया में हुआ है । उन्होंने सुझाव दिया कि आस्ट्रेलिया में आयुर्वेदिक मेडिकल स्कूल की स्थापना होनी चाहिए । **डा० कैथी** ने संयुक्त चिकित्सा प्रणाली पर बल दिया । **डा० मार्क रोजेन बर्ग** ने अस्ट्रिया एवं जर्मनी में आयुर्वेद की उपस्थिति पर प्रकाश डाला । नयी दिल्ली के **डा०राजू** ने नाड़ी विज्ञान को विश्व में अद्‌भुत बताया । उन्होंने मलेशिया सहित अन्य देशों में आयुर्वेद का कैसे प्रचार किया - इस पर प्रकाश डाला । मलेशिया के **डा० दोराई राजू** ने कहा कि वे मुख्यमंत्री के सलाहकार हैं । इस देश में 20 आयुर्वेदिक क्लीनिक चलते हैं । स्थानीय आयुर्वेदिक औषधि निर्माता का अभाव है । फलस्वरूप सभी औषधियों का आयात किया जाता है । भारी धातु की जांच की जाती है । मलेशिया में औषधि नियंत्रण प्राधिकार भी है । अमेरिका के डा० आमला गुहा ने कहा कि वे कनेक्टीकट विश्वविद्यालय में आयुर्वेद की संस्थापक अध्यक्षा है । लक्ष्मी विलास रस, महासुदर्शन पर प्रतिबन्ध है । उन्होंने भारत के साथ सहयोग पर बल दिया ।

नेशनल प्लान्ट्स बोर्ड की मुख्य कार्यकारी अधिकारी, श्री बी०एस०सजवान ने 'आयुर्वेद के विकास में सरकार की पहल' विषय पर प्रकाश डाला । उन्होंने बताया कि आई०एस०एम० की प्रगति 1983 में बनायी गयी नीति पर निर्भर थी । 2005 से ग्रामीण स्वास्थ्य योजना प्रारम्भ हुयी । हमारे देश में जैव-विविधता है । परिणाम स्वरूप सभी प्रकार की जड़ी-बूटी यहां उपजायी जा सकती है । 40,000 पौधों में से 15,000 का औषधीय महत्व है । हमारे देश में 7 लाख देशी चिकित्सक, 9 हजार फार्मेसिस्ट, औषधि पादप एकत्रित करनेवाला एवं पैदा करने वाले भी हैं । हमें कृषिकरण के लिए किसानों को सहयोग देना चाहिए । जो औषधि-पादप विलुप्त हो रहे हैं, उसके उत्पादन के लिए हमें रियायत देनी चाहिए । सम्प्रति 90,000 एकड़ भूमि में जड़ी-बूटी की खेती की जाती है । ग्यारहवीं योजना में 5 से 6 गुना विस्तार करने की योजना



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


है । 25 से 30% जड़ी-बूटी संग्राहक के चलते नष्ट हो जाती है । हमारे पास बृहद् मोनोग्राफ उपलब्ध नहीं है । किसान उन औषधि वृक्षों में दिलचस्पी नहीं रखते हैं, जिनके विकास में काफी समय लगता है, क्योंकि उससे आमदनी एक लम्बी अवधि के पश्चात् हो सकती है । वे तत्काल लाभ में विश्वास करते हैं । इसी हिसाब से हमें योजना बनानी चाहिए । फार्मेक्सील के कार्यकारी निदेशक, डा०पी०व्ही० अप्पाजी ने बताया कि वे निर्यात करने के लिए निर्यातकों को इन्सेन्टीव देते हैं । सी०आई०एस० देश (भूतपूर्व सोवियत संघ के देश) आयुर्वेद को अपना रहे हैं । लगभग दस दिन पूर्व आपटेक की ओर से रूस की राजधानी, मास्को में एक प्रदर्शनी लगायी गयी थी । रूसियों ने पंचकर्म एवं आयुर्वेदिक पद्धति में काफी रूचि दिखलायी । हमारे देश में एलोपैथी औषधि का उत्पादन जहां 23,000 करोड़ रुपयों का होता है, वहां आयुर्वेदिक औषधियों का मात्र 5,000 करोड़ रुपयों का । जहां तक निर्यात का प्रश्न है, हमारा हिस्सा विश्व व्यापार में केवल 5% है पूरे स्थान है । जब से रसौषधियों की विषाक्तता की कम है, तो निर्यात लगभग 400 करोड़ का घट गया । अभी हमारे यहां केवल 305 निर्यातक निबन्धित हैं । निर्यात पश्चात् हम 50% तक रियायत देते हैं जिसकी अधिक राशि 25 लाख है । श्रीलंका के डा०परेरा ने बताया उनके यहां आयुर्वेद की राष्ट्रीय नीति है । राष्ट्रीय औ नीति है । स्थानीय औषधियों का निर्यात नहीं किया है ।

आत्म-संतुलन केन्द्र केरल के निदेशक एवं चिकित्सक श्री बालाजी ताम्बे ने कहा कि औषधि की पहचान एवं सत्यापन एक आवश्यक कार्य है । आश्चर्य व्यक्त किया कि चन्दन का निर्यात हो सकता किन्तु औषधियों में इसके प्रयोग की हमें अनुमति नहीं श्रृंग भस्म के प्रयोग की हमें अनुमति मिलनी चाहि

संध्या छः बजे समापन समारोह के पश्चात् विश्व आयुर्वेद महाधिवेशन नये संकल्पों के साथ सम्पन्न

झटपट आराम फुर्ती से चले काम...

बैद्यनाथ

गैसोल पाचक

गैस तथा हाजमा के लिए लाभदायक व कब्जियत नाशक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ISSN - 090678 X

# सचित्र आयुर्वेद

# SACHITRA AYURVED

## A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

वर्ष - 59 अंक - 7 जनवरी - 2007

मुद्गामलकयूषस्तु ग्राही पित्तकफे हितः ।
यवकोलकुलत्थानां यूषः कण्ठ्योऽनिलापहः ॥
सर्वधान्यकृतस्तद्वद् बृंहणः प्राणवर्धनः ।
खडकाम्बलिकौ हृद्यौ तथा वातकफे हितौ ॥
बल्यः कफानिलौ हन्ति दाडिमाम्लोऽग्निदीपनः ।
दध्यमलःकफकृद्बल्यः स्निग्धो वातहरो गुरूः ।
तक्राम्ल पित्तकृत् प्रोक्तो विषरक्तप्रदूषणः ॥

सु०सू० 46/374-377

मूंग और आँवले का यूष - संग्राही, पित्त और कफरोग में हितकारी है ।

यव (जौ), कोल (बेर) और कुलत्थ का यूष - गले के लिये हितकारी और वायुनाशक है ।

सब धान्यों (शमीधान्यों) से बनाया यूष-बृंहण (देहवर्धक) और प्राणवर्धक है । इसी को "नवपुष्टि यूष" कहते हैं ।

खड और काम्बलिक-यूष-हृदय के लिये, प्रिय, वायु-कफ में हितकारी है।

अनार के द्वारा खट्टा किया यूष-बल कारक, कफ-वायुनाशक है । दही से खट्टा यूष-कफकारक, बलकारक, स्निग्ध, वायुनाशक और गुरु है । तक्र से खट्टा किया पित्त कारक, विषरक्त, प्रदूषक है ।

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना–800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अब भूल जाईये महीने की चिन्ता

## बैद्यनाथ सुन्दरी कल्प फोर्ट

रक्त की कमी, घबराहट, थकावट, हाथ पाँव के तलवे की जलन आदि परेशानियों में फौरन आराम देता है ।

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

## बैद्यनाथ सुरक्ता

आयुर्वेदिक स्किन टोनर
कील मुहाँसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# सचित्र आयुर्वेद का आगामी विशेषांक 'श्रद्धांजलि अंक' होगा

सचित्र आयुर्वेद अपनी विशिष्ट परम्परा के अनुसार आयुर्वेदोत्थान एवं विकास की दिशा में काम करने वाले मनीषियों की स्मृति में विशेषांक प्रकाशित करता आ रहा है। पूर्व में हमने श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के संस्थापक द्वय में से एक पुण्यश्लोक पं० रामनारायण शर्मा एवं संयुक्त प्रबन्ध निदेशक स्व० पं० दुर्गा प्रसाद शर्मा, प्राणाचार्य, आयुर्वेदाचार्य की स्मृति में विशेषांक प्रकाशित किया था। इस वर्ष श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के प्रबन्ध निदेशक, स्व० पं० बनवारी लाल शर्मा की स्मृति में मार्च, 2007 में विशेषांक प्रकाशित करने की योजना है। विदित है कि स्व० पं० बनवारी लाल शर्मा का कार्यक्षेत्र काफी विस्तृत था। उनका व्यक्तित्व बहुआयामी था। विभिन्न सामाजिक समस्याओं में उनकी गहरी रूचि थी।

अतः आयुर्वेद जगत् के विद्वानों, प्राध्यापकों, पाठकों, छात्रों एवं समस्त विद्वत् जन से अनुरोध है कि वे स्व० पं० बनवारी लाल शर्मा की स्मृति में दो शब्द जो उनके व्यक्तित्व से सम्बन्धित हो, अथवा संस्मरण हों, दिनांक 31 जनवरी, 2007 तक अवश्य हमारे पास भेज दें।

आशा है, विद्वानों का सहयोग पूर्व की भांति 'सचित्र आयुर्वेद' को प्राप्त होगा।

सम्पादक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800 001

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar-249404 (U.A.)

# हिन्दी भाषी विद्वान लेखकों से निवेदन

यद्यपि सचित्र आयुर्वेद में हिन्दी, अंग्रेजी एवं संस्कृत भाषा में लिखे गये लेखों का प्रकाशन होता है, किन्तु ज्यादातर पाठक हिन्दी भाषी होने के कारण हिन्दी भाषा में ज्यादा से ज्यादा लेखों का प्रकाशन करना हमारी विवशता है। दुर्भाग्यवश हिन्दी भाषी विद्वान लेखक भी अंग्रेजी में लिखना पसन्द करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि अंग्रेजी भाषा के लेखों का अम्बार लग जाता है जिसके कारण प्रकाशन में विलम्ब होता है। वस्तुतः अंग्रेजी भाषा में लेखों का प्रकाशन दक्षिण भारतीय पाठकों के लिए किया जाता है।

अतः हिन्दी भाषा के विद्वान लेखक हमारी विवशता को समझेंगे और वे हिन्दी भाषा में लेख भेजने का प्रयास करेंगे। इससे हमें सुविधा होगी और विद्वान लेखकों को लेख-प्रकाशन के लिए ज्यादा प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची

वर्ष - 59 अंक - 7 जनवरी - 2007

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-**baidyanath_ayurved@vsnl.com**

एक प्रति मूल्य - 10 रुपये प्रति

वार्षिक मूल्य - 100 रुपये प्रति

आजीवन शुल्क - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुल्क - 2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 483

2. अपस्मार : संक्षिप्त चिकित्सा विवरण 484
वैद्य पी.एस. अंशुमान

3. मधुमेह से मधुर मिलन 492
डा० सुमन अग्रवाल, डा०संदीप अग्रवाल

4. अतिसार एवं उसकी सरल घरेलू चिकित्सा 495
डा०पी.सी.जोशी, डा०पी.पी.जोशी

5. पथरी - कारण और निवारण 497
डॉ० महेश चन्द पूर्विया, प्रो० महेन्द्र सिंह मीना

6. उच्च रक्तचाप पर जलनिम्ब घन वटी 499
का प्रभाव
डा० जय प्रकाश सिंह, डा०एस०के०तिवारी

7. आँवला एक गुण अनेक 501
डा० अंजलि जैन, डा० महेश दाधीच
डा० बी.के. खरे, डा० यू०एस० निगम
डा० सुनीता डी० राम, डा०एस०एल०शर्मा

8. रसरत्नसमुच्चयोक्त रसद्रव्यों का वर्गीकरण- 504
एक संकलनात्मक अध्ययन
डा० राजेश सुभाष हारोडे, डा०सुधीर व्यं, देशपांडे
डॉ० सुधाकर भोजने

9. लहसुन के गुण 510
कैलाश जैन

10. रक्तार्क : एक बहुमूल्य औषधि 512
स्मितागुप्ता, एडवीन जेराल्ड, शीजा एडवीन जेराल्ड

11. चर्मदल विवेचन 513
डा० चन्दन मल जैन

12. डेंगू फीवर (दण्डक ज्वर) में आयुर्वेदीय 517
चिकित्सा
डॉ० महेश शर्मा

13. चरक संहिता में वर्णित विभिन्न लेप 521
डा०अनूप कु०गक्खड़, डा०अनिल गक्खड़

14. Critical Review and Ayurvedic 525
Approach of end stage renal disease
Dr. Nishant Shukla, Dr. C.P. Shukla

15. Glimpess of Plant wealth and its 530
Medicinal uses in Uttaranchal state
Dr. Anil Kumar Dhiman

16. Therapeutic Utility of Milk 536
Dr. Nilesh N. Bhatt, Dr. S.N.Gupta
Dr. V.D. Shukla

17. Concept of Dhatri and Human Milk 543
Banking
Dr. Kedar Nath Upadhyay, Kaumarbhrity

18. छात्रापयोगी 546

19. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 549

20. आरोग्य समाचार 550

21. आपके पत्र 553

22. श्रद्धांजलि 554

23. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 557

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## सम्पादकीय समस्त विश्व में भारत में मधुमेह रोगियों की बढ़ती संख्या-चिन्ता का विषय

दक्षिण अफ्रीका में दिसम्बर, 2006 के प्रारम्भ में अन्तर्राष्ट्रीय मधुमेह महासंघ मानचित्र का विमोचन किया गया । मानचित्र के अनुसार भारतवर्ष में मधुमेह रोगियों की संख्या सर्वाधिक है । इसके पश्चात् चीन का स्थान है । वर्ष 2000 से प्रारम्भ मानचित्र के अनुसार, "वैश्वीकरण और औद्योगिकीकरण की बढ़ती तेजी से मधुमेहरोगियों की संख्या में वृद्धि का अनुमान किया गया था। परिणामत: असमय मृत्यु अधिकांश देशों में सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या हो सकती है ।" मानचित्र प्रकाशन के अनुसार इस समय देश में 40.9 मिलीयन मधुमेह के रोगी हैं । इसके पश्चात् चीन का स्थान है जहां 39.8 मिलीयन रोगी हैं । अनुमान के अनुसार 2025 में भारत में 69.9 मिलीयन मधुमेह के रोगी हो जायेंगे जबकि चीन में 59.3 मिलीयन मधुमेह के रोगी हो जायेंगे । अर्थात् अभी दोनों देशों में मधुमेह रोगियों का अन्तर केवल 1.1 मिलीयन है जो बढ़कर 10.6 मिलीयन हो जायेगा । इसका अर्थ स्पष्ट है । एक तरफ चीन में आबादी के अनुसार मधुमेह रोगियों की संख्या घटेगी, दूसरी तरफ भारत में मधुमेह रोगियों की संख्या में भारी वृद्धि होगी । आई जी टी ( Impaired Glucose tolerance ) की जो परिभाषा मधुमेह उत्पन्न होने के पूर्व जो स्थिति पैदा होती है, उसके सम्बन्ध में दी गयी है - इसके अनुसार चीन का स्थान विश्व में शीर्ष पर है । सम्प्रति इसकी संख्या 64.3 मिलीयन है जो 2025 में बढ़कर 29.1 मिलीयन हो जायेगी ।

भारत में सम्प्रति इसकी संख्या 35.9 मिलीयन है जो 2025 में बढ़कर 56.2 मिलीयन हो जायेगी । मानचित्र के अनुसार "प्रत्येक विकसित समाज में अन्धापन, यकृत् दोष, अंगों का प्रत्यारोपण आदि रोगों का कारण मधुमेह है । हृदयरोग से मृत्यु होने वालों कारणों में से एक कारण मधुमेह भी है ।"

उपर्युक्त आंकड़ों के अध्ययन के एक बात स्पष्ट होती है । चीन में पूर्व मधुमेहियों की संख्या ज्यादा रहने पर भी वास्तविक मधुमेहियों की संख्या कम है । इसी तरह मधुमेह उत्पन्न होने की दर 2025 तक भारत की अपेक्षा चीन में कम हो जायेगी । इसका अर्थ है चीन अपने नागरिकों के स्वास्थ्य पर हमारे देश की अपेक्षा ज्यादा ध्यान देता है । इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि हमारी सरकार नागरिकों के स्वास्थ्य पर कम ध्यान देती है । वस्तुत: यह चिन्ता का विषय है ।

सरकार क्या करती है या नहीं करती है यह उसकी चिन्ता का विषय है, किन्तु हम नागरिकों को भी अपने स्वास्थ्य पर ज्यादा ध्यान देना होगा । हम जानते हैं कि "मधुमेह वस्तुत: कोई रोग नहीं, लेकिन समस्त रोगों की जननी है ।" हम यह भी जानते हैं कि यह रोग आनुवांशिक है और जीवन-शैली में परिवर्त्तन होने से उत्पन्न होती है । हमारा आशय यह है कि यदि हमारे वंश (माता-पिता सहित) में किसी को मधुमेह था, तो हमें प्रारम्भ से ही सतर्क हो जाना चाहिए । सतर्कता से मतलब है कि हमें नियमित व्यायाम करना चाहिए और ऐसे पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए जिससे अनावश्यक शर्करा पैदा होती है । यदि हमारा जीवन सक्रिय होगा, तो सम्भवत: मधुमेह उत्पन्न ही नहीं होगा । जिनके वंश में कोई मधुमेह का रोगी नहीं रहा है, उन्हें भी नियमित व्यायाम करना चाहिए । चालीस वर्ष की अवस्था के पश्चात् चाय-काफी में भी चीनी लेना बन्द कर देना चाहिए । वजन पर भी नियंत्रण करना चाहिए । भोजन भी संतुलित एवं नियंत्रित होना चाहिए । कम से कम प्रतिदिन 8-10 किलोमीटर पैदल चलना चाहिए । यदि रोग उत्पन्न हो भी गया तो अपने आहार-विहार एवं आयुर्वेदिक औषधियों से मधुमेह पर नियंत्रण पाने का प्रयास करना चाहिए । हमें विश्वास है कि यदि हम ऐसा करते हैं, तो निश्चित रूप से मधुमेह पर नियंत्रण पाया जा सकता है । याद रहे कि स्वस्थ नागरिक ही अपने राष्ट्र के स्वास्थ्य की रक्षा कर सकता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अपस्मार : संक्षिप्त चिकित्सा विवरण

*वैद्य पी.एस. अंशुमान, एच.पी.टी.

## परिचय[1]

प्राचीन काल से ही अपस्मार चर्चा का विषय रहा है । आयुर्वेद साहित्य में इसके विषय में विस्तृत चिन्तन एवं व्यवस्थायें मिलती हैं ।

इस को आयुर्वेद के आचार्यों ने स्मृति दोष से सम्बद्ध रोग के रूप में स्थापित किया है यद्यपि इसकी उत्पत्ति में रज-तम उपहत चेतना एवं इन्हीं से विहत, सत्व तथा उपक्षीण देह को आधार माना गया है जन्मजात अनुकूल की दृष्टि से माता (गर्भिणी) अपचार तथा क्रोधादि अभिषङ्गता को भी कारण माना गया है । इतना ही नहीं शिशु जन्म के समय हुआ शिरोघात या जालोत्तर शर एवं हृदय अभिघात आदि कारणों से भी प्राचीन महर्षियों ने इसकी उत्पत्ति की परिकल्पना प्रस्तुत की है ।

जब प्राणी स्मृति, बुद्धि, सत्व संप्लवन ग्रस्त हो जाता है तब स्मृति-अपस्मरण पूर्वक इसकी उत्पत्ति की व्याख्या की गई है जिनमें अनुसांगिक कारणों में काम क्रोधादि की उद्वेग युक्तता को भी रोग कारक हेतु माना गया है ।

सामान्यतया इसे निज दोषज माना गया है तथापि भूताभिषङ्ग को विवादग्रस्त कारण मानने पर भी तज्जन्य अपस्मार के चिकित्सा निर्देश मिलते हैं । इस प्रकार इस विषय पर अनेक दृष्टि से प्राचीनों द्वारा विचार कर प्रस्थापना प्रस्तुत करते पाया जाता है जो आज भी इसके नियंत्रण एवं चिकित्सा में उपयोगी है ।

## हेतु[2]

(क) आहार

- समलाहार (च) मलीनाहार (सु)
- विकृत (च) अशुचि आहार (च) (सु)
- अहितकर (असात्म्य) (सु)
- विधीहीन सेविताहार (सु)
- विषमाशन (च) विरुद्धाहार (सु)

(ख) विहार

- रजस्वला गमन (सु)
- वेग निग्रह (सु)
- विषमचेष्टा (च) प्रवृत्तिविरुद्ध कर्म मलीनविहार (सु)
- विधिहीन तंत्र प्रयोग (च)
- स्वस्थवृत्त अपालन (सु)

(ग) आहार

- रज, तम विहत सत्व (च) सतोगुण (सु)
- काम उद्वेग (च) (सु) क्रोधोद्वेग (च)
- भय (च) (सु) चिन्ता (च) मोह (च) अनुबंध
- हर्ष (च) शोक (च) (सु) से उद्वेगितता
- इन्द्रियार्थ अतिसेवन एवं मिथ्यासेवन (च)
- विषम आचार (आचरण दोष) (च)
- विधिहीन तंत्र प्रयोग (च)

(घ) अन्य

- सुधा (Ca) अल्पता, प्राणवायु ($O_2$) न्यूनता एवं दूषित वायु ($Co_2$) का शरीर में बढ़ना
- चयापचय दोष, वृक्क एवं यकृत विष संचय
- मद्य विषाक्तता
- अपतर्पण (अपोषण)

(ङ) क्षेत्रीय अनुकूलता

- क्षीण देह (च) (अत्यन्त उपक्षीणता)
- रजतम उपहत चेतस (च) (सु) युक्तता (सु) विहत चेतन (सु)

## विकृति[3]

(क) घटक

दोष -I वायु (त्रिदोष) उदभ्रांत, विषम बहुल (च) ।

II रज एवं तम सत्व दोषानुबंध ।

दूष्य- रक्त (?) अग्नि- मंद (?) आंत्र-साम ।

स्रोत- I मनोवह स्रोत (च)
धमनीगत दोष संचय (च) (मस्तिष्क धमनी काठिन्य - स्क्लेरोसिस), मस्तिष्क कोष (न्यूरोन) की जन्मजात विकृति

II इन्द्रियायतन अवस्थिति (च)

* (निवृत्त प्रोफे./प्राचार्य) 1497, ए 2/1, कृष्णालय, रूपाणि सर्कल, भावनगर (गुजरात) 364001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



III हृदय उपसृत्यन (च) हृदय का दोषावृत्तता (सु) हृदय पीडन (च)

मर्माभिहतत्व (च) शिरोभिघात:/हृदयाभिघात (मस्तिष्कगत रक्तस्राव, मस्तिष्क/ मस्तिकावरण प्रदाह) (च०सि०)

(ख) चरण

I - निदान सेवन से दोष (संचय पूर्वक) प्रकोप (च०नि०) शरीर एवं मन के दोष प्रकुपित होना (अ)

II - रज तम उपहत चेतस - अन्तरात्मा के (च. नि.) या रज तम उपहत सत्व (च.चि.) मन को उपहत या नष्ट करना (अ) ।

III - इन्द्रियायतन में दोषों का स्थानसंश्रित होकर बैठना (च०नि०)

- संज्ञावह स्रोतों में दोष भर जाना (सु) (अ)
- तदनन्तर हृदय-इन्द्रिय-आयतन (में दोष संचरण) भर जाना (च०नि०) धमनीसंचित दोष का हृदय को पीड़ित करना (च०चि०)

IV - (पुन:) उद्वेग से मनोभिघात होने पर (च०नि०) रज-तम युक्तत्वता (सु) या कामादि से अभिभूत में उद्वेगित मन एवं इन्द्रिय-हृदय को सहसा अभिभूत करना (च०चि०) या सहसा आक्रमित करना (च०चि०) सम्पीडित हृदय व्यथा करना (च०चि०)।

V - (इस प्रकार) चेतस (चेतना) को उपहत कर (सु) (अ) मूढमति बन वीभत्स चेष्ट करना (अ) (तथा अन्य लक्षण करना) मूढ चेतस-भ्रांत चित्त से व्यथा होने, अपस्मार होना (च) (चि)

VI - (अत:) प्राणी (मानव) को अपस्मार (पीड़ित) करना (च०नि/चि०) (सु) ।

(ग) प्रकार

I आयुर्वेद

संहिता ग्रन्थों में इसके दोष भेद से चार प्रकार माने गये हैं यथा - I. वातज II.पित्तज III. कफज IV. त्रिदोषज (सन्निपातज) (च.) (सु.) इनके अतिरिक्त आगन्तु भूत प्रकार विवादित है । (च)

II आधुनिक

1. - इ.सी.जी. के आधार पर ग्रांडमाल, पेंटिटमाल सायकोमोटर ।

2. - लक्षण विशेष अनुसार - क्षुद्रापस्मार (पेंटिटमाल) बालापस्मार या दीर्घक्षुद्रापस्मार (पिक्टोलेप्सी), निद्रापस्मार (नार्कोलेप्सी) मानसिक (सायकोमोटर ऐपेलेप्सी) तथा ग्रांडमाल आदि ।

लक्षण वैशिष्ट्य के अनुसार ही फ्यूगी स्टेट, ड्रीमी स्टेट तथा क्युरेसिव, कंटेप्लेक्षी जेक्सन आदि प्रकार भी इसी के प्रकारान्तर माने जाते हैं ।

3. - वेग के अनुसार - कॉमन, स्टेटस, पिक्नोलेप्सी नेक्टरल आदि प्रकार ।

4. - निमित्तानुसार - सिम्पटोमेटिक, ईडियोपेथिक ।

5. - अभिव्यक्ति के अनुसार - साईजर्स, कांशेसनेस डिसाईर्स, मूड डिसार्डर्स, ऐपेलेप्टीक चेजर्स ।

6. - डब्ल्यू.एच.ओ. (W.H.O.) के अनुसार -
   * पार्शियल सीजर्स - अमूर्च्छित, अपूर्णमूर्च्छित ।
   * आक्षेप/क्षेत्र प्रकार - पेंटिटमाल, क्लोनिक, टॉनिक, क्लोनिक-टॉनिक मिक्स सीजर्स ।
   * युनीलेटरल ।
   * अनक्लासीफाइड ।

पूर्वरूप[4]

(क) आयुर्वेद सम्मत

देहगत - दौर्बल्य (च) बलक्षय (च) अंगमर्द (च) (अ)
स्वेद (सु) (अ) तृषा (अ) कुक्षि आटोप (च)(अ) हृदय ग्रह (च) हृदय कम्प (क्षु) (अ)
अग्निज - अविपाक (च) (अ)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अरोचक (च) (अ), अन्न अनिच्छा (च) (अ) लालास्राव (च) (अ)

इन्द्रिय - भ्रूव्युदास (च) (अ) निरन्तर अक्षिविकृत होना (च) (अ)
तमदर्शन या तमप्रवेश (च) (अ)
अशब्द श्रवण (च) (अ)

मानसिक-निद्रानाश (सु) (अ)
प्रमूढ़ता (सु) मोह (अज्ञान) (च)
शून्यता आभास (अ) ध्यान भग्नता (च) (अ) (सु) भ्रम (च) (अ) तम (दर्शन एवं प्रवेश) (च) (अ) मूर्च्छा (च) (सु) (अ) ।

स्वप्नदर्शन- मद-मत्त लर्तन (च) (अ) सह पान नर्तन (अ)
- पीडन (च) बंधन (च) व्यथन (च) व्यधन (च) ।
- वेपथु (कम्प) (च)।
- मद्यपान, तैलपान (अ) ।
- मद्य या तैल मूत्रण (अ) ।

**(ख) आधुनिक सम्मत** - यह चार अवस्था अनुसार निम्न प्रकार के हैं -

I - कुछ घंटों (या दिन) पूर्व प्रगट - यह 25% रोगियों में मिलते हैं ।

शिरशूल, शिरोभ्रम, सहसा कम्प, क्रोध, चिड़चिड़ाहट, अन्तर्मुखी होना, ध्यानमग्नता, विचार शून्यता एवं स्वभाव में परिवर्तन होना ।

- रोगारंभ पूर्व (औरा-Aura) - यह 75% रुग्णों में मिलते हैं ।

हस्त-पाद शून्यता, आमाशय से गले, शिर की ओर बढ़ती बैचेनी लगना, श्वासरोध (कृच्छ्रता), हृदय कम्प, शिरोभ्रम होना ।

अलौकिक माया, तमदर्शन, चिंगरी या ज्वाला दर्शन, शक अश्रवण या चित्रविचित्र श्रवण, मिथ्या सुगंध दुर्गंध आभारण होना ।

विचित्र मानसिक स्थिति में पहुँचने का आभास, भयग्रस्त होना या उन्मत्त होना अलौकि माया (रूप) दर्शन ।

हस्त - बाहु - चेहरे की पेशियों में स्तंभ होना, या इन में कम्प होना आदि ।

**सामान्य लक्षण**[5]

**(क) आयुर्वेद सम्मत**

I - स्मृति संप्लवन (च), बुद्धि संप्लवन (च) (अ)
- असत्य रूप दर्शन (च) (अ) ।
- अक्षि - भ्रू विकृति (अ) बीभत्सदर्शन (च) (अ) ।
- तमप्रवेश (च) (अ)।
- प्रपतन (च) (सु) ।
- जिह्वा प्रस्फुरण (च) (सु) अक्षि-भ्रू प्रस्फुरण (च) (सु) ।
- दंतखादन (सु) (अ) लालास्राव (च) फेन वमन (सु) (अ) ।
- हस्तपाद विक्षेपण (च) (सु) (अ)।
- प्रलाप (सु) कुंजन (सु) क्लेश (सु)।
- वेग जाने पर तृषा (सु) सुप्तवत प्रतिबोध (च) (अ) या अल्प काल में पुनः संज्ञा प्राप्ति करना (सु)

**(ख) आधुनिक -**

I स्तम्भावस्था (टॉनिक फेज)- ग्रीवा-शिर (धड़), जंघा बाहु एवं कण्ठ की पेशियों में स्तब्धता, चेहरा नीला पड़ना, संधि संकोच प्रसार होना, सहसा पीठ के बल गिर जाना, शिर ग्रीवा एक ओर मुड़ जाना । नेत्र बंद होना, हनु-जिह्वा में स्तंभ, जिह्वाक्षत, श्वास रोध होना होता है । यह अवस्था ½ मिनट रहती है ।

II आक्षेपावस्था (क्लोनिक फेज) - बाहु, पक्ष में विक्षेपण, जकड़े का खुलना, नेत्र बंद होना, घुर-घुर कर श्वास ध्वनि होना यह अवस्था । मिनट चलती है ।


CC-0. Prabhu Dayal Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



III शिथिलावस्था (रिलेक्स होना) - श्वसन पेशी शिथिल होना अत: श्वास प्राकृत होना, श्वास आरंभ होने पर वायु मंथन पूर्वक फेन-वमन (निकलता) होकर मुख-नासा से निकलना मल-मूत्र प्रवृत्त हो जाना, क्षणिक मूर्च्छा से घबराकर जाग जाना, घटी घटना का ज्ञान न होना (विस्मरण), यह अवस्था भी ½ मिनट की होती है ।

IV जाग्रतावस्था - रोगी के मूर्च्छा से जागने पर होने वाले लक्षणों में :-

* शिरशूल, सो जाना (निद्रा) ।
* नेत्र पुतली विस्फारित होना, कोर्निया को छूने पर भी नेत्र बंद नहीं करना ।
* डीप रिफलेक्स कम होना या लुप्त होना तथा प्लेन्टर रिफलेक्स बढ़ना ।
* वेगों की संख्या अनिश्चित होना, यह संख्या वर्ष में 1-2, मास में 1-2, पक्ष या सप्ता में 1-2 या दिन में 1-2 बार या अधिक ह सकती है ।
* बार-बार वेग आते रहने से रोगी की बुद्धि क्षमत घट सकती है, बुद्धि मंदता आ सकती है ।

**विशेष लक्षण**

आयुर्वेद में अपस्मार के लक्षणों को चिकित्स सुविधा की दृष्टि से दोषानुसार विभाजित कर वर्णित किय गया है ।

इस प्रकार के वर्णन में पूर्वोक्त मूर्च्छा, पू मूर्च्छा मध्य एवं मूर्च्छा समाप्ति काल के लक्षणों क समावेश आचार्यों द्वारा किया जाता है ।

व्यावहारिक दृष्टि से यह वर्गीकरण अपस्मार ए ततसम स्मृति दोष जन्य अन्य नवीन एवं पुरातन मानसि विकृतियों के समझने, इनकी व्याख्या करने में उपचार भी उपयोगी है ।

**तुलनात्मक : विशिष्ट लक्षण[6]**

| क्र० | घटक | वातिक[6] | पैत्तिक[7] | श्लैष्मिक[8] |
|---|---|---|---|---|
| 1. | सत्व/स्वप्न एवं माया दर्शन | कृष्ण-विकृत सत्व अनुभावन (सु) कृष्ण-परुष- चपल रूप दर्शन (अ) | वही विकृत सत्वानुभावन रुधिर युक्त भैरव रूप एवं प्रदीप्ताग्नि दर्शन (च) अग्निव्याप्त लोक दर्शन (च) | वही शुक्लरूप दर्शन (अ) शुक्ल, स्निग्ध रूप दर्शन (च) |
| 2. | तमप्रवेश प्रकार | अवस्थित चंचल, परुष रूक्ष-रूप दर्शन पूर्वक तभ प्रवेश (च) एवं प्रपतन (च) सम्मूर्च्छन (च)(सु)(अ) | रुधिर-रूक्ष रूप (च) उग्र भैरव-क्रोधित एवं प्रदीप्त रूप दर्शन पूर्वक तम प्रवेश (च) (अ) तथा भूमि पर गिर पड़ना वही | शुक्ल; गुरु, स्निग्ध रूप दर्शन पूर्वक तम प्रवेश (च) (अ) शुक्ल दर्शन पूर्वक भूमि पर गिरना (सु) वही |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र० | घटक | वातिक[6] | पैत्तिक[7] | श्लैष्मिक[8] |
|---|---|---|---|---|
| 3. | मूर्च्छा प्रकार एवं संज्ञा लाभ | बार-बार संमूर्च्छन (च) (अ) (अल्प कालीन) क्षण भर में संज्ञा लाभ (च) | बार-बार मूर्च्छा (च) (अ) (नाति अल्प काल) वही | विलम्ब या देर से मूर्च्छन (च) (अ) देर से संज्ञा लाभ (च) (अ) |
| 4. | मूर्च्छा वेग काल | भूखे पेट या अन्य वात कोप काल | भोजन काल या अन्य पित्त कोप काल | भोजन के बाद कफ कोप काल |
| 5. | दैहिक लक्षण | उत्पिण्डित; ऊपर चढ़ी आंखें (च) विकृत भ्रू (सु) विरूप, विकृत आनन (च) ग्रीवा आध्मानित (च) शिर वक्र एवं अस्थिर (च) विषम विनत अंगुल (च)(सु) | | |
| 6. | चेष्टा/चलत्व युक्त लक्षण | (विकृत क्षेपण) परित: अंग विक्षेपण (अ) अस्थिर सक्थि एवं पाद (च) सक्थि स्फुरण अंग वेपन (सु) कम्प (च) | धुन्वांगत्व (सु) | विकृत चेष्टा (च) अल्पचेष्ट (अ) |
| 7. | वैवर्ण्य | नख-नयन-वदन त्वक अरुण श्याव एवं परुष (च) श्याव एवं रूक्ष अंगत्व (अ) | नख-नयन-वदन त्वक हरित, हारीद्र, ताम्र (च) पीत त्वक (अ) पीताङ्ग (च) | नख-नयन-वदन त्वक शुक्ल (च)(अ) |
| 8. | अंग (अन्य) | रूक्षागंता (अ) | उष्णांग (सु) सोष्मा (च) ताप(संताप)(सु) स्वेद (सु) | शीत, हृष्ट (च)(सु) गुरू (च) |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र० | घटक | वातिक[6] | पैत्तिक[7] | श्लैष्मिक[8] |
|---|---|---|---|---|
| 9. | अनुबंधी ल. | श्वास (च)(सु)(अ)<br>आध्मान (अ)<br>हृदय तोद (सु) | तृषा (सु)(अ)<br>संताप (सु) | निद्रा (सु) |
| 10. | उपशयानुपशय | वातलानुपशय<br>विपरीत उपशय | पित्तलानुपशय<br>विपरीत उपशय | श्लेष्मलानुपशय<br>विपरीत उपशय |

टिप्पणी : त्रिदोषज में मिश्र लक्षण कहे गये हैं (च) (सु) (अ)

साध्यता

साध्य - नवीन, अल्प लक्षणयुक्त, एक दोषज

कृच्छ्रसाध्य - द्वदंज, अधिक लक्षण युक्त ।

असाध्य - सन्निपातज, दुर्बल रोगी/अति क्षीण रुग्ण, का (स्थायी) भ्रूव्युदास, अक्षि विकृति युक्त होना ।

अरिष्ट ल०

- जागृतावस्था में प्रकाश में अन्धकार देखना, अशब्द-शब्द ग्रहण ।
- स्वप्न में नाचते हुए शिर नीचा कर प्रेत द्वारा ले जाना (च) प्रेत द्वारा खींचा जाना (अ) ।

चिकित्सा

(क) **चिकित्सा सूत्र एवं उपक्रम**[10]

I संशोधन पूर्वक शमन

- यथा दोष तीक्ष्ण संशोधन पूर्वक शमन ।
- दोषानुसार वातज में वस्ति, पित्तज में विरेचन एवं कफज में वमन तथा शिरोविरेचन की व्यवस्था कही गई है ।

इनमें से हृदय-स्रोत शोधक होने से, वमन विशेष रूप से प्रबोधनार्थ उपयोगी कहा गया है ।

- सम्यक संशोधन (पंचकर्म) के बाद संशमन उपक्रम एवं कल्प प्रयोग कहा गया है ।

II दैवव्यापाश्रय चिकित्सा - भूतानुबंध होने पर मंत्रादि द्वारा उपचार तथा रुद्र पूजन आदि का विधान किया गया है ।

औषध (छत्रादि) मणिधारण का भी विधान है ।

III मानसिक उपचार - अवरुद्ध बुद्धि, चित्त, हृदय (मन) के स्रोतोरोध की चिकित्सा कर बाद में अन्य शोष दोष, शमन उपचार करने का निर्देश दिया गया है ।

IV वेग कालीन चिकित्सा - वेग आने पर प्रथम वेग शमनार्थ संज्ञा प्रबोधक (तीक्ष्ण नस्यादि) उपचार करना आवश्यक माना गया है ।

वेग के शान्त हो जाने पर वेगान्तरित चिकित्सा के रूप में शेष शोधन-शमन आदि कल्प प्रयोग विहित है ।

V रसायन कर्म या अपुनर्भवन चिकित्सा - रोग के ठीक हो जाने पर रोग पुनः न हो उसके लिये मेध्य रसायन, ब्राह्मी-वचा-शंखपुष्पी आदि रसायन कल्प प्रयोग निर्देश है ।

VI शल्यतंत्रीय उपक्रम -

I सिरा व्यधन - हनुसंधिगत सिरा वेधन

II अग्निकर्म - 1. ललाट, भ्रूमध्य (हा) 2. ब्रह्मरंध्र, कोडी प्रदेश, पादकनिष्टिका (हा) (ह) भ्रू मध्य, शंख, पाद, कृकाट, मूलरन्ध्र (यो.) में दग्धकर्म ।

(ख) **औषध कल्प चिकित्सा**[18]

I **अन्तःप्रयोगार्थ कल्प**

स्वरस - ब्राह्मी, शंखपुष्पी

कल्क/चूर्ण- ब्राह्मी, शंखपुष्पी, वचा, रसोन, के मेध्य कल्क अतिरिक्त कल्याणचूर्ण, सारस्वत चूर्ण आदि ।

क्वाथ - रास्नादि क्वाथ, मास्यादि क्वाथ, दशमूल



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



क्वाथ ।

लेह - कुष्माण्डावलेह ।

घृत - महापंचगव्य, पंचगव्य, कसाद्य, कृष्णाद्य, वचादि, सिद्धार्थक एवं ब्राह्मी घृत (च) जीवनीय, आमलकाद्य; विदार्याद्य, कुलत्थ एवं पित्त घृत (सु) कुष्माण्ड घृत (भै.)

तैल - सिद्धसर्षपतैल, कटभ्यादि तैल, त्रिफलाद्य, पुलङ्कषाद्य तैल(च)वस्तमूत्राद्य तैल (भै.)

वटी - अपतंत्रकारीवटी, सर्पगंधावटी (अनु) इन्द्रब्रह्मवटी (भै.) ब्राह्मीवटी ।

रस - वातकूलांतक, स्मृतिसागर, भूतभैरव चण्ड भैरव आदि रस एवं रससिन्दूर पाशरज्जू भस्म, अजनाभिनाल (भै.र.)

II. पंचकर्म प्रयुक्त-सूतभस्म (भै.)भार्ङ्गीसुरासंधान (सु)

स्नेहनार्थ- पंचगव्य या शतावरी घृत

स्वेदन - वाष्प

वमनार्थ-मदनफल, विरेचनार्थ-त्रिवृत

बस्ति-दशमूल क्वाथ, तैल यथाकाल

कर्म विशेष - शिरोवस्ति, शिरोधारा

III. बाह्य प्रयुक्त कल्प

- धूपन - नकुलाद्य, श्वानपित्ताद्य (भै.)
- लेप-प्रदेह - पिपल्यादि (च)
- उद्वर्तन - अपेतराक्षसाद्य
- अंजन - कायस्थावर्ति (भै.) मुस्ताद्य (यो.) (श्वान) पित्तांजन
- नस्य - यष्ट्यादि (भै.) त्रिफला ज्योतिष्मति तैल, पिपल्यादि, भार्ङ्गी गो-खर-अश्वमूत्रादि नस्य (यो.)

**पथ्यापथ्य**[18]

| क्र० | पथ्य | अपथ्य |
|---|---|---|
| (क) | आहार | |
| | - रक्तशालि, गेहूं | - तीक्ष्ण, ऊष्ण, गुरू आहार |
| | - मूंग | - अशुचि, अपवित्र अन्नपान |
| | - पटोल, कुष्माण्ड, सहजन फल, वथुवा- ब्राह्मी पत्र, शाक | - विम्बी फल शाक (अमेध्य) पत्र शाक एवं मत्स्य |
| | - तिल तैल | - |
| | - पुराण घृत | - |
| | - दुग्ध | - मद्यपान |
| | - वर्षाजल | - , |
| | - अनार, नारियल, द्राक्ष फालसा, आंवला आदि फल | - अषाढ़ फल |
| | - (सात्म्य, मेध्याहार) | - विरुद्ध आहार |
| (ख) | विहार | |
| | - सम्यक निद्रा | - निद्रारोध |
| | - ब्रह्मचर्य पालन | - अति स्त्री सेवन |
| | - स्वस्थवृत पालन | - अति व्यायाम |
| | - वेगरोध परित्याग | - क्षुधा-तृषा-निद्रा वेग रोध |
| (ग) | मानसिक | |
| | I- आत्म (विश्वास) कर भाव | |
| | - धी-धृति-स्मृति कर भाव | - चिन्ता, भय, शोक-क्रोध अनुबंधता |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | |
|---|---|---|
| | - दान<br>- भय - त्रासन - झिड़कना आदि का मूर्च्छानाशनार्थ उपयोग<br>- दोलन (हिलाना), ताडन आदि सम्बोधनार्थ | - पूज्य व्यतिक्रम |
| (घ) | अन्य उपक्रम<br>- नस्य, अंजन, धूम<br>- सिराबेध<br>- हरडे, रसोन सेवन<br>- गो-गदर्भ-अश्वमूत्र<br>- उन्मादोक्त उपक्रम | - उपक्षीणता कारक कर्म<br><br><br><br><br>- जलावगाहन, पर्वत-वृक्षारोहण |

## एक संक्षिप्त चिकित्सा विवरण

क. आतुर

अपस्मार ग्रस्त कुछ रुग्णों की चिकित्सा का संक्षिप्त विवरण यहां दिया जा रहा है । इन रुग्णों के वय एवं लिङ्ग समूह निम्नानुसार थे ।

| क्र० | वय समूह वर्ष | पु० | स्त्री० | कुछ |
|---|---|---|---|---|
| 1. | 15-20 वर्ष | 2 | 0 | 2 |
| 2. | 21-30 | 4 | 4 | 8 |
| 3. | 31-40 | 6 | 4 | 10 |
| 4. | 41-50 | 4 | 0 | 4 |
| | कुल | 16 | 8 | 24 |

इन रुग्णों में उदर (आमाशय) अरति एवं दाह 4 में उर एवं हृदय तोद 2-2 यो. तथा स्फुर - कम्प - सुप्ति 2-2 में लक्षण विशेषानुबंध के रूप में तथा ग्रीवा स्तंभ 2, अंत्रवृद्धि एवं वृषण शोथ में पाया जाता था ।

## (ख) औषध

1. रास्नादि / मास्यादि क्वाथ 2 तोला प्रातः
2. अपतंत्रकारी, स्मृतिसागर ।-। गोली दो बार
3. मेध्यचूर्ण, सारस्वत चूर्ण, अर्जुन, प्रवाल, मि० । माशा दो बार ।
4. लशुनादिवटी, हिंगुकर्पूर वटी. ।-। गोली भोजनोत्तर ।
5. शिवाक्षार पाचन 1/2 चम्मच रात्रि में आवश्यकतानुसार सर्पगंधा वटी । गोली सोते समय

अन्य रोग एवं लक्षण शमनार्थ भी कुछ कल्प किये गये तथा वृषण शोथ में नित्यानन्द रस, अंत्रवृद्धि में वृद्धि वाधिका वटी, उर/हृदय शूल/तोद में हृदयार्णव रस, सुप्ति में नवजीवन + दशमूल, उदरदाह में धात्रिलेह कामदुग्धा मि० आदि ।

## (ग) परिणाम

- अपस्मार के वेगों की संख्या घटी ।
- सम्बद्ध लक्षण शमन ।
- कार्य क्षमता बढ़ी ।
- स्वास्थ्य सुधार हुआ ।

बैद्यनाथ
कुटजावलेह
खूनी बवासीर में उपयोगी दवा



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# मधुमेह से मधुर मिलन

*डा० सुमन अग्रवाल, एम० डी०(आयुर्वेद)डी० जी०

**डा० संदीप अग्रवाल, एम० डी० (आयुर्वेद)

**भूमिका :** मधुमेह (डायबिटीज,शुगर) से दुनिया भर के कई करोड़ व्यक्ति प्रभावित हैं जिनमें से करीब 40 लाख भारत में ही हैं । यह रोग मनुष्य के अग्नाशय (पैनक्रीयाज़) में बनने वाले हार्मोन इंसुलिन की कमी से होता है । इसके फलस्वरूप रक्त में शक्कर की मात्रा बढ़ जाती है और यह शक्कर पेशाब में निकलने लगती है । इसमें विभिन्न प्रकार के आंतरिक विकार भी पैदा होते हैं । यदि इस रोग की उपेक्षा की जाए तो यह प्राणघातक सिद्ध हो सकता है । यदि इसे चुनौती मान कर डाक्टरी सलाह के मुताबिक चला जाए तो एक सामान्य, स्वस्थ व सम्पूर्ण जीवन सम्भव है । याद रहे कि यह रोग वंशानुगत हो सकता है । अत: मरीज के लिए अपने सगे-सम्बन्धियों (माता, पिता, भाई बहन, पुत्र, पुत्री) की नियमित तौर पर 'शुगर' की जाँच कराना आवश्यक है ताकि प्रारम्भिक अवस्था में ही यह रोग पकड़ में आ सके और इसका समुचित इलाज हो सके । आप में से यदि कोई भी अधिक थकान, भूख, प्यास या बहूमूत्र से परेशान है तो उसे 'शुगर' की जाँच कराने की सलाह अवश्य दें ।

**मधुमेह के लक्षण**

- बार-बार पेशाब आना
- अधिक भूख-प्यास लगना
- अधिक थकान, कमजोरी व शिथिलता
- वजन में परिवर्त्तन
- पेशाब की जगह में खुजली होना
- बार-बार फोड़े-फुंसियां निकलना

**उम्र के अनुसार मधुमेह दो प्रकार का होता है :-**

1. **जुवेनाईल डायबिटीज** - यह अक्सर कम उम्र (30-40 वर्ष तक) में होती है । उपरोक्त लक्षण रोगी में स्पष्ट तौर पर पाए जाते हैं । फलस्वरूप प्रभावित व्यक्ति तुरंत व्यक्ति डाक्टरी सलाह लेने को बाध्य होता है। इसके इलाज के लिए इंसुलिन आवश्यक है ।
2. **मैच्योरिटी ऑनसेट (ओबीज) डायबिटीज** - यह अक्सर 30-40 वर्ष से अधिक उम्र में होती है और प्राय: अधिक वजन के व्यक्तियों को प्रभावित करती है । उपरोक्त लक्षण कई बार रोगी में उपस्थित अनुपस्थिति होते हैं और लम्बे समय तक तक पता ही नहीं चलता कि व्यक्ति-विशेष इस रोग ग्रस्त है । लक्षणों के अभाव में रोगी को नजरअंदाज न करें क्योंकि सही इलाज न होने पर यह रोग को (विशेषत: हृदय, गुर्दो व आंखों को) तरह चाट जाता है व असाध्य भी हो सकता है

**मधुमेह की जटिलताएं :**

उचित इलाज के अभाव में यह निम्न जटिल हो जाता है । लापरवाही प्राणघातक भी हो है ।

1. विभिन्न प्रकार की संक्रामक रोग (इन्फैक्शंस)
   - फोड़े-फंसियां आदि
   - घावों का न भरना
   - उल्टी-दस्त, पेचिश
   - छाती के संक्रामक रोग : निमोनिया, टी आदि
   - गुर्दे व पेशाब के रास्ते के संक्रामक रोग
   - जननांगों के संक्रामक रोग

**2. उच्च रक्तचाप व हृदय रोग :**

मधुमेह रोगी के रक्त में शक्कर के अलावा (कालेस्टिरोल) की मात्रा भी बढ़ जाती है। यह चर्बी नलिकाओं में जम कर न केवल रक्तचाप (ब्लड बढ़ाती है बल्कि रक्त के बहाव को अवरुद्ध करके रोग को जन्म देती है एवम् टांगों में दर्द पैदा करती

**3. गुर्दे का रोग :**

मधुमेह रोगी के गुर्दो की कार्य क्षमता धीरे क्षीण हो जाती है और अन्तत: गुर्दे काम करना बंद भी सकते हैं ।

**4. चक्षु रोग :**

सफेद मोतिया, काला मोतिया अथवा दृष्टि के रोग (रेटिनोपेथी) के कारण मधुमेह रोगी अपनी

*प्रवक्ता, चौधरी लाल देवी कॉलेज ऑफ आयुर्वेद, जगधारी

**फिजिशियन कम लेक्चरर, चौधरी देवीलाल कॉलेज ऑफ आयुर्वेद, जगधारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हो सकता है ।

**तंत्रिका-तंत्र (नर्वस सिस्टम) के रोग**

- रक्त नलिकाओं में चर्बी से खून का दौरा होने के कारण मधुमेह रोगी को अधरंग हो सकता है ।
- नसें खराब (न्यूरोपैथी) होने से रोगी के पैरों व हाथों में जल सूईयां की सी चुभन सूनापन हो सकता है ।

**बेहोशी :**

**निम्न कारणों से रोगी बेहोश हो सकता है ।**

- दवा कम लेने से (रक्त में शक्कर की मात्रा अत्यधिक बढ़ने के कारण)
- दवा अधिक लेने से
- दवा लेने के बाद भोजन न करने से
- आवश्यकता से अधिक कसरत करने से
- दिमाग में रक्त का बहाव अवरुद्ध होने से

दवा अधिक लेने से, दवा लेने के बाद भोजन न करने से अथवा आवश्यकता से अधिक कसरत करने से रक्त में शक्कर की मात्रा बहुत कम हो जाती है । ऐसी परिस्थिति को हाइपोग्लाईसीमिया कहते हैं ।

**विशेष नोट :**

हापोग्लाईसीमिया के लक्षण प्रारम्भ में पहचाना व उसका तुरन्त इलाज करना अति आवश्यक है । देर हो जाने से मरीज के दिमाग को स्थाई तौर पर नुकसान पहुंच सकता है । अधिक विलम्ब होने की स्थिति में दौरे पड़ सकते हैं व जान का खतरा भी उत्पन्न हो सकता है ।

**रक्त में शक्कर कम होने पर निम्नलिखित लक्षण उत्पन्न होते हैं :-**

पसीने छूटना, रंग पीला पड़ना
घबराहट, धुकधुंकी व दिल डूबना
कंपकंपी, हाथों-पैरों में सनसनाहट
धुंधला दिखना
तेज भूख लगना

**व्यवहार में परिवर्त्तन :** चिड़चड़ापन, गुस्सा, रोना, चिल्लाना नशे की हालत अथवा बेहोशी, डरावने सपने व नींद में चिल्लाना आदि । ऐसी परिस्थिति में मरज को तुरन्त चीनी, ग्लूकोज आदि पानी में घोल कर दी जाती चाहिए और शुगर की अगली खुराक बन्द कर के डाक्टरी सलाह लेनी चाहिए । यदि मरीज अधिक गफलत में हो, बेहोश हो अथवा उसे दौरे आ रहे हों तो तुरन्त किसी नजदीकी अस्पताल में दाखिल कराया जाना चाहिए ।

**मधुमेह की चिकित्सा**

मधुमेह की चिकित्सा-त्रिकोण निम्न प्रकार है :-

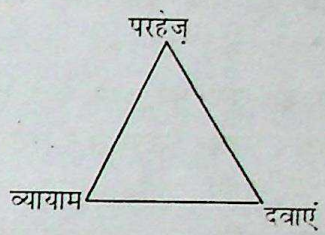


**1. परहेज :** स्पष्ट तौर पर परहेज़ सर्वोपरि है। परहेज के बिना इलाज व्यर्थ है । परहेज़ का अर्थ उपवास नहीं बल्कि डाक्टरी सलाह के अनुसार सही, संतुलित व स्वास्थ्यवर्धक भोजन लेना है । यदि आप मोटापे का शिकार हैं तो सही इलाज के लिए वज़न कम करना अनिवार्य है । वज़न कम करने के लिए मीठा पूर्णयता बन्द कर दें, घी बहुत कमकर दें व चपातियों की संख्या घटा दें । सलाद व हरी सब्जियां जितनी चाहें खाएं । आम, अंगूर, चीकू व केला छोड़कर अन्य फल मनचाही मात्रा में खा सकते हैं ।

भोजन स्वादिष्ट बनाने के लिए मसाले, हरा धनिया, पुदीना, अदरक, प्याज लहसुन आदि का इस्तेमाल कर सकते हैं । यदि आप उच्च रक्तचाप से भी पीड़ित हैं तो भोजन में नमक की मात्रा कम रखें । एकरसता दूर करने के लिए बदल-बदल कर खाद्य-पदार्थों का इस्तेमाल करें। थोड़ा खाना अधिक बार लें ताकि रक्त में शक्कर की मात्रा एकदम न बढ़े । उबला हुआ भोजन लें, तला हुआ नहीं ।

पतले, बढ़ती उम्र के व युवा मधुमेह रोगियों को मुख्यत: गुड़, चीनी, मिठाइयां व अन्य मीठी वस्तुओं से परहेज़ रखना आवश्यक है । सभी सब्जियां, आलू, सलाद,


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



दालें, चावल, घी, दूध से बने पदार्थों, ताजे फल (आम, अंगूर, चीकू, केला व खजूर को छोड़कर) अण्डा व मांस लिए जा सकते हैं ।

**परहेज मुख्यतः नीचे दिए गए चार्ट के अनुसार करें:**

**मत खाएं-पिएं :** गुड़, चीनी, शक्कर, ग्लूकोज, शहद, मिठाइयां, हलवा, खीर, कस्टर्ड, गाढ़ा दूध, खोया, पनीर, आईस्क्रीम, फ्रूट-क्रीम, केक, पेस्ट्री, मीठे बिस्कुट, जैम, कोल्ड ड्रिंक्स, मीठे पेय, रूह अफ़जा, स्कवैश, चाकलेट, टाफी, ड्राई-फ्रूट, मेवे, आम, केले, खजूर, अंगूर व चीकू, घी, तेल , मक्खन (ऊपर से न लगायें) तले हुए पदार्थ : पराठे, पूरी, कचौरी, पकौड़े, समोसे, चाट, टिक्की, आदि, फास्ट फूड, सॉस, सूप, तला हुआ मटन, चिकन, गोश्त, मछली, कीमा, आमलेट आदि ।

**सामान्य से कम लें :-** चपाती, चावल, मकई का आटा, मूंगफली, ब्रेड, कार्न, फलेक्स, आलू, टमाटर, अरबी, शकरकंदी, बगैर क्रीम व मलाई का दूध, दही, बिना चीनी की चाय-काफी, नमकीन, नमकीन बिस्कुट, लिमका जैसे पेय, पपीता, अनानरस, सेब, आलूबुखारा, अमरूद, रिफाईंड तेल, नारियल तेल, सरसों के तेल, देसी घी का कम से कम व मिला जुला इस्तेमाल करते हुए भोजन बनाएं। भुना हुआ मांस, मछली, उबला हुआ अण्डा (केवल बाहरी सफेद भाग) थोड़ी बीयर या शराब कम भोजन व अधिक सलाद के साथ (अधिक तलब उठने पर)।

**खूब खाएं-पीएं :**

फिका दलिया, सभी दालें (खास तौर पर छिलके समेत व अंकुरित दालें) चने व राजमा, सभी सब्जियां, साग, मेथी, करेला, आदि गाजर मूल, शलजम, हरे मटर, हरे चने, सलाद, नींबू, अदरक, प्याज, लहसुन, धनिया, पुदीना, संतरा, मौसमी, माल्टा, आंवला, खरबूजा, तरबूजा, ककड़ी, खीरा, लस्सी, बटरमिल्क, स्पेटरा दूध, बगैर चीनी की शिकंजवी ।

फीके भोज्य-पदार्थों में चाहें तो चीनी के ... पर 8-10 गोलियां प्रतिदिन सैक्रीन अथवा ... (शूगर-फ्री, स्वीटेक्स) का इस्तेमाल कर सकते हैं ।

**2 सैर और व्यायाम :** नियमित रूप से की ... व्यायाम अति लाभदायक है । विशेषतः स्थूलकाय ... को शुगर नियंत्रित करने के लिए परहेज़ के साथ ... व्यायाम अति आवश्यक है ताकि उनका वज़न कम ... सके । यदि आप सैर नहीं करते हैं तो भोजन से पूर्व ... -पोने घण्टे की सैर आज से प्रारम्भ करें । हल्का व्यायाम ... तैराकी व खेल-कूद अच्छा है मगर भारी कसरत व ... क वज़न उठाने वाले कार्य से परहेज़ रखें ।

**3. दवाएं :** कम उम्र में होने वाले मधुमेह ... परहेज़ व व्यायाम के अतिरिक्त शक्कर को नियंत्रित ... के लिए इंसुलिन के टीके अवश्यम्भावी है । इस तरह ... रोग में गोलियां प्रभवशाली नहीं होतीं ।

35-40 वर्ष की आयु के बाद होने वाले मधुमेह ... में यदि परहेज़ व व्यायाम वज़न कम करने के बावजूद ... शुगर नियंत्रित न हो तो डाक्टरी सलाह से गोलियां (या ... यदि आवश्यक हो तो इंसुलिन) शुरू करें ।

**सावधानियां व सुझाव**

- याद रखें कि मधुमेह के इलाज में यदि परहेज़ ... सैर/व्यायाम न किया जाए तो सिर्फ दवाओं से ... का नियंत्रण लम्बे समय तक सम्भव नहीं है ।
- दवाएं डाक्टर द्वारा बताए गए समय पर ही लें न कि ... खुसक लें । अक्सर ये दवाएं भोजन से ... मिनट पूर्व ली जाती हैं ।
- केवल अपनी डाक्टर द्वारा बताई गई दवाएं ही ... अपनी दवाएं कभी किसी अन्य मधुमेह ... बदलें ।
- दवा लेने के आधे घंटे के अन्दर भोजन अव... अन्यथा रक्त में शक्कर का स्तर खतरे की हद ... गिर सकता है ।

(शेषपृष्ठ सं० 49 ...



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अतिसार एवं उसकी सरल घरेलू चिकित्सा

डा०पी०सी० जोशी[1]

डा०पी०पी०जोशी[2]

अतिसार भारतवर्ष में एक सामान्य रोग है । लगभग सभी आय वर्ग के लोगों में इसका प्रभाव देखा जाता है । आयुर्वेद में अतिसार का कारण जल सम्बन्धी धातुओं का बढ़ना या कुपित होना एवं परिणाम स्वरूप जठराग्नि को मन्द करना माना गया है । विषम आहार के सेवन से शरीर की जल सम्बन्धी धातुएं यथा रस, रक्त, मूत्र, स्वेद, पित्त आदि कुपित होकर एवं मल में लिप्त होकर तथा वायु द्वारा प्रेरित होकर जब गुदा मार्ग से अतिमात्रा में गिरने लगती हैं तो हम उसे अतिसार के लक्षण मानते हैं । आयुर्वेद में अतिसार के छः भेद बताये गए हैं । 1. वातज, 2. पित्तज, 3. कफज, 4. त्रिदोषज, 5. शोकज एवं 6. आमज ।

**वातज अतिसार :-** इसमें मल लोहे के वर्ण का, फेनयुक्त रूक्ष अल्प मात्रा में एवं बार-बार, आमयुक्त एवं पीड़ा के साथ शब्द करता हुआ निकलता है ।

**पित्तज अतिसार :-** इसमें मल नीलवर्ण, पीतवर्ण का लोहित वर्ण का होता है । रोगी में तृषा, मूर्च्छा, दाह आदि लक्षण परिलक्षित होते हैं ।

**कफातिसार :-** इसमें मल सामान्यतया श्वेत वर्ण का घना (गाढ़ा), कफयुक्त, दुर्गन्धयुक्त, शीतल एवं आमाञ्च के साथ होता है ।

**त्रिदोषज अतिसार :-** इसमें मल सूअर की चर्बी सा तथा मांस के धोए जल के समान वातिक लक्षणों से युक्त होता है ।

**शोकातिसार :-** रोगी के मन पर आघात होने से चिन्ता होती है तथा चिन्ता के वाष्पों की, उष्मा कोष्ठ में जाकर भोजन कम करने की प्रवृत्ति से, अग्नि दूषित होती है । यह दूषित अग्नि रक्त को उद्वेलित करती है । इस प्रकार से उद्वेलित रक्त घुंघची के फल के समान रक्त वर्ण का पुरीष युक्त या बिना पुरीष का ही दुर्गन्ध युक्त जब गुदा मार्ग से स्रावित होता है तो उसे शोकातिसार कहा जाता है ।

**आमातिसार :-** इसके लिए अजीर्ण भोजन ही मुख्य रूप से उत्तरदायी है । अजीर्ण भोजन से दूषित जो दोष हैं वे कोष्ठ की धातुओं को और मल को क्षोभित कर अनेक वर्ण के तथा बार-बार पीड़ा के साथ अत्यधिक स्राव करते हैं इसे आमातिसार कहा गया है ।

**उपचार :** इस व्याधि में आसानी से सभी घरों में उपलब्ध घटक यथा सौंठ, सोंठ, चीनी एवं घी का विधिवत उपयोग शीघ्र लाभकारी सिद्ध हुआ है । इन घटकों का उपयोग लेखकों द्वारा भारतवर्ष में सभी प्रकार के भोजन करने वाले लोगों में किया गया एवं सभी लोगों में इसका उपयोग समान रूप से लाभकारी सिद्ध हुआ । विशेष रूप से दक्षिण भारत में (हैदराबाद) जहाँ लोगों द्वारा भोजन में मुख्य रूप से इडली, डोसा, उत्तपम, बड़ा आदि दिया जाता है, उत्तरी भारत (लखनऊ, दिल्ली) में जहाँ लोग भोजन में चावल, रोटी, दाल, सब्जी आदि खाते हैं, पूर्वी भारत में (कोलकाता) जहाँ लोग भोजन में माँस, मछली आदि सेवन करते हैं एवं पश्चिमी भारत (आणन्द, अहमदाबाद, जयपुर, जोधपुर) जहाँ लोग मोटे अनाज के अलावा मूँग दाल का बना हलवा जैसा गरिष्ठ भोजन लेते हैं उन सभी में उपरोक्त घटकों का विधिवत् सेवन अतिसार में शीघ्र लाभकारी सिद्ध हुआ है ।

सर्वप्रथम सोंठ एवं सौंफ का चूर्ण बना लिया जाता है तत्पश्चात् भोजन के समय 5-10 ग्रास पका हुआ चावल (भात) एक थाली में लेकर उसमें एक छोटा चम्मच सोंठ पाउडर 2.5 ग्राम से 3 ग्राम एवं एक छोटा चम्मच सौंफ पाउडर (चूर्ण) 2.5 ग्राम से 3 ग्राम अच्छी प्रकार मिला लिया जाता है । इस मिश्रण में एक चम्मच चीनी (शक्कर/शर्करा) 3 ग्राम से 10 ग्राम को भी मिला लिया जाता है । इस मिश्रण में 2 चम्मच घी (घृत) 8 ग्राम से 10 ग्राम अग्नि के ऊपर एक बड़ी चम्मच या कटोरी में गर्म करके मिलाया जाता है । इस मिश्रण का आराम से सेवन कर लिया जाता है । इडली के साथ भी इस मिश्रण को उपरोक्त विधि से सेवन किया जा सकता है । इस मिश्रण को खाने के उपरान्त अतिसार से पीड़ित

1. अनुसंधान अधिकारी; क्षेत्रीय अनुसंधान संस्थान (आयु०); ताड़ीखेत, उत्तरांचल
2. प्रिन्सिपल साइन्टिस्ट; एम०आर०सी०एम०ए०पी०, बोरीयाती, अंगन्दे, गुजरात राज्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



व्यक्ति सामान्य भोजन स्वेच्छानुसार कर सकता है । इस विधि से भोजन प्रात: एवं सायं दो या तीन दिन और सुस्वादु लगने पर चार या पांव दिन यदि अपनाया जाय तो अतिसार की समस्या का निश्चित हल हो जाता है । प्राय: एक बार सेवन से ही मल का सामान्य होना आरम्भ हो जाता है ।

आचार्य प्रियव्रत शर्मा द्वारा लिखित "द्रव्य गुण विज्ञान" का संदर्भ भी इन घटकों के विषय में उल्लेख करना यहाँ विषयोचित्त है ।

"सोंठ (शुण्ठी)" को तृप्तिघ्न माना गया है । रस-कटु; गुण-लघु स्निग्ध, रूक्ष गुरू, तीक्ष्ण; वीर्य-उष्ण; विपाक-मधुर कहा गया है । पाचन संस्थान हेतु यह अरुचि, हृल्लास, छर्दि, अग्निमांद्य, अजीर्ण, कोष्ठवात, आध्मान, उदरशूल, कामला तथा अर्श में उपयोगी है । अग्निमांद्य और अरुचि में भोजन से पूर्व अदरक और नमक खाने का विधान है ।

"सोंफ (शतपुष्पा)" को दीपनादि वर्ग में माना गया है । रस-मधुर, कटु, तिक्त; गुण-स्निग्ध, लघुतीक्ष्ण, वीर्य-किंचिंत उष्ण एवं विपाक-मधुर कहा गया है । पाचन संस्थान हेतु वमन, तृष्णा, अग्निमांद्य, अजीर्ण, आध्यमान, उदरशूल, प्रवाहिका एवं अर्श में प्रयुक्त होता है । प्रवाहिका में देने से आमदोष का पाचन होता है, [illegible] का अनुलोमन होने से आमदोष बाहर निकलता है [illegible] मरोड़ कम होती है । मरोड़ कम करने हेतु [illegible] औषधियों में भी इसे मिलाया जाता है । रेचन हेतु [illegible] प्रयोग होता है ।

"घृत (घी)" को जठरायुज द्रव्य के [illegible] माना गया है । रस - मधुर; गुण - गुरु; वीर्य - [illegible] एवं विपाक - मधुर कहा गया है । पाचन संस्थान [illegible] अग्निमांद्य, उदावर्त और गुल्म में घृत का सेवन कराते [illegible] वातिक अर्श, में घृतमण्ड से अनुवासन देते हैं, वात [illegible] विकारों में यह प्रयुक्त होता है ।

"शर्करा" के सम्बन्ध में इक्षु का उल्लेख [illegible] से ज्ञात होता है कि यह मधुर-रस, गुरू, स्निग्ध-[illegible] शीत-वीर्य एवं मधुर-विपाक युक्त है । यह वातपित्त शामक तथा कफवर्धक होने के साथ सारक एवं अर्शोघ्न सेवन में कृमिकर है । बल्य एवं बृंहण होने के [illegible] अतिसार से होने वाली दुर्बलता में सकारात्मक प्रभाव कारक है ।

---

(पृष्ठ सं० 494 का शेषांश)

- हाइपोग्लाईसीमिया जैसी संकटपूर्ण स्थिति से बचने के लिए थोड़ी चीनी, ग्लूकोज य मीठे बिस्कुट पास रखें ।
- दवाएं कभी शराब के साथ न लें । धूमपान से बचें ।
- अन्य बीमारियों, मानसिक तनाव, गर्भावस्था, आप्रेशन, दुर्घटना व कुछ दवाओं का रक्त में शक्कर के स्तर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है । इस परिस्थितियों में नियमित तौर पर अपने डाक्टर से सम्पर्क बनाएं रखें व शक्कर की जांच कराते रहें ।
- संक्रमण से विशेष रूप से बचें । साफ-सुथरे रहें, प्रतिदिन स्नान करें व पैरों को भली प्रकार धोकर सुखा लें । अधिक पसीने वाले स्थानों पर पाउडर लगाएं । दांतों व मुंह की सफाई का ध्यान रखें । नंगे पैर न घूमें । जुराबें व जूते जयादा कसे हुए न हों टांगों की निरंतर मालिश करें ताकि उनमें रक्त प्रवाह बना रहे । नाखून ज्यादा छोटे न काटें । [illegible] सी चोट लगने पर तुरन्त दवाई लगाएं व डाक्टर [illegible] दिखाएं ।
- अपने डाक्टर से मूत्र में शक्कर परीक्षण, सम्भव [illegible] तो रक्त में शक्कर परीक्षण व इंसुलिन लगाना [illegible] सीखें ।
- प्रत्येक मधुमेह रोगी की जेब में एक पहचान [illegible] रखें ।

याद रखें मधुमेह छूत का मर्ज नहीं है । [illegible] रोगी को शिक्षा, व्यायाम, पारिवारिक व समाजिक [illegible] में किसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ता बशर्ते [illegible] अपने रोग को नज़र अंदाज न करें ।



CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Prayagraj.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# पथरी - कारण और निवारण

डॉ० महेश चन्द पूर्विया[1]

प्रो० महेन्द्र सिंह मीना[2]

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समाज में रहते हुए वह अनेक जगहों पर आता-जाता रहता है और आने जाने के कारण वह अपने खान-पान, रहन-सहन में भी कमोवेश तब्दीली लाता है । इसी खान-पान और रहन-सहन के कारण उसके शरीर में विभिन्न प्रकार के रोग होने की संभावना बन जाती है और मनुष्य रोगों से घिर जाता है । इन रोगों में पथरी भी एक मुख्य रोग के रूप में माना जाता है ।

आयुर्वेद मतानुसार पथरी पित्ताशय (Gall bladder) एवं मूत्रवह संस्थान (वृक्क, मूत्राशय आदि) में मुख्य रूप से होती है । इसके अलावा शुक्राशय में भी पथरी का होना माना गया है ।

आधुनिक मतानुसार भी पथरी का स्थान पित्ताशय (Gall bladder) एवं मूत्रवह संस्थान में ही माना गया है ।

आधुनिक विज्ञान पथरी की चिकित्सा शल्य कर्म (Operation) के द्वारा की जाती है, जबकि आयुर्वेद में पथरी की चिकित्सा औषधियों के द्वारा की जाती है और यह चिकित्सा बहुत ही कारगर सिद्ध हुई है ।

हम यहां पर मूत्रवह संस्थानगत पथरी के उत्पन्न होने के कारण, उसके लक्षण और उसकी चिकित्सा में कुछ महत्वपूर्ण योगों का वर्णन कर रहे हैं ।

**कारण :-**

**आहार जन्य कारण :-**

1. गरिष्ठ पदार्थों (जैसे - आलू, उड़द, बैंगन आदि) का अधिक मात्रा में सेवन करने से ।
2. शराब का अधिक मात्रा में सेवन करने से ।
3. बिना पचे हुए भोजन पर भोजन करने से ।
4. शीत, स्निग्ध (चिकना) मधुर रस युक्त आहार करने से ।
5. चाय, काफी आदि पेय पदार्थों को अधिक पीने से ।
6. क्षार व नमक युक्त भोजन के कम करने से ।
7. अण्डे, माँसादि का सेवन अधिक करने से ।
8. हरी सब्जियाँ (यथा चौलाई, मेथी, बथुआ) आदि का कम मात्रा में सेवन करने से ।
9. दूध का कम मात्रा में सेवन करने से ।
10. अहितकर आहार करने से ।

**विहार जन्य कारण :-**

1. मूत्र के वेग को अधिक समय तक रोकने से ।
2. शुक्र के वेग को रोकने से ।
3. कड़ी धूप में अधिक समय तक काम करने से ।
4. खटिका युक्त जल का अधिक दिनों तक सेवन करने से ।
5. पसीने के कारण रक्त में से जलीयांश के अधिक निकल जाने के कारण ।
6. दिन में अधिक सोने से ।

**जलवायु गत कारण :-**

1. पहाड़ी क्षेत्रों के जल में पत्थर का अधिक मात्रा में मिला होने के कारण ।
2. शीत प्रदेश की अपेक्षा उष्ण प्रदेशों में अधिक पायी जाती है ।
3. स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक पायी जाती है । उक्त प्रकार का आहार-विहार करने वाले व्यक्तियों को पथरी होने की संभावना अधिक रहती है ।

**लक्षण :-**

1. वस्ति प्रदेश (पेडू) में वेदना का होना ।
2. नाभि के आस-पास वेदना का होना ।
3. मूत्र त्यागते समय मूत्र की धार का बीच में रुक जाना या मूत्र रुक-रुक कर आना ।
4. मूत्र के साथ रक्त का दिखाई देना या रक्त मिश्रित मूत्र का त्याग ।
5. मूत्र की धार का इधर-उधर या टेढ़ा गिरना ।
6. लिङ्ग और उसके चारों तरफ वेदना का होना ।
7. भोजन करने की इच्छा नहीं होना ।
8. मूत्र में बकरे के समान गंध का आना ।

1.प्राध्यापक-शरीर क्रिया विज्ञान, पं०शिव शक्ति लाल शर्मा, आयुर्वेद महाविद्यालय, काटजू नगर,रतलाम (उ०प्र०)

2. विभागाध्यक्ष, शरीर क्रिया विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



9. अण्डकोशों और लिङ्ग में सुई चुभने के समान पीड़ा का होना ।
10. मूत्र का वर्ण एक दम सफेद एवं मूत्र में शक्कर के समान छोटे-छोटे दानों का दिखाई देना ।
11. तैरने या किसी चीज को लांघने (छलांग लगाने) पर पेडू में दर्द का होना ।
12. किसी वाहन की सवारी करने पर दर्द की प्रतीति होना ।
13. पेडू में (नाभि और जननेन्द्रिय के बीच का भाग) में सुई चुभने के समान पीड़ा एवं भारीपन का अनुभव होना ।
14. दर्द के कारण रोगी नाभि को बार-बार दबाता है ।
15. पेडू में जलन का होना ।
16. वायु, मूत्र एवं मल का कठिनता से निकलना ।
17. दर्द के कारण रोगी दाँतों से होठों को बार-बार काटता रहता है ।

**थरी में कतिपय महत्वपूर्ण योग :-**

1. कुश, काश, सरपत, इक्षुमूल और गुन्द्रा (पटेरा) इन सबकी 50 ग्राम मात्रा एक गिलास पानी में डालकर क्वाथ बनाकर एक माह तक सुबह शाम लेवें ।
2. पाषाण भेद, शतावरी विदारीकन्द, वराहीकन्द, गोखरू, श्योनाक के कल्क को घृत में डालकर घृत सिद्ध करके रख लें, और 5-5 ग्राम घृत सुबह शाम भोजन से पूर्व उष्ण जल के साथ लें ।
3. पुनर्नवा और शिरोष के क्वाथ में शिलाजतु, मुलेठी, नीलकमल के बीज, खीरा और ककड़ी के बीजों से सिद्ध किया गया घृत एक माह तक सुबह-शाम सेवन करें ।
4. कपास के फूल, अंकोल, निर्मली के बीज, नीलकमल के फल इन सबका चूर्ण (2 ग्राम की मात्रा में) गुड़ के साथ मिलाकर सेवन करने से पथरी में लाभ मिलता है ।
5. गोखरु का चूर्ण मधु मिलाकर बकरी के दूध के साथ एक सप्ताह तक पीने से पथरी में आराम मिलता है ।
6. गोखरु, मूसली, अजवायन, कदम्ब की जड़ तथा सोंठ इन सबका चूर्ण उष्ण जल के साथ सेवन करने से कुछ ही दिनों में पथरी नष्ट हो जाती है ।
7. तिल, अपामार्ग, (चिराचिड़ा) केला, पलाश तथा जौ, इनके कल्क से बने आर (500 Mg.) को गौ मूत्र के साथ सेवन करने से पथरी नष्ट हो जाती है ।
8. पाढल और कनेर का क्षार 500 मि.ग्रा. की मात्रा में गौ मूत्र के साथ पीने से पथरी ठीक हो जाती है ।
9. मेथी, सहिंजन की सब्जी बनाकर सेवन करें ।
10. कुलथी की दाल का सेवन करें ।
11. त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आंवला) या पुनर्नवा से सिद्ध दुग्ध का रात्रि समय सेवन करें ।
12. अदरक का रस जवाखार, हरड की छाल तथा मलयागिरी चंदन के क्वाथ में दही मिलाकर पीने से पथरी ठीक हो जाती है ।
13. काला नमक, दूध एवं तिलौठी की राख इन सबको बराबर मात्रा में लेकर महीन पीस लें फिर इसे मदिरा में मिलाकर सात दिन तक पीने से पथरी दूर हो जाती है ।
14. अरनी की छाल, सोंठ, पाषाण भेद एवं गोखरू का क्वाथ बनाकर जवाखार के साथ पीने से पथरी दूर हो जाती है ।
15. तिल क्षार तीन टंक और शहद 3 टंक इन दोनों को दूध में मिलाकर 5 दिन तक पीने से पथरी गिर जाती है ।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# उच्च रक्तचाप (Hypertension) पर जलनिम्ब घन वटी का प्रभाव

*डा० जय प्रकाश सिंह ** डा० एस० के० तिवारी

परिचय :-

उच्च रक्तचाप एक सामान्य बीमारी है जिससे हमारे देश में लगभग 20 प्रतिशत लोग इस बीमारी से ग्रस्त हैं। उच्च रक्त चाप मृत्यु का एक प्रमुख कारण है। प्रत्येक आठ मरने वालों में से एक की मृत्यु उच्च रक्तचाप के कारण होता है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ ही यह बीमारी बढ़ती है।

लगभग 60 वर्ष की अवस्था तक पहुँचते आधे लोग इस रोग का शिकार हो जाते हैं। इस बीमारी के कारण बुरा प्रभाव दूसरे अंगों पर पड़ता है। जैसे- हृदय, मस्तिष्क, वृक्क और अन्य विशिष्ट अंग खराब हो सकते हैं।

**रक्तचाप** - रक्तवाहिका की भित्ति के इकाई क्षेत्रफल के विरुद्ध रक्त द्वारा लाया गया बल है।

**उच्च रक्त चाप क्या है -**

| B.P. | Systolic B.P. | Diastolic B.P. |
|---|---|---|
| Optimal | <120 mm Hg | <80 mm Hg |
| Normal | <130 | <85 |
| High Normal | 130-139 | 85-89 |
| Hypertension | | |
| Stage I (Mild) | 140-159 | 90-99 |
| Stage II (Moderate) | 160-139 | 100-109 |
| Stage II (Severe) | ≥ 180 | ≥ 110 |

उच्च रक्त चाप दो प्रकार का होता है।

1. **प्राथमिक उच्च रक्तचाप (Primary Hypertension)**- जिस उच्च रक्तचाप का कोई कारण न पता हो।

2. **द्वितीयक उच्च रक्तचाप (Secondary Hypertension)** - जिस उच्च रक्तचाप का कारण हो।

कारण - वृक्क रोग, थायराईड, हृदयरोग एड्रीनल ग्रंथि के रोग, गर्भ रोकने की गोली।

**मुख कारण (Risk Factor)**

* धूम्रपान
* मोटापा BMI 30 kg/m²
* मधुमेह
* उम्र
* औषधि
* तनाव ग्रस्त जिन्दगी

**रक्तचाप का आयुर्वेदिक सिद्धान्त**

साधारणतया हम काशी परम्परा के चिकित्सक इसे रक्तगतवात के रूप में जानते हैं तथा रोगी की वर्तमान परिस्थिति एवं उसकी रोगानुसार चिकित्सा करते हैं। यह वातोल्वण, मध्यपित्तहीन, कफ वाली त्रिदोषज व्याधि है। स्रोतों में प्रधानता तथा रस एवं रक्त एवं सामान्यत: मांस व मेद होते हैं। यह मध्यम रोग मार्ग ही व्याधि है।

इसी प्रकार क्षयज व्यान प्रकोप को सिस्टोलिक रक्तदाब तथा आवरण जन्य व्यान प्रकोप डायस्टोलिक रक्तदाब माना जा सकता है। उच्च रक्तचाप को व्यान प्रकोप तथा निम्न रक्तदाब को व्यानक्षय कहना न्याय संगत है।

**उच्च रक्तदाब निदान व सम्प्राप्ति**

आयुर्वेद वाङ्मय में रोग जन्य प्रक्रिया को तीन प्रकार से बताया गया है - षड्, क्रियाकलाप, आशयापकर्ष, आवरण सभी निजरोग, संचय प्रकोपादि, षड्क्रियाओं द्वारा रोगोत्पत्ति करते हैं। उच्च रक्तदाब के संदर्भ में इसे निम्नानुसार समझा जा सकता है। प्रज्ञापराध एवं आसात्म्येन्द्रियार्थ संयोग इसका मूल कारण है, अध्ययनों से यह भी प्रमाणित है कि यह रोग सहज या आदिबल प्रवृत्ति है।

सर्वप्रथम मिथ्याहार-विहार एवं मनोभिघात इस रोग में प्रारम्भिक कारण है। अत्यधिक चिकनाई युक्त पदार्थ के सेवन से अग्निमांद्य विशेषकर मेदोग्निमांद्य के कारण शरीर में आम तथा मल संचय होकर स्नेह पदार्थों के चयापचय जन्य विकृति उत्पन्न होता है। मिथ्या विहार

*एम०डी० काय चिकित्सा (जे.आर.II) ** रीडर एवं वरिष्ठ चिकित्सक
काय चिकित्सा विभाग, आई.एम.एस., बीएचयू, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अर्थात् आवश्यक व्यायाम के अभाव में यह मेदोवृद्धि और बढ़ती जाती है । इस प्रकार आवश्यकता से अधिक इस मेद संचय से धमनी उपचय प्रारम्भ हो जाता है । आयुवृद्धि या जरावस्था में भी यह प्रक्रिया बहुत तेज हो जाती है । फलतः धमनियों की तन्यता में कमी आ जाती है । वृक्कों की रक्तवाहिनियों में रक्ताल्पता उत्पन्न होकर रेनिन एंजियोटेन्सिन द्वारा उच्च रक्तदाब को जन्म देता है, दूसरी ओर मिथ्या विहार से विशेषकर वात वृद्धि तथा मनोभिघात से नाड़ी तनाव बढ़कर नारएड्रिनैलिन का स्रवण होता है, इस प्रकार अभिवृद्ध यह नाड़ी तनाव एल्डोस्टीरोन नामक तत्व का स्राव अधिवृक्क नामक ग्रन्थियों के कार्टेक्स से करता है जिससे रक्तवाहिकाओं में संकोच उत्पन्न होता है । इस संकोच से स्वाभावतया परिसरीय धमनी प्रतिरोध में वृद्धि होकर रक्तदाब बढ़ता है ।

**दोष :**

वात (विशेषतः व्यान, उदान, प्राण और अपान)
पित्त (पाचन और साधक)
कफ (अवलम्बक)

**दूष्य :-** धातु (रस, रक्त, मांस, मेद)

**अग्नि:-** जठराग्निमांद्य, रक्ताग्निमाद्य, मांसाग्निमांद्य, मेदाग्निमांद्य

**आम:-** रसरक्तगत आम ।

**स्रोतस:-** रसवह, रक्तवह, मांसवह, मूत्रवह, प्राणवह, मनोवह ।

**संचार :-** रसायनी (रक्तवहस्रोतस) ।

**अधिष्ठान :-** मनोदैहिक, सिरा, धमनी एवं स्रोतस ।

**रोगमार्ग :-** मध्य रोगमार्ग त्रिमर्म (हृदय, शिर वक्ष)

## चिकित्सा सिद्धान्त

**मनोविभ्रान्तिकर योगासन**

**पथ्य आहार** - लवण विवर्जित / नियंत्रित आहार
स्थूल रोगियों में कैलोरी नियंत्रण, ग्री, तै
आदि सेचुरेटेड फैट्स का निषेध

**पथ्य विहार** - हृदय के अनुसार नियमित संतुलित व्यायाम

**निदान परिवर्जन** - कारणों का परित्याग करना ।

**दोषानुसार संशोधन -**

| | |
|---|---|
| व्यान प्रकोप : | बस्ति, मृदुसंशोधन |
| पित्तावरण : | विरेचन |
| कफावरण : | वमन |

**चरकानुसार:-** शीता: प्रदेहा रक्तस्थे विरेको रक्तमोक्षणम् सुश्रुत ने रक्तगतवात में रक्तोक्षण का परामर्श किया है

**उच्च रक्तचाप में प्रयोगिक औषध जलनिम्ब घनवटी का प्रभाव -**

मैंने 100 रोगी उच्च रक्तचाप के लिए जिन 20 High Normal, 60 mild, 20 Moderate Hypertension के लिए जिन पर मैंने जलनिम्ब घनवटी का 10 दिन देन उसका Effect देखा जो निम्न है ।

| रोगी | Before Treatment | | After treatment | |
|---|---|---|---|---|
| | SBP (Mean) | DBP (Mean) | SBP (Mean) | DBP (Mean) |
| High Normal | 138 mm Hg | 88 mm Hg | 124 mm Hg | 80 mm Hg |
| Mild glade | 154 mm Hg | 96 mm Hg | 136 mm Hg | 82 mm Hg |
| Moderate glade | 166 mm Hg | 104 mm Hg | 142 mm Hg | 88 mm Hg |

Stage III Severe या Moderate से ऊपर वाली स्थिति की ओर है तो केवल उसको घटाने के लिए आधुनिक औषध का प्रयोग किया ।

जलनिम्ब घनवटी के घटक द्रव्य -

* जलनिम्ब (ब्राह्मी)
* सर्पगन्धा
* स्वर्णमाक्षिक भस्म
* अश्वगंधा


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आँवला एक गुण अनेक

डा० (श्रीमती) अंजलि जैन[1], डा० महेश दाधीच[2], डा० डी०के० खरे[3],
डा० यू०एस० निगम[4], डा० सुनीता डी०राम[5], डा०एस०एल०शर्मा[6]

आँवला एक सर्व विदित फल है जो कि Family euphorpiaceae में हैं । इसका Latin name Embelica officinale है । इसे आमलकी, आमलक, धात्री, ओला आदि नामों से जाना जाता हैं । आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयुक्त होने वाले द्रव्यों में आंवला एक प्रमुख द्रव्य है, लगभग 15-20% औषधियों में आंवले का उपयोग किया जाता है ।

लोकप्रिय च्यवनप्राश का मुख्य घटक आंवला ही है । सर्वाधिक प्रयुक्त किये जाने वाले त्रिफला चूर्ण में भी आंवला प्रयुक्त होता है ।

आयुर्वेद के सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ चरक संहिता में आचार्य ने सर्वश्रेष्ठ द्रव्यों का वर्णन किया है, जिसमें उन्होंने आमलकी को श्रेष्ठ वय स्थापन कहा है ।

**"आमलकः वयः स्थापनानाम् श्रेष्ठम् ।**

(चरक सूत्र स्थान 25/40)

वयस्थापन शब्द से तात्पर्य यह कि जो द्रव्य युवावस्था के लक्षणों को ज्यादा लम्बे समय तक बनाये रखे, क्योंकि आयु को बढ़ने से तो हम रोक नहीं सकते परन्तु आज की इस तनावयुक्त, उत्तेजक आहार-विहार युक्त जीवन शैली के कारण मनुष्य असमय ही अर्थात् समय से पहले ही बूढ़ा हो रहा है, यदि मनुष्य वृद्धावस्था के रोगों व लक्षणों से बचना चाहता है तो उसे आंवले जैसे द्रव्यों का नियमित रूप से युक्तिपूर्वक सेवन करना चाहिये ।

आंवले का वर्णन धार्मिक ग्रन्थों में भी अत्यंत मूल्य भाव से प्रदर्शित किया गया है ।

गरुड़ पुराण में इसके संबंध में एक बड़ा सुन्दर आख्यान है कि:

किसी पुण्य दिन को भगवती पार्वती और लक्ष्मीजी ने किसी स्वकल्पित नूतन द्रव्य से हरि व शिव का पूजन करने की इच्छा प्रकट की, उसी समय दोनों की आंखों से आनंदाश्रु गिरे और उन्हीं से माघ शुक्ल एकादशी के दिन आंवले के वृक्ष की उत्पत्ति हुई ।

इस कथा का वैज्ञानिक रहस्य यह है कि माघ माह (लगभग 15 जनवरी तक) में जाकर ही आंवला पूर्ण परिपक्व होता है और आधे चैत्र (लगभग मार्च, अप्रैल तक) रहता है । यही 15 जनवरी से मार्च अप्रैल तक का काल होता है जिसमें आंवले के अंदर रसायन और शक्ति देने वाले गुणों का बाहुल्य रहता है । इसी समय में आंवलों को इकट्ठा कर उपयोग करने के लिए सुरक्षित रखना चाहिये ।

20 अक्टूबर के आसपास कार्तिक शुक्ल नवमी के दिन आंवला के इस वृक्ष की पूजा की जाती है । इसके पीछे छिपा रहस्य यह है कि अब आंवले के फल के आने की शुरूआत हो गई है, परन्तु इस अवस्था में आंवला रस व वीर्य से सामान्यतया भरपूर नहीं होता है, इस अपक्व अवस्था में आंवले का फल ग्रहण नहीं करना चाहिए ।

**रासायनिक संगठन :-**

यह विटामिन-सी का प्रमुख स्रोत है, इसमें सेवफल से 160 गुना अधिक तथा संतरे से 20 गुना अधिक विटामिन-सी पाया जाता है । प्रमुख बात यह है कि नींबू, संतरे का विटामीन-सी गरम करने पर नष्ट हो जाता हैं परन्तु आंवले के अंदर कुछ ऐसे यौगिक पाये जाते हैं जो कि गरम करने पर भी इसके विटामिन-सी को पर्याप्त मात्रा में बनाये रखते हैं ।

अतः स्पष्ट है कि जो विटामिन-सी हम अधिक मात्रा में सेवफल व संतरे खाने पर प्राप्त करते हैं वह हम एक सस्ते आंवले से प्राप्त कर सकते हैं । कृत्रिम विटामिन-सी देने की अपेक्षा आंवले का चूर्ण दिया जावे तो विटामिन-सी शरीर में अधिक स्थिर होता है और हितकारी है ।

आंवले में एण्टीऑक्सीडेन्ट गुण वाले तत्व पाये जाते हैं । अतः यदि नियमित रूप से युक्तिपूर्वक आंवले का उपयोग किया जाय तो यह जल्दी वृद्धावस्था आने से रोक सकता है । अतः आचार्य चरक ने इसे नित्य अभ्यास करने योग्य द्रव्यों की श्रेणी में रखा है । (च.सू. 15/12 में)

1. एम०डी० (स्कालर) 2. रीडर 3. प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, द्रव्यगुण स्नातकोत्तर विभाग
4. दिग्दर्शक 5. व्याख्याता 6. प्राचार्य, शासकीय धन्वन्तरि आयुर्वेद महाविद्यालय, उज्जैन (म०प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कुछ रोगों में आंवले की प्रयोग विधि इस प्रकार है -

| क्र० | रोग का नाम | प्रयोग विधि |
|---|---|---|
| 1. | ज्वर (Fever) | आंवले का रस + घी का छौंक = ज्वर नाशक<br>आंवले को उबालकर पीसकर + मुनक्का + मधु |
| 2. | मंदाग्नि<br>(Low digestion power) | आंवले का चूर्ण-पानी या घी या शहद के साथ खाना<br>(भोजन के 5-7 मिनट पहले)<br>आंवले को भूनकर+जीरा+लवण मिलाकर |
| 3. | अम्लपित्त (Hyperacidity) | आमलकी चूर्ण, पानी के साथ भोजनोपरांत |
| 4. | पैत्तिक शूल | आंवले का रस + चीनी |
| 5. | पाण्डु रक्ताल्पता (Anaemia) | आंवले का रस+इक्षु का रस+मधु |
| 6. | कामला (Jaundice) | आंवले का चूर्ण+लोह भस्म+सोंठ+मरिच+पिप्पली+हल्दी+शहद |
| 7. | मुंह के छाले | आंवले की जड़ की छाल को घिसकर+शहद=लेपन |
| 8. | स्कर्वी (दांत के रोग) | ताजे आंवले चबाकर खाना |
| 9. | कास (Cough) | आमलक चूर्ण+दूध में उबालना = घृत मिलाकर पीना |
| 10. | मधुमेह (Diabetes) | आंवलों के रस + हरिद्रा चूर्ण + मधु |
| 11. | श्वेतप्रदर (Leucorrhoea) | आंवलों के बीज चूर्ण + मिश्री + शहद |
| 12. | रक्त प्रदर (Excessive bleeding during M/C) | आंवलों का चूर्ण या बीज का चूर्ण + मिश्री + शहद |
| 13. | योनिदाह | आंवले का रस + मिश्री |
| 14. | मूत्रकृच्छ्र (मूत्र कम होता हो या पीड़ा के साथ होता हो) | आंवलों का स्वरस 16 तोला निकालकर पिलाना |
| 15. | अर्श (Piles) | दही के ऊपर की मलाई + आंवलों का स्वरस |
| 16. | नेत्र दाहशूल | आंवलों के रस से नेत्रधावन या पूरण करना, सूखे आंवलों को<br>रातभर पानी में भींगा रहने दें। प्रातः छानकर इससे आंखों को |
| 17. | बालों को झड़ने से रोकने व काले करने के लिए | आंवलों के बीज का तेल निकालकर नित्य प्रयोग, आंवले को<br>आम की गुठली के साथ पीसकर सिर पर लेप करने से<br>घने और लम्बे होते हैं।<br>रात में आंवले को भिंगोकर सुबह मसल कर छानकर,<br>पानी से बालों को धोना। |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



स्वास्थ्य रक्षणार्थ –

**बच्चों के संपूर्ण विकास में** – आंवले का प्रमुख योग च्यवनप्राश 5-10 ग्राम प्रतिदिन गाय के दूध से देने से बच्चों के शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होता है ।

**बुद्धि बढ़ाने के लिए** – आंवलों का चूर्ण, तिल दोनों समान भाग लेकर, घी, मधु, प्रातः काल खिलाने से एक महीने में बुद्धि बढ़ती है और वृद्धावस्था दूर होती है ।

**रसायनकर्म में** – आंवलों का निरन्तर युक्ति पूर्वक उपयोग करने से यह रसायनकारी होता है । जैसे – आमलकी रसायन, प्रथम ब्रह्म रसायन इत्यादि ।

**बाजीकरणार्थ** – आंवले का चूर्ण को आंवले के रस के साथ 21 बार घोटकर, मिश्री व मधु, दूध के साथ ।

उपयोग –

आंवले को बाह्य व आभ्यान्तर दोनों रूपों में उपयोग किया जा सकता है ।

**आभ्यान्तर के उपयोग** –

आहार के रूप में –

चटनी, मुरब्बा, जैम, स्कवैश, लड्डू, बरफी, केण्डी, सुपाड़ी आदि बनाकर ।

आंवले का स्वरस निकालकर उसको भी संरक्षित करके शरबत के रूप में उपयोग कर सकते हैं ।

**औषध के रूप में** –

च्यवनप्राश, त्रिफला, आमलकी (चूर्ण) रसायन आमलकी खण्ड, आमलकी घृत, त्रिफला घृत आमलकावलेह, आमकाद्यलोह, आमलकी क्वाथ इत्यादि

**बाह्य उपयोग** –

तेल के रूप में ।

साबुन, शैम्पु में ।

धावन, प्रक्षालन आदि के लिए ।

**मात्रा** –

चूर्ण – 3 से 6 ग्राम

स्वरस मात्रा – 10 से 20 मिलि

अवलेह – 5 से 10 ग्राम दूध अनुपान के सा

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वाद में खट्टा य आंवला, जो कि हल्का कसैलापन लिए हुए है इसक अपनी खास विशेषता है ।

पंजाबी की एक प्रसिद्ध कहावत है वृद्ध जनों क बात का और आंवले के स्वाद का बाद में ही पता चलत है । अतः प्रयोग करने पर आंवला हमारे शरीर में कितन आरोग्यता प्रदान करता है इसका, प्रयोग के बाद ही पत चलता है । अतः प्रत्येक मनुष्य के लिए इस सस्ता, सुगम सुन्दर, पवित्र फल का उपयोग करना आवश्यक है ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# रसरत्नसमुच्चयोक्त रसद्रव्यों का वर्गीकरण - एक संकलनात्मक अध्ययन

* डॉ० राजेश सुभाष हारोडे, एम०डी०(रसशास्त्र) ** डा० सुधीर व्यं. देशपांडे, एम०डी० (रसशास्त्र)
*** डॉ० सुधाकर भोजने

**उद्देश्य :-**

1. रसशास्त्र में सर्वमान्य र.र. समुच्चय इस ग्रंथ का अध्ययन करना ।
2. ग्रंथ में वर्णित विविध रसद्रव्यों का उपयोग कहाँ और कैसे किया गया है इसका संकलन करना ।
3. र. र. समुच्चय ग्रंथ के रसद्रव्यों का सामान्य और विशेष वर्गीकरण करना ।
4. ग्रंथ में वर्णित विविध प्रक्रिया तथा कर्म का द्रव्यों के आधार पर अध्ययन करना ।
5. र. र. समुच्चयोक्त रसद्रव्यों का वर्गीकरण कर संक्षिप्त रूप में ग्रन्थ की पुनर्रचना करने का प्रयास करना ।

**प्रस्तावना :-**

र. र. समुच्चय यह ग्रन्थ रसशास्त्र का अध्ययन करते वक्त ग्रन्थ के अंतर्गत रचना के कारण तथा विविध पद्धति के कारण विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से तथा आज के युग के अनुसार लिखा गया है । इस ग्रन्थ में रसशास्त्र के दृष्टिकोण से पहले ।। अध्याय लिखे हैं । इन ।। अध्यायों का अध्ययन सभी विद्यार्थी रसवैद्य तथा संबंधित तज्ञ रसशास्त्र विषय आसानी से समझ सकते हैं ।

र. र. समुच्चय ग्रन्थ में विविध रसद्रव्यों का वर्गीकरण कर प्रत्येक वर्ग में कुछ रसद्रव्यों का समावेश किया गया है । वैसे ही विविध प्रक्रिया तथा संस्कार वर्णन करते वक्त कुछ पारिभाषिक वर्ग बनाये गये हैं । इस वर्गीकरण में कुछ रसद्रव्यों का बारबार उल्लेख पाया जाता है तथा कुछ रसद्रव्यों का बहुत कम जगह उल्लेख मिलता है । इसी कारण इस ग्रन्थ का अध्ययन करते वक्त इसका महत्व ध्यान में रखकर तथा ग्रन्थ में वर्गीकरण की प्रक्रिया इनका विशेष स्थान ध्यान में रखकर ग्रंथोक्त रसद्रव्यों का अध्ययन कर सामान्य तथा विशेष वर्गीकरण कर इन रसद्रव्यों का वर्गीकरण करने का प्रयास प्रस्तुत संकलन में किया गया है ।

**कार्यपद्धति :-**

1) ग्रन्थ का नाम :- रसरत्न समुच्चय
ग्रन्थकर्ता :- श्री. वाग्भटाचार्य
याख्याकार :- डॉ० इंद्रदेव त्रिपाठी (चौखम्भा प्रकाशन)

2) र.र. समुच्चय ग्रन्थ में वर्णित महारसादि वर्ग का धात्वादि, विषादि, वर्ग शोधन, मारण, द्रुति सत्व तथा षड्रस, वीर्य, विपाक और कर्मतः रसद्रव्यों का संकलन करना तथा भौतिक और रासायनिक दृष्टिकोण से रसद्रव्यों का विशेष संकलन करना ।

**रसरत्न समुच्चय ग्रंथ में रसद्रव्य वर्गीकरण :-**

| अ०क्र० | महारस | उपरस | साधारण रस | रत्नानि | लोहानी |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | अभ्रक | गंधक | कंपिल्लक | माणिक्य | स्वर्ण |
| 2. | वैक्रांत | गैरिक | गौरीपाषाण | मौक्तिक | रजत |
| 3. | माक्षिक | कासीस | नवसागर | प्रवाल | ताम्र |
| 4. | विमल | कांक्षी | कर्पदक | तार्क्ष्य | लोह |
| 5. | शिलाजतु | हरताल | अग्निजार | पुष्पराग | वंग |
| 6. | सस्यक | मन:शिला | गिरीसिंदूर | वज्र | नाग |
| 7. | चपल | अंजन | हिंगुल | नीलम | कांस्य |

* अध्येता ** मार्ग दर्शक *** विभाग प्रमुख
रसशास्त्र व भैषज्य कल्पना विभाग, शा०आयु० महाविद्यालय, उस्मानाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| अ०क्र० | महारस | उपरस | साधारण रस | रत्नानि | लोहानी |
|---|---|---|---|---|---|
| 8. | रसक | कंकुष्ठ | मृद्वारशृंग | गोमेद | पित्तल |
| 9. | – | – | | वैडुर्य | वर्तलोह |
| 10. | – | – | | राजावर्त | मण्डुर |
| 11. | – | – | | सूर्यकांत | भुनागसत्व |
| 12. | – | – | | चंद्रकांत | – |
| 13. | – | – | | वैक्रांत | – |

रसरत्न समुच्चय ग्रन्थ में उपरोक्त 5 वर्ग में कुल 47 रसद्रव्यों का वर्गीकरण किया गया है । इन्हीं 47 रसद्रव्यों का अध्ययन कर मैंने इसका वर्गीकरण कुल 10 वर्ग और 77 उपवर्ग में किया है । पारद रसद्रव्य स्वतंत्र अध्ययन का विषय होने के कारण इसका समावेश इन वर्गीकरण में नहीं किया गया है तथा विषद्रव्यों का संक्षिप्त विवरण न होने के कारण उनका भी समावेश इन वर्गीकरण में नहीं किया गया ।

उपरोक्त 47 रसद्रव्यों का निम्नलिखित 10 वर्ग, 77 उपवर्ग में वर्गीकरण किया गया है ।

| अ.क्र. | वर्ग | उपवर्ग |
|---|---|---|
| 1. | वर्गानुसार रसद्रव्य वर्गीकरण | 11 |
| 2. | प्रक्रिया के अनुसार वर्गीकरण | 3 |
| 3. | रासायनिकसंघटन के अनुसार वर्गीकरण | 8 |
| 4. | वर्ण के अनुसार वर्गीकरण | 5 |
| 5. | रसों के अनुसार वर्गीकरण | 6 |
| 6. | वीर्य के अनुसार रसद्रव्य वर्गीकरण | 2 |
| 7. | विपाक के अनुसार वर्गीकरण | 3 |
| 8. | गुणों के अनुसार वर्गीकरण | 8 |
| 9. | दोषघ्नता के अनुसार वर्गीकरण | 4 |
| 10. | कर्म के अनुसार वर्गीकरण | 28 |

उपरोक्त वर्ग तथा उपवर्ग और प्रत्येक उपवर्ग में वर्णित रसद्रव्यों का वर्णन संख्यात्मक पद्धति से टेबल न० (A) में दिये गये वर्गों में किया गया है ।

**Table No. (A) वर्गानुसार रसद्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | रसद्रव्य संख्या |
|---|---|---|
| 1. | महारस | 8 |
| 2. | उपरस | 8 |
| 3. | साधारण रस | 8 |
| 4. | रत्न | 14 |
| 5. | धातु | 10 |
| 6. | धातुप्रधान रसद्रव्य | 23 |
| 7. | अधातुप्रधान रसद्रव्य | 24 |
| 8. | सत्व प्रधान रसद्रव्य | 18 |
| 9. | द्रुतियुक्त रसद्रव्य | 19 |
| 10. | अच्छ रसद्रव्य | 21 |
| 11. | मिश्र रसद्रव्य | 2 |

1. इस टेबल में महारस, उपरस और साधारण रस प्रत्येक 8 बताये गये हैं तथा रत्न 14 और लोह (धातु) 10 बतलाये गये हैं ।
2. धातुप्रधान अर्थात जिन रसद्रव्यों में स्वर्णादि धातु विद्यमान होते हैं ऐसे रसद्रव्य 23 तथा जिन रसद्रव्यों में धातु विद्यमान नहीं होते ऐसे (अधातुप्रधान) रसद्रव्य 24 बताये गये हैं ।
3. जिन द्रव्यों में सत्व विद्यमान होते हैं (सत्वप्रधान) रसद्रव्यों की संख्या कुल 18 तथा जिन रसद्रव्यों की द्रुति बनायी जा सकती है ऐसे द्रुतियुक्त रसद्रव्यों की संख्या 19 बतायी गयी है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



4. जिन रसद्रव्यों के रासायनिक संघटन में केवल एक ही द्रव्य विद्यमान है (जैसे गंधक में ) या गैरिक में लौह ऐसे अच्छे रसद्रव्यों की संख्या 21 है तथा जिन रसद्रव्यों के रासायनिक संघटन में एक से अधिक द्रव्य विद्यमान है ऐसे मिश्र रसद्रव्यों की संख्या 26 बतायी गयी है ।

**Table No. (B) प्रक्रिया के अनुसार रस द्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | द्रव्य संख्या |
|---|---|---|
| 1. | शोधन | 41 |
| 2. | मारण | 30 |
| 3. | सत्वपातन | 17 |

1. इस टेबल में कुल 47 द्रव्यों में से केवल 41 रसद्रव्यों का शोधन तथा 30 रसद्रव्यों का मारण और 17 रसद्रव्यों का सत्वपातन करने को निर्देश किया है ।

**Table No. (C) रासायनिक संघटन के अनुसार रसद्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | द्रव्य संख्या |
|---|---|---|
| 1. | Sulphur | 12 |
| 2. | Sodium | 4 |
| 3. | Potassium | 4 |
| 4. | Aluminum | 11 |
| 5. | Ca & $Co_3$ | 6 |
| 6. | Silicate युक्त | 8 |
| 7. | Oxide युक्त | 13 |
| 8. | Magnesium | 2 |

इस टेबल में कुल 47 रसद्रव्यों में से 13 रसद्रव्य Oxide युक्त, 12 रसद्रव्य Sulphur युक्त तथा 11 रसद्रव्य Aluminum युक्त बताये हैं । Sodium, Potassium, Magnesium, $CaCo_3$ तथा Silicate युक्त रसद्रव्य कम अधिक प्रमाण में बताये हैं ।

**Table No. (D) वर्ण के अनुसार रसद्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | द्रव्य संख्या |
|---|---|---|
| 1. | रक्त वर्णात्मक | 17 |
| 2. | पीत वर्णात्मक | 23 |
| 3. | श्वेत वर्णात्मक | 19 |
| 4. | कृष्ण वर्णात्मक | 7 |
| 5. | नील वर्णात्मक | 6 |

टेबल डी के अनुसार र.र.समु. ग्रंथ में सर्वा पीत वर्णात्मक (23) रसद्रव्य बताये गये हैं तथा श्व वर्णात्मक 19, रक्त वर्णात्मक 17, कृष्ण वर्णात्मक 7 सबसे कम नील वर्णात्मक 6 रसद्रव्य वर्णन किये गये

**Table No. (E) रसो के अनुसार रसद्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | द्रव्य संख्या |
|---|---|---|
| 1. | मधुर रसात्मक | 5 |
| 2. | अम्ल रसात्मक | 4 |
| 3. | लवण रसात्मक | 1 |
| 4. | कटु रसात्मक | 3 |
| 5. | तिक्त रसात्मक | 14 |
| 6. | कषाय रसात्मक | 8 |

र.र.समुच्चय ग्रंथ में सभी रसद्रव्यों के रसों वर्णन नहीं किया गया है । केवल कुछ ही रसद्रव्यों रसों का वर्णन मिलता है जिसमें सबसे अधिक तिक्त रसात्मक (14) रसद्रव्य बताये गये हैं तथा कषाय मधुर-4, अम्ल-4, कटु-3 और सबसे कम लवण रसात्मक 1 रसद्रव्य बताये गये हैं ।

**Table No. (F) वीर्य के अनुसार रसद्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | द्रव्य संख्या |
|---|---|---|
| 1. | शीत वीर्यात्मक | 10 |
| 2. | उष्ण वीर्यात्मक | 8 |

र.र.समुच्चय ग्रंथ में सभी रसद्रव्यों का वर्णन नहीं किया है केवल कुछ ही द्रव्य का वीर्य



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



गया है । जिसमें शीत वीर्यात्मक रसद्रव्य 10 तथा उष्ण वीर्यात्मक रसद्रव्य 8 बताये गये हैं ।

**Table No. (G) विपाक के अनुसार रसद्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | द्रव्य संख्या |
|---|---|---|
| 1. | मधुर विपाकी रसद्रव्य | 6 |
| 2. | अम्ल विपाकी रसद्रव्य | 1 |
| 3. | कटु विपाकी रसद्रव्य | 3 |

र.र.समुच्चय ग्रंथ में केवल कुछ ही रसद्रव्यों का विपाक वर्णन किया गया है जिनमें मधुर विपाकी 6 कटु विपाकी 3 तथा अम्ल विपाकी 1 रसद्रव्य का वर्णन मिलता है ।

**Table No. (H) गुणों के आधार पर रसद्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | द्रव्य संख्या |
|---|---|---|
| 1. | गुरु गुणात्मक रसद्रव्य | 3 |
| 2. | लघु गुणात्मक रसद्रव्य | 6 |
| 3. | शीत गुणात्मक रसद्रव्य | 4 |
| 4. | उष्ण गुणात्मक रसद्रव्य | 7 |
| 5. | स्निग्ध गुणात्मक रसद्रव्य | 17 |
| 6. | रुक्ष गुणात्मक रसद्रव्य | 5 |
| 7. | मृदु गुणात्मक रसद्रव्य | 1 |
| 8. | कठिन गुणात्मक रसद्रव्य | 0 |

र.र.समुच्चय ग्रंथ में केवल कुछ ही रसद्रव्यों के गुणों का वर्णन मिलता है, जिनमें सर्वाधिक स्निग्ध गुणात्मक 17 रसद्रव्य पाये गये हैं तथा उष्ण 7, लघु 6 रूप 5 शीत 5 गुरु 3 तथा मृदु 1 गुणात्मक रसद्रव्य का वर्णन मिलता है । कठिन गुणात्मक रसद्रव्य का वर्णन नहीं मिलता है ।

**Table No. (I) दोषघ्नता के अनुसार रसद्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | द्रव्य संख्या |
|---|---|---|
| 1. | वातघ्न रसद्रव्य | 25 |
| 2. | पित्तघ्न रसद्रव्य | 26 |
| 3. | कफघ्न रसद्रव्य | 32 |
| 4. | त्रिदोषघ्न रसद्रव्य | 13 |

र.र.समुच्चय ग्रंथ में केवल कुछ ही रसद्रव्यों व दोषघ्नता का वर्णन मिलता है, जिनमें सर्वाधिक कफघ्न-3 रसद्रव्य पाये गये हैं तथा पित्तघ्न-26 वातघ्न-25 औ त्रिदोषघ्न-13 रसद्रव्यों का वर्णन मिलता है ।

**Table No. (J) कर्म के अनुसार रसद्रव्य वर्गीकरण**

| अ.क्र. | उपवर्ग | संख्या |
|---|---|---|
| 1. | दीपनीय | 29 |
| 2. | लेखनीय | 6 |
| 3. | बल्य | 9 |
| 4. | वर्ण्य | 7 |
| 5. | हृद्य | 2 |
| 6. | कृमिघ्न | 13 |
| 7. | विषघ्न | 18 |
| 8. | वामक | 3 |
| 9. | विरेचक | 8 |
| 10. | छर्दि निग्रहण | 4 |
| 11. | हिक्का निग्रहण | 2 |
| 12. | मूत्रल | 3 |
| 13. | नेत्र्य | 13 |
| 14. | केश्य | 3 |
| 15. | मेध्य | 6 |
| 16. | शूलघ्न | 11 |
| 17. | शोणित प्रशमनीय | 5 |
| 18. | क्षयघ्न | 18 |
| 19. | अर्शोघ्न | 12 |
| 20. | कुष्ठघ्न | 13 |
| 21. | कंडुघ्न | 3 |
| 22. | वृष्य | 18 |
| 23. | कासघ्न | 6 |
| 24. | रसायन | 18 |
| 25. | प्रमेघ्न | 11 |
| 26. | श्वासघ्न | 7 |
| 27. | शोथघ्न | 7 |
| 28. | ज्वरघ्न | 8 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



र.र.समुच्चय ग्रंथ में लगभग सभी रसद्रव्य के कर्मों का वर्णन मिलता है जिनमें सर्वाधिक दीपनीय-29 रसद्रव्यों का वर्णन मिला है तथा क्षयघ्न-18, वृष्य-18, रसायन-18 और विषघ्न-18 रसद्रव्य बताये गये हैं। कृमिघ्न-13, नेत्र्य-13, कुष्ठघ्न-13 तथा अर्शोघ्न-12 रसद्रव्य वर्णन किये गये हैं। इन कर्मों के अलावा अन्य शेष कर्मों में कुछ कम अधिक रसद्रव्यों का वर्णन मिलता है जो उपरोक्त टेबल में दर्शाये गये हैं।

| अ.क्र. | रसद्रव्य | A | B | C | D | E | F | G | H | I | J | एकूण |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | अभ्रक | 4 | 3 | 5 | 4 | 0 | 1 | 0 | 1 | 2 | 6 | 26 |
| 2. | वैक्रांत | 6 | 3 | 7 | 5 | 0 | 0 | 0 | 0 | 3 | 9 | 33 |
| 3. | माक्षिक | 5 | 3 | 1 | 2 | 3 | 1 | 1 | 2 | 0 | 2 | 20 |
| 4. | विमल | 4 | 3 | 1 | 2 | 0 | 0 | 0 | 0 | 2 | 5 | 17 |
| 5. | शिलाजतु | 4 | 3 | 1 | 4 | 2 | 0 | 0 | 1 | 1 | 10 | 26 |
| 6. | सस्यक | 4 | 3 | 1 | 1 | 0 | 0 | 0 | 0 | 3 | 7 | 19 |
| 7. | चपल | 4 | 2 | 0 | 4 | 1 | 1 | 1 | 1 | 0 | 3 | 17 |
| 8. | रसक | 4 | 3 | 1 | 1 | 0 | 0 | 0 | 0 | 2 | 3 | 14 |
| 9. | गंधक | 4 | 1 | 1 | 4 | 1 | 1 | 1 | 0 | 0 | 6 | 19 |
| 10. | गैरिक | 4 | 2 | 1 | 2 | 2 | 1 | 0 | 2 | 0 | 6 | 20 |
| 11. | कासीस | 4 | 2 | 1 | 2 | 2 | 1 | 0 | 0 | 2 | 8 | 22 |
| 12. | कांक्षी | 4 | 2 | 3 | 2 | 3 | 0 | 0 | 2 | 3 | 4 | 23 |
| 13. | हरताल | 4 | 3 | 1 | 1 | 2 | 1 | 1 | 3 | 1 | 5 | 22 |
| 14. | मन:शिला | 4 | 2 | 1 | 2 | 2 | 1 | 0 | 0 | 2 | 6 | 20 |
| 15. | अंजन | 4 | 2 | 1 | 3 | 2 | 1 | 0 | 2 | 3 | 11 | 29 |
| 16. | कंकुष्ठ | 3 | 1 | 0 | 1 | 2 | 1 | 0 | 0 | 0 | 5 | 13 |
| 17. | कपिल्लक | 3 | 0 | 0 | 1 | 0 | 0 | 0 | 0 | 2 | 8 | 14 |
| 18. | गौरीपाषाण | 4 | 2 | 1 | 2 | 0 | 0 | 0 | 1 | 0 | 3 | 13 |
| 19. | नवसागर | 3 | 0 | 0 | 1 | 1 | 0 | 0 | 0 | 3 | 3 | 11 |
| 20. | कपर्द | 3 | 1 | 1 | 1 | 1 | 0 | 0 | 0 | 2 | 5 | 14 |
| 21. | अग्निजार | 3 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 3 | 2 | 8 |
| 22. | गिरीसिन्दूर | 3 | 0 | 1 | 1 | 0 | 0 | 0 | 0 | 3 | 2 | 10 |
| 23. | हिंगुल | 4 | 2 | 1 | 1 | 0 | 0 | 0 | 0 | 3 | 3 | 14 |
| 24. | मृद्दारशृंग | 3 | 0 | 1 | 1 | 0 | 0 | 0 | 1 | 1 | 2 | 9 |
| 25. | माणिक्य | 4 | 2 | 2 | 1 | 0 | 0 | 0 | 2 | 2 | 2 | 15 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| अ.क्र. | रसद्रव्य | A | B | C | D | E | F | G | H | I | J | एकूण |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 26. | मौक्तिक | 4 | 2 | 1 | 1 | 0 | 1 | 1 | 2 | 2 | 10 | 24 |
| 27. | प्रवाल | 4 | 2 | 1 | 1 | 0 | 0 | 0 | 2 | 0 | 6 | 16 |
| 28. | तार्क्ष्य | 4 | 2 | 3 | 1 | 0 | 0 | 0 | 2 | 0 | 8 | 20 |
| 29. | पुष्पराग | 4 | 2 | 3 | 1 | 0 | 0 | 0 | 2 | 2 | 5 | 19 |
| 30. | वज्र | 4 | 2 | 0 | 4 | 0 | 0 | 0 | 0 | 3 | 4 | 17 |
| 31. | नीलम | 4 | 2 | 2 | 1 | 0 | 0 | 0 | 0 | 3 | 4 | 16 |
| 32. | गोमेद | 4 | 2 | 1 | 1 | 0 | 0 | 0 | 0 | 2 | 4 | 14 |
| 33. | वैदुर्य | 4 | 2 | 2 | 1 | 0 | 0 | 0 | 0 | 1 | 4 | 14 |
| 34. | राजावर्त | 5 | 3 | 4 | 1 | 0 | 0 | 0 | 0 | 2 | 6 | 21 |
| 35. | सूर्यकांत | 4 | 2 | 5 | 1 | 0 | 0 | 0 | 1 | 2 | 2 | 17 |
| 36. | चन्द्रकांत | 4 | 2 | 4 | 1 | 0 | 0 | 0 | 2 | 1 | 1 | 15 |
| 37. | स्वर्ण | 4 | 2 | 0 | 1 | 0 | 0 | 1 | 1 | 3 | 11 | 23 |
| 38. | रजत | 4 | 2 | 0 | 1 | 2 | 1 | 1 | 3 | 2 | 13 | 29 |
| 39. | ताम्र | 3 | 2 | 0 | 1 | 2 | 1 | 1 | 0 | 2 | 15 | 27 |
| 40. | लोह | 4 | 2 | 0 | 3 | 1 | 1 | 1 | 3 | 3 | 14 | 32 |
| 41. | नाग | 3 | 2 | 0 | 1 | 1 | 0 | 0 | 2 | 2 | 2 | 13 |
| 42. | वंग | 3 | 2 | 0 | 1 | 1 | 1 | 0 | 1 | 1 | 2 | 12 |
| 43. | पित्तल | 4 | 2 | 0 | 1 | 1 | 1 | 0 | 2 | 2 | 1 | 14 |
| 44. | कांस्य | 3 | 2 | 0 | 1 | 1 | 0 | 0 | 2 | 2 | 5 | 16 |
| 45. | वर्तलोह | 3 | 2 | 0 | 0 | 1 | 1 | 1 | 1 | 2 | 2 | 13 |
| 46. | मण्डुर | 3 | 2 | 1 | 0 | 1 | 1 | 1 | 2 | 3 | 14 | 28 |
| 47. | भुनागसत्व | 3 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 5 | 8 |

(शेष पृष्ठ सं० 545 पर देखें)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# लहसुन के गुण

कैलाश चै

संभवत: लहसुन ही एक मात्र ऐसी उपज है, जिसके सम्बन्ध में अनगिनत किंवदंतियाँ, मान्यताएँ और अंध-विश्वास सदियों से प्रचलित रहे हैं । हमारे पौराणिक ग्रन्थों में इसे 'सागर मंथन' से संबद्ध बताया गया है । एक पौराणिक आख्यान के अनुसार देवताओं और दानवों द्वारा किए गए समुद्र मंथन से जब चौदह रत्नों में से एक 'अमृत' हासिल हुआ तो देव व दानवों में इसे लेकर विवाद उत्पन्न हो गया । तब ब्रह्मा ने देवताओं और दानवों को अलग-अलग पंक्तियों में बिठाकर अमृत बाँटना शुरू किया । उस समय राहु नामक राक्षस ने अपना रूप बदलकर देवताओं की पंक्ति में बैठकर अमृत-पान कर लिया । इस पर विष्णु ने अपने सुदर्शन चक्र से उसकी गर्दन काट दी, परन्तु तब तक अमृत उसके हलक में पहुँच चुका था । अत: अमृत की कुछ बूंदें धरती पर बिखर गईं । उन्हीं अमृत की बूंदों से धरती पर जिस पौधे की उत्पत्ति हुई, वह लहसुन का पौधा था । ऐसी मान्यता है कि इसी कारण लहसुन में अमृत के सभी गुण विद्यमान हैं, किन्तु वह अमृत चूंकि दानव के कंठ तक पहुंच गया था, इस कारण तामसिक लक्षण भी पाए जाते हैं ।

'भाव प्रकाश' 'चरक संहिता' 'सुश्रत संहिता' 'कश्यप संहिता' आदि प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रन्थों में लहसुन की रोग नाशक क्षमता और स्वास्थवर्द्धक होने का उल्लेख मिलता है । तथा प्राचीन मिस्र की सभ्यताओं में लहसुन को अपवित्र वर्जित माना जाता था । इसका सेवन करने वालों को महिमामयी मातृदेवी के मन्दिर 'सी बोले' में प्रवेश नहीं करने दिया जाता था, जबकि ग्रीक सभ्यता में लहसुन को महत्वपूर्ण स्थान हासिल था । वहां के निवासियों की मान्यता थी कि उत्तम और अच्छे खिलाड़ी के लिए लहसुन का नियमित सेवन अनिवार्य है। वहां इसके 'हेकारे देवी' से संबंधित माना जाता था ।

प्राचीन रोमन साम्राज्य में आम आदमी लहसुन का सेवन एक शक्ति-वर्द्धक पदार्थ के रूप में करता था । वहां गुलामों, श्रमिकों और सिपाहियों को सरकारी तौर पर लहसुन का वितरण किया जाता था किन्तु उच्च तथा अभिजात्य वर्ग के लोग लहसुन को पसन्द नहीं करते थे तथा इसे घाटिया खाद्य के रूप में देखते थे ।

यह तथ्य लहसुन की ऐतिहासिकता को रेखांकित करता है कि दुनिया की पहली हड़ताल लहसुन की मांग को लेकर की गई । ईसा से तीन हजार वर्ष पूर्व मिस्र के प्रसिद्ध पिरामिड 'चिआप्स' का निर्माण कर रहे मजदूरों को जब अचानक लहसुन की आपूर्ति बंद कर दी गई तो मजदूरों ने लहसुन के बिना काम करना बंद कर दिया । अन्तत: लहसुन की आपूर्ति दुबारा शुरू किए जाने पर ही हड़ताल खत्म हुई । पौराणिक कथाओं में प्रसंग आता है कि इन्द्रदेव ने ऋषियों की बांझ पत्नियों को संतानोत्पत्ति के लिए लहसुन का सेवन करने का परामर्श दिया ।

प्राचीन बेबीलोन सभ्यता में लहसुन को रोग-नाशक खाद्य पदार्थ के रूप में मान्यता प्राप्त थी । रोम व यूनान की अति प्राचीन संस्कृति में लहसुन को पूजा के योग्य वस्तु माना जाता था तथा इसका आहार व औषधि के रूप में उपयोग होता था ।

मध्यकालिन युग के अंध-विश्वासों भरे दौर में तो लहसुन की प्रतिष्ठा और अधिक बढ़ गई । भूत-प्रेत व पिशाचों से सुरक्षा के लिए लहसुन का इस्तेमाल रक्षा-कवच के तौर पर किया जाता। उस समय यह मान्यता प्रचलित थी कि लहसुन पास रखने से या लहसुन का ताबीज पहनने से अनिष्टकारी शक्तियां नुकसान नहीं पहंचा सकतीं ।

विश्व युद्ध के समय जब आज की तरह एंटीबायटिक औषधियां उपलब्ध नहीं थीं, उस दौर में लहसुन से एक रामबाण औषधि की तरह लोगों की जीवन-रक्षा की गई । इसके प्रयोग से गहरे घाव शीघ्र ठीक हो जाते तथा युद्ध क्षेत्र में छूत की बीमारी फैलने का खतरा नहीं रहता ।

सन् 1665 में जब प्लेग की माहमारी फैली और हजारों लोग मरने लगे, तब यह देखकर लोग आश्चर्यचकित रह गए कि एक गांव कि एक मकान में रहने वाले पूरे परिवार के किसी भी सदस्य पर प्लेग का कोई असर नहीं हुआ । मालूमात करने पर ज्ञात हुआ कि जहां वह परिवार



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



निवास करते था, वह मकान किसी समय लहसुन का एक बहुत बड़ा गोदाम रह चुका था । बाद में इस मकान का नाम 'गाड्स प्राविडेन्ट हाउस' रख दिया गया ।

यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि सर्वप्रथम लहसुन कहां पैदा हुआ, किन्तु विशेषज्ञों के अनुसार दक्षिण यूरोप तथा मध्य पूर्व एशिया को लहसुन का जन्म-स्थान माना जाता है । लहसुन एक क़ंद या गांठ है जो धरती के अन्दर पैदा होता है । आज संसार के प्राय: सभी भागों में इसकी खेती होती है ।

लहसुन में प्रचुर मात्रा में औषधीय गुण पाए जाते हैं । रासायनिक संरचना की दृष्टि से लहसुन में - निम्न तत्वों का समावेश होता है ।

62% नमी, 28% कार्बोहाइड्रेट, 73 प्रतिशत प्रोटीन, 0.8 प्रतिशत रेशा तथा 0.1 प्रतिशत चिकनाई । प्रति सौ ग्राम लहसुन में 310 मि.ग्राम फास्फोरस, 30 मि. ग्राम कैल्शियम तथा 1 मि. ग्राम लोहा व गंधक होता है । प्रति सौ ग्राम लहसुन में हमें 145 कैलोरी उर्जा प्राप्त होती है ।

लहसुन में बादामी रंग का एक उड़नशील तेल पाया जाता है, जो क्षय रोग, वात-विकार आदि रोगों के उपचार हेतु अत्यन्त प्रभावकारी रहता है। आयुर्वेद में लहसुन के सेवन को पाचक, धातु-वर्द्धक, रक्त- वर्द्धक, हड्डियों को सुदृढ़ता प्रदान करने वाला, नेत्र ज्योति बढ़ाने वाला, आरोग्य-वर्द्धक तथा आयु-वर्द्धक माना गया है ।

इसके अतिरिक्त यह दमा, खांसी, सिर दर्द, जोड़ों का दर्द, हृदय की दुर्बलता, तपेदिक तथा कुष्ठरोग जैसी अनेक व्याधियों को नष्ट करता है ।

1940 में नोबेल पुरस्कार विजेता एक वैज्ञानिक ने यह सिद्ध किया हैं कि लहसुन में मौजूद 'एलिन' नामक तत्व रोगाणुओं को नष्ट करने की अपूर्व क्षमता रखता है । आधुनिक खोजों ने सिद्ध कर दिया कि लहसुन एक सर्वोत्तम प्राकृतिक एंटी सैप्टिक औषधि है ।

इतने अधिक औषधीय गुणों के अलावा लहसुन हृदय सम्बन्धी रोगों में एक अत्यन्त प्रभावशली औषधि है । पिछले कुछ वर्षों में हुए व्यापक अनुसंधानों से यह तथ्य सामने आया है कि लहसुन में एक ऐसा क्रियाशील तत्व समाहित है, जो रक्त-धमनियों में वसा के जमाव को कारगर ढंग से रोकता है । धमनियों का वसा, जिसे 'कोलस्ट्रोल' कहा जाता है, के जमाव के कारण धमनियों का सिकुड़ना ही हृदय रोगों तथा वृद्धावस्था के लक्षणों का मुख्य कारण है । लहसुन के सेवन से रक्त-धमनियों में कोलस्ट्रोल का जमाव नहीं हो पाता । लहसुन में मौजूद क्रियाशील तत्व धमनियों के रक्त-संरक्षण की प्रक्रिया को दुरुस्त करता है, जिससे हृदय की कार्य क्षमता में वृद्धि होती है। आज डाक्टर दिल तथा रक्तचाप के मरीजों को नियमित रूप से लहसुन का सेवन का परामर्श देते है । कोलोन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर हैस टायटर ने लम्बे अनुसंधानों के बाद निष्कर्ष निकाला है कि लहसुन हृदय रोगियों के लिए एक रामबाण औषधि है । खतरनाक जीवाणुओं को नष्ट करने साथ ही यह क्षय रोग और डिप्थीरिया जैसी बीमारियों के रोगाणुओं को नष्ट करने में पेनिसिलिन से कहीं बेहतर है, साथ ही इसके सेवन के कोई साइड इफेक्ट भी नहीं है ।

प्राकृतिक चिकित्सकों के अनुसार भोजन के बाद एक या दो कली कच्चा लहसुन खाने से बदहजमी, अपच, पेट दर्द, गैस आदि शिकायतें दूर हो जाती हैं । कान व नाक- दर्द में सरसों के तेल तथा लहसुन के रस को मिलाकर गर्म कर लें तथा दो-तीन बूंद नाक या कान में टपकाएं।

गर्म पानी में लहसुन का रस मिलाकर घाव धोने से जख्म शीघ्र भर जाता है । लहसुन का नियमित सेवन आपको अनजाने में ही न जाने कितनी बीमारियों से निजात दिलवा सकता है । औषधि के अलावा इसका उपयोग सिरका, सांस, किचप, अचार, ब्रेड, पापड़ आदि के निर्माण में किया जाता है ।

भारत में लहसुन की पर्याप्त पैदावार होती है। यहां से श्रीलंका, अफ्रीका, यूरोपीय देशों, दक्षिण पूर्व एशिया के अनेक देशों को लहसुन का निर्यात किया जाता है ।

लहसुन की इस प्रचुर गुण सम्पन्नता के कारण ही महात्मा गांधी इसे गरीबों की कस्तूरी कहते थे तथा महर्षि चरक इसके अपरिमित गुणों के कारण कहते थे कि लहसुन तो सोने से भी महंगी होनी चाहिए ।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# रक्तार्क : एक बहुमूल्य औषधि

स्मितागुप्ता, एडवीन जेराल्ड, शीजा एडवीन जेराल्ड

प्रजाति : रक्तार्क (आक)
वैज्ञानिक नाम : कालोत्रोपिस प्रोचेरा (ऐट.) आर. ब्रा
अंग्रेजी नाम : स्वॅलो वार्ट ।
हिंदी नाम : मदार, आक ।

**क्षेत्रीय नाम**

बंगला : आंकद
गुजराती : आकड़ी
तमिल : बदाबड़म
तेलुगु : मंदारनु
कन्नड़ : एक्क
मलयालम : एरिक्का
परिवार : आस्लेपिआदामी

**प्राप्ति स्थान :-** यह पौधा भारत के लगभग सभी प्रांतों में पाया जाता है किंतु शुष्क प्रदेशों में यह विशेष मात्रा में उपलब्ध है, फिर भी हिमालय के निचले भागों में अधिक मात्रा में उगता हुआ देखा गया है ।

**पहचान :-** आक का पौधा क्षुप स्वरूप 6 से 8 फीट ऊॅचा होता है । इसके सभी अंग सफेद मोम जैसे स्तर से ढके रहते हैं । इसके पत्र अंडाकार या गोल, 3 से 6 इंच अवृंत होते हैं । पुष्प सुर्गंधित एवं गुच्छ में होते हैं तथा इनके अंतर्दल सफेद तथा ऊपर उठे हुए । इन दल खंडों के ऊपर जामुनी रंग के दाग होते हैं । फल गोल-अंडाकार जबकि इसके बीज रूईदार होते हैं । प्राय: सभी भागों से सफेद दूध जैसा क्षीर निकलता है ।

**प्रयोज्य अंग :-** मूल, पत्र पुष्प एवं क्षीर का औषध (चिकित्सा में) उपयोग किया जाता है । इसके मूल की छाल तिक्त,दीपन,पाचन,कफघ्न,वामक,उद्वेष्टन रोधि, बल्य एवं रसायन गुणवाली है ।

**प्रयोग :-**

**क.** सभी प्रकार के चर्म रोगों में इसकी छाल को पानी में पीसकर रोगग्रस्त भागों पर लगाते हैं । जब अधिक खुजली हो तो छाल को नीम के तेल में मिश्रि लगाते हैं ।

**ख.** अपच में इसकी छाल 80 मि.ग्रा. देने से पाचन शक्ति बढ़ती हैं ।

**ग.** अतिसार एवं आँव में इसकी छाल 3500 से 5 मि.ग्रा. सुर्गंधित पदार्थ में मिलाकर देने से लाभ होता है, इससे वमन की आशंका कम रहती है ।

**घ.** जीर्ण ज्वर एवं विसर्गी ज्वर में इसका फान्ट देने से लाभ होता है, जबकि मलेरिया ज्वर में इसकी छाल पान के साथ खिलाते हैं ।

**च.** मोच,संधि शोथ तथा मरोड़ में आक के दुग्ध में नमक में मिलाकर लगाने से सूजन कम होती है ।

**पुष्पों का प्रयोग :** खॉसी एवं दमा में फूलों को राब में उबालकर सेवन करने से शीघ्र लाभ होता है ।

**क.** जीर्ण व्रण में इसके पत्रों का चूर्ण पर डालने से लाभ होता है ।

**ख.** चोट पर इसके पत्रों को तेल में उबालकर इससे मालिश करने से लाभ होता है ।

**ग.** उदर रोग मे इसके पत्रों एवं सैंधव को समान भाग लेकर बंद हांड़ी में गरम करके बनाई हुई राख को तक के साथ देने से लाभ होता है ।

**बिच्छू के विष पर** - आक के मूल को में पीसकर लेप लगाने से लाभ होता है ।

**कर्णशूल में** - आक के सूखे पत्रों पर लगाकर आग पर सेंकने के बाद उसका रस निकाल कान में एक बूंद डालने से लाभ होता है ।

**मात्रा** - मूल की छाल का चूर्ण: 180 से मि. ग्रा. दूध 120 से 240 मि. ग्रा. पत्र का चूर्ण 240 ग्रा. ।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# चर्मदल विवेचन

डा० चन्दन मल जै

परिचय :-

वातभूयिष्ठत्वाद्वाय्वात्मकमेवोदाहरन्ति ।
चर्मदलमिति चर्माविदारणात् ।

(का.खि. 15/6)

यह क्षीरप एवं क्षीरान्नाद शिशुओं की त्वचा में पायी जाने वाली वातप्रधान व्याधि है । इसमें शरीरगत त्वचा फट जाती है तथा विशेष रूप से मुख, गले, हाथ, पैर, वृष्ण के नीचे, कटि तथा सन्धि प्रदेशों में होती है ।

यह व्याधि विशेषकर बालकों (क्षीरप एवं क्षीरान्नाद) में ही पायी जाती है क्योंकि इनका शरीर सुकुमार एवं मृदु होता है तथा इसको धातु (रसरक्तादि) अस्थिर तथा अपरिपक्व होती हैं ।

"सुकुमाराणामस्थिर धातूनां बालानां
गर्भशय्योचित मृदु शरीराणाम्"

(का०खि० 15/4)

आचार्य काश्यप ने खिलस्थान में इसका विस्तृत वर्णन किया है ।

आचार्य चरक, सुश्रुत एवं वाग्भट्ट ने इसे क्षुद्रकुष्ठ में वर्णन किया है ।

रक्तं सकण्डू सस्फोटं सरूग्दलति चापि यत् ।
तच्चर्म दलमाख्यातं संस्पर्शासहमुच्यते ।।

(च०चि० 7/24)

त्वचा में रक्तवर्ण का जिसमें कण्डू एवं शूलयुक्त विस्फोट होता है तथा त्वचा में स्पर्शासहता मिलती हैं ।

स्युर्येन कण्डूव्यथनौषचोषास्तलेषु तच्चर्मदलं वदन्ति ।

अर्थात् हस्त-पाद तल में कण्डू, वेदना, दाह एवं चोष होने को चर्मदल कहते हैं ।

सस्फोटमस्पर्श सहं कण्डूप्पातोद दाहवत् ।
रक्तं दलच्चर्म दलम्..... ।।

(अ०हृ०नि० 14/29)

त्वचा में रक्तवर्ण का कण्डू, उष्ण, तोद एवं दाहयुक्त विस्फोट के साथ-साथ स्पर्शासहयता मिलती है ।

निदान - चर्मदल मुख्य रूप से निम्न कारणों से होता है -

1. आहारगत कारण - बालक की माता य धात्री जब वात (रूक्ष, आहार, चक्रमण एवं व्यायादि) पित्त (उष्ण, अम्ल, लवण एवं कटु) एवं कफ (मधु अम्ल, लवण, गुरु एवं अभिष्यन्दि आदि) वर्धक आहार-विहार का सेवन करती है तो प्रकुपित हुए वातादि दोष स्तन्यवह स्रोतस में जाकर स्तन्य को दुष्ट करते हैं इस प्रकार दूषित स्तन्य का जब बालक सेवन करता है त उसके शरीर में प्रकुपित हुए वातादि दोष त्वचा में जाक चर्मदल नामक व्याधि को उत्पन्न करते हैं ।[1]

2. परिचर्याजन्य कारण[2]

* बालक को अत्यन्त (अधिक) वस्त्र धारण करना
* बालक को बार-बार गोद में लेना ।
* बालक को उष्ण वायु, धूप तथा स्वेद (पसीना का लगना ।
* मल एवं मूत्र की अस्वच्छता रहना ।
* उपनाह एवं उद्वर्तन का अधिक प्रयोग करना

3. कुलज प्रवृत्ति (HERE DITARY)[3]

प्रकार एवं लक्षण :-

चर्मदल 4 प्रकार का होता है ।[4]

1. वातिक चर्मदल
2. पैत्तिक चर्मदल
3. श्लैष्मिक चर्मदल
4. सान्निपातिक चर्मदल

संदर्भ :-

1. क्षीरपाणां कुमाराणां स्तन्यदोषेण, क्षीरान्नादान स्तन्यदोषेणाहारदोषेण च । तत्र या बालस्य माता व धात्री वा रूक्षसमुदाचाराहारादावर्तनोपवसनशील तथाऽतिचङ्मणख्यायामक्लेशानत्यर्थमुपसेवते तस्याः वायु प्रकुपितः स्तन्यं इष्यति ।

(का०खि० 15/7

* यदा तु धात्री क्रोधसंतापोष्णाम्ललवणकटु विदग्धाध्यशनविवशा (ता) नुपसेवते तस्याः पित्तं प्रकुपि वायुना विक्षिप्यमाणं स्तन्यवहाभिः सिराभिरनुसृत्य स्तन्


CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



दूष्यति ।

(का०खि० 15/8)

* अथ वा धात्री गुर्वम्ललवण मधुराभिष्यन्दिदिवास्वप्नाल-स्याहितानि चात्यर्थमुपसेवते तस्या: प्रकुपित: श्लेष्मा वायुना समुदीर्यमाण: स्तन्यमभिदूष्यति ।

(का०ख० 15/9)

2. वस्त्राङ्काधारणोष्णानिलातपस्नेदोपनाह स्वमलमूत्रपुरीष सस्पर्शाशौचपाणिपीडनाऽतीवोद्वर्तन XX ।

(का०ख० 15/4)

3. कुलप्रभृत्यादि ..... । (का०ख० 15/4)

4. स चतुर्विधो - वातिक:, पैत्तिक:, श्लैष्मिक:, सान्निपातिक इति ।

(का०ख० 15/6)

**1) वातिक चर्मदल लक्षण[1] -**

| शारीरिक स्थिति | लक्षण |
|---|---|
| त्वचा गत | शरीर में कण्डू एवं स्फोटयुक्त कठोर व कृष्णवर्ण के मण्डल (चकत्ते) । |
| पुरीषगत | विवर्ण एवं द्रवयुक्त (तनु) मलप्रवृत्ति । |
| अन्य | कम्पन, मुखशोष तथा रोमहर्ष । |

**2) पैत्तिक चर्मदल लक्षण[2] -**

| शारीरिक स्थिति | लक्षण |
|---|---|
| त्वचागत | शरीर में लाल, नीले, काले तथा पीत वर्ण के शुष्क, उष्ण, दुर्गन्धयुक्त तथा दोषपूर्ण मण्डल (चकत्ते) होते हैं । |
| | त्वचा तथा मांस का दारण करने वाले, पद्मपत्र तुल्य तथा अग्निमांद्य के समान विसर्प होना । |
| पुरीषगत | हरित एवं पीतवर्ण की मल प्रवृत्ति होना । |
| अन्य | छर्दि, मुखशोष, दाह एवं मुख का पीलापन होना । |

**(3) श्लैष्मिक चर्मदल लक्षण[1] -**

| शारीरिक स्थिति | लक्षण |
|---|---|
| त्वचा गत | शीत, स्तिमित, स्निग्ध एवं महा (घने) मण्डल होना । |
| | श्वेतवर्ण युक्त, कण्डू एवं तोदयुक्त सरसों के आकार की बहुत सी पकने वाली पिड़िकाएं होना । |
| पुरीषगत | पिच्छिल, पतले (चाडनुबद्ध) एवं बार-बार मल की प्रवृत्ति होना । |
| अन्य | श्वास, कास, प्रतिश्याय, अङ्गगौरव एवं अरुचि । |
| | श्लेष्मायुक्त वमन, तन्द्रा, ओष्ठ एवं तालु का श्वेत होना । |

**संदर्भ :-**


1. सकण्डू स्फूरितपरूष श्यावावभासान्यङ्गे मण्डलानि पिप्लुतं तनु विवर्णमतिसार्यते; प्रवेपक मुखशोष रोमहर्षान्वितश्च वातचर्मदल: ।

(का०खि० 15/

2. स पित्रतो जन्तोरिमानि रूपाणि भवन्ति - रक्तनीलावभासानि श्यावपीताभानि शुष्कच्छवीन्युष्णानि कुथित दोषपूर्णानि मण्डलान्युत्पद्यन्तेऽस्य विसर्पणिच मांस दारणनि प्रभिन्नानि पद्मपत्रप्रकाशान्यग्निदाभोपेतानि भवन्ति । अतोऽतिसार्यते हरितपीतगुदपाक क्रमभीक्ष्ण दाहमुखशोषच्छर्दियच्च (पीत) वदनान्वितश्च पित्तचर्मदल: ।

(का०खि० 15/

3. तत् पिबतो जन्तोरिमानि रूपाणि भवन्ति - शीतस्तिमित स्निग्धसान्द्रैमण्डलै: श्वेताभैर्बहुभिर्नात्यर्थ वेदनावद्भि सर्षपमत्रिभि: पिडकाभिरूपचितैश्चिर पाकिभि सकण्डूतोदयुतैरूपचीयते, ततोऽस्य प्रतिश्यायान्वित गौरवकासपाका उत्पद्यन्ते, बहुलं पिच्छिलं चाऽनुबद्ध मतिसार्यते, निष्ठनति श्लेष्माणं छर्दयति, तन्द्राभिभू




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



श्वेततास्वोष्ठश्च भवतीति श्लेष्म चर्मदलः ।।

(का०खि० 15/9)

(4) **सान्निपात्तिक चर्मदल लक्षण**[1] -

| शारीरिक स्थिति | लक्षण |
|---|---|
| त्वचागत | काले रक्तवर्ण के एवं जले हुए गुड़ के समान, त्रिदोषयुक्त, शीघ्र पकने वाले, दुर्गन्धयुक्त एवं फटने वाले मण्डल (चकत्ते) सर्व शरीर में होना । |
| | पूति एवं कुणप गन्धि स्राव होना । |
| पुरीषगत | कृष्ण एवं अरुण वर्ण की मल प्रवृत्ति होना । |
| अन्य | श्वासकृच्छ्रता, स्तनद्वेष तथा रोने में कष्ट होना । |

- सान्निपातिक चर्मदल असाध्य होता है ।

## चिकित्सा

1. वातिक चर्मदल चिकित्सा[2]

(अ) धात्री चिकित्सा

(i) शोधन कर्म

* स्नेहन एवं स्वेदन कर्म करावें ।
* विरेचन - निलिका अथवा निवृत्त (निशोथ) को घृत के साथ सेवन करावें ।

विरेचनोपरान्त अनारदाना एवं नमक युक्त गुरु एवं स्निग्ध यूषों के साथ चावल का भात खिलावें ।

(ii) शमन कर्म -

* स्तन्यशोधक उपाय -
* विदारीगन्धा, एरण्ड, बृहती, गोक्षुर, पुनर्नवा एवं पृश्निपर्णी का क्वाथ पिलावें ।
* दशमूल का क्वाथ पिलावें ।
* लेप - अजगन्धा, सोमराजी, बृहती एवं कण्टकारी का स्तनों पर लेप करें ।
* परिषेक - श्वेतएरण्ड, ढाक, पाटली एवं रास्ना के क्वाथ अथवा उष्ण जल से परिषेक करें ।

(आ) शिशु चिकित्सा -

* बलादि तैल - बला, अतिबला, बिल्व मूल देवदारु एवं आम की गुठली की मज्जा से सिद्ध तैल का अभ्यङ्ग करें ।

**संदर्भ :-**


1. यदा तु त्रिदोषसंसृष्टं क्षीरमनुपिबति तदाऽस्याङ्गे मण्डलानि प्रादुर्भवन्ति कृष्णरक्तावभासानि दग्धगुडप्रकाशानि व त्रिभिर्गुणैरन्वितानि क्षिप्रपाकीनि विगन्धीन्यव दीर्णानि पूतिकुणपविस्त्रावीणि चेति । तैः स सर्वावनद्धाङ्गः निष्टनत्यनिशं कृच्छ्रेण रोदिति स्तनं नाभिनन्दति कृष्णमरूणवर्णावभासं चाऽतिसार्यते । साऽसाध्य सन्निपातात्मक इति ।

(का०खि० 15/1(

2. तत्रादितश्चैव धात्रीं स्नेहाभ्यङ्ग स्वेदोपपन्न नीलिकाचूर्णयुतं सर्पिः पाययेत्, त्रिवृच्चूर्णयुतं वा ततः संसर्गोपपादितालघुस्निग्धैर्यूषैदाडिम सैंधवयुतैर्मुद मांदनमश्रीयान्निवात शयनानपरा । विदारीगन्धैरण्ड बृहतीगोक्षुरकपुनर्नवापृश्निपर्ण्य इति कषायमेनां पायमेत स्तन्यशोधनार्थं, द्विपञ्चमूलकषायं वा । तथाऽज गन्धाऽवल्गुजकबृहतीकण्टकारिकायुतः प्रदेहः अथोरूपूगपलाशपाटलिरास्नाक्वाथः परिषेकः, पयस वा सुखोष्णेन चेति । बिल्वदेवदारु चूतमुक्तिफलविपक्व वा द्विबलाबिल्वमूल सुरदार्वाम्रपेशिकाविपक्वं वेति वातचर्मदलाचिकित्सितमुक्तम् ।

(का०खि० 15/15)


**बिल्वादि तैल** - बिल्व, देवदारु, आम एव युक्तियुक्त (कर्पूर) के द्वारा तैल को सिद्ध कर अभ्यङ्ग करें ।

2. पैत्तिक चर्मदल चिकित्सा[1] -

(आ) धात्री चिकित्सा

(i) शोधन कर्म

* स्नेहन कर्म - धात्री को स्नेह (तैल) से अभ्यङ्ग करें ।
* वमन कर्म - नीमक्वाथ में पिप्पली का कल्क मिलाकर वमन करावें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



* विरेचन कर्म - दूध में अमलतास फल का गुदा मिलाकर सेवन करावें ।
* संसर्जन कर्म - यवागू, कृत एवं अकृत यूष का क्रमशः सेवन करावें ।

(ii) संशमन कर्म

स्तन्यशोधक उपाय -

* गम्भारी, मधुयष्टी, फालसा तथा बला का क्वाथ बनाकर मधु एवं शर्करा मिलाकर पिलावें ।
* लेप - पुण्डरीक, सारिवा, खस एवं चन्दन के कल्क का स्तनों पर लेप करें तदन्तर सुखोष्ण जल से परिषेक करें ।

(आ) शिशु चिकित्सा :-

* यष्ट्यादिघृत - मधुयष्टी, गिलोय, शतावरी, कुश, कास, पद्म, उत्पल, ईशु, विदारी, बड़, गुलर, जामुन, जलकुम्भी एवं शतपुष्पा (सौंफ) के क्वाथ में दुगुना दूध तथा मंजिष्ठा, खस, रक्तचन्दन, पुण्डरीक एवं मुनक्का आदि का कल्क मिलाकर यथाविधि घृत सिद्धकर अभ्यङ्ग करें ।
* अवचूर्णन (dusting) - लोध्र, मधुयष्टी, दारुहल्दी, आंवला, दालचीनी एवं तेजपत्र के चूर्ण का अवचूर्णन करें ।

1. तद्यथा धात्री स्नेहाभ्यङ्गोपपन्नां वमनविरेचनेनोपक्रमेत्, निम्बोदकपिप्पलीकल्केन वामयेत्, आरग्वधफलममज्ज कषायसंयुक्तेन वा क्षीरेणेति यथाबलं वीक्ष्य । संसर्ग कारयेद्यवाग्वा यूषकृताकृतविधानेन वा । काश्मर्यमधुक परूषकशीत पाक्य इति कृत्वा सुशीतं शर्करामधुलिखितं कषायं पाययेत् स्तन्य शोधनार्थं, पयस्यासारिवामृता मधूकमृद्वीकानां कषायं शर्करायुतं चेति । मधुकमधुपर्णी वेडवेतसशतावरी नलमूलकदलीकुशकाशपओत्पलेक्षु विदारीवरीदुम्बरत्वग्जम्बूकुम्भीका मधुरा चेत्येतानि जलाढ के पक्त्वा चतुर्भागावशेषे घृतप्रस्थं पाचयेत् कषायद्विगुणक्षीरेण सगर्भः स्यान्माज्जेष्ठावितूणकयष्ट्य धातक्युशीरचन्दन क्षीर काकोली प्रपौण्डरीक क्षीरशु तालोसमृद्धीकेति सुपिष्टं विदध्यादेतेन सिद्धेनाभ्य ततोऽवचूर्णयेल्लोध्र-मधुकदारूहरिद्रामलकीत्वक् चूर्णनैतेनेत्येवम् ।

(का०खि० 15/1

3. श्लैष्मिक चर्मदल चिकित्सा[1] -

(आ) धात्री चिकित्सा

(i) शोधन कर्म

* स्नेहन कर्म - सुखपूर्वक लवणयुक्त द्रव्यों स्नेहन करावें ।
* वमन कर्म - नीम कषाय तथा मदनफल से वम करावें ।
* शिरोविरेचन - वमनोपरान्त शिरोविरेचन कर्म

(ii) शमन कर्म

स्तन्यशोधक उपाय -

* इन्द्रजौ, नागरमोथा, प्रियङ्गु, काकजंघा, पद्म लोध्र, गिलोय एवं मूर्वा का क्वाथ पिलावें ।
* लेप - नागरमोथा एवं चमेली के कल्क स्तनों पर लेप करें ।

(आ) शिशु चिकित्सा -

मुस्तादि तैल - नागरमोथा, श्वस, अर्क, हल्दी, पूतिकरञ्ज एवं नीम से तैल को सिद्ध कर अभ्य करें ।

1. अथ धात्रीं पूर्वेण विधिनोपार्च्य निम्बकषाय मदनफलेन व्यक्तलवणां.....कृतवमनायाः शिरोविरेचन कुटजफलमुस्ताप्रियङ्गुशार्ङ्गिष्ठापाठा लोध्र गुडूचिपट्ट क्षमात्राणि.....मुस्तकमासतीपत्रकल्केन स्तनावलेप भद्रमुस्तोशीराफोटाटरूषक हरिद्राकरञ्जसुमनादि तैलमभ्यञ्जनीयमिति ।

(का०खि० 15/



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# डेंगू फीवर (दण्डक ज्वर) में आयुर्वेदीय चिकित्सा

डॉ० महेश शर्मा

डेंगू फीवर वर्षाकालीन मलेरिया सदृश विषाणु जन्य ज्वर है । आर्ष ग्रन्थों में दण्डक ज्वर का पृथकशः वर्णन नहीं प्राप्त होता है । परन्तु सिद्धान्त निदान में सर्वप्रथम दण्डक ज्वर के नाम से इस व्याधि का उल्लेख किया गया है ।

अस्थियों एवं संधियों में तीव्र वेदना के साथ-सथ यह व्याधि सम्पूर्ण शरीर में (सर्वांगशूल) फैल जाती है । डण्डे से पीटे जाने की तरह शरीर में वेदना एवं शरीर दण्ड के समान अकड़न हो जाने से इस रोग को दण्डक ज्वर के नाम से जाना जाता है । यह आशुकारी स्वभाव की व्याधि है । यह ज्वर एक बार ठीक होकर पुनः हो जाता है । इस व्याधि में संधिशोथ व शूल, प्रतिश्याय, कास आदि लक्षणों के साथ ज्वर होता है । यह ज्वर ४वें दिन उतर जाता है । यह जानपदिक रोग (इमिडेमिक डिसीज) है, जो आयुर्वेदीय निदानतः वात-श्लेष्म प्रकोपजन्य होता है । आचार्य गणनाथ सेन जी के शब्दों में;

**अस्थिसंधिरुजास्तीव्रा दण्डाहतिकृता इव ।**
**क्वचित् क्षिप्रोदयलयो विसर्पः सर्वगात्रगः ।।**
**ज्वरश्च कण्ठरूग्युक्तः पुनरावर्तते गतः ।**
**सञ्चारिणा सशोथेन सन्धिशूलेन लक्षितः ।।**
**प्रतिश्याय कासवान प्रायेणाष्टाहेन प्रमुच्यते ।**
**चिरं सन्धिरुजाः सन्ति स ज्ञेयो दण्डक ज्वरः ।।**
**प्रायोऽसौ जानपदिको वातश्लेष्म प्रकोपनः ।**
**बालानां जरताञ्चातिदारुणः परिलक्ष्यते ।।**

(सि०नि०पू०ख०)

आधुनिक विज्ञान में इसे ब्रेक बोनफीवर वीकली फीवर भी कहा गया है । लोकभाषा में हड्डी तोड़ बुखार, डेंगडा बुखार आदि नाम दिये गये हैं ।

**कारण :-**

यह ज्वर एडीज इजिप्टाई नामक मच्छर के काटने से वायरल के रूप में फैलता है । इसका मुख्य कारण B-Group of Arbovirus है । इसका प्रसार भी रोगग्रस्त मानव के रक्त को मच्छर के द्वारा चूसकर स्वस्थ मानव को काटने से होता है । यह मच्छर उष्णकटिबन्धीय प्रदेशों में विशेषतया पाया जाता है । समुद्र तटीय भू-भागों में इसका संक्रमण प्रायः देखा गया है । इस ज्वर के संक्रमण का भय प्रायः वर्षाकाल में प्रदूषित गन्दगी वाले पानी का सड़कों एवं नालियों में जमा होने से रहता है ।

आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थ चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट संहिता में विषम ज्वर, प्लेग, दण्डक ज्वर, कालाजार, श्लेष्मिक ज्वर, विसूचिका, मसूरिका आदि विषाणु जन्य कारण स्पष्ट इंगित नहीं हैं तथापि आयुर्वेद इसे कृमिज व्याधि (जीवाणुजन्य) मानता है तथा इन रोगों की उत्पत्ति कारण असात्मेन्द्रियार्थ संयोग, प्रज्ञापराध एवं परिणाम (काल) है अर्थात् वैयक्तिक एवं सामाजिक स्वस्थवृतों के नियमों का पालन न करने से जल, वायु एवं भूमि प्रदूषण के कारणों द्वारा उत्पन्न विषाणुओं को भी रोग का कारण मानता है । वर्तमान में बढ़ती हुई जनसंख्या एवं प्रकृति विदोहन के फलस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण की विकराल समस्या विश्व के समक्ष एक चुनौती है ।

**संचय काल (Incubation Period) :-** 5 से 9 दिन ।

**पूर्वरूप :-**

**"यदा मानवस्याङ्गमध्येऽङ्गमर्दः**
**क्लमश्चारुचिर्दृश्यते दैवयोगात् ।**
**अथोत्क्लेशसादौ तदादण्डाख्य**
**ज्वरस्याग्ररूपं जनैः वेदितव्यम् ।।**

(मा०नि०परि०)

दण्डक ज्वर की पूर्वरूपावस्था में निम्न लक्षण होते हैं -

1. अंगमर्द
2. क्लम
3. अरुचि
4. जी मिचलाना
5. अवसाद

**डेंगू बुखार के लक्षण -**

**"अस्थनां सन्धिषु घोरा दण्डाहननजसमा पीड़ा ।**
**क्षिप्रोदयबलशाली समस्ततनुगोऽपि विसर्पः ।।**
**संचारि संधिशूलं शोथयुक्तं लक्ष्यते यत्र । ज्वर**
**मध्येऽपि च कासः कण्ठे पीड़ा प्रतिश्यायः ।।**

प्राध्यापक, काय चिकित्सा, राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



पुनरावर्तनशीलो मुचत्यष्टाहतो ज्वरो यत्र ।
संधिरुजाश्चिरकालं सन्दि वदन्ति च दण्डक ज्वरं तम् ॥
प्रायोजनपदजन्मा कफमारुत कोप जात निज वर्प्मा।
बालानामथ जरतां, जाता दारुण उदीरितो वैद्यैः ॥"

(मा०नि०परि०)

दण्डक ज्वर निम्न लक्षण वाला होता है -

* अस्थियों की संधियों में डण्डा मारने जैसी घोर पीड़ा ।
* समस्त शरीर में उत्पन्न होकर शीघ्र नष्ट हो जाने वाला ।
* संचारी ।
* विसर्प ।
* शोथयुक्त संधिशूल ।
* कास ।
* कण्ठ से पीड़ा ।
* प्रतिश्याय ।
* पुनरावर्तक ज्वर ।
* ज्वर छूट जाने पर भी संधियों में पीड़ा बने रहना।

यह अधिकतर शहरों में विशेष होता है । यह कफ तथा वात प्रकोप से उत्पन्न होता है और बालक तथा वृद्धों को प्राय: अधिक कष्टदायक होता है ।

**(1) रोग वृद्धि काल (Stage of Invasion)**

इस ज्वर में रक्त धातु दूषित होता है । रोग बहुत शीघ्रता के साथ बैचेनी लिये होता है । तीव्र शिर:शूल, नेत्र गोलक में पीड़ा, जोड़ों और मांसपेशियों में वेदना जो चलने, करवट बदलने से बढ़ती है ।

प्रथम दिन 103 डिग्री फारनेहाईट ज्वर या इससे भी अधिक हो जाता है । चेहरा उतरा हुआ, आंखों में लाली, सूर्य की धूप नहीं सह सकना आदि लक्षण होते हैं ।

मुखमण्डल सूर्ख और गला खराब हो जाता है । चेहरे, गले, कन्धों पर हल्के लाल लाल रंग के दाने निकल जाते हैं ।

**(2) रोग ह्रास काल -**

लगभग तीसरे दिन तापक्रम सामान्य हो जाता है । यह सामान्य तापक्रम 12 से 72 घण्टे तक रह सकता है ।

**(3) पुन: रोग वृद्धिकाल (Stage of Terminal Fever and Eruption)**

लगभग छठे दिन पुन: ज्वर चढ़ता है किन्तु तापक्रम पहले की अपेक्षा कम रहता है । तापक्रम का Hump back रहता है । पुन: शरीर पर छोटे-छोटे जलयुक्त दाने निकल आते हैं । किन्तु मुखमण्डल पर नहीं होते । लगभग 4 दिन में ये दाने स्वयं समाप्त हो जाते हैं ।

प्रारम्भ में नाड़ी गति तीव्र बाद में कम हो जाती है । तीव्र तापक्रम के साथ नाड़ी गति मांद्य (Faqui Sign) हो जाता है । कभी-कभी लसिका ग्रन्थि बढ़ जाती है । किसी-किसी को उपत्वर्गीय स्राव भी हो सकता है । गर्भिणी को गर्भस्राव या गर्भपात भी हो सकता है ।

रक्त में ल्यूकोपिनिया मिलती है । इस ज्वर में मिचली के साथ-साथ उल्टी आना, शिर एवं मस्तिष्क में तेज पीड़ा, कमर हाथ पैरों में पीड़ा अधिक होती है । सांस लेने में कष्ट, शरीर पर खरौंच या दरारें पड़ना, पेट में दर्द होना, नींद का न आना, पेशाब में रक्त का आना, अधिक लगना, मांसपेशियों व हड्डियों में दर्द होना, आंख से पानी बहना आदि लक्षण पाये जाते हैं ।

जीवाणु जन्य विष के कारण शरीर में फेट व प्रोटीन का पाचन अधिक होने लगता है । फलत: त्वचा होती है । परिणामस्वरूप त्वचा तथा श्लेष्मिक कला एवं सिरासंकोच द्वारा प्रक्रिया प्रारम्भ होती है । श्वास, मल, मूत्र उत्सर्जन के द्वारा उष्मा की मात्रा जाती है । स्वेदावरोध होकर त्वचा शुष्क हो जाती है बढ़ जाता है । संक्रमित वायरस के कारण प्रकुपित आमाशयस्य उष्मा इस रक्त से मिलकर एवं स्वेदवह



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



को अवरोध कर ताप वृद्धि कर देता है ।

**(4) उपशमन अवस्था (Stage of Convulsion)**- ज्वर छठे एवं सातवें दिन उतर जाता है जिससे शारीरिक वेदना एवं संधियों में वेदना समाप्त हो जाती है ।

**(5) उपद्रव (Complications)** - तीव्र ज्वर, रक्तस्राव, अतिसार, अण्डकोषशोथ, अल्ब्युमिनेरिया ।

**(6) नैदानिक लक्षण (Clinical Features)**

1. मध्य विराम युक्त ज्वर ।
2. ज्वरानुपात में नाड़ीमंदता ।
3. W.B.C. घटना ।
4. लिम्फोसाइटोसिस ।

**चिकित्सकीय उपचार** - रोगी को एक सप्ताह पर्यन्त विश्राम करावें । निवास स्थान स्वच्छ, मनोरम एवं आरामदेह होना चाहिए । लंघन एवं मृदुशोधन चिकित्सा इसमें लाभदायक है । सुखोष्ण जल से तौलिया भिगोकर देह पोंछ देनी चाहिए । रोग के शमन के लिये देश, काल एवं अवस्थानुसार सन्तर्पण या अपतर्पण के द्वारा मृदु, मधुर, शीतल, तिक्त, कषाय, औषध अन्न की व्यवस्था पर ध्यान देना चाहिए । बहिपरिमार्जन एवं भूमि एवं जलवायु प्रदूषण की रोकथाम के लिये सर्वोषधि धूपन, गूगल, नीमपत्र, नीलगिरी पत्र, गंधक, विरोजा, पीली सरसों, वचा, वायविडंग, शिरीषबीज, कपूर घी, तिल आदि रक्षोघ्न द्रव्यों के यवकुट चूर्ण द्वारा घर और नगरों में धूपन करना हितकर है ।

**इसके साथ ही निम्न चिकित्सा प्रयोग डेंगू फीवर में उपयोगी है ;**

1. मल शोधनार्थ कुटकी चूर्ण, यष्टयादि चूर्ण आदि का मृदु, सुख विरेंचन प्रयोग करना चाहिए ।
2. वमन मालूम होने पर लौंग, इलायची या एलादिवटी चूसने को दें । पीने के लिये सौंफ अर्क, पित्तपापडा का पानी दें ।
3. तुलसी पत्र, द्रोण पुष्पी, ब्राह्मी, चिरायता, निम्बपत्र, इन्द्रयव, वायविडंग, नागकेसर, धमासा, धनियां इ सभी द्रव्यों का क्वाथ क्वाथ-विधि से तैयार कर 5 मिली. से 100 मिली दिन में दो या तीन बार प्रयो करने से लाभ होता है ।
4. प्यास अधिक लगने पर षडंगपानीय, यूष का प्रयो अवस्थानुसार तीन चार बार करें ।
5. रक्तपित्त शामक औषध घटक द्रव्यों से सिद्ध सार्धि ज्वरघ्न चूर्ण का प्रयोग करना चाहिए ।
6. सुदर्शनघनवटी 500 मि.ग्रा. स्फटिका भस्म 250 मि ग्रा. दिन में दो-तीन बार गर्म जल के साथ लेने लाभ होता है ।
7. रत्नगिरी रस 125 मि.ग्रा. संजीवनी वटी 250 मि.ग्र दिन में दो-तीन बार गर्म जल से सेवन करें ।
8. मानसिक लक्षणों की अवस्था में जटामांसी, ब्राह्मी शंखपुष्पी, मुलैठी, वचा आदि का चूर्ण मिश्री या म के साथ दिन में दो या तीन बार करें ।
9. रसोष्ण द्रव्यों एवं सुगन्धित वाष्पधर्मी तैलों यथा वचा तगर, कूठ, चोरक आदि द्रव्यों का उपयोग औषधि सेवन एवं धूपन (हवन सामग्री) तथा पर्यावरण प्रदूषण सुधार के लिये दण्डक ज्वर की रोकथाम में कारग है ।
10. वेदना शमनार्थ

| | |
|---|---|
| बेतालरस | 125 मि.ग्रा. |
| मृत्युंजय रस | 125 मि.ग्रा. |
| कृष्णचतुर्मुख रस | 125 मि.ग्रा. |
| गिलोयसत्व | 125 मि.ग्रा. |
| | 1 x 4 |

पर्पटादि क्वाथ 20 ग्राम की मात्रा में क्वाथ विधि स क्वाथ कर प्रयोग कराना लाभकर है ।

11. आहार की रुचि जागृत होने पर मूंग का यूष, दूध

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Delhi.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



साबूदाना और लाजमण्ड आदि सुपाच्य आहार दें ।

2. ज्वरान्त दौर्बल्य में -

* प्रातः सायं -

| | |
|---|---|
| नवायस लौह | 250 मि.ग्रा. |
| प्रवालभस्म | 250 मि.ग्रा. |
| विषाणभस्म | 250 मि.ग्रा. |
| सितोपलादि चूर्ण | 2 ग्राम |
| शुद्ध कुपीलु | 125 मि.ग्रा. |

मधु से दें ।

* भोजनोत्तर - अश्वगंधारिष्ट 20 मि.ली. समान जल से पीना ।

* अभ्यंगार्थ - चन्दनवला लाक्षादि तैल प्रयोग ।

3. वेदना कम करने के लिये वातगजांकुश रस दिया जा सकता है । यदि वेदना के कारण नींद न आवे तो कृष्णचतुर्मुख रस 125 मि.ग्रा. जटामांसी चूर्ण 2 ग्राम शहद मिलाकर देना चाहिए ।

4. यदि अतिसार हो तो सिद्ध प्राणेश्वर रस अथवा गुडुच्यादि क्वाथ देना चाहिए । गुडुच, अतीस, धनियां सोंठ, बेल की गिरी, नागरमोथा, नेत्रबाला, पाठा, कुडा की छाल, चिरायता, लालचन्दन और पितपापड़ा सबको समान भाग लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ बनाकर प्रयोग करावें । इससे ज्वर और अतिसार में लाभ होता है ।

15. घरेलू नुस्खों के प्रयोग :-

* दाख का रस निकालकर मिश्री मिलाकर पीना चाहिए ।

* बकरी का दूध 250 मि.ली. और पानी 250 मि.ली. में चार पीपल डालकर गर्म करें । जब आधा रह जावे तब पीपल निकालकर खिलावें । इस से दूध पिलाना चाहिए ।

* तुलसी के पत्ते सात, पुदीने के पत्ते सात, काली मिर्च सात, लौंग दो को पीसकर गर्म पानी से लेना लाभप्रद है ।

* पीपल का चूर्ण 1/2 ग्राम शहद में मिलाकर चटाना उत्तम है ।

**पथ्य** - लघु भोजन, उबाला हुआ जल, उष्ण पेय जैसे कॉफी, दूध पथ्य है ।

**अपथ्य** - भारी भोजन, ठण्डा जल, ठण्डे पेय, किसी आहार अपथ्य है ।

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
यह चूर्ण पेट साफ करता है तथा
पाचन शक्ति और भूख बढ़ाता है।
इससे पेट के कृमि भी दूर होते हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# चरक संहिता में वर्णित विभिन्न लेप

*डा० अनूप कु० गक्खड़, एम०डी०आयुर्वेद

** डा० अनिल गक्खड़, एम०डी०आयुर्वेद

चरक सूत्र स्थान के आरग्वधीय अध्याय में 32 प्रकार के लेप/प्रदेह का वर्णन किया है । इसके अतिरिक्त अन्य स्थलों पर भी चरक संहिता में विभिन्न लेपों का वर्णन किया है । इनको निम्नलिखित ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है ।

♣ **दाहहर लेप:-** तिल, चिरौंजी, मुलेठी, बिस मूल, बेतस को समान मात्रा में लेकर बकरी के दूध में पीसकर लेप लगाने से दाह व लालिमा नष्ट होती है ।

(चि० 29/133)

♣ **तृष्णानाशक लेप :-** शीतलजल और चंदन से आर्द्र स्तन, हथेली और शरीर से युक्त तथा रेशमी वस्त्र धारण करने वाली प्रिया का संस्पर्श तृष्णा रोग को दूर करता है ।

(चि० 22/38)

♣ **शीतनाशक लेप :-** शैलेय, एला, अगर, कूठ, चण्डा, तगर, त्वक्, सुरदारु, दूर्वा यवासमूल, कुश, काश का लेप लगाने से शीघ्र ही शीत का नाश होता है । शिरीष तथा सिन्धुवार का लेप करने से विष की शान्ति होती है ।

(सू० 2/28)

♣ **कीटविष हर लेप :-** चिकित्सा शोधन के उपरान्त, कीटों के दंश पर क्षीरीवृक्ष की त्वचा का लेप लाभकर है । मोती को पीसकर लेप करने से शोथ, दाह, पीड़ा व ज्वर की शान्ति होती है ।

(चि० 23/199)

♣ **अर्शोघ्न लेप :-**

(i) शिरीष का बीज, कूठ, पीपल, सैन्धव, गुड़, अर्कक्षीर, त्रिफला इन सबको मिलाकर इनका लेप अर्श में लाभकर है ।

(चि० 14/53)

(ii) हरिद्रा, सुधा क्षीर मिलाकर लेप करना चाहिए । गोपित्त पिष्टा में पिप्पली व हरिद्रा का लेप करना चाहिए ।

(चि० 14/52)

(iii) दन्ती, श्यामा, अमृतासंग, पारावत शकृद, गुड़ इन सबको पीसकर अर्श के मस्सों पर लेप करना चाहिए ।

(चि० 14/55)

(vi) पीपल, चित्रकमूल, श्यामा, सुराकिट्ट, मदनफल, कुक्कुट विष्टा, हरिद्रा, गुड़ एक साथ पीसकर अर्श के मस्सों पर लेप करना चाहिए ।

(चि० 14/54)

♣ **वातरक्त हर लेप**

(i) वातरक्त में बकरी के दूध में तीसी के बीज को पीसकर या बकरी के दुग्ध से एरण्ड के गूदे को पीसकर या बकरी के दुग्ध से सौंफ को पीसकर लेप लगाना चाहिए

(चि० 29/140)

(ii) सौंफ, सोया, मुलेठी, मधूक, बला, प्रियाल, कशेरुक, विदारीकंद व मिश्री की समान मात्रा को चूर्ण करके घृत मिलाकर लेप के रूप में वातरक्त में प्रयोग करना चाहिए ।

(सू० 3/21)

(iii) रास्ना, गुडूची, मधुक, बला और महाबला, जीवक, ऋषभक् की समान मात्रा को दुग्ध के साथ घृत पाक करके मोम मिलाकर लेप करने से वातरक्त की पीड़ा में लाभ होता है ।

(सू० 3/22)

♣ **वात विकार नाशक लेप :-** कोल, कुलत्थ, देवदारु, रास्ना, माष, अलसी तैल फल, कूठ, वचा, सौंफ व जौ का आटा समान मात्रा में लेकर चूर्ण बनाकर कांजी से पीसकर उष्ण लेप करने से वात विकार नष्ट होते हैं ।

(सू० 3/20)

♣ **उरुस्तम्भ :-** वत्सक, सुरस, कूठ, गन्धा, तुम्बरु, शिग्रु, सहजन की छाल, वनतुलसी समान मात्रा में लेकर दही के साथ पीसकर उरुस्तम्भ में लेप करें ।

(सू० 3/25)

*दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज, जालन्धर ** आयुर्वेदिक कालेज, खड़का, होशियारपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



♣ **अनंतवातहर लेप :-** धान का मूल, ईख का मूल, जवासा का मूल, गुन्द्रा का मूल, नलद, कुश मूल, कुचंदन, शैवल, कालानुसरिवा, गन्धतृण इन सब को पानी के साथ पीसकर लेप करना चाहिए ।

♣ **शिरपार्श्वशूलहर लेप :-** सौंफ, मुलेठी, कूठ, तगर, रक्तचन्दन इन द्रव्यों को कूटकर जल से पीसकर घृत में मिलाकर गर्म करके सिर, पार्श्व और अंस प्रदेश में लेप करने से शिरशूल, पार्श्वशूल अंसशूल दूर होता है ।

♣ **व्रणदाहहर लेप**

(i) व्रण में होने वाले दाह और शूल की शांति के लिए घृत के साथ मुलेठी और काले तिल से युक्त सुखोष्ण यव के आटे का लेप लगाना चाहिए ।

(ii) जो दाहयुक्त वेदना वाले वातप्रधान व्रण होते हैं, उनमें तीसी और तिल को दुग्ध में भिगोंकर उसी दुग्ध से पीसकर कल्क बनाकर लेप लगायें ।

♣ **दुष्ट व्रण रोपक लेप :-** प्रपौण्डरीक, जीवन्ती, गोजिह्वा, धातकी, बला, काला तिल इन सबको समान भाग में लेकर कल्क बनाकर गोघृत मिलाकर शुद्ध व्रण पर लेप लगाने से व्रण भर जाता है ।

♣ **कण्डू लेप :-** कण्डू रोग में पाठा, रसौत, शहद, कुलत्थ आदि औषधियों से बनाई उष्ण कांजी का लेप तथा इनसे संस्कृत तैल का प्रयोग करना चाहिए । कण्डूयुक्त व्रण हो तो मुलेठी, क्षीर काकोली, जीवकगण से सिद्ध तेल का प्रयोग करना चाहिए ।

♣ **स्तन्यशोधक लेप**

(i) स्त्री के दूध में फेन आता हो तो रसोंत, सोठ, देवदारु, बेल के मूल का छिलका और प्रियंगु का फल लेकर पीसकर स्तनों के ऊपर लेप करने से दूध का शोधन होता है ।

(चि० 30/266)

(ii) धात्री के स्तनों के ऊपर मुनक्का और मुलेठी के कल्क का लेप करें । जब लेप सूख जाए तो गर्म जल से धोकर बार-बार स्तनों [illegible] निकालें ।

(चि० 3[illegible]

(iii) धात्री के स्तनों के ऊपर अनन्तमूल खस, [illegible] श्लेष्मांतक की छाल, लाल चन्दन, मुलेठी का लेप लगाएं । जब लेप सूख जाए [illegible] से धोकर दूध को निकाल देना चाहिए ।

(चि० 30/2[illegible]

(iv) स्तनों पर बिदारीकन्द, बेल के मूल का छि[illegible] और मुलेठी के कल्क का लेप लगाना चाहि[illegible]

(चि० 30/2[illegible]

♣ **कुष्ठनाशक लेप**

(i) बड़ी इलाचयी, कूठ, दारुहरिद्रा, सौंफ, चित्र[illegible] वायविडंग, रसोत और हरड़ समान मा[illegible] लेकर जल से घिसकर लेप करना चाहिए

(चि० 7/[illegible]

(ii) चित्रक, शोभाञ्जन, गुडूची, अपामार्ग, देव[illegible] खदिर, धव, श्यामा, दन्ती, द्रवन्ती, लाक्ष[illegible] अञ्ज, ऐला, पुनर्नवा, लाक्षा, रसोंत, पुन[illegible] दधि मण्ड से पीसकर लेप करने से वात [illegible] कफ जन्य कुष्ठ रोग नष्ट होता है ।

(चि० 7/1.24-1[illegible]

(iii) कूठ, करंज का बीज, कव का बीज, [illegible] नामक रसोंत, कैथ का गूदा, लोध्र को अ[illegible] पीस कर लेप करने से कुष्ठ रोग नष्ट होत[illegible]

(चि० [illegible]

(iv) जटामांसी, मरिच, सैंधा नमक, हल्दी, [illegible] सुधा, गुहाद, पित्त, पलाश का क्षार गोमू[illegible] पीसकर लेप करने से कुष्ठ रोग का नाश [illegible] है ।

(चि० [illegible]

(v) जल, कूठ, अगर, नागकेशर, तेजपत्र, कंकोल, [illegible] लाल चंदन, मृणाल इन सबको भागोंत[illegible] पीसकर लेप लगाने से पित्त और क[illegible]



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कुष्ठ रोग नष्ट हो जाता है ।

(चि० 7/130)

(vi) कनेर के मूल का कल्क, इन्द्रयव और करञ्ज के फल का कल्क, दारुहल्दी की छाल का कल्क- इन तीन योगों में अलग-अलग चमेली की पत्ती का कल्क मिलाकर लेप करने पर कुष्ठ रोग में अवश्य लाभ होता है ।

(चि० 7/94)

♣ **मण्डलकुष्ठहर लेप**

(i) कदली, पलाश, पाटला, निचुल के स्वच्छ क्षार जल को माष की सिद्ध में पिष्ट को पकाने से, किण्व के निर्माण में जल के स्थान पर लेना चाहिए । माष और चावल के आटे को केला आदि के स्वच्छ क्षार जल में सिद्ध करके रखा जाना चाहिए। जब उससे मेदक तैयार हो जाए तो उसके किण्व का लेप करना कुष्ठ रोग में उत्तम होता है और लेप लगाकर धूप में बैठने से कृमि एवं मण्डल कुष्ठ नष्ट हो जाता है ।

(चि० 7/89-90)

(ii) चित्रक, बड़ी इलायची, कुन्दरू, अड़ूसा की पत्ती, निशोथ की पत्ती, मदार की पत्ती व सोंठ समान भाग में लेकर चूर्ण बनाकर गोमूत्र से छानकर बनाए गए पलाश के क्षार में आठ दिन तक भावना देने के बाद इस लेप का प्रयोग धूप में बैठकर करने से मण्डल कुष्ठ शीघ्र ही फूट जाता है ।

(चि० 7/85-86)

(iii) पूतिकरंज, देवदारु, जटिला, मुद्गपर्णी और काकनासा के समान भाग में कपड़छन चूर्ण में पकाया हुआ मद्य मधु मिलाकर लेप लगाने से मण्डल कुष्ठ का नाश करने में यह सिद्ध योग है ।

(चि० 7/123)

♣ **सिध्मकुष्ठ लेप**

(i) चक्रवड़ का बीज, सर्जरस, मूली का बीज अलग-अलग कांजी से पीसकर उबटन लगाने से सिध्म कुष्ठ नष्ट होता है ।

(चि० 7/127)

(ii) कूठ, तेजपत्ता, मरिच, मैनशिल, कासीस का समान मात्रा में लेकर कपड़छन चूर्ण को सरसों के तेल में फेंटकर सात दिन तक ताम्र के पत्र में रखा रहने दें । बाद में सात दिन तक सिध्म कुष्ठ पर लेप करके धूप में बैठने से सिध्म कुष्ठ नष्ट हो जाता है ।

(चि० 7/117)

♣ **श्वित्रहर लेप :-** लकुची का बीज, लाख, गोपित्त, दोनों अञ्जन, पीपल और काल लेह का चूर्ण पीसकर लेप करने से किलास (श्वेत कुष्ठ) रोग दूर होता है ।

(चि० 7/171)

♣ **दद्रुनाशक लेप :-** चकवड़, कूठ, सेंधानमक, सरसों, वायविडंग, सौंवीर से पीसकर लेप करने से कृमि, कुष्ठ, मण्डल और दद्रु कुष्ठ शांत होते हैं ।

(चि० 7/126)

♣ **विसर्प रोगहर लेप**

(i) कालीय, मुलेठी, नागकेशर, केवटी मोथा, चन्दन, पद्मकाठ, बड़ी इलायची, उशीर, फलिनी, प्रियंगु, समान भाग में पीसकर घृत मिलाकर विसर्प रोग से आक्रान्त प्रदेश पर लेप करना चाहिए ।

(चि० 21/74)

(ii) नलद, हरेणु, लोध्र, मुलेठी, पद्माख, हरेणुत्वक, राल को समान भाग में लेकर पीसकर कल्क बना लें । उस कल्क को गो घृत में मिलाकर विसर्प रोग आक्रान्त प्रदेश पर प्रलेप करें ।

(चि० 21/77)

(iii) यव का आटा, मुलेठी का चूर्ण समान मात्रा में घृत के साथ पीसकर विसर्प से आक्रान्त प्रदेश पर प्रलेप करें, अथवा हरेणु या बड़ी मटर का आटा अथवा मसूर का आटा, मूंग का आटा अथवा सफेद चावल का आटा इनको घृत के



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



साथ पीसकर विसर्पाक्रान्त अंग पर लेप लगाएं।

(चि० 21/81)

(iv) बला, कमल का कन्द, शतावर, अगर, चंदन- इन्हें समान भाग में पीसकर घृत मिलाकर अथवा कमल नाल कमाल का कन्द समान भाग में पीसकर लेप करें।

(चि० 21/79)

(v) जौ के सत्तू को जल में घोलकर गोघृत मिलाकर अथवा मुलेठी, शतावर, जौ का सत्तू एकत्र समान भाग में पीसकर घृत मिलाकर विसर्प से आक्रान्त प्रदेश पर प्रलेप करें।

(चि० 21/78)

♣ **शोथहर लेप**

(i) अडूसा, आक् करंज, सहजन, गम्भारी, वनतुलसी के पत्तों से विधि पूर्वक बनाए गए सुखोष्ण क्वाथ से स्नान करना चाहिए। जब स्नान करने से शरीर में स्वेद निकलने लगे तो सूर्य की किरणों से तप्त उष्ण जल से स्नान करके अगर आदि सुगन्धित द्रव्यों का लेप लगाना चाहिए।

(चि० 12/67.)

(ii) रास्ना, वृषार्क, त्रिफला, वायविडंग, सहजन की छाल, मूषाकर्णी, नीम की पत्ती, तुसली की पत्ती, व्याघ्रनख, नीलदूर्वा, सुवर्चला व कुड़े लेप लगाने से शोथ नष्ट हो जाता है।

(चि० 12/7

(iii) सभी प्रकार के शोथ में बहेड़े के फल के मज्जा का लेप करने से शोथ में होने वाले और वेदना की शांन्ति होती है तथा यदि में पिड़काएं उत्पन्न हो गयी हों तो मुलेठी मोथा, कैंथ की पत्ती, लाल चंदन इन्हें मात्रा में लेकर कल्क बनाकर लेप करें।

(चि० 12/7

(iv) कफज शोथ में पीपर, बालू, पुराने तिल खली, सहजन की छाल, तीसी को समान में लेकर पीसकर कफज शोथ में लेप चाहिए। कुलथी और सोठ से विधिपूर्वक किए हुए क्वाथ में मूत्र मिलाकर परिषेक चाहिए।

(चि० 12/

(v) काकमाची, बृहती, कूठ, पुनर्नवा, चित्रक, इन सबको लगाना चाहिए। उबटन लगाने बाद मूली के क्वाथ से स्नान करना चाहि इससे सभी प्रकार के शोथ नष्ट हो जाते हैं

(चि० 12/7

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित
बैद्यनाथ
रुमार्थो गोल्ड
पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा
रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# CRITICAL REVIEW AND AYURVEDIC APPROACH OF END STAGE RENAL DISEASE

*Dr. Nishant Shukla **Dr. C.P. Shukla

## INTRODUCTION

ESRD is becoming most common disease and a major cause of death in India. In the modern science, there is no treatment except dialysis and then renal transplant. Both these treatments are not always successful. The patient, even after transplant has to take medicines and remain careful throughout his life. In a fair majority of cases, the body may not accept the other man's kidney and the patient, even after spending a good amout of money dies. Moreover, both these treatments are beyond the reach of common person-both middle and lower class. The third disastrous scandal is that the doctors become dishonest for few chips of money. Hence, it is the duty of an Ayurvedic physician to understand the disease according to the modern science and Ayurveda both and treat accordingly.

Ayurvedic scholars believe that there is no description of this disease in Ayurvedic texts which is not correct. The description of Mutra-vaha srotas, its pathological changes, signs and symptoms and the diseases of these srotas have been elaborately described. Functions of formation of urine take place through Mutra-vaha srotas. Thus one has to understand the physiology and pathology of these srotas, if he wants to find out the diagnosis and treatment of renal failure according to Ayurveda. Mutra-vaha srotas are those channels through which Mutra (urine) is being separated from blood.

## FORMATION OF URINE ACCORDING TO AYURVEDA

Vrikka or Kidneys, according to Ayurveda are (Mools) of medo vaha srotas and not with formation of urine. It has some connection with medas (adipose tissue) and fat metabolism. Present knowledge is not able to clarify and explain this fact, but in future, it may be proved; the formation of urine takes place in 'Pakwashaya'. Pakwashaya should not be understood as large intestine only. While describing kostha-angas (organs in the trunk). Carak has mentioned (1) Amashaya (2) Pakwashaya (3) Sthoola antra and (4) Sukshma- antra (5) Uttargude and (6) Adhoguda separately. Thus, Pakwashaya and antra are two different organs. In the same way, while describing diseases in 'Rogaanika Viman; (C.V. 7). Carak has mentioned two types of diseases (1) Amashaya-samuttha (originating from Amashaya). and (2) Pakwashaya samuttha (originating from Pakwashaya). Thus, Pakwashaya is a separate term used for physiological and pathological terms. According to my interpretation (1) Amashaya means that organ where the nutrient material has to undergo changes i.e. digestion and metabolism and (2) Pakwashaya means the organ where the material that has undergone physiogical change and end product has formed. Thus, for urinary apparatus Pakwasaya are nephrones and tubules of Kidney i.e. mutravaha srotas. So urine formation according to Sushruta takes place in the following way. The mutra-vaha nadies (urinary tubules) situated in Pakwashaya, dribble urine constantly like rivers to the sea. These tubules are so tiny (sukshma) that their mouths (mukha-funnel) can not be seen by open eyes. They are millions in numbers. The urine brought from Amashaya is poured and is collected in Basti (urinary bladder) by the process of 'Nishyanda' (dribbling, cozing etc) day and night. whether awake or slept. When the bladder is full, urinary sensation takes place and new urine is formed. From this, it is clear that nephrones and tubules are the organs for formation of urine. Thus pakwashaya does not mean only large intestines but those organs where end product of digestion & metabolism are formed,

* Lecturer, Rognidan, Gulab Kunverba Ayurveda Mahavidyalaya, Jamnagar
**Retd. Dean and Professor (Medicine), I.P.G.T. & R., Jamnagar

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



and collected and exerted out. There are 3 types of waste matter : - (1) Solid or (2) Semisolid and (3) Liquid and geseous. The liquid waste matter is excreted through urine and perspiration. Non-excretion of waste matter and sanchaya (accumulation of waste matter in the body especially Rasa (Plasma) is called Ama-male). Blood urea and creatinine accumulation are possibly called as Ama. Thus, End Stage Renal - Disease is a disease due to Amadosha.

**FUNCTIONS OF URINE**

(1) Vikledakrit :- this word means to excrete out the liquid waste matter and to make the body free from waste matter i.e. Purification of body. Some translate 'vikled' as specific (vishisht) mala. Thus stools, urine, perspiration are useful for purification of body. If any of this is not properly excreted they accumulate in the body and there is likelihood of disease. Carak says there are two types of body dhatus (Tissues)-(I) Prasad bhoota (useful for the body) and (2) Mala bhoot (waste matter). Mala bhoota dhatus are vitiating the body. They are Bahirmukh (ready for excretion). The metabolic substances like urea or creatinine etc. is useful for maintaining the health if they are normal. However, any increase of these substance and retention in the body are harmful.

**TYPES OF VITIATION OF SROTAS**

In general all srotas undergo four types of Vikriti [Pathological changes viz. Atipravitti (excessive flow)]. Sanga (obstruction in flow). Sira-granthi (growths benign or malignant, cystic or hard). Vimarga-gaman (flow of other direction then useful) i.e. extravasations. Kidney disorders also undergo any of the above changes. There may be one type of Vikriti or may be more then one type. In the diseases of mutra-vaha srotas, the following symptoms may be present (1) Atisrista (excessive flow) (2) atibaddha (less quantity or anurea). (3) Prakupita (with other chemical or microscopic substance like albumin, sugar, puscells, RB.c., casts, bacteria etc.) (4) Alpalpam (frequent and small quantity of urine) and Abhikshnam (frequency with small quantity) (5) Bahala (concentrated) (7) Sashula (pain micturition). Above symptoms are found in diseases of urinary system out of them C.R.F. one in which at times there may be very less quantity of urine output and in some there may be frequency of urine; mostly the urine concentrated and Prakupita i.e. Albumin and ca are present. In urine some pus cells or R.B.C. also found. Thus E.S.R.D. is a disease of Mutra vaha srotas.

The description of Mutra-vaha srotas dusti is given in many diseases but most importa is, as described previously is in Chhardi. In the description, of Asadhya Chhardi (Incurable vomiting) Charak says when Purisha vaha srotas (Excretory system) mutra-vaha srotas (urinary system). Swed-vaha srotas (Channels of perspiration) and Amboo vaha srotas (Water balancing system) are obstructed by Vayu the provoked doshas (Non excreted material) are spreading or flowing in the whole body. That when they come to kostha (Stomach), they produce vomiting, with the specific odour or colour as that of urine or fecal matter. They also produce thirst, breathlessness and Hiccough also. The vomiting is dusta (vitiated) and ati-vega (sudden). This type of vomiting is incurable. (3) (Urine) This vivid description of E.S.R.D. in Ayurved.

**TREATMENT :- LINE OF TREATMENT**

It may be understood clearly that the disease is Asadhya (Incurable). Still as Acharyas have advised treatment should be given up to the time the patient has Prana (life) even in the throat. By the grace of God, the patient, even with Arishta (signs nearing death) the patient may survive. The second reason is Ayurved has got great scope in treatment. Explain the prognosis clearly and then a physician should start treatment. It is likely the patient may survive. The chances of survival 50% remaining patient die.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Patients that have undergone dialysis do not respond well to treatment as patients can not adjust to the sudden rise in blood urea and creatinine. So dialysis is to be done at short intervals repeatedly. The only treatment after dialysis is renal transplant.

**RASAYAN**

Rasayan means that line of treatment, which rejuvenate the cells of body, increase resistance and immunity and also should be useful on the Mutra-vaha srotas dusti i.e. cure of disease. There are many Rasayana drugs of vegetables as well as Rasa (mercurial) origin. Generally, Rasayana from vegetable origin should be selected to avoid accumulation or damage to the liver or kidney.

Though there is no harm in using Rasa preparation such drugs, which act as Rasayana as well as on srotas-in this case, on mutra-vaha srotas. Such drugs are (1) Goshura (Tributes territories), (2) Shtavari (Asparagus recomposes), (3) Punarnava (Boerhavia diffura), (4) Yastimadhua (Glycerrhiza glabra), etc. In Rasa-Aushadhis (1) Chandrakala Rasa (2) Vasantkusumakara Rasa (3) Yogaraj (carak chi.-6) etc can be used safely.

Thus, my first prescription is milk processed (1) with Shatavari and Gokshura one dose in the early morning. (2) As the disease is in Mutra-vaha srotas, Mala mutra and sweda should be properly excreted. For these mild diuretics like Punarnava, Trina-Panchmool etc. should be prescribed. For these mild diuretics, generally Vasamoola quath and Punarnavadi quath are used.

Even Ambu vaha srotas are diseased; so (1) water processed with Gokshur should be given whenever the patient is thirsty. Over and above, there is likelihood of elecolyte imbalance; so Javkshar with sugar should be given.

Primary disease if any should be treated. Some patients are suffering from chhardi (vomiting) in the beginning. Vomiting may be a constant symptom. In such cases Chhadi ripu vati should be given 3 times a day. In the same way. Shankha bhasma may be given with lemon juice and ardraka swarasha and honey repeatedly after food.

Some patients have fever in the beginning. Fever should be treated with Sudarshan Fant or tablets. Some patients suffer from Diabetes mellitus. For them Darvadi quath should be given. A question arises as to the relation or complication of Diabetes mellitus. Carak, in Pramehachikitsa says, if Aptarpana is given while treating Prameha may cause Gulma (pain), Kshaya (Tuberculosis) Mehan-Basti shool (Dysueria or D.T.I.) Mutragraha suppression or urine Le. renal failure.IO. In such cases Premeha should be treated along with renal failure. The second thought also should be considered Premeha, according to Ayurved, is a disease of Medo-dusti: Vrika is supporter of medas. Thus very likely medodusti might be responsible for renal failure in Madhumeha (Diabetes mellitus). In Diabetes, I restrict cure totally and milk and milk products are not restricted due to its protein contents. But Ayurved believes that curd, milk and milk: products are also causes of D.M. Pathya-

**Apathya (does and don'ts) :**

Foods avoid those food stuffs, which may damage kidney functions. They are acids, Red chilies, oils. They are likely to damage kidneys and mutra-vaha srotas. Salt should be avoided in cases of Edema but if edema is not there, small amount of salt can be given. Light easily digestible food can be given.

**Yoga :-** Dhyana Yoga (meditation) is very necessary as it controls blood pressure. Tranquilizing of mind and positive thinking are very necessary in all psychosomatic disorder.

**Exercise :-** mild moderate indoor and outdoor exercises can be done. Over work, tension etc. should be avoided.



CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



This much care should be taken. The treatment lasts for about a year or so. Here with some other cases treated successfully are placed.

**Case No. 1:**

**Acute Nephritis:** A boy aged of ---- yrs. The symptoms were (1) Pitting edema all over the body especially round the eyes. (2) Low grade fever (3) oligourea (4) constipation. His urine exam contained Albumin; Pus cells many, RBC caste. Blood exam. hemoglobin. 9.0 grams-----% T.LC., P 70% Blood urea, creatinine normal, He was diagnosed as acute nephritis and according to Ayurved 'Ama Jwara'.

The following treatment was given - In the beginning, Langhana was given. He was given only mung (green gram) soup, well rinsed, no mung grains or rice qraeli for 3-4 days durig fever; he was given boiled water to drink. Tablet Sudarshan vati and Chandrakala Rasa 4 times a day with warm water and a quath prepared from Gokshura (Teribulus terrestris), and Kantakari (C.Chi. 3-182.) When the fever was normal he was, in addition given. (1) Punarnavadi quath with Yavakshara for about 60r 7 months over and above Rasayana Churna containing Guduchi (Tinospora cordifolia), Gokshura (Tributus terrestris) and Amalaki (Emblica), Tablets prepared. 1 tablet Gokshuradi guggulu and Chandrakala Rasa were given.

He was suffering from recurrent acute or sub-acute Nephritis for 6 yrs. After this treatment, he never suffered since last 6 yrs. He is at present absolutely normal.

Such acute or sub-acute nephritis cases come for treatment. Such 5-6 patients have been relieved markedly C.R.F. cases. A priest of Vaishnava Sampradaya, aged 38 yrs. was diagnosed in a kidney hospital at Nadiad (Gujarat) as ch-renal failure in 1988. Investigations also pointed to E.S.R.D. His previous history suggests Ch.amebic colitis. Life irregular regarding time of food and sleep also. His food items contained comparatively more of sweets and ghee; more less he was sedentary. There was no fever but 4 times defecation with griping pain, some loose motion, debility and anamia. He was trea with strict restriction in food. Salt, Chilies substance, ghee, oil were totally stopped. He given only milk for a month. Then sansarjan was started. He was give rice and milk; then without ghee. This type of restricted diet for six months. Thereafter when urea, creat came to normal, he has given small amount salt. Then gradually full diet was giv Investigations were periodically done for abo yrs. nowadays he is investigated every yea reports from 1990 have remained normal.

**Treatment was as under :-**

(1) Shatavary and Gokshur siddha milk morning.
(2) Wet Ginger (ardraka) juice twice be meals
(3) Vasant Kusumakar Rasa 1 tablet twice
(4) Chandraprabha Vati and Punarnava Ma 3 times.
(5) Punarnavastak quath with Yavaksha times.

**Case No. 2**

A young aged 18 yrs. From Bhuj (Kut was diagnosed as C.RF. at kidney hospita Nadiad and Ahmedabad. He was given the a treatment for about 3 yrs. Periodical tests crestinine Hb. W.B.C., T.C., D.C. and urine were carried out. He is completely cured now 5 yrs. All reports are normal. Sub acute

**Case No. 3** Nephritis :-

A young man aged 45 yrs. Bhavnagar was diagnosed as sub acute neph He had also pleuricy with effulion. He recurrent attacks of edema and tempera cough with expectoration on examination was loaded with albumin and granular cast. urea and creatinine were slightly raised normal. E.S.R. was high, Hb. Low. He was



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



the following treat ment:-

In the beginning Jawargna treatment i.e. (1) Abhayadi quath with Pippali (long peppar) 3 times a day/ (2) Sudarshana tablet with chandrakala Rasa 4 times a day with warm water. (3) When fever was there no food but langana, when fever subsides small amount of double boiled rice and Ardraka pieces. Milk allowed for edema salt was tatally restricted. Then gradually food was given. Kantakari (Solanum surattanse) and Gokshura (c.Chi.3) quath or power was given. When edema subsided, he was given the treatment for rejuvination i.e. Rasayana Churna + Shatavari + Yastimadhu + Praval pishti + Sarpaghandha power with honey and Sudarshana Tablet Gokshuradi guggulu and Chandrakala Rasa 3 times a day. The treament is still continued. After about a year's treatment his urine became albumin and cast free.

Still he has no albumin or cast in urine Hb. % is 13 grams, W.B.C. 7000 D.C. normal, urea normal since last 1 year. He is under treatment and periodical check up and he takes all routine food, work and exercies.

**Case No. 4** Diabetic nepropathy :

A patient of diabetes mellitus was suffering from long standing D.M. Blood sugar was under control with modern treatment. Sill however he suffered from renal failure. According to Ayurved, renal may be as a result of 'Apatarpan'. The term Apatarpan should be explained with nutritional research data. The present method of nutritional research, according to me is not proper. A human being has speical sense of taste. He has his own likes and dislikes. He has his own 'Pratytama niyata-Prakriti' i.e. his own constitution. Thus the terms' Apatarpan and Santarpana' require further clarification.

The treatment given was as under :- Darvi (Berbers arietta) (2) Surahwak (Cadres Decherd) (3) Trifle (Three microbalan) and (4) Must (Ciphers retouches) quath was given twice in addition to other treatments. Lashuna (Garlic) 3 pearls row twice before meals. Other treatment for renal failure was given. Qut of two cases one of the patient survived and the other died.

Thus, if an Ayurvedic physician tries to understand the disease with an Ayurvedic approach and treats properly, the previous diseases and present symptoms, there may be a possibility to cure the patients of E.S.R.D. Thus Ayurved can contribute to science and serve the ailing humanity.

बैद्यनाथ
प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं । इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है । हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है । इकतरा, तिजारी, चौथिया, फंसली, जूड़ी-पारी का बुखार, बरवट और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं । मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है । बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Glimpses of Plant Wealth and its Medicinal Uses in Uttaranchal State

* Dr. Anil Kumar Dhiman, *M.A., M.Sc., Ph.D., Ayurved Ratn*

## INTRODUCTION

The present state of Uttaranchal was earlier a part of the United Province of Agra and Awadh which came into existence in 1902. In 1935, the name of the state was shortened to the United Province. In January 1950, the United Province was renamed, as Uttar Pradesh and Uttaranchal remained a part of Uttar Pradesh before it came into being on 09 November 2000, the 27th state of India. It is a green pearl state nested in the western Himalayan mountain range, occupying an area of 3.47 m hectare. Of which 64.8 percent is closed as forest. The state is situated between 28°44' to 31°28' north latitudes and 77°35' to 81°01' east longitudes. It finds mention in the ancient Hindu scriptures as *Kedarkhand, Manaskhand* and *Himavant*. The *Kushanas, Kunindas, Kanishka, Samudra Gupta,* the *Pauravas, Katuris, Palas,* the *Chandras* and *Pawaras* and the Britishers have ruled it in turns. It is often called as *Devbhumi,* the land of the Gods because of its various holy places and abundant shrines. The hilly regions of Uttaranchal offer unspoilt landscapes to the tourist-pilgrims. *Sankaracharya* also had been enlightened with the *Divya, jyoti,* the divine light in Uttaranchal. Various authors had completed their different works only sitting in the valleys of this state. Sacredness of various mountains of Uttaranchal, highness of its mountain peaks and the purified water of its various glaciers have been the inspiring sources of becoming idols of many of the citizens in India.

## Natural Divisions

The state is more known due to its vast potentiality of natural resources, which presents a wonderful picture of own physical, cultural and spiritual features. The state is divided into following four natural divisions:

(i) Main Himalayan region.
(ii) Central Himalayan region.
(iii) Siwaliks and Duns region
(iv) Tarai-Bhaba region

***Main Himalayan Region :-*** The major portion of this region remains covered with snow throughout the major part of the year. It is situated between 4800-6000 m and is spreaded over 15-20 km wide area. Nanda Devi is the highest peak of this region, which is about 7817 m high above sea level. Bandarpunch, Gangotri, Kedarnath, Dunagiri, Trisul and Nanda Kot etc. are the other peaks above 6000 m, which remain covered with snow. The Valley of Flowers also exists here. As far as vegetational aspect is concerned, this area is not of much importance as only small meadows or alpine pastures can be seen here. Summers of the seasons are very pleasant while the other seasons are not as good.

***Central - Himalayas :*** This series lies to the south of Himalayas and is about 75 km wide. Udham Singh Nagar of Kumaon, Garhwal Terai, Garhwal and nothrern parts of Nainital district are included in this region. The mountains of this series are spreaded from west to east parellel to main - Himalayan region and are usually ranges between 3000 - 3500 m above sea level. There exists various rivers between 500 - 1200 m. In Nainital, various *tals* appear in 25 km long and 5 km wide belt, which include Naini, Naukucha, Sat tal, Punatal, Khurpatal, Sukhatal, Saria tal and Bhimtal etc. During winter, there is extreme cold whereas, maximum rain can be seen during summers. The summer season of this region is very pleasant and tourists came here in pleasantness during this season. This is the wealthiest area as far as the economic – resources and forest-resources are concerned.

***Siwalik and Duns Region :-*** This region is situated in the south of Central - Himalayas. It is also called as Outer-Himalayas. It is spanned between 600-1500 m and includes southern part of Udham Singh Nagar, middle of Nainital and

* Information Scientist, Gurukul Kangri University, Haridwar - 249 404 (UA)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Dehradun district. The Siwalik series are called as the foothills of Himalayas. In between the series of mountains, there exist longitudinal valleys, which are called 'Duns'. Of these, 24–32 km wide and about 350-750 m high is an important Dun, which is called as Dehradun, the capital of the state. This is situated about 72 km away in the north-west, where the river Yamuna enters into the plains. The others valleys are Kota Dun, Patli Dun, Kohri Dun, and Chowkhamba Duns etc. The Siwalik ranges are disturbed in between at various places by different rivers. The river Ganga interferes the Siwaliks at Haridwar from where plains of the state are started.

***Tarai-Bhabar Region :*** This area constitutes of Udham Singh Nagar and Haridwar districts and is divided into the Tarai-Bhabar belt and the plains of Haridwar. Udham Singh Nagar constitutes the Tarai-Bhabar belt of the state, which is a narrow belt of sandy oil. Sugar cane is the major crop of this area besides rice, wheat, onion and potato etc. Its other sub-regions are the plains of Haridwar district. The Haridwar is also known as the Entrance Gate or *Pravesh Dwar* of the state, which is situated about 300 km below Gangotri, the place of origin of holy river Ganga. This area is the only plain area in the state in its true sense, which separates the state from rest of the hilly parts.

**Plant Wealth and its Medicinal Uses**

Agro-climatically, it occupies a somewhat intermediate position between comparatively drier Jammu & Kashmir and Himachal Pradesh and Wetter Nepal. The feature also exists within the state in a gradual increase in precipitation as one moves from the Jaunsar hills in the west to Pithoragarh in the Kumaon hills. Though various species of the plants are found in the state but according to an estimate, about 613 plant species of medicinal importance are reported from the inner and middle Himalayan areas and 38 from the external Himalayas. Some of the common plants of medicinal importance are depicted here

1. *Akhrot :* It is *Juglans regia,* which belongs t family Juglandaceae. Its trees are found i between 1200-2700 m. Its bark is used a *Datun,* the natural toothbrushes. Besides, it fruit-shells are used as *meva,* the dry fruits
2. *Arjuna :* It is a tree of family Combretaceae which is known to found in the plains of th state i.e., in the Siwalik forests and tarai regio of Udham Singh Nagar. The bark of this plar is used much as a tonic in heart diseases.
3. *Ativisha* or *Atish :* Botanically, it is known a *Acontium heterphyllum.* It is a herbaceou plant of family Ranunculaceae, which is foun at the elevation between 2700-3800 m. Locall its tubers are given to children with honey i cough and fevers. Externally, a paste of it root-paste is applied over affected parts gout.
4. *Aswagandha :* It is botanically called a *Withania somnifera,* which falls under fami Solanceae. It is known to found up to 900 heights. Its root-powder is used as boo strengthening. Now a days, its root-powde after filling in gelatin capsules are sold b various trade name, which are advised to b taken as antidepressative to relieve stress ar mental diseases.
5. *Anvala :* It is a tree of family Euphorbiacea which is found up to 900 m in the stat Botanically it is known as *Emblica officinali* Its fruits are considered a good source Vitamin C and as such are eaten widely. I fruit-paste is applied in case of headache ar urinary disturbances. Its fruits also form th third ingredient of triphala, which is used as medicine in various diseases, much constipation.
6. *Katphal :* It is *Myrica nagi,* which belongs family Myricaceae. Its trees are found between 1500-2100 m in the state. Its frui are eaten and the bark is used as *Naswa*



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Besides, the pessaries made of its bark are used to promote menses.

7. *Kingor* or *Daruharidra* : It is botanically identified as *Berberis aristata*, which belongs to family Berberidaceae. It is found at the elevation of 900-3000 m. The chutney made from its flowers is eaten much by the local inhabitants. *Rasaut* is prepared from the decoction of its roots, which is applied in the eye as collyrium in conjunctivitis and redness of the eyes.

8. *Talispatra* : It is *Taxus baccata*, which belongs to family Taxaceae. It is found in Bhagirathi valley, Rithal, Daiara, Jamuna valley, Devvan, Chakrata and Kanatal etc. Its bark is used in tea preparations and asthma, cough and epilepsy. It leaves are sold in the market under the trade name *Talis*.

9. *Tumbaru* : It is also known as *Tejbal* and is botanically identified as *Zanthoxylum armatum*. It belongs to family Rutaceae and is found between 900 - 2400 m. Its twigs are used as natural toothbrush to strengthen the teeth locally. Its leaves and fruits are also chewed for mouthwash. In pyrohhoea, its seeds along with the fruit rinds of *Akhrot (Juglans regia)* are ground to make a powder, which is used as dentrifice. Besides its seeds are also used in preparing the *Dantamanjana* commercially.

10. *Devdaru* : It is botanically known as *Cedrus deodara*. It belongs to family Pinaceae and is reported from higher altitudes between 2700-3600 m in the state. An oil prepared from its wood-rasping is used in cases of gout and paralysis.

11. *Phalasia* : It is a plant which belongs to family Tiliaceae and is botanically known as *Grewia asiatica*. Its plants are found in the tarai region of Siwalik range. Its fruits are eaten locally. Besides, its bark is used in gout and the leaf-paste is applied over sores and wounds.

12. *Bahera* : It is botanically known as *Terminalia belierica* and belongs to family Combretaceae. It is a tree, which is found up to 900 m in the state. Its fruit-nuts are used as body-strengthening and the mesocarp in cough. Besides, its fruits form a part of triphala, which is much used in constipation natively.

13. *Barna* : It is also known by the name *Varun*. Botanically, it is known as *Crateva magna* and belongs to family Capparidaceae. It is met in warm forests of the state. Its bark-decoction is much used to remove urinary calculi.

14. *Banafsha* : It is *Viola serpens*, which belongs to family Violaceae. Its annual plants are met between 2700-3600 m elevation of the state. A decoction of whole dried plant is used to treat cough and cold.

15. *Banjh* : It is botanically known as *Quercus incana* and is reported from 1200-3000 m elevation in the state. It is a member of family Fagaceae. Its fruits are used in the diseases of urinary tracts and the skin. Besides, the gargles of its fruits are done in the diseases of teeth, mouth and throat.

16. *Bansa* : It is a dense evergreen erect undershrub or shrub, which is met in the plains of the state up to 900 m elevation. Whole dried plant is used much in cases of cough and cold. Locally, a vegetable made of its young twigs is eaten and the juice of its flowers is taken in pulmonary affections. Various commercial preparations like *Bansavleha* etc. are prepared from this plant.

17. *Bhimal* : Botanically it is *Grewia oppositifolia* which is met up to 1600 m. It is a tree of family Tiliaceae. Its bark paste is used as shampoo and the ripe fruits are eaten locally in fever. Its bark is also given to cattle to increase milk.

18. *Bhojpatra* : Its trees are found in between 2400 - 3600 m in the stae. Botanically, it is known as *Betual utilis* and belongs to family



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Betulaceae. On its older branches, some galls are formed, which are called *Bhujgera*, These are used as contraceptive.

19. *Burans* : Its medium – sized trees are found between 1500 - 2700 m in the state. Botanically, it is called as *Rhododendron arboreum* and belongs to family Ericaceae. An oil prepared from its leaf-extract is used much in rheumatism and sciatica. A chutney prepared from its flowers is eaten locally. Besides, a squash made of its flowers is drunk once daily for 2-3 months is cases of mental retardation.
20. *Bhilawa* : It is botanically known as *Semecarpus anacardium,* and belongs to family Ancardiaceae. It is a medium – sized tree, which is found in tarai belt and Siwalik forests up to 1200 m. Its fruits are eaten in asthma, cough and in epilepsy. Besides, its bark is used in case of gonorrhoea.
21. *Brahmi* : It is an annual creeping herb of family Apiaceae, which is found in Haridwar, Rishikesh, Dehradun, Kotdwar and Ramnagar areas of the state up to 1500 m. The powder of its leaves is much used in improving mental memory and to induce the sleep. Various preparations are made from this herb, usually the Brahmi syrup, which is given to children for improving their memory.
22. *Jamum* : It is a tree of family Myrtaceae, which is reported from the plains of Siwalik region and tarai belt. Botanically, it is known as *Syzygium cumini.* Its fruit-stones are eaten in the form of powder in diabetes. Besides. its fruits are also eaten locally.
23. *Manjishta* : It is a creeping herb, which is botanically known as *Rubia cordifolia.* It belongs to family Rubiaceae and is found between 1200 - 2700 m. Its root decoction is much used in menorrhagia and in piles.
24. *Chitrak* : It is botanically known as *Plumbago zeyalnica*, which belongs to family Plumbaginaceae. It is found up to 1200 m i the state. *Daies,* the rural nurses, traditionall use its roots, as abortive. Besides, i combination with other ingredients, the roc is used in epilepsy and hysteria, nervou affections, obesity, prurigo and the indoler ulcers.
25. *Jatamansi* : It is botanically known a *Nardostachys jatamansi* and belongs to famil Valerianaceae. It is an annual herb, which i met in between 3000 - 3800 m elevation c the state. It is used in mental diseases an the disease of circulatory system. Besides, a powder of its roots is also said usefui i menopause disturbances, hystero-epileps and similar nervous and convulsive ailments
26. *Jivanti* : It is botanically known as *Leptadeni reticulata.* It belongs to family Asclepiadaceae and is known to get distributed sporadicall up to 900 m, mainly at Doiwala, Rishikesh and Dehradun. Whole dried plant i considered stimulant and tonic and its extrac is used to control the abortion. Besides, it leaves and roots are used in skin-ailments Locally, people also give whole dried plant t the cattles, for improving milk.
27. *Nirgundi* : It is *Vitex negundo*, which belongs to family Verbenaceae. It is known to found up to 900 m everywhere. Its leaves afte warming are placed over head in headache and dispelling inflammatory swellings of the joints from rheumatism and of the testes from suppressed gonorrhoea or gonorrhoea epididymitis and orchitis. Besides, the gargle of its decoction is used in throat-pain and mouth aphthae.
28. *Pippali* : It is botanically called as *Pipe longum,* which is found in warmer parts of the state; chiefly in Haridwar, Lachhiwala, Doiwala, Dehradun, in tarai-bhabar belt, Haldwani and Ghonti in Tehri forests. It is frequently used in spices for digestive

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



purposes. *Piplamul,* the roots of the plant in combination with borax and *baiberang* in equal doses are used as contraceptive.

29. *Priyangu :* Botanically it is known as *Callicarpa nudiflora.* It belongs to family Verbenaceae and is found between 900 - 1500 m in the state, especially in the Garhwal region. Locally, its fruits are eaten and also used in oral aphthae. Besides, its leaves after heating are applied externally in rheumatic pains.
30. *Vacha :* It is *Acorus calamus,* which belongs to family Araceae. It is a tuberous plant, which is reported commonly from marshy localities, nearby river courses and in waste places up to 2100 m; chiefly in Bhilangana, Bhagirathi, Mandakini and Yamuna valleys, Ghonti, Uttarkashi, Dev-van and Kotdwar etc. Its root-paste is applied in gout and root-extract in earache. Besides, the roots with *bhang* and *ajowain* in equal parts are used as a fumigation to get relief in painful piles.
31. *Saral :* This is *Pinus roxburghii,* which is found between 900-2100 m in the state. it is a member of family Pinaceae. A resin is obtained from its stems, which is used in making Turpentine oil. After mixing camphor in it, the oil is used in cases of gout and pains of the waist.
32. *Salai :* It is also known by the name *Shallaki.* Its medium-sized trees are found in Siwalik range and tarai belt of Udham Singh Nagar. Botanically, it is known as *Boswellia serrata.* Its gum exudate is applied externally over sores and the incenses of gum are used as *Bhut badahar* to get rid of the bad evils. Salai guggul is the only source of turpentine and resin in India.
33. *Sarpgandha :* Botanically, it is called as *Rauwolfia serpentina* and belongs to family Apocynaceae. It is rarely found in miscellaneous forest of tarai-bhabar; mainly in Dehradun, Chauhadpur, Rishikesh and Kotdwar etc. sporadically. A powder of its roots is given much to cure mental diseases. Hence it is also called as *Paglon ki Dawa. Respirine,* an indole alkaloid principle extracted from its roots, which is sedative in action, is widely used in fevers.
34. *Soma :* This is *Ephedra gerardiana,* which is a member of family Gentaceae and is reported from 2700 - 3800 m elevations. Its whole dried plant is used in coughs.
35. *Shatavari :* It is botanically known as *Asparagus racemosus,* which belongs to family Liliaceae. It is found up to 2400 m in the state. Its root-decoction is given in fever and the extract and powder both as anti-pitta agent. Besides, the juice of herbs with equal portion of cow's milk is used to remove calculi.
36. *Harad :* It is a tree of family Combretaceae which is found in Siwalik forests and the plains of Udham Singh Nagar. Botanically, it is called as *Terminalia chebula.* In home remedies it forms one of the important medicines. Its fruits are rubbed over stone and are given to children in abdominal diseaes. Besides, its fruits form a part of triphala, which is much used in constipation natively.
37. *Hauber :* It is *Juniperus communis,* which is a member of family Cupressaceae. It is found between 3300 - 4200 m. Its other species viz. *J. recurva* and *J. squamata* are also found here. Whole dried plants of all species are medicinally used in Dhoop materials and fruits in making the beer.

Besides above, many plants of family Orchidaceae are also found in the state. *Jivak - Rishbahk i.e., Microstylis wallichi* is one of the orchids, which is reported from 1800 - 2400 m elevations. *Habenaria intermedia* is *Ridhi-sidhi* which is found between 1800 - 2700 m elevations. Commonly used *Jivanti* is *Pholidota articulata* which is found as epiphyte over *Banj (Dendrophthoe falcata)* plant between 1200 - 3000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



m. *Orchis latifola* is *Salampanja*, which is found 2400 - 3300 m and *Salam* i.e., *Eulophia campestris* is reported from Powali, Kalyani, Harsil and Daiara. All these plants are used traditionally as well as in Ayurvedic preparations.

**Discussion :-**

An attempt is made here to give glimpses of the medicinal plant wealth of Uttaranchal state. The major plants, which possess medicinal impotance, are discussed here. But in the recent past it is seen that with the urbanization and deforestation of the areas and exploitation of plants for various reasons, many plants have gone extinct or are on the verge of extinctness. For example, *Aswagandha* and *Sarpagandha* are not seen much now days. Though the government has imposed ban on export of these plants, local people exploit them for various purposes and sometimes sold them in the market. To overcome the problems, the following steps are suggested:

- Establishment of a state level body to formulate policies for medicinal plant sector and develop the potential of this sector diverse schemes and projects.
- Support to NGOs/Voluntary organizations and individuals to create awareness and explore the market for plant based herbal products so that the cultivation of selected plant species could be started.
- Training in post - harvest management, shelf life, storage and simple agrotechniques awareness through selected centers throughout the state to avoid over-exploitation of the medicinal plants.
- Research and Developmental (R & D) activities in collection and characterization of germ-plasm for developing high yielding better suited genotypes for production and evaluation.
- To identify best location for cultivation of overexploited plants and development of agro-techniques for such plant in particular.
- Efforts to conserve the medicinal plants in *in-vitro* as well as in *ex-situ* environment.

It is a matter of great satisfaction that after formation of Uttaranchal, the government has decided to raise the agriculturization of medicinal plants and planning has been made to train th farmers who could be helpful to make this stat as the herbal state. At present forest departmer has made a plan for farming of about 40 plar species in the state. On the style of Popla argiculturization of *Harad, Bahera* and Anvl plants will be promoted. This will not only be helpfu in conserving the medicinal wealth of the stat but also be helpful in increasing the capital of th state. We may do hope that it will become a realit in a short span of time.

**Bibliography :**


Dhiman, A.K. 1998. Triphala : An Ayurvedi Formulation. *Sachitra Ayurved.* 50 (11 767 - 68.

Dhiman, A.K. 2001. Medicinal Plants Wealth o Haridwar and Adjacent Area, *Sachitr Ayurved.* 53 (12): 914 - 25.

Dhiman, A.K. 2002. Common Bazar Medicine of Haridwar (Uttaranchal). *Sachitr Ayurved.* 55 (8): 613-19.

Dhiman, A.K. 2003. History of Indian Medicin and Pharmacopoeia. *Aryavaidyan.* 17(1 24-31.

Dhiman, A.K. 2004. Traditional Plants and the Conservation, *Sachitra Ayurved.* 57 (12 934-937.

Dhiman, A.K. 2004. Medicinal Plants o Uttaranchal State. Chowkhamba Sanskr Series Office, Varanasi.

Dhiman, A.K. 2005. Problems of Medicinal Pla Wealth upon the Phytogeography o Uttaranchal. *Advances in Plant Science* 18 (II) : 615-23.

Dhiman, A.K. 2005. Wild Medicinal Plants of Indi Bishen Singh Mahendra Pal Singl Dehradun.

Kaushik, P. and Dhiman, A.K. 2000. Medicin Plants and Raw Drugs of India. Bishe Singh Mahendra Pal Singh, Dehradun.

Mohan, S. 2002. Uttaranchal: Samagra Adhyya Vidyawati Prakashan, Nainital.

Uniyal, M.R. 1997. Uttarakhand Himalaya Vanoushdhiyan avam Khanij. Baidyana Ayurved Shodh Sansthan, Patna.




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Therapeutic Utility of Milk

*Dr. Nilesh N. Bhatt **Dr.S.N.Gupta, *** Dr. V.D. Shukla

Working in the Panckakarama section, with the sastishalipindasveda on myopathy, paralysis etc. musculoskeletal diseases, I am interested to know the importance of milk. So, after compiling some material for milk I am presenting the references of Milk here from Brihatrayi and Laghutrayi also.

Milk is the most complete food article recommended by Ayurveda. Needless to say that milk is considered as Rasayana. Its regular use is in favour of maintaining and promoting the health. Not only as food article but also for the treatment of various diseases, milk is prescribed in various forms viz. milk alone, as anupana, milk processed with some medicaments, milk in Nasya or bastis. Not only cow's milk but milk from other animals has been given significant importance in treatment of certain diseases.

Nearly all Ayurvedic scriptures have described the usages of milk for the treatment of various diseases. Here we have tried to analyze these descriptions regarding milk.

We have selected only most popular respected and reliable scriptures like Charaka samhita, Shshruta samhita, Astangahridaya and Bhavaprakasha to review the description mentioning of Milk.

## REVIEW OF THE LITERATURE :-

| No. | Disease conditions | Associated symptoms or a particular stage of the disease | Recommended form to use milk | Sources |
|---|---|---|---|---|
| 1. | Jvara | Vatapittotara, nirama avastha, daha, trushna, Present and Dosas are increased | Only Milk | Ca.Ci. 3/234 |
| | | Jvara kisna (debilitated due to febrile disease) | Use of milk eradicate accumulated wastes (being laxative) | Ca.Ci. 3/169 |
| | | Parikartika (anorectal pain) | Milk processed in erandmula kwatha | Ca.Ci. 3/235 |
| | | Association of oedema and constipation | Milk processed in trikantaka, bala, vyaghri, nagara and guda | Ca.Ci. 3/237 |
| | | Pipasa (Thirst) | Milk processed in Kharuja, nagara, draksa, ghee, honey and sarkara. | A.H.Ci.1 Ca.Ci.3/238 |
| | | Vatapitta Javara | DHAROSNA (immediately after milking having natural warmth) milk quickly relieves. | A.H.Ci.1 Ca.Ci. 3/239. |
| | | Jirna Jvara (chronic fevers) | Milk is most preferred food | A.H.Ci. 1 Ca.Ci.3/240 |
| | | Visama Pitto hara | VIRECHANA (purgation) with milk | Ca.Ci.3/294 |
| | | Visama Jvara | Milk is most preferred food | Ca.Ci.3/303 |

* Panchakarma Assistant, Kayachikitsa Deptt., I.P.G.T. & R.A., Jamnagar
** Hospital Supdtt., Reader, J.S. Ayu. Mahavidyalaya, Nadiyad
*** Head, Professor, Kayachikitsa Deptt. I.P.G.T. & R.A., Jamnagar

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| No. | Disease conditions | Associated symptoms or a particular stage of the disease | Recommended form to use milk | Sources |
|---|---|---|---|---|
| | | Jirana Jvara, Kasa Svasa, Sirahsula, Parsvashula (chronic fevers with associated cough asthma, headache chest pain) | Milk processed in panchmula | A.H.Ci 1 |
| | | Jvara (all types of febrile conditions) | Milk processed in sinshapa and Ushira | B.P.M.K.1 |
| | | Jirna Jvara with atisara (Chronic fever with diarrhea) | a. Milk processed in eranda mula of bilva<br>b. Dharoshna (immediately after milking having natural warmth) milk of cow Milk processed in Sunthi, bala, vyaghri goksura and guda | A.H.Ci.1 |
| | | Jirna Jvara with Sotha (chronic fever with oedema) | Milk processed in punarnava, bilva vrushiva | A.H.Ci.1 |
| 2. | Raktapitta (bleeding disorders) | General | Milk processed in Draksa and Phalini Or.<br>Milk processed in Priyala and Yastimadhu Or<br>Milk processed in Shatavari | B.P.<br>M.K.I. |
| | | Adhogami (Bleeding from lower passages) | Vamana with madanphala and Milk | A.H. ci.2 |
| | | Vata vrudhhi increase in vata symptoms | Milk processed with<br>a). Laghupanchmul kwatha Or.<br>b). Jivaka and rusabhaka Or.<br>c). Draksha Or.<br>d). Bala and Gokshura Or.<br>e). Sunthi kwatha | A.H.ci.3 |
| | | Pain less haematuria | a). Milk processed in Satavari and Salaparni, prushniparni, mudgaparni masaparni, kwatha<br>b) Only Milk | A.H.ci.2<br>Ca.Ci.4 |
| | | Nasagata (Epistaxis) | Nasya of<br>a). Milk and Durva svaras<br>b). Milk with Sarkara. | Ca.Ci.4 |
| | | Pain less ano rectal bleeding | Only Milk | Ca.Ci.4 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| No. | Disease conditions | Associated symptoms or a particular stage of the disease | Recommended form to use milk | Sources |
|---|---|---|---|---|
| 3. | Gulma | | Milk processed with garlic | Ca.Ci.5 |
| | | Pittaj | a). Basti with milk processed with bitter plants.<br>b). only drinking milk. | |
| 4. | Rajya kshama (Tuber culosis) | | Goat's milk as a food article | B.P.M.K 11/43 |
| | | Headache | Pariseka with Milk<br>Rasnaghrita and Balaghruta with Milk | Ca.Ci.8<br>A.H.Ci.5 |
| 5. | Urahkshata A Clinical entity charac-terized by intrathoracic wounded lesions | | Milk processed with laksha, ghee, madhuchist, jivaniyagana, sarkara vanshlochana and godhuma | Ca.Ci.8 |
| | | Cough, fever | Milk processed with sarkara, pippali ghruta and honey. | Ca.Ci.8 |
| | | | Milk processed with Ikshuvalika, ativisha, pippalimula, padmakesara, chanadana | A.H.Ci.3 |
| | | Daha<br>Burning sensation | Milk processed with Yava churna<br>Milk processed with Yava saktu with honey and sarkara | A.H.Ci.3<br>A.H.Ci.3<br>A.H.Ci.3 |
| | | | Yava churna with milk<br>Sarkara, honey and saktu with milk | A.H.Ci.3<br>Ca.Ci.12 |
| 6. | Svayathu edematous conditions | Vataja | Milk processed with<br>a). Punarnava, nagara, musta or<br>b). Mayuraka, magadhika, Sunthi paste. | Ca.Ci.12 |
| | | Vata pitta | Camel Milk | Ca.Ci.12 |
| | | General | Cow milk with cow urine<br>Buffalo milk with its urine | Ca.Ci.12<br>AH.Ci.1 |
| | | | Milk is most preferred food article | |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| No. | Disease conditions | Associated symptoms or a particular stage of the disease | Recommended form to use milk | Sources |
|---|---|---|---|---|
| | | Pittaja | Showering of Milk | B.P.M.K 42 |
| | | | Milk processed with sunthi, marich, pippali, eranda, trivritta, kwatha everyday. | A.H.Ci. 17 |
| | | | Milk processed with pippali, pippalimula chavaka, aparnarga and punarnava kwatha | A.H.Ci. 17 |
| | | Pittaj, Raktaj, Abhigataja | Showering of Cold milk | Su.Ci. 23 |
| 7. | Atatvabhi nivesh | | Shatavari paste with Milk<br>Brahmi svarasa with Milk<br>Kustha svarasa with Milk | Ca.Ci.11 |
| 8. | Udara roga (Diseases with abdominal distention) | Vatodara | After purgation and samsarjana karma Milk is used in large quantity to get normal body strength. Showering of Cold Milk | Su.Ci. 23 |
| | | Pittodara | Basti with milk in weak patients<br>Milk is used for Virechana | Ca.Ci.13<br>B.P.<br>M.K. 43 |
| | | Plihodara | Basti with milk<br>Milk with trayamana and aragvadha paste<br>Milk is given freqently as food | Ca.Ci. 13<br>AH.Ci. 15<br>AH.Ci. 15 |
| | | Sotha, Anaha | Camel milk is useful | |
| 9. | Agni Disorders | Atyagni (Bhasmaak) | Milk with Pakva odana (Dugha paka)<br>Milk with Sarkara<br>Madhuchist with milk.<br>Milk processed with Suvarchala Roots<br>Milk processed with Punarnava<br>In routine diet Milk must be preferred | Ca.ci. 13<br>Ca.ci. 13<br>AH.Ci. 10<br>AH.Ci. 10<br>AH.Ci. 10<br>AH.Ci. 10 |
| 10. | Pandu (Anemia) | | 15 days use cow Milk with its Urine<br>15 days use cow Milk with its Urine<br>Loha bhasma processed in cows urine with Milk<br>Milk with Pippali | Ca.ci. 16<br>Ca.ci. 16<br>Ca.ci. 16<br>AH.Ci. 16 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| No. | Disease conditions | Associated symptoms or a particular stage of the disease | Recommended form to use milk | Sources |
|---|---|---|---|---|
| | | Halimaka<br>Advanced hepatic disorders | Milk processed with Guduchi<br>Bastis of Milk<br>Milk with Yastimadhu, bala and Pippali | Ca.ci 16<br>Ca.ci. 16<br>Ca.ci. 16 |
| 11. | Hiccup-Kasa,Svasa | Hiccough, cough and dyspnoea dominating conditions | Milk of goat processed with Sunthi<br>Nasya of Chandana with human Milk and hot and cold milk alternately with sarkara and honey for drinking and Nasya<br>Milk processed with Panchamula | Ca.ci. 17<br>Ca.ci. 17<br>Ca.ci.17<br>Su.ci. 11 |
| | | Vataja Kasa | Medicated ghees and Bastis with Milk<br>Peya made with Milk | Ca.ci. 18<br>Ca.ci. 18 |
| | | Pittaja Kasa | Pippalyadi leha with Milk<br>Milk is good in Pittaja | Ca.ci. 18 |
| | | Ksataja kasa | Milk ghee and honey used in big amounts | Ca.ci. 18 |
| | | Ksayaja kasa | Milk processed with anti vata plants | Ca.ci. 18 |
| 12. | Atisara | Pittatidsara | When diarrhoea is not controlled and Milk is patient has good digestive power used for Virechana.<br>To cure painful conditions use milk, ghee and honey in same proportion | Ca.ci. 19<br>Su.Ci.06 |
| | | Raktatisara<br>Diarhoea associated with rectal bleeding | Nilotpala, mocharasa, samanga, nagakesara powder with goat's milk.<br>Satavari paste or powder with milk and use only Milk in diet.<br>Satavari Kalka with Milk with only Milk diet Krishna tila paste, sarkara with goat milk | Ca.ci. 19<br>Ca.ci. 19<br>A.H.ci. 9<br>A.H.ci. 9 |
| | | Jirna Atisara<br>(Chronic diarrhoea) | Use of milk is food | Su.Ci.<br>U.40 |
| | | Pravahika<br>(Dysentery) | Use of Dharosna Milk (Immediately after milking having natural warmth) and pichha basti of Milk. With yamaka snehapana use of Dharosna Milk. | Su.Ci.<br>U.40<br>Ca.ci. 19 |
| | | Vata purish vibandha | Trayamana kwatha with Milk<br>Dharosna Milk | A.H. ci. 9<br>A.H. ci. 9 |



CC-0. Prof. Dinanath Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| No. | Disease conditions | Associated symptoms or a particular stage of the disease | Recommended form to use milk | Sources |
|---|---|---|---|---|
| 13. | Arsha | Suskarsha | Enema with Dashamula kwatha with cow Milk and its urine, taila, sindhava, madanphaladi kalka | Ca.ci. 14 |
| | | Raktarsha | Goat's Milk with Nilkamaladi Churna Pichhabasti of Salmali, yavasa and vatashrunga with Cow Milk. | Ca.ci. 14 |
| 14. | Trushana | | Boiled Milk with honey and diet with Sarkara.<br>Only use of Milk<br>Milk processed with Jivaniya gana | Ca.ci. 22 |
| | | Rasakshaya janya | Use of Milk with ghee orally | Ca.ci 22 |
| 15. | Udavarta | Pitta Dominant | Using of Milk in Niruhabasti. | Ca.ci. 26 |
| 16. | Mutra kruccha | | Bastis of Milk<br>Guda with hot Milk | Ca.ci. 26<br>B.P.M.K.35 |
| | | Rakta pravritti<br>All types of Mutravikara | Honey with boiled Milk<br>Milk porcessed with Bruhatyadi gana and Goksur | B.P.M.K.35 |
| 17. | Pratisyaya | Pittaja | Milk is pathya. | Ca.ci. 26 |
| | | Aam | Milk processed with Adraka | Su.Ci.U.24 |
| 18. | Shiroroga | Pittaja | Milk is pathya | Ca.ci. 26 |
| 19. | Chhardi | Pittajanya chhardi<br>Chirprasaka | Milk is best<br>Kshirpaka of Vatanashaka drugs | Ca.ci. 20<br>Ca.ci. 20 |
| 20. | Visarp | Kostagata Visarp | Trivrita churna or Trayamana churna with Milk | Ca.ci. 20 |
| | | Vata, Rakta, evam Pitta dominant Visarp | Pariseka of Yastimadhu and Milk decoction. | Ca.ci. 20 |
| 21. | Visaroga | Visa seats to Pitta sthana | Madhu with Milk for panarthe.<br>Avafahan of Madhu with Milk | Ca.ci. 23 |
| 22. | Madatyaya | Where patient does not get benefit from any treatment | Advise for Milk to drink. | Ca.ci. 20 |
| 23. | Vrana | Rakta pitta paradhan Vrana | Avasechana of Milk | Ca.ci. 25 |
| | | Daha and vedana | Avasechana of hot Milk | Ca.ci. 25 |
| 24. | Vatavyadhi | All types of Vatavyadhis | Milk is always pathya.<br>Avagahan (Sitz bath) of the vatahara drugs siddha Milk<br>Milk processed with Laghupanchamula and brihatpanchamula drugs | Ca.ci. 28<br>Ca.ci. 28<br>Su.Ci.04 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| No. | Disease conditions | Associated symptoms or a particular stage of the disease | Recommended form to use milk | Sources |
|---|---|---|---|---|
| | | Ardit | Milk processed with panchamula Kwatha | B.P.M.K.24 |
| | | Vataj | mamsa, ghee mixed with butter and then drink with milk | B.P.M.K.24 |
| | | Pittaja | Only Milk orally | B.P.M.K.24 |
| | | Krostuk Shira | Eranda Sneha with Milk orally | B.P.M.K.24 |
| 25. | Vatarakta | | Dudhapana | Ca.ci.29 |
| | | | use to drink. | Ca.ci.29 |
| | | | Milk boiled with guduchi svarasa | |
| | | | Milk boiled with Sunthi and pippali | |
| | | | Milk boiled with bala sathavari, rasana, dashmula | |
| | | | Milk boiled with Trivrutta, erand mula | |
| | | | Virechanarthe Erandasneha with boiled Milk | Ca.ci.29 |
| | | | Use of kshirbasti | Ca.ci.29 |
| | | | Pariscka of Dashmula sidhha Milk | Ca.ci.29 |
| 26. | Yoni vyapat | Yonishula | Kshirpaka of Rasna, Gokshur, Vasa | Ca.ci.30 |
| | | Pittaja Yonivyapad | Milk processed with Jivanaiyagana. | Ca.ci.30 |
| | | | Enenma of Milk processed with Madhur drugs | Ca.ci.30 |
| | | Udavarta, Vatala | Svedana of Milk | Ca.ci.30 |
| | | Napusakata | Use of Kshirsarpi | Ca.ci.30 |
| | | Shukradosha | Milk is best | Ca.ci.30 |
| | | Stanyadosha | Milk processed with patha | Ca.ci.30 |
| | | Balaroga | Madhur drugs mixed with Milk. | Ca.ci.30 |

So, above summarized table indicates that Milk is recommended in all diseases, particu... when disease has involvement of Vata and Pitta dosha and Dhatu kshaya is associated. Milk is g... recommended as only food, main food, the suitable food article, anupana, aushadha siddha, sneha... (Oleation), bramhana, stambhana, modes of therapies, to induce vaman, to induce virechana, to g... as one of the ingredients of Basti and as Nasya.

बैद्यनाथ
आयुसिड
अम्लपित, उदरशूल
एवं कब्जियतनाशक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# CONCEPT OF DHATRI AND HUMAN MILK BANKING

**Dr. Kedar Nath Upadhyay,** *B.Sc. M.D. (Ay.) Kaumarbhrity, B.H.U.*Ph.D. (B.H.U.), MRAV (New Delhi),

The wet - nurse (Dhatri) as per Kashyap nurtures the child out of sheer affection and during this process gets herself deprived of nourishment or gets emaciated and also tolerates various troubles. The mothers withstand troubles due to hope (for future protection to be offered by the child), affection, compassion, duty and protection of the child; and by this they feel proud or honoured. The child, also, since intra-uterine life suffers various pains because of inability in defending oneself and fulfilment of own requirements. The wetnurse by her auspicious/ beneficial acts and management of diet for the child becomes a foster mother, thus enjoys the fruits of having a son.

Charaka says that the wet-nurse should be identical in *varna* (similar in the i.e. for *brahmana* child the *brahmana* wet-nurse etc.), young (very young or old women) should be discarded due to presence of incomplete or decreased *dhatus* respectively, humble or modest, free from impatience, not possessing deficient or accessory body parts, non-addict, beautiful, free from disguet, similar in living place (*desha*) and sub-caste (*Jati*), neither mean-minded nor indulging in mean acts, born in high family, affectionate to the child, free from diseases, having alive male child and good amount of breast-milk, over cautious, not habituated of sleeping over excrements or used to clean the feces etc. immediately, not married in low caste, expert in nursing, pious, clean and having hatred from impiousness or uncleanliness and possessing good quality of breasts and milk.

The wet-nurse should be dark complexioned (*shyama*) because the women of this complexion possess profuse milk. The wet-nurse is to be appointed for betterment of health, growth, development and strength of the child.

Kashyapa says that wet-nurse should use daily purifying measures (internal and external; physical and psychological). Wet-nurse belonging to similar *satwa* (*satwika, rajasika* etc. *manasika, prakrtis*) to which child belongs is praiseworthy. Belonging to oppositve *satwa* is forbidden, because she will produce uneasiness and troubles to the child, thus the child will either not survive or survive with great difficulty. The wet-nurse of indentical *satwa* gives nourishment (*pushti*), longevity (*ayu*), strength (*bala*) and pleasure (*sukha*) to the child now the entire of selection of Dhatri entirely dependent on infection.

**Diseases caused by Ajirna or indigestion to a wet nurse :**

According to Kashyap *Ajirna* to wet - nurse is not proper, because the *doshas* vitiated or aggravated due to *ajirna* produce anorexia (*aruci*), lassitude (*glani*), intoxication (*mada*), unconsciousness (*moha*), *vicharchika, pama, (kushta* and *alaji*) all skin disorders, *gulma (Hridroga)* cardiac disorders, (*shwasa*) dyspnoea, (*kasa*) cough, (*hikka*) hiccup, (*tandra*) drowsiness, (*srama-swasa*), exertional dyspnoea, (*chhardi*) vomiting, (*apasmara*) epilepsy, (*grahabadha*) acute infective disorders, (*raktapitta*) bleeding diathesis, (*bhrama*) giddiness, (*unmada*) insomnia, (*shula*) colic, (*sosa*) emaciation, (*galagraha*) stiffness of neck, (*urustambha*) stiffness of muscles of thighs, (*sanyasa*) coma and many more serious disorders to the wet-nurse.

**Daily routine of wet-nurse :**

As per Kashyap massage, use of unguents, bath, white garments and clean and pure food produce virtue, satisfaction and happiness to the wet-nurse. Healthy as well as diseased wet-nurse should use cold water *being madhura* (sweet) in *vipaka* it suppresses *pitta*.

Breast milk can not be compared any other milk for proper growth and development of the child, so inability to feed the child by the mother due to physical or psychological reasons

**Ex. Senior Resident, Dept. of Prasuti Tantra,S.S. Hospital, B.H.U. - Varanasi - 221005**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



alternative is there. Vagbhata has advised arrangement of two nurses, while other authors have not specified the number. Another reason for detailed description of wet-nurse could be that during the era of these *Ayurvedic* tests the authors used to live under the patronage of rulers, all the texts were written under monarchism. Entire managemet of child is described considering the children of kings of *kumaras*. Probably, the queens might not be preferring breast-feeding, lest beauty is lost, naturally the wet-nurse was arranged.

**Substitute milk (non-availability of milk of mother or wet-nurse):-**

Sushruta says that milk is the only congenial diet to the child, when mother or wet-nurse is unable to feed, goat or cow's milk should be given in appropriate amount. This substituted feeding is to be continued until the mother or wet nurse does not regain sufficient milk or else till the child can not thrive properly without milk.

Both Vegbhatas have said that goat or cow's milk should be given to the child after making it similar to the mother's milk, after medicating it either with decoction of *laghu-panchamula*.

The first milk bank was opened in Vienna in 1900. The first one in the United States was established 10 years later at the Massachusetts Infant Asylum where wet nurses had been the only sources of human milk.

**Donor Milk :**

1. The infant is at risk of infection or necrotizing enterocolitis. Although effects are not clearly demonstrated with nature milk, fresh colostrum is held to be especially protective and may be collected from low-risk, carefully screened mothers.
2. The physician believes the infant would benefit from the nourishment in human milk because of prematurity, especially if the infant weighs less than 1500g.
3. The mother is temporarily unable to nourish a breastfed infant completely. It may be that the mother's supply is inadequte when she first puts the infant to the breast after weeks of pumping or when the mother has been or hospitalized. Usually these infants are already at home.
4. Pooled samples of donor milk are prepared as a dried preparation for addition to fresh mother's milk to increase the calorie and nutrient value for high risk premature infants whose requirements exceed those available with unsupplemented human milk.
5. The older infant or child has unique feeding difficulties usually characterized by inability to tolerate any oral nourishment except human milk.

**Qualifications of donors :**

A mother who is willing to donate milk should be healthy and fulfill the following qualifications :

1. Normal pregnancy and delivery.
2. Serologically negative for syphilis, hepatitis B surface antigen, cytomegalovirus and HIV.
3. No infection, acute or chronic, i.e., not at high risk.
4. Not taking medications, smoking or using excessive alcohol.
5. Capable of carrying out sterile technique.
6. If donating for other infants, own child should be healthy and without jaundice.

Pregnancy and delivery should have been relatively uncomplicated. The mother should have a negative VDRL and negative chest X-ray. Whether donors should be screened for HIV is controversial.

The donor should not be taking



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



medications, including birth control pills or any non-prescription medications such as aspirin or acetaminophen. Her infant should be well and should not have had neonatal jaundice. If the mother is donating only for her own infant, the state of the infant's health does not prevent her form donating. Anytime the mother becomes, ill however, she should discard milk from the previous 24-hours period and not save milk until the illness is over and any maternal medications stopped.

**Storage and testing of milk samples :**

Fresh refrigerated unsterilized mother's milk can be used for 48 hours following collection. If the milk is to be used fresh-chilled, it should be refrigerated at home and brought in promptly for use within 48 hours. If it is to be frozen, this shou be done immediately at 0°C F (-18°C) (Standa home freezer) or in top of a refrigerator freeze The milk stored in the latter should be deep froze within a week if it is to be stored any length time. The milk dept. at -18°C can be kept for months. Freezing and thawing, which can occ in a freezer that is part of a refrigerato significantly alter the energy content an predispose to separation of the fat layer.

All sample should be labeled with nam of donor, date and time. Milk is stored in th freezer in such a way that the oldest milk is use first, and all milk of a single donor is kept togethe and used only for the infant to the mother.

---

(पृष्ठ सं० 509 का शेषांश)

र.र. समुच्चयोक्त 47 रसद्रव्यों का स्वतंत्र अध्ययन कर तथा उपवर्ग में विद्यमान रसद्रव्यों का अध्ययन करने पर ऐसा ध्यान में आता है कि रासायनिक संघटन प्रकार तथा गुणधर्म अधिक होने वाले रसद्रव्यों का वर्णन उपरोक्त टेबल में मिलता है । जैसे वैक्रांत इस रसद्रव्य का व्यावहारिक इस्तेमाल कम होने के बावजूद उसका वर्णन 33 बार मिलता है तथा लोह-32, रजत-29, अंजन-29 बार वर्णित मिलते हैं । अन्य शेष रसद्रव्यों का वर्णन कम अधिक प्रमाण में सभी उपवर्ग में आया है । कंकुष्ठ अग्निजार कपिल्लक तथा गिरिसिन्दूर आदि रसद्रव्यों का वर्णन ग्रंथकर्त्ता ने बहुत कम किया है । उपरोक्त तालिका से यह ज्ञात होता है कि ग्रंथकर्ता ने रसायन तथा वाजीकरण के लिए अधिक द्रव्यों का वर्णन किया है । रसायन वाजीकरण क्रम के लिये अभ्रक, वैक्रांत, माक्षिक, विमल, शिलाजतु, हरताल, मन:शिला, गौरीपाषाण आदि द्रव्यों का उल्लेख विशेषत: किया है । उपरोक्त तालिका से यह भी ध्यान में आता है कि महारस, उपरस तथा धातु वर्ग में विद्यमान द्रव्यों का वर्णन अधिक बार किया है । रत्न तथा साधार रस वर्ग में अन्तर्भुत रस द्रव्यों का वर्णन कम मिलता है

**निष्कर्ष :-** वाग्भटाचार्य का र०र०समुच्चय ग्रं का अध्ययन करने पर अधिक मौलिक तथा आश्चर्यकार तथा एक सम्पन्न शास्त्र का विवेचन इस ग्रंथ में पा गया । किसी भी तरह की संधिग्धता रसद्रव्यों के बारे इस ग्रंथ में नहीं मिलती । साथ ही साथ द्रव्यों का वर्ण करते वक्त एक विशेष पद्धति से सूत्र पद्धति तथा सह और आसान भाषा में वर्णन किया है । 47 रसद्रव्यों व वर्गीकरण ग्रंथकार ने सिर्फ 5 वर्ग में कर इन रसद्रव्यों व उपयोग विविध जगह स्वतंत्र पद्धति से किया है । इस ग्र के द्रव्यों का पुन:श्च वर्गीकरण करने का प्रयास कर वक्त एक प्रकार से ग्रन्थ में कुछ अंश में वृद्धि करने क प्रयास यहां किया गया है । किन्तु यह कार्य इतना आसा न होने के कारण इस ग्रन्थ पर अधिक संशोधनात्म अध्ययन कर अधिक उपवर्गो का समावेश करने से य ग्रंथ आधुनिक शास्त्र के दृष्टि से अध्ययन करने के लि अधिक उपयुक्त होगा ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



. प्र०:- जो मांसकील गुदामार्ग में रुकावट पैदा करके मनुष्य को पीड़ा पहुंचाते हैं उनको क्या कहते हैं ?
(a) ग्रहणी (b) अर्श
(c) गुल्म (d) वातव्याधि

. प्र०:- इनमें से किन रोगों की उत्पत्ति अग्निबल के घटने से होती है ?
(a) ग्रहणी (b) अतिसार
(c) अर्श (d) उक्त सभी

. प्र०:- अर्श के कितने भेद हैं ?
(a) 5 (b) 8 (c) 6 (d) 9

. प्र०:- इनमें से कौन-सा अर्श का भेद आचार्य चरक ने नहीं माना ?
(a) वातज (b) रक्तज
(c) पित्तज (d) सन्निपातज

. प्र०:- इनमें से कौन-से दूष्य अर्श रोग में होते हैं ?
(a) त्वचा (b) मांस
(c) मेद (d) उक्त सभी

. प्र०:- रूक्ष, ठंडे पदार्थ, तेज मद्यपान तथा शीत प्रधान देश और काल का अधिक सेवन करने से कौन-से अर्श रोग की उत्पत्ति होती है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) रक्तज (d) कफज

. प्र०:- कटु, अम्ल, उष्णदेशकाल, गर्म पदार्थों आदि का सेवन करने से कैसे अर्श की उत्पत्ति होती है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) रक्तज

. प्र०:- व्यायाम न करना, स्निग्ध पदार्थों का सेवन करने से कैसा अर्श उत्पन्न होता है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) रक्तज

. प्र०:- रक्तज अर्श में कौन से दोष का अनुबन्ध हो सकता है ?
(a) वात (b) कफ
(c) दोनों (d) कोई नहीं

10. प्र०:- कौन से पूर्वरूप अर्श में पड जाते हैं ?
(a) विष्टम्भोऽन्न (b) दौर्बल्य
(c) कुक्षेराटोप (d) उक्त सभी

11. प्र०:- अर्श की उत्पत्ति में कौन-से दोष प्रकुपित होते हैं ?
(a) एकदोष (b) सर्वदोष
(c) दो दोष (d) कोई नहीं

12. प्र०:- किस रोग में पाँचों प्रकार के वायु, पित्त, कफ तथा तीनों गुदबलियाँ प्रकुपित होती हैं ?
(a) अर्श (b) ग्रहणी
(c) अतिसार (d) प्रवाहिका

13. प्र०:- यदि एक दोष प्रधान अर्श बाहर की बलि में हो और बहुत पुराने भी न हो तो वो कैसे होते हैं ?
(a) असाध्य (b) कृच्छ्रसाध्य
(c) सुखसाध्य (d) उक्त कोई नहीं

14. प्र०:- यदि अर्श की उत्पत्ति में दो दोष सम्मिलित रूप में कारण हों, दूसरी वलि में आश्रित हों, वर्षभर से अधिक पुराने हों तो वो .... ?
(a) असाध्य होते हैं (b) कष्टसाध्य होते हैं
(c) साध्य होते हैं (d) उक्त कोई नहीं

15. प्र०:- यदि अर्श सहज, त्रिदोषज हो और तीसरी वलि में आश्रित हो तो वो कैसा होता है ?
(a) असाध्य (b) कष्टसाध्य
(c) साध्य (d) उक्त कोई नहीं

16. प्र०:- अर्श वलिभेद से कितने प्रकार का होता है ?
(a) 3 (b) 5 (c) 4 (d) 2

17. प्र०:- इनमें से कौन-सा प्रकार अर्श के वलि भेद में नहीं आता है ?
(a) संवरणीस्थ (b) रक्तार्श
(c) विसर्जनीयस्थ (d) प्रवाहणीस्थ

18. प्र०:- अर्श स्वरूपभेद से कितने प्रकार का होता है ?
(a) 3 (b) 5 (c) 2 (d) 1

19. प्र०:- इनमें से कौन-सा प्रकार अर्श के स्वरूप भेद में नहीं आता है ?
(a) शुष्कार्श (b) रक्तार्श
(c) संवरणीस्थ (d) अकेला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



20. प्र०:- जब व्यान वायुदूषित होकर कफदोष को त्वचा के ऊपरी भाग में कील के सदृश स्थिर एवं खुरदरे जिस अर्श की उत्पत्ति करता है उसको क्या कहते हैं ?
(a) ग्रहणी (b) चर्मकील
(c) अर्श (d) ज्वर

21. प्र०:- चर्मकील में किस दोष की अधिकता से सूई चुभने जैसी पीड़ा तथा खुरदरापन होता है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) उक्त सभी

22. प्र०:- चर्मकील में निम्न किस दोष की अधिकता से अर्श के मुख में कालिमा होती है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) त्रिदोष

23. प्र०:- किस दोष की अधिकता से चर्मकील में चिकनापन, गठीलापन एवं त्वचा के वर्ण के समान वर्ण वाला अर्श होता है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) उक्त सभी

24. प्र०:- किस प्रदेश में होने वाले अर्श गण्डूपद जैसे होते हैं ?
(a) हृदय (b) कान
(c) नासिका (d) नाभि

25. प्र०:- किस प्रदेश में होने वाले अर्श पिच्छिल तथा मृदु होते हैं ?
(a) नाभि (b) कान
(c) नासिका (d) गला

26. प्र०:- किन-किन स्थानों पर होनेवाले अर्श वाले रोगी को असाध्य समझना चाहिए ?
(a) हाथ-पैर (b) मुख
(c) नाभि तथा गुद (d) उक्त सभी

27. प्र०:- अर्श रोग के उपद्रव कौन-से हैं ?
(a) तृष्णा (b) हृत्पार्श्वशूल
(c) अङ्गरूजा (d) उक्त सभी

28. प्र०:- यदि रक्तार्श में श्यामवर्ण का तथा कड़ा मल निकलता है, तो यह किस दोष के अनुबन्ध के कारण होता है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) सन्निपातज

29. प्र०:- यदि रक्तार्श में रोगी ढीला, सफेद-पीला मिश्रित गुरू तथा शीतल मल का त्याग करे तो उसमें किस दोष की अनुबन्धता होती है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) सन्निपातज

30. प्र०:- यदि रक्तार्श में रोगी के मस्सों से निकलने वाला रक्त गाढ़ा, रेशेदार, चिकनाहट लिए हो तो इसमें किस दोष की अनुबंधता होती है ?
(a) वात (b) पित्त
(c) कफ (d) उक्त सभी

31. प्र०:- पित्तज अर्श के कौन-से लक्षण होते हैं ?
(a) नीलमुख (b) रक्त-पीतासितप्रभ
(c) दोनों (d) कोई नहीं

32. प्र०:- शिर, कमर, पसलियों में अधिक पीड़ा किस दोष युक्त अर्श में होती है ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) सन्निपाजत

33. प्र०:- वातज अर्श में कौन से उपद्रव उत्पन्न होते हैं ?
(a) गुल्म (b) प्लीहोदर
(c) अष्ठीला (d) उक्त सभी

34. प्र०:- अर्श के मस्सों से गर्भभाव किस दोष युक्त अर्श में होती हैं ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) रक्तज

35. प्र०:- कौन से अर्श कम पीड़ा देने वाले होते हैं ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) रक्तज



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Ha

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



36. प्र०:- कफज अर्श का वर्ण कौन-सा होता हैं ?
(a) लाल (b) श्वेत
(c) नील (d) कृष्ण

37. प्र०:- कफज अर्श के कौन-से लक्षण होते हैं ?
(a) गहरी जड़ें (b) गोलाकार
(c) खुजलीयुक्त (d) उक्त सभी

38. प्र०:- कौन-सा अर्श गाय के स्तन की आकृति के होते हैं ?
(a) वातज (b) पित्तज
(c) कफज (d) रक्तज

39. प्र०:- कफज अर्श में कौन-से प्रदेश में पीड़ा का अनुभव होता है ?
(a) वंक्षण (b) गुद, बस्ति
(c) नाभि (d) उक्त सभी

40. प्र०:- कौन से अर्श न तो फूटते हैं और न ही उनमें से स्राव निकलते हैं ?
(a) कफज (b) वातज
(c) पित्तज (d) रक्तज

41. प्र०:- कौन-से अर्श में सबसे अधिक खुजली होती है ?
(a) वातज (b) कफज
(c) पित्तज (d) रक्तज

42. प्र०:- कफज अर्श में कौन-से उपद्रव होते हैं ?
(a) शीतज्वर (b) श्वासकास
(c) प्रमेह (d) उक्त सभी

43. प्र०:- पित्तज अर्श में गुदमार्ग से कैसा मल निकलता है जो स्पर्श में कैसा हो ?
(a) शीत (b) अनुष्ण
(c) उष्ण (d) उक्त कोई नहीं

44. प्र०:- पित्तज अर्श में रोगी की त्वचा का वर्ण कैसा हो जाता है ?
(a) हरा एवं पीला (b) लाल एवं नीला
(c) कृष्ण (d) उक्त सभी

45. प्र०:- गुद प्रदेश में रक्तप्रधान अर्श किस अर्श के सदृश होते हैं ?
(a) कफज अर्श (b) पित्तज अर्श
(c) वातज अर्श (d) उक्त कोई नहीं

46. प्र०:- रक्तार्श में अर्श किसके सदृश होते हैं ?
(a) बरगद के प्ररोहों (b) घुँघची
(c) विद्रुम (d) उक्त सभी

47. प्र०:- रक्तार्श में रक्त के प्रभाव में क्या फर्क पड़ता है ?
(a) प्रमाण बढ़ता है (b) रक्तक्षय
(c) समप्रमाण (d) कोई नहीं

48. प्र०:- रक्तार्श में कौन से लक्षण होते हैं ?
(a) बलक्षय (b) पीतवर्ण
(c) इन्द्रियाँ मलिन (d) उक्त सभी

49. प्र०:- रक्तार्श में रक्त का स्राव मल निकलने से कब होता है ?
(a) पहले (b) बाद में
(c) होता नहीं (d) तथा दोनों

50. प्र०:- रक्तार्श में रोगी प्राय: किससे पीड़ित रहता है ?
(a) प्रवाहिका (b) अग्निमांद्य
(c) अजीर्ण (d) अतिसार

## Answer - Keys

(1) B (2) D (3) C (4) B (5) D (6) A
(7) B (8) C (9) C (10) D (11) B (12) A
(13) C (14) B (15) A (16) A (17) B (18) C
(19) D (20) B (21) A (22) B (23) C (24) D
(25) A (26) D (27) D (28) A (29) B (30) C
(31) C (32) A (33) D (34) B (35) C (36) B
(37) D (38) C (39) D (40) A (41) B (42) D
(43) C (44) A (45) B (46) D (47) B (48) C
(49) D (50) C

द्वारा
डा० अनूप कु० गक्खड़
एवं
मांका रयात
दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज, जालन्धर


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व

# नेपाल में आयुर्वेद का स्तुत्य स्थान

*जनवरी, 1967*

इस प्रकार प्राचीन-अर्वाचीन साहित्य सामग्री आगे रखकर जिस प्रकार ''क'' के मधुमेह की चिकित्सा की गई वह पाठकों के सामने दर्शाया जा रहा है ।

मधुमेह में जठराग्नि निर्बल पड़ती जाती है । जिससे ''क'' की जठराग्नि प्रदीप्त करने के लिए कुछ शारीरिक व्यायाम कराना जरूरी था । केवल मुंह से व्यायाम कीजिए कहने पर ''क'' द्वारा व्यायाम करना कठिन था । एतदर्थ ''क'' से कहा गया कि इस प्रयोगशाला से पाँच मील दूर स्थित विनसर पहाड़ पर एक दिव्य औषधि है । नित्य पैदल चलकर उसका ताजा स्वरस लाने से आप का यह रोग अवश्य दूर हो सकता है । किसी प्रकार ''क'' को अपने साथ बातें करते हुए पाँच छः मील की दूरी पर एक पहाड़ पर ले चला । न तो वहाँ कोई मधुमेह नाशक औषधि ही थी और न कोई रहने की सुविधा ही/केवल लक्ष्य था ''क'' द्वारा शारीरिक व्यायाम का । उस स्थान पर 'सफेद-मुसली' बहुतायत से होती थी । मैंने कुछ पेड़ उसके उखाड़ लिए और ''क'' से कहा अब वापस चाहिये, आपके रोग को दूर करने वाली औषधि यही है । उसके बाद मैं ''क'' को साथ लेकर शाम को अपनी प्रयोगशाला में आ पहुँचा ।

शाम को ''क'' को कुछ गेहूँ का दलिया खिलाया और पीने के लिए पावभर दूध दिया । मीठे पदार्थों का सेवन ''क'' द्वारा कतई बन्द करवा दिया । चाय बंद कर दी । मेथी के भुने हुए बीजों का चूर्ण 1/2 भाग, नागवाला 1/4 भाग, मरोड़फली 1/8 भाग एवं शिलाजीत 1/16 भाग लेकर इसका बारीक चूर्ण कर सुबह 'सफेद मुसली' के रस के साथ ''क'' को 1 तोला चूर्ण दिया । उसके बाद फिर ''क'' को औषधि लाने हेतु विगत दिन के स्थान पर ले चले । शाम को वापस आये । सुबह औषधि-सेवन करवाई । यह क्रम सात दिन चलता रहा । सातवें दिन ''क'' की पुनः मूत्र परीक्षा की, अब ''क'' का मूत्र, धातु एवं मिठास रहित था। उसमें चीटियाँ कतई नहीं बैठती थी । ''क'' स्वस्थता का अनुभव करता था । उसके मुँह का सूखना तथा सिर का भारी होना ठीक हो चुका । क्षुधा की जागृति हो गई । ''क'' को पाँच रोज के लिए और उक्त दवा देकर नित्य व्यायाम करने की सम्मति देकर विदा कर दिया ।

अर्सा करीब साल का हो चुका है । उसको अभी तक इस रोग की कोई किस्म की शिकायत न हुई ।

अभी तक तेरे पास ''क'' से अतिरिक्त मधुमेह का कोई रोगी नहीं आया । जिसपर कि मैं इस प्रयोग को दुहरा सकूँ ।

मुझे इस छोटे प्रयोग से विश्वास है कि अधिक स्त्री सहवास से, वीर्य के संक्षरण होने से एवं उसकी वृद्धि के लिए उचित द्रव्य न मिलने से, व्यायाम के अभाव से, पाचकाग्नि के दुर्बल पड़ जाने से, मीठे पदार्थों के अधिक सेवन से, कफ और वात-पित्त को दबा देते हैं । जिससे पेशियां मूत्र को ठीक रूप से छानने में असमर्थ हो जाती हैं । वह रक्त-गत शर्करा का प्रचूषण नहीं कर पाती हैं । फलतः इस प्रकार की स्थिति पाकर मधुमेह रोग का सृजन होता है । जब पित्त को बढ़ाकर वात और कफ को हल्का कर दिया जाता है तब इस रोग से मुक्ति पाई जा सकती है । उचित रूप से सेवन किए जाने से निम्न पदार्थ पित्त की वृद्धि करते हैं । अम्ल; लवण एवं कषाय रस वाले पदार्थ पित्त संवर्धन के लिए उपयुक्त है । व्यायाम भी पित्त को बढ़ाने में एक विशेष महत्व रखता है ।

इसमें एक बात का विशेष ध्यान रखना पड़ता है कि पित्त बढ़ते-बढ़ते कोई अन्य रोग की उत्पत्ति का कारण न बन जाय क्योंकि आयुर्वेद-सिद्धांत के मुताबिक ये त्रिधातु कुपित होने पर विभिन्न रोगों के कारण हैं । इस लिए यहाँ पित्त को उतना ही बढ़ाना है कि जहाँ तक वह वात और कफ के योग्य होकर निर्दोष रूप से इनके साथ समानता पर आ जाय ।

इस युक्ति से काम लेने पर कोई भी कोटि में ''मधुमेह'' पहुँच गया हो - तुरन्त अच्छा हो सकता है ।

**श्री दामोदर पन्त वैद्य**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आरोग्य समाचार

## अखबार की कतरनों से

### कालाजार के मरीजों को इंजेक्शन से छुटकारा

**दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार** मौत का दूत माने जाने वाले रोग कालाजार के मरीजों को अब अपने इलाज के लिए इंजेक्शन जैसे कष्टप्रद तरीकों पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा क्योंकि भारतीय वैज्ञानिकों ने इसके एिल मुंह से ली जाने वाली औषधि का विकास कर लिया है ।

मिलटेफोसिन नामक दवाई कालाजार के इलाज के लिए विकसित पहली ऐसी औषधि है जिसे मुंह से लिया जा सकता है । कालाजार की रोकथाम की दिशा में भारतीय वैज्ञानिकों की यह कामयाबी अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जा रही है क्योंकि इस समय इस बीमारी के इलाज के लिए उपलब्ध सभी दवाइयों को इंजेक्शन के जरिए लिाया जाता है । स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के सूत्रों के अनुसार मिलटेफोसिन नामक इस दवा का क्लीनिकल परीक्षण नई दिल्ली स्थित भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद की ओर से किया गया है । इसके क्लीनिकल परीक्षण के निष्कर्ष के आधार पर स्वास्थ्य सेवा निदेशालय की विशेषज्ञ समिति ने पहली बार इस दवा के इस्तेमाल की सलाह दी है । फिलहाल कालाजार से प्रभावित 10 जिलों में इस दवा के इस्तेमाल का निर्णय लिया है ।

### समुद्र से मिल सकती है डायबिटीज की दवा

**दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार** अंडमान निकोबार के तटवर्ती इलाके में उगने वाली मैनग्रोव प्रजाति के पौधे से डायबिटीज की नई दवा मिलने की संभावना पैदा हुई है । इसका जैव परीक्षण चूहों पर इसका कोई विषाक्त या साइड इफेक्ट पैदा करने प्रभाव नहीं पड़ा । लेकिन यह बात चूहों तक ही थी । बंदरों पर जब इसके परीक्षण किये गये तो कुछ मर गये । लेकिन वैज्ञानिकों को अंत्यपरीक्षण से इस कारण ढूंढ़ने में कामयाबी मिली । इसके बाद पौधे अर्क को उन्होंने और विखंडित किया और विषाक्त खत्म करने की तरकीब भी ढूंढ ली ।

वैज्ञानिकों को विखंडन से दो अवयव जिनका नाम गोपनीयता बनाये रखने की नजर से गया : डी 123 और डी 125 जे । पहला अवयव डायबिटीज ठीक करने के मतलब का है, तो दूसरा ठीक करने में उपयोगी है । डी-123 का 31 वोलंटियरों पर परीक्षण किया जा चुका है । अब इस के परीक्षण की योजना बनाई जा रही है कि वास्तव डोज कितनी होनी चाहिए जो सबसे अधिक असरदार

बहरहाल, वैज्ञानिक इस दवा की खराबी बताते हैं कि यह रक्त में ग्लूकोज बहुत ज्यादा तेजी से कर देती है । यह एक खतरनाक बात मानी जाती है इसलिए पुन: विखंडन के जरिये अब नया अवयव एप-1 बनाया गया है । चूहों पर इसका दस दिन तक परीक्षण किया गया, तो नया कंपाउंड सुरक्षित निकला । अब चूहों को लगातार तीस दिन तक यह दवा देकर देखा जा रहा है । पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय का यह कार्यक्रम असल में खोली किस्म का है । समुद्र में तरह-तरह वनस्पतियां, जीव व सूक्ष्म जीव हैं । इन विभिन्न स्रोतों से अब तक दस हजार से ऊपर कंपाउंड अलग जा चुके हैं । इसी खोज के दौरान सेंट्रल नर्वस सिस्टम बीमारियों पर असर डालने वाले एजेंट का भी पता है । संभवत: इससे चिंतालु लोगों की चिंता दवा दूर की जा सकेगी । उन्हें खुश बनाया जा सकेगा । वैज्ञानिक आगाह करते हैं कि ये सिर्फ लीड (संकेत) इनसे सचमुच दवा बनेगी, इसका अभी दावा नहीं जा सकता, वैसे कुछ कंपाउंड ऐसे भी मिले हैं जो के नयी दवा देने का भरोसा पैदा करते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## आपके पत्र

# आयुर्वेदोत्थान के विषय में चिन्तन करें

सेवा में,

श्रीमान् सम्पादक महोदय

सचित्र आयुर्वेद, पटना

यत्र तत्र सर्वत्र सुना जा रहा है कि हमारा देश भारत एक महाशक्ति के रूप में विकसित हो रहा है । व्यापार, उद्योग, आयात-निर्यात, संचार, मीडिया, मुद्रा बाजार, वैयक्तिक जीवन स्तर आदि में आश्चर्यजनक ढंग से 'सु-बदलाव' आ रहा है । देखा जाए तो देश में विदेशी व विदेश में देशी चीजों का चलन या प्रभाव बढ़ रहा है । हमें विदेशी फिल्में, विदेशी चैनल विशेषत: डिस्कवरी, हिस्ट्री चैनल, नैशनल ज्योग्राफिक आदि बहुत अच्छे लगते हैं । ऐसा भी लगता है कि कितनी सूक्ष्मता, गहराई व सफाई से इन चैनलों पर नये-पुराने विचारों/घटनाओं को शोधपूर्ण संतुलित संगठित व वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है । एक विचार यह भी आता है कि हम ऐसा क्यों नहीं सोच पाते ! प्रदर्शित कर पाते हैं ?

इसी परिप्रेक्ष्य में भारतीय संस्कृति व आयुर्वेद के बारे में देखें तो पता चलता है कि इनका चलन विदेश में अधिक होता जा रहा है । विदेशी अत्यंत जिज्ञासा पूर्वक श्रद्धा से इन्हें समझने का प्रयास करते हैं । संस्कृत, संस्कृति, योग व आयुर्वेद पर अत्यंत गवेषणा पूर्ण टिप्पणियाँ मिलने पर हमें कभी-कभी हतप्रभ हो जाना पड़ता है । कभी-कभी अच्छा लगता है कि हम 'विश्व गुरु' के रूप में कुछ दे रहे हैं किन्तु कभी-कभी यह भी महसूस होता है कि मुट्ठी की रेत के समान कुछ सरकता जा रहा है । भले ही आज हम उन्हें पढ़ा रहे हैं किन्तु निश्चय है हम इस धरोहर को अपनी अलगी पीढ़ी को नहीं दे पायेंगे और उन्हें इस ज्ञान के लिये विदेश जाना पड़ेगा । कहते हैं कि - जो जागत है सो पावत है जो सोवत है सो खोवत है । - वे जाग रहे हैं उनमें सीखने समझने आगे बढ़ने की लगन है । हम सो रहे हैं - बिना श्रद्धा केवल परम्परा या अंधविश्वास या अति विश्वास से ढोते जा रहे हैं । हमारे शासकीय, अर्धशासकीय या निजी संसाधन विहीन तंत्र में आयुर्वेद के साथ क्या हो रहा है तथा इसका परिणाम क्या होगा यह समझने में अब अधिक देर नहीं लगेगी । चमकते सूरज के सामने आँखें बंदकर हम अंधेरे में होने का भ्रम नहीं पाल सकते ।

आपके पत्र के माध्यम से मैं सभी आयुर्वेदज्ञ शिक्षकों, आयुर्वेद प्रेमियों, आयु. संरक्षकों, निस्वार्थ कार्यकर्ताओं बल्कि सभी भारतवासियों से करबद्ध प्रार्थना करना चाहूँ कि वैदिक 'संगच्छध्वं, संवदध्वम्' आदि की भावना एकजुट होकर फार्मलिटी के बजाय धर्म या कर्तव्यपूर्व ईमानदारी से आयुर्वेद के नियमों में दृढ़ता रखते हुए इनव उन्नति के बारे में सोचें, समझें व क्रियान्वित करें ।

जय भारत ! जय आयुर्वेद !!

**डा० दिनेश कुमार शर्मा, डा० नवल किशोर शर्मा**

875-ए, प्रेम गली नं० 3 बी

गाँधी नगर, दिल्ली - 110031

# देश, समाज, भारतीय संस्कृति एवं आयुर्वेद पर गलत आक्षेप है ।

सेवा में,

श्री रजत शर्मा जी, सादर नमस्कार

इण्डिया टी०वी०, फिल्म सिटी-नोइडा, उत्तर प्रदे

द्वारा

श्रीयुत् सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

पटना

विषय : 22-10-2006 को सायं 7:30 पर दवाइयों बारे में गलत सूचना/समाचार जो कि देश, समा भारतीय संस्कृति एवं आयुर्वेद पर गलत आक्षेप है

मैं आपका न्यूज चैनल निरन्तर देखता हूँ । ब अच्छा होता है । मैं वैद्य राम कुमार बिन्दल पिछले 4 वर्षों से चिकित्सा कार्य कर रहा हूँ । ईश्वर कृपा से ब अच्छी प्रैक्टिस है । पूरे पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थ तथा हिमाचल से रोगी निरन्तर आते हैं, यहां तक f अहमदाबाद, कलकता, बम्बई, लखनऊ, कानपुर तक भी कभी-कभी रोगी चिकित्सा हेतु आते हैं । स्वाभावि ही है कि सामान्य रोगी तो इतनी दूर से नहीं आयेंगे अतीव दु:खी कठिन रोगों से ग्रस्त, असाध्य व कष्टसाध रोगी ही इतनी दूर से आते हैं । विषय लम्बा न हो आंपका समय मूल्यवान है । अत: साथ में अति संक्षि पारिवारिक परिचय व दो पुस्तिकायें भेज रहा हूँ । कृप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



य निकालकर अवश्व पढ़ें। हमारे लेख सैंकड़ों पत्रिकाओं कठिन रोगों पर छप चुके हैं। मैं अखिल भारतीय युर्वेद महासम्मेलन का केन्द्रीय सदस्य भी हूँ।

हिन्दुस्तान टाइम्स में 20-10-2002 को एक ब्रा छपा था जिसका शीर्षक था NEW AGE NGERS, AYURVEDIC MEDICINES यह भी आध ोन बातों को लेकर लिखा गया था। मैंने इस पर वाज उठाई थी और अनेक आयुर्वेद की बड़ी संस्थाओं इसे उठाया था। सरकार के द्वारा जवाब तलब किया । तो एम्स के डॉक्टर सोरिश भट्टाचार्य तथा हिन्दुस्तान म्स को लिखित माफी मांगनी पड़ी और अखबार में ना पड़ा। इसकी कापी आपको भेज रहा हूँ।

यह कहा गया है कि आयुर्वेदिक दवाइयों के ई मानक नहीं होते तथा सीरप व टेबलेट बनते दिखाये हैं। कहा गया कि यह खराब हो सकती है, इनमें री हानिकारक द्रव्य हो सकते हैं। यह बिल्कुल गलत रोप है कि यह आयुर्वेद को बदनाम करने का बहुराष्ट्रीय ोपैथिक कम्पनियों का षडयंत्र और ईर्ष्या से प्रेरित बात ाती है। इन्होंने जाल फैलाकर किसी प्रकार से इस म को सर अंजाम करा लिया है। आयुर्वेद के विश्व में ते प्रचार-प्रसार व रूतबे से ये लोग ईर्ष्या कर रहे हैं र इसकी बढ़ती लोकप्रियता इनको हजम नहीं हो रही । अनेक देशों में आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय खुल चुके । इन बहुराष्ट्रीय एलोपैथिक कम्पनियों को लग रहा है भविष्य में उनकी बिक्री घटेगी जबकि आयुर्वेद व योग काम बढ़ेगा। वास्तव में ऐसा नहीं है काम किसी का ता या बन्द नहीं होता क्योंकि विश्व की आबादी 600 ोड़ से अधिक है और बढ़ रही है। अनेक ऐसे रोग व टकालीन व दुर्घटनाओं से उत्पन्न समस्यायें बढ़ती जा हैं, तो एलोपैथिक का काम कैसे घटेगा ? परन्तु बात म की भावना की है। इन्होंने अपने पेट को इतना बड़ा लिया है कि उसकी पूर्ति होना असम्भव है। चाहे हें दो रोटी भीं हजम न हो। जबकि आयुर्वेद में प्रारम्भ ही स्पष्ट शिक्षा दी जाती है कि चिकित्सा को व्यापार समझ कर न करें, बल्कि सेवा भाव से कल्याण के लिए करें। यह अतीव सस्ती पद्धति संसार के प्रत्येक भाग तक आयुर्वेद के प्राचीन ऋषियों द्वारा प्रचारित की गई है और ग्राम-ग्राम तक उपलब्ध है। एलोपैथी में तो टेस्ट भी करवाने के लिए गरीबों को घर के बर्तन तक भी बेचने पड़ जाते हैं।

यह कहना कि आयुर्वेदिक दवाइयों के कोई मानक नहीं हैं, गलत है क्योंकि G.M.P. सभी पैथियों पर लागू हो चुकी है और इसके अनुरूप दवाइयां भी बन रही हैं, जिसमें अंग्रेजी व देसी दवाइयों पर समान रूप से नियम लागू हैं।

सर गंगा राम अस्पताल के डाक्टर नीरज जैन तथा डाक्टर आशु रोहतगी शायद एलोपैथिक बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के जाल में फंस कर कह रहे हैं कि आयुर्वेद में Research (शोध कार्य) नहीं होता जबकि एलोपैथिक में करोड़ों रुपया शोध पर खर्च करते हैं। यह बड़े ही अज्ञान की बात है। यदि जानकारी न हो तो पहले प्राप्त करके तब टी०वी० पर बोलना चाहिए और इस प्रकार इण्डिया टी०वी० को देखने वाले लाखों लोगों को गुमराह करने जैसा गलत कार्य नहीं होता। अरे छोटे भाइयों एलोपैथिक की दवाइयों को चूहों, खरगोशों, मेढकों व बन्दरों पर टेस्ट किया जाता है और यान्त्रिकी टेस्ट से साबित करते हैं कि इस दवा का यह प्रभाव है, पर क्या ये जानवर इस दवा के खाने से होने वाले दुष्प्रभाव यथा जलन दर्द, थकावट, घबराहट आदि-आदि हुई क्रियाओं को बयान कर सकते हैं और इसके बाद ये दवाएं विकासशील देशों में लोगों को गिनीपिग बनाकर रिपोर्ट लेने का प्रयास करते हैं जोकि कभी भी 100 प्रतिशत सही नहीं हो सकती क्योंकि दवा खाने वाले को अंधेरे में रखा जाता है। परन्तु आयुर्वेद का शोध कार्य प्रारम्भ में ही महातपस्वी आयुर्वेद के महाऋषियों अति संवेदनशील व्यक्तियों द्वारा दवा खाकर अपने ऊपर प्रयोग किये हैं, जिसका अति सूक्ष्म अध्ययन उन्होंने किया और आज भी उच्च कोटि के वैद्य यह ही करते हैं और ऐसा ही होम्योपैथिक के प्रणेता डॉक्टर हैनिमैन तथा अन्य



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



डॉक्टरों ने किया । इसके पश्चात् ये चिकित्सक अपने परिवार अथवा शिष्यों व स्वयंसेवकों पर इसके प्रभाव का अध्ययन करते हैं । हमारे परिवार में भी ऐसी परम्परा है और आज भी वे प्राचीन औषधियां हजारों वर्षों से करोड़ों लोगों पर प्रयोग की जा चुकी स्वयं सिद्ध हैं । इसके मुकाबले में एलोपैथिक की शोध किसी स्तर पर नहीं होती ।

डॉक्टर नीरज जैन व डॉक्टर आशु रोहतगी कृपया अपने गिरेबान में झांककर देखें । आपकी कई एलोपैथिक दवाइयां मार्केट में आने के 5-10 साल बाद अति हानिकारक सिद्ध होने के बाद बन्द हो जाती हैं या प्रतिबंधित कर दी जाती हैं । मेरे जीवन काल में ही सैकड़ों दवाइयां नई आईं और फेल होकर बन्द हो गईं और फिर भी आप इतना गुमान कर रहे हैं । अभी आधुनिक लेबोरट्रीज शैशव अवस्था में है । अनेक चीजों में टेस्ट करने पर घटिया, बढ़िया का एक ही परिणाम मिलता है । ऐसे अनेकों उदाहरण हैं मिसाल के तौर पर हिंगुल (सिंगरफ) जो कि 100 रुपये किलो की दवा है, का टेस्ट परिणाम मरक्यूरिक सल्फाइड है और 400000 रुपये किलो की दवा स्वर्णवसन्तमालती, स्वर्णसूतशेखर, स्वर्णभस्म, मुक्तापिष्टी, मुक्तासुक्ति भस्म, मुक्तापिष्टी, मुक्तासुक्ति भस्म, मुक्तापिष्टी, मुक्तासुक्ति भ

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



में लोगों को जानकारी ही नहीं है । वे वैद्य की देखरेख में ही प्रयोग होती हैं और सब जगह उपलब्ध भी नहीं होती हैं ।

(1) आपके इस 22-10-2006 के प्रसारण में पहला विषय था कि याददाशत बढ़ाने वाली दवाइयां गलत, झूठ व गुमराह करने वाली हैं इनसे लाभ नहीं बल्कि हानि होती है । इसमें मेरा यह निवेदन है कि एलोपैथी में तो निश्चित रूप से याददाशत बढ़ाने की दवा नहीं है । परन्तु आयुर्वेद में हजारों वर्षों से समय की कसौटी पर कसी गई खरी और करोड़ों व्यक्तियों पर आजमाई गई उत्तम गुणकारी औषधियां हैं । जड़ी-बूटियों में ब्राह्मी, शंखपुष्पी, पोहकरमूल, वचा, दुग्धवचा, त्रिफला, आंवला, जटामांसी, सुगन्धवाला आदि-आदि अनेक बूटियां तथा उनके बने अनेक योग यथा सारस्वतारिष्ट, सारस्वत चूर्ण, ब्राह्मीघृत, ब्राह्मी चूर्ण, ब्राह्मी शंख्पुष्पी सिरप, ब्राह्मी वटी, ब्राह्मी तेल, ब्राह्मी आंवला तेल, स्मृति टेबलेट, स्मृति सिरप आदि-आदि औषधियां हजारों वर्षो से परीक्षित हैं और कोई भी दुष्प्रभाव नहीं होते हैं और यह सब हर्बलज हैं । डॉक्टर आशु रोहतगी जी से विनम्र निवेदन है कि पहले अपने ज्ञान में विस्तार करें । याददाश्त बढ़ाने की अनेकानेक दवाओं पर बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय व केन्द्रीय आयुर्वेद परिषद् में शोध कार्य करके उत्तम परिणाम पाये हैं । इतनी बड़ी विश्व की सर्वोत्तम वैज्ञानिक उपलब्धि, अपनी महान संस्कृति आयुर्वेद जो कि यूनानी व एलोपैथिक की जननी है, के बारे में कहने से पहले अध्ययन तो कर लेते, अधकचरे ज्ञान से बड़ी हानि होती है (LITTLE KNOWLEDGE IS DANGEROUS THING)।

(2) यह कहना है कि खून साफ करने वाली दवाइयां कोई काम नहीं करतीं और खून साफ करने की कोई दवा नहीं होती और यह लीवर खराब करती हैं इन पर रोक लगनी चाहिए । डॉक्टर नीरज जैन से निवेदन है कि वे भी पहले गहन अध्ययन करें फिर बोलें । यह बात एलोपैथी पर ठीक बैठती है कि इसमें खून साफ करने वाली दवाई नहीं है । यदि किसी को फोड़े फुंसी, खारिश, चम्बल दाद वगैरा हो तो उन्हें SULPHA GRO... PENICILLIN GROUP, ANTIBIOTICS आदि प्रयोग ... जाते हैं । इनसे रोग दब जाता है और भारी हानि ... सम्भावना बनी रहती है । इसी कारण उपरोक्त दवाइ... से कई प्रतिबंधित हो चुकी हैं । परन्तु आयुर्वेद में ... चिकित्सा ही अधिकतर रक्त विकारों में की जाती है ... कि साफी, रक्त शोधक सिरप, टेबलेट, मुसफ्फा, ... सफा, निर्मली, शोधन, अर्कउशवा मुरकब्ब, ... मंजिष्ठादिरिष्ट, अमृतादि क्वाथ, योग, रिष्ट, सत्व, खदिरा... सारिवाद्यारिष्ट आदि-आदि सैंकड़ों दवाइयां अनेक कम्प... की मार्केट में आ रही हैं । ये सब हर्बलज हैं । उनकी ... प्रतिक्रिया हानि ज्ञात अथवा रिपोर्टिड नहीं है । ... नीरज जैन का यह कहना है कि ये लीवर को ... करती हैं सरासर झूठ, गलत व बेबुनियाद है बल्कि ... साहब जरा अध्ययन करें और लीवर की दवाइयों के ... पढ़ें जिन्हें वे हररोज इस्तेमाल कर रहे हैं जैसे कि लिव... रक्त शोधन करने वाली दवाइयों में डलने वाली ... बूटियां लीवर भी ठीक करती हैं । वे ज्वर, पीलि... कामला, आंत्रविकार, गैस कब्ज को भी ठीक करत... तथा शरीर के चयपचय (METABOLISM) को नि... करती हैं तथा बिटर टानिक हैं और प्रोटीन डिफैक्ट ... करती है । यदि आप किसी तेज दवाइयों रस भस्मों ... बात करते हैं जो कि आपने अपने बयान में खुलासा ... किया है तो वह बेमानी है क्योंकि इन दवाइयों का ... प्रचार-प्रसार होता है न ही जनता को इसके ... जानकारी रहती है । यह केवल वैद्यों द्वारा ही प्रयोग ... जाती हैं और वे भली-भांति जानते हैं कि इन्हें कैसे ... किस स्थिति में प्रयोग किये जायें । आप कहते हैं ... प्रतिबंधित करना चाहिए तो इनसे पहले सैंक... (ANTIBIOTICS, SULPHA DRUGS, STERO... HARMONES, CHEMOTHEREPY MEDICI... आदि-आदि अनेक दवाइयां पहले बैन करनी होंगी ... कुप्रभाव हैं परन्तु लाभ भी भारी हैं । बात केवल चिकित्... के प्रयोग करने की है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(3) SLIMMING PILLS की बात कही गई है इसे स्पष्ट नहीं किया गया । ये अधिकतर मार्केट में एलोपैथिक की हैं । जो आयुर्वेद की आ रही हैं वह 90 प्रतिशत गुग्गलु योग हैं । यथा मेदोहर गुग्गलु, व्योषादि गुग्गलु, त्र्यूषनादि गुग्गलु व लौह, योगराज गुग्गलु आदि-आदि प्रयोग किये जाते हैं उनके कुप्रभाव खास नहीं हैं केवल यह है कि गुग्गलु से अम्लपित्त बढ़ता है वह भी मोटे आदमियों में बहुत कम क्योंकि मोटे आदमी कफज व वात प्रकृति के होते हैं तथा मेदवृद्धि वाले होते हैं । इन्हें दुष्प्रभाव अत्यन्त कम होता है । यह गुग्गलु सारे प्रकार के जोड़ों के दर्द में उत्तम काम करते हैं जोकि मोटे आदमियों को होता ही है ।

सबसे महत्वपूर्ण बात को फिर कह रहा हूँ कि दवा को चिकित्सक की देखरेख में ही लेना चाहिए । कोई भी चीज चाहे वह अमृत ही हो और चाहे दूध, दही, घी, फल और अच्छे भोजन ही हों अधिक मात्रा में लेने पर हानि करते हैं । तो फिर दवाइयां अधिक लेने से हानि करेंगी ही ।

अधिक जानकारी के लिए हम से सम्पर्क कर सकते हैं ।

**वैद्य राम कुमार बिन्दल,**
श्री बिन्दल रसायनशाला, सोलन
दूरभाष : 01792 - 222368, 222369, 220070
655368, 655369, 655370

## सही योजना बनाकर आयुर्वेद का विकास करें

सेवा में,

श्रीमान् सम्पादक महोदय
सचित्र आयुर्वेद, पटना

आपकी औषधि लोक विख्यात है, यह भारतवर्ष की देन है । आयुर्वेद व्यवस्था पर नियंत्रण भारतीय मनीषियों की योग साधना का प्रतिफल रहा जो सोने की चिड़िया कहा जाता है कारण कि जड़ी-बूटियों के द्वारा स्वर्ण मुद्रा अर्जन होता रहा । आप प्रत्येक व्यक्ति को धनवान बनाकर राष्ट्र के विकास धर्म निभावें ।

कारण विदेशी कम्पनियां जिनका उद्देश्य केवल पैसा कमाना और धन का अधिकार कर मनमाना करना है । कुशल व्यक्ति को नेटवर्क के जरिए हरबो-हरबो चिल्लाकर महंगा से महंगा उत्पाद बेचवा रही है । हमारे मन मस्तिष्क पर नियंत्रण कर यहां की औषधियों पर नियंत्रण कर रही है । कृपया योजना बनावें ।

प्रत्येक गाँव में औषधि बिक्री केन्द्र, प्रत्येक व्यक्ति स्वस्थ हो, प्रत्येक गाँव में औषधि की खेती, कृषि से समृद्धिशाली बनें । धन तो विदेश से निर्मित औषधि द्वारा आये । (कच्चे माल) जड़ी बूटियों की आपूर्ति से आया तो यहाँ से जड़ी-बूटी चली जायेगी । धन चल जायेगा । लोग अस्वस्थ्य रहेंगे और ये मनमाना कार्य करेंगे ।

**रामअवतार गुप्त,** आयुष्मान चित्र मंदिर
(निकट यूनियन बैंक) मिल्कीपुर, आजमगढ़

## भूल सुधार

सेवा में,

श्रीमान् सम्पादक महोदय
सचित्र आयुर्वेद, पटना

मैं आपका ध्यान 'सचित्र आयुर्वेद' के फरवरी 06 अंक में प्रकाशित मेरे लेख- "आयुर्वेद में संस्कार और उसकी उपयोगिता" की ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ जो पृष्ठ संख्या 571 पर प्रकाशित है । इस अंक में जो विषय सूची पृष्ठ 562 पर प्रकाशित की गई है उसमें क्रम संख्या 3 पर मेरा उक्त लेख सन्दर्भित है, किन्तु लेखक के नाम के स्थान पर मेरा नाम नहीं होकर वैद्य पी०एस०अंशुमान नाम अंकित है । क्या उक्त लेख का पत्र-पुष्प वैद्य अंशुमान जी को भेज दिया गया है ? सूचनार्थ निवेदन है आशा है इसका संशोधन करने की कृपा करेंगे ।

(सचित्र आयुर्वेद आपका अभारी है कि आपने मुद्रण सम्बन्धी भूल की ओर ध्यान आकृष्ट किया है भूल के लिए हमें खेद है - सम्पादक)

**आचार्य राजकुमार जैन**
राजीव काम्प्लेक्स के पास, इटारसी (म०प्र०)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# पाटलिपुत्र के नागरिकों की ओर से स्व० पं० बनवारी लाल शर्मा को हार्दिक श्रद्धांजलि समर्पित

पटना 17 दिसम्बर, 2006

आज श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना के प्रांगण में प्रतिष्ठान के प्रबन्ध निदेशक सह चेयरमैन एवं राजगीर बुद्ध विहार सोसायटी के उपाध्यक्ष, स्व० पं० बनवारी लाल शर्मा की स्मृति में श्रद्धांजलि सभा आयोजित की गयी। इस सभा में भाग लेने वाले सभी लोगों के नयन अश्रुपूरित थे तथा कण्ठ अवरूद्ध थे। शोक भरे माहौल में उपस्थित समस्त जनों ने स्व० पं० बनवारी लाल शर्मा की तैल प्रतिमा पर माल्यार्पण किया।

सभा का संचालन करते हुए 'सचित्र आयुर्वेद' के सम्पादक, श्री विमल चन्द्र झा ने स्व० पं० बनवारी लाल शर्मा के बहुआयामी व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला। इसके पश्चात् नालन्दा मुक्त विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति, डा० कुमार विमल ने स्व० शर्मा जी के गुणों पर प्रकाश डालते हुए सलाह दी कि उनकी स्मृति में हिन्दी और अंग्रेजी भाषा में पृथक्-पृथक् ग्रन्थों का प्रणयन करना चाहिए। साथ ही आयुर्वेद के छात्रों को छात्रवृत्ति देनी चाहिए। एक हरबेरियम (जड़ी-बूटी का उद्यान) की भी स्थापना करनी चाहिए। तत्पश्चात् प्रतिष्ठान के प्रबन्धक, डा० एल० के० चौधरी ने प्राप्त शोक-संदेशों का वाचन किया। वाचन के क्रम में उन्होंने स्व० शर्माजी के गुणों पर विस्तार से प्रकाश डाला।

बिहार राज्य के देसी चिकित्सा के निदेशक, डा० अनिरूद्ध मिश्र ने बताया कि आयुर्वेद के उत्थान के लिए वे हमेशा चिन्तित रहते थे। साथ ही इसके लिए कभी भी समय देने में संकोच नहीं करते थे।

राजगीर बुद्ध विहार सोसायटी की सचिव, डा० (श्रीमती) महाश्वेता महारथी ने रूद्ध कण्ठ एवं अश्रूपूरित नयनों से अपने उपाध्यक्ष, स्व०पं० बनवारी लाल शर्मा को श्रद्धांजलि दी। उन्होंने गीता का उदाहरण देते हुए बताया कि वे स्थित प्रज्ञ थे। सन्तों की वे सदा सेवा करते थे। राजगीर बुद्ध विहार सोसायटी की स्थापना के सिलसिले में सबसे पहले उन्होंने ही पचास हजार रुपयों का चेक दिया था। उन्होंने इस बात पर कृतज्ञता ज्ञापित की कि अत्यन्त कम उम्र में ही वह सोसायटी की सचिव बनी। यह उनके (स्व० शर्माजी) के ही आशीष का प्रतिफल था।

बिहार पुलिस सेवा के शीर्षस्थ सेवानिवृत्त पदाधिकारी, श्री रामचन्द्र खां, आई.पी.एस. ने बताया कि 40 वर्ष पूर्व वे अपने पिता के श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के तत्कालीन संयुक्त प्रबन्ध निदेशक, स्व० पं० दुर्गा प्रसाद शर्मा के यहां आये थे। उसके पश्चात् स्व०पं० बनवारी लाल शर्मा से मुलाकात हुयी। वस्तुतः उनके जीन्स में बड़ा आदमी का गुण था। वे नम्रता और शिष्टाचार की प्रतिमूर्ति थे। तूफानों एवं झंझावातों में उनकी गति अप्रतिहत थी। समाज के प्रति उनकी गहरी चिन्ता थी। उनके अनुभव का ऋण चुकाया नहीं जा सकता।

इस अवसर पर सभा को सम्बोधित करने वालों में प्रमुख थे - श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना के पूर्व महाप्रबन्धक, **श्री माहेश्वर मिश्र,** बिहार सरकार के राज्य औषधि नियंत्रण विभाग के पदाधिकारी, **श्री विनोद कुमार,** इण्डियन फार्मेसी ग्रेज्युट्स एसोसियेशन के सचिव, **डा०एस०पी०सिंह,** औषधि निर्माता, **श्री नन्द किशोर प्रसाद,** राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय के भूतपूर्व प्राचार्य, प्रोफेसर **डा० नन्दगोपाल बन्दोपाध्याय,** प्रख्यात् राष्ट्रीय कवि, **श्री जितेन्द्र राठौर** एवं अन्य।

श्रद्धांजलि का समापन **स्व० पं० बनवारी लाल शर्मा** की तैल प्रतिमा पर पुष्पांजलि अर्पित करने के पश्चात किया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

### गुजरात

### "आयुर्वेद संकुल आणंद में प्रान्तीय शताब्दी समारोह" सम्पन्न

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन अपना सौ वर्ष पूरा कर रहा है । इस उपलक्ष्य में आणंद स्थित वैद्यराज हरिनाथ झा द्वारा संस्थापित आयुर्वेद संकुल में एक सौ का नि:शुल्क आयुर्वेद निदान-चिकित्सा शिविर का आयोजन किया गया जो वैद्य समाज के लिए गौरव प्रदान करने वाली बात है । इस अवसर पर समस्त गुजरात से वैद्यों का प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्थाओं के प्रमुख, मंत्री एवं कारोबारी सदस्यगण अपने साथ बेनर तथा मशाल (आयुर्वेद ज्योत) लिए ता० 18/11/06 को आयुर्वेद संकुल आणंद में पहुँचे जहाँ गुजरात प्रदेश वैद्य मंडल के पदाधिकारीगण, नगरपति, चारूतर विद्यामंडल के चेयरमैन तथा अखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन के महामंत्री ने आयुर्वेद ज्योत का स्वागत किया तथा अखण्ड ज्योत के स्वरूप उसे प्रस्थापित किया । वैद्यराज हरिनाथ झा का मानना है कि आयुर्वेद की संस्थाएँ एवं संगठनें तीर्थ समान हैं, ऐसे अनेक तीर्थों से आए आयुर्वेद ज्योत को अखण्ड रखा जाय ताकि नई पीढ़ी के युवा वैद्यों को उससे सतत् प्रेरणाएँ मिलती रहे ।

मिथिला का गौरव मानिक चौक, सीतामढ़ी, बिहार जिनकी जन्मभूमि है, आयुर्वेद संकुल आणंद, गुजरात को कर्मभूमि बनानेवाले आयुर्वेद के विद्वान वैद्यराज हरिनाथ झा को "धीयूषपाणि" सम्मान से सम्मानित करते हुए डा० मुरली मनोहर जोशी, पद्मश्री देवेन्द्र त्रिगुणा, श्री रामशर्माजी, श्री एस०के०मिश्राजी, वैद्य रामप्रसाद मिश्रजी, डा०सी०एल०पटेल तथा डा० निरंजन त्यागी दृष्टिगोचर हो रहे हैं । अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के शताब्दी महोत्सव पर यह सम्मान दिया गया । हरिनाथ झा के पिता वैद्य महेन्द्र झा बिहार के राजकीय चिकित्सा पदाधिकारी थे ।

आयुर्वेद ज्योत के पास ही आयुर्वेद जगत् के विद्वान एवं वयोवृद्ध वैद्यों द्वारा आयुर्वेद की ध्वजा की पूजा अर्चना करके आयुर्वेद संकुल में फहराया गया । आयुर्वेदध्वज आयुर्वेद की गरिमा का परिचायक है । शास्त्रीय संगीतों की सुरावलि, आयुर्वेद वंदना के गीत, आयुर्वेद झंडागान, प्रादेशिक वाद्य संगीतों तथा देशभर के विद्वान वैद्यों की उपस्थिति से आयुर्वेद संकुल का वातावरण नयनरम्य एवं आयुर्वेदमय हो गया ।

आयुर्वेद मेडिकल सोसायटी आणंद द्वारा टाउन हॉल आणंद में द्विदिवसीय भव्य निदान कैम्प का आयोजन किया गया । इस निदान-चिकित्सा शिविर में देशभर के तीन सौ वैद्यों को बुलाया गया था और ग्यारह लाख रुपयों की आयुर्वेदिक दवाएँ नि:शुल्क वितरित की गयीं । मानद सेवा प्रदान करने वाले वैद्यों को संस्था द्वारा सम्मानित किया गया । साथ ही उनके आने-जाने-ठहरने तथा भोजन आदि की समुचित व्यवस्था की गई थी । कुल बारह हजार पाँच सौ रोगियों को दस-दस दिनों की दवाइयाँ मुफ्त में दी गईं साथ ही एलान किया गया कि रोग सम्पूर्णतया मिटने तक "आयुर्वेद संकुल" आणंद द्वारा मुफ्त दवाइयाँ मिलेंगी ।

गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन का पच्चीसवाँ अधिवेशन ता० 18 एवं 19 नवम्बर 2006 को टाउन हॉल, आणंद में आयोजित किया गया । एक हजार वैद्य टाउन हॉल के अन्दर तथा एक हजार वैद्य टाउन हॉल परिसर में एकत्रित थे । दृश्य-श्रव्य की व्यवस्था की गई थी । परिसर में आयुर्वेद मेला का आयोजन किया गया था । वयोवृद्ध वैद्य कान्तिभाई जानी ने पंचकर्म के पितामह वैद्य हरिदास कस्तूरे को प्रान्तीय अध्यक्ष का कार्यभार सौंपा । इस अवसर पर केन्द्रीय संगठन मंत्री वैद्यराज हरिनाथ झा ने गुजरात के दिवंगत मूर्धन्य विद्वानों का स्मरण कराते हुए आयुर्वेद जगत में गुजरात के योगदान, गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी, आयुर्वेद विकास मंडल तथा वनौषध उद्यानों की चर्चा की । आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार में गुजरात की सक्षमता को दर्शाया । वैद्य नन्दूरवारकर, वैद्य टी०एल०स्वामी, वैद्य वी०एन०लाठीया, वैद्य बलदेव प्रसाद पनार, वैद्य हरिभाई त्रिवेदी, वैद्य जनकभाई उपाध्याय, वैद्य पी०एम०उपाध्याय,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वैद्य माधवाचार्य, वैद्य सलिल आचार्य आदि ने प्रासंगिक एवं ज्ञानवर्धक प्रवचन किए । पच्चीसवें अधिवेशन पर देश भर से आये गणमान्य पच्चीस वैद्यों का सम्मान किया गया जिसमें वैद्य रामवीर शर्मा, उदयपुर, वैद्य गजेन्द्र जैन ग्वालियर, वैद्य दिनानाथ उपाध्याय, मुंबई, वैद्य हरिसुमन त्रिवेदी, गांधीनगर, वैद्य विक्रम उपाध्याय, गांधीधाम, वैद्य सुवेखान पठाण वैद्य मलिदान बारोट आदि का सन्मान किया गया ।

**अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन प्रान्तीय शताब्दी महोत्सव तथा गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन का पच्चीसवाँ अधिवेशन आयुर्वेद संकुल आणंद में मनाया गया । टाउन हॉल आणंद में शताब्दी महोत्सव का उद्घाटन करते हुए डा० मुरली मनोहर जोशीजी, पद्मश्री देवेन्द्र त्रिगुणाजी, वैद्यराज हरिनाथ झा तथा स्त्रीवैद्य फाल्गुनी झा दृष्टिगोचर हो रहे हैं ।**

समस्त गुजरात के वैद्यों ने आयुर्वेद संकुल आणंद के संस्थापाक तथा सतत् दो अधिवेशनों के आयोजक एवं गुजरात के मूर्धन्य विद्वान एवं सिद्धहस्त वैद्यराज हरिनाथ झा का दबदबापूर्वक - पाघड़ी-शाल-अमृतकलश-हार एवं स्मृति चिन्हों द्वारा सम्मान किया । वैद्यराज झा साहब की ओर से बारह सौ वैद्यों की उतारा व्यवस्था एवं ढ़ाई हजार वैद्यों की सतत् तीन दिनों की चाय-नाश्ता एवं भोजन की व्यवस्था की गई थी ।

ता० 19-11-2006 रविवार आयुर्वेद संकुल आणंद तथा टाउन हॉल, आणंद सहनाइयों की सुरीली आवाजों से गूंज रहा था, प्रात: 8 बजे आयुर्वेद संकुल पर आयुर्वेद ध्वज फहराया गया । प्रात: 8 से 10 बजे तक विद्वान और दूर-सुदूर से आनेवाले वैद्यगण एक-दूसरे से मिलते और चाय-नाश्ता का आनंद लेते रहे ।

10 बजे पूर्व मानव संसाधन मंत्री मुरली मनोहर जोशी जी का आगमन हुआ । उनके साथ ही पद्मश्री देवेन्द्र त्रिगुणा, श्रीरामशर्मा, वैद्य श्री एस०के०मिश्रा, वैद्य गणपति मिश्र, वैद्य निरंजन त्यागी, वैद्य कान्तिभाई जानी, वैद्य एस.कस्तूरे, डा०सी०एल०पटेल और डाबर के श्री घडियार स्वागताध्यक्ष वैद्यराज हरिनाथ झा के साथ मंच पर विद्यमान थे । कु० शिवांगी और कु० सुश्रुत ने स्वागत नृत्य पश्चात् वैद्यराज हरिनाथ झा, डा०सी०एल० पटेल तथा नितिन घड़ियार ने मंचासीन मेहमानों का स्वागत फूलहार, शाल तथा स्मृति चिन्हों द्वारा किया । स्वागत प्रवचन में वैद्यराज झा नें आयुर्वेद के स्वर्णिमयुग को बतलाते हुए जन सामान्य में आयुर्वेद की ज्योत जलाने वैद्यों को स्वावलम्बी बनने की हिदायत दी । पद्मश्री देवेन्द्र त्रिगुणा ने पिंछले दशकों में आयुर्वेद की प्रगति का जिक्र करते हुए आयुर्वेद के विकास की रूप रेखा प्रस्तुत की ।

माननीय मुरली मनोहर जोशी जी ने बड़ा सुन्दर प्रवचन करते हुए आयुर्वेद के मर्मो को समझाया चिकित्सा जगत् में "बिना आयुर्वेद नहीं उद्धार" को सार्थक बताया । इसी अवसर पर "ज्ञान कल्याण न्यास" द्वारा एक संस्कृत के विद्वान तथा एक आयुर्वेद लेखिका का सम्मान किया गया । अ०भा०आयु०म० द्वारा गुजरात के 11 विद्वानों को पीयूषपाणी एवार्ड सम्मानित किया गया । 1. वैद्य धनशंकर पंडित 2. धनश्याम महाराज 3. वैद्य लाभशंकर शुक्ल 4. वैद्य कान्ति जानी 5. आचार्य हरिदास कस्तूरे 6. वैद्य माधवाचार्य 7. वैद्य ए.एस.गुप्ते 8. वैद्य टी.एल. स्वामी 9. वैद्य हरि झा 10. वैद्य शलिल आचार्य एवं 11. वैद्य एच. पंड्या ।

मध्याहन् तीन बजे कार्यकारिणी समिति की बैठक तथा खुला अधिवेशन किया गया । सायं सात बजे समारोह का समापन किया गया ।



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



गुजरात

**जोडिया सौराष्ट्र में धन्वन्तरि सप्ताह का आयोजन**

जोडिया सरकारी आयुर्वेद हॉस्पीटल के अंतर्गत ग्राम आरोग्य सुधारणा योजना के अंतर्गत सरकारी आयुर्वेद हॉस्पीटल जोडिया के पंचकर्म वैद्य प्रवीण भाई पंडया ने आयुर्वेद निदान चिकित्सा शिविर में 1356 रोगियों को मृतपेय क्वाथ पिलाकर जोडिया तहशील के केशिया, बाबापर, बादनपर अन्य गांवों में जाकर रोगियों को आयुर्वेद चिकित्सा से लाभान्वित किया । 10 वर्ष से कम आयु वाले 690 बालकों को सुवर्ण प्राशन चिकित्सा देकर रोगों से रक्षण दिलाने का उत्तम कार्य किया और लोक चाहना प्राप्त की । गु०प्र०आ०सम्मेलन की ओर से इस कार्य के लिये हार्दिक बधाई दी गई ।

**अखिल भारतीय वनौषधि अभ्यास मंडल**

अखिल भारतीय वनौषधि अभ्यास मंडल के अध्यक्ष वैद्य श्री हिरूभाई पटेल, मंत्री, डा० के० एन० पटेल द्वारा साधारण सभा का आयोजन 10-12-2006 रविवार के दिन अहमदाबाद म्यु०कार्पो० संचालित वनौषधि उद्यान सुमति उद्यान तारणपुरा में मंडल के सदस्यों की बैठक आगामी शिविर धरमपुर के जंगल में 23-24-25 दिसम्बर का आयोजन करने का प्रस्ताव प्रारित किया गया । सभी सदस्यों को उसमें हिस्सा लेने के लिए आह्वान किया गया ।

**पार्किन्सन्स डिसीज सोसा० गुजरात**

वैद्य नीताबेन गोस्वामी द्वारा पार्किन्सन्स (कंपवात) के रोगियों के लिये दि० 24 से 29 नवम्बर तक एलिसब्रिज स्थित नगर में योग साधना आश्रम द्वारा इस शिविर में रोज सुबह 7 से 8 तक योगाचार्य बिरजू आचार्य द्वारा एवं डा० हेरा मणियार, डा० सुधीर शाह अन्य सहयोगियों के साथ मिलकर इस शिविर का आयोजन कर कंपवात के रोगियों को लाभान्वित किया गया ।

**आरसूत्र रिसर्च सेन्टर, नई मुम्बई**

YMT Ayurvedic Medical College & Hospital Institutional Area, Sector-4, Kharghar. Navi Mumbai में पंडित आचार्य श्रीराम शर्मा के करकमलों द्वारा "KARD II" Ksharsuta & Ano-rectal training workshop का उद्घाटन संपन्न हुआ । Course Director Vaidya Mahesh Sanghavi द्वारा इस कार्यक्रम का संचालन किया गया ।

**Integrated Approach to Overcome Depression**

AADAR संस्था द्वारा वैद्य प्रेरक शाह द्वारा संचालित दिनांक 26/11/2006 के दिन AMA Complex के सभागृह में UK स्थित आयुर्वेद चिकित्सक वैद्य अश्विन वारोह एवं मनोरोग चिकित्सक डॉ० हेमांग देसाई द्वारा परिसंवाद का आयोजन संपन्न हुआ ।

## Dr. PANDYA HONOURED

An award 'PIYUSH PANI' was presented to Dr. M.N. Pandya (Madhi) Gujarat-by Ex. Minister for of Social Welfare and Education Mr. Murli Manohar Joshi on the eve of 25th annual conference of All India Ayurveda Congress held at Anand (Gujarat) on 19th November.

Formerly Dr. Pandya was also awarded AYURVEDA JYOTIRDHAR by Gujarat Pradesh Ayurveda Vikas Mandal.

Dr. Pandya is regural contributor of scientific papers in many conferences of Ayurveda as well as in modern medical science.

His papers on 'Genetic Science of Ayurveda'. Diabetese - A Doctor's, Dilemma, - AIDS and its Ayurvedic Approach. etc were abriciated.

Amazingly enough Dr. Pandya practices in remotest rural area since more then sixty years and he is believed to be oldest and eldest



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



practitioner of this region.

Now at thage of 85 he is enthuastic as an young of 18.

## उत्तर प्रदेश

### नूतन वर्ष का बधाई सन्देश

उत्तर प्रदेश के समस्त राजकीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी संवर्ग के चिकित्साधिकारीगण, चिकित्साधिकारी (सामु०स्वा०केन्द्र, प्राथमिक स्वा०केन्द्र, नवीन प्राथ०स्वा०केन्द्र) पाठकगण सचित्र आयुर्वेद, कार्यकारिणी/प्रबन्धकमण्डल सचित्र आयुर्वेद ।

आदरणीय महोदय/महोदया

## नववर्ष 2007

आपके परिवार को अत्यन्त सुख-ऐश्वर्य, उन्नतिशील, समृद्धिशाली, मंगलमय एवं यश प्रदान करे, यह मेरी शुभकामना है ।

(डा० राकेश मोहन शर्मा)
मण्डलीय सचिव-आगरामण्डल
राजकीय आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा, सेवा संघ उ०प्र०
प्रभारी चिकित्साधिकारी
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
बरईशाहपुर-हाथरस (उ०प्र०)

Gurukul Kangri University Control Library Haridwar-249404 (U.A.)

## पंजाब

### पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में बढ़ा कैंसर

पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में पिछले 4 वर्षों में कैंसर के अधिक रोगी हुए हैं जो चिंतनीय है । उक्त शब्द नगरोटा बगवां उद्योग नगर चड्ढा ट्रैडर्स के मालिक गोपाल चड्ढा ने कैंसर गोष्ठी के अवसर पर चामुंडा में कहे । हालांकि कैंसर सम्पूर्ण विश्व के लिए एक चिंता का विषय है जिस पर कई तरह की रिसर्च की जा रही है परंतु नतीजे शत-प्रतिशत सामने नहीं आए हैं । डा०चड्ढा ने कहा कि आयुर्वेद में कुछ ऐसी जड़ी-बूटियां हैं जैसे कि अदरक, तुलसी, गौमूत्र व सदाबहार फूलों से कैंसर की दवाई बनाने में सफलता प्राप्त की है और शीघ्र ही इसका निर्माण भारत सरकार द्वारा शुरू किया जाएगा । गोपाल चड्ढा ने कहा कि नागपुर की एक औषधि निर्माता को पेटेंट मिला है जिसने गोमूत्र से विश्व की पहली ऐसी कैंसर की औषधि की है जिससे लगभग 5000 तरह की बीमारियों से छुटकारा मिलता है ।

## हिमाचल प्रदेश

### डा० गोपाल चड्ढा ने निम्न लिखित समाचार प्रेषित किया है :-

नगरोटा, बगवा, जि०-कांगड़ा में हिमाचल प्रदेश समारोह के अवसर पर विद्वानों को सम्मानित किया गया ।

नाहन में क्षार-सूत्र पर गोष्ठी का आयोजन किया गया । गोष्ठी में बताया गया कि एलोपैथी में शल्य क्रिया में 1500 रुपये खर्च होते हैं जबकि आयुर्वेद के क्षार से चिकित्सा कराने पर काफी कम खर्च होते हैं ।

हमीरपुर में कैन्सर पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया । साथ ही नाड़ी-परीक्षा पर भी एक गोष्ठी का आयोजन किया गया ।

## बिहार

### चन्द्रिका प्रसाद यादव नं० 1 सेवानिवृत्त

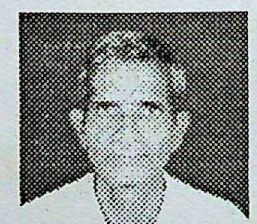

पृथ्वीपुर गली नं० चिरैया टांड़, पटना निवासी स्व० गोप के सुपुत्र, श्री चन्द्रिका गोप यादव नं०1 श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना की सेवा एक लम्बे काल तक थे । प्रथम बार नियुक्ति 1961 में थे । 1963 से निरन्तर सेवा में वे थे । दिसम्बर, माह की पहली तारीख को वे कम्पनी की सेवा से हो चुके थे । सम्प्रति वे अपनी पत्नी, श्रीमती धनराजी एक पुत्र एवं दो पुत्रियों के साथ सुखपूर्वक रह रहे

कम्पनी के विभिन्न विभागों में उन्होंने योगदान दिया था । सेवानिवृत्ति के समय में वे प्रयोगशाला में कार्य कर रहे थे । जांच उपकरण कच्चे रासायनिक पदार्थों की देखभाल करने में वे दक्ष अपने अनुभवों से उन्होंने कम्पनी को काफी प्रदान किए


CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ISSN - 090678 X

# सचित्र आयुर्वेद

# SACHITRA AYURVED

## A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

वर्ष - 58 अंक - 10 अप्रैल - 2006

गव्यं क्षीरं घृतं श्रेष्ठं, सैन्धवं लवणेषु च ।
धात्रीदाडिममम्लेषु, पिप्पली नागरं कटौ ।
तिक्ते पटोलवार्ताकं, मधुरे घृतमुच्यते ।
क्षौद्रं, पूगफलं श्रेष्ठं कषाये सपरूषकम् ।
शर्करा विकारेषु, पाने मध्वासवौ तथा ।
सु०सू० 46/336-337

अर्थात्- दूध और घी में गाय का दूध, घी उत्तम है; नमकों में सैन्धव नमक, खटाई-अम्लरस में अनार और आंवला, कटुरस में पिप्पली और सोंठ, तिक्तरस में पटोल और बैंगन, मधुर रस में घी और शहद, कषाय रस में पूगफल (सुपारी) और फालसा, गन्ने के विकारों में शर्करा; आसवों में मद्यों में मृद्वीका और द्राक्षासव श्रेष्ठ हैं ।

Central Library
Gurukul Kangri University
Hardwar-249404 (U.A.)
8/May/06

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


# अब भूल जाईये महीने की चिन्ता

बैद्यनाथ

## सुन्दरी कल्प फोर्ट

रक्त की कमी, घबराहट, थकावट, हाथ पाँव के तलवे की जलन आदि परेशानियों में फौरन आराम देता है ।

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

बैद्यनाथ

## सुरक्ता

आयुर्वेदिक स्किन टोनर
कील मुहाँसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## प्रो० बनवारी लाल गौड़ राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर के कुलपति नियुक्त

राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर के निदेशक प्रो० बनवारी लाल गौड़ को राजस्थान की राज्यपाल एवं कुलाधिपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल ने राज्य की मुख्यमंत्री श्रीमती वसुन्धरा राजे के परामर्श पर राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर के प्रथम चयनित कुलपति के रूप में दिनांक 16/2/2006 नियुक्त किया है।

प्रो० गौड़ विगत 33 वर्षों से शैक्षणिक संकाय के विभिन्न पदों पर अपनी सेवायें देते हुए गत आठ वर्षों से राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, (आयुष विभाग, भारत सरकार का स्वायत्त संस्थान) जयपुर के निदेशक पद पर कार्यरत हैं। आयुर्वेदीय मौलिक सिद्धान्तों के उद्भट विद्वान प्रो० बनवारी लाल देश के मूर्धन्य आयुर्वेदज्ञों में गिने जाते हैं।

संस्कृत व अंग्रेजी के विद्वान प्रो० गौड़ जर्मन भाषा के भी जानकार हैं। आपकी अब तक 16 पुस्तकें तथा 400 से अधिक वैज्ञानिक व लोकोपयोगी आलेख प्रकाशित हो चुके हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन फैलोशिप के तहत इंग्लैण्ड, श्रीलंका सरकार के अनुरोध पर श्रीलंका तथा हाल (नवम्बर 2005) ही में CII के निमंत्रण पर जोहान्सबर्ग की यात्रा कर चुके श्री गौड़ CCRAS, TKDL, ICMR, CSIR जैसी महत्वपूर्ण व प्रतिष्ठित संस्थानों के साथ एक्सपर्ट रूप में जुड़े हुये हैं। प्रो० गौड़ शीघ्र ही कुलपति पद का कार्य ग्रहण करेंगे।

प्रो० गौड़ के कुलपति नियुक्त होने पर 'सचित्र आयुर्वेद' श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० एवं कृपालु पाठकों की ओर से हार्दिक बधाई। आशा है, उनके सफल एवं कर्मठ नेतृत्व में राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय देश-विदेश में अग्रणी स्थान प्राप्त करेगा। *समस्त शुभकामनाओं के साथ* - सम्पादक

## डा० पी.एन.वी. कुरूप का भव्य अभिनन्दन

दिनांक 5 मार्च, 2006 हिन्दू महासभा भवन, नई दिल्ली में भारत सरकार के पूर्व आयुर्वेद एडवाइजर, जामनगर आयुर्वेद विश्वविद्यालय (गुजरात) के अवकाश-प्राप्त उपकुलपति डा०पी.एन.वी. कुरूप के, भारत सरकार में स्वास्थ्य मंत्रालय के उपक्रम, राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ (नेशनल एकेडमी ऑफ़ आयुर्वेद) का अध्यक्ष मनोनीत होने के उपलक्ष्य में 'आयुर्वेद विश्व परिषद्' ने राष्ट्रीय गुरु (चरक), पूर्व कुलपति, कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय, बिहार एवं आयुर्वेद विश्व परिषद् के, अध्यक्ष तथा अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के संरक्षक, सदस्य डा० आचार्य प्रभाकर मिश्र की अध्यक्षता में डा० कुरूप का भव्य अभिनन्दन किया गया। समारोह के मुख्य अतिथि भारत सरकार के पूर्व आयुर्वेद सलाहकार तथा अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के प्रधानमंत्री एवं वर्तमान आयुर्वेद विद्यापीठ के अध्यक्ष श्री वैद्य शिवकुमार मिश्र थे। आयुर्वेद विश्व परिषद् ने डा० कुरूप को 'आयुर्वेद महर्षि' के मानद् अलंकरण से विभूषित किया। परिषद् के एक महासचिव श्री रवि कौशिक ने नटराज-शिव का प्रतीक चिन्ह डा०कुरूप को भेंट किया तथा पाँच वैद्यों ने पंचकर्म प्रतीक शाल (उत्तरीय) पहनाया। श्री वैद्य धर्मसिंह कौशिक और वैद्य चन्द्रप्रकाश गौसाँई दोनों सचिवों ने माल्यार्पण कर अभिनन्दन किया गया। श्री वैद्य राधेश्याम ब्रह्मचारी, प्रदेश सचिव ने अभिनन्दन पाठ कर परिषद् की रिपोर्ट भी प्रस्तुत की। श्री पी.एन.वी. कुरूपजी ने धन्वन्तरि भगवान की अर्चना की। श्री वैद्य शिवकुमार मिश्रजी ने डा० कुरूप साहब की आयुर्वेद सेवाओं पर प्रकाश डाला। डा० कुरूपजी ने आयुर्वेद विकास पर विस्तार से अपने विचार व्यक्त किये। अध्यक्षीय भाषण करते हुए समारोह-अध्यक्ष आचार्य प्रभाकर मिश्र ने संस्कृत में प्रवचन करते हुए डा० कुरूप तथा शिवकुमार मिश्र एवं उपस्थित वैद्यों का आभार व्यक्त किया।

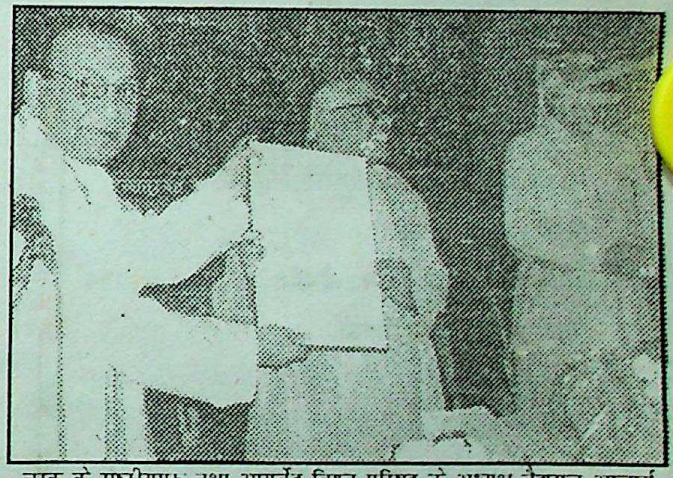

चरक के राष्ट्रीयगुरू तथा आयुर्वेद विश्व परिषद् के अध्यक्ष वैद्यराज आचार्य प्रभाकर मिश्र, राष्ट्रीय आयुर्वेदाविद्यापीठ (भारत सरकार) के नवनियुक्त, अध्यक्ष, डा०पी.एन.वी. कुरूप को आयुर्वेद महर्षि पदवी प्रदान करते हुए। साथ में हैं पूर्व एडवाइजर भारत सरकार श्री शिवकुमार मिश्र

(अभिनन्दन पत्र पृष्ठ सं० 799 पर पढ़ें)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची

वर्ष - 58 अंक - 9 मार्च - 2006

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मूल्य - 10 रुपये प्रति

वार्षिक मूल्य - 100 रुपये प्रति

आजीवन शुल्क - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुल्क - 2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 723

2. आयुर्वेद का इतिहास - 77 725
पं० बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा

3. आगन्तु अपस्मार-एक चर्चा 730
वैद्य पी.एस. अंशुमान

4. उत्तराखण्ड के जनपदों में कुटीर उद्योग एवं 737
खाद्य-सामग्री व औषधीपयोगी वनस्पतियाँ
डा० मायाराम उनियाल

5. प्राकृतिक चिकित्सा- आयुर्वेद का एक अंग 741
विशेष
डा० रजनी बाला
डा० विकास चन्द्र गुप्ता
डा० लक्ष्मीकान्त द्विवेदी

6. हृदय रोग : निदान एवं उपचार 743
डा० नन्द किशोर दाधीच

7. आयुर्वेद का एक महत्वपूर्ण अंग-वाजीकरण 746
डा० अश्विन बी. बागडे, प्रो०ओ०पी० उपाध्याय

8. कुष्ठ रोग : व्यापक विचार और उपचार
वैद्य चन्द्रदेव मंडल

9. पञ्चगव्य : एक दिव्य औषधि 754
डा० सतीश चन्द्र तिवारी

10. जल चिकित्सा 756
स्मिता गुप्ता

11. ब्राह्मी बूटी 757
जयेन्द्र कुमार जौहरी

12. सेहत भरी है अजवाइन में 758
श्रीमती अनिता जैन

13. सुखा फल मखाना-पौष्टिकता का खजाना 759
डा० दिवाकर ठाकुर

14. चरकोक्त ज्वर चिकित्सा अध्याय में ऊर्ध्वांग 760
चिकित्सा सम्बन्धित उल्लेख
डा० अनूप कुमार गक्खड़

15. आमवात व्याधि के चिकित्सा उपक्रम 761
डा० निलेश भट्ट, प्रो०वी.डी. शुक्ल

16. Stress and Ayurvedic Management 763
Dr. Anoop Kr. Indoria, Prof. Ajay Kr. Sharma

17. Concept of Hyperglycamia and its 768
its Management throgh Ayurveda
Dr. Shallesh Jain, Dr. Mani Kumar
Dr. Dr. O.P. Gupta

18. Ayurvedic Treatment for Menorrhagia 771
Dr. K. Sudha Rani

19. Management of Gridhrasi Roga (Sciatica) 773
Dr. Vinod kr. Singh, Dr. B.N. Singh

20. An etiopathological and therapeutic 775
study on sthula pramedi w.s.r. to Niddm
Prof. Loknath Sharma, Dr. Vivek Agarwal

21. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 782

22. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 784

23. आपके अनुभूत प्रयोग 787

24. आपके पत्र 790

25. आरोग्य समाचार 792

26. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

# केन्द्रीय बजट एवं आयुर्वेद

वर्ष 2006-07 के लिए भारत के वित्तमंत्री, श्री पी. चिदम्बरम् जो बजट पेश किया है, वह यद्यपि कुछ अर्थों में सराहनीय है, किन्तु पूर्णतः सकारात्मक नहीं है। आयुर्वेद एवं अन्य देशी चिकित्सा पद्धतियों को निराशा हाथ लगी है। भारत के स्वास्थ्य बजट (एलोपैथी) में वर्ष 2005-2006 में संशोधित बजट 9675.83 करोड़ रुपये थे जो बढ़कर वर्ष 2006-07 में 12545.88 करोड़ रुपये हो गये हैं। इसमें आयोजना मद में 11289.62 करोड़ रुपयों एवं गैर आयोजना मद में 1256.26 करोड़ रुपयों का प्रावधान रखा गया है।

आयुर्वेद, योग, प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होमियोपैथी (आयुष) हेतु वर्ष 2005-2006 के लिए संशोधित बजट 364.00 करोड़ रुपये थे जो वर्ष 2006-07 में बढ़कर 447.89 करोड़ रुपये हो गये हैं। अर्थात् मात्र 83.89 करोड़ रुपयों की वृद्धि की गयी है। इसके विपरीत एलोपैथी के मद में 2870.05 करोड़ रुपये की वृद्धि की गयी है। यदि प्रतिशत की भाषा में हम बात करें, तो जहां एलोपैथी के मद में 29.66% की वृद्धि की गयी है, वहाँ देशी चिकित्सा पद्धतियों में मात्र 23.04% की वृद्धि की गयी है। राष्ट्रीय स्तर पर आयुर्वेद सहित अन्य देशी चिकित्सा पद्धतियां काफी पिछड़ी हैं। सामाजिक न्याय का तकाजा है कि पिछड़ों को आगे बढ़ने के लिए अवसर दिये जायं। खेद है, भारत सरकार एलोपैथी एवं अन्य चिकित्सा पद्धतियों के बीच की खाई और चौड़ी कर रही है। हमारा सरकार से अनुरोध है कि एलोपैथी एवं अन्य चिकित्सा पद्धतियों के अन्तर को यथाशक्ति धीरे-धीरे कम की जाय। यदि केवल आयुर्वेद को लें तो स्थिति भयावह दिखलायी पड़ती है। वर्ष 2005-2006 के लिए आयुर्वेद के मद में संशोधित बजट 57.49 करोड़ रुपये का था जो वर्ष 2006-07 में बढ़कर 80.13 करोड़ रुपये हो गये हैं। यदि हम एलोपैथी के साथ आयुर्वेद की तुलना करें, तो आयुर्वेद के मद में किये जा रहे खर्च नगण्य हैं। एलोपैथी का मात्र 0.64% खर्चा आयुर्वेद पर किया जा रहा है। यह स्थिति असहनीय है। दिलचस्प बात यह है कि आयुर्वेद के मद में जो रकम आवंटित की गयी है, उसमें शामिल हैं - (1) राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर (2) केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद् (3) गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय स्थित स्नातकोत्तर प्रशिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान को देय अनुदान (4) राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ, नयी दिल्ली, (5) दिल्ली स्थित राष्ट्रीय आयुर्वेदिक अस्पताल एवं (6) आयुर्वेद अस्पताल, लोधी रोड, नयी दिल्ली।

सोचने की बात है कि इतने कम रुपयों में अनुसंधान कहां से होगा। केवल नियमित खर्च हो जांय, यही काफी है। हां, प्रसन्नता की बात है कि राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य योजना के तहत आवंटित राशि 6,553 करोड़ रुपयों से बढ़ाकर 8,207 करोड़ रुपये कर दिये गये हैं। इस योजना के तहत 1,000 प्रखण्डों से ज्यादा प्रखण्डों में सामुदायिक स्वास्थ्य-सेवा प्रदान की जायेगी और 200,000 से ज्यादा सामाजिक स्वास्थ्य विशेषज्ञ भाग लेंगे।

किसी भी राष्ट्र का सम्पन्न स्वस्थ एवं शिक्षित नागरिक होते हैं। दुर्भाग्यवश स्वास्थ्य के मामले में हमारे देश में कुल बजट का 2.50% भी खर्च नहीं होता है। उदाहरण के लिए वर्ष 2006-07 में सभी विभागों के लिए भारत सरकार का कुल बजट 563991.13 करोड़ रुपये आवंटित किये गये हैं जबकि एलोपैथी सहित सभी पद्धतियों के लिए मात्र 2.30% लगभग आवंटित किये गये हैं। यदि हम केवल आयुर्वेद को लें तो यह प्रतिशत कुल बजट का मात्र 0.014% आता है।

अतः हमारी भारत सरकार से मांग है कि आयुर्वेद के मद में कुल बजट का 1% रकम आवंटित की जाय एवं सम्पूर्ण स्वास्थ्य बजट में कम से कम पूर्ण बजट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का 7% प्रावधान रखा जाय । यदि हम स्वस्थ रहेंगे तो निश्चय ही राष्ट्र आगे बढ़ेगा । हम भारत के माननीय वित्त मंत्री पर विश्वास करते हैं एवं आशा करते हैं कि भविष्य में वे हमारे साथ न्याय करेंगे ।

## चीन, भारत और मधुमेह

अबतक प्राप्त आंकड़ों से ऐसा लगता था कि मधुमेह के मामले में भारत सर्वाधिक अग्रणी देश है, किन्तु विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा कराये गये ताजे अध्ययन से ऐसा ज्ञात होता है कि चीन भारत से आगे मधुमेह के क्षेत्र में भी बाजी मार लेगा । वर्ष 2000 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने चीन में मधुमेह से पीड़ित रोगियों की संख्या 20 मिलियन बतायी थी, किन्तु चीनी स्वास्थ्य मंत्रालय को इन आंकड़ों पर आपत्ति थी । उनका कहना था कि ये आंकड़ें दस वर्ष पूर्व के हैं । अत: ताजा अध्ययन होना चाहिए । विश्व स्वास्थ्य संगठन की तकनीकी अधिकारी, सुश्री गोजका रोजलिक के अनुसार ये आंकड़ें 30 मिलियन तक पहुंच जायेंगे । साथ ही सुश्री रोजलिक कहती हैं कि "हमें सही-सही गणना करने के लिए उचित आंकड़ें उपलब्ध नहीं हैं । जो भी आंकड़ें उपलब्ध हैं, वे चीनी पत्रिकाओं से लिये गये हैं, हमने चीनी स्वास्थ्य मंत्रालय से सम्पर्क स्थापित किया है । आशा है, वे शीघ्र ही अद्यतन आंकड़ें देंगे । मधुमेहियों की संख्याओं से यह नहीं कहा जा सकता है कि मधुमेह में चीनी भारतीयों से आगे हैं ।" सम्भवत: सुश्री रोजलिक का आशय भारत और चीन की जनसंख्या से है । आंकड़ों का सही-सही पता सम्भवत: सरकार को भी नहीं है । हम सुश्री रोजलिक से सहमत हैं कि अभी भी हमारे देश में सही-सही आंकड़ें उपलब्ध नहीं हैं । जो भी सरकारी आंकड़ें उपलब्ध हैं, वे मुख्यतया शहर से एकत्रित किये गये हैं । ग्रामीण आंकड़ें हमारे पास लगभग नहीं हैं । विदित है कि भारत की अधिकांश आबादी गांवों में रहती है । जब अधिकांश गांवों में अस्पताल एवं चिकित्सक नहीं हैं, तो आंकड़ें कहां से आयेंगे । सोचने की बात है कि किसी भी राष्ट्रीय या राज्य की सरकारी या गैरसरकारी एजेन्सी ने गांव वालों की अनिवार्य रूप से रक्त शर्करा की जांच नहीं की है । गांवों की बात तो छोड़ दी जाय, शहरों के लोग भी रक्त-शर्करा की जांच अनिवार्य रूप से नहीं कराते हैं । रक्त शर्करा की जांच तभी होती है जब लोग बीमार पड़ते हैं और चिकित्सा के लिए चिकित्सक के पास जाते हैं । चिकित्सक यदि जांच लिखते हैं तभी जांच होती है, अन्यथा नहीं । आजकल नयी मशीन से लोग स्वयं जांच कर लेते हैं और बिना चिकित्सक की सलाह के औषधि भी लेते हैं । ऐसी स्थिति में मधुमेह के रोगियों के सही-सही आंकड़ों का निर्धारण करना कहां तक सम्भव है ? यह सम्भव हो सकता है यदि सरकारी या गैर सरकारी एजेन्सी निम्न प्रक्रियाओं को अपनावें :

1. अनिवार्य रूप से सभी देशवासियों के रक्त की जांच की जाय ।

   हमारी दृष्टि में सरकार के पास जो बजटीय प्रावधान हैं, उससे यह सम्भव नहीं लगता है । इस जांच-प्रक्रिया के लिए धन एवं मानव-शक्ति की जरूरत पड़ेगी जो सम्प्रति सम्भव नहीं दिखलाई पड़ती है ।
2. शहर या गांवों में जो जांच प्रयोगशाला है, वहां से आंकड़ें एकत्रित किये जायं ।
3. जो निजी चिकित्सक रोगियों की चिकित्सा करते हैं वहां से आंकड़ें लिये जायं ।
4. सरकारी एवं निजी अस्पतालों से भी आंकड़ें लिये जांय ।
5. अन्य तरीका जो सम्भव है ।

यह सही है कि मधुमेहियों की संख्या बढ़ रही है, किन्तु आंकड़ों की सत्यता पर हमें विश्वास नहीं है । सरकार को चाहिए कि समय-समय पर स्वास्थ्य-सर्वेक्षण कराया जाय, तभी आंकड़ों पर लोगों का विश्वास होगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

# आयुर्वेद का इतिहास-77

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

## नागार्जुन

चिकित्सा-विज्ञान के क्षेत्र में नागार्जुन नाम के अनेक विद्वानों का जिक्र आया है। हम क्रम से इनकी चर्चा करेंगे। सर्वप्रथम हम सुश्रुत संहिता के प्रतिसंस्कर्ता, नागार्जुन का जिक्र करना चाहेंगे। आचार्य प्रियव्रत शर्मा[1] ने सुश्रुत संहिता के प्रतिसंस्कर्ता, नागार्जुन के सम्बन्ध में निम्नलिखित मत व्यक्त किये हैं :-

1. सुश्रुत के प्रतिसंस्कर्ता नागार्जुन गुप्तकालीन थे।
2. इस काल में पाशुपत धर्म तथा कापालिक एवं तान्त्रिक संप्रदायों का उदय हो चुका था और लोक में उनका प्रभाव स्थापित हो चुका था। मूढ़गर्भ के निर्हरण के लिए प्रयुक्त 'उक्ता पशो:'[2] इस मंत्र से पाशुपत धर्म का संकेत मिलता है। राक्षस पशुपति, कुबेर और कुमार के अनुचर कहे गये हैं।[3] कापालिकों के लिए 'वामाचार' शब्द का प्रयोग हुआ है, ये क्रूर कर्म में उद्यत रहते थे और अग्नि में पाक (मांस का ?) करते थे (सू० 291, 12-13), ये काले कपड़े पहनते थे ((अ) सिताम्बर सू० 24/45), कपालभूमि का भी निर्देश है (चि० 24/87), तान्त्रिकों की रहस्यमयी सिद्धियों का भी उल्लेख मिलता है यथा वशीकरण, सौभाग्यकरण (चि० 28/18-19) तथा खेचरी सिद्धि (चि० 30/8) आदि। वाग्भट ने जिस तान्त्रिक सर्वार्थसिद्धाञ्जन का वर्णन किया है उसका मूल रूप 'चूर्णाञ्जन' सुश्रुत द्वारा निर्दिष्ट है (उ० 18/89-91)। उस समय 24 बुद्धों की धारणा प्रचलित थी। सम्भवत: उसी आधार पर 24 स्त्रियों की कल्पना की गयी है। 'वर्धमान' का उल्लेख मांगलिक द्रव्यों में किया गया है (सू० 29/26) पुंनामा पक्षी यदि वाम भाग में हों तो शुभ माने जाते हैं (सू० 29/34) उस समय ज्योतिषशास्त्र की भी उन्नति थी। ग्रहों-नक्षत्रों के प्रभाव से जनपदोद्ध्वंस की उत्पत्ति कही गयी है (सू० 6/7)। नक्षत्रों तथा तिथियों के नाम मिलते हैं (सू० 29/16-17)। प्रशस्त तिथिकरण मुहूर्त्त नक्षत्र में मांगलिक करने का विधान है (चि० 29/8), नक्षत्रजन्य व्याधि कालक्रम से दूर हो जाती है। (नक्षत्र-पीड़ा बहुधा यथा कालाद् विपच्यते - सू० 28/4), वराहमिहिर का प्रादुर्भाव लगभग इसी काल में हुआ था।
3. 'विषकन्या' का प्रयोग मिलता है (81/4)। विशाखदत्त ने मुद्राराक्षस में इसका स्पष्ट उपयोग किया है। 'विशिखानुप्रवेश' में 'विशिरवा' शब्द नगर के केन्द्रीय स्थान के लिए हुआ है जो कौटिल्य अर्थशास्त्र में भी प्रयुक्त हुआ है।
4. नागार्जुन एक भ्रमणशील व्यक्ति थे। अत: ऐसा प्रतीत होता है कि भौगोलिक नामों में कुछ का सन्निवेश उनके द्वारा हुआ हो। कांशी नदी के जिस क्षेत्र का वर्णन किया है वह संभवत: नेपाल का क्षेत्र है जहां बौद्ध एवं तान्त्रिक संप्रदाय फल-फूल रहा था। आबू भी ऐसा ही प्रसिद्ध स्थान है।
5. इन्द्रजाल का 'कुहक' शब्द से अभिधान हुआ है (सू० 10/2) रहस्यमयी भाषा में विचारों की भी अभिव्यक्ति होने लगी थी। एक उदाहरण देखें

**'षण्मूलोऽष्टपरिग्राही पञ्चलक्षण-लक्षित:।**
**षष्टयुपक्रम निर्दिष्टश्चतुर्भि: साध्यते त्रिग:॥**

(चि० 1/144)

6. अनेक खनिज द्रव्यों, धातुओं तथा रत्नमणियों (सू० 46 लवण वर्ग 15-19) का समावेश नागार्जुन के द्वारा हुआ प्रतीत होता है। अयस्कृति का वर्णन सुश्रुत में सर्वप्रथम मिलता है। मूषा में धातुओं का पाक करने का भी वर्णन है। (उ० 18/83-85)। लोहमल तथा कांस्यमल का उल्लेख है। फेणाश्म भस्म तथा हरिताल की धातुविषों में गणना है। यदि फेणाश्म खेंखिया है तो वह बहुत बाद का होगा। सम्भवत: चन्द्रट द्वारा समाविष्ट हो। हरताल और मन:शिला का प्रयोग उपदंश और कासश्वास में निहित विहित है। पारद (चि०23/38) और माक्षिक (चि०

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, 2 सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


14/15) का भी उल्लेख है ।

इनके समय में अग्निवेश आदि छह आचार्यों के काय चिकित्सा के तंत्र प्रचलित थे । विदेहाधिप (निमि) के शालाक्य शास्त्र का भी निर्देश किया है ।

हिन्दी विश्वकोश' में नागार्जुन के सम्बन्ध में निम्न चर्चा है --

नागार्जुन (बौद्ध दर्शन) शून्यवाद के प्रतिष्ठापक तथा माध्यमिक मत के पुरस्कार प्रख्यात् बौद्ध आचार्य । युवान् च्वाङ् के मात्रा विवरण से पता चला है कि ये महाकौशल के अन्तर्गत विदर्भ देश (आधुनिक बरार) में उत्पन्न हुए थे । आंध्रभृत्य कुल के किसी शालिवाहन नरेश के राज्यकाल में इनके आविर्भाव का संकेत चीनी ग्रन्थों में उपलब्ध होता है । इस नरेश के व्यक्तित्व के विषय में विद्वानों में ऐकमत्य नहीं है । 401 ईस्वी में कुमारजीव ने नागार्जुन की संस्कृत भाषा में रचित जीवनी का चीनी भाषा में अनुवाद किया । फलतः इनका आविर्भाव काल इससे पूर्ववर्त्ती होना सिद्ध होता है । उक्त शालिवाहन नरेश को विद्वानों का बहुमत राजा गौतमीपुत्र यज्ञश्री (166 ई०-196 ई०) से भिन्न नहीं मानता । नागार्जुन ने इस शासक के पास जो उपदेशमय पत्र लिखा था, वह तिब्बती तथा चीनी अनुवाद में आज भी उपलब्ध है । इस पत्र में नामतः निर्दिष्ट न होने पर भी राजायज्ञश्री नागार्जुन का समसामयिक शासक माना जाता है । बौद्ध धर्म की शिक्षा से संवलित यह पत्र साहित्यिक दृष्टि से बड़ा ही रोचक, आकर्षक तथा मनोरम है । इस पत्र का नाम था - आर्य नागार्जुन बोधिसत्व सुहृल्लेख । नागार्जुन के नाम के आगे - पीछे आर्य और बोधिसत्व की उपाधि बौद्ध जगत् में इनके आदर सत्कार तथा श्रद्धा विश्वास की पर्याप्त सूचिका है । इन्होंने दक्षिण के प्रख्यात्-तांत्रिक केन्द्र श्री पर्वत की गुहा में निवास कर कठिन तपस्या में अपना जीवन व्यतीत किया था ।

आर्य नागार्जुन के नाम से वैद्यक, रसायन विद्या तथा तंत्र के ग्रन्थ भी उपलब्ध होते हैं । कतिपय विद्वान् दार्शनिक नागार्जुन को तांत्रिक नागार्जुन से नितान्त अभिन्न मानते हैं, परन्तु विद्वानों का बहुमत इन दोनों की भिन्नता मानने के ही पक्ष में है । इसी से आर्य नागार्जुन से भिन्नता दिखलाने हेतु तांत्रिक नागार्जुन 'सिद्ध नागार्जुन' के नाम से अभिहित किये जाते हैं । दोनों के समय में भी पर्याप्त अन्तर है । आर्य नागार्जुन का आविर्भाव द्वितीय शती के उत्तरार्द्ध में हुआ था, जबकि सिद्ध नागार्जुन का समय सप्तम शती के आसपास स्वीकार किया जाता है । नागार्जुन का तिब्बती नाम है - क्लुस-ग्रुब और तारानाथ के प्रामाण्य पर ये 11वीं ई० के आसपास राज्य करनेवाले राजा नेमिचन्द्र के समकालीन माने जाते हैं, परन्तु यह मत प्रामाणिक नहीं है । प्रबन्ध आख्यायिका 'लीलावती' के अनुसार नागार्जुन पोट्टिम के कुमारिल के साथ शातवाहन के दरबार में रहते थे ।

'माध्यमिक कारिका' के अतिरिक्त उनकी निःसंदिग्ध रचनाऐं निम्नलिखित हैं - युक्तिशतिका, शून्यसप्तति, प्रतीत्य समुत्पाद हृदय, महायान विंशिका, विग्रह व्यावर्तनी, प्रज्ञापारमिता शास्त्र की तथा दशभूमि विभाषाशास्त्र की टीकाएं । तिब्बती भाषा में 'प्रमाण विघटन' (जिसमें न्यायशास्त्र के षोडश पदार्थों का खंडन किया गया है) तथा चीनी भाषा में 'उपाय कौशल हृदय' (जिसका अनुवादकाल 472 ई० तथा कार्य- विषय शास्त्रार्थ है) नागार्जुन की रचनाएं मानी जाती है ।

नागार्जुन की रचनाएं अपनी शैली तथा युक्ति के लिए अत्यन्त विख्यात् हैं । इन रचनाओं में प्रसिद्धि पाने वाले ग्रन्थ ये हैं - (1) प्रमाण विघटन अथवा प्रमाण विध्वंस जिसमें गौतम के षोडश पदार्थों के रूप तथा लक्षण का खण्डन किया गया है । संस्कृत मूल उपलब्ध नहीं है केवल तिब्बती में इनके मूल तथा टीका के अनुवाद प्राप्त हैं । (2) उपाय कौशल्य हृदय शास्त्र जिसमें प्रतिवादी के ऊपर विजय पाने के लिए जाति, निग्रह स्थान आदि शास्त्र के न्याय परिचित उपायों का विशिष्ट वर्णन किया गया है । (3) विग्रह व्यावर्तनी, 72 कारिकाओं में निबद्ध यह भी मूल संस्कृत तथा तिब्बती अनुवाद दोनों में उपलब्ध है । वर्ण्य विषय है गौतम सम्मत प्रमाण का खण्डन तथा तदुपरान्त स्वाभिमत शून्यवाद का युक्तियों से मंडन । संक्षिप्त होने पर भी बौद्ध न्याय की जानकारी के लिए यह महत्वपूर्ण रचना है । (4) युक्ति षष्टिका जिसके कतिपय श्लोक बौद्ध ग्रन्थों में प्रमाण की दृष्टि से उद्धृत किये गये हैं


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


(5) सुहृल्लेख, इसका ऊपर उल्लेख किया गया है । मूल संस्कृत के अभाव में इसके वर्ण्य विषय की जानकारी हमें इसके तिब्बती अनुवाद से ही होती है । नागार्जुन ने इस पत्र के द्वारा अपने सुदृढ़ यज्ञश्री शातवाहन को परमार्थ तथा व्यवहार की शिक्षा दी है । बौद्ध साहित्य में इस प्रकार की रचनाएं उपलब्ध हैं जिनके द्वारा बौद्ध आचार्यों ने अपने किसी मान्य शिष्य को अथवा तत्व जिज्ञासु को बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों का उपदेश दिया (6) चतुःस्तवतथागत की प्रशस्त स्तुति में लिखे गए चार स्तोत्रों का संग्रह जिसमें निरूपम स्तव तथा परमार्थ स्तव मूल संस्कृत में उपलब्ध हैं, परन्तु अन्य दो अचिंत्य स्तव और लोकातीत स्तव-केवल तिब्बती अनुवाद में प्राप्य हैं । इस ग्रन्थ में नागार्जुन की सरस काव्य प्रतिमा का पूरा परिचय पाठक को मिल जाता है । (7) नागार्जुन के कीर्ति मंदिर का स्तम्भ स्थानीय महनीय दार्शनिक ग्रन्थ है 'माध्यमिक कारिका' । नागार्जुन के पांडित्य, व्यापक दार्शनिकता, उद्भट तार्किकता तथा नवीन कल्पना का भांडागार है । यह उदात्त ग्रन्थ जिसे आचार्य भव्य कृत प्रज्ञा प्रदीप - तथा आचार्य चंद्रकीर्त्ति रचित 'प्रसन्नमहा' जैसी प्रौढ़वृत्तियों के द्वारा अलंकृत होने का गौरव प्राप्त है । 27 प्रकरणों में विभक्त यह ग्रन्थ कारिकाओं में ही निबद्ध है । यह प्रसन्नपदा के साथ मूल अनुवाद में लेनिनग्राद से नागराक्षरों में प्रकाशित भी हुआ है ।

नागार्जुन की दृष्टि में मूल तत्व शून्य के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है । ध्यान देने की बात यह है कि यह शून्य निषेधात्मक वस्तु नहीं है जिसका अपलाभ किया जा सके । किसी भी पदार्थ का स्वरूप निर्णय करने में चार ही कोटियों का प्रयोग संभाव्य है - अस्ति (विद्यमान) है, नास्ति (विद्यमान नहीं है), तदुभयम् (एक साथ ही अस्ति नास्ति दोनों) तथा नोभयम् (अस्ति नास्ति दोनों कल्पनाओं का निषेध) । परमार्थ इन चारों कोटियों से युक्त होता है और इसीलिये उसके अभिधान के लिए 'शून्य' शब्द का प्रयोग हम करते हैं । नागार्जुन के शब्दों में -

**न सन् नासन् न सहसत् न चाप्यनुभयात्मकम् ।**
**चतुष्कोटिर्विनिर्मुक्त तेत्वं माध्यमिका विदुः ।।**

शून्यवाद की सिद्धि के लिए नागार्जुन ने विध्वंसात्मक तर्क का उपयोग किया है - वह तर्क, जिसके सहारे पदार्थ का विश्लेषण करते-करते वह केवल शून्य रूप में टिक जाता है । इस तर्क के बल पर द्रव्य गति, जाति, काल संसर्ग, आत्मा आदि तत्वों का बड़ा ही गंभीर, मार्मिक तथा मौलिक विवेचन करने का श्रेय नागार्जुन को है । इस मत में सत्य दो प्रकार का होता है - (1) सांवृतिक सत्य तथा (2) पारमार्थिक सत्य जिनमें प्रथम अविद्या से उत्पन्न व्यावहारिक सत्ता का संकेत करता है; द्वितीय प्रज्ञा जनित सत्य का प्रतिपादक है । 'संवृति' शब्द का अर्थ है अविद्या । अविद्याजनित होने से व्यावहारिक सत्य सांवृतिक सत्य के नाम से जाना जाता है । सत्य की यह द्विविध व्याख्या नागार्जुन की दृष्टि में शून्यवाद के द्वारा उद्भावित नूतन कल्पना नहीं है, प्रत्युत् बुद्ध के द्वारा ही प्राचीन काल में संकेतित की गयी है । बुद्ध के कतिपय उपदेश व्यावहारिक सत्य के आधार पर दिए गये हैं, अन्य उपदेश पारमार्थिक सत्य के ऊपर आलंबित है । अभीष्ट दोनों हैं बुद्ध को -

**द्वे सत्ये समुमाश्रित्य बुद्धानां धर्मदेशना ।**
**लोक संवृतिसत्यं च सत्यं च परमार्थितः ।।**

नागार्जुन दार्शनिक होते हुए भी व्यवहार की उपेक्षा करने वाले आचार्य नहीं थे । वे जानते हैं कि व्यवहार का बिना आश्रय लिए परमार्थ का उपदेश ही नहीं हो सकता और परमार्थ की प्राप्ति के अभाव में निर्वाण मिल नहीं सकता । साधारण मानवों की बुद्धि व्यवहार में इतनी आसक्त है कि उसे परमार्थपथ पर लाने के लिए व्यवहार का अल्पलाभ नहीं किया जा सकता । फलतः व्यवहार की असत्यता परमार्थ शब्दों के द्वारा प्रतिपाद्य वस्तु नहीं है । इसलिए उसे 'अनक्षरत्व' के अभियान से जानते हैं । परमार्थ तत्व बुद्धि व्यापार इतनी आसक्त है कि उसे परमार्थ पथ पर लाने के लिए व्यवहार का अल्पलाभ नहीं किया जा सकता । फलतः व्यवहार की 'अत्यता' दिखलाकर ही साधक को परमार्थ में प्रतिष्ठित करना पड़ता है । परमार्थ शब्दों के द्वारा प्रतिपाद्य वस्तु नहीं है । इसीलिए उसे 'अनक्षर तत्वों' के अभिधान से जानते हैं ।

परमार्थ तत्व बुद्धि व्यापार से अगोचर, अविषय (ज्ञान की कल्पना से बाहर), सर्वप्रपंचनिर्मुक्त तथा कल्पना विरहित है, परन्तु उसके ऊपर जागतिक पदार्थों का समारोह


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


रने से ही उसका ज्ञान हमें हो सकता है । यह तत्व रान्तियों के अध्यारोप तथा अपवादविधि से नितान्त सादृश्य व्रता है ।

2. आयुर्वेदाचार्य नागार्जुन सिद्धों की परम्परा में हुए । इनका समय आठवीं या नवीं शती है । यही समय ायुर्वेद में रस चिकित्सा, धातुवाद का है । प्रबन्ध न्तामणि से पता चलता है कि नागार्जुन पादलिप्तसूरि के ाष्य थे । इसी पुस्तक के अनुसार ये पारद से स्वर्ण बनाने सफल हुए थे । नागार्जुन के नाम से कई योग आयुर्वेद प्रचलित हैं ।

प्रस्तुत शब्दकोश से नागार्जुन के सुश्रुत संहिता के तिसंस्कर्ता का पता नहीं चलता है । इस कोश से केवल सशास्त्र के प्रवर्त्तक नागार्जुन का पता चलता है । नागार्जुन अन्य पक्षों को यहां प्रस्तुत करने के पीछे आशय केवल ना ही है कि अनेक नागार्जुनों का अस्तित्व प्राचीनकाल था । प्रस्तुत कोश में निम्नलिखित विरोधाभास है -

401 ईसवी में कुमार जीव ने नागार्जुन की संस्कृत भाषा में रचित जीवनी का चीनी भाषा में अनुवाद किया ।

**इससे यह तथ्य स्थापित होता है कि नागार्जुन का अस्तित्व निश्चित रूप से 401 ईसवी के पूर्व था ।** राजा यज्ञश्री नागार्जुन का समसामयिक शासक माना जाता है ।

विदित है कि गौतमीपुत्र यज्ञश्री का अस्तित्व कोश के ही अनुसार 166-196 ई० के मध्य था । स्पष्ट है कि नागार्जुन का अस्तित्व इस समय था ।

नागार्जुन का तिब्बती नाम है - क्लुस-ग्रुव और तारानाथ के प्रामाण्य पर ये 300 ई० आसपास राज्य करने वाले राजा नेमिचन्द्र के समकालीन माने जाते हैं । रसशास्त्री नागार्जुन का समय 8 वीं या 7 वीं शती है । आर्य नागार्जुन और सिद्ध नागार्जुन के मध्य अन्तर बताते हुए कहा गया है कि 'आर्य नागार्जुन का आविर्भाव द्वितीय शती के उत्तरार्ध में हुआ था, जबकि सिद्ध नागार्जुन का समय सप्तम शती के आस-पास स्वीकार किया जाता है ।

स्पष्ट है कि आर्य नागार्जुन एवं सिद्ध नागार्जुन पृथक् व्यक्तित्व के स्वामी थे । क्या यह सम्भव नहीं है कि आर्य नागार्जुन सुश्रुत संहिता के प्रतिसंस्कर्ता रहे होंगे ?

इन विवरणों से यह ज्ञात होता है कि रसशास्त्री नागार्जुन के अतिरिक्त भी नागार्जुन थे जो सुश्रुत संहिता के प्रति संस्कर्त्ता थे और निश्चित रूप से 166 ई० के पूर्व थे ।

श्री अत्रिदेव विद्यालंकार ने नागार्जुन के सम्बन्ध में निम्न प्रकाश डाला है :-

1. सुश्रुत का प्रतिसंस्कर्ता नागार्जुन था; इसमें कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता । डल्हण ने किस आधार पर यह निश्चय किया, इसकी भी साक्षी नहीं मिलती । यदि बौद्ध नागार्जुन जिसे चौरासी सिद्धों में भी गिना गया है, इस उपलब्ध सुश्रुत से सम्बन्धित था; इसके लिए कोई पुष्ट प्रमाण नहीं है ।
2. महायान मतवाले नागार्जुन से इनको पृथक् माना गया है । अल्बेरूनी ने लिखा है कि एक नागार्जुन उससे एक सौ वर्ष पहने विद्यमान थे । 'साधन माला' में ये कई साधनाओं के प्रवर्त्तक माने गये हैं ।
3. डाक्टर विनयतोष भट्टाचार्य का अनुमान है कि कुरुकुल्ला की उपासना के प्रथम प्रवर्त्तक शबरपाद नामक सिद्ध हैं जिनका समय सप्तम शताब्दी (ईसवी) का मध्य भाग है । ये नागार्जुन के शिष्य थे ।
4. 'प्रबन्ध चिन्तामणि' से पता चलता है कि नागार्जुन पादलिप्त सूरि के शिष्य थे और उनसे ही इन्होंने आकाश गमन की विद्या सीखी थी ?
5. नागार्जुन ने अपने शिष्य राजा सातवाहन की रानी चन्द्रलेखा से पार्श्वनाथ की रत्नमूर्ति के सामने पारा मर्दन करवाया था । रानी के पुत्रों ने रस के लोभ में नागार्जुन को मार डाला था ।
6. नागार्जुन रसेश्वर-सिद्ध थे । गोरखपंथियों की पारसनाथ शाखा के प्रवर्त्तक भी यही थे । दक्षिण भारत के निवासी थे । नागार्जुन को परवर्ती योगियों ने 'नागा-अर्जुन' कहा है, इनके सम्बन्ध में कई किंवदन्तियां प्रचलित हैं । नाथपन्थ को बारह आचार्यों में इनका नाम है ।
7. नागार्जुन वज्रयानी बौद्ध थे ।
8. सरहपा के दूसरों शिष्यों में योगी नागार्जुन और सर्वभक्षी भी थे । यह नागार्जुन यदि कोई ऐतिहासिक व्यक्ति


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


ता द्वितीय शताब्दी के माध्यमिक आचार्य नागार्जुन से भिन्न हैं । तिब्बती परम्परा में सरहसा छटे सिद्ध हैं, प्रथम सिद्ध लुईपा हैं । इस परम्परा में नागार्जुन सोलहवें सिद्ध हैं ।

9. सिद्ध नागार्जुन का समय आठवीं या सातवीं शताब्दी आता है, जबकि इनको सरहपा का शिष्य कहा गया है ।
10. द्वितीय या प्रथम शताब्दी के नागार्जुन, जिनको कनिष्क का समकालीन कहा जाता है, वे इनसे भिन्न थे ।
11. शून्यवाद या माध्यमिकवाद मत के प्रधान संस्थापक नागार्जुन ईसा की दूसरी या पहली शताब्दी में हुए थे ।
12. बाण ने हर्षचरित में सातवाहन राजा के साथ नागार्जुन की मैत्री का उल्लेख किया है । इनको मोतियों की एक लड़ी माला नागार्जुन ने ही थी । यह समय 44 ई० से 8 ई० पूर्व था ।
13. श्री जयचन्द्र विद्यालंकार ने अपने इतिहास प्रवेश (पृष्ठ 137) में लिखा है कि "नागार्जुन अश्वघोष का प्रशिष्य था, अश्वघोष कनिष्क की राजसभा का पण्डित था । नागार्जुन दर्शन के साथ-साथ विज्ञान का भी पण्डित था । उसने एक लोहशास्त्र लिखा और पारे के योग बनाने की विधि निकालकर रसायन के ज्ञान को आगे बढ़ाया । **उसने सुश्रुत के ग्रन्थ का सम्पादन भी किया ।**
14. पारा सम्बन्धी बातें सिद्ध नागार्जुन से सम्बन्धित हैं, जो कि 7 वीं या दसवीं शताब्दी में हुआ था । इसमें लेखक को नाम सादृश्य से भ्रान्ति हो गयी है ।
15. पण्डित हेमराज शर्मा द्वारा प्रदर्शित नागार्जुन का रसायन विद्या का प्रवर्त्तक मानने में बाधा यही है कि ग्यारहवीं शताब्दी में रस विद्या का जो उल्लेख मिलता है, वह चरक, सुश्रुत, अष्टांग संग्रह, वृन्द, चक्रदत्त में नहीं है । विशेषत: जब हम देखते हैं कि चरक भी कनिष्क का राजवैद्य था । (इतिहास प्रवेश-पृष्ठ 125) । यदि नागार्जुन इनके समकालीन थे, और यही नागार्जुन रसायन विद्या, पत्थर से स्वर्ण बनाने की विद्या के ज्ञाता थे, तो अवश्य चरक इनका उल्लेख करता ।
16. रस सिद्धों का उल्लेख आठवीं शताब्दी में मिलता है । आठवीं शताब्दी में ही 'सरहमा' सिद्ध हुए हैं; जिनका नागार्जुन भी एक शिष्य था । नाथ सम्प्रदाय के मत्स्येन्द्र नाथ गोरखनाथ का भी यही समय है । इस प्रकार से रससिद्धि का प्रारम्भिक समय आठवीं शती है । रससिद्धों में जिस नागार्जुन का उल्लेख है, वह इसी शताब्दी का है ।
17. जनता में रसशास्त्र के प्रवर्त्तक भी सिद्ध हैं, इसमें एक नागार्जुन भी थे । चूंकि इस नाम के एक नागार्जुन प्रथम-द्वितीय शताब्दी में हुए हैं, उनके पास भी स्वर्ण बनाने की विद्या थी, इसलिए रस-सिद्धि, पारा-सिद्धि को इनके साथ जोड़ दिया गया । वास्तव में दोनों भिन्न हैं - जिनमें छ: सौ या सात सौ का अन्तर है ।

दुर्भाग्यवश विद्वान लेखक स्वयं संशय के शिकार हैं । उन्होंने अपनी पुस्तक (पृष्ठ सं० 189) में लिखा है, "नागार्जुन कई हुए हैं । अन्तिम नागार्जुन सातवाहन राजा का मित्र था, जिसका उल्लेख बाण ने अपने हर्षचरित में एक लड़ी मोतियों की माला के प्रसंग में किया है । सातवाहन दक्षिण का राजा था । **यह समय लगभग दूसरी शताब्दी के आसपास का है ।**

एक तरफ वे लिखते हैं कि "सुश्रुत का प्रतिसंस्कर्ता नागार्जुन था; इसमें कोई प्रमाण नहीं मिलता ।" दूसरी ओर वे एक नागार्जुन का समय प्रथम शती या दूसरी शती का मानते हैं और दूसरी ओर वे सिद्ध नागार्जुन जो आठवीं शती का है, उसे ही वास्तविक नागार्जुन मानते हैं ।

(निरन्तर जारी)

## संदर्भ


1. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास - आचार्य प्रियव्रत शर्मा - चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी ।
2. **मुक्ता: पशोर्विपाशाश्च मुक्ता: सूर्येण रश्मय: ।**
   **मुक्ता: सर्वभयाद्गर्भ एह्योहि विरभावित: ।।**
   सु०चि० 15/8
3. हिंसाविहाराणि हि महावीर्याणि रक्षांसि पशुपति कुबेर कुमारानुचराणि मांसशोणित प्रियत्वात् क्षतजनिमित्तं व्रणिनमुपसर्पन्ति ।
   सु०सू० 19/23
4. हिन्दी विश्वकोष, खण्ड - 6, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ।
5. आयुर्वेद का वृहत् इतिहास - श्री अत्रिदेव विद्यालंकार प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश ।




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आगन्तु अपस्मार एक चर्चा

## (एक आतुर वृत्त के संदर्भ में)

वैद्य पी.एस. अंशुमान, एच.पी.ए. (निवृत्त प्रोफ./प्राचार्य आयुर्वे

### परिचय

प्राचीन काल से ही अपस्मार के आगन्तु अनुबंधता के विषय में विवाद रहा है । चरक, सुश्रुत आदि में उसके समर्थन एवं विरोध दोनों प्रकार के विचार मिलते हैं ।

चरक के ये वचन कि ' इन अपस्मारों में कदाचित आगन्तु (अर्थात् भूतादि) अपस्मार का अनुबंध हो जाता है, इसका बाद में (चिकित्सा स्थान में) उपदेश किया जायेगा । इसकी विभेदक पहचान (विशेषविज्ञान) यही है कि वातादि के जो लक्षण कहे गये हैं उन लक्षणों से किन्हीं (कुछ) लक्षणों की अधिकता हो परन्तु अधिक लक्षण ऐसे होने चाहिए जो इन दोषों के लक्षणों के तुल्य नहीं हों ।'

पूर्व में इसी संदर्भ में दक्ष यज्ञ, ध्वंस कथा का संदर्भ देकर कहा गया है कि - 'विविध प्रकार के भूतों तथा अपवित्र द्रव्यों के स्पर्श से अपस्मार की उत्पत्ति हुई, यह कथन अपस्मार के आगन्तु निदान की दृष्टि से महत्वपूर्ण भी है और आगन्तु समर्थक भी ।'

रोग विनिश्चय की दृष्टि से भी जिस अपस्मार में आगन्तु अनुबंध होता है उसमें दोषज लक्षणों से अधिक (अतिरिक्त भूतज) लक्षण होते हैं, जिनको देखकर आगन्तु अपस्मार का होना निश्चित किया जाता है ।'

सुश्रुत में दोनों प्रकार के संदर्भ देखने को मिलते हैं । तदानुसार 'बिना कारण के रोगाक्रमण होने से, चिकित्सा न करने पर भी स्वत: रोग मिट जाने से कुछ आचार्य (स्व) शास्त्रानुसार अपस्मार को आगन्तु मानते हैं ऐसा कहा गया है ।'

परन्तु पुन: आचार्य अपस्मार दोषज ही है (आगन्तु नहीं) इसके समर्थन में तर्कों की लम्बी सूची देते हैं यथा-

- दोषों का संचय आदि क्रम से रोगोत्पत्ति करने के कारण ।
- वातादि दोषों के क्षणिक होने के कारण ।
- जब तक दोष का वेग रहता है, तब तक रोग रहता है ।
- आगम (चरकादि में) अपस्मार को दोषजन्य ही कहा गया है ।
- विश्व रूप होने से वात-पित्त-कफ एवं रज-तम यह दोष विश्व रूप है । अत: शारीरिक-मानसिक इन दोषों से उत्पन्न अपस्मार भी दोष जन्य है ।
- अत: विद्वान अपस्मार को दोष जन्य कहते हैं ।
- जिस प्रकार बादल बरसने पर भी कुछ बीज (वर्षा के बाद) शरद काल में (भी) उग जाते हैं उसी प्रकार (अपस्मार) रोग भी अपने समय पर (रोग बीज के अपशिष्ट रहने पर) उत्पन्न होते है । (पुन:पुन: रूप में प्रगट होता है ।)
- अवश्य ही अस्थायी वातादि दोष इसी थोड़े से समय के लिये बढ़कर नाना प्रकार के रोगों को उत्पन्न स्वाभाविक दूषण स्वभाव के कारण (वेग रूप में) दीखते है ।
- इसलिये अपस्मार संज्ञक महारोग दोषजन्य है ।

आगन्तु रोगों के सम्बधित कुछ अन्य मान्य तथ्यों को भी स्मरण में रखना चाहिए । यथा-आगन्तु रोग पहले स्वतंत्र (लक्षण वाले) होते हैं परन्तु बाद में (देह दूषित होने पर) वे दोषानुसारी लक्षणों से मिल जाते हैं' । अत: यह हेतु औषध में निज से भिन्न होता है ।'

आगन्तु रोगों को चार विभागों से (ज्वराधिकार में) विभक्त किया गया है । इस वर्गीकरण के अनुसार अभिषङ्गज, अभिचारज एवं अभिशापज आदि चार प्रकार कहे गये हैं ।'

अत: अपस्मार के विषय में जब आगन्तु अनुबंध के सम्बंध में विचार किया जाय तब इन चारों के संदर्भ में विचार किया जाना चाहिए । यह इसलिये भी आवश्यक है कि अपस्मार के कई रोगियों में इन चार में से कई निमित्त देखने को भी मिलते हैं । इनके निमित्त के साथ-साथ लक्षण एवं चिकित्सा विनिश्चय के लिये भी उन सभी संदर्भों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है । अत: इन पर संक्षेप में विचार कर लेना अनुचित नहीं होगा । यहां यह सही है कि चरकादि की चर्चा 'भूतज' के संदर्भ के आस-पास ही की गई प्रतीत होती है ।

चरक संहिता में (ज्वराधिकार में) उपरोक्त चार आगन्तु प्रकारों का परिचय देकर भी पुन: 1. काम, शोक भय एवं क्रोधज आदि मानस अभिषंज्ञज प्रकारों का तथा 'भूताभिषङ्गज 3. एवं विषज (विषसार्श/) अभिषङ्गज लक्षण विशेषों का वर्णन किया गया है ।

यहां चरकोक्त विवरण को अपस्मार संदर्भ में उपयोग कर विषय पर विचार किया गया है यथा -

नि० 1497, ए 2/1, कृष्णनगर, रूपाणि सर्कल, भावनगर (गुजरात) 364001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


**अभिघातज अपस्मार**[9]

हेतु

- शस्त्र, ढेला, कशा (चाबुक), काष्ठ (लकड़ी-लाठी), अरन्नि (थप्पड़ या लात) आदि के द्वारा मर्म पर प्रहार ।
- दांतादि से काटना ।
- प्रपतन, शिर-हृदय आदि पर किसी भी प्रकार से चोट पहुंचना ।
- प्रसव के समय शिर का नीचे पड़ने से टकराना या फोरसेप्स डिलेवरी में संदेश यंत्र के अतिपीड़न के कारण शिर पर आघात लगना ।

विकृति

- अभिघात से प्राण वायु दूषित होती है ।
- रक्तस्राव या शोथ ।

लक्षण

- व्रणशोफ के सामान्य लक्षण होना यथा - वैवर्ण्य, वेदना, शोथ होना ।
- वातिक लक्षण होना ।

**मर्माभिघात के अनुसार लक्षण होना यथा -**

1. शिरोमर्मगत सीमांत मर्म अभिघात से उन्माद, भय, चित्तनाश (या प्लवन) । मृत्यु, आदि (सु)
2. शिरोभिघात जन्य विकार होना यथा अर्दित
   * मन्यास्तंभ ग्रीवा, हनुग्रह, वेष्टन, चेष्टानाश ।
   * चक्षु विभ्रम, अक्षिनिमीलन, मूक, गदगदत्व, स्वरहानि ।
   * कास, श्वास, जृम्भा, लालास्राव, मुख-जिह्वा विकार ।
   * मोह (च) ।
3. हृदय अभिघात जन्य विकार होना यथा -
   * कास, श्वास, क्लोमापककर्षण ।
   * जिह्वानिर्गम, मुख-तालु, कण्ठ शोष ।
   * उन्माद, अपस्मार, प्रलापन, चित्तनाश ।
   - वातज अपस्मान के लक्षण होना ।

**अभिषङ्गज अपस्मार**[10]

हेतु

1. काम, शोक, भय (तथा क्रोधादि) मानसिक विकारों का अभिषङ्ग होना ।
2. भूताभिषज्ञ (तथा गृह आदि का प्रवेश)।
3. विषवात स्पर्श या विषमय पदार्थ स्पर्श (या उसका सेवन भी) ।

विकृति -

- काम शोक भय आदि से वायु को (तथा क्रोधादि से पित्त का) कोप होना ।
- भूत प्रकृति अनुसार दोष कोप ।
- विष स्वभावानुसार दोष कोप ।
- कामादि से उत्पन्न लक्षण (जो ज्वर प्रकरण में कहे गये हैं) अन्य (कामादि जन्य अतिसार-अपस्मारादि) में भी यही विशेषता लिये होते हैं ।

**लक्षण -**

**सामान्य** - कासजादि में कथित लक्षण कहीं पूर्व, कहीं बाद में और कहीं साथ-साथ होते हैं ।

- मनोविकार, भूत एवं विष स्वभाव अनुसार यथा दोष लक्षण होना ।
- कामादि के द्वारा भाव के आक्रान्त होने पर लक्षण तब तक बलवान नहीं होते जबतक कि वातादि दोष द्वारा देह दुष्ट नहीं होती है ।

विशेष

| (क) | कामज[11] | शोकज[12] | भयज[13] | क्रोधज[14] |
|---|---|---|---|---|
| | ध्यान (च) | वाष्प (आंसू) | त्रास (च) | संरंभ (रक्त) |
| | निश्वास (च) | बहुलता (च) | प्रलाप (सु) (अ) | वर्णता (च) |
| | चित्र विभ्रंश (सु) | प्रलपन (सु) (अ) | शीघ्रदेह | कम्प (सु) |
| | तन्द्रा (सु) | | परिशोष (सु) | |
| | आलस्य (सु) | | | |
| | अभोजन (सु) | | | |
| | हृदयवेदना (सु) | | | |
| | शीघ्र गात्र | | | |
| | परिशोष (सु) | | | |
| | वा. अपस्मार ल० | वा०अ०ल० | वा०अ०ल० | पित्तजापस्मार ल० |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख) भूताभिषङ्गज (याआविष्टज)[15] - 1. यथाभूत लक्षण होना । 2. अमानुष क्रियायें (च) उद्वेग, कम्प, हास्य, रूदन (सु)

ग) विषाभिषङ्गज (विष संवन जन्य)[16]- 1. यथा विष लक्षण, 2. मूर्च्छा (च) मद (च) मोह (च) ग्लानि (च) श्यावास्यता हनुग्रह, दाह, तृषा, तोद, अभक्तरूक, अतिसार (सु)

**अभिचारज अपस्मार[17]**

तु 1. सिद्ध पुरुषों द्वारा किये गये अभिचार प्रयोग ।
2. या मंत्र प्रयोग ।
(इन का ज्ञान प्रयोग देखकर, सुनकर या अनुमान से ही होता है ।)

**आकृति/लक्षण (त्रिदोष कोप)**

1. सन्निपाजत लक्षण होना ।
2. अभिचार भेद से विभिन्न प्रकार के लक्षण होना (च) ।
3. दाह (अ) तृषा (सु) विस्फोट होना (अ) ।
- मोह (सु) भ्रम (अ) मूर्च्छा (अ) होना ।
- इसका अत्यन्त दु:सह होना (च) ।
4. सन्निपातज अपस्मार के लक्षण ।

**अभिशापज अपस्मार[18]**

तु - सिद्ध पुरुषों द्वारा अभिशाप देना (च) ।
(या गुरु आदि द्वारा शापित होना ) इसका ज्ञान भी देख, सुन या अनुमान द्वारा ही होता है ।

**आकृति/लक्षण (त्रिदोष कोण)**

1. सन्निपातज लक्षण होना (च) ।
2. पूर्वोक्त शापानुसार विभिन्न लक्षण होना (च) ।
3. अभिचारोक्त दाह (अ) तृषा (सु) विस्फोट (अ) मोह (सु) भ्रम (अ) मूर्च्छा (अ) आदि होना इसका दु:सह होना ।
4. सन्निपातज अपस्मार के लक्षण होना ।

**आगन्तु अपस्मार चिकित्सा**

**क. चिकित्सा सूत्र[19]**

- दोषानुसार तीक्ष्ण संशोधन, संशमन, आगन्तु में मणिधारणादि ।
- जब दोषज अपस्मारों के आगन्तु अनुबंध होता है तब श्रेष्ठ चिकित्सक साधारण (दैव-व्यापाश्रय) कर्म और युक्तिव्यापाश्रय कर्म (दोनों) की व्यवस्था देते हैं । अर्थात् दोनों चिकित्सा करना आवश्यक है । (च)
- अपस्मार में आगन्तु अनुबंध दीखने पर उसकी चिकित्सा आगन्तु उन्माद के अनुसार करनी चाहिए (च)
- ग्रहों में कहे गये योगों की विशेष रूप से उपयोग में लेवें (सु) ।
- मंगल (द्रव्य मणि) धारण करें (सु) (छत्र, अजि छत्रा आदि कारण करना) ।
- काम, शोक, भय, क्रोधादि जन्य में परस्पर विरुद्ध प्रयोग द्वारा यथा - काम - शोक / भय, क्रोध - काम/भय ।
- विषजन्य में विषघ्न अगद प्रयोग ।

**(ख) कुछ प्रयुक्त/ निर्दिष्ट कल्प ।**

वातज में - (शोक-भय-कामजन्य में) अपस्मृत, वचाद्यघृत, पलंकश तैल (च) कुलत्थादिघृत (सु)

पित्तज में - (क्रोधजन्य में) आमलकघृत, अपस्मृत पंचगव्यघृत (च) निदारीगंधादिघृत (सु)

कफज में - वचाघृत (च) पिप्पल्यादिघृत (सु) सिद्धार्धकघृत (सु) कटीभतैल, पलंकश तैल

त्रिदोषज में - (भूतज आदि में) ब्राह्मीघृत (च) सिद्धार्धकघृत (सु) ।

ग्रहबाधा में - सिद्धार्थक घृत (सु) ।

विषज में - सिद्धार्थक घृत (सु) कायस्थावर्ति (सु)


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


अपस्मार में आगन्तु अनुबंध कुछ आतुरवृत्त पत्र संक्षेप में

| क्र. | 1 | 2 | 3 | 4 |
|---|---|---|---|---|
| (क) आतुर | | | | |
| आ.क. | 3503 | 20167 | 4972 | 13948 |
| लिङ्ग | पु० | स्त्री | पु० | स्त्री |
| वय | 44 | 4 | 50 | 28 |
| रोग/ लक्षण | अपस्मार (हृदयाभिघात) अपस्मरण अपतंत्रण आक्षेपण मूर्च्छा हृच्छूल | अपस्मार (निजशिरोभिघात) अपतंत्रण शीर्षाम्बु गमने अशक्ति स्मृति दौर्बल्य | आक्षेप/अपस्मरण अलर्कदूषि विष) श्वान दन्ष्ट्र के बाद लिये इन्जेकशन के बाद दौरे प्रारंभ हुए | आक्षेप/अपस्मरण अपतंत्रण टिक-20 पान के बाद बचने पर प्रारम्भ |
| (ख) चिकित्सा | | | | |
| 1. | रास्नादि क्वाथ दशमूल क्वाथ 2 तोला प्रात: | 1. मास्यादिक्वाथ दशमूलक्वाथ 2 तोला प्रात: | रास्नादिक्वाथ 2 तोला प्रात: | रास्नादिक्वाथ मास्यादिक्वाथ 2 तोला प्रात: |
| 2. | स्मृति सागर आपुच 1-1 x 2 बार | - स्मृति सागर अपतंत्रकारी आरोग्यवर्द्धिनी 1-1 गोली दो बार । | - स्मृति सागर अपतंत्रकारी, ब्राह्मीवटी 1-1 गोली दो बार । | |
| 3. | मेध्य चूर्ण, अर्जुन, अभ्रक प्रवाल, यष्टि सितोपलादि पि० 1 मा० x 2 बार | - मेध्य चूर्ण, वचा अर्जुन, यष्टि प्रवाल, मिश्रण 1 माशा दो बार | - मेध्य चूर्ण सारस्वत चूर्ण, अर्जुन, प्रवाल कामदुधा मिश्रण 1 माशा दो बार | सारस्वत, वचा शतावरी, अश्वगंधा अर्जुन, अभ्रक प्रवाल 1 माशा दो बार |
| 4. | हिंगुकर्पूर वटी लशुनादि वटी 1-1 दोबार भोजनोत्तर SOS हृदयार्णवरस 1-1 गोली दो बार | - लशुनादि 1-1 गोली भोजनोत्तर SOS सर्पगंधावटी 1गोली रात्रि में 2 एकांगवीर, चन्द्रप्रभा | - लशुनादि 1-1 गोली भोजनोत्तर - ब्राह्मीघृत 1 चम्मच प्रात: दूध से | शतावरी शिवाक्षार ब्राह्मीघृत 1 चम्मच प्रात: दूध में |
| (ग) परिणाम | | | | |
| | - क्रमश: वेग घटे - हृच्छूल शमन - स्वास्थ्य सुधरा समग्रत: 90% लाभ | - वेग घटे - सहारे से खड़े होने चलने में समर्थ समग्रत: 40% लाभ | आक्षेप घटे लक्षण घटे स्वास्थ्य सुधार समग्रत:60% लाभ | आक्षेपबंद हुए - - 55% लाभ |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


| क्र. | 1 | 2 | 3 | 4 |
|---|---|---|---|---|
| (क) आतुर | | | | |
| आ.क्र. | 72 | 102 | 11204 | 3923 |
| लिङ्ग | स्त्री | स्त्री | स्त्री | स्त्री |
| वयवर्ष | 16 | 25 | 38 | 35 |
| रोग/ लक्षण | क्षुद्रापस्मार मासिक काल के आस-पास आंशिक संमूर्छन (प्रपतन नहीं) | अपस्मार (भयानुबंधी) (एपिलेप्टीक फोंविया) यदाकद (सम्मूर्छन) अरति अनिद्रा | अपस्मार (क्रोधानुबंधी) भ्रम-रोष परुष वाक्य असहिष्णुता शिर:शूल प्रदर (श्वेतस्राव) | अपस्मार (रूग्णाकथनानुसार) मृतकुटुम्बी आक्रांत सम्मूर्छन कम्प पांडु (तीव्र) अनिद्रा |
| (ख) चिकित्सा | | | | |
| 1. दशमूल क्वाथ 2 तोला प्रात: | - मास्यादि/ दशमूलक्वाथ 2 तोला प्रात: | - गुडुच्यादि, वासा दशमूल क्वाथ 2 तोला प्रात: | - गुडुच्यादि मास्यादिक्वाथ 2 तोला प्रात: | |
| 2. अपतंत्रकारी आरोग्यवर्धिनी 1-1 गोली दो बार | - स्मृतिसागर अपंत्रकारी, ब्राह्मीवटी 1-1 गोली दो बार | - अपतंत्रकारी ब्राह्मीवटी 1-1 गोली दो बार | - पुनर्नवामण्डुर ब्राह्मीवटी 1-1 गोली दो बार | |
| 3. मेध्य/शंखपुष्पी धात्रिलोह, मण्डूर मिश्रण 1 माशा दो बार | - मेध्य, सारस्वत: अर्जुन, प्रवाल; यष्टि, शंखपुष्पी मिश्रण 1 माशा दो बार | - मेध्य, मांसी, शंखपुष्पी, सितोपलादि यष्टि, अर्जुन, प्रवाल मिश्रण 1 माशा दो बार | - मेध्य, धात्रिलोह मण्डूर भस्म, अर्जुन, प्रवाल मिश्रण 1 माशा दो बार | |
| 4. हिंगुकर्पूरवटी 1-1गो. भोजनोत्तर SOS कन्यालोहादिवटी आवश्यकतानुसार | - हिंगुकर्पूर/शंखवटी 1-1 गो. भोजनोत्तर SOS सर्पगंधा वटी रात्रि में सोते समय | शंखवटी, लशुनादि 1-1 गो. भोजनोत्तर (शिरशूलादि त्रजरस) प्रदरांतक रस आवश्यकतानुसार | लशुनादि 1 गो. भोजनोत्तर (सर्पगंधा 1 गोली सोते समय) | |
| (ग) परिणाम | | | | |
| - वेगवंद हुए | - वेग घटे | √ | √ | |
| - लक्षण शमन हुए | - भयानुभूति न्यून हुई | √ | √ | |
| - स्वास्थ्य सुधरा | - √ | √ | √ | |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


संदर्भ/ आहार :-

1. तेषामागन्तुरषुबन्धो भवत्येव कदाचित, स उत्तर कालमुपदक्ष्यते ।
तस्य विशेषविज्ञानं यथोक्तैर्लिङ्गाधिक्यमदोषलिंङ्गानुरूपं किंचित् ।
(च०नि० 8/10)

2. तस्मिन हीं X X X दक्षाध्वरोदध्वंसे X X विविधभूताशुचि संस्पर्शादपस्माराणां X X ।
(च०नि० 8/12)

3-4. अनिमित्तागमादिव्याधेर्गभनादकृतेऽपि च आगमाच्चापस्मारं वदन्त्यन्ये न दोषजम् ।
सु०उ० 61/17-18

यस्यानुबंधस्त्वागन्तुर्दोषलिङ्गाधिक्याकृति ।
(च०चि० 10/51)

5. क्रमोणयोगाद्दोषाणां क्षणिक त्वात्तयैव च ।
आगभाद्वेश्वरूप्याच्च स तु निर्वर्ण्यतं बुधैः ।
देवे वर्ष त्यपि यथा भूमौ बीजानी कानिचित् ।
शरदि प्रतिरोहन्ति तथा व्याधि समुद्भवः ।
स्थामिनः केचिद्ल्पेन कालेन भिवर्धिताः ।
दर्शयन्तिः विकारास्तुं विश्व रूपान्नि सर्गतः ।
अपस्मारो महाव्याधिस्तस्माद्दोषज एव तु ।
सु०उ० 61/18-21

6-7. ते पूर्वं केवला पश्चान्निजैव्यामिश्र लक्षणाः ।
हेत्वौषधि विशिष्टाश्च भवन्त्यागन्तवो ज्वराः ॥
(च०चि० 3/126)

8. आगन्तुरष्टमो यस्तु स निर्दिष्टश्चतुर्विधः ।
अभिघाताभिषङ्गाभ्यामभिवाराभिशापतः ॥
(च०चि० 3/111)

9. शास्त्रलोष्टकशाकाष्ठ्मुष्टयरत्नितलद्विजैः ।
तद्विधैश्च हते गात्रं ज्वर पस्यादभिघातजः ॥
तत्राभिघातजे वायुः प्रायो रक्तं प्रदूषयण् ।
सव्यथाशोक वैवर्ण्यं करोति सरूजं ज्वरम् ॥
च०चि० 3/112-113

10. कामशोकभय क्रोधैरभिषक्तस्ययोज्वरः ।
सोऽभिषङ्गज्वरो ज्ञेयोयश्चभूताभिषङ्गजः ।
कामशोकभयाद्वायुः क्रोधात्पित्तंत्र्योमलाः ॥
भूताभिषङ्गातकुप्यन्ति भूतसामान्य लक्षणाः ।
भूताधिX Xरे व्याख्यातं तदष्टविध लक्षणम् ॥
च०चि० 3/114-116

कामादिजानामुद्दिष्टं ज्वराणां यद्विशेषम् ।
कामादिजानां रोगाणामन्येषामणि तत्स्मृतम् ॥
च०चि० 3/125

केषांचिदेषां लिङ्गानां संतापो जायते पुरः ।
पश्चात्तुल्यं तु केषां चिद्देषु कामज्वरादिषु ॥
च०चि० 3/124

मनस्यभिहते पूर्वं कामाद्यैनं तथा वलम् ।
ज्वरः प्रान्पोति वाताद्यैर्देहां चावन्न दुष्यति ॥
च०चि० 3/129

* X X 'वाताद्यै दुष्यति' के स्थान पर पाठान्तर X X 'कामाद्यैर्मनो यावन्न दुष्यति' (गंगाधर)

11. ध्याननिःश्वासबहुलं लिङ्गं कामज्वरे स्मृतम् ।
च०चि० 3/122

कामजे चित्त विभ्रंशस्तन्द्रालस्यमभोजनम् ।
हृदये वेदना चाशु गात्रश्च परिशुष्यति ॥
(सु०उ० 39)

12. शोकजे वाष्प वहुले (च०चि० 3/122)
X X भयात्प्रलापः शोकाच्च X X (सु०उ० 39)

13. X X त्रास प्रायं भय ज्वरे (च०चि० 3/122)
भयात्प्रलापः या 'आशु गाडाञ्च परिशुष्यति भयात्' (पाठान्तर) सु० 339

14. क्रोधजे वहुसंरम्भः X X (च०चि० 3/123)
X X भवेत कोपाञ्च वेपथु । सु०उ० 39-

15. X X भूतोवेशेत्वभानुषम् । च०चि० 3/123
भूताभिषङ्गादुद्वेगो हास्य कम्पनरोदनम् । (सु०उ० 391-)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


XX भूत सामान्य लक्षणः । च०चि० 3/116

16. मूर्च्छागोहमदग्लानिभूयिष्ठ विष संभवे (च०चि० 3/123)

श्यावास्यता विषकृते दाहातिसारहृदग्रहाः ।
अभक्तरूक पिपासा च तोदो मूर्च्छा बलक्षयः ।

सु०उ० 39/-

17-18. अभिचाराभिशापाभ्यो सिद्धानांयः प्रवर्तते सन्निपातज्वरो घोरः स विज्ञेयः सुदुः सहः । सन्निपात ज्वरस्योक्तं लिङ्गंयज्ञस्यतत्स्मृतम् चित्तेन्द्रियशरीराणामर्तयोऽन्याश्च नैकशः । प्रयोगत्वभिचारस्य दृष्टवा शापस्य चैवहि स्वयं श्रुत्वाऽनुमानेन लक्ष्यते प्रशमेन वा । वैविध्यादभिचारस्य शापस्यचतदात्मके यथाकर्मप्रयोगेण लक्षणं स्यात्पृथग्विधम् ।

(च०चि० 3/118-121)

अभिचाराभिशापाभ्यां मोहतृष्णा च ज्ञापते ।

(सु०उ० 39)

तत्रभिचारि कैर्मन्त्रैर्हूयमानस्य तप्यते ।
पूर्वचेतस्ततो देहस्ततो विस्फोटतृड्भ्रमैः ।

(अ०नि० 2...

19. हितान्यपस्मारिभ्यस्तीक्ष्णानि चैव संशोधनान्युपशमनं यथा स्वं मन्त्रादीनि चागन्तुसंयोगे ।

(च०नि० 8/1...

यदादोष निमित्तस्य भव त्यागन्तुरन्वयः
तदा साधारणं कर्म प्रवदन्ति भिषग्वरः ।

(च०नि० 8/1...

यस्यानुबंधस्त्वागन्तुर्दोषलिङ्गाधिकाकृतिः ।
पश्येत्तस्य भिषककुर्यादागन्तून्मादभेजम् ॥

(च०चि० 10/...

उपयोगो ग्रहोक्तानां योगानां तु विशेषतः ।(सु०उ०61/...
पूजां रूद्रस्य कुर्वीत तदगणानां च नित्यशः ।

(सु०उ०61/...

मंगलल्यानि च धारयेत् । (सु.उ. 61/41)


बैद्यनाथ स्त्रियों के लिए कांतिवर्द्धक एवं बलवर्द्धक

# अशोकारिष्ट

कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, आंखों, हाथों, पैरों के तलुओं की जलन, भूख न लगना तथा ऋतु धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है ।




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# उत्तराखण्ड के जनपदों में कुटीर उद्योग एवं खाद्य-सामग्री व औषधोपयोगी वनस्पतियाँ

डा० मायाराम उनियाल, सेवानिवृत्त निदेशक (आयुर्वेद) वनौषधि विद्यापति (श्रीलंका)

आदिकाल से ही मानव एवं जीव-जन्तु अपनी आवश्यकताओं के लिये वनसम्पदा पर निर्भर रहता आया है। हमारे दैनिक उपयोग की अनेकानेक वस्तुओं का स्रोत वनसम्पदा ही है, जिसमें जीवन रक्षक जड़ी-बूटियाँ, कृषि व उपयोगी काष्ठ, चित्रकला, वाद्यसंगीत, कुटीर उद्योग, ऊर्जा, मसाले, सुगन्धित तैल, खाद्य-सामग्री में उपयोगी वनस्पति पादप मुख्य हैं। यद्यपि विस्तृत रूप से औषधोपयोगी उत्तराखण्ड हिमालय की जड़ी-बूटियों का उल्लेख प्रस्तुत रचना में दिया गया है तथापि संक्षिप्त जानकारी इस तालिका में दी जा रही है जोकि निम्न प्रकार है।

**इमारती काष्ठ के उपयोगी वृक्ष**

1. लोरी, सुराछ, Cupressus torulosa Don :- इसका काष्ठ देवदार से भी मजबूत होता है। 1800 मीटर से 2400 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है।
2. देवदारु, देवदार (Cedrus deodara L) काष्ठ, तेल, बुरादा, इमारती लकड़ी एवं औषधोपयोगी बहुवर्षायु हिमालय की सदाहरितवृक्ष।
3. सरल, चीड़ - Pinus Rox - burghii sargent बहुवर्षायु इमारती लकड़ी में उपयोगी वृक्ष एवं विरोजा उद्योग (लीसा) तैयार करने का मूल स्रोत है। बीज चिलगोजे की तरह खाये जाते हैं। उत्तराखण्ड में राज्य राजस्व प्राप्ति का यह मुख्य वृक्ष है।
4. कैल - Pinus excelsa wall इमारती काष्ठ में उपयोगी।
5. राई, रोंई Picea morinda link, लकड़ी जलावन के रूप में एवं छाल मकान (छप्पर) की छत बनाने के काम में उपयोगी।
6. मोरीण्डा, तालीस Abies weffiana lindi, A pendrow spach. काष्ठ का उपयोग इमारती लकड़ी के लिये एवं पत्तियों का उपयोग औषध के रूप में किया जाता है।
7. तुन, तृण, Cedrela toona ionle काष्ठ इमारती लकड़ी हेतु।
8. शीशम, शिंशपा Dalbergia Roxle काष्ठ इमारती लकड़ी हेतु।
9. शाल Shorea robusta gaertn काष्ठ इमारती लकड़ी हेतु।
10. हरिद्र, हल्दू Adina cordifolia Benrex Hook काष्ठ इमारती लकड़ी हेतु।
11. बांझवान Querous incana Roxle काष्ठ की उपयोगी कृषि उपकरणों इमारती काष्ठ के रूप में एवं पत्तियों का उपयोग पशु चारा हेतु उपयोगी है।
12. सिनिश, सांदन Qugeina dalfergioides Benth काष्ठ का उपयोग घरेलू उपयोग के बर्तन एवं कृषि उपकरण बनाने एवं पत्तियों का उपयोग पशु चारा के लिए किया जाता है।

**ऊर्जा के लिए उपयोगी वनस्पतियाँ**

13. दारुहरिद्रा, किनमोड़ Berberis aristata DC, B.asiatica Roxle.B.Rescium Hook.
14. भोजपत्र (भूर्ज) Betula utilis D.D. तांत्रिक कामों में भोजपत्र का उपयोग एवं घरेलू कामों में छतरी के रूप में छाल का उपयोग किया जाता है।
15. महानिम्ब, डैंकन Melia azedarach A. Juss छाल और फलों का उपयोग स्थानिक लोग चिकित्सा में करते हैं। पत्तियों का उपयोग पशुचारा में किया जाता है।
16. बांझ (ओक)(Quercus incana Roxle) काष्ठ का उपयोग कृषि उपकरणों एवं लघु उद्योग में पत्ती का उपयोग पशुचारा में किया जाता है।
17. खरसू (Quercus semecarpifolia) काष्ठ का उपयोग इमारती काष्ठ के रूप में एवं पत्र का उपयोग पशुचारा में किया जाता है।
18. कुरूवक, बुरांस (Rhododendron arborium Sm.) इसके फूलों का शीतल पेय शर्बत के रूप में तैयार किया जाता है।
19. सिमरू (Rhododendon campanilatim D.Don) हिमनदों के आस-पास इसके गुल्म पाये जाते हैं। पुष्प मनमोहक एवं रंगबिरंगे सुगन्धित।
20. धूपी, तली (Rhododendron anthopogon D. Don) पुष्प सुगन्धित एवं पत्ती का उपयोग चिकित्सा में करते



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


हैं । चायपत्ती के रूप में भोटिया प्रयोग करते हैं ।

**कुटीर उद्योग में उपयोगी पादप :-**

21. रींगाल (वैंत) Arundinavia falcata Nees
A. Spathiflora Gamble
A. Jaunesavensis Gamble
ये किस्में 1800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,500 मीटर की ऊँचाई तक उत्तराखण्ड में पाई जाती हैं । कुटीर उद्योग चटाई, टोकरियाँ, कण्डी, आदि स्थानिक उपयोग की वस्तुएं इन किस्में से बनाई जाती हैं । इन किस्मों का भी दिनों-दिन ह्रास होता जा रहा है । इनके रोपण कार्यक्रम पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है । अन्यथा लुप्त प्राय: की श्रेणी में ये किस्में आ जायेंगी ।
22. मालझन, मालू (Bauhinia Vahlli W. ofa) इसके बीज भूनकर ग्रामीण खाते हैं । पत्तियों का उपयोग पत्तलों एवं पशुचारा में किया जाता है । रेशे का उपयोग रस्सी बनाने के काम में किया जाता है ।
23. भूर्ज, भोजपत्र (Betula utilis D.Don) धार्मिक महत्व का वृक्ष है । भोज वृक्ष के छाल का उपयोग कागज के रूप में एवं तान्त्रिक कार्यों में प्रयोग किया जाता है । ग्रामीण लोग छाल पत्र का प्रयोग छाता बनाने के लिये करते हैं पत्तियों का प्रयोग पशुचारा में किया जाता है ।
24. गेंठी (Bochmeria rugulosa wedd.) इसके काष्ठ से दूध, घी, दही आदि रखने के लिये बर्तन बनाये जाते हैं । कुटीर उद्योग का यह उपयोगी वृक्ष है । काष्ठ कला में इस वृक्ष की महत्ता है ।
25. गेंठी (Boehmeria platyphylla D.Don) इसकी छाल से अच्छे किस्म का रेशा तैयार किया जाता है । पत्तों का उपयोग पशुचारा में किया जाता है ।
26. पापरी (Buxus wallichiana Baill) इसके काष्ठ का उपयोग काष्ठकला लकड़ी के खिलौने एवं बक्से आदि बनाने के काम में किया जाता है ।
27. अखरोट (Juglans reiga Linn.) इसकी खेती पहाड़ों में की जाती है । सूखे मेवों के रूप में गिरी का उपयोग किया जाता है । छाल का (दन्दासा) के नाम से मंजन के रूप में प्रयोग होता है । काष्ठ का उपयोग कुटीर उद्योग में किया जाता है ।
28. बिजया, भांग (Cannabis sativa Linn.) बीज का उपयोग औषध के रूप में किया जाता है तथा कुछ इसके बीजों से चटनी तैयार करते हैं । काष्ठ से तैयार किया जाता है । पत्र मादक होते हैं ।
29. बावली (भावड़घास) (Eudaliapis binata) इसके से रस्सियां तैयार की जाती हैं । इसकी लकड़ी प्रयोग कागज तैयार करने के लिये विशेष रूप से है ।
30. भीमल, (Grewia oppositifolia Roxle) इसके से रस्सी बनाई जाती है । यह कुटीर उद्योग महत्वपूर्ण वृक्ष है । दूध बढ़ाने के लिये मवेशियों इसकी पत्ती चारे के रूप में प्रयोग की जाती है
31. कण्डाली (बिच्छूबटी) (Girardiana diversifo Eriss.) काण्ड से रेशे तैयार किये जाते हैं । का शाक ग्रामीण खाते हैं ।
32. कपासी (Gerbera gossypina) इसके रेशों से उच्च किस्म के थैले तैयार किये जाते हैं ।
33. चीड़, कुल्ये, (Pinis roxburghii Sarg) काष्ठ का इमारती लकड़ी में विशेष उपयोग किया जाता है इसके निर्यास (गोंद) को विरोजा कहते हैं । का उद्योग धन्धों में विशेष उपयोग होता है ।
34. आसीन, असन (Terminalia alata) इसके काष्ठ कृषि उपकरण तैयार किये जाते है ।
35. तुन, तृण (Cedrela tenna Roxle) इसकी लकड़ी कृषि उपकरण बनाये जाते हैं ।
36. लालजड़ी - रतनजोत (Arnelia benthamil (Wight Don) रंगाई के काम में मूल का उपयोग किया है ।
37. दोलू आर्चा (Rheum emodi wall. Rheum austr D. Don) मूल का उपयोग औषध उपयोग के रंगाई के काम में उपयोग किया जाता है ।
38. टिम्बुरू, तिमुर (Zenthzylaum alatum Roxb.) लकड़ी से छड़ियां व लाठियां बनाई जाती हैं ।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



का चिकित्सा में उपयोग किया जाता है ।

**मसालों में उपयोगी वनस्पतियाँ**

39. चोरा, चोरक (Angelica glauca Edgw.) मूल, बीज
जम्मू फर्न (Allium Stracheyi Baker) पंचांग
(Allium govanianum wall) पंचांग
(Allium wallichil kunthi) पंचांग
(Allium humile kunthi) मूलकन्द
पत्र का शाक के रूप में व्यवहार होता है ।
40. तेजपात (Cinnamomum tamala nees) पत्र, छाल
41. काला जीरा (Carum bulbocastanum koch) बीज
42. थांयों (Buplerum flacutum Linn.) बीज
(Pimpinella sp.)

**स्वयंजात फल :-**

43. भमोरा (Cornus capitata wall) फल
44. कटफल का फल (Myrica nagi Thunb) फल
45. चूलु (Prunus armeniaca Linn.) फल, गिरी तेल
(Rubus ellipaticus) घरेलू काम
46. जामुन, फलेण्डा (Syzygium jambos Linn) फल
47. शहतूत, केनू (Hiorus alba Linn.) फल
48. तिमला, तिमुलु (Ficus Roxburghii wall) फल
49. वेडू, जंगली अंजीर (Ficus palmata Forsk) फल
50. किनगौड़, दारुहरिद्रा (Berberis lycium Royle) फल
(B. Asiatica Roxb.) फल पुष्प
51. खैना (Ficus saemocarpa miq.) फल
52. आड़ आरूक (Prunus persica Benk) फल
53. पुलम आरूक (Prunus communis Hus.) फल
54. मेहल आरूक (Pyrus pashia Ham.) फल
55. खिंगारू (Cotoneaster microphylla wall) फल
56. खजूरी (Phoenix humilis Royle) फल
57. खड़िक (Celtis australis Linn.) फल
58. भ्मील, भीमल (Grewia oppositifolia Roxb.) फल

**शाक में उपयोगी वनस्पतियाँ :-**

59. वरमूला (Megacarpaca polyandra Benth) पत्र
60. जरगू (Phytholacca latfenia Hans.) पत्र
61. कण्डाली (Girardiana diversifolia Eriss.) पत्र
62. तैड़,तैड़ (Dioscorea felophylla voigh) मूल कन्द
63. कांचनार, ग्वीरियाल (Bauhinia purpurpurea Linn.)
पुष्प कलिका
64. लिंगड़ू (Pteridium aquilium) इसके पचांग की कोपलों की सब्जी बनाई जाती है ।
65. तिमला, तिमुल (Ficus roxburghii wall) कच्चे फलों का शाक खाया जाता है ।
66. साकिना, सकिनू (Indigofera heterantha wall) पुष्प कलिका का शाक ।
67. मीठी नीम, कड़ीपत्ता (Murraya Keenigie spreng) पत्ती का उपयोग दालों में किया जाता है ।
68. कोटू औगल (Fagopyrum escubntum Moen.) पत्तियों का एवं बीजों का आटा खाया जाता है ।
69. चौलाई, मारछा (Amaranthus blitum Linn) पत्र का var oleracea Duthic शाक एवं बीज, चौलाई दाना के रूप में आटा तैयार किया जाता है ।

**घरेलू चिकित्सा में स्थानिक जड़ी बूटियों का उपयोग**

70. वच, वत (Acorus calamus Linn.) मूल, (राई जोम)
71. मीठा विष मिठू, मूल कन्द ।
72. किनगाड़ (Berberis aristata DC.) रसोन्त (घन) ।
73. तोतरो (Berloexis jatamansi DC.)रसौल (धनसान)
74. मांसी (Nardostachfs Jatamansi DC.) भौमिक काण्ड ।
75. सुमयां, तगर (Valer Wallichil DC) मूल ।
76. हत्थाजड़ी, मूल ।
77. सालमपञ्जा हत्थाजोड़ी (Orichis latifolia Linn.) मूल।
78. ढोलू आर्चा (Rheum emodi wall) मूल ।
79. कड़वी केदारी कडू (Picrorhiza kurroa Royle) मूल काण्ड ।
80. चिरैतू (Swertia chirata Buch Ham.) पचांग ।
81. टिमरू (Zanroxylm alatum Roxb.) पंचाग बीज छाल ।
82. वन्पशा (Viola serpens wall) पुष्प पत्र ।
83. निर्गुण्डी सिमारू (Vitex negundo Linn.) पत्र ।
84. धौलू छाप (Wood fordia fruticosa Kurz) पुष्प ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



85. धूप गूगल (Jurinea macrooephala Benth) मूल ।
86. भेंकल (Prinsepia utilis Royle) बीज तैल ।
87. ब्रह्मकमल (Saussura Obvallata) पुष्प ।
88. मिंडुण (Ampelocissus latifolia) फल ।
89. बकरौली (Osyris wighiana) पत्र ।

**इसकी पत्तियाँ उबाल कर सूखा लेते हैं फिर चायपत्ती के स्थान पर उपयोग करते है ।**

90. विष भस्या (Andrachne cordifolia) पत्र
इसकी पत्तियों को बिच्छू के काटने पर लगाते हैं ।
91. तुंगलो तुंगला (Rhus parviflora) इसकी पत्तियों को सुखाकर तम्बाकू के स्थान पर प्रयोग करते हैं । पके फल खाये जाते हैं ।
92. हेमर (Alnus Sp.) इसकी छाल का उपयोग सन्धिविच्युति एवं अस्थिभग्न में प्लास्टर के रूप में करते हैं ।
93. पंया, पदक (Prunus cerasoides D Don) इसके प्रकार दहिया, नीलकंठी, मंजीठ बेल कूजा मिरु आदि वनस्पतियां स्थानिक दैनिक उपयोग में की जाती है । वनसम्बर्धन एवं पर्यावरण संरक्षण में प्रजातियों की विशेष उपादेयता है । उत्तरांचल राज्य को हर्बल राज्य घोषित करने के बाद राज्य सरकार को उपरोक्त की वनसम्पदा के विकास पर योजनाबद्ध तरीके से एवषणात्मक अध्ययन की आवश्यकता है ।

परीक्षा के समय आपके लाड़ले को जरूरत है
एकाग्रता और अधिक कार्यक्षमता की

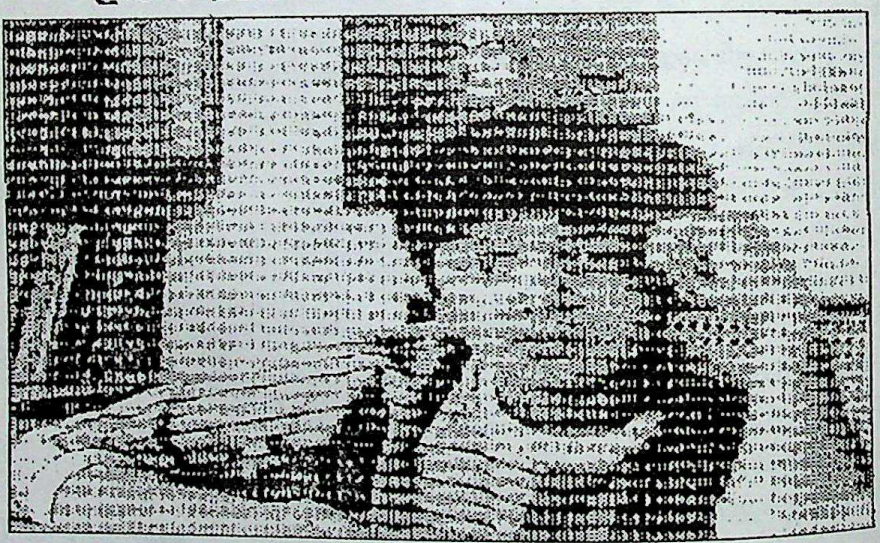

आपके लाड़ले का उज्ज्वल भविष्य आपका सपना है । पर आज की तीव्र प्रतिस्पर्धा व पढ़ाई का बोझ आपके लिए चिंता का विषय भी है । ऐसे माहौल में आपके बच्चे को जरूरत है एकाग्रता व समझने की क्षमता की, उसे जरूरत है बैद्यनाथ शंखपुष्पी की, तो आज ही से अपने लाड़ले को दीजिए ...

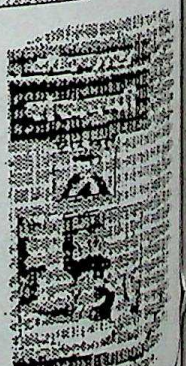

बैद्यनाथ
शंखपुष्पी शरबत
एकाग्रता लाए, समझ जगाए।
आज, हररोज और वर्षभर




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# प्राकृतिक चिकित्सा आयुर्वेद का एक अंग विशेष

*डा० रजनी बाला ** डा० विकास चन्द्र गुप्ता *** डा० लक्ष्मीकान्त द्विवेदी

प्राकृतिक चिकित्सा या नैसर्गिक चिकित्सा वस्तुत: तत्व चिकित्सा है जिसका शाब्दिक अर्थ है, पट् तत्वों द्वारा त्रितापों दैहिक, दैविक तथा भौतिक की चिकित्सा करना अर्थात् आत्मा, आकाश तत्व, वायुतत्व, अग्नितत्व, जलतत्व एवं पृथ्वी तत्व के योग से सर्वप्रकार के रोगों का निवारण।

प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान या प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली उतनी ही पुरानी है जितनी प्रकृति स्वयं या इसके आधारभूत तत्व आकाश आदि हैं। यह चिकित्सा पद्धति असल में जीवनयापन की सही विधि बताती है। इस विज्ञान में जो नियम, जो सिद्धांत उत्तम स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने के लिए काम में लाये जाते हैं, वे ही नियम रोग होने पर उसके निवारणार्थ भी प्रयोग किये जाते हैं। अत: इस चिकित्सा के माध्यम से स्वस्थ व्यक्ति एवं रोगी व्यक्ति दोनों लाभ प्राप्त कर दीर्घ जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

आयुर्वेद अर्थात् आयु का वेद ( जिसके द्वारा आयु के हित-अहित, सुख-दुख आयु हित/अहित मान एवं आयुर्वेद का ज्ञान होता है या आयु जिसके द्वारा आयु जानी जाती है) का प्रयोजन भी स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना तथा रोगी के रोग का निवारण करना है।

अत: विज्ञान की वह शाखा जो व्यक्ति के जन्म मरण या आयु से सम्बन्धित है, आयुर्वेद है। महर्षि चरक का ग्रन्थ - ''चरक संहिता'' जो काय चिकित्सा प्रधान ग्रंथ है, में प्रथम अध्याय का नाम ''दीर्घञ्जीवितीय'' है जिसमें इन तथ्यों पर प्रकाश डाला गया है जिसके द्वारा दीर्घजीवन की प्राप्ति होती है। प्राकृतिक चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य भी दीर्घजीवन की प्राप्ति है। अत: दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि प्राकृतिक चिकित्सा में, आयुर्वेद के समान, उन विधियों को बताया गया है जिसका प्रयोग रोगावस्था एवं निरोगावस्था दोनों में विवेक (बुद्धिमानी) के साथ, समान रूप से करके व्यक्ति अपने जीवन को आनन्दमय एवं दीर्घ बना सकता है।

प्राकृतिक चिकित्सा विभिन्न प्रकार से आयुर्वेद के साथ समानता रखती है, जिनकी पुष्टि निम्नांकित तथ्यों द्वारा होती है -

1. प्रकृति के अपरा एवं परा दो भेद हैं। अपरा प्रकृति जड़ है किन्तु परा प्रकृति ईश्वर की प्रेरणा शक्ति से विख्यात है जो प्रत्येक प्राणी को जीवन प्रदान करती है। आयुर्वेद में भी सृष्टि की उत्पत्ति प्रकृति एवं पुरुष से मानी जाती है। सुश्रुत ने सृष्टि उत्पत्ति क्रम में 24 तत्वों द्वारा सृष्टि की उत्पत्ति बतायी है जिसमें सर्वप्रथम प्रकृति एवं पुरुष का संगम बताया है। सुश्रुत ने शारीर स्थान। में प्रकृति को जड़ अर्थात् अचेतन तथा पुरुष को चैतन्य युक्त बताया है।
2. जिस प्रकार प्राकृतिक सृष्टि अनादि एवं अनन्त है, उसी प्रकार आयुर्वेद भी अनादि, अनन्त अर्थात शाश्वत है और वह प्राकृतिक नियमों के अनुसार है। यही कारण है कि प्राकृतिक चिकित्सा जो सही अर्थों में विशुद्ध आयुर्वेद के समान है, का जितना अच्छा वर्णन वेदों में है उतना अच्छा वर्णन संसार के किसी भी चिकित्सा सम्बन्धी ग्रन्थों में मिलना दुर्लभ है।
3. तीसरा लक्ष्ण अपौरुषेय होना, अर्थात् मनुष्यकृत न होना है। जिस प्रकार चारों वेद अपौरुषेय है उसी प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा भी अपौरुषेय है।
4. प्रकृति की अनुपम देन को अपने दैनिक जीवन में उतारकर व्यक्ति स्वास्थ्य लाभ कर सकता है। प्रात: काल सूर्य नमन या प्रणाम करने से, उगते सूर्य के दर्शन करने से, ओस युक्त हरी घास पर चलने से दृष्टि शक्ति का वर्द्धन होता है। आयुर्वेद में भी मनुष्यों के लिए दिनचर्या, रात्रिचर्या तथा ऋतुचर्या का विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है। यह चौथा लक्षण है।
5. आयुर्वेद में माना जाता है कि अधिकतर रोग, अग्नि की मन्दता से होते हैं। अजीर्ण मन्दाग्नि का कारण होता है और वह अजीर्ण कुपित दोषों के कारण होता है :

''सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपितादोषा: ।

अन्यत्र सुश्रुत ने भी कहा है -

''कुपितानां हि दोषाणाम् शरीरे परिधावताम् ।

*पी.जी. अध्येता, र.शा.एवं भै.क., रा.आ.सं., जयपुर **जे.आर. -।।, आई.एम.एस., बी.एच.यू., वाराणसी
*** प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, र.शा. एवं भै.क., राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


**यत्र संगः खवैगुण्याद् व्याधिस्तत्रोपजायते ।।** (सु०)

सब रोगों का मूल कारण शरीर स्थित विजातीय द्रव्य है जिनकी उत्पत्ति शरीर में प्रकृति के नियमों को भंग करने से होती है । यह प्राकृतिक नियम है कि रोग के कीटाणुओं का अस्तित्व उन्हीं शरीरों में सम्भव है जिनमें पहले से ही रोग का कारण विजातीय द्रव्य विद्यमान होता है या जो रोग ग्रस्त हैं, या जिनमें रोग के ग्रहण करने की योग्यता है, लेकिन जो शरीर पोषक तत्वों से युक्त एवं विजातीय द्रव्यों से मुक्त है, उन पर जीवाणु/परजीवी का आक्रमण होना असम्भव है ।

प्राकृतिक नियमानुसार मिथ्या आहार विहार ही समस्त रोगों का कारण माना जाता है क्योंकि मिथ्या आहार-विहार द्वारा शरीर में स्थित अग्नि (जठराग्नि) की मन्दता के कारण आम की उत्पत्ति होती है तथा यह आम अन्य अग्नियों को भी दूषित करते हुए आम विष जिस देश में संग्रहित होता है उसी में त्रिदोष कोप पूर्वक विकार उत्पन्न हो जाता है ।

आयुर्वेद में मिथ्या आहार-विहार के अन्तर्गत रोगों की उत्पत्ति के 3 कारण (अतियोग, अयोग, मिथ्यारोग) माने गये हैं । इसी आधार पर 18 प्रकार के उपशय का वर्णन पंच निदान में समाहित किया गया है । केवल आहार सुधार द्वारा रोगी मनुष्य को रोग मुक्त किया जा सकता है । पथ्य पर चलने वाले निरोगी रहते हैं और अपथ्य सेवी को रोग जल्दी पकड़ता है एवं चिकित्सा में भी पथ्य आहार-विहार का महत्व है बिना पथ्याहार विहार चिकित्सा में अच्छी चिकित्सा भी रोग मुक्त में समर्थ नहीं है ।

**"पथ्ये सति गदार्तस्य किं औषधनिषेवणैः ।**
**पथ्ये सति गदार्तस्य किं औषधम् निषेवणै ।।**

7. दोनों चिकित्सा पद्धतियों में यह माना जाता है कि सभी रोग एक, उनके कारण एक, उनकी चिकित्सा भी एक होती है । विजातीय द्रव्य ही सभी रोगों का कारण है तथा उनको नष्ट करना ही रोगों की चिकित्सा है । आयुर्वेद में भी रोगों की एकरूपता एवं उपचार की एकरूपता में विश्वास किया जाता है अर्थात् रोगों के अनगिनत नाम तो लिये जाते हैं वह सिर्फ यह समझने के लिए कि पीड़ा शरीर के किसी अंग में और किस तरह की है । शरीर के किसी स्थान या समूचे शरीर में कुपित दोष अथवा आमविष को दूर कर देना ही वास्तविक चिकित्सा है जो प्रत्येक रोग में केवल एक ही प्रकार की (धातु साम्य के लिए) होती है ।

**"प्रवृतिधातुसाम्यार्था चिकित्सेत्यथि धीयते ।"**

8. दोनों चिकित्सा पद्धतियों में पंचमहाभूतों को आधारभूत माना है । प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत जल चिकित्सा, अग्नि चिकित्सा इत्यादि का समावेश है ।
9. आयुर्वेद में भी प्राकृतिक चिकित्सा के समान दोषों को उभाड़कर या शखाश्रित दोषों को कोष्ठाश्रित करके शरीर से बाहर निकालने का विधान है जिससे हुए रोग मिट जाते हैं एवं नये रोग होने नहीं पाते ।

**संक्षेप में** - मानव ही नहीं अपितु पशु-पक्षी भी नैसर्गिक या प्रकृति के महत्व से वंचित नहीं हैं । ऐसा प्रायः देखा जाता है कि प्रकृति के प्रांगण में विचरने वाले पशु-पक्षी अपने सारे कार्य नैसर्गिक प्रकृति के अनुसार करते हैं । इस मायने में मानव की अपेक्षा ये प्रकृति के अधिक नजदीक हैं । जब उनके शरीर में विजातीय द्रव्य एकत्र हो जाते हैं तब वह छर्दन (उल्टी) करके उनको शरीर से बाहर निकाल देते हैं । पंचकर्म का वमन कर्म भी इसी सिद्धान्त पर आधारित है । आयुर्वेदिक चिकित्सा में संशोधन कर्म का विशेष महत्व है क्योंकि इसके द्वारा रोग पुनः उभरते नहीं हैं और दोष साम्यावस्था में रहते है जो आरोग्य का प्रतीक है ।

**"रोगस्तु दोष वैषम्य, दोष साम्यारोग्यता ।।"**

अतः यह कहा जा सकता है कि निसर्गोपचार या प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्त भी आयुर्वेद में समाहित हैं । अर्थात् वस्तुतः निसर्गोपचार भी आयुर्वेद का ही अंग विशेष है, जहाँ स्वास्थ्योभयन तथा रोगी की चिकित्सा करने के प्राकृतिक संसाधनों के युक्तिपूर्वक उपयोग पर विशेष बल दिया जाता है ।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# हृदय रोग : निदान एव उपचार

*डा० नन्द किशोर दाधीच, एम.डी. (आयु.)

आज के समय में हृदय रोग सम्पूर्ण विश्व में महामारी का रूप धारण करता जा रहा है। ऐसा नहीं है कि हृदय रोग से केवल धनी व्यक्ति ही ग्रसित होते हैं बल्कि हर वर्ग के लोग इस रोग से ग्रसित हो रहे हैं।

पूर्व काल में व्यक्ति आयुर्वेदोक्त दिनचर्या-रात्रिचर्या का पालन करता था जिसके कारण व्यक्ति को रोग नहीं होते थे और रोग हो भी जाते थे तो वे अल्प बलवान होते थे जो अल्प चिकित्सा से ही नष्ट हो जाते थे। परन्तु इस समय व्यक्ति अपने आप में इतना व्यस्त है कि उसके पास अपने लिए समय नहीं है तथा अपनी दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या का पूर्ण रूप से पालन नहीं कर पा रहा है। विभिन्न प्रकार के वसा युक्त भोजन करता है और परिश्रम न होने के कारण शरीर में उसका पाचन नहीं हो पाता है इसके कारण वह रोग तेजी से फैल रहा है।

हृदय हमारे शरीर का महत्वपूर्ण अंग है। यह प्राण का आयतन तथा सद्यःप्राण हर मर्म है। हमारे शरीर में विभिन्न प्रकार की चयापचय क्रिया होती रहती है जिनका सम्पादन करने के लिए रक्त की आवश्यकता होती है। कहा गया है कि "रक्त जीव इति स्थिति" अर्थात् रक्त के द्वारा ही व्यक्ति जीवित रहता है। हृदय हमारे शरीर की अन्तिम कोशिका तक प्राणवायु को पहुँचने का कार्य करता है। यदि हृदय की गति अवरूद्ध हो जाये तो प्राण वायु (ऑक्सीजन) की कमी के कारण सम्पूर्ण शरीर निश्चेष्ट हो जाता है। इसलिए हृदय को प्रधान कहा गया है।

हृदय के कार्य बन्द हो जाने पर इस शरीर का भी अन्त हो जाता है इसलिए इसे सद्यःप्राण हर मर्म कहा गया है।

**हृदय रोग के निदान**

**व्यायामतीक्ष्णातिविरेकवस्ति चिन्ताभयत्रासगदातिचाराः**
**उर्ध्वामसंधारण कर्शनानि हृदरोगकर्तृणि तथाऽभिघातः**

(च.चि. 26/77)

1. अत्यधिक व्यायाम करना।
2. तीक्ष्ण आहार का अधिक सेवन करना।
3. अत्यधिक मात्रा में विरेचन और वस्ति का प्रयोग।
4. हमेशा चिन्तित रहना।
5. हमेशा भयभीत रहना।
6. रोग की समुचित चिकित्सा न होना।
7. अधिक वमन का होना।
8. आमदोष का शरीर में होना।
9. अधारणीय वेगों को धारण करना।
10. शरीर को कृश करने वाले आहार-विहार का सेवन करना।
11. हृदय या शरीर पर चोट लगना।

ये हृदय रोग के कारण होते हैं।

**हृदय रोग के लक्षण :-**

**वैवर्ण्यमूर्च्छाज्वरकास हिक्काश्वासास्यवैरस्य तृषा प्रमोहाः**
**छर्दिः कफोत्क्लेशरूजोऽरूचिश्चहृदरोगजाः स्युर्विविधास्तथाऽन्ये**

(च०चि० 26/78)

1. शरीर में प्राकृत वर्ण के अतिरिक्त अन्य वर्ण का होना।
2. रोगी को मूर्च्छा का आना।
3. शरीर के तापमान में वृद्धि होना अर्थात् ज्वर रहना।
4. कास (खाँसी) का होना।
5. हिक्का (हिचकी) रोग का होना।
6. श्वास रोग का होना।
7. मुख का स्वाद बिगड़ा हुआ रहना।
8. प्यास का अधिक लगना।
9. मोह का होना।
10. वमन (उल्टी) होना।
11. कफ का उत्क्लेश होना।
12. शरीर या हृदय में वेदना होना।
13. भोजन में अरुचि होना।
14. अन्य लक्षण जो वातिकादि दोष भेद से होते हैं उनका होना।

1. **वातत हृदय रोग लक्षण :-**

**हृच्छून्यभावद्रवशोषभेदस्तम्भाः समोहाः पवनाद्विशेष**

(च.चि. 26/79)

अर्थात् वातिक हृदय रोग में प्रमुखतया हृदय में शून्यता द्रवता शुष्कता का अनुभव होता है तथा भेदनवत

* लेक्चरर, एम.एल.आर. आयुर्वेद कॉलेज, चरखी दादरी (हरियाणा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(चीरने के समान) पीड़ा स्तम्भ (जडता) तथा मोह का अनुभव होता है ।

**2. पित्तज हृदय रोग :-**

**पित्तात्तमोदूयन दाहमोहाः संत्रासतापज्वरपीतभावाः ।**

(च०चि० 26/79)

अर्थात् पित्तज हृदय रोग में आँख के आगे अंधकार का प्रतीत होना, शरीर में दाह विशेषकर हृदय प्रदेश में और मोह, त्रास (भय), ताप की वृद्धि, ज्वर और शरीर पीले वर्ण का हो जाता है ।

**3. कफज हृदय रोग :-**

**स्तब्ध गुरू स्यात् स्तिमितं च मर्म कफात्**
**प्रसेकज्वरकासतन्द्राः ।**

(च०चि० 26/80)

अर्थात् कफ से उत्पन्न हृदय रोग में हृदय जकड़ा हुआ, भारी और स्तिमित प्रतीत होता है तथा मुख से कफ का प्रसेक, ज्वर, कास और तन्द्रा होती है ।

**4. त्रिदोषज हृदय रोग :-**

**"विद्याद् त्रिदोषं त्वापि सर्वलिंङ्गम्**

(च०चि० 26/80)

त्रिदोषज हृदय रोग में तीनों दोषों के बताये गये सम्पूर्ण लक्षण मिलते हैं ।

**5. कृमिज हृदय रोग :-**

**तीव्रार्तितोदं कृमिजं सकण्डूम्**

(च.चि. 26/80)

कृमिज हृदय रोग में हृदय प्रदेश में कण्डू (खुजली) और अत्यधिक तीव्र वेदना होती है ।

**बचाव के उपाय :-**

आयुर्वेदीय साहित्य में रोग शारीरिक और मानसिक भेद से दो प्रकार के बताये गये हैं । शारीरिक रोग होने पर मन और मानसिक रोग होने पर शरीर भी प्रभावित होता है अर्थात् ये एक दूसरे के पूरक हैं । अतः हृदय रोग से बचाव के लिये हमें ऐसे आहार-विहार का सेवन करना चाहिए जो मन को प्रसन्न रखने वाला, शीघ्र पचने वाला अर्थात् शरीर में आम दोष उत्पन्न करने वाला न हो । शरीर में हार्दिक रक्त परिसंचरण के अतिरिक्त वृक्कीय रक्त परिसंचरण भी होता है । वृक्क् के द्वारा शरीर में स्थित विभिन्न प्रका विष का निर्गम होता है, यदि इनका उचित रूप में न हो तो सीधा प्रभाव हृदय पर पड़ता है ।

**1. मन से सम्बन्धित :-**

क. चिन्ता, ईर्ष्या, हर्ष, मोह से रोगी को चाहिये ।

ख. काम, क्रोध, भय से बचना चाहिए ।

यदि इनका व्यक्ति सेवन करता है तो आहार पर पूरी तरह से पाचन नहीं हो पाता है तथा नींद उसको उचित रूप से नहीं आती है और उनका प्रभाव हृ पर भी पड़ता है । अतः रोगी को सर्वप्रथम मन पर नि करना चाहिये ।

मन को नियंत्रित करने के लिये व्यक्ति को वि विज्ञान, धैर्य, स्मृति, यम, नियम, प्राणायाम का पालन क चाहिये । इनके प्रयोग करने से व्यक्ति को सात्विक गुण प्राप्ति होती है । व्यक्ति को सभी प्रकार के राग द्वे मुक्ति मिल जाती है । चरक ने सत्वावजय को चिकि में रोग निवृत्ति के लिये श्रेष्ठतम बताया है ।

**2. आहार :-**

हृदय रोगी के लिये आहार लघु एवं सुपाच्य हो चाहिये । अजीर्ण, अधिक भोजन, गुरू, स्निग्ध भो तीक्ष्ण मिर्च मसाले का सेवन नहीं करना चाहिये । घ का प्रयोग कम या नहीं करना चाहिये ।

आधुनिक समय में घी के लिये हृदयरोगों में नि किया हुआ है और इसे हृद रोगों का कारण माना ग लेकिन चरक संहिताकार ने ताजा निकले मक्खन (नवनी को हृद्य (हृदय के लिये हितकर) माना है । परन्तु ध रहे की आहार आदि का उतना सेवन किया जा आसानी से पच जाय ।

हृदय रोगी के लिये जौ, बाजरा, मूँग, अं परवल, मेथी, चौलाई, मुन्नका, अंगूर, आम, मौसम्बी प्रयोग लाभप्रद है ।

**चिकित्सा :-**

हृदय रोगी का पेट साफ रहना चाहिये, उ लिये रोगी को मृदु विरेचन का सेवन करते रहना चा


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


इसके लिये हरड़ चूर्ण 2 ग्राम रात को गर्म पानी से लेना चाहिये। योग्य चिकित्सक की देखरेख में निम्न औषध योग सेवन योग्य है -

| | प्रात: | सायम् |
|---|---|---|
| 1. | हृदयेश्वर रस | - 125 मि.ग्रा. |
| | प्रवाल पिष्टी | - 250 मि.ग्रा. |
| | 1 X 2 द्राक्षावलेह | - 25 ग्राम |
| 2. | भोजन के बाद | |
| | आरोग्यवर्धनी | - 2 गोली |
| | अर्जुनारिष्ट | - 20 मि.लि. बराबर पानी मिलाकर |
| 3. | रात को | |
| | अमर सुन्दरी बटी | - 2 गोली दूध के साथ |

**अथवा**

| | प्रात: | सायम् |
|---|---|---|
| 1. | हृदयार्णव रस | - 250 मि.ग्रा. |
| | कामदुधा | - 250 मि.ग्रा. |
| | ब्राह्मरसायन | - 25 ग्रा. |
| | | 1 X 2 दूध के स |
| 2. | भोजन के पूर्व | |
| | अविपत्तिकर चूर्ण 3 ग्राम | |
| | | 1 X 2 पानी के स |
| 3. | भोजनोत्तर | |
| | अश्वगंधारिष्ट | 20 मि.ली. बराबर पानी |
| 4. | रात को | |
| | द्राक्षादि वटी | 2 गोली दूध के साथ |

बैद्यनाथ

# प्राणदा

Central Library
Gurukul Kangri University
Hardwar-249404 (U.A.)

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं। इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है। हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है। इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं। मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है। बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

# आयुर्वेद का एक महत्वपूर्ण अंग – वाजीकरण

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* डा० अश्विन बी. बागडे
** प्रो. ओ०पी० उपाध्याय

काम एक प्रबल सम्मोहन शक्ति है और वाजीकरण ठ साधन है । वाजीकरण कामशास्त्र का एक पूरक तंत्र जो जीवन की मूलतम प्रवृत्ति 'काम' का नियमन करती ।

वाजीकरण और कामशास्त्र ये दोनों एक ही क्के के दो पहलू हैं ।

**म का अर्थ है** - 'इच्छा' या 'वासना'

भौतिक दृष्टि से यौन सम्बन्ध स्थापित करना म' का एक प्रतीक है । इसी कारण स्त्री पुरुष के भाविक प्रेमबन्धन को 'काम' की संज्ञा दी गयी है ।

स्त्री की काम शान्ति और पुरुष को कामसुख की प्ति वाजीकरण से होती है ।

'काम' एक कला है । 'काम' आनन्द और दर्य का मिलन-बिन्दु है । पशुवृत्तिमूलक कामवासना पर जय पाकर व्यक्ति को सद्गृहस्थ बनाना और उसके त्र को उद्दात बनाने का कार्य वाजीकरण करता है ।

मूलत: शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से पूर्ण स्थ ओर संस्कारवान पुत्र की प्राप्ति ही वाजीकरण का य है ।

इसी कारण वाजीकरण तंत्र को स्वतंत्र आयुर्वेदांग ना धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक श्यकता है ।

**है वाजीकरण ?**

**येन नारीषु सामर्थ्यं वाजिवल्लभते नर: ।**
**व्रजेच्चाभ्याधिकं येन वाजीकरणमेव तत् ।।**

च०चि० 2/4/51

जिस आहार-विहार, औषधि का विधिपूर्वक सेवन ने पर अश्व समान मैथुन सामर्थ्य और अधिक बार मैथुन ने की शक्ति प्राप्त होती हो और अल्पवीर्य पुरुष को वान बनाता हो उस औषध, विहार, आहार को वाजीकरण ते हैं ।

जिस आहार-विहार, औषधि का विधिपूर्वक सेवन करने पर अश्व समान मैथुन सामर्थ्य और अधिक बार मैथुन करने की शक्ति प्राप्त होती हो और अल्पवीर्य पुरुष को वीर्यवान बनाता हो उस औषध, विहार, आहार को वाजीकरण कहते हैं ।

**वाजीकरण सेवन का उद्देश्य**

धर्म, अर्थ, प्रीति, यश ये प्रयोजन पुत्र के अधीन होते हैं । पुत्रोत्पत्ति नहीं हुई तो उसका नाम तथा यश समाप्त हो जाता है ।

संतति न होने के कारण उसको प्रतिष्ठा नहीं मिलती है और न ही उसका जय जयकार होता है, उसका जीवन मंगलमय नहीं होता ।

वह व्यक्ति शून्य-सा प्रतीत होता है, धर्म, अर्थ, काम आदि क्रिया से भी शून्य होता है, इसी कारण उसका जीवन व्यर्थ है ।

वह व्यक्ति संसार में अकेला रहता है, उसका किसी को भी लाभ नहीं होता इसी कारण

**कामात् सुखं प्रजोत्पत्तिश्च** - कामसूत्र 1/2/1

चरक और वात्स्यायन तंत्र में स्पष्ट वर्णन है कि गुणवान संतान और कामसुख के लिए वाजीकरण औषधियों का नित्य और निर्देशानुसार सेवन करें ।

**वाजीकरण का फल -**

**अपत्यसन्तानकरं यत् सद्य: सम्प्रहर्षणम् ।**
**वाजीवातिबलो येन यात्यप्रतिहतोऽगंना ।।**
**भवत्यातिप्रिय: स्त्रीणां येन येनोऽपचीयते ।**
**तद् वाजीकरणं विद्धि देहस्योर्जस्करं परम् ।।**

अ.हृ.उ. 40/2-3

वाजीकरण औषधियों का सेवन करने के उपरान्त मनुष्य अश्व के समान सामर्थ्यवान होकर अश्व के समान संभोग कर, उसे संतुष्ट करता है इसी कारण वह पुरुष स्त्रियों में अधिक प्रिय होता है ।

**वाजीकरण औषध सेवन से -**

1. पुरुष का शुक्रमात्रा तथा शुक्रशक्ति प्रबल हो जाती है ।

* एम.डी. (स्कालर) **विभागाध्यक्ष
मौलिक सिद्धान्त विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2. क्षीण, अल्पबल, अल्पवीर्य, पुरुष को वीर्य सम्पन्न बनाकर उसे संभोग क्रिया के योग्य बनाता है ।
3. वाजीकरण नंपुसकता और मानसिक क्लैब्य आदि विकारों को दूर कर मैथुन के समय शिश्नोत्तेजना एवं शिश्नकाठिन्य उत्पन्न कर प्रेमपूर्वक आनन्दसुखी जीवन का निर्माण करता है ।
4. वाजीकरण द्रव्य गर्भधारण के साथ-साथ गर्भ का पोषण भी करता है ।

मनुष्य की इच्छाओं में प्रबलतम इच्छा सन्तानोत्पादन है । संतान गृहस्थाश्रम को जोड़ने की जंजीर है ।

पुत्र प्राप्ति के लिए स्त्री संसर्ग और स्त्री संसर्ग के लिए शरीर में बल होना अत्यावश्यक है ।

इसी कारण बल, वीर्य, पौरुष, तेज, पराक्रम स्वर वाजीकरण का सेवन यौवनकाल में करना जरूरी है ।

**वाजीकरण अयोग्य –**

1. 17 वर्ष से कम एवं 80 वर्ष से ज्यादा आयुवाले ।
2. स्त्रीजाति को ।
3. अजितेन्द्रिय/चंचल ।
4. जननेन्द्रिय रोगों से पीड़ित, मानसिक रोगों से ग्रस्त ।
5. विधुर, अविवाहित ।
6. ब्रह्मचारी, साधु ।

उपरोक्त लोगों को वाजीकरण देना सर्वथा निषेध है ।

**वाजीकरण किसे दें ?**

1. अपत्य प्राप्ति हेतु ।
2. कामसुख के लिए ।
3. अल्पवीर्य वाले पुरुष को वीर्यवान करने हेतु ।
4. नपुंसक में मैथुन शक्ति उत्पन्न करने हेतु ।
5. यौवनावस्था ।

जिसे अनेक पुत्र हो उसकी प्रशंसा की जाती है, उसे धन, यश, कीर्ति, की प्राप्ति होती है । वह भविष्य में सुखी संतुष्ट और पूजनीय रहता है ।

ऐसा भी देखा जाता है कि बलवान व्यक्ति जो मैथुनादि क्रिया में पूर्ण समर्थ होने पर भी संतानहीन हो और दूसरी तरफ दुर्बल पुरुष मैथुन कम करता है पर वह अधिक संतान युक्त है ।

**वाजीकरण में स्त्री का महत्व –**

वाजीकरण के क्षेत्र में हर्ष या कामवासना उत्पन्न करने में स्त्री ही श्रेष्ठ साधन है । इस दुःखी संसार में मृगनयनी सुन्दरियों के साथ सम्भोग करने का सुख ही एकमात्र सार है, और स्त्री शरीर वृषत्व का उद्दीपक है ।

स्त्री शरीर में रूप, रस, गन्ध, स्पर्श सभी इन्द्रियों के मनोनुकूल भाव रहते हैं इसी कारण स्त्री ही प्रीति उत्पन्न करने में निश्चित ही श्रेष्ठ है ।

**नित्यं प्रहृष्टया मान्यं नित्यं चामुक्तहस्तया ।**

(चाणक्यनीति)

स्त्री रूपवान, गुणवान, सुन्दर हावभाव, कटाक्ष नयन वाली हो, प्रसन्न वदन गृहकार्य में निपुण एकनिष्ठ युवावस्था और ऋतुकालीन स्नान की हो, तथा कामासक्त और रोगरहित स्त्री उत्कृष्ट और परम वृष्य होती है ।

ऐसी उपरोक्त स्त्री के पास जाकर पुरुष विश्व की शोक चिन्ता और भय को भूल जाता है, जिसे देखकर मन, प्राण प्रसन्न और प्रफुल्लित हो जाते हैं, शरीर का एक-एक रोम रोमांचित हो जाता है ।

मैथुन करते समय पुरुष को ऐसा अनुभव हो कि वह पहली बार उस स्त्री से मैथुन कर रहा हो, और बार-बार सम्भोग करने पर भी उसकी तृप्ति न हो तो वह स्त्री अत्यन्त वृष्य होती है । जिसका नाम हृदय में आनन्द देने वाला, जिसको देखने से भी तृप्ति नहीं होती या जो नित्य नवीन प्रतीत होती हो । लज्जाशील किन्तु एकान्त में प्रगल्भ हो, और वाजीकर अन्तर्गत वर्णित 64 कलाओं से युक्त हो ।

वाजीकरण का सारा रहस्य स्त्री में छिपा है और स्त्री से ही संसार में सुख है ।

**आचार्य वाग्भट्ट ने स्पष्ट उल्लेख किया है कि –**

1. वसन्त और शरदऋतु में-3-3 दिन के अन्तर से काम करें ।
2. वर्षा और ग्रीष्म ऋतु में-15 दिन का अन्तर से काम करें ।
3. हेमन्त और शिशिर ऋतु में – यथेच्छा बलानुसार मैथुन


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करें ।

वाजीकरण द्रव्यों का सेवन करने से मैथुन प्रवृत्ति बढ़ जाती है, और मैथुन द्वारा शुक्र का क्षय होता है, शक्ति शरीर में संचित नहीं रहती । अत: अपनी शक्ति देखकर और धातुपुष्टि होने के बाद संभोग करना चाहिए ।

**कामवर्द्धक आहार -**

वाजीकरण में आहार द्रव्यों को 3 श्रेणी में रखा गया है ।

शुक्रजनक - जो औषधियाँ वीर्य की वृद्धि करती हैं ।
जैसे :- दुग्ध, घी, विदारी, बला, शतावरी, मूसली, बादाम ।

शुक्रप्रवर्तक - जो औषधियाँ केवल शुक्र का प्रवर्तन करती हैं ।
जैसे :-माष, अकरकरा, कौंच, मदिरा, धतूरा, स्त्री-स्पर्श, मानस संकल्प ।

जनक प्रवर्तक - शुक्र का उत्पादन और प्रवर्तन जो करती है ।
जैसे :-भांग, कुचला, गांजा, कस्तूरी, साल मिश्री ।

मांसवर्ग में - मुर्गा, शूकर, तित्तिर, बकरे का अण्डकोष आदि ।

फलवर्ग में :-बादाम, काजू, पिस्ता, अंजीर, अंगूर, सिंघाड़ा, गाजर आदि ।

गन्ध द्रव्य में:-केशर, कस्तूरी, जायफल, कपूर, लौंग, दालचीनी आदि ।

रस भस्म में - वंग, लौह, स्वर्ण, पारद, अकीक आदि ।

औषधद्रव्य :-

शिलाजीत, धतूरे और केवाँच के बीज, वाराहीकन्द, विदारीकन्द, सफेद मूसली, तालमखाना बीज, अकरकरा आदि ।

मांस, मद्य और उड़द, लहसुन, प्याज ये भी वासना बढ़ाते हैं ।

**विहार :-**

कस्तूरी, केशर, चंदन, अगर आदि सुगन्ध द्रव्यों से उबटन और सुन्दर स्त्रियों द्वारा सवाहन के बाद ऋतु अनुसार स्नान करना ।

जूही, चमेली, मौलश्री आदि फूलों से सुसज्जित उत्तम शय्या पर बैठकर संगीत की स्वर लहरियों या प्रिय स्त्रियों के आभूषण का शब्द सुनना कामेच्छा बढ़ाता है ।

मधुर और सुगन्धित फूलों की माला धारण करना सुगन्ध वाजीकरण का रामबाण है ।

इसी कारण वाजीकरणा योगों में ज्यादातर सुगन्धित द्रव्यों का विशेषतया प्रयोग होता है ।

**वाजीकरण में अपथ्य**

1. अत्यन्त उपवास, अति स्त्रीप्रसंग
2. वृद्धा के साथ सम्भोग ।
3. अत्यधिक कषायतिक्त रसों का सेवन ।
4. स्त्रीप्रसंग के बाद शीतल जल पीना ।
5. अप्राकृतिक मैथुन (गुद मैथुन, पशुमैथुन, समलिंगी)

अत्यधिक मैथुन से भ्रम, मानसिक, ग्लानि, [illegible] में दुर्बलता, रसादि धातुओं का क्षय और अंत में अकाल मृत्यु होती है । इसी कारण पुरुष को मैथुन कर्म के परिसमाप्ति के बाद कुछ नियमों का पालन अवश्य करना चाहिए, जिससे वीर्य और बल की क्षतिपूर्ति हो सके ।

**सम्भोग के बाद क्या करें**

- ऋतु विपरीत स्नान करके बादाम केशर मिश्री को गोदुग्ध के साथ सेवन करें ।
- शरीर पर चन्दनादि तैल की मालिश करें ।
- मांस अथवा मांसरस का सेवन करें ।
- पौष्टिक और रुचिकर पदार्थों का सेवन करें ।
- सुखकर शय्या पर नींद लें ।

**कुछ प्रसिद्ध योग :-**

- कामदेव चूर्ण - 4 ग्राम प्रात: व सायं दुग्ध में ले
- अश्वगन्धा चूर्ण + शतावरी चूर्ण - 4 ग्राम दूध के सा प्रात: व सायं
- मकरध्वजवटी - 1 गोली 2 बार दुग्ध में ।
- श्रीगोपाल तैल - जननेन्द्रिय पर मालिशार्थ ।
- वानरी गुटिका - 5-10 ग्राम 2 बार दुग्ध में ।

बानरी गुटिका - शीघ्रपतन, ध्वजभंग में उपयोगी

मूसली चूर्ण - कामवासना बढ़ाता है ।

इस प्रकार विविध कामवर्धक कलाओं का उपयोग कर जीवन में भरपूर आनन्द ले सकते हैं ।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# कुष्ठ रोग [LEPROSY] : व्यापक विचार और उपचार

वैद्य चन्द्रदेव मंडल

कुष्ठ जीर्ण, संक्रामक, अल्प प्रसारी, पर दीर्घकालीन रोग है, जिसके प्रति लोगों के मन में घृणा ही घृणा है। शोध से सिद्ध हुआ है कि यह रोग वैक्ट्रिया (जीवाणु) जनित है। इस रोग को चिकित्सीय भाषा में माइको बैक्टीरियम लेप्रोसी कहा जाता है। इस रोग का जीवाणु मुख्यत: त्वचा और स्नायुतंत्रिका को अपना ग्रास बनाता है। कुष्ठ के जीवाणु लेप्रोबेसिलस का प्रभाव गहरा होता है, मगर धीरे-धीरे।

दुनिया में कुष्ठ रोगियों की जितनी संख्या है, उसकी एक तिहाई संख्या भारत में है। लगभग चालीस लाख से ऊपर की संख्या में इसके रोगी भारत में हैं। यह भी पता चला है कि प्रतिवर्ष सात लाख रोगी बढ़ रहे हैं। माना जाता है कि इसके जीवाणु ज्यादातर गंदगी में पनपते हैं और वहीं से लोगों में प्रसार पाते हैं।

रोग-निवृत्ति के प्रयास में लापरवाही बरती जाती है, इलाज अधूरा छोड़ दिया जाता है तो रोग का नाश नहीं होता। शरीर में विकृतियां आ जाती हैं और कुरूपता पैदा होती है।

**कुष्ठ के भेद और अन्तर**

- आधुनिक विचार से कुष्ठ के तीन भेद माने गए हैं - (1) ट्यूबर कुलाइड कुष्ठ (2) लेप्रोमेट्स कुष्ठ और (3) बोर्डर लाइम कुष्ठ।
- कुछ कुष्ठ रोगी ऐसे होते हैं, जिनमें रोग से लड़ने की क्षमता खूब होती है। इन्हें कुष्ठ अपने प्रभाव में ले भी आता है तो ज्यादा कुछ बिगाड़ नहीं पाता है। इनमें कुष्ठ सीमित दायरे में रहता है। इस तरह का कुष्ठ ट्यूबर कुलाइड कुष्ठ (Tuber Culoid Leprosy) के नाम से जाना जाता है।
- ऐसे रोगी, जिनमें रोग से लड़ने की क्षमता न के बराबर होती है. लेप्रोमेटस कुष्ठ रोगी की श्रेणी में आते हैं। ऐसे रोगी के पूरे शरीर में कुष्ठ का प्रकोप दिखलाई पड़ता है। उपचार में लापरवाही या देर करने से शरीरस्थ हड्डियाँ विकृत हो जाती हैं, अंगुलियाँ टेढ़ी पड़ जाती हैं।
- कुष्ठ का एक दूसरा भेद बोर्डर लाइम कुष्ठ माना जाता है। इसमें रोगी की स्थिति ऊपर अंकित एक और दो के बीच-बीच की होती है।
- कुष्ठ का सर्वाधिक प्रकुपित एवं 'लेप्रोमेटस लेप्रोसी' होता है, जिसमें चेहरे की चमड़ी गिल्टी युक्त मोटी हो जाती है। कान की लहरी मोटी और भौंहें नदारद हो जाती हैं। नाक चपटी, छोटी व सपाट हो जाती हैं।
- एक कुष्ठ वह होता है, जिसमें संक्रमण नहीं फैलता है। इसके रोगी के शरीर में हल्के रंग के धब्बे-चकत्ते उभरते हैं। ये धब्बे-चकत्ते संवेदन शून्य होते है इसमें तंत्रिकाओं में सूजन आ जाती है। शरीर में छाले पड़ जाता है, घाव भी हो जाते हैं। यही नहीं बल्कि हाथ-पैर, चेहरा सब संवेदन हीन होकर घाव ग्रस्त हो जाते हैं। आँखें नष्ट होने लगती हैं। अंड ग्रंथि खत्म हो जाती है। इसे अकुंठिता कुष्ठ कहते हैं।
- एक दूसरा कुष्ठ वह भी होता है, जिसमें रोग ग्रसित आदमी की चमड़ी सूज जाती है। उस पर चकते भी उभरते हैं, ये संवेदन शून्य भी होते हैं। पर यह कुष्ठ संक्रामक नहीं होता जैसी बात इसमें नहीं होती। इसमें संक्रमण फैलने का डर ज्यादा होता है। इसे कुष्ठिक कुष्ठ कहा जाता है।
- यों आयुर्वेद में कुष्ठ के अनेक प्रकार हैं जिनमें सामान्य और प्रमुख मिलाकर अठारह की संख्या है। अठारह में सात महाकुष्ठ और ग्यारह क्षुद्र कुष्ठ कहे गए हैं।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन ने उपचार की सुविधा के लिए कुष्ठ को दो वर्गों में बांटा है - एक है पासी बेंसीलरी, जिसे संक्षेप में (P.B.) पी.बी. कहते हैं इसके अन्तर्गत कम बैक्ट्रिया वाले कुष्ठ रोगी आते हैं। दूसरा वर्ग मल्टी बेसीलरी कहा जाता है। इसमें बैक्ट्रिया ज्यादा पाया जाता है। इसका संक्षिप्त नाम एम.बी. (M.B.) है।
- चिकित्सा क्षेत्र में दो तरह के कुष्ठ अपने नाम से जाने जाते हैं। एक है इनडिटरमिनेट टाइप ऑफ लेप्रोसी।

ग्राम - हरिचक, पो० - काशड़ी, जिला - भागलपुर - 813203

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जिसे अनिर्धारित कुष्ठ की संज्ञा दी गई है । यह कुष्ठ रोग की प्रारंभिक अवस्था होती है । इस अवस्था में रोगाक्रान्त व्यक्ति में रोग प्रतिरोधक क्षमता अच्छी रहती है । रोग हल्के उपचार से अच्छा हो जाता है ।

- दूसरे को प्योर न्युरिटिक लेप्रोसी कहते हैं । यह रोग की जटिल अवस्था होती है । रोग का असर स्नायुतंत्रिका पर हो चुका होता है । यह नियमित लम्बे इलाज की अपेक्षा करता है ।

कुष्ठ रोग से जुड़े अंधविश्वास

- अनेक लोग इस रोग को रोगी के पूर्व जन्म के पापों के फल के रूप में मानते हैं । सामाजिक अज्ञानता के चलते लोगों में यह धारणा बनी है, जो गलत है ।
- जरूरी नहीं कि कुष्ठ रोगी पुराना पापी ही हो और फिर पूर्व जन्म को किसने देखा है । यह एक ऐसा रोग है, जिसने पूजा-पाठी, धर्मात्मा-अधर्मा किसी को नहीं छोड़ा । गरीब-अमीर, बालक-बूढ़ा, यह किसी को नहीं बख्शता । यहाँ तक कि अबोध बच्चे-बच्चियाँ भी इसकी चपेट में आते देखे जाते हैं ।
- इसे छूत का बड़ा रोग भी कहा जाता है । पर यह कहना भी गलत है, क्योंकि यह टी.बी. और खसरा जैसे रोग से भी कम छुतहा है । कुष्ठ के अनेक प्रकारों में से केवल दो को ही छुतहा माना गया है । पर ये भी इलाज से ठीक हो जाने वाले होते हैं ।
- जन-धारणा है कि कुष्ठ का रोग तीव्र संक्रामक होता है । इसलिए कोई आदमी उसके रोगी के पास फटकने से भी डरता है । उसे भय होता है कि कहीं उसको भी यह रोग न लग जाया पर धारणा सही नहीं है, क्योंकि यह उतना तीव्र रोग नहीं है । जन-जागरुकता के अभाव में अशिक्षा के चलते यह धारण बनी है ।
- इस रोग को वंशानुगत भी माना जाता है । मतलब यह कि बाप को कुष्ठ रोग है, तो बेटे को भी होगा । फिर उसके बेटे को और इसी तरह । पर यह भी सच नहीं है । कुष्ठ रोगियों के बच्चे सामान्य, स्वस्थ जीवन बिताते देखे जा रहे हैं ।
- इस रोग को पहले से ही ला-इलाज माना जा रहा है । मानते हैं कि इसमें इलाज से कोई लाभ नहीं होता है । यह पाप का फल है, जिसे भोगना ही होगा । पर चिकित्सा विज्ञान ने इस सोच को भी गलत साबित कर दिया है । अब सफल इलाज उपलब्ध है ।

**सच्चाई पर प्रकाश**

- कुष्ठ एक सामान्य रोग की तरह का रोग है, जो रोगाणुओं से संक्रमित होने से होता है । यह मुख्य लेप्रोंबेसिलस नामक रोगाणु के प्रकोप से होता है ।
- लेप्रोबेसिलस रोगाणु टी०बी० की जाति का होता है । इसकी खोज डा० राबर्ट अरमन हेनसन ने आज से लगभग सौ-डेढ़ सौ साल पहले कर ली थी । यह विद्वान आदमी नार्वे का रहने वाला था ।
- लेप्रोबेसिलस रोगाणु का आक्रमण जब किसी व्यक्ति पर होता है, तो उसमें रोग के लक्षण तुरंत नहीं उभरते । कुष्ठ के लक्षण उभरने में वर्षों लगते हैं, लगभग दो साल, कभी पाँच-पाँच साल ।

**कुष्ठ रोग के संक्रमण की सहयोगी परिस्थितियाँ**

- कुष्ठ के रोगाणु त्वचा और स्नायुतंत्रिका पर ज्यादा प्रभावकारी होते हैं । इसलिए जहाँ चमड़ा छिलता है वहाँ यह संक्रमण हो सकता है ।
- नासिका की दीवारों पर यदि नासूर होता है, तो वहाँ इसका प्रभाव दिखता है । नाक बन्द हो जाती है, नाक से खून गिरता है । अंततः नाक धँस जाती है ।
- संक्रामक कुष्ठ के रोगी के निकट संपर्क में जो व्यक्ति नियमित रहता है, उसके थूक-खखार, बलगम, छींक के प्रभाव से परहेज नहीं करता है, तो रोगाक्रान्त होने की संभावना रहती है ।
- वंशानुगत प्रभाव बाल-बच्चों पर पड़ता है, इससे पूरी तरह इनकार नहीं किया जा सकता है । पर यह प्रभाव कभी कम पड़ता है, कभी अधिक । कभी-कभी प्रभाव न के बराबर भी देखा जाता है ।
- कुष्ठ के जीवाणु कटी-फटी त्वचा के अन्दर जाकर घर कर लेते हैं । श्वास के संबंध में भी यह सच है । ये जीवाणु श्वास के जरिए अन्दर-बाहर होते हैं, इस से संक्रमण फैलता है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



- छुआ-छूत से, स्पर्श से इस रोग का प्रसार हो सकता है, मगर धीमा-धीमा । किन्तु गंदगी में इसका प्रसार तेजी से होता है ।

**कुष्ठ रोग होने के कारण**

- आधुनिक चिकित्सा विज्ञान अर्थात् एलोपैथी कुष्ठ के होने का कारण शरीर में लेप्रोबेसिलस जीवाणु का उत्पन्न होना मानता है ।
- होमियोपैथिक चिकित्सा पद्धति हर रोग के पीछे छिपे कारणों में सोरा, साइकोसिस और सिफिलिस को अहम् मानता है ।
- आयुर्वेद की दृष्टि में कुष्ठ रोग वात, कफ और पित्त तीनों दोष के कुपित होने से होता है क्योंकि इन तीनों के प्रकुपित होने से शरीरस्थ रक्त, रस, मांस और जल सभी दूषित हो जाते हैं । फलतः यह रोग हो जाता है ।
- कुष्ठ ग्रस्त व्यक्ति चाहे स्त्री हो या पुरुष, उसके साथ 'सेक्स' संबंध बनाने का फल कुष्ठ ग्रस्त होना होता है ।

**कुष्ठ के लक्षण**

- कुष्ठ का प्रारंभिक लक्षण चमड़ी पर लाल चमकीला धब्बा उभरना होता है । धब्बा छूने से वहाँ स्पर्श अनुभूति का अभाव महसूस होता है ।
- आगे चलकर धब्बे गांठ का रूप धारण कर लेते हैं और बढ़ते हैं या वहाँ की स्नायु संवेदन शून्य हो जाती है । अंगुलियाँ सिकुड़ने लगती हैं ।
- चमड़ी मोटी पड़ने लगती है, घाव होने लगते हैं । कलाई, केहुनी, घुटने दर्द युक्त हो जाते हैं । हाथ-पैर भी अशक्त होने लगते हैं, ठीक से काम नहीं करने लगते हैं ।
- रोगाक्रान्त आदमी की आँखें ठीक से बन्द नहीं होतीं । नाक विकृत हो जाती है । त्वचा पर असर हुए बिना भी आँखें आक्रान्त हो जाती हैं ।
- आँखें लाल दिखती हैं, उनको रोशनी बर्दाश्त नहीं होती । कम दिखलाई देने लगता है । आँखों में मोतियाबिन्द का असर होता है ।
- हाथ पैर की अंगुलियाँ ठूंठ होने लगती हैं । इसी से इसकी गलित कुष्ठ भी कहा जाता है । तालु में व हो जाता है ।

**रोग-विकार और विकलांगता**

- जब कोई इस घातक रोग के चंगुल में फंसता है, उसके हाथ-पैरों में, खास कर अंग के अगले हिस में शून्यता आने लगती है । वहाँ उसे किसी तरह संवेदना महसूस नहीं होती । चोट-चपेट का वहाँ कोई अनुभव नहीं होता । बस, यही अहसास न हो उसके लिए आफत हो जाती है । वहाँ घाव बन ज हैं ।
- संवेदन शून्यता के चलते चोट-चपेट, छिल जा जख्म बन जाने की उसे परवाह नहीं होती । त हाथ-पाँव की अंगुलियाँ गल जाने से, ठूँठ होने लग हैं ।
- अंगों के गलने व ठूंठ होने के मध्य सीधा संबंध न होता । यह सिद्ध हो चुका है कि कुष्ठ के रोगा अंग-गलन में सहायक नहीं होते, वे सिर्फ संवे तंत्रिकाओं को विनष्ट कर देते हैं । फलतः हाथ-पै के किनारों की संवेदना नष्ट हो जाती है । ज जाने-अनजाने असंवेदनशील अंग में चोट-चपेट लग है, दबाव-घर्षण पड़ती है, तो वहाँ जख्म बन जाता और बढ़कर वहाँ विकलांगता पैदा हो जाती है ।

**कुष्ठ जनित विकृतियों से बचने के उपाय**

- इस रोग से ग्रसित आदमी यदि सावधानी बरतें तो केवल विकृतियों से बच सकता है, बल्कि विकृ पैदा हो भी जाए तो उसे कम कर सकता है ।
- इसके लिए जरूरत पड़ती है त्वचा को मुलायम-न रखने की, जिसके लिए ज्यादा कुछ नहीं, तेल अ पानी पर्याप्त होता है ।
- प्रायः बीस-पचीस मिनट तक हाथ-पैर को ठंढे पा में रखने से और बाद में हल्की खुरदरी चीज से हल हाथ उस त्वचा को रगड़ने से मोटी हो रही त्व सामान्य होने लगती है । फिर उस पर तेल मल दे हैं ।
- यह एक सामान्य बात है कि धीरे-धीरे कुष्ठ-प्रभावि



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


रोगी स्पर्शकातरता खो देता है । वह दर्द भी भूल जाता है । यहाँ तक कि उसे सर्दी-गर्मी का अहसास भी नहीं होता है । ऐसे में उसके लिए अपनी आँखों और दिमाग को सजग रखकर हाथ-पैरों का इस्तेमाल करना अच्छा होता है कि वे क्षतिग्रस्त न हों ।

कुष्ठ के रोगी को चाहिए कि वह अपने हाथ-पाँव और बदन को आग से बचाकर रखे, उससे नजदीकियाँ न अपनाए, ताकि वे झुलस न जाएं ।

किसी वस्तु को वह ज्यादा दबाव देकर देर तक न पकड़े रहे कि वह छिल जाय । वह काम में आने वाले औजारों को कपड़े लपेट कर पकड़े, जिससे हाथ की अंगुलियाँ क्षतिग्रस्त न हों ।

रोगी ढंडा खाना खाए, सावधानी के ख्याल से यही अच्छा है । वह चले तो छोटे कदम बढ़ाए; अधिक दूर पैदल चलने से परहेज करे ।

कुष्ठ रोगियों के लिए पैदल, खाली पैर चलना घातक है, चोट-चपेट का डर रहता है । यदि बने तो खास तरह की मोटाई वाली चप्पलें पहने, जिस पर भार पड़ने से संवेदनहीन पैरों को नुकसान न हो, ऐसी चप्पलें एम.सी.आर. चप्पलें कहलाती हैं ।

अगर घाव हो जाए हों तो उन्हें हमेशा साफ रखने में ही भलाई है । घाव को हमेशा साफ कपड़े से ढंककर रखना अच्छा है ।

आँखें साफ पानी से धोई जाएँ । सबसे ज्यादा जरूरी है कि इसका रोगी हमेशा दक्ष चिकित्सक की देखभाल में रहें ।

**कुष्ठ के इलाज के संबंध में**

भारत सरकार ने भारतीय कुष्ठ उन्मूलन अभियान चला रखा है, जो प्रभाव में है ।

कुष्ठ नाशक कारगर दवा की भी खोज कर ली गई है । लगभग बीस लाख कुष्ठ रोगियों को इलाज से चंगा किया जा चुका है । अभियान अभी भी जारी है । इधर सरकार ने विज्ञापन देकर कुष्ठ रोग का पता लगाने के लिए मुफ्त जाँच का प्रबन्ध किया है और जाँच के बाद कुष्ठ का निदान होने पर इसके मुफ्त इलाज का भी इन्तजाम किया है, जिससे रोगियों को बड़ी राहत महसूस हुई है ।

- अनुसंधान से कुष्ठ निरोधक टीके की खोज हो गई है जिसके परीक्षण हो रहे हैं । परीक्षण की सफलता के बाद इसके सफल प्रयोग की संभावना है ।
- गिलोय, अडूसा, परवल, कटेरी प्रत्येक पचीस ग्राम लेकर दो लिटर पानी में काढ़ा तैयार करें, आधा लिटर शेष बच जाय तो सुबह-शाम इसके रोगी को सेवन कराएँ, लाभ होगा ।
- आँवला, बहेरा, हरड़, खैरसार बराबर भाग में से दो सौ ग्राम लेकर कूट-पीस पानी में लुगदी बना कड़ाही में पाँच सौ ग्राम गाय का घी डाल इसमें लुगदी पकाएँ । शेष बचे घी का सेवन करें तो कुष्ठ जाय ।
- कुष्ठ में जलन, लाली और चमड़ी, अंगुलियों में फफोले या व्रण हों तो लौह भस्म का सेवन करने से लाभ होता है । यहाँ तक कि घाव का पक जाना, फूटना, दुर्गन्ध युक्त पीव निकलना भी इससे ठीक हो जाता है ।
- अंगुलियों की त्वचा निकल जाना, त्वचा पर व्रण, उस पर फुंसियों व खाज चलती हो, दाह हो, तो लौह भस्म व त्रिफला चूर्ण या आरोग्यवर्द्धिनी वटी लाभ करती है ।
- ताम्र भस्म, अपामार्ग क्षार, सज्जीखार व जवाखार समभाग मिलाकर दो-दो रत्ती शीतल जल से रोज दिन तीन बार देने से खासा लाभ होता है ।
- कुष्ठ में वाकुची बीज, चक्रमर्द बीज और गन्धक का रस सिन्दूर वैद्य की देख-रेख में देने से भी आशातीत फल मिलता है ।
- भिलावा का तेल खाने व लगाने से कुष्ठ में फायदा होता है ।
- मंजिष्ठादि क्वाथ, निम्ब पंचांग चूर्ण व रस माणिक्य का सेवन व मरीच्यादि तेल या सोमराजी तैल की मालिश लाभकारी है । बैद्यनाथ की दवाएँ अनुभूत हैं ।

**इलाज के साथ-साथ खान-पान का भी ध्यान**

- देखा गया है कि कुष्ठ का जो रोगी औषधि के सेवन


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


जमीकन्द भी भोजन में पर्याप्त लेता है, उसकी अवस्था अच्छी रहती है । इसलिए अच्छा है कि जमीकन्द की सब्जी इसका रोगी खाए ।

- आँवला ऐसा फल है, जिसे अमृत कहा गया है । कुष्ठ रोग के नाशक रूप में भी इसका सेवन लाभदायक है, यदि आँवला पीस कर रोज एक चम्मच सुबह-शाम रोगी लेने लगे तो लाभ होगा ।
- अनुभवियों का कहना है कि यदि कुष्ठ रोगी लम्बे समय तक अंकुरित चने का सेवन रोज करे तो खासा लाभ होता है ।
- कुष्ठ रोगी के शरीर में पैदा हुए घाव को भरने के लिए अनार पेड़ के पत्ते पीस कर घाव पर लगाना मुनासिब माना जाता है । इससे घाव जल्द भर जाते हैं।
- बथुआ, जिसे अमीर लोग नाकारा समझते हैं और उसका कोई उपयोग नहीं मानते, वह भी अनमोल औषधि और स्वादिष्ट उत्तम साग है । बथुए को उबाल कर उसका रस पीना कुष्ठ रोगी के लिए उतना ही उपयोगी है, जितना उस रस से आक्रान्त चमड़ी को धोना ।

**कुष्ठ रोगी के प्रति व्यवहार और कानून**

- समाज कुष्ठ रोगी के प्रति घृणा रखता है, उससे सहानुभूति नहीं रखता । फलतः वह अलग-थलग पड़ जाता है, जो कदापि उचित नहीं है ।
- लेकिन कानून उसकी सहायता करता है । पहले सरकारी नौकरी से उसे निकाल दिया जाता था । अब कानूनन उसे नौकरी से निकाला नहीं जा सकता । अगर कोई उसे नौकरी से निकाले तो उसके लिए सजा का प्रावधान है ।
- पहले भारतीय जीवन बीमा निगम कुष्ठ रोगियों का बीमा करता था, तो अतिरिक्त पैसे लेता था । अब ऐसा नहीं किया जा सकता ।
- यह रोग असाध्य नहीं है । असाध्य जैसा तो यह इसलिए बन जाता है कि नियमित रूप से इसका इलाज नहीं कराया जाता । कुछ दिन इलाज कराकर बंद कर दिया जाता है ।
- कुष्ठ रोग के इलाज में नियमितता जरूरी होती है । जब तक इलाज पूरा न हो, रोगी चंगा न हो जाय, इलाज चलते रहना चाहिए । रोग के निर्मूल होने पर ही इलाज बंद करने की सोचना चाहिए, नहीं तो खतरा बढ़ता है ।

बैद्यनाथ

ईसब्बले

आंव, पेचिश, मरोड़, आमातिसार (डिसेन्ट्री), कब्जियत आदि रोगों में बहुपरीक्षित एवं उपयोगी औषधि।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# पञ्चगव्य : एक दिव्य औषधि

डा० सतीश चन्द्र तिवारी, एम.डी. (आयु

गोमूत्र, गोमय रस, गोदुग्ध, गोदधि तथा गोघृत का एक निश्चित अनुपात में मिश्रण पंचगव्य कहलाता है. जैसे :- पृथ्वी, जल, तेज आदि पंचमहाभूत सृष्टि के आधार हैं, वैसे ही स्वस्थ, सुखी तथा सुसम्पन्न जीवन का आधार गो प्रदत्त ये पाँच अनमोल द्रव्य हैं । पंचगव्य शरीर को शुद्धकर स्वस्थ, सात्विक तथा बलवान बनाता है । इसके सेवन से शारीरिक तथा मानसिक विकार दूर होकर आयुष्य, बल और तेज की वृद्धि होती है । इसके सेवन से नाड़ियों में बल आने लगता है । यह कामला, पाण्डु, जीर्णज्वर, धातुक्षीणता, क्षय, श्वास, कास आदि व्याधियों में उपयागी है । पेट, वृषण तथा हाथ-पैर की सूजन में यह बहुत ही लाभदायक है । रोगी तथा निरोगी सभी इसका सेवन कर स्वास्थ्य तथा दीर्घायुष्य की प्राप्ति कर सकते हैं ।

**गव्यं पवित्रं च रसायनं च पथ्यं च हृद्यं बल बुद्धि दंस्यात् ।**
**आयुं प्रदं रक्तविकार हारि त्रिदोष हृद्रोग विषापहं स्यात् ।।**

अर्थात् पंचगव्य परम पवित्र रसायन है, पथ्यकर है । हृदय को आनन्द देनेवाला तथा आयु, बल, बुद्धि प्रदान करने वाला है । यह त्रिदोषों का शमन करनेवाला, रक्त के समस्त विकारों को दूर करने वाला, हृदयरोग एवं विष के प्रभाव को दूर करने वाला है ।

इसके द्वारा कायिक, वाचिक, मानसिक आदि पाप-संताप दूर हो जाते हैं ।

**"पंचगव्यं प्राशनं महावातक नाशनम् ।"**

(महाभारत)

सभी प्रकार के प्रायश्चितों में, धार्मिक कार्यों तथा यज्ञों में पंचगव्य प्राशन का विधान है । वेदों, पुराणों तथा धर्मशास्त्रों में पंचगव्य की निर्माण-विधि एवं सेवन-विधि का वर्णन मिलता है । पंचगव्य शास्त्रोक्त विधि से शुद्धता को ध्यान में रखते हुए मंत्रोच्चारण के साथ बनाया जाता है ।

पंचगव्य निर्माण विधि - धर्मशास्त्र का प्रसिद्ध ग्रन्थ "धर्मसिन्धु" में वर्णित पंचगव्य के पाँचों द्रव्यों का अनुपात इस प्रकार है -

गोघृत- 8 भाग
गोदुग्ध - 1 भाग
गोदधि - 10 भाग
गोमूत्र - 8 भाग
गोमय रस - 1 भाग
कुशोदक - 4 भाग

इन सभी को एकत्र मिलाने पर पंचगव्य का निर्माण होता है ।

"बोधायन स्मृति" में इन पाँच द्रव्यों का अनुपात इस प्रकार है -

गोघृत - 1 भाग
गोदधि - 2 भाग
गोमय रस - ½ भाग
गोमूत्र - 1 भाग
गोदुग्ध - 3 भाग
कुशोदक - 1 भाग

**कुछ उपयोगी बातें जो ध्यान देने योग्य हैं -**

1. पंचगव्य में प्रयुक्त किये जाने वाले द्रव्य देशी नस्ल की स्वस्थ गाय का लेना चाहिए ।
2. गोबर को ज्यों का त्यों मिश्रण में नहीं डालना चाहिए बल्कि गोबर को कपड़े से निचोड़ा हुआ गोमय रस का प्रयोग करना चाहिए ।
3. कुश का पञ्चांग एक दिन तक एक शुद्ध पात्र में डुबाकर रखने से जो जल प्राप्त होता है, वह कुशोदक कहलाता है ।

गोमूत्र के अधिष्ठात्री देवता वरूण, गोमय के अग्नि, दूध के सोम, दही के वायु, घृत के सूर्य और कुशोदक के देवता विष्णु माने गये हैं । इन सभी द्रव्यों को एकत्रित करने तथा पंचगव्य का पान करने आदि के भिन्न-भिन्न मंत्र शास्त्रों में बताये गये हैं । इन सभी द्रव्यों को किसी एक पात्र में डालते समय निम्नलिखित स्लोक का तीन बार उच्चारण करके ही डालना चाहिए ।

गोमूत्र — **गोमूत्रं सर्वशुद्धयर्थं पवित्रं पापशोधनम् ।**
**आपदो हरते नित्यं पात्रे तन्निक्षिपाम्यहम् ।**

गोमय — **अग्रमग्रश्चरन्तीनां औषधीनाम् रसोदभवम् ।**
**तासां वृषभपत्नीनां पात्रे तन्निक्षिपाम्यहम् ।**

रीडर-स्वामी राघवेन्द्राचार्य त्रिदण्डी आयुर्वेद महाविद्यालय एवं चिकित्सालय, करजरा, पो.-मझौली, गया (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


गोदुग्ध — पयः पुण्यतम् प्रोक्तम् धेनुम्यश्च समुद्भवम् ।
सर्वशुद्धिकरम् दिव्यं पात्रे तन्निक्षिपाम्यहम् ।।

गोदधि — चन्द्रकुन्दसमं शीतं स्वच्छं वारि विवर्जितम् ।
किंचिदाम्लरसालं च क्षिपेत् पात्रे च सुन्दरम् ।।

गोघृत — इदं घृतं महदिव्यं पवित्रं पापशोधनम् ।
सर्वपुष्टिकरं चैव पात्रे तन्निक्षिपाम्यहम् ।।

कुशोदक — कुशमूले स्थितो ब्रह्मा कुशमध्ये जनार्दनः ।
कुशाग्रे शंकरो देवस्तेन युक्तं करोम्यहम् ।।

सर्वप्रथम उपरोक्त द्रव्यों से सम्बन्धित मंत्रों का उच्चारण करते हुए सभी को एकत्रित करें । इसके बाद प्रणव (ऊँ) के उच्चारण के साथ कुश से हिलाते हुए उनको मिश्रित करें ।

**सेवन विधि** - पंचगव्य स्वर्ण या चाँदी के पात्र में या पलाश-पत्र में लेकर निम्न मंत्रों का तीन बार उच्चारण करके खाली पेट सेवन करना चाहिए ।

यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति मायके ।
प्राशानात् पंचगव्यस्य दहत्वग्निरिवेन्धनम् ।।

(महाभारत)

अर्थात् त्वचा, मज्जा, मेधा, रक्त और हड्डियों तक जो पाप मुझमें प्रविष्ट हो गये हैं, वे सब मेरे इस पंचगव्य के प्राशन करने से वैसे ही नष्ट हो जायें, जैसे प्रज्वलित अग्नि में सूखी लकड़ी डालने पर भस्म हो जाती है ।

सेवन मात्रा - बच्चों के लिए - 10 ग्राम
बड़ों के लिए - 20 ग्राम

पंचगव्य सेवन के 3 घंटा तक कुछ नहीं खाना चाहिए ।

पंचगव्य के नियमित सेवन से मानसिक व्याधियाँ पूर्णतः नष्ट हो जाती हैं । विषैली औषधियों के सेवन से तथा लम्बी बीमारी से शरीर में संचित हुए विष का प्रभाव भी निश्चित रूप से नष्ट हो जाता है । गोमाता से प्राप्त होने वाला अल्प मेहनत और अल्प खर्च में मानव जीवन को सुरक्षित बनाने वाला यह अद्भूत रसायन है । इस दिव्य औषधि से असाध्य रोगों को ठीक करने के लिए शोध कार्य चल रहा है तथा कई रोगों पर सफलता भी प्राप्त हुई है ।


बैद्यनाथ
जनघूँटी

जन्म के बाद से ही बच्चों को इसका सेवन कराने से उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती । इससे बुखार, खांसी, सर्दी-जुकाम, अजीर्ण, उल्टी होना, टट्टी होना, पेट फूलना आदि रोग दूर होते हैं ।




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# जल चिकित्सा

स्मिता गुप्ता* एडवीन जेराल्ड, शीजा एडवीन जेराल्ड

हमारे देश का स्वास्थ्य तथा उसकी चिकित्सा एलोपैथी की महँगी दवाइयों से उतनी सुरक्षित नहीं. जितना हमें आयुर्वेदिक तथा उस पद्धति के उपचारों से लाभ मिलता है। आज विदेशी लोग भी हमारे आयुर्वेदिक उपचारों की ओर आकर्षित हो रहे हैं। हमें भी चाहिए कि हम 'साईड इफेक्ट'' करने वाले एलोपैथी की महंगी दवाओं से बचकर प्राकृतिक के आयुर्वेदिक उपचार को ही अपने जीवन में उतारें।

हम यहां चार प्रकार के जल - निर्माण की विधि बता रहे हैं, जो अनुभूत एवं असरकारक नुस्खे हैं।

**(1) सोंठ-जल-पानी-** की तपेली में एक पूरी साबूत सोंठ डालकर पानी गरम करें। जब अच्छी तरह उबलकर पानी आधा रह जाये तब उसे ठंडा कर दो बार छानें। ध्यान रहे कि इस उबले हुए पानी के पैंदे में जमा क्षार छाने हुए जल में न आवे। अत: मोटे कपड़े से दो बार छानें। यह जल पीने से पुरानी सर्दी, दमा, टी. बी., श्वास के रोग, हॉफना, हिचकी,फेफडों में पानी भरना, अजीर्ण, अपच, कृमि, दस्त, चिकना आमदोष, बहुमूत्र, डायबिटीज (मधुमेह), लो ब्लडप्रेशर शरीर का ठंडा रहना, मस्तक पीड़ा जैसे कफ दोष जन्य तमाम रोगों में यह जल अवश्य ही लाभ देता है। बिना पैसे की दवा, यह जल उपरोक्त रोगों की अनुभूत एवं उत्तम औषधि है। यह जल दिन भर पीने के काम में लेंवे। रोग में लाभ प्राप्ति के पश्चात् भी कुछ दिन तक यह प्रयोग चालू ही रखें।

**(2) धाना-जल-** एक लीटर पानी में एक से डेढ चम्मच सूखा (पुराना) खड़ा धानिया डालकर पानी उबालें। जब 750 ग्राम जल बचे तो ठंडा कर उसे छान लें। यह जल अत्यधिक शीतल प्रकृति का होकर पित्त दोष, गर्मी के कारण होने वाले रोगों में तथा पित्त की तासीर वाले लोगों को अत्यधिक वांछित लाभ प्रदान करता है। गर्मी - पित्त के बुखार, पेट की जलन, पित्त की उलटी, खट्टी डकार, अम्लपित, पेट के छाले, आंखों की जलन, नाक से खून टपकना, रक्त स्त्रव, गर्मी के पीले-पतले दस्त, गर्मी की सूखी खांसी, अति प्यास तथा खूनी बवासीर (मस्सा) या जलन सूजन वाले बवासीर जैसे रोगों में यह जल अत्यधिक लाभप्रद है। अत्यधिक लाभ के लिए इस जल में मिश्री मिलाकर पियें। जो लोग कॉफी तथा अन्य मादक पदार्थों का व्यसन करके शरीर का विनाश करते हैं उनके लिए यह जल का नियमित सेवन लाभप्रद तथा विज़ नाशक है।

**(3) अजमा-जल-** एक लीटर पानी में ताजा या अजवाइन एक चम्मच (करीब 8.5 ग्राम) मात्र में डाल कर उबालें। आधा पानी रह जाए तब ठंडा करके छान लें पियें। यह जल वायु तथा कफ दोष में उत्पन्न तमाम रोगों के लिए अत्यधिक लाभप्रद उपचार है। इसके नियमित सेवन से हृदय की शूल पीड़ा, पेट की वायु पीड़ा, आफरा, पेट का गोला, हिचकी, अरूचि, मंदाग्नि, पेट के कृमि, पीठ का दर्द, अजीर्ण के दस्त, कालरा, सर्दी, बहुमूत्र, डायबिटीज जैसे अनेक रोगों में यह जल अत्यधिक लाभप्रद है। यह जल उष्ण प्रकृति का होता है।

**(4) जीरा-जल-** एक लीटर पानी में एक से डेढ चम्मच जीरा डालकर उबालें, जब 750 ग्राम बचे तो उतारकर ठंडा कर छान लें। यह जल धाना-जल के समान शीतल गुण वाला है। वायु तथा पित्त दोष से होने वाले रोगों में यह अत्यधिक हितकारी है। गर्भवती एवं प्रसूता स्त्रियों के लिए तो यह एक वरदान है। जिन्हें रक्तप्रदर का रोग हो, गर्भाशय की गर्मी के कारण बार-बार गर्भपात हो जाता है अथवा मृत बालक का जन्म होता है या जन्म लेने के तुरन्त बाद शिशु की मृत्यु हो जाती है। उन महिलाओं को गर्भकाल के दूसरे से आठवें मास तक नियमित जीरा जल पीना चाहिए।

एक एक दिन के अन्तर में आने वाले, ठंड देकर एवं मलेरिया बुखार में, आंखों में गर्मी के कारण लालपन, हाथ पैर में जलन, वायु अथवा पित्त की उलटी (वमन), गर्मी या वायु के दस्त, रक्तविकार, श्वेतप्रदर, अनियमित मासिक स्राव, गर्भाशय की सूजन, कृमि, मूत्र की अल्पता इत्यादि रोगों में इस जल के नियमित सेवन से आशातीत लाभ मिलता है। बिना पैसे की औषधि इस जल से विभिन्न रोगों में चमत्कारिक लाभ मिलता है।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# ब्राह्मी बूटी

जयेन्द्र कुमार जौहर

ब्राह्मी बूटी को वनस्पति जगत में 'सेन्टेला एसियाटिका'' के नाम से जाना जाता है । यह एपियेसी कुल का सदस्य है । इसको विभिन्न भाषाओं में अलग-अलग नाम से पुकारा जाता है । संस्कृत में ''मंडूकपर्णी'', हिन्दी में ''ब्रह्म मन्डूकी, खूलारवुडी या मन्डूकपर्णी'' बंगाली में ''ठोल कुरी'', गुजराती में ''मोती ब्राह्मी'', मराठी में ''करिंगा या करिवाना'', कन्नड़ में ''ब्राह्मी सोपू'', तेलगू में ''ब्राह्मी या सरसवताकू'', तमिल में 'वलाराई', उड़िया में थालकुडी, मलयालम में ''कोडंगल'' तथा अंग्रेजी में ''इन्डियन पेनीवर्ट'' ।

ब्राह्मी का पौधा बहुवर्षी हर्ब होता है जो सतह पर चलता है तथा अधिकतर नम स्थानों पर खेतों में घास के रूप में पाया जाता है । इसकी तनें की गाँठों पर जड़ी होती हैं तथा गाँठों के मध्य का भाग काफी लम्बा होता है । पत्तियाँ थोड़ी मोटी तथा हृदयाकार होती हैं । पत्तियों की मार्जिन प्राय: कंटीली होती है । पत्तियों का ऊपरी भाग चिकना व निचले भाग में होती है । पत्तियों का ऊपर का भाग चिकना व निचले भाग में छोटे-छोटे रेशे होते हैं । इसके फूल गुलाबी व सफेद होते हैं जो धनिये के फूल की तरह गुच्छों में उगते हैं । इसके फल आयतरूप या दीर्घआयत होते हैं । इनके अन्दर का भाग थोड़ा कठोर एवं मोटा होता है ।

ब्राह्मी का पौधा प्राय: नम स्थानों पर पाया जाता है । इसके प्रमुख स्थान झरनों के किनारे, तालाबों के पास या पोखरों के पास उष्ण व पोषणीय जलवायु में विद्यमान होते हैं । इसके पौधों को वर्धी प्रजनन द्वारा तने के भागों से लगाया जाता है । यह छायादार स्थानों पर खूब आसानी से उगता है । प्राय: कृषक इसको आम के बागानों में वृक्षों की छाया में सिंचाई प्रदान कर उगा लेते हैं । इसको फरवरी-मार्च के माह में रोपित किया जाता है परंतु इस दौरान रोपित पौधों में सिंचाई अवश्य उपलब्ध होना चाहिये अन्यथा इसे बरसात के मौसम में जुलाई में रोपित किया जाता है । इसकी पत्तियां प्राय: सुबह के समय तोड़ कर औषधि के रूप में प्रयोग करने के लिए छाया में सुखाई जाती हैं ।

ब्राह्मी के पौधों में फूल व फल अप्रैल से अक्टूब माह के मध्य उगते हैं ।

ब्राह्मी हमारे पूर्वजों के समय से औषधि के रू में प्रयोग की जाती रही है । इसका विस्तृत वर्णन हमारे वेद व चरक संहिता में भी प्रदान किया गया है ।

**ब्राह्मी के विभिन्न औषधीय उपयोग निम्नवत हैं :-**

1. बच्चों की स्मरण क्षमता बढ़ाने हेतु ब्राह्मी की 3-4 पत्तियाँ 10-12 काली मिर्च के साथ पीसकर प्रात: काल देने से बहुत लाभ होता है । यह घोल स्मरण शक्ति में टॉनिक का कार्य करता है ।
2. ब्राह्मी की पत्तियों का काढ़ा ज्वर नाशक होता है ।
3. पेचिश के रोग में ब्राह्मी की पत्तियों को चटनी के रूप में 2-3 चम्मच 2-3 दिन पिलाने से रोकथाम होती है।
4. ब्राह्मी की पत्तियों का गाढ़ा पेस्ट फोड़े व फुँसियों प लगाने से फायदा होता है ।
5. ब्राह्मी की पत्तियों को अदरक व कालीमिर्च के साथ उबाल कर पीने से कफ निवारण में सहायक होता है ।
6. ब्राह्मी की पत्तियों के जूस को खजूर के गुड़ के साथ प्रसव के उपरांत देने से बहुत फायदा होता है । यह 15 दिन तक दिया जाता है ।
7. डायबिटिस के निवारण में भी ब्राह्मी की पत्तियों क सत फायदेमंद होता है ।
8. भयंकर सिरदर्द के समय ब्राह्मी की पत्तियों का जूस माथे पर मलने से लाभ होता है ।

**सौन्दर्य प्रसाधनों में उपयोग :-**

1. ब्राह्मी की पत्तियों के लेप को क्रीम के रूप में लगाने से त्वचा में चमक आती है ।
2. ब्राह्मी को तेल में भी, बालों के स्वास्थ्य हेतु उपयोगी पाया गया है ।

**ब्राह्मी के कार्यशील तत्व :**

ब्राह्मी में निम्न रसायन पाये जाते हैं जो औषधीय प्रभावकारी होते हैं । एसियाटिक एसिड तथा एसियाटिकोसाइड, मैकेकासिक एसिड, ब्राह्मीक एसिड, थाँकुनिसाइड तथा सेन्टेलोज ।

राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ - 226 001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# सेहत भरी है अजवाइन में

श्रीमती अनिता जैन

भारतीय परिवारों के रसोईघरों में आसानी से मिल जाने वाले मसालों में अजवाइन भी एक है । अजवाइन हमारे देश के सभी हिस्सों में मिलती है । इसका वानस्पतिक नाम 'केरम काप्टिकम' है । मराठी में इसे 'ओवा', संस्कृत में 'भवानी' तथा 'दीप्यक, गुजराती में 'अजमा', बंगाली में 'यमानी' नाम से जाना जाता है ।

आयुर्वेद में अजवाइन की काफी गुणकारी बताया गया है । आयुर्वेद के मुताबिक अजवाइन पाचक, रुचिकर, तीक्ष्ण, गर्म, चटपटी, हल्की, दीपन, कड़वी तथा पित्तवर्द्धक होती है । यह कफ, वायु, पेट का दर्द, वायु गोला, अफारा एवं कृमि रोगों के लिए अचूक औषधि का काम करती है ।

दरअसल अजवाइन के भीतर एक तरह का खुशबूदार उड़नशील द्रव्य विद्यमान रहता है । इसे 'अजवाइन का फूल' अथवा 'अजवाइन का सत्त' कहा जाता है । वैसे इस द्रव्य का नाम अंग्रेजी नाम 'थायमल' है । अजवाइन से तेल भी निकाला जाता है । उसे 'ओमम वाटर' कहा जाता है । इसके तेल की मालिश से जोड़ों के दर्द में आश्चर्यजनक आराम मिलता है ।

अजवाइन को मात्र मसाला ही नहीं मानकर, इसके अचूक औषधीय गुणों के कारण 'घर का डाक्टर' कहना अधिक उपयुक्त होगा ।

खाँसी की शिकायत होने पर अजवाइन खाकर गर्म पानी से काफी राहत मिलेगी । पान में अजवाइन डालकर खाने से रात में खाँसी चलना बन्द हो जाती है ।

दाँत के दर्द में खुरासानी अजवाइन राल के साथ पीसकर दाँतों के खोखले में रखने से दर्द से मुक्ति मिल जाती है ।

पाचन सम्बंधी रोगों के लिए अजवाइन और छोटी हरड़ समान मात्रा में मिलाकर थोड़ा-थोड़ा हींग और सेंधा नमक उसमें मिला दें । इन्हें बारीक पीस लें । यह चूर्ण भोजन के पश्चात् एक चम्मच गर्म पानी से लें ।

करीब 10 ग्राम अजवाइन रोजाना फाँकने से गुर्दा और मूत्राशय की पथरी में लाभ होता है ।

फोड़े-फुंसी की सूजन में अजवाइन को नींबू के रस में पीसकर लेप करें ।

अजवाइन को जलाकर उसका अत्यंत महीन चूर्ण बना लें । उसे जस्ते की सलाई से सुरमे की भाँति आँख में आँजने से नेत्र-ज्योति बढ़ती है । इस चूर्ण का सुबह मंजन के तौर पर दाँतों पर करने से दाँत साफ होते हैं और मसूड़ा सम्बन्धी रोगों में लाभ होता है ।

यदि पेट में कीड़े होने की शिकायत हो तो रात को थोड़ा गुड़ खाकर रात के रखे पानी से अजवाइन की फंकी लेने से पेट के कीड़े निकल जाएंगे ।

मुँहासे होने पर तीस ग्राम अजवाइन बारीक पीसकर 25 ग्राम दही मिलाकर पुनः पीसें । फिर रात्रि को सोने से पूर्व मुँहासों पर लगाएं । सवेरे हल्के गर्म पानी से चेहरा भली-भाँति धो डालें । सप्ताह-भर तक यह प्रयोग करने से मुँहासें मिट जाते हैं ।

मंदाग्नि रोग में अजवाइन काफी कारगर है । अजवाइन, काली मिर्च और सेंधा नमक पीसकर सवेरे गुनगुने पानी से फाँक लें । इससे मंदाग्नि के अलावा उदर शूल और पेट-दर्द में भी लाभ होता है ।

अजवाइन और तिल मिलाकर कुछ दिन सेवन करने से बहुमूत्र की शिकायत दूर हो जाती है । बैसे तो और पिसी हुई कच्ची अजवाइन बराबर-बराबर मात्रा में मिलाकर एक-एक चम्मच दिन में चार दफा सेवन करने से भी बहुमूत्र में लाभ होता है ।

बच्चों को होने वाली उल्टी दस्त में अजवाइन को पीसकर माँ के दूध के साथ देने से लाभ होता है ।

अजवाइन का तेल 3 से 7 बूँद तक देने से पेट और उदर-कृमि नष्ट हो जाता है । अजवाइन का चूर्ण थोड़ी-सी छाछ के साथ देने से पेट के कृमि नष्ट हो जाते हैं ।

सर्दी-जुकाम में भी अजवाइन उपयोगी है । अजवाइन को गर्म करके पतले कपड़े में पोटली बनाकर सूँघें । अजवाइन को चबाना और उसका धुँआ लेना भी सर्दी-जुकाम में लाभकारी रहता है ।

द्वारा, श्री कैलाश जैन एडवोकेट, 34-बन्दा रोड, भवानीमण्डी (राज.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# सूखा फल मखाना - पौष्टिकता का खजाना

कविराज डा० दिवाकर ठाकुर, जी.ए.एम.एस. (पटना) डी.एस.सी.ए. (आयुर्वेद बृहस्पति, विक्रमशिला)

मिथिला की कला मधुबनी पेंटिंग की तरह यहाँ का मखाना भी जग जाहिर है । मिथिलांचल का एक कहावत है - पग-पग पोखर माछ मखान ।

मखाना कमल की एक प्रजाति है । यह स्वच्छ पानी के तालाब-पोखर में कांड हीन, काँटेदार और कमल के समान जल में होता है । पत्ते कमल के समान पानी पर तैरते हुए गोलाकार एक से चार फीट व्यास में, ऊपर से हरे रंग और भीतर लाल, कोमल रोआँ और काँटेदार होता है । फूल एक से दो इंच लम्बे, फल दो से चार इंच के घेरे में गोलाकार, बीज मटर दाना से बड़ा जिसे बालू में भूंजने पर मखाना कहलाता है । यह वजन में हल्का और स्पर्श में रेशम जैसा मुलायम रहता है ।

इसके अन्दर प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, स्नेहांश, लोहा, खटिक, फास्फोरस, कॅराटीन, जल, नमक आदि रसायन द्रव्य पाए जाते हैं ।

विभिन्न जगहों में यह भिन्न-भिन्न नाम से जाना जाता है । जैसे-हिन्दी में मखान, बंगला में माखाना, गुजरात में मखाणा, मद्रास में मकाणे, तमिल में मेल्लुनिपद, ममु. ठान में जबेर, अंग्रेजी में गार्गन फ्रुट, लेटिन में यूरीएल फेराक्स आदि ।

मखाना स्थिर जल में उत्पन्न होने वाला एक वनस्पति का बीज है । यह बीज बाजार में प्राय: नहीं मिलता है लेकिन किसानों के बीच इसका लेन-देन होता है ।

मखाना में अधिक औषधीय गुण सन्निहित हैं । यह मधुर, शीतल, स्निग्ध गुणों से भरपूर है । यह एक अच्छा टॉनिक है । शारीरिक दुर्बलता को दूर कर बल को बढ़ाता है । हृदय के लिए हितकर होने से हृदय रोग में उपयुक्त होता है । गर्भावस्था और प्रसव के बाद होनेवाली कमजोरी में अत्यंत लाभ पहुँचाता है । बार-बार गर्भपात होने की स्थिति में मखाने से बने पदार्थों का सेवन अत्यन्त उपयोगी होता है । शुक्र को बढ़ाता है और शरीर की जलन को मिटाता है । नियमित इसका सेवन करने से रात में भयानक सपने देखना बन्द हो जाता है ।

मिथिलांचल में हर पर्व त्योहार एवं पवित्र कार्य पूजा-पाठ के अवसर पर मखाना का व्यवहार करना जरूरी होता है । देश के अन्य क्षेत्रों में पूजा के प्रसाद एवं चरणामृत में मखाना का मिश्रण अनिवार्य है ।

किडनी रिसर्च एण्ड इन्स्टीट्यूशन ऑफ आयुर्वेद चाँदमारी कार्नर, कंकड़बाग, मेन रोड, पटना

बैद्यनाथ

लवणभास्कर चूर्ण

मन्दाग्नि को दूर कर पाचनक्रिया को बढ़ाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# चरकोक्त ज्वर चिकित्सा अध्याय में ऊर्ध्वांग चिकित्सा सम्बन्धित उल्लेख

* डा० अनूप कुमार गक्खड़ व डा० अनिल गक्खड़

चरक संहिता यद्यपि काय चिकित्सा का प्रधान ग्रन्थ है फिर भी इसमें शालाक्य तंत्र सम्बन्धित विवेचन यदा-कदा उपलब्ध होता है। ज्वर चिकित्सा के प्रकरण में निम्नलिखित उल्लेख उर्ध्वांग चिकित्सा से सम्बन्धित हैं:-

→ वात और पित्त से उत्पन्न तृतीयक ज्वर में शिर:शूल का उल्लेख है (3/71)

→ वात दोष से उत्पन्न चतुर्थक ज्वर में शिर में पीड़ा के साथ ज्वर की उत्पत्ति का उल्लेख है। (3/72)

→ वात पित्त ज्वर के लक्षणों में शिरोरुक् का उल्लेख है (3/86)

→ वात पित्तोल्वण मन्द कफ सन्निपातज ज्वर के लक्षणों में शिर में अतिशय रूक् का उल्लेख है। (3/91)

→ वातोल्वण कफपित्त हीन सन्निपातज ज्वर के लक्षणों में शिर:शूल का उल्लेख है। (3/94)

→ सम सन्निपातज ज्वर के लक्षणों में शिर लोठन लक्षण का उल्लेख है। (3/100)

→ शिरोरोग में शिरोविरेचन करवाना चाहिए। (3/254)

→ शिरोरोग में तैल नस्य व धूमवर्ति का प्रयोग बताया है। (3/255)

→ ज्वर में शिर:शूल होने पर नस्य का प्रयोग बताया गया है। (3/173)

→ ज्वर में शिर:शूल होने पर गोक्षुर व कण्टकारी के क्वाथ में रक्तशालि की पेया पीने का विधान है। (3/181)

→ ज्वर में शिर:शूल होने पर बलादि घृत के प्रयोग का विधान किया गया है। (3/226)

→ ज्वर के पूर्वरूप में नयन स्राव का लक्षण बताया है (3/28)

→ वातकफज ज्वर के लक्षणों में प्रतिश्याय का उल्लेख है। (3/87)

→ कफोल्वण, पित्त मध्य तथा अल्पवात जन्य ज्वर में प्रतिश्याय का भी लक्षण रूप में उल्लेख है (3/97)

→ वातोल्वण, पित्तमध्य तथा कफ अल्प जन्य ज्वर में प्रतिश्याय का लक्षण रूप में उल्लेख है। (3/101)

→ सन्निपातज ज्वर में उपद्रव स्वरूप कर्णमूल शोथ की उत्पत्ति बताते हुए इसे अतीव कष्टप्रदायक बताया है (3/287)

→ सम सन्निपात ज्वर के लक्षण के रूप में कर्ण क्ष्वेड का उल्लेख किया गया है। (3/103)

→ वातोल्वण पित्तमध्य कफहीन सन्निपात ज्वर में मुखशोथ का लक्षण के रूप में उल्लेख है। (3/101)

→ वातपित्त ज्वर के लक्षणों में कण्ठशोथ भी बताया गया है। (3/85)

→ शिर में दाह होने पर द्राक्षादि निरूहबस्ति का प्रयोग बताया है। (3/55)

→ स्थिरादि निरूह बस्ति नेत्र बलवर्धक मानी गयी है (3/37)

→ अंधापन की अवस्था में बस्ति में मांसरस का प्रयोग लाभकर है। 3/43

* दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज, जालन्धर शहर ** श्रीमती उर्मिला देवी, आयुर्वेदिक कॉलेज, होशियारपुर

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
पेट साफ कर पाचन शक्ति को बढ़ाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आमवात व्याधि के चिकित्सा उपक्रम

*डा० निलेश भट्ट **प्रो० वी०डी० शुक्ल

वर्तमान परिस्थिति में आमवात व्याधि एक दुःष्कर व्याधि है । आधुनिक विज्ञान में न तो उनकी संपूर्णतः चिकित्सा है न तो उनसे उपद्रव उत्पन्न हुए बिना आराम मिलता है ।

आयुर्वेद में आमवात रोग का वर्णन किया गया है एवं उसका चिकित्सा-उपक्रम तार्किक रूप से बताया गया है । आमवात रोग की चिकित्सा में चक्रदत्त जिनको चिकित्सा के सिद्धांतों के वर्णन में श्रेष्ठ कहा गया है, उन्होंने आमवात व्याधि की चिकित्सा में लंघन, स्वेदन, तिक्त कटु रस एवं दीपन कर्म करने वाली औषधियों का सेवन, विरेचन, स्नेहन और अनुवासन बस्ति के साथ-साथ क्षार बस्ती का भी उपयोग बताया है । भावमिश्र और योगरत्नाकर ने भी जिसमें स्नेह न हो ऐसा उपनाह स्वेद का प्रयोग बताया है । इन सब चिकित्सकीय घटकों का विवरण विस्तृत रूप से इस प्रकार किया जा सकता है ।

**लंघन :-** लंघन को आमवात में हितकर कहा गया है क्योंकि लंघन करोति इति लंघनम् । यहां पर लंघन से लघुता शब्द का भी ग्रहण किया जाता है । अर्थात् आमवात के रोगियों में गौरवता एक लक्षण आम का बताया गया है । आम के पाचन हेतु अग्नि का प्रदीप्त होना नितांत आवश्यक है । इसलिए चक्रदत्त सर्व प्रथम आमवात की संप्राप्ति विघटन की दृष्टि से आद्य निदान अग्निमांद्य एवं तत्जन्य उत्पन्न आद्य रस पर विशेष ध्यान देते हुये अग्नि की सुरक्षा ही लंघन को आमवात की चिकित्सा में सर्वप्रथम उपक्रम दर्शाया है । लंघन की सीमा को भी बताते हुए कहा गया है कि जबतक निराम अवस्था न हो तबतक लंघन प्रयुक्त किया जा सकता है ।

आमवात की चिकित्सा में लंघन का प्राथमिक रूप से रोगी को निर्देश किया गया है, क्योंकि व्याधि आमाशयोत्थ है और उनको रसज विकारों में भी बताया गया है । लंघन कर्म ऐसी स्थिति में प्राथमिक रूप से बहुत उपयोगी कहा गया है (च०सू० 23-25 और च०नि०8-31) और आगे चरक ने लंघनकर्म का सामवात की स्थिति में प्रयुक्त करने को कहा गया है । योगरत्नाकर ने लंघनकर्म का आम की स्थिति में उत्तम चिकित्सकीय उपक्रम बताया है और अष्टांग हृदय सू० में 13-28 ऐसा कहा गया है कि आमदोष जब तक पक्वरूप में नहीं आ जाते हैं तब तक लंघन एक अत्यंत श्रेष्ठ है । लंघन को बलवृद्धि में हितकर नहीं कहा गया है परंतु आमवात की स्थिति में उपयोगी कहा गया है ।

**स्वेदन** - स्वेदन शब्द 'स्विद्' से बना है उसका अर्थ पाकार्थ में हो सकता है । आयुर्वेद की दृष्टि से स्वेदन के दो प्रकार के हैं । इन दोनों प्रकार से स्वेदन की उपयोगिता आमवात की चिकित्सा के लिये सर्व सम्मत एवं सर्व स्वीकृत है ।

यह सर्व स्वीकृत है कि आमवात एवं अन्य रूमेटिक व्याधियों में स्वेदन कर्म प्रयुक्त हो सकता है । आमवात की चिकित्सा में आम की उपस्थिति हो तब पोट्टली रूप में रूक्ष स्वेद किया जाता है । जीर्ण अवस्था में जब रूक्षता बढ़ी हुई मिलती है तब स्निग्ध स्वेद का भी प्रयोग किया जा सकता है ।

स्वेदन को जब शरीर में स्तब्धता, गौरवता एवं शूल की उपस्थिति (च०सू० 22-11) होती है तब प्रयुक्त किया जा सकता है और यह आमवात के मुख्यतः लक्षण बताया गया है । आभ्यंतर स्वेद के रूप में उष्ण जलपान भी किया जा सकता है जो दीपन, पाचन, ज्वरघ्न, स्रोतोशोधक आदि (च०चि० 3-44) बताया गया है । स्वेदन दोषों को पिघलाने का काम करता है और शाखा से कोष्ठ की ओर ले जाने का कार्य भी करता है जिससे शोधन चिकित्सा भी हो सकती है ।

**कटुतिक्त दीपनीय औषधों की उपयोगिता**

कटु, तिक्त, कषाय, द्रव्य वातवर्धक एवं कफनाशक बताय

* पंचकर्म सहायक, कायचिकित्सा विभाग, आइ.पी.जी.टी.एण्ड आर.जे.
** विभागाध्यक्ष, गुजरात आयु.युनि. जामनगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ाया है । आमवात में कफदोष की विशेष प्रधानता होती है और वात की आवृत्त अवस्था मिलती है । कटु, तिक्त, रस द्रव्य वात दोष की वृद्धि करता है परंतु आमवात में उनका उपयोग बताया गया है क्योंकि उन द्रव्यों में दीपन एवं पाचन की कार्मुकता है । यह द्रव्यों के लघु तीक्ष्ण एवं अग्निवर्धक गुण होने से, आम का पाचन होता है और बढ़े हुए क्लेदक कफ को दूर करता है और आम की उत्पत्ति नहीं होती है । कटु रस के कारण लाला स्त्रावीय एवं स्राव जो पाचन-क्रिया में जरूरी है उनका स्राव बढ़ता है । यह सर्व स्वीकृत है और इससे अलावा आंत्रीय गति में सुधार करता है जिससे वातानुलोमन भी होता है ।

**विरेचन** - लंघन, स्वेदन एवं कटुतिक्त दीपनीय द्रव्यों के उपयोग के बाद शरीर में निरामावस्था उत्पन्न होती है तब उस दोष को दूर करने के लिए शोधन क्रिया की जरूरत रहती है । सामान्यत: वमन के बाद विरेचन कर्म होता है परंतु रोगी को यहां पर विरेचन दिया जाता है । इन कारणों को दो विभाग में विभक्त किया जा सकता है । अ:आम की उत्पत्ति क्लेदक कफ द्वारा पित्तस्थान पर आवरण होने से होता है और उसके कारण से पाचक पित्त की असामान्य होने से पाचनक्रिया दूषित होता है । विरेचन यहां पर दो तरह से काम कर सकता है ।

* विरेचन कफ से हुआ आवरण को हरता है ।
* पित्त जो स्थानिक दोष है उनकी चिकित्सा विरेचन बताया गया है ।

**ब:** आमवात के लक्षण जैसे आनाह, आत्रकूजन, कटिशूल आदि वायु के प्रतिलोम गति के कारण होता है ।

**स्नेहपान** - उपर दर्शाये गये सब चिकित्सकीय उपक्रमों को करने के बाद रोगी को शमन स्नेहपान देना चाहिए और इस हेतु को निम्न रूप से सिद्ध किया जा सकता है ।

* उपरोक्त चिकित्सकीय उपक्रमों के बाद धातुओं में रूक्षता उत्पन्न होती है जो कि वातदोष की वृद्धि करता है और रोग को बढ़ाने में सहायक रहता है । इससे बचने के कारण से ही स्नेहपान इस रोग में प्रयुक्त माना गया है ।
* रोगी के बल में भी गिरावट शोधन उपक्रम करने के बाद शीघ्र ही लाभ मिल सकता है । च०चि० 28-[illegible] के अनुसार स्नेह को बलवर्धक भी कहा गया है उससे भी ज्यादा शमन स्नेह (घृतादि) अग्नि को भी बढ़ाता है । (च०चि० 15-201-202)
* अस्थिमज्जा गत वात के रोगी में स्नेहपान देने को कहा गया है और यह धातु भी सामान्यत: आमवात में दूषित होती है । (च०चि० 28-82)
* वातानुलोमन कर्म होने के कारण दूषित हुआ वायु का प्रशमन होता है । इसलिये आमवात में दिया जाता है वातदोष की अवस्था निराम होनी चाहिए । और इसे तरह देखें तो आमवात के रूग्णों में पाचनक्रिया ठीक तरह से भी काम नहीं करती है । इस कारण से भी दीपन पाचन द्रव्य से सिद्ध स्नेह दे सकते हैं ।

**बस्ति :-** तीन दोषों में से वात दोष आमवात व्याधि में मुख्यत: विकृत रूप से रहता है और वायु की चिकित्सा में बस्ती को श्रेष्ठ माना गया है । आमवात में वायु के साथ-साथ आम भी मुख्यत: विकृत कारण बताया गया है और बस्ती अग्नि को भी बढ़ाती है । इस कारण से आम को भी दूर कर सकती है ।

आमवात में अनुवासन एवं निरूह दोनों बस्ति दे सकते हैं । अनुवासन बस्ति शरीर की रूक्षता जो आम को दूर करने वाली चिकित्सा से उत्पन्न हुआ है उनको [illegible] करता है । वायु को प्रशमन करती है । अग्नि के कार्यों को प्राकृत स्थिति में लाने का काम और शरीर का पोषण करती है । निरूह बस्ती जो कि लंघन के कारण शाखा कोष्ठ में आये हुये दोषों को दूर करती है ।

इन सिद्धान्तों का अनुसरण करते हुए चक्रदत्त ने आमवात के रोगी को सैंधवादि तैल का अनुवासन एवं बस्ती निरूह के रूप में देने को कहा है । (चक्रदत्त 25-1)

इस तरह आमवात के उपयुक्त उपक्रम का तार्किक वर्णन यहां पर किया गया है ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# STRESS AND AYURVEDIC MANAGEMENT

* Dr. Anoop Kumar Indoria ** Prof. Ajay Kumar Sharma

Stress is one of the old warhorses of psychiatry. Stress is cause of major psychopathology and a precipitator or trigger of psychiatry illness. Hans Selye (1907-1982) observed that stress causes common physiological responses. Selye invoked the adrenocortical system as the crucial responder to stressful stimulation. Walter Cannon (1871-1845) investigated the pathway of stress that was sympathetic nervous system. Cannon also observed that stressor causes gastric erosion and cardiovascular response. Many studies showed a link between stress or causes gastric erosion and cardiovascular response. Many studies showed a link between stressors and illness. So this is emphasized that stressors trigger illness in individual whose underlying disease is latent or sub-clinical.

Basically stress is both advantageous and disadvantageous. Everyone experiences stress but it is not always harmful. A certain level of stress is beneficial and stimulates us to perform well but too much stress can impair performance.

Stress is a positive, motivating force that enables one to survive and affects one to some degree throughout life. Stress is like an electric current. It increases arousal, gives energy and improves performance. But too high current or stress produces unpleasant effects and deteriorate performance. Conversely too little stress can make listless, un-stimulated, inefficient and slow performance. If stress is transient then it is good for performance but if it persists for a long period or it is continuous then it deteriorates performance. Yorkes Dodson Law clears this picture.

YORKES - DODSON LAW

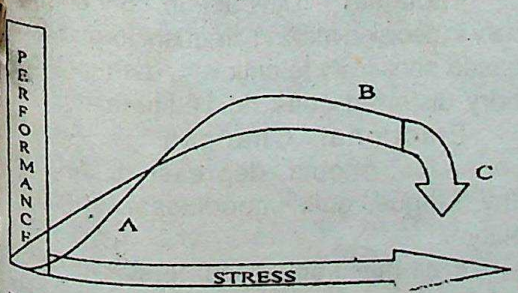


A. Little stress -
   - List less.
   - Inefficient.
   - Slow performance.

B. Financial reward & deadline to work
   - Better performance.

C. Fear of punishment or failure -
   - Nervousness.
   - Deterioration in performance.

The stimulation of a financial reward and deadline to work give an optimal level of stress so performance becomes well. But fear of punishment causes nervousness and inefficient performance.

In general and common understanding about stress in an unpleasant effect. Because advantageous effects of stress suppresses under prosperity and only unpleasant effects are felt by individual. The signs of stress resemble with many systemic disorders and it is very difficult to differentiate. In such cases treatment of systemic disorders does not subside signs because basic pathology of these disorders is stress induced complex series of biochemical and physiological events.

As we have discussed that everyone experiences stress but all don't feel signs of stress. The signs of stress depends upon individual's capabilities to cope with stressor. Model of stress is like a set of weighing scale in which one component is sources (Every day demands) and second component is life skills (Coping skill). When perceived demands outweigh individual's perception of his capabilities, the weighing scale tip is unbalanced and one begins to experience symptoms of stress. Any stressor has no capability to induce signs of stress. Only coping abilities are responsible for symptoms of stress.

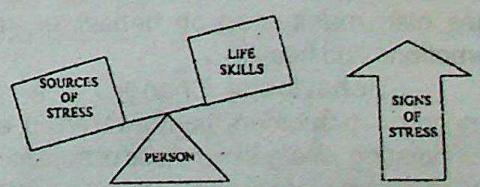


* Ph.D. Scholar, P.G. Deptt. of Kayachikitsa, N.I.A., Jaipur
** Prof. and Head, P.G. Deptt. of Kayachikitsa, N.I.A., Jaipur

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


## SIGNS & SYMPTOMS OF STRESS

Stressors activate sympathetic nervous system and make a person ready to confront the situation. This sympathetic nervous response induces many physiological and biochemical changes which appear as signs and symptoms of stress

Stressors activate noradrenergic system, serotonergic system and depominergic system. Activation of noradrenergic system in locus coeruleus releases catecholamines. These catecholamines enhance synthesis of brain norepinephrine and inducts tyrosine hydroxylase which increases synthesis of Adrenaline. Activation of serotonergic system increases serotonin turnover. glucocorticoids and enhances 5 HT functioning. Hypothalamus secretes corticotropin releasing factor (CRF) in hypophysial pituitary portal system. It acts on anterior pituitary and releases adrenocorticotrophic hormone (ACTH). ACTH acts an adrenal cortex and stimulates synthesis and releases Glucocorticoids. All these biochemical and neuro-chemical changes promote energy utilization and increase cardiovascular activities and produce "Flight or Fight response"

| S.No. | Physical Reactions | Signs/Symptoms |
|---|---|---|
| 01. | Salivary and other secretions decrease. | Dryness of mouth, Difficulty in Swallowing |
| 02. | All large skeletal muscles contract for action. | Muscular Tension, Fatigue, Muscular pain, Tensed neck & shoulder Muscles, Backache |
| 03. | To maintain Oxygen supply of the body. | Faster Breathing, Hyperventilation, Palpitation, Dyspnoea. |
| 04. | Heart pumps faster for proper blood supply to Brain and Muscles. | High Blood Pressure, Palpitation Nervousness, Restlessness. |
| 05. | Liver releases stored sugar to provide fuel for quick energy. | Rapid tiredness, High Blood Sugar, High Insulin level. |
| 06. | Blood supply diverted to skeletal muscles and slow down towards digestive system. | Nausea, Indigestion, Heart burn, Ulcers. |
| 07. | Superficial Blood supply increased and deep organ supply decreased. | Rashes, Redning of Skin, Hot & Cold flushes |
| 08. | Blood vessels & Capillaries move towards skin move towards skin to cool body. | Excessive sweating, Perspiratin, Dryness of skin. |
| 09. | Muscles of Anus and Bladder are relaxed. | Frequent Urination, Diarrhoea. |
| 10. | Cortisol, Adrenalin and nor adrenalin are released. | Low Immunity and Recurrent illness. |

## EFFECTS OF STRESS

Physical signs and symptoms of stress appear as discussed above. But effects of stress are also manifested on behaviour, thoughts, emotions and health.

**Behavioural Changes** :- Aggression, anger, sleep disorders, early awakening, emotional out bursting, overeating or loss of appetite, craving for smoking, alcohol or other drugs, inactivity and avoidance of situations etc.

**Thoughts** :- Difficulty in concentration, difficulty in decision making, frequent forgetfulness, increased sensitivity to criticism, deterioration of memory, distorted ideas, rigid attitude etc.

**Emotional Changes** :- Anxiety, nervousness, phobia, depression, sadness, apathy, fatigue, guilt, moodiness, loneliness, jealousy.

If all these situations persist for a long period then it creates many health problems.


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


Coronary artery diseases (Heart attack and IHD, Arrhythmias), Peptic Ulcers, Irritable Bowel syndrome, Diarrhoea, Asthma, Migraine and other headaches, Diabetes, Menstrual disturbances, Cancer, Chronic pain etc.

## SOURCES OF STRESS

Holmes and Rahe (1967) and many scholars studied the relationship between life events and stress related health problems. They scored various life events. The accumulation of significant life events increases vulnerability to stress related illnesses. The main universal sources of stress are fear of death, fear of financial crisis and fear of defame. These fears may appear due to any change, bereavement, loss, accidents, trauma, separation, divorce, financial difficulties. Other sources like - Chronic pain, extramarital affaris, premenstrual syndrome, adolescence, exam, caring of elderly and sick family member, becoming a parent or a partner may aggravate the problems.

But stress is never inevitable. It depends to some extent on one's perception about an event. Any event has no capability to produce stress. One's perception about event, accumulation of stressor and copping abilities are responsible for stress related illnesses.

## HOW TO OVERCOME FROM STRESS

1. Identification of stressor and induced signs.
2. Change the pattern of adaptation of event by rational thinking.
3. Manage the sign and symptoms by particular strategies.
4. Improve relationship with family members and subordinates.
5. Learn relaxation techniques.
6. Self care.

## AYURVEDIC MANAGEMENT OF STRESS

1. Nidana Parivarjana -

Indentify the source of stress and signs of stress. Accept the situation which can not be altered. Signs of stress depend upon perceivement of event so think less rigidly and rationally.

2. Vyatyasa Therapy -

"व्यत्यासो नाम परस्पर विपरीत भावस्य परिवर्तनेन योजना"

(चक्रपाणी टीका)

काम शोक भय क्रोध हर्षेर्ष्या लोभ सम्भवान् ।
परस्पर परिद्वन्द्वैरेभिरेव शमं नयेत् ॥

(च.चि. 10/86)

Alternative use of opposite or anonyms characteristic and emotion is VYATYASA THERAPY.

Mental derangement resulting from an excess of passion or desire or love, grief, fear, anger, delight or joy, envy, cupidity or greediness should be managed by alternative use of opposite emotions. Like "Anger" expression of anger is not good for relationship. Accept anger in other. So express your feeling assertively. Like "Anger" should be managed by alternative use of affection and aggression. One should identify the level of anger and behaviour accordingly.

3. Essential Life Styles -

(i) Assertiveness -

A. Express your feeling in respective manner. Don't be passive and self less. Be selfish to look after yourself. Aggressive behaviour creates stress. So always express thoughts openly without hurting feelings of others.

B. Accept criticism because it is necessary for self-improvement.

C. Scripting-Scripting is best way to prepare one self for expression without any aggration.

D. Negotiation is very good skill to remove obstructions.

E. Give and receive praise and compliments.

F. Learn how to say "No" because overburdening may cause stress e.e.-
   - Direct No., Reflecting No, Reasoned No.
   - Rain checks No, Enquiring No, Broken Record No.

Gurukul Kangri Library
Gurukul Kangri University
Haridwar 249404 (U.A.)

G. Control over anger: Bottling of anger factor is basic cause of out bursting. So clarify every situation and identify level of anger. Basic cause of anger is your rigid belief and



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

shouldism. Also accept anger in others.

(ii) Time Management -

Stress is result of out weighing of everyday demands so time management is first priority. Without planning and time management sources of stress can never be minimized.

A. Rank priorities - Office, Home, Leisure time.

B. Goal planning and work out system.

C. Overcome from procrastination.

D. Control over perfectionism.

E. Delegate the work.

F. Reduce hurry sickness.

G. Know your prime time and do important work in that time.

H. Plan and allow slacks in time-table.

(iii) Rational Thinking -

Thoughts have tendency of spiraling so every thinking should be analyzed with beginning :

A. Challenge distorted thinking.

B. Rigidness is basic cause so think less rigidly.

C. Give ladder to your thoughts.

D. State positive self-statements.

(iv) Improve Relatioship -

A. Communicate your thoughts and be a good listener. Listening, expressing and accepting are essential skills for good communications.

B. Faithfulness. loyalty, mutual respect, appreciation, understanding, tolerance, open talk and common interests are essential factors for good relationship between life partners.

C. Stop sulking - Sulking means being silent, unwilling to talk and freezing. Sulking is an unhelpful way of showing anger or disappointment. Sulking is responsible factor of emotional out-bursting.

(v) Self Care -

One can better cope and tackle stressor when one keeps himself fit, healthy and relaxed. Self-care contains physical exercise, yoga, relaxation, healthy eating, having fun, hobbies and interest, regular breaks, balance between work and play.

Regular exercise improves blood circulation, blood pressure, tunes up heart muscles and lungs, synthesize brain endorphins which helps in coping with stress, boosts the immune system. So walking and exercise of each joint & muscles should be done to keep healthy.

Yoga contains physical exercise with relaxation, breathing exercise (Pranayam), meditation. Yoga gives all benefits of exercise with activation of parasympathetic pathway of autonomic nervous system. Parasympathetic nervous system is responsible for relaxation. So fight or flight response, which appears by activation of sympathetic nervous system, can be checked by yoga. Sympathetic and parasympathetic both are branches of autonomic nervous system. Both systems don't act at a time so if some one activates his parasympathetic nervous system and becomes physically relaxed then spirality of vicious cycle of stress is checked.

Pranayam or breathing exercise improves respiratory system, creates proper oxygen concentration in lungs, blood and tissue level, expansion of chest became fully and prepared respiratory system to contfront emergency. Proper oxygen concentration is essential for many biochemical processes and excretion of by products.

Shavasana, Makarasana, Balakasana etc are special postures, which give complete relaxation during yogic exercise. For relaxation during office hours, one should adopt following postures -

* Sit on Chair with supporting back.
* Concentrate on breathing.
* Start slow and deep breathing.
* Say "Calm" or "Let go" in mind.
* Take deep breath and hold.
* Drop your shoulders.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Progressive muscle relaxation is another technique, which gives relaxation. Tense up a group of muscles when holding breath and relax the tensed muscles during expiration. This technique is progressive muscles relaxation and should be adopted one by one for all groups of muscles.

Hobbies and interests should be developed by individuals. Hobbies give a change between work and home, develop interest in life, give slack in schedule, create joyfulness in environment, and ultimately develop healthy mental state.

4. Medicinal Treatment -

Following medicine can be prescribed to treat stress effectively -

A. Single Drugs -

| | | |
|---|---|---|
| Shankhapuspi | - | Convolvulus pluricalis |
| Bramhi | - | Centella asiatica/Bacopa moneri |
| Vacha | - | Acorus calamus |
| Jyotismati | - | Celastrus panniculata |
| Ashwagandha | - | Withania somniferra |
| Jatamansi | - | Nardostachys jatamansi |
| Tagara | - | Valeriana wallichi |
| Khurasani ajwaina | - | Hyoscyamus niger |
| Kushmanda | - | Benicassa hispida |
| Sarpagandha | - | Rauwolfia serpentina |
| Shatawari | - | Asparagus racemosus |

B. Churna (Powders) -
Saraswata, Churna, Ashwagandhadi Churna

C. Rasa, Bhasma, Pisti -
Smriti Sagara Rasa, Chaturbhuja Rasa, Bramhi Vati, Amarsundari Vati, Yogendra Rasa, Akika Pisti, Abhraka Bhasma, Ropya Bhasma and Suvarna Bhasma.

D. Ghrita & Taila -
Kalyanak Ghrita, Bramhi Ghrita, Panchagavya Ghrita, Lashundya Ghrita, Shatavari Ghrita, Asthamangal Ghrita, Chitasa Ghrita, Bramhi Amla Taila and Chandanadi Taila etc.

E. Avaleha -
Bramha Rasayana, Kushmanda Khanda, Drakshavaleha, Khamira Gajawana Ambari, Vijaya Pushpadyaveleha.

F. Asava & Aristha -
Saraswataristha, Ashwagandharistha, Drakshasava.

5. Panchakarma Procedures -

Following procedures can be used in stress management -

1) Shirodhara = Taila dhara, Dugdha dhara, Sidhayoga dhara.
2) Shiro Basti.
3) Sarvanga Abhyanga with medicated oils.
4) Nasyakarma.

6. Ideal Prescreption -

1) Sarasawata Churna = 1 gm
Smriti Sagara Rasa = 250 mg
Mukta Pisti = 250 mg
1 x 2 with honey.

2) Brahmi Bati = 250 mg x TDS

3) Sarasawataristha = 20 ml
After meals with equal quantity of water
1 x 2 doses

4) Brahma Rasayana = 20 gm
1x2 doese with milk

5) Shirodhara - With Dashamoola decoction treated milk.

6) Yoga Therapy - Shirshasana, Halasana, Shavasana.

7) Pathya - As directed by the Physician.

REFERENCES :

1. Joel E. Dimsdale. M.D., Francis J. Keefe Ph.D., Mussay B. Stein M.D. "Stress and Psychiatry", "Comprehensive test book of Psychiatry By Kaplan & Sadock's", 2000.
2. Stuart. J. Eisendrath. M.D., Jonthan E. Lichtmacher M.D., "Stress and Adjustment disorders", "Current medical diagnosis and treatment. 2004".
3. Trevor Powell, Afbps C. Psychol, "Free yourself from harmful Stress", 1997.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Concept of Hyperglycaemia and its Management through Ayurveda

* Dr. Shailesh Jain ** Dr. Mani Kumar ***Dr. Dr. O.P. Gupta

Madhumeha is one among the 20 types of prahmeha as described in all Ayurvedic classics. According to Charak (Ch.Chik.7) it is a metabolic disorder reflecting in abnormality of urine. Such person passes urine in large quantity-sweet, slightly turbid and pale in colour like Diabetes Mellitus.

According to Allopathic system of medicine it is metabolic disorder characterised by hyperglycemia due to absolute or relative deficiency of Insulin. Diabetes mellitus has prime symptoms like – polyphasia (excessive appetite), polyurea, (excessive urination), polydipsia (excessive thirst) along with or without its complications like Diabetic retinopathy, Diabetic neuropathy and Diabetic nephropathy.

With all these clues and symptoms we can submerge Diabetes mellitus in prameha which has been described in Ayurvedic classics.

Prevalence :- According to recent estimates the prevalence of diabetes mellitus in adult was around 4% world wide and it is projected that the prevalence of disease will be 5.4% in year 2025. So more than 300 million people will be affected to this syndrome. Of this close to 77% of global burden of disease is projected to occur in developing countries.

In Asia an estimated 30 million persons in the south East Asia region are affected at present — It is also estimated that in 2025 there will be nearly 80 million diabetics in the region the highest among all WHO regions.

**In Indian region**

WHO estimates that there were 19.4 million persons with diabetics in 1995, and this number is likely to be 57.2 million in 2025. This estimated number is 3 times more within 30 years and it is also estimated that not only urban (9-15%) dwellers but rural 3-4% population will be affected. So, India will be worst victim.

**Clinical classification of diabetes mellitus (modern medicinal science) Diabetes mellitus**

| Primary | Secondary |
|---|---|
| Type - I (Insulin dependent diabetes mellitus) | a. Pancreatic pathology (e.g. Pancreatitis, Cystic fibrosis) |
| Type - II a. (non Insulin dependent diabetes mellitus) | b. Excess endogenous production of hormone autagouists to insulin. (e.g. Acromegaly, Cushing's syndrome) |
| b. Maturity onset diabetes of the young (mody syndrome) | c. Medication with (eg. Corticosteroids, Thlazid diuretics, Phenytoin etc.) |
| | d. Liver diseases |
| | e. Associated with Genetic syndromes (eg. Turner's syndrome, Muscular dystrophies). |

## Etiological factor and Pathogenesis.

Etiological factors described in Ayurvedic classics for the pathogenesis of prameha and medovaha srotodusti are as

**आस्यासुखं स्वप्नसुखम दधीनि ग्राम्यौदकानूरसाः पयांसि ।**
**नवान्नपानं गुडवैकृतं च प्रमेहहेतुः कफकच्च सर्वम ॥**

(च०चि० 6/4)

Idle sitting, oversleep, excessive use of curd, meat soup of the domestic aquatic and marshy animals and milk, new cereals and drinks, products of jaggery and all other kapha promoting regimens are etiological factors for prameha.

Charaka has described in his Nidana Sthana 4/50 sloka as

**गृह्णभ्यवहायेषु स्नान चङ्क्रमणद्विषम् ।**
**प्रमेहः क्षिप्रमभ्येति नीडद्रमामिवाण्डजः ॥**

Prameha approaches immediately like bird to its nest tree the person who is greedy in eatables and has dislike for bath and walking.

**अव्यायामादिवास्वप्नान्यमेध्यानां चातिभक्षणात् ।**

*/** P.G. Scholar, Department of Kayachikitsa *** Prof. & Head., Kayachikitsa P.G. Section
Govt. Ayurvedic College, Jalukbari, Guwahati - 14 Assam

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मेदोवाहिनी दुष्यन्ति वारुण्याअतिसेवनात ॥

(च०चि०)

Medovaha srotas are affected due to lack of physical exercise. day sleep. excessive intake of food and alcoholic drinks.

Pathogenesis of prameha

↓

Atiguru snigha Aahar vihar

↓

Kapha ↑

↓

Mandagni ——→ Medovahaguidosha

↓ ↓

Ama ↓

↓ ↓

Margavrana Margavrana

↓ ↓

Vata ↑ Vata ↑

↓

Bastimulcha sthana sanchya

↓

Madhumeha

Ethological factor and pathogenesis

According to modern medical science following is the risk factor for developing diabetes mellitus.

Being overweight and age (middle age group).
Being a member of high risk group (Aboriginal peoples, Hispanic, Indian, Chinese, Africans).
Having a parent, brother or sister with diabetes.
Having given birth to a body over 4 kg at birth.
Having high blood cholesterol/blood sugar level.
Having high blood pressure or heart diseases.
Constant strain.

However, there are good evidences to suggest that heredity has a strong influence in the pathogenesis of non-insulin dependent diabetes mellitus and environmental factor's particularly viral infection have the major role in causation of insulin dependent diabetes mellitus.

Prevention and management of Madhumeha

In this modern era if we discuss the solution of this massive problem, especially for Indians the modern medicine has no curative treatment along with no bar on its secondary complications. At extreme stage of this diseases the modern medicine has drugs and answer of this question as only Insulin having lots of side effects. So it's Ayurvedic people's duty to find out a relative solution of this disease not only by means of medicine only but also by preventive aspects like our life style and by our rasayan therapy mentioned in Ayurveda.

(a) By abiding proper hygiene.

According to Ayurvedic Prameha is the disease of Medovaha srota dusti. Prameha approaches immediately to the person who is greedy to eatables and has dislike for bath and walking. But here bath means not like now a days just go to attached bathroom. Here bath means to clean all direct or indirect sroatas of malas and to keep proper hygiene of our body. (Ch. Ni. 4/50)

From above predisposing etiological factors and pathogenesis we can remove or prevent the disease in premature age. Ayurveda regime can give a better expectation of life from diabetes mellitus in those who are prone to have Diabetes Mellitus in premature age.

(b) By avoiding highly sedentary habits.

Now a days sedentary habits are compulsion for some group of citizen like computer people and shopkeeper etc. By being regular walking and mild exeresise these types of people can prevent diabetes mellitus in premature age.

Meal plan -

Now a days not only Anup mansa rasa. curd at night is not the only victim but modern food of this era having lots of preservative and tin



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


or gem foods usually vitiate Kapha Dosha of body.

(d) Preventing aspects through Rasayan therapy -

This is a special branch of Ayurveda which prevents aging and gives longevity and strength. So it can also play prevention in madhumeha as anti oxidants.

There is lot of Dravybhuta Rasayana mentioned in our classics specially triphala rasayan. Its regular or gap use can help in prevention of madhumeha who have risk of madhumeha (Ch. Chik. 6/40)

Bhallatak rasayan (Ch. C 1-3/19) is the best for Kapha and obstructive condition. According to Charak there is no disorder of kapha and obstructive condition which is not ameliorated by bhallatak quickly. Moreover it promotes intellect and viqour. Both Charak and Sushrut stated a lot about daru haldi and haldi for the treatment of diabetes mellitus. So we can use these in preventive aspects.

By the help of yoga : we can reduce stress level by regular yoga like sawasana, mayuraswana, bhujangaaswana etc.

Management through selected drugs

In our classics more than thousand of drugs are mentioned as pramehaghna drugs, in which some are cheap (low price but effective) and some are very costly.

As we know India is a vast country and the people of India are not only different in their race but also vary in their economic status, so we can classify Indian society into three categories.

I group below poverty line (B.P.L.)

a)

i) Amla 1 part (I-V described in most of Ayurvedic Classics)

ii) Giloy ½ part

iii) Haldi ¼ part

iv) Methi 1/8 part

v) Chiraita 1/16 part

b) Indravati 125 mg twice daily (ref. B. Ratnav

II group (medium class)

i) Chandra Prabhavati 250 mg (ref. Ratnavali)

ii) Madhu mehantak vati 250 mg (re Rastantra sar)

iii) Arogyavardhani vati 250 mg (ref. RRS) Anupan triphala kwath 40 m

III group upper class (Economically)

a)

i) Basanta kusumakar ras 60-120 mi B. Ratnavali)

ii) Sheelajeetvadi Lauha 125-250 mg A.S.S.)

iii) Sukramatrika vati 250 mg (ref. Ratnavali) Along with anupan Karela swa

b) Triphala Guggulu 500 mg with methi pani

Pathya and Apathya

Avoid withholding of urges, smok sedentary life style, day sleep, consumption dadhi, meat of anup desha, food prepared with n creals and lentils as well as flours, excess swe and sour and salty substances, Restrict hea fried and oily foods.

Atikapha diet should be given pro fasting, use of purificatory procedures, herbs will increase agni, kulatha, old rice and wheat, ye patola, lashuna, shigru, triphala, guduchi leav kapitha, jambu, haridra are all useful. Bitters curuma, bitter gourd should be used in plenty.

Conclusion

1. Through this classification on econo modalites Ayurvedic treatment will be m applicable in poor and densely populated p like India.
2. Preventive aspect through Ayurveda lifes and rasayan therapy has broad viability thro which its class of peoples should be bene



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# AYURVEDIC TREATMENT FOR MENORRHAGIA

*Dr. K. Sudha Rani, M.D. (Ay.)

In Ayurvedic classics the disease menorrhagia is compared as 'Asrugdara'. The disease Asrugdara is a common gyneacological problem seen during the age of reproductive period i.e. from menarche to menopause. "Excessive or prolonged blood loss during menstruation or even scanty blood loss during intermenstrual period is the main clinical feature of Asrugdara which correlates to "Menorrhagia".

In the Modern system of medicine there is no definite solution for the above disorder. Temporary control can be obtained with haemostatic drugs, which are known for their side effects on other vital system of the body.

The disorders of menstruation should be given special consideration in the filed of medicine because right from the menarche to menopause. stree is susceptible to varying types of disorders pertaining to her sexual life. which may disturb the very objective of reproductive age. Such female not only loses her opportunity to get a child but also suffers from many a problem both physical and social.

In Ayurvedic classics most of the menstrual disorders have been described under the heading of 'Artava dushti and Asrugdara'

Definition :

"Rajah pradeeryate yasmat prodarastena smrulaha"

Due to pradeerana of raja it is named as pradara & there is deerana of asrik hence it is known as Asrugdara.

Nidana :

Charaka says that the woman who consumes the subject of excessive salt, soar, heavy katu, vidahi and unctuous nature, meat of fatty domestic and unctuous nature, meat of fatty domestic and acquatic animals, kshara, payasa, dadhi, sukta, wine, get aggravated vayu with holding the rakta vitiated to above causes and increases blood. Because of increase in the amount of blood, excess blood discharged, hence it is known as pradara.

Classification :

"Chaturvidham vyasatastu
vatadyaihi sannipatataha"

Asrugdara is classified under four groups.

1. Vataja
2. Pittaja
3. Kaphaja
4. Sannipataja

CLINICAL FEATURES:

Charaka defines the reason as the presence of excessive bleeding during menstruation. While Susruta says that same menstruation comes in excess amount, for prolonged period or even without normal period of menstruation and different from the features of normal menstrual blood.

Vataja Asrugdara :

The discharged blood is frothy thin rough. blackish or reddish, and comes with or without pain. And it is compared as pelvic congestation syndrome.

Pittaja asrugdara :

In this the menstrual blood is blue, yellow or blackish colour, hot, and comes in profuse amount with pain. In associated with burning sensation, redness, thirst, mental confusion, fever and giddiness. In Modern classics it is compared as menometrorrahagia.

Kaphaja asrigdara :

The menstrual blood is slimy. pale, heavy. unctuous. cold, mixed with mucus and thick and is discharged with mild pain. Other symptoms are vomiting anorexia, nausea, dyspnoea and cough are also present. It is compared as chronic endometritis.

Sannipataja asrigdara :

Foul smelling slimy and yellow discharge along with this of also discharges with force the vasa and meda. And associated with burning sensation thirst, fever, anaemia and weakness.

* Prasuti & Stree Roga, Hyderabad

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


Sadhyasadhyata

Sannipataja variety is incurable.

Complications :

Weakness or giddiness, mental confusion eeling of darkness, dyspnoea, thirst burning, ensation, deuterium, anaemia, drowsiness and onvulsions.

Treatment :

Charaka says that the Pushyanuga churna is the best treatment for asrugdara. It has 28 drugs. They should be collected in Pushya masa and pushyami nakshatra and powdered well and administered with honey and rice water. It also cures sweta varna, neelavarna and peeta varna sravas.

Choorna preparation :

Powders of srungataka, laja, musta, kharjura, padmakesara mixed with honey.

2. In case of clotted bleeding, powdered faeces of pigeon with honey.
3. Powders of useera, kaleeyam, lodhra, padmaka, Priyangu and red ochre in equal quantity and powder of chandana equal to all, these together mixed with sugar and rice water.
4. Powders or ativisha bark and fruit of Kutaja and Rasayana mixed with honey and rice water.
5. Powders of darvee, kiratatika, musta and dushparsa.
6. Powder and paste of chandana with honey and sugar with (or) without rice water.
7. Powdered madhuka, sugar, lodhra and sariva mixed with honey to be taken with goat milk.
8. Powdered draksha, sugar with honey followed by cold water.
9. Powdered seeds of karanja with honey and ghruta.
10. Powdered pathya and kamalakesara with hondy.
11. Powdered lodhra and chandana followed by rice water.

II. Ksheera prayoga

1. Goat milk is excellent remedy.
2. Cow milk cooked with five times water and mixed with honey and sugar.

III. Kalka prayoga

1. Paste of yawasa and root of bhrungaraja mixed with juice of cow dung and rice water.
2. Use of paste of priyangu with honey and rice water.
3. Paste of phalinee with honey.
4. Paste of tender leaves of durva or vata with honey.
5. Paste of madhuka with honey.

iv. Rasa preparation :

1. Mahamehantaka rasa - It should be given with guduchi satva and mahadrakshadi churna with equal parts.
2. Mahavangeswaram : Along with satavaree swarasa.
3. Mahavanga rajeeyam : Along with salmali choornam or laksha choorna with ghruta and sarkara. Avoid amla and lavana rasa.
4. Laghu mehantak ras: With salmali churna and babbularishta.
5. Suvarna malinee vasantharas : with pippali churna.
6. Suvarna sindhoora bhushan ras with guduchi satva and yashlimadhu kwatha.
7. Swarna vanga with salmalee choorna, ghruta and sarkara.
8. Trivangabhasma with butter and sugar after giving the babbularishta.
9. Muktabhasma with Vaasarishta.
10. Rajithabhasma: With Vanga bhasma and milk.
11. Vanga bhasma : With Mahadrakshadi choorna, sarkara and kushmandalehya.
12. Pradararipuras : Use of these tablets with honey cures very severe pradara.
13. Bolaparpati : Use of this parpati cures all disorders of blood.

## V. Ghruta preparations :

1. Mudgadya ghruta
2. Salmali ghruta
3. Seeta kalyana ghruta
4. Satavaree ghruta
5. Tikta kalyana ghruta
6. Ghruta medicated with paste and decoction of satavaree.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# Management of Gridhrasi Roga (Sciatica)

* Dr. Vinod Kumar Singh, M.D. (Ay.) Kayachikitsa **Dr. B.N. Singh

Sciatica is the term used for neuralgia & neuritis of sciatic nerve. In this condition the pain radiating along the distribution of the sciatic nerve is referred as sciatica.

In fact. it is benign syndrome characterised by pain starting from lumbosacral region (low back) and spreading down on the posterior aspect of lower limb to the toe. These disorders on the basis of their symptoms exist parallel to Gridhrasi Roga described in the ancient Ayurvedic classics. Gridhrasi term derived by sense of nature of pain as severe pain occurs in Gridhrasi Roga.

'गृध्यति मांसमऽभिकाङ्क्षति सततं इति ।

(शब्दकल्पद्रुम)

According to references available in Ayurvedic literature the Gridhrasi defined as nadi which having close relation to muscular tissues (mans. sira. snayu. kandara etc.) when get vitiated develop severe panic disorder as vulture snatched the muscular tissue of its prey.

CAUSES :-

The disease develops due to all vata vitiating factors related to diet & doing both as :-

- *Ruksh* & *sheet Ahar* – due to excessive intake of coarse & cold food/drinks.
- *Alpa Ahar* – Little quantity of food – inadequate diet.
- *Katu, Tikta* & *Kashaya Ras Ahar* – The diet rich in different vata aggravating taste.
- *Agnimandya* – Low digestive fire leads to incomplete digestion.
- *Upavas* – starvation.
- *Atimaithum* – excessive sexual indulgence.
- *Vegavidharan* – Bearing unwanted urges.
- *Atishram* – Excessive labor.
- *Aghata* – Trauma of vital spots
- *Ritu* – Rainy and cold season.

All are causative factors for vitiation of vata dosa as well as help full in generation of diseases, in form of disc prolapse, narrowing of IV space, Sacroilitis etc.

- *Dhatu-kshaya* - Loss of nutrient parts of body – as osteo-arthosis of lumbo-sacral spine.

CLINICAL FEATURES :-

According to concept of Ayurveda the symptoms appear in Gridhrasi based on involvement of Doshas and Anubandh Doshas. On behalf of contribution of Doshas in developmer of disorder is classified in two groups -

(1) Vataj Gridhrasi
(2) Vat-Kaphaj Gridhrasi

In vataj type Gridhrasi, the symptom existing more promptly are -

(i) Ruja - Pain (If may dull diffuse c may severe localised)
(ii) Stambh (Stiffness)
(iii) Toda (Pricking sensation)
(iv) Spandan (Twitching pain in limbs)

All these symptoms affect the glutea region, low back region, thigh knee & lower part c limbs gradually.

स्फिक्पूर्वा कटिपृष्ठोरूजानु जंघा पदं क्रमात् ।
गृध्रसी स्तम्भरूतोदैर्गृह्णति स्पन्दते मुहुः ॥

(चरचि० - 28

Involvement of different parts of lower limb from upper to lower aspect indicates the conductiv nature of disease.

There are other symptoms also describe under vataj group of gridhrasi in other Ayurvedi classics – as

(v) Sakthankshepmingrhyat (stepping defect c difficulty in locomotion).
(vi) Sphuran (Tingling sensation)
(vii) Deh-Pravakrata- (Scoliotic postura deformity)

In case of Vata Kaphaj type of Gridhras there are all these syptoms that occur along wit some Agnimandyajaya Lakshan like —

(viii) Tandra (Letharginess)
(ix) Gaurava (Heaviness feeling in body)
(x) Arochaka (Anorexia)
(xi) Mukhaprashek (watering in mouth)
(xii) Bhaktodwesh (Loss of appetite)
(xiii) On clinical examination — As LSR (Straigh Leg Raising Test) — Known as lesague sig – When Flexion of thigh becomes restricte when leg kept straight at the knee then there may be chance to positive in different grade according to severity of illness and also a indicative of nerve root compression.

Generally stiffness is more prominentl involved in vata-kaphaj type of Gridhrasi.

* Lecturer ** Director, S.B.M.N. Ayurvedic College & Hospital, Asthal Bohar, Rohtak (HR)-124021

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


nvestigation :—

(i) X—Ray Lumbo-sacral region Anterior-posterior & lateral view there may be different findings in radiography.
— Osteoarthritis changes in Lumbo-sacral spine.
— Reduced inter vertebral spaces.
— Disc prolapse.
— Bilateral sacro-ilitis.

(ii) Magnetic Resonance Imaging investigation also has importance to demonstrate the site of lesion especially in complicated cases.

MANAGEMENT :

The whole management may categorise into 4 aspects.

(A) Sanshodhan Chikitsa — (Panchkarma therapy) – A bio-purification of body. Here may include different steps as :

(i) *Snehan* – (Oleation therapy) – It may be external & interanl both by the help of medicated oils like
– Prasarini Tail
– Mahanarayan Tail

(ii) *Swedan* – (Sudation therapy) :- It may be Akang or sarvang on the basis of involvement of parts of body & legs by the procedure of nadi & Kutl Sweda used in Vashpa Sweda.

(iii) *Vasti Karma* – It our Ayurvedic classics there are use of Anuvasan Vasti in this disorder advocated by great Ayurvedic scholars.

There should be application of Anuvasan Vasti alone and also alternation of Niruha vasti. It depends upon condition of digestive fire. It is wise decision to use Anuvasan Vati and should be in alternation with Niruha Vasti when already Agnimandya state exists in diseased patients.

(B) Sanshman Chikitsa :- There are different preparations available as .-

— *Churna (Powder):-* Ajamodadi Churn, Ashwagandha Churn, Vaishwanar Churn & Tambuladi Churn in their 3-6 grams of dose with warm water minimum twice daily.
— Use of Rashon *Bhasm* in 500 mg. of dose twice daily is helpful to prevent the progressive osteo-arthritic changes in Lumbo-sacral spine alone or along with any combination of drugs.
— *Ras - aushadhi* – There are number of Vata-shamak preparations available as –
— Vatagajankush Ras
— Vat Vidhvansan Ras
— Akangveer Ras

All should be used in dose of 125 mg to 250 mg. twice daily. Some *Kupipakva Rasayanas* are also helpful to cure the disease e.g.
Sameer Pannag Ras
Ras Sindhur
Malla sindur
All used in 60 to 125 mg. twice daily.

— Some decoctions are useful separately or in form of Anupan as
Maharasnadi kwath
Dashmool Kwath
Harshringar patra kwath in dose of 50-80 ml twice daily in luke warm condition.
— *Guggul / Vati* — use of guggul, subside the mild to moderate pain
— Tryodashang guggul
— Rasna guggul
— Abhadi guggul
— Lakshadi guggul

All guggul used in dose of 2-4 Tab two to three times per day along with other medicine with warm water.
Vishmushti Vatl
Vishtinduk Vati

Also used for improving mechanical pathology of nerve root compression but only in patients who have no history of hypertension. Ashwagandharishta & Balarista are also helpful in some extent to cure the disease.

(C) Yogic Chikitsa :- Some *Asanas* are very helpful to improving strength of muscles having relation to lumbo-sacral spine as -
— Naukasana
— Bhujangasan
— Shalabhasan

***(D) Pathyapathya*** :- Curd, Rice, gram, pea, cold water & drinks along with forward bending and bearing heavy weight shold be avoided by patient.

There are use of hard bed without pillow & lumber belt helps in the stasis of progression of symptoms.


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# AN ETIOPATHOLOGICAL AND THERAPEUTIC STUDY ON STHULA PRAMEHI W.S.R. TO NIDDM

* Prof. Loknath Sharma **Dr. Vivek Agarwal

## INTRODUCTION

Ayurveda, the ancient science of medical faculties is one of the oldest & scientific systems of medicine on the planet. Maharshis have contributed greatly for providing social as well as personal health according to materials & methods available in ancient times. The disease Madhumeha is described in almost all available texts of Ayurveda under the title Prameha/ Madhumeha. Diabetes mellitus, the modern term of Madhumeha, has been classified among one of the major health problems found commonly in socio-economically improved societies all over the world. Hence madhumeha is the disease spreading in civilization.

Because of the associated risk of the stroke, coronary artery diseases and renal failure, diabetes mellitus is fourth leading cause of death, and is on the rise, both in developed & developing countries.

Diabetes is the single most important metabolic disease that affects nearly every organ/ system in the body.

Today diabetes affects more than 135 million people worldwide and that number is expected to increase to 300 million by 2025. One out of 20 persons in new millennium will be diabetic (WHO Report- 14.03.2001).

In India it is estimated that this disease affects presently 22 millions (2%) individuals, which is likely to go up to 57.2 million by the year 2025. India has been projected by the WHO as the country with the fastest growing population of diabetics. The prevalence of diabetes among urban Indians 1990, 1995, 2000 were 8.2%, 11.6% & 14.7% respectively. The prevalence in rural populations has remained static at 2.4% since 1990. The urban prevalence is between 4-6 times of rueal population throughout the country, because urban have more sedentary lifestyle, nutritious & fast foods habit. About 90-95% of all diagnosed cases of diabetes are type-2 (occurs in people over age 40 years). Hence, India has achieved an unwanted milestone of diabetic capital of the world. WHO & International Diabetes Federation have predicted an epidemic of diabetes in India by the year 2025 (Source - Delhi diabetic forum 2003).

- If not managed properly, people with diabetes having more serious complications are -
- 5 times more prone to gangrene
- 30-40 times more likely to undergo major amputation.
- 25 times more likely to develop blindness.
- No. 1 cause of blindness in developing countries.
- 17 times more likely to develop kidney disease.
- 2-6 times more prone to stroke.
- 2-4 times more likely to develop myocardial infarction.
- 2-5 times more likely to develop impotence due to erectile dysfunction.

The causative factors of this disease is underactivity & sedentary lifestyle, over eating of kaphavardhaka ahar, rich nutritious & oily diet, visceral or central obesity, physical & mental strain with irregular dietary habits observed for a long time, avoidence of shodhana karma (bio-purification of vitiated doshas) & hereditary is the another cause.

The clinical symptoms such as prabhuta mutrata (polyuria), aavila mutrata (due to various dhatus), bhrisha pipasa (polydypsia), bahuashi (polyphasia), fatigue, lethargy & reduced weight are general complaint of diabetic patient.

Madhumehi are dealt in two categories viz., sthula & krisha The former is kapha predominant (hyperlipidaemic, over weight & apatarpana, samshodhan, langhana are highly essential as this is due to excessive Kaphaja pathology) while the latter is vata predominant (non-obese & this type is due to excessive dhatu kshaya, where dhatu poshan is essentially required to regenerate the normal tissues).

* Professor & Head of the Department (Roga & Vikriti Vigyana), NIA, Jaipur ** P.G. Scholar, NIA, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


There is no permanent cure available for this disease, and hence this is classified as Yapya roga (manageable disease). However, modern oral hypoglycemic drugs are not as effective in curing this dreaded disease and have side effects. Sulfonylureas are reported to give rise to allergic skin rashes and bone marrow depression along with goitrogenic effects. Chlorpropamide is associated with cholestatic jaundice, whereas biguanides produce an unpleasant bitter, metallic taste in the mouth, anorexia, nausea, abdominal discomfort, lethargy, excessive weight loss and muscular weakness. Phenformin on the other hand causes malabsorption of vitamin B12. Hence, there is an urgent need to find an alternative oral hypoglycemic drug to reduce human sufferings.

Because of the apparent danger and shortcomings of allopathic medicines, in the recent year, in the global prospective there is a shift towards the use of medicines of herbal origin. WHO has already approved the use of traditional medicines as a part of health programme. India has a rich heritage of usage of medicinal plants in Ayurvedic & Unani systems. About 40 herbal & herbo-mineral oral (non-insulin) antidiabetic drugs are well established in Indian market. Its market is estimated to be worth Rs. 540 crores, has been growing at the rate of 23% (Source-Dabur Research Foundation, Sahibabad).

Advantages of the Ayurvedic medicine can be a promising substitute for modern oral hypoglycemic drugs. Herbal & herbo-mineral drugs have been claimed to be less toxic & more efficacious; reduce blood glucose levels, repair damaged pancreatic cells, reduce or prevent the development of diabetic complications such as retinopathy & nephropathy, control the development of microangiopathic lesions & control other long term complications of diabetes mellitus, so it can be used for long turn management of diabetes mellitus (Joy and Bultan 1998).

**Importance of this work**

The main aim of present research work is to manage the sthula premehi person (obese diabetic); with single drug combination i.e. Mehari yoga (kalpit) because several works on obesity & diadetes mellitus have been done separat Obesity & diabetes are the complications of eac other & they have almost same aetiological facto & requires same mode of treatment. So it necessary to control the Sthula Prameha (NIDD with single drug combination therapy, whi consists of Medohara & Pramehanga drugs. Hen the study entitled as "An Etiopathological a Therapeutic study on Sthula Pramehi w s NIDDM" was undertaken with following aims a objectives.

Aims and Objectives

1. To assess the presence of various Aetiolog factors explained by Ayurveda in t diagnosed cases of Sthula Pramehi (NIDD
2. To establish a relationship of Nidan mentioned in Ayurvedic and Modern literatu
3. To assess the efficacy of "Mehari Yog (hypothetical) in the management of Sth Pramehi.
4. To analyse the pathogenesis of Prameha fr Sthaulya.

(1) Selection of Patients

Patients for therapeutic drug trial wi selected from the OPD and IPD of the Hosp National Institute of Ayurveda, Jaipur a screening them as per Ayurvedic and Mod criteria for Sthula Pramehi. Selection will be carr out according to relevant history, sign, symptom and Laboratory investigations including Body Ma Index for Sthula persons.

*(a) Inclusion Criteria*

√ Patients in the age group between 35 to years irrespective of either sex.

√ Diagnosed cases of NIDDM with BMI>25

*(b) Exclusion Criteria*

√ Patients of age less than 35 years and abo 65 years.

√ Patients of Insulin dependent diabetes mel

√ Patients taking drugs like corticosteroi tricyclic antidepressant, cycloheptadine w leads to weight gain.

*(c) Diagnostic Criteria*

All the patients were diagnosed on the ba of following criteria -

(i) Clinical Signs and Symptomatology

(ii)
(iii)
(iv)
(2)
a)
b)
(3)


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


Following symptoms were observed in patients for diagnosis –

- ☐ Chala, Sphiga, Udara and Stana
- ☐ Ayathopachaya
- ☐ Prabhoot Mootata
- ☐ Aavil Mootrata
- ☐ Pipasadhikya
- ☐ Kshudhadhikya
- ☐ Swedatipravriti
- ☐ Daurbalya
- ☐ Aalasya
- ☐ Atinidra
- ☐ Vibandh
- ☐ Malavritta Jihwa
- ☐ Kar-Paada Daha
- ☐ Mukhmadhurya
- ☐ Tandra
- ☐ Krichvyavyata
- ☐ Sandhi Shula

(ii) Raised Body Moss Index
(iii) Raised Hip & Waist Circumference
(iv) Various Investigations.
Hematological - T.L.C., D.L.C., E.S.R. Hb%.
Biochemistry - F.B.S., P.P.B.S., B.Urea, Lipid Profile, GHb%
Urine Examinations - F.U.S., P.M.U.S. Albumin, PH, sp.gravity etc.

(2) General observations

a) Demographic profile - like age, sex, socio-economic status, marital status, religion, habitat, dietary habits, nature of job & other relevant informations were worked out.

b) Physical measurement - like height, weight, body mass index, waist circumference and hip circumference.

(3) Selection of drug.

For the present study, I have selected the drug combination i.e. "Mehari Yoga (hypothetical)" with the help of taking references from the various texts. The drugs in this yoga are easily available and having the high degree of clinical effects mentioned there in against Sthula Pramehi person.

Ingredients of this drug (Mehari Yoga) are as follows-

- ☐ Aamrasthi Majja
- ☐ Jambu Seeds
- ☐ Karvellaka Fruit pulp
- ☐ Nimba Nimboli
- ☐ Bilwa Fruit pulp
- ☐ Devadaru Heartwood
- ☐ Daruharidra Heartwood
- ☐ Palandu Seeds
- ☐ Amalaki Fruit pulp

Reasoning for Selection of Drug

The main aim to select this dru combination is to control the Sthaulya an Prameha Roga with the single drug combinatio because both the Sthaulya and Prameha are th complimentary to each other and almost require the same mode of treatment, because th aetiological factors mentioned in context to th Sthaulya and Prameha are almost the same an both the diseases are considered a Santarpanjanya vyadhi in Ayurveda.

Preparation of Drug

Above mentioned all the nine ingredien are taken in equal quantity and prepared in th form of churna in the pharmacy of National Institut of Ayurveda, Jaipur.

*Drug dose*

5-5 gm. will be given twice daily.

*Vehicle of Drug*

Luke warm water will be given as Anupan The importan[illegible] given Luke warm water is tha it is kapha, medo vata, aama nasaka, agnidipan and also has role in purification of vasti. (Su.S 45/39)

Duration of Drug administration

Every patient will be given the above sai drug for the duration of one month.

Administration of Drug.

Thirty clinically diagnosed Sthula Pramel (Obese diabetics) patients were randomly divide in to three groups –

(I) Group — A

Ten Sthula Pramehi patients wer recommended allopathic medicine (Glynase-MF in the dose of one tablet twice a day with wate before 15 minutes of meal for one month as control group.

(II) Group — B



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


Ten Sthula Pramehi patients were ecommended allopathic medicine (Glynase-MF) n the dose of one tablet twice a day along with Mehari Yoga 5-5 gm. twice a day with luke warm Vater before 15 minutes of meal for one month as combined group.

(III) Group — C

Ten Sthula Pramehi patients were ecommended only Mehari Yoga 5-5 gm twice a lay with luke warm water before 15 minutes of neal for one month as only Ayurvedic medicine roup.

ollow up study

Patients were followed up after 15 days and one month.

Laboratory investigations were repeated after complete treatment.

Improvement and other effects were noted down.

Note - No side or toxic effects of 'Mehari Yoga' was reported by any individual during trial.

(4) Criteria for Assessment

After the completion of the treatment, the esults were assessed by adopting the following criteria -

√ Improvement in signs and symptoms of disease on the basis of symptoms score

√ Improvement in Laboratory Investigations (i.e reduce levels) on the basis of lab reports

√ Reduction in objective assessment parameters.

Observation & Result

In the present study, 30 known Sthula Pramehi persons (NIDDM patients) were selected from the IPD & OPD of the Hospital of National Institute of Ayurveda, Jaipur. These patients were taken in three groups of 10 each. Group – A patients were given Glynase-MF (Allopathic group) while Group–B patients received Glynase-MF with Mehari yoga (Combined group) & Group–C patients received only Mehari yoga (Ayurvedic group). The result after a one-month drug trial was noted.

The highest percentage of symptoms found in patients were Chala sphiga udara stana (CSUS), Prabhoot mootrata, Kshudhadhika (100% each), Daurbalya (96.66%), Shula, Pipasadhika Swedatipravriti (93.33% each), Kar-pada Daha & Tandra (90% each) While least percentage was of Vibandh (30%) in all the three groups of study

Showing the Comparative Improvement in percentage of Sthula Pramehi Persons in all Groups separately

| S.No. | Observation | Group A | Group B | Group C |
|---|---|---|---|---|
| 1. | Subjective Improvement | 49.69% | 59.54% | 44.39% |
| 2. | Objective Improvement | 3.492% | 7.3075% | 7.260% |
| 3. | Investigation Improvement | 17.035 | 25.93% | 18.64% |

The overall study shows comparatively better results in Group B (Allopathic + Ayurvedic) than Group A (Allopathic) and in Group C (Ayurvedic).

Discussion - on Conceptual Study

Declaration of Diabetes mellitus as an epidemic by World Health Organization indicates alarming proportions. The foremost reason for such a wide spread of diabetes mellitus is the ignorance of well-balanced life style principles by Ayurvedic texts.

The Prameha is one among the eight troublesome diseases described by Ayurveda (Su.Su. 3/45). So, it is difficult to treat with single drug therapy i.e. why a combination of drug is chosen for therapeutic study of Sthula Pramehi persons.

According to Charaka (Ch.Chi. 6/15), there are two types of diabetic persons –

1. Sthula (Obese) and Powerful
2. Krisha (Asthenic) and Weak

The Sthula Pramehi patients have more strength as compared to :

Krisha Pramehi patients, but generally



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Krisha Pramehi are preferred than Sthula Pramahi (obese), as the complications of obesity are more than that compared with disadvantages of being asthenic.

According to Sushruta (Su.Chi. 21/17), there are two types of Prameha –

1. Sahaja Prameha
2. Apathya-nimittaja Prameha

Sthula Pramehi

These patients are having the habits of over eating, taking fatty food and sedentary life style. The are the 'Apathya-nimittaja' Pramehi.

Krisha Pramehi

The person with Sahaja Prameha will be thin, weak, taking less amount of food, drinking more water and doing heavy work.

The aetiological factors mentioned in context to Sthaulya and Pramela are almost same, both the diseases are considered as Santarpanjanya vyadhi in Ayurveda i.e. the disease caused by over indulgence in madhura, snigdha, sheeta, guru, picchila ahara, meat of aquatic animals and decreased physical activities like divaswapna, avyayama etc. The genetic predisposition also has role in causing these diseases, which is very clearly mentioned by Ayurvedic texts as "Bijasvabhava".

Coming to pathogenesis of these diseases, kapha plays important role, it is aggravated first, which in turn aggravates the medodhatu, as their properties are identical. Now the aggravated or the dushit medodhatu behaves as a dosha causing atisthaulya and Prameha.

In Prameha, kapha is the predominant dosha, which is increased in amount, and its liquidity also increases, this vitiates the medodhatu first. The vitiated medodhatu further vitiates the other dhatus causing the Prameha.

Thus in Ayurvedic literature Premeha is not only mentioned as separate entity but also as sequelae of atisthaulya.

Obesity develops as the result of an excessive consumption of calories; particularly carbohydrate or the obese state itself may be related to hyperinsulinemia.

The chronic obese state, in the genetically prone individual as a predisposing factor in precipitating the diabetes, it is more likely to be the duration of obesity rather than the degree that leads to carbohydrate intolerance.

Obesity associated with carbohydrate intolerance, insulin resistance and hyperinsulinism, which are the features of NIDDM.

Discussion - on Vital Statistics

In the study, out of 30 patients it was found that the maximum no. of patients (43.33%) were in the age group 35-45 years followed by 33.33% of the patients in the age group 46-55 years and only 23.33% of the patients were in the age group 56-65 years. The reasoning for this age group is that NIDDM is the disease of elderly group.

The majority of patients (17) i.e. 56.66% were female which do not correspond to the Ayurvedic principles of females being less prone to the disease. The common life style being observed by both the sexes now a days perhaps has eliminated the sex linked Nidana.

The majority of patients were Hindus (60%) while 23.33% patients of Muslim religion and rest of patients were Sikh (3.33%) and Sindhi (13.33%) religion. This is probably due to the reason that the hospital where patients were selected is situated in mixed religion area.

93.33% of the patients were married only (6.66%) were widowed. It was observed that NIDDM (mostly obese) was very common after marriage because females gain more weight due to hormonal changes after marriage.

The educational status of majority of the patients was primary school educated (56.66%); this could be due to the population center having lower literacy rate while 20% of the patients were graduated more over, the ones who were educated were involved in more of mental strain and lesser physical work. This could be a reason for onset of the disease.

The incidence of Sthula Pramehi (NIDDM) is maximum in house wives (46.66%), this suggests that NIDDM is more common in house wives; it is probably due to their satisfactory married life.

The majority of patients were in the MIG



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


group (46.66%) and 30% patients belonged to HIG group. That suggests NIDDM (Sthula Pramehi) is more common in Upper-Middle class because of their sedentary and comfortable life style.

53.33% of the patients having treatment history of Oral hypoglycemic agents (OHA) while 20% of patients having Nil treatment history and rest of patients having Ayurvedic (13.33%) but 13.33% patients have treatment history of both i.e. OHA plus Ayurvedic. This suggests that maximum patients in starting phase of disease takes allopathic treatment i.e. why this disease later on becomes more difficult to treat.

The majortiy of patients ( 19) having family of diabetes i.e. 63.33%. That confirms that NIDDM (Sthula Pramehi) patients having family history. Chronicity in 30 patients study in present work shows that patients having 3-5 years and above 5 years i.e. 30% each group while rest of having chronicity of 1-3 years (23.33%) and 0-1 (16.66%). It suggests that Diabetes mellitus is the chronic disorder.

60% of the patients were habituated to vegetarian diet while 40% of the patients were consumed mixed diet i.e. vegetarian & non-vegetarian both. Most of patients taking atinidana sevana (which is mentioned in review of nidana) due to this, they have got this disease predominantly.

When we discuss Agni and Kostha, we saw that those having constipation were usually having loss of appetite or irregular timing of appetite. Majority of patients had Teekshnagni (46.66%) while 23.33% and 20% had Vishmagni and Mandagni respectively. The prevalence of Vishmagni and Mandagni indicates Ama production & due to Teekshnagni in obese diabetic patients leading to more hunger and consumed more food that leads to obesity.

Only 20% patients had normal sleep, Madhumeha, being vata vyadhi the sleep was disturbed in 33.33% (Alpa & Anidra) of the patients. Maximum 46.66% patients had excessive sleep. This could be due to kaphaja nidana sevana.

The majority of patients were vata pittaja and vata kaphaja Sharirika i.e. 36.66% in each group while the rest of patients were of kapha pitta Prakriti (26.66%) This suggests that Madhumeha is vata dosha pradhana vyadhi. Mansika Prakriti majority of patients was Rajas tamas (53.33%) and Satva rajas (46.66%). This predominance of Rajas Prakriti shows today's society and life style.

The present research work shows maximum patients were of Meda sara (46.66%) followed by 26.66% of Mamsa sara This suggests that Sthula Pramehi persons (NIDDM) have predominance of dushya like Meha and Mamsa.

70% patients were of Sthula Samhanana (look wise) and rest of 30% was of Madhyama Samhanana. This suggests that NIDDM patients are mostly Sthula (Obese).

Out of 30 patients, 50% were of Madhyama Satva followed by 36.66% Avara and 13.33% Pravara Satva. This shows that diabetic patients loose patience early than others, because of predominance of avara & madhyama Satva.

While assessing the Vyayama Shakti of patients; it observed that all patients had same percentage (33.33%) in each of Madhyama, Avara & Avyayami group of vyayama Shakti. Overall assessment suggests that lack of exercise i.e. decreased physical activity leads to NIDDM.

According to Abhyavaharana and Jarana Shakti, the majority of patients showed Madhyama Abhyavaharana Shakti (50%) followed by Madhyama Jarana Shakti (50%). Mostly in obese diabetic patient Abhyavaharana Shakti increases and Jarana Shakti becomes less due to Ama formation occurs that will lead to dhatwagnimandya and proceeds towards NIDDM.

In the present study, it was observed that the highest percentage of causative factors taken by the patients were Aasyasukh (90%). Aalasya (86.66%), Milk preparation (83.33%), Ati madhura sevana (73.33%), Ati madhura (66.66%) Avyayama (66.66%) where as the lowest percentage was of Amla (20%) & Lavana (26.66%) sevana. This shows that excess of taking milk preparation; Dadhi, Aasyasukh and lack of exercise are the main factors that lead to manifestation of Sthula Prameha, because most of the ahara a


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


vihara are kapha vardhaka.

The majority of patients having Kar-pada Daha (93.33%), Tandra (90%), Asyamadhura (80%) and Mukh kantha talu shosha (76.66%) as a purvaroopa. This study showed that most of the purvaroopa converts in to Roopa. which means the purvaroopa, are the beginning of disease.

Discussion - on Subsidence of Symptoms

The highest percentage of symptoms found in patients were Chala sphiga udara stana (SUS), Prabhoot mootrata, Kshudhadhikya (100% each), Daurbalya (96.66%), Shula, Pipasadhika, Swedatipravriti (93.33% each), Kar-pada Daha & Tandra (90% each) While least percentage was of Vibandh (30%) in all the three group of study.

Group - A shows maximum percentage improvement in Daurbalya (68.18%), Pipasadhika (61.90%), Malavritta Jihwa (61.53%) Kshudhadhikya (61.11%) & Mukhmadhurya (58.33%) while minimum percentage of improvement in Krichvyavayata (13.33%), but over all study shows symptomatic improvement in Group A was 49.69%.

Group - B shows maximum percentage improvement in Daurbalya (82.60%), Aavil Mootrata (80%), Kar-pada Daha (79.16%), Malavritta Jihwa (72.72%), Kshudhadhikya (68.42%) & Pipasadhikya (62.50%), Ayathopachaya (62.50%) while minimum percentage of improvement in Krichvyavayata (37.50%) & Vibandh (25%) but over all study shows symptomatic improvement in Group B was 59.54%.

Group - C shows maximum percentage improvement in Daurbalya (62.50%), Kar-pada Daha (58.82%), Malavritta Jihwa (54.54%) & Kshudhadhikya (56.25%), while minimum percentage of improvement in Krichvyavayata (16.66%) but over all study shows symptomatic improvement in Group C was 44.39%.

Over all results on the basis of improvement percentage showed that group - B has better therapeutic effect than group - A & C. This suggests that Mehari Yoga shows better results with allopathic medicine on the Symptomatic Parameters

Thus, it showed that group B with Symptomatic improvement (59.54%) & Laboratory improvement (25.93%) had better results in comparison to group A with Symptomatic improvement (49.69%) & Laboratory improvement (17.03%) and group C with Symptomatic improvement (44.39%) & Laboratory improvement (18.64%).

CONCLUSION

Following Conclusions can be drawn from current research project —

1. The present research work showed that Sthula Pramehi (NIDDM) is more common in uppermiddle class because of their sedentary and comfortable life style
2. Sthaulya & Prameha both are dusit medoja vyadhi in which medodhatu acts as an aetiological factor. Sthaulya (Medoroga) is a Nanatamaja kapha vyadhi and Prameha is predominant kaphaj, their pathogenesis is almost same. Prameha, Prameha pidika are considered as complications of the Medoroga. which explain their interrelationship.
3. 'Mehari Yoga' (hypothetical) was very effective in reducing physical examination parameters (Weight, BMI, Waist and Hip circumference) & blood sugar levels both.
4. All the patients tolerated medicines very well and no side effects or toxicity effects of any these drugs were reported by any of patients. suggesting there by that the drugs selected for the current clinical trial are absolutely safe for internal use by the patients.
5. Patients who were dependent on Ayurvedic drugs had better improvement than those on Allopathic meidicines.
6. Group B (Glynase MF + Mehari Yoga) showed better results of improvement than Group A (Glynase MF only) and Group C (Mehari Yoga only) on clinical parameters.
7. No. Complications was noted in any group.

***Thus Mehari Yoga (hypothetical) when used separately or with OHA is good remedy for the Management of Sthula Pramehi (NIDDM).***



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



1. प्र०:- विधि भेद से ज्वर के प्रकार हैं -
(a) प्राकृत्त-वैकृत्त (b) बर्हिवेग-अन्तर्वेग
(c) देह-मानस (d) सौम्य-आग्नेय

2. प्र०:- मेदोवह स्रोतोदुष्टि का लक्षण है ।
(a) स्वेदातिप्रवृत्ति (b) प्रमेह
(c) दोनों (d) कोई नहीं

3. प्र०:- अशस्त्रकृत व्याधि हैं ।
(a) उत्संगिनी (b) बहलकदर्म
(c) लगण (d) अर्जुन

4. प्र०:- सुश्रुत ने कफज लिंगनाश में शस्त्रकर्मोपरान्त कितने-कितने दिन पर पट्टी बदलनें का निर्देश किया है -
(a) त्र्यहाद-त्र्यहाद (b) पंचदश-पंचदश
(c) द्वादश-द्वादश (d) मासात

5. प्र०:- वातिक असाध्य नेत्ररोगों की संख्या है -
(a) 4 (b) 27 (c) 15 (d) 8

6. प्र०:- शुक्लमण्डल में कितने पैत्तिक रोग होते हैं ।
(a) 4 (b) 3 (c) 2 (d) 1

7. प्र०:- स्तनरोहित मर्म है -
(a) रूजाकर (b) सद्य:प्राणहर
(c) कालान्तर प्राणहर (d) वैकल्यकर

8. प्र०:- उर्ध्वजत्रुगत मर्मो की संख्या होती है -
(a) 37 (b) 32 (c) 45 (d) 28

9. प्र०:- आर्त्तववह स्रोतोदुष्टि का लक्षण है -
(a) आर्त्तवनाश (b) मैथुन सहिष्णुता
(c) बंध्यत्व (d) सभी

10. प्र०:- गर्भ की वृद्धि में कारण होता है -
(a) अन्नरस (b) अग्नि
(c) वायु का आध्मान (d) सभी

11. Q.:- Hegar's sign is -
(a) Soffness of Isthmus
(b) Emptiness of isthmus
(c) Both
(d) Softness of cervix

12. प्र०:- संधिशूल किस मार्गगत व्याधि है -
(a) ब्राह्या (b) मध्यम
(c) आभ्यान्तर (d) शाखागत

13. प्र०:- व्यध्य व्याधि है -
(a) वातविपर्यय (b) अन्यतोवात
(c) वातहतवर्त्म (d) सभी

14. प्र०:- "पिष्टुशुक्लोबिन्दुर्योभवति...." लक्षण है -
(a) पोथकी (b) पिष्टक
(c) शुक्तिका (d) लगण

15. प्र०:- उपपक्ष्ममाला है -
(a) पोथकी (b) पक्ष्मकोप
(c) लगण (d) उत्संगिनी

16. प्र०:- प्रलेपक ज्वर में दोषों का अधिष्ठान होता है
(a) आमाशय (b) संधियाँ
(c) उर: (d) त्वचा

17. प्र०:- सुश्रुतानुसार अनबबद्ध शल्यनिर्हरण के उ
हैं-
(a) 10 (b) 12 (c) 15 (d) 1

18. प्र०:- "स्तब्धपूर्णकोष्ठता" लक्षण है -
(a) संचय (b) प्रकोप
(c) प्रसर (d) स्थानसंश्रयावस्

19. प्र०:- किस आचार्य ने प्रथमत: आशुकारीगुण
वर्णन किया है ।
(a) चरक (b) सुश्रुत
(c) नागार्जुन (d) वाग्भट

20. प्र०:- श्वास की क्रिया को प्रभावित करने वाला
स्रोतस हैं -
(a) प्राणवह (b) उदकवह
(c) अन्नवह (d) सभी

21. प्र०:- स्वेदवह स्रोतोदुष्टि में चिकित्सा करते हैं
(a) तृष्णा की (b) ज्वर की
(c) अतिसार की (d) आम की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



22. प्र०:- माधवकर के अनुसार अजीर्ण के भेद हैं -
(a) 4 (b) 6 (c) 3 (d) 8

23. प्र०:- गर्भ के स्थापन से पूर्व उसका पोषण होता है -
(a) केदारी कुल्या न्याय से
(b) उपस्नेह व उपस्वेद से
(c) खले कपोत न्याय से
(d) कोई नहीं ।

24. प्र०:- नैष्ठिकी चिकित्सा का वर्णन चरक में मिलता है ।-
(a) सूत्रस्थान में (b) शारीरस्थान में
(c) चिकित्सास्थान में (d) निदानस्थान में

25. प्र०:- कार्य द्रव्य की निर्मित हेतु आवश्यक है -
(a) दिशा (b) मन
(c) आत्मा (d) पंचमहाभूत

26. प्र०:- चरकानुसार व्रणस्राव होते हैं -
(a) 10 (b) 14 (c) 16 (d) 8

27. प्र०:- "व्रणोति यस्मात दृढ़ोऽपि.....न नश्यति" ।
(a) चिपिटिका (b) व्रण
(c) व्रणवस्तु (d) व्रणशोफ

28. प्र०:- आगन्तुज व्रण के प्रकार हैं -
(a) 3 (b) 5 (c) 6 (d) 8

29. प्र०:- "त्रिर्भिदौषैरनाक्रान्तः श्यावौष्ठः पिडकीसम..." लक्षण है ।
(a) शुद्ध व्रण का (b) अशुद्ध व्रण का
(c) रूह्यवर्ण का (d) कपोत वर्ण का

30. प्र०:- मैथुन की सामान्य स्थिति है -
(a) उत्तान (b) न्युवज
(c) वामपार्श्व (d) दक्षिणपार्श्व

31. Q.:- Reason of ectopic pregnancy is -
(a) Salpingitis (b) IUCD
(c) Both (d) None

32. प्र०:- पुरीषज कृमि का आश्रय स्थल है -
(a) आमाशय (b) पक्वाशय
(c) गुदा (d) पच्यमानाशय

33. प्र०:- दशेमानि में कितने-कितने द्रव्य होते हैं -
(a) 1/10 (b) 10 (c) 100 (d) 50

34. प्र०:- तिक्त रस का भौतिक संगठन हैं -
(a) वायु+आकाश (b) अग्नि+वायु
(c) वायु+जल (d) पृथिवी+जल

35. प्र०:- उष्णतीक्ष्ण औषध किस ऋतु में ग्रहण करना चाहिए -
(a) शरद (b) वसन्त
(c) शिशिर (d) वर्षा

36. Q.:- Within 24 hours of birth, what will be the commonest cause of Jaundice in neonate -
(a) Rh incompatability
(b) Extra hepatic billiary Atresia
(c) Septicaemia
(d) None

37. Q.:- In a severe Asphyxiated baby APGAR score will be
(a) 0-3 (b) 2-5 (c) 5-8 (d) 6-8

38. प्र०:- "नाड़ी प्रशाखा" किस त्वचा में मिलती है
(a) श्वेता (b) ताम्रा
(c) वेदिनी (d) रोहिणी

39. प्र०:- "त्रिफला" किस प्रकार का संयोग है -
(a) एककर्मज (b) उभयकर्मज
(c) सर्वकर्मज (d) गण संयोग

40. प्र०:- चरकानुसार परादि गुणों की संख्या है -
(a) 7 (b) 5 (c) 20 (d) 10

41. प्र०:- यस्य शोधने शक्तिः सः..... ।
(a) उष्ण (b) तीक्ष्ण
(c) सर (d) विशद



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


. प्र०:- वाग्भटानुसार शोधन के भेद हैं -
(a) 2 (b) 3
(c) 5 (d) 6

. प्र०:- 'कर्मभि वमनादिभि'' का समावेश है -
(a) पंचकर्म में (b) षट्कर्म में
(c) अष्टकर्म में (d) कोई नहीं

. प्र०:- रसादीनां पंचानां भूतानां यदाश्रयभूतं तद् ...।
(a) गुणम् (b) द्रव्यम्
(c) रसम् (d) कर्मम्

. प्र०:- कूर्पर संधि का प्रसारण किस पेशी से होता है।
(a) द्विशिरस्का (b) त्रिशिरिस्का
(c) कूर्पर विस्फारण (d) सभी

. प्र०:- कर्णपटह में झुकाव किस तरफ होता है -
(a) अद्य: (b) अन्त:
(c) बाह्या (d) उर्ध्व

. प्र०:- प्रथम ग्रेव कशेरूका का नाम है -
(a) दन्तचूड़ा (b) महाकण्टकिनी
(c) चूड़िका (d) चूड़ावलय

. प्र०:- त्रिकपर्दिक कपाट कहाँ स्थित होते हैं -
(a) दक्षिण अलिन्दनिलयान्तरीय
(b) वाम अलिन्द निलयान्तरीय
(c) फुफ्फुसिय शिरा
(d) औदर्या धमनी

. प्र०:- ''स्कन्ध'' को आच्छादित करने वाले पेशी है-
(a) वक्षस्छदा (b) अंसच्छदा
(c) पृष्ठच्छदा (d) सभी

. प्र०:- ''जिव्हा ग्रसनी'' तंत्रिका किस अंग को पूरित करती है -
(a) दन्त (b) जिव्हा
(c) आमाशय (d) कोई नहीं

. प्र०:- ''सेवनी'' किस प्रकार का मर्म है -
(a) सद्य: प्राणहर (b) वैकल्यकर
(c) रूजाकर (d) कालान्तर प्राणहर

52. प्र०:- काश्यपानुसार ''ब्राह्मिणी'' में ऋतुकाल कितने दिनों का होता है -
(a) 9 दिन (b) 10 दिन
(c) 11 दिन (d) 12 दिन

53. प्र०:- निम्न में से कौन-सा युग्म ठीक है -
(a) स्वेदन-स्तम्भन (b) स्नेहन-स्तंभन
(c) लंघन-स्नेहन (d) रूक्षण-स्वेदन

54. प्र०:- ''कृत्स्न देह'' में व्याप्त कला है -
(a) मांसधरा (b) रक्तधरा
(c) श्लेष्मधरा (d) शुक्रधरा

55. प्र०:- अलपित्त का चिकित्सा के साथ वर्णन किस ग्रंथ में मिलता है -
(a) चरक (b) सुश्रुत
(c) वागभट (d) योगरत्नाकर

56. प्र०:- कफ का प्रकोपक काल है -
(a) भुक्तपात्रे (b) भुक्तेजीर्यते
(c) अर्द्धरात्रि (d) जीर्यान्ते

57. प्र०:- मैथुन का निषेध है -
(a) रज:स्वला में (b) गर्भिणी में
(c) योनिरोगों में (d) सभी में

58. प्र०:- अंजन का निषेध है -
(a) शिर:स्नानोपरान्त (b) ज्वर
(c) भोजनोपरान्त (d) सभी में

59. प्र०:- लघुमस्तिष्क के मध्य में जुड़ा होता है -
(a) वृहनमस्तिष्क (b) अनुमस्तिष्क
(c) उष्णीषक (d) कोई नहीं

60. प्र०:- चरकानुसार महाकषाय संख्या है -
(a) 10 (b) 50 (c) 6 (d) 500

61. प्र०:- आहार होता है -
(a) रस प्रधान (b) वीर्य प्रधान
(c) गुण प्रधान (d) सभी


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



62. Q.:- In which condition Ant. Fontenalle will be depressed -
(a) Microcephaly (b) Hydrocephelus
(c) Dehydration (d) All

63. प्र०:- सुश्रुतानुसार व्रणोपक्रम है -
(a) 6 (b) 7 (c) 36 (d) 60

64. प्र०:- नक्तान्ध्यता पायी जाती है -
(a) पित्त विदग्ध दृष्टि में
(b) श्लेष्मविदग्ध दृष्टि में
(c) दोनों में (d) कोई नहीं

65. प्र०:- आचार्य सुश्रुतानुसार शुक्रनिर्माण काल है -
(a) 1 दिन (b) 1 सप्ताह
(c) 1 वर्ष (d) 1 माह

66. प्र०:- चक्षुष्या नाड़ी के दृष्टिपटल में प्रवेश करने के स्थान पर होता है -
(a) पीत बिंदु (b) अंधबिन्दु
(c) दृष्टि बिंदु (d) रंगाकोशिकाएं

67. प्र०:- सुश्रुतानुसार विदग्धाजीर्ण की चिकित्सा है -
(a) लंघन (b)वमन (c)विरेचन (d)शयन

68. प्र०:- असाध्य नैत्रगत व्याधि है -
(a) पोथकी (b) कुम्भिका
(c) अर्जुन (d) हताधिमन्थ

69. प्र०:- किस आचार्य ने औषध काल पांच माने हैं -
(a) चरक (b) सुश्रुत
(c) वाग्भट (d) शार्गधर

70. प्र०:- पाचन में किस महाभूत का प्राद्यान्य होता है -
(a) वायु (b) अग्नि
(c) आकाश (d) जल

71. प्र०:- बच्चों में वृद्धि एवं विकास के रूक जाने का कारण है -
(a) Genetic disorder
(b) Maternal infection
(c) Nutritional deficiency
(d) All

72. प्र०:- चरकानुसार "पार्श्वशूल" लक्षण मिलता है -
(a) क्षतज कास में (b) क्षयजकास में
(c) राजयक्ष्मा (d) 2 व 3 दोनों

73. प्र०:- सुश्रुतानुसार अर्न्तविद्रधि के स्थान हैं -
(a) 9 (b) 10 (c) 12 (d)13

74. प्र०:- वमन के अतियोग के लक्षण हैं -
(a) तृष्णा में (b) मोह
(c) निद्राबलादिहानि (d) सभी

75. प्र०:- "शालिग्राम निघण्टु" किस ग्रंथ पर आधारित है -
(a) भावप्रकाश
(b) शार्गधर
(c) वृहद निघण्टु रत्नाकर
(d) चरक

76. प्र०:- हारीत के मतानुसार कास के प्रकार होते हैं -
(a) 5 (b) 6 (c) 7 (d) 8

77. Q.:- Placenta development takes place by chiefly
(a) Decidua-vera
(b) Decidua capsularis
(c) Basalis
(d) None

78. Q.:- Hypoplastic uterus is due to
(a) Improper development of muscle septum
(b) Improper fusion
(c) Both (d) None

79. Q.:- Vernix caseosa appears in which month
(a) 9 (b) 5 (c) 6 (d) 7

80. Q.:- Weight of foetus in 28 weeks will be -
(a) 1 kg (b) 1.5 kg
(c) 0.5 kg (d) 2 kg

81. Q.:- Both in Physiological and Pathological Jaundice which value will increase -
(a) Unconjugated bilirubin
(b) Conjugated bilirubin
(c) Alkaline phosphate
(d) SGOT



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


82. Q.:- Which of the following is usefull in immature delivery -
(a) Incubator (b) Phototherapy
(c) Heter (d) All

83. Q.:- Photoptheraphy is usefull in -
(a) Jaundice (b) Hypothemia
(c) both (d) None

84. प्र०:- आमगर्भ में जलबुदबुद के आकार की तुलना की जा सकती है -
(a) Hydatiform mole (b) Haematoma
(c) Both (d) None

85. प्र०:- विष का प्रभाव किस प्रक्रम से कम होगा -
(a) पृथक्करण (b) स्वेदन
(c) निर्वापन (d) छालन

86. प्र०:- अद्यः महाशिरा रक्त किसमें डालती है -
(a) वाम अलिन्द (b) दक्षिण अलिन्द
(c) वाम निलय (d) दक्षिण निलय

87. प्र०:- Prolactin रिफ्लेक्स कम नहीं होता है -
(a) Bottle Feeding (b) Breast swelling
(c) Breast Pain (d) All

88. प्र०:- "त्रिकपृष्ठासन" स्थिति है -
(a) लिथोटोमी (b) सिम्स पोजिशन
(c) फाऊलर (d) कोई नहीं

89. Q.:- Softening of skin after birth is due to -
(a) Fat (b) Vernix caseosa
(c) Amniotic fluid (d) All

90. Q.:- Sucking of amniotic fluid leads to -
(a) Muconium aspiration
(b) Pneumonia
(c) Respiratary distress
(d) All

91. प्र०:- जालकवत व्रण का कारणभूत जीवाणु होगा-
(a) स्ट्रेप्टोकोकस (b) स्टेफाइलोकोकस
(c) हीमोलायटिकस (d) क्लोस्ट्रिडियम

92. प्र०:- मध्यमा अंगुली की नाड़ी सप्लाई है।
(a) Ulnar N. (b) Median N
(c) Radial N (d) All

93. प्र०:- अग्रश्रृंग से जुड़ा होता है -
(a) आज्ञा (b) संज्ञा
(c) दोनों (d) कोई नहीं

94. प्र०:- चणकास्थि है।
(a) गंडास्थि (b) जानवास्थि
(c) उर्वस्थि (d) सभी

## Answer-Keys

(1) C (2) C (3) D (4) A (5) A (6) C
(7) C (8) A (9) D (10) D (11) C (12) B
(13) A (14) B (15) B (16) B (17) C (18) A
(19) B (20) D (21) B (22) B (23) B (24) B
(25) D (26) B (27) D (28) C (29) A (30) A
(31) C (32) B (33) B (34) A (35) B (36) A
(37) A (38) C (39) D (40) D (41) B (42) C
(43) A (44) B (45) B (46) B (47) C (48) A
(49) B (50) B (51) C (52) D (53) A (54) D
(55) D (56) A (57) D (58) D (59) C (60) B
(61) A (62) C (63) D (64) B (65) C (66) B
(67) B (68) D (69) D (70) B (71) D (72) D
(73) B (74) D (75) C (76) D (77) A (78) B
(79) B (80) B (81) A (82) D (83) A (84) C
(85) A (86) B (87) D (88) A (89) B (90) D
(91) D (92) B (93) A (94) B

डा० गोविन्द पारीक
जूनियर रेजिडेन्ट
आयुर्वेद संहिता विभाग
चिकित्सा विज्ञान संस्थान
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी - 5


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

maj Foundation Chennai and eGangotri



## गुजरात विधान सभा में स्वास्थ्य मंत्री, श्री मोहनलाल व्यास के वक्तव्य का एक अंश

*अप्रैल, 1966*

मैंने यहाँ विधान किया था कि आयुर्वेद यूनिवर्सिटी की स्थापना लगभग की जा चुकी है उसका अर्थ माननीय सदस्य जाडेजा ने ऐसा किया है कि राज्य सरकार ने इस विधान सभा को बिना सूचना दिये पिछले दरवाजे से यूनिवर्सिटी की स्थापना करने का कुछ प्रयास किया है । मेरा कहना सिर्फ इतना ही था कि पिछले 20 वर्षों से आयुर्वेद के उत्कर्ष के लिए जामनगर में जो कार्य किये जा रहे हैं, और वे कार्य केवल राज्य ने ही नहीं किये परन्तु गुलाब कुंबरबा सोसायटी, केन्द्रीय सरकार व राज्य इन तीनों के सहयोग से किये गये हैं, उसका अंतिम उद्देश्य आयुर्वेद यूनिवर्सिटी की स्थापना करना था और वह उद्देश्य लगभग उस स्थिति पर पहुँचा है कि यूनिवर्सिटी के जो सामान्य कार्य होते हैं वे सब वहाँ लगभग अस्तित्व में आ गये हैं । मेरा इतना ही कहना था कि राज्य सरकार ने या स्वास्थ्य मंत्री ने इसमें कुछ छिपाव-दुराव नहीं किया है जिससे यूनिवर्सिटी की स्थापना तो लगभग की जा चुकी हो और उसमें अब कुछ करने का शेष न रहता हो । साथ ही यह सब कर लेने के पश्चात् अब केवल नामाभिधान ही करना है, ऐसा मेरा कहने का आशय न था और उस प्रकार माननीय सदस्य समझे हों तो मैं दिलगीर हूँ । मैंने जो कुछ कहा उसका अर्थ यही था कि आयुर्वेद यूनिवर्सिटी का कामकाज शुरू करने के लिए जो सुविधाऐं चाहिए वह आज वहाँ मौजूद हैं, अब उसकी स्थापना के लिए जो करना है वह उसे वैधानिक स्वरूप देने की बात है । इस यूनिवर्सिटी का कामकाज शुरू करने के लिए ढाई लाख रूपये से अधिक खर्च होने वाला नही है । साथ ही, माननीय सदस्य श्री जाडेजा ने ऐसा प्रश्न किया कि स्थायी रूप से ढाई लाख रुपये का खर्च होगा ? मैं नहीं मानता कि माननीय श्री जाडेजा आयुर्वेद यूनिवर्सिटी के विकास में एक रुकावट बनना चाहते हैं । कोई भी कार्य शुरू करने के पश्चात् हमेशा उसका विकास होता रहता है, वह कुछ बंधा हुआ ''स्टैगनन्ट'' नहीं रह सकता, इसलिए, आयुर्वेद यूनिवर्सिटी शुरू होने के पश्चात् जो कुछ योजना तैयार करनी होगी वह तैयार की जायेगी और उसमें राज्य सरकार जो कुछ सहायता कर सकेगी वह करेगी । मुझे स्पष्ट कहना चाहिए कि ऐसा प्रश्न जब दक्षिण गुजरात और सौराष्ट्र यूनिवर्सिटी विधेयक पेश किए गये थे तब माननीय सदस्य ने उपस्थित नहीं किया था, परन्तु आयुर्वेद यूनिवर्सिटी संबंधी ऐसा प्रश्न क्यों उपस्थित होता है यह मेरी समझ में नहीं आता । इस विषय में अब विशेष विस्तार करने की आवश्यकता मुझे महसूस नहीं होती । मुझे विश्वास है कि आयुर्वेद यूनिवर्सिटी की स्थापना करने के पश्चात् उत्तरोतर विकास के लिये जो कुछ खर्च किया जायेगा वह यह विधानसभा बहुत आनन्दपूर्वक और उत्साहपूर्वक मंजूर करेगी, उसके लिए माननीय विरोध पक्ष के नेता ने मुझे विधान सभा में वचन दिया है, जो सरकार इस विधेयक को यहाँ लायी है वह सरकार हमेशा यह कार्य आगे बढ़ाने के लिए तत्पर हो यह स्वाभाविक है ।

आयुर्वेद यूनिवर्सिटी की स्थापना करने में उतावली होती है ऐसी एक बात यहां कही गयी है । आज से 20 वर्ष पहले शुरू किया गया यह कार्य जिसके लिए आज से 10 वर्ष पहले सौराष्ट्र विधान सभा में एक विधेयक लाने की तैयारी कर ली गयी थी - वह आज 10 वर्ष के पश्चात् लाया जाय, तो उसमें उतावली दिख पड़े वह मेरी समझ में नहीं आता । यहां माननीय सदस्य ने मुझे एक सूचना दी कि सौराष्ट्र यूनिवर्सिटी का विधेयक सौराष्ट्र विधान सभा के समक्ष पेश नहीं किया जा सका उसका कारण यह था कि सामान्य अभिप्राय ऐसा था कि अभी उसके लिए अभी समय आया नहीं । वह सूचना होने के लिए मैं माननीय सदस्य का आभारी हूं और मैं स्वीकार करता हूं कि इस प्रकार की सूचना सच होगी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

a Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आपके अनुभूत प्रयोग

## यौन रोग

**यौन रोगों के कारण** - अधिक मैथुन करने से, दिन में सोने से, अत्यन्त क्रोध करने से, अधिक परिश्रम करने से, नख व दन्त आदि द्वारा क्षत होने से वातादि दोष जब योनि में कुपित हो जाते हैं योनि में पीव रुधिर के समान बड़हल की गाँठ की आकृति यौन कन्द, खुजली, ज्वर, प्रदर आदि रोग होते हैं ।

**यौन रोग व बचाव के उपाय** - स्त्री अथवा पुरुष को चाहिए कि सबसे प्रथम सबेरे ब्राह्म मुहूर्त में जागने की आदत डालें, नित्य क्रिया व शौचादि के उपरान्त स्नान ध्यान व इष्ट साधना का नियम बनायें, संयम व शिष्टाचार का प्रयोग करें ।

1. यौन संबंधी रोगों की शिक्षा ग्रहण करें ।
2. गुप्तांग की सफाई की शिक्षा ग्रहण करें ।
3. मल-मूत्र का वेग न रोकें ।
4. अनैतिक सम्बन्ध न बनायें ।
5. गरिष्ठ भोजन, तीखे तथा खट्टे मसालों से बचें ।
6. मानसिक चिन्ता का त्याग करें, रोग का सही समय पर इलाज करायें ।

**यौन रोग व उपचार - यौन शूल** - 1. यौन दर्द पर धतूरे के पानों को घी मिलाकर पीस एक रत्ती सेंधा नमक मिला कपड़े में जामुन जैसी वर्ति बनाकर योनि मार्ग में रखवाने से वेदना शान्त होती है । 2. बेल और भाँगरे की जड़ को सिल पर पीस पानी के साथ, मदिरा के साथ पीने से योनि शूल तुरन्त शान्त हो जाता है । 3. कड़वे नीम की निबोलियों को नीम के रस में पीस कर योनि में, अथवा लेप करने से योनि शूल मिट जाता है ।

**योनि से पानी बहना** - 1. कत्था, हरड़, जायफल, नीम के पत्ते और सुपारी इन्हें महीन पीस कर छान लें फिर इस चूर्ण को मूंग के यूष में मिलाकर सुखा लें । इस चूर्ण को योनि में डालने से उसमें पानी आना बन्द हो जाता है । 2. गौ का दूध 5 किलो, चिकनी सुपारी 250 ग्राम कूट छानकर दूध में डालकर धीमी-धीमी आँच पर ओटावें । गाढ़ा होने पर 500 ग्राम शक्कर डालकर चाशनी करें फिर छोटी बड़ी माई 4-4 तोला सुपारी के फूल, धाय के फूल, 8 तोला ढाक का 125 ग्राम गोंद सबको कूट छान चाशनी में डालें । हर रोज 2 तौला खाया करें ।

**योनि की खुजली** - गिलोय, हरड़, आँवला, जमालगोटा इनका काढ़ा बनाकर, उस काढ़े की धार से योनि पर व योनि को धोने से खुजली दूर हो जाती है ।

**योनि प्रदाह** - प्रतिदिन आंवलों के रस में मिलाकर पीने अथवा कमलिनी की जड़ को पीसकर पीने से योनि की जलन दूर होती है ।

**प्रदर रोग** - 1. पारा शुद्ध 2. चाँदी शुद्ध 3. गन्धक, 4. वंग भस्म, 5. कौड़ी भस्म, 6. शंख भस्म 7. सफेल राल, 8. प्रवाल भस्म, 9. लौह भस्म 10. खड़ी चूर्ण, 11. ग्वार पाठा का रस

**विधि** - सबको महीन पीसकर ग्वार पाठे के रस में मर्दन कर मूंग के बराबर गोली बनावें ।

**मात्रा** - 1 से 2 गोली मधु के साथ या चावल के धोवन के साथ लेवें ।

**उपयोग** - इस योग से सब प्रकार के प्रदर समस्त योनि रोग उपद्रव नष्ट होते हैं ।

**रक्त प्रदर** - 1. पके हुए गूलर के फल को चुन लें फिर उसे कूट छानकर उसमें समभाग मिश्री मिला रख लें । बर्तन का मुँह बाँध कर रखें । इस चूर्ण को नि प्रातः सायं दूध अथवा पानी के साथ सेवन करते रहें रक्त प्रदर अवश्य ठीक हो जाता है । 2. गोदन्ती भस्म शुभ्रा भस्म का सेवन करायें ।

**यौन कन्डू** - इस रोग में फिटकरी के गाढ़े से धोने पर खुजली की निवृत्ति हो जाती है । योनि दाह पर फिटकरी व शीतल चीनी को जल में मिला पिस लगाने से दाह का शमन हो जाता है । योनि में से कन्द बाहर निकल आने पर । तोला फिटकरी 4 तोला मा के चूर्ण को मिला छोटी-छोटी पोटली योनि में धारण से कमल का निकलना बन्द हो जाता है ।

शरीर व्याधि मन्दिरम् - इस पंच भौतिक शरीर नाना प्रकार की व्याधियां होती रहती हैं । कर्म भोग कारण शरीर में कोई बलवान अरिष्ट जब चिकित्सा उपायों से ठीक नहीं हो पाता है तो ऐसे में ये कर्म क

**मा चिदन्यद् वि शंसत सखायो मा रिषण्यत् ।**
**इन्द्रमित् स्तोता वृषणं सचा सुते मुहुरुक्था च शंसत् ।**

हितकारी उपासकों सब एकाग्र होकर प्रसन्न पर अभिष्ट को पूर्ण करने वाले परमेश्वर की प्रार्थना कीर्तन करें । बार-बार चिन्तन करें, आत्म श्रेय का करें मुझे पूर्ण आशा है कि उस महान शक्ति के कर्म कभी तो भनक पड़ेगी ।

**वैद्य आर. के. वार्ष्णेय,** आयुर्वेद वाचस्पति
पो.- जरारा जि. - मथुरा पिन- 281205
सहायक, **चरण दास**
ग्रा. सिकन्दरपुर, मथुरा पिन - 281205

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# उच्चरक्तचाप व हृदय रोग के मरीजों की समस्याएं और समाधान

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना

हृदय रोग में रक्तचाप (ब्लड प्रेशर) के कारण ही धमनियों में रक्तसंचार होता है और रक्त से आक्सीजन पोषक तत्व ऊतकों तक पहुँचते हैं ।

रक्तचाप सदैव स्थिर नहीं रहता, विभिन्न अवस्थाओं में बदलता रहता है । स्वस्थ व्यक्ति में हृदय के संक्रमण के समय (सिस्टोलिक प्रेशर) 100 से 140 मि.मी. मरकरी और हृदय संकुचन नहीं करता (डायस्टोलिक प्रैशर) 60 से 90 मि.मी. मरकरी होता है । रक्तचाप सोते समय कम रहता है जबकि तनाव भोजन के पश्चात् शारीरिक श्रेय व व्यायाम सहवास करते समय बढ़ जाता है और आराम करने के बाद पुन: सामान्य स्तर पर पहुँच जाता है ।

उच्च रक्तचाप बहुत ही सामान्य रोग है । आधुनिक युग की भाग दौड़ के जीवन में मानसिक तनाव, खानपान, आराम तलब जीवन इत्यादि के कारण इन मरीजों की संख्या में वृद्धि हो रही है । वयस्क अनुमान है कि करीब 10 से 12 प्रतिशत व्यस्क व्यक्ति उच्च रक्त चाप के चंगुल में होते हैं । उच्च रक्त चाप ग्रसित मरीजों के कारण हृदय को लगातार ज्यादा शक्ति से कार्य करना पड़ता है जिसके कारण हृदय का आकार बढ़ सकता है और बाद में हार्ट फेल्योर हो सकता है । उच्च रक्तचाप के कारण शरीर के अनेक अंग गुर्दे, आखें क्षति ग्रस्त हो सकती हैं, पक्षाघात हृदय धमनी रोग (ऐन्जाइना हार्ट अटैक) ग्रस्त होने का भय बढ़ जाता है । उच्च रक्तचाप जीवन पर्यन्त का रोग है । इस रोग पर नियंत्रण तो पाया जा सकता है परन्तु रोग उन्मूलन नहीं हो सकता । रोग पर नियंत्रण के लिये जीवन शैली में परिवर्तन करें । संतुलित भोजन करें । भोजन में वसा व नमक का कम मात्रा में सेवन करना चाहिये । यदि वजन बढ़ा है तो कैलोरी की मात्रा कम कर नियमित व्यायाम शरीर के सामान्य वजन में लाना चाहिए । शान्तिपूर्वक तनावयुक्त जीवन गुजारना, रात्रि को अरामदायक नींद लेना अति आवश्यक है । जो मरीज तनाव ग्रस्त रहने पर उपचार नहीं लेते उनमें जटिल व खतरनाक समस्याएं पैदा हो जाती हैं जिनके गंभीर दुष्परिणाम होते हैं, ऐसे रोगियों को सावधानी बरतनी चाहिए । चिकित्सा का समुचित परामर्श लेकर अच्छा उपचार करायें और स्वस्थ सफल व सक्रिय जीवन गुजारें ।

जय आयुर्वेद

**वैद्य आर. के. वार्ष्णेय**

आयुर्वेद वाचस्पति

पो.- जरारा जि. - मथुरा पिन- 281205

## उत्तर प्रदेश के मिश्रित चिकित्सा प्रणाली के चिकित्सक ध्यान दें

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना

महोदय,

दिनांक 9-3-2006 के दैनिक जागरण अखबार में पढ़ने को मिला "निजी चिकित्सा इकाइयों का रेगुलेशन तैयार" समिति में स्वास्थ्य महानिदेशक, सहायक निदेशक, लखनऊ के पैथोलोजिस्ट डा० गिरधरदास, स्वास्थ्य निदेशक आदि ने रेगुलेशन का खाका तैयार किया है । समिति के अनुसार बी.ए.एम.एस. और बी.एच.एम.एस. डिग्री होल्डर 'पैथोलोजी लैब' को संचालित नहीं कर पायेंगे । इस रेगुलेशन का विरोधमिश्रित चिकित्सा प्रणाली एवं नीमा के सदस्यों को करना चाहिए ।

यदि किसी चिकित्सक के पास इस सम्बन्ध में कोई जानकारी हो तथा पाठ्यक्रम सिलेबस उपलब्ध हो तो कृपया शीघ्र ही निम्न पते पर भेजने की कृपा करें ।

**(डा० राकेश मोहन शर्मा)**

प्रभारी चिकित्साधिकारी

मण्डलीय सचिव

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय

बरई शाहपुर - हाथरस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## आरोग्य समाचार
### अखबार की कतरनों से

# Avian flu - a second genetic subtype found in humans

**Both the H5N1 virus subtypes still do not have ability to spread from one human to another**

### Avian genes

The only good news is that the scientists found the second subtype contained all genes that were of avian influenza origin. This underlines the fact that the second subtype was produced by mutation and not by re-assortment.

Re-assortment can happen only when humans are infected with conventional influenza virus and the H5N1 virus at the same time and some amount of gene mixing happens between the two viruses to produce a new subtyep.

A paper published in the journal *Emerging Infections Diseases* in October last year brought to light the ability of the H5N1 virus to form distinct subtyeps. However, both subtypes were not found to infect birds and humans alike.

It was found that while one subtye was able to infect both humans and birds in Vietnam, Thailand and Combodia but only birds in Laos and Malaysia, the second subtype was found in viruses isolated exclusively from birds in China, Indonesia, Japan and South Korea, the paper noted.

Now the identification of a second subtype in humans makes the possibility to keeping the virus under check more difficult, As the genetic diversity of the virus increases, the difficulty in finding ways of producing efficacious vaccines and drugs becomes greater too.

### Vaccine challenges

Vaccines are developed based on the strain that in infecting humans. Now with one more subtype found, there is a need to develop another vaccine that can be effective against the new subtype has to be done. And the ability of the virus to mutate also makes vaccine development all the more difficult as one is not sure if the vaccine developed will still be relevant.

It is also possible that a vacine develope for one subtype would be able to provide at lea partial protection against the other subtype.

The difficulty in developing an effcacio vaccine is just one of the critical issues. It ha been found that genetic mutation by a virus giv it the ability to either develop into a type that ca be easily transmitted between humans or lea likely to do so.

### No reason for panic

The emergence of a second subtype o the H5N1 as a result of mutation does no necessrily mean that human pandemic is roun the corner; its capability to mutate cannot be take lightly either. Whether a mutant capable of eas spreading between peoble will become a reality not known.

But the very ability of the virus to mut makes could make this possible even if th chances are remote.

### No conclusive evidence

It may be recalled that the virus rar infected humans before 1997.

Researchers are yet to conclusively pro that mutation has provided the virus the ability infect humans relatively easily.

(With courtesy from the Hindu)

# ज्यादा दवा मत खाओ, योग करो

**दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित समाचार के अनु**

ज्यादा दवा मत खाओ, योग करो स्वस्थ व निरोग रहने लिए प्राणायाम सबसे बड़ी दवा है । मात्र एक साल प्रतिदिन सवेरे-शाम प्राणायाम कर लें तो टेढ़े-मेढ़े हाथ भी सीधे हो जाते हैं । दिव्य योग साधना समिति तत्वावधान में पतंजलि योगस्थली, गांधी मैदान में आयो सात दिवसीय योग विज्ञान शिविर के छठे दिन शुक्रवार योगगुरू स्वामी रामदेवजी महाराज ने उक्त बातें कहीं

योग प्रशिक्षण की सुविधा उपलब्ध कराए जा हैं । जीवन बीमा पालिसियों पर व्यंग्य करते हुए स्वा रामदेवजी ने कहा कि अपने जीवन में हर आदमी बीमा कराता है । उनमें अधिसंख्य लोग लाभान्वित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


होते। लाभ हासिल करने से पहले ही वे स्वयं दुनिया से उठ जाते हैं। इनमें ज्यादातर व्यक्ति हृदय रोग से ग्रसित होते हैं। अब बीमा कम्पनी वाले बीमाधारकों का हर्ट तो बदल नहीं सकते। बीमा कम्पनियों को मृत्युपरांत अपनी शर्तों के अनुसार ग्राहकों को राशि की अदायगी करती पड़ती है। इस कार्य में बीमा कम्पनियों के पदाधिकारी व कार्यकर्ता स्वयं कम्पनी को चूना लगाने में कोई कसर नहीं छोड़ते। लेकिन अगर आप नियमित प्राणायाम करें तो जीवनपर्यंत हृदय रोग के खतरे से मुक्त हो सकते हैं।

इस अवसर पर स्वामीजी ने भस्त्रिका, कपालभाति, अनुलोम, विलोम, वाह्य प्राणायाम, अग्निसार, भ्रामरी, उद्गीत, उज्जाई, शीतली, शीतकारी एवं कर्ण रोगांतर प्राणायामों का अभ्यास कराया। योग प्रशिक्षक अजय कुमार एवं कृष्णानंद पाण्डेय समेत दो सौ प्रशिक्षकों ने शिविर प्रांगण में प्रशिक्षणार्थियों का मार्गदर्शन करते रहे। शिविर में कई प्रशिक्षणार्थियों ने अपनी स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं में सुधार होने की जानकारी दी।

## कैंसर रोगियों के लिए फायदेमंद है प्राणायाम

स्वामी रामदेव ने कहा कि सारी बीमारियां जीवन शैली में आ रहे बदलाव के कारण हो रही हैं। स्वामी जी ने कहा कि शरीर में होने वाली सारी बीमारियां हारमोन में होने वाली गड़बड़ी के कारण होती हैं। उन्होंने कहा कि जो हम खाते हैं, जैसा सोचते हैं, उसी का परिणाम हमारा जीवन है। बाबा ने लोगों से मांसाहार से परहेज करने का आग्रह करते हुए कहा कि जिस समय किसी जीव को मारा जाता है उस वक्त उसके शरीर से हानिकारक हारमोन का स्राव होता है जो मांस खाने वालों को हानि पहुंचा सकता है। इसलिए लोग इसका त्याग कर शाकाहार अपनाएं। उन्होंने कहा कि पृथ्वी पर सभी जीव अपना निर्धारित आहार ही लेते हैं मात्र मनुष्य ही ऐसा जीव है जिसका भोजन पर नियंत्रण नहीं है। बाबा ने कहा कि तंबाकू और तनाव कैंसर के दो प्रमुख कारण हैं। उन्होंने कहा कि कैंसर से लड़ने के लिए शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ानी होगी और इसके लिए सबसे अच्छा तरीका प्राणायाम है। उन्होंने कहा कि एक सप्ताह के प्राणायाम से पूरे शरीर की बायो केमेस्ट्री में बदलाव आ जाता है। उन्होंने कैंसर पीड़ितों से प्रति दिन आधा घंटा प्राणायाम करने को कहा। स्वामी जी ने कहा कि इसके अलावा कैंसर से लड़ने के लिए संकल्प शक्ति होनी चाहिए।


बैद्यनाथ प्रसूता के लिए बलवर्द्धक श्रेष्ठ टॉनिक

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध।

संग्रहणी, मंदाग्नि, अरुचि, उदर रोग, खांसी, दमा, कमजोरी आदि रोगों की शास्त्रोक्त दवा है। इससे बल और कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है। प्रसव के बाद इसके सेवन द्वारा माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती हैं।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

## गुजरात

### गुजरात के गणमान्य वैद्य प्रागजीभाई राठौड के दुखद अवसान पर श्रीमती तापीवाई आयुर्वेदिक हॉस्पीटल, भावनगर में शोक सभा सम्पन्न

गुजरात के प्रसिद्ध वैद्यराज प्रागजी भाई राठौड़ 'चिकित्सक' का 90 वर्ष की वय में नवसारी में दिनांक 7-3-06 को दु:खद अवसान हो गया । श्री प्रागजी भाई जी का जन्म तारीख 14-1-1969 को अंजार (कच्छ) में हुआ था । उन्होंने गुरु परम्परा से आयुर्वेद का अध्ययन किया, वे स्वतंत्रता सेनानी भी रहे थे और व्यक्तिगत सत्याग्रह कर जेल भी गये थे । आपने ग्रामविद्यापीठ लोकभारती (सडोसरा) में भी अपनी सेवायें दी; वे गुज. आयुर्वेद युनिवर्सिटी की सलाहकार समिति जैसी कई समितियों के सदस्य तथा सेनेट-सिंडीकेट सदस्य भी रहे । वे गुजरात प्रदेश वैद्य सभा के अध्यक्ष तथा अ.भा. आयुर्वेद महासम्मेलन के एक्जीक्युटिव सदस्य भी रहे । उन्होंने 'स्वस्थवृत्त' 'निरामय' तथा 'समाज संदेश' जैसी मासिक पत्रिकाओं आदि का सम्पादकत्व भी किया, साथ ही 'जन्मभूमि प्रवासी' (मुम्बई) तथा 'गुजरात मित्र' आदि दैनिकों में शारीर और स्वास्थ्य कॉलम भी नियमित रूप से लिखते रहे । उनकी 32 पुस्तके भी प्रकाशित हुई । वे आजीवन देश-विदेश में आयुर्वेद का प्रचार करते रहे । ऐसे सद्गत वैद्यराज 'चिकित्सक' को शोक सभा श्रीमती तापीबाई आयुर्वेदिक हॉस्पीटल, भावनगर में नि.इचा. आचार्य श्री पी.एस. अंशुमान तथा आर.एम.ओ. श्री गोथापम की उपस्थिति में दिनांक 13.7.06 की गई जिस में दिवंगत आत्मा की चिरशान्ति एवं शोक संतप्त परिवार की सात्वना हेतु ईश्वर से प्रार्थना की गई ।

### आयुर्वेदिक क्लीनिक का उद्घाटन

गुजरात के सुप्रसिद्ध वैद्य एवं गुजरात के सुप्रसिद्ध अखबार 'संदेश' के लेखक वैद्य मनुभाई गौदानी-वैद्य प्रशांत गौदानी के नये अति आधुनिक आयुर्वेदिक क्लीनिक का उद्घाटन दिनांक 12.02.06 रविवार के दिन 305, धीरज एवन्यू, छड़ावाड पोलिस स्टेशन के सामने, आबांवाडी, अहमदाबाद में रीटाबहन पटेल (संदेश दैनिक के मालिक) के कर कमलों द्वारा संपन्न हुआ । गणमान्य वैद्य एवं अतिथियों ने उपस्थित रहकर समारोह की शोभा बढ़ाई । गुजरात प्रदेश आयु. सम्मेलन के सभी पदाधिकारीगण को विशेषरूप से आमंत्रित किया गया ।

### गुजरात आयुर्वेद मेन्यु. एशोसिएशन

गुजरात आयु. मेन्यु. ऐशोसिएशन (GAMA) की दिनांक 12.02.06 की साधारण सभा में सर्वसम्मति से अध्यक्ष स्थान पर ऊंझा आयु. फार्मा (UAP) के श्री प्रबोधभाई शाह एवं उपाध्यक्ष श्री जैतीभाई बी वैद्य (हरिनारायण फार्मेसी) मंत्री वैद्य पुनर्वसु अग्निहोत्री (शंकर फार्मेसी) सहमंत्री श्री देवेन शेठ, ट्रेजरर - श्री राम भाई गांधी कार्यकारिणी सदस्य श्री महेशभार शाह, श्री दिलीप भाई त्रिवेदी, श्री जमन मालवीया, श्री जैमिन ठक्कर, श्री दिलीप पटेल, श्री धनंजय जाटकीया, श्री राजेन्द्र शाह, श्री जन्मजय पटेल । गुजरात आयु. सम्मेलन की ओर से सभी को बधाई देकर सम्मानित किया गया ।

स्व० वैद्य नवीन भाई ओझा (पूर्व अध्यक्ष) गुज. वैद्य मंडल) द्वारा संचालित एवं संशोधित GARD बड़ोदरा द्वारा दिनांक 5.02.06 रविवार के दिन होटल सूर्या पैलेस बड़ोदरा में वातव्याधि विषय पर एक दिवसीय परिसंवाद का आयोजन किया गया । वैद्य यु.डी. रावल (अध्यापक-सरकारी आयु. महाविद्यालय, बड़ोदरा) एवं डा० भरत एस. मोदी द्वारा ज्ञान पूर्वक कार्यक्रम संपन्न हुआ । बड़ी भारी संख्या में वैद्यों एवं विद्यार्थिओं ने हिस्सा लिया । गुज.प्र. आयु. सम्मे. के सभी पदाधिकारियों को विशेष रूप से आमंत्रित किया गया । समग्र कार्यक्रम का संचालन स्व० वैद्य नवीनभाई ओझा के सुपुत्र डा० निमिष ओझा द्वारा संपन्न हुआ ।

### वैद्य हरिभाई के. त्रिवेदी सम्मानित

यह प्रशस्ति पत्र देकर हमको आनंद होता है । वैद्य हरिभाई के. त्रिवेदी का जन्म सन 1939 में गणेशगढ़ तालुका गारीया धार जिला भावनगर में हुआ है । पालीताणा हाईस्कूल में एस.एस.सी. पास होकर भावनगर आयुर्वेद कॉलेज में आयुर्वेद ग्रेज्युएट हुआ बाद में पोस्ट ग्रेज्युएट का अभ्यास बड़ोदरा किया सन 1963 में भावनगर आयुर्वेद कालेज में एसिस्टन्ट प्रोफेसर के रूप में दाखिल हुआ । बाद में गुजरात की, जूनागढ़, अहमदाबाद और बड़ोदरा आयुर्वेद कॉलेज में प्रोफेसर एवं प्रिन्सिपल के रूप में कार्य किया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रशस्ति-पत्र-समारोह का एक दृश्य

1997 में वड़ोदरा शासकीय आयुर्वेद कालेज से निवृत्त होने के बाद सन 1998 से राज्य के भिन्न-भिन्न जिले में पिछड़े वर्ग में एवं आदिवासी विस्तार में आयुर्वेद के कैम्प के माध्यम से नि:शुल्क सेवा शुरु की । सन् 2003 तक सेवा शुरु रखी थी । इस सब कार्यो को देखकर गुजरात सरकार ने सन् 2003 में गुजरात राज्य के आरोग्य मंत्री श्री आइ.के. जाडेजा के हाथ से माननीय गुजरात के मुख्यमंत्री श्री नरेन्द्रभाई मोदी की उपस्थिति में वड़ोदरा शहर में दिनांक । में 2003 के रोज तबीबी एवोर्ड दिया गया ।

बाद में सन् 2003 से आज तक पोलियो नाबुदी अभियान-बाल पक्षाघात के गुजरात सरकार ने अभियान शुरु किया । राज्य के विविध जिले जैसे राजकोट, भावनगर, नडियाद, भरूच, बड़ौदा एवं सूरत के पिछड़े एवं आदि विस्तारों के छोटे बालक की उम्र । से 5 तक की सुश्रुषा की है । आज तक 1100 के आसपास के छोटे बच्चे की उम्र । से 5 साल तक की आयुर्वेद चिकित्सा दी है । परिणाम आशास्पद मिला है । वे अभियान आज तक चालू है । यह सेवाकीय प्रवृत्ति भगवान धन्वन्तरि की कृपा से हो रही है ।

वात बलासक ज्वर एवं पोलियो (बाल पक्षाघात) नाबुदी अभियान आगे बढ़ाने की शुभकामना एवं शुभाशीष मान्यवर श्री नवलकिशोरजी शर्मा गवर्नर ऑफ गुजरात स्टेट ने भी दी है ।

यह नि:शुल्क सेवाकीय प्रवृत्ति सबब एवं प्रशस्ति पत्र मान्यवर गवर्नर साहब श्री नवल किशोर जी शर्मा के कर कमलों से दिनांक 28 फरवरी 2005 को दिया गया है ।

भगवानश्री गोपनाथजी महादेव की सान्निध्य में वैद्यश्री हरिभाई त्रिवेदी का यह नि:शुल्क सेवाकीय प्रवृत्ति बदल आज हम सन्मान कर रहे हैं । इसलिये हम गौरान्वित है और भगवान गोपनाथीजी वैद्यजीको हितायु एवं सुखायु रखें ऐसी प्रार्थना है ।

**श्री सीताराम बापू**

ब्रह्मचारी

गोपनाथ महादेव ट्रस्ट, गोपनाथ जिला भावनगर (गुजरात)

## मध्य प्रदेश

**NAPAR**
**NATIONAL**
**PANCHAKARMA**
**TRAINING / WORKSHOP AND**
**CONFERENCE**
**9 to 16 APRIL, 2006**
**UJJAIN**
**Organised by**
**NATIONAL ACADEMY OF**
**PANCHAKARMA AND RESEARCH**
**STATE COUNCIL OF MADHYA**
**PRADESH**

As you are an eminent scholar and practitioner in the Ayurvedic system of Medical Science, we are glad to invite you to participate in the Seven-Day Training Programme and Workshop in Panchakarma organised by NAPAR from 9th to 15th April 2006. We also invite you to grace rare and most-awaited occasion of the National Conference of NAPAR to be held on 16th April 2006.

You might be well-aware that Ujjain has remained a religious, cultural and historical township throughout the ages. Being a Holy *Puri* it has been the seat of Jyotirlinga Lord Mahakaleshvara and the celestial Pithas of His consort Goddess Harasiddhi and Kalika. The pious Sipra river is also inviting you to take bath in it and to visit monuments and religious-sites standing



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

nearby. The township will also remind you of the great king Vikramaditya and the nine-gems of his court including Dhanvantari, Kalidasa and Varahamihira. Dhanvantari Ayurvedic P.G. College is in the proud tradition of Ayurveda in UJJAIN, which has been visited by ancient physicians like Jivaka, Dhanvantari and Bhattara Harishchandra. Dhanvantari Ayurvedic College & Hospital is an esteemed Institute dedicated to the cause of education, research, training and treatment in Ayurveda, It has a credit to organise many a National and Regional Seminars and Training Programmes. This workshop will upkeep that tradition. Kindly accept our invitation for the participation in the proposed Training Programme/ Workshop organised by NAPAR, State Council Madhya Pradesh.

We are eagerly awaiting your positive response and your dignified presence here. The schedule is enclosed.

Vaidya Vinod Vairagi
(General Secretary)
Prof. Umashankar Nigam
(Chairman)
NATIONAL COUNCIL NAPAR
Vaidya M.S. Deshpande
(Secretary)
Vaidya S.N. Pande
(President)
STATE COUNCIL MADHYAPRADESH
Vaidya C.K. Sharma
(Organising Secretary)
Prof. M.K. Vyas
(Co-ordinator)
ORGANISING COMMITTEE

Vaidya Lokesh Joshi, Vaidya Anand P. Saraf, Vaidya P.C. Soni, Vaidya O.P. Paliwal, Vaidya Vedprakash Vyas, Vaidya Ajaykriti Jain, Vaidya C.K. Kasliwal, Vaidya I.S. Sisodihya, Vaidya P.S. Rathore, Vaidya Sunita D. Ram, Vaidya Shreesh Shrivastava.

## SEVEN-DAY TRAINING PROGRAMME / WORKSHOP

Like Herbal System, Panchakarma is attaining wide popularity, both in India and abroad. Unluckily the nation is being cheated and mis-led by quack professional exploiters, unscientifically running enterprises like Beauty-parlours Panchakarma tourism, Star-hotels, Health-clubs and such other glamourous money-earning devices propagating through multi-dimensional media-sources. It is an irony that the scholars and practitioners of Ayurveda are not unanimous on the theoretical aspects and practical operations connected with Snehana, Swedana, Vamana Virechana. Therefore, special stress will be given to scientifically synthesize the divergent opinions as laid down in various treatises on Panchakarma The Workshop also aims at giving wide publicity to and inventing the methodology of pupularisation of the utility and fruitfulness of Panchakarma.

* SEVEN-DAY TRAINING PROGRAMME AND WORKSHOP

DAILY SCHEDULE

9TH APRIL 06, SUNDAY

| | | |
|---|---|---|
| 03 P.M. | : | Welcome of Participants |
| 06 P.M. | : | Inaugural Session |

10th to 15th APRIL 06

| | | |
|---|---|---|
| 05 A.M. - 07 A.M. | : | Yoga Training Shivira |
| 09 A.M. - 01 P.M. | : | Practical Demonstration and Discussions |
| 01 P.M. - 03 P.M. | : | Lunch and Rest |
| 03 P.M. - 06 P.M. | : | Lectures and Queries |
| 06 P.M. - 07 P.M. | : | Supplementary Session Academic Chit-Chats |
| 08 P.M. - 09 P.M. | : | Dining Hour |

* Application form , Condition and Fee Schedule as Attached

** NATIONAL CONFERENCE

16TH APRIL 06, SUNDAY

| | | |
|---|---|---|
| 08 A.M. - 10 A.M. | : | Registration / Refreshment |
| 10 A.M. - 11 A.M. | : | 1st Session - Inaugural Function |
| 11 A.M. - 01 P.M. | : | 2nd Session - Special Guest lecture on Panchakarma |
| 01 P.M. - 02 P.M. | : | Lunch & Rest |
| 02 P.M. - 05 P.M. | : | 3rd Session - General Body Meeting Veledictory Session |

VENUE

Arya Samaj Mandir, Arya Samaj Road.
Nai Sadak, UJJAIN Ph. : 0734 - 2550256
Address for Correspondence


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



PROGRAMME CO-ORDINATOR

National Panchakarma Training/Workshop And Conference 36, Subhash Nagar, UJJAIN

Ph. : 0734-2520039 Mob. : 94250-92343 E-mail : vyas@sify.com

## APPLICATION FOR SEVEN-DAY TRAINING PROGRAMME AND WORKSHOP

### Date : 9th to 16th April 2006

Name .....

Address .....

Qualification ..... Year.....

Date of Birth .....

Phone : Resi. .....Clinic..... Mob.....

Present Service ..... Post..... Since .....

Address ..... Phone.....

If you are a Life member of NAPAR, Your Membership No. .....

Passport Size Photo

### DECLARATION

☐ I have gone through the rules and conditions of the Panchakarma Training Programme/Workshop I Promise to abide by them. I am enclosing an amount of ☐ Rs. 4000/- ☐ Rs. 3000/-

☐ * I wish to attend Natinal Conference of NAPAR on 16th April 2006.
I am enclosing an amount of ☐ Rs. 150 /- ☐ Rs. 100 /-

(in words Rs. .....only) vide Demand Draft No .....

Date ..... Bank .....

Place..... Signature .....

☐ Please Tick which is applicable

### GENERAL RULES OF TRAINING PROGRAMME/WORKSHOP

As there are limited seats for the trainees, priority will be given according to the receipt of the applications Rest of the applications will be given a chance in the next batch of trainees. However, in each case, fu amount i.e. Rs. 4000/- (Rs. 3,500/- for life-members of NAPAR) will have to be sent, Prior to 25th Marc 2006. Following facilities will be provided to the trainees -

1. Published reading material and stationery-cum kits (gratis).
2. Separate Dormitories for male and female participants, you can stay otherwise on your own cost.
3. Refreshment, lodging and boarding facilities from 9th April evening onwards. (Included in above amount
4. Optional admission in Yoga Shivira Daily at 5 to 7 A.M.
5. Free entry in the deliberations of National Conference to be held on 16th April.
6. The venue of the programme will be centralised at Arya Samaj Mandir, Nai Sarak, UJJAIN.
7. Food and refreshment will be strictly vegetarian. Non veg. meals, Smoking or Consumption of Liqu etc. are strictly prohibited in the Venue. Strict discipline and refined behaviour are expected from th trainees.
8. Detailed Programme will be made available on 9th April.
9. The participants should send the application enclosed with the demand draft in favour of "NAPA



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


STATE COUNCIL, MADHYA PRADESH", Payable at Ujjain and.

0. Other rules as notified during the course of the Training.
1. At the close of Traning Programme/Workshop the certificates of this effect will be distributed.
2. * If you attend only conference on 16th April Separate delegation fee will be deposited accordingly.

Address for Correspondence :
Prof. Manindra Kumar Vyas
(Programme Co-ordinator)
36, Subhash Nagar, UJJAIN
Ph. 0734 - 2520039 Mob. : 94250-92343
E-mail : vyas @sify.com/dr.mkvyas/
1955@sanchernet.in

## उत्तर प्रदेश

## निःशुल्क आयुर्वेद चिकित्सा शिविर एवं स्वास्थ्य गोष्ठी

राजकीय आयुर्वेद चिकित्सालय सरौरा जनपद तापुर में दिनांक 25-2-06 को एक निःशुल्क आयुर्वेद कित्सा शिविर का आयोजन किया गया । डा० पातन्जलि वेदी, प्रभारी चिकित्साधिकारी, सरौरा चिकित्सालय, डा० राधना महिला चिकित्साधिकारी वाडी तथा डा० शम्भूकाना क्ला, चिकित्साधिकारी सिधौली, सीतापुर ने रोगियों का ीक्षण करके परामर्श प्रदान किये । शिविर में आने वाले मी रोगियों को औषधियाँ एवं परामर्श निःशुल्क प्रदान ये गये । शिविर में 361 रोगियों ने उपस्थित होकर कित्सा का लाभ लिया । शिविर में ज्वर, आमवात, ास, चर्मरोग, स्त्रीरोग अतिसार, कामला, शिशु रोग के गियों के मरीजों को देखा गया । शिविर में प्रातः 9 बजे सायं 4 बजे तक मरीजों का तांता लगा रहा । मरीजों को ःशुल्क दवा वितरण की व्यवस्था क्षेत्रीय आयुर्वेद एवं ानी अधिकारी डा०जे०पी०पाण्डेय द्वारा की गयी तथा विर लगाने का निर्देश भी उन्हीं के द्वारा दिया गया ।

अन्त में शाम को एक स्वास्थ्य गोष्ठी का आयोजन या गया जिसमें स्वास्थ्य के विषय में चर्चा करते हुऐ डा० पातन्जलि द्विवेदी ने रोगियों एंव आम जनता को स्वस्थ रहने के उपाय, दिनचर्या एवं ऋतुचर्या, आहार एवं विहार के विषय में विस्तृत रूप से बताया । शिविर में गोष्ठी को सफल बनाने में नन्दकिशोर सिह. फार्मेसिस्ट, सरौरा ने सक्रिय सहयोग किया ।

## विधि एवं न्याय विभाग ने भी माना कि डा० वाजपेयी का नामांकन डा० रक्षा गोस्वामी ने अनुचित ढंग से निरस्त किया था

चिकित्सा पल्लव कार्या० पनगरा (बाँदा)- भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् (I.M.C.C.) के उत्तर प्रदेशीय सदस्यों के चुनाव में चिकित्सा पल्लव के प्रधान सम्पादक डा० मदन गोपाल वाजपेयी का नामांकन निरस्त किये जाने के सम्बन्ध में विधि एवं न्याय मंत्रालय ने अपनी राय व्यक्त करते हुए कहा कि उक्त चुनाव में डा० मदन गोपाल वाजपेयी का नामांकन निरस्त करते समय I.M.C.C.चुनाव नियम 1975 की धारा 11 उपधारा (2) का पालन नहीं किया गया । ज्ञातव्य हो कि इस पर संयुक्त सचिव भारत सरकार शिव बसन्त ने भविष्य में सावधानी बरतने हेतु भारत के सभी C.C.I.M./C.C.H. चुनाव अधिकारियों को मार्गदर्शन जारी किये जायेंगे । भारतीय केन्द्रीय चिकित्सा परिषद् सदस्यों के नामांकन की तिथि 15-09-2004 से 22-09-2004 तक अधिसूचित की गयी थी जिसके लिए डा० मदन गोपाल वाजपेयी ने निर्धारित तिथि और समय के भीतर निर्धारित प्रारूप पर अनुमोदक व प्रस्तावक के साथ नामांकन भरा । रिटर्निंग ऑफीसर रक्षा गोस्वामी द्वारा दुराग्रह पूर्वक इस आधार पर डा० वाजपेयी का नामांकन निरस्त कर दिया गया कि अनुमोदक एवं प्रस्तावक ने अपना पंजीयन संख्या तो लिखी है किन्तु अर्हता का उल्लेख नहीं किया ।

रिटर्निंग ऑफीसर डा० रक्षा गोस्वामी के द्वारा नामांकन निरस्त किये जाने के तुरन्त बाद ही डा० मदन गोपाल वाजपेयी ने माननीय उच्च न्यायालय लखनऊ खण्डपीठ में रिटपीटीशन सं०- 4837 M/B/2004 योजित


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


की, जिस पर सुनवाई के उपरान्त माननीय उच्च न्यायालय ने दिनांक 08-10-2004 को आदेश पारित किया कि चूँकि चुनाव की प्रक्रिया चालू हो चुकी है इसलिए न्यायालय इस पर कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता । सी.सी. आई.एम. चुनाव में रिटर्निंग ऑफीसर ने किस तरह के लोकतांत्रिक मूल्यों को बेचकर अपने चहेतों को सदस्य निर्वाचित कराया, समाचार पत्रों ने बखूबी लिखा । चुनाव प्रक्रिया पूरी होने के बाद डा० मदन गोपाल वाजपेयी ने उच्च न्यायालय लखनऊ खण्डपीठ के निर्देशानुसार आई.सी. सी.एम. चुनाव नियम 1975 के तहत दिनांक 30.12.2004 को स्वास्थ्य परिवार कल्याण मंत्रालय आयुष विभाग, भारत सरकार में अपील की । किन्तु आयुष विभाग द्वारा जब लम्बी प्रतीक्षा के बाद भी भारत सरकार द्वारा डा० वाजपेयी को कोई निर्णय नहीं भेजा गया तो उन्होंने मा० उच्च विद्यालय ने आयुष विभाग भारत सरकार को 2 माह के अन्दर मामला निर्णीत करने का आदेश पारित किया । माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की अनदेखी करते हुए अपने चहेतों की चाहत बनाए रखने के लिए दिनांक 28-12-2005 को स्वयं प्रतिवादी डा० रक्षा गोस्वामी ने पत्र सं. 2943/सी.सी.आई.एम. चुनाव-04 से डा० मदन गोपाल वाजपेयी को इस आशय का पत्र लिखा कि आपका नामांकन निरस्त करना पूर्णत: वैधानिक था ।

डा० रक्षा गोस्वामी के उक्त पत्र से क्षुब्ध होकर डॉ० मदन गोपाल वाजपेयी ने पुन: अवमानना के लिए एक प्रार्थना पत्र मा० उच्च न्यायालय में प्रस्तुत किया जिस पर न्यायालय ने आयुष विभाग को अन्तिम अवसर प्रदान करते हुए दिनांक 30.12.2004 को योजित याचिका का निस्तारण हेतु आदेशित किया जिस पर निर्णय लेते हुए डा० एम.ए. कुमार डिप्टी डायरेक्टर सिंह ने डा० वाजपेयी को श्री शिव बसन्त संयुक्त सचिव भारत सरकार का पत्र दिनांक 03.02. 2006 संलग्न करते हुए उक्त रिट सं० 68707/2005 का निस्तारण सूचित किया ।

संयुक्त सचिव भारत सरकार के उपरोक्त पत्र के अनुसार विधि एवं न्याय मंत्रालय ने माना है कि सी.सी.आ एम. निर्वाचन नियम 1975 की धारा 11(2) में नामांक निरस्त किये जाने के आधार वर्णित हैं । नामांकन फार्म में उल्लिखित शर्त का अनुपालन में अनुमोदक और प्रस्तावक द्वारा अपने पंजीयन संख्या का उल्लेख करना ही पर्याप्त है यदि प्रस्तावक एवं अनुमोदक ने रजिस्ट्रेशन के साथ उपा अंकित नहीं की तो इसके आधार पर नामांकन रद्द कर उचित नहीं था, चुनाव अधिकारी ने डा० वाजपेयी क नामांकन रद्द करने का जो आधार लिया था वह अवैधानिक है ।

## हिमाचल प्रदेश

## Expiry Date और आयुर्वेदिक औषधियां प

## एक गोष्ठी चड्ढा ट्रेडर्ज (रजि.) नगरोटा बगवां जिला कांगड़ा, हि.प्र. में सम्पन्न हुयी ।

### आयोजक - हिमाचल प्रदेश आयुर्वेदिक औषध निर्माता संघ ।

इस गोष्ठी में कई औषध निर्माताओं ने भा लिया । लेडी डा० गार्गी ने कहा कि समाचार पत्रों में छप खबर कि Expiry Date दवाओं की आपूर्ति का समाचा आयुर्वेदिक औषध निर्माण शास्त्रों से सहमत नहीं है । इस अवसर पर आयुर्वेदिक औषधियों की गुणवत्ता पर विशे चर्चा हुई । इस अवसर पर डा० गोपाल कृष्ण चड्ढ निर्माणध्यक्ष चड्ढा ट्रेडर्ज (रजि.) नगरोटा बगवां, जिल कांगड़ा हि.प्र., औषध अनुसंधानकर्त्ता कैंसर जिसे राष्ट्रीय आयुर्वेद परिषद् द्वारा 1999 में सर्वश्रेष्ठ औषध निर्माता अवार्ड मिला है ने कहा कि बैद्यनाथ द्वारा प्रकाशि आयुर्वेदिक सार संग्रह पृ०सं० 5 में वनस्पति औषधियां चूर्ण आदि के लिए लिखा है कि औषध रखने का पात्र अच्छी हो-वायु का प्रवेश न हो इस प्रकार उसको बन्द किया तो वनस्पति या वनस्पति द्वारा बने योग चिरकाल तक अच्छे रह सकते है । डा० गोपाल चड्ढा ने आगे कहा कि यदि चूर्ण आदी का रंग स्वाद व सुगंध बरसात के समय बनाने के



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


दन में कम हो जाता है तो वह चूर्ण रोगी के प्रयोग कराने के लिए नहीं रहते और औषध Expiry हो जाती है और यदि चूर्ण अच्छी तरह पैक है और सालों के बाद भी चूर्ण का स्वांग गंद रंग ठीक हो तो वाह Expiry नहीं होंगे (हीनवीर्य)।

डा० गोपाल चड्ढा ने कहा कि सन् 2004 में एक Pharamacopoeial Laboratory for Indian Medicine (Ministry of Health & Family Welfare Govt. of India) III-A.G.O. complex-I kamal Nehru Nagar Gaziabad-201002 (UP) India कांफ्रेंस केन्द्रीय में हुई आधुनिक Laboratory के आधार पर आयुर्वेदिक चूर्णों और अन्य औषधियों आदि के पैरामीटर (आधार भूत नियम) बनाने का भिन्न-भिन्न अनुसंधान संस्थानों पर कार्य आरम्भ हो गया है। यह परियोजना 2010 तक अपना अधारभूत परिणाम देगी।

नोट :- 3 जून 2006 में चड्ढा ट्रेडर्ज (रजि.) 10 नगरोटा बगवां जिला कांगड़ा हि.प्र. एक राष्ट्रव्यापी कांफ्रेंस Rule of Pharmacy in Quality Control of Ayurvedic Medicines पर बुला रही है जिसमें 350 से अधिक आयुर्वेदिक विद्वान औषधनिर्माता औषध विक्रेता एवं आयुर्वेदिक चिकित्सक भाग लेंगे।

## डा० गोपाल चड्ढा ने रस शास्त्र स्नातकों का उद्घाटन किया।

नगरोटा बगँवा, जिला कांगड़ा के आयुर्वेदिक औषध निर्माता एवं सफल चिकित्साक डा० गोपाल चड्ढा अन्तराष्ट्रीय मैत्री संस्थान द्वारा "कोवर्ड" अवार्डी ने आयुर्वेद कालेज पपरोला जिला-कांगड़ा के रस शास्त्र के स्तर के उद्घाटन के समय कहा कि आने वाले समय में स्वास्थ्य समस्याओं का निराकरण आयुर्वेद द्वारा ही सम्भव है। 2020 तक सामान्यतया सारे एन्टीबायटिक काम करना बन्द कर देगी क्योंकि रोगियों के शरीर में इतना एन्टीबायटिक पहुंच जायेगा जिससे शरीर एन्टीबायटिक का आदि हो जायेगा और एन्टीबायटिक का प्रभाव खत्म हो जायेगा। कुछ एन्टीबायटिक ने काम करना बन्द कर दिया है।

### आयुर्वेद से आशा क्यों।

क. आयुर्वेद का साहित्य इतना बड़ा है कि एलोपैथी को वहाँ तक पहुंचने में 500 वर्ष लगेंगे। जैसे पिछले दि नीम का पेटेण्ट अमरीका में एन्टीसैप्टीक के रूप हुआ- जो पेटेन्ट अब कैन्सल हो गया है। कि आयुर्वेद मतानुसार नीम-रक्तशोधक-यकृत हितकार ज्वर नाशक-त्वचा शोधक है।

ख. भारत में ही 6 ऋतु होती है जो वनौषध के कार्यत्व को बढ़ाने में सहायक है जैसे एक तुलसी का पौध खुले प्रागंण में लगा है। जब बरसात आएगी तो तुलसी बरसात में बचने के लिए प्रांगण से छत वाले स्थान पर नहीं जा सकती - तुलसी के पौधों को बरसात के कुप्रभाव से बचने के लिए अपने में शक्ति पैदा करनी होगी। इस प्रकार जब तीखी धूप पड़ेगी तो भी तुलसी को अपनी रक्षा के लिये अपने शरीर में धूप के कुप्रभाव से बचने के लिये शक्ति पैदा करनी होगी। इस प्रकार तुलसी में कार्यतत्व बढ़ते रहेंगे। इस कारण अन्य देशों की वनौषध से भारत की वनौषध में अधिक गुण होंगे।

ग. विश्व में सबसे अधिक वनौषध भारत में पाई जाती है W.H.O. के अनुसार 8000 वनौषध भिन्न चिकित्सा प्रणालियों में भिन्न प्रकार से प्रयोग में लाई जाती है इसमें अधिकतर भारत में होती है क्योंकि विश्व में जो प्रकार से में वनौषध पैदा होते हैं। 1. समुद्र सतह से 1000 फुटतक 2. समुद्र सतह से 3000 फुट की सतह पर 3. समुद्र सतह से 6000 फुट की सतह तक 4. 600 फुट की सतह से ऊपर ये चारों भौगोलिक सतह भारत में हैं।

इस अवसर पर डा० सांख्यान जी ने कहा कि डा० गोपाल चड्ढा आज के आयुर्वेद के विवेकानन्द हैं इनके कार्यों की आयुर्वेद में भुलाया नहीं जा सकता। डा० गोपाल चड्ढा ने अपना जीवन आयुर्वेद की समर्पित कर दिया है।

डा०. गोपाल चड्ढा 28 मई 2006 को चामुण्डा माता के पास कैंसर और आयुर्वेदिक वनौषधी का वैज्ञानिक आधार पर एक दिवसीय कैंसर कांफ्रेंस कर रहे हैं।


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


## नयी दिल्ली

### आयुर्वेद विश्व परिषद्

### (World Academy of Ayurved) द्वारा

### डा० पी.एन.वी. कुरूपजी का अभिनन्दन

माननीय वैद्य समाज, आयुर्वेद प्रेमीजन,

सर्वप्रथम आयुर्वेद जगद्गुरु पद्मविभूषण वैद्यराज श्रीवृहस्पतिदेव त्रिगुणाजी 'अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन' तथा आयुर्वेद विश्व परिषद् के अधिकारियों, सदस्यों तथा समस्त वैद्यों का स्वागत करता हूँ, जो अमूल्य समय निकाल कर समारोह में सम्मिलित हुए हैं ।

आयुर्वेद विश्व परिषद् की स्थापना 12 जनवरी, 1957 को कुरुक्षेत्र में, आयुर्वेद नेता पं० शिव शर्मा, वैद्य पं० हरिदत्त शास्त्री (डाइरेक्टर आफ आयुर्वेद, महाराष्ट्र), वैद्य श्री आशुतोष मजूमदार (रजिस्ट्रार, इण्डियन मेडिसिन बोर्ड, दिल्ली प्रशासन), आचार्य प्रभाकर मिश्र (तत्कालीन संगठन मंत्री, संस्कृत विश्व परिषद् तथा संस्कृतविभागाध्यक्ष, भारतीय विद्या भवन, मुम्बई) के प्रयासों से भारत के महामहिम राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी तथा भारत सरकार के विधि मंत्री, डा०के०एम० मुंशी के सान्निध्य तथा कविराज प्रताप सिंह (आयुर्वेद एडवाइजर, भारत सरकार) की अध्यक्षता में हुई ।

वर्तमान में आचार्य प्रभाकर मिश्र (दिल्ली), वैद्यराज गंगाधर द्विवेदीजी के नेतृत्व में परिषद् का विस्तार विश्व में हो रहा है । वैद्य श्रीरमणदास त्यागी (सिडनी) आस्ट्रेलिया में, स्वामी अरविन्दानन्द (ब्राजील) विदेश में प्रचाररत हैं तथा भारत में 65 जिलों में परिषद् के आयुर्वेद जिलाध्यक्ष मनोनीत कर दिए हैं ।

आयुर्वेद विश्व परिषद् उस कार्य को करती है, जो अन्य संगठन नहीं कर रहें, जैसे :-

1. आयुर्वेद को लोकप्रिय बनाने के लिए, आयुर्वेद विज्ञान की 'सामान्य ज्ञान परीक्षाएं' (मिडिल तथा हायर सेकेण्डरी स्कूलों में परीक्षा केन्द्र स्थापित करके) जीवनचर्या पर पाठ्यक्रम संचालित होगा ।
2. अनुभवी (अपंजीकृत) वैद्यों को झोलाछाप कहकर अपमानित करने वालों का मुख बन्द करने के लिए लघु द्विवर्षीय आयुर्वेद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाना औ उसकी मान्यता का प्रयास ।
3. आयुर्वेद तथा औषधीय पादपों के अनुसंधानकों क सम्मान-पत्र ।

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन ने 10 वर्षों में आयुर्वेद के विकास का प्रशंसनीय कार्य किया है पं० शिव शर्मा जी के निधन के पश्चात् कच्छप गति स संगठन कुछ काल चलता रहा । परन्तु भगवान धन्वन्त की कृपा से वैद्यराज त्रिगुणाजी जैसी आयुर्वेद महाशक्ति का अभ्युदय हुआ और विगत 20 वर्षों के अन्तराल आयुर्वेद का स्वर्णिम युग पुनः वापस लौटा । अब अखिल भारतीय आयुर्वे महासम्मेलन का शताब्दी महोत्सव मनाय जा रहा है, आयुर्वेद जगत को पूर्ण सहयोग देना चाहिए

इन्हीं विगत वर्षों में जो आयुर्वेद के कर्णधा सामने आए, उनमें एक नाम है श्री डा०पी.एन.वी. कुरूपज का, जिन्होंने अनेक पदों पर रहकर आयुर्वेद का पुनरुत्था किया है । आप जामनगर आयुर्वेद विश्वविद्यालय, गुजरा के उपकुलपति के पदसे अवकाश प्राप्तकर, भारत सरका के स्वास्थ्य मंत्रालय में एक महत्वपूर्ण उपक्रम 'राष्ट्री आयुर्वेद विद्यापीठ' (नेशनल एकेडमी ऑफ आयुर्वेद) अध्यक्ष मनोनीत हुए हैं । आयुर्वेद विश्व परिषद् तथा अन आयुर्वेद संगठन आपको अपनी ओर से बधाई, अभिनन्द प्रस्तुत करते हैं । राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ के समक्ष प्रवेशार्थियों द्वारा यह महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित किया जा है कि द्विवर्षीय अध्ययन-अनुशासन के पश्चात् को मान्यताप्राप्त प्रमाण-पत्र उन्हें नही मिलता ? आशा है ऐस कोई महत्त्वपूर्ण समस्याओं का समाधान आप द्वारा किया जाएगा ।

हम एक बार पुनः श्री डा० कुरूपजी का हार्दि अभिनन्दन, स्वागत करते हैं । धन्यवाद ।

उद्घोषक

**वैद्यराज सुन्दरसिंह सोलंकी**

केन्द्रीय उपाध्यक्ष

परिषद् के अध्यक्ष की आज्ञा से प्रसारित

डा० धर्मसिंह कौशिक (राष्ट्रीय सचिव)

वैद्य राधेश्याम शर्मा (प्रदेश सचिव)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# ॥ चौखम्बा आयुर्वेदीय प्रकाशन ॥

| P.Cd. | भाषा | | P.Cd. | भाषा | |
|---|---|---|---|---|---|
| 9501 | अभिनव शारीर | हिन्दी पं. बापूदेव शर्मा गौड | 0398 | किशोर बल और ब्रह्मचर्य | हिन्दी वैद्य रवीन्द्र रावली |
| 9501 | अभिनव शारीरम् | संस्कृत पं. बापूदेव शर्मा गौड | 9491 | मानस रोग विज्ञान | हिन्दी श्री बालकृष्णजी अग्रवाल एम. |
| 9807 | अन्त्यशिक्षाए रामकृष्णी-कोष्ठाश्रम प्रकरणानि | हिन्दी | 0393 | MEDICINAL FLORA OF GARHWAL HIMALAYAS | ENG. DR. MAYARAM UNIYAL |
| 9810 | अष्टांगहृदय प्रकाश | हिन्दी आचार्य रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी | 0697 | योगासन कब करने के लाभ | हिन्दी श्री समुदर बहलानी |
| 9813 | AROGYA PRAKASH | ENG | 9501 | वेद चिकित्सा | संस्कृत डा. कालकृष्ण शिवराम कुंटे |
| 9816 | आरोग्य प्रकाश: | हिन्दी पं. रामनारायण शर्मा शिव | 9504 | वेद वेद विज्ञान | (हिन्दी) |
| 9814 | अष्टांग हृदय की वनौषधियों का वर्गीकरण | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल | 0907 | निदान चिकित्सा हस्तामलक (प्रथम खंड) | हिन्दी वैद्य रमाशिल राय देसाई |
| 9822 | अष्टांग संग्रह | हिन्दी पं. बागभट्ट | 3210 | निदान चिकित्सा हस्तामलक (द्वितीय खंड) | हिन्दी वैद्य रमाशिल राय देसाई |
| 9821 | बिहार की वनस्पतियाँ | हिन्दी | 9013 | निदान चिकित्सा हस्तामलक (तृतीय खंड) | हिन्दी वैद्य रमाशिल राय देसाई |
| 9832 | अष्टांग हृदय (शारीर, निदान चिकित्सास्थसिद्ध स्थान) | हिन्दी पं. बागभट्ट | 9318 | निदान चिकित्सा हस्तामलक (चतुर्थ खंड) | हिन्दी वैद्य कामशील राय देसाई |
| 9835 | अष्टांग हृदय सूत्र स्थान | हिन्दी पं. लालचन्द शास्त्री | 9914 | पदार्थ विज्ञान | हिन्दी पं. रामरख शर्मा |
| 9828 | अष्टांग संग्रह उत्तरस्थान | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल | 9922 | पदार्थ विज्ञानसार | हिन्दी वैद्य अनुपम मुरलीधर त्रिवेदी |
| 9831 | अपस्मारिक चिकित्सा | हिन्दी | 9920 | परिचर्या शास्त्रार्थ शारीर | संस्कृत पं. बापूदेव शर्मा गौड |
| 9834 | औषधि विज्ञान शास्त्र | हिन्दी पं. विश्वनाथ त्रिवेदी | 3420 | PROBLEMS OF AYURVEDIC RESEARCH | ENG. SRI S.P. GUPTA |
| 9803 | आयुर्वेद अनुसंधान दर्पिका | हिन्दी | | प्रयोगात्मक अभिनव द्रव्य गुण विज्ञानम् (द्रव्यगुणात्मक संस्करणम्) | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल |
| 9837 | आयुर्वेदीय पंचकर्म विज्ञान | हिन्दी वैद्य हरिदास श्रीधर भास्कुरे | 9304 | प्रयोगात्मक अभिनव द्रव्य गुण विज्ञानम् (छात्र संस्करणम्) | |
| 9840 | आयुर्वेद सार संग्रह | हिन्दी सांकलिया | 9917 | पोकेट सरस्वती ग्रंथावली स्मृति ग्रंथ | हिन्दी शिवनंद पांडेय |
| 9843 | आयुर्वेदीय औषध सेवन विधि | हिन्दी सांकलिया | 9340 | एच-मेरा शेयर विधि | हिन्दी पं. वेणी प्रसाद वैद्य |
| 9846 | आयुर्वेदीय हितोपदेश | हिन्दी वैद्य पण्डित राय देसाई | 9343 | लक्षणात्मक रोग विज्ञान | हिन्दी कविराज बालकराम शुक्ल |
| 9849 | आयुर्वेदीय रोग्य शरीर | हिन्दी वैद्य पण्डित राय देसाई | 9348 | SCIENCE AND PHILOSOPHY OF INDIAN MEDICINES | ENG. SRI K.K. UNIYAL |
| 9852 | आयुर्वेदीय पदार्थ विज्ञान | हिन्दी वैद्य पण्डित राय देसाई | 9949 | शारीरम् संहिता | हिन्दी आचार्य राजकृष्ण व्यास |
| 9855 | आयुर्वेदीय व्यावहारिक विज्ञान (पूर्वार्द्ध) | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | 9355 | शिरोयोग संग्रह | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य |
| 9858 | आयुर्वेदीय व्यावहारिक विज्ञान (उत्तरार्द्ध) | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | 9361 | शरीर क्रिया विज्ञान | हिन्दी |
| 9861 | BAIDYANATH BOOK OF AYURVED KNOWLEDGE | ENG. | 9858 | THERAPEUTIC GUIDE TO AYURVEDIC MEDICINES | ENG. PT. RAMRAKSHA PATHAK |
| 9864 | BAIDYANATH THERAPEUTIC GUIDE | ENG. PT. DURGA PD. SHARMA | 0958 | TREATISE ON 30 BAID. AYUR. PRODUCTS | ENG. PT. DURGA PD. SHARMA |
| 0967 | BASIC PRINCIPLE OF AYURVEDA RESEARCH | ENG. SRI O.R SHARMA AND R.P. SHAH | 9961 | त्रिदोष लक्षण विमर्श | हिन्दी पं. रामरक्ष पाठक |
| 9958 | बिहार के आदिवासी एवं उनकी बूटियाँ | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल | 9964 | यूनानी चिकित्सा सार | हिन्दी हकीम दलजीत सिंह |
| 9958 | उत्तराखंड हिमालय की वनस्पतियाँ एवं खनिज | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल | 0967 | यूनानी चिकित्सीय संग्रह | हिन्दी हकीम मनजीत सिंह |
| 9970 | व्यवसीय एवं शरीर | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | 9970 | रसायन वाजीकरण और पंचकर्म | हिन्दी वैद्य पण्डित राय देसाई |
| 9973 | वैद्यों सर्वस्वपूर्ण ज्ञान | हिन्दी रामेश्वर वैद्य | 9973 | वैद्य सहचर | हिन्दी पं. शिवनारायण शर्मा |
| 9976 | वरुण एवं मूत्राशय के दाहनाशक योग्य उपचार | हिन्दी डा. ज्योतिमित्र आचार्य | 9976 | वनौषधि शतक | हिन्दी पं. दुर्गा शंकर शर्मा |
| 9979 | दर्शना चिकित्सा | हिन्दी आचार्य रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी | 9979 | मानव स्मृति ग्रंथ | हिन्दी पं. ब्रह्मानंद शर्मा एवं पं. रामनारायण शर्मा |
| 9979 | DIGESTION & METABOLISM IN AYURVED | ENG. DR. C. DWARKANATH | 9982 | जीवन विज्ञान एवं रक्षा आयुर्वेद | हिन्दी डा. मायाराम उनियाल |
| 9982 | द्रव्यगुण विज्ञान (पूर्वार्द्ध) | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | | | |
| 9985 | द्रव्यगुण विज्ञान (उत्तरार्द्ध) | हिन्दी वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य | | | |

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ISSN - 090678 X

# सचित्र आयुर्वेद

# SACHITRA AYURVED

## A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

वर्ष - 58 अंक - 12 जून - 2006

स्वेदाग्नि जननी लघ्वी दीपनी बस्तिशोधनी
क्षुत्तृट् श्रमग्लाग्नि हरी पेया वातानुलोमनी।
विलेपी तर्पणी हृद्या ग्राहिणी बलवर्धनी ।
पथ्या स्वादुरसा लघ्वी दीपनी क्षुत्तृषापहा ।।

सु०सू० 46/341-342

Central Library
Gurukul Kangri University
Hardwar-249404 (U.P.)
Spant 10/7

**पेया** - स्वेद एवं अग्निजनक, लघु, अग्नि दीपक, वस्तिशोधक (मूत्रल), क्षुत् (भूख), प्यास, श्रम और ग्लानिनाशक एवं वायु का अनुलोमन करती है ।

**विलेपी** - तर्पणी (तृप्तिकारक), हृदय के लिए प्रिय, संग्राही, बलवर्धनी, पथ्या (हितकारी), मधुर रस, लघु, अग्निदीपक, भूख-प्यास नाशक है ।

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अब भूल जाईये महीने की चिन्ता

## बैद्यनाथ सुन्दरी कल्प फोर्ट

रक्त की कमी, घबराहट, थकावट, हाथ पाँव के तलवे की जलन आदि परेशानियों में फौरन आराम देता है ।

''अब आप भी अपना ख्याल रखिए''

## बैद्यनाथ सुरक्ता

आयुर्वेदिक स्किन टोनर
कील मुहाँसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# 'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहक कृपया ध्यान दें

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहकों से हमारा विनम्र निवेदन है कि जिनका चन्दा जून' 2006 तक जमा है, जून' 2006 का अंक मिलने के बाद उनका वार्षिक शुल्क समाप्त हो जाएगा । अतः निवेदन है कि अब वे यथाशीघ्र जुलाई, 2006 से जून, 2007 तक की अवधि के लिए वार्षिक शुल्क 100 रुपया मनीआर्डर से निम्न पते पर भेज दें । इस प्रकार जिन ग्राहकों का वार्षिक शुल्क हमें प्राप्त हो जायेगा, उन्हें हम अलग से कोई कार्ड अथवा वी. पी. नहीं भेजेंगे । स्मरणीय है कि मनीआर्डर से चंदा भेजने पर केवल 100 रुपये ही देने पड़ेंगे जबकि वी.पी. भेजने पर लगभग 150 रुपये देने पड़ जायेंगे । अतः एकमात्र तरीका मनीआर्डर द्वारा वार्षिक चंदा यथाशीघ्र भेज देना है । अगर किसी ग्राहक महानुभाव को किसी कारणवश अग्रिम वर्ष 2006-2007 से ग्राहक नहीं बनना हो तो वे अपने निर्णय की सूचना इस कार्यालय को शीघ्र देंगे । यदि किसी कारणवश वार्षिक शुल्क में वृद्धि हुयी, तो यह वृद्धि उन ग्राहकों पर लागू नहीं होगी, जिन्होंने शुल्क भेज दिया है ।

नोट - जो ग्राहक छात्र हैं, वे अपने संस्थान से प्राप्त प्रमाण-पत्र के साथ रियायती वार्षिक शुल्क मात्र 75.00 रु. मनीआर्डर से भेज सकते हैं ।

व्यवस्थापक

## सचित्र आयुर्वेद

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०,

वैद्यनाथ भवन रोड, पटना-800 001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहार चैम्बर आफ कामर्स के सभागार में श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० पटना के निदेशक, श्री प्रमोद शर्म
फर्माटेक सेमिनार को सम्बोधित करते हुए दिखाई पड़ रहे हैं ।

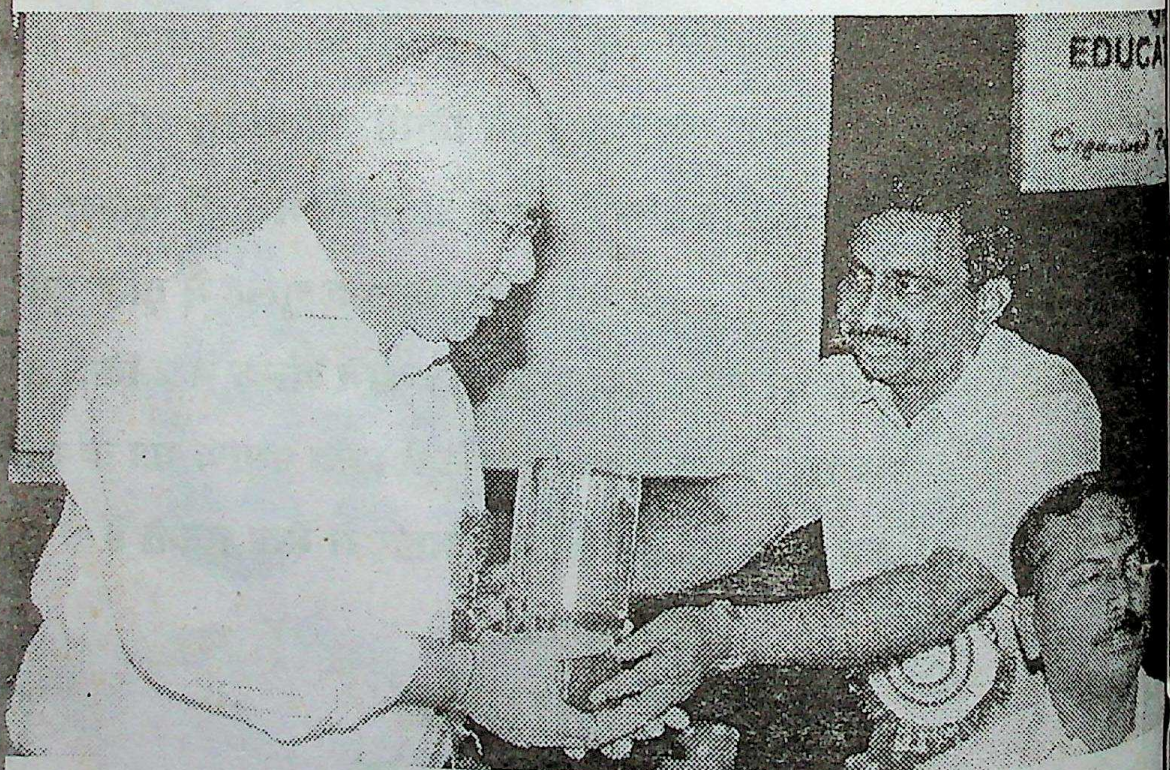

फमाटेक सेमिनार-2006 के अवसर पर श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना के निदेशक, श्री
प्रमोद शर्मा का स्वागत आयोजकों की ओर से श्री नन्द किशोर प्रसाद कर रहे हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहार के मुख्यमंत्री, श्री नीतीश कुमार, भारत के भूतपूर्व मानव संसाधन मंत्री, डा० मुरली मनोहर जोशी, बिहार के उपमुख्यमंत्री, श्री सुशील कुमार मोदी एवं आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष, वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा आपस में विचार-विमर्श करते हुए परिलक्षित है ।

समारोह का शुभारम्भ दीप-प्रज्जवलित करते हुए 'भवन' के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा कर रहे हैं

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची

वर्ष - 58 अंक - 12 जून - 2006

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-**baidyanath_ayurved@vsnl.com**

एक प्रति मूल्य - 10 रुपये प्रति

वार्षिक मूल्य - 100 रुपये प्रति

आजीवन शुल्क - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुल्क - 2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 884

2. आयुर्वेद का इतिहास - 79 885
पं० बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा

3. अजीर्ण रोग-संक्षिप्त परिचय 888
वैद्य पी.एस. अंशुमान

4. दूषणाद्दोषाः 895
अनन्तराम शर्मा

5. आयुर्वेदीय दृष्टि से अतिमधु पर्णी पादप की औषधीय कार्मुकता-एक अध्ययन 900
डा० आर०एस० चौहान

6. आयुर्वेदिक औषधियों की गर्भ-निरोधन में उपयोगिता 902
डा० अनिता शर्मा
डा० विनोद कुमार गोठेचा

7. हृदय रोग के कारण एवं निवारण 904
प्रो० सी०बी० झा, डा० सूढ़लदेव महापात्र

8. गर्भावस्था में शिशु और माँ की स्वास्थ्य रक्षा-एक समीक्षा 906
धीरज बोहरा, डा० सुरेश चन्द्र

9. बालकों में कृमि रोग-निदान एवं चिकित्सा 908
डा० दिनेश कुमार राय, डा० शशिकान्त सचान

10. कुपोषण समस्या और आयुर्वेद 912
वैद्य विजय कुलकर्णी

11. ग्रीष्म ऋतुचर्या 914
डा० प्रेम चन्द्र मंगल

12. प्याज, एक गुणकारी औषध 915
डा० विनय शौनक

13. बलकारक खजूर 916
डा० विजय कुमार नाहर

14. ग्रीष्म कालीन सेवनीय आहार-विहार 918
कविराज डा० दिवाकर ठाकुर

15. A study on Makshika 920
Sridurga, K R C Reddy, C.B. Jha

16. A Review of Quality Evaluation of Herbal Formulation 922
Saini V, Kinger H.K., V.B. Gupta

17. Madanaphala - A complete drug for Panchakarma 924
Dr. Prakash L. Hegde,
Prof. Maheshchandra

18. Personality 926

19. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 927

20. आपके अनुभूत प्रयोग 928

21. आपके पत्र 930

22. आरोग्य समाचार 934

23. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 937

24. सचित्र आयुर्वेद में जुलाई 2005 से जून 2006 तक के प्रकाशित लेखों की वार्षिक-सूची 948

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## सम्पादकीय वैज्ञानिक एवं तकनीकी सफलता, संवेदी सूचकांक की अप्रत्याशित वृद्धि और शिशु स्वास्थ्य

हमारे देश के राजनेता इस बात से प्रसन्न हैं कि देश काफी तेजी से वैज्ञानिक एवं तकनीकी सफलता हासिल कर रहा है । स्टाक एक्सचेंज में संवेदी सूचकांक पिछले दिनों से काफी तेजी से बढ़ रहा था । अचानक ही सूचकांक में काफी गिरावट आयी । भारत के वित्त मंत्री एवं सरकार एवं वित्तीय संस्था भयभीत हो गये । सूचकांक में अप्रत्याशित वृद्धि और गिरावट सरकार के खोखले दावे की ओर संकेत देती है । हमारे देश में उच्च वर्गीय लोग एवं प्रेस इस बात का प्रचार करने में लगे हुए हैं कि स्टाक एक्सचेंज का संवेदी सूचकांक हमारी प्रगति की दर को रेखांकित करता है । हम सहमत हैं कि हमारे देश में वैज्ञानिक एवं तकनीकि प्रगति काफी तेजी से हो रही है, लेकिन यह तेजी दुनिया के अन्य देशों में भी हो रही है । एशिया में चीन काफी तीव्र गति से आर्थिक प्रगति कर रहा है । किन्तु, इस तेजी का यह अर्थ कदापि नहीं है कि हम अपने सामाजिक दायित्वों को भूल जायं । भारत के राष्ट्रपति, डा० ए.पी.जे. कलाम ने तकनीकी दिवस के अवसर पर राष्ट्र को सम्बोधित करते हुए नयी स्वास्थ्य योजना को बनाने पर जोर दिया । उनकी राय में इस योजना में जैव तकनीक एवं नेनो तकनीक का भरपूर उपयोग होना चाहिए । डा० कलाम ने अनेक अवसरों पर कहा कि विज्ञान एवं तकनीक का प्रयोग आम जनता के लिए होना चाहिए । हम उनसे इस प्रश्न पर सहमत हैं ।

बच्चे राष्ट्र के भविष्य हैं । आज का शिशु कल का राष्ट्र का नायक बन सकता है । यदि उनका बचपन निर्धनता में व्यतीत होगा, स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक आहार एवं औषधियों को क्रय करने में उनके अभिभावक सक्षम नहीं होंगे, तो निश्चय ही इसका असर उनकी मेधा-शक्ति पर पड़ेगा । ये शिशु युवक होकर भी आलसी होंगे और वे मनोयोग पूर्वक राष्ट्र का निर्माण नहीं कर पायेंगे । अत: वक्त का तकाजा है कि विकास सही अर्थों में हो । इस विकास का लाभ-शिशु से लेकर वृद्धों तक को प्राप्त हो, तभी विकास सार्थक कहा जा सकता है ।

संयुक्त राष्ट्र संघ के एक प्रतिवेदन के अनुसार दुनिया की आबादी के एक तिहाई बच्चे कुपोषण के शिकार हैं । भारतवर्ष में इसकी दर इथोपिया की तरह 47% है । आंकड़ों के अनुसार दुनिया की आधी आबादी के बच्चे जो अल्प वजन एवं कुपोषण के शिकार हैं, वे दक्षिण एशिया से आते हैं । हमारे देश में बालकों की अपेक्षा बालिकाओं में कुपोषण की ज्यादा शिकायत मिलती है । यूनिसेफ के एक प्रतिवेदन के अनुसार पांच वर्ष की कम आयु के लगभग 600000 शिशुओं की मृत्यु प्रतिवर्ष हो जाती है । यह मृत्यु आहार-विहार एवं सफाई से रोकी जा सकती है । चौंकाने वाला तथ्य है कि चीन वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्र में सफलता के साथ-साथ स्वास्थ्य-क्षेत्र में भी अभूतपूर्व प्रगति कर रहा है । आंकड़ों के अनुसार चीन में कुपोषण से होने वाली मृत्यु की दर घटाकर 8% कर दी है । विश्व के अनेक देशों में, विशेषकर दक्षिण एशिया के देश में सन् 2015 तक भूख और गरीबी से होने वाली मृत्यु में विजय प्राप्त करने का दावा किया गया है, किन्तु हमें सन्देह है कि लक्ष्य के अनुपात में सफलता प्राप्त हो सकेगी । कारण यह है कि हमारी सरकार का ध्यान मूल समस्याओं की ओर नहीं है । वे देश की तरक्की की बात तो करते हैं, किन्तु तरक्की के परिणामों को आम जनता के मध्य वितरित नहीं करना चाहते हैं । यूनिसेफ ने स्पष्ट किया है कि कुपोषण के मुख्य कारण कुपोषण, शिक्षा का अभाव और सामाजिक विषमता हैं । हमारे देश में अलग-अलग राज्यों में कुपोषण का प्रतिशत अलग-अलग है । उदाहरण के लिए मध्य प्रदेश में यह दर 55.1% है, जबकि बिहार में इसकी दर 54.4% है । यह सत्य है कि इन दोनों राज्यों में काफी गरीबी है, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं हैं कि धनी राज्यों में कुपोषण के शिकार शिशु नहीं हैं उदाहरण के लिए, देश की वित्तीय राजधानी, मुम्बई के नजदीक वाले शहर थाणे में भी स्थिति काफी दयनीय है । आंकड़ों के अनुसार गत वर्ष 6 वर्ष से कम आयु के 1100 शिशुओं की मृत्यु केवल थाणे जिले में हुयी है । यद्यपि मृत्यु के कारणों में न्यूमोनिया तथा अन्य रोग बताये गये हैं, जबकि विशेषज्ञ चिकित्सकों के अनुसार यह सत्य नहीं है । कुपोषण के कारण रोगियों की रोग से लड़ने की प्रतिरोधी क्षमता कम हो जाती है, फलत: मृत्युजन्य रोगों की उत्पत्ति हो जाती है ।

अत: जरूरत है कि बच्चों को पौष्टिक भोजन निरन्तर मिले । आशा है कि सरकार इस दिशा में आवश्यक कार्रवाई करेगी । वैज्ञानिक और तकनीकी सफलता तथा संवेदी सूचकांक को लेकर सरकार आम जनता को मूर्ख नहीं बनावे, तो ज्यादा अच्छा होगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

# आयुर्वेद का इतिहास-79

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

## नागार्जुन

श्री मैक्स वालेसर[1] ने नागार्जुन के सम्बन्ध में लिखा है - "इससे हम सहमत हैं कि आज तक नागार्जुन का जीवन पूरी तरह संदेहों में भरा है, क्योंकि परम्परा के विरोधाभासी साधनों से ज्ञात होता है कि इस नाम के लेखक अवश्य थे।"

श्री मूर्त्ति[2] ने नागार्जुन के सम्बन्ध में निम्नलिखित तथ्य स्थापित किये हैं :-

श्री नागार्जुन 150 ई० में पैदा हुए थे।

यह अच्छी परिकल्पना है और इससे ज्यादा कुछ भी नहीं कि वे दूसरी शती के उत्तरार्ध में पैदा हुए थे (सन्दर्भ :- Wintermitz, History of Indian Literature, II, P.342)

श्री भट्टाचार्य[3] के अनुसार नागार्जुन बौद्ध उपदेशक थे तथा उसी नाम से अन्य तान्त्रिक शिक्षक से पृथक् थे जो सातवीं शती में थे। नागार्जुन दूसरी शती में पैदा हुए थे।

श्री बागची[4] ने निम्नलिखित मत व्यक्त किये हैं :-

1. नागार्जुन सिद्धों में से एक थे। साधना में रस विधा लागू करने का श्रेय नागार्जुन को जाता है।
2. बोधिसत्व का सम्बन्ध रसविधा से है।
3. शरीर में बोधिसत्व एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसके विपरीत रस एक जगह स्थिर नहीं रहता है। इस के अस्थिर गुण को समाप्त करने के लिए इसे वज्र में बदला जाता है। इसके अतिरिक्त पारद बोधिसत्व की तरह है जिसे रसविज्ञानी, कठोर धातु (जैसे सोना) में बदलने का प्रयास करते हैं।
4. सिद्ध नागार्जुन दसवीं शती में थे। प्रथम सिद्ध भी दसवीं शती में थे।

सर्वश्री मजुमदार, रायचौधुरी एवं दत्त[5] के अनुसार नागार्जुन शातवाहन के शासनकाल में पैदा हुए थे। एक जगह वे लिखते हैं कि अश्वघोष के काल में चरक, सुश्रुत, नागार्जुन, कुमारलता थे।

श्री कैथ[6] ने अपनी पुस्तक में नागार्जुन के सम्बन्ध में निम्न तथ्यों पर प्रकाश डाला है :-

1. नागार्जुन रहस्यमय थे। सम्भवतः वे द्वितीय शती के उत्तरार्ध में थे। माध्यम कारिका में विरोधाभासी लेख है।
2. सुहृल्लेख में नागार्जुन में बौद्ध दर्शन को एक राजा के लिए संक्षेपीकरण किया है। दुर्भाग्यवश उनका पूर्ण परिचय नहीं मिलता है।
3. नागार्जुन बौद्ध दार्शनिक थे।
4. योग सार एवं योग शतक के लेखक नागार्जुन माने जाते हैं (सन्दर्भ :- Hara Prasad, Report 1, PP. 9 Nepal Catel, P. xxii)
5. रतिशास्त्र के लेखक नागार्जुन थे। (सन्दर्भ :- C Schmidt, WZKM, xxiii, 180 ff, and on the comm Smaratattvaprakacika of Revanaradhya, WZKM xiii, 261 ff.)
6. रसरत्नकार के लेखक नागार्जुन थे, किन्तु वे राय के अनुसार इसे सातवीं या आठवीं शती का मानते हैं।

श्री बनर्जी[7] के अनुसार नागार्जुन ने माध्यमिक शास्त्र या माध्यमिक कारिका नाम से 21 अध्यायों में ग्रन्थ का प्रणयन किया। भारतीय इतिहास में नागार्जुन की महान कृति मानी जाती है। इसमें शून्यता के दर्शन पर प्रकाश डाला गया है।

श्री राघवन[8] ने चतुःस्तव के लेखक नागार्जुन का जिक्र किया है। इसमें बौद्ध स्तोत्रों का वर्णन है।

एक ग्रन्थ[9] के अनुसार नागार्जुन ने देश के पश्चिमी भाग पर अपनी प्रष्ठिता कायम की। इसके अतिरिक्त इस ग्रन्थ में निम्न तथ्यों पर प्रकाश डाला गया है :-

1. नागार्जुन बौद्ध दार्शनिक थे।
2. नागार्जुन के कई प्रसिद्ध ग्रन्थों का अनुवाद तिब्बती भाषा में हुआ था। जैसे ईश्वर-कर्त्तव्य-निरंकार, मूल माध्यमकारिका, आमनेर कारिका, युक्तिशती कारिका आदि।
3. माध्यमिक शाखा को तीन ग्रन्थों की शाखा कहा जाता है। जैसे - नागार्जुन माध्यमिक शास्त्र, द्वादशमुख शास्त्र और आर्यदेव के शत् शास्त्र (चतुःशतक)।

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, 2 सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



विभिन्न विद्वानों द्वारा किये गये तर्कों के आधार पर नागार्जुन के सम्बन्ध में निम्न तथ्य निरूपित होते हैं :-

1. कनिष्क प्रथम का काल 78 ई० माना जाता है । बुद्ध चरित के लेखक, दार्शनिक, कवि और नाटककार अश्वघोष इनके दरबार में थे । नागार्जुन का काल अश्वघोष के समय माना जाता है । अर्थात् नागार्जुन का काल 78 ई० माना जा सकता है ।
2. शुंग और कण्व का शासनकाल 40-30 ई०पू० था जब शातवाहनों ने उन पर आधिपत्य स्थापित किया । कुछ पुराणों के अनुसार शातवाहन के 10 राजाओं ने 300 वर्षों तक शासन किया और कुछ विद्वानों के अनुसार 456 वर्षों तक शासन किया, किन्तु निश्चित रूप से सातवाहन शासन का अन्त तीसरी शती के मध्य में हो गया । यदि नागार्जुन सातवाहन शासन काल में थे, तो वे भी तीसरी शती के मध्य के पूर्व रहे होंगे । चूंकि सातवाहन का शासन ई०पू० से प्रारम्भ हुआ था और तीसरी शती के मध्य तक गया था, इसलिए यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि नागार्जुन वस्तुतः किस वर्ष पैदा हुए थे ।
3. आचार्य प्रियव्रतजी के अनुसार सुश्रुत के प्रतिसंस्कर्ता नागार्जुन गुप्तकालीन थे । इतिहासज्ञों के अनुसार गुप्तकाल 320 ई० से अर्थात् चन्द्रगुप्त प्रथम से प्रारम्भ होता है । इसका अर्थ है कि सुश्रुत के प्रतिसंस्कर्ता नागार्जुन 320 ई० के पश्चात् हुये होंगे । यदि प्रियव्रतजी के तर्क को सही माना जाय, तो गौतमीपुत्र यज्ञश्री (166 ई०-196 ई०) के समय का नागार्जुन पृथक् था ।
4. दार्शनिक नागार्जुन आर्य नागार्जुन से पृथक थे ।
5. रसेश्वर सिद्ध नागार्जुन निश्चित रूप से दार्शनिक नागार्जुन से पृथक् थे । कुछ विद्वान इनका अस्तित्व सातवीं शती से लेकर 10वीं शती तक मानते हैं । यदि इस तर्क को स्वीकार भी कर लिया जाय, तो 78 ई० के दार्शनिक नागार्जुन एवं रसेश्वर नागार्जुन में एक लम्बी अवधि का अन्तर हुआ है । अतः निश्चित् रूप से दोनों पृथक् थे ।
6. नागार्जुन बौद्ध दार्शनिक थे । इसका पर्याप्त प्रमाण इतिहास में उपलब्ध है ।
7. नागार्जुन रस सिद्ध भी थे - इसके भी प्रमाण मिलते हैं ।
8. दार्शनिक नागार्जुन और सुश्रुत के प्रतिसंस्कर्ता एक हो सकते हैं, क्योंकि दोनों के काल में कम अवधि का अन्तर है ।
9. यह सम्भव है कि योगसार, योगशतक और रतिशास्त्र के लेखक नागार्जुन आयुर्वेदज्ञ नागार्जुन हो सकते हैं, क्योंकि जो चिकित्सा-विज्ञान पर अधिकार रखते हैं, वे योग-शास्त्र पर अधिकार रख सकते हैं, साथ ही दर्शनशास्त्र पर भी । उदाहरण के लिए चरक संहिता एक चिकित्सा-विज्ञान है, इसके बावजूद इसमें सांख्य और वैशेषिक दर्शन के विवरण मिलते हैं । प्राचीन काल में हमारे महर्षि जीवन के कई विज्ञानों पर एक साथ अधिकार रखते थे ।

निष्कर्षतः नागार्जुन कई थे एवं वे रहस्यमय व्यक्तित्व के स्वामी थे - इसमें दो मत नहीं है । इतिहासज्ञों को नागार्जुन के रहस्य पर से पर्दा उठाना चाहिए - यह हमारा अनुरोध है । (निरन्तर जारी)

**सन्दर्भ :-**


1. Life of Nagarjuna, P.6 - Max walleser.
2. Rise of the Philosophical Schools - T.R.V. Murti, M.A., D. LITT - The cultural Heritage of India - The Ramakrishna Mission - Institute of Culture, Calcutta.
3. Tantrika Culture Among the Buddhists - Benoytosh Bhattachary - Formerla Director, Oriental Institute - Baroda courtesy: The Cultural Heritage of India, The Ramakrishna Mission, Calcutta.
4. The cuit of the Buddhist Sudhacaryas- P.C. Bagchi, M.A.; Ph.D. - Cultural Heritage of India - The Ramakrishna Mission, Calcutta.
5. An Advanced History of India - R.C. Majumdar, H.C. Raychaudhuri and Kalikinkar Datta - Macmillan India Ltd., Madras.
6. A History of Sanskrit Literature - A.B. Keith, D.C.L., D. LITT. - Oxford University Press.
7. Buddhist Literature - Anukul chandra Banerjee, M.A., LLB - Formerly Head of the Deptt. of Pali, Calcutta University.
8. Sanskrit Kavya Literature : A general Survey - V. Raghavan-formerly Professor of Sanskrit; Madras University.
9. The Cultural Heritage of India, The Ramkrishan Mission, Calcutta.




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अजीर्ण रोग-संक्षिप्त परिचय

वैद्य पी.एस. अंशुमान, एच.पी.

**परिचय**[1]

प्राचीन काल से ही आयुर्वेद साहित्य में अजीर्ण बहुचर्चित विषय रहा है । इसको अनेक रोगों को उत्पन्न करने वाला या रोगजनक रोग माना जाता रहा है ।

'अजीर्ण' वस्तुत: 'जीर्णावस्था' की विपरीत स्थिति से सम्बद्ध विकार है । 'जीर्ण' आहार के सम्यक पाक होने या पच जाने को कहा जाता है । सम्यक आहार जीर्ण के लक्षणों में निम्न लक्षण प्रमुख रूप से कहे गये हैं -

- शुद्ध उदगार (डकार) आना ।
- यथोचित, यथा समय मल-मूत्र आदि की प्रवृत्ति होना ।
- पेट में भारीपन न लगकर पेट हल्का-लघु प्रतीत होना ।
- शरीर भारी नहीं लगना या हल्कापन महसूस करना ।
- आलस्य नहीं होना तथा उत्साहयुक्त होना ।
- पूर्वभोजन पचने पर यथा समय क्षुधा एवं तृषा लगना ।

इस अवस्था से भिन्न अवस्था को सामान्यत: अजीर्ण माना जाता है । अजीर्ण के रोग रूप विवरणार्थ विभिन्न हेतु, विकृतियों, सामान्य-विशेष लक्षण एवं चिकित्सा का संक्षिप्त परिचय यहां दिया जा रहा है ।

**अजीर्ण-हेतु**[2]

**(क) आहार दोष**

- (दोष प्रकोपक रसादि अतिरेक ?)
- गुरु (च) शीत (च) अतिरुक्ष (च)
- विवेकहीन हो अतिमात्रा में आहार सेवन ।
- अभोजन (च) विषमाशन (च) (सू)
  अजीर्णाशन (च)
  असात्म्य सेवन (च)
  संदुष्टभोजन
  - अत्याम्बुपान (सु)
  - अजीर्णकारक द्रव्य विशेष सेवन ।

**(ख) विहार दोष**

I स्वप्नविपर्यय (सु) प्रजागरण (च) (सु)
- व्यवाय दोष- ?
- वेग धारण (च) (सु)

II मानसिक - ईर्ष्या (सु) लोभ (सु) शोक (सु) (च)
दैन्य (सु) दुख (च) चिन्ता (च) (मा) भय (च)
(च) क्रोध (सु) (च) द्वेष (सु) मात्सर्य (सु)

**(ग) उपक्रमदोष**

स्नेह विभ्रम (च)
विरेक विभ्रम (च) वमन विभ्रम (च)
अग्निमंद होने पर भी आहार सेवन (च)
अतिसारादि उत्पन्न मंदाग्नि में अहितान्न सेवन (च)
अतिकर्षण (च)

**(घ) रोगानुबंधता**

व्याधिकर्षण (च)
दीर्घ कालानुबंधी 'अग्नि' एवं आमाशय विकार आदि

**(ङ) पर्यावरणीय निमित्त**

देश वैषम्य (च)
काल वैषम्य (च)

**विकृति**[3]

**(1) घटक**

दोष - त्रिदोष  दूष्य - रसादि धातु
अग्नि - मंद  आम - साम
स्रोत - अन्न - पुरीष वह आदि दुष्टि अग्नि आश्र
या अधिष्ठान दुष्टि, ग्रहणी दुष्टि ।

**(2) चरण**

- निदान सेवन (च) ।
- तज्जन्य अग्नि दुष्टि (च) ।
- प्रदुष्ट अग्नि का लघु अन्न को भी नहीं पचा पा
  (च) ।
- अन्न के परिपाक नहीं होने से अन्न शुक्तता एव
  विषगुणता को प्राप्त होना (च) ।
- (अत:) विभिन्न निदान सेवन से यथा समय सा
  एवं लघु आहार सेवित किया हुआ भी नहीं पच पा
  है । (सु)

(3) प्रकार - 3, 4 या 6 प्रकार माने गये हैं यथा -

(1) कफ जन्य - मधुर पाकदोष (मधुर पाक) - आम
अजीर्ण (सु.) (मा.नि.) ।

(2) पित्त जन्य - अम्लोत्पत्ति (अम्ल पाक) - विदग्ध

1497, ए 2/1, कृष्णनगर, एरपोर्ट सर्कल, भावनगर (गुजरात) 364001

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अजीर्ण (सु.) (मा.नि.)।

(3) वात जन्य - विषमपाक (कुछ पक्व - कुछ अपक्व) - विष्टब्ध अजीर्ण (सु.) (मा.नि.)।

(4) (त्रिदोषज ?)- रसशेष अजीर्ण (सु.) (मा.नि.)

अन्य -

(5) निर्दोषाजीर्ण - दिन पाकी (मा.नि.) 12 से 24 घं. में पाचन होना।

(6) प्राकृत अजीर्ण - प्रतिदिन रहने वाला (मा.नि.) (च) श्लेष्मला प्रकृति अनुबद्ध मंदाग्नि जन्य नित्य या चिरानुबंधी अजीर्ण या (कफप्रधान काल या श्लेष्म प्रधान देश सम्बद्ध अजीर्ण आदि भी इस दृष्टि से विचारणीय है।)

**सामान्यलक्षण**

अरोचक (च) अविपाक (च)
विष्टम्भ (च) जृम्भा (च)
शिरोरूक (च) अंगमर्द (च)
सदन (शैथिल्य) (च) तृषा (च) ज्वर (च)
पृष्ट-कटिग्रह (च) छर्दि (च)
प्रवाहण (च) भ्रम (च)
मूर्च्छा (च)

**विशेष लक्षण**

| (क) | कफज | पित्तज | वातज |
|---|---|---|---|
| | (अति मधुरता एवं कफ के लक्षण) | अम्लभावता एवं पित्तज लक्षण | पक्वापक्वता निरूद्धवातता एवं वातज लक्षण |

| (ख) | आमाजीर्ण | विदग्धाजीर्ण | विष्टम्भाजीर्ण | रसशेषाजीर्ण |
|---|---|---|---|---|
| | गुरूता (मा) | भ्रम (मा) | भृशतोद (सु) | उद्गारशुद्धि (सु) |
| | उत्क्लेश (मा) | तृषा (मा) | भृशशूल (सु) (मा) | (परन्तु फिर भी) |
| | गण्डशोथ (मा) | मूर्च्छा (मा) | निरूद्धवात (वातरोध) (सु) | भोजनानिच्छा (सु.) |
| | अक्षिकूटशोथ (मा) | स्वेद (मा)<br>दाह (मा) | आध्मान (मा)<br>स्तंभ (मा) | प्रसेक (सु)<br>हृदयगुरूता (मा) (सु) |
| | अविदग्ध उदगार या यथामुक्तोदगार (मा) | सधूम उदगार (मा)<br>गलदाह (सु)<br>हृदय दाह (सु)<br>कोष्ठदाह (सु) | मलवात अप्रवृत्ति (मा)<br>अंगपीडन (मा)<br>मोह (मा) | हृदयशुद्धि (मा)<br>अन्नद्वेष (मा) |

(ग) **I निर्दोष या दिनपाकी अजीर्ण** - खाये भोजन का परिपाक निश्चित 12 से 24 घं. में न होकर अगले दिन होना तथा आध्मानादि लक्षण नहीं होना।

**II प्राकृत या प्रतिवासर अजीर्ण** - 1. इसे प्रतिदिन, प्रत्येक को रहने वाला अजीर्ण माना जाता है जिसके प्रतिकारार्थ पादशतगमन पूर्वक वामकुक्षिशयन आदि कहे गये हैं। 2. इस संदर्भ में प्राकृत ज्वरादि की तरह प्रकृति, दोष ऋतु अनुसार होने वाले यथा दोष, अजीर्ण का भी विचार आवश्यक है। यथा वसंत ऋतु / कफ प्रकृति में कफाजीर्ण होना जैसा कि ऊपर है।

**उपद्रव**

I प्रसेक (सु) वमन (सु)
सदन (सु) प्रलाप (सु)
भ्रम (सु) मूर्च्छा (सु)

II आम-विदध-विष्टब्धाजीर्ण से विसूचिका, अलसक, विलम्बिका होना या आमाजीर्ण से विसूचिका को करना, विदग्धाजीर्ण से, अलसक को करना



CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



विष्टब्धाजीर्ण से विलम्बिका को करना ?

III अन्न विष उत्पत्तिपूर्वक उत्पन्न लक्षण एवं उपद्रव संबंधी परिकल्पना अनुसार निम्नलिखित लक्षण होते हैं -

I दोष संसर्गज -

वातसंसर्ग से - विष्टभ, शूल, आध्मान एवं अन्य वातरोग करना ।

पित्त संसर्ग से - दाह, तृषा, मुखरोग, अम्लपित्त तथा अन्य पित्तज रोग करना ।

कफ संसर्ग से - यक्ष्मा, पीनस, प्रमेह तथा अन्य कफज विकार करना ।

II दूष्य संसर्गज -

अ. धातु संसर्ग - रसादि धातु के साथ अन्न विष संसर्ग से रसज, रक्तज आदि रोगों को उत्पन्न करता है ।

ब. मल संसर्ग - (1) मूत्रसंसर्ग से मूत्ररोग (मूत्रकृच्छादि)
(2) पुरीष संसर्ग से कुक्षिरोग (उदर रोगादि)

**अजीर्ण चिकित्सा[7]**

**क. चिकित्सा सूत्र**

I शोधन चिकित्सा

अ. - कफ संसृष्ट में वमन ।
- पित्त संसृष्ट में मृदु विरेचन ।
- वात संसृष्ट में उदर स्वेदन ।

ब.

- आमाजीर्ण में कोष्ण लवणोदकपान (पूर्वक वमन) लंघन (सु), पाचन (आमघ्न) (भै.)
- विदग्धाजीर्ण में शीतजल पान (सु.) एवं वमन (सु) लंघन (भै.)
- विष्टंभाजीर्ण में कोष्ण लवणोदक पान वातानुलोमन उदर स्वेदन (सु)
- रसशेषाजीर्ण में सम्यक निद्रा सेवन (सु.) लंघन (भै)
- तथा निर्दोषाजीर्ण में पाचन प्रतीक्षा एवं अभोजन एवं प्राकृत अजीर्ण में वामकुक्षि शयन (भोजनोत्तर) एवं सुबह का भोजन पूर्ण न पचने पर भी शाम का भोजन सेवन (यो.र. भै.र.) कर सकते हैं तथा रात्रि का भोजन सुबह तक नहीं पचने पर हरडे सूंठ सेवन का भोजन किया जा सकता है । (सु.)

**ख. कुछ सर्व अजीर्ण उपयोगी कल्प**

स्वरस (आर्द्रक ?)
कल्क-पथ्यादि चूर्ण, अग्निमुख एवं वृ०अग्निमुख चू
क्वाथ/अरिष्ट - मुस्तकारिष्ट
वटी - शंखवटी, गंधकवटी, अमृतकल्प वटी
क्षार/लवण - वज्रक्षार, लवणभास्कर ।
रस - अजीर्णकंटक, जीर्णारि, क्रव्यादरस, अग्निस
अग्निकुमार रस, हुताशन - राजवल्लभ-आदित्य एवं
रसराक्षस रस
मोदकागुडादि - लवङ्गादि - सुकुमार मोदक, क्षारगुड
अमृतहरीतकी (भै.र.)

**अजीर्णविशेष चिकित्सा उपक्रम एवं कल्प प्रयोग[8] :-**

| क्र. | आमाजीर्ण | विदग्धाजीर्ण | विष्टब्धाजीर्ण | रसशेषाजीर्ण |
|---|---|---|---|---|
| 1. | लवणोदक एवं वचा द्वारा वमन या | हरडे शर्करा सेवन द्वारा मृदु विरेचन (भै.) | लवणोदकपान | विश्राम या सम्यक निद्रा (भै.) |
| 2. | सैंधव, वचा, पीपर चूर्ण जल द्वारा सेवन (भै.) | हरडे द्राक्षा/मधु (सु.) | उदर स्वेद देवदार्व्यादिलेप या हींग, पीपर, सूंठ, कृतलेप (भै.) | |
| 3. | लंघन, दीपन, पाचन (भै.) (सु.) | शीतजलपान (सु.) | | लंघन (सु.) |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र. | आमाजीर्ण | विदग्धाजीर्ण | विष्टब्धाजीर्ण | रसशेषाजीर्ण |
|---|---|---|---|---|
| 4. | आमनाशक<br>शमन कल्प प्रयोग | विदग्धता नाशक<br>शमन कल्प | वातानुलोमन,<br>शमन कल्प | शमनोपक्रम |
| 5. | हरड़, सूंठ+सैंधव<br>या गुड़ प्रयोग (भै.)<br>या अभयाशुंठी (सु.) | हरड़ पीपर सैंधव<br>+ शीतजल प्रयोग (भै.) | सूंठ पीपर हींग<br>सैंधव का लेप<br>(या कोष्ण जल से<br>सेवन ?) (भै.) | अग्निमुख चूर्ण |
| 6. | धान्यक सूंठक्वाथ | | धान्यकसूंठ क्वाथ | |
| 7. | चित्रकादिवटी<br>अमृतकल्पवटी<br>लवङ्गादिवटी<br>भक्तविपाक वटी | शंखवटी<br>- | शंखवटी<br>-<br><br>भक्तविपाक वटी | शंखवटी<br>अमृतकल्पवटी |
| 8. | यवक्षार सूंठ | वज्रक्षार | अग्निमुख लवण<br>वज्रक्षार | - |
| 9. | क्रव्यादरस | अग्निदीपन<br>वीरभद्र रस,<br>पाशुपत रस + शर्करा | | हुताशन-क्रव्यादरस<br>वीरभद्र एवं<br>पाशुपत रस |
| 10. | अमृतकांजी | | | अमृतकांजी |
| 11. | | लवंगादिमोदक | सुकुमारमोदक | (भै.र.) |

द्रव्य विशेष जन्य अजीर्ण में प्रयुक्त प्रतिद्रव्य[9]

| | अजीर्णोत्पादक द्रव्य | तज्जन्याजीर्ण प्रयुक्तदूष्य | अजीर्णोत्पादक द्रव्य | तज्जन्याजीर्ण प्रयुक्त द्रव्य |
|---|---|---|---|---|
| 1. | अथ/कल्प | | | |
| | गेहूं | धत्तूर बीज (कल्प) | IV फलादि | |
| | षष्टी चावल | दधिजल | कदली | घृत |
| | | | नारीयल/ | चावल/भात |
| | मूंग, चना | धत्तूर बीज (कल्प) | ताद्रफल | |
| | उड़द | नींबू/धत्तूर बीज (कल्प) | आम्र | दूध |
| | मिष्टान्न कल्प | शीतजलपान | पक्वविल्व | निम्बोली |
| | उडर्दापिष्टीज | नीम्बू | खिरनी | निम्बोली |
| | खिचडी | सैंधव | फालसा | निम्बोली |
| | बड़ा | लविङ्ग | वन खजूर | |
| | वेशवार | लविङ्ग | वन खजूर | मोथा |
| | दालपूरी | कांजी | | |
| | मालपुवा | पीपरीमूल | पक्वगूलर | आजवायन + |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | अजीर्णोत्पादक द्रव्य | तज्जन्याजीर्ण प्रयुक्तदूष्य | अजीर्णोत्पादक द्रव्य | तज्जन्याजीर्ण प्रयुक्त द्रव्य |
|---|---|---|---|---|
| | पूरी लड्डू | | अश्वत्थफल<br>पाखर फल | रात्रिजल |
| II. | पान<br>दूध<br>तक्र<br>घृत<br><br>नारियल (जल)<br>मधु | (इलायची)<br>निम्ब (मधुनिम्ब)<br>मधु निम्ब (तक्र)<br>या जम्बीर रस<br>नागलोथ<br>नागरमोथ | चिरौंजी | हरड़ |
| III. | शाकादि<br>चिमडा<br>ककड़ी<br>मृणाल/सिंघाड़ा<br>एवं कशेरू<br>कटहल | <br>पीपर, अजवायन<br>गेहूं, कल्प<br>नागरमोथ<br><br>कदली | | |

अजीर्ण में पथ्य/अपथ्य[10]

| क्र. | पथ्य | अपथ्य |
|---|---|---|
| (क) | आहार | |
| | - कटु, तिक्त (लवण) | - (मधुरादि) |
| | - लघु | - गुरु |
| | - सात्म्य | - अध्यशन, समशय विरुद्धाशन, विषमाशन |
| | - मण्ड, विलेपी, यूष (मांस) रस कल्पनायें | - पिष्टीकल्प (उड़द) |
| | - पुराण शाली, गेहूं | - |
| | - मुदग (यूष) हींग-सैंधव प्रक्षेप | - उड़दादि शमिधान्य |
| | - शाक | |
| | * वेताग्र, बथुवा, पोपतिया मधुनिम्ब, चांगेरी एवं प्रसारणी पत्रादि | - पोई पत्र |
| | * सहजन, परवल, बैंगन, कंकोड़ा, करेला, कण्टकारी-लताकरंज एवं मेषश्रीफल | - आलूकंद |
| | * मृग, शश, म्यूर, लावक, मत्स्य (लघु) मांसरस | - मत्स्य |
| | * लशुन, आर्दक, अजवायन, जीरा, धनिया, मेंथी | - |


CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| क्र. | पथ्य | अपथ्य |
|---|---|---|
| | - पेयादि सुरा, सौवीर, धान्याम्ल, तुषोदक, तक्र दधि, मक्खन, घृत, कटुतैल | - अत्याम्बुपान दूध, कूर्चक, किलाट, भोंइट पानक, पन्ना |
| | - फल - नारंगी, दाडिम, नीम्बू, जम्बीर, विजौरा, आमलक, पक्वपेठा, अपक्व कदली | - जाम्बु : ताडफल (एवं मस्तक) |
| (ख) | विहार | |
| | - विश्राम, शयन, व्यायाम | - वेगरोध, जागरण |
| (ग) | उपक्रम | |
| | - मृदुवमन, विरेचन, स्वेदन, दीपन, पाचन, लंघन | - रक्तमोक्षण, तीक्ष्णविरेचन । |

अजीर्ण : कुछ उदाहरण आ०वृ०प०

| क्र० | घटक | 1 | 2 | 3 |
|---|---|---|---|---|
| (क) | आतुर | | | |
| | आ.क. | 248 | 259 | 339 |
| | लिङ्ग | स्त्री | स्त्री | पु० |
| | वयवर्ष | 54 | 41 | 50 |
| | रोगानुबंध | वृक्काश्मरी | आमाशयप्रदाह | रक्तचाप/हृद्रोग |
| | लक्षण | (कफाजीर्ण ?) | (पित्ताजीर्ण ?) | आधिक्य (वाताजीर्ण ?) |
| | | कटिशूल | अम्लोदागर-उरदाह | शिरशूल |
| | | मूत्रकृच्छ्र | उत्क्लेश | + |
| | | अविपाक | अजीर्ण/अपाक | + |
| | | शिथिल म.प्र. | श्रम | + |
| | | शोथ (मुख-पाद) ग्रीवाशूल | अनिद्रा | + |

(ख) औषध

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | दशमूल क्वाथ 2 तोला प्रात: | 1. संशमनी शाम प्रात: | 1. वासाघन । गो.प्रात: |
| 2. | चन्द्रप्रभा 1 गोली पुनर्नवा मण्डूर प्रात:शाम | 2. पुनर्नवामण्डूर 1-1 गोली दो बार । | 2. आरोग्यवर्धनी 1 गोली दो बार |
| 3. | रसायन पुनर्नवा अश्वगंधा यष्टि, अर्जुन चोपचीनी शुंठी 1मा०xदो बार | 3. धात्रिलोह मण्डूर प्रवाल यष्टि शतावरी 1 माह x दो बार | 3. कामदुधा प्रवाल अभ्रक रसायन शंखपुष्पी पीपरीमूल। मा०xदो बार |
| 4. | शंखवटी 1 बार | 4. शंखवटी 1 गोली भोजनोत्तर | 4. हिंगवटी 1 गोली भोजनोत्तर |
| 5. | ब्राह्मीवटी गोक्षुरादि गूगल 1 गोली भोजनोत्तर | | 5. ब्राह्मीवटी, सर्पगंधा |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(ग) परिणाम

- लक्षण शमन ।
- स्वास्थ्य सुधार ।

संदर्भ/आधार :-

1. अनात्मवन्तः पशुवभ्दुज्जते येऽप्रमाणतः ।
रोगानीकस्य ते मूलमजीर्णं प्राप्नुवन्ति हि ।।
मा.नि. 6/14

* उद्गारशुद्धिरूत्साहो वेगोत्सर्गो यथोचितः ।
लघुता क्षुत्पिपासा च जीर्णाहास्य लक्षणम् ।। (यो.र.)

2. अभोजनादजीर्णातिभोजनाद्विषमाशनात् ।
असात्म्यगुरूशीतातिरूक्षसंदुष्ट भोजनात् ।
विरेकवमन स्नेहविभ्रमाद् व्याधिकर्षणात् ।
देशकालर्तुवैषम्याद्वेगानां च विधारणात् ।
च०चि० 15/41-42

* अत्यम्बुपानाद्विषमाशनाद्वा, संधारणात् स्वप्न विपर्याच्च ।
कालेऽपि सात्म्य लघुचापि भुक्तमन्नं न पाकं भजते नरस्य ।
ईर्ष्याभय क्रोध परिक्षतेन लुब्धेन शुग्दैन्यनिपीडितेन ।
प्रद्वेषयुक्तेन च सेव्यमानमन्नं न सम्यक् परिणाममेति ।
मा०नि० 6/7-8, सु०सू० 46/500-501

मात्रयाऽप्यम्यवहृतं पथ्यं चान्नं न जीर्यति ।
चिन्ता शोक भयक्रोध दुःख शय्याप्रजागरैः ।।
च०वि०य०, मा०नि० 6/9

3. दुष्यत्यग्निः स दुष्टोऽन्नं न तत्पचति लध्वपि अपच्यमानं शुक्तत्वं यात्यन्नं विषतां च तत् । च०चि० 15/43

आमंविदग्धं विष्टब्धं कफपित्तानिलैस्त्रिभिः ।
अजीर्णं केचिदिच्छन्ति चतुर्थ रसशेषतः ।
सु०सू० 46/499

अजीर्णं पञ्चम केचिन्निर्दोषं दिनपाकि च ।
वदन्ति षष्ठं चा जीर्णं प्राकृतं प्रतिवासरम् ।।
मा०नि० 6/6

4. तस्य लिङ्गमजीर्णस्य विष्टम्भः सदनं तथा ।
शिरसो रूक् च मूर्च्छा च भ्रमः पृष्टकटिग्रहः ।
जृम्भाऽङ्ग मर्दस्तृष्णा च ज्वरश्छर्दि प्रवाहणम्
अरोचकोऽविपाकश्च, xx च०चि० 15/44-45

5. माधुर्यमन्नं गतमामसंज्ञं, विदग्धसंज्ञं गतमम्लभावम् ।
किंचिद्विपक्वं भृशतोदशूलं विष्टब्धमानद्ध विरूद्धवातम् ।
उदगार शुद्धावपि भक्तकाङ्क्षा न जायते हृद्गुरूत्वं च
यस्य रसावशेषेण तु स प्रसेकं चतुर्थ मेनं
प्रवदन्त्यजीर्णम् । सु०सू० 46/502-5
विदह्यते यस्य तु भुक्तमात्रे, दह्येत हत्कोष्ठगतं
यस्य । सु०सू० 46/5
उद्गारेपि विशुद्धताभुगते काङ्क्षाम भक्तादिषु निष्ठ
वदनस्य संधिषु रूजा कृत्वा शिरोगौरवम् ।
मंदाजीर्णरसे तु लक्षणमिदं तत्राति वृद्धे पुनः हृल्लास
ज्वरम्र्च्छनादि च भवेत् सर्वामक्षोभणम् । (नागार्जु

* तत्रामे गुरूतोत्क्लेदः शोथो गण्डाक्षिकूटगः
उद्गारश्च यथाभुक्तमविदग्धः प्रवर्तते ।
विदग्धे भ्रमतृष्मूर्च्छाः पित्ताच्च विविधा रूजः
उद्गारश्च सधूमाम्लः स्वेदो दाहश्च जायते ।
विष्टब्धे शूलमाध्मानं विविधा वातवेदनाः ।
मलवाता प्रवृत्तिश्च स्तम्भो मोहोऽङ्गपीड़नम् ।
रसशेषेऽन्नविद्वेषो हृदयाशुद्धि गौरवे । मा.नि. 6/10-1

6. मूर्च्छा प्रलापो वमथुः प्रसेकः सदनं भ्रमः
उपद्रवा भवन्त्येते मरणं चाप्यजीर्णतः ।
सु०सू० 46/ मा०नि० 6/1

अजीर्णमामं विष्टब्धं विदग्धं च यदीरितम्
विसूच्यलसकौ तस्माभ्द्वेच्चापि विलम्बिका
सु०उ० 46/- मा०नि० 6/1

xx घोरमन्नविषं च तत् ।
संसृज्यमानं पित्तेन दाहं तृष्णां मुखामयान् ।
जनयत्म्लपित्तं च पित्तजांश्चापरान् गदान् ।
यक्ष्मपीनसमेहादीन्कफजान्कफसङ्गतम् ।
करोति वातसंसृष्टं वातजांश्चापरान् गदान् ।
मूत्ररोगंश्च मूत्रस्थं कुक्षिरोगान् शकृत्गतम् ।
रसादिभिश्च संसृष्टं कुर्याद्रोगान् रसादिजान् ।
च०चि० 15/46-

7. च०चि० 15, सु०सू० 46/-
भै.र. 10/-, यो.र. अजीर्य
8. भै.र. 10/-, यो.र. (अजीर्ण)
9. भै.र. 10/- यो.र. (अजीर्ण)
10. भै.र. 10/- यो.र. (अजीर्ण)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# दूषणाद्दोषाः

अनन्तराम शर्मा

चरक के इस कथन से भी कि 'दूषणाद्दोषाः, धारणात् धातवः', वैद्यवर्ग वात, पित्त, कफ को दोष नाम से ही जानता है । हलकेपन से कहे हुए सुश्रुत के इस कथन से भी कि "त्रिमिर्दोषैः शोणित चतुर्थैः" से शोणित (रक्त) 'दोष' पद प्राप्त करने से रह गया । निम्नलिखित उद्धरण से स्पष्ट है कि शोणित धातु ही है दोष नहीं है :

**त्रयोदोषा धातवश्च पुरीषं मूत्रमेव च ।**
**देहे धरयन्त्येते ह्यव्यापन्ना रसैर्हितैः ॥**

'देह धरयन्त्येते' से की पुरीषादि की भी धातुसंज्ञा है । पर इनका शरीर में समुचित रूप से बने रहने तक ही धातुत्व है । इनके सहसा अत्यधिक विनाश से शरीर का विनाश संभव है ।

वातादि तीनों का धातु रूप इस हेतु तिरोहित हो गया है कि इनका रोग उत्पादन में सर्वाधिक विशाल योगदान है । इनको दोष नाम से ही जानने में दूसरा बड़ा हेतु यह है कि 'दूष्यों को दूषित करने की क्षमता' केवल इन्हीं में है । यद्यपि अपने-अपने कारणों से वातादि तीनों भी दूषित होते हैं, परन्तु शरीर की कोई भी रचना यहां तक कि मन भी इनके प्रकोप के बिना विकार ग्रस्त नहीं होती है । आगन्तुज व्याधियों का प्रकार भी बिना दोष प्रकोप के संभव नहीं है । वैसे - 'मानसः पुनरूद्दिष्टोरजश्चतमरूनचः च०सू०' भी है ।

शास्त्र में भी ऐसे उद्धरण मिलते हैं जिनमें वातादि तीनों के देहधारण कार्य की गणना के समय में भी उनका दोष नांम से ही स्मरण किया गया है, जैसे -

**त्रयोदोषा धातवश्च.....देहं धार्यन्त्येते.....च.**

लौकिक प्रथा भी तो ऐसी ही है कि प्रख्यात् दुश्चरित्र को कोई भला कार्य करने पर भी उसे 'दुश्चरित्र' नाम से ही जाना जाता है ।

शास्त्र में रक्त को दोष मानने के पक्ष में बड़ी प्रबल युक्तियां दी गयी हैं । पर इन युक्तियों का खण्डन भी बड़ी अकाट्य युक्तियों से किया गया है । यह विवाद चरक (सू० 1/57) के इस कथन के बाद आरम्भ हुआ कि 'वायुःपित्तं कफश्चोक्तः शारीरोदोषसंग्रहः ।' कि 'दोषसंग्रह' में वात, पित्त तथा कफ का ही नाम है । चक्रपाणि ने शोणित को दोष मानने के पक्ष एवं विपक्ष का विस्तृत विवरण दिया है । उसका संक्षिप्त हिन्दी रूपान्तरण इस प्रकार है ।

"ननु शोणितस्यापि - दोषत्वान्नात्र संग्रहः साधुः यतोरक्तास्यापि वातादिवत् विशिष्ट हेतु लक्षण विकार चिकित्सित निर्देशः कृतः" अर्थात् यहां दोषों में वात, पित्त, कफ की ही गणना की गयी है रक्त की नहीं जबकि रक्त भी वातादि की तरह विशिष्ट हेतु लक्षण, विकार, चिकित्स्य वाला है, जैसे -

1. हेतु निर्देश, जैसे - 'कालेचानवसेचनात्'-पद्मालक्तक च०सू०28/9
2. लक्षण जैसे-'तपनीयेन्द्रगोपाभं पद्मलक्तक सन्निभम् -च०सू० 28
3. रक्तविकार, जैसे - रक्तार्शः, रक्तप्रदर, रक्तपित्तादि ।
4. चिकित्सा, जैसे - 'स्रावणं शोणितस्य तु - च०सू० 24
5. चरक ने भी रक्त की दोष संज्ञा की है, जैसे -

**कफोवाते जितप्राये पित्तंशोणितमेव वा'**
**यदि कुप्यति वा तस्य क्रियमाणेचिकित्सिते''**
**यथोलवणस्य दोषस्य तत्रकार्यं भिषक् जितम्**

च०चि० 5/27

6. अन्य तंत्रग्रन्थों में भी शोणित को दोष कोटि में रखा है जैसे - शल्य शास्त्र में - "तै रेतैः शोणितचतुर्थैः '- सु०सू० 29

इन कारणों से शोणित का हक बनता है कि उसे दोष पद दिया जाय । इस समस्या का चक्रपाणि द्वारा उद्धरित शास्त्र सम्मत सिद्धान्त इस प्रकार है :-

**"नैवम्, दोषोहि स्वतंत्र दूषणात्म क उच्यते ।**
**यतोह न वातादयोवृद्धाः किञ्चिदवेक्ष्य दूषयन्ति ।**

किन्तु स्वतएव, शोणितं तु दुष्टवातादि संसर्गमपेक्ष्य क्षैव दूषकं भवति । नहि शोणितं विकृतवातादि संबन्धमन्तरेण विकृतं भवति, सर्वदा वातादि जनकैरेव शोणित दुष्टेः । तथ



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


सर्वदा वातादिलक्षणयुक्तास्यैव शोणितस्य दुष्टत्वात् ।

अर्थात् - दोष का लक्षण है - जो स्वतंत्र रूप से दूषण करता है वह 'दोष' है । वातादि दोष दूषित करने के कार्य में किसी अन्य के अपेक्षा नहीं रखते हैं । जबकि शोणित वातादि के सहयोग से ही दूषण कर पाता है ।

यह जो कहा गया है कि वातादि की तरह शोणित के दूषण के भी हेतु हैं । वह वातादि के सहयाग से ही संभव है: स्वतंत्र रूप से नहीं, शोणित तो मात्रा में बढ़ जाने पर भी दूष्य ही है । दूष्य के विशिष्ट हेत्वादि नहीं होते हैं । यह जो मांसादि के विशिष्ट हेत्वादि का उल्लेख मिलता है, जैसे- ''मांसवाहीनि दूष्यन्ति भुक्त्वा च स्वपतां दिवा'' च०वि० 5, तथा 'श्रृणु मांस प्रदोषजान्' - च०सू० 28 और ''मांसजानां तु संशुद्धिः शस्त्रक्षाराग्नि कर्म च'' च०सू० 28 । इसका उत्तर इस प्रकार दिया गया है ।

''तस्माद् दूष्या धारेण दोषेणकृते कार्ये दूष्येणव्यपदेशः रक्तक्तोऽयं मांसज़ोऽयमित्यादि । यथास्नेहा धारेणबन्हिना दग्धे स्नेहदग्ध इति व्यपदेशः । दोषसंज्ञातु पीडाकर्तृत्वसामान्याददोषेऽपियथा - 'स्वयं प्रवृत्तं तं दोषं उपेक्षेत हिता शनैः' - च०वि० 5 अर्थात् दूष्य के आधारित दोष के द्वारा किये गये कार्य को दूष्यकृत समझ कर ही यह व्यपदेश है कि यह रक्तज विकार है, यह मांसज विकार है, आदि; जैसे - स्नेह से जले हुए को 'स्नेहदग्धा कहा जाता है जबकि दहन कार्य केवल अग्नि का है जिससे स्नेह में दहन क्षमता आती है । इसी प्रकार जो दोष नहीं है उसकी दोष संज्ञा का उल्लेख मिलता है, जैसे - ''स्वयं प्रवृतं तं दोषं उपेक्षेतहिताशनैः'' यहां 'पुरीषमेव दोषत्वेनोकाम्' अर्थात् यहां पुरीष को ही दोष कहा गया है ।

सुश्रुत ने जो रक्त को दोष के समकक्ष माना है उसका हेतु यह है कि शल्य चिकित्सा में रक्त दुष्टि दर्शन बाहुल्य से होता है । अतः यह औपचारिक है (सुश्रुतेतु शोणितस्य दोषत्वम्, प्रायः शोणित दुष्टि दर्शनात् उपचरित मेवांकाम् - च०) उन्होंने भी अन्यत्र व्रणप्रश्नप्रकरण में 'वातादि तीन ही दोष हैं' यह माना है, जैसे - ''वातपित्त श्लेष्माण एवं देहसंभव हेतवो भवन्ति'' - सू० 20

यदि रक्त भी दोष होता तो वातादि की तरह प्रकृव्यारम्भक गुणयुक्ता होता; पर ऐसी क्षमता इसमें नहीं है ।

यद्यपि इस प्रकार दोषत्रय की दूषणकर्ता के रूप में एकमात्र वरीयता प्रमाणित होती है; पर इन तीनों में से वायु का वर्चस्व सर्वाधिक सशक्त है । यह कुपित होकर क्या-क्या कर सकता है इसकी झलक चरक (सू० 12) के शब्दों में इस प्रकार है;

''कुपितस्तु खलुशरीरे शरीरं नानाविधै विकारै पतपति बलवर्ण सुखायुषामुपघाताय, मनोव्याहर्षयति सर्वेन्द्रियाण्युपहन्ति, विनिहन्ति गर्भान् विकृतिमापादयत्यतिकुपितो धारयति, भयशोक मोह दैन्यातिप्रलापाञ्जनयति प्रत्यात्मलक्षणानि परूणद्धि ।''

सारांश यह है कि वायु कुपित होने पर शरीर को नाना प्रकार के विकारों से संतृप्त करती है, सभी इन्द्रियों को विकृत कर देती है, गर्भ को हानि पहुंचाती है और प्राणों को संकट ग्रस्त कर देती है ।

चरक (सू० 20) ने सामान्यज विकार (च०सू० 19 में) और नानात्मज विकार (च०सू० 20 में) भेद से दो प्रकार के विकारों का उल्लेख किया है । नानात्मज विकार वायु के अस्सी, पित्त के चालीस और कफ के बीच विकार गिनाये हैं । इसी अध्याय (सू० 20) में चरक ने वायु के आत्मलक्षणों का उल्लेख किया है जिन्हें जान लेने पर कोई को वातजन्याधिको पहचानने में रत्ती भर भी संदेह नहीं रहता है :-

''सर्वेष्वपि खल्वेतेषु वातविकारेषूक्तेष्वन्येषु चानुक्तेषु वायोरिदं आत्मस्वपमपरिणामि कर्मणश्च स्वलक्षणं यदुपलभ्य तदवयवंवा विमुक्तसंदेहा वातविकारमेवाध्यवसन्ति कुशलाः, तद्यथा - रौक्ष्यं, शैत्यं, लाघवं, वैशद्यं, शैत्यं गतिः, अमूर्तत्वम्, अनवस्थितत्वम्, चेति वायोरात्मरूपाणि ।''

जब यही वायु प्रकुपित होकर शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों में प्रवेश पाती है तो उन प्रदेशों में निम्नलिखित विकार उत्पन्न करती है :- 1. स्रंस - (अंगों का अपने स्थान से कुछ हटना) 2. भ्रंश - (अंगों का अपने स्थान से अधिक


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



दूर हटना) 3. व्यास - (विस्तरणम्, अधिक विस्तृत होना) 4. संग - मलमूत्रावरोध 5, भेद - (चीरने सदृश वेदना) 6. साद - (शारीरिक अवसाद) 7. हर्ष - रोमांच होना, (व्योरनवस्थि-तत्वेन प्रभावाद्वात्रियते - च०) 8. तर्ष - (पिपासा) 9. कम्प - (कांपना) 10. वर्त (वर्तुलीकरणम्, शरीर-मल-मूत्रादि का गोलाकार) 11. चाल - (स्पन्दना), 12 तोद - (सूचीवेधवत् व्यथा).13, व्यथा (सर्वांगवेदना) 14. चेष्टा (शरीरावयवों में क्रियाशीलता) तथा खर, परुष, विशद, सुषिर, अरूण, वर्ण, कषाय, विरस मुखत्व, शोष, शूल, सुप्ति, संकोचन, स्तम्भन, खञ्जता आदि वातजविकार उत्पन्न होते हैं ।

इसी प्रकार का वर्णन पित्त एवं कफ दोष के बारे में भी है जिसमें इनके आत्म लक्षणों एवं तज्जन्य विकारों का विवरण दिया है जो विस्तार रूप से दिया जा रहा है ।

दोषों की विकृत अथवा रोग जनक अवस्था दो प्रकार की होती है - क्षय और वृद्धि । दोष का क्षय या क्षीण होने से उसके स्वाभाविक गुण कर्मों में मन्दता आ जाती है । क्षीण दोष की रोगोत्पादक क्षमता भी क्षीण हुई होती है । दोष विशेष की वृद्धि होने पर ही रोग होते हैं दोषा: प्रवृद्धा: स्वंलिगं दर्शयन्ति यथाबलम क्षीण जहति स्वलिंग स्वं समा: स्वं कर्म कुर्वते - च०सू० 17/62, स्वमान क्षीणा: दोषा: किञ्चित् विकारं न जनयन्ति, क्षीणलक्षणं क्षपम्य मेव परियात्ति - च०पा०)

कई बार दोष प्राकृत या साम्यावस्था में ही होता है । परन्तु वायु द्वारा चालित होकर वह अन्य स्थान में पहुंचा दिया जाता है (परिणामत: जिस स्थान में वह पहुंचता है; वहां पहले से विद्यमान दोष के परिमाण में वृद्धि हो जाती है जिससे उस स्थान में उस दोष की वृद्धि के लक्षण प्रकट हो जाते हैं । इस प्रकार रोग उत्पन्न करने में दोष वृद्धि हेतु है - क्षीण दोष नहीं (स्वमान स्थितोऽपिदोष: प्रदेशात्तरंतीत: प्राप्त तत्प्रदेशस्थदोषोपक्षया वृद्ध एवं भवति: तेन तत्रापि वृद्धस्यैव विकार कर्तृत्वम् - च०पा० (च०शा० 6)

यहां जो यह कहा गया है कि 'क्षीण दोष की रोगोत्पादक क्षमता भी क्षीण हुई होती है । अत: वह रोग उत्पन्न नहीं कर सकता है 'इसमें यह ज्ञातव्य है कि विरोधी गुणों की वृद्धि होने से उस गुणवाले दोष, धातु आदि की वृद्धि होकर उसकी वृद्धि से होने वाले रोग होते ही हैं ।

प्रकोप होने मात्र से रोग नहीं होता है । रोगोत्पादन के लिये उसे कई दशाओं में से गुजरना पड़ता है; जैसे -

**संचयं च प्रकोपं च प्रसारंस्थान संश्रयम् ।**
**व्यक्ति भेदं च यो वेत्ति दोषाणां संभवेत् भिषक् ।।**

सु०सू० 21/36

दोषों की इन छ: अवस्थाओं को जो जानता है उसी को भिषक् कहा जाता है । ये छ: अवस्थायें हैं :

1. संचय - अर्थात् निज कारणों से प्रकुपित दोष सर्वप्रथम संचित होते हैं, वृद्धि को प्राप्त होते हैं, क्योंकि वृद्धि को प्राप्त दोष में ही रोगोत्पादन क्षमता होती है । कौन-सा दोष किन कारणों से प्रकुपित होता है, इसका विवरण, ऋतुचर्या अध्याय (सु०सू० 4) में विस्तार से दिया गया है । साम्यपूर्ण कोष्ठता आदि दोष संचय के लक्षण हैं । सुश्रुत इस दशा को 'प्रथम: क्रियाकाल: कहते हैं । इस ज्ञान का लाभ यह है कि इसमें चिकित्सा करने से रोग शमन सरलतम होता है (संचयेऽपहता दोषा लभन्तेनोत्तरागति: - सु०सू० 21/37)

2. प्रकोप - दोषों की प्रथमावस्था 'संचय' काल में उपचार न करने से दोष प्रकुपित हो जाते हैं । वात दोष के प्रकोप के हेतु, कालादि इस प्रकार हैं - "संशीताभ्रप्रवातेषु धर्मान्ते च विशेषत: । प्रत्यूषरूष्यपराह्णे च जीर्णेऽन्ने च प्रकुप्यति'8 -च०सू० 29/20; तीसटाचार्य के अनुसार भी -

**"वायु- वारिधरागमे परिणते चान्नेऽपराह्नेऽपिवं ।"**

इसी प्रकार पित्त प्रकोप के भी अपने हेतु हैं और उसका प्रकोप काल भी पृथक है, जैसे :- भुक्ते जीर्यति भोजने च शरदि ग्रीष्मे सति प्राणिनाम् । मध्याह्ने च तथार्धे रात्र समये पित्तं प्रकोपं व्रजेत्" तीसटाचार्य: । पित्तप्रकोपणों से शोणित भी प्रकुपित होता है ।

कफ के प्रकोपक हेतु भी पृथक् है । इसके प्रकोप का काल इस प्रकार वर्णित है - 'तु हिन पतन काले श्लेष्मण: सम्प्रकोप: प्रभवतिदिवासादौ मुक्तमात्रे



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वसन्त-नीसटाचार्य: ।

सुश्रुत इन तीनों दोषों के कुपित होने के लक्षणों का वर्णन इस प्रकार करते हैं -

**''तेषां प्रकोपात् कोष्ठतोदसंचरणालिकापिपासापरिदाहद्वेषा हृदयोत्क्लेदाश्च जायन्ते''** - सू० 21/

सुश्रुत इस प्रकोप नामक द्वितीयदशा को 'तत्र द्वितीय: क्रियाकाल:' कहते हैं ।

**3. प्रसार** - इस दशा को समझाने के लिये सुश्रुत ने दो उदाहरण दिये, खमीर (सुराबीज, किण्व) मिला आटा (पिष्ट, चावलों का आटा) और पानी की अधिकता से सेतु का टूटकर जल का फैल जाना । उनका कहना है कि खमीर मिले आटे की तरह प्रकुपित संचित दोष भी, गतिशील वायु के सहयोग से उसी प्रकार शरीर में फैल जाते हैं जैसे पानी की अधिकता से बांध के टूट जाने पर जल चारों ओर फैल जाता है । यहां दोष एक, दो या अधिक होकर पन्द्रह प्रकार से फैलते हैं । यह तृतीय क्रिया काल हैं ।

**4. स्थान संश्रय** - 'कुपितानां हि दोषाणां शरीरे परिधावताम् । यत्रसंग: खवैगुव्यात् व्याधिस्तत्रोपजायते-सु०सू० 24/10 शरीर में घूमते हुए प्रकुपित दोष जहां स्रोतों में विगुणता होती है वहां स्थान संश्रय कर रोग उत्पन्न करते हैं, जैसे -

'' ते यदोदर सन्निवेशं कुर्वन्ति तदा गुल्म विद्रधि उदराग्नि संगानाह विसूचिकातिसार प्रभृतीञ्जनयन्ति आदि - सु०सू० 21/33

इस प्रकार शरीर के विशेष स्थान पर स्थान संश्रय प्राप्तकर दोष रोग के पूर्वरूपों को जन्म देते हैं । स्थान संश्रय चिकित्सा का चतुर्थ अवसर है (तत्र पूर्व रूपगतेषु चतुर्थ: क्रियाकाल:)

**5. व्यक्ति** - (व्याधे: प्रवक्तां रूपं व्यक्ति: -ड) इसमें व्याधि का रूप स्पष्ट हो जाता है (शोफार्बुदग्रन्थि विद्रधि विसर्प प्रभृतीनां प्रव्यक्तलक्षणतां ज्वरातिसार प्रभृतीनां च - सु०सू० 21/35) यह चिकित्सा का पञ्चम अवसर है (तत्र पञ्चम: क्रियाकाल:) ।

रोग की चिकित्सा के प्रति आरम्भ से ही सावधान रहने पर संचय नाम का प्रथम क्रियाकाल में ही रोगोपचार करने से रोग से आसानी से छुटकारा पाया जा सकता है अन्यथा उत्तरोत्तर रोगोपचार कठिन से कठिनतर होता जाता है । यहां तक कि विलंब करने से रोग असाध्य रूप भी धारण कर सकता है (संचयेऽवहृतादोषा लभन्तेनोत्तरागतीः तेतूत्तरासुगतिषु भवन्ति बलवत्तरा: - सु०सू० 21/26)

**6. भेद** - रोग के प्रति असावधानता के परिणाम स्वरूप रोग अधिक फैल जाता है, भयानक रूप धारण कर सकता है और कृच्छ्र साध्य अथवा असाध्यरूप धारण कर सकता है । (अत: ऊर्ध्वमेतेषामवदीर्णानां व्रणभावमापन्नानां षष्ठ: क्रियाकाल: ज्वरातिसार प्रभृतीनां च दीर्घकालानुबन्धे तत्राप्रतिक्रियमाणेऽसाध्यतामुपयान्ति - सु०सू० 21/38

एतावत् वर्णन शारीरिक व्याधियों के दोषों के प्रकोप का है । इसमें प्रथम दोष प्रकोप होकर पश्चात् व्याधि उत्पन्न होती है । आगन्तुज विकारों में दोष प्रकोप व्याधि होने के उपरान्त होता है । यही कारण है कि भग्नों के ... में दोषों का उल्लेख नहीं है । शारीरिक दोष वात, पित्त, कफ हैं जबकि रज एवं तम को मानसिक दोष माना है (सत्वमदोषमाख्यातम्)

पाश्चात्य वैद्यक में रोगाणु किसी प्रकार शरीर के अन्दर प्रविष्ट होकर सीधे शारीरिक ऊतकों पर आक्रमण करते हैं । जिस प्रकार स्वस्थ शरीर अपनी रोग प्रतिरोधक शक्ति के कारण रोगों का सामना कर निर्विकार बना रहता है (व्यायामनित्या: स्त्रीनित्यों मद्यनित्याश्च योनरा: । नित्यमांसान्न द्वारा नातुरास्युर्न दुर्बला: - च०सू०) उसी प्रकार, सशक्त ऊतकों पर रोगाणु आक्रमण भी रोगोत्पादन में असमर्थ रहता है ।

'अणोरणीयान महतोमहीयान्' क. उपनिषद् 'एषोऽणुरात्मा चेतसावेदितव्य: - मु० उपनिषद् सौक्ष्म्यालोचिददर्शना:-वा०, बड्तेकुष्ठैककर्माण:-... आदिवर्णनों से स्पष्ट है कि अदृश्य सूक्ष्म जीवाणुओं विकारी जीवाणुओं की तथा इनके रोगकर कार्यों की जानकारी प्राचीन ऋषि-मुनियों को थी ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जैसे वातादि तीनों दोष भी हैं और धातु भी उसी प्रकार जीवाणु विकारी भी है और उपकारी भी । इस चेतन सृष्टि में जो अत्यन्त सूक्ष्मजीव होते हैं, जिनका दर्शन केवल चर्मचक्षु से दुर्लभ है, वे जीवाणु कहलाते हैं । इनमें जो वनस्पति श्रेणी के जीवाणु होते हैं उनका नाम 'बैक्टेरिया' और जो प्राणी श्रेणी के होते है उन्हें 'प्रोटोजुआ' कहते हैं । रोगोत्पादक जीवाणु मुख्य रूप से प्रोटोजोआ, फंगस, बैक्टेरिया और वाइरस श्रेणी के हैं । अविकारीजीवाणु जैसे -

अविकारी जीवाणु मृत प्राणियों एवं वनस्पतियों के शरीर का विनाशकर मिट्टी में मिला देते हैं. सरोवरादि की जल शुद्धि करते हैं, जमीन की उपजाऊ शक्ति को बदलते हैं, पनीर, दही, आदि की उत्पत्ति में सहायक होते हैं और एसेटिक एसिड आदि अम्ल पदार्थों का निर्माण करते हैं ।

जीवाणु सर्व व्यापक हैं । पर उस अनुपात से बीमार पड़ने वालों की संख्या अत्यल्प है । इससे यह स्पष्ट है कि प्राणियों के शरीर में कुछ ऐसी शक्ति है जो प्राणियों की रक्षा करती है (देह: सर्वोषधक्षम: दीप्ताग्नय: खराहारा: कर्मनित्या महोदरा: । येनरा: प्रतिताश्चिन्त्यं नावश्यंगुरूलांघवम् - च०सू०) इसी प्रकार वातादि दोष सर्वव्यापक हैं, अपथ्य सेवन भी होता रहता है । पर इसी विशिष्ट शक्ति के कारण अधिकांश लोग नीरोग रहते हैं । भावप्रकाश का कथन भी है कि -

"दिनचर्या निशाचर्या ऋतुचर्या यथोदिताम् ।
आचारन्पुरुष: स्वस्थो सदा तिष्ठति नान्यथा ।"

इस शक्ति का ही नाम है 'व्याधि क्षमता - IMMUNITY (न च सर्वाणि शरीराणि व्याधिक्षमत्वे समर्थानिभवन्ति - च० व्याधिक्षमत्वं, व्याधिविरोधित्वम्, व्याध्युत्पाद प्रतिबन्धकत्वामिति यावत् - च०पा०)

वाग्भट का कथन है कि 'सर्वे सञ्चारिणोगदा:' । सुश्रुत संक्रमण सञ्चरण का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है । उन्हीं के शब्दों में -

प्रसंगाद् गात्र संस्पर्शात् नि:श्वासात् सहभोजनात् ।
सद्दशय्यासनाच्चेपि वस्त्रमाल्यानुलेपमात् ।।
औपसर्गिक रोगाश्चं संक्रामन्तिरान्नरम् ।

मक्खियों द्वारा संक्रमण फैलना -

मक्षिका व्रण जातस्य निक्षिपत्तियदाकृमीन् सुश्रु
अत्र डल्हण: - माक्षिकोपसर्पणात् व्रणकृमय: पतन्ति ।

इस प्रकार हुए रोग रोधक शक्ति के कइ रू
हैं :- निज कारणों से हुए दुष्ट दोषों से उत्पन्न दूषण क
शरीर में फैलने से रोकने के लिये पहला संघर्ष शरीर स्थि
आत्म शक्ति से होता है । नीग्रो लोग मलेरिया के प्रति
रोगक्षय (IMMUNE) होते हैं । पक्षी केवल AVIAN
VARIETY के प्रति सुग्राही (Susceptible) होते हैं
नवजात INFANTS में प्रारम्भिक छ: मास तक सहज
रोगक्षमता (Owing to an immunity derived from the
mother) के कारण रोगों से सुरक्षा रहती है । त्वचा बहु
से रोगों से बचाव का प्रथम सुरक्षा कवच है । 'नासा उसक
श्लैष्मिकला, बाल भी सम्पूर्ण श्वसनतंत्र को धूलकण आदि
से सुरक्षा प्रदान करती है ।

रोगों से बचे रहने में दृढ़ मनोबल का बड़ा एवं
महत्व पूर्ण योगदान है । (आशावान् व्याधिमोक्षाय शीघ्र
व्याधिमपोहति, ग्लानिर्नशस्यतेतस्य भग्नविश्लेषकृत्हिंसा-सु०
In has long heen recognised that the menta
attitude of the patient towards his affliction can effec
his power of recovery. The doctor's ability to give
confidence to the patient and the relations is a very
important part of treatment - P & p of medicine)

दोषों द्वारा दूषण से संबन्धित साहित्य आयुर्वेद
वाङ्मय में अति विस्तृत रूप में उपलब्ध है । यहां
'दूषणादोषा:' शीर्षक से उसका संक्षिप्ततम आंशिक वर्णन
ही उपस्थित करने का प्रयास किया है । अन्यथा इसके
दुखद इस रूप को चरक ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है

"सूक्ष्माणि हि दोष भेषज देश काल बल शरीरद्रव्य
सात्म्य सत्व प्रकृति वय सामवस्थान्तरणि, यान्यनु चिन्त्यमानानि
विमल विपुल बुद्धेरणि बुद्धि माकुलीकुर्यु: किं पुनरल्पबुद्धे:'
सू० 15/5

सारांश यह है कि दोष भेषजादि की अंशांश **कल्पना** को भलीप्रकार जान लेना इतना कठिन है कि
विमल और विपुल बुद्धिवालों की बुद्धि भी व्याकुल हो
जाती है ।


CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेदीय दृष्टि से अतिमधु पर्णी पादप की औषधीय कार्मुकता-एक अध्ययन

डा० आर० एस० चौहान

अति मधुपर्णी जिसको साधारण बोलचाल में सटीविया कहा जाता है, जबकि लैटिन नाम से 'सटीबिया वाडिआना' जाना जाता है । इस औषधीय पौधे का मूल स्थान दक्षिण अमेरिका का पैरागुआए स्टेट है । लेकिन लगभग 35-40 वर्षों से मुख्यता यह पौधा भारत, जापान, चीन, कोरिया, ब्राजील, न्यूजीलैंड तथा कनाडा में आम जाना जाता है । इन विकासशील देशों के हर एक छोटे-बड़े खोज-शोध संस्थानों के वैज्ञानिकों के लिए यह पादप चर्चा का विषय रहा है ।

प्रकृति ने इस औषधीय पादप में एक बहुत महत्वपूर्ण तथा विलक्षण गुण प्रदान किया है, कि इसमें शून्य कैलरीज के साथ अति मधुर रस प्रदत्त है । यह अद्भुत गुणों से परिपूर्ण पौधा विभिन्न प्रकार की व्याधियों से ग्रस्त रुग्णों में प्रचुर मात्रा में उपयोग करने पर बहुत ही आशुगुणंकारी सिद्ध हुआ है ।

औषधीय पौधे के सूखे पत्तों से बने सूक्ष्म चूर्ण में सफेद शर्करा (शुगर) से तीस गुणा ज्यादा मधुरता पाई जाती है, लेकिन जब इस सूक्ष्म चूर्ण को शुद्ध अवस्था में परिवर्तित किया जाता है तो इसकी मधुरता सफेद शर्करा (शुगर) से तीन सौ गुणा ज्यादा बढ़ जाती है ।

**रासायनिक संघटन :-** अतिमधुपर्णी के सूखे पत्तों में प्रचुर मात्रा में प्रोटीन, फाईवर, कार्बोहाइड्रेटस, आयरन, फास्फोरस, कैल्शियम, पोटाशियम, सोडियम, मैग्निशियम, जिंक तथा विटामिन्स 'ए' व 'सी' पाया जाता है तथा अल्प मात्रा में स्टिपरिक पार्मटिक एवं अरेकिडिक एसिड के ग्लिसराइड्स भी पाये जाते हैं ।

**गुण** :- मधु, रूक्ष ।

**रस** :- मधुर, तिक्त ।

**विपाक** :- मधुर, वीर्य-उष्ण ।

**प्रभाव** :- रसायन ।

**कर्म :-**

**दोष कर्म :-** कफवात शामक, पित्तवर्धक ।

**संस्थानिक कर्म :-**

**बाह्य :-** पत्रकल्क लेपन से जीर्ण व्रण रोपण तथा ग्रन्थि शोथ हर ।

**आभ्यन्तर कर्म :-**

**पाचन संस्थान :-** दीपन, पित्त कारक, भेदन, कृमिघ्न यकृदुतेजक तथा अग्नाशय उत्तेजक ।

**रक्तवह संस्थान :-** रक्त शोधक, शोथहर तथा हृदयोतेजक ।

**मूत्रवह संस्थान :-** मूत्रल, शोथहर ।

**श्वसन संस्थान :-** कफघ्न ।

**प्रजनन संस्थान :-** शुक्रजनक, गर्भाशय शोथहर तथा योनि स्रावनाशक ।

**दोष उपयोग :-** पत्र एवं मूल कफवात जन्य व्याधियों में उपयोग किया जाता है ।

**संस्थानिक आमयिक उपयोग :-**

**बाह्य उपयोग :-** दुष्ट व्रणों में ताजी पत्तियों का लेपन व सेचन करने से व्रण शुद्धि होकर घाव भर जाते हैं ।

ग्रन्थिशोथ के ऊपर एरण्ड पत्र के समभाग कल्क बनाकर बाँधने से शोथ दूर होती है ।

**आभ्यन्तर आमयिक उपयोग :-**

**पाचनसंस्थान :-** यकृद्विकार, अग्न्नाशय उत्तेजक पिताश्य शोथहर होने पर स्वभावतः यकृत की क्रिया शर्करा के सात्मीकरण की होती है । यह इस क्रिया के द्वारा प्रतीहारिणीगत रक्त से अधिक शर्करा को लेकर उसे शर्कराजन के रूप बदल लेता है, इस तरह से रक्त में विद्यमान शर्करा अपने प्राकृतिक अवस्था में रहती है, इस क्रिया में स्वभावतः अग्न्याशय, अपदुक ग्रन्थि, अधिवृक्क ग्रन्थि तथा आमाशय व पक्वाशय गत विद्यमान पोषक ग्रन्थियों के अनेक तरह के स्राव सहायक होते हैं । अतिमधुपर्णी बड़ा सूक्ष्म, पत्र चूर्ण यकृत की इस क्रिया को प्रत्यक्षतः उत्तेजित करके तथा अप्रत्यक्षतः अग्न्याशय ग्रन्थि

चौहान अस्पताल एवं अनुसंधान संस्थान, जालन्धर रोड, काला साधियाँ, जि०-कपूरथला (पंजाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



के स्राव को बढ़ाकर रक्तगत शर्करा की मात्रा को नियंत्रण में रखने के लिए सहायक होता है । अत: अतिमधुकपर्णी के सेवन से बढ़ी हुई रक्तगत शर्करा भी नियमित हो जाती है ।

**पंचपर्णीयोग :-** अतिमधुपर्णी, बिल्वपत्र, निम्बपत्र, करेलापत्र, गुड़मार पत्रों के समतोल लेकर सूक्ष्म चूर्ण बनाकर तीन से पाँच ग्राम की मात्रा गोदुग्ध अथवा दधिमस्तु से मधुमेही को नियमित सेवन करवाने से रक्त शर्करा नियंत्रण में आकर सामान्य अवस्था में आ जाती है ।

अतिमधुपर्णी के सेवन से चयापचय के विकृत होने के कारण हुई मेदोवृद्धि भी ठीक हो जाती है ।

शिग्रु गुग्गुल के समभाग सटीवियापत्र मिलाकर दो से चार ग्राम तक समशीतोष्ण जल से दो समय ग्रहण करने से मेदोरोग ठीक होकर रूग्ण का शारीरिक भार ठीक आ जाता है । औषध ग्रहणावधि कम से कम तीन माह, उत्तम परहेज के साथ, आशातीत लाभ प्राप्त होता है ।

**रक्तवह संस्थान :-** रक्तशोधक होने पर यौवन पिडिकाओं का शमन करता है । हृदयुतेजक होने से रक्तवह संस्थान में पाए जाने वाले विजातीय तत्वों को संस्थान में कहीं पर रुकने नहीं देता, फलस्वरूप यकृत व वृक्कों द्वारा शरीर से बाहर निकालने में सहायक होता है ।

दमाग्रस्त रूग्ण के लिए, अतिमधुपर्णी पत्र, पोहकरमूल त्रिकटु समभाग लेकर कपड़छान रेखापूर्णी चूर्ण बनाकर शहद के अनुपान से ग्रहण करवाने से दमा-श्वास रोग ठीक हो जाता है ।

काली खाँसी, जुकाम, नजला में तुलसी पत्र, वनफ्सा, लवंग, काकड़ सिंगी के समभाग सटीविया पत्र का क्वाथ बनाकर सेवन करने से आशातीत लाभ मिलता है ।

**मूत्रवह संस्थान से अतिमधुपर्णी की उपयोगिता :-**

वैज्ञानिक अनुसंधानों से यह सिद्ध होता है कि अतिमधुपर्णी के पत्र क्वाथ मूत्रल होने के साथ-साथ कोष्ठ मृदुकर व वृद्धावस्था में पाए जाने वाला पौरुष ग्रन्थि शोथवृद्धि में विशेष प्रभावी है, स्वानुभव में सटीविया पत्र के समभाग वरूणछाल तथा गोक्षरू से निर्मित क्वाथ दिन में तीन बार 15-20 मि.ली. पान करने से उपरोक्त व्याधि एक सप्ताह में ठीक हो जाती है ।

**प्रजनन संस्थान पर प्रभाव :-**

वाथूक, तालमखाना, कौंचबीज, लज्जालुबीज, श्वेतमूसली, उटंगन बीज, समभाग लेकर तथा दो गुण सटीविया पत्र मिला कर चूर्ण करके, सेवन मात्रा 8-1 ग्राम दो समय, शीतोष्ण गोदुग्ध में एक चम्मच रोगन बादाम मिलाकर उपयोग करने से शुक्राणुवृद्धिकर, शुक्रजनक, शुक्रस्तम्भक, कामोत्तेजक व रसायन आदि गुण पाए गए हैं ।

प्रसवोत्तर दौर्बल्य, गर्भाशय शोथहर, योनिस्त्रावनाशक, स्तन्यवृद्धयर्थ कृशता में अतिगुणकारी पाया है ।

**नाड़ी संस्थान पर प्रभाव :-**

सूखे अतिमधुपर्णी पत्र तथा समभाग अकरकरा स्याह तुलसी तुख्म का उपयोग मस्तिष्क दौर्बल्य तथा क्लैव्य में अतिगुणकारी प्रभाव पाया गया है ।

सात्मीकरण :- पौष्टिक एवं रसायन व मेदोव्याहर ।

प्रयोज्य अंग :- पत्र, मूल ।

मात्रा :- पत्र चूर्ण 2-4 ग्राम

मूल क्वाथ :- 15-20 मिलीलीटर ।

विशिष्ट योग :- पौष्टिक चूर्ण, पंचपर्णीयोग ।

**वक्तव्य :-**

अतिमधुपर्णी पर किए गए वैज्ञानिक अनुसंधान का अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष पाया है कि य औषधीय पादप चिकित्सीय दृष्टिकोण से अति महत्वपूर्ण है जिसमें शून्य कैलरीज के साथ-साथ मधुर तत्व का अनन्त भण्डारण भरा हुआ हैं । यह पौधा विभिन्न प्रकार की व्याधियों को ठीक करने की क्षमता रखता है । शक्कर रूग्णों के लिए अमृत तुल्य है । वृद्धावस्था में चयापचय के असन्तुलित होने पर अनेक प्रकार की व्याधियों में अतिगुणकारी आशुप्रभावकारी होने से यह पादप अमृततुल्य रसायन है ।



CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेदिक औषधियों की गर्भ-निरोधन में उपयोगिता

*डा० अनिता शर्मा
**डा० विनोद कुमार गोठेचा

किसी भी राष्ट्र की समृद्धि उसकी स्वस्थ जनता होती है न कि उसके धन-धान्य से । मानवता की रक्षा लिए जनसंख्या नियंत्रण अत्यन्त आवश्यक है । प्राचीनकाल जनसंख्या वृद्धि की कोई समस्या नहीं थी इसलिए हिताकाल में इस ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया रन्तु बाद के आचार्यों ने जैसे कि राजामार्तण्ड, भावप्रकाश, गरलाकर तथा भैषज्य रत्नावली ने अपने ग्रन्थों में कई र्भ-निरोधक योगों का वर्णन किया है ।

ऋग्वेद में प्रारम्भिक समय में 10 पुत्रों का ाशीर्वाद दिया जाता था । यथा - "दशऽरोयम् पुत्रम् ादेहि", इसके पश्चात् नवविवाहित जोड़े को आठ पुत्रों ा आशीर्वाद दिया जाने लगा यथा अष्टपुत्रः सौभाग्यवती व् । परन्तु जब जनसंख्या की वृद्धि होती चली गई तो इसी द में दो पुत्रों के आशीर्वाद का भी संदर्भ आया है । यथा "पुमान् तिजाऽयेत्थम् पुमान् अनुजायेत्थम्" । अंत में वल एक ही पुत्र का आशीर्वाद दिया जाने लगा "वर्मऐको णी पुत्राथ्" ।।

## ायर्वेद में गर्भ-निरोधन का सिद्धान्त

आचार्य चरक के अनुसार गर्भधारण तभी संभव है ब ऋतुकाल (गर्भधारण काल), क्षेत्र (गर्भाशय), अम्बु आहार रस) तथा बीज (स्त्री बीज तथा शुक्राणु) उत्तम थिति में विद्यमान हो, यथा -

**"जलकर्षण बीजर्तुसंयोगात् सस्य संभवः ।**
**युक्ति षडधातुसंयोगाद् गर्भाणां संभवस्तथा ।।"**

(च०सू० 11/23)

यदि उपर्युक्त किसी भाव की अनुपस्थिति या सामान्यता हो जाए, तो गर्भाधारण संभव नहीं होता । लिए गर्भ-निरोधक अपना कार्य किसी भी भाव के कार्य हस्तक्षेप करके ही करते हैं ।

डब्ल्यु. एच. ओ. ने 1978 में की गई अपनी **ाल्माटा घोषणा'** में देसी चिकित्सा पद्धतियों पर विशेष ार देते हुए कहा कि इनकी मदद से ही "2000 ईसवी क सबको स्वास्थ्य के लक्ष्य" को प्राप्त किया जा सकता है ।

आयुर्वेदीय 'मत्स्य न्याय' में कहा गया है कि जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है उसी प्रकार यदि जनसंख्या वृद्धि को नहीं रोका गया तो एक दिन मनुष्य, मनुष्य के ही माँस को खाने लगेगा । इसलिए आयुर्वेद शास्त्रों में निम्नलिखित कई विधियाँ जनसंख्या को रोकने के लिए बताई गई हैं -

(1) ब्रह्मचर्य - प्राचीन काल में मनुष्य की जीवन यात्रा चार भागों में बँटी हुई थी - ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम तथा संयास आश्रम । ब्रह्मचर्य आश्रम में मनुष्य को 25 वर्ष तक ज्ञानार्जन के लिए गुरु के पास रहना होता था, इस काल में मनुष्य पूर्णरूप से "अष्टविध मैथुन" से अलग रहता था। इस प्रकार ब्रह्मचर्य आश्रम की गर्भ-निरोधन में अपनी ही उपयोगिता थी ।

(2) ऋतुकाल (अनऋतुकाल) - ऋतुकाल का अर्थ है प्रजनन काल । ऋतुकाल सुश्रुत संहिता के शरीर स्थान के पंचम अध्याय के अनुसार मासिक धर्म के बंद होने के 12 दिनों तक रहता है ।

इसी दौरान स्त्री प्रजनन अंग पूर्णरूप से पुरुष बीज को ग्रहण के लिए तैयार होते हैं । इसलिए आचार्यों ने "स्वनिग्रह" का उपदेश दिया, यदि दम्पत्ति संतान नहीं चाहते । ऋतुकाल के पश्चात् गर्भाशय मुख इस प्रकार बंद हो जाता है जैसे सायंकाल में कमल पुष्प बंद हो जाता है इसलिए यदि इस प्रजनन काल में मैथुन न किया जाए तो सन्तानोत्पत्ति से बचा जा सकता है ।

(3) **देर से विवाह** - हमारे प्राचीन आचार्यों ने शादी के लिए पुरुष की आयु 25 वर्ष तथा स्त्री की आयु 16 वर्ष बताई है । विवाह में देरी परोक्ष रूप से संतानोत्पत्ति में बाधक का कार्य करती है ।

(4) **धात्रीकाल (दुग्धपान काल)** - जिस काल में स्त्री बच्चे को दूध पिलाती है, उसे मासिक धर्म नहीं होता है । इसलिए इस समय भी सन्तानोत्पत्ति में बाधक

* प्राध्यापक, अगद तंत्र विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर
** विभागाध्यक्ष, अगद तंत्र विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



होता है ।

(5) **मंत्रों का उपयोग** - प्राचीन काल में पुरुष तथा स्त्रियों में संतानोत्पत्ति को रोकने के कुछ दैवीय मंत्र भी प्रचलित थे ।

(6) **भाव प्रकाश के कुछ गर्भ-निरोधक योग** -

(i) जपा कुसुम, पुराण गुड़, काँजी सभी द्रव्य सममात्रा में पाँच तोले की मात्रा में एक सप्ताह तक लेने से संतानोत्पत्ति नहीं होती ।

(ii) पिप्पली, टंकण, विडंग का चूर्ण 2 ग्राम की मात्रा में एक सप्ताह तक मासिक धर्म रुकने पर लेने से भी संतानोत्पत्ति नहीं होती ।

(7) **योग रत्नाकर के गर्भ-निरोधक योग** -

(i) चित्रक मूल के क्वाथ को मासिक धर्म के बन्द होने पर तीन दिन तक पीने से भी गर्भोत्पत्ति नहीं होती है ।

(ii) कदम्ब के 1/4 फल को खाकर ऊपर से गर्म जल पीने पर स्त्री को बन्ध्यत्व उत्पन्न होता है ।

(iii) पलाश के बीज यदि तीन दिन तक खाये जायें तो भी स्त्री को बन्ध्यत्व हो जाता है ।

**गर्भ-निरोधक औषधियों पर हुए शोध**

(1) नीम (Melia azadirachta) -

(i) यदि नीम तैल को गर्भाशय में सिरींज से पहुँचा दिया जाए तो एक ही बार में स्त्री को बन्ध्यत्व हो जाता है । (Ref. : Journal of Ayurveda, April-June, 1995)

(ii) यदि नीम पत्ती के एक्सट्रेक्ट का प्रयोग किया जाए तो यह स्त्री के बीजकोष के कार्य में बाधा उत्पन्न करता है जिससे स्त्री संतान उत्पत्ति नहीं कर पाती । (Ref. : Page 27, Journal of Res. & Edu. in Indian Medicine, Vol.I, March-June, 1982)

(2) जपा (Hibiscus Rosa Sinensis) - यह स्त्री प्रजनन अंगों के कार्य को कम करके तथा Oestrus cycle को बाधित करके अपना कार्य करता है ।

(3) जयन्ती (Sesbanina Sesban) - यह बीजकोष के कार्य को रोककर, गर्भाशय संरचना को कुछ बदल कर गर्भ की स्थापना को होने से रोकता है ।

(4) आरग्वध (Cassia Fistula linn.) - इसके फल के एक्सट्रेक्ट का चूहों पर प्रयोग करने पर मालूम हुआ कि यह Oestrus cycle, गर्भाशय तथा गर्भ स्थापना को बाधित कर अपना कार्य करता है ।

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# हृदय रोग के कारण एवं निवारण

*प्रो०सी०बी०झा

**डॉ० सूढ़लदेव महापात्र (जू.रे.)

**हृदय रोग :-**

आयुर्वेद एक शाश्वत, जीवन्त एवं प्राचीनतम चिकित्सा विज्ञान है । स्वास्थ्य से जुड़े समस्त पक्षों पर इसमें विस्तार से विचार किया गया है । दोष, धातु, मल को शरीर का मूल मानते हुए इनकी विषमता से रोगों की उत्पत्ति का विचार किया गया है । रोगों की उत्पत्ति के बारे में आयुर्वेद एवं आधुनिक विचारधारा में भिन्नता देखी जाती है । यह भिन्नता मूलतः मूलभूत सिद्धान्त की भिन्नता के कारण है । यथा ज्वर, प्रमेह, हृदयरोग आदि आयुर्वेद में रोग माने गये हैं । परन्तु आधुनिक चिकित्सा विज्ञान इसे रोग विशेष के लक्षण के रूप में लेती है । वर्तमान में रोगों के ज्ञान हेतु जो साधन उपकरण उपलब्ध हैं उनसे रोगों को विस्तार से जानने का अवसर मिला है तथा रोग की विकृति को गहराई से हम समझने में समर्थ हुए हैं ।

**निदान :-**

आयुर्वेद दृष्टया हृदय प्राण एवं रसवह स्रोतस का मूल माना गया है और स्रोतों की दुष्टि स्रोतोमूल को प्रभावित करती है और स्रोतोमूल दुष्टि हृदयरोग के रूप में परिलक्षित होती है । उसी तरह हृदय को साधकपित्त, अवलम्बक कफ, प्राणवायु एवं व्यानवायु का स्थान माना गया है, एवं इन सब दोषों की दुष्टि से हृदय रोग होता है ।

**विशेष निदान :-**

**1. शारीरिक कारण :-**

**(अ) आहार जन्य** - अति उष्ण, गुरू अन्न एवं कषाय तथा तिक्तरस से युक्त भोजन का अत्यधिक सेवन ।

**(ब) विहार जन्य :-** अति व्यायाम, अतिश्रम तथा उपवास एवं वेगावरोध, तीव्रविरेचन तथा तीव्र शारीरिक आघात ।

**2. मानसिक कारण**

अत्यधिक चिन्तन, तीव्र मानसिक आघात ।

**सम्प्राप्ति :-**

उपरोक्त निदान सेवन से प्राण एवं रसवह स्रोतों की दुष्टि तथा हृदय स्थित दोषों की दुष्टि से मन्दाग्नि होती है और मन्दाग्नि से आमरस की उत्पत्ति होती है । पुनः आमरस दूषित दोष तथा दूष्यों से मिलकर दोष दूष्य सम्मूर्च्छना को प्राप्त होते हुए स्रोतो वैगुण्य उत्पन्न करता है स्रोतोवैगुण्य की उत्पत्ति के फलस्वरूप स्रोतसंग होता है फलतः हृदय रोग उत्पन्न होता है ।

**सामान्य लक्षण :-**

वैवर्ण्यता (Discoloration of Body may be cyanotic or Pallor), मूर्च्छा (Syncope), ज्वर (Fever), कास (cough), हिक्का (Hiccough), श्वास (Dyspnoea), आस्यवैरस्य (Unfavourabe taste), तृष्णा (Thirst), मोह (Stupor)

**विशेष लक्षण :-**

लक्षणों के आधार पर हृदय रोग के पाँच भेद किए गए हैं ।

1. वातिक हृदय रोग - हृदय में शून्यता का भान, शुष्कता, भेद, स्तम्भ, समोह तोद, दारूण, स्पन्दन, कम्पन ।
2. पित्तज हृदय रोग - तृष्णा, उष्मा, दाह, चोष, हृत् क्लम, स्वेद, मुखशोष इत्यादि ।
3. कफज हृदय रोग - गौरव, लालप्रसेक, अरुचि इत्यादि
4. त्रिदोषज हृदय रोग - उपरोक्त समस्त के लक्षणों का सम्मिलित रूप मिलना ।
5. कृमिज हृदय रोग - तीव्र पीड़ा, कण्डू, उत्क्लेश, ष्ठिवन, तोद, शूल, हृल्लास शोष ।

**चिकित्सा :-**

1. निदान परिवर्जन ।
2. चिकित्सा सूत्र-शारीरिक एवं मानसिक विश्राम, के बलाबल के अनुसार मृदु संशोधन हृदयरोग उपयोगी होता है ।

**सामान्य चिकित्सा :-**

**मुख्य औषधियाँ :-** अर्जुनक्षीरपाक, बलापू यष्टीमधुचूर्ण, अर्जुनपत्रक्वाथ, पुष्करमूल चूर्ण, करवीर नागबलाचूर्ण, श्रृंगभस्म, प्रभाकरवटी, हृदयार्णव नागार्जुनाभ्ररस, चिन्तामणिरस, अर्जुन घृत, पुनर्नवादिमण्डू



CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अर्जुनारिष्ट।

**विशिष्ट चिकित्सा :-**

1. वातिक हृदयरोग :- पुनर्नवादितैल, हरीतक्यादिघृत, पुष्करमूलादि कल्क एवं क्वाथ, पथ्यादि कल्क, व्यूषणादिघृत, बिल्वादितैल, पंचकोलादि तैल ।
2. पित्तज हृदयरोग - प्राणदाघृत, स्थिरादिघृत, शीतवारि सिंचन, मृदुविरेचन, हुरहुरादि चूर्ण, लीलाविलास रस ।
3. कफज हृदयरोग - स्वेदन, आवश्यकतानुसार वमन, उपवास, कुलत्थ यूष, जांगलमांसरस, कटफलादिकषाय, कृष्णादि चूर्ण, उदुम्बरादीलेह, शिलाजतु, च्यवनप्राश रसायन, आगस्त्यहरीतकी रसायन, ब्राह्म रसायन, आमलकी रसायन, त्रिवृतादि चूर्ण, वचादिचूर्ण, पुष्करमूलादि चूर्ण ।
4. त्रिदोषज हृदय रोग - सर्वप्रथम लंघन, तत्पश्चात् पुष्करमूलादि चूर्ण, नागवल्ली चूर्ण, कुकुभादि चूर्ण, पुष्करादि क्वाथ, दशमूलादि क्वाथ, पार्थारिष्ट, बलादिघृत, यष्टयादिघृत, स्वदंष्ट्राघृत, अर्जुनघृत, चितामणिरस, हृदयार्णवरस, हृदरोगहरवटी, हेमामृतरस, नवायस लौह, कल्याण सुन्दररस, त्रिनेत्र रस, नगार्जुनाभ्ररस, पंच्चानन रस, प्रभाकर वटी ।

**हृदय द्रव्य :-**

अमलतास, दाडिम, मातुलुगं मधु, मांसरस, घृत, विलेपी, वेशावर, यूष, सैन्धव, एरण्ड, सौवर्चल लवण, उत्पालादिगण ।

**आधुनिक दृष्टया हृदय से सम्बंधित विकार एवं उपचार** - आधुनिक मतानुसार हृदरोग में मुख्यत: मायोकार्डियल इनफार्क्सन (Myocardial Infarction), एन्जाइना पेक्टोरिस, (Angina pectoris), उच्चरक्त चाप (Hypertension) इत्यादि आते हैं । इनका संक्षेप्त विवरण निम्न में दिया गया है ।

मायोकार्डियल इनफार्क्सन (Myocardial Infarction) मुख्यत: रक्त वाहिनियों के अवरूद्ध हो जाने के कारण से होता है जिनका मुख्य कारण Thrombus है । इनमें रोगी को तीव्र वेदना, सांस फूलना, उल्टी, चक्कर आना, सीने में जकड़ाहट, भारीपन तथा चेहरा पीला पड़ना आदि लक्षण पाया जाता है । इसमें तीव्र वेदना के लिए ओपाएड अनालजेसीक (Opoid Analgesics) (जैसे मोरफिन (Morphine), कोडीयेन (Codeine) इत्यादि) दिया जाता है । पुन: Thrombus के लिए एस्पिरिन (Aspirin), अन्जियोसिड (Angiocid), स्ट्रेप्टोकाइनेज (Streptokinase) इत्यादि दिया जाता है । एन्जाइना पेक्टोरिस (हृदशूल) (Angina pectris) - मुख्यतया हृदय को आक्सीजन की पूर्ति ठीक से न हो पाने के कारण से होती है । इनमें व्यक्ति को सीने में दर्द, गर्दन, जबड़ा तथा बाएं हाथों में दर्द फैलता है । रोगी सीने में जकड़न महसूस करता है । इनमें मुख्यत: β - Blocker (जैसे-Propanolol, Atenolol), Nitrates (जैसे Gtn.) इत्यादि दवाई दी जाती है । उच्चरक्त चाप मुख्यत: रक्त दबाव बढ़ जाने पर होता है । इसमें सिर दर्द, चक्कर आना, घबराहट, उल्टी आदि शिकायतें मिलती हैं । इसमें β - Blocker (जैसे Propranolol, Atenolol इत्यादि), ACE Inhibitor (जैसे Analapril, Capatropil इत्यादि) का प्रयोग होता है ।

**योग चिकित्सा :-**

विभिन्न प्रकार के योग एवं प्राणायाम के द्वारा हृदयरोग की सफल चिकित्सा की जा सकती है । इनमें मुख्यत: कपालभाति, भ्रामरीप्राणायाम विशेष लाभप्रद होता है ।

**रोकथाम एवं बचाव :-**

अनावश्यक चिन्तन का त्याग, लघु व्यायाम, उष्ण, तीक्ष्ण पदार्थों का त्याग, ज्यादा शारीरिक परिश्रम का त्याग (जैसे वेग से दौड़ना, जल्दी-जल्दी सीढ़ियां चढ़ना इत्यादि) शारीरिक वेगों का उचित समय पर त्याग करना आवश्यक है ।

**निष्कर्ष :-**

वर्तमान काल की जीवन शैली, रक्त चाप, हृदयरोग, मधुमेह आदि व्याधियों के दृष्टि से सर्वाधिक उपयुक्त कारण माना जाता है । संयत जीवन शैली, खान-पान एवं आध्यात्म चिन्तन से ही इन सब पर नियंत्रण संभव है । अत: इन रोगों से बचने हेतु भारतीय विचार धारा, प्रकृति के अनुकूल रहन-सहन एवं ध्यान, योग आदि का अनुसरण एवं प्रचार-प्रसार कर के स्वयं एवं इनसे ग्रस्त रुग्ण समाज की रक्षा करनी चाहिए ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# नारी स्वास्थ्य गर्भावस्था में शिशु और माँ की स्वास्थ्य रक्षा-एक समीक्षा

* धीरज बोहरा, बी.ए.एम.एस. (तृतीय प्रोफ.)
** डा० सुरेश चन्द्र, एम.डी. (आयु.)

**सामान्य परिचय :-**

कौमारभृत्य अष्टांग आयुर्वेद का एक महत्वपूर्ण अंग है । इसके अन्तर्गत शिशु और माँ के स्वास्थ्य रक्षा सम्बंधी तथ्यों का वर्णन विस्तार रूप से मूल ग्रन्थों में मिलता है । आयुर्वेद एक ऐसा चिकित्सा शास्त्र है जिसमें आयु को स्वस्थ रखने के मूल प्रयोजनों का वर्णन मिलता । वस्तुत: यही आयुर्वेद का सबसे प्रमुख अंग है ।

मन को प्रसन्न एवं स्वस्थ रखने का पहला उपाय , शरीर को स्वस्थ रखना । शरीर वह रथ है जिस पर ैठकर जीवन की यात्रा करनी होती है । शरीर एक लता-फिरता देव-मन्दिर है, जिसमें स्वयं भगवान अपनी विभूतियों के साथ विराजते हैं । अत: मन की निर्मलता और बुद्धि की शुद्धता का साधन शरीर से प्रारम्भ होता है । शरीर ो एक साधन मात्र है, जिसकी सहायता से परम साध्य को ाप्त करने के लिए योग, तप, जप आदि किया जाता है । स साधन रूपी शरीर को स्वस्थ और पवित्र रखने से ही ोग की शुरुआत होती है ।

**शुक्र शोणित संयोगे यो भषेद्दोष उत्कट: ।**
**प्रकृतिर्जायते तने तस्या मे लक्षणं श्रृणु ।।**

(सु०शा० 4/62)

गर्भस्थ शिशु की देह पिता के शुक्राणु तथा माता के शोषित के संयोग से बनती है जिसमें गर्भाशय की प्रकृति ाता के आहार विहार की प्रकृति और महाभूतों के विकार की प्रकृति पर गर्भ शरीर की प्रकृति निर्भर होती है ।

ऐसे शारीरिक स्वस्थ वातावरण में आत्मा इन्द्रियाँ ौर मन भी प्रसन्न रहते हैं । शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि स्वस्थ मनुष्य अपने समान सृष्टि की उत्पत्ति कर अपने च्चतम लक्ष्य-मोक्ष की ओर प्रगति करता है ।

गर्भवती स्त्री को यह समझना चाहिए कि वह न केवल अपने शरीर के लिए अपितु जन्म लेने वाले शिशु के लए भी भोजन कर रही है । अत: आमतौर पर वह जितना ाहार लेती है, उससे अधिक पौष्टिक भोजन की आवश्यकता ।

इसलिए शरीर की विशेष भागों के अनुसार यहां पर चार प्रकार के आवश्यक भोजन का उल्लेख किया जा रहा है ।

**फल :-** इनसे शरीर की विटामिन, नमक स्वस्थ रखने वाले अम्ल और सैलूलोज की प्राप्ति होती है ।

**सब्जियाँ :-** लोहा, अन्य नमक, पत्तों के मूल्यवान प्रोट्रीन, विटामिन और सैलूलोज के लिए विभिन्न प्रकार की सब्जियों की जरूरत है ।

**दूध :-** गाय के दूध में खनिज, लवण सहित सभी जीवनदायी तत्व पाए जाते हैं ।

**साबूत अनाज :-** यह ऊर्जा देने वाला भोजन है। शरीर इसे बहुत जल्दी आत्मसात करता है । चार प्रकार के भोजन को उचित अनुपात में खाकर भोजन की आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सकती है ।

**स्वस्थ एवं गर्भवती नारी का समुचित दैनिक आहार**

| क्र.सं. | ऊर्जा-स्रोत | स्वस्थ स्त्री | गर्भवती स्त्री |
|---|---|---|---|
| 1. | कैलौरी (ग्राम) | 2200 | 2500 |
| 2. | प्रोटीन (ग्राम) | 45 | 70 |
| 3. | कैल्शियम (ग्राम) | 0.4-5 | 1.0 |
| 4. | लवण (मिलीग्राम) | 30 | 40 |
| 5. | विटामिन ए (माइक्रोग्राम) | 3000 | 3000 |
| 6. | थायमिन (मिलीग्राम) | 1.1 | 1.3 |
| 7. | राइबोफ्लेबिन (मिलीग्राम) | 1.2 | 1.4 |
| 8. | नायसिन (मिलीग्राम) | 15 | 17 |
| 9. | विटामिन सी (मिलीग्राम) | 50 | 50 |
| 10. | विटामिन बी (मिलीग्राम) | 1.0 | 1.5 |
| 11. | विटामिन डी (आई.यू.) | 200 | 200 |

उपरोक्त भोजन के अतिरिक्त काष्ठफल, मधु, खजूर, किशमिश, मलाई, मक्खन आदि भी आहार में लिए जा सकते हैं । जैली-जैम के बदले शहद बेहतर है ।

*छात्र ** रीडर/विभागाध्यक्ष
• शरीर क्रिया विभाग, शहीद करतार सिंह सराभा आयु. मेडिकल कालेज एवं हास्पीटल, सराभा, लुधियाना

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अधिक मक्खन खाने के बदले मलाई खाना अधिक अच्छा है।

गर्भ में शिशु का विकास होने के कारण पोषण की मांग अत्यधिक बढ़ जाती है. यदि गर्भवती माँ इन सबकी पूर्ति नहीं कर सकती, तो माँ के शरीर से यह आवश्यक वस्तुएं खींची जाती हैं। इसके कारण माँ का शरीर कमजोर पड़ जाता है। शिशु को स्वस्थ रखते हुए माँ को भी स्वस्थ रहना है।

रखते में क्या खाएं :-

1. फल, कुछ ताजे, उबले और कुछ सूखे भी।
2. उबला दूध।
3. अनाज, चपाती, चावल, डबल रोटी आदि के रूप में।

इस अवधि में जब मतली आए और उल्टियां हो, तो भूख कम लगती है। ऐसे समय में नाश्ता सरल हो। फल या फलों का रस नाश्ते से 1½ घंटे पहले और नाश्ते के समय. उबला हुआ दूध लिया जा सकता है।

मध्याह्न भोजन. रात्रि भोजन के समान ही रहे. लेकिन फल, ताजी सब्जियाँ, पके या कच्चे टमाटर लिए जा सकते हैं। दूध, पनीर, दही आदि लिया जा सकता है। ध्यान रहे, इतना न खाएं कि फल और दूध के लिए पेट में जगह ही न हो।

रात्रि का भोजन फलों के बदले सब्जी का होना चाहिए। इस समय भोजन में कच्ची या पकाई गई सब्जियाँ हो और सब्जियों का शोरबा भी लिया जा सकता है, लेकिन सब्जियों के साथ प्रोटीन युक्त भोजन को शामिल किया जाना चाहिए, जैसे उबला दूध, पनीर, छाछ आदि। यदि इस भोजन के समय आलू या अन्य कार्बोहाइड्रेट वाला भोजन जैसे चावल लिया जाए, तो रोटी की कोई आवश्यकता नहीं होगी।

मां की आवश्यकता, उसके वजन, उसकी शक्ति और भूख के अनुसार थोड़े परिमाण में मीठा लिया जा सकता है।

जिस गर्भवती महिला की पचाने की शक्ति कम है, अपने पोषण की आवश्यकता की पूर्ति के लिए सरल भोजन करे। जैसे नाश्ते के लिये फल, टोस्ट, गर्म दूध, मध्याह्न भोजन में कच्ची या पकाई गई सब्जी, दूध, पनीर, छाछ, मटर, दालें, सेम, चावल, रोटी। रात्रि के भोजन में फल, अनाज, दूध तथा मीठे के लिये खजूर या शहद। सोते समय दूध, फलों का रस या सब्जियों का शोरबा। इस स्थिति में वजन बढ़ना स्वाभाविक है। सामान्य रूप से शरीर के वजन के 13 वें भाग की वृद्धि हो। यदि वजन की वृद्धि हद से ज्यादा हो. तो फल और सब्जियों की मात्रा बढ़ायें। दिन में कम से कम 200 मिली दूध लें। मलाई निकाला दूध या छाछ लें। वसा और मिठाइयों को मात्रा सीमित रखें।

यदि गर्भवती की भोजन व्यवस्था संतुलित रहे तो गुर्दों की जटिलता थोड़ी कम होगी। इससे गर्भवती मां को चैन मिलेगा और शिशु की हालत भी अच्छी रहेगी। गर्भावस्था के समय कोष्ठबद्धता की स्थिति साधारणत: पैदा होती है। इसे ठीक करने के लिये सही भोजन बहुत कार्य कर सकता है। इस अवस्था को सुधारने के लिये दोनों समय के भोजन में फल बहुतायत में लें। दोनों समय के भोजन के बीच में कम से कम एक बार फलों के रस का सेवन करना चाहिए।

**सारांश :-** बच्चों को अच्छी शिक्षा-संस्कार देना जितना आवश्यक है उतना ही बच्चों के सम्पूर्ण शारीरिक विकास के लिए आवश्यक है उचित पोषण, और उचित पोषण के लिए आवश्यक है संतुलित आहार। प्रारम्भ में शिशु अपने आहार के लिए माँ के दूध पर निर्भर रहता है। इसलिए गर्भावस्था से ही शिशु और माँ के स्वास्थ्य की रक्षा करना परम धर्म है।

इस विषय वस्तु पर मेरा यह मानना है कि जब स्त्री गर्भ धारण करने की अवस्था में होती है या गर्भावस्था काल में शिशु और मां का सम्बन्ध नाभि नाल के माध्यम से होता है। इस अवस्था में माँ को अपनी पाचन शक्ति के अनुसार भोजन ग्रहण करना चाहिए। माँ जो भी आहार ग्रहण करती है उसके पाचन के बाद जो रस निर्मित होता है उससे शिशु का पोषण एवं विकास ठीक ढंग से होता है। परिवार के सदस्यों को यह जानना चाहिए कि ऐसी अवस्था में गर्भिणी को संतुलित आहार देना चाहिए और उसे 1-2 किलोमीटर की सुबह-सुबह सैर करानी चाहिए। शुद्ध प्राणवायु से रक्त परिसंचरण ठीक रहता है और मन को प्रसन्नचित रखना चाहिए।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# बालकों में कृमि रोग - निदान एवं चिकित्सा

* डा० दिनेश कुमार राय
** डा० शशिकान्त सचान

बाल्यावस्था के अन्तर्गत होने वाली व्याधियों में कृमि रोग एक प्रमुख व्याधि है । बालक की वृद्धि एवं विकास के लिए संतुलित पोषण आवश्यक है जिसमें प्रोटीन्स व विटामिन्स का प्रमुख स्थान है । कुपोषण (Malnutrition) के कारण जहां शिशु के शारीरिक व मानसिक विकास पर प्रभाव पड़ता है वहीं सम्यक् पोषण होने पर आंत्रगत कृमियों (Intestinal Infestations) के कारण शरीर को आवश्यक तत्व नहीं मिल पाते हैं । बालक का भविष्य पोषण पर निर्भर करता है । यदि बाल्यावस्था में ही सम्यक् पोषण विकास हो जाता है तो शेष अवस्था में स्वस्थ रहते हुए जीवन व्यतीत करता है । बालक के आहार से मधुर, मृदु, बृंहण, शीत आदि द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है जिसके कारण आमाशय में कृमियों की उत्पत्ति होती है । इसलिए चिकित्सक का ध्यान बालक की अन्य व्याधियों की चिकित्सा के साथ कृमि रोग पर भी आकृष्ट होता है ।

आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्र में 20 प्रकार के कृमि रोग बताये गये हैं जो बाह्य (मलज) तथा आभ्यान्तर भेद से दो प्रकार के तथा जन्म भेद से रक्तज, कफज व पुरीषज ये तीन प्रकार के होते हैं । कफज एवं पुरीषज कृमि को वस्तुतः आन्त्रगत कृमि (Intestinal worms) माना गया है । कृमियों से मुख्यतः तीन प्रकार की व्याधियां होती हैं - (1) जठरांत्र या पोषणज विकार (Gastro Intestinal Disorders) जो कफज एवं पुरीषज कृमियों से उत्पन्न होते हैं । (2) पाण्डु या रक्ताल्पता (Anaemia) जो प्रधानतः पुरीषज कृमियों से उत्पन्न होती है । (3) कुष्ठ (Leprosy and other Dermatoses) जो रक्तज कृमियों से होते हैं । कफज कृमियों का स्थान आमाशय, पुरीषज कृमियों का स्थान पक्वाशय तथा रक्तज कृमियों का स्थान रक्तवाही शिरा बतलाया गया है । बालकों में मुख्यतः कफज कृमियां पायी जाती हैं ।

**निदान (Etiology)** - कृमिरोग को निदान की दृष्टि से दो वर्गों में बाँट सकते हैं -

**(A) आहार जन्य निदान** - अजीर्णेऽन्ने मधुराम्लनित्यो द्रवप्रियः पिष्टगुडोपभोक्ता व्यायामवर्जी दिवाशयानो विरूद्धभुक् संलभते क्रिमीस्तु ॥ - मांसक्षीर गुड़क्षीरदधिशुक्तैः कफोद्भवाः । (सु०उ० 54)

(1) मधुर अम्ल पदार्थों का सेवन ।
(2) द्रव बहुल पदार्थों का सेवन ।
(3) पिष्टमय पदार्थों का सेवन ।
(4) मिष्टान्न पदार्थों का सेवन ।
(5) अजीर्ण अवस्था में भी आहार ग्रहण करना ।
(6) मृत्तिका भक्षण ।

बालकों में मृत्तिका भक्षण से वातादि दोषों में कोई एक दोष प्रकुपित हो जाता है यथा - कषाय रस वात को, ऊसर (क्षारयुक्त) मिट्टी पित्त को तथा मधुर प्रधान मिट्टी कफ को प्रकुपित करके रूक्षता गुण के कारण खाये हुए भोजन तथा रसादि धातुओं को भी रूक्ष बना देते हैं तथा बिना पाचित हुए ही स्रोतसों को परिपूर्ण करके उनमें अवरोध उत्पन्न कर देती है जिससे इन्द्रियों को अपने-अपने विषय ग्रहण करने की शक्ति, तेज-शरीर की विशिष्ट शक्ति तथा ओज को नष्ट करके बल, वर्ण एवं अग्नि का नाश करके पाण्डु रोग को शीघ्र उत्पन्न करती है ।

मृत्तिकादनशीलस्य कुप्यत्यन्यतमो मलः ।
कषाया मारुतं पित्तभूषरा मधुरा कफम् ॥
X X X
पाण्डुरोगं करोत्याशु बलवर्णाग्निनाशनम् ॥
(च०चि० 1

**(A) विहारजन्य निदान -**

(1) व्यायाम नहीं करना ।
(2) दिवाशयन ।

**सम्प्राप्ति (Pathogenesis)** - आभ्यन्तर कृमि के निम्नलिखित दोष, दूष्य व अधिष्ठान हैं ।

दोष - कफ दूष्य - रस, रक्त

* लेक्चरर, ** लेक्चरर, राजस्थान आयुर्वेद महाविद्यालय, नगर परिषद, पुरानी माली रोड, झालामण्ड चौराहा, जोधपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अधिष्ठान - कफज कृमि - आमाशय ।
पुरीषज कृमि - पक्वाशय ।

श्लेष्मा की अधिकता से आमाशय में उत्पन्न होने वाले कफज कृमि वृद्धि को प्राप्त होकर के नीचे, ऊपर की ओर घूमते हैं । उनमें से कुछ पृथुब्रह्म (चमड़े की मोटी तांत के समान) तथा कुछ गण्डूपद (केचुएँ) के समान मोटे होते हैं तथा कुछ नवांकुर धान्य के समान आकार वाले छोटे एवं सूक्ष्म होते हैं । इनका वर्ण श्वेत एवं ताम्राभ होता है । अन्त्राद, उदरावेष्ट, हृदयाद, महागुद, चुरू, दर्भकुसुम तथा सुगन्ध नामक सात प्रकार के होते हैं ।

लाक्षणिक चिन्ह (Clinical Features):-

(A) कृमि के सामान्य लक्षण -

ज्वरो विवर्णता शूलं हृद्रोगः सदनं भ्रमः ।
भक्त द्वेषोऽतिसारश्च संजात क्रिमिलक्षणम् ॥

(1) ज्वर (Fever)
(2) विवर्णता (Discolouration of Skin)
(3) उदरशूल (Abdominal Pain)
(4) हृद्रोग (Heart Diseases)
(5) अंगों में शिथिलता
(6) भ्रम (Vertigo)
(7) अरुचि (Anorexia)
(8) अतिसार (Diarrhoea)

(B) आंत्रगत कृमि (कफज) के लक्षण -

हृल्लासमास्यस्रवणविपाकमरोचकम् ।
मूर्च्छाच्छर्दिज्वरानाहकार्श्यं क्षवथुवीनसाम् ॥
(अ०हृ०नि० 14/50)

(1) हृल्लास (Morning Sickness)
(2) लालास्राव (Secretion of Saliva)
(3) अजीर्ण (Indigestion)
(4) अरुचि (Anorexia)
(5) मूर्च्छा (Syncope)
(6) छर्दि (Vomiting)
(7) ज्वर (Fever)

(C) मृत्तिकाभक्षणजन्य कृमि के लक्षण -

क्षुनाक्षि कूटगण्डभ्रूः शूनयान्नाभिमेहनः ।
कृमिकोष्ठोऽतिसार्येत मलं सासृककफान्वितम् ॥
(च०चि० 16)

यहाँ मृत्तिकाभक्षण से स्रोतसों में संग होकर रसादि धातुओं का पोषण सम्यक् प्रकार से नहीं हो पाता जिससे बल वर्णादि का नाश होता है । बालक मृतिका भक्षण के साथ मिट्टी में पड़े हुए कृमि को भी खा जाता है जिससे वह शरीर में जाकर रक्ताल्पता आदि लक्षण को उत्पन्न करते हैं । अक्षिकूट, कपोल, भौं, पैर, नाभि, मूत्रेन्द्रिय में शोथ होना यह रक्ताल्पता का लक्षण है । स्रोतोसंग के कारण यकृत् वृद्धि (Hepatomegaly) प्लीहाभिवृद्धि (Spleenomegaly), उदावर्त (Distension of Abdomen) आदि लक्षण कोष्ठ के असामान्य स्थिति को दर्शाता है । इसी को आचार्य चरक ने 'कृमि कोष्ठ' नाम दिया है ।

आधुनिक मतानुसार कृमि - आयुर्वेदीय कफज कृमियों की तुलना आंत्रिक कृमियों से कर सकते हैं -

1. अन्त्राद् - आंतों को खाने वाली-अंकुश मुख कृमि (Hook Warms) ।
2. उदरावेष्ट - अन्न प्रणाली को लपेट कर रहने वाली - स्फीत कृमि (Tapeworm) ।
3. हृदयाद - हृदय भाग में रहने वाली ।
4. महागुद - गुद प्रदेश के भीतर रहने वाली - गण्डूपद कृमि (Ascaris)
5. चुरू - सूत्र की आकृति विशेष वाली - तन्तु कृमि (Thread worms)
6. दर्भकुसुम - कुश या डाभ के फूल के आकार की ।
7. सुगन्ध -

**(1) अंकुशमुख कृमि (Hook Worms)** - ग्रामीण क्षेत्रों में या गन्दगी वाले शहरी क्षेत्रों में बालकों में पायी जाती है । इन कृमियों का मुख अंकुश के समान होता है जिसकी सहायता से ये आन्त्र की भित्तियों में चिक्के रहते हैं । प्रत्येक कृमि प्रतिदिन बालक की आन्त्र से 0.1 से 0.5 मिली रक्त का आचूषण करती है । इस व्याधि को Ancylostomiasis कहते हैं । पुरीष परीक्षण (Stool Exam.) में इनके अण्डों



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



की उपस्थिति पायी जाती है । बालक के मल के साथ ये बाहर निकलते हैं । इनके अण्डे (Cysts) गीली मिट्टी में रहकर कुछ दिन में Larvae का रूप धारण कर लेते हैं । इस अवस्था में ये तीन चार मास तक जीवित रह सकते हैं । बालक के नंग पांव रहने पर ये त्वचा के अन्दर प्रविष्ट होकर Lymphatic Circulation द्वारा हृदय के दक्षिण निलय में पहुँच जाते हैं, वहाँ से ये फुफ्फुस (Lungs) कष्ठनाड़ी (Trachea), अन्नप्रणाली (Oesophagus) से होते हुए अपने मूल अधिष्ठान पच्यमानाशय में आकर रुक जाते हैं तथा 4 सप्ताह में इनके आकार में वृद्धि हो जाती है । तत्पश्चात् स्त्री कृमि गर्भवती होकर अण्डे देती है जो पुरीष द्वारा बालक के शरीर के बाहर निकलते हैं ।

**लाक्षणिक चिन्ह (Clinical Features) -**

(1) इस व्याधि का मुख्य लक्षण रक्ताल्पता (Progressive Anaemia) है । इन कृमियों की लार (Saliva) में एक विषैला पदार्थ (Toxin) पाया जाता है जो रक्त कणों को विनष्ट करता है जिससे हीमोग्लोबिन की कमी हो जाती है ।

(2) अरुचि (Anorexia)

(3) उदरशूल (Abdominal Pain)

(4) कुपोषण (Malnutrition)

(5) जीर्णावस्था में Gross Anaemia के साथ Hypoproteinimia पाया जाता है जिसके कारण सर्वांग शोथ (Leading Oedema) पाया जाता है ।

(6) कभी अतिसार (Diarrhea) तथा कभी विबन्ध (Constipation) पाया जाता है ।

(7) Small Intestine के Epithelial Cells में Function damage होने से आचूषण मन्द (Malabsorption) होता है ।

(8) विवर्णता (Discolouration of skin)

**(2) गण्डूपद कृमि (Ascaris Lumbricoids)** - यह मुख्यत: बालकों में ही पाया जाता है तथा 20-40 से.मी. लम्बा होता है ।

बालक के पुरीष से निकले हुए अण्डों से [illegible] खाद्य पदार्थों के सेवन से ये स्वस्थ व्यक्ति के [illegible] पहुँच जाते हैं । आमाशय में पाचक रस से इनके [illegible] आवरण गल जाता है तब ये स्वतंत्र होकर यकृत में [illegible] शिरा द्वारा हृदय में तथा वहाँ से फुफ्फुस में जाकर [illegible] हैं तथा वहाँ से पुन: आमाशय में होते हुए आन्त्र में [illegible] होते हैं, वहाँ इनकी वृद्धि होती है तथा वृद्धि को प्राप्त [illegible] परिपक्व हो जाते हैं । ये अत्यन्त चंचल व गतिशील [illegible] तथा प्राय: आन्त्र में कुण्डलित रूप में रहते हैं । कभी-[illegible] पुरीष के साथ गुदमार्ग से बाहर आते हैं तथा कभी-[illegible] आमाशय में पहुँचकर उत्क्लेश उत्पन्न करते हैं । ये [illegible] भीतर अण्डे देकर नवीन कृमि को जन्म देते हैं तथा [illegible] अण्डे मल के साथ निकलकर दूसरे शिशुओं में उपसर्ग [illegible] कारण बनते हैं । कभी-कभी ये कुण्डलित होकर [illegible] छिद्र को पूर्णतया बन्द कर देते हैं जिससे बद्धगुदोदर [illegible] आन्त्रावरोध (Acute Intestinal Obstruction) हो [illegible] है । कभी-कभी पित्तवाहिनी (Bile Duct) में [illegible] उत्पन्न करके कामला (Jaundice) रोग की उत्पत्ति [illegible] हैं ।

**लाक्षणिक चिन्ह (Clinical Features)-**

(1) उदरशूल (Abdominal Pain)

(2) उदावर्त (Abdominal Distension)

(3) वृद्धि अवरोध (Growth Failure)

(4) रक्ताल्पता (Anaemia)

(5) विटामिनक्षय जन्य लक्षण (Vitamins Defficiency Feature)

(6) अनिद्रता (Sleeplessness)

(7) चिड़चिड़ापन (Irritability)

(8) शीतपित्त (Urticaria)

(9) इस्नोफीलिया (Eosinophilia)

(10) अतिसार (Diarrhoea)

(11) क्षुधाह्रास (Loss of Appetite)

(12) आंत्रावरोध (Intestinal Obstruction)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(13) श्वसनक ज्वर (Ascaris Pneumonia)
(14) श्वास (Asthma)
(15) प्लीहाभिवृद्धि (Splenomegaly)
(16) यकृतवृद्धि (Hepatomegaly)
(17) श्वेताणु वृद्धि (Leucocytosis)
(18) दृष्टि अर्बुद (Retinoblastoma)

**(3) स्फीतकृमि (Tape Worms)** - यह लगभग 8-10 फीट लम्बा फीते के समान चौड़ा व चपटा होता है। जो अपने गोल शिर में स्थित बडिशों द्वारा आंत्र में चिपका रहता है।

इनके शरीर में छोटे-छोटे अनेक पर्व होते हैं। प्रत्येक पर्व में अण्डे होते हैं। परिपक्व (Mature) होने पर अन्तिम कुछ पर्व पुरीष द्वारा बाहर निकलते हैं जिनका आकार कद्दू के बीज के समान होता है। यह दो प्रकार का होता है - 1. Tenia Solium 2. Tenia Saginata

**लाक्षणिक चिन्ह (Clinical Features) -**

(1) उदरशूल (Abdominal Pain)
(2) उदरावर्त (Abdominal Distension)
(3) क्षुधानाश (Loss of Appetite)
(4) छर्दि (Vomiting)
(5) रक्ताल्पता (Anaemia)
(6) Convulsions पाया जाता है (Skill X-rays में Calcification का पाया जाना) मांसपेशियों में Calcified Nodules का स्पर्श किया जा सकता है।

**(4) तन्तु कृमि (Thread Worms)** - ये तन्तु या सूत्र के समान श्वेत वर्ण के व बहुत छोटे आकार के होते हैं। रात्रि में गुदमार्ग से बाहर निकलते हैं।

**लाक्षणिक चिन्ह (Clinical Features) -**

(1) गुद प्रदेश में खुजली (Itching in Ano-rectal Region)
(2) गुद प्रदेश में जलन (Burning Sensation in Ano)
(3) प्रवाहिका (Desentery)
(4) गुदभ्रंश (Prolapse of Rectum)
(5) शैय्यामूत्र (Enuresis)
(6) प्रतिश्याय (Rhinitis)

**चिकित्सा सिद्धान्त -**

कृमि चिकित्सा में निम्नलिखित उपक्रम किया जाता है -

(1) संशोधन - स्नेहन, स्वेदन एवं कृमिवर्धक आहार से कृमियों को प्रेरित करना तत्पश्चात् मृदुवमन, विरेचन से उन्हें बाहर निकलना।

(2) कृमि अपकर्षण -

(A) हस्तेनाभिगृह्य - जब कफज व पुरीषज कृमि अपने स्थान से च्युत हो गये हों तब हाथ से या उपकरण से पकड़कर अपकर्षण करना चाहिए।

(B) औषध द्वारा अपकर्षण - जब कफज व पुरीषज कृमि स्वस्थान (आमाशय व पक्वाशय) में स्थित हो तो औषध द्वारा विधिवत अपकर्षण करना चाहिए।

(3) प्रकृति विघात - कटु, तिक्त, कषाय, क्षार, उष्ण द्रव्यों के प्रयोग तथा अन्य कफघ्न कर्मों द्वारा कृमियों के प्राकृतिक वातावरण का विघटन कर देना चाहिए जिससे उपस्थित कृमियों के नष्ट होने के साथ पुनः अन्य कृमियों की उत्पत्ति न हो सके।

(4) निदान परिवर्जन - "संक्षेपतः क्रियायोगे निदान परिवर्जनम्" निदान परित्याग कृमि चिकित्सा का महत्वपूर्ण अंग है। इनके द्वारा स्वयं प्रकृति विघात होकर कृमियों की वृद्धि व क्रियाशीलता मन्द पड़ जाती है।

(5) औषध व्यवस्था - कृमि रोग की चिकित्सा में सामान्यतः कटु, तिक्त, कषाय, क्षार, उष्ण द्रव्यों का प्रयोग करना चाहिए। जैसे - दाडिम, भल्लातक, विडंग, कम्पिल्लक, पलाश बीज। संक्षेप में इसमें दीपन, पाचन, वायुसारी (Carminatives) एवं कफघ्न द्रव्यों का प्रयोग करना चाहिए।

औषध योगों में पलाशबीजादि चूर्ण, विडंगासव, विडंगारिष्ट, जन्मघूंटी क्वाथ, विडंगचूर्ण, नवायस लौह, कृमिमुद्गर रस, कृमिकुठार रस आदि मुख्य हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# कुपोषण समस्या और आयुर्वेद

वैद्य विजय कुलकर्णी

कुपोषण हमारे देश की एक जटिल समस्या है । विशेषत: ग्रामीण और वनवासी क्षेत्र में यह समस्या बड़े पैमाने पर दिखाई देती है । नवजात बालक तथा स्त्रियों में कुपोषण दिखाई देता है । महाराष्ट्र में कुछ साल पहले 'कोवली पानगल' में यह रिपोर्ट डॉ० अभय बंगजी ने प्रकाशित की । इस रिपोर्ट के मुताबिक अपने राज्य में हर साल एक लाख पचास हजार से अधिक बालमृत्यु होती है । उन्होंने महाराष्ट्र के ग्रामीण तथा वनवासी क्षेत्र का सर्वेक्षण करने के बाद यह निष्कर्ष निकाला ! उसके बाद समूचा शासकीय क्षेत्र जाग उठा । और यह समस्या हल करने के लिए किये जाने वाले उपाय योजनाओं की चर्चा शुरू हुयी । वैसे तो सरकार बहुत सालों से आयरन और कैल्शियम की गोलियाँ इन क्षेत्रों में बांटती रही है । किन्तु इसका अपेक्षित परिणाम दिखाई नहीं देता । आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से इस समस्या का विचार करना प्रस्तुत निबंध का विषय है ।

**कुपोषण - आयुर्वेदीय दृष्टिकोण :-**

कुपोषण समस्या में बालमृत्यु अधिक दिखाई देती है । वस्तुत: इसका मूल कारण उस बालक का पोषण उसके जन्म के बाद और जन्म से ठीक पहले भी ठीक तरह से नहीं हो पाता । इसलिये उसकी माता की ओर ध्यान देना चाहिए । एक तो ग्रामीण और वनवासी क्षेत्र की स्त्रियों में दूध की कमी होती है । उसमें गर्भिणी अवस्था में गर्भिणी परिचर्या पालन का कोई किरण दिखाई नहीं देती । माता प्रायः कुपोषित होती है । गर्भिणी परिचर्या का पालन न करने से उसके गर्भ का भी पोषण ठीक से नहीं हो पाता । इसलिये कुपोषण समस्या हल करने के लिये उस माता की पोषण की ओर ध्यान देना चाहिये । माता का पोषण अच्छा होगा तो मातृस्तन्य भी ठीक तरह से आयेगा और बालक का पोषण जन्म के बाद एक साल तक इस मातृस्तन्य के आधार पर हो सकता है ।

**कुपोषण हेतु :-**

आयुर्वेद की दृष्टि से किसी भी विकृति का हेतु लिंग और औषध इन तीन घटकों के आधार पर विचार किया जाता है । माताओं के कुपोषण के हेतु निम्न प्रकार से है ।

1) समुचित रूप में आहार न मिलना ।
2) धातुवर्धक आहार की कमी ।
3) कम उम्र में होने वाले विवाह ।
4) आरोग्य के बारे में अज्ञानता ।
5) आहार में स्नेह भाव की कमी ।
6) गर्भिणी परिचर्या का पालन न करना ।

**बालकों में कुपोषण के हेतु :**

1) मातृस्तन्य ठीक तरह से न मिलना बालकों के कुपोषण का सबसे बड़ा हेतु है ।
2) एक साल के आगे समूचे रूप में आहार न मिलना ।
3) कृमि जैसे विकारों की प्रबलता ।

इन हेतुओं को आयुर्वेद की दृष्टि से ध्यान में रखना चाहिये ।

**कुपोषण सम्प्राप्ति व लक्षण विचार :-**

कुपोषण में मुख्य रूप से कृशता (कार्श्य) का लक्षण प्रमुख है । इसमें वातदोष की वृद्धि तथा कफक्षय प्रमुख भूमिका निभाते हैं । रसधातु, रक्तधातु, मांसधातु मेदधातु और अस्थिधातु इन पांच धातुओं का क्षय दिखाई देता है ।

कार्श्य के साथ बालकों में ऊंचाई की कमी भी एक लक्षण होता है । निष्कर्ष रूप से कुपोषण में वात, कफ यह दोष और रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि इन धातुओं की भूमिका महत्वपूर्ण माननी चाहिये । इसके साथ अग्निमांद्य यह भी एक महत्वपूर्ण लक्षण दिखाई देता है । इसका मतलब इसमें पित्त दोष की भी विकृति होती है क्योंकि पचनक्रिया यह पित्त दोष का कार्य है ।

**औषधि :-**

कुपोषण के हेतु और लिंग तथा संप्राप्ति समझ लेने के पश्चात् सबसे महत्वपूर्ण घटक आता है औषधि उपक्रम का । इसमें कुछ आहारजन्य घटकों का भी समावेश हो सकता है ।

**1) आहार औषधि :-**

**कृशरा (गोघृत युक्त)** - चावल और मूँग की



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



दाल स बनी कृशरा (खिचड़ी) में गोघृत मिलाकर सेवन करने से वह अत्यंत पौष्टिक होती है, ऐसा बृहत् निघण्टु रत्नाकर ग्रंथ ने कहा है ।

बलवीर्यप्रदागुर्वीकफपित्तविवर्द्धिनी ।
दुर्जरापुष्टीविष्टं भ्रमलमूत्रकरीमता ।।

(बृहत् निघंटु रत्नाकर)

आजकल सरकार की ओर से स्कूलों में तथा कई ग्रामीण और वनवासी क्षेत्र के आंगनवाडी व्यवस्था में ऐसी खिचड़ी देने की व्यवस्था है । लेकिन इसमें गोघृत (गाय का घी) मिलाने की व्यवस्था भी होनी चाहिए । इससे कृशरा का पोषणमूल्य बढ़ेगा ।

**मात्रा** - बड़े व्यक्ति के लिये इसकी मात्रा करीब 150 से 200 ग्राम और 5 से 10 ग्राम गोघृत इसमें मिलाएं । छोटे बच्चों के लिए (2 से 6 वर्ष की आयु तक) - इसकी मात्रा 50 से 75 ग्राम इसमें 2 से 5 ग्राम गोघृत मिलाएं ।

खिचड़ी पकाने के लिये पीतल का बर्तन (कल्हई किया हुआ) इस्तेमाल करना चाहिये ।

अॅल्युमिनीयम के बर्तन का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए ।

**राजगिरा लड्डू :-**

राजगिरा यह अत्यंत पौष्टिक आहार द्रव्य है । बृहत् निघंटु रत्नाकर में राजगिरा के गुण निम्न प्रकार से बतलाये गये हैं ।

लघुराजगिरः प्रोक्तः कफकृत्सारकोगुरुः ।
निद्रालस्यकरः पथ्यः सारकश्चेतिशीतलः ।।
मलावष्टम्भकरणोरुचिदोतिगुरुःस्मृतः ।
पित्तनाशकरश्चैवऋषिभिः परिकीर्तितः ।।

राजगिरे के लड्डू में राजगिरा और गुड़ या शक्कर मिलाया जाता है । राजगिरा का लड्डू पचने में हलका होता है । इसकी कीमत भी अत्यंत कम होती है । आधुनिक मतानुसार राजगिरा में कैल्शियम, लोह, कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन्स भी होते हैं ।

**गेहू और दलिया मिलाकर बनाया हुआ सत्तू का आटा :-**

इसका भी उपयोग दूध और शक्कर मिलाकर करने से पौष्टिक रूप में होता है ।

**औषधि चिकित्सा :-**

बालकों में कृमिघ्न चिकित्सा करना सर्वप्रथम आवश्यक होता है । इसके लिये विडंग, कृमि कुठार आदि द्रव्यों का उपयोग किया जा सकता है ।

अग्निवर्धन के लिये हिंग्वाष्टक जैसे चूर्णों का भी उपयोग होता है ।

गर्भिणी स्त्री में शतावरी कल्प अत्यंत उपयुक्त औषधि है । शतावरी का स्तन्यवर्धक होने से विशेष उपयोग होता है । इसके अतिरिक्त आंवला, शतावरी, अश्वगंधा, यष्टिमधु (मूलेठी), बला ऐसे चूर्णों का तथा इससे सिद्ध किये हुये घृत का सेवन करने से भी लाभ होता है ।

**विहार चिकित्सा :-**

अभ्यंगयुक्त स्नान यह भी एक उपयुक्त विहार चिकित्सा है । अभ्यंग से आयु की पुष्टि होती है और त्वचा का दृढ़ीकरण होता है । इस प्रकार से और कई आयुर्वेदीय औषधियों का उपयोग कुपोषण कम करने के लिये उपलब्धता के अनुसार हम कर सकते हैं । आवश्यकता है, आयुर्वेदीय दृष्टिकोण अपनाने की । ऊपरी सिद्धान्तों के आधार पर हमने आयुर्वेद व्यासपीठ संस्था के माध्यम से वनवासी कल्याण आश्रम की सहायता से दो साल पहले करीब पचास हजार राजगिरा लड्डू वनवासी क्षेत्र में वितरित किये थे । लड्डू वितरण से पूर्व और वितरण के एक माह पश्चात् जिन बच्चों को यह लड्डू वितरित किये थे उनका देहभार निरीक्षण किया गया तो उसमें वृद्धि पायी गयी । इससे आयुर्वेदीय चिकित्सा के प्रति आत्मविश्वास बढ़ता गया और आगे और भी संशोधन इस बारे में वनवासी क्षेत्र में इस लेख में उल्लेखित आहार और औषधि चिकित्सा गर्भिणी माताओं और कुपोषित बालकों को कुछ सार्वजनिक संस्थाओं के माध्यम से देने का उपक्रम शास्त्रीय दृष्टिकोण से चल रहा है । इस बात की ओर सरकार का ध्यान हम आकर्षित करना चाहते हैं ।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# ग्रीष्म ऋतुचर्या

डॉ० प्रेम चन्द्र मंगल (एम.डी. शारीर क्रिया, पी.एच.डी. अध्येता)

ग्रीष्म ऋतु में स्वस्थ एवं प्रसन्न, ग्रीष्म ऋतुचर्या का पालन करके रहा जा सकता है ।

ग्रीष्म काल में सूर्य अपनी प्रखर किरणों से संसार का सार तत्व पीता रहता है । अत: इन दिनों में स्वादिष्ट, शीतल, मीठा और स्निग्ध खान-पान हितकर होता है । चीनी मिला सत्तू, जंगली जीवों का मांस, दूध, मक्खन और चावल का भोजन मनुष्य को गर्मी के प्रभाव से बचाता है । शराब का सेवन नहीं करना चाहिए, यदि पिये बिना न रहा जा सके तो काफी मात्रा में पानी मिलाकर पीना चाहिए । नमकीन खट्टे, कड़वे और गर्म पदार्थ तथा व्यायाम निषिद्ध है । गर्मी के दिन में सूर्योदय जल्दी होता है, इसलिए सुबह 4 बजे उठ जाना चाहिए । इसके बाद शौच से निबटकर हाथ मुंह धोकर, दन्तमंजन आदि से मुख शुद्धि करें ।

**ग्रीष्म काल का व्यायाम :-**

**घूमना एवं तैरना :-**

शरीर को गतिशील और स्वस्थ बनाये रखने के लिए व्यायाम की आवश्यकता होती है, किन्तु गर्मी के दिनों में व्यायाम का निषेद्य है, क्योंकि उष्णता और रुक्षता के कारण इन दिनों खून में अपेक्षित गर्मी पहले से ही विद्यमान रहती है । सुबह शाम का भ्रमण और तैरना ही इस मौसम की हल्की कसरत है ।

**प्रात: सायं का नियमित स्नान :-**

हमारा दश गर्म है, इसलिए स्नान सदा ही उपयोगी और स्वास्थ्य रक्षक है, किन्तु गर्मी के दिनों में इसकी उपयोगिता और भी अधिक बढ़ जाती है । गर्मी के कारण रक्तसंचार में उत्पन्न हुई तीव्र गति स्नान से दूर होती है । शरीर की त्वचा पर जमी हुई डेड सेल्स, पसीने की गन्दगी स्नान से दूर होती है, जिससे रोम छिद्रों के द्वार खुल जाते हैं एवं जल की शीतलता से तन-मन प्रफुल्लित हो जाता है ।

**सिर में तैल मालिश :-**

गर्मी के दिनों में मस्तिष्क की ताजगी एवं शीतलता के लिए ठण्डा तैल लगाना चाहिए, इसके लिए महाभृंगराज तैल का प्रयोग 4-5 मिनट तक मालिश करते हुए करना चाहिए, मट्ठा या दही से सिर धोना भी लाभदायक है ।

**ग्रीष्म ऋतु का खानपान :**

सर्दी के दिनों में जहाँ प्रकृति स्वयं ही भूख को अधिक कर देती है वहाँ, गर्मी के मौसम में स्वयं प्रकृति ही भूख को कम कर देती है ।

**आयुर्वेद शास्त्र में गर्मी के दिनों में निम्न प्रकार के खानपान का निर्देश किया गया है :-**

1. मधुर, स्निग्ध, शीतल, लघु एवं द्रव आहार का सेवन करना चाहिए ।
2. जलीयांश की पूर्ति के लिए द्रव या तरल पदार्थों का सेवन करना चाहिए ।
3. चावल, गेहूँ, जौ की रोटी, दलिया, अरहर और मूंग की दाल का प्रयोग करें ।
4. तोरई, परवल, ककड़ी, खीरा एवं हरी सब्जियों का सेवन करें ।
5. दूध, दही एवं मट्ठे का प्रयोग करें ।
6. दूध को गर्म करने के बजाय धारोष्ण दूध की लस्सी का प्रयोग करें ।
7. नारियल का पानी पिना हितकर है ।
8. आँवले का मुरब्बा तथा पेठा तथा शहतूत बहुत लाभकारी है ।

**कैरी (कच्चे आम) की पना :-**

कच्चे आम को आग में भूनकर उसका रस निचोड़ कर उसमें उचित चीनी या नमक तथा काली मिर्च डालकर सायंकाल भोजन के बाद पी लें, पने में इलायची तेजपत्र और पुदीना भी डालकर ले सकते हैं ।

**ग्रीष्म काल भोजन का क्रम :-**

1. प्रात: शौचादि नित्यकर्म से निपटकर धारोष्ण दूध की लस्सी का सेवन जरूर करें ।
2. गुलाब, कमल के पुष्प, खीरे, ककड़ी के बीज, खसखस, कासनी, सौंफ, कालीमिर्च, छोटी इलायची और चन्दन का बुरादा इन सबको सममात्रा में लें तथा

(शेष पृष्ठ सं० - 915 पर)

रीडर, शारीर-क्रिया विभाग, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेद कालेज, अस्थल बोहर, रोहतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# प्याज, एक गुणकारी औषध

डॉ० विनय शौनक, आयुर्वेदाचार्य, पी.एचडी.
रीडर, शरीर-क्रिया विभाग, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेद कॉलेज, अस्थल बोहर, रोहतक

प्याज, जिसके नाम से प्राय: शाकाहारी लोग नाक, भौंह तो सिकोड़ते ही हैं और कुछ लोगों को इसकी गंध भी अच्छी नहीं लगती । प्याज एक शाक ही नहीं बल्कि एक उपयोगी औषधि भी है । प्याज में ऐसे कीटाणुनाशक ऐसे तत्व मौजूद हैं जो विसूचिका (Cholera) एवं अंशुघात, लू-लगना (Sun Stroke) रोकने के लिए गर्मी के दिनों में रामबाण कार्य करते हैं । आधुनिक शोधों ने तो यह भी सिद्ध कर दिया है कि फूड पॉइजनिंग को रोकने में भी यह सफल है । प्राचीन ग्रंथों में इसका नाम 'पलांडू' भी मिलता है । यह पश्चिमी घाटों के क्षेत्र में अधिक पाया जाता है ।

प्याज में प्रोटीन 0.18%, कैल्शियम 11.6%, कार्बोहाइड्रेट 1.2%, फास्फोरस 0.4%, आयरन 0.7 मि.ग्रा. प्रति (100 ग्राम) विटामिन A 25 IU, B-40 IU तथा (11 मि.ग्रा.) (प्रति 100 मि.ग्रा.) पाया जाता है । इसमें पानी की मात्रा भी पर्याप्त होती है । इसमें एलाइड तथा सल्फाइड भी विद्यमान रहता है ।

प्याज बलवर्द्धक, कीटाणुनाशक, कफपित्त नाशक और वातनाशक है । पेट के विकारों और जलवायु परिवर्तन से होने वाले उपद्रवों को दूर करने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है । यदि कोई बेहोश हो गया हो तो प्याज फोड़कर सुंघाने से ही लाभ हो जाता है ।

**प्याज-के कुछ प्रयोग**

दन्तकृमि अर्थात दांत के कीड़े, प्याज के बीज पीसकर खंखोरने में भरें तथा मसूड़े पर मलें तत्काल लाभ होगा ।

नेत्र विकार पर, प्याज का रस आँखों में डालने से रतौंधी, लाली, खुजली और ढलका आदि ठीक हो जाते हैं । मोतियाबिन्द पर प्याज के रस में भीमसैनी कपूर मिलाकर सिलाई से लगाने पर यह कट जाता है । प्याज का रस और शहद मिलाकर लगाने से आँख की रोशनी बढ़ेगी और कमजोरी दूर हो जायेगी ।

मिर्गी के रोगी को यदि होश न आ रहा तो तो प्याज कूट कर सुंघा दें ।

मलेरिया रोग से बचाव के लिए प्याज के रस में कालीमिर्च मिलाकर दिन में दो बार खिलाने से मलेरिया रोग में बचाव हो जाता है ।

पागल कुत्ते के विष से बचाव के लिए प्याज कूटकर शहद के साथ मिला लेप कर देने से कुत्ते का विष भी दूर हो जाता है ।

पेशाब की गर्मी में प्याज को बारीक काटकर एक पाव पानी में उबालें जब पानी आधा रह जाये तो ठंडाकर उसे दिन में दो-तीन बार पिलायें । आराम मिलेगा ।

सिर के गंज में प्याज काटकर उसका रस लगायें दिन में तीन माह तक करने से बाल उग आते हैं ।

---

शेषांश पृष्ठ संख्या 914 का)

15 ग्राम की मात्रा बनाकर खूब बारीक पीसकर तथा उचित चीनी एवं जल डालकर कपड़े से छानकर पान करें ।

11 बजे से 12 बजे तक दोपहर का भोजन करें जिसमें थोड़ा चावल और दही का रायता जरूर लें ।

2 से 3 बजे सत्तू या हल्का नाश्ता लें ।

4 से 5 बजे दही की लस्सी, ठण्डाई या शर्बत का पान करें।

रात्रि 8 बजे गेहूँ, जौ की रोटी, हरी सब्जी, आम का पन्ना, प्याज, पुदीना की चटनी का सेवन करें ।

सोते समय गर्म करके ठण्डा किये गये दूध का सेवन करें ।

**ग्रीष्म का पहनावा :-**

गर्मी के दिनों में नंगे बदन रहना अच्छा लगता है, किन्तु नंगे बदन रहना हानिप्रद है क्योंकि गर्मी की वजह से, लू के थपेड़ों से, शरीर की त्वचा झुलस जाती है एवं काली पड़ जाती है । अत: गर्मी के मौसम में हल्के श्वेत वस्त्र पहनने चाहिए क्योंकि श्वेत रंग सूर्य की किरणों को अपवर्तित करता है । घर से बाहर निकलते समय सिर के ऊपर गमछा अवश्य लपेटना चाहिए जिससे लू से पूरा बचाव हो सकें ।

**ठण्डा मकान :-**

गर्मी के दिनों में कमरे के अन्दर धूप नहीं आने देनी चाहिए, दरवाजे, खिड़कियाँ तथा रोशनदान को बन्द रखकर भीतर की ओर हरे या पीले रंग के पर्दे लटका देने चाहिए जिससे सूर्य की प्रखर किरणें अन्दर न जा सकें । पक्के मकानों की फर्श दिन में दो से तीन बार ठण्डे पानी से धोना चाहिए और थोड़ी देर के लिए नाली को बन्द करके पानी को फर्श में ही रोकना चाहिए, इससे कमरे में ठण्डक रहती है । दरवाजे एवं खिड़कियों पर खस की टट्टियाँ लगाकर पानी छिड़कते रहने से ठण्डक और मीठी खुशबू भी बनी रहती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# बलकारक खजूर

डॉ० विजय कुमार

कुल नाम :- नारिकेल ।
लैटिन नाम :- फिनिक्स सिल्वेस्ट्रिस ।
संस्कृत नाम :- खर्जूर ।
हिन्दी नाम :- खजूर ।
फारसी नाम :- खुर्मा ।
अरबी नाम :- रूतब ।

**परिचय :-**

खजूर का वृक्ष 40 से 50 फुट ऊँचा होता है । काण्ड लगभग 3 फुट मोटा होता है । पत्र 10 से 15 फुट लम्बे होते हैं ।

**पुष्प :-**

पुष्प एकलिंगी अलग-अलग वृक्षों पर होते हैं । पुरूष पुष्प श्वेत और स्त्री पुष्प हरिताभ होते हैं । फल के भीतर एक कठिन बीज होता है । ग्रीष्म ऋतु में पुष्प लगते हैं और उसके बाद फल लगते हैं । इसके वृक्ष से एक प्रकार का रस निकलता है उसे खजूरी कहते हैं । इस रस को कुछ महीने तक रखने से यह मद्य (शराब) में परिवर्तित हो जाता है ।

इसी रस द्वारा गुड़ का भी निर्माण किया जाता है ।

**जाति :-**

यह दो प्रकार का होता है ।

1. खजूर ।
2. पिण्डखजूर ।

पिण्ड खजूर का फल बड़ा, मांसल होता है । इसी का फल सूखने पर छुहारा कहलाता है ।

**उत्पत्ति स्थान :-**

उत्तरी अफ्रीका, मिस्र, सीरिया और अरब ।

**गुण धर्म :-**

खजूर का फल मधुर, पौष्टिक, कामोद्दीपक एवं वीर्यवर्धक, पचने में भारी होता है । यह वातयुक्त पित्त के विकारों में लाभकारी है ।

**रासायनिक संगठन :-**

खजूर के फल में प्रोटीन, वसा, कार्ब्रोहाइड्रेट खनिज, कैलशियम, फास्फोरस, विटामिन-बी और सी पर्याप्त मात्रा में होती है । पिण्डखजूर में इसकी अधिक पोषक तत्व होते हैं ।

## खजूर के गुणकारी औषधीय उपयोग

**दुबलेपन को दूर करने वाला चमत्कारी खजूरी हलवे**

मैंने इस हलवे का सर्दियों में कई कार्यक्रम (कुछ व्यक्तियों को सेवन करवाया जिसके सेवन से सभी का वजन बढ़ गया । सच में ही यह सफल योग है इसके अतिरिक्त यह पौरुष शक्ति वर्द्धक भी है ।

**मात्रा :-**

| | |
|---|---|
| खजूर गुठली निकाली हुई | - 500 ग्राम |
| चिल्गोजा गिरी | - 100 ग्राम |
| बादाम गिरी | - 100 ग्राम |
| पिस्ता | - 100 ग्राम |
| अखरोट गिरी | - 100 ग्राम |
| निशास्ता गन्दुम | - 500 ग्राम |
| देशी घी | - 500 ग्राम |
| भुने चने का आटा | - 500 ग्राम |
| असगन्ध नागौरी (चूर्ण) | - 100 ग्राम |
| भैंस का दूध | - 6 लिटर |
| खांड | - 1 किलो |

**निर्माण विधि :-**

- सबसे पहले एक बड़ा बर्तन लेकर उसमें 6 कि दूध डालकर असगन्ध नागौरी चूर्ण मिला दें और में खजूर डालकर धीमी आग पर उस समय पकायें जब तक खजूर फूलकर एकदम नर्म जाये ।
- खजूर के नर्म हो जाने पर उसे दूध से निकाल कूण्डे में या मिक्सी में डालकर घोंट लें ।
- खजूरों की अच्छी मरहम (Paste) बन जाने पर उसी दूध में इसे मिलाकर धीमी, आग पर दूध खोया बन जाने तक पकायें ।
- इसके बाद दूसरे बर्तन में 500 ग्राम देशी घी को करके उसमें निशास्ता गन्दुम को लाल हो जाने भून लें अब इस बर्तन को आग से नीचे उतार कर


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



का आटा डालकर इसे अच्छी तरह मिला दें । अच्छी तरह मिल जाने पर इसे पहले बर्तन जिसमें खजूरों की मरहम तैयार की थी उसमें इसे डाल कर लाल हो जाने तक इसे खूब भूनें ।

अब इसमें ½ किलो खांड डालकर अच्छी तरह मिला लें। खांड के मिल जाने पर घी अलग होने लगता है तब इसे आग से नीचे उतार कर इसमें चिल्गोजा की गिरी, बादाम, पिस्ता एवं अखरोट की गिरी को मिला लें । अब यह तैयार है बलकारक खजूरी हलवा ।

वन विधि :-

प्रात: - सायं 50-50 ग्राम हलवा एक गिलास दूध के साथ सेवन करें ।

हेज :-

खट्टी वस्तुएं । खट्टी एवं मसालेदार वस्तुओं का सेवन न करें ।

म :-

इस हलवे के सेवन द्वारा पाचन क्रिया में सुधार होता है । भूख खूब लगती है और जो कुछ भी खाया जाता है वह हजम होकर रस रक्त के रूप में बदलने लगता है । चेहरे पर लाली आ जाती है वजन की वृद्धि होती है ।

जूर के अन्य लाभ

**2. जुकाम :-** जुकाम होने पर खजूर के दो फलों लाल रंग की गाय के दूध में उबाल कर सेवन करने रोग का शीघ्र निवारण होता है ।

**3. खून की कमी :-** शरीर में खून की कमी होने सफेद गाय के दूध में दो खजूरों को उबाल कर । म्च गाय का घी मिलाकर नित्य सेवन करने से खून की मी दूर होती है ।

**4. भूख न लगना :-** चार फल खजूर के, अदरक ड़ा काला नमक एवं काली मिर्च डालकर बनायी गयी जूर की चटनी को भोजन के साथ खाने से भूख खुलकर गती है । भोजन ठीक से हजम होता है, गैस की तकलीफ दूर होती है ।

**5. कब्ज :-** दो खजूरों को रात को कांच के बर्तन पानी में भिगों दें । प्रात: इनकी गुठलियां निकाल कर फेंक दें तथा खजूरों को खाकर ऊपर से वही पानी पीने से कब्ज दूर होती है ।

**6. नकसीर :-** नकसीर के रोगियों को शहद के साथ खजूर का सेवन करने पर लाभ प्राप्त होता है ।

**7. खांसी :-** सूखे हुय खजूर (छुहारे) को गाय के देशी घी में भूनकर दिन में दो-बार सेवन करने से खांसी दूर होती है । **परहेज :-** ठण्डी वस्तुएं ।

**8. जलन :-** सीने में जलन होने पर दो खजूर का रात को मिट्टी या कांच के बर्तन में पानी में भिगों दें । सुबह खजूरों को इसी पानी में मसल कर गुठलियों को निकाल दें और इस पानी को पीने से जलन में लाभ होता है । **परहेज :-** मिर्च मसालेदार पदार्थ ।

**9. बिस्तर पर मूत्र :-** खजूर खाने से मूत्राशय की कमजोरी दूर होती है । जिन बच्चों का मूत्राशय कमजोर हो जाता है वे बच्चे रात में सोते समय बिस्तर पर मूत्र कर देते हैं । इसके लिये एक सूखी खजूर को दूध में डालकर उबालना चाहिए । खजूर वाला दूध पीने लायक गर्म रहने पर उन बच्चों को पिलाने से कुछ ही दिन में लाभ प्राप्त होता है ।

**10. मासिक धर्म का कम आना एवं कमर दर्द :-** खजूर खाने से मासिक धर्म खुलकर आता है एवं कमर दर्द में भी राहत मिलती है ।

**11. हड्डियों का कमजोर होना एवं दांतों का गलना :-** खजूर के सेवन एवं खजूर को दूध में उबाल कर पीने से कैल्शियम की कमी से होने वाले रोग **जैसे :-** दांतों की कमजोरी, हड्डियों का गलना रुक जाता है ।

**12. रक्तचाप :-** कम रक्तचाप वाले रोगी तीन-चार खजूर गर्म पानी में धोकर गुठली निकाल दें । इन खजूरों को गाय (लाल रंग वाली) के गर्म दूध के साथ उबाल लें । उबले हुए दूध को सुबह-शाम पीयें । कुछ ही दिनों में कम रक्तचाप से छुटकारा मिल जाएगा ।

**13. कामइच्छा की कमी :-** खजूर के फल को भैंस या ऊँटनी के दूध में उबाल कर ठण्डा होने पर पीने से कामइच्छा की वृद्धि होती है । परहेज :- खटाई ।

**(शेष पृष्ठ संख्या 919 पर)**



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# ग्रीष्म कालीन सेवनीय आहार-विहार

कविराज डा० दिवाकर ठाकुर, जी.ए.एम.एस. औनर्स, डी.एस.सी.ए. (आयुर्वेद वृहस्पति)

उचित आहार-विहार की जानकारी न होने से अनुचित आहार-विहार ही नानाविध बीमारियों का कारण बनता है । स्वास्थ्य रक्षा से सम्बन्धित जितनी उपयोगी जानकारी आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्र में है उतनी जानकारी अन्य चिकित्सा पद्धति में नहीं है । इसलिए अपने-अपने शरीर व स्वास्थ्य की रक्षा करने के लिए आयुर्वेदोक्त सिद्धान्त का पालन कर पूर्ण स्वस्थ रहा जा सकता है ।

शिशिर, बसन्त और ग्रीष्म ऋतु ये तीन आदान काल में आते हैं जो वर्ष का पहला भाग है, वर्षा, शरद और हेमन्त ये तीन ऋतु विसर्ग काल का है जो वर्ष का दूसरा विभाग है । आदान का प्रारंभ शिशिर और अन्त ग्रीष्म ऋतु से होता है । विसर्ग काल के प्रारम्भ और आदान काल के अन्त में प्राणियों में शारीरिक दुर्बलता आ जाती है । विसर्ग काल के अन्त और आदान काल की शुरूआत में प्राणियों में बल का संचार होता है । आदान काल को आग्नेय काल भी कहा गया है ।

ग्रीष्म ऋतु के समय पृथ्वी अपनी धुरी पर चक्कर लगाती हुई सूर्य के निकट आ जाती है जिससे सूर्य की किरणें तीक्ष्ण और गरम हो जाती हैं । इसलिए भीषण गरमी ही नहीं बल्कि तेज गरम हवा भी चलने लगती है । सभी दिशायें और पृथ्वी जलती-तपती मालूम पड़ती हैं । वायु लू के रूप में तेज लपटें की तरह चलती है जो अत्यन्त कष्टकारी होती है । गरमी के प्रभाव से धूप-पसीना से लोग बेचैन हो जाते हैं ।

इधर कुछ वर्षों से हमारे यहाँ शीत का समय कम और गरमी मौसम का प्रभाव बढ़ गया है । इस स्थिति में हमारा शरीर व स्वास्थ्य बुरी तरह प्रभावित होता है ।

सेवनीय आहार-विहार से शरीर सशक्त, पुष्ट और चुस्त-दुरुस्त बना रहता है । प्राय: लोग जानते हैं कि इस समय पाचकाग्नि मन्द पड़ जाती है इसलिए इस मौसम में देर से पचने वाले भारी पदार्थ, तेज मिर्च मसालेदार, खट्टा, खारा और तेल का तला हुआ व्यंजन, फास्ट फूड का सेवन शरीर और स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव डालता है । कटु, तिक्त, कषाय, अम्ल रस वाले पदार्थ, वेसन के चने, दुर्गन्ध युक्त, हर जगह का पानी, शहद, खट्टा दही आदि का सेवन ऋतु में नुकसान देह है । रात में दही खाना, अंडा, माँस, उड़द, इमली, अमचूर, सिरका का व्यवहार है । फ्रिज में रखा पानी तत्काल निकालकर पीना दुष्प्रभावित होता है । मिट्टी के बर्तन का पानी पीना उत्तम रहता है । बाहर धूप और गरमी से शरीर गरम हो है, बाहर से आए तत्काल पानी न पीवें । सुबह का हुआ खजूर या ताड़ का रस (नीरा) ग्रीष्म ऋतु के अत्यन्त लाभदायक होता है । हालांकि बासी भात इमली हानिकारक है । फिर भी इस ऋतु में फायदेमन्द चने का सत्तू, जौ का सत्तू, मट्ठा, पोदीना, खस का आदि गरमी मौसम में परम उपयोगी सिद्ध है । अगर धूप बाहर निकलने की नौबत आ जाय तो पर्याप्त मात्रा में पीकर और साथ में सफेद प्याज रखकर रास्ता चाहिए ।

यद्यपि दिन में सोना हानिकारक है तो भी ऋतु में दिन में सोना निषेध नहीं है क्योंकि रात छोटी के कारण गहरी नींद नहीं आती है, इसलिए दिन में उचित जान पड़ता है । बालक वृद्ध, रोगी और रात में करने वाले दिन में सोवें । इस ऋतु में अधिक अधिक परिश्रम, तेज धूप में काम करना, उष्ण वातावरण चहल कदमी, प्यास, मल-मूत्र के वेग को रोकना स्वास्थ्य के लिए हानिकर है जो अपथ्य विहार है ।

इस ऋतु में ऐसे पदार्थों का सेवन करें जो काल में गुण-धर्म से विपरीत हो ताकि ऋतु के प्रभाव संतुलित व सामान्य कर सके । जैसे गर्म हवा से बचने लिए ठंडी हवा का सेवन ।

ग्रीष्म ऋतु में सूर्योदय से पहले या ब्राह्म मुहूर्त बिछावन त्याग कर नित्य क्रिया से निवृत होकर दो- किलोमीटर तक भ्रमण अत्यन्त जरूरी है । सुबह भ्रमण करने में कोई बाधा हो तो घर पर ही योगासन का अभ्यास व व्यायाम जरूर करें । यदि अनिवार्य कारण वश रात तक जागना पड़े तो घण्टे-घण्टे पर एक-एक गिलास पानी पीते रहें, इससे वात व पित्त का प्रकोप नहीं होता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## ग्रीष्म कालीन सेवनीय आहार-विहार

आधुनिक विलासी जमाने में लोग रात देर तक जागे रहते हैं और सुबह देर तक सोये रहते हैं। इसी भारी दोष का कारण है रात खा पीकर टी.वी. के सामने बैठ जाते हैं, मन पसन्द सीरियल देखने में यह भूल जाते हैं कि कितना वक्त बीत गया है, अब सो जाना चाहिए।

सुपुम पानी में थोड़ा नमक मिलाकर इतना पी लें कि गले तक भर जाय। कुंजर क्रिया से पेट में पड़ा पित्त निकल जाता है, पेट हल्का और साफ हो जाता है, पेट में बढ़ी हुई गर्मी और अम्लता की स्थिति सामान्य हो जाती है और दस्त भी खुलासा हो जाता है।

रात को सोते समय एक ग्लास सुपुम दूध चूंट-चूंट कर पीवें।

गरमी के दिनों में बड़ी हरें का महीन चूर्ण और गुड़ सम मात्रा में एक चम्मच खाली पेट में लें। इस तरह हितकारी और सेवन योग्य आहार पालन और अपथ्य आहार-विहार का परित्याग करना ही आयुर्वेद शास्त्र और चिकित्सकों की नेक सलाह है।

---

(पृष्ठ संख्या 917 का शेषांश)

### खजूर की गुठली के औषधीय प्रयोग

14. **सिरदर्द :-** पुराना सिरदर्द होने पर खजूर की गुठली को पानी में घिसकर मस्तक और कान पर लेप करने से सिरदर्द रोग से छुटकारा प्राप्त होता है।

15. **प्रदर :-** रक्त एवं श्वेत प्रदर स्त्रियों के लिए भयंकर रोग होता है, जो स्त्रियों के यौवन एवं शरीर को नष्ट कर देता है। इसके निवारण के लिए सूखे खजूरों की गुठलियों को कूटकर चूर्ण बना लें और घी में तल लें। इस तले हुए 20 ग्राम चूर्ण में 20 ग्राम शीशम के पत्तों का चूर्ण मिलाकर प्रात:-शाम 3-3 ग्राम पानी के साथ सेवन करने से प्रदर रोग से मुक्ति होती है।

16. **खाज-खुजली :-** सूखे हुई खजूरों की गुठलियों को जला कर राख बना लें और इस राख में कपूर और देशी घी (गाय का) मिलाकर लगाने से खाज मिट जाती है। **परहेज :-** नमक का सेवन कम करें।

17. **सिर में जूएं :-** खजूर की गुठली को पानी में घिसकर नीम के पत्तों का रस 2-2 चम्मच मिला कर सिर पर लगाने से सिर की जूं मर जाती हैं।

18. **आँखों के रोग :-** खजूर की गुठली के छिलके का कपड़छन कर चूर्ण को सुरमे की तरह आंखों में डालने से आंखों की रोशनी तेज होती है।

19. **दाढ़ी और मूँछ के बाल कम या न आने पर :-** अधिक आयु होने पर भी कई बार पुरुषों की दाढ़ी या मूँछ के बाल बहुत कम होते हैं या नहीं आते जिसके निवारण के लिए सूखे हुए खजूरों की गुठलियों को पानी में घिसकर गाढ़े लेप या इसके चूर्ण में एरण्ड का तैल मिला कर चेहरे पर मालिश करने से जिस स्थान पर बाल नहीं उगते वहाँ बाल उगने लग जाते हैं।

मैंने इस लेप का कई रोगियों पर प्रयोग किया और सफलता प्राप्त की। मुझे यह योग खजूर की गुठली द्वारा इन्द्रलुप्त और दाढ़ी के बालों का कम या न उगने का नुसखा और इस रोग के लिए मंत्र हिमाचल मण्डी में एक योगी द्वारा प्राप्त हुआ। जनता के लाभ के लिए गुप्त प्रयोग लिख रहा हूँ ताकि वह इस रोग से मुक्ति पा सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# A STUDY ON MAKSHIKA

(With Special reference to pharmaceutical, analytical and experimental study)

* Sridurga **K R C Reddy *** C.B. Jha

NTRODUCTION :

Makshika is one among the Maha Rasa having high therapeutic and alchemical importance. The details regarding shodhana. marana. satvapatana, pharmacological and therapeutic properties of Makshika are described in Rasa literatures. Makshika is used to cure different diseases when used with various anupanas. Abhraka satva is the only material capable of *Paksha chhedana* (cutting the wings/make it stable on fire) of Parada. But Abhraka satva alone is not consumed by Parada. Hence. dwandva of Abhraka satva and Makshika satva is made and given. Thus. Makshika has great importance in alchemy.

Survarna and Rajata are the two varieties of Makshika. Suvarna makshika variety contains Tamra, Loha and Gandhaka and considered best for both the purposes. It is a compound and it is converted into certain other compound through marana which is suitable for internal use. It is necessary to standardize and evaluate the process reaction as well as the stepwise chemical changes during the pharmaceutical processes.

In this present study, efforts have been made to standardize the pharamaceutical processes adopted for Makshika, evaluate the physicochemical nature of the compound and also to evaluate their safety and efficacy.

The aim of the study is :

1. To standardize the raw material and various pharmaceutical procedures adopted for Makshika.
2. Metallographic and Analytical study of the raw material, intermediary and final products.
3. Safety and efficacy evaluation of the bhasmas of Makshika and Makshika satva.

HARMACEUTICAL STUDY

hodhana :

Makshika is crushed and ground into fine owder. It is roasted in an iron pan (750 c) by the ddition of lemon juice and continuous stirring with he help of iron spatula. Roasting is done till the umes stop completely. Then it is convered with a lid and subjected to intense heat for 3 hours. (Rasa Tarangini 21/8-9).

Marana :

Shodita Makshika is mixed with equal quantity of Shuddha Gandhaka, triturated with lemon juice pelletised, put in a sharava samputa and subjected to Varaha puta. The process is repeated for 20 times to obtain Makshika bhasma From the 2nd puta ¼th quantity of Gandhaka is added. (Rasa Ratna Samuchchhaya 2/84)

Satvapatana :

Shuddha Makshika is mixed with ¼th quantity of Tankana, triturated with lemon juice made into balls (15 mm diameter), kept in a musha and subjected to intense heat in a Kosthi (1200-1250 c). Copper is obtained as a satva. (Rasa Tarangini 21/46).

ANALYTICAL STUDY

1. Even trace amount of metallic praticles can be detected by the Metallographic technique.
2. By the use of quantitative metallographic technique, relative amounts of particles left unreacted can be estimated quantitatively.
3. Fresh Makshika has got no free metal. But after shodhana, large amount of free metal was detected.
4. After 1st puta, the process of oxidation begins converting original metal into bhasma form.
5. In the 1st puta 62.98% of free metal was observed whereas in the last puta it was 6.9%.
6. Quantitative analysis by Atomic Absorption Spectrophotometry study showed copper and iron as the major constituents present in the bhasma.
7. X-ray diffraction study of Makshika bhasma showed iron sulphide as the major phase whereas iron oxide and copper oxide were present as secondary phases.
8. Qualitative analysis by Namburi phased spot test showed the presence of copper and iron in Makshika bhasma.
9. Elements like Ag, Bi, Mg, Al, Zn, Sn, K were found in trace amounts in Makshika sample.

* Senior Resident ** Reader & Head *** Professor, Department of Rasa Shastra, IMS, BHU, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Chemical analysis of Makshika before and after Shodhana :

Table Showing the chemical analysis of Makshika before and after Shodhana :

| ELEMENT | MAKSHIKA (Before Shodhana) | Makshika (After Shodhana) |
|---|---|---|
| Fe | 44.3% | 40.0% |
| Cu | 27.97% | 19.07% |
| S | 11.2% | 5.48% |
| $Al_2O_3$ | 1.68% | 5.7% |
| $Si O_2$ | 14.4% | 7.7% |

10. During Shodhana, sulphur gets oxidised. Copper and iron are converted into respective oxides and citrates. (CuO, $Cu_2O$, FeO, $Fe_2O_3$)
11. Chemical analysis of Makshika Satva.

Table Showing the chemical analysis of Makshika before and after Shodhana :

| ELEMENT | SATVA | SLAG |
|---|---|---|
| Fe | 1.3% | 64.6% |
| Cu | 96.02% | 10.2% |
| S | 1.9% | 1.85% |
| $Al_2O_3$ | 0.2% | 8.2% |
| $Si O_2$ | 0.4% | 15.2% |

12. Quantitative analysis of Makshika satva showed the presence of Sn, Zn, Pb & S in trace amounts.

SAFETY AND EFFICACY EVALUATION :

1. Bhasmas of Makshika and Makshika satva have not shown any untoward effects on experimental animals in acute, subacute and chronic toxicity study.
2. They have no damaging effects on vital organs of body as revealed by blood profile of experimental rabbits.
3. These bhasmas were found safe for internal use even in higher dose (upto 8 times therapeutic dose).
4. Bhasmas of Makshika and Makshika satva have potent haematenic effects.
5. Makshika bhasma has significant hypnotic activity in albino rats.
6. Makshika bhasma has significantly increased the haemoglobin levels and significantly decreased the serum cholesterol levels when compared with the control group.
7. No significant toxic effects were observed with Makshika bhasma in histopathological study on liver and kidney in therapeutic dose.

CONCLUSION :

Makshika is an important material of Rasa Shastra having high therapeutic values. Varaha puta system of heating is found most suitable for the preparation of Makshika bhasma. Addition of Gandhaka in each puta is a essential to prepare Makshika bhasma. Makshika bhasma is found to be safe for internal use and has shown significant hypnotic and haemetenic effects in experimental animals.

References :

1. Studies on Makshika; Upadhyaya O N etal 1979.
2. Metallographic studies on metallic bhasmas, Babhesh Das etal 1990.
3. A study on Satvapatana (Abhraka and Makshika) Jha C B etal 1990.
4. Study of bhasmas of Makshika and Makshika satva, Choudhary A K etal 1997.
5. Comparative study of Makshika bhasma and the bhasma prepared with combination of tamra and Loha, Sridurga etal 2005.

बैद्यनाथ
अश्वगंधारिष्ट
मूर्च्छा, भय, घबराहट, अनिद्रा,
मंदाग्नि आदि में लाभकारी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# A Review of Quality Evaluation of Herbal Formulation

* Saini V **Kinger H.K. *** V.B. Gupta

## INTRODUCTION :

Medicines prepared by our Acharyas were more efficacious but in present scenario many manufacturers are adding adulterants in herbal formulations which render them less effective. Present review highlights need of quality control and World Health Organization guidelines for herbal. WHO has taken necessary steps to control the quality of herbal drugs and to ensure the higher safety margins of the herbal drugs and to ensure the highter safety margins of the herbal drugs.

Further WHO has made guidelines for general limits of herbal drugs which includes harmful organic matters, innocuous foreign matters, pesticide residues, arsenic and heavy metals, microbial contaminations, aflatoxin and radioactive contaminations[1].

The herbal formulation contains only plant materials singly or in combination of several plants. These formulations also contain several impurities like metals, minerals[2]. The quality of the finished formulation depends on the following -

1. Quality of inputs viz. herbal materials and processed metals/minerals.
2. Uniform method of processing.
3. Established method of manufacturing.
4. Established operating procedures.
5. Meeting in house standards of all specifications.
6. Standard testing procedures.

## HERBALS MATERIALS PROBLEMS:

The problems encountered procurement of authentic plant materials are mainly due to the following :

a) Collection from wildly growing plants from forests and waste lands.

b) Suppliers of plant materials are generally traders who have limited knowledge of medicinal plants collected from various regions of the country.

c) Non-homogeneity of the plant materials due to the collection from wild sources and even different geographical locations and then pooled together.

d) Adulterated or substituted plant materials due to collection by persons not fully acquainted with the differences in various species of the related plant. In order to ensure consistency in the plant materials to be used for commercial production of herbal products, it is advisable to follow strictly WHO guidelines for quality control of herbal material. These guidelines give a detailed procedure for various steps to be taken to ensure the proper quality[3]. These are given in the table

| | |
|---|---|
| Sampling | |
| Foreign matter | |
| Macroscopic & Microscopic analysis | Ash content |
| TLC analysis | |
| Extractable matter | |
| Arsenic & heavy metals content | Pesticide residue |
| Microbial load and absence of pathogens | Radioactive contaminants |
| Specific tests for certain plant materials | |
| Volatile content | Bitter value |
| Haemolytic activity | Tannin content |
| Foaming index | |

## QUALITY CONTROL PARAMETERS OF HERBAL MATERIALS

The WHO Guidelines for quality assessment of plant material is not followed by most of the 8500 licensed manufactures of Ayurvedic and herbal medicines since most of these are small scale manufactures with limited resources and knowledge[4]. However few medium and large scale manufactures undertake some quality control testing of herbal materials[2]. In most cases the Ayurvedic doctor attached to the manufacturing company approves the materials based on the organoleptic characteristic and therefore knowledge of plants is highly inadequate and steps must be taken by manufacturing units to undertake effective quality control checks on the plant materials in order to manufacturing herbal products with consistent clinical efficacy[5].

## PHARMACOPOEIAL STANDARDS :

The pharmacopoeial standards in Ayurvedic pharmacopeias of India are not adequate enough to ensure the quality of plant materials since the materials received in the manufacturing premises are not in a condition that effective microscopic examination can be done[1]. Therefore, chemical methods, instrumental methods and TLC



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



analysis would determine the proper quality of plant materials. for this, in-house specification for the plant materials should be developed to enable the quality chemist to verify and approved the materials[6]. The in-house specification should cover the following[7] :

a. Moisture content.
b. Foreign matter.
c. Macroscopic & Microscopic characters.
d. Total Ash content.
e. Acid insoluble ash-content.
f. Water soluble extractives.
g. Alcohol soluble extractives.
h. TLC fingerprinting.
i. Chemical assay, if any.
j. Microbial test and their limits.

Conclusion :

In order to ensure that the manufactured product is of consistent quality, it is essential that the herbal raw materials be of prescribed quality. Further, the processing of the plant material in to extracts and all other manufacturing operation must confirm to a standard operating procedure. Another major parameter to be followed is to undertake stability study of product.

References :


1. A.K.De, A.K. Sen and D Modak, Environmental International, 4, 101-105 (1980).
2. B L Valle and D D Ulmer, Bio-chemical effect of mercury, cadmium and lead. Ann., Rev Biochem., 41,91(1972).
3. D D Biggins and R M Harison, Env. Sci. Tech 14, 336 (1982).
4. Ei-Ichiro, O Chiai, Bioinorganic Chemistry, Ally and Bacon Inc., Boston, Mass (1977).
5. R E Lee and D J Lehmden, Trace Metal Pollution in the Environment, J Air Pollution Contro Assoc., 23, 853 (1973).
6. R R Chaudhury, Herbal Medicine for Human Health, 55-75 (1991).
7. Chopra, S.L. and Kanwar, J.S. Analytical Agricultural Chemistry Kalyani Publishers, New Delhi 488 (1991).



स्त्रियों के लिए कांतिवर्द्धक एवं बलवर्द्धक टॉनिक

बैद्यनाथ

अशोकारिष्ट

मासिक-धर्म की अनियमितता, कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, भूख न लगना तथा मासिक-धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# MADANAPHALA - A COMPLETE DRUG FOR PANCHAKARMA

* Dr . Prakash L. Hegde, M.D. (Ay.)
** Prof. Maheshchandra Sharma Ph.D. (Ay.)

There are more that 25 drugs used for 'amanadi Panchakarma, among these some are randed as the best for that particular action like Madana for Vamana and Trivrit for Virechana etc. lo doubt these drugs mentioned in the classics re of great importance and very useful. But in ecent days the availability of drugs is a big concern ue to improper collection and usage, resulting in xtinction of many species each day. This is the igh time to take necessary actions towards onservation of medicinal plants or else it is very ertain that many medicinal species will be out of each. At this juncture it is very necessary to look r a single drug, which has multifarious actions, hich in turn serve the purpose of conservation. adanaphala is one such drug, which has various tions apart from Vamana. The references about inclusion in Asthapanopaga and Anuvasanopaga anas of Charaka indicating its usage in Basthi nd its pittasaraka action leading to Virechana arma. Understanding these multifaceted harmacological actions of Madana is indeed useful its effective utilization in clinical practice.

RUG REVIEW :

| | | |
|---|---|---|
| otanical Name | : | Randia dumetorum L.A.M. |
| mily | : | Rubiaceae |
| nglish Name | : | Emetic nut tree |
| ana | : | Vamaka, Phalini, Anuvasanopaga, Asthapanopaga (Charaka) Argwadhadi, Urdhvabhagahara (Sushrutha). |
| operties : | | |
| sa | : | Katu, Tikta, Madhura and Kashaya |
| na | : | laghu, Ruksha |
| aka | : | Katu |
| ya | : | Ushna |
| abhava | : | Vamaka |

*Dosha Karma :* Kaphahara, Pittanissaraka, Vatashamaka by Ushna property. It eliminates kapha and pitta by emesis and pitta by purgation. It eliminates and alleviates vata. This action on vata dosha is utilised by administrating Madanaphala in Asthapana and Anuvasana Basti.

Madanaphala is being used so extensively for inducing emesis in shodhana chikitsa that its name has become synonymous with emesis. It is extremely suitable for emesis, as it does not cause any complications. Fruit rind and seeds are used for emesis. Fruit is emetic and also purgative.

To induce emesis, powder of whole fruit (approximately 3-4 masha) is soaked in ½ chataka water overnight. This liquid is filtered and given to the patient after adding honey and saindhava. Emesis starts in an hour if given in empty stomach. For instant emesis, dose of the seeds should be increased. It causes emesis in 15-20 minutes. If this fails to induce vomiting then warm water is given and the patient is encouraged to vomit. Repeated use of water with saindhava purifies the stomach (Amashaya) by eliminating kapha and pitta.

* त्रिवृत् बिल्वपिप्पलीकुष्ठसर्षपवचावत्सकफलशतपुष्पमधुकमदनफलानीति दशेमान्यास्थापनोपगानि भवन्ति ।

च०सू० 4/25

Trivrit, Bilwa, Pippali, Kushta, Sarshapa, Vacha, Vatsakaphala, Shatapushpa, Madhuka and Madanaphala are having Asthapanopaga karma as per Charaka.

* रास्नासुरदारुबिल्वमदनशतपुष्पावृश्चीपुनर्नवाश्वदृष्टाग्निमन्थश्योनाका इति दशेमान्यनुवासनोपगानि भवन्ति ।

च०सू० 4/26

Rasna, Devadaru, Bilva, Madana, Shatapushpa, Shweta punarnava, Gokshura, Agnimantha and Shyonaka are mentioned in Anuvasanopaga gana.

* मदनफलं वमनास्थापनानुवासनोपयोगिनां ..... ।

च०सू० 25/40

* Lecturer, Deptt. of Dravyaguna, S.D.M. College of Ayurveda, Thammeeruhalla, Hassan, Karnatka
** Prof. of Head of the Dept. Deptt. of Dravyaguna, National Institute of Ayurveda, Amer Road, Jaipur-302020

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



Charaka envisages the use of Madana in Vamana karma. Asthapana and Anuvasana Basthi.

* वमनद्रव्याणां मदनफलानि श्रेष्ठतमान्याचक्षते, अनपायित्वात् ।

च०क० 1/13

Madana is said to be best Vamaka Dravya because it won't cause any discomfort.

* मदनो मधुरस्तिक्तो वीर्योष्णो लेखनो लघुः ।
वान्तिकृद्विद्रधिहरः प्रतिश्याय व्रणान्तकः ॥
रूक्षः कुष्ठकफानाह शोथगुल्मव्रणापहः ॥

भा.प्र. हरीतक्यादि वर्ग

The properties of Madanaphala are Sweet & bitter in taste. hot in potency. laghu & ruksha in quality, pacifies kapha, Lekhana and Vamaka in Karma. used in Vidhradi, Pratishyaya, Vrina, Kushta, Anaha, Shotha and Gulma.

* मदनकुटजकुष्ठदेवदालीमधुकवचादशमूलदारूरास्ना ।
यव मिशि कृतवेधनं कुलत्था मधु लवणं त्रिवृता निरूहणानि ॥

(अ.हृ.सू. - 15/3)

Vagbhatacharya also mentions about its usage in Niruha basti.

* रोध्रमदनसप्तपर्णनिम्बपीलुबीजानि । शिरोविरेचनोपयोहीनि ॥

(अ.सं.सू.-14)

Interesting reference is available in Ashtanga Sangraha that Madanaphala is mentioned in Shirovirechanopayogi dravyas indicating its use in Nasya.

* मधुक ....शल्लकीशर्करामदनकमरुबक...त्वक्..
प्रायोगिकधूमोपयोगीनि ॥

(अ.सं.सू. - 14)

Madana bark is also listed in Dhoomapana dravyas that it is used for Prayogika Dhoomapana.

Chemical constituents :

- Randianin, Randiac acid, Dumetororins A,B,C,D, E and F, Randioside A (1-3, oleonolic acid), Sapogenin, Ursosaponin, Citric acid and tartaric acids, Pectin, Mucilage etc.

DISCUSSION :

- Vamaka karma of Madanaphala is mentioned as Prabhava in classical literature.
- As other karmas are also attributed to th same drug, the dominant karma of the dru may be considered for Prabhava.
- The qualities told for both vamana an virechana karma is similar, but Prabhava i different for Vamana and Virechana Karmas Urdhwabhagahara prabhava is resposible fc Vamana karma. where as Adhobhagahar prabhava results in Virechana.
- Matra of the medicine also plays a major rol in bringing out the karma. The dose for vaman karma is more when compared with othe karmas.
- Agni also has main role, if the drug comes contact with Agni then it results in virechan
- Acharya Vaghbhatta mentions the seeds c Madanaphala as being useful i Shirovirechana. Apart from this the bark c Madana is said to be useful in Prayogik Dhumapana. These references reveal its plac in one of the other procedures of Panchakarm also.

CONCLUSION :

- No doubt the drug Madanaphala is the be drug for Vamana, but there are enoug classical references indicating its usage fc other Karmas of Panchakarma like Virechan Anuvasana Basti, Niruha Basthi an Shirovirechana.
- Usage of a single drug in different dosage ar forms is definitely an advantage to preserv many of the drugs.
- Madanaphala is commonly used only fc vamana karma now a days, but it should b used for virechana etc. karmas.
- Lot of research works is necessary to clai wonder drug Madanaphala as a complete dru for Panchakarma.



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## Personality

Approaches and execution with all efforts to live a planned, systematic and purposeful life distinguishes a human from a mass. Its flavour automatically spreads if it has essences of nationality as whole and respect and path of strong tradition in heart. Ayurveda is one of the eminent way to prove oneself is never an exaggeration. Vaidya Shrihari Shankar was one who not only proved this but also established the validity of his surname 'Vaidya'. Born on 23rd July 1940 in a Brahmin family of Maharashtra, Vaidya S. S. was well versed with worship culture of Hindu traditions and rhymes and chimes of Sanskrit were always setting attuned in his mind and heart or more than in his whole body. The childhood curiosity to understand anything properly and love to serve the people and nation, caused his strong interest in Ayurveda from very beginning of his life.

He graduated in 1965 from Pune University. Teaching is the best medium to explore anything that might be in mind when he decided to select the teaching job after his graduation. He did his Doctoral Research on 'Critical study of Dhanwantari Nighantu' from the same University, i.e. Pune University. Students and teachers still remember his energetic services as Professor of Rasashastra and Bhaisajyakalpana in Tilak Ayurvedic College of Pune, Ashtanga Ayurved Mahavidyalaya, Pune and Ganga Ayurveda College, Kolhapur. Many of his students are working very well in the field of Ayurveda applying the ideas they received from Professor Vaidya while working with him as students of M.Sc., M.D. and Ph.D. For his research work, he was awarded Silver medal by the Academy of Ayurveda, Vijayawada.

Vaidya Shrihari Shankar

Other than the Academic carrier, he also proved himself better in administration and leadership qualities during while his tenure as a member of Board of Studies in Banaras Hindu University, National Integrated Medical Association and Board of Studies for Paraclinical Board under Faculty of Ayurveda of Shivaji University. For welfare of general public he founded a health centre for public, 'Jammangal Pratisthan'. Persons from the Ayurveda and outside of Ayurveda keep in memory his deliberations on television channels, seminars, symposia and many other sources. Not only under the Indian Territory but abroad as Italy, Indonesia etc. also his representations are matter of appreciation. He used to arrange medical camps for the patients in all the diseases. The number goes more than 130 - May he live a long life.

— **Prashant Kumar Jha**

**Gujarat Ayurved University, Jamnagar**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# आयुर्वेद भारतीय जीवन के अधिक सन्निकट

*जून, 1966*

आयुर्वेद चिकित्सा भारत के जन-जीवन से अधिक सन्निकट है । यह चिकित्सा सस्ती ही नहीं, मौलिक भी है । एलोपैथिक चिकित्सा भारत में युग के अनुसार फैली है । जैसे-जैसे उसका विस्तार हो रहा है वैसे ही यह सामान्य जनता के लिए अधिक महँगी होती जा रही है, पर आयुर्वेद में ऐसा नहीं है । यह इस देश का अपना विज्ञान है ।

खेद है कि आज वैद्य-समाज ही अपनी मौलिकता को छोड़ता जा रहा है । इससे आयुर्वेद की क्षति होती है । अत: वैद्यों को चाहिए कि अपने विज्ञान को बढ़ाने एवं सर्वजनोपयोगी बनाने के लिए प्राणपण से सचेष्ट हों ।

**श्री मोरारजी देसाई**
**भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री**

## सर्व प्रथम वैद्यों को समान अधिकार प्राप्त हो

आचार्य दामोदर शर्मा गौड़; ए०एम०एस०, प्राचार्य आयुर्वेद स्नातकोत्तर शिक्षण संस्थान, वाराणसी ने कहा- समस्याएँ दो प्रकार की होती हैं, इनमें कुछ स्वाभाविक कुछ आगन्तुक होती हैं । इसी प्रकार अधिकार की भी बात है । आज हमें ऐसे स्नातक चाहिए जो वर्तमान समय के लिए उपयुक्त हों । आज अर्थ प्रधान युग है, अत: सर्वप्रथम यह स्पष्ट होना चाहिए कि हमें क्या मिलेगा और हमें क्या अधिकार होंगे । आज नहीं, हमेशा से प्रत्येक व्यक्ति को अधिकारों की आवश्यकता रही है और इसीलिये लोग संघर्ष करते आये हैं । अतएव, सर्वप्रथम वैद्यों को समस्यानुसार समान अधिकार मिलना चाहिए, आज वैद्यों को विचार करते समय एलोपैथी के अधिकार को सामने रखकर विचार करना चाहिए ।

मेरे विचार से सरकार को चाहिए कि शुद्धायुर्वेद और मिश्रायुर्वेद दोनों के समर्थकों को बुलाकर एक बार अपने सामने निर्णय करने का अवसर देना चाहिए, जिससे बहुत-सी शंकाओं का समाधान स्वत: हो जाय ।

## इस आयुर्वेद का क्या होगा ?

वैद्य दरबारी लाल शर्मा, आयुर्वेदाचार्य, अध्यक्ष, उ०प्र०, विभाग सभा ने कहा कि जिस प्रकार औषध में प्रभाव बढ़ाने के लिए कुछ पुट दी जाती है, उसी प्रकार मूल वस्तु पीछे रह गई है और राजनीतिक पुट आगे आ गई है, अष्टांग, शुद्ध, मिश्र, सिद्ध में ही चक्कर लगाते रहते हैं । परन्तु हम इससे आगे नहीं बढ़ सकते हैं । जैसी स्थिति आज आयुर्वेद की है, ठीक ऐसी ही स्थिति कभी अन्य पद्धतियों की भी रही होगी, किन्तु धीरे-धीरे विज्ञान के सहारे लोग आगे बढ़ते गए ।

अगर आयुर्वेद को राज्याश्रय नहीं मिला, तो यह आगे नहीं बढ़ सकता है । प्लानिंग या हेल्थयूनिट्स में आयुर्वेद को स्थान नहीं मिला तो इस आयुर्वेद का क्या होगा ! आज प्लानिंग का जो कार्य चल रहा है उसमें आयुर्वेद को भी सुनियोजित तरीके से आगे बढ़ना चाहिए । आज जो भी देश की जलवायु के अनुकूल हों, उसे देशी चिकित्सा के रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए । आज जब रोगी ऐलोपैथी की चिकित्सा से थक जाता है तो आयुर्वेदवालों की शरण पहुँचता है और स्वास्थ्य लाभ करता है ।

आज प्रथम पास वालों को न तो कानून में डिग्री दी जा सकती है और न समान वेतन ही मिल सकता है । अत: हमारी प्रवेश-योग्यता इण्टर या मध्यमा होनी ही चाहिये ।

यह खेद की बात है कि सन् 1960 तक के ही आयुर्वेदीय स्नातकों को कन्डेन्स्ड कोर्स में लिये जाने की घोषणा सरकार की ओर से हुई है, जिन्हें 225 रुपये से 425 रुपये दिया जायेगा और मेडिकल डिस्पेन्सरी में जुनियर असिस्टेण्ट के पद पर इनकी नियुक्ति होगी, वह भी तब जब कि मिश्रायुर्वेद उ०प्र० में बन्द कर दिया जाय । हमारी समझ में नहीं आता है कि सन् 60 के बाद जिन्होंने आयुर्वेदिक कालेजों में प्रवेश लिया है और मिश्रायुर्वेद पढ़ रहे हैं उनका क्या होगा ? आज हमारी सरकार मिश्रायुर्वेद वालों को 225/- - 500/- देने की घोषणा कर चुकी है और सीधे चिकित्साधिकारी बनेंगे, तो फिर हम अपने छात्रों को 2 वर्ष तक कण्डेन्स कोर्स पढ़ाने के चक्कर में क्यों पड़ें ?

हमारी समझ में शीघ्र ही केन्द्रीय आयुर्वेदिक कॉन्सिल बननी चाहिए, जिससे कि बिखरे हुए आयुर्वेद के विद्वान् एक जगह सम्मिलित हो विचार-विमर्श कर सकें हमारा यह प्रयत्न सर्वोपरि होना चाहिए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आपके अनुभूत प्रयोग

## अभिनव रुग्ण चिकित्सा

अक्सर कुछ लोग शरीर पर सूजन, शारीरिक वेदना के साथ ही तेज ज्वर से परेशान रहते हैं । वह तकलीफ जिसे आधुनिक चिकित्साशास्त्र में Septicimia & Myosities कहते हैं ।

इसी समस्या से ग्रस्त एक ग्रामीण हमारे चिकित्सालय में आया । 26 वर्षीय, कृष्णवर्णीय ग्रामीण युवक की प्रारंभिक जाँच में पाया गया कि वह ज्वर से पीड़ित है. संपूर्ण शरीर पर सूजन हैं । प्रथम चरण के उपचार में ज्वर नियंत्रित हुआ पर सूजन अप्रवाहित रही है । औषधापचार में खड नहीं, उपशय नहीं । निदान में रोग की पहचान Septicimia & Myosities के रूप में की गयी । सारे बदन पर सूजन इस रोग का प्रमुख लक्षण है । बदन में वेदना के साथ ही रुग्ण के लिए चलना कष्टप्रद होता है ।

गहन पूछताछ में बताया गया कि इस परिवार के लोग न कभी बीमार पड़े न उन्हें कभी कोई दवा लेने की जरूरत पड़ी । इसके बावजूद एक माह पूर्व अचानक कंपनयुक्त तेज बुखार, अंगदाह के साथ ही शरीर में भारी वेदना से रुग्ण घबरा गया । देहाती उपचार से समाधान न मिलने पर वह रुग्ण उपचारार्थ हमारे रुग्णालय में आया । तब बदन में सूजन थी । वेदना से वह कराह रहा था । उसे ज्वर नहीं था पर सुजे हुए पैरों से मवाद रिस रहा था । बताया गया कि ग्रामीण क्षेत्र में निवासस्थ पूरा परिवार श्रमिक है । बीमारी से सदा मुक्त रहा है । परीक्षण में रुग्ण की नाड़ी की चाल 76 बार प्रति मिनट, तापमान 97 डिग्री, सांस 24 बार प्रति मिनट, नाखून, नेत्र जिव्हा, स्वर आदि सामान्य, कोई विकार नजर नहीं आया । त्वचा श्यामवर्ण, सूजन से प्रवाहित, स्पर्श-प्राकृत, अग्नि-मंदाग्नि का शिकार, मानसिक अवस्था-चिन्तामग्न पायी गयी ।

घावों में जब भीतर ही भीतर सड़न के कारण नासूर हो जाता है. तब उसकी पहचान व्रण के रूप में की जाती है ।

व्रण शोध चिकित्सा के प्रथम चरण में शोधघ्न चिकित्सा, पक्षाघात वमन, विरेचन तथा रक्तमोक्षण उपचार का प्रावधान है । उपवाह के बाद शल्यक्रिया से व्रण में स्थित मवाद को निकालना चाहिए । व्रण के दो प्रकार हैं शरीर में आन्तरिक दोष दृष्टि, एवं बाह्य दुर्घटना के परिणाम स्वरूप उभरनेवाला व्रण ।

चिकित्सालय में उपचारार्थ आया ग्रामीण रुग्ण दोष दृष्टि के कारण उपजे व्रण से पीड़ित था । वातपित्तजन्य दोष से दूषित, काली छटा लिए चुभनयुक्त वेदना, पीला-भूरा रंग का मवाद स्राव देखा गया । ये सभी शरीर दोष दृष्टि के लक्षण हैं ।

**चिकित्सा :-** आधुनिक पद्धति से उपचार प्रारंभ किया । उपशय के कोई लक्षण दिखायी नहीं दिए । शरीर के मांसल सूजनपर ॲस्पिरेशन के परिणाम स्वरूप लाल ओ स्याहरंग का मवाद बड़ी मात्रा में रिसता दिखायी दिया । उचित उपचार से व्रण नियंत्रित किया जा सका पर कंधा व निचल हिस्से के व्रण प्रभावहीन देखे गए । शल्य चिकित्सा द्वारा त्वचा रोपण के बावजूद व्रण जैसा का तैसा देखा गया । रोपित त्वचा टिक नहीं सकी । अतः हमने उपचार का क्रम बदला । आयुर्वेदिक व्रण रोपण चिकित्सा के तहत निम्न औषधियों का इस्तेमाल किया गया ।

अर्जुन :- व्रण शोधघ्न तथा व्रण लेखन, व्रणरोपण व व्रण शुद्धिकारक ।

गुलवेल :- सत्व पित्तघ्न व रसायन कर्म में प्रभावी

आमलकी :- पित्तघ्न ।

शतावरी :- त्रिदोषघ्न ।

त्रिदोषघ्न व बल्य चिकित्सा:

वसंत कुसुमाकर, रसायन त्रिदोषघ्न ।

खंडुचक्का - पित्तसारक ।

व्रणरोपण, व्रणशोधन व बल्य पित्तसारक पित्तघ्न आदि समस्त औषधि पित्तनिसारक, पित्तवाहक, आमाशय में स्थित अभिष्यंद को कम करने वाले व त्रिदोषघ्न होने के कारण चिकित्सा के समय वात, पितघ्न व बल्य चिकित्सा पर बल दिया गया । अतः शतावरी, गुलवेल सत्व, वसंतकुसुमाकर, आमलकी, अर्जुन आदि घी के अनुपान के साथ सुबह शाम लेने की सलाह रुग्ण को दी गयी । अर्जुन चूर्ण तथा खंडुचक्का के पत्ते के रस के मिश्रण का लेप व्रण पर लगाया । लेप असरदार सिद्ध हुआ । दस दिनों में ही व्रण के निशान मिट गए । त्वचा प्राकृतिक रूप में दिखायी देने लगी ।

शस्त्रक्रिया द्वारा त्वचा रोपण जहां निष्प्रभावी रहा वहां अर्जुन मूल व खंडुचक्का वनस्पति, प्रभावी सिद्ध हुई ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



व्रण शोधन व व्रण रोपण का असरदार कार्य, इस वनस्पति की विशेषता आंकी गयी ।

चन्द्रपुर के राष्ट्रीय वन क्षेत्र ताडोबा जंगल में खंडुचक्का वनस्पति विपुल मात्रा में उपलब्ध है । इस वनस्पति की असरदार उपयोगिता से प्रभावित वन विभाग ने बड़े पैमाने पर खंडुचक्का रोपण अभियान को प्राथमिकता दी है जो सराहनीय है ।

चन्द्रपुर-गडचिरोली जिला आदिवासी बहुल क्षेत्र है । घने जंगलों में निवासस्थ आदिवासी लोग दुर्घटना में घावों पर खंडुचक्का के पत्तों के रस का उपचार करते हैं । गहरे घावों पर असरदार लेप का वे आत्मविश्वास के साथ उल्लेख करते हैं । आयुर्वेद चिकित्सक इस वनस्पति की उपयोगिता एवं अनुकूल परिणाम का गहनता से अध्ययन अवश्य करें ।

**खंडुचक्का वनस्पति का विश्लेषण :-**

कुल :- निर्गुडी कुल

नाम :- करी, मंडी, भाण्ड, माण्डीर ।

CLERODENDROMIN FOR TUMNATHUM

व्यावहारिक नाम :- खंडुचक्का ।

वर्ग :- क्षुप

खंडुचक्के का नाजुक पौधा 3,4 फुट ऊँचा होता है । पत्ते आकार में बड़े एवं गोलाकार, डंटल लंबे होते हैं । टहनी के अंतिम छोर पर फूल लगते हैं । स्वाद में कड़वा तथा पत्ते बदबूदार होते हैं ।

**गुणधर्म :-** कड़वा धर्मीय शैथिल्य नाशक, अग्निमांद्य नाशक, अनुलोमक, पित्त निसारक, कृमिघ्न व ज्वरघ्न चिरायता वनस्पति गुणों से युक्त है ।

**उपयोग :-** तृतीय व चातुरिक ज्वर एवं कृमि पर खंडुचक्के के पत्तों का रस लाभकारी है । इस रस की बस्ति से पेट में स्थित कीड़े समाप्त हो जाते हैं । अतिसार, उदरशूल से निजात के लिए इस पौधे की जड़ का चूर्ण दिया जाता है । त्वचा व कुष्ट रोगियों के लिए भी यह चूर्ण लाभकारी है । मात्रा रुग्ण की अवस्थानुसार 250 मि.ग्राम से 1 ग्राम चूर्ण लेना चाहिए ।

**स्रोत मामित्व :-**

दोष :- पित्त, पित्तसारक ।

धातु :- मेद, अस्थिमज्जा, गामी ।

मल :- पुरीष ।

आदिवासी लोगों का दृढ विश्वास है कि खंडुचक्का के पत्ते तथा पत्तों का रस अस्थि भंग, जख्म तथा गहरे घावों पर प्रभावी उपचार है । यह वनस्पति अस्थि मज्जागामी है । अत: टूटी हड्डियाँ जोड़ने का गुणधर्म, सत्यता की कसौटी पर खरा उतरता प्रतीत होता है । हमने व्रण रोपण के लिए वनस्पति का उपयोग किया है । मेरा मानना है कि इस वनस्पति का गहन संशोधन, चिकित्सा में अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकेगा ।

(डॉ० गो०वा० अंदनकर)
कात्यायनी रुग्णालय, बालाजी वार्ड,
पठाणपुरा रोड, चन्द्रपुर

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
यह चूर्ण पेट साफ करता है तथा
पाचन शक्ति और भूख बढ़ाता है।
इससे पेट के कृमि भी दूर होते हैं।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



# केरल पैटर्न पर आयुर्वेद विकास
## (चिकित्सा एवं स्वास्थ्य पर्यटन की सम्भावनाएँ)

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना-800 001

महाशय,

जब अलग उत्तरांचल राज्य की स्थापना का सपना देखा गया तब राज्य समर्थक एवं विरोधियों के मन में यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से आता था कि राज्य बनने के आर्थिक स्रोत क्या होंगे । तब बुद्धिजीवी वर्ग एवं आम जन हमेशा बड़े आत्म विश्वास के साथ यह कहते थे कि जल, जंगल और पर्यटन हमारे आर्थिक स्रोत होंगे । लगभग सभी वर्ग इस राज्य के पक्षधर एवं विरोधी इस बात पर सहमत हो जाते कि जल से असीमित ऊर्जा भंडार, जंगलों से असीमित जड़ी-बूटियों का भण्डार एवं पर्यटन से हमारा राज्य आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूप से सम्पन्न राज्य होगा ।

आर्थिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि के उपरोक्त तर्क सही थे क्योंकि इन स्रोतों से आर्थिक सम्पन्नता आना स्वाभाविक था । आज विश्व में 50 मिलियन डॉलर का जड़ी-बूटी बाजार है । चीन की इस में सर्वाधिक भागीदारी है क्योंकि उसने अपनी पारम्परिक चिकित्सा पद्धति को विकसित कर यह ऊँचाई पायी । पर्यटन को विकसित करने वाले देश आज आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूप से सम्पन्न हैं । पर्यटन के क्षेत्र में आध्यात्मिक, साहसिक, ऐतिहासिक, क्रीड़ा एवं स्वास्थ्य पर्यटन आदि क्षेत्र हैं । परन्तु इधर वर्तमान समय में स्वास्थ्य पर्यटन के क्षेत्र में सर्वाधिक प्रगति हुई है । विश्व स्तरीय होटलों, पांच सितारा होटल जो कि अब तक मात्र स्पा तक ही सीमित थे, अब आयुर्वेदिक मसाज, पंचकर्म चिकित्सा को अपने पैकेज में शामिल कर चुके हैं जिससे उनकी आमदनी में कई गुनी वृद्धि हुई है । बड़ी-बड़ी मल्टी नेशनल फार्मेसी आयुर्वेदिक एवं हर्बल प्रोडेक्ट बनाने में जुटी है तथा कई बड़े व्यवसायी हैल्थ रिजार्ट के क्षेत्र में कूद पड़े हैं जिससे इन देशों एवं प्रदेशों की सरकारों को भी काफी धन कर के रूप में प्राप्त हो रहा है । उत्तरांचल राज्य में आज भी उपरोक्त संभावनाएं मौजूद हैं । जो सोच उत्तरांचल राज्य की आर्थिक स्रोतों के बारे में उ०प्र० के अलग होने के समय थी, उन्हीं आर्थिक स्रोतों को आधार बनाकर केरल राज्य भी तमिलनाडु से पृथक राज्य बनाया गया था । केरल राज्य द्वारा पर्यटन एवं विशेष रूप से आयुर्वेद के द्वारा स्वास्थ्य पर्यटन एवं आयुर्वेद को आम जनता की चिकित्सा बनाकर इसके द्वारा जड़ी-बूटियों के संरक्षण, सम्वर्द्धन, विपणन के द्वारा केवल भारत ही नहीं अपितु विश्वस्तर पर स्वास्थ्य पर्यटन के केन्द्र के रूप में स्थापित किया है ।

इस राज्य ने अपने को विश्वस्तर पर कैसे स्थापित किया उसके लिए इसके अतीत में जाना अति आवश्यक है । केरल भी उत्तरांचल की तरह तमिलनाडु से अपनी सांस्कृतिक पहचान एवं जड़ी-बूटी आयुर्वेद एवं पर्यटन की आर्थिक सम्पन्नता की सोच को लेकर अलग हुआ और इन्हीं साधनों को विकसित करता हुआ आज शिक्षा, स्वास्थ्य एवं अन्य क्षेत्रों में आगे निकला ।

**भौगोलिक समानता :-**

उत्तरांचल राज्य की तरह राज्य में पर्यटन स्वास्थ्य पर्यटन आदि क्षेत्रों के अतिरिक्त यहां सरकारी/प्राइवेट रोजगार के अवसर बहुत कम हैं उत्तरांचल की तरह ही यहां से बहुत संख्या में स्त्री/पुरुष अन्य राज्यों एवं देशों में रोजगार हेतु में हैं । यहां पर शिक्षित लोगों की संख्या अधिक है तथा सर्वाधिक रोजगार अन्य राज्यों एवं केरल में भी स्वास्थ्य के क्षेत्र में विशेष रूप से प्रशिक्षित है ।

उत्तरांचल राज्य की तरह केरल भी एक छोटा राज्य है । राज्य में 14 जिले हैं । इस राज्य की तरह केरल में पेड़-पौधे, हरियाली अधिक हैं तथा औषधि-पौधों की अधिकता है ।

**आध्यात्मिक समानता :-**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



केरल राज्य की तरह विशेष रूप से आदि शंकराचार्य जी का जन्म स्थान कलाडी जो कि आध्यात्मिक केन्द्र है जो पूरे भारतवर्ष के लिए श्रद्धा का केन्द्र है । आदि शंकराचार्य जी द्वारा 4 दिशाओं में से उत्तर में बद्रीनाथ मंदिर में सांस्कृतिक एकता के रूप में सदैव एकता के रूप में रावल केरल के नम्बूदरी समुदाय से ही होता है । इसलिए केरल का बुद्धिजीवी एवं आध्यात्मिक वर्ग अपने को उत्तरांचल से जुड़ा हुआ मानता है ।

करेल में आयुर्वेद के आदि प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि का ऐतिहासिक मंदिर स्थापित है, यहाँ पर आम जनता एवं आयुर्वेद प्रेमी अच्छे स्वास्थ्य की कामना करते हैं ।

**जड़ी-बूटी की अधिकता:-**

उत्तरांचल राज्य की तरह केरल राज्य में भी जड़ी-बूटियों की प्रचुरता है । औषधीय पौधों के संरक्षण सम्बर्द्धन, विपणन सरकारी स्तर पर है । जड़ी-बूटियों की यहाँ पर इतनी अधिक खपत है कि काफी उत्पादन के बाद भी दूसरे राज्यों से जड़ी-बूटियां मंगायी जाती है । औषधीय पौधों के सम्बर्द्धन एवं जानकारी हेतु राष्ट्रीय जवाहर लाल नेहरू वास्पतिक संस्थान त्रिवेन्द्रम् एवं आयुर्वेदिक (आई०एस०एम०) का पूरा सामंजस्य होने से इस संस्थान ने औषधीय पौधों के कई एकड़ जमीन में आयुर्वेदिक ग्रन्थों में वर्णित औषधीय पौधों की वर्गो के अनुसार कल्टीवेट किया गया है । जिसमें जीवनी गण, अष्ट वर्ग, दशमूल की औषधियाँ आदि एक ही स्थान पर उत्पादित की जा रही हैं । संदिग्ध या अप्राप्त औषधीयों पौधों के स्थान पर अन्य औषधियों को समान गुणों के आधार पर प्रयोग किया जाता है और पूरे राज्य में वानस्पतिक विशेषज्ञों के साथ ही आयुर्वेद विशेषज्ञ भी एक नाम से उस औषधि को प्रयोग करते हैं । जिसमें मुख्य रूप से ब्राह्मी, शंखपुष्पी एवं दारू हरिद्रा आदि औषधियां हैं जो उत्तर भारत में इस नाम से दूसरी औषधियां प्रयुक्त की जाती है ।

**पर्यटन :-**

केरल पर्यटन के लिए सांस्कृतिक, भौगोलिक एवं उपर्युक्त जलवायु के कारण आर्कषण का केन्द्र है । परन्तु काफी वर्षो से आयुर्वेद के साथ ही इसने स्वास्थ्य पर्यटन में बहुत बड़े उद्योग का स्थान प्राप्त किया है । देश-विदेश से लोग कई आयुर्वेदिक रिर्जोट में (सरकारी एवं गैर सरकारी) स्वास्थ्य लाभ हेतु आते हैं । अधिक ठहराव के कारण यहां देशी-विदेशी पर्यटकों से स्थानीय लोगों को काफी रोजगार एवं आय होती है । यहां पर पंचकर्म चिकित्सा पर्यटक एवं रोगी एक सप्ताह से लेकर 3-4 माह तक स्वास्थ्य लाभ हेतु रुकते हैं ।

**औषधि निर्माण :-**

जड़ी-बूटी की अधिकता एवं आयुर्वेदिक चिकित्सा के प्रति आम जनता एवं पर्यटकों का लगाव होने से सरकारी एवं गैर सरकारी क्षेत्र में आयुर्वेदिक औषधियों की बहुत अधिक माँग है । औषधियों में मुख्य रूप से चूर्ण, कषाय (क्वाथ), आयुर्वेदिक तैल, आयुर्वेदिक घ्रित, आसव, अरिष्ट, काफी मात्रा में प्रयुक्त होते हैं जिसे सरकारी एवं गैर सरकारी क्षेत्र की फार्मेसी निर्माण करती है । सामान्यत: कॉलेज चिकित्सालय आयुर्वेदिक हेल्थ रिर्जोट अपनी आवश्यकता के अनुसार औषधि स्वयं निर्माण करती है । जिससे उनकी गुणवत्ता बहुत अच्छी मानी जाती है । बड़े स्तर की फार्मेसी में आर्यवैधशाला कोटाकल, एस०एन०ए० फार्मा, नागार्जुन, श्रीराम, सीताराम, वैधरत्नम आदि फार्मेसी के भ्रमण के दौरान उनकी आर०एण्ड डी० एवं क्वालिटी कन्ट्रोल यूनिट के देखने से उनकी गुणवत्ता का उत्तम होना स्वाभाविक है । आर्य वैधशाला का केवल एक वर्ष का शुद्ध लाभ 95 करोड़ रुपया है । सरकारी फार्मेसी में मुख्य "औषधि" है जिसका सालाना टर्न ओवर 25 करोड़ रु० है ।

**आयुर्वेदिक चिकित्सा का ढाँचा :-**

केरल राज्य में आयुर्वेद के विकास में पूर्व सरकार, अष्ट वैद्य परम्परा से गुरु शिष्य परम्परा एवं वर्तमान में वहां की सशक्त शिक्षण संस्थानों का महत्वपूर्ण योगदान है । जिनमें आयुर्वेदिक स्नातकों को विशिष्ट ज्ञान आयुर्वेद के विद्वानों द्वारा प्राप्त होता है । सरकारी क्षेत्र में केन्द्र



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


सरकार की एवं राज्य सरकार की संस्थाएं हैं । केन्द्र सरकार द्वारा केरल में आयुर्वेद के विकास एवं शोध हेतु मुख्य रूप से सी०आर०आई० केन्द्रीय अनुसंधान संस्थान (चिरूथूरती), आर०आर०आई० कोट्टकल, आर०आर०आई० त्रिवेन्द्रम है । इसमें सी०आर०आइ० जो कि पूर्व में आई०आई०पी० के नाम से जाना जाता था विशिष्ट रूप से पंचकर्म चिकित्सा का शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान है । इस संस्थान की विशिष्टता इसके दैनिक रोगियों से ही समझी जा सकती है । जहाँ प्रतिदिन लगभग 300-400 रोगी ओ०पी०डी० में देखे जा सकते हैं । लगभग 100 रोगी अन्तरंग विभाग में भर्ती रहते हैं जिसमें पक्षाघात (पेरेलाइसिस) आदि जीर्ण एवं गंभीर रोगियों का उपचार किया जाता है ।

राज्य सरकार द्वारा केरल में आयुर्वेद की चिकित्सीय सेवाएं ग्राम पंचायत से लेकर जिला स्तर तक एक सुदृढ़ नेटवर्क की तरह कार्यरत है । प्रत्येक ग्राम पंचायत स्तर पर एक आयुर्वेदिक चिकित्सालय स्थापित है । इसमें एक महिला एवं एक पुरुष चिकित्साधिकारी कार्यरत हैं । तालुका स्तर पर 25 बेड का चिकित्सालय है जिसमें वरिष्ठ चिकित्सक अधिकारी सहित 2 अन्य चिकित्साधिकारी का पद सृजित है । जिला स्तर पर 50 एवं कहीं पर 100 बेड का जिला आयुर्वेदिक चिकित्सालय है जिसमें मुख्य चिकित्साधिकारी (सी०एम०ओ०) आई०एस०एम० एवं 6 विशेषज्ञ चिकित्साधिकारी पंचकर्म, अगद एवं विष विज्ञान, मानसिक रोग, मर्म एवं बाल रोग के अधिकारी के पद सृजित हैं ।

जिला स्तर पर डी०एम०ओ० (आई०एस०एम०) पूरे जिले के अधिकारी होते हैं । निदेशालय स्तर पर उप निदेशक एवं अपर निदेशक तथा निदेशक के पद हैं ।

उपरोक्त सभी चिकित्सालयों में ग्राम पंचायत स्तर से जिला स्तर तक पंचकर्म चिकित्सा विशिष्ट चिकित्सक के रूप में उपलब्ध कराई जाती है । सरकारी क्षेत्र में प्रसिद्ध मानसिक रोग चिकित्सालय कोट्टकल में स्थापित है जहाँ मानसिक रोगियों का आयुर्वेदिक उपचार किया जाता है ।

गैर सरकारी क्षेत्र में आयुर्वेदिक चिकित्सा के केरल तथा पड़ोसी राज्यों में जाल-सा बिछा हुआ है । ये संस्थान चिकित्सा, शिक्षा, फार्मेसी, शोध, हरबल गार्डन के कार्य एक साथ करते हैं । कुछ प्रसिद्ध संस्थान जिन श्रीधरयम् नेत्र चिकित्सालय जो कि 300 बेड का आयुर्वेदिक नेत्र चिकित्सालय है । वैद्य रत्नम् आर्य वैद्यशाला, त्रिवेन्द्रम मर्म हास्पिटल जिसमें फ्रेक्चर आदि की चिकित्सा आयुर्वेदिक विधि से की जाती है ।

अधिकतर संस्थानों में जलोंका एवं अग्निकर्म का भी काफी प्रयोग किया जाता हैं । इसमें कई रोगों में बहुत अधिक लाभ होता है । पर्यटन विभाग द्वारा आई०एस०एम० विभाग से पूर्ण तालमेल होने से पर्यटन विभाग सभी रोगि आयुर्वेदा/पंचकर्म सेन्टर की सूचना इंटरनेट द्वारा आनलाइन पर्यटकों को उपलब्ध कराता है ।

3 माह के करेल प्रवास में प्रशिक्षण के साथ ही लगभग आयुर्वेद/पंचकर्म के सभी सरकारी गैर सरकारी संस्थानों का भ्रमण भी किया है जो कि प्रशिक्षण का हिस्सा था । उक्त प्रशिक्षण हेतु हमें भेजे जाने के लिए हम उत्तरांचल शासन, यू०ए०एच०एस०डी०पी० एवं आयुर्वेदिक विभाग के आभारी हैं ।

**उत्तरांचल में सम्भावनाएँ :-**

दोनों राज्यों में काफी समानताएं होने से उत्तरांचल में भी केरल की तरह आयुर्वेदिक चिकित्सा को स्थापित किया जा सकता है जिसके लिए निम्न प्रयास किये जाने आवश्यक होंगे ।

1. विभिन्न जड़ी-बूटी के कृषिकरण, संरक्षण एवं सम्वर्द्धन हेतु राष्ट्रीय स्तर के वानस्पतिक संस्थान जैसे-एन०बी०आर०आई०, सी०एम०ए०पी०, एफ०आर०आई० से आयुर्वेदिक ग्रन्थों में वर्णित औषधीय पौधों की **पहचान कर** संरक्षण एवं सम्वर्द्धन हेतु नीति बनाई जाय । राज्य मैडिसिनल प्लांट बोर्ड में आयुर्वेदिक विभाग को तकनीक विभाग के रूप में सम्मिलित किया जाए तथा जड़ी-बूटी शोध संस्थान गोपेश्वर को


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



इसके पूर्व स्वीकृत रूप में ही विकसित किया जाए ।

प्रत्येक आयुर्वेदिक चिकित्सालय में पंचकर्म चिकित्सा औ०पी०डी०/इन्डोर स्तर पर शुरू की जाय तथा इस हेतु चिकित्साधिकारियों के अतिरिक्त फार्मेसिस्ट एवं अन्य स्टॉफ को भी प्रशिक्षण दिया जाय ।

प्रत्येक आयुर्वेद चिकित्सायल को औषधि गार्डन तथा स्थानीय स्तर पर उपलब्ध औषधियों को ग्रामीणों के सहयोग से चिकित्सालय स्तर पर प्रयुक्त होने वाली औषधियों को चिकित्सालय में ही बनाया जाय । इस हेतु प्रत्येक चिकित्सालय को कुछ अतिरिक्त बजट एवं स्टॉफ देकर मिनीफार्मेसी स्थापित की जा सकती है ।

पर्यटन विभाग से सामन्जस्य कर पर्यटक आवासों में पंचकर्म चिकित्सा उपलब्ध कराई जाय । साथ ही जिन चिकित्सालयों में पंचकर्म चिकित्सा उपलब्ध हो उन्हें पर्यटक मानचित्र, साइन बोर्ड एवं वैबसाइट के माध्यम से ऑनलाईन किया जाय ।

जिला स्तर पर शल्य चिकित्सा, पंचकर्म चिकित्सा, बाल रोग, स्त्री रोग, काय चिकित्सा, विशेषज्ञ चिकित्सा उपलब्ध करवाई जाय तथा सभी जिलों एवं राजधानी में कम से कम 30 बेड के चिकित्सालय खोले जायें ।

चिकित्सा संवर्ग हेतु वरिष्ठ चिकित्साधिकारी, वरिष्ठ चिकित्सा अधीक्षक, मुख्य चिकित्सा अधीक्षक एवं जिला स्तर पर कार्यरत अधिकारी का नाम मुख्य चिकित्सा अधिकारी (आयुष) किया जाय ।

उपरोक्त पद नाम देने से शासन पर कोई भी वित्तीय भार नहीं पड़ेगा क्योंकि उत्तरांचल में अधिकारी उच्च वेतनमान में पहले से ही कार्यरत हैं तथा आयुष विभाग का ढाँचा भी उपरोक्त ही है ।

चिकित्सा अधिकारियों को औषधीय पौधों की जानकारी देने हेतु उच्च औषधीय पौधे से सम्बन्धित संस्थानों में प्रशिक्षण की व्यवस्था भी की जानी चाहिए । स्थानीय स्तर पर पाये जाने वाले औषधीय पौधों का उपयोग किया जा सके ।

आभार :-

1) यू०ए०एच०एस०डी०पी० उत्तरांचल, देहरादून ।
2) आयुष विभाग उत्तरांचल, देहरादून ।
3) निदेशक, आयुर्वेदिक सेवाएं उत्तरांचल देहरादून ।
4) सी०आर०आई० (आयु० चिरथूरूती केरला) ।
5) डॉ०के० सुदर्शन, सी०एम०ओ० जिला चिकित्सालय त्रिशूर केरला ।
6) डॉ०के०बाला सूत्रामाण्यम्, सी०आर०आई०, केरला ।
7) डॉ० वी०सी० दीप, रिसर्च ऑफिसर, सी०सी०आर० आई०, केरला ।

भवदीय

डा०जे०एन० नौटियाल
बी०ए०एम०एस० (लखनऊ), डी० योगा,
सी०आर०टी० पंचकर्मा (आयुष)
सी०आर०टी० पंचकर्मा (केरला),
चिकित्साधिकारी, राज्य आयुर्वेदिक सेवाएं, उत्तरांचल ।

## उत्तर प्रदेश

## बधाई स्वीकार करें

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०,
पटना-800 001

द्वारा,

(डा० राकेश मोहन शर्मा)
चिकित्साधिकारी/सचिव
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
वरई शाहपुर, हाथरस

उत्तर प्रदेश शासन द्वारा आयुर्वेद-यूनानी एवं होम्योपैथी सचिव पद पर प्रथम बार नियुक्ति होने पर मेरी तथा जनपद इकाई हाथरस की तरफ से श्री राजेन्द्र कुमार तिवारी, आई. ए.एस. को हार्दिक बधाई प्रेषित की है और आशा प्रकट की है कि आयुर्वेद उन्नति के पथ पर अग्रसर होगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आरोग्य समाचार
## अखबार की कतरनों से

### Heat maps for early detection of breast cancer

BREAST CANCER is one of the leading causes of cancer death in women. According to the International Agency for Research on Cancer. more than one million women suffer from this type of cancer and more than 0.4 million deaths have occurred because of this type of cancer (http:// www-dep.iarc.fr/.)

In India about 2.0 to 2.5 million patients suffer from cancer at any given time. According to the national Cancer registry program of ICMR (source : http://www.canceratlasin-dia.org) breast has replaced the cervix as the leading site of cancer in all urban population based cancer registries except Chennai.

Researchers have established that the key to breast cancer survival rests upon its earliest possible detection. If discovered in its earliest stages, 95 percent cure rates are possible.

Higher sensitivity

Hence, any diagnostic technique that shows promise of higher sensitivity and /or earlier risk factor assessment capability needs to be pressed into service, along with the other classical techniques, for the fight against this form of cancer.

Currently, the most widely used method for detection of breast cancer is mammography and self breast examination.

A well-researched imaging tool that has been used for the detection of breast cancer in the western world is Breast Thermography (BT).

Thermography, also called thermal imaging or infrared imaging, is an advanced non-in-vasive techniques based on mapping the temperature profiles on the surface of an object.

The technique is widely used in the industries as a predictive condition management tool.

Temperature as an indicator of human health is quite ancient and has been reported to have been practiced by Hippocrates himself.

Thermography as a medical imaging tool is based on the fact the body exhibits bilateral thermal symmetry.

Any local chages or problems manifest as anisothermia or inequality in temperature. Utilising sensitive infrared imaging cameras and appropriate image processing, the heat from the body can be detected, processed and recoreded as skin surface temperature image map.

This image can then be analysed by the medical practitioner to determine if abnormally hot or cold areas are present and relate it to possible disorders.

In general. it has been indicated that thermography is helpful in the diagnosis of arthritis. vascular disorders and soft tissue injuries. pain syndromes, nervous system disorders, metabolic disorders[ repetitive strain injuries, headaches neck and back problems.

In the application of IR imaging for breast cancer, it was the Canadian breast surgeon, Ray Lawson, working at the Royal Victoria Hospital Montreal in 1957, who used pictorial heat scanning medically.

He had demonstrated that certain concers of the breast exhibited a rise in the overlying skin temperature, and he argued that if one could scan the chest thermally one might be able to detect these cancers at an early stage.

Breast thermography has undergone extensive research since the late 1950s and in 1982, the U.S. FDA approved breast thermography (infrared imaging) as an adjunctive diagnostic breast cancer screening procedure.

In India, the Indira Gandhi Centre for Atomic Research (IGCAR) along with the Department of Atomic Energy Hospital at Kalpakkam has taken the lead in the application of thermal imaging for detecting breast lesions.

Lesions can be cancerous of non cancerous.

Through thermography one can differentiate between cancerous and non-cancerous lesions by quantitatively analysing the thermal image. Cancerous lesions in general exhibit higher temperature and have irregular edges.

Specific, Protocols have been developed for clinical thermal imaging. Extensive experiments were conducted preliminarily to study the effect of

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



skin texture, skin colour on emissivity, a parameter that effects temperature measurement.

More than 15 patients had been subjected to thermal imaging of which six were for breast lesions.

### Analysed in detail

The resulting thermal images were analysed in detail. The results obtained from thermography correlated well with the established imaging modalities and confirmed by fine needle aspiration cytology.

Findings from thermal images compared well with the images obtained through complementary imaging modalities confirming the sensitivity and capability of the technique for detecting breast lesions.

It should be highlighted here that though this technique is being practiced abroad both in Europe and the United state it is yet to find its acceptance in the Indian medical community. Internationally. since the late 1970s, numerous medical centres and independent clinics have used thermography for a variety of diagnostic purposes.

### Continued advances

Reviews conducted by various researchers using a large database of patients have shown that thermography has an average sensitivity and specificity of 90 percent.

With continued technoligical advances in infrared imaging in the past decade, some studies are showing even higher sensitivity and specificity values.

### Additional advantage

Breast thermography has an additional advantage of being a non-invasive, non-contact technique. It also does not require any radiological dosage.

A more systematic investigation is needed on the efficacy of use of BT in breast disease detection jointly by the medical and research community in the Indian context.

This technique will have a tremendous advantage in screening breast cancer and detecting it in the initial stages.

*(Baldev Raj is Director, IGCAR; Dr. M. Jayashree in the Radiologist at DAE Hospital Kalpakkam; and B. Venkatraman is the Head, Quality Assurance Division, IGCAR)*

*(With Courtesy from the Hindu)*

## पान के पत्ते से कैंसर का इलाज

आम धारणा यह है कि पान खाने से मुंह का कैंसर होने की आशंका रहती है लेकिन अब वैज्ञानिकों ने उसी पान में ऐसा कंपाउंड खोज निकाला है, जो रक्त के कैंसर का उपचार कर सकता है ।

वैज्ञानिकों ने पान के पत्ते में एंटी ल्यूकेमिक कंपाउंड का आविष्कार किया है, जो श्वेत रक्त कणिकाओं पर चोट करने वाले क्रोनिक मायलायड ल्यूकेमिया को मार डालता है । इस प्रकार का कैंसर श्वेत रक्त कणों को मारता है । पान के पत्ते से निकले इस कंपाउंड की संरचना बिल्कुल क्लोरोजेनिक एसिड जैसी होती है जो कैंसर पैदा करने वाली कोशिकाओं को मारती है ।

(हिन्दुस्तान से साभार)

## दिल की बीमारी के लिए मां ज्यादा जिम्मेदार

अभी तक यह माना जाता था कि परिवार में दिल की बीमारी का इतिहास होने पर भावी पीढ़ियों के इसकी चपेट में आने की आशंका ज्यादा होती थी । लेकिन नए शोधों से यह बात सामने आई है कि दिल की बीमारी पिता की बजाय मां से विरासत में मिलने का अंदेशा ज्यादा होता है ।

अमेरिकन जर्नल आफ प्रिवेंटिव मेडिसिन के जून अंक में प्रकाशित होने वाली शोध रिपोर्ट में खुलाया किया गया है कि पिता के बजाय हृदय रोग मां के बच्चों में जाने का खतरा ज्यादा होता है । यदि माता और पिता दोनों दिल के मरीज हैं तो यह खतरा कई गुना बढ़ जाता है । रिपोर्ट के कुछ अंश पिछले दिनों अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन द्वारा न्यूयार्क में आयोजित एक मीडिया ब्रीफिंग में पेश किए गए । अभी हालांकि इस रहस्य से पर्दा नहीं उठ पाया है कि दिल की बीमारी के लिए पिता के बजाय मां ज्यादा जिम्मेदार क्यों होती है ।

स्टाकहोम में कारोलिंस्का इंस्टीट्यूट के सेन्टर



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कार फैमिली मेडिसीन विभाग में सहायक शोधकर्त्ता क्रिस्टीना सेंक्वीस्ट (एमडी पीएचडी) इस संबंध में कहना है कि जनिटिक फैक्टर की इसमें महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। उनके अनुसार एक और संभावना यह भी हो सकती है कि बच्चे अपनी माताओं के साथ अधिक समय बिताते हैं उनके मां को खान-पान की गलत आदतें ग्रहण करने की आशंका ज्यादा होती है।

सेंक्वीस्ट इस बारे में कहती है अगर हृदय रोगी मां धूम्रपान करती है उसकी शारीरिक गतिविधियां कम रहती हैं और यदि उसका खानपान पौष्टिक नहीं है तो यह व्यवहार उनके बच्चों को प्रभावित कर सकता है और उनके हृदय रोग की चपेट में आने का खतरा बढ़ जाता है।

इस शोध में आगे कहा गया है कि यदि पिता दिल का मरीज है तो बेटे के इस बीमारी की चपेट में आने की आशंका 41 फीसदी होती है और यदि मां इस बीमारी की शिकार है तो यह खतरा 55 फीसद हो जाता है। इसके विपरीत बेटी के मामले में यह प्रतिशत क्रमशः 17 और 43 फीसद का रहता है।

एमडी मेडिकल न्यूज की वेबसाइट पर सोमवार को जारी रिपोर्ट के अंशों के अनुसार ऐसे बच्चे जिनके माता-पिता दोनों हृदय रोग से ग्रस्त हैं उनके मामले में खतरा घन हो जाता है और अंदेशा 82 फीसदी तक पहुंच जाता है।

इतना ही नहीं ऐसे बच्चों के लिए खतरे की घंटी ज्यादा जोर से बजती है जिनके मां-बाप 55 साल की उम्र से पहले ही दिल की बीमारी के शिकार हो जाते हैं। रिपोर्ट कहती है कि ऐसे मामलों में खतरे का आंकड़ा 300 फीसद हो जाता है।

सेंक्वीस्ट कहती हैं - जाहिर-सी बात है कि ऐसे बच्चों पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है जिनके मां-बाप में से किसी को दिल की बीमारी रही हो।

इन नतीजे पर पहुंचने के लिए सेंक्वीस्ट और उनके सहयोगियों ने स्वीडन के विभिन्न इलाकों के ऐसे लोगों पर शोध किया जो 1932 पुरुषों और 3281 महिलाओं को शामिल किया गया जिनके माता या पिता को दिल की बीमारी थी। इसके बाद इनकी तुलना ऐसे हृदय रोगियों से की गई जिनके माता पिता दिल के मरीज नहीं थे।

इस नए शोध को उत्साहजनक बताते हुए रोसेस्टर के माया क्लीनिक में वीमेंस हार्ट क्लीनिक की निदेशक शैरोन एन हेज ने कहा कि यह रिपोर्ट इस बात के महत्व को रेखांकित करती है कि दिल की बीमारी के लिए परिवार का इतिहास जानना जरूरी है।

(जनसत्ता से साभार)

बैद्यनाथ
अश्वगंधारिष्ट
मूर्च्छा, भय, घबराहट, अनिद्रा,
मंदाग्नि आदि में लाभकारी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

## Bihar

## IPGA demands Biotech Park in Bihar

WITH a view to encourage pharmaceutical industry in the state, Indian Pharmacy Graduates' Association (IPGA) demanded immediate setting up of separate Pharmaceutical Industrial Area and Biotech Park, strengthening of Government Testing Laboratory and extension of purchase preference to local drug manufacturing units.

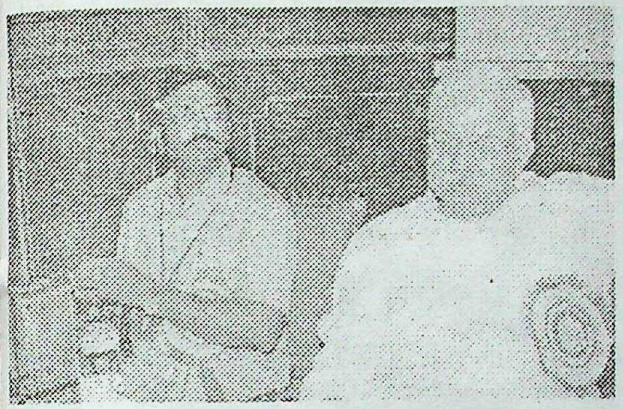

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, पटना के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा (दायें) औषधि-निर्माता, श्री नन्द किशोर प्रसाद के साथ परिलक्षित हैं ।

Speaking at Pharmatech Seminar-2006, organised by IPGA at Bihar Chamber of Commerce, Sripati Singh, General Secretary said despite the phenomenal growth witnessed in the pharmaceutical sector, second only to the IT sector, Bihar produces drugs worth Rs. 100 crore only against an estimated consumption of Rs. 800 crore.

Even the number of drug manufacturing units is pegged at 250 which is quite dismal compared to over 9,000 units engaged in the production of medicines worth Rs. 40,000 crore in the country.

In such a lopsided situation, a concerted effort was required to give a boost to the fledgling pharmaceutical sector, invite fresh investments and also tone up pharmacy education with a view to create a pool of technical manpower, he said.

In his inaugural address PP Sharma, National President of IPGA, stressed on the need to introduce changes in the production process, by following Good Manufacturing Practices and Good Pharmacy Practices, to ensure that quality medicine, as per their standardization, are produced. This, coupled with good distribution and storage practices, would help in safeguarding the efficacy of the drugs, he added.

The state drug controller and vice president of IPGA, YK Jaiswal in his welcome address said the Indian Pharmaceutical Association and Indian Drug Manufacturer's Association should submit a proposal for the declaration of Bihar as a Special Economic Zone to the state government so that it may be able to take up the matter with the Centre.

Shri Pramod Sharma, Director of Baidyanath Ayurved Bhawan, the only local company to have a national presence, also said that removal fo central excise duty was necessary for the growth of pharmaceutical industry in Bihar.

AK Nasa, National General Secretary, IPGA, Dr. Sanjay Singh and DCP Singh also addressed over 300 delegates drawn from different parts of the state.

### *THE NEW OFFICE BEARER OF I.P.G.A., BIHAR*

The Annual General Body Meeting of the Indian Pharmacy Graduates' Association, Bihar State Branch was held on 12th March' 06 at The Bihar Chambers of Commerce, Patna under the presidentship of Sri P.P. Sharma, The National president of the association.

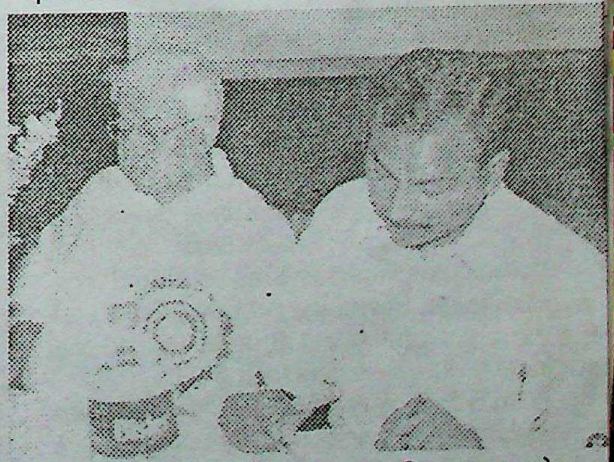

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, पटना के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा (बायें) चिन्तन की मुद्रा में परिलक्षित हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



The election of the office bearers for the

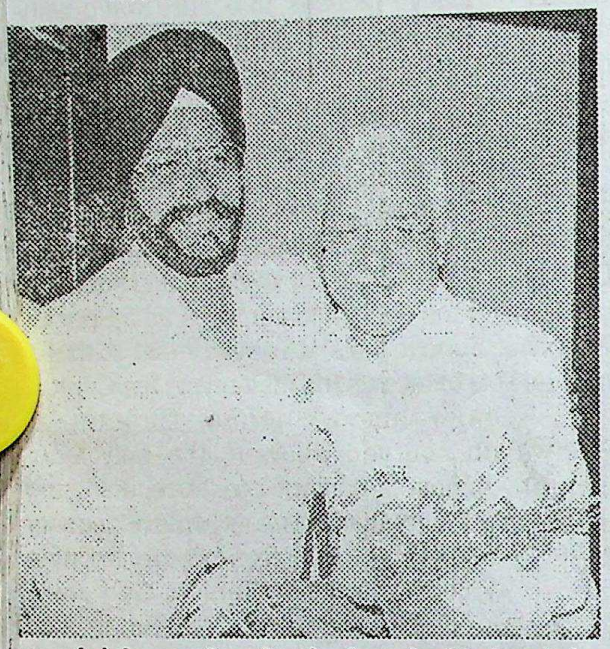

भूतपूर्व क्षेत्रीय अनुज्ञप्ति अधिकारी, श्री जगजीत सिंह 'भवन' के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा का स्वागत फूल-माला से कर रहे हैं ।

next term i.e. 2006-2008 was held. Sri A.K. Nasa, he Gen. Secretary, Central Executive Committee vas the returning officer for the elections.

The election for all the posts was nanimous. The newly elected office bearers are s follows :

| | | |
|---|---|---|
| PRESIDENT | : | Y. K. Jaiswal. |
| VICE PRESIDENT | : | Ch. V. Subba Rao |
| GEN. SECRETARY | : | S.P. Singh |
| JT. SECRETARY | : | S.K. Singh Shastradhar. |
| TREASURER | : | Hemant Kumar |
| MEMBERS | : | N.K. Prasad |
| | | Madhusudan Kumar |
| | | Satish Kumar Singh |
| | | Sunil Kumar Sinha |
| | | Ranjit Kumar |

The immediate past president Sri Sangit umar Sinha, Jt. Secretary, Sri D.K. Trivedi and reasurer Sri Ghanshyam Bhagat will be the ermanent invitee members for the E.C.

Sri S.P. Singh and Sri N.K. Prasad were ominated as the nominee from the State Branch or the Central Executive Committee.

Besides other things, it was resolved that the Bank Accounts will be operated by any two of the newly elected president/Gen Secretary/ Treasurer.

After the elections, the HOLI MILAN SAMAROH was held. Guests enjoyed the samaroh with THANDHAI and RANG-GULAL with large number of members who attended the meeting.

The meeting concluded with vote of thanks delivered by Sri N.K. Prasad.

## अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन शताब्दी वर्ष समारोह के क्रम द्वितीय कार्यक्रम पटना में धूमधाम से सम्पन्न

इन दिनों अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का शताब्दी वर्ष समारोह देश के विभिन्न हिस्सों में धूमधाम से मनाया जा रहा है । इसी समारोह के क्रम में 27 अप्रैल, 2006 को बिहार की राजधानी, पटना स्थित भारतीय नृत्य कला मन्दिर के विशाल सभाकक्ष में द्वितीय कार्यक्रम धन्वन्तरि वन्दना के साथ प्रारम्भ हुआ । कार्यक्रम संचालन के गुरूतर भार का निर्वाह प्रख्यात् आयुर्वेदज्ञ एवं निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ के अध्यक्ष, वैद्य श्री शिव कुमार मिश्र ने किया । अपनी ओजस्वी वाणी एवं कार्यक्रम-संचालन-दक्षता के कारण वे समारोह में छाये रहे । धन्वन्तरि-वन्दन के पश्चात् मंच पर उपस्थित गणमान्य व्यक्तियों ने दीप-प्रज्जवलन के द्वारा समारोह का श्रीगणेश किया । राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय पटना के छात्राओं ने डा० पूनम एवं डा० नीतू के नेतृत्व में स्वागत-गान किया । श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना के प्रबन्ध निदेशक, पं० श्री बनवारी लाल शर्मा की ओर से श्री विमल चन्द्र झा ने पाटलिपुत्र की पावन भूमि पर पधारे भारतवर्ष के विभिन्न दिशाओं से आये हुए अतिथियों का स्वागत निम्नलिखित शब्दों में किया - आज हम अत्यन्त आह्यलादित हैं कि प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन, बिहार एवं प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मेलन झारखण्ड के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित अखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन, नई दिल्ली के निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ, नई दिल्ली के



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



संयुक्ताधिवेशन एवं ज्ञान कल्याण दातव्य न्यास के अलंकरण समारोह के पावन अवसर पर पधारे विशिष्ट अतिथियों एवं विद्वान् प्रतिनिधियों का सादर स्वागत करने का हमें सौभाग्य प्राप्त हुआ है ।

हम कृतज्ञ हैं डा० मुरली मनोहर जोशी के

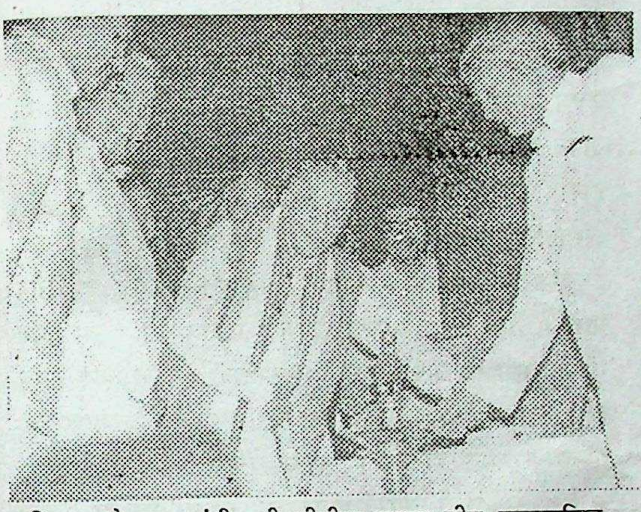

बिहार के मुख्यमंत्री, श्री नीतीश कुमार दीप-प्रज्जवलित करते हुए दिखायी दे रहे हैं । सामने भारत के भूतपूर्व मानव संसाधन मंत्री, डा० मुरली मनोहर जोशी प्रसन्नचित मुद्रा में दृष्टिगोचर हो रहे हैं ।

जिन्होंने अपना बहुमूल्य समय यहां आने में दिया है । हम कृतज्ञ हैं माननीय मुख्यमंत्री श्री नीतीश कुमार के, जिनके कुशल नेतृत्व में बिहार आगे बढ़ने के लिए कृत संकल्प है । हम आभारी हैं माननीय श्री सुशील कुमार मोदी के, जो उप मुख्यमंत्री के गुरूतर पद का निर्वाह कर रहे हैं । हम आभारी हैं माननीय श्री चन्द्रमोहन राय के जो बिहार सरकार में स्वास्थ्य चिकित्सा शिक्षा एवं परिवार कल्याण विभाग को संभाल रहे हैं । हम आभारी हैं पद्मश्री श्री देवेन्द्र त्रिगुणा जी के भी जो योग्य पिता के योग्य पुत्र हैं एवं जिन्होंने अपनी अल्प आयु में ही काफी यश अर्जित किया है । हम आभारी हैं डाबर के माननीय निदेशक, श्री नितिन घिरियार गतिशील अध्यक्ष, वैद्य अलख नारायण सिंह, वैद्य राम गोपाल मिश्र, वैद्य हरिहर प्रसाद पाण्डेय एवं बिहार, झारखण्ड राज्य के कोने-कोने से आये सैकड़ों प्रतिनिधि-विद्वानों के भी जिन्होंने इस सम्मेलन में शामिल होने की कृपा की है

आज बिहार एवं झारखण्ड राज्य संकट के दौर से गुजर रहा है । बिहार राज्य की स्थिति तो अत्यन्त दयनीय है । प्राध्यापकों को समय पर वेतन नहीं मिलते हैं आयुर्वेदिक महाविद्यालयों के भवन अत्यन्त जर्जर अवस्था में हैं । कई महाविद्यालयों को तो अपना भवन भी नहीं है अस्पतालों में शैय्या एवं औषधि का अभाव है । सर्वत्र लालफीताशाही है । एक तो बिहार राज्य में उद्योगों का अभाव है और जो है भी उनकी स्थिति भी खराब है सरकारी नीति भी इनके लिए जिम्मेवार है । आश्चर्य है कि आयुर्वेदिक औषधि निर्माताओं के साथ व्यवहार शराब उद्यमियों की तरह किया जा रहा है । इस संबंध में विस्तार से सम्बन्धित वक्ता आप लोगों का ध्यान आकृष्ट करेंगे एवं पीड़ित उद्यमी स्मृति-पत्र भी देंगे ।

आज सम्पूर्ण विश्व में औषधीय पादपों की (मेडिसिनल प्लान्ट्स) की जबरदस्त मांग है । चीन हमसे पचास गुना ज्यादा वनौषधियों का निर्यात कर रहा है । भारत सरकार का ध्यान इस ओर गया है । देश के सभी राज्यों में 'मेडिसिनल प्लान्ट्स' बोर्ड की स्थापना हो चुकी है बिहार में भी स्थापना हुई हैं । किन्तु कागज पर गठित बोर्ड में विशेषज्ञों का अभाव है । इस समय सम्पूर्ण देश में गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जामनगर में मेडिसिनल प्लान्ट्स की पढ़ाई वैज्ञानिक ढंग से कर रहा है । सरकार को चाहिए कि इस बोर्ड में जामनगर के स्नातकों को नियुक्त करे सरकार द्रव्यगुण विभाग वालों की नियुक्ति भी इस बोर्ड में कर सकती है । बिना विशेषज्ञों की नियुक्ति के बोर्ड कागजी रह जायगा ।

जहां तक आयुर्वेद अध्ययन-अध्यापन का प्रश्न है, उसकी स्थिति भी दयनीय है ।

इस वर्ष अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का शताब्दी वर्ष मनाया जा रहा है । इसके अध्यक्ष वैद्य त्रिगुणाजी हैं । वे युवा हैं एवं कर्मठ हैं । उनसे हमें काफी अपेक्षाएँ हैं । हम आशा करते हैं कि वे सम्मेलन को सशक्त एवं प्रभावशाली बनायेंगे और आयुर्वेद का प्रचार न केवल देश में, बल्कि विदेश में भी करने में सफल होंगे



CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जहां-जहां संगठन की स्थिति दयनीय है । वहाँ वे निजी दलचस्पी लेकर मजबूत बनायेंगे ।

इन्हीं आशा और विश्वास के साथ हम एक बार न: प्रेस सहित सभी विद्वानों को हार्दिक धन्यवाद देते हैं ।

सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे भवन्तु निरामय:

जय भगवान धन्वन्तरि ।

डाबर इण्डिया के निदेशक, श्री नितिन बड़ियार ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि आयुर्वेद भारतवर्ष की प्राचीन चिकित्सा पद्धति है । इसके पश्चात् महासम्मेलन के अध्यक्ष, वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा ने बिहार के मुख्यमंत्री, श्री नीतीश का श्रीफल, शाल एवं स्मृति चिन्ह से स्वागत किया । इसी क्रम में भारत सरकार के भूतपूर्व मानव संसाधन मंत्री, डा० मुरली मनोहर जोशी का विद्यापीठ के अध्यक्ष, वैद्य श्री शिव कुमार मिश्र, बिहार सरकार के उप मुख्यमंत्री, श्री सुशील कुमार मोदी का बिहार प्रान्तीय आयुर्वेद सम्मेलन के वैद्य श्री अलख नारायण सिंह, भारत सरकार के भूतपूर्व स्वास्थ्य मंत्री, डा०सी.पी. ठाकुर का महासम्मेलन के प्रधान मंत्री, वैद्य श्री राम प्रसाद मिश्र, बिहार सरकार के स्वास्थ्य मंत्री, श्री चन्द्र मोहन राय का विद्यापीठ मंत्री, श्री देवेन्द्रनाथ त्यागी, वैद्य देवेन्द्र त्रिगुणा का बिहार के मुख्यमंत्री, श्री नीतीश कुमार, वैद्य राम प्रसाद मिश्र का डा० मुरली मनोहर जोशी, बिहार सरकार की कैबकारी मंत्री, श्रीमती सुधा श्रीवास्तव का श्री हरिद्वार राय दुबे, विद्यापीठ मंत्री का श्री सुशील कुमार मोदी, वैद्य अलख नारायण सिंह का श्री चन्द्रमोहन राय , श्री सतीश शर्मा का श्रीमती सुधा श्रीवास्तव ने शाल, श्रीफल एवं स्मृति चिन्ह से स्वागत किया ।

महासम्मेलन के अध्यक्ष, वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा ने कहा कि बिहार 15-20 वर्षों से आयुर्वेद शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ रहा है । राज्य में सम्प्रति 5 राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय एवं 6 निजी आयुर्वेद महाविद्यालय कार्यरत हैं । अस्पतालों में दवाओं एवं शय्याओं की कमी रहती है । बिहार सरकार निजी आयुर्वेद महाविद्यालयों को मान्यता नहीं दे रही है । छात्रों एवं आयुर्वेद के भविष्य को ध्यान में रखकर अविलम्ब मान्यता प्रदान करनी चाहिए ।

बिहार में बड़े-बड़े विद्वान हुए हैं । आयुर्वेद, जैन तथा महात्मा बुद्ध की ऐतिहासिक धरोहर को एक-साथ जोड़कर पर्यटन की दृष्टि से भी आगे बढ़ाया जाना चाहिए । इससे आयुर्वेद को लाभ होगा तथा प्रदेश सरकार को भी धन की प्राप्ति होगी ।

आपने बताया कि बिहार में आयुर्वेद का कोई उत्तम अस्पताल नहीं है जिसके कारण बिहार में लोगों को अपने इलाज के लिए दिल्ली में जाना पड़ता है । अत: हमारी मांग है कि पटना में आयुर्वेद का एक बड़ा अनुसंधान अस्पताल बनाया जाये । बिहार में आयुर्वेद विकास हेतु एक उच्चस्तरीय आयुर्वेद सलाहकार समिति बने जो हर तीन मास में मिले तथा अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करे । इस कार्य में महासम्मेलन अपना पूरा-पूरा सहयोग देने के लिए तैयार है । आपने आशा व्यक्त की कि मुख्यमंत्री आयुर्वेद को गौरवपूर्ण स्थान दिलाने में सक्षम होंगे ।

शताब्दी वर्ष समारोह के अवसर पर ही "ज्ञान कल्याण दातव्य न्यास, दिल्ली" की ओर से आयुर्वेद एवं संस्कृत में उत्कृष्ट सेवाओं के लिए विद्वानों को सम्मानित किया गया । ट्रस्ट के संयोजक तथा भारत सरकार के पूर्व मानव संसाधन विकास मंत्री माननीय डा० मुरली मनोहर जोशी जी ने ट्रस्ट की स्थापना तथा उसकी गतिविधियों को विस्तृत जानकारी प्रदान करते हुए कहा कि उनकी पूज्य माता जी संस्कृत भाषा की विदूषी थीं, उनके मामा जी अपने जमाने के दिल्ली के प्रख्यात वैद्य थे तथा उन्होंने आयुर्वेद तथा संस्कृत की वृद्धि हेतु अपने जीवन की सारी सम्पत्ति ट्रस्ट के नाम कर दी थी । ट्रस्ट द्वारा आयुर्वेद एवं संस्कृत के अतिरिक्त शिक्षण संस्थाओं, छात्रों तथा विधवा महिलाओं को भी सहायता प्रदान की जाती है । लेकिन इसका मुख्य उद्देश्य आयुर्वेद तथा संस्कृत का प्रसार करना ही है । इस वर्ष के लिये आयुर्वेद के क्षेत्र में उत्तम कार्य के लिये जबलपुर के प्रसिद्ध आयुर्वेद चिकित्सक एवं निखिल भारतवर्जीय आयुर्वेद विद्यापीठ के पूर्व अध्यक्ष वैद्य श्री महेश दत्त शर्मा एवं संस्कृत के सुप्रसिद्ध विद्वान् डा०



CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



गौतम चाडीवाल पटेल, अहमदाबाद को ज्ञान कल्याण दातव्य न्यास की ओर से माननीय श्री नीतीश कुमार जी, मुख्यमंत्री ने शाल, श्रीफल एवं प्रशस्ति पत्र के साथ प्रत्येक को 40 हजार रुपये की पुरस्कार राशि प्रदान की ।

आपने खेद प्रकट करते हुए कहा कि आयुर्वेद का कोई मौलिक शोध पत्र उन्हें प्राप्त नहीं होता है जिससे कि उनके दूसरे मामा वैद्य भुवनचन्द्र जोशी जी की स्मृति में दी जाने वाली पुरस्कार राशि का इस वर्ष वितरण नहीं हो सका ।

आपने आयुर्वेद की विशेषता को बताते हुए कहा कि आयुर्वेद के मौलिक सिद्धान्त आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने बहुत समय पहले हुआ करते थे । आपने आह्वान किया कि दवा कम्पनियाँ केवल दवाओं पर शोध करती हैं उन्हें रोगों पर भी आयुर्वेद की दृष्टि से शोध करना चाहिए । आपने बताया कि विदेशों में हमारी परम्परागत वस्तुओं पर गहन अध्ययन हो रहा है । इसीलिए गोमूत्र को पेटेण्ट कराया जा रहा है । गाय के उत्पादनों से बेबी फूड तैयार किया जा रहा है इससे आपका फायदा भी होगा तथा गाय को भी महत्व मिलेगा ।

हमें आयुर्वेद और उसके प्राचीन सिद्धांतों पर विचार करना चाहिए । आयुर्वेद के समक्ष बड़ी चुनौतियाँ हैं । आयुर्वेद के सिद्धान्तों के आधार पर दवाओं को प्रतिष्ठित करें जिससे विश्व में उन्हें प्रयुक्त किया जा सके । एलोपैथी के दृष्टिकोण से आयुर्वेद का मानकीकरण उचित नहीं है ।

डा०सी०पी० ठाकुर, पूर्व स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री, भारत सरकार ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि आयुर्वेद शल्य के क्षेत्र में बहुत आगे हुआ करता था । इसके अनेकों उदाहरण मिलते हैं । आयुर्वेद के माध्यम से बिहार की आर्थिक तरक्की हो सकती है । अतः आयुर्वेद दवाओं के निर्यात में बिहार का भी भाग होना चाहिए ।

बिहार सरकार की आबकारी मंत्री माननीया श्रीमती सुधा श्रीवास्तव ने कहा कि देश में स्वास्थ्य की बड़ी समस्या है । हमारा देश हर प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों से भरा पड़ा है । यदि हम सही ढंग से काम करें तो उचित लाभ मिल सकता है । देश में हर पौधा तथा फूल दवाओं से युक्त है । यदि उन्हें दवा के रूप में शामिल किया जाय तो देशवासियों का स्वास्थ्य उन्नत तथा राष्ट्र शक्तिशाली बन सकेगा ।

इस अवसर पर स्मारिका का विमोचन माननीय श्री नीतीश कुमार जी द्वारा सम्पन्न हुआ । शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में बिहार एवं झारखण्ड राज्य के नीचे लिखे विद्वानों को आयुर्वेद के क्षेत्र में उत्तम कार्य करने के लिए सम्मानित किया गया -

1. वैद्य श्री नागेश द्विवेदी, पटना
2. वैद्य श्री नित्यगोपाल बन्धोपाध्याय
3. वैद्या श्रीमती उमा सिन्हा
4. वैद्य श्री कृष्ण कुमार त्रिपाठी
5. वैद्य श्री सुधाकर शर्मा
6. वैद्य श्री जयप्रकाश नारायण
7. वैद्य श्री चन्द्रमोहन मिश्र
8. वैद्य श्री सतीश कुमार
9. वैद्य श्री गंगाधर मिश्र
10. वैद्य इन्द्रमोहन झा, रांटी, मधुबनी
11. वैद्य श्री हरिहर पाण्डेय, रांची
12. वैद्य श्री अनिरूद्ध मिश्र

इस अवसर पर बिहार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री, श्री चन्द्रमोहन राय ने कहा कि आयुर्वेद के महत्व को सम्पूर्ण विश्व स्वीकार कर रहा है । उन्होंने आश्वासन दिया कि सरकार राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय पटना को शोध संस्थान के रूप में प्रोन्नत करेगी एवं अन्य महाविद्यालयों के लिए भी दिशा-निर्देश जारी करेगी ।

बिहार के उपमुख्यमंत्री श्री सुशील कुमार मोदी ने बताया कि उन्हें आशा नहीं थी कि भारी उपस्थिति होगी । पटना के वे 15 वर्षों तक विधायक रहे, किन्तु वे एक भी प्रसिद्ध वैद्य का नाम नहीं जानते हैं । यह दुखद स्थिति है ।

बिहार के मुख्यमंत्री, श्री नीतीश कुमार ने बताया



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कि वे वैद्य परिवार से आते हैं । उनके पिताजी पुड़िया

समारोह के मंच का एक परिदृश्य । दायें से सम्मेलनाध्यक्ष, वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा, बिहार के उपमुख्यमंत्री, श्री सुशील कुमार मोदी, बिहार के स्वास्थ्य मंत्री, श्री चन्द्र मोहन राय दिखायी पड़े हैं । पीछे श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना के कारखाना प्रबन्धक, डा० एल.के. चौधरी खड़े हैं ।

बांधते थे । वे इस कार्य में पिताजी की सहायता करते थे । उन्होंने विश्वास के साथ कहा कि आज भी वे दवाओं की ऐसी पुड़िया बांध देंगे कि चूर्ण गिरेगा नहीं । आज आयुर्वेद का एक बार फिर दौर आ गया है । पश्चिमी जगत् में इसकी प्रतिष्ठा बढ़ी है । आज अनुसंधान पर ध्यान देने की आवश्यकता है । उन्होंने खेद प्रकट किया कि वैद्य क्यों डाक्टर लिखते हैं । उन्होंने मुख्यमंत्री आवास में औषधीय पादपों के कृषिकरण करने का आश्वासन दिया ।

इसके पूर्व प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन, बिहार के अध्यक्ष, वैद्य श्री अलख नारायण सिंह ने आठ-सूत्री मांग-पत्र सम्मेलन के समक्ष रखा । वे इस प्रकार हैं :-

1. वर्तमान में बिहार में 5 सरकारी तथा 6 प्राइवेट आयुर्वेद कॉलेज चल रहे हैं लेकिन कोई भी कॉलेज भारतीय चिकित्सा परिषद् के मापदण्डों के अनुरूप भवन, शिक्षक, प्रयोगशाला, पुस्तकालय, आतुरालय, वनौषधि उद्यान की व्यवस्था नहीं कर पा रहा है जिससे इन महाविद्यालयों से निकले हुए स्नातकों का स्तर दिनानुदिन निम्न होना अस्वाभाविक नहीं है ।

अतः हम माननीय मुख्यमंत्री जी से मांग करते हैं कि प्रदेश में आयुर्वेद की शिक्षा के स्तर में सुधार के लिए आवश्यक कदम शीघ्रातिशीघ्र उठाने तथा भारतीय चिकित्सा परिषद् के मापदण्डों के अनुरूप सरकारी एवं गैर सरकारी महाविद्यालयों का स्तरीकरण किया जाय जिससे प्रदेश की प्रतिष्ठा, मान, मर्यादा में बढ़ोतरी के साथ-साथ आयुर्वेद के क्षेत्र में योग्य एवं कुशल चिकित्सकों का सृजन किया जा सके ।

2. सरकारी आयुर्वेद महाविद्यालयों में प्रवेश हेतु संयुक्त प्रतियोगिता परीक्षा का प्रावधान प्रदेश में है । आयुर्वेद अध्ययन के लिए चयन हुये छात्र दूसरे वर्ष आधुनिक महाविद्यालयों में चयनित होकर आयुर्वेद छोड़ देते हैं जिससे सरकारी आयुर्वेद कॉलेजों में स्थान रिक्त रह जाता है ।

अतः माननीय मुख्यमंत्री जी से इस मंच के माध्यम से प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन यह मांग करता है कि आयुर्वेद की प्रतियोगिता प्रवेश परीक्षा स्वतंत्र रूप से कराई जाय

प्रख्यात् आयुर्वेदज्ञ एवं राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, पटना के भूतपूर्व प्राचार्य, डा० श्री नित्यगोपाल बन्दोपाध्याय का सम्मान करते हुए परिलक्षित हैं - बिहार के मुख्यमंत्री, श्री नीतीश कुमार एवं बगल में खड़े हैं, भारत के भूतपूर्व मानव संसाधन मंत्री, डा० श्री मुरली मनोहर जोशी ।

जिससे अनिश्चित विद्यार्थियों का प्रवेश न हो तथा शिक्षा के स्तर में वृद्धि हो सके इससे सरकारी आयुर्वेद महाविद्यालयों में अध्ययन के लिये सीट खाली न होगी ।

3. भारत के सभी प्रदेशों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर एक-एक आयुर्वेद के चिकित्सकों की व्यवस्था है, आयुर्वेद के चिकित्सालयों एवं औषधालयों की संख्या



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तथा व्यवस्था आधुनिक चिकित्सालयों की तरह ही

**बिहार के उपमुख्य मंत्री, श्री सुशील कुमार मोदी के साथ विचार विमर्श करते हुए परिलक्षित हैं - श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना का कारखाना प्रबन्धक डा०एल.के. चौधरी ।**

है । आयुर्वेद में प्रोन्नतियां एवं नियुक्तियां और स्थानान्तरण भी आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के औषधालयों एवं चिकित्सालयों के तर्ज पर किया जाय जिससे विद्यार्थियों का ध्यान आयुर्वेद की तरफ भी उसी तरह बढ़े जैसे आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में है । इससे प्रदेश की गरीब जनता को सस्ता स्वास्थ्य लाभ तो होगा ही साथ ही बिहार भी अन्य प्रदेशों के साथ बराबर सिर उठाकर चलने का सामर्थ्य प्राप्त करेगा ।

4. केन्द्रीय सरकार ने विगत वेतन आयोग की स्वीकृति के पश्चात् सभी क्षेत्र के चिकित्सकों का वेतनमान तथा प्रोन्नतियां समान कर दी है । बिहार में भी यह व्यवस्था लागू की जाय।
5. औषधि उद्योग के नियंत्रण हेतु तथा औषधि कानून को पूर्णत: लागू करने के लिए आयुर्वेद औषधि नियंत्रक एवं निरीक्षकों के पदों का सृजन किया जाना चाहिए तथा उनपर आयुर्वेद के ही स्नातकों की नियुक्ति की जानी चाहिए जिससे आयुर्वेदीय औषधियों का स्तर प्रदेश में उच्च आदर्शों को छूता रहे । आयुर्वेद के स्वतंत्र मंत्रालय की स्थापना की जाय जिससे इसका चहुँमुखी विकास हो सके ।
6. गुजरात तथा राजस्थान की तरह ही बिहार में भी आयुर्वेद का विश्वविद्यालय स्थापित किया जाय जिससे पाटलिपुत्र की गरिमा पुन: वापस लाई जा सके तथा नालन्दा एवं विक्रमशिला विश्वविद्यालयों की गरिमा एक बार पुन: जागृत कर बिहार को विश्व का आयुर्वेद केन्द्र बनाया जा सके ।
7. राज्य में आयुर्वेद के क्षेत्र में अनुसंधान परिकल्पित है इसके लिए राजकीय आयुर्वेद एवं यूनानी अनुसंधान इकाई स्थापित है । यह अनुसंधान प्रमुख इकाई राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय अस्पताल के एक कमरे में सरकारी उपेक्षा एवं भेदभाव को सहते हुए विकास एवं विस्तार की राह देख रहा है । अनुसंधान पदाधिकारी के लिए पद सृजित है, योग्यता निर्धारित है । परन्तु पर्याप्त मूलभूत संरचना के अभाव में अनुसंधान कार्य सतह पर दिखाई नहीं पड़ रहा है । इस इकाई को सक्रिय बनाया जाय ।
8. मुख्यमंत्रीजी से अन्त में मैं आग्रह करना चाहता हूँ कि आयुर्वेद चिकित्सकों की एकमात्र प्रतिनिधि महासम्मेलन के इस शताब्दी समारोह में पाटलिपुत्र की इस धरा पर इसके एक भवन हेतु जमीन देने की घोषणा कर आज इस सभा में उपस्थित विद्वान वैद्य समूह को कृतार्थ करने की कृपा करें जिससे प्रान्त में आयुर्वेद की गतिविधियाँ सम्यक् रूप से भविष्य में संचालित की जा सके ।

अन्त में समारोह का समापन प्रान्तीय बिहार प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन के प्रधानमंत्री, वैद्य श्री राम गोपाल मिश्र के धन्यवाद-ज्ञापन से हुआ ।

## मध्य प्रदेश

### पंचकर्म कार्यशाला, सेमिनार एवं सम्मेलन का अभिनव आयोजन सम्पन्न ।

उज्जैन, नेशनल एकेडमी ऑफ पंचकर्म एण्ड रिसर्च (नापार) की स्टेट कौंसिल मध्यप्रदेश द्वारा उज्जैन सप्त दिवसीय कार्यशाला (9 से 15 अप्रैल) तथा 1 अप्रैल 2006 को एक दिवसीय पंचकर्म संगोष्ठी



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सम्मेलन का अभिनव आयोजन आर्य समाज भवन में सम्पन्न हुआ ।

उक्त जानकारी देते हुए कार्यक्रम समन्वयक वैद्य मणिन्द्र कुमार व्यास एवं नापार के राष्ट्रीय महामंत्री वैद्य विनोद वैरागी ने बताया कि 9 अप्रैल को राष्ट्रीय पंचकर्म

नेशनल वर्कशाप पंचकर्म का शुभारम्भ करते हुए पद्मश्री वैद्य सुरेश चतुर्वेदी, मुम्बई

चतुर्वेदी मुम्बई ने किया, कार्यक्रम की अध्यक्षता वैद्य श्यामलाल शर्मा प्रधानाचार्य शास. धन्वतरि आयु० महाविद्यालय उज्जैन ने की । विशिष्ट अतिथि के रूप में नगर भाजपा अध्यक्ष श्री शिवा कोटवानी (पूर्व विधायक) एवं इतिहासविद् डा० श्यामसुन्दर निगम पधारे ।

सात दिवस तक चले प्रशिक्षण में मध्यप्रदेश के अतिरिक्त, दिल्ली, महाराष्ट्र, हरियाणा, उ०प्र०, गुजरात से आये 25 प्रशिक्षुओं को सी.के. कासलीवाल हास्पीटल में अभ्यंग, स्वेदन, शिरोधारा स्थानिक बस्तियों, वमन, विरेचन, अनुवासन आस्थापन, नस्य, रक्तमोक्षण, अग्नि कर्म आदि क्रियाओं का प्रत्याक्षिक ज्ञान वैद्य एस.एन. पाण्डे, वैद्य सी. के. शर्मा, वैद्य विनोद वैरागी ने कराया । इस हेतु आर्य समाज द्वारा नि:शुल्क निदान शिविर आयोजित कर 100 रोगियों को नि:शुल्क पंचकर्म चिकित्सा उपलब्ध कराई गई । मध्यप्रदेश विज्ञान एवं प्रौद्योगिक परिषद् भोपाल द्वारा कार्यशाला एवं संगोष्ठी प्रायोजित की गई ।

प्रशिक्षुओं के समक्ष पंचकर्म की चिकिसा लेकर स्वास्थ हुये लगभग 18 से अधिक रोगियों के केस प्रेजेंटेशन

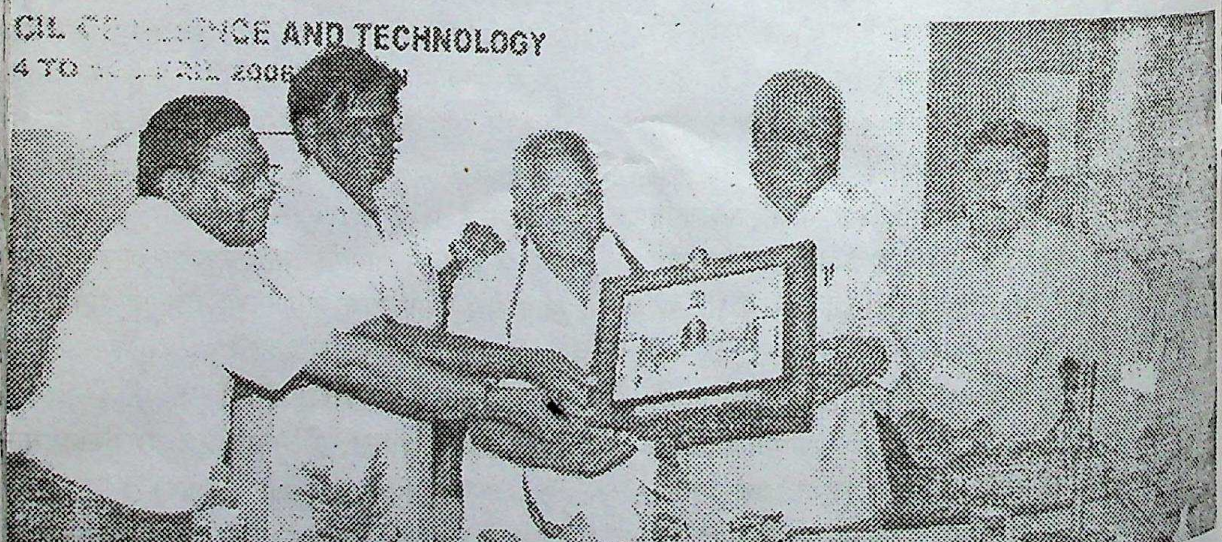


नेशनल वर्कशाप पंचकर्म के समापन अवसर पर पंचकर्म के पुरोधा वैद्य एच.एस.कस्तुरे का अभिनन्दन करते हुए गुजरात राज्य के आयुर्वेद संचालक श्री ए.पी. सिंह, वैद्य यू.एस. निगम, वैद्य श्यामलाल शर्मा (प्रधानाचार्य) वैद्य एस.के. पाण्डे (प्रान्तारयम ) वैद्य विनोद वैरागी

कार्यशाला का उद्घाटन मुख्य अतिथि पद्मश्री वैद्य सुरेश



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



किए गये जिसमें उन्होंने अपनी जटिल बीमारियों से मुक्त होने की व्यथा-कथा सुनाई । स्थानीय एवं देश के प्रमुख आयुर्वेद विद्वानों ने अपने अतिथि व्याख्यानों से सैद्धांतिक पक्ष को दृश्य श्रव्य माध्यम से प्रशिक्षण दिया जिसमें प्रमुख हैं - वैद्य एच.एस. कस्तुरे (अहमदाबाद)वैद्य बी.डी. नंदूरबारकर (बड़ौदा), वैद्य अजय शर्मा (जयपुर), वैद्य पी. यादैया (अकोला), वैद्य श्यामलाल शर्मा, वैद्य यू.एस. निगम उज्जैन, वैद्य मेघावीलाल शर्मा, वैद्य महेश त्रिवेदी, उदयपुर, वैद्य के.के. शर्मा, हरिद्वार, वैद्य हरीश व्यास, अहमदाबाद, वैद्य सोमेन्द्र मित्रा, इन्दौर, वैद्य अजय कीर्ति जैन, वैद्य मणिन्द्र व्यास, वैद्य वी.के. पौराणिक, उज्जैन, वैद्य धनराज महूकर, वैद्य जी.के. व्याघ्रालकर नागपुर, वैद्य महादेव झा, अहमदाबाद आदि आगंतुक सभी अतिथि व्याख्याताओं को समापन समारोह में सम्मानित किया गया ।

दिनांक 15 अप्रैल को रात्रि एवं 16 को प्रातः क्रमशः नापार की राष्ट्रीय कार्यकारिणी बैठक एवं साधारण सभा का आयोजन किया गया, जिसमें अनेक महत्वपूर्ण निर्णय पारित हुये ।

समापन समारोह होटल शांति पैलेस में दोपहर पश्चात वैद्य एच.एस. कस्तुरे के मुख्य आतिथ्य एवं राष्ट्रीय अध्यक्ष वैद्य यू.एस. निगम की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ । विशेष अतिथि के रूप में गुजरात के आयुर्वेद निदेशक श्री ए.पी. सिंह तथा प्रधानाचार्य वैद्य श्यामलाल शर्मा मौजूद थे । सम्मेलन में 150 से अधिक प्रतिनिधि उपस्थित रहे । इस अवसर पर वैद्य कस्तुरेजी का सम्मान शाल, श्रीफलं और स्मृति चिन्ह से किया गया । सभी प्रशिक्षुओं को प्रशिक्षण प्रमाण पत्र दिया गया । राष्ट्रीय अध्यक्ष वैद्य यू.एस. निगम ने आयोजन के प्रमुख स्तंभ वैद्य एस.एन. पाण्डे, वैद्य विनोद वैरागी, वैद्य चन्द्र शर्मा, वैद्य मणिन्द्र व्यास और वैद्य अजय कीर्ति जैन की सराहना करते हुये शाल, श्रीफल से सम्मानित किया ।

श्रेष्ठ कर्मठ सहयोगियों में सी.के. कासलीवाल, ओ.पी. पालीवाल, आई.एस. सिसौदिया, वैद्य लोकेश जोशी, वैद्य राजेश जैन, श्री श्रीवास्तव, एम.एस. देशपांडे को स्मृति चिन्ह से सम्मानित किया गया ।

कार्यक्रम का संचालन वैद्य विनोद वैरागी ने किया आभार माना, वैद्य अजय कीर्ति जैन ने ।

## गुजरात

**1. डा० जयकृष्ण बी. ज्ञानी - अहमदाबाद में 'रसायनम्' Ayurved Panchakarma Clinic & Longevity Centre का शुभारंभ** दिनांक 26.03.06 रविवार को अहमदाबाद में 325 बेरोनेट कॉम्पलेक्स, पुराना टोलनाका साबरमती को सम्पन्न हुआ ।

**2. स्वामी कल्याणदेव राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज रायपुर, मुजफ्फरनगर में प्रशिक्षण कार्यक्रम :-** स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार के आयुष विभाग द्वारा सतत् चिकित्सा शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत प्राइवेट चिकित्सकों को प्रशिक्षण दिये जाने हे 18-19 मार्च को अहमदाबाद से आचार्य वैद्य एच.एस कस्तुरे, पूर्व नियामक गुज.राज्य आयु. विभाग एवं विश्व विख्यात पंचकर्म वैद्य को विशेष रूप से आमंत्रित किय गया तथा पूर्व विधायक आयुर्वेदतज्ञ वैद्य बी.डी. नंदूरबारकर (अहमदाबाद), सरकारी मणिबेन आयुर्वेदिक हॉस्पिटल के अधीक्षक पंचकर्म वैद्य श्री टी.एल. स्वामी तथ विश्वविख्यात आयुर्वेदीय क्षारसूत्र चिकित्सक वैद्य श्री देवेन्द्र शाह और महाविद्यालय के प्राचार्य एवं अधीक्षक वैद्य वी.डी. अग्रवाल तथा सभी चिकित्सक मित्रों ने इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में अपना पूर्ण सहयोग देकर कार्यक्रम को सफल बनाया ।

प्राचार्य एवं अधीक्षक वैद्य श्री वी.डी. अग्रवाल जी द्वारा आयुर्वेद महाविद्यालयों में वैद्य समुदाय एवं महाविद्यालय के छात्र-छात्राओं के लिये देश के विभिन्न प्रांत से आयुर्वेद मनीषियों को आदरपूर्वक आमंत्रित कर प्रशिक्षण एवं चिकित्सा शिक्षा कार्यक्रम निरंतर आयोजित किये जाते हैं ।

### गुजरात के प्रसिद्ध क्षारसूत्र चिकित्सक वैद्य देवेन्द्र शाह सम्मानित

गुज०प्र०आयु० सम्मेलन के प्रधानमंत्री, नि०भा०आ०



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



विद्यापीठ के उपाध्यक्ष, भारत सरकार के अधीन स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के अन्तर्गत आयुष विभाग द्वारा संचालित, नई दिल्ली स्थित नेशनल एकेडमी ऑफ आयुर्वेद की Governing Body Member अहमदाबाद के वैद्य श्री देवेन्द्र शाह को (क्षार सूत्र चिकित्सक) राष्ट्रीय

डा० देवेन्द्र शाह को "सेवा गौरव" एवार्ड द्वारा सम्मानित करते हुए ।

आयुर्वेद विद्यापीठ (Under Dept. of AYUSH, Ministry of Health & Family Welfare - Govt. of India) 12th Convocation & Ayurvedic Seminar on (30-31 March 2006) mental Health के समारोह में दिल्ली राज्य के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री श्री जगन्नाथ मिश्रजी के कर-कमलों द्वारा स्मृति चिन्ह, शॉल कलश एवं Fellow ship प्रमाण-पत्र से सम्मानित किया गया ।

## खेडा जिला BSAM प्रेक्टीशनर एसोसिएशन

डा० राजेन्द्र राज-बडियाद की अध्यक्षता में दिनांक 26.03.06 रविवार को होटल बुडलेंड नडियाद स्थित स्त्री रोग विशेषज्ञ डा० हसमुख अग्रवाल, अहमदाबाद द्वारा व्याख्यान एवं Audio Visual कार्यक्रम का आयोजन किया गया । इस समारोह में अहमदाबाद के डा० हसमुख वैद्य विशेष रूप से आमंत्रित थे । सेक्रेटरी डा० अनिरूद्ध व्यास, चेयरमैन, डा० उपेन्द्र शाह, उपप्रमुख, डा० रमेश पटेल, एडवाइझर, डा० अरविन्द वैद्य ट्रेजर, डा० इनुस वारो अन्य सभी वैद्य मित्रों ने बड़े उत्साह से इस CME कार्यक्रम का लाभ उठाया ।

## डा० देवेन्द्र के शाह "सेवा गौरव" एवार्ड से सम्मानित

गुजराज प्र०आयु० संमेलन के प्रधानमंत्री डा० देवेन्द्र के. शाह बीड (महाराष्ट्र) को दिनांक 22/04/2006 के दिन रोटरी क्लब द्वारा आयोजित सतत दीर्घ कालीन सेवाएं प्रदान करने पर महाराष्ट्र प्रांत के रोटरी गवर्नर डा० हरिप्रसाद सोमानी द्वारा अर्श भगंदर में क्षार-सूत्र चिकित्सा द्वारा सतत 10 (दस) वर्ष तक निःशुल्क निदान चिकित्सा सेवा प्रदान करने पर सेवा गौरव एवार्ड देकर सम्मानित किया गया । इस समारोह में गुजरात से आये अन्य



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



चिकित्सकों का भी फूल माला एवं शॉल, स्मृति चिन्ह प्रदान कर सम्मानित किया गया ।

1. **आयुर्वेद योग साधना केन्द्र प्रीतमनगर, अहमदाबाद Parkinsons's Diseases Society, Gujarat (India)**

दि० 23/04/06 के दिन "पार्किन्सन (कंपवान) रोग के साथ "सुलभ जीवन मार्ग" इस विषय पर आयुर्वेद योग एवं आधुनिक चिकित्सा पर अहमदाबाद में गुजरात चेम्बर्स ऑफ कॉमर्स के सभागृह में वैद्य नितावन गोस्वामी द्वारा आयोजित तथा जीगीश एन दलाल (सुनिश्र) फाउन्डेशन के सौजन्य से गुजरात राज्य के माननीय गवर्नर श्री नवल किशोर शर्मा द्वारा दीप प्रागट्य करके इस समारोह का विधिवत् उद्घाटन किया गया । भारी संख्या में इस परिसंवाद में वैद्य डॉ० मित्रों ने हिस्सा लिया ।

2. **Academy of Ayurved Development & Research (AADAR)**

आदर द्वारा आयोजित 10 वें वार्षिक स्थापना दिन एवं विशिष्ट आयुर्वेद परिसंवाद तथा सन्माननीय वैद्य जनों का सम्मान समारोह दि० 23.04.06 अहमदाबाद में सम्पन्न हुआ ।

वैद्य प्रेरक शाह तथा अध्यक्ष डा०के.के. शाह द्वारा आयोजित विशिष्ट समारोह अहमदाबाद शहर के विधायक भाविन शेठ की अध्यक्षता में तथा समारोह के अतिथि श्री आई.ए. मोदी तथा वैद्य श्री मेधावेन जानी (वन औषधि अधीक्षक) Licening Authority Ayurved. Guj. State की उपस्थिति में संपन्न हुआ ।

इस समारोह में वैद्य डा० एवं आयुर्वेद प्रेमी तथा विद्यार्थी मित्रों ने उत्साह पूर्वक हिस्सा लिया ।

3. **Jaydev Ayurved Hospital & Panchkarma Research Centre**

दिनांक 09.04.06 के दिन आदरणीय गृहमंत्री (गुजरात राज्य) श्री अमित शाह के कर कमलों द्वारा तथा वैद्य एच.जी सुराणी (राजकोट) वैद्य देवेन्द्र शाह, वैद्य दिनकर आणेकर, वैद्य दिलीप मेहता की उपस्थिति में विशिष्ट आयुर्वेद निदान चिकित्सा पंचकर्म एवं रिसर्च सेन्टर का उद्घाटन अहमदाबाद में अभिषेक कॉम्पलेक्स नारणपुरा में सम्पन्न हुआ । वैद्य सुभाष डल्लर, वैद्य हितेन वाझा, वैद्य मिहिर वाझा, वैद्य राजश्री तथा प्रधान चिकित्सक वैद्य उज्ज्वल सुभाष डक्कर का विशिष्ट योगदान इस जयदेव आयुर्वेद हॉस्पिटल को प्राप्त हुआ ।

4. "The Herbs of Ayurveda" Vol. (I-IV) का विमोचन समारोह

श्री अशोकभाई शेठ (शेठ ब्रदर्श - भावनगर) द्वारा संपादित ग्रन्थों का विमोचन दि० 05/03/2006 के दिन अहमदाबाद में गुजरात राज्य के माननीय मुख्यमंत्री श्री नरेन्द्र भाई मोदी के करकमलों द्वारा एवं माननीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री श्री अशोक भाई भट्ट तथा पू०गो० श्री द्वारकेश बाबा श्री एवं आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध गणमान्य वैद्यों की उपस्थिति में इस समारोह का उद्घाटन सम्पन्न हुआ । 1500 से अधिक आयुर्वेदीय औषध वनस्पतियों का भव्य वनस्पति प्रदर्शन का आयोजन भी किया गया ।

इस कार्यक्रम के फल स्वरूप गुजरात के आयुर्वेद क्षेत्र में जिनका अमूल्य योगदान रहा है, उन गणमान्य वैद्यों का सम्मान शॉल एवं स्मृति चिन्ह प्रदान कर किया गया । इस त्रिदिवसीय समारोह में त्रिविध सेमिनार का आयोजन भी किया गया जिसमें, पंचकर्म विषय पर एक दिवसीय व्याख्यानमाला आचार्य वैद्यश्री कस्तुरे द्वारा तथा वैद्यश्री विजय सिंह चौहाण, वैद्य तपनभाई, वैद्य प्रेरक शाह तथा अन्य वैद्यों का व्याख्यान एवं गुजरात के सभी आयुर्वेद महाविद्यालयों के प्राध्यापक तथा विद्यार्थियों की वक्तव्य स्पर्धा का आयोजन कर विद्यार्थियों को सम्मानित किया गया ।



CC-0.In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# सचित्र आयुर्वेद में जुलाई 2005 से जून 2006 तक के प्रकाशित लेखों की वार्षिक-सूची


| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| | **अ** | | |
| अम्ल एवं पित्त - निदान चिकित्सा | डा० महेश कुमार शर्मा<br>डा० प्रमोद दीपक चतुर्वेदी | जुलाई' 05 | 45 |
| अभिनव व्रण चिकित्सा | डा० गो० वा० अंदनकर | जून' 06 | 929 |
| Amalaki Rasayana : A Protection Against - Experimental Gastric Ulcers in Albino Rats - and Having Better Amlapittahara Effect | Dr. Bharat Kalsariya<br>Dr. B. Patgiri<br>Dr. B. Ravishanker<br>Dr. P.K. Prajapati | जुलाई' 05 | 45 |
| अनुवांशिक योग (Genetic Desorders) | वैद्य पी.एस. अंशुमान | नवम्बर' 05 | 334 |
| अपना शब्द ज्ञान परखिये | डा० गोपेश कुमार न० शर्मा<br>डा० दिनेश कुमार शर्मा | दिसम्बर' 05 | 440 |
| अम्लपित्त : कारण, लक्षण एवं चिकित्सा | डा० श्रीमती कुसुम गुप्ता<br>डा० गोविन्द गुप्ता | जनवरी' 06 | 511 |
| Applied Aspect of Dashavidha Pariksha with special - Reference to Samhanana and Pramana | Dr. Ashutosh Kumar Yadav<br>Dr. Suman Yadav,<br>Dr. Parameswarappa S. Byadgi<br>Prof. C.B. Jha | जनवरी' 06 | 538 |
| अपना शब्द ज्ञान परखिये | डा० गोपेश कुमार न० शर्मा<br>डा० दिनेश कुमार शर्मा | जनवरी' 06 | 542 |
| अपना शब्द ज्ञान परखिये | डा० गोपेश कुमार न० शर्मा<br>डा० दिनेश कुमार शर्मा | फरवरी' 06 | 623 |
| अजीर्ण रोग - संक्षिप्त परिचय | वैद्य पी.एस. अंशुमान, एच.पी.ए. | जून' 06 | 888 |
| | **आ** | | |
| आयुर्वेद अनुसंधान के बढ़ते चरण | पं० बनवारी लाल शर्मा<br>विमल चन्द्र झा | जुलाई' 05 | 4 |
| आयुर्वेद में सुस्वास्थ्य की अवधारणा | आचार्य राजकुमार जैन | जुलाई' 05 | 15 |
| आँवला - फल एक गुण अनेक | जयेन्द्र कुमार चौधरी | जुलाई' 05 | 33 |
| आयुर्वेद में प्रमेहघ्न द्रव्य | डा०गणेश चन्द्र उपाध्याय,प्रो०पी०पी०शर्मा | जुलाई' 05 | 44 |


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## जुलाई 2005 से जून 2006 तक के प्रकाशित लेखों की वार्षिक-सूची


| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| आयुर्वेद के प्रभावी प्रवक्ता पं० शिवकरण शर्मा छांगाणी | डा० गोविन्द प्रसाद उपाध्याय | जुलाई' 05 | 67 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 69 | पं० बनवारी लाल शर्मा, विमल चन्द्र झा | अगस्त' 05 | 85 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 70 | पं० बनवारी लाल शर्मा, विमल चन्द्र झा | सितम्बर' 05 | 165 |
| आंत्र गुल्म (अपेंडिसाइटिस) कारण, लक्षण व उपचार | डा० राजीव गुप्ता | सितम्बर' 05 | 183 |
| आयुर्वेदिक दृष्टि से कास की चिकित्सा एवं रोकथाम के उपाय | डा० दिनेश कुमार गोयल<br>डा० रूबी गोयल | सितम्बर' 05 | 186 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 71 | पं० बनवारी लाल शर्मा, विमलचन्द्र झा | अक्टूबर' 05 | 245 |
| Eye Banking | Dr. Haramohan Moharana | अक्टूबर' 05 | 293 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 72 | पं० बनवारी लाल शर्मा, विमलचन्द्र झा | नवम्बर' 05 | 326 |
| आमवात का निदान सम्प्राप्ति परक एवं अलम्बुषादि वनवटी का उपशयात्मक अध्ययन | प्रो० लोकनाथ शर्मा<br>डा० मनमोहन शर्मा | नवम्बर' 05 | 341 |
| आयुर्वेद में मानसिक रोग की अवधारणा एवं चिकित्सा | डा० जितेन्द्र कुमार<br>डा० अश्विनी शर्मा, प्रो० लोकनाथ शर्मा | नवम्बर' 05 | 353 |
| आयुर्वेद परक - डायबिटिक फुट जानलेवा रोग | डा० सुरेश चन्द्र | नवम्बर' 05 | 355 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 73 | पं०बनवारी लाल शर्मा, विमलचन्द्र झा | दिसम्बर' 05 | 406 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 74 | पं०बनवारी लाल शर्मा, विमलचन्द्र झा | जनवरी' 06 | 487 |
| Ayurveda and Liver Care | Amit K. Jain, R. Sagar, Anurekha Jain<br>Avijit Jain, R. Gupta, M.S. Sikarwar | जनवरी' 06 | 531 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 75 | पं०बनवारी लाल शर्मा, विमलचन्द्र झा | फरवरी' 06 | 565 |
| आयुर्वेद में संस्कार और उसकी उपयोगिता | आचार्य राजकुमार जैन | फरवरी' 06 | 571 |
| आयुर्वेद वाङ्मय में सुख की अवधारणा | डा०राकेश कु० श्रीवास्तव, डा० अनुप कु० श्रीवास्तव, डा० बृज कुमार द्विवेदी | फरवरी' 06 | 580 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 76 | पं०बनवारी लाल शर्मा, विमलचन्द्र झा | मार्च' 06 | 646 |
| आहार-विहार द्वारा स्वास्थ्य रक्षा: बसन्त ऋतु | वैद्य ओमवीर सिंह "वीर", सुरेन्द्र सिंह (छात्र) | मार्च' 06 | 688 |
| Ayurvedic Perspective of Psychiatry W.R.T. Stress and Emotion | Dr. G. Venkateshwarlu<br>Dr. R.D. Patil | मार्च' 06 | 699 |
| Ayurvedic Management of Gastro - Oesophageal Reflux (GERD) | Dr. Sai Prasad<br>Dr. Ratna Manikyan | मार्च' 06 | 705 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| आयुर्वेद का इतिहास - 77 | पं०बनवारी लाल शर्मा, विमलचन्द्र झा | अप्रैल' 06 | 725 |
| आगन्तु अपस्मार - एक चर्चा | वैद्य पी०एस० अंशुमान | अप्रैल' 06 | 730 |
| आयुर्वेद का एक महत्वपूर्ण अंग--वाजीकरण | डा०अश्विनी बी.पाण्डे, प्रो०ओ.पी. उपाध्याय | अप्रैल' 06 | 746 |
| आमवात व्याधि के चिकित्सा उपक्रम | डा० निलेश भट्ट, प्रो० बी.डी. शुक्ल | अप्रैल' 06 | 761 |
| Ayurvedic Treatment for Menorrhagia | Dr. K. Sudha Rani | अप्रैल' 06 | 771 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 78 | पं०बनवारी लाल शर्मा, विमल चन्द्र झा | मई' 06 | 805 |
| आयुर्वेदीय चिकित्सा का वैशिष्ट्य | आचार्य राजकुमार जैन | मई' 06 | 817 |
| आयुर्वेद में भस्मों की रूपरेखा एवं सिद्धान्त | डा० मायाराम उनियाल | मई' 06 | 825 |
| Ayurvedic Approach to the Management of Lifestyle Desorders | Sulochana Bhat | मई' 06 | 853 |
| आयुर्वेद का इतिहास - 79 | पं०बनवारी लाल शर्मा, विमल चन्द्र झा | मई' 06 | 865 |
| आयुर्वेदीय दृष्टि सें अतिमधु पर्णी पादप की औषधीय कार्मुकता - एक अध्ययन | डा० आर० एस० चौहान | जून' 06 | 900 |
| आयुर्वेदिक औषधियों की गर्भ-निरोधन में उपयोगिता | डा० अनिता शर्मा, डा० विनोद कु० गोठेचा | जून' 06 | 902 |
| | इ | | |
| Effect of Bilwa (Aegle marmelos) Patra - - swarasa on Gastronitestinal Tract | Dr. Laxmi N. Gupta<br>Dr. C.B. Jha | जुलाई' 05 | 47 |
| इओसिनोफिलिया कारण और बचाव | डा० आशुतोष कुमार यादव<br>डा० जे०के० मिश्रा, डा०एच०एच०अवस्थी | अगस्त' 05 | 109 |
| Implementation of GMP in ASU industries :- Problems and Prospective | Dr. Prashanta Kumar Sarkar | अगस्त' 05 | 134 |
| Evaluation of effect of Yakritpliharilauha in Viral - Hepatitis A | Dr. Umesh Shukla, Dr. Charu Bansal<br>Dr. Anil Nagal | अक्टूबर' 05 | 294 |
| Effect of Bilwa (Aegle marmelos) Phala Majja Chuna – on Gastrointestinal Tract | Dr. Laxmi N. Gupta, Dr. R.K. Sharma<br>Dr. C.B. Jha | दिसम्बर' 05 | 447 |
| | उ | | |
| उपयोगिता से भरपूर नींबू | राजकुमार जैन | अगस्त' 05 | 114 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| उत्तरांचल की कुछ कीटनाशक वनस्पतियाँ | डा० जी.सी. जोशी | नवम्बर' 05 | 357 |
| उत्तरांचल में प्राकृतिक रूप से पैदा होने वाले खाद्य फलों की उपादेयता एवं व्यवसायीकरण | डा० मायाराम उनियाल | मार्च' 06 | 651 |
| उच्च रक्तचाप का प्राकृतिक उपचार | डा० राजीव गुप्ता | मार्च' 06 | 675 |
| उन्माद चिकित्सा में चरकोक्त पंचकर्म के संदर्भ | डा० अनूप कु० गक्खड़, डा०सीमा चोपड़ा | मार्च' 06 | 679 |
| उत्तराखण्ड के जनपदों में कुटीर उद्योग एवं खाद्य सामग्री व औषधोपयोगी वनस्पतियाँ | डा० मायाराम उनियाल | अप्रैल' 06 | 737 |
| | ऋ | | |
| ऋतु प्रभावात उत्पन्न Paptic Ulcer एवं परिणामशूल : एक आयुर्वेदीय अध्ययन | प्रो० हरिभाई के० द्विवेदी | नवम्बर' 05 | 349 |
| | ए | | |
| A Clinical study on "Effect of Amalaki (Emblica officinalis)- Churna in Pulmonary Tuberculosis as an Adjuvant Therapy - | Dr. B. Chandra Sekhara Rao | अगस्त' 05 | 126 |
| Analytical Study of Kloma | Dr. G.S. Hadimani<br>Dr. K.H. Pachchinavar | सितम्बर' 05 | 221 |
| A Study on Makshika | Sridurga, K.R.C. Reddy, C.B. Jha | June' 06 | 920 |
| A Review of Quality Evaluation of Herbal Formulation | Saini V, Kinger H.K., V.B. Gupta | June' 06 | 922 |
| A Comparative study of Triphala Shodhita Shilajeet and Gomutra Shodhita Shilajeet in the Management of Sthaulya | Dr. Renuka Joshi, Dr. Jagdev<br>Dr. Anand Kr. Choudhary<br>Prof. K. Singh | अक्टूबर' 05 | 282 |
| एक उपयोगी औषधि : जटामांसी | डा० विनय शौनक | नवम्बर' 05 | 359 |
| एक पौष्टिक फल : बेल | राजकुमार जैन | नवम्बर' 05 | 360 |
| M.D. B.H.U. (Open Competition) स्मृति पर आधारित हल प्रश्न-पत्र | डा० गोविन्द पारीक | दिसम्बर' 05 | 453 |
| M.D. 2005 Jamnagar स्मृति पर आधारित हल प्रश्न-पत्र | डा० गोविन्द पारीक | 'जनवरी' 06 | 549 |
| एक रसायन औषधि ''गंधक' | डा० विनय शौनक | फरवरी' 06 | 607 |
| Applied Aspect of Dashavidha Pariksha with Special Reference to Vikriti Pariksha | Dr. Ashutosh Kumar Yadav, Dr.Suman Yadav, Dr. Parameswarppa S. Byadgi | मार्च' 06 | 703 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| An Etiopathological and Therapeutic study On sthula Prameh W.S.R. to Niddm | Prof. Loknath Sharma<br>Dr. Vivek Agarwal | अप्रैल' 06 | 775 |
| | **ओ** | | |
| Onion and its Pharmacognostical Aspects | Mukesh S. Sakarwar, Sushil K. Dubey Amit Kr. Jain | जनवरी' 06 | 535 |
| ओजक्षय | वैद्य अम्बालाल जोशी | मार्च' 06 | 677 |
| | **क** | | |
| केरल पैटर्न पर आयुर्वेद विकास | डा० जे०एन० नौटियाल | जून' 06 | 930 |
| कैसे करें क्वाथ (काढ़ा) निर्माण | डा० गोविन्द शुक्ला | जुलाई' 05 | 28 |
| क्या आप भी पेट की गैस से परेशान हैं ? | मीना | अगस्त' 05 | 115 |
| Quality Control and Standardization of Metallic and Mineral Preparation of Ayurveda and Siddha | Ariamuthu Saraswathy | सितम्बर' 05 | 205 |
| कामला रोग (Jaundice) में विरेचन (Purgation) कर्म की उपयोगिता | प्रो० अजय कुमार शर्मा<br>डा० सीमा जैन भदौरा | अक्टूबर' 05 | 262 |
| Critical Evaluation of Asthavidha Pariksha | Dr. Parameswarappa S. Byadgi, Vasudha P. Rao | दिसम्बर' 05 | 442 |
| Contripution of Acharya Sharangadhara in Sandhana Kalpana | Dr. Upendra U. Zala<br>Dr. A.K. Choudhary, Dr. P.K. Prajapati | फरवरी' 06 | 617 |
| कुष्ठ रोग (Leprosy) : व्यापक विचार और उपचार | वैद्य चन्द्रदेव मंडल | अप्रैल' 06 | 749 |
| Concept of Hyperglycaemia and its Management through Ayurveda | Dr. Shailesh Jain<br>Dr. Mani Kumar<br>Dr. O.P. Gupta | अप्रैल' 06 | 768 |
| कुपोषण समस्या और आयुर्वेद | वैद्य विजय कुलकर्णी | जून' 06 | 912 |
| | **ख** | | |
| खाद्य पदार्थों में मिलावट एवं स्वास्थ्य | डा० अशोक कुमार श्रीवास्तव | जुलाई' 05 | 37 |
| खतरनाक है - शरीर में अधिक आयरन | परिधि जैन | नवम्बर' 05 | 362 |
| | **ग** | | |
| गर्भावस्था में कैसा आहार लें ? | परिधि जैन | जुलाई' 05 | 35 |




CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Varanasi

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| गर्मियों में आपके लाड़ले की सेहत | वीना श्री श्रीमाल | जुलाई' 05 | 39 |
| गर्भावस्था में शिशु और माँ की स्वास्थ्य रक्षा- एक समीक्षा | धीरज बोहरा<br>डा० सुरेश चन्द्र | जून' 06 | 906 |
| ग्रीष्म कालीन आहार-विहार पर विशेष चर्चा | कविराज डा० दिवाकुर ठाकुर | अगस्त' 05 | 116 |
| ग्रहणी | डा० संदीप अग्रवाल, डा० सुमन अग्रवाल | सितम्बर' 05 | 189 |
| गेहूँ के ज्वारे : एक अनुपम औषधि | स्मिता गुप्ता, एडवीन जेराल्ड<br>शीजा एडवीन जेराल्ड | मार्च' 06 | 681 |
| गुणों से भरपूर मेथी | अनिता जैन | मई' 06 | 833 |
| ग्रीष्म ऋतुचर्या | डॉ० प्रेमचन्द्र मंगल | जून' 06 | 914 |
| ग्रीष्म कालीन सेवनीय आहार-विहार | कविराज डा० दिवाकर ठाकुर | जून' 06 | 918 |
| | **घ** | | |
| घरेलू नुस्खों से स्त्री रोगों का इलाज | डा० हनुमान प्रसाद उत्तम | अक्टूबर' 06 | 266 |
| | **च** | | |
| चरकोक्त ज्वर चिकित्सा अध्याय में ऊर्ध्वांग चिकित्सा सम्बन्धित उल्लेख | डा० अनूप कुमार गक्खड़<br>डा० अनिल गक्खड़ | अप्रैल' 06 | 760 |
| चरकोक्त सिद्ध स्थान का प्रयोजन एवं उसकी उपयोगिता | डा० अनूप कुमार गक्खड़ | मई' 06 | 839 |
| | **छ** | | |
| छात्रोपयोगी-का०हि०वि०-2004 (हल प्रश्न-पत्र) | डा० गोविन्द पारीक | सितम्बर' 05 | 223 |
| | **ज** | | |
| जीवन का उत्तरार्ध सेवा निवृत्त काल और स्वास्थ्य | वैद्य इन्द्रदेव भट्ट | जुलाई' 05 | 19 |
| General rules for collection of Medicinal Plants | Prashant Kr. Jha<br>T.N. Pandey | जुलाई' 05 | 53 |
| जीव विज्ञान-आयुर्वेद | आचार्य राजकुमार जैन | सितम्बर' 05 | 168 |
| जरूरी है विटामिन "बी" | कैलाश जैन, एडवोकेट | सितम्बर' 05 | 198 |
| जोड़ों की कष्टसाध्य व्याधि-आमवात "निदान एवं चिकित्सा" | डा० विजय कुमार राय | सितम्बर' 05 | 201 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| जोड़ों में दर्द, सूजन, जकड़न (गठिया वाय)की अनुभूत रामबाण दवा | डा० रामेश्वर दयाल | अक्टूबर' 05 | 305 |
| जल चिकित्सा | स्मिता गुप्ता, एडवीन जेराल्ड शीजा एडवीन जेराल्ड | अप्रैल' 06 | 756 |
| | ड | | |
| Diabetes and its Applied aspect in Ayurveda | Dr. G.C. Nanda, Dr. N.N. Pathak | नवम्बर' 05 | 370 |
| | त | | |
| तनाव : कारण, लक्षण व उपचार | डा० राजीव गुप्ता | जुलाई' 05 | 26 |
| | थ | | |
| थार्यराइड (Thyroid) विकार एवं हाइपोथायइ-रॉयडिज्म की सफल आयुर्वेदिक चिकित्सा | डा० संदीप मदाठा | सितम्बर' 05 | 184 |
| Therapeutic Uses of Ghee in Ayurveda | Dr. Mayank Dhatkoti, Proff. V.D. Shukla | नवम्बर' 05 | 368 |
| Therapeutic use of Aloe Vera (Grith Kumuari) | Dr. Ashok Sharma, Deepika Bhatia Dr. K.N. Yadav | मई' 06 | 851 |
| | द | | |
| दिमागी बुखार (Meningitis) - निदान एवं चिकित्सा | डा० विनोद कुमार गौतम डां० माण्डवी गौतम, प्रो० अजय कु० शर्मा | अगस्त' 05 | 95 |
| दालचीनी मसाला ही नहीं, दवा भी | डा० हनुमान प्रसाद उत्तम | सितम्बर' 05 | 199 |
| दोषज उन्माद चिकित्सा संबंधी आयुर्वेदीय परिकल्पना - (कुछ आ०वृ०पत्र सहित) | वैद्य पी०एस० अंशुमान | अक्टूबर' 05 | 248 |
| दर्शनशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में आत्या एवं मन का परस्पर सम्बन्ध-एक समीक्षा | डा० सुरेश चन्द्र | दिसम्बर' 05 | 430 |
| द्वादश प्राण में वायु - एक विवेचना | डा० आशुतोष कु० यादव डा० सुमन यादव, प्रो०एस०डी० दूबे | दिसम्बर' 05 | 433 |
| दूषणाद्दोषा: | अनन्तराम शर्मा | जून' 06 | 895 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| | न | | |
| नाड़ी परीक्षा - क्या संहिता में संदर्भ नहीं है ? | वैद्य हरिदास श्रीधर कस्तुरे, वैद्य तनुजा पटेल | अगस्त' 05 | 100 |
| निद्रा तु वैष्णवी प्रोक्ता | वैद्य (डा०) ओमवीर सिंह "वीर" सुरेन्द्र सिंह (छात्र) | दिसम्बर' 05 | 428 |
| Nidanatmak and Upshayatmak study of Tridoshaja yonivyapada W.S.R. to Bacterial Vaginosis | Prof. Loknath Sharma Dr. Rizwana Parveen | जनवरी' 06 | 521 |
| | प | | |
| Poisoning and its First Aid | Dr. Ashutosh Kr. Yadav, Dr. J.K. Mistra Dr. H.H. Awasthi | जुलाई' 05 | 60 |
| परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी - प्रश्न पत्र | डा०अनूप कु०गक्खड़, डा०अनिल गक्खड़ | जुलाई' 05 | 69 |
| परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी - संघ लोक सेवा आयोग 2005 (हल प्रश्न-पत्र) | डा० गोविन्द पारीक | अगस्त' 05 | 139 |
| पाषाण भेद - शोधपूर्ण विवेचन | कविराज डा० दिवाकर ठाकुर | सितम्बर' 05 | 200 |
| Panchkarma :- A Complete therapy for Curative and rejuvenative purpose | Dr. Shivani Padha Dr. J.S. Tripathy | सितम्बर' 05 | 210 |
| पाण्डुरोग की चिकित्सा में निर्दिष्ट चरकोक्त योग | डा०अनुप कु०गक्खड़, डा०अनिल गक्खड़ | अक्टूबर' 05 | 265 |
| पर्णबीज (Bryophyllum Pinnatum) | डा०गणेश चन्द्र उपाध्याय, प्रो०पी०पी०शर्मा | अक्टूबर' 05 | 269 |
| पी०जी० प्रवेश परीक्षा हेतु प्रश्न संग्रह-माला-1 | डा०कमला आर०नागर, डा०राकेश कु०नागर | अक्टूबर'05 | 299 |
| परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी | डा०अनुप कु०गक्खड़, डा०अनिल गक्खड़ | नवम्बर' 05 | 383 |
| पित्त एवं अग्नि विवेचन | डा०माण्डवी गौतम, प्रो०ओम प्रकाश उपाध्याय डा० विनोद कुमार गौतम | दिसम्बर' 05 | 424 |
| पोटाशियम के चयापचय जन्य विकार एवं उनका आयुर्वेदीय प्रतिकार | डा० अनूप कुमार इन्दोरिया प्रो० अजय कुमार शर्मा | जनवरी' 06 | 506 |
| Prevention of bacterial water borne disease | Sakarkar D.M., Faria Fatina Gensalves L. | जनवरी' 06 | 529 |
| पुरुषों में शुक्र धातुक्षय-एक जटिल समस्या एवं समाधान | डा० सुरेश चन्द्र, डा० नरेश कु० गुप्ता | फरवरी' 06 | 589 |
| पर्पटी कल्पना | हिमांशु शेखर तिवारी, उदय सिंह ठाकुर, दीप शिखा | फरवरी' 06 | 597 |
| परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी | डा० अनूप कु० गक्खड़ | मार्च' 06 | 707 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| प्राकृतिक चिकित्सा-आयुर्वेद का एक अंग विशेष | डा० रजनी बाला, डा० विकास चन्द्र गुप्ता<br>डा० लक्ष्मीकान्त द्विवेदी | अप्रैल' 06 | 741 |
| पञ्चगव्य : एक दिव्य औषधि | डा० सतीश चन्द्र तिवारी | अप्रैल' 06 | 754 |
| प्याज, एक गुणकारी और औषध | डॉ० विनय शौनक | जून' 06 | 915 |
| | **फ** | | |
| Folk Medicines of Mamdsaur Dist. (M.P.) | Edwin E.Sheeja E. Amatraj A; Soni R | जुलाई' 05 | 63 |
| Pharmaceutical study of Asokarista with Ref. to Different containers and Filtration Tecnies | Arathi T.S. Vivek Bajaj<br>Dr. D. Joshi, Dr. A.K. Choudhary | फरवरी' 06 | 614 |
| | **ब** | | |
| बलकारक खजूर | डॉ० विजय कुमार नाहर | जून' 06 | 916 |
| बाल्यावस्था में कुकुर खांसी का प्रकोप-एक समीक्षा | कु०सरजारानी, डा०सुरेशचन्द्र, डा० नरेश कु०गुप्ता | जुलाई' 05 | 30 |
| बच्चों को वर्षा ऋतु में होने वाले रोग और उनसे सुरक्षा के उपाय | डा० अयोध्या प्र० अंचल | अगस्त' 05 | 118 |
| बहुपयोगी वनौषध बच-परिचय एवं खेती | लायक राम भट्ट | सितम्बर' 05 | 175 |
| बालों को काला रखने के उपाय | डा० वीरेन्द्र कुमार शर्मा | अक्टूबर' 05 | 267 |
| बालकों में कृमिरोग- निदान एवं चिकित्सा | डा० दिनेश कुमार राय, डा०शशिकान्त सचान | जून' 06 | 908 |
| बेहद उपयोगी है काली मिर्च | परिधि जैन | अक्टूबर' 05 | 279 |
| Bilwa - Chemical Constituents and Medicinal Properties | Dr. Laxmi N. Gupta<br>Dr. C.B. Jha, Dr. R.K. Sharma | अक्टूबर' 05 | 290 |
| Brain with the Holistic concept of mind | Dr. Shivani Padha, Dr. J.S. Tripathi | फरवरी' 06 | 612 |
| बच्चों में सांस की तकलीफ/तमक श्वास (Bronchial Astham) | शान्तुल कुमार गुप्ता<br>प्रो० अजय कुमार शर्मा | मार्च' 06 | 670 |
| बच्चों में दंतशब्द/दांत किटकिटाना Teeth grinding : [Bruxism] | डा० रामशंकर गौतम<br>डा० संगीता | मार्च' 06 | 685 |
| ब्राह्मी बूटी | जयेन्द्र कुमार जौहरी | अप्रैल' 06 | 757 |
| बबूल - गुण एवं उपयोग | वैद्य मनीषा खत्री | मई' 06 | 835 |
| | **भ** | | |
| भूटान की वन संपदा एवं पारंपरिक जड़ी-बूटियाँ | डा० मायाराम उनियाल | अक्टूबर' 05 | 256 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| | **म** | | |
| Medicinal Uses of Orchid Plants | Dr. Anil Kumar Dhiman | जुलाई' 05 | 56 |
| मधुमेह चिकित्सा में अवस्था निर्धारण एवं समाग्निक्रिया जन्य धातु साम्य का महत्व | डा० उत्तम कुमार शर्मा | अगस्त' 05 | 106 |
| महौषधि - शुण्ठी - आर्द्रक | डा० केदार नाथ यादव | अगस्त' 05 | 111 |
| Madanaphala - A Complete drug for | Dr. Prakash L. Hegde | जून' 06 | 924 |
| Metallic Part Detection in An Ayurveda Bhasm by Atomic spectroscopy (spectrography) | Dr. Sah Lalit Mohan<br>Jha C.B. | अगस्त' 05 | 137 |
| मानसिक रोग-चिंता मनस्पात (Anxiety Disorder) के लक्षण और उपचार | डा० दीनानाथ राय | सितम्बर' 05 | 178 |
| Medicinal Plants of thar Desert : A Survey Report | Edwin E., Sheeja E.<br>Rathore C; Samani V. | सितम्बर' 05 | 214 |
| मूलगामी चिकित्सा का सोपान पंचकर्म | डा० बी०एम० निर्मल | अक्टूबर, 05 | 271 |
| मधुमेह के प्रतिरोधक पहलू | प्रो० जी०के० चतुर्वेदी<br>डा० प्राजक्ता-कम्बाउकर | जनवरी' 06 | 494 |
| मांसाहर एवं परीक्ष्य भाव | डा० राजीव श्रीवास्तव, डा० दुर्गावती देवी<br>डा० बी० के० द्विवेदी | जनवरी' 06 | 516 |
| मधुमेह : लक्षण व उपचार | डा० राजीव गुप्ता | जनवरी' 06 | 519 |
| मौसमे बहार-ऋतुराज बसन्त | कविराज डा० दिवाकर ठाकुर | मार्च' 06 | 690 |
| Management of Gridhrasi Roga (Sciatica) | Dr. Vinod Kr. Singh, Dr. B.N. Singh | अप्रैल' 05 | 773 |
| मंदोवह स्रोतोदुष्टि चिकित्सा विचार | वैद्य पी०एस० अंशुमान | मई' 06 | 812 |
| मधु - एक प्राकृतिक औषधि | डा० जी० सी० जोशी | मई' 06 | 830 |
| Medicinal Plants of Palamau District of Jharkhand state Part - I | K. Chandra | मई' 06 | 846 |
| | **य** | | |
| Utility of Animal Blood in Human welfare - (Preliminary Study) | Abha Prasad, Dr. Dinesh Kumar<br>Dr. Alka Sharma, Dr. R.R. Prasad | नवम्बर' 05 | 379 |
| योनिभ्रंश-वात व्याधि के परिप्रेक्ष्य में एक विमर्श | वैद्या निशा गुप्ता | फरवरी' 06 | 583 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| | र | | |
| Role of Pathya (Wholesome Regimen) in Madhumeha (Diabetes Mellitus) | Dr. Pradeep Kr. Sachan | अक्टूबर' 05 | 286 |
| Role of Jalaukavacharan and Pancha Nimba Churna Vati in Vicharchika | Dr. Uday Patanakar<br>Dr. Ujwala Patanakar, Prof. S.S.Sharma | नवम्बर' 05 | 364 |
| रसेन्द्रमंगल का रसशास्त्र में योगदान | डा० वी० नागेश्वर राव | फरवरी' 06 | 515 |
| रसेन्द्रमंगल का ऐतिहासिक विवेचन | डा० वी० नागेश्वर राव | फरवरी' 06 | 586 |
| Rocksalt : An Ayurvedic Ingredient | R. Barik, P. Mahapatra, S.Shrivastava<br>N. Mishra, S. Jain | मार्च' 06 | 697 |
| Role of Shodhana Process (Purification) in Ayurveda Guggulu Preparations | Dr. Kinnari Dhruve, Dr. Rajput Anurag Singh<br>Dr. Anand Kr. Choudhary. Dr. P.K. Prajapati<br>Dr. Subrata De | अप्रैल' 06 | 843 |
| Role of Samsarjan Krama in Panchakarma Therapy | Dr. Padma Lochan Sankhua | मई' 06 | 857 |
| | ल | | |
| लू के कारण, लक्षण व उपचार | डा० हनुमान प्रसाद उत्तम | मई' 06 | 840 |
| | व | | |
| वसा जन्य विकार एवं चिकित्सा | वैद्य पी०एस०अंशुमान | जुलाई' 05 | 10 |
| वर्तमान परिवेश में प्रवाहिका एवं उसकी चिकित्सा | डा० विजय कुमार राय | जुलाई' 05 | 23 |
| वृक्क रोगों की सफल चिकित्सा | वैद्य हरिश्चन्द्र गर्ग | जुलाई' 05 | 72 |
| वात रक्त रोग : लक्षण, भेद, कारण व उपचार | वैद्य चन्द्रदेव मंडल | अगस्त' 05 | 97 |
| वात जनित व्याधियों में आमवात की सफल चिकित्सा | डा० मायाराम उनियाल | सितम्बर' 05 | 172 |
| विचर्चिका रोग के परिप्रेक्ष्य में जलौकावचारण एवं पंच निम्ब चूर्ण (वटी) की कार्मुकता का एक अध्ययन | डा० रामेश्वर प्रसाद गुप्ता<br>डा० श्याम सुन्दर शर्मा | सितम्बर' 05 | 193 |
| वानस्पतिक औषधियों के उत्पादन की आवश्यकता | प्रो०बी.एन. सिंह, डा०ए.के. शर्मा<br>डा० प्रदीप श्रीवास्तव | अक्टूबर' 05 | 273 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | लेखक | माह | पृ.सं. |
|---|---|---|---|
| वृक्क के अन्तर्गत व्याधि : एक आयुर्वेदीय अध्ययन | प्रो० हरिभाई त्रिवेदी | दिसम्बर' 05 | 420 |
| वासा (अडूसा) - एक दिव्य औषधि | डा० रामानन्द, डा० आर०बी० यादव | जनवरी' 06 | 513 |
| वृक्क अकर्मण्यता (गुर्दे फेल होना) Renal Failure की उत्तम चिकित्सा | वैद्य रामकुमार विन्दल<br>वैद्य रमेशकुमार विन्दल | जनवरी' 06 | 545 |
| व्यक्तित्व - श्रीमती कस्तूरी चन्द्रशेखरन | डा० अरूण चन्दन | मई' 06 | 869 |
| देश के हर गाँव में हो किचन हर्बल गार्डन | | | |
| | **श** | | |
| शंख भस्म का महिला रूग्णा तारूण्यपिड़िका व्याधि में संशोधनात्मक अध्ययन | डा० ओम् प्रकाश तलोकर | जुलाई' 05 | 41 |
| शोष विशेष के रूप में कहे गये कुछ मांस विकार | वैद्य पी०एस० अंशुमान | अगस्त' 05 | 89 |
| शय्या मूत्रण का सामान्य परिचय-एक अध्ययन | कु० सरजा रानी, डा० सुरेश चन्द्र | सितम्बर' 05 | 191 |
| श्लेष्मक ज्वर (Influenza) एवं चिकित्सा | डा० एस०डी० शर्मा, अरशा अहमद | अक्टूबर' 05 | 277 |
| शुक्र प्रदुष्टियों की चिकित्सा: प्राच्य संदर्भ | वैद्य पी०एस० अंशुमान | दिसम्बर' 05 | 412 |
| श्वास (Asthama) रोग में उपयोगी औषधि "दम की बूटी" | अभिमन्यु यादव<br>डा० अशोक कुमार शर्मा | फरवरी' 06 | 595 |
| | **स** | | |
| Suturing in Ayurveda - (Preliminary Study) | Dr. Umesh Chandra Sharma<br>Dr. Amanpreet Kaur Broca, Dr. H.K. Kushwala | सितम्बर' 05 | 218 |
| स्थानीय उपचार में प्रयुक्त होनेवाली औषधियाँ | डा० राजकुमार द्विवेदी | नवम्बर' 05 | 281 |
| Status of Ojasa and Agni in Prameha Vis Dibetes mellitus : A Critical consideration | Sanjay Kumar<br>Pandey A.K. | नवम्बर' 05 | 376 |
| स्वास्थ्यवर्द्धक शरद ऋतु | कविराज डा० दिवाकर ठाकुर | दिसम्बर' 05 | 438 |
| संस्कृत ग्रन्थों में भोजन की अवधारणा | डा० ज्योत्सना निगम | जनवरी' 05 | 502 |
| स्वमूत्र विष नहीं - अमृत | सुभाष चन्द्र | फरवरी' 06 | 602 |
| Study of Effect of Nasya Karma in cases of Depressive Illness | Dr. Rajni chandre, Dr. K.H.H.V.S.S. Narasimha Murthy, Prof. R.H. Singh | फरवरी' 06 | 608 |




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| लेख | लेखक | माह |
|---|---|---|
| सिद्ध स्थान में शिरोरोग विवेचन के सन्दर्भ | डा० अनूप कुमार गक्खड़, डा० आरती रयात | मार्च' 06 |
| साईनुसाइटिस-लक्षण, निदान एवं उपचार | डा० हरमोहन महाराणा<br>डा० अनिल शर्मा | मार्च' 06 |
| सेहत भरी है अजवाइन में | श्रीमती अनिजा जैन | अप्रैल' 06 |
| सूखा फल मखाना-पौष्टिकता का खजाना | कविराज डा० दिवाकर ठाकुर | अप्रैल' 06 |
| Stress and Ayurvedic Management | Dr. Anoop Kr. Indoria, Prof. Ajay Kr. | अप्रैल' 06 |
| स्नातकोत्तर प्रवेश परीक्षा लखनऊ आयोजित जून 2005 स्मृति पर आधारित हल प्रश्न-पत्र | डा० गोविन्द पारीक | अप्रैल' 06 |
| सन्धिगतवात व्याधि के आयुर्वेदिक उपाय - एक गवेषणा पूर्ण अध्ययन | डा० बी०एम० निर्मल | मई' 06 |
| स्फटिक योग का रक्तप्रदर पर एक सफल आतुरीय परीक्षण | वैद्या (डा०) मीना रानी<br>वैद्य (डा०) ओमवीर सिंह "वीर" | मई' 06 |
| स्मृति पर आधारित हल प्रश्न पत्र-B.H.U. 2005 (M.D. Ayurved) Internal Examination | डा० गोविन्द पारीक | मई' 06 |
| Vaidya Shrihari Shankar (Personality) | [illegible] | जून' 06 |
| | ह | |
| हृद्रोग चिकित्सा और पंचकर्म | वैद्य हरीदास श्रीधरे कस्तुरे | फरवरी' 06 |
| हेमन्त ऋतुचर्या में जीवन शैली | डा० महेश चन्द्र पूर्विया, प्रो०महेन्द्र सिंह मीणा | फरवरी' 06 |
| हृद्रोग चिकित्सा और पंचकर्म - 2 | वैद्य ह० श्री कस्तुरे, वैद्य हरेश व्यास<br>वैद्या तनूजा पटेल | मार्च' 06 |
| हृदयशूल (एंजाइना) उत्पत्ति और चिकित्सा | डा० शशि भूषण शलभ | मार्च' 06 |
| हृदय रोग के कारण एवं निवारण | प्रो० सी०बी० झा, डा०सूढ़लदेव महापात्र | मार्च' 06 |
| Hypertension and its management in Ayurveda | Dr. Debashis Panda, Dr. Ajay Kr. Sahu<br>Prof. Mahesh Chandra Sharma | मार्च' 06 |
| हृदय रोग : निदान एवं उपचार | डा० नन्द किशोर दाधीच | अप्रैल' 06 |
| हृदय रोग के कारण एवं निवारण | प्रो० सी० बी० झा, डा० सूढ़लदेव महापात्र | जून' 06 |



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar